

टेलीफोन नं० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २, ३) रविवार ७ माघ २०१९—२० जनवरी १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर)

वेद सूक्तयः

सिंह प्रतीको विशो अद्धि

हे राजन् ! राष्ट्रनायक, सेना- ! आप शेर के समान वीर बन सारी जनता प्रजा की पालना । कोई हानि न पहुंचा सके ।

व्याघ्र प्रतीको बाधस्व शत्रून्

हे राष्ट के वीर ! व्याघ्र के न राष्ट्र के शत्रुओ को दबा देवे। ने बल से इन सारे वैरियों को देवे। अपने बल से इन सारे यो को पराजित कर भगा देवे।

दिशोऽभिदासन्त्यस्मान्

जो शत्रु किसी भी दिशा से हम दास बनाना चाहते हैं। राष्ट्र स्वतन्त्रता छीन कर हमें परा- न बनाना चाहते हैं । अपना ाम बनाना चाहते है–

ते पराञ्चो व्यथन्ताम्

वे सारे आक्रमणकारी वैरी हम से पराजित होकर कष्ट ें । अपनी शक्ति से इनको परास्त के खूब दुर्गत बनावें, हमला का ा चखा देवें ।

अथर्ववेद

राष्ट्र रक्षा विशेषांक



स्वराज्य आंदोलन के जन्मदाता महर्षि दयानन्द जी सरस्वती

रक्षामंत्री की ललकार

भारत के रक्षामन्त्री श्री चौहान जी ने अपने ओजपूर्ण शब्दों में राष्ट्र को सन्देश देते हुए कहा :–

शुरू की हार कुछ मतलब नही रखती । जो अन्तिम लडाई जीतता है वही जीतता है । युद्ध के लिए धन और जन दोनो जरूरी है । सब मे जरूरी कडा दिल और मजबूत इरादे है । यदि राष्ट्र का दिल मजबूत है तो ससार की कोई भी शक्ति उस पर बुरी नजर नही डाल सकेगी । दिलो की यह एकता और चीनियों को भारतीय प्रदेश से निकाल बाहर करने का दृढ़ सकल्प आज विद्यमान है और जब तक लक्ष्य प्राप्त नही होता तब तक ये भावनाएं विद्यमान रहनी चाहिएं । तभी हम देश की स्वतन्त्रता को स्थिर रखने मे पूर्ण या सफल होगे ।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द शास्त्री

वर्तमान संकट

श्री प्रिंसिपल सूर्यभानू जी एम. ए. वायस चासलर (कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा)

चीन के भारत पर छल पर्ण आक्रमण ने देश में जिस संकट की स्थिति को उत्पन्न किया है उस का सामना करने के लिए अनेक प्रयत्न किये जा रहे हैं। सीमा की रक्षा का प्रश्न सभी प्रश्नों से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका सम्बन्ध हमारी स्वतन्त्रता तथा सत्ता के साथ है। कोई भी राष्ट्र गौरव और सम्मान को हाथ से देकर जीवित नहीं रह सकता। हर्ष का विषय है कि देशवासियों ने केवल संकट की स्थिति को समझा ही है, बल्कि उसका सामना करने के लिए भी सराहनीय काम किया जा रहा है। परस्पर भेदभाव को मिटाकर सभी राजनीतिक दल एक होकर चीनी शत्रुओं को बाहर उठा फैंकने की प्रतिज्ञा कर चुके हैं। जनसाधारण की ओर से सरकार को जो सहयोग मिला है, वह हम सब के लिए स्वाभिमान का कारण है। इसी प्रकार मित्र राष्ट्रों ने जिस शीघ्रता के साथ सैन्य-सामग्री देकर हमारी सहायता की है, उससे हमारा उत्साह बढ़ा है। संसार के प्राय: सभी देशों ने चीनी आक्रमण की निंदा करके हमारे आत्म-विश्वास में वृद्धि की है। ये सभी बातें हमें अपने उद्देश्य की सफलता में सहायता देंगी—इसमें कोई शंका नहीं। तिस पर भी कुछ ऐसे कारण हैं, जो समय पड़ने पर हमारी पराजय में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। ऐसे तत्वों का समाधान हमें पूरी शक्ति के साथ करना होगा।

जातियों को जीवित रखने के लिये सब से पूर्व सहयोग और सहकारिता की आवश्यकता हुआ करती है। हम अपने व्यक्तिगत जीवन मे कितने भी समृद्ध और वैभवशाली हों, परन्तु जाति का वैभव तभी बनता है जब हम एक दूसरे के साथ मिल बैठना जानते हों। व्यापार, शिक्षा, उद्योग-धंधों तथा प्रशासन का काम सुचारु रूप से चलाने के लिए एक व्यक्ति विशेष की नहीं, बल्कि समस्त राष्ट्र की जिम्मेदारी होती है। कालेज में शिक्षा प्राप्त करता हुआ एक विद्यार्थी नेक और विद्वान बनने के स्थान पर यदि अपने चरित्र को विगाड़ लेता है; तो इस में सारे का सारा दोष उस कालेज के अध्यापकों का ही नहीं समझना चाहिए। अध्यापक किंचित मात्रा में इसके लिए उत्तरदायी अवश्य है, परन्तु विद्यार्थी के माता-पिता, घरेलू परिस्थितियां, उसकी मित्र-मण्डली उसके नगर का समूचा वातावरण, देश में छपने वाली अच्छी बुरी पुस्तके चल चित्र, यहां तककी राष्ट्र की सारी जीवन-शैली—उसके पतन के लिए उत्तरदायी हैं। जब तक हम अपने चारों ओर नेकी और ईमानदारी का वातावरण पैदा नहीं करते हमारी सामूहिक शक्तियां और यत्न कमजोर रह जाते हैं।

अतः सब से पहले इस बात की आवश्यकता है कि हम ठीक प्रकार से समझ लें कि सब के हित में अपना हित है और सब के नाश में अपना नाश। जब यह बात समझ में आ जाए तो फिर छल, कपट, अत्याचार, चोरबाजारी और रिश्वत आदि बुराइयां बहुत मात्रा में समाप्त हो जाती हैं। सहयोग जातियों का प्राण है। संघटन से राष्ट्र बनते हैं, और विघटन से बने हुए साम्राज्य समाप्त हो जाते हैं। स्थिति को ठीक प्रकार से समझने के लिए तथ्यों की ठीक ठीक जानकारी होनी चाहिए। और इसलिए हमें यह देखना होगा कि हम में सहयोग अथवा संघटन की मात्रा कितनी है। सत्य तो यह है कि हम भारतवासियों में पिछले कुछ वर्षों में स्वार्थ कुछ अधिक मात्रा में आ गया है। हम बहुत कुछ अपने परिवार या सम्प्रदाय की चार दीवारी में घिर गए हैं। प्रत्येक मातापिता अपने पुत्र को व्यक्तिगत जीवन तथा जीविका के उपार्जन में सफल देखना चाहता है। सभी यह चाहते हैं कि उनकी संतान धन-दौलत से माला-माल हो, उस का गृहस्थ सुखमय और ऐश्वर्यशाली हो। परन्तु इतने मात्र से राष्ट्र का काम नहीं चलता। राष्ट्र की मांग कुछ और भी है।

महाभारत का युद्ध हो रहा था और एक रात्री पांडवों के कैम्प में निर्णय हुआ कि कल सेना का संचालन अर्जुन के पुत्र वीर अभिमन्यु करेंगे। दूसरे दिन प्रात. अभिमन्यु धर्म-पत्नी के पास उस के कक्ष में जब विदाई लेने के लिये गये तो उन्हें बाहर आने में तनिक देर हो गयी अभिमन्यु की माता इस विलम्ब को सहन न कर सकी। उस ने अंदर जा अभिमन्यु से कहा—'क्षत्राणियां इस लिये पुत्र उत्पन्न करती हैं कि वे अपनी प्रतिष्ठा और सत्य के लिये रण-भूमि में लड़ते लड़ते प्राणों की आहुति दे दें, न कि इस लिये कि उन के कायर पुत्र गृहस्थ की ममताको लिये हुये विषयका जीवन व्यतीत करें। सचमुच राष्ट्र के जीवन के लिये कुछ इस प्रकार की क्षत्राणियों और क्षत्रिय-पुत्रों की भी अपेक्षा हैं।

बलिदान और त्याग के बिना सहयोग सम्भव नहीं। दूसरे को आराम देने के लिये स्वयं को कष्ट देना ही पड़ता है। हम मिल कर बड़े बड़े प्रयत्न तभी कर सकते हैं, जब कि हम में कुर्बानी की भावना मौजूद हो। बाहिर से ली हुई सैन्य-सामग्री, देश में बनाया हुआ लड़ाई का सामान तभी लाभ देगा यदि मानसिक तौर पर हम में त्याग की भावना हो। और यह एक कटु सत्य है कि इस क्षेत्र में हम अभी बहुत पीछे हैं। हमारा सोचने और काम करने का ढंग बहुत कुछ संकुचित है। और यही कारण है कि हमारी बड़ी बड़ी योजनाएं इतनी सफल नहीं होतीं, जितनी की होनी चाहिये थीं। बेइमानी, छल और धूर्तता के साथ किसी बड़े काम को किया जाना सम्भव नहीं। मजे की बात तो यह है कि सभी इस भ्रष्टाचार की निंदा तो करते हैं, परन्तु इससे दूर रहने का प्रयत्न कोई बिरला ही करता है। प्रशासन उद्योग, व्यापार और दूसरे क्षेत्रों में आज जितनी ठगी और चालाकी दिखाई देती है, शायद आज से पंद्रह वर्ष पहले उसकी मात्रा इतनी नहीं थी। और यही कारण है कि हम बड़े प्रयत्नों में पूरी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

चीनी संकट का मुकाबला करने के लिए जो और बहुत से काम किये जा रहे, उनमे जीवन की पवित्रता को भी जरूरी काम बताना शायद कुछ लोगों की समझ न आये। परन्तु वास्तविकता यह है कि पवित्रता और बलिदान ही विजय के ठीक रूप में प्रतीक है। सारी गीता समाप्त होने पर संजय ने कहा था कि जिस ओर धनुर्धारी अर्जुन और योगीराज कृष्ण हैं, विजय उसी पक्ष की होगी। शास्त्रों ने जीवन की उच्चता को ही परमविजय माना है। इसलिए वर्तमान संकट की स्थिति में यदि हम लोगों ने पवित्रता, बलिदान सेवा और सहयोग के महत्व को समझा तो चीनी शत्रुओं से लड़ने के लिये ये सबसे भयंकर हथियार साबित होंगे।

—०—०—

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ७ माघ २०१८, २०जनवरी १९६३ [अंक२,३

प्रयन्तु नरो अग्निरूपाः

अथर्ववेद के चौथे काण्ड के ३१वें सूक्त में सात मन्त्र हैं। इस सारे सूक्त का देवता मन्यु है। इस में किसी भी प्रकार से आक्रमण करने वाले शत्रुओं को पूर्ण दल बल से पराजित करके उनकी बुरी मनोवृत्ति की दुर्गति बनाने का बड़ा ही वीरता ओज भरने वाला उपदेश दिया गया है। राष्ट्र के नायकों, नेताओं, पथप्रदर्शन करने वालों तथा जनता को जलरूप भी धारण करना पड़ता है। जल के समान शीतलता तथा शांति आवश्यक है। किन्तु सदा के लिए जलरूप धारण करना ठीक नहीं। राष्ट्र की रक्षा, प्रगति, समृद्धि के लिए अग्निरूप भी धारण करना पड़ता है। इसकी भी नितान्त आवश्यकता है। आक्रमणकारी. घाती, द्रोही शत्रुओं को ही अग्निरूप होकर दबाना भगाना तथा पराजित करना होता है। नानाविध शस्त्रों सैनिक शक्ति तथा वीरभावनाओं से अग्नि का ज्वाला मुखी बन कर कार्यक्षेत्र में उतरना पड़ता है। तभी देश की रक्षा हो सकती है यही भक्ति व शक्ति है। महर्षि दयानन्द जी ने प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार व्यवहार के साथ २ यथायोग्य वर्ताव करने का भी आदेश दिया है भारत के श्रीराम, कृष्ण के दोनों जल और अग्निरूप सामने आते हैं। तभी राष्ट्र समुन्नत था—

चीनी आक्रमण के इस अवसर पर वेद के इस सन्देश की बड़ी आवश्यकता है। सारे राष्ट्र के जीवन को अग्नि-रूप मे बदलना है, अग्निमय बनाना है। चीनी घातकों, द्रोहियों का प्रतिकार अग्नि को ज्वाला बनकर ही किया जा सकता है अग्निरूप बन कर चल पड़ो। शत्रु को पराजित कर दो, उसकी बुरी गत कर दो। यह वेद का सन्देश भर दो।

—त्रिलोक चन्द्र

हम अपना खून दे देंगे पर देश की मिट्टी नहीं देंगे

—किला समाज का राष्ट्ररक्षा सम्मेलन—

आर्यसमाज किला मुहल्ला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर रविवार ता० १३ जनवरी दोपहर श्री यश जी पूर्व राज्य शिक्षा मन्त्री पंजाब की अध्यक्षता में शानदार राष्ट्र रक्षा सम्मेलन हुआ। सारा पंडाल नर नारियों से खचाखच भरा हुआ था। आर्यसमाज के अधिकारियों ने यह सम्मेलन रख कर जहां पर आर्यसमाज की देशभक्ति राष्ट्रीय सेवा की भव्य भावना को व्यक्त किया, वहां जनता का भी इस दिशा में पथप्रदर्शन किया है। आज के विषम तथा संकट के समय चीन के आक्रमण के बारे में आर्य समाज अपने कर्तव्य को पूर्ण रूप से निभा रहा है। समाजों आर्य समाज के कालेजों, स्कूलों एव परिवारों ने इस समय अपना रक्त और धन देकर मातृभूमि की सेवा से सन्तान की निष्ठा को निभाया है। यह सम्मेलन भी इसी का परिचायक है। सम्मेलन में बड़ा जोश व उल्लास था।

इस सम्मेलन में श्री प्रकाशदेव जी पूर्व हैडमास्टर श्रीयुत कुन्दन लाल जी आर्य, श्री बनसीलाल जी, प्रो. वेदीराम जी शर्मा एम. ए. पं० ओम् प्रकाश जी महोपदेशक सभा प्रो. सत्यदेव जी विद्यालंकार एम. ए. ने अपने २ ओजस्वी विचार आज की परिस्थिति के बारेमें प्रकट किए। सब की ओर से इस दृष्टिकोण पर विशेष बल दिया गया कि भारत की स्वाधीनता संग्राम में आर्यसमाज क संस्थापक महर्षिदयानन्द सरस्वती ने बड़ा भारी कार्य किया। उन्होंने अपने ग्रन्थों में प्रवचनों तथा वार्तालाप में स्वराज्य की बड़ी चर्चा की है। अपने जीवनकाल में भी राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए बड़ा कार्य किया है। उनके स्थापित आर्यसमाज ने स्वराज्यान्दोलन में बड़ा भाग लिया। आज देश में जितना भी सुधार है। चाहे किसी भी क्षेत्र मे

(शेष पृष्ठ ४ पर)

राष्ट्ररक्षा और आर्यसमाज

ले० श्री सन्तोषराज जी महामन्त्री आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

आर्यसमाज के जन्मदाता महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती हैं। महर्षि में कितना देश प्रेम था यह जानना हो तो सत्यार्थ प्रकाश के पन्ने पलटने से भलीभांति मालूम हो सकता है। महर्षि सत्यार्थ प्रकाश के छटे समुल्लास में लिखते हैं—

'विदेशी राज चाहे कितना भी उत्तम क्यों न हो वह स्वदेशी राज्य, की तुलना नही कर सकता।' सम्मूल्लास ११ वे में लिखते है—'हा भारत' कभी तेरा चक्रवर्ति राज था। संसार के सभी देशो के लोग तेरा पानी भरते थे और आज तेरीयह दुर्दशा है।' वे भारत देश की दुर्दशा को देखकर दुःखी होते और पहरों रोआ करते थे। एक दिन किसी भक्त ने उनको दुःखी देखकर उनसे दुःख का कारण पूछा तो उन्होंने हाय कहकर यह उत्तर दिया कि यह वह दर्द है जो मिटाए न मिटे। आर्यसमाज को इस देशभक्त महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने जन्म दिया। देश प्रेम ता आर्यसमाज को घुट्टी में मिला है।

अब इतिहास के पन्नों पर से अन्धकार छुटता जा रहा है और इस बात की साक्षी मिल रही है कि भारत के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम जिसमे तांतियातोपे और रानी झांसी सरीखे पुत्ररत्न मातृभूमि पर न्योछावर हुए, उसी संग्राम में स्वामी दयानन्द जी महाराज ने योगदान दिया। आर्यसमाज के जन्मदाता के हृदय में देशभक्ति उमड़ती थी तभी तो दयानन्द के भक्तों में, आर्यों ने देश की स्वतन्त्रता संग्राम में जी खोल कर भाग लिया। लाला लाजपतराय आर्यसमाज के भक्त थे और देश के नेता। रामप्रसाद बिसमिल और भक्तसिह आर्यसमाजी घरानों के पुत्ररत्न थे और देश की शमा के परवाने। दर्जनों नहीं, सैंकड़ो आर्यसमाजी देश की स्वतन्त्रता के लिए बलिदान हुए तो लाखों ने देशप्रेम और देशभक्ति में तरह-तरह की यातनाएं झेलीं। आर्यसमाज-रूपी सेना देश भक्ति रूपी भट्टी में से कुन्दन बन कर निकली। देशभक्ति तो आर्यसमाज की रग-रग में है।

महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज को वेद का धर्म दिया। वही वेद जिसमें अनेक स्थलों पर देश-प्रेम, देश-भक्ति और देश रक्षा का शुभ सन्देश मिलता है। पृथ्वी सूक्त पढ़ने से सम्बन्ध रखता है। वेद में आया है—माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्या। यह भूमि मेरी मां और

(शेष पृष्ठ १३ पर)

हम अपना खून तो देंगे पर देश की मिट्टी नहीं देंगे

(श्री यश जी पूर्व राज्य शिक्षामन्त्री का ओजस्वी भाषण)

आर्यसमाज किला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर राष्ट्र रक्षा सम्मेलन हुआ जिसकी प्रधानता करते हुए श्री यश जी पूर्व राज्य शिक्षामन्त्री ने विशाल जनसमूह को सम्बोधित करते हुए कहा—

भारतवासी यह दृढ़ संकल्प कर चुके हैं कि वे शत्रु को खून तो देंगे परन्तु अपने देश की मिट्टी नहीं देंगे तथा शत्रु का मुकाबिला हम अपने पांव पर खड़े होकर अपने बाहुबल से करेंगे परन्तु लड़ाई हथियार खरीदकर नहीं बल्कि खुद अपने देश मे उन्हें तैयार कर के ही लड़ी जा सकती है।

इसलिए हमें प्रत्येक पक्ष मे अपने आप को सुदृढ़ बनाना होगा तथा प्रत्येक क्षेत्र में जोरदार तैयारी करनी होगी। इसी तैयारी पर यह बात निर्भर करती है कि यह लड़ाई कहां लड़ी जाएगी। यदि हम ने यह तैयारी न की तो हमें यह लड़ाई अपने देश के अन्दर लड़नी होगी। यदि हम मजबूत हो गए तो शत्रु को खदेड़ कर उसकी सीमाओं के अन्दर फैंक देंगे और लड़ाई चीन के अन्दर लड़ी जाएगी।

भारत और चीन के सम्बन्ध कभी भी मित्रता पूर्ण नहीं रहे। चीन का भारत पर यह पहला हमला नहीं बल्कि सातवां हमला है। पहले पांच हमलों में यह असफल रहा तथा भारत ने उसे परास्त कर दिया और छटे हमले में उसे कुछ सफलता मिली परन्तु कुछ समय बाद उसका मुंह तोड़ जवाब दे कर उसे पीछे धकेल दिया गया तथा उसे वह मार पड़ी कि कई शताब्दियों के बाद ही उसने फिर इधर का रुख किया है।

चीन ने जब भारत पर छटा हमला किया तब यहां कमजोर राजे राज करते थे जिसका फल यह हुआ कि यह आगे बढ़ता चला आया। परन्तु महाराजा कनिष्कने अपने बाहुबलसे चीनियों का अभिमान भङ्ग किया तथा उसे मारता-भगाता तिब्बत में से धकेलता हुआ मंगोलिया तक ले गया। और यह तो अभी कल की ही बात है कि महाराजा रजीतसिंह के एक सेनापति जोरावरसिंह ने तिब्बत पर हमला कर के चीनियों को मुंह-तोड़ पराजय दी। महाराज अशोक के समय भी चीनियों ने भारत से डर कर 'चीन की दीवार' बनाई थी जो सैंकड़ों मील लम्बी थी तथा इतनी चौड़ी थी कि उसपर चार घुड़सवार एक साथ चल सकते थे। इस से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चीन भारत से कितना डरता था। इसलिए चीन चाहे कितना कपटी क्रूर तथा शक्तिशाली हो भारतीय पूरी तयारी के साथ उस का मुंह तोड़ सकते हैं और तोड़ेंगे।'

चीन के भारत पर वर्तमान हमले की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए कहा कि भारत ने ईमानदारी से यह प्रयत्न किया कि चीनियों के साथ मित्रता बनी रहे। प्रत्येक देश अपने पड़ोसियों से मित्रता चाहता है, और हम यह भी चाहते थे कि कुछ वर्ष शांति से गुजर जाएं और देश अपने पावों पर खड़ा हो जाए। हम प्रजातन्त्र और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ रहे थे परन्तु बर्बर तथा विस्तारवादी चीन यह कैसे सहन कर सकता था, जब कि चीन की तानाशाही के नीचे वहां की जनता भूख और अत्याचार से कराह रही है हमारे देश में धर्म संस्कृति और सिद्धान्त हैं। हम संस्कृति के पुजारी हैं धर्म प्यारा है तथा सिद्धान्तों की हम कद्र करते हैं। परन्तु बर्बरता प्रिय चीन में तानाशाही है, नास्तिकता है, इसलिए उस ने भारत पर हमला किया। मित्रता की आड़ पर उस ने हमारी पीठ मे छुरा घोंप दिया। चीन का राष्ट्रीय चिन्ह सांप है और सांप को चाहे जितना दूध पिलाओ समय आने पर वह डसने से बाज नहीं आएगा। चीन ने ऐसा ही किया। अपनी भूखी जनता की चीखोपुकार से घबराकार उसने तूफान का रुख इधर मोड़ दिया। चीन में प्रत्येक चीज महंगी है तथा प्रत्येक चीज का अभाव है, परन्तु वहां मनुष्य का कोई मूल्य नहीं। वह सब से सस्ती चीज है इस लिए ताना शाही ने उन चीनियों को तोपों की खुराक बनाने के लिए उन्हें नेफा और लद्दाख में झोंक दिया।

चीनियों के सोचने का ढंग भी दुनिया से निराला है, वे किसी मरते को बचाते नहीं, डूबते को पकड़ते नहीं और कहते हैं कि मरते को बचाने से उनका देवता कुपित होता है बल्कि वे उलटे घायल को गोली मार देते हैं। वे सर्वभक्षी हैं। इसलिए हमें यह समझ लेना चाहिए कि हमारा पाला जिस शत्रु से है वहां सभ्यता संस्कृति और धर्म मर चुका है। वहां तानाशाही है। नेता सर्वसाधारण के बीच खुले आम घूम फिर नहीं सकते। हमारे प्रधान मन्त्री जब प्रथम बार चीन गए तो उन्होंने चाऊ-एन-लाई को अपने साथ खुली जीप में जबरदस्ती बिठाया। तब लोगों ने कहा कि उन्होंने अपने डिक्टेटर को प्रथम बार निकट से देखा है। वहां लोगों को किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं है।

अन्त में श्री यश ने आर्यसमाज की महानता को चर्चा करते हुए कहा कि हमारा धर्म हमें सिखाता है कि धर्म की रक्षा बाद में और देश की रक्षा पहले। इसलिए आज का धर्म देश की रक्षा करना है। हमें अपने अन्दर तप त्याग से शक्ति पैदा करनी चाहिए। अटल संकल्प लेकर हम आगे बढ़ेंगे तो कोई कारण नहीं कि हम शत्रु को उसके घर न पहुंचा दें।

(पृष्ठ ३ का शेष)

दिखाई देता है। राष्ट्रभाषा, अछूतोद्धार, स्त्रीशिक्षा शराब बन्दी, समानता भाव तथा अन्य भी जितने उन्नति के काम हैं—इन सब में आर्यसमाज का भारी हाथ व सहयोग है। यदि महात्मा गांधी को राष्ट्र का पिता कहा जाता है तो स्वामी दयानन्द को राष्ट्र का पितामह कहा जा सकता है। आज देश के सामने संकट है। आर्यसमाजें व इसकी संस्थाएं अपना रक्त तथा धन दे रही हैं। आर्यसमाज इस दिशा में जनता में अपने विचार देती रहे। श्री विश्वेश्वर नाथ जी की दो छोटी बच्चियों ने भारत माता का एक मीठा गीत कर कमाल कर दिया। बड़ा ही प्रभाव पड़ा!

अन्त में सम्मेलन के माननीय प्रधान श्री यश जी पूर्व राज्य शिक्षा मन्त्री ने अपने अध्यक्षीय भाषण में ऐसे स्फूर्ति देने वाले, रहस्यों का उद्घाटन करने वाले, जनता का जागरण उद्बोधन करने वाले अत्यन्त प्रभाव से भरे हुए भाषण द्वारा सारे वातावरण में एक नया जीवन फूंक दिया। महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज के प्रति हार्दिक श्रद्धा प्रकट करते हुए जनता को वास्तविक स्थितिसे अवगत कराया। आप का भाषण बड़ा ओजस्वी था। अगले अंक में यह भाषण पाठकों के लिए दिया जाएगा। राष्ट्ररक्षा का यह सम्मेलन बड़ा ही सफल तथा स्फूर्तिदायक रहा।

आर्यसमाज और भारत पर चीन का आक्रमण

(ले० महामना ला० देवी चन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर

हमारा देश एक हजार वर्ष की दासता के बाद १५ अगस्त १९४७ को स्वतन्त्र हुआ था। स्वतन्त्रता के लिए हमारे देश में आग सुलगती रही है। मुसलमानों के विरुद्ध आन्दोलन चला, उस में शिवाजी, राणा प्रताप, राणा सांगा, बन्दा-वैरागी आदि महा पुरुषों ने भाग लिया। सन् १८५७ में सारे देश में भारी क्रान्ति हुई। आर्यसमाज उस समय स्थापित नहीं हुआ, परन्तु ऋषि दयानन्द मौजूद थे। महर्षि दयानन्द स्वतन्त्रता के बड़े उपासक थे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में लिखा है कि विदेश राज्य कितना ही अच्छा क्यों न हो, स्वदेशी राज्य की तुलना नहीं कर सकता। यह वही बात है जो इंगलिस्तान के सर हैनरी कैम्प बल बैनर ने कही थी—Foriegn Government however good is no substsiute for self government वेद भगवान् में भी स्वराज्य प्राप्ति के अनेक मन्त्र देखने मे आते हैं महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के ११ वे समुल्लास में लिखा है कि भारत वर्ष का चक्रवर्ती राज्य था। राजसूय यज्ञ में अन्य देशों के राजे भारत सरकार की आज्ञानुसार सम्मिलित हुए थे। उनके नाम भी स्वामी जी ने दिए है। सन १८५७ के आन्दोलन में महर्षि दयानन्द का भी हाथ था। इतिहास के लेखक पहले यही समझते रहे हैं कि ऋषि दयानन्द ने गदर आन्दोलन में कोई भाग नहीं लिया। परन्तु आधुनिक इतिहास के विद्वानों का यह विचार है कि १८५७ के आन्दोलन में महर्षि का गुप्तरीति से हाथ था क्योंकि उनकी जीवनी में इन दो तीन वर्षों का पता नहीं लगता कि ये कैसे और कहां गुजारे। मेरा निजी विचार है कि ऋषि जैसा महापुरुष जो ३३ वर्ष की आयु में स्वतन्त्रता का देवता हो वह चुप कैसे बैठ सकता है तथा तमाशबीन की शकल में सारे आन्दोलन को नहीं देख सकता था। यह अनुसन्धान का विषय है, जिस पर आशा है कि विचारशील सज्जन खोज करेंगे मुसल्मानों के राज्य के बाद अंगरेजों का हमारे देश पर राज्य हो गया। भारत १५० वर्ष तक दास रहा। महात्मा गांधी ने देश को अंग्रेजी राज्य से मुक्त कराने के लिए सन् १९१९ व १९४२ में आन्दोलन चलाये। उनमें आर्य समाज का शानदार भाग इतिहास की साक्षी रखता है। पंजाब में जितने आदमी जेलों में गए, उन मे से ६० प्रतिशत आर्यसमाजी थे। लाला लाजपतराय, सरदार भगत सिंह, स्वामी श्रद्धा नन्द, भाई परमानन्द के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। जिन्हों ने महात्मा गांधी के आन्दोलन में भाग लिया, जेल गये तथा १८५७ के आन्दोलन को सफल किया। १५ अगस्त १९४७ को हमारा देश स्वतंत्र होगया, स्वतन्त्रता बहुमूल्य है। इसका आनन्द वही लोग अनुभव कर सकते है जो स्वतन्त्र हैं। और जो निर्धनता व अज्ञान के वशीभूत नहीं हैं।

इंगलिस्तान के कवि ग्रे ने लिखा है—Chill Poverty represses the geniel current of the soul निर्धनता आनन्द के प्रवाह को रोकती है। इन १५ वर्षों में हमारी सरकार ने निर्धनता को दूर करने का यत्न किया तथा पंच वर्षीय योजनाएं बनाई। इस समय तीसरी पांच वर्षीय योजना चल रही है, जिस पर एक सौ अरब रुपये व्यय करने के अनुमान है। परन्तु हमारी सरकार से यह भूल हुई कि देश की रक्षा की ओर इतना ध्यान नहीं दिया। पाकिस्तान से तो कुछ भय देश को था पर चीन को हम अपना मित्र समझते थे और यू. एन. ओ. में प्रविष्ट होने के लिए हमारी सरकार चीन के हक में वोट देती थी। परन्तु चीन ने धोखा दिया उस का देश हथियाने का लोभ बढ़ता गया। उस ने १२ हजार वर्गमील भूमि देश की छीन ली। भूटान, नेपाल, सिकिम पर भी आंखें लगाये है। वह यह प्रकट करना चाहता है कि एशिया मे सब से बड़ी शक्ति चीन की है भारत की नहीं। अब उस ने नीफा व लद्दाख पर आक्रमण कर के ६ हजार वर्गमील भूमि पर अधिकार कर लिया है। जार्ज बर्नार्ड शा ने ठीक कहा है—It is dangerous to be too good. राजनीति में शराफत पाप है। हमें निराश नहीं होना चाहिए। नीफा, लद्दाख मे हम पीछे हटे हैं क्योंकि युद्ध के लिए हम तैय्यार न थे। पर अब भारत ने निश्चय कर लिया है कि चीन का एक चप्पा भी भूमि नहीं देंगे तथा भारत से बाहर धकल देंगे वेद कहता है—त्रयो दासा अञ्जनस्य तक्मा बलास आदहि अर्थात् जो ज्ञानी है उसे तीन वस्तुएं अपने आधीन रखनी हैं। १—तक्मा —निकृष्टता का भाव दिल में न आये २—बलास निराशा वादी कदापि न होना चाहिए ३—आदहि —इन्द्रियों पर दमन रखना चाहिए। जो जाति भोग विलास में पड़ जाती आलसी हो जाती तथा धैर्य साहस खो बैठती है, वह स्वतन्त्र नहीं रह सकती। हिटलर ने जब फ्रांस पर आक्रमण किया तो बूढ़े जनरल मार्शल पेटां ने कहा कि फ्रांस की हार का कारण फ्रांस का भोग विलास व निरुत्साह का भाव है। प्रधान मन्त्री ने यह कह दिया है कि यह युद्ध कितनी देर भी चले हम लड़ेंगे तथा चीन को बाहर निकाल कर दम लेंगे। महायुद्ध में चर्चिल निरुत्साह नहीं हुआ, स्टालिन ने जाति को उत्साहित किया तथा हिटलर को पराजित किया। यह प्रसन्नता है कि इस युद्ध ने, जिसे मैं परमात्मा की ओर से देशोद्धार के लिए एक वरदान समझता हूं, आंखे खोल दी हैं। युद्ध देशों को जीवित रखने के लिए कभी २ आवश्यक होता है। इस आक्रमण ने भारत की एकता मे वृद्धि की है। राष्ट्र के सारे दल अपने भेदभाव त्याग कर एकत्रित होकर चीन के मुकाबिले पर तैयार हो गये हैं। करोड़ों रुपये इकट्ठे हो गए हैं. युवक भरती हो रहे हैं। रायफल कल्ब खुल गए हैं। अमरीका, इंगलिस्तान, कनाडा, फ्रांस, इटली, जापान, आस्ट्रेलिया ने आर्थिक व जंगी सहायता का आश्वासन दिलाया है। देश को युद्ध सामग्री दे रहे हैं। जो धन इकट्ठा हुआ है वह इतना बड़ा नहीं है। दो तीन जंगी जहाज पर ही करोड़ों रुपये लग जाते हैं।

पाकिस्तान हमारे कष्ट से अनुचित लाभ उठाना चाहता है। यह उसकी भूल है। वह घबराता है कि इंगलिस्तान व अमरीका भारत को युद्ध का सामान क्यों देते हैं। ये देश यह सामान भारत रक्षा के लिए नहीं अपितु पाकिस्तान की तथा सारे विश्व की शांति की रक्षा के लिए सहायता दे रहे हैं। श्री सैंडीज व हैरेमन प्रतिनिधि यहां आए थे। उन्होंने यह बात अयूबखां को कह दी थी। इंगलिस्तान के वयोवृद्ध फिलास्फर बरट्रेंड रसल, जिनकी आयु ९० वर्ष है, ने चीन को झाड़ डाली है, भारत के पक्ष को सत्य माना है। मिश्र के नासिर, घाना के प्रधान, मलाया के प्रधानमन्त्री टंकू जी

(शेष पृष्ठ १२ पर)

उठो और जागो

(प्रिंसिपल पं रलारामजी एम.ए.एम एल.ए.डी.ए.वी.कालेज होशियारपुर)

उपनिषद् में उपदेश आता है—उत्तिष्ठत जाग्रत—उठो और जागो। यह जीवन का महत्व पूर्ण सन्देश है जो कि व्यक्ति और देश दोनों के जीवन के लिए बड़ा आवश्यक है। जाति के विशाल जीवन में दो प्रकार के समय होते हैं—एक शांति तथा दूसरा युद्ध का। प्रत्येक देश को प्रायः इन दोनों युगों में से गुजरना पड़ता है। कोई भी ऐसी जाति नहीं जिसे संग्राम से कभी न कभी गुजरना न पड़ा हो। कभी राष्ट्र की जनता को भूख से युद्ध करना होता है कभी अन्दर की बुराइयों व बीमारियों से लड़ना पड़ता है। कभी अविद्या अज्ञान से तथा कभी निर्धनता से टक्कर लेनी पड़ती है और कभी शस्त्रों द्वारा प्रहार करने वाले शत्रु से सामना करना होता है। इस प्रकार प्रत्येक अवस्था में सारी जनता को सतर्क, सचेत और सावधान होकर जागना आवश्यक है। थोड़ी सी भी असावधानी हुई तो सारी जाति अपनी जीवन की दौड़ में पीछे रह जाती है।

राष्ट्र के पास दोनों नीतियों का होना बड़ा जरूरी है। जीवन में सरलता भी चाहिए। इसका भी बड़ा महत्व माना गया है पर सरलता के साथ नीति भी चाहिए ही। युद्धकाल में मायावी बनना भी आवश्यक है। इसके बिना जीवन में विजय नहीं मिलती। इतिहास में आता है कि शिवाजी मिठाई के टोकरे में बैठकर जेल से बाहर आ गए। मुगल सेनापति अफजल खां को मार दिया। यदि ऐसी नीति धारण कर के वह पहिले कर न सकते तो उनका गला घूंट दिया जाता। शिवा जी चतुर था। मायावी शत्रु के साथ मायावी बनना ही विजय पाना है। यह नीति आवश्यक है। महात्मा गांधी लोकमान्य तिलक के बारे में लिखते हैं—

जब वह धर्म के बारे में बात करते तो कहते थे कि मैं तो एक ही धर्म जानता हूं, किसी भी क्षेत्र में हो—टेढों में कभी सीधा न बनना चाहिए यह महापाप है। टेढों में सीधा बनना पाप है तथा सीधों में टेढा होना भी पाप है। यही धर्म है। मायावी से सीधेपन से काम निकालना सम्भव नहीं। ऋग्वेद में इन्द्र और वृत्र युद्ध प्रसंग में इन्द्र के लिए एक विशेषण आता है—मायावी इन्द्र. माया को भली-भान्ति जानने वाला इन्द्र है। शत्रु चाहे अन्दर का या बाहर का हो, उस से सदा होशियार रहने की आवश्यकता है। शत्रु के छल, फरेब, माया कपट को समझने वाला हो। हमारे पूर्वज वीर थे। संसार के इतिहास में उन की ख्याति है। सरलता के सुन्दर प्रतीक थे पर मायावी वृत्रों के सामने आजाने पर उनकी माया का उत्तर उसी नीति से देना भी जानते थे।

आज हमें चीनियों से वास्ता पड़ा है। इन्होंने भारत के साथ कितना मायावीपन का प्रयोग किया है। बोमडेला और सेला में चीनी सैनिक बौद्ध भिक्षुओं का वेश पहिन कर आये। सैनिक रूप में नहीं आये। जब चोले उतार कर गोलियां चलाने लगे तो पता लगा कि इन का अन्दर का नग्न रूप क्या है? सीधा सोटा होना तो यश की बात नहीं है। जो टेढ़ा होकर आता है उस से सरलता कैसी? It is worst to be deceived by others—अर्थात् दूसरों से ठगा जाना बहुत बुरा है। १५० वर्ष तक भारत में कोई लड़ाई नहीं हुई। अपनी भूमि पर पहली बार अपने ही देश के लिए संग्राम करना पड़ा है। शत्रु के छल को समझना उतना ही जरूरी है जितनाकि वीरहोना आवश्यक है। हमारे देश में महिलाएं भी इस शत्रुनीति में बड़ी निपुण होती थीं। किरातार्जुनीय महाकाव्य में द्रौपदी धर्मपुत्र युधिष्ठर को कितना वीरता भरा सन्देश दिया है। व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिन जो लोग मायावी शत्रु से मायावी होना नहीं जानते वे अपमान को प्राप्त करते हैं। मायावी से मायावी होना बड़ा आवश्यक है यह good character का चिन्ह है। सरलता अच्छी है पर जो स्वयं सरल हों। किन्तु जो स्वय सरल न हों उनसे सरलता दिखाना ठीक नहीं है। मायावी शत्रु की चालें समझनी चाहिए। The fool never be a Virtuous Person—कारलायल लिखता है।

हमारी जाति मे किसी बात की कमी नहीं। किन्तु मायावी के साथ मायावी बनने का गुण जाति में कम हो गया। नीति मे भूलें हुई जिसका फल कई बार हमें कटु अनुभव करने पड़े हैं। युद्ध मे पीछे हटना कोई बुराई नहीं। आज के युद्ध में हम कुछ पीछे हट आए। इस पर चिन्ता करने की कोई बात नहीं है। चीनी बड़े निर्दयी हैं, माने हुए कठोरदिल हैं। अपने देश में विरोधियों को तो समाप्त कर दिया है। तिब्बत पर अधिकार कर लेने पर वहां के निवासियों को इन चीनी कम्युनिस्टों ने समाप्त करके रख दिया। उन में तो दया का नाम तक नहीं है। तिब्बत में इन चीनियों ने ५० हजार तिब्बतियों से तीन साल तक सड़कें बनवाते रहे। सारा दिन काम करा कर दो मुट्ठीभर चावल देते थे। किसी ने काम किया तो ठीक अन्यथा गोली मार कर खड के नीचे गिरा दिया। आपने an easy morsal नहीं बनना प्रत्युत आपने तो लोहे के चने बनना है, जिन से शत्रु के दान्त भी टूट जाएं। कोई भी हमारी भलता का अनुचित लाभ न उठा सके। जीवन में इसी नीति को अपना कर शत्रु का मुकाबिला करना चाहिए। जो इस नीति में जागता नहीं उसके लिए न धर्म का स्थान है और न ही वह राष्ट्र की सेवा कर सकता है। मर्यादा तोड़ने पर उसका बाद में पता लगता है। यदि हमने पनपना है और जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफलता पानी है तो उत्तिष्ठत् जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत जागना होगा, सचेत सावधान होना पड़ेगा। ठीक कहा है कि Eternal vigilance is the price of liberty लगातार सचेत होना जागते रहना ही स्वाधीनता का मूल्य है। यदि हम ने अब भी पाठ न पढ़ा तो कब समय आएगा। आज देश की स्वाधीनता को सुरक्षित रखना है। धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम्—किसी को न मारना धर्म है पर किसी समय मार देना भी धर्म है। घर पर यदि चोर आता है तो उसे मारना ही धर्म है। कर्म क्या और अकर्म क्या है—यह गम्भीर प्रश्न है। भगवान् कृष्ण ने कहा था—किं कर्म किम कर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः। किस स्थान पर क्या बात धर्म और क्या अधर्म है—इसका निर्णय सरल नहीं है हिंसा कहां धर्म और कहां अधर्म है—इस का निश्चय विचार से ही होता है। मनु जी ने लिखा है कि पिता की रक्षा पूजा करनी चाहिए पर जब आततायी बन कर आता है, उससे धर्म को, राष्ट्र को भय हो, उस समय उसको मारना ही धर्म कहा गया है।

(शेष पृष्ठ १३ पर)

वैदिक साहित्य में, वैदिक ग्रन्थों में राष्ट्र का अत्यधिक महत्व प्रतिपादित किया गया है। इस शब्द में आर्यों की बड़ी भावना, बड़ी मार्मिकता और प्रोज्ज्वल अनुभूति निबद्ध है। अथर्ववेद में देशभक्ति की भावना को जागृत करने के लिए एक मातृभूमि सूक्त ही आया है। वहां एक मन्त्र में लिखा है 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' पृथ्वी मेरी माता है और मैं इसका पुत्र। आज जब चीन ने भारत की सीमाओं पर अपना नीचतापूर्ण एवं विश्वासघाती आक्रमण कर दिया है और भारत के वीर सैनिकों ने परिस्थितियों की प्रतिकूलता होते हुए भी जिस साहस, बल और शक्ति का परिचय देते हुए उनका जवाब दिया है वह प्रशंसनीय है। याद रखिए भारत की प्राचीनकाल से यह परम्परा चलती आई है कि राष्ट्र के अभ्युदय के लिए और राष्ट्र पर किए गए शत्रुओं के आक्रमणों को विफल बनाने के लिए आर्य लोग अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार रहते थे। उनकी यह हार्दिक अभिलाषा थी कि वरुण राष्ट्र को अविचल करें, बृहस्पति राष्ट्र को स्थिर करें, इन्द्र राष्ट्र को सुदृढ़ करें और अग्निदेव राष्ट्र को निश्चल करें—

ध्रुवं ते राजा वरुणो
ध्रुवं देवो बृहस्पतिः।
ध्रुवं त इन्द्रश्चाग्निश्च
राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम्॥
ऋग्वेद १०-१७३-५

प्राचीनकाल में जब देश पर कोई विदेशी शत्रु आक्रमण करता था तो उस समय नागरिक शासकों को यह विश्वास दिलाते थे कि 'राजन् तुम निश्चिन्त होकर उन शत्रुओं का नाश करो जो अपनी सेना लेकर हमारे राष्ट्र में युद्ध करने को आरहे हैं, जो हम से द्वेष करते हैं उन्हें अभिभूत करो। विश्वास रखो कि राष्ट्रीय संकट की इन घड़ियों में राष्ट्र का प्रत्येक दल, प्रत्येक प्रांत, प्रत्येक वर्ग

भ्रम न किसी को हो कि अरक्षित भारत की सीमायें

(सुरेशचन्द्रजी वेदालंकार एम.ए.एल.टी. डी.ए.वी.कालेज गोरखपुर)

तुम्हारे रक्षा के कार्य में तुम्हारी सहायता करेगा।

अभिनृत्य सपत्नानभि या
नो अरातयः।
अभिपृतन्यतं तिष्ठाभि यो
न दुरस्यति।
ऋग्वेद १०-१७४-२

आज सबसे बड़ी आवश्यकता है मातृभूमि के पौने चवालीस करोड़ पुत्रों को इकट्ठा होकर राष्ट्र रक्षा के कार्य में जुटने की। आज सब से बड़ी आवश्यकता है राष्ट्र सभी वर्गों, सम्प्रदायों और भाषा भाषियों को पं० नेहरू के कदम के साथ कदम मिलाने की आज सब से बड़ी आवश्यकता है भारत के रक्षामन्त्री चह्वाण ललकार के साथ शत्रु को ललकारने की, आज सब से बड़ी आवश्यकता है मातृभूमि की श्रद्धा की भावना को हृदय के कोने २ में स्थापित करने की। आज प्रत्येक भारतवासी सरकार को, राष्ट्रपति को अपने प्रधानमन्त्री को यह विश्वास दिलाये और स्पष्ट रूप से कह दे—

आत्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुव-
स्तिष्ठा विचाचलि।
विशस्त्वा सर्वा वांछन्तु
मात्वाद्राष्ट्रमिधभ्रशत्।
ऋग्वेद १०-१७३-१

अर्थात् हे राष्ट्र के नायको, इस देश के शासको तुम राष्ट्ररक्षा के कार्य में अविचल रहो, अटल रहो, अडिग रहो और तुम्हारे इन बहादुरी के कार्यों को देखकर प्रजा में तुम्हारी प्रशंसा करें। याद रखो यह राष्ट्र नष्ट न होने पावे। शत्रु को को परास्त करके ही हम दम लें। आगे और भी उत्साह भरे शब्दों में प्रजा अपने शासक से कहती है :—

इहेवैधि माप च्योष्ठाः
पर्वत इवाविचा चलिः।
इन्द्रा इवेह ध्रुवस्तिष्ठेह
राष्ट्र मुधारयः।
ऋग्वेद १०-१७३ २

अर्थात हे भारत के राष्ट्रपति तुम पर्वत के समान दृढ़ और अविचल होकर राष्ट्ररक्षा करो। इन्द्र के सदृश निश्चल होकर यहां रहो और इस राष्ट्र को धारण करो। याद रखो, इस देश का प्रत्येक प्रजा जन सब प्रकार के कष्टों को सहता हुआ सदा तुम्हारा साथ देने को तत्पर है। वह यह राजा से ही नहीं कहता था परन्तु स्वयं भी राष्ट्र रक्षा को अपना परम कर्तव्य मानते हुए कहता था :—

अहमस्मि सहमान
उत्तरो नाम भूम्याम्।
अभिषाडस्मि विश्वा-
षाडाशामाशां विषासहिः।
अथर्ववेद १२-१-५४

अर्थात् विश्वास रखो, मैं अपनी मातृभूमि के लिए और उसके दुःख विमोचन के लिए सब प्रकार के कष्ट सहने को तैयार हूं—वे कष्ट जिस ओर से आवें, जिस समय आवें, मुझे चिन्ता नहीं। युद्ध और संघर्ष घबराने की वस्तु नहीं। संसार के सभी विकास के कार्य युद्ध के समय होते हैं। क्या हुआ यदि चीन ने हमारे देश पर आक्रमण किया है। यह एक निश्चित सत्य है कि इस युद्ध में चीन की पराजय होगी। भारतमाता की जय जय कार करते हुए हमें सफलता प्राप्त होगी।

इन शब्दों के साथ मातृभूमि की रक्षा एवं वन्दना की बातें मातृभूमि आदि सूक्तों में की गई हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि यह मातृभूमि क्या है, उसका क्या रूप है। योगिराज श्री अरविन्द ने मातृत्व की भावना जागृत करते हुए लिखा था 'भारत की एक आत्मा है। ऐसी ही आत्मा है जैसी कि वैयक्तिक पुरुष की एक आत्मा होती है। भारत की वही आत्मा अति प्राचीनकाल से ऋषि-मुनियों के आदि काल से इस देश की सर्वविध उन्नति का अधिष्ठातृत्व करती रही है। देश के भाग्य-विधाता उसी की प्रेरणा को समय समय पर अनुभव करते रहे हैं और आज भी कर सकते हैं।' परन्तु इस माता की उन्नति एवं आक्रमण से रक्षा के लिए हमें प्रयत्न करना होगा। भारत की रक्षा का उत्तरदायित्व मैं समझता हूं कि सब की अपेक्षा हम पर अधिक है। आर्यसमाज की यह परीक्षा वेला है। अतः प्रत्येक आर्यसमाज आज आगे आकर इस कार्य में देश का नेतृत्व करे।

आर्यसमाज मन्दिर टोहाना में अखण्ड गायत्री यज्ञ

१-२ जनवरी को आर्यसमाज मन्दिर में गवर्नमेण्ट गर्लज हाई स्कूल टोहाना की छात्राओं ने २४ घण्टे का अखण्ड गायत्री यज्ञ किया जिस से सारे नगर में सुगन्धी फैल गई।

भवदीय
बृजलाल गुप्त
प्रधान आर्यसमाज

भक्ति और शक्ति

(कैप्टन बूटाराम जी मन्त्री वेद प्रचारिणी सभा होशयारपुर)

हमारी वैदिक संस्कृति का एक ही सन्देश चला आया है कि ईश्वर के विश्वासी बनकर वेदों की आज्ञा को अपने जीवन का आधार बनाओ जब भी इन नियमों का उल्लंघन हुआ तभी देश का पतन हुआ। भारतवासी जब तक इन मर्यादाओं को पालते रहे, संसार में यशस्वी बने रहे तथा सार्वभौतिक चक्रवर्ती राज्य के भी भोक्ता बने रहे। यह बात निर्विवाद है कि भारत का पतन उसी समय आरम्भ हुआ जब यह वेदपथ को छोड़कर मतमतांतरों के जाल में फंस गया। इसीके परिणाम स्वरूप हमारा देश लम्बे समय तक दूसरों का पादाक्रान्त रहा। ईश्वरीय आज्ञा को भंग करने का फल मिलना था और मिल के रहा। जैसे भूमि में पड़ा हुआ बीज अदृश्य हो कर समय आने पर अनुकूल साधनों को पाकर अंकुरित हो जाता है। ऐसे ही देशवासियों के सौभाग्य से ईश्वरीय धर्म महर्षि दयानन्द के सतत प्रयत्नों से पुनः पल्लवित हो गया है तथा पुरातन गौरव को प्राप्त कर रहा है। कोई माने या न माने, भारत के पुनरुत्थान में वैदिक धर्म के सिद्धान्तों का ही सब से बड़ा हाथ है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले तथा बाद भी देश ने इन मर्यादाओं को जितनी मात्रा में अपनाया है उतनी ही मात्रा में सफलता प्राप्त की है यह निश्चय जानिए कि पूर्ण सफलता तभी प्राप्त होगी जब हमारा विधान वेद के सिद्धांतों पर आधारित होगा। उस विधान में ईश्वर विश्वास का प्रमुख स्थान होगा।

निस्सन्देह ऐसी ही विधान सब सुख समृद्धि का देने वाला एवं समस्त गुणों से भरपूर होगा। श्री राम चन्द्र जी महाराज का लोक प्रसिद्ध रामराज्य, जिस का महात्मा गांधी जी स्वप्न लिया करते थे और उसे अपना आदर्श मानते थे, इस का ज्वलन्त उदाहरण है। रामराज्य वैदिक मर्यादाओं पर ही तो अवलम्बित था। ईश्वर करे कि हमारे देश में फिर से उन्हीं मर्यादाओं एवं आदर्शों का बोलबाला हो। महाभारत काल में श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज ने, वर्तमान युग के सन्तों तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने बड़े प्रयत्न किये। अपना जीवन सर्वस्व समर्पित कर दिया। इस अमर सन्देश को दो शब्दों में कहना हो तो यह भक्ति और शक्ति का ही सन्देश है। भक्ति के बिना शक्ति पाशविक शक्ति का रूप धारण कर लेती है तथा संसार के कष्ट का कारण बन जाती है। इसी प्रकार शक्ति के बिना भक्ति भी अधूरी है। क्योंकि शक्ति नहीं तो कोई भी राष्ट्र व जाति का जीवन प्रगति पथ पर चल नहीं सकता। शक्ति विहीन देश में भक्ति के लिए निश्चिन्तता नहीं आ सकती। इन दोनों का समन्वय ही समाज की समुन्नति का साधन है। सारे राष्ट्र का कल्याण इसी में है कि वह न केवल वर्तमान समय में प्रत्युत सदा के लिए ही इसे आदर्श सिद्धांत तथा जयघोष को सामने रखे तभी राष्ट्र सफलता पायेगा। वह जयघोष है भक्ति और शक्ति ब्रह्म बल तथा शस्त्र बल। राष्ट्र को दोनों चाहिएं।

गलत फहमियां न सुनें न सुनाएं

वेदों में मातृभूमि की भक्ति

(ले० पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी पारडी सूरत)

वेद में मातृभूमि की सेवा करने का उपदेश है —अथर्ववेद में कहा है कि—माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्याः। मेरी माता भूमि है और उस माता भूमि का मैं पुत्र हूं। प्रत्येक मनुष्य अपनी मातृभूमि को अपनी सच्ची माता माने और उस मातृभूमि का मैं पुत्र हूं ऐसा वह समझे। मातृभूमि का शत्रु के आक्रमण से संरक्षण करने का मेरा आवश्यक कर्त्तव्य है. ऐसा विचार अपने मन में सतत जाग्रत रखो। तथा अपनी मातृभूमि का उद्धार करने के लिए अपना बलिदान करना मुख्य कर्त्तव्य है, ऐसा अपने मन का निश्चय करे इस विषय में कहा है—

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवी प्रसूताः। दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम्।

अथर्व० १२-१-६२

अनमीवाः अयक्ष्मा ते उपस्थः नीरोगी और आरोग्य सम्पन्न होकर हम तेरी सेवा करने के लिए तेरे पास आकर रहेंगे। नः दीर्घं आयुः— हमारी आयु दीर्घ हो। प्रति बुध्यमाना—हमें ज्ञान तथा विज्ञान उत्तम रीति से प्राप्त हो। वयं तुभ्य बलिहृतः स्याम—हम तेरी उन्नति करने के लिए अपना बलिदान करने वाले हों। हे पृथिवी ते प्रसूता अस्मभ्यं सन्तु—हे मातृभूमि। तेरे अन्दर जो भोग के योग्य पदार्थ उत्पन्न होते हैं वे हमें ही मिलें। उन पर शत्रु का अधिकार न हो। मातृभूमि पर जो भोग उत्पन्न होते हैं उन पर उस मातृ भूमि के पुत्रों का ही अधिकार है। कोई शत्रु उस को अपने अधिकार में [illegible] के मातृ भूमि के पुत्रों [illegible] वंचित न रखे। जो शत्रु ऐसा करेगा वह दण्डनीय होगा!

ये ग्रामा यदरण्य याः सभा अधिभूम्याम्। ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारुवेदम ते॥ अथर्व १२-१-५६—जो ग्राम हैं, जो अरण्य हैं, मातृ भूमि में जो सभाएं होती हैं, जो युद्ध होते हैं और जो समितियां होती हैं, उन में उपस्थित रह कर मातृ भूमि का हित करने के लिए जो उत्तम बोलने की आवश्यकता होगी वही उत्तम भाषण मैं करूंगा। मैं कदापि मातृभूमि के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं बोलूंगा। ऐसी प्रतिज्ञा हर एक मातृ भूमि के पुत्र को करनी चाहिए।

अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्। अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहिः। अथर्व १२-१-५४

अहंसहमानः अस्मि-मैं शत्रु का पराभव करने के सामर्थ से युक्त सर्वदा तैयार रहूंगा भूम्याम् उत्तरः नाम—अपनी मातृभूमि में अधिक श्रेष्ठवीर बनकर रहूंगा। अभीषाड् अस्मि-शत्रु का सब प्रकार से पराभव करने में पूर्ण सामर्थवान् बन कर रहूंगा। विश्वाषाड्-सब प्रकार के शत्रुओं का नाश करने वाला हूं। आशां आशां विशाषहिः—प्रत्येक दिशा में शत्रु का पूर्ण रीति से पराभव करने की शक्ति मुझ में है। इस मन्त्र के आदेश बनाने वाले पद 'सहमानः, उत्तरः, अभीषाड्, विषासहि' ये हैं। सब प्रकार के शत्रुओं का पूर्णपराभव करने का सामर्थ्य अपने राष्ट्र में बढ़ाने का उपदेश ये पद दे रहे हैं। जिस राष्ट्र में ऐसा सामर्थ्य होगा वह नित्य विजयी होगा।

(शेष पृष्ठ १३)

वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।

(ले० राजेन्द्र जी जिज्ञासु M.A. घु॰ी)

आज हमारी पावन जननी को संकट का सामना करना पड़ रहा है। तेजस्वी और प्रतापी राष्ट्रों को संकट से घबराने की आवश्यकता नहीं होती। विघ्न बाधा और विपत्तियां जातियों को उठाने और जगाने का काम भी करती हैं। आज दानव दल हमारी सीमा का उल्लंघन कर के हमारी भूमि में दनदना रहा है। ऐसी विषम स्थिति में हमारा क्या कर्त्तव्य है ? राष्ट्र रक्षा कैसे हो?

हम वैदिक धर्मी हैं। वेद ज्ञान विज्ञान का भण्डार है। जीवन की प्रत्येक समस्या का समाधान करने के लिये वेद सदा मानव का पथ प्रदर्शन करने की क्षमता रखता है। राष्ट्र के प्रत्येक निवासी को मातृभूमि प्रति आज निष्ठा को धारण कर के जननी के प्रति यह उद्गार व्यक्त करने हों गे :—

वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम !

हम सदा सजग रहें और आवश्यकता के समय प्राण तली पर धर कर सर्वस्व त्यागने को भी तयार रहें। स्वराज्य का मूल्य चुकाना पड़ता है, एक बार नहीं बार बार और निरन्तर चुकाना पड़ता है। स्वराज्य का मूल्य क्या है ? राजनीति शास्त्र वाले कहते हैं कि Vigilance is the price of liberty.'

जागरण स्वराज्य का मूल्य है। वेद भी कहता है कि आर्यो ! सज्जन पुरुषो ! हे मानव पथ के अवलम्बी लोगो जागते रहो। सोने का परिणाम यही होता है कि डाकू और हिंसक लोगों को कुकर्म का अवसर मिलता है।

राष्ट्र भूमि की रक्षा के लिये मां भारत पर बलिदान देने वाले वीरों की अमर कहानी याद कर के हमें जन जन में चेतना का संचार करने की आवश्यकता है। शत्रु से लोहा लेने के लिये जनजीवन में साहस की ज्वाला का होना आवश्यक है। एक-एक भारती को आज मां से यह वर मांगना चाहिए :—

भर्ग वर्चः पृथिवी नो दधातु।

मातृ भूमि हमें ऐश्वर्य और तेज प्रदान करो। आओ मां से मिलकर कहें—चारू वदेम ते। वेद हे माता आज संकट के समय हम तेरे हित की कामना करे, तेरे लिये सुन्दर भाषण करें। द्रोही और पाजी न बने। माता हम तेरी रक्षा के सब उपाय करें ताकि हम वेद के शब्दों में यह कहने के अधिकारी बनें। मातृ भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः। भूमि हमारी माता है और हम इसके पुत्र हैं।

राष्ट्र रक्षा के लिए विलासिता और प्रमाद के उन्माद से बचें। आराम हराम है हमारा नारा बन जाये। स्वाधीनता को डसने वाला सब से भयकर नाग भोगवाद है। संयम और पराक्रम स्वाधीनता के सब से बड़े प्रहरी हैं। वेद का आदेश है ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति। अर्थात् ब्रह्मचर्य के तप से ही राजा राष्ट्र की रक्षा करता है। इस वेद आज्ञा का महत्व समझें। हम भोगवाद की सब सामग्री फूंक कर सच्चे आर्य बनकर मां धरती सब ऐश्वर्यों का उपभोग और उपयोग करे परन्तु भोगवादी व विलासी न बनें।

चीनी आक्रांता को खदेड़ कर हम सच्चे वैदिक वीर बनकर अपने इस आदर्श को मूर्त्त रूप दें।

'नवीष्ठवे नमते—ऋ ६—२४—८

अर्थात् वीर; दुष्ट वैरियों के सामने झुका नहीं करते। पिशाचों और दुराचारियों के सामने झुकने का ढंग वीरों को आता ही नहीं। वैदिक वीरों के सामने पर्वत भी मैदान के समान होते हैं। सागर की गहराईयों और खड्डे खाइयों को वीर कुछ नहीं समझते।

विजय की कामना करने वाले वीरों के नाम वेद का सन्देश है अनुपर्व यतमाना यतिष्ठ। एक दूसरे के पीछे संग्राम करते जावें।

Live and Strive ही वैदिक जीवन का निचोड़ है।

मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः

'Sleep and idle talk cause much waste of Valuable time,' इस कथन का आधार वेद की उपरोक्त आज्ञा है। भगवान को सम्बोधित करके वैदिक उपासक यही मांगता है कि निद्रा और बकवाद हम पर शासन न करें। चूंकि Vigilance is the price of liberty है अतः हम निद्रा और बकवाद से बचें। पराधीनता के पाप को पैदा करने वाले वे अवगुण हमको न छू सकें। Give up Indolence हमारा नारा हो ताकि असुरों को हम भगा सकें। राष्ट्र की रक्षा के लिये सदा सजग रहें। वेद की एक २ आज्ञा का पालन करके स्वराज्य की रक्षा करें। राष्ट्र रक्षा के लिए नित्य वेद पाठ करें।

—०—०—

अब उठो जवानो

(लेखक–राम मूर्ति कालिया, एम. ए, नई दिल्ली)

रण भेरी का बिगुल बजा, अब उठो जवानो,
मातृ भूमि की रक्षा हित कुछ मोह न मानो।
क्रीड़ा कर जिस के आङ्गन में बड़े हुए तुम,
पी, खा कर जिस का जल वायु खड़े हुए तुम,
जिस धरती को फूलों से तुम, चाहो सजाना,
हो न सकेगा सहन उसे पददलित कराना।
उठो उठो मां के लालो, गा गा के तराना,
'हम न कभी भी मरते हैं' है सत्य पुराना।
पद प्रहार से दांत तोड़ दो दुश्मन के अब,
आंख फोड़ दो, आंत निकालो, खून पियो सब।
ऐसी चोट लगाओ कि शत्रु याद करे फिर,
आगामी सन्तानें भी फरयाद करें फिर।
अन्याय का अन्यायी को मज़ा चखा दो,
रण भेरी का बिगुल बजा, तुम उठो जवानो॥

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

सोलापुर में स्वामी जी का बलिदान दिवस श्रद्धानन्द समाज तथा आर्य समाज की ओर से सम्मिलित ढंग से श्रद्धानन्द व्यायाम शाला में मनाया गया। यज्ञ आदि के पश्चात भाषण हुए तथा सब भाषण कर्ताओं ने देश के संकटमय समय में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की नीधड़क नीति को अपनाने की मांग की। आर्यसमाज की ओर से ऋषि दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी के दो बड़े चित्र श्रद्धानन्द समाज को भेंट किये गये।

—भगवानदास मंत्रीसमाज

—०—०—

राष्ट्र रक्षा के वैदिक उपाय

(श्री बृजलाल जी गुप्त प्रधान आर्य समाज, टोहाना)

चीन ने हमारे देश पर आक्रमण करके हमारे स्वाभिमान को ललकारा है। हम सदा शान्ति प्रिय रहे हैं। हम संसार में शान्ति का साम्राज्य स्थापित करना चाहते थे। हम ने अभी भी किसी देश पर आक्रमण नहीं किया। हम 'जीवें और जीने दो' की नीति पर चलना चाहते थे, परन्तु हमारे पड़ोसी चीन ने इसे हमारी कमजोरी समझा और हमारी उत्तरी सीमा पर आक्रमण कर दिया। हिमालय हमारी पुण्य भारत माता का मस्तक है। भारतवासी अपनी माता पर प्रहार को कैसे सहन कर सकते थे। सारा देश चोट से सोये हुए शेर की तरह जाग कर गरजने लगा। सब ने तन, मन, धन देकर राष्ट्र की रक्षा का निश्चय किया। चीन समझता था कि भारत में बहुत सी राजनैतिक पार्टियां तथा बहुत से धर्म और सम्प्रदाय हैं, आक्रमण से वह आपस में लड़ने लग जायेंगे। और भारत पर कब्जा करना अति सुगम होगा। परन्तु हुआ इस से बिल्कुल उलट। इस आक्रमण से भारतवासियों ने अपने सब मतभेद भुला दिये और सारा देश हर प्रकार से राष्ट्र रक्षा में जुट गया। एक से एक बढ़कर बलिदान देने के लिये तैयार हो गये।

अब भी कुछ व्यक्तियों का विचार है कि भारत ने अहिंसा द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त की थी अब भी चीन का मुकाबला अहिंसा के शस्त्र से ही करना चाहिये। परन्तु यह उनका भ्रम है। ऐसे समय के लिये वेद में स्पष्ट आया है—

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पुरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नो असो अवीरहा ॥

जो मनुष्य किसी गौ, घोड़ा आदि पशु अथवा सन्तान की हत्या करे उसे सीसे की गोली से मार देना चाहिए। अपनी सम्पत्ति एवं सन्तान की रक्षा करने के लिए आततायी के वध में कोई दोष नहीं है। गो का अर्थ भूमि भी होता है। क्योंकि चीनियों ने हमारी सीमाओं पर कब्जा कर लिया है इसलिए उनके वध में भी कोई दोष नहीं।

राष्ट्र की रक्षा के लिए जिन उपायों पर अमल करना आवश्यक है उनका वर्णन वर्णन ऋग्वेद १०।१०१।२ में स्पष्ट किया गया है—

मन्द्रा कृणुध्वं धिया आ तनुध्वं नावमरित्र परणीं कृणुध्वम्।
इष्कृणुध्वमायुधारं कृणुध्वं प्राञ्चं यज्ञं प्रणयता सखायः ॥

(सखायः) हे समान भावना वालो, (मन्द्रा) आनन्द देने वाली क्रियाएं तुम करो। (धिय) कर्मों और ज्ञानों को (आ) सब प्रकार (तनुध्वं) तुम फैलाओ (नावम्) नौका को अथवा वायुयानको (अरित्र परणीम्) शत्रुओं से बचा कर ले जाने वाली (कृणुध्व) तुम बनाओ। (इष्कृणुध्वं) सब के लिए शस्त्र तय्यार करो। (आयुधारम्) समाज को हथियारों से सुसज्जित (कृणुध्व) करो। (प्राञ्चम्) आगे ले जाने वाले (यज्ञम्) यज्ञ को देवपूजा संगति, दान रूप कर्म को (प्रणयता) उत्तमता से आगे ले चलो।

राष्ट्र की रक्षा के लिए सब से प्रथम यह आवश्यक है कि सभी देशवासी एक ही भावना वाले हों। सबका एक ही लक्ष्य हो। वे सभी एक दूसरेके आनन्द को बढ़ानेका यत्न करें। सदा बुद्धिपूर्वक कर्म करें। पारस्परिक प्रेम और बुद्धि युक्त कार्यों द्वारा वे सामाजिक एकता रूपी एक ऐसी नौका बना सकेंगे जिस को शत्रु तोड़ न सकेंगे वरन वह शत्रु के बीच में से समाज को बचाकर पार ले जा सकेंगे। सामाजिक संगठन का यह फल होगा कि सब को खाने के लिये अन्न और पहनने के लिये वस्त्र तथा अन्य आवश्यकता की चीजें मिल सकेंगी। समाज की रक्षा के लिये सब को शस्त्र चलाने की ट्रेनिंग दी जाये ताकि जब आवश्यकता पड़े प्रत्येक स्त्री पुरुष आगे आकर राष्ट्र रक्षा में लग जाए। समाज में ज्ञानवृद्धों, गुण वृद्धों तथा वयोवृद्धों का मान किया जाये, सब को संघटन के एक सूत्र में पिरोया जाए तथा राष्ट्र रक्षा के लिए अन्नदान, वस्त्रदान, धनदान तथा रक्त दान दिया जाए। ऊपर लिखित उपायों से ही राष्ट्र की रक्षा हो सकेगी। प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है कि भारत सरकार की राष्ट्र रक्षा की योजनाओं में योगदान दें ताकि शत्रुओं को अपने देश की सीमाओं से मार भगाया जा सके।

धन्य पंजाब !

तेरे दिव्य निराले जीवन की उपमा न कहीं मिले,
धन्य पंजाब।
क्या रसरंग में क्या रणरंग में तू आगे मचलता चले,
धन्य पंजाब।

आब से ही पंजाब न तू, तुझमें सचमुच पानी है,
अनुपम बचपन और बुढ़ापा कौतुक भरी जवानी है,
तू है भारत की खड्ग भुजा गिर गिर कर फिर संभले,
धन्य पंजाब।

तेरे तन की सी दृढ़ता ओज तेज सौंदर्य कहां?
मन का बल तेरा ऐसा, चचलता में भी धैर्य जहां,
धन देने का अवसर आए तो पहले तिजोरी खुले,
धन्य पंजाब।

तू ही 'भक्त' भक्त मां का, तू ही लाल 'लाजपत' है,
दरिया सा तू दरिया दिल है और कहां यह हिम्मत है?
चांदी से तराजू जहां बने, फिर सोना मनों में तुले,
धन्य पंजाब।

चौड़े कन्धे दोनाली ले तू प्रहरी डटा हुआ,
कटा हुआ सिर भले मिले, पर तू न मिलेगा हटा हुआ,
तू सचमुच हिमगिरी का सुत है, प्रण तेरा न टाले टले,
धन्य पजाब।

तू रण में खुलकर खेला, हाथ दिखाए रिपु दल को,
रगा खून से तूने अपने, श्वेत हिमाचल अंचल को,
लाली देकर रख गए लाली, अलबेले तेरे लाडले,
धन्य पंजाब।

फूल तेरे डाली से झड़, शुचि जयमाल बनाएंगे,
स्वयं रहें न रहें, किन्तु तेरा सौरभ सरसाएंगे,
लो खेल२ में शेर तेरे, मांदों से निकल चले।
धन्य पंजाब।

—सुशीला देवी आर्या, नरवाना

विश्वास घातक, मित्र द्रोही और बर्बर चीन के आक्रमण द्वारा देश की परिस्थिति विकट रूप धारण किए हुए हैं और प्रत्येक भारतवासी आबाल वृद्ध उस विकटता का सामना करने के लिए कटिबद्ध है। हमें भीतरी और बाहिरी शत्रुओं से आज राष्ट्र की रक्षा करनी है। सब भेद भाव भुलाकर संगठित रूप से शत्रु को उसकी शरारत का स्वाद चखाना है। हमें ठोकर मार कर पीछे हटने के अपमान का बदला उससे लेना है और तब तक चैन से नहीं बैठना जब तक कि आक्रांता से अपनी मातृ भूमि का एक २ इंच स्थान खाली नहीं करा लेना। यह हमारा पुण्योदय है कि जो राष्ट्रीय एकता प्रबल आंदोलन द्वारा न हुई थी वह शत्रु के हमारी पीठ में छुरा घोंपते ही हो गयी। उस एकता को सब राजनैतिक दलों, सभाओं और समाजों ने स्थिर रखना है। इसी में राष्ट्र का कल्याण है।

आज सार्वजनिक सभाओं और कवि सम्मेलनों के आयोजन द्वारा देश के नागरिकों को साम्यवाद के संकट से सावधान करने के लिए भारतीय संस्कृति की रक्षा का प्रबल आंदोलन हो रहा है और वीर रस की धाराएं प्राचीन वीरोंकी गाथाओं को सुना २ कर बहायी जा रही हैं। आर्यसमाज भी अपनी प्राचीन परम्परा को लक्ष्य में रखते हुए अपने वार्षिकोत्सवों पर आयोजित राष्ट्र रक्षा सम्मेलनों, भाषणों, भजनो-पदेशों, कविसम्मेलनों और पत्रों द्वारा देश भक्ति के प्रचार में अग्रसर है। इस के कालेज, स्कूल, गुरुकुल, विधवाश्रम, अनाथालय, सभाएं और समाजें तन, मन और धन अर्पण कर मां भारती के दुःख दूर करने में सहायक सिद्ध हो रही हैं और राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर रही हैं।

अलौकिक राष्ट्रभक्त—महर्षि दयानन्द सरस्वती

[लेखक - भक्त राम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द की राष्ट्र भक्ति अलौकिक थी। उन्होंने, उस समय जब कि अंग्रेज के विरुद्ध एक शब्द भी कहना भारी अपराध समझा जाता था, कांग्रेस का जन्म तक न हुआ था और महात्मा गांधी अभी पालना (पंगूड़ा) झूल रहे थे, सत्यार्थ प्रकाश में लिखा था—'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मत-मतान्तरों के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य,प्रजा पर पितामाता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं।'

श्री दादा भाई नारौजी कहा करते थे कि 'स्वराज्य' शब्द उन्हों ने स्वा० दयानन्द जी से सीखा था लोक मान्य तिलक ने तो कहीं सन् १९०६ में घोषणा की थी कि 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।'

महर्षि धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में ही युग निर्माता नहीं थे प्रत्युत उन्हों ने राजनैतिक क्षेत्र में भी कई अदल बदल कर दिये। वह एक ईश्वरोपासक, एक धर्म (वेद) प्रचारक, एक अद्वितीय शिक्षक, एक भाषा प्रवर्त्तक, एकलिपि प्रसारक, भारतोद्धारक, संसारोपकारक, क्या कहें, जिस दृष्टि से देखो वही दीखते हैं। वह आदर्श पुरुष उस चित्र लिखित पुरुष के सदृश है जिसे जिधर से देखा जाये उस की हमारी ओर ही दृष्टि होगी। सब लोग अपनी २ इच्छानुसार उन्हें वह २ स्थान देते हैं पर अनेक विद्वानों की सम्मति मे उन्हें 'धर्म संस्थापक' ही कहना उचित है। 'हाथी के पांव में सब का पांव' लोकोक्ति के अनुसार धर्म शब्द में सब कुछ आ जाता है, कोई अर्थ छूटता और स्वामी जी ने भी कौन सा काम छोड़ रखा है? सब कर गये और गीता की उक्तियां 'यदा २ हि धर्मस्य . और परित्राणाय साधुनां ..सत्य सिद्ध कर दीं।

सत्यार्थ प्रकाश में एक समुल्लास केवल 'राजनीति' के लिए अर्पण करना, यत्र तत्र उद्धृत किये हुए देश की परिस्थिति समझने की निपुणता सूचक स्मरणीय वाक्य, गोरक्षा के निमित्त यथा नियम आन्दोलन तदर्थ एजण्ट गवर्नर जनरल तक से मिलकर यत्न करना, आर्यसमाज का प्रजातन्त्रात्मक संगठन इत्यादि बातें उनकी राजनीतिज्ञता की सम्पुष्टि करती हैं। अब तो अनुसन्धानकर्त्ता खोज करने के पश्चात् इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि सन् १८५७ के स्वातन्त्र्य संग्राम में महर्षि का भारी हाथ था। एक अंग्रेज के कुशल समाचार पूछने पर उन्होंने उसे साफ कह दिया था कि—'मुझे एक ही कष्ट है और वह यह कि आप विदेशी लोग मेरे देश पर कब्जा किये हुए हैं वह छोड़ दें। इस प्रकार 'भारत छोड़ो' जय घोष का उन्होंने सूत्रपात किया।

महर्षि सिर से लेकर पांव तक स्वदेशी थे। भाषा, वेष, शिक्षा और भावना में पक्का ऐसा न भूतो न भविष्यति। मुझे यह गर्व है कि मेरा आचार्य पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा से शून्य और प्राचीन शिक्षा की गोद में पलकर अद्भुत कार्य कर गया। क्या किसी को स्वप्न में भी आशा थी कि मेरे गुरु ने गुजराती होते हुए जिस हिन्दी भाषा में अपनी कृतियां प्रकाशित कीं वह राष्ट्र भाषा होने का मान प्राप्त करेगी? अहो उन की बुद्धि! अहो उन का ज्ञान! धन्य देश हितैषी दयानन्द! धन्य तुम्हारी दूर दर्शिता! जो तुम सुप्त भारत को प्रबुद्ध भारत कर गए। तुमने ही हमें एकता के सूत्र में पिरोने के लिये निम्न लिखित पाठ पढ़ाया:—

आर्य हमारा नाम है,
सत्य हमारा कर्म।
ओ३म् हमारा देव है,
वेद हमारा धर्म॥

महर्षि ने 'राष्ट्र देवो भव' का मन्त्र हमें सिखाया। यजुर्वेद के २२ व अध्याय के २२ वे मन्त्र का स्मरण कराया जिस में नीचे लिखी राष्ट्र प्रार्थना है.—

प्रभो! हम में जन्में वे ब्राह्मण,
ब्रह्म तेज लसके जिनके मन।
राजा देश के हों रखवारे,
एक सुवीर सहस्त्रों मारे॥
गैया दूध को देने वाली,
मैया घर भर की रखवाली।
भार ढोएं वे साण्ड हमे दो,
घोड़े करदे मात पवन को॥
जय २ कार हो रथी गणों की,
सन्तति सभ्य हो यजमानों की।
उचित समय सब ठांव हो वर्षा,
खेत पकें औषध हों सुखदा॥
जो वर चाहें तुम से पावें,
जो पावें न कदापि गवावें।

देश को तो संक्रान्तिकाल में 'वीर गर्जना' की सूझी है और देश के कर्णधारों की उनके वक्तव्यों के अनुसार अब तक आंखें बन्द रहीं और वे अन्धेरे की दुनिया में थे पर आर्यसमाज के संस्थापक लगभग एक शताब्दी पूर्व राजस्थान में राजाओं को उनके कर्त्तव्यों का बोध कराते रहे और इसी अपराध में उन्हें विष दिया गया। उनके पीछे उनके अनुयायी जनता को राष्ट्रीय कर्त्तव्य के प्रति जागृत करते रहे और वीर रस धारा बहाते २ अनेक जेलों में सड़े।कुछ एकको फांसी की रस्सी भी चूमनी पड़ी। क्रांतिकारियों में अधिकांश आर्यसमाजी थे। मौलाना हसरत मोहानी ने लिखा था—'लगभग ८० प्रतिशत आर्यसमाजी स्वराज्य के कामों में भाग लेने वाले और नेता थे।'

(शेष पृष्ठ १३ पर)

विजय हमारी ही होगी

(बहिन अरुण आर्या प्रभाकर, टोहाना)

बहनों ! आज भारत पर संकट का बादल छाया है,
चीनी दरिन्दों का टिड्डी दल उत्तरी सीमा पर छाया है।
समय आया है, हमारा अब कुछ कर दिखलाने का।
सन्तान झांसी की रानी की होने के जतलाने का।
समय नहीं अब तेरा शृंगार वा नृत्य गान करने का।
मजा चखाना है उनको इस बेईमानी का।
कि क्या परिणाम होता है सोये शेर जगाने का।
उस बदनियत की नीयत में फरक आगया।
देख लहलहाती यहां की बगिया पर दिल ललचा गया।
उसने समझा कि यहां बसते नेहरू और गांधी।
पर भूल गया कि यहां है राणा और शिवा की समाधी।

हेमलता—बहिन जब देखती हूं मैं तुम्हें कुछ सोचते हुए अथवा गुनगुनाते हुए पाती हूं। आखिर ऐसा क्या कारण है, पहले तो मैंने तुम्हें ऐसा कभी नहीं देखा।

सुमन—ओह ! बहन क्या तुम्हें यह विदित नहीं कि आज भारत माता पर विपत्तियों का झुरमुट छाया हुआ है। अर्थात् चीनी दरिन्दे टिड्डी दल की भांति उत्तर सीमा पर छाए हुए हैं। कितने दिनों तक हमारे वीर नवयुवक और उनका युद्ध होता रहा, पर अब कुछ दिनों से बन्द है। यह उस चीन की चाल है जिस के पीछे अवश्य कोई रहस्य निहित है। पर अब हम सावधान हैं। वह पंचशील का घातक, मित्रद्रोही उल्लू जैसी छवि वाला किसी भी रूप में हमारे सम्मुख आए कोई बात कहे पर अब तो उसके पंजे में नहीं फंसेंगे बल्कि उसे छटी का दूध याद दिलाएंगे।

हेमलताः— तो बहन, तुम इतनी क्यों चिन्तित रहती हो ? हमें इसमें सोचने की क्या आवश्यकता है। हम तो कुछ कर नहीं सकती।

सुमनः— अरे ! यह तुम ने क्या कहा ? ऐसे शब्द आगे से मुख से कभी न निकालना। तुमने यह कह कर हमारी माता झांसी की रानी दुर्गावती का अपमान किया है। क्या तुम्हें स्मरण नहीं कि लक्ष्मी बाई ने अकेली अंग्रेजों के साथ टक्कर ली थी। झांसी की रानी ने अंग्रेजों को ललकार कर कहा था कि, "ओ अंग्रेजो झांसी मेरी है ! मेरे एक श्वास रहते तक मैं किसी को नहीं दूंगी। आज उस वीर माता के कर्कश स्वर मेरे कानों में गूंज रहे हैं। आज हमारे भी यही शब्द हैं कि जब तक चीन अपने उसी स्थान पर वापिस नहीं चला जाता तब तक बातचीत नहीं हो सकती।" ओ बहन ! आज हमें भी झांसी की रानी की तरह शत्रु को ललकार कर कहना चाहिए कि: –

जब हमने खोली आंख, भस्म हो जाओगे तम
जब कर में ले ली तलवार
नजर नहीं आओगे तुम
चूड़ी की झंकारें फिर रण भेरी बन जाएगी
नंगी तलवारें फिर तुमको धरा पर सुख की नींद सुलाएंगी
हम जहां आभूषण से तन का शृंगार करना जानती हैं
वहां हम धरा का रक्त से शृंगार करना जानती हैं
तुम विजय के स्वप्न मत देखो ऐ चीनी दरिन्दो
हिन्द की तलवार सदा रखती है विजय को चेरी बना कर।

हेमलता :—बहन, तुमने आज मेरे बन्द हृदय कपाटों को खोल दिया, तथा उसमें देशभक्ति के दीपक की ज्योति को प्रदीप्त कर दिया। मैं भूल चुकी थी कि हम में कुछ शक्ति है। पर अब मुझे तुम्हारे द्वारा विदित हो गया है। जैसे भी होगा, मैं देश के लिए करूंगी और तुम्हारे दिये उपदेश को अन्य बहनों व माताओं को सुनाकर उन्हें प्रेरित करूंगी।

सुमन :—हां बहन, यह बात तो मैं भूल ही गई थी। आज देश की लाज बचाने के लिए शस्त्रों की आवश्यकता है। शस्त्रों के लिए आभूषणों की आवश्यकता है और आभूषण देने के लिए हमें दिल बड़ा करने की आवश्यकता है। स्वतन्त्रता हमारा देश का आभूषण है। यदि स्वतन्त्रता छिन गई तो बहन इन सोने के आभूषणों का हम क्या करेंगे। अतः बहन माताओं व बहनों को यह भी कहना कि वह प्रसन्नता पूर्वक आभूषण मातृभूमि के अर्पित कर दें। आज माता हमसे मांग कर रही है। धन, तन और लालों को। उसी ने हम को यह सब प्रदान किया है और वही आज मांग रही है। अतः हमें देना होगा। और प्रसन्नता व हर्ष के साथ देना होगा। तभी हमारी मातृ-भूमि की विजय होगी।

जब तक तन में रक्त की एक बूंद बाकी है।
जिह्वा यही उचारेगी कि विजय हमारी है।

(पृष्ट पांच का शेष)

सब ने चीन को झाड़ डाली है। श्री रसल चाहते हैं कि हमारा समझौता हो जाए। नासर ने भी कहा था कि चीन ८ सितम्बर वाली सीमा रेखा पर वापस चला जाए, किन्तु चीन नहीं माना। रसल को भय है कि यह विश्वयुद्ध न बन जाये। हम भी अनुभव करते हैं कि गिर कर समझौता के लिए सरकार तैयार नहीं। २१ नवम्बर को चीन ने घोषणा से युद्ध स्थगित कर दिया। परन्तु जो शर्तें उस में चीन ने पेश कीं उन्हें भारत मानने को तैयार नहीं। चीन को अपनी वायुशक्ति ३५ लाख सेना दो करोड़ मलीशिया पर घमण्ड है। परन्तु नैतिक रूप से सारा सभ्य संसार उसे बुरा कह रहा है। चीन के साथ हमारी सरकार का अब पत्रव्यवहार हो रहा है। हम उससे स्पष्टीकरण मांग रहे हैं। अभी अन्तिम निश्चय नहीं हुआ।

जो लोग हमें यह विचार देते हैं कि पाकिस्तान फ्रंट से सेना हटाकर चीन सीमा पर ले जाए। इसमें भय है। हमारी सरकार को ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि पाकिस्तान पर विश्वास नहीं कर सकते। पाकिस्तान के साथ यद्यपि बात चीत आरम्भ होगी पर कह नहीं सकते कि समझौता होगा या नहीं। यह समय आक्षेप करने का नहीं कि भूल नेहरू की है या मेनन की। इस समय तो सभी भाई बहिनों को मिलकर काम करना है जो भारत सरकार पर समालोचना करता है वह देश के साथ द्रोह करता है। एक बात मैं अवश्य कहता हूं कि कभी भी हमारी सरकार को अन्य देशों की फौजें चीन के साथ लड़ने के लिए नहीं बुलानी चाहिएं। उनसे आर्थिक व जंगी सहायता लें लेनी चाहिए। यदि अंग्रेजी व अमरीकी फौजों से युद्ध जीता तो यह जय हमारी न होगी अपितु उनकी होगी। हम अपनी फौजों की संख्या बढ़ा सकते हैं। भारत की सेना निडरता, दृढ़ता, उत्साह, त्याग में विश्व में किसी देश की सेना से पीछे या कम नहीं है।

आर्यसमाज व हमारी संस्थाएं दिल खोल कर धन दे रही हैं। देहली समाजों ने ५१ हजार दिया तथा ५० हजार और देंगी। डी० ए० वी० कालेज ने ५ हजार, दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यार-पुर १ हजार, जिला वेद प्रचारिणी सभा ने। १०१ रुपये राष्ट्र रक्षाफंड में दिए तथा अन्य संस्थाएं भी दे रही हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि हम रक्तदान जितना हो सके दें। वेद भगवान आदेश देते हैं—उतो रयिः पृणतो नोपदस्यति। धनदाता का धन कभी नाश नहीं होता। यह परम निश्चय है कि भारत युद्ध में सफल होगा।

राष्ट्र-रक्षा और आर्यसमाज

(पृष्ठ ३ का शेष)

मैं इसका पुत्र हूं। मां के प्रति पुत्र का धर्म है कि मां से प्रेम करे, मां की भक्ति करे और समय आने पर उसकी रक्षा में जान की बाज़ी लगा दे। देश की रक्षा तो आर्यसमाज का धर्म है।

देश के उत्थान, देश के नव निर्माण देश प्रेम, देश सेवा, और रक्षा का इतिहास जब लिखा जायेगा तो आर्य समाज का काम निसंदेह सर्वोपरि होगा। पिछले ४० वर्षों का भारतीय इतिहास मुख्यतः आर्य समाज का इतिहास है स्वदेशी, स्वराज्य, स्वभाषा आदि शब्दों के निर्माता आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द जी ही हैं। देश को आजाद कराने वाला महात्मा गांधी का समूचा कार्यक्रम अक्षरशः महर्षि स्वामी दयानन्द जी का प्रोग्राम है। सत्यार्थ प्रकाश इसकी साक्षी है। और स्वतन्त्रता संग्राम में जूझने वाले और बलिदान होने वाले आर्य समाजी या महर्षि दयानन्द के जागते रहो के नाद से जाग्रत देशवासी। इसी लिए मैं कहता हूं कि इन १०० वर्षों का देश का इतिहास आर्य समाज का ही इतिहास है।

और आज जब स्वतन्त्र भारत पर मित्रघाती चीन ने आक्रमण किया है। पवित्र हिमालय की वर्फ से ढके शिखरों और तप से तपी कन्द्राओं को अपवित्र किया है। दरिन्दे चीन ने भारत मां के सिर मुकट को छीन कर उसके कलेजे पर हाथ डालना चाहा है। विश्वासघाती चीन ने पंचशील के स्थान पर पंचशूल देना चाहा है, तो यह शान्ति प्रिय देश कांप उठा है। हिमालय से लेकर कन्या कुमारी तक और बम्बई से लेकर आसाम तक सारा देश जाग उठा है। अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए कटिबद्ध हो गया है। आर्य समाज ने भी हुकांर लगाई और तन मन धन की भेंट लेकर भारत मां के चरनों में उपस्थित हो गया। सहस्त्रों आर्य परिवारों के युवक पहले ही सेना में भर्ती हैं। सैंकड़ों घरानों के चश्मोचिराग अब भर्ती हो रहे हैं और यह तन मां की रक्षा में तिनके के समान कर रहे हैं। धन की क्या पूछते हो। आर्य नर नारियों ने धन दिया, सोना दिया, आभूषण दिए। आर्य समाजों और आर्य संस्थाओं ने धन दिया। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित समाजों और संस्थाओं ने सोना और आभूषणों के अतिरिक्त पचास हजार रूपया रक्षा कोष में दिया है (उस की कार्यालय में सूचनाएं हुंच चकी हैं) सभा ने आर्य अनाथालय फिरोजपुर के कोष में ४० हजार रूपए के रक्षा पत्र (Defence bond) खरीद किए हैं। आर्य संस्थाओं के अनेक युवक विद्यार्थियों ने अपना खून दिया है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब व अन्य राज्यों की प्रतिनिधि साभाएं, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा व देश की अन्य आर्य सस्थाएं धन सोना और आभूषण देने में एक दूसरे से होड़ लगा रही हैं। बाकी रही मन की बात। इसकी क्या पूछते हो आर्य समाज के समाचार पत्र, लेख और भाषण, उत्सव और सम्मेलन सब देश रक्षा की रट लगाए हुए हैं।

आर्यो आप से नम्र निवेदन है और बलपूर्वक आग्रह है कि युद्ध विराम से कहीं आपके प्रयत्नों में विराम न आ जाए। तब कपटी चीन पर विश्वास नहीं करना होगा। युद्ध विराम के बावजूद वह छीना हुआ प्रदेश खाली नहीं कर रहा। सम्भवतः नेफा खाली कर जाए पर लद्दाख वह खाली नहीं कर रहा। हिलने का कोई चिन्ह दीख नहीं पड़ा और यदि लद्दाख भी खाली कर जाए तो भी हमारे दरों के उसपार तो छावनियां डाले बैठा रहेगा। किसे विश्वास हो सकता है कि कल को वो भी फिर संगीन ताने हम पर न चढ़ आएगा। तब तक हमें सन्तोष नहीं हो सकता जब तक तिब्बत भी इससे खाली न हो जाए और दलाईलामा को वहां का स्वामी न बनाया जाए।

इसके लिए भागीरथ प्रयत्न की आवश्यकता है। सजग रहने की आवश्यकता है, त्याग की आवश्यकता है। मातृभूमि बलिदान मांगती है। 'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्या' कहने वाले आर्य क्या पीछे रह सकते हैं, नहीं कदापि नहीं

'आज यही व्रत लेने का दिन,
यही आज का ध्यान।
माटी के इस तन को करदें,
माटी पर कुर्बान।

अलौकिक राष्ट्र-भक्त महर्षि दयानन्द सरस्वती

(पृष्ठ ११ का शेष)

मौलाना मोहम्मद अली एक जेल की बैरकों में गए थे तो उन्हें वहां 'नमस्ते' से उनका आदर कर आश्चर्य चकित कर दिया था।

'शांति' और 'पंचशील' अच्छे सिद्धान्त हैं यदि उभय पक्ष माने ये मनुष्यों के लिए उपयोगी हैं। पशुओं के लिए नहीं। मनुष्यों को समझाया जा सकता है पर पशु डण्डे का यार होता है। इसी लिए तो महर्षि ने सातवें विभाग में 'यथा योग्य वर्ताव' शब्द रक्खे थे पर नादान लोगों ने मेरे स्वामी का कहना न माना और कर्त्तव्यच्युत हुए। चीन ने हमें बलवान बनने का स्वर्णावसर प्रदान किया है। उस का गिला क्या? देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफिर' के शब्दों में—'नातवानी में किसी का क्या मुसाफिर शिकवा, सिर पै कमजोरों के हर एक बला आती है।' हमारा प्राप्त स्वराज्य तभी सुरक्षित रहेगा जब हम शक्तिशाली बनेंगे।

जलसे के भाषण

आर्यसमाज किला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर जिन महान नेताओं, विद्वानों के ओजस्वी भाषण हुए हैं। राष्ट्ररक्षा अंक के कारण वे इस बार पूरे नहीं दिए जा सके। अगले अंक में वह मीठा तथा पुष्टिकारक प्रसाद भी पाठकों की सेवा में पहुंचा दिया जाएगा। —सं

राष्ट्ररक्षा अंक

आर्यजगत का यह अंक सेवा में उपस्थित है। इस में समाज के महान नेताओं तथा विद्वानों के सुन्दर २ विचार व कविताएं हैं। हम थोड़े लेख ही छाप सके हैं। अन्यों से क्षमाप्रार्थी हैं। बाद में उन्हें भी प्रकाशित किया जाएगा।

उठो और जागो

(पृष्ठ ६ का शेष)

आततायी बन कर शत्रु को मारना ही धर्म है। यदि सर्दी में अग्नि जला कर किसी को तपाऊं तो ठीक है पर यदि जून में अग्नि जलाऊं तो यही धर्म अधर्म बन जाएगा। इसका निर्णय कौन करेगा। जो जागते हैं, सचेत हैं वही कर सकते हैं। यह छुरे की धारा है। शत्रु को सीधा बन कर काटा नहीं जा सकता, कुछ टेढ़ा होना पड़ता है।

वेदो मे मातृभूमि की भक्ति

(पृष्ठ ८ का शेष)

यो नो द्वेषत् पृथिवी यः पृतन्यात् योऽभिदासान्मनसा यो वधेन। तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि॥ अथर्व १२-१-१४ हे पृथिवी! य. नः द्वेषत्-हे मातृभूमि! जो शत्रु हमारा द्वेष करता है। यः पृतन्यात्—जो शत्रु हम पर सैन्य भेजता है अर्थात् हम पर सेना से आक्रमण करता है। यः मनसा अभिदासात्—जो मन से हमें दास बनाने की इच्छा करता है। य. वधेन—जो हमारा वध करता है। न. पूर्व कृत्वरि भमे! तं रन्धय—हे हमारे पूर्व से श्रेष्ठ कर्म कराने वाली मातृभमे! उस शत्रु को विनष्ट कर। वेद में मातृभूमि की भक्ति इस तरह अनेक मन्त्रों में कही है। जो शत्रु कारण के बिना हमारे ऊपर सेना लेकर आक्रमण करता है, उसका नाश करने के लिए मातृभूमि के सब सुपुत्रों को पूर्णतया कटिबद्ध होना चाहिए।

शोक समाचार

यह दुःखद समाचार देते हुए हमें अत्यन्त खेद है कि श्री भगवान दास जी एम० ए प्रिंसिपल शोलापुर की पूज्य माता केशर देवी जी का १५ जनवरी सन् ६३ को स्वर्गवास हो गया है। इस शोक में आर्यजगत समवेदना प्रकट करता है।

—व्यवस्थापक

आर्यसमाज किला जालंधर वार्षिकोत्सव पर ठाठें मारता जलूस

वैदिक धर्म आर्यसमाज भारतमाता की जय के गगनभेदी नारे ! स्थान २ पर लोगों की ओर से पुष्पों की वर्षा

जालंधर नगर का किला मुहल्ला आर्यसमाज सारे प्रान्त में विशिष्ट स्थान रखता है। यह केन्द्रीय समाज माना जाता है। इस के महोत्सव समारोह बड़े ही धूमधाम से होते हैं। सारे पंजाब में इस समाज का यह वार्षिक महायज्ञ, जलूस, उत्सव कार्यक्रम विशेष प्रभावपूर्ण, स्फूर्तिदायक तथा प्रेरणा देने वाला होता है। इस की सदा से अपनी ही परम्परा रही है और आज तक यह परम्परा कायम है। इस बार तारीख ६ जनवरी रविवार से महान् धर्ममेला का प्रातःकाल यज्ञ तथा रात्रि को वेद कथा से शुभारम्भ हुआ। प्रातः से श्री स्वामी सोमानन्द जी की अध्यक्षता में यज्ञ होता रहा जिस की पूर्णाहुति रविवार १३ तारीख को समारोह से हुई। रात को किला समाज मन्दिर में पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर के मधुर संगीत भजन तथा पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री की कथा होती रही जिसकी समाप्ति वीरवार रात को हुई।

शुक्रवार दोपहर दो बजे से साईंदास एंग्लो संस्कृति हायर सैकंड्री स्कूल के बाहर के विशाल मैदान से शानदार जलूस का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। वहां पर अपने सारे कालेजों, स्कूलों के भारी संख्या में विद्यार्थी, शिक्षक तथा नर नारी उपस्थित थे। सर्वप्रथम साईंदास गर्ल्स स्कूल की छात्राओं ने बड़े मधुर स्वर से वेदमन्त्रों का गान किया। आर्यसमाज किला जालन्धर के माननीय प्रधान प्रिंसिपल चमन लाल जी एम० एल० सी० ने अपने कर कमलों से ओम्ध्वजा को लहराया। बहुत सुन्दर दृश्य था। ध्वज गीत के पश्चात् विशाल जलूस आरम्भ हुआ। जलूस बड़ा ही शानदार, अनुशासन में चलने वाला, जोश उत्साह का प्रतीक तथा आर्यसमाज का जीवन जागृति का रूप था। सब से पहिले ओ३म की पताका थी। साईंदास ए० एस० स्कूल का साथ २ बैंड था, स्काऊट थे। इसके बाद स्कूल की चिमटामंडली थी। इसके पीछे स्कूल के हजारों की संख्या में सारी कक्षाओं के क्रम से छात्र सम्मिलित थे। साथ ही आर्ययुवक समाज डी० ए० वी० कालेज के जोश से भरे युवक प्रो० वेदीराम जी के नेतृत्व में चल रहे थे। आर्यसमाज माडल टाऊन के सज्जन, ए० एस० स्कूल नकोदर, ए० एस० स्कूल बस्ती नौ, ए० एस० स्कूल अलावलपुर, ए० एस० स्कूल रुड़काकलां, डी० ए० वी० स्कूल करतारपुर बलराज स्कूल बलाचौर, द्वाबा स्कूल जालन्धर, दयानन्द नार्मल स्कूल जालन्धर के उत्साही युवक छात्र, दयानन्दायुर्वैदिक कालेज जालन्धर, स्थानीय आर्यसमाजें, आर्यसमाज किला के सज्जन, आर्य प्रादेशिक सभा के भजनीक सज्जन पं० राजपाल मदन मोहन, पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर, पं० ओमप्रकाश जी महोपदेशक पं० त्रिलोक चन्द शास्त्री मंडली थी। विशाल जलूस में नगर तथा संस्थाओं, समाजों तथा आर्य प्रादेशिक सभा के सारे मान्य नेता अधिकारी साथ चल रहे थे। जिनमें दयानन्द कालेज के प्रिंसिपल श्री भीमसेन जी बहल, टैक्नीकल कालेज के प्रि० श्री. चंचलदास जी, आयुर्वैदिक कालेज के प्रि. अमिदेव जी, आर्य प्रादेशिक सभा के महामन्त्री श्री सन्तोष राज जी, प्रि. चमन लाल जी, समाज के वयोवृद्ध डा. हुकम चन्द जी भल्ला, ला. शंकरदास जी, श्री विष्णुमित्र जी, मिसर जवाहर लाल जी नकोदर, पं. बाबूराम जी अलावलपुर, ला. शिव राम जी, प्रि. ज्ञान चन्द जी भाटिया, श्री. राम लाल जी पक्का बाग, डा. दुर्गादास जी अड्डा होश्यारपुर समाज प्रि. प्यारे लाल जी बेरी, प्रो. सत्य देव जी विद्यालंकार, प्रो. वेदी राम जी, प्रो. पी. पी. तारा, डा. मैनन जी, श्री प्रकाश देव जी, स्वामी सोमा नन्द जी, श्री केदार नाथ जी सग्गी तथा अन्य प्रतिष्ठित सज्जन शामिल थे। सारे नगर के बाजार आर्यसमाज की जय से गूंज उठे। जलूस का उत्साह, अनुशासन, जोश तथा समाज प्रेम बड़ा ही दर्शनीय था। मार्ग में डी. ए. वी. प्रायमरी स्कूल, ओसवाल ऊन डिपो, राज दी हट्टी, खन्ना क्लाथ हाऊस, प्रकाश एण्ड संज, गुप्ता मैडिकल हाल आदि स्थानों पर जलूस पर पुष्पों की वर्षा की। आर्य समाज की शक्ति व संगठन देख कर सब प्रभावित थे।

इस महोत्सव में आर्यसमाज के महान नेता पधारे। प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा, प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. श्री ला. देवी चन्द जी एम. ए. श्री यश जी पूर्व राज्य शिक्षा मन्त्री, पं प्रकाश वीर जी शास्त्री M.P. वीर यज्ञ दत्त जी शर्मा प्रो. वेदी राम जी एम. ए. प्रो. राम विचार जी एम. ए. स्वामी सोमा नन्द जी, प. त्रिलोक चन्द शर्मा, पं. राज पाल मदमोहन चिमटाभजन मंडली, प. मेला राम रेडियोसिंगर आदि पधारे। सारा कार्यक्रम बड़ा ही प्रभाव शाली था। भाषण बहुत ऊंचे स्तर के थे। प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. वीर यज्ञदत्त जी, प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. प्रि देवी चन्द जी, पं. प्रकाश वीर जी M.A. किस २ का नाम लिया जाये—इन के भाषणों ने तो जनता को नया जीवन, उत्साह तथा ज्योति प्रकाश भर दिया। इस बार का उत्सव पिण्डाल तो बहुत ही सुन्दर था सारा निवास, भोजन प्रबन्ध भी प्रशंसनीय था। साईंदास स्कूल के स्टाफ, छात्र तथा प्रिंसिपल बेरी जी ने सेवा में कमाल कर दिया दयानन्द नार्मल स्कल के युवक छात्रों ने प्रतिदिन प्रात. पांच बजे आकर नगर में जो प्रभातफेरी की उस की प्रशंसा तो सब के मुख पर थी। इस का सारा श्रेय प्रिंसिपल सन्तोष राज जी महामन्त्री सभा को ही है। नार्मल स्कूल के छात्र रात को रोज कथा में आते तथा प्रात. प्रभातफेरी करते थे। जल्से में साईंदास स्कल के छात्रों व छात्राओं ने बड़े ही मीठे गीत गाये। वेद मंत्रों में भी कमाल था। दो बच्चियों ने तो आश्चर्य में डाल दिया। दयानन्द कालेज की आर्य युवक समाज का जोश भी भरा था—

राष्ट्र रक्षा सम्मेलन श्री यश जी की प्रधानता में हुआ। वह बड़ा ही प्रभाशाली था। आर्य समाज ने इस सम्मेल के द्वारा सारी जनता को इस संकटकाल में देश रक्षा, बलिदान के लिए मार्ग दिखलाया गया। सारा महोत्सव का कार्यक्रम बड़ा ही प्रशंसनीय रहा। मौसम तो सर्दी का था पर इस महामेले ने गरमी पैदा कर दी। हम इस पूर्ण सफलता पर समाज के वयोवृद्ध डा. हुकम चन्द जी भल्ला, ला. शंकर दास जी प्रधान प्रि. चमन लाल जी, महामंत्री ला. सन्तोष राज जी, मंत्री खुशहाल चन्द पराशर जी, सभा के सारे मान्य अधिकारी कालेज स्कूलों के मान्य सज्जनों, समाजों के महानुभावों को विशेष बधाई देते हैं। इस उत्सव की गूंज देर तक रहेगी।

सभा द्वारा उत्स... प्रचार की धूम

३ से ६ जनवरी को ना.. ...१० जनवरी जुलाना शादी पुर।

११ से २४ चुड़ाली और १६ से १८ पावली को उत्सव समारोह से सम्पन्न हुये।

इन उत्सवों पर श्री चौ. भूराराम जी रोहतक मंडली पं० चन्द्रसेन जी दुर्गासिंह जी पधारे।

मोखरा का उत्सव भी समारोह से सम्पन्न हुआ।

आर्य समाज किला जालन्धर का उत्सव ११ से १३ जनवरी को समारोह से सम्पन्न हुआ। उत्सव से पूर्व श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी की कथा और श्री मेलाराम जी के भजन होते रहे। ७ जनवरी प्रातः से साईंदास स्कूल में स्वामी सोमानन्द जी की अध्यक्षता में यज्ञ होता रहा। उत्सव पर गण्यमान्य महानुभावों के अतिरिक्त श्री राजपाल जी मदन मोहन जी पधारे।

२५ से २८ जनवरी को खांडाखेड़ी और ३०, ३१ जनवरी १ फरवरी को ईसापुर खेड़ी के उत्सव समारोह से सम्पन्न हो रहे हैं।

आर्य समाज दसूआ का उत्सव २२ से २४ फरवरी को समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज भंभेवा २ से ४ फरवरी आर्य समाज चिड़ी ६ से ८, आर्यसमाज मिर्जापुर खेड़ी ६ से ११, आर्यसमाज सीसर महम १३ से १५, आर्यसमाज मुंडाल १६ से १८ आर्यसमाज मालर श्याम १६ से २१ फरवरी को समारोह से सम्पन्न हो रहे हैं। यह सब उत्सव जमादार भरतसिंह जी की देख रेख में रोहतक मंडल द्वारा सम्पन्न हो रहे हैं। इन उत्सवों पर श्री जमादार भरतसिंह जी चौ० भूरा राम जी श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री ठा० दुर्गासिंह जी, श्री जय नारायण जी श्री प्रभुदयाल जी मण्डली पधार रही है।

आर्यसमाज अखनूर का उत्सव ३१ मार्च से २ अप्रैल तक समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

आर्यसमाजों से आवश्यक निवेदन

सभी सम्बन्धित आर्यसमाजों के अधिकारी महानुभावों से निवेदन है कि आने वाले समय में होने वाले अपने उत्सवों की तिथियां निश्चित कर शीघ्र सभा में भेजने की कृपा करें। ताकि प्रबन्ध में सुभीता रहे।

कई समाजों ने अपने उत्सव चीन भारत सीमा संघर्ष के कारण स्थगित कर दिए थे। उत्सव कथाओं और प्रचार से जनता को राष्ट्र रक्षा की चेतना प्राप्त होती है। इस कारण उत्सव अवश्य करें। और युवक सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा सम्मेलनों से जनता को जागरण प्रदान करें।

खुशीराम शर्मा वेदप्रचार अधिष्ठाता

आर्यसमाज पुल बगश दिल्ली

इस आर्यसमाज में जब से श्री गणेश दत्त जी आर्य सेवक पधारे हैं उत्साह की लहर चल रही है प्रातःकाल आप का उपदेश होता है सायंकाल को आर्यकुमार सभा में शिक्षा देते हैं।

सुदेशकुमार मन्त्री

गीत

(श्री हरिश्चन्द्र जी शास्त्री 'निस्तन्द्र')

आर्यसमाज किला मुहल्ला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर साईंदास हायर सैकन्डरी स्कूल के छात्रों ने निम्न मधुर गीत गाया।

उठ आर्य वीर उठ कर घर तो सम्भाल अपना।
दुश्मन बना पड़ोसी जिस का नहीं सपना॥
थे दूरदर्शी स्वामी, स्वाधीनता के हामी
भारत की दुर्दशा लख, अखरी उन्हें गुलामी
शासन बुरा विदेशी, अच्छा कुराज्य अपना।
उठ आर्यवीर उठ ..

वीरों ने खून देकर इच्छा स्वराज्य वाली,
पूरी तुम्हारी कर दी अब तुम हो इसके वाली,
अग्नि स्वतन्त्रता की हरदम जलाए रखना।
उठ आर्यवीर उठ .. .

हम आज तक रहे हैं सुख शान्ति के पुजारी,
दुश्मन न सह सका पर यह उन्नति हमारी,
सीमा का कर बहाना झूठी लगाई रटना।
उठ आर्यवीर उठ .. .

हम ने तो विश्वभर को बस आर्य है बनाना,
'निस्तन्द्र' हरसू वेदों का नाद है बजाना,
सब को सिखाएंगे हम वसुधा कुटम्ब अपना।
उठ आर्यवीर उठ......

आर्यसमाज मण्डी हिमाचल प्रदेश का चुनाव

प्रधान—श्री मायाधर जी ठेकेदार, उपप्रधान—डाक्टर जगदीश मित्रा जी, मन्त्री—श्री हेमप्रभ जी, कोषाध्यक्ष—श्री लेखराज जी, पुस्ताध्यक्ष—श्री ईश्वरदास जी, लेखानिरीक्षक—श्री अमरनाथ जी एस० डी० ओ०। अंतरंग सदस्य—स्वामी कृष्णानन्द जी, श्री इन्द्रसिंह जी, श्री चेतराम जी, श्री परमानन्द जी, श्री कर्मसिंह जी।

स्त्री समाज मण्डी का निर्वाचन जो १७—१२—६२ को हुआ निम्नलिखित अधिकारी चुने गये—प्रधाना—श्रीमती लाजवंती देवी जी उपप्रधाना—शारदा देवी व श्रीमती पुनिदेवी जी, मन्त्राणी—सरल देवी जी, कोषाध्यक्ष—कृष्णादेवी जी, पुस्ताध्यक्ष—पुष्पा देवी, सदस्य अंतरंग सभा—गोमती देवी जी, वती जी, हरवंशी देवी जी, शांति देवी जी गायत्री भाटिया जी, चन्द्रावती जी वसीन, कला देवी जी।

राष्ट्रीय रक्षाकोष के लिए—

आर्यसमाज मण्डी हिमाचल प्रदेश ने २५१) रुपये राष्ट्रीय रक्षा कोष में दिये।

स्त्रीसमाज की ओर से ५४) रुपये और एक जोड़ी सोने की टापस भी राष्ट्रीय रक्षाकोष में दी गई। डी० ए० वी० प्राईमरी पाठशाला की ओर से भी राष्ट्रीय रक्षा के लिए सहायता दी गई।

निवेदक—अमृतलाल वैद्य उपमन्त्री

आर्य प्रादेशिक सभा

वार्षिक साधारण अधिवेशन

सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन २७ जनवरी १९६३ को २ बजे साईं दास एंगलो सस्कृत हा० सै० स्कूल जालन्धर के विशाल हाल में सम्पन्न होगा।

सभी समाजों के प्रतिनिधि महानुभाव समय पर पधारने की कृपा करें भोजन निवास का प्रबन्ध साईं दास स्कूल में आर्यसमाज किला जालन्धर की ओर से होगा।

अपने समाजों के दशांश शीघ्र सभा में भेजने की कृपा करें। प्रतिनिधियों को एजेंडे भेजे जा चुके हैं। वार्षिक रिपोर्ट की प्रतियां शीघ्र भेजी जाएंगी।

—सन्तोषराज मन्त्री सभा

सुनहरा अवसर

इस अवसर से स्कूल,, कालिज, समाजें और वैदिक साहित्य को बेचने वाले पुस्तक विक्रेता लाभ उठाएं, वरना निराश होना पड़ेगा।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की प्रकाशित पुस्तकों पर २५ से ४० प्रतिशत कमीशन प्राप्त करें।

पुस्तकों की वास्तविक कीमत—

प्रभुदर्शन २।।), महात्मा हंसराज जी का सचित्र जीवन २), षट-दर्शन समन्वय १।), दयानन्द शतक १), महर्षि दर्शन २), नवीन प्राचीन समाजवाद १). वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है १।।), व्याख्यान माला (संस्कृत में) १।), स्वाध्याय संग्रह ।।), आर्य भजन संग्रह ।।), वैदिक धर्म का महत्व १० रुपया सैंकड़ा, सत्यार्थ प्रकाश प्रथम समुल्लास का भाष्य १), द्वितीय समुल्लास १), मुंडक उपनिषद ।=), राधा स्वामी मत-आलोचन (उर्दू में) ।=), पंजाब फैसला करे (उर्दू में) ऋग्वेद शतक ।।) यजुर्वेद शतक ।।), अथर्ववेद शतक ।।), अमृतवाणी (सजिल्द) ।।)

प्राप्ति स्थान—म. हंसराज वैदिक साहित्य विभाग A.P.P. सभा निकट कोर्ट जालन्धर।

हार्दिक समवेदना

आर्यसमाज के वयोवृद्ध नेता श्री मा० नन्दलाल जी के देहान्त के शोकप्रद समाचार से सभा के समस्त प्रचारक मंडल को हार्दिक खेद हुआ क्योंकि स्वर्गीय मास्टर जी आर्यसमाज के पुरानी पीढ़ी के स्तम्भ थे। आपने जीवन काल डी० ए० वी० कालेज कमेटी आर्यसमाज तथा शिरोमणी आर्य प्रादेशिक सभा की अनथक जो सेवा की है उसे कौन भुला सकता है। इस प्रकार के नेताओं से आर्य समाज धीरे-धीरे वंचित हो रहा है। मैं सारे प्रचारक वर्ग की ओर से दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रभु से प्रार्थना करता हुआ उनके सुयोग्य पुत्र श्री ला० इन्द्रसेन जी व सत्यपाल जी आदि सारे परिवार से हार्दिक समवेदना और सहानुभूति प्रकट करता हुआ प्रार्थना करता हूं कि प्रभु इस परिवार को शांति और धैर्य प्रदान करें।

राजपाल मन्त्री प्रचारक सभा आर्यप्रादेशिक सभा, जालन्धर

आर्य जगत् साप्ताहिक का —ऋषि बोध अंक—

आर्यजगत का ऋषिबोध अंक शिवरात्री के शुभ पर्व पर २२ फरवरी १९६३ को बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित हो रहा है मुखपृष्ठ पर चित्ताकर्षक स्वामी दयानन्द जी का अति सुन्दर चित्र होगा। इस के अतिरिक्त आध्यात्मिक, सामाजिक और धार्मिक समयोपयोगी लेख, कवितायें होंगी। अतः सभी आर्य-प्रेमियों व समाजों से प्रार्थना है कि अधिक से अधिक प्रतियां मंगा कर शीघ्र ही सूचित करने की कृपा करें। ताकि ठीक समय पर उचित प्रबन्ध करके आपकी पत्र द्वारा सेवा की जा सके। इस अंक का मूल्य ३७ न० पै० होगा।

नोट—१. व्यापारियों के लिए विज्ञापन देने का बहुत अच्छा सुअवसर है।

२. आर्य संस्थायें व समाजें तथा अन्य सभी व्यक्ति १० फरवरी तक अपने २ आर्डर भेजने की कृपा करें। देर से आर्डर आने वालों की समय पर सेवा नहीं की जा सकेगी।

३. लेखक व कवि अपनी रचनायें १ फरवरी तक भेजने की कृपा करें।

व्यवस्थापक
आर्य जगत
निकट कचहरी जालन्धर

आर्यसमाज सैक्टर ८ चण्डीगढ़ का चुनाव

प्रधान—श्री नानक चन्द जी पण्डित

उपप्रधान—श्री हरिराम जी प्रिन्सिपल, श्री सन्तराम सैनी, तथा श्री सीताराम बोहरा।

मन्त्री—श्री तीर्थ राम खन्ना, श्री आशुराम आर्य, श्री केसर दास, प्रो० कृष्ण कुमार धवन, श्रीमती विद्यावती अग्रवाल।

कोषाध्यक्ष—श्री प्रेमनाथ वर्मा। पुस्तकाध्यक्ष—श्री गोपाल कृष्ण संस्कृत। निरीक्षक—श्री हरिलाल सैनी।

अन्तरङ्ग सदस्य

श्री तुलसी राम कपूर, श्री प्रकाश चन्द्र महाजन, श्री परमेश्वरी दास बहिल, श्री बिहारी लाल आहूजा, श्री टेक चन्द वकील, श्री बेली राम टंडन, श्री लोक नाथ मुंद्रेजा, श्री लालचन्द सोनी, श्री लघु राम शर्मा, श्री मिलखी राम महाजन, श्री त्रिलोक नाथ अजहर, श्री टेकराम शास्त्री, श्री देशराज मलिक, श्री जगदीश चन्द, श्रीमती सुशीला शर्मा, श्रीमती नारायणी देवी, श्रीमती कमला घई, श्रीमती शान्ति मलिक, श्री कृष्ण लाल वर्मा; श्री राम लाल, प्रो० मिलखीराम।

मन्त्री आशुराम।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जलन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ४) रविवार १ माघ २०१९—२७ जनवरी १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

उत्तिष्ठत संनह्यध्वम्

हे वीरो ! उठो और तैयार हो जाओ जब भी कोई अन्दर का या बाहर का शत्रु आक्रमण करे, तब हे वीर लोगो ! उसका प्रतिकार करने के लिए उठो ! तैयार होकर कमर कस लो। शस्त्रों से लस हो जाओ।

सर्पा इतरजना रक्षांसि

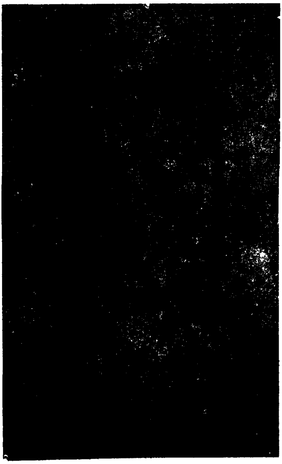
जो शत्रु सर्प के समान दो जीभो वाले है, देश मे रहते हुए भी पराये हैं। और जो राक्षस है। राष्ट्र के निर्माण, सुख-शांति, यज्ञ में विघ्न डालने वाले हैं। दिव्य गुणों के शत्रु है।

अमित्रान् अनुधावत

जो वैरी है, जिनको अपनी भूमि, भावना से प्यार नहीं है। समय पर किसी के मित्र नही—ऐसे बैरियो पर धावा बोल दो। उनका पीछा करके खदेड़ दो। उनको भगा दो।

• अथर्ववेद

महात्मा हंसराज जी



आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के संस्थापक स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी

श्री नेहरू की कोलम्बो प्रस्तावों पर संगठित स्टैंड लेने की अपील

प्रधानमन्त्री का कांग्रेस संसदीय दल में भाषण

प्रधानमन्त्री श्री नेहरु ने आज सीमा प्रश्न पर चीनियों से निपटने के लिए और अन्य विदेश नीति सम्बन्धी मामलों पर संगठित स्टैंड लेने की अपील की।

कांग्रेस संसदीय दल की ९० मिनिट की बैठक मे प्रधानमन्त्री ने उन लोगो के रवैये की निंदा की है जो चीन से कोई बातचीत न करने को कह रहे है और ऐसा दृष्टिकोण "असभ्य" है और इसे न्यायोचित नहीं कहा जा सकता।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

सच्ची शिक्षा वह है जिसका जीवन में समन्वय हो

श्री प्रिंसिपल सूर्यभानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र

आर्य समाज किला जालन्धर शहर के वार्षिक महोत्सव पर विशाल जनसमूह में अपना गम्भीर, ओजस्वी, प्रभावपूर्ण तथा जीवन भरने वाला भाषण देते हुए आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के माननीय प्रधान प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम०ए० वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी ने कहा—

गत वर्षों में मैं आर्य समाज जालन्धर के उत्सव पर भाषण नहीं देता रहा। अब मैं आठ नौ मासों से जालंधर निवासी नहीं हूं। यद्यपि जालंधर से बाहर चला गया हूं किंतु दिल पर यहां की छाप लगी हुई है। शरीर रूप से तो पृथक हूं परन्तु आध्यात्मिक रूप से अलग नहीं हो सकता। मैंने यहां से लिया बहुत है किंतु बदले में अधिक दे नहीं सका। कुरुक्षेत्र में ज्योतिसर है, जहा पर भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था। वहां एक साधु रहते हैं। एक युवक आया, बोला कि श्रीकृष्णजी ने अपना उपदेश यहीं पर दिया था, इस का क्या प्रमाण है? साधु ने उसे उत्तर दिया—युवक! ऐसी मर्यादा चली आ रही है। आप ने वह स्थान देखना है या उपदेश लेना है? दो मित्र खड़े हुए विवाद मे पड़ गए—एक बोला जहां आप खड़े हैं वहां उपदेश दिया था या जहां मैं खड़ा हूं यहां उपदेश दिया था। साधु बोला—मित्रो! एक बात स्पष्ट है कि आप उस स्थान पर पहुँच नहीं सकेंगे, यह बात तो निश्चित ही है। जब धर्म चर्चा हो तो उस भावना से ही लाभ उठाना चाहिए। तभी जीवन ठीक होगा

जब विश्व का प्रथम युद्ध हुआ। आरम्भ मे जर्मनी को बड़ी विजय हुई तथा इंगलैंड को परास्त होना पड़ा। वहा चर्चा हुई कि इस का कारण क्या था? क्या जर्मनी के सिपाही वीर थे, क्या जनरल बढ़ा था? एक लेखक ने लिखा—नहीं अपितु विशेष कारण यह था कि स्कूलों में शिक्षास्तर कमजोर हो चुका था। वही स्थान नेताओं को पैदा करने वाले थे। इसी लिए आरम्भ में पराजय हुई। जो कुछ स्कूलों कालेजों के कमरों में चलता है उस का भी महत्व है। शिक्षा का जाति पर प्रभाव पड़ता है, युद्धों में भी असर होता है। समाज मे (Making the man) मानव निर्माण कैसे होते हैं। शिक्षा केवल स्कूलों मे ही दी जाती है यह बात नहीं वरन इस के और भी कई स्रोत हैं। जब पढ़ने के बाद पढ़े हुए विषय भूल जाते हैं, उस समय जो कुछ बच जाता है वही असली शिक्षा होती है। हरेक विषय के पीछे मर्यादा होती है। यदि वह चली जाए और वे तत्व न हों तो जीवन में कुछ भी नहीं बचता।

मै एक साईंस पढ़ने वाले विद्यार्थी के कमरे में गया। उस का सामान अस्तव्यस्त पड़ा था। उसे कहा कि साईंस पढ़ते हो तो जीवन में (outlook) भी तो उसी के अनुसार बनाना चाहिए। विद्यार्थी पुस्तकों में पढ़ता है पर उस की बाते उस के जीवन में नहीं आतीं। यदि संस्कृत पढ़ी है पर संस्कृति नहीं सीखी तो शिक्षा का क्या लाभ है? कहा है (Education Consists what remains) जो कुछ बाकी बचता है वही शिक्षा है। इस का अर्थ केवल पुस्तकें पढ़ना नहीं अपितु जीवन में लाना है। याद कर के परीक्षा में लिख आए पर अपने जीवन के व्यवहार पर न लिखा तो कोई लाभ नहीं होता।

अमरीका में एक बार बच्चों पर परीक्षण किया गया कि इन का चरित्र कैसा है। यदि इन को प्रलोभन दिया जाय तो इन के जीवन की क्या दशा होती है? इस प्रकार पर्दे के पीछे लड़कों को देखने का प्रबन्ध कर के प्रलोभन द्रव्य डाल दिये गए। एक लाख बच्चों मे बहुसंख्या उन की थी जिन को बायबल के उपदेश याद थे और दूसरे वे थे जिन को बायबल की शिक्षा नहीं मिली थी। परीक्षण के बाद बायबल याद करने वाले बच्चे ज्यादा चोर व झूठ बोलने वाले सिद्ध हुए, दूसरे कम थे। वेदमन्त्र याद करना ही काफी नहीं प्रत्युत उन को आचरण में लाना भी आवश्यक है। केवल याद करना ही शिक्षा नहीं है। बच्चे मे सामाजिकता का अंश होता है। यह विचार भ्रमपूर्ण है कि बच्चों मे स्वार्थ ज्यादा होता है। बच्चा लेना जानता है तो देना भी जानता है। घर पर उस को सब ओर से प्यार मिलता है। वह समझता है कि मैं जो कुछ मांगूं मिल जाता है और जो कुछ कहूं वह पूरा हो जाता है। उसी विचार से वह स्कूल में जाकर भी घर की बात दोहराता है पर वहां का संसार भिन्न होता है। तब वह वहां पर अपने को उसी प्रकार (adjust) करता है। बाहर का संसार घर के समान नहीं है। वह तो (Buisiness like) है। स्कूलके बाहर पता लगता है कि उस में सामाजिकता आती है। उसे उस के अनुकूल अपने को ढालना पड़ता है। किसी भी माता पिता या आचार्य को बच्चे के लिए यह कहने का अधिकार नहीं कि तुम अयोग्य हो। यह हो सकता है कि वह एक बात में कमजोर हो किंतु बाकी चीजों में योग्य हो सकता है। उस के उत्साह को बढ़ाना ही चाहिए। यह ठीक है कि हरेक रिकार्ड (beat) नहीं कर सकता, पर दो कदम आगे तो बढ़ सकता है। एक बार पुरस्कार वितरण के किसी स्कूल के उत्सव में लाला दीवानचन्द जी प्रधान थे। उस स्कूल में सब से नालायक लड़के के लिए भी एक इनाम रखा था। पर वह नहीं आया। ला० दीवानचन्द जी ने अपने भाषण में कहा कि वह लड़का तो योग्य है, नालायक नहीं। उस के दिल में भी स्वाभिमान का भाव भरा है तभी तो नहीं आया। यदि योग्य न होता तो उत्सव मे आता। जब मैं इंगलैंड पढ़ता था तब हमे (Backward childern room) दिखाने ले गए। वे लड़के हिसाब में तो चतुर न थे पर मेज कुर्सी सुन्दर बना सकते थे। ऐसों को नालायक कैसे कहा जा सकता है। सब को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे का किसी न किसी ओर तो विचार चलता ही है। सब में यह भावना पैदा होनी चाहिए कि वह योग्यता रखता है। जब धर्म चर्चा होती है तो एक मोटी समस्या है (to see the good and to do the good we see) नेकी क्या है? और नेकी की जाय। प्राचीनकाल म धर्म व शिक्षा इकट्ठी चलती थी। नेकी क्या है तथा नेक रास्ता कौन सा है? आजकल इस की ओर कम ध्यान है। हमारा देश (Secular state) है। पर इस का अर्थ गलत समझा जाता है। यहां धर्म के बहिष्कार का भाव नहीं अपितु सब से समानता का विचार है। आजकल बेसिक शिक्षा में (Learn By doing) अर्थात

(शेष पृष्ठ ३ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार १४ माघ २०१९, २७जनवरी १९६३ [अंक ४

गणतन्त्र दिवस

२६ जनवरी का दिवस भारत का गणतन्त्र दिवस है। इस दिन सारे राष्ट्र की जनता ने अपने देश की सम्पन्नता, समृद्ध, प्रगति के पथ पर चलाने का संकल्प लिया। चीन के हमले ने हमें सचेत कर दिया है। सारा देश उस दिन अपना यह दिवस धूमधाम से मनायगा, जिस दिन अपनी धरती का एक २ इंच चीनी आक्रान्ताओं से हम वीरता से वापस लेंगे। आओ! मन में संकल्प लेवें तथा भारत के लिए अपने तन मन धन को भेंट करने की दीक्षा सरणी पर चलने के लिए कटिबद्ध हो जायें। यह दिन संकल्प का दिन है।

सभा का वार्षिक अधिवेशन

ता. २७ जनवरी को जालन्धर में हो रहा है। सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों के मान्य प्रतिनिधि वर्ष के बाद इकट्ठे हो रहे हैं। आर्य जगत् की ओर से उन का स्वागत करते हुए नम्र निवेदन करते हैं कि आप ही तो इस विशाल सभा रूपी नौका के पतवार हैं। मान्य अधिकारियों, उपदेशक प्रचारक वर्ग ने सारा वर्ष इस माता की सेवा के लिए अपने २ कर्तव्य को दिन रात एक २ कर के निभाया व निभा रहे हैं। समाजें तथा समाजों के सदस्य ही तो सभा हैं। अतः इस वर्ष भी सभा को खूब आगे बढ़ाने के लिए अपना २ पूर्व की भान्ति सहयोग देवें। आज के मंहगे युग में इस की सारी कठिनाईयों को हल करना है। प्रचार, साहित्य, आर्य जगत् के विभागों को और भी उन्नत करना है।

जालन्धर जलसे पर

आर्य समाज किला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर आर्य समाज के मान्य नेता विद्वानों ने पधार कर जो ओजस्वी भाषण दिये वे कुछ तो इसी अंक में दिए जा रहे हैं कुछ अग्रिम अंक में दिए जायेंगे। भाषणों के नोट लेने में तथा उन को फिर लिखने में कितना परिश्रम करना पड़ा यह मैं ही जानता हूं। इस कारण कुछ रुग्ण भी हो गया। ये भाषण कितने सुन्दर प्रभावशाली तथा सामयिक, गम्भीर थे। आप पढ़ कर ही स्वाद लेंगे। प्रिंसिपल सूर्यभान् जी, महामना ला. देवी चन्द जी प्रि. रलाराम जी, पं. प्रकाशवीर जी M.P. श्री यश जी पूर्व शिक्षा मंत्री, वीर यज्ञदत्त जी, स्वामी सोमानन्द जी, प्रो. वेदो राम जी, सारा राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, प्रो राम विचार जी के प्रवचनों में कितना जीवन था। श्रोता मन्त्र मुग्ध थे। वर्ष तक जालन्धर नगर में गूंज बनी रहेगी। पाठकों की सेवा में भी यह प्रसाद भेंट है। यदि कहीं भूल हो तो क्षमा करें—

त्रिलोक चन्द्र

सच्ची शिक्षा वह है जिस का जीवन मे समन्वय हो

(पृष्ठ २ का शेष)

हाथ से कर के सीखो। यही बात मैं कहता हूं कि शिक्षा को अपने जीवन में ढालो। (Do the highest into the lowest) बड़ा से बड़ी चीज को छोटे से छोटे में ले जाओ। मन्दिर बन रहा था, वहां मजदूर काम करते थे। एक बोला कि मैं जीवन के दिन काट रहा हूँ। दूसरा बोला—मैं अपने परिवार को पालने में लगा हूं। पर तीसरा बोला—मैं प्रभु मन्दिर के लिए सेवा कर्त्तव्य को कर रहा हूं। लोग यहा आकर भगवान की भक्ति करेंगे। आप देखें काम तीनों एक ही कर रहे हैं पर भावना जुदा २ है। तीसरे के काम में पवित्रता (divinity) आ जाती है। परमात्मा को मिलने के लिए कहीं जाने की आवश्यकता नहीं। प्रत्येक कार्य मे इसी भावना का सचार किया जाए। अध्यापक यदि दिन काटने या परिवार पालने अथवा राष्ट्रनिर्माण सेवा के कार्य में लगने की बात कहे तो तीसरे के काम में सुन्दरता है। अमृतसर (Mental Hospital) में डाक्टर विद्यासागर जी हैं। ऐसा परोपकारी जीवन मैंने बहुत कम ही देखा है। यह ऊंची चीज है। उस के काम मे ईश्वरीयता नजर आती है। यह आवश्यक नहीं कि ईश्वर पर्वत कन्दराओं में ही नजर आए।

एक पुस्तक में भावपूर्ण कथा पढ़ी थी। एक व्यक्ति देवदूत से पूछता है कि ईश्वर कहां है देवदूत उसे साथ ले कर जाता है जहाज डूब रहा है। सारे यात्रियों को बचा कर जहाज का कप्तान जहाज के साथ डूब जाता है। देवदूत कहता है ईश्वर यहां है। भीड लगी है। लोग आ जा रहे हैं। पर एक बच्चा बुढ़िया की उंगली पकड़ कर सड़क पार कराता है—देवदूत कहता है ईश्वर यहां है, निर्धन परिवार मे बीमार युवक को देख व दवाई दे कर डाक्टर फीस व पैसे नहीं लेता देवदूत कहता है—देखा भगवान यहा है हमने अपने जीवन तथा कार्यों में ईश्वरीयता लानी है। धर्म को भी Learning by doing आचरण में लाने से ही सीखना है। जीवन में जितनी पवित्रता ला सके लावें। जितने २ यज्ञमयभाव तथा ईश्वरीयता लावेंगे उतनी २ स्वार्थ-भावना निकलती जायगी। हरेक व्यक्ति समाज को कुछ देता है और उस से कुछ लेता है। पर महापुरुष देते बहुत हैं किन्तु लेते कम हैं। स्वार्थी लोग लेते अधिक हैं और देते कम हैं। आप दयानन्द के जीवन मे उत्सर्ग अधिक था पर लेना कम था हम ने समाज से मानसिक, आध्यात्मिक रूप से जो लिया है उस से देना भी चाहिए।

आज बड़ी मुसीबत का सामना है। देश को हथियारो की बड़ी जरूरत है। इसके लिए धन चाहिए सबसे अधिक आवश्यकता तो Making the man मनुष्यों के निर्माण की है। यदि हथियार अच्छे हों पर मनुष्य घटिया हों तो क्या होगा। शिक्षा का लक्ष्य तो यही है। cease fire युद्ध बन्दी तो हो गई पर cease struggle सघर्ष बन्दी नहीं हुई। विपत्ति में स्थित प्रज्ञ रखना कठिन होता है। जर्मनी द्वारा आरम्भ की हुई पराजयों मे अंगरेज यही कहते थे London can take it अर्थात लंदन विपत्तियों को सहन कर सकता है। भावना की बात होनी है। यदि आजादी चली जाती है तो यह धन दौलत किस काम की है। इस समय हमारा जीवन यज्ञमय हो। यदि राष्ट्र का चरित्र ऊंचा हो तो विजय निश्चित है। एक विदेशी ने कहा था कि जिस जाति के पास गीता का अमर आत्म वाद है वह देश सदा ऊंचा है। लाहौर के एक दीक्षान्तभाषण मे डा. राधा कृष्ण जी ने एक बार कहा था कि—We have no right to make this world a factory of pleasures हमें इस बात का कोई हक नहीं है कि हम इस संसार को अपने आमोद प्रमोद का कारखाना बनावें। आज डा. राधा कृष्ण जी हमारे आजाद भारत के राष्ट्रपति हैं। उन का यह आदेश आज बड़ा महत्व रखता है। हम जीवन को यज्ञमय बनायें। मैं किला समाज के अधिकारियों का इस प्रेम के लिए धन्यवाद करता हूं।

ऋषि दयानन्द ने वेदों के बन्द भण्डार खोल दिये

आज के पाखंड का आर्य समाज ही मुकाबिला करता है—

महामना ला. देवी चन्द जी एम. ए. का प्रभाव पूर्ण भाषण

प्रिंसिपल देवी चन्द जी एम. ए. प्रधान अखिल भारत वर्षीय दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यार पुर ने आर्य समाज किला जालन्धर के महोत्सव में अपना प्रभावशाली भाषण देते हुए कहा—वेद भगवान् का ज्ञान है। वेद पौरुषेय भी हैं और अपौरुषेय भी। यजुर्वेद में सहस्र शीर्षा पुरुष के मंत्र में भगवान को पुरुष कहा गया है। ऋषि दयानन्द ने विलक्षण अर्थ किये हैं। सायण और महीधर आदि ने वेदों के अश्लील अर्थ किये थे। यजु. के २३ वें अध्याय में आये गणानात्वा गणपति—मन्त्र का महीधर ने बड़ा ही अश्लील अर्थ किया है। किन्तु ऋषि दयानन्द ने इसी मन्त्र का कितना युक्तियुक्त व विलक्षण अर्थ किया है। मन्त्रों के ऊपर मन्त्रद्रष्टा ऋषियों के नाम लिखे रहते हैं, पर इतने उत्तम अर्थ करने वाले मन्त्र दर्शन ऋषि दयानन्द का नाम क्यों नहीं लिखा गया।

प्रश्न उठता है कि क्या वेद परमात्मा ने बनाये, लिखे या निर्माण किया। यदि यह माने तो बड़ा दोष आयेगा। क्यों कि निर्माता पूर्व होता है तथा निर्मित वस्तु बाद में होती है। इस प्रकार से भगवान पूर्व होगा और वेद बाद मे माने जायेगे। जैसे शेक्सपीयर पहले और उसके नाटक बाद में। कालिदास पहले उस का शकुन्तला नाटक बाद मे है। जब परमात्मा शाश्वत, सनातन, अनादि है तो उस का वेद ज्ञान भी शाश्वत, सनातन एवं अनादि है। जीवों के लिए जितना आवश्यका होता है उतना दिया है। वेद को प्रकट किया है बनाया नहीं है। शतपथ में आता है यस्य महतो निश्वसितम्-यजुर्वेद में आता है—तस्मात् यज्ञात् सर्व हुत.—उस से वेद प्रकट हुए चारों वेद प्रकट हुए। मन्त्रों में स्पष्ट है कि प्रकट हुए। यस्मिन् विश्वानि काव्या चक्रे कोई ऐसा समय नहीं जब उस का ज्ञान न हो। यदि उस ने बनाये तो क्या वह पहले ज्ञान शून्य था वह भी सनातन है और उस का ज्ञान भी सनातन है। God is great प्रभु महान है वेद में आता है—बृहस्पते प्रथम वाचोऽग्रे ज्ञानपति ने वेद प्रकट किये हैं, बनाये नहीं।

शोक इस बात का है कि दूसरे लोग अपने धर्मग्रन्थों का पाठ करते है, पर हम नहीं करते। वेद कहता है कि मिमीहि श्लोक मास्ये पर्जन्य इव तन्तन.। गाय गायत्रम् कथ्यम। वेद की वर्षा करो ' वर्षा कौन करेगा, जो पढ़ेगा। मुसलमान रोज कुरान पढ़ता है। ईसाई भी इंजील का गुटका लेकर चर्च में साथ ले जाता है। मैं जब एम ए. में पढ़ता था तब गवर्नमेंट कालेज के लड़के मिशन कालेज में जाते थे। वहां के प्रिंसिपल ने बताया कि मैं ईसाई कैसे बना घर में प्रात. घटी बजती। हम एक कमरे में इकट्ठे हो जाते पिता जी कहते कि इंजील खुदा का ज्ञान है। रोज यह सुन २ कर पक्का हो गया दूसरे तो करते है पर आप ? आर्य-समाज के नियमों में वेद का पढ़ना पढाना और सुनना सुनाना परम-धर्म लिखा है। मनु. कहते हैं—अनभ्यासेन वेदानाम्...वेद का स्वाध्याय न करने, आचार का त्याग, आलस्य व अन्न दोष से ब्राह्मण मर जता है। जब तक अभ्यास न होगा आर्य कैसे होगा वेद का महत्व तो वेद के स्वाध्याय से पता लगेगा। भारद्वाज ऋषि का सौ वर्ष आयु हो चुकी। सौ वर्ष और फिर सौ वर्ष और। फिर भी कहा कि मुझे और आयु मिले ताकि मै वेद पढ़ूं। पर आज का युवक समझता है कि पश्चिम के विद्वान बड़े हैं। अपनों की उपेक्षा करता है। इस से बढ़ कर national degradation और क्या हो सकता है। हमारे पास अमूल्य धन भण्डार है पर हम जानते नहीं। हमारे बच्चों को वेदों से प्रेम नहीं है। वेदों के भाष्य पश्चिमी लोगों ने सायण-भाष्य के आधार पर ही किये हैं। वे इतिहास मानते हैं। पर ऋषि दयानन्द नहीं मानते। वेद में सीता शब्द आता है। सनातनी पण्डित इस से राम पत्नी अर्थ लेते हैं। पर ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि ये इन्द्रयों के नाम है, यौगिक अर्थ है रूढ़ि नहीं। वरन अर्थ का अनर्थ हो जायगा। पुरीष शब्द का अर्थ यौगिक किया है जल, रूढ़ि नहीं है। ऋषि के अर्थ प्रमाण संगत हैं। पुनरुक्ति भी नहीं है जहां मंत्र दूसरी बार आता है उस का अर्थ भी दूसरा है। गायत्री मंत्र चार बार आता है। ऋषि दयानन्द ने सब स्थानों पर भिन्न २ अर्थ किये हैं। बाकी लोग पुनरुक्ति मानते हैं। मुझे भाष्य करते समय ग्रिफथ भाष्य के सिर पैर का पता नहीं लगता। एक स्थान पर अर्थ करता हुआ कहता है Cutting the head सिर काट कर पर ऋषि ने अर्थ किया है कि दिमाग लगा कर। कितना सगत अर्थ है। ऋषि दयानन्द को वेद-भाष्य करते समय जब कहीं सन्देह हो जाता था तो समाधि में चले जाते थे। जब ज्ञान हो जाता तो आगे लिखवाते थे। सायण, महीधर मेंकसमूलर विद्वान चाहे हों पर योगी नहीं थे। ऋषि योगी और विद्वान थे। अरविंद ने लिखा है कि ऋषि दयान्द ने वेदों के बन्द खजाने व बन्द मुहर को खोल दिया। वेद भण्डार की सच्ची चाबी प्राप्त की। उसने पश्चिमी भाष्यकारों को लताड़ा है कि अर्थों को केवल भौतिक साइंस के आधार पर ही करना चाहते हैं। वे तोड़-मरोड़ कर वेदार्थ करके दूसरों की दृष्टि में गिराने के लिए करते हैं। ऋषि दयानन्द वेदों में सारे विज्ञान मानते हैं। हमें मान है कि हम दयानन्द के युग में पैदा हुए हैं। पर हम उसका पालन नहीं करते। एक करोड़ हिन्दु ईसाई बन चुके हैं। भारत में अंग्रेजी राज्य में तो १७०६ पादरी थे पर अब स्वतन्त्र भारत में ५३०० विदेशी पादरी हैं। विदेशों से करोड़ों रुपया भारत के हिन्दुओं को ईसाई बनाने के लिए आता है। इस बात की आर्यसमाज के सिवाय और किसे चिन्ता है। जिसमें छल कपट, धोखा व बलप्रयोग हो वह धर्म क्या चलेगा। छोटा नागपुर में घटना हुई कि एक ईसाई वापस शुद्ध हो गया तो पादरी पिस्तौल लेकर गया कि तुमने ईसाई मत छोड़ दिया है मैं तुमको मार दूंगा। वे लोगों की गरीबी से अनुचित लाभ उठाते हैं। उनके पास बच्चे पढ़ते हैं जब वापस मांगते हैं तब कर्जा वापस करने की कहते हैं। जब रुपया वापस दो तब लड़का वापस मिलेगा। धोखे से प्रचार करते हैं। इसका मुकाबिला आर्यसमाज ही कर रहा है। हम वेद प्रचार के लिए अधिक से अधिक धन देवें सारे विश्व को आर्य बनाना है। जब तक एक २ आर्य नहीं बन जाता तब तक हमारा काम जारी रहेगा।

——

मायावी के साथ मायावी बनना ही सच्ची अहिंसा है

मानव जीवन विचारों से ही बनता बिगड़ता है

प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. का स्फूर्ति-प्रद भाषण

प्रिंसिपल रलाराम जी एम ए. एम. एल. ए. होश्यार ने जो ओजस्वी भाषण किला समाज जालंधर के महोत्सव पर दिया—वह पाठकों की सेवा में प्रसाद रूप में प्रस्तुत ह मनुष्य जीवन विचार का खेल है। जैसे विचार होंगे वैसा ही आचार बनेगा। इसी लिए स्वाध्याय, पठन, सत्संग का महत्व है ताकि विचार उदात्त बनें। व्यक्ति जैसे २ अपने विचारों को बनाता है उसी प्रकार का उस का जीवन भी ढलता जाता है। हम यज्जाग्रतो...मन्त्रों में तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु का पाठ करते हैं। हमारा मन शिव सकल्पों से भरा रहे। विचार ही जीवन बनाने वाले हैं। पशु और मानव में यही अन्तर है। धर्म अधर्म का निर्णय केवल मनुष्य हो कर सकता है। जब यह विचारों में प्रवृत होता है तब यह कहता है कि इस की अपेक्षा यह ठोक है शास्त्र कहते हैं-क्रतमयोऽयं पुरुष : मानव a product of the thought है। शरीर तो माता पिता से मिलता है पर जोवन विचारों से बनता है। purity of the thoughts जरूरी है। विचार अतः करण में अंकित हो जाते हैं। जो बच्चा पैदा होता है, साथ अन्त. करण आता है। उसपर सूक्ष्मसस्कार चित्रित होते हैं। महिमायुक्त इतिहास लेकर आते हैं, तदनुसार जीवन बनता है।

हमारे आदर्श क्या होने चाहिए ? बिना लक्ष्य के चलना बेकार है। It is a ship without a pilot उनको समन्वय करने का प्रयत्न करना चाहिए। पुराने इतिहास देखें तो विचारों से ही अभ्युदय और अवनति होती है। भारत में दासता क्यों आई ? विचारों स समन्वय न था। तभी निर्बल थे। यदि समाज निर्बल हो तो राष्ट्र भो निर्बल हो जाता है। समस्याओ के हल पर ही उन्नति तथा अवनति होती है। व्यक्ति व समाज तथा व्यक्ति व शासन का क्या सम्बन्ध हो। मैं समाज के लिए बना हूं या समाज मेरे लिए बना है। समाज में व्यक्तिवाद चलता रहा इसके उदाहरण हिटलर तथा मुसोलिनी भी हुए। पर राष्ट्र के लिए ही व्यक्ति बना है। यदि कोई छोटा पुर्जा निकाल लो तो उसका कोई भी मूल्य नहीं है। पर उसकी कीमत मशीन में फिट होने पर होती है। यही व्यक्ति की अवस्था है। राष्ट्र सवकछ ही जो राष्ट्र को चलाता है उसके इशारे पर चलें। इसी विचार से डिक्टेटरशिप का भाव पैदा होता है

दूसरी ओर प्रजातन्त्र होवे यह सिद्धांत है। विश्व में विचारों से होता है। इनके निर्णय पर ही आचार बनेगा। ऐसे हो हिंसा व अहिंसा के बारे में भो मतभेद है। कभी २ जातियां बिना संग्राम के बहुत ही आराम तलब हो जाती हैं। फ्रांस के पतन पर पेटां ने कहा था कि **France has fallen through its indulgence** वहां शराब छः गुना बढ़ गई, विलासिता बढ़ गई तभी देश का पतन हुआ। निटशे ने कहा है कि Strength is the only virtue and weakness is the only vice अर्थात् शक्ति ही गुण है तथा दुर्बलता दोष है। निर्बलता की गणना पाप में की गई है। ठीक कहा है कि Law is the will of the strongest of the state—राज्य के वीर शासक की इच्छा ही कानून माना जाता है। जो दुर्बल है उस की बात मानने को कौन तैयार होता है। जब युद्ध होता है तो उस के द्वारा समस्या का समाधान हो जाता है—ऐसा प्राय. माना गया है। किन्तु सत्य कहा है कि—War creates more problems thou solves कि यद्ध जितनी समस्याओं का निपटारा करता है, उस से कहीं बढ़ कर अन्य समस्याएं पैदा कर देता है।

प्रश्न यह है हिंसा को अपना जाये या अहिंसा का ? भारत ने युद्ध टालने का पूरा २ प्रयत्न किया है। जहां भी सम्भावना हुई वहीं शान्ति दूत बन कर भारत ने अपना प्रयत्न जारी रखा। निरन्तर १५ वर्षों से हम यही कहते व करते आ रहे हैं। संसार में गिद्ध तथा भेडिये मौजूद ही हैं, जिन के सामने युक्ति व दलोल कोई अर्थ-नहीं रखती। भेड़ और भेड़िये को कथा सब ने सुनी हो है। भेड़ कितना ही कहे कि मैं पानी गदला नहीं करती किंतु भेडिया तर्क का कब सुनता है। वह तो एक बात ही कहता है कि मैं ने तुझे खाना है। उस का स्वभाव ही ऐसा है। हमारे सामने भी यही अवस्था है। युक्ति ठीक भी हो पर भेडिये रहने नहीं देगे। अहिंसा शास्त्रसम्मत है भक्ति की आठ पौड़ियों में पहली है। यमों का स्थान महत्व पूर्ण होने से पहला है नियम गौण हैं गीता का उपदेश यही था कि दिलकी क्षुद्र दुर्बलता को छोड़ कर हे अर्जुन ! उठा खड़ा हो अहिंसा आदर्शी के तौर पर आती है। जहां पर दैवी सम्पदा की गणना की गई है वहा पर निर्भयता का स्थान सर्वप्रथम है। कायर में निडरता आ ही नहीं सकती। अभय वाला व्यक्ति ही मुकाबिला कर सकता है। वहा अहिंसा भी आती हैं। दोनों का समन्वय कैसे किया जाये ? जो वेद ने समन्वय बताया है वही ठीक है। कोई समय ऐसा आता है जबकि किसी एक बात पर विशेष बल दिया जाता है और कभी दूसरी बात पर। अंग्रेजों के युग में महात्मा गांधी ने अहिंसा का प्रयोग करके उस पर बल दिया। पर यह सदा के लिए राष्ट्र की रक्षा कर सकती है यह बात विचारणीय है। यदि द्वेष से किसी को मारे तो इस का सर्वत्र निषेध है। ऐसी अवस्था मे यह हिंसा बन जाती है, किन्तु सब प्रकार का मारना हिंसा में नहीं आता। राष्ट्र की रक्षा, न्याय धर्म के लिए जब भेड़िया वृत्ति वालों को युद्ध मे मारा है तो यह हिंसा नहीं होती अहिंसा ही है। यही बात गीता में कही है—यस्य नाहंकृतो-भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते। हत्वापि सिपाही यदि किसी को मारता है तो वह पेट पालने के लिए नहीं मारता। क्या कोई माता-पिता अपने बच्चे को ऐसे देने को तैयार होता है पर राष्ट्र की रक्षा का प्रश्न आने पर माता-पिता अपनी सन्तान को अर्पण करने में जरा भी संकोच नहीं करते। राष्ट्र रक्षण, न्याय धर्म के समय हिंसा को अहिसा कहा गया है। भगवान् कृष्ण ने यही कहा। गांधी जी ने भी कहा था कि—यदि गुण्डों से अपनी बहु-बेटियों की रक्षा यदि मेरे विचारों में अहिंसा से न हो सके तो शस्त्र से मारना अहिंसा है। भारत ने जब काश्मीर

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आत्म-ज्ञान के बिना जीवन का कल्याण नहीं होगा

श्री स्वामी सोमानन्द जी महाराज का प्रवचन

जनता से गायत्री मन्त्र का मिल कर उच्चारण कराने के बाद स्वामी सोमानन्द जी सरस्वती अध्यक्ष वैदिक साधना आश्रम गुरदासपुर ने अपने प्रवचन में कहा कि—यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का तीसरा मन्त्र है—असुर्या नाम ते लोका.. इस मन्त्र में उपदेश दिया गया है असुर नाम के लोक हैं जो गहरे अन्धकार से भरे हुए हैं। उन में वे लोग जाते हैं जो अपने आत्मा की हत्या कर देते हैं। आप कहेंगे कि शास्त्रों में तो हम पढ़ते और सुनते आ रहे हैं कि आत्मा अमर है, कभी मरता नहीं। फिर यहां कैसे कहा है कि आत्मा की हत्या होती है। इसका अर्थ यह है कि आत्मा के विरुद्ध चलना आत्मा को मार देना है। जैसे किसी का बस में नोट गिर पड़े और पास बैठा हुआ मनुष्य उसे उठा कर अपनी जेब में रख दे। तीसरा देखता था—उसकी लानत मलामत की और नोट भी वापस ले लिया—यही आत्मा को मारना है। नोट उठाते समय उसकी आत्मा उसे रोकती थी पर उसने सुना नहीं। वेद कहता है कि जब आत्मा की आवाज के विरुद्ध कोई चलता है तो वह असुर लोक में जाता है।

उपनिषदों में आत्मविषय की बड़ी सुन्दर चर्चा गाथा आती है जब याज्ञवल्क्य संन्यासी बनने लगे। अपनी सम्पत्ति बांट देने के लिए मैत्रेयी कात्यायनी को बुलाया—कहा कि मैं सम्पदा बांट कर जीवन के विशाल क्षेत्र में जाना चाहता हूं। मैत्रेयी विदुषी थी—पूछ बैठी—किन्तु सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा सन्तोषायालम्—क्या यह इस धन वैभव भरी धरती से मुझे आत्म-सन्तोष मिल जाएगा। इस से अमृतत्व की प्राप्ति हो सकेगी। याज्ञवल्क्य बोले—देवि! यथैवोपकरणवतां तथैव ते भविष्यति। ना शास्ति वित्तेन अमृतत्वस्य—नहीं। यह साधन मात्र ही होगी। ऐश्वर्य से अमृतत्व की प्राप्ति की आशा नहीं की सकती। तब मैत्रेयी ने कहा—यदि ऐसी बात है तो मुझे उस धन का प्रसाद दें जिस से अमरता प्राप्त की जा सके। तब याज्ञवल्क्य ने आत्मा के बारे में उसे बड़ा ही सुन्दर उपदेश दिया। उपनिषद् में वह सारा आत्मतत्व प्रकाश डालने वाला मिलता है जिस से जीवन को आज भी सच्ची शान्ति मिलती है।

आज का युग भौतिकवाद का है। लोगों के पास संसार के दूसरे कामों को करने के लिए समय है किन्तु जिस बात से अमरता मिलती है, जीवन के कष्ट दूर होते हैं, शान्ति आनन्द का प्याला पीने को प्राप्त होता है। उसी आत्मतत्व को जानने के लिए ही समय नहीं मिलता। आज तो चारों ओर शरीर का पूरा २ ध्यान रखा जाता है पर जिस की शक्तिसे यह शरीर चलता व काम करता है। उसी आत्मा को सर्वथा भुलाया जा रहा है। आत्मा को मारा जा रहा है। उपनिषदों में कहा है कि इन्द्र और विरोचन जब प्रजापति से अपना २ प्रश्न पूछने गये तो प्रजापति ने जलपात्र में मुख आदि शरीर के अंगों को दिखा कर विरोचन को कहा कि जो तुझे पानी में दिखाई देता है यही शरीर ही तो है वह प्रसन्न हो कर चला गया। उस ने शरीर वाद का प्रचार किया। पर इन्द्र को भी जब यही बात कही तो इन्द्र बोला—यदि शरीर ही सब है तो जिस के जाने पर शरीर होता भी काय नहीं कर सकता। वह तत्व या सत्ता कौन सी है। मैं तो उसे जानना चाहता हूं तब प्रजापति ने उसे अधिकारी समझ कर आत्मज्ञान का उत्तम उपदेश दिया। तब इन्द्र ने आत्मवाद का विचार दूसरों तक पहुंचाया। आज दोनों वाद चल रहे हैं। शरीर वादी लोग तो शरीर को ही सब कुछ मान जान कर इसी की सेवा पूजा में लगे रहते हैं। उनका विचार शरीर के लोक से ऊपर नहीं उठता। सारा जीवन इसी शरीर अर्चना में लग जाता है। मनुष्य जीवन के रहस्य को ऐसे शरीर वादी जान तक नहीं सकते। इस लोक में तथा परलोक में भी अन्धकार से भरे आसुरी लोक में नीच योनियों में भटकते रहते हैं।

किन्तु आत्मतत्व के मर्म को समझने वाले लोग संसार में रह कर सारे कार्य भी करते हैं। शरीर का भी पूरा २ ध्यान रखते हैं। किन्तु अपना समय उस आत्मज्ञान को प्राप्त करने के लिए भी निकालते हैं। जीवन के यही दो मार्ग हैं जिन को उपनिषदों ने श्रेय और प्रेय नाम से पुकारा है। उपनिषदों में आत्मा को सबसे आवश्यक ज्योति का नाम दिया है। आज संसार में जितनी भी गड़बड़ हो रही है, अशांति फैल रही तथा जीवन दुःखमय बनता जा रहा है। सब कुछ होते हुए भी मनुष्य को आराम, सन्तोष नहीं। इसका केवल यह कारण है कि मनुष्य ने आत्मा की आवाज को सुनना सर्वथा बंद कर दिया है। आत्मसाधना का मार्ग छोड़ बैठा है। भौतिक पदार्थों में लिप्त हो चुका है। हमारा कर्तव्य है कि हम वेद के आदेश के अनुसार आत्म-बोध प्राप्त करें तभी सबका कल्याण होगा—

मायावी के साथ मायावी बनना ही सच्ची अहिंसा है

(पृष्ठ ५ का शेष)

की रक्षा लिए अपनी सेनाएं भेजीं तो महात्मा गांधी ने कहा था कि—They are doing a fine job—ये अपना उत्तम कर्तव्य निभा रहे हैं। शास्त्रों में कहा है कि क्षमा वीरस्य भूषणम् क्षमावीर का भूषण है। कायर कभी क्षमा कर ही नहीं सकता। गांधी जी ने स्पष्ट कहा था कि My non-violence is not nonviolence of the weak and Coward मेरे विचारों की अहिंसा निर्बल तथा कायर की अहिंसा नहीं है।

वेद में आता है कि अभयं-मित्रात ..मित्र से निर्भयता की प्रार्थना सब से पहले आती है। मित्र के लिए पाप अधिक किया जाता है। मित्र के लिए झूठ बोलने पड़ते हैं। परन्तु शत्रु केलिए इतना पाप व झूठे काम नहीं करने पड़ते। बर्नार्डशा ने कहा था कि—Fear is nothing but a feeling of uncertain. जज किसी को फांसी देकर सारे समाज का भला करता है। महाभारत के संग्राम में अर्जुन ने कहा था—भगवान् ये सारे मर जायेंगे। कृष्ण ने उत्तर दिया—अर्जुन! ये तो पहले से मरे हुए हैं। तुमतो केवल निमित्त-मात्र बने हो। तस्माद् उत्तिष्ठ कान्तेय युद्धाय कृतनिश्चय. हे कुन्ती के पुत्र। उठो और युद्ध करने का निश्चय करो। अहिंसा भी लक्ष्य है पर हिंसा भी राष्ट्र का अंग है। स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए समय २ पर हिंसा जरूरी है। वेद में कहा है कि—यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च—राष्ट्र में ब्रह्म बल तथा क्षात्रबल दोनों आवश्यक हैं। एकांगी देश का अभ्युदय नहीं हो सकता।

आज हमारा मुकाबिला फरेबी मायावी शत्रु से है। उसके साथ उसी रूप से व्यवहार करना चाहिए वेद में इन्द्र के अन्य विशेषणों में मायावी इन्द्र भी आता है। असुर मायावी है, उनका प्रतिकार मायावी बनकर किया जा सकता है। आज राष्ट्र को इस तथ्य को समझने की तथा आचरण में लाने की आवश्यकता है। तभी अभ्युदय तथा निःश्रेयस् की प्राप्ति होगी।

आत्मनिर्माण से विश्व का निर्माण हो सकता है

युवको ! भारत माता की रक्षार्थ जीवन भेंट कर दो

प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम. ए. का ओज पूर्ण भाषण

प्रो० वेदीराम शर्मा एम० ए० डी० ए० वी० कालिज जालन्धर ने अपना ओजस्वी भाषण देते हुए कहा कि—

आज विश्व-निर्माण की चर्चा की जाती है। बड़े २ सम्मेलन तथा समारोह होते हैं। उत्तम २ साधनों को जुटाने का प्रयत्न भी जारी है। किन्तु इतना प्रयास करने पर एवं इतने अनेक साधनों के एकत्रित करने पर भी जीवन एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा वही न्यूनताएं, रोग और बुराईयां सामने खड़ी हैं। अशांति ने पीछा नहीं छोड़ा। इसका विशेष व निश्चित कारण यह है कि विश्व को बनाने की जो आधार शिला, मूलमन्त्र तथा मौलिक भित्ति है, जिसे आत्म-विकास या जीवन निर्माण कहा जाता है। उसकी ओर तो किसी का भी ध्यान नहीं है। जब जीवन बन जाता है, उसमें सुगंधि एवं उच्चता का आकर्षण पैदा हो जाता है, तब सारी जनता स्वयं ही आकर्षित होने लगती है।

हमारे प्राचीन इतिहास में वसिष्ठ और विश्वामित्र के राज्यों या जन प्रबन्ध में बड़ा सुन्दर उदाहरण मिलता है। विश्वामित्र का सारा राज्य प्रबन्ध **Government of Taxes** टैक्सों की सरकार थी। लोगों पर बड़े और कड़े कर लगे हुए थे तब भी उस स्थान की जनता दुःखी थी। किन्तु वसिष्ठ के इलाके में किसी प्रकार का भी टैक्स न था। कड़ा दण्ड भी नहीं था। फिर भी वहां की प्रजा बड़ी सुखी थी। किसी प्रकार का कष्ट वहां था नहीं। विश्वामित्र हैरान था कि इसका कारण क्या है ? २० हजार साथी लेकर विश्वामित्र वसिष्ठ के इलाके में पहुंचे। मुनि वसिष्ठ की कामधेनु ने सबका बड़ा सत्कार किया। सेवा खाने पिलाने में कमाल कर दिया। विश्वामित्र ने देखा कि सारे नगर का सुन्दर प्रबन्ध है, सारे लोग अपने-अपने कार्यों में लगे हुए हैं। किसी प्रकार की अशांति गड़बड़ी, चोरी, शत्रुता वहां नहीं है। सारी जनता एक परिवार के समान रहती है। उसके मन में ईर्ष्या पैदा हुई। उसने कामधेनु को मांगा। वसिष्ठ के इंकार करने पर विश्वामित्र ने सेना के साथ हमला कर दिया। परन्तु उस कामधेनु ने शस्त्रों से भरे सैनिकों से विश्वामित्र की सेना को खदेड़ कर मारा और भगा दिया। यह कामधेनु गाय नहीं थी अपितु वसिष्ठ की प्रजा ही कामधेनु थी। उसी ने भोजन से सेवा की। किन्तु जब विश्वामित्र शत्रु बनकर आया तो उसे युद्ध में हरा दिया। वसिष्ठ की सारी प्रजा के सामने अपने नेता वसिष्ठ के जीवन का आदर्श था। निर्मित जीवन सारे देश को बना दिया करता है। देश की रक्षा तब होगी जबकि भुजाओं में बल होगा वसिष्ठ के राज्य का प्रत्येक व्यक्ति प्रभात से पूर्व ही बाहर जा कर व्यायाम करता था, स्वयं हर बात का ध्यान रखता था। सब मे इतना बल था कि आक्रमण होने पर भी राष्ट्र का कुछ न बिगाड़ा। स्वयं देश की रक्षा होगई। परन्तु आज की स्थिति सामने है। स्वयं निर्मित हों तो देश का भी निर्माण होगा तथा रक्षा हो सकेगी। आज का यह दूध व ऐसा घी खा पी कर क्या शक्ति रहेगी। भीम अर्जुन का बल कहां आ सकेगा। प्रजारूपी कामधेनु को ठीक बनाये। आज चीन ने आक्रमण किया तो कल पाकिस्तान और परसों कोई तीसरा हम पर आक्रमण करेगा। क्योंकि हमें कमजोर समझ रखा है। धर्म यही कहता है कि मिलकर शक्तिशाली बनकर शत्रु का मुख तोड़ दो। व्यक्ति मिलकर राष्ट्र बनाते हैं। व्यक्तियों का संचित रूप ही राष्ट्र कहलाता है।

चीन से हमारे पुरातन सम्बन्ध थे। ईसा से ३०० वर्ष पूर्व भारत का प्रचारक दर्रे से होकर चीन गया और वहां बौद्धधर्म का प्रचार किया चीन ने भारत पर सात आक्रमण किये। उन सब मे भारत ने चीन को हराया। चीन ने भारत से सन्धि की पर उसे तोड़ दिया। दोनों देशों का सम्बन्ध रहा है पर चीन ने उसे तोड दिया। भारत निर्बल राष्ट्र नहीं। चीन ने हमे दुर्बल समझा था। किन्तु ऐसे देश को क्या कोई हरा सकता है जिस मे रामकृष्ण तथा दधीचि की वीरता के उज्ज्वल जीवन इतिहास विद्यमान हों ! भारत की जनता ने बड़े-बड़े सतरह देवासुर संग्रामों मे हर बार ही असुरों को पराजित कर दिया था। हमारे पास किस बात की कमी है। जिस जाति के पास वेद हो, जिसके हाथ मे गीता हो, जिसके जीवन में पुरातन वीरों का जोश हो, जिसका निवास भारत जैसी वीरभूमि पर हो। उसे भला कौन हरा सका तथा अब भी कौन हरा सका तथा अब भी कौन परास्त कर सकता है ?

आज भारत-माता की लाज को हरने के लिए, इसके सम्मान पर आघात करने के विचार से चीन असुर ने जो नीचता पूर्ण विश्वासघात से भरा तथा धोखे से जो हमला किया है। उसको खदेड़ने के लिए, इसका मजा चखाने के लिए हे भारतीय वीरो ! युवक साथियो और बहिनो ! आप सब देव बनकर आगे बढ़कर इस युग के इस असुर को बता दो कि भारत के देवों के बाहुओं में कितना बल, शरीर मे कितनी शक्ति एवं विचारों मे कितनी वीरता की भावना मौजूद है। आज वीरता के परिचय देने की आवश्यकता आ गई है। मै अपने युवक साथियों से विशेष तौर पर कहना चाहता हूं कि समय आ गया है जब कि अपनी अपनी सारी बिखरी शक्ति को सगठित करके विशाल शक्ति-केन्द्र बना दो। इसकी आज के समय बड़ी आवश्यकता है। हमारी आवाज से चारों दिशाएं, आकाश गूंज उठे, हमारी पदचापों से भूमि पर भूचाल सा आ जाये, हमारी भुजाओं से शत्रु का कचूमर निकल जाये। इस क्षेत्र मे जीवन का निर्माण करना है।

आवश्यकता

संस्कृत कालिज टंकारा (सौराष्ट्र) के प्रिंसिपल की जगह के लिए एक संस्कृत और वैदिक फिलासफी में **P. H. D** अथवा इसके बराबर की योग्यता वाले महानुभव की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। प्रार्थी अपनी योग्यता के तथा पूर्व अनुभव के प्रमाण पत्रों सहित अधीक्षक डी० ए० वी० कालिज चित्रगुप्त रोड न्यू देहली को प्रार्थना पत्र भेजें।

मन्त्री श्री महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा।

'आर्य जगत' साप्ताहिक का
—ऋषि बोध अंक—

आर्य जगत का ऋषि बोध अंक शिवरात्री के शुभ पर्व पर २२ फरवरी १९६३ को बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित हो रहा है मुखपृष्ठ पर चित्ताकर्षक स्वामी दयानन्द जी का अति सुन्दर चित्र होगा। इस के अतिरिक्त आध्यात्मिक, सामाजिक और धार्मिक समयोपयोगी लेख, कविताए होंगी। अतः सभी आर्य प्रेमियों व समाजों से प्रार्थना है कि अधिक से अधिक प्रतियां मंगा कर शीघ्र ही सूचित करने की कृपा करें। ताकि ठीक समय पर उचित प्रबन्ध करके आप की पत्र द्वारा सेवा की जा सके। इस अङ्क का मूल्य ३७ न० पै० होगा।

नोट.—१. व्यापारियों के लिए विज्ञापन देने का बहुत अच्छा सुअवसर है।

२. आर्य संस्थाएं व समाजें तथा अन्य सभी व्यक्ति १० फरवरी तक अपने २ आर्डर भेजने की कृपा करें। देर से आर्डर आने वालों की समय पर सेवा नहीं की जा सकेगी।

३. लेखक व कवि अपनी रचनाएं १ फरवरी तक भेजने की कृपा करें।

— व्यवस्थापक आर्यजगत निकट कचहरी जालन्धर

पुस्तक परिचय

संक्षिप्त मनुस्मृति

लेखक : श्री देवदत्त जी शास्त्री, विद्याभास्कर

प्रकाशक . विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, पंजाब

छपाई—कागज बढ़िया—पक्की जिल्द।

पृष्ठ सख्या १९० : मूल्य ३-५० रुपये

स्मृतिकारों में महर्षि मनु का स्थान सर्वोच्च है। आप के पवित्र ग्रन्थ मनुस्मृति में वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन को सफल बनाने वाले सुदृढ़ नियम और सुन्दर उपदेश हैं। उसी विशालकाय ग्रन्थ में से योग्यता से मनु महाराज के शाश्वतिक तथा वर्तमान समयोपयोगी आदेशों, उपदेशों, नियमों, व्यवस्थाओं में से संयुक्त ६५८ श्लोकों का यह संग्रह संक्षिप्त मनुस्मृति के नाम से प्रस्तुत किया है। श्लोकों का अनुवाद—सरस और सुबोध भाषा में किया गया है। और नई क्रमसंख्या के साथ-साथ मनुस्मृति में आई श्लोक संख्या भी कोष्ठ में दे दी गई है।

आज जबकि भारतीय सभ्यता और संस्कृति को मिटाने वाले तत्व उभर रहे हैं—मनु महाराज के उपदेश, आदेश तथा उन के धर्म नियमों का जितना भी प्रचार किया जाए कम है। प्रत्येक भारतीय संस्कृति और सभ्यता का गौरव बढ़ाने वाले को इस पुस्तक को अवश्य खरीद कर पढ़ना और इसका प्रचार करना चाहिए। —व्यवस्थापक

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर का
वार्षिक साधारण अधिवेशन

सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन २७ जनवरी १९६३ को २ बजे साईं दास एंगलो संस्कृत हा० सै० स्कूल जालन्धर के विशाल हाल में सम्पन्न होगा।

सभी समाजों के प्रतिनिधि महानुभाव समय पर पधारने की कृपा करें भोजन निवास का प्रबन्ध साईं दास स्कूल में आर्यसमाज किला जालन्धर की ओर से होगा।

अपने समाजों के दशांश शीघ्र सभा में भेजने की कृपा करें। प्रतिनिधियों को एजेंडे भेजे जा चुके हैं। वार्षिक रिपोर्ट की प्रतियां भी भेजी जा चुकी हैं।

—सन्तोषराज मन्त्री सभा

आदर्श विवाह

श्री द्वारकादास जी सहगल मालिक लीडर इंजनीयरिंग वर्क्स इण्डस्ट्रीयल एरिया जालन्धर पंजाब हो नहीं अपितु सारे भारत के सर्वोच्च व्यापारियों तथा गण्य-मान्य व्यक्तियों में से एक हैं। आप ने अपने सुपुत्र के शुभ विवाह पर केवल १ रुपया सगाई में लेकर और दहेज में कुछ भी न ले कर हिन्दु समाज के सामने आदर्श उपस्थित किया है। हिन्दु समाज में सगाई और दहेज पर हजारों रुपया नष्ट किया जाता है। जिस से मध्यम वर्ग के लोगों के लिए बड़ी कठिनता पैदा हो जाती है। इस कुप्रथा को दूर करने के लिए ही श्री द्वारकादास जी सहगल ने यह आदर्श कदम उठा कर हिन्दु समाज को दहेज प्रथा को दूर करने का उत्तम उदाहरण उपस्थित किया है। आर्यजगत की ओर से उन्हें बधाई हो।

—संतोषराज मंत्री आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

चौंक आर्य्यसमाज फिरोजपुर शहर में

१३ तारीख को सब समाजों ने मिल कर लोहड़ी का पर्व मनाया। और १४-१-६३ को प्रातःकाल माघी का पर्व मनाया। पंडित रघुवीर जी शास्त्री पुरोहित आर्यसमाज फिरोज़पुर शहर ने महाशय महन्दराम जी आर्य्य के स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना कराई।

—मन्त्री, आर्यसमाज

चेतावनी

आर्य पुरुषों तथा आर्य सस्थाओ व समाजो को

श्री लभूराम जी मोरिंडा निवासी का आर्य प्रादेशिक सभा से कोई सम्बन्ध नहीं है वे स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य कर रहे हैं। अतः सभी संस्थाएं व समाजें सहायता करते समय ध्यान रखें कि सभा के नाम पर उन को किसी प्रकार की सहायता न दी जाए।

सन्तोषराज महा मन्त्री
आर्य प्रादेशिक सभा

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० २०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक ५) रविवार २१ माघ २०१९— ३ फरवरी १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

यदि नो गां हंसि

अरे शत्रु ! यदि तूने हमारी गौ पर, भूमि पर, राष्ट्र की संस्कृति पर तथा गाय आदि यज्ञ-उपकारी पशुधन पर आक्रमण किया। खबरदार ! अगर तूने हमारी आवाज़ को मारने की चेष्टा की।

यद्यश्वं यदि पूरुषम्

और यदि अरे वैरी ! तूने हमारे राष्ट्र की किसी सम्पत्ति पर भी तूने हाथ डाला या हमारी जन-शक्ति पर तूने हाथ डाला। किसी को भी मारने का साहस किया तो—

तं त्वा सीसेन विध्याम:

तो याद रख, देख ले ! हम, राष्ट्र के वीर तुझ को गोली से मार देंगे। तुझे जीता नहीं छोड़ेंगे। हमारी गोली से तू बच कर जा नहीं सकेगा। तुझे अपने पाप का दण्ड भोगना पड़ेगा।

अ थ र्व वे द से

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालंधर

का २७ जनवरी रविवार को जालन्धर में प्रिंसिपल सूर्यभानु जी वायस चांसलर

की प्रधानता में शानदार गौरवपूर्ण वार्षिक साधारण अधिवेशन सम्पन्न हुआ

जिस में पंजाब के कोने २ से समाजों के मान्य प्रतिनिधि पधारे। सभा की पुरातन परम्परानुसार सर्वसम्मति से

प्रिंसीपल रलाराम जी एम०ए०

सभा के प्रधान निर्वाचित हुए तथा मन्त्रिमंडल अन्तरंग सदस्यों, सार्वदेशिक सभा के लिए सदस्यों के चुनने का सर्वाधिकार प्रधान जी को सौंप दिया गया। सब ने सभा की उन्नति का संकल्प लिया।

हर समय तैयार रहो

भारत के मान्य प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहरलाल जी नेहरू ने राष्ट्र की सारी जनता को वीरताभरे सन्देश मे कहा है—

मौजूदा पीढ़ी पर देश के सम्मान और अखंडता की रक्षा करने का दायित्व है। अब हमें अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने और किसी भी अभ्याक्रमण का मुंह तोड़ जवाब देने के लिए हर समय तैयार रहना है। ताकि कोई हमारा अपमान करने अथवा पुनः हमारी मातृभूमि पर आक्रमण करने की हिम्मत न कर सके। अत्यन्त सजगता ही स्वतन्त्रता का मूल्य है। जो राष्ट्र आरामपरस्त बन जाते हैं और खुशफहमी में रहते हैं अपनी स्वतन्त्रता खो देते हैं।

—

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

आर्य प्रादेशिक सभा का शानदार वार्षिक साधारण अधिवेशन

सभा की उन्नति के लिए प्रतिनिधियों का हार्दिक प्रेम

अधिकारियों के निर्वाचन की पुनीत परम्परा

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर का वार्षिक बजट, निर्वाचन तथा साधारण अधिवेशन ता. २७ जनवरी १९६३ रविवार दोपहर बाद दो बजे साईंदास ऐंग्लो संस्कृत हायर सैकंडरी स्कूल के विशाल हाल में सभा के माननीय प्रधान प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी की प्रधानता में हुआ। सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों लोहगढ़ अमृतसर, लक्ष्मणसर अमृतसर, माडलटाउन जालन्धर, माडलटाऊन लुधियाना, अम्बाला छावनी, शिमला, भटिंडा, आर्य समाज अनारकली रीडिंग रोड नई देहली, महरौली देहली नवांकोट अमृतसर, शाम चौरासी, आर्य समाज चंडीगढ़, फिरोजपुर शहर, गुरदासपुर. बटाला, लेखराम नगर कादियां धर्मपुरा, माडल-टाउन यमुनानगर, आर्यसमाज टोहाना हिसार, नूरखेड़ा, खरकड़ा भंभेवा रोहतक, किला समाज जालन्धर शहर, होशियारपुर आदि से मान्य प्रतिनिधि पधारे हुए थे। आर्य समाज किला मोहल्ला की ओर से बाहर से आने वाले सारे महानुभावों का स्वागत सम्मान तथा आतिथ्य का बड़ा सुन्दर प्रबन्ध था।

ठीक समय पर सभा का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। सबसे पूर्व सभा के माननीय प्रधान प्रिंसिपल सूर्यभानु जी ने तीन बार गायत्री मन्त्र उच्चारण कराकर बड़े ही मीठे शब्दों में कहा सब से प्रथम हमारा कर्तव्य है कि आर्य समाज के जो हमारे पुराने कार्यकर्ता स्तम्भ हम से पृथक हो गये हैं उन के प्रति मौन होकर शोक प्रस्तावका प्रकाश कर उन सारे स्वर्गीय सज्जनों के नाम सभा की प्रस्तुत की जाने वाली वार्षिक रिपोर्ट की भूमिका में अंकित हैं। इस पर सारे अधिवेशन में उपस्थित सज्जनों ने खड़े होकर स्वर्गीय समाज के मान्य महानुभावों के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि पेश की।

इसके पश्चात् सभा के मान्य महामन्त्री श्री सन्तोषराज जी ने मान्य प्रधान जी द्वारा लिखित सभा की वार्षिक रिपोर्ट की भूमिका पढ़ी, जिस में सभा ने गतवर्ष में प्रत्येक क्षेत्र में कितनी प्रगति, उन्नति की, इसका सारा विवरण है। विवरण के प्राक्कथन के विशेष भाग आर्य जगत के दूसरे स्थान पर प्रकाशित किये जा रहे हैं। सर्वसम्मति से स्वीकृत हुई। इसके बाद वार्षिक बजट वेदप्रचार विभाग, साहित्य प्रकाशन, आर्यजगत पत्र, अनाथालय फिरोजपुर छावनी के समस्त भागों का पेश हुआ। माननीय प्रधान जी ने वेदप्रचार विभाग के बजट के सम्बन्ध में उपस्थित सभा के सारे हितैषियों का ध्यान सभा की आर्थिक अवस्था की ओर आकृष्ट करते हुए अपने २ सुन्दर सुझाव तथा क्रियात्मिक सहयोग देने को कहा। मान्य प्रधान जी ने कहा कि आप जानते हैं कि मैं अब जालन्धर से दूर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में एक अत्यन्त उत्तर दायित्व पूर्ण सेवा कार्य में लगा हूं। सभा मेरी है। वहां बैठे जितना भी हो सकता है, अपना धर्म व कर्तव्य समझ कर सभा की पूरी २ सेवा करता रहा हूं। आप सबके प्रेम सहयोग से ही यह काम हो रहा है। हमारी सभाकी एकता, सहयोग पवित्र परम्परा तथा संगठन बड़ा ही प्रसिद्ध है। आज भी बड़ी प्रसन्नता है कि आप के मन में सभा के लिए बड़ी तड़प, श्रद्धा, उत्साह तथा उत्सर्ग के भाव भरे देखता हूं। यह जीवन एवं प्रगति की निशानी है। आर्थिक रूप से सभा को बहुत ऊंचा करना है। इस पर आर्यसमाज अनारकली रीडिंगरोड नई देहली के प्रधान श्री ला. भगवान दास जी पुरी, पं० देवराज जी वैदिक मिश्नरी, प्रिंसीपल रलाराम जी, पं. रुद्रदत्त शर्मा अमृतसर, ला. परमेश्वरी दास जी बहल, ज्ञानी पिंडी दासजी अमृतसर श्री जौली जी अम्बाला, पं. अमर सिंह जी, प. राजपाल जी, पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, श्री बृजलाल गुप्ता टोहाना, कैप्टन बूटाराम जी होशियारपुर, प्रिं. ज्ञानचन्द भाटिया प्रिं. मुल्खराजजी होशियारपुर, प्रिं. युग किशोर जी बटाला, श्री चमनलाल जी यमुनानगर, पं. दयाराम जी एम.ए. देहली, ला. गंगाराम जी लक्ष्मणसर, प्रिंसिपल बहल जी, प्रो. वेदीराम जी, पं. दुर्गादास जी, जमादार भरतसिंह जी नूरखेड़ा ने सभा की आर्थिक अवस्था की प्रगति के लिए बड़े ही सुन्दर विचार सुझाव तथा क्रियात्मिक सहयोग देने का विश्वास दिलाया। कई सज्जनों, समाजों ने तो इसके लिए अपना काफी क्रियात्मिक सहयोग भी पेश कर दिया। इनकी सूची पृथक दी जा रही है। सभा के लिए सबके मन में कितनी श्रद्धा, कितना उल्लास, उत्साह, प्रेम श्रद्धा थी। यह देखकर मन बड़ा ही प्रसन्न हो रहा था। आर्यजगत पत्र के लिए पं. त्रिलोकचन्द्र शास्त्री ने सब से इसको और भी ऊंचा करने की विशेष प्रार्थना की। महात्मा हंसराज मेला बजवाड़ा को आगे से धूमधाम से मनाने के लिए श्रीयुत भगवान दास जी पुरी, श्री नन्दसिंह जी ने विशेष बल दिया। सब के सुझाव सभा में अंकित कर लिए गये। बजट सर्वसम्मति से पास हुआ।

आर्य प्रादेशिक सभा के वार्षिक निर्वाचन में तो कमाल ही होता है। यह एकत्व, प्रेम, आन्तरिक संगठन तथा परस्पर विश्वास का आदर्श उदाहरण होता है। निर्वाचन में तो सम्भवतः एक दो मिन्ट ही लगते हैं! सभा का यह महान् गौरव है, दर्शनीय आदर्श, प्रशंसनीय अनुकरण है। इस पुरातन गौरव पूर्ण परम्परा पर सभा के सारे स्तम्भों, अधिकारियों, संस्थाओं तथा समाजों के प्रतिनिधियों सदस्यों को मान है, मस्तक ऊंचा है। श्री भगवान दास जी पुरी ने कहा कि पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज से प्रार्थना की जाये कि वे सभा के पवित्र कार्य में हमें आशीर्वाद देवें ताकि उनके आशीर्वाद से स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी का यह महान उपवन सदा सुरभित होता रहे। प्रिंसिपल सूर्यभानु जी सभा प्रधान ने सभा की उन्नति तथा महात्मा आनन्द स्वामी जी

(शेष पृष्ठ ३ पर)

(१०००) रु० सभा वेद प्रचार में

आर्यसमाज किला मुहल्ला जालन्धर ने अपने वार्षिकोत्सव के बाद आर्य प्रादेशिक सभा को वेद प्रचार में एक हजार रुपए भेंट किए।

सम्पादकीय--

'सभा अमर रहे'

गत २७ जनवरी ६३ रविवार को आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जलन्धर का मान्य प्रधान प्रिंसिपल सूर्यभान जी एम० ए० वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी की प्रधानता में साईंदास एंग्लो संस्कृत स्कूल में सम्पन्न हुआ। उसे देख कर हम सभा के सारे मान्य अधिकारियों, समाजों के सभ्य जनों तथा अपनी संस्थाओं के महानुभावों को हार्दिक बधाई देते हैं। अपनी सभा के सारे सज्जनों हितैषियों का सभा के प्रति प्रेम, उत्साह, एकता का भाव तथा प्रगति के पथ पर ले जाने की भव्य भावना देखकर, वहां के सब के ऊंचे उत्साह भरे विचार सुनकर तथा क्रियात्मिक सहयोग का दृश्य देख कर मन प्रसन्न हो गया। प्रत्येक कार्य में विचार में एकता देखकर मन बोल उठा आर्य प्रादेशिक सभा अमर रहे। सारे कार्य सर्वसम्मति से हुए। माननीय प्रिंसिपल सूर्यभान जी ने जितनी उत्तमता से, जिस आन्तरिक भव्य भावना तथा जिस प्रेमपूर्ण प्रभाव से कार्य किया, अधिवेशन का संचालन किया। इसके लिए सदा ही बधाई के पात्र हैं। सभा के नए प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० समाज के अतीव अनुभवी, तपस्वी त्यागी, विद्वान् वक्ता तथा सहानुभूति भरे सज्जन हैं। उनका हार्दिक स्वागत करते हैं। प्रभु करे कि सभा की यह सुन्दर नौका के ये सारे ही सज्जन हितैषी पतवार बनकर इसे तन मन धन से आगे ही ले जाने में लगे रहें—अतीव बधाई व धन्यवाद।

—त्रिलोक चन्द्र

—•—•—

वेद में युद्ध प्रेरणा

(श्री बलदेवराज एम० ए० साधु आश्रम होश्यारपुर)

वेदों में धार्मिक विषय ही नहीं अपितु युद्ध-सम्बंधी विषयों का भी समावेश है। शत्रु की सेना को मोह में डालने वाले, वहीं स्थिर करने वाले, जय व पराजय की परीक्षा सम्बंधी अनेक मन्त्र हैं। मैं केवल अथर्ववेद के कुछ मंत्र प्रस्तुत करता हूं जिन में देश रक्षा और शत्रु को खदेड़ने का ही नहीं अपितु मूल से ही शत्रु के नाश का आदेश है—अथर्व वेद में इस सम्बन्ध में आता है—'त्वमग्ने यातुधानानुद्धा इहा वह अथैषामिन्द्रो वज्रेणापि शीर्षाणिवृश्चतु ॥

हे अग्नि (वीर सैनिक) तू राक्षस शत्रुओं को अपनी वीरता व शौर्य से पकड़ ले। और इन्द्र (बलशाली सेना पति) अपने तीक्ष्ण शस्त्रों से शत्रुओं के सिरों को काट दे (ताकि भयभीत हो कर शत्रु की सेना की पुनः आक्रमण करने की हिम्मत न रहे।) शत्रु को ही नहीं उसकी प्रजा को भी मारने व वशमें करनेका वेद आदेश देता है ताकि शत्रु की मृत्यु के उपरान्त उसकी प्रजा आक्रमण न कर दे—

यातधानस्य सोमप जहि प्रजां नयस्व च। निस्तवानस्य पातय परमक्ष्युतावरम् ॥

हे देश-भक्ति के नशे से मदमस्त राजन्! शत्रु-राजा की प्रजा को कुचल २ कर मार दें और उन वैरियों को अपने वश में करके (बन्दी बना करके) ले आ। अगर वे अपनी निन्दा करते हैं तो उनकी आंखे फोड़ दें।

आज सङ्कटकालीन परिस्थिति सब से बड़ी आवश्यकता सङ्गठन की है। भारत का प्रत्येक वासी राष्ट्र-नायक के आदेश पर चले। वह हमारे आगे २ चले। वेद का भी यही आदेश है—'स्वस्तिदा विशांपति वृत्रहा विमृधो वशी। वृषेन्द्रः पुरएतु नः सोमपा अभयंकरः ॥

वह (देश व विदेश में) कल्याण व शान्ति स्थापित रखने वाला प्रजा का पालक (राष्ट्रपति अथवा) शत्रु को मार भगाने वाला (सेना-नायक अथवा) अपनी Defence policy (रक्षा-नीति) के द्वारा शत्रु को वश में करने वाला निडर बलवान देशभक्त रक्षामंत्री इस सङ्कट कालीन परिस्थिति में हमारे आगे २ जाए (हमारा नेतृत्व करे)

मेरे विचार में इस समय सेना-नायक पर ही युद्ध-नीति का भार सौंप देना चाहिए। उन्हें शत्रु को खदेड़ने मारने व अपनी एक २ इंच भूमि की रक्षा के लिए युद्ध-नीति व सेना संघटन के लिए जो भी कदम-उठाना उचित समझें उन्हें स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए वेद में भी ऐसा आदेश है कि सेना-नायक ऐसी नीति अपनाए जिस से अपने फैंके हुए अस्त्र-शस्त्र शत्रु को ही हानि पहुंचाएं 'आरेऽसावस्मदस्तु हेतिर्देवासो असत्। आरे अश्मा यमस्यथ ॥'

हे (सदा विजय प्राप्त करने वाले) तीक्ष्ण-तेज से चमकने वाले देवो वे अस्त्र हम से दूर रहें (हम पर ही न गिरें और प्रस्तर-रूपी जो अन्य शस्त्रों का आप प्रयोग करते हो इस प्रकार युद्ध-स्थली में उनका प्रयोग करो जिस से शत्रु-सेना पर ही वे अस्त्र पड़ें।

आर्य जगत साप्ताहिक के ग्राहक स्वयं बनें तथा औरों को बनावें

आर्य प्रादेशिक सभा का अधिवेशन

(पृष्ठ २ का शेष)

के श्रद्धाभाव व्यक्त करते हुए बतलाया कि वे भारत से बाहर मारीशस अफ्रीका मे गये हुए हैं। हमारी सभा की परम्परा मे सर्वसम्मति तथा एकत्वभाव आरम्भ से ही रहा है। यहां समाज के प्रसिद्ध महारथी प्रिंसीपल रलाराम जी एम ए. अब होश्यारपुर डी. ए. वी. कालेज से सेवा मुक्त हो चुके हैं। अब वे सभा का प्रधान पद स्वीकार करें। मैं उनका नाम पेश करता हूं तथा अधिकारियों, अन्तरंग सभा तथा सार्वदेशिक सभा के लिए सदस्यों के निर्वाचन का काम भी उन को सौंपा जाये—ऐसा प्रस्ताव करता हूं। सर्वसम्मति से प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० प्रधान निर्वाचित हुए तथा सारे निर्वाचन के अधिकार उनको दिए गए।

तत् पश्चात् प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम० ए० ने सभा के मुक्त होने वाले मन्त्रिमंडल अन्तरंग के सारे सज्जनों के अनथक सेवा करने का विशेष धन्यवाद का प्रस्ताव रखा जो पास हो गया। अन्त मे सभा के नए प्रधान मान्य प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० ने सबका धन्यवाद करते हुए हार्दिक आभार प्रदर्शन किया तथा सारे समाजो के सज्जनों, संस्थाओं के महानुभावों, सभा के स्टाफ से पूर्ण सहयोग की आशा चाही। बाद मे शांतिपाठ से अधिवेशन समाप्त हुआ। जिला समाज की ओर से बड़ा सुन्दर जलपान का प्रबन्ध था। जिला समाज की ओर से सुन्दर प्रबन्ध था।

गलत फ़हमियां न सुनें और न सुनाएं

आर्य समाज का जन्म वेद प्रचार के लिए है

इसने देशभक्ति अपनी जन्मघुट्टि में ली है

सभा के वार्षिक कार्य विवरण का प्राक्कथन

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर के वार्षिक साधारण अधिवेशन में मेंसभा के वार्षिक विस्तृत वेद प्रचार, साहित्य प्रकाशन देशभक्ति में बलिदान, संस्था संचालन, युवक संगठन, सभा की स्थिति आदि के सम्बन्ध में सभा के माननीय प्रधान प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी ने जो प्राक्कथन लिखा तथा अधिवेशन में सुनाया गया—उसके मुख्य २ भाग दिए जा रहे हैं—

मान्यवर बन्धुओ !

परम पिता परमात्मा की असीम कृपा से प्रति वर्ष की भांति आज हम पुनः एकत्र हुए हैं। आज जिस परिस्थिति में हमारा राष्ट्र है, उसने सारे विश्व के शांतिप्रिय व्यक्तियों को एक भयावह स्थिति में डाल दिया है।

आर्यसमाज अपने जन्म से ही राष्ट्रभक्त रहा है। इसके संस्थापक परम पूज्य, महर्षि दयानन्द जी महाराज ने, राष्ट्रहित कार्य करते हुए ही अपने पुनीत प्राण अर्पण किये थे। उस ऋषि द्वारा अपने रक्त से सिंचित आर्य समाज ने देश हित पर सदा ही अपना सर्वस्व न्योछावर किया है। आर्यसमाज के मूर्धन्य तपस्वी नेता महात्मा हंसराज जी, पं० लखपत राय, ला० साईंदास वा शेरे पंजाब लाला लाजपत राय जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज इसी राष्ट्रीय फुलवाड़ी के सुरभित पुष्प थे। आज शत्रु चीन ने उन तपस्वी नेताओं की फलवती इच्छाओं को चुनौती दी है। देश का युवक आज मातृभूमि की रक्षार्थ मचल उठा है। वीरों की भूमि पंजाब आज हुंकार उठी है। आर्य नर-नारी, आर्य समाजें और आर्य संस्थाएं सभी का ध्यान उधर खिच गया है। धन, जन और मन उधर अर्पित कर दिया गया है। इस से आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा को भी आघात पहुंचा है। उसके प्रचार, और धर्म प्रसार के कार्य में बाधा आगई है। आर्य नर-नारी और आर्यसमाजों का ध्यान उधर खिच गया है। ऐसे विकट समय पर पंजाब के आर्य बन्धुओं का एकत्रित होकर इन सभी प्रश्नों पर विचार करना और भी आवश्यक हो गया है। इसी हेतु हम इस वर्ष जालन्धर में विचारार्थ उपस्थित हुए हैं। जालन्धर पंजाब का केन्द्र है। दोनों प्रान्तीय सभाओं के मुख्य कार्यालय भी यहीं हैं। यहीं से हम समस्त प्रान्त के आर्य समाजों से वर्ष भर सम्पर्क स्थापित कर वेद प्रचार का पुनीत कार्य संयोजित करते हैं। वर्तमान समय में ऐसे ही स्थान पर एकत्र होना उचित था।

मैं आर्यसमाज किला जालन्धर के अधिकारियों का आभारी हूं जिन्होंने सभा को अपना अधिवेशन करने का साग्रह निमन्त्रण प्रदान कर यह सुअवसर प्रदान किया है। आर्य समाज के प्रधान ला० चमन लाल जी, डा० हुक्म चन्द्र जी भल्ला, ला० शंकरदास जी जैसे आर्य सज्जन समाज को प्राप्त हैं। स्वर्गीय मास्टर नन्दलाल जी तथा उनके परिवार की सदा इस समाज पर कृपा रही है। ऐसे महानुभावों का मैं किस प्रकार धन्यवाद करूं। उनके सहयोग का ही यह फल है कि यह सभा अपने कार्य को संयोजित कर प्रदेश के कोने २ तक वेद सन्देश पहुंचाती है। मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि इन सभी महानुभावों को अधिक शक्ति सम्पन्न करे जिस से यह देश, जाति व धर्म के पुनीत कार्य को इसी लग्न से करते रहें।

शोक समाचार

वर्ष के मध्य हमारे आर्य परिवार के कुछ आर्य बन्धुओं का असह्य विछोह हो गया ! श्री बख्शी टेकचन्द जी, आर्य समाज की तो विशेष रूप से और समस्त पंजाब की एक दिव्य विभूति थे। दयानन्द कालेज कमेटी और आर्य प्रादेशिक सभा को ऊंचा उठाने में आपका विशेष हाथ रहा है। आपके निधन से सारे देश, प्रान्त और आर्य समाज को बड़ी भारी क्षति पहुंची है। उनका रिक्त स्थान पूरा होना कठिन है।

आर्यसमाज हैदराबाद दक्षिण के मूर्धन्य नेता, श्रीमान पं० विनायकराव जी विद्यालंकार का भी आकस्मिक देहावसान समस्त आर्यजगत के लिए बड़ा धक्का है।

आर्यसमाज की एक और दिव्य विभूति आचार्य नरदेव जी शास्त्री, उपकुलपति, गुरुकुल ज्वालापुर के आंखे बन्द कर लेने का भी अत्यन्त दुःखद समाचार सुनना पड़ा।

श्रीमान् हरदेव सहाय जी के शोक-जनक देहान्त का दुःखजनक समाचार पाकर सारे देशवासियों का हृदय रो उठा।

श्री निरञ्जन देव जी ब्रह्मन भी प्रादेशिक सभा पंजाब के एक स्तम्भ रहे हैं। उनका दुःखद समाचार भी हमें इस वर्ष सुनना पड़ा।

इसी प्रकार आर्यसमाज के पुराने कार्यकर्ता श्री जगतराम जी, पुरोहित आर्यसमाज सीताराम बाजार का देहली में तथा आर्यसमाज के तपस्वी, कर्मकाण्डी वयोवृद्ध विद्वान पं० परशुराम जी का अमृतसर में देहावसान हो गया है। महात्मा वसिष्ठ जी, चौधरी वेदव्रत जी कपूर भी हम से चले गए।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के पुराने कार्यकर्ता श्री महाराज कृष्ण जी ने सभा की आयु प्रयन्त सेवा की है। इस प्रकार के अनुभवी मजे हुए कार्यकर्ता के छिन जाने से सभा को असीम हानि उठानी पड़ी है।

आर्य प्रादेशिक प्र० नि० सभा के हम सभी सभासद इन सभी महानुभावों के निधन पर सम्वेदना प्रकट करते हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि आर्य जगत में उनके अमूल्य रिक्त स्थानों को पूर्ण करने की सामर्थ्य प्रदान करें।

उसी पीढ़ी में मान्य मास्टर नन्दलाल जी भी समाज की ज्योति थे। वह ज्योति भी इन्हीं दिनों बुझ गई। इन वयोवृद्ध, आर्यसमाज के दीवाने, मास्टर जी का दुःखद देहान्त का हृदय विदारक समाचार सुनकर किसे महान शोक न हुआ होगा ?

वेद प्रसार

आर्यसमाज का जन्म ही वेद के प्रचार के लिए है।

आप की प्यारी सभा भी इसी ध्येय माला का एक पुष्प है। इस की भी भरसक यही कोशिश रहती है कि काश्मीर से कन्याकुमारी तक तक तथा बम्बई से ब्रह्मा तक सभी देश वा विदेश के कण-कण में वेद सन्देश गूंज उठे।

(क्रमशः)

भारत के इन विद्रोही शल्यों से सावधान

राष्ट्र रक्षा सम्मेलन में श्री यश जी का भाषण

आर्यसमाज किला जालन्धर के वार्षिक महोत्सव पर हुए राष्ट्ररक्षा सम्मेलन में अपने अध्यक्षीय प्रभावशाली भाषण में विशाल जन-समूह को सम्बोधित करते हुए पंजाब के पूर्व राज्य शिक्षामंत्री श्री यश जी ने कहा-बहुत से लोग समझते हैं कि चीन के साथ लड़ाई टल गई है, लेकिन उन्हें यह विचार मन से निकाल देना चाहिए। लड़ाई टली नहीं है। कम से कम इस खतरे की तलवार निरन्तर रूप से हमारे सिर पर लटक रही है यह लड़ाई तभी टल सकती है जब हमारा देश प्रत्येक दृष्टि से इतना दृढ़ और प्रबल होगा कि भविष्य में किसी देश को भारत की तरफ बुरी दृष्टि से देखने का साहस न हो सके। इसलिए हमें आज अपने कर्त्तव्य का अनुभव करते हुए अपने मे देश के लिए जीने और देश के लिए मरने की भावना पैदा करनी होगी। हमें हर काम करते समय इस बातको सामने रखना होगा कि इस देश का भला है या नहीं। इसके लिए तप, त्याग और तपस्या के जीवन की आवश्यकता है और मेरा विश्वास है कि यह काम सब से ज्यादा अच्छी तरह आर्य समाज ही पूरा कर सकता है क्योंकि वह एक अराजनैतिक संगठन है और उसका अपना कोई राजनैतिक स्वार्थ या हित नहीं है।

चसके विरुद्ध लड़ाई तीन मोर्चों पर लड़ी जा रही है। एक सशस्त्र सैनिकों का है। जहां तक हमारी सेनाओं की वीरता का प्रश्न है उन्होंने नेफा तथा लद्दाख की लड़ाई में राजस्थान के वीरता के प्राचीन इतिहास को जीवित कर दिया है। हम न केवल उनपर गर्व कर सकते हैं। बल्कि उन पर पूर्णतया भरोसा कर सकते हैं। यह ठीक है कि हमे शुरू में कुछ हारे हुई हैं परन्तु कुछ एक हारों का यह मतलब नहीं कि देश युद्ध हार गया है या देश ने पूर्ण पराजय स्वीकार कर ली है। बल्कि इन हारों ने देश की जनता को झंझोड़ दिया है तथा देश की रक्षा के लिए उनके इरादों को और दृढ़ कर दिया है। देश के अन्दर कुछ ऐसे तत्व हैं जो इन हारों को लेकर सेनाओं पर आलोचना करने से भी नहीं हिचकचाते। मैं पूछता हूं कि संसार के इतिहास में आखिर कौन-सा बड़े से बड़ा सेनापति ऐसा हुआ है जिसे पराजय न हुई हो। क्या नैपोलियन बोनापार्ट को पराजय नहीं हुई थी, फील्ड मार्शल मिंटगुमरी को जनरल रोमेल हिटलर और माओ-त्से तुंग को पराजय का मुंह नहीं देखना पड़ा था? युद्ध में छोटी-मोटी हारें हुआ ही करती हैं। परन्तु केवल नेफा की हारों को लेकर सेनाओं पर आलोचना करना निश्चय ही देशद्रोह के समान है। सेनाएं नेफा में लड़ी थीं क्या वही सेनाएं लद्दाख व चुशूल में नहीं लड़ी थीं? परन्तु क्या वहां चीनी-सेनाएं कई गुणा अधिक होने पर भी एक इंच आगे बढ़ सकीं? हमारे वीर जवानों ने उन्हें नाकों चने चबवा दिए। इस लिए मैं यह फिर कहता हूं कि जहां तक हमारी सेनाओं का सम्बन्ध है हम अपने सैनिकों तथा सेनापतियों पर पूरा भरोसा कर सकते हैं। नेफा में हमारी सेनाओं को हार हुई तो पंचमागी कम्युनिस्टों के कारण, जिन्होंने न केवल हमलावर का स्वागत किया बल्कि उन्हें ऐसे-ऐसे मार्ग बताकर एक दम हमारी सेनाओं को पीछे ले गए जिनका हमें भी ज्ञान नहीं था और ये पंचमांगी चीन के विरुद्ध लड़ाई में हमारा दूसरा मोर्चा है जिसे मैं भीतरी मोर्चा का नाम देता हूं। परन्तु ये पंचमांगी केवल चीन के एजेंट कम्युनिस्ट ही नहीं, उनके अतिरिक्त वहां रूस, अमरीका, ब्रिटेन, पाकिस्तान और न जाने किस-किस देश के एजेंट छिपे हुए हैं।

उनके अतिरिक्त गलत अफवाहें फैलाने वाले एक नए प्रकार के—हर समय निराशा की बातें करने वाले निराशावाद के एजेंट भी हैं। हमें इन सब एजेंटों से होशियार रहने की जरूरत है।

हमारे शास्त्रों ने नौ रस बताए हैं परन्तु अब देश में दसवां रस भी पैदा हो गया है और वह है निंदा रस। बहुत से लोगों में हर समय केवल आलोचना करने की प्रवृत्ति ही पाई जाती है। इससे होशियार रहने की अपील करते हुए महाभारत के एक प्रसंग का उल्लेख किया और कहा कि जब भगवान् कृष्ण ने अर्जुन का सारथी बनना स्वीकार कर लिया तो कर्ण ने भी धनके बराबर का सारथी बनाना चाहा। उसकी दृष्टि राजा शल्य पर पड़ी। वह बहुत कुशल सारथी था परन्तु उसने एक शर्त पर कर्ण का सारथी बनना स्वीकार कर लिया कि उसके दिल में जो भी बात आएगी, वह जिस समय चाहेगा कह सकेगा कर्ण ने यह शर्त स्वीकार कर ली। परन्तु जब कर्ण की अर्जुन के साथ लड़ाई शुरू हुई तो शल्य ने पग-पग पर कर्ण को हतोत्साहित करने तथा दिल तोड़ने वाली बातें कहनी शुरू कर दीं। जिस से कर्ण का ध्यान लड़ाई से हट कर उसकी बातों में उलझा रहा और आखिर वह हार गया। आज भी देश में ऐसे बहुत 'शल्य' पैदा हो गए हैं जिनका धंधा ही आलोचना बना हुआ है। जनता को विदेशी एजेंटों, पंचमांगियों के अतिरिक्त इन 'शल्यों'से भी खबरदार रहने की जरूरत है। हो सकता है कि जनरल करिअप्पा अच्छे जनरल हों और मैं उनके कई गुणों की कद्र भी करता हूं परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि उन की प्रत्येक बात मान ली जाए। यदि ऐसा हो तो वह हमें हर मूल्य पर पाकिस्तान के साथ समझौता करने को कहते हैं और पाकिस्तान समझौता करने के लिए कश्मीर मांगता है। तब क्या हम काश्मीर पाकिस्तान को दे दें? यदि हमने पाकिस्तान को काश्मीर ही देना है तो फिर चीन से हम किस चीजके लिए लड़रहेहैं। का कोई बड़ेसे बड़ा नेताभी काश्मीर देना चाहेगा तो देश उसे भी ऐसा नहीं करने देगा। इस लड़ाई में अंतिम विजय प्राप्त करने के लिए तीसरामोर्चा है देशके संकल्पको दृढ़ करना। और मेरा विश्वास है कि उन दोनों मोर्चों पर देश को मजबूत बनाने में आर्य समाज ही मुख्य रोल अदा कर सकता है।

आर्य समाज ने देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति और देश के निर्माण के लिए बहुत कुछ किया है। अब इसको रक्षा के लिए भी आर्य समाज को मैदान में आना चाहिए।

भारतपर आक्रमण करने वालों की कब्र यहीं बनी

आज राष्ट्ररक्षा के लिए तन मन धन अर्पण करना होगा

पंडित प्रकाशवीर शास्त्री M. P. का ओजस्वी भाषण

श्री पण्डित प्रकाशवीर शास्त्री संसत्सदस्य आर्यसमाज के एक ओजस्वी वक्ता, प्रसिद्ध नेता तथा मिलनसार हैं। आर्यसमाज किला जालन्धर शहर में महोत्सव पर रविवार रात्री को आपके अन्तिम भाषण के साथ पूर्णाहुति हुई। अपने प्रभावशाली भाषण में आप ने जनता को कहा—

कुछ लोग संकट के समय कहते हैं कि चीन ही अकेला भारत पर किये गये हमले में उत्तरदायी है। उसका और कोई भी साथी नहीं है। दूसरे कहते हैं कि विस्तारवादी चीन ने अपने देश की बढ़ती हुई जनता के कारण आक्रमण किया है। पर ऐसा नहीं। आबादी की समस्या यहां पर भी है। रोटी रोजी के बारे में भी यही समस्याएं हैं। पानी की नहरें तो अब बन रही हैं। चीन द्वारा आक्रमण में केवल यही बातें नहीं और भी हैं। वास्तव में इस प्रकार के निन्दनीय हमले मे चीन के साथ २ कम्युनिज्म सारा दोषी है। लाल झण्डा को लहराते हुए आरम्भ से ही ऐसा प्रयास किया गया। लेनिन ने एक सूत्र दिया था कि यदि योरूप में जाना है तो Road to paris through Shanghai aud calcutta है। अर्थात कम्युनिज्म की पेरिस को जाने की सड़क शंघाई तथा कलकत्ता से होकर गुजरती है। चीन ने इसी मनोवृत्ति के आधार पर हमला किया है। साम्यवाद इसके मूल मे बैठा है। पर चीनी या कम्युनिज्म को फैलाने की इस प्रवृत्ति वाले लोग या देश इस बात को भूल गये हैं कि विश्व विजयी बनने का स्वप्न लेने वाले हमलावरों की कब्र भारत में ही बनी है। सिकन्दर का सेनापति तो अपनी लड़की चन्द्रगुप्त को देकर ही वापस जा सका था। कवि-उर्दू शायर हाली ने इसी तथ्य को लेकर लिखा था—वह दीने हजाजी का बेबाक बड़ा—निशां जिसका अकसाये आलम में पहुंचा। किए पार जिस ने थे सातों समुन्दर—वह डूबा दिहाने में गंगा के आकर। शकों, हूणों का पुराना इतिहास इस बात का साक्षी है। भारत पर जिस २ ने भी आक्रमण किया उन सब की समाधियां भारत-भूमि में ही बनी हैं चीनी शायद समझते थे कि भारत के लोग प्रांतों, भाषाओं तथा अन्य झगड़ों में आपस में बटे हुए हैं। आक्रमण के समय ये क्या कर सकते हैं। पर वे भूल गए कि ऐसे झगड़े तो हमारे लिए शुगल के समान हैं। शान्तिकाल में हम ऐसे २ शुगल के कामों में लग जाते हैं किन्तु जब समय आता है तो महाभारत में बताए गये युधिष्ठिर के वचन के समान हम भी वय पञ्च वय पञ्च वयं पंच शतं च ते। अन्यैः सह विवादे तु वयं पंचोत्तरं शतम्। जब दूसरों से मुकाबिला हो तो सारा भारत एकता के सूत्र में पिरोया जा कर शत्रु को खदेड़ने में लग जाता है। भारतवासियों की यही अवस्था है।

जर्मनी ने जब इंगलैंड पर हमला किया। चर्चिल इंगलैंड का उस समय प्रधानमन्त्री था। वह जहां भी जाता था। अंगुलियों को अंगरेजी अक्षर **V** के समान बना कर **Victory** विजय पाने का सन्देश देता था। आज चीन ने अपना निशान खुली पांच अंगुलियों का पंजा बनाया है। वे कहते हैं कि हमारे हाथ में बर्मा, मलाया, लंका, इण्डोनेशिया तथा स्याम देश हैं। किंतु भारत ने अंगुलियों को मिला कर अपनी मुट्ठी दिखा कर उसे बता दिया है कि सारा देश चीन के मुकाबिले मे एकता की मुट्ठी बना कर सामने डट गया है। हमारी यह एकता कमाल की है। जो लोग यह कहते हैं कि चुप रहो, ऐसा न कहो। क्योंकि उन देश के विमान हमारे पास आ रहे हैं। रूस ने कहा था कि हिमालय पर खड़े होकर संकट के समय मुझे आवाज लगा देना, बस मैं आपकी सहायता के लिए आया सो आया। पर सब ने देख लिया कि वह कैसा आया? उसने कहा था कि चीन मेरा भाई है और भारत दोस्त है। भाई के साथ तो खून का रिश्ता है। चीन व रूस में यदि कुछ मनमुटाव भी है तो वह केवल लीडरशिप के लिए हो रहा है, विचारों की कोई लड़ाई नहीं। यहां पर भी कम्युनिस्ट लोग हैं। यदि भारत का कम्युनिस्ट हमारे साथ चल न पाया तो इस में उसी का दोष है। जिन लोगों का भूतकाल ऐसा था उनका वर्तमान काल भी हमारे सामने है। चोर चोरी से जाये तो जाये पर हेराफेरी से थोड़ा जाता है। अब चीन का क्या विश्वास होगा। जो कल पंचशील पर हस्ताक्षर करने पर भी मुकर सकता तथा इतना बड़ा विश्वासघात करके हमला कर सकता है वह कल कोलम्बो के प्रधान मन्त्री की बातों से भी मुकर सकता है। दुनिया का दबाव उस जातिया देश पर होता है जिस के नाक होती है को भगवान ने नाक ही नहीं दे रखी वह किस के कहने पर रुकेगा? परन्तु हमें चाहिए कि हम अपने प्रयत्न ढीले न होने दें। चीनी सेना के नीफा के कुछ स्थानों से तो पीछे चले जाने के कभी २ समाचार मिलते हैं पर लद्दाख के नहीं। बात यह है कि एक गांव में एक बड़ी बूढ़ी मर गई। सारे लोग बड़े रोये। किसी ने पूछा कि इतनी बूढ़ी पर इतना रोना क्यों? गांव के लोग बोले! बूढ़ी पर तो नहीं रोते पर यमराज ने हमारे गांव का तो रास्ता देख लिया इस का रोना है। यदि आज लड़ाई बन्द है तो क्या हुआ किन्तु चीन ने भारत आक्रमण का मार्ग तो देख लिया—यह दुःख है। आज की लड़ाई केवल धरती की की नहीं अपितु आकाश की भी है। चीन ने अपने ही देश में ८७ लाख लोगों को गोलियां मार कर तथा ढाई करोड़ को बैलों से जोड़कर हल चलवा कर मार दिया। लद्दाख में हमारे सिपाहियों को जब घाव लगते थे, उनको हस्पतालों में पहुंचा कर भारतीय डाक्टर खून देते, मरहम पट्टी करते तथा हर प्रकार का ध्यान करते हैं। पर चीनी लोग अपने चीनी घायलों की मरहमपट्टी करने के स्थान गोली मार कर मार देते हैं। यह उनका अपने फौजियों से व्यवहार है।

हरेक का कर्तव्य है कि अपने देश की रक्षा के लिए सारा जोर लगाये। चीनी आक्रमण के समय भारत में जो एकता आई इसे देख प्रसन्नता होती है। इस का सारा श्रेय अपने भारत के प्राचीन ऋषियों को है। अर्जुन को जैसे चिड़िया की आंख ही दिखाई देती थी।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

राष्ट्र-रक्षा के कुछ उपाय

(श्री सुरेशचन्द्र जी वेदालंकार गोरखपुर)

(गतांग से आगे)

इसके लिए हम क्या करना चाहिए? हमारे विचार में निम्नलिखित कार्य और सरकारी संस्था के रूप में सरकारी अधिकारियों का सहयोग प्राप्त करके हम कर सकते हैं।

(१) प्रत्येक मुहल्ले में सुरक्षा समितियां स्थापित करना तथा उन को केवल समिति तक न रख कर क्रियाशील बनाए रखना। इन समितियों के द्वारा मुहल्ले के व्यापारियों को मुनाफाखोरी, चोरबाजारी एवं अधिक संचय से बचाना। ऐसा करने वालों की सरकारी अधिकारियों को सूचना देना। जनता में भी राष्ट्ररक्षा के लिए अनावश्यक खर्चों को कम करने की भावना जागृत करना।

(३) आज कल का युद्ध Total war होता है। सैनिक मोर्चों पर लड़ते हैं। साधारण नागरिक सैनिकों के भोजन, वस्त्र, शस्त्र तथा उनके परिवारों की रक्षा का भार वहन करते हैं। नगर में फैलने वाली अफवाहों को दूर करते हैं। अन्न की उत्पत्ति, कारखानों, रेलों, पुलों आदि की रक्षा का भार अपने ऊपर लेते हैं। शहर में शांति व्यवस्था रखने का पूरा प्रयत्न करते हैं।

(४) होमगार्ड्स, फर्स्ट एड, नर्सिंग, स्वयंसेवक एवं स्वयंसेविका दल आदि की स्थापना।

(५) बम गिरने के समय आग बुझाने के उपाय सीखने की व्यवस्था करना आदि। स्त्रियां तथा बच्चों का सुरक्षित स्थानों पर पहुंचाने की व्यवस्था करना आदि का प्रबन्ध आर्यसमाजों को अपने हाथ में लेना चाहिए।

(६) रक्तदान और स्वर्णदान के इच्छुकों के लिए सुविधाएं प्रदान कराना।

(७) चन्दे देने वालों को रसीद दिलाना और उनके धन को समुचित स्थान पर पहुंचवाने की व्यवस्था करना।

(८) जनता के मनोबल को न मिटने देने के लिए प्रयत्न करना। क्योंकि जानबूझ कर या अनजाने में अनेक अफवाहों द्वारा जनता का मनोबल मिट जाता है। उदाहरण के लिए फ्रांस के पतन के समय जर्मन जासूस फ्रांसीसी बन कर होटलों और दूसरे सार्वजनिक स्थानों पर रोने लगते थे। परिणाम यह होता था कि जब जनता उन से उसका कारण पूछती तो वे जर्मनों की तैयारी और अपनी कमजोरी का वर्णन करते थे आर्यसमाजियों को इन से जनता को बचाना और उनके मनोबल को कायम रखना यह भी आर्यसमाज उचित रूप में कर सकता है।

(९) अधिक अन्न, वस्त्र उत्पन्न करने के लिए चर्खे और खेती को प्रोत्साहन देना भी आर्यसमाज के प्रचार का एक अंग होना चाहिए।

इस दिशा में बढ़ कर ही राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं रक्षामंत्री तथा अपने सैनिकों को हम सहायता पहुंचा सकते हैं और शत्रुओं से कह सकेंगे कि—

'भ्रम न किसी को हो कि
अरक्षित भारत की सीमायें।'

आर्यसमाजों से सभा वेद प्रचार में भेंट

आर्य प्रादेशिक सभा के वार्षिक अधिवेशन में सभा के वेद प्रचार को सुदृढ़ करने पर बड़ा गम्भीर विचार हुआ। इस के लिए माननीय प्रिंसिपल सूर्यभानु जी प्रधान, महामन्त्री ला० सन्तोषराज जी तथा सारे सज्जनों ने कहा कि इस के लिए समाजें तथा सज्जन धन द्वारा सभा को अधिक सहयोग देकर समुन्नत करें। इस पर जिन समाजों तथा सज्जनों ने अपने २ उत्सवों पर सभा को दिये जाने वाले वेद प्रचार धन के अतिरिक्त जो धन देने का संकल्प किया उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है—

किला आर्यसमाज जालन्धर	५००) रुपये
ला० परमेश्वरीदास जी वहल शामचुरासी (चंडीगढ़)	५००) ,,
आर्यसमाज अनारकली रीडिंग रोड नई देहली	५००) ,,
आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर	५००) ,,
आर्यसमाज लक्कड़ बाजार शिमला	२५०) ,,
आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर	१००) ,,
आर्यसमाज गुरदासपुर	१००) ,,
आर्यसमाज माडल टाऊन जालंधर	१००) ,,
आर्यसमाज मोक्स रोहतक	१००) ,,
श्री ला० भगवान् दास जी पुरी देहली निजीरूप से	५०) ,,

भारत पर आक्रमण करने वालों की कब्र यहीं बनेगी

पण्डित प्रकाशवीर शास्त्री (M.P.) का ओजस्वी भाषण

(पृष्ठ ६ का शेष)

उसी प्रकार सब के सामने एक ही राष्ट्ररक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। हमारे देश मे अठारह राजनीतिक दल हैं। सब ने अपने मतभेद भुलाकर रख दिये। अब तो एक ही पार्टी है भारत। दूसरी पार्टी है चीन जिस से मुकाबिला करना है इस देश की परम्परा में देश प्रेम तथा एकता अर्बों वर्ष पूर्व थी, और बाद मे भी रहेगी। इस समय मल्लाह को बदलने की बात कहना ठीक नहीं। अपितु उनके हाथ मजबूत करें हां सरकारों को भी राष्ट्रिय सरकारों के रूप में मिलकर कार्य करना है। यदि अब भी पार्टी का विचार रहा तो हित न होगा। सारे निर्णय राष्ट्र की दृष्टि मे किये जाये। इस संकट में तो मजदूर ने भी राष्ट्ररक्षा में बलिदान दिया है। अजमेर में एक राजपूत ने राष्ट्ररक्षा में धनराशि का ड्राफ्ट तथा अपना लड़का मेरे हाथ में देकर भारत के प्रधानमन्त्री को भेंट करने को दिया। लड़का चाहे एक इंच ऊंचाई में कम है पर लद्दाख मार्च पर तो २ इंच ऊंचा होकर वीरता दिखायेगा। म्युनिसिपलबोर्ड के मेहतरों ने मिले हुए अपने नए स्वेटर तक देकर कहा कि हम पुराने में शरीर ढांप लेंगे ये नये सैनिकों तक पहुंचा दो। यदि सोना रुपया लग कर देश बचता है तो सस्ता है। एक बात कहनी है कि राष्ट्ररक्षा में आप जो रुपया पैसा भेजते हैं वह सीधा ही प्रधानमन्त्री के पास भेजो। आज कुछ २ समझौता की चर्चा है। जनता एक आशा लेकर बैठी है कि समझौता में किसी प्रकार की कमजोरी न आने पाए। भारत वीरभूमि है। वीरता की परम्परा कायम रहे। एक सज्जन के तीन भाई फौज में थे। तीनों युद्ध में काम आए। वह अपने भतीजे को ले कर भरती कराने गया वह बोला मैं चाहता हूं कि मेरे परिवार की यह बेल टूटने न पाए। कितनी वीरता, निष्ठा देशप्रेम भावना है। इसका उदाहरण क्या कहीं मिलेगा? आज भारतमाता के मस्तक के मान का प्रश्न है। सर्वस्व भेंट करके भी माताके मस्तक का सम्मान रखना होगा। आप के प्रेम का हार्दिक धन्यवाद करता हूं। आर्यसमाज तो देशभक्ति का दूसरा नाम है। आर्यो! अपनी देशभक्ति की जीवनघुट्टी मे ली परम्परा के अनुसार सारे देश मे वेद के मातृभूमि मुक्त के सन्देश का प्रचार कर दीजिए।

आर्य संस्थायें

सभी आर्य संस्थाएं काफी समय से राष्ट्ररक्षा सहायता कर रही हैं। और उसकी सूचना समय २ पर आर्य जगत में प्रकाशित होती रही हैं। अब भी सभी संस्थाओं से निवेदन राष्ट्ररक्षा कोश की सहायता का पूरा २ विवरण सूची के प्रकाशनार्थ भेजते रहें ताकि उसका रिकार्ड रखा जा सके।

—संतोष राज महामन्त्री सभा

आर्य जगत के पाठकों से—आर्य जगत का यह ऋषिबोध अंक १०, १७ और २४ फरवरी के ६-७-८ का सम्मिलित अंक होगा। उसके बाद ३ मार्च का अंक प्रकाशित होगा, पाठक नोट करलें।

—व्यवस्थापक

महात्मा कर्मचन्द दिवस—लेखराम नगर कादियां में डी० ए० वी० स्कूल के संस्थापक स्वर्गीय महात्मा कर्मचन्द का स्मृति दिवस धूमधाम से मनाया गया। उनके सुपुत्र श्री जगदीश मित्र जी ने प्रतिवर्ष की परम्परानुसार अपने परिवार में यजुर्वेद यज्ञ कराया। २३ जनवरी को पूर्णाहुति पर नगर के सारे गणमान्य हिन्दु सिख मुस्लिम सज्जन पधारे। बड़ा समारोह था। दोपहर को स्कूल में तथा रात को समाज में कार्यक्रम हुआ। जिसमें श्री देसराज जी प्रधान, प्रिं० प्रताप सिंह जी डी० ए० वी० स्कूल, श्री सुभाष जी, श्री करनैल सिंह जी, श्री रोशन लाल जी, प० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, श्री दयानन्द ने महात्मा जी के जीवन पर प्रकाश डाला। दस रुपये श्री जगदीशचन्द जी ने सभा वेदप्रचार में दान दिये।

टोहाना में आदर्श विवाह—टोहाना नगर में २२ जनवरी को श्रीमान् ला: गौरीशंकर गुप्त जी की सुपुत्री शोभा रानी का शुभ विवाह ... निवासी ला. हंस राज जैन जी सुपुत्र चिरंजीवी मुनी लाल जैन जी से पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। कोई बाजा इत्यादि न था। वर पक्ष की ओर से केवल सात आदमी बरात में आए। कच्चा सात्विक भोजन लिया तथा किसी प्रकार की देहज आदि की मांग नहीं की। इस प्रकार मंगनी पर भी एक रु. स्वीकार किया था। इस विवाह की प्रशंसा समस्त जिला में की जा रही है तथा नगर की जनता पर अत्यन्त प्रभाव पड़ा।

अनन्य आर्य प्रभाकर टोहाना

दयानन्द कालेज सोलापुर विजयी—इस वर्ष दयानन्द कालेज सोलापुर ने निरन्तर तीन वर्ष से पूनः स्पोर्टस चपियनशिप जीत लीं। इस वर्ष दूसरी रहने वाली टीम को ५७ अंको से हराया गया जो बहुत महत्व पूर्ण विजय है। जो प्रथम ट्राफियां जीति गई उनका नाम इस प्रकारसे है।

१. कुस्ती, २. क्रिकेट, ३. खो खो (विद्यार्थियों का) ४ खो खो (विद्यार्थिनी) ५. विद्यार्थियों का वैयक्तिक नैपुण्य, ६. लेडीज वैयक्तिक नैपुण्य, ७. जेंटस जनरल चंपियनशिप, ८. लेडीज जनरल चंपियनशिप ९. जेंटस रिले रेस, १०. लेडीज रिले रेस।

आवश्यकता—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में सितम्बर १९६३ शास्त्री (प्रथम खण्ड) की श्रेणी चलाई जाएगी। इस के लिए एक योग्य अनुभवी शास्त्री की आवश्यकता है। जो महानुभाव प्राध्यापक-पद के इच्छुक हों वे अपने प्रार्थना-पत्र आचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के नाम भेजदें। वेतन का निर्णय बाद में होगा।

निवेदक—रामविचार M. A. उपाचार्य

आर्यसमाज पुलबंगश देहली—पं० गणेशदत्त जी बड़ी लग्न से समाज सेवा कर रहे हैं! प्रातः—सत्संग। सायं—आर्यकुमारों को वेद उपदेश। रात्रि—सत्यार्थ प्रकाश की कथा करते हैं।

आर्ययुवक परिषद की अतरंग सभा ने पंडित जी को सर्वसम्मति से सीनियर उपप्रधान नियत कर दिया है। —सुदेश कुमार मन्त्री समाज

यज्ञ पद्धति-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रकाशित यज्ञ पद्धति के सम्बन्ध में जिस आर्य भाई को कोई शंका हो अथवा इस में कोई सुधार वांछनीय हो तो वे अपनी शंका तथा सुधार-विषयक सुझाव सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय (महर्षिदयानन्द रामलीला मैदान नई दिल्ली १) में स्पष्ट और सुवाच्य शब्दों में लिख कर भेज देवें जिस से धर्म्मार्थ सभा उन सब पर एक साथ विचार कर के निर्णय कर सकें। आखिलानन्द सरस्वती मंत्री

डी ए. वी. हाई स्कूल कमाहो देवी-२६-१-६३ को गणतन्त्र दिवस समारोह बड़ी धूम धाम से मनाया गया। शान्ति स्वरूप जी प्रधान ब्लाक समिति (हाजिपुर) ने ध्वजारोहण किया, छात्रों ने मार्च पास किया।

श्री राम प्रकाश श्री सेठी मुख्याध्यापक स्कूल ने पांच हजार लोगों को देश रक्षा हित शपथ दिलाई। बच्चों ने मनोरंजक कार्यक्रम पेश किया। जिस की लोगों ने सराहना की ब्लाक समिति (हाजिपुर) की ओर से पारितोषक वितरण हुए। स्कूल की ओर से बच्चों तथा लोगों में मिठाई बांटी गई। हैड मास्टर डी. ए. वी. हाई स्कूल

आर्य समाज सैक्टर ८ चंडीगढ़ की शोक प्रस्ताव—दिनांक २०-१-६३ को आर्य समाज सैक्टर ८ चंडीगढ़ के साप्ताहिक सत्संग में प्रिंसिपल भगवान दास जी की माता के निधन पर शोक प्रस्ताव पास किया गया। परिवार से सहानुभूति प्रगट की गई और परमात्मा से स्वर्गीय माता जी की आत्मा के लिये शान्ति की प्रार्थना की गई आर्य स्त्री समाज के सत्संग में भी २७-१-६३ को शोक प्रस्ताव किया गया।

आर्य युवक समाज लेखराम नगर का शोक-प्रस्ताव—आर्य युवक समाज का यह साधारण-अधिवेशन आर्य समाज के दिवाने श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' के पूज्य पिता जी के देहावसान पर हार्दिक शोक प्रकट करता है। वे आर्य समाज के बहु मूल्य रत्न थे आर्य समाज को आप के परिवार ने सदा ही बहुत सुयोग दिया है। आर्य समाज उसे भुला नहीं सकता।

भगवान से प्रार्थना है कि वह उस स्वर्गीय आत्मा को सान्त्वना प्रदान करे तथा उनके परिवार तथा सहयोगियों को इस असह्य वियोग के सहन करने की शक्ति प्रदान करें। करनैलसिंह 'विद्यार्थी' विवाचस्पति

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

सम्पादकीय

व्रती की सत्यनिष्ठा

साधारण शिवरात्री विश्व का कल्याण करती हो अथवा न यह बात तो दूसरे जानें । किन्तु टंकारा के मन्दिर में बैठे हुए बालक मूलशंकर के समय में जो शिवरात्री आई उस ने केवल भारत का ही नहीं अपितु सारे संसार का कल्याण मंगल कर दिया—इस में कोई भी सन्देह नहीं है। मूल शंकर ने शंकर का मूल पा कर सच मुच मानव जीवन के विचारों का स्तर बहुत ऊंचा कर दिया। इस लिए अब जब भी शिवरात्री आती है तब हम इसे केवल शिवरात्री न कह कर टंकारा के मूलशंकर की शिवरात्री के नाम से पुकारा करते हैं। इस ने पहले मूलशंकर का कल्याण किया और उस देव ने सारे समाज का मंगल कर दिया । मूलशंकर की आज की यह शिवरात अनुपम, मंगल मयी तथा जीवन देने वाली है। इस शिव की रात्री पर समाज को गुरु गर्व है।

मूलशंकर व्रती बना। एक व्रत रखा । संकल्प किया, अपने जीवन के सामने एक निष्ठा धारण की यह व्रती के व्रत में सत्य की निष्ठा थी । सत्य की खोज करना मूलशंकर का लक्ष्य था । जीवन का सत्य, धर्म का सत्य, पूजा का सत्य, संस्कृति का सत्य अनादि परमसत्ता का महान सत्य, मतमतान्तरों के चमकीले पर्दों में छिपा हुआ वस्तुतत्व का सत्य उस की निष्ठा का विषय था । खोजने वाले ने सचमुच ही सत्य, परमतत्व रूपी सत्य को पा लिया। आत्मतत्व, परमतत्ववेद तत्व का भण्डार उन को मिल गया। इस के लिए माता पिता के प्यार, वैभव भण्डार, प्रकृति का शृंगार तथा अपने जीवन की सारी एषणाओं के संसार का भी परित्याग कर दिया। वही मूलशंकर बाद में शुद्ध चैतन्य बना, फिर दयानन्द बन गया। आज संसार में महर्षि दयानन्द सरस्वती के रूप में पूजित हैं। सत्य निष्ठ ही शिवरात्री का सब से बड़ा जीवन सन्देश है। सत्य को ब्रह्म भी कहा है । सत्य प्रेम का दूसरा नाम ब्रह्मभक्ति है। ऋषि दयानन्द ने आज के दिन ब्रह्मवाद की दीक्षा ली थी । ब्रह्मदर्शन की साधना के दुर्गमपथ के साधक बने थे।

आज वही शिवरात्री फिर आई है । वर्तमान युग में कितनी अशान्ति गड़बड़, वैमनस्य, मनोमालिन्य भीति आशंका तथा परस्पर अविश्वास है। जीवन की आधारशिला सत्य निष्ठा के रूप में बुरी तरह हिल गई है। प्रत्येक क्षेत्र में असत्य का बोल बाला हो रहा है चारों ओर असत्य का खेल जारी है। असत्य सत्य की वेशभूषा धारण किये अपना उत्पात मचाने में लगा है । सर्वत्र अशान्ति का साम्राज्य है। सारा धरणिमंडल नरक धाम बनता जा रहा है। इसे बदलने के लिए आज सच्चे निष्ठावान हो कर सत्य का व्रत लेवें, सत्यसंकल्प धारण करें। उस महान व्रती की सत्यनिष्ठा से जीवन, समाज, राष्ट्र तथा आज के स्वार्थमय विश्व को यही संदेश देवें। इस महान पर्व का सब के लिए यही अमर सन्देश है—

त्रिलोक चन्द्र

ऋषि बोध उत्सव मनाने वालो !

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी का

दिव्य संदेश

आर्य समाज को पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के दीप्त जीवन, उदात्तविचार, वेद एवं प्रभुभक्ति, धर्मनिष्ठा, समाज सेवा, तप त्याग आदि गुणों पर मान है। सारे भारत के कोने कोने में भक्ति का अमृतपान कराने के लिए दिन रात परिभ्रमण करते रहते हैं। गत दिनों से भारत से बाहर मारीशस, नैरोबी अफ्रीका में भक्ति सुधा पिलाने के लिए गये हुए हैं। महात्मा जी का सन्देश तो सदा ही नया मीठा प्रसाद ही होता है—

ऋषि बोध उत्सव मनाने वालो ! आज विचार करो कि क्या कोई ऐसी भी शिवरात्री आयगी जब हम भी अपनी जीवन आहुति इस पवित्र यज्ञ में दे सकेंगे। आर्य समाज में एक बार फिर आत्म-समर्पण और आत्मबलिदान की प्रबल लहर चलानी होगी। तब जा कर ऋषि दयानन्द का मिशन पूरा होगा। दुःख सागर में डूबते संसार को किनारे पर लगाया जा सकेगा। तभी आने वाली सन्तति कहेगी—नमस्कार है उन नर नारियों को जो तप, त्याग और प्रभु-भक्ति की भट्टी में अपना जीवन डालते हैं तथा वेद ज्ञान के प्रसार के लिए अपना जीवन बलिदान करते हैं।

जो लोग यह विश्वास रखते हैं कि ऋषि दयानन्द का बतलाया मार्ग ही दुःखी संसार को सुखी कर देगा। वे अपने जीवन बलिदान करें। यदि इस प्रकार का आत्म त्याग करने वाले महानु-भाव निकलें तो एक बार दुनिया आर्य समाज की आवाज़ को सुनने लगेगी। जो इतनी बड़ी छलांग नहीं लगा सकते वे अपने जीवन का कोई भाग ही प्रदान करें। जो यह भी नहीं कर सकते वे अपनी कमाई का दसवां, बीसवां या शतांश आर्य समाज के अर्पण करने की प्रतिज्ञा करें। ऋषि दयानन्द का अटल विश्वास था कि तप, त्याग, प्रभु भक्ति और वेद ज्ञान ही से भ्रम जाल में फंसी हुई तथा केवल माया के पीछे दौड़ती हुई दुनिया का कल्याण हो सकता है। इसी लिए ऋषि दयानन्द ने शिवरात्री के दिन ही से त्याग और तप का जीवन बिताना आरम्भ किया। आत्मदर्शन तथा प्रभुदर्शन पाये। वेद ज्ञान का प्रसार करते हुए अपने जीवन की आहुति दी।

आर्य समाज, जिस की स्थापना इसी उद्देश्य के लिए की गई थी, इसी मार्ग पर चल कर सारे संसार का उपकार कर सकता है। सुनो ! सुनो ! इस मार्ग, इस संस्कृति के सिवाय और कोई संस्कृति विश्व को सुखी नहीं कर सकती।

शिवरात्री का पवित्र उत्सव मनाते हुए मैं एक बार फिर यही शब्द दुहराता हूं कि ऋषि दयानन्द का अटल विश्वास था कि तप, त्याग, प्रभु भक्ति और वेद ज्ञान से ही भ्रम जाल में फंसी हुई और केवल माया के पीछे दौड़ती हुई दुनिया का कल्याण हो सकता है।

संसार तेरे आगे सिर झुका देगा

(श्री प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम. ए. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी)

संसार एक युग से सच्चे शिव को भूल चुका था। पूजा के कोरे नियम ही थे, उन पर भली प्रकार कोई चल नहीं पाता था। उपवास रखना होता था, चोरी से खाने में किसी को संकोच न था। सभी एक अज्ञान तथा आडम्बर के ढांचे पर चुपचाप इस रीति को निभाते जा रहे थे। किन्तु अचानक एक युवक में, जिसने अभी यौवन में पैर रखा ही था, एक उत्कण्ठा जागी। शिवरात्री का व्रत क्या होता है? युवक ने माता से प्रश्न किया। माँ ने अपने ज्ञान तथा विश्वास के आधार पर पुत्र को समझाया—पुत्र! इस व्रत में सारा दिन भूखा और प्यासा रहना होता है। रात्रि शिव पूजन में जागते ही जागते बितानी होती है। तब उस सच्चे भक्त को शिवदर्शन होते हैं। उस का मनुष्य जन्म ही सफल हो जाता है। वह मुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करता है साथ ही यह भी समझाया कि यह कठोर व्रत तुम से पूरा न हो सकेगा, अतः अभी तुम इसे न रखो।

बालक की उत्कण्ठा भड़क चुकी थी। वह इस व्रत का रहस्य जानने का निश्चय कर चुका था। उस ने बड़ी श्रद्धा से व्रत रखा, भूखा रहा। रात्रि के समय बड़ी श्रद्धा से पूजन में बैठा। निद्रा को तो उसने पास भी फटकने न दिया। वह तो प्यारे प्रभु के दर्शनों की प्रतीक्षा कर रहा था। मन्दिर में बैठे सभी सो गये, पुजारी भी और पूजक भी। अकेला मूलशंकर स्थिर ध्यान से उस शिवमूर्ति पर एकटक ध्यान लगाये सचेत बैठा था, चूहे उछल कूद करने लगे। पूजा की सामग्री का मन-माना भोग लगाने लगे। शिवमूर्ति पहले की तरह शान्त थी। युवक को सन्देह हुआ और उसके विश्वास को धक्का लगा। क्या यही वह शिव है जो संसार भर की रक्षा, पालना करता है? यह तो अपनी भी रक्षा नहीं कर पाता। किन्तु उसे झाड़ वा डपट के सिवा कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिला।

अब युवक के हृदय में क्रान्ति की ज्वाला भड़क उठी। वह ज्वाला रीतियों, रूढ़ियों के बन्धनों को तोड़ती फोड़ती उन्हें अपने बहाव में बहा ले गई। उसने सीधे घर जाकर व्रत तोड़ दिया। भरपेट खाया और सुख से सो गया। किन्तु अब उसके दिल में सच्चे शिव की खोज की चाह उमड़ उठी। वह युवक अब आंख खोल संसार में चलने लगा। जग के सभी परिवर्तनों, अनोखी बातों पर उसका ध्यान जाता। वह मन ही मन में उनके कारणों पर विचार करता। उन का भेद भी जानने का यत्न करता। किन्तु जितना ही वह उस रहस्य को सुलझाने का यत्न करता था उतना ही वह उलझता जाता था। उसकी प्यारी बहिन तथा चाचा की मृत्यु हो गई। युवक हैरान था कि मृत्यु क्या होती है। जीव बोलता चलता मर क्यों जाता है। फिर वह कहां चला जाता है।

किन्तु उसे कहीं से इन प्रश्न का उत्तर न मिला। इधर उसकी उदासीनता, उसका यह चिन्तन, उस की गम्भीरता उसके माता पिता बन्धुओं को खटकने लगी। वे उसे विवाह की जंजीर में बांधने की तैयारी करने लगे। युवती का भी एक बड़ा प्रलोभन है। युवक उस में बंध फिर भाग भी कहां सकता है। किन्तु उधर युवक अपनी धुन में पक्का था। सच्चे शिव की खोज तथा मृत्यु का रहस्य जानने की चाह उसके दिल में पर्वतीय झरने की तरह उमड़ रही थी। वह इन छोटे २ बन्धनों को तोड़ता फोड़ता ममता, वासना के पर्वतों को भी लांघता भाग निकला। उसे अपनी खोज में अनेकों स्थानों पर भटकना पड़ा। कष्ट सहने पड़े, अन्त में उसे सच्चे गुरु विरजानन्द मिले। उन से उन रहस्यों का भेद जाना और अपनी प्यास बुझाई। वेद पढ़े तथा सच्चे शिव के मर्म को जाना।

गुरु की आज्ञा से उस वीर ने संसार को भी उस अपनी खोज का प्रसाद बांटा और उसकी अज्ञान से रक्षा की। एक ईश्वर की पूजा तथा वेदमार्ग का सच्चा उपदेश दिया। शासकों से वह न डरा। मित्रों का विरोध, पत्थर, कटुवचन कुछ भी तो उसे विचलित न कर सके। गद्दियों का लोभ उसे न खींच सका। मान की भूख उस में न उभर पाई। उसका लक्ष्य था एकमात्र सच्चा ज्ञान प्रचार। इसी कर्त्तव्य पर वह बलि हो गया।

आज महर्षि दयानन्द के भक्तों की एक बड़ी संख्या है अनेक संस्थाएं हैं, प्रचारक हैं। वेदों का पठन-पाठन है, किन्तु चारों ओर अन्धेरा गहरा होता जा रहा है। पशु शक्ति बल पकड़ती जा रही है। क्रोध वासनाओं में फंस कर अपना धर्म त्याग रहे हैं। सम्प्रदायवाद की भावना से देश में अशान्ति, फूट के साधन जुटाये जाते हैं। आचार कहां जा रहा है।

आर्यगण! महर्षि की तरह तू भी इस दिन जाग। अपने कर्त्तव्य को पहचान। स्वार्थ तथा अभिमान के कीचड़ से उठ जा। उठ! अपने वीर महापुरुष की शक्ति त्याग तथा निश्चय के अनोखे गुणों का स्मरण कर। फिर निर्भय हो जा। कर्तव्य तथा न्याय पर डट जा। फिर देख, संसार तेरे आगे सिर झुका देगा। इस बोधोत्सव पर तू भी बोध प्राप्त कर।

आर्यसमाजों से निवेदन

सभी आर्य बन्धुओं से विनम्र निवेदन है कि १८ फरवरी १९६३ से २२ फरवरी १९६३ तक ऋषि बोधोत्सव धूमधाम से मनाने की कृपा करें।

इस महान् पर्व को मनाते हुए सभी आर्य नर-नारी अपने परिवार के प्रत्येक सदस्य के हिसाब से चार आना फंड वेद प्रचार के लिए अवश्य इकट्ठा करने की कृपा करें।

और एकत्रित धन सभा में भेजने की कृपा करें। प्रायः आर्यसमाजें इस दिशा में कुछ उदासीनता का व्यवहार करती हैं। कृपया इन प्रमुख त्यौहारों को प्रधानता से मानना चाहिये। और सभा का फण्ड भी अवश्य इकट्ठा करना चाहिये। यही विनम्र प्रार्थना है।

विनीत—खुशीराम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

राष्ट्रीयता का जन्मदाता दयानन्द

(प्रिंसीपल पं० रलाराम जी एम० ए० एम० एल० ए० प्रधान आर्यप्रादेशिक सभा पंजाब)

स्वामी दयानन्द भारतीय राष्ट्रीयता के जन्मदाता हैं। जो भी उन्नीवीं शती के इतिहास को पढ़ता है वह इस बात को मुक्तकण्ठ से स्वीकार करेगा कि भारत के लिए इस अन्धकार मय युग में दयानन्द ने स्वराज्य का शब्द सत्यार्थ प्रकाश में सर्वप्रथम प्रयुक्त किया तथा स्वराज्य की मांग भी की। निर्भीक हो कर सत्यार्थ प्रकाश के छटे समुल्लास में लिखा—कि विदेशी राज्य चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो स्वदेशी राज्य की बरा बरी नहीं कर सकता। यह बात विदेशी शासकों को कितनी चुभी। इस का अनुमान तो इसी बात से लगाया जा सकता है कि गोरे अखबारों ने अनेकों वार इन शब्दों के आधार पर सत्यार्थ-प्रकाश को जब्त करवाने का भरसक प्रयत्न किया तथा आर्य समाज को एक बागी संस्था घोषित करने की मांग की।

इस से भी बढ़ कर यह बात है कि जिस संदेश तथा विचार धारा का दयानन्द ने प्रचार किया वह राष्ट्रीयता की पोषक तथा उत्पादक थी। भारतीय अपने आप को तथा अपनी संस्कृति, सभ्यता को पश्चिमी सभ्यता के मुकाबिले पर घटिया, हीन तथा त्याज्य समझने लग गये थे। लिखे पढ़े को तो विशेष कर के अपने पूर्वज, अपनी संस्कृति व अपना साहित्य त्याज्य प्रतीत होने लग पड़ा था दयानन्द ने युक्ति तथा प्रमाण द्वारा इस प्रवृत्ति को रोका तथा अपनी संस्कृति, इतिहास, साहित्य और पूर्वजों के लिए आदर मान का भाव पैदा किया। इस से भारत वासियों ने अपना खोया हुआ मान फिर से प्राप्त किया। आत्मसम्मान की भावना जागृत हुई। श्रीमती ऐनी बेसंट ने इस को अपने कलकत्ता इण्डियन नेशनल कांग्रेस के भाषण में स्वीकार किया और कहा कि स्वामी दयानन्द की विचार धारा ने और आर्य समाज द्वारा उस के प्रचार ने भारतीयों के अंदर आत्मसम्मान के भाव पैदा किये हैं। इसी कारण आर्य समाजी हर एक स्वतन्त्रता आन्दोलन में अग्रेसर तथा अग्रगण्य रहे हैं। आर्य समाज ने बतौर एक संस्था के कभी विदेशी शासकों के दृष्टि प्रिय बनने का प्रयास ही नहीं किया। आर्य समाजी भारत में लग भग एक करोड़ हैं। बृटिश राज्य के दिनों में भी चालीस लाख के करीब थे। परन्तु आर्य समाज के नेताओं ने कभी अपने लिए जुदा प्रतिनिधित्व किसी रूप में भी नहीं मांगा। आर्य समाज का आन्दोलन एक विश्वव्यापी आन्दोलन है। संसार का कल्याण करना आर्यसमाज का एक मुख्य उद्देश्य है कहां सारे विश्व का कल्याण और कहां भारत के ही टुकड़े करने का प्रयत्न। भला आर्य समाज इस संकीर्णता का दोषी कैसे हो सकता है। आर्यसमाज सदैव राष्ट्रिय दृष्टिकोण से देखता रहा और अब भी देखता है। साम्प्रदायिकता को आर्यसमाज भारत का परमशत्रु समझता है।

हां कुछ लोगों में इस प्रकार की आशंका या भ्रान्ति अवश्य है कि आर्यसमाज मुसल्मानों या

दूसरों का विरोधी है यह भाव नितान्त निराधार है। आर्यसमाज धर्म प्रचार में अहिंसावादी है। स्वामी श्रद्धानन्द तथा पं० लेखराम के बलिदान का प्रत्युत्तर कभी आर्यसमाज ने प्रतिहिंसा के रूप में देने का सोचा ही नहीं। यह उस के स्वप्न में भी नहीं आया आये भी क्यों? दयानन्द सत्य का प्रचारक था। सत्यमेव जयते नानृतम-यह तो दयानन्द की पुस्तकों का (Motto) माटो था। सत्यार्थ के प्रकाश में तो इस ने किसी की रियायत की नहीं एक निर्भीक संन्यासी की न्याई सत्य कहा, यदि किसी को वह कड़वा भी क्यों न लगा हो। परन्तु व्यक्तिगत व्यवहार में दयानन्द दयालु, कोमल, सहन शील तथा क्षमाद था। जिन्हों ने अनेकों वार उसे विष दिया और वे पकड़े भी गये। दयानन्द ने उन्हें छुड़वा दिया। धर्म के प्रचार में तो दयानन्द हिंसा तथा प्रतिकार में विश्वास ही नहीं रखता था।

कार्य प्रणाली तथा नीतिपथ को जन्म से आर्य समाज ने अपनाया है। फिर भी आर्य समाज कई सज्जनों, मतों, सम्प्रदायों को एक आंख भी नहीं भाता। इस का कारण आर्य समाज की कटुता, संकीर्णता अथवा असहिष्णुता नहीं है। इस का प्रधान कारण है कि दयानन्द के सन्देश ने तथा आर्य समाज के प्रचार ने हिन्दु जाति को सचेत तथा सतर्क कर दिया है। अब हिन्दु समाज अन्य मतों की भरती भूमि नहीं रहा। प्रत्युत् यह पहले की अपेक्षा सचेत, सतर्क तथा जागरुक है। हिन्दु अब आटे का दीपक नहीं कच्चा धागा नहीं। वरन अब वह अस्पात की जंजीर है। इस का श्रेय आर्य समाज को है। यदि कई मतावलम्बियों को यह स्थिति नहीं। भाती तो दोष उन का है आर्य समाज का नहीं।

स्वामी दयानन्द ने विदेशी धर्मों पर समालोचना की। परन्तु उनका मनशा किसी का हृदय दुखाने का नहीं था। दयानन्द केवल इतना ही जिताना चाहता था कि जो स्वयं शीशे के महलों में रहते हैं उन्हें दूसरों पर पत्थर फैंकने उचित नहीं। सच्चाई तो यह है कि आर्य समाज तो सब का हितचिन्तक तथा सेवक है किसी का विरोधी या शत्रु नहीं।

अतुल ऋषिवर

(श्री वेद प्रकाश जी प्रभाकर B.A. खन्ना)

शौर्य साहस धैर्य पारावार ऋषि थे।
धर्म संस्कृति दीन विधवाधार ऋषि थे।
ढोंग छल अभिशाप पातक काटने को।
खर प्रबल अव्यर्थ असिकी धार ऋषि थे॥

त्याग संयम मनन चिन्तन शुभ सिखाए।
वेद वारिधि थाह ली वर रत्न पाये।
चिर तपस्या से जो पाए अतुलमाणिक।
मनुजता के वरद मन्दिर में चढाए॥

सुप्त तन मन को जगा तम-तोम फाड़ा।
अन्ध विश्वासों का दान वदल लताड़ा।
मूर्ति पूजन पर्ण-सिंचन सम बताकर।
पोप लीला का सजा हर मठ उजाड़ा॥

पठन पाठन वेद का है धर्म पावन।
शुद्ध होता है इसी से विश्व तन मन।
लोक तीनों जगमगा आलोक से दो।
ग्रन्थ ज्योतिपुञ्ज ऋषि के सफल साधन॥

धर्म वैदिक जागरण के रवि निराले।
आर्य संस्कृति मुकुट शशि सी विभा वाले।
तमस हरने जब बढ़े ले ओ३म् सम्बल।
दोष दोषा को पड़े तब प्राण लाले॥

अन्धकार से प्रकाश की ओर

(प्रसिद्ध फिलास्फर प्रिंसिपल दीवानचन्द जी एम. ए. कानपुर)

स्वाधीनता और ज्ञान दो प्रमुख चिन्ह हैं जो मनुष्य को प्राकृत पदार्थों से इतना ऊंचा कर देते हैं। इनमें ज्ञान का स्थान प्रथम है, क्योंकि इसके अभाव में स्वाधीनता हो ही नहीं सकती। ज्ञान के सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध कथन है कि ज्ञान शक्ति है। ज्ञान की सहायता से हम प्रकृति पर और अन्य प्राणियों पर प्रभुता प्राप्त करते हैं। इसी की मदद से हम अपने आप पर भी शासन कर सकते हैं। यह शासन ही जीवन की पवित्रता है। गीता में कहा गया है कि पापियों में बड़ा पापी भी ज्ञान रूप नौका द्वारा पापों की नदी से पार हो जाता है। ज्ञान के सदृश पवित्र करने की शक्ति अन्य किसी वस्तु में नहीं है। यही ज्ञान प्रमुख ज्ञान है। यह स्वाधीनता देने वाला और पवित्र करने वाला है। यह ज्ञान मूलशंकर को बाल्यावस्था में ही हो गया। पूर्व पुण्य कर्मों का फल समझिये, साधारण मनुष्यों को तो वृद्धावस्था में भी नहीं होता। जब मूलशंकर ने देखा कि शिव की मूर्ति अपने आपको चूहे से बचा नहीं सकती तो उसके हृदय में प्रकाश हुआ। उसने अनुभव किया कि आत्मा प्रकृति से ऊंचा है और इसे प्रकृति के सामने झुकना नहीं चाहिए। यह अंकुर बढ़ता दयानन्द का ज्ञान और दयानन्द का दृढ़ संकल्प बना। स्वामी दयानन्द का सारा जीवन इसी विचार का प्रचार करने में बीता।

कहने को तो हम सब प्रकाश और ज्योति के प्रेमी हैं। स्थान २ पर स्कूल और कालेज खुले हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वैज्ञानिक उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। विदेशी जानकार भी इस दिशा में हमारे काम की प्रशंसा करते हैं परन्तु इस सब का हमारे जातीय जीवन पर प्रभाव क्या है? विज्ञान का बुनियादी नियम कारण कार्य का सम्बन्ध है। प्रत्येक कार्य के लिए कारण का होना अनिवार्य है। इस का अर्थ यह भी है कि वह कारण कार्य के उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त हो। हमारी जाति ने इस नियम को कितना समझा है? इसका उदाहरण कुम्भ के मेले से मिलता है। मेले ने लाखों बेकारों को कुछ दिनों के लिए काम दे दिया। हजारों पुरुष रौनक देखने गये। कुछ मांगने, जेब कुतरने वा कमाने के लिए। अधिक संख्या इस विश्वास से गई कि एक विशेष समय में स्नान करने से पाप दूर हो जाते हैं और मोक्ष मिलता है। इन में बहुतेरे स्नान करते हुए मनु का श्लोक भी पढ़ते होंगे। जल से केवल शरीर की शुद्धि होती है, मन, बुद्धि और आत्मा की शुद्धि के लिए सत्य, ज्ञान, विद्या और तप की आवश्यकता है।

यह कुम्भ मुझे अपने देश की जहालत का एक बड़ा उदाहरण दिखाई देता है। हम सब थकों-मान्दों की कौम बने हुए हैं। जो कोई हमें शान्ति का मार्ग दिखाने का दावा करता है, हम उसके पीछे हो जाते हैं, चाहे वह शान्ति मरघट की शांति

महर्षि दयानन्द की वैज्ञानिक देन

[लेखक : श्री भीमसेन जी बहल, एम०एस०सी, प्रिंसिपल डी०ए०वी० कालेज जालन्धर नगर]

पाश्चात्य भौतिकवादी शिक्षा में पोषित सामान्य व्यक्ति आज यही कहता सुना जाता है कि धर्म एक संकुचित मनोवृत्ति का प्रतिरूप है। धर्म की सीमा में न विज्ञान आता है और न राजनीति। इनकी परस्पर विपरीत दिशाएं हैं। एक धर्मप्राण व्यक्ति को तो अपने सन्ध्या उपासना से ही छुट्टी नहीं, वह विज्ञान की प्रयोगशालाओं में बैठ अपनी समय शक्ति व आयु को लगाना व्यर्थ ही समझता है। प्राणायाम की प्रयोगशालाएं ही उसे रुचिकर हैं।

किन्तु स्वामी दयानन्द की शिक्षा ने इस प्रकार की मान्यताओं को निराधार कर दिया है। पूज्य स्वामी जी महाराज ने विज्ञान को धर्म का एक अंग सिद्ध कर दिया। बिना धर्म विज्ञान नहीं, और बिना विज्ञान धर्म नहीं। विज्ञान-रहित मनुष्य न आत्मानन्द प्राप्त कर सकता है और न परमानन्द। यह सभी सुख और स्वर्ग वैज्ञानिक धर्म ही है। धर्मप्राणी व्यक्ति जिस स्वर्ग की कामना करता है वह इसी मानव के पंच महाकोषों में, आनन्द-कोष और विज्ञानमय कोष ही तो हैं। यदि गम्भीरता से विचार किया जाए तो पता चलेगा कि धर्म से पोषित विज्ञान ही सच्चा ज्ञान है, अन्यथा वह अज्ञान और कपटाचरण से पोषित व्यवहार के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

किसी वस्तु या व्यक्ति की वह वृत्ति ही धर्म है, जो उस में सदा रहे, उस से कभी पृथक न हो। किसी मान्य आचार्य या ऋषि द्वारा निर्दिष्ट वह कर्म ही धर्म है जो उचित मर्यादा के साथ लौकिक और पारलौकिक सुख की प्राप्ति के लिये किया जाए। वह वृत्ति या आचरण ही धर्म है जो लोक या समाज की स्थिति के लिए आवश्यक हो। यह आचार ही धर्म है जिस के द्वारा समाज की रक्षा और सुख शान्ति की वृद्धि हो।

मानव के लिए नरक या अधोगति के मुख्य कारणों में विलासिता, फूट, अभिमान, स्वार्थपरता आदि हैं। इनके चक्कर में पड़कर अधोगति के गर्त में गिरते हुए मनुष्यों को जो धारण करता है

हो। शास्त्र कहते हैं—उठो जागो। हमें नींद से प्यार है। सोते समय दीपक बत्ती भी बुझा दी जाती है। अन्धकार तो है ही, अन्धकार का प्रेम उस से भी अधिक है। इस समय देश की सब से बड़ी आवश्यकता प्रकाश और आत्मा की स्वाधीनता है। यही स्वामी दयानन्द की प्रमुख देन थी। हमने इस की कीमत को नहीं समझा। बहुतेरे आर्यसमाजी भी कहते हैं—अब क्या करें? क्या करें? काम तो पहाड़ सा सामने है, करने वालों में हिम्मत नहीं। यदि हम बोध की रात से कुछ जीवन ग्रहण कर सकें तो शायद कुछ बन जाये। **परमात्मन्! अन्धकार से निकाल कर हमें ज्योति की ओर ले चलो।**

अर्थात पकड़ कर उसे उन्नति के मार्ग की ओर जो उन्मुख करता है वही धर्म है—

धारणाद्धर्ममित्याहु.।

इस प्रकार धर्म का क्षेत्र बहुत विशाल और व्यापक है।

किन्तु मध्ययुग में अशिक्षा के कारण कुछ ऐसी मान्यताओं ने धर्म के इस विशाल रूप को आकार आबद्ध कर लिया था कि चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दीखने लगा। मोहम्मद ने अरब निवासियों के उस अज्ञानान्धकार को (अपनी स्वल्प बुद्धि से अपनी ही कुछ मान्यताओं को धर्म का नाम देकर) दूर करने का यत्न किया। किन्तु उन का क्षेत्र भी एक जाति के स्वार्थ तक ही सीमित रह गया।

योरुप में ईसाइयत का प्रचार करने वाले पोपों ने तो अनेकों विज्ञान वेत्ताओं को अपनी कमजोर और निराधार तथाकथित धार्मिक मान्यताओं के कारण शताब्दियों तक मारने का ही कार्य किया। उन्होंने धर्म को विज्ञान से पृथक वस्तु समझा और इसी प्रकार का प्रचार अपने धार्मिक अनुयायियों में किया।

ऐसी ही थोथी मान्यताओं के अन्धकार की रात्रि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश के उदय होने पर स्वतः निर्मूल हो गई। स्वामी जी ने वेद का सूर्य विश्व बानब के सामने ला प्रकट किया। विश्व की त्रसित और भटकती जनता को मार्ग दिया। वेद का कवच पहना कर इस जाति को बचा लिया।

अज्ञान के अन्धकार में भटकती जाति को, वेद के प्रकाश में आत्मस्वरूप के दर्शन करा, महान् उपकार किया।

योरुपीय देशों में अपने कल्पित, मिथ्या और विज्ञान से रहित धर्म के कारण, जो यह आस्था बन गई थी कि विज्ञान और धर्म दो अलग २ वस्तुएं हैं, स्वामी दयानन्द ने विज्ञान के आधार पर ही वेद के अर्थ कर, संसार के मानव मस्तिष्क का विकास करते हुए सिद्ध कर दिया कि विज्ञान और धर्म एक ही वस्तु के दो रूप हैं। इसी के परिणामस्वरूप प्रोफेसर हक्सले को कहना पड़ा कि—

True Science and true religion are twin sisters and the separation of either from the other is sure to prove the death of both. Science prospers in proportion as it is religions and religion flourishes in exact proportion to the scientific depth and firmness of its basis.

अर्थात् सत्य विज्ञान और सत्य धर्म दो सगी जुड़वां बहिनें हैं और उनकी पृथकता दोनों को निश्चय ही नष्ट कर देगी। विज्ञान जितना अधिक धर्म परायण होगा उतनी उसकी वृद्धि अधिक होगी एवं धर्म की वैज्ञानिक नींव गहरी और दृढ़ हो तो अधिक फूलता फलता है।'

स्वामी दयानन्द जी के उपकार का ही यह फल है कि आज का वैज्ञानिक व्यक्ति धर्म के निकट आ पहुंचा है और आज का धार्मिक व्यक्ति अपनी धार्मिक आस्थाओं को विज्ञान का सहारा

देकर सुदृढ़ बनाने लगा है। विज्ञान भी तो एक धर्म ही है। फिर हम किस प्रकार कह सकते हैं कि विज्ञान से युक्त मानव ईश्वर से दूर जा पहुंचता है। ईश्वर की सृष्टि के आनन्द का भोक्ता जितना विज्ञान का पण्डित होता है उतना अन्य नहीं। डा.पाल कैरस का कहना युक्ति युक्त है विज्ञान का धर्म अनीश्वरवादी कदापि नहीं अपितु ईश्वर वादी है।

The religion of Science is not atheistic but theistic. God determines the laws of any possible kind of nature. God is that which determines the shape of nature and directs the course of energy. (They religion of Science by Dr. Paul Carus)

कई बन्धुओं को स्वामी दयानन्द जी के यजुर्वेद के भाष्य में दिखाई गई आधुनिक आविष्कार की वस्तुओं को देख कर प्रायः यह शंका होती है कि वेद का प्रादुर्भाव जब हुआ होगा उस समय रेल, तार, टेलीफोन आदि वस्तुओं का प्रचलन तो था ही नहीं फिर वेद में इन वस्तुओं का वर्णन कैसे आ सकता है? इस प्रश्न के साधन में मै कलकत्ता संस्कृत महाविद्यालय के वैदिक साहित्य के आचार्य श्री पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी के शब्द रख दूं तो अधिक उपयुक्त होंगे। उक्त विद्वान का इस सम्बन्ध में कहना है कि—

"At a time when Photography, Phonography, gaslight, telegraph, the telephone, Railway and ballons had not been introduced into the country, how could our people understand any verses referring to these things.

Our opinion is that in Vedic times, our country had made extraordinary progress. In these days the sciences of geology, astronomy and chemistry were called "Adhidaivik Vidya" and these of Physiology, Psychology and the theology "Adhyatma Vidya."

Though the works embodying the scientfic Knowledge of these times are entirely last, there are sufficient indications in Vedic works of these Sciences having been widely known in these days. (Tryi Chatushtya, Preface VII—X)

अर्थात-उस समय जबकि फोटो ग्राफी, फोनोग्राफी (शब्द उच्चारण यन्त्र विद्या) गैस प्रकाश, तार, टेली फोन, रेल, वायुयान का भारत में प्रचार न था किस प्रकार भारत के वेदभाष्यकर्ता उन मन्त्रों के यथार्थ रहस्यों को समझ सकते थे, जिनमें कि इन वस्तुओं के निर्देश हों?

हमारी सम्मति हैकि वैदिक काल में हमारे भारत देश ने पर्याप्त उन्नति कर थी। उस भूगर्भ विद्या, ज्योतिष और रसायन विद्या को 'आधिदैविक विद्या' कहा जाता था और शरीर विद्या, मनोविज्ञान तथा ब्रह्मविद्या को 'अध्यात्म विद्या'। उस समय के वैज्ञानिक ग्रन्थ यद्यपि इस समय सर्वथा लुप्त हो गए हैं तो भी वेदों में उन विज्ञानों के सम्बन्ध के पर्याप्त निर्देश मिलते हैं जिनसे प्रतीत होता है कि वैदिक काल में उन विज्ञानों का पर्याप्त प्रचार था।'

अत. हमें मानना पड़ेगा कि महर्षि दयानन्द ने धार्मिक जगत को एक प्रकाश पूर्ण दृष्टि प्रदान की है। इससे पूर्व वर्तमान युग का मानव अन्धा बना हुआ था। वेद के नाम पर नाना प्रकार के भ्रमों, का जाल फैलाया जा रहा था। स्वामी जी की इस शैली ने भारत को ही नहीं अपितु योरुप के तथा कथित सभ्य समाज को भी, दिखा दिया कि मानव के पास वेद जैसी अमूल्य सम्पत्ति है। इसमें सभी सत्य विद्याओं का भण्डार समाविष्ट है। स्वामी जी की प्रेरणा पर ही योरुप के विद्वानों ने वेद को 'गडरिये के गीत' कहना छोड़ कर ईश्वरीय ज्ञान मानना प्रारम्भ किया था। वह इनसे अत्यन्त प्रभावित हुए। सृष्टि उत्पत्ति और आदि मानव के उत्पन्न होने के सम्बन्ध में स्वामी जी के मौलिक विचार अब उन के लिए भी मान्य वस्तु बन गए। 'आदि मानव न छोटा था न बड़ा युवावस्था में ही उत्पन्न हुआ' वेद के इस वचन को—

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधु' भरुदभ्य. सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुधा पृश्नि. सुदिना ऋ० ५।६०।५॥

पाश्चात्य विद्वान भी स्वीकार करने लगे हैं— 'स्मिथसोयिनम् संस्था' (Smithsoniam Institution) अमेरिका में एक वैज्ञानिक संस्था है। उस में डा० क्लार्क नामक प्रख्यात पाणिशास्त्री विद्वान कार्य करते हैं। उन का मत उद्धृत करते हुए Quarterly Review of Biology ने लिखा कि—

According to Dr Clarsk's belief. man appeared in the pliocene age just preceding the ice age. He appeared suddenly andin substantiallay the same form as heis to-day There is not the slightest evidence of his existence before that time. He appeared able to walk, able to think and able to defend himself. Dr Clark holds. there are no missing links.

अर्थात—डा० क्लार्क के मतानुसार मनुष्य हिमयुग से ठीक पूर्व प्लायोसीन युग में हुआ। वह अचानक उत्पन्न हुआ और सर्वथा इसी आकार में जैसा कि आज है। इस से पूर्व उसकी सत्ता का कोई प्रमाण नहीं। वह उत्पन्न होते ही चलने, विचारने, तथा आत्मरक्षा करने में समर्थ था। डा० क्लार्क का सिद्धांत है कि उस से पहिले की कोई कड़ी गुम नहीं है।'

क्या डा० क्लार्क में स्वामी दयानन्द बोलते प्रतीत नहीं होते। यह है स्वामी जी का चमत्कार। आओ आज उन के (दयानन्द के) बोध दिवस पर उनके चरणों में श्रद्धांजली अर्पित करते हुए, निश्चय करें कि स्वामी जी की इस वैज्ञानिक पद्धति को आगे विकसित करेंगे, जीवित रखेंगे। इसी में हमारा, हमारे देश और जाति का कल्याण है।

आवश्यक निवेदन

आर्यसमाजों तथा अपनी संस्थाओं से निवेदन है कि समय-समय पर अपने यहां होने वाले पर्व, संस्कार, यज्ञ और उत्सव आदि की सूचना आर्य जगत कार्यालय आर्य प्रादेशिक सभा हंसराज भवन जालन्धर शहर के पते पर भिजवा दिया करें ताकि उचित समय पर प्रकाशित हो सकें। —सम्पादक

शिवरात्रि—जागरण का पर्व

[ले० श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आ० प्रा० सभा व मुख्याध्यापक दयानंद नार्मल स्कूल जालंधर]

इस जीवन की दो अवस्थाएं हैं, जागना और सोना दोनों ही जीवन के लिए आवश्यक हैं। परंतु जिस जीवन में जागना अधिक और सोना कम होता है वही मानव जीवन सुन्दर जीवन है। साधारण व्यक्ति सोता अधिक है, सोया ही रहता है। जब वह जागता है तब भी मानसिक अथवा आत्मिक विचार से सोया ही होता है। महान व्यक्ति के जीवन में जागना अधिक होता है और सोना कम। और जब वह सोया हुआ भी होता है तो भी उसकी आंतरिक शक्तियां जागती होती हैं। जिस ने सिलाई की मशीन बनाई थी उसे निद्रा की अवस्था में ही यह मालूम हुआ था धागा डालने के लिए सूई का मुंह किधर होना चाहिए। जब दीन दुखिया दुनिया सो जाती है तो महापुरुष उसके दु:खों को दूर करने के उपायों पर चिन्तिन करने में रात बिता देते हैं। इतिहास साक्षी है कि समय २ पर महापुरुष जागे और सोई हुई दुनिया को उन्होंने जगाया, उनके जागरण में ही शेष सब का जागरण है। कहा है, देवता कभी नहीं सोते, सदा जागते रहते हैं।

१८३८ की शिवरात्रि थी। मूलशंकर अपने पिता के साथ शिव मन्दिर में जागरण के लिए गए, इस विचार से कि इस जागरण से ही शिव के दर्शन होंगे। अनेक शिव भक्त भी वहां थे। परन्तु जैसे जैसे रात ढलती गई, भक्तजन एक-एक करके निद्रा देवी की गोद में चलते गए और मूलशंकर के पिता जी भी। यदि कोई, रात्री की निस्तब्धता में, जागता रहा तो चौदह वर्ष का बालक मूलशंकर, महान आत्माएं उस वक्त भी जागती हैं जब साधारण आत्माएं सोई रहती हैं। चूहे को मूर्ति पर चढ़ते और शिव का अनादर होते देख मूलशंकर के मन में सच्चे शिव को पाने की तड़प पैदा हुई। इस पुण्य पवित्र रात्री को मूलशंकर जागा। प्यारी बहिन और प्यार करने वाले चाचा की मृत्यु में जब अन्य सगे सम्बन्धी रो पीट रहे थे अर्थात् आध्यात्मिक विचार से, अज्ञान की तन्द्रा में, सोए पड़े थे, तो मूलशंकर की जगी हुई आत्मा को एक और झंझोड़ा मिला। सच्चे शिव की खोज के साथ-साथ मृत्यु पर विजय पाने की उतकट इच्छा भी जागी। सच्चे शिव की खोज और मृत्यु पर विजय पाने की होड़ में घर और परिवार, सुख और प्यार सब छोड़-छाड़ जंगलों को हो लिए।

सोना आग में पड़ता है तो कुन्दन बनता है। मूलशंकर कठिन तपस्या के बाद शुद्ध चेतन बना। शंकर की मूल (शिव की खोज) ने उसकी आत्मा में शुद्धता और चेतना पैदा कर दी और वह मूलशंकर से शुद्ध चेतन बना। वह जागे, उनका शरीर, मन और आत्मा जागा। स्वस्थ, सुदृढ़ तथा ब्रह्मचर्य युक्त शरीर के साथ समुज्ज्वल मन और मस्तिष्क तथा पवित्र अमर आत्मा का स्वामी शुद्ध चेतन पूर्ण रूप से

जागा। इस पूर्ण जागरण ने शुद्ध चेतन को दयानन्द बना दिया। पूर्ण रूप से जागता हुआ व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तौर पर जागता हुआ महापुरुष, दया और आनन्द का पुंज बन जाता है। सच्चे शिव के दर्शन पाने तथा मृत्यु को जीत लेने से आनन्द प्राप्त होता है और इस आनन्द में विभोर होकर आत्मा दीन दुखिया संसार के लिए दया से भर जाती है। इस प्रकार वह महान आत्मा दयानन्द बनी।

महर्षि स्वामी दयानन्द जागे और खूब जागे। उनके जागने से हम सब जागे, समाज जागा, जाती जागी और सारा राष्ट्र जागा। हमारे जागने से हमारी अपनी रक्षा हुई, गठरी में जो चोर लगा हुआ था वह भागा। जागने वाले परिवार के घर में चोरी नहीं हो सकती। समाज के जागने से कुरीतियां, त्रुटियां और कमजोरियां सब भागीं। राष्ट्र के जागने पर उस में नया जीवन, नई जाग्रति नई स्फूर्ति आई।

भगवान दयानन्द बहुत देर तक हमारे मध्य में न रह पाए और अपना पुनीत पावन कार्य आर्यसमाज के हाथ में सौंप कर परम पिता परमात्मा की गोद में चले गए। आर्यसमाज ने ओ३म् के झंडे को हाथ में लेकर ऐसा नाद बजाया जिस से चहुं ओर जागृति ही जागृति देखने में आने लगी। ऐसा प्रतीत होने लगा कि संगठन, स्वतन्त्रता, सुख, शान्ति और समृद्धि सब कुछ प्राप्त होने वाला है।

परन्तु सब को जगा कर आर्यसमाज स्वयं सो गया है। सम्भवतः इस भूल में मस्त होकर कि अब उसके जागते रहने की आवश्यकता नहीं, वह अपना कार्य कर चुका है। आर्यसमाज देखता है कि हर क्षेत्र में, हर आन्दोलन में और हर कार्य में उस की प्रेरणा है और वह इस पर खुश है। भगवान दयानन्द और उनके बाद आने वाले आर्यों द्वारा किए गए महान कार्य पर आज आर्य समाज मस्त है और अब कुछ और करने से वह जी चुराता है। परन्तु इस से काम नहीं चलेगा। अभी उसके सामने बड़ा काम है। हम जाग कर फिर सोने की तैयारी कर रहे हैं और अनेक दिन होने पर भी सो रहे हैं। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' का नाद बजाने वाले आर्य अपने परिवारों को भी आर्य नहीं बना सकें। आर्यो! जागो। शिवरात्री सच्चे अर्थों में जागरण का पर्व है। आओ, आज जगत गुरुदेव दयानन्द के जागरण से हम शिक्षा लें, महर्षि दयानन्द की प्रेरणा से प्रेरित हों, उस महान आत्मा से कुछ साहस प्राप्त करें और जो कार्य वे हमें सौंप गए हैं उसे समझें, अपने कर्त्तव्य से परिचित हों। और कर्त्तव्य का पालन करते हुए ऋषि के ऋण से उऋण हों। ओं शांति। शांति॥ शांति॥।

शिवरात्रि का शुभ पर्व

सभी आर्यसमाजों और आर्य भाइयों, बहिनों को वेद प्रचार के पुनीत कार्य को सुदृढ़ करने लिए प्रयत्न करना चाहिए और परिवार के प्रत्येक सदस्य के हिसाब से कम से कम चार आना संग्रह कर आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के वेद प्रचार कोष में भिजवाकर पुण्य के भागी बनें।

—खुशीराम शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता

राष्ट्र में संरक्षण-मन्त्री का कर्त्तव्य

-आदरणीय श्री प० दामोदर जी सातवलेकर पारडी (सूरत)-

राष्ट्रों में कार्य करने वाले अठारह मंत्री हैं, प्रत्येक मन्त्री का कार्य पृथक्-पृथक् होता है। इन मंत्रियों में संरक्षण मन्त्री' भी एक होता हैं, जो राष्ट्र के संरक्षण करने का कार्य करता है। वेदमंत्रों में यह संरक्षण मन्त्री 'इन्द्र' है। यह क्या क्या कार्य करता है वह हम यहां देखेंगे—

इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्त्र प्रधनेषु च।
उग्र उग्राभिरूतिभि. ॥

ऋ० १।७।४

'हे इन्द्र! हजारों वीर जहां लड़ते हैं ऐसे बड़े युद्धो में हमारा संरक्षण कर, तुम्हारे पास बड़े-बड़े संरक्षण करने के साधन हैं।'

१ सहस्त्र, प्रधनेषु वाजेषु न अव—हजारों वीर यहां बढ़ते हैं ऐसे महायुद्धों में हमारा सरक्षण कर।

२. उग्राभि. ऊतिभि—वीरोचित बड़े उग्रसंरक्षण के साधन तुम्हारे पास हैं, उनका उपयोग करके हम सबका सरक्षण करना संरक्षण-मन्त्री का कर्त्तव्य है।

संरक्षण-मंत्री के पास 'उग्रा: उतय:' प्रजा का संरक्षण करने के प्रचण्ड साधन सदा तैयार रहने ही चाहिएं। ये साधन 'उग्र'अर्थात् प्रचण्ड चाहिएं। ये रक्षण के साधन उस के पास सदा तैयार रहने चाहिएं। शत्रु से हमला होने पर हमारी तैयारी नहीं थी, हमारी फौज तैयार नहीं थी, हमारी सेना के पास उत्तम हथियार नहीं थे। इस लिये हमारी पीछे हार हो गयी। ऐसा कहने का अवसर सरक्षण मन्त्री को आने नहीं देना चाहिये।

वय शूरेभिरस्तृभिरिन्द्र त्वया युजा वयम्।
सासह्याम पृतन्यत. ॥ ऋ. १.८.४

'हे इन्द्र! तेरे साथ रह कर, हम शूरवीरों की सहायता से सेना के साथ हमला करके शत्रु का पराभव करेंगे।'

अस्तृभि शूरेभि.—शत्रु पर शस्त्र फैकने वाले शूरवीर सैनिकों के साथ हम रहेंगे।

पृतन्यत. सासह्याम—सेना से हमला करने वाले शत्रु को परास्त करेंगे और हम विजय कमायेंगे।

अर्थात् हमारी सेना तैयार रहेगी। शत्रु पर फैंकने वाले अस्त्र हमारी सेन के पास तैयार रहेंगे। शत्रु के साथ लड़ाई करने में हमारे सैनिक सिद्ध हस्त रहेंगे। और हम शत्रु को परास्त करेंगे।

यहां सदेह की बात नहीं है। निश्चय की बात है। हमारा संरक्षक मन्त्री ऐसा होना चहिये जिस की सेना सदा तैयार रहनी चाहिये तथा उस सेना के पास अद्ययावत् सब प्रकार के हथियार रहने चाहिएं।

शत्रु का हमला होने पर पीछे हट करके विदेशों से हथियार मंगाये। ऐसी शिथिलता की बात कदापि नहीं होनी चाहिये।

पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुत.॥
ऋ० १।११।४

सरक्षण मंत्री कैसा चाहिये और उसे क्या क्या करना चाहिये यह देखिये—

पुरां भिन्दु—शत्रु की नगरियों को तोड़ने वाला, शत्रु की नगरियों का पराभव करके उसके नगर, उसके किले तोड़ने चाहिएं। शत्रु के संरक्षण के साधन विनष्ट करने चाहिएं।

युवा कवि. अमित-ओजा—यह तरुण है, ज्ञानी है और अपरिमित शक्ति से युक्त है। यह युवा है, अर्थात् इस की आयु बहुत होने पर भी यह तरुण के समान कार्य करता है। यह 'कवि है अर्थात् यह दूरदर्शी या क्रान्तदर्शी है। भविष्य में क्या होगा इस का ज्ञान इसको आज है। भविष्य में शत्रु इस दिशा से इस प्रकार करेगा, यह ज्ञान इस को नि.सन्देह रीति से रहता है। इस लिए उस आने वाली आपत्ति का उपाय वह पहिले से करता है। तथा इसका सामर्थ्य अपरिमित रहता है। इस लिए शत्रु का हमला होने पर यह उस शत्रु का मुकाबला तत्काल करता है और उसको परास्त करता है।

३ विश्वस्य कर्मणा. धर्ता—सब कर्मो का धारण करने वाला वह रहता है। इस लिए जहां जिस कार्य को करना चाहिए वहां उस कर्म को करके शत्रु का भय दूर करता है।

मायाभिरिन्द्र मायिनं त्वं शुष्णमवातिरः।
ऋ० १।११।७

'हे इन्द्र! तू कपट से युद्ध करने वाले दुष्ट शुष्ण का नाश कपट युद्ध करके ही किया है।' शत्रु यदि कपट से युद्ध करने लगा तो हमें भी उससे कपट युद्ध ही करना चाहिए।

ऐसा कभी नहीं होना चाहिए कि शत्रु हम से कपट करे और वह उनका कपट हमारी समझ में ही न आ जाए और हमारा पराभव हो। और हम ऐसा कहें कि शत्रु ने कपट किया, हम उनको भाई समझ कर उनके साथ सरल व्यवहार करने लगे और सरल सत्य व्यवहार करने के कारण फंस गये। ऐसा कहने की आवश्यकता न पड़े।

शत्रु कपट करेगा ही, ऐसा समझ कर वैसा व्यवहार उनसे करने का ही अपना परिपाठ होना चाहिए। यही धर्म है। यह बताने के लिए ऊपर दिए मन्त्र में स्पष्ट शब्दों में कहा है कि इन्द्र ने कपट करने वाले शुष्ण को कपट करके ही मारा।' शत्रु जैसा युद्ध करेगा वैसा ही हमें उनके साथ युद्ध करना योग्य है।

यदीन्द्राहन् प्रथमजामहीनाम
आन्मायिनामिमना ओत माया.॥
ऋ० १।३२।३

'जब शत्रुओं के मुखिया को तुम ने मारा, उस समय तुमने उन मायावी असुरों के साथ माया का ही प्रयोग किया था।' युद्धकरनेके समय असुर माया का प्रयोग करते थे। अतः उनके साथ हमे भी माया का ही प्रयोग करना योग्य है।

ऐसा अनेक बार वेद में कपट के साथ कपट करने का उपदेश किया है। शत्रु कपट प्रयोग करे, असत्य भाषण करे, हमें फंसाने का यत्न करे और हम उनके साथ सरलता से वर्ताव करें तो हमारा पराजय होने में संदेह ही नहीं है।

इसलिये शत्रु का वर्ताव कैसा है वह प्रथम

के प्रति उत्साह प्रद नहीं। उन को शनः २ सरकार के आधिपत्य में लाने की है यद्यपि यह नीति चीन के आक्रमण के कारण कुछ समय के लिए ढीली पड़ गई है परन्तु वास्तव में सरकार यही चाहती है कि समस्त शिक्षा उसके हाथ में आ जाए मैं समझता हूं वह दिन बड़ा बुरा होगा जब देश की समस्त शिक्षा केवल सरकार के हाथ में हो। विलायत में कैम्ब्रिज आक्सफोर्ड की यूनिवर्सिटियों ईटन तथा हैरो स्कूल गवर्नमैंट के आधिपत्य से स्वतन्त्र हैं यद्यपि गवर्नमैंट उन्हें सहायता देती है। निजी (Private) प्रयत्न शिक्षा के क्षेत्र में भारतवर्ष में कभी बन्द नहीं होना चाहिये।

अन्त में पंडित जी को मैं बधाई देता हूं कि वह कालेज के कार्य के भारी बोझ तथा उत्तरदायित्व से स्वतन्त्र हो गए हैं। यह आशा है कि वे अपनी दैवी योग्यता तथा शक्ति को आर्यसमाज के प्रचार तथा वैदिक धर्म के प्रचार में लगा देंगे। साधु आश्रम में अवैतनिक रूप में उन्होंने अध्ययन तथा लेख का कार्य आरम्भ कर दिया है। जिला में वेद प्रचार, प्रादेशिक सभा का कार्य, दयानन्द सालवेशन मिशन का महान कार्य उन को बुला रहा है। इस ओर वह अवश्य ध्यान देंगे। परमात्मा पंडित जी को दीर्घायु प्रदान करें। आर्य समाज के कार्य के नवीन क्षेत्र में भी आशा है वह इसी प्रकार सफलता प्राप्त करेंगे जैसी शिक्षा के क्षेत्र में की है।

से विद्यार्थियों की संख्या १२०० हो गई। पुस्तकालय (Gyravasinm) व्यायामशाला तथा नवीन छात्रावास के विशाल भवनों का निर्माण किया गया। अपनी जन्म भूमि तलवाड़ा में पंडित जी ने हाई-स्कूल खोला जिस के वह प्रबन्धक हैं। इसी प्रकार नंगल निहाला तथा अमरोह हाई स्कूल के भी वह प्रबन्धक हैं। वह जीवन की सरलता, वाक माधुर्य आचार की महानता, शुद्ध व्यवहार तथा सेवा के कारण जिलाभर में सर्वप्रिय हैं। आर्यसमाज के प्रचार और शिक्षा के प्रसार में होश्यारपुर जिला में उनका कार्य महत्वपूर्ण है।

यूनिवर्सिटी के चिरकाल से सेनिट तथा सिन्डीकेट के वह सदस्य चले आरहे हैं। इस अवस्था में भी उनका कार्य सराहनीय रहा है। तीन बार वह अपने मुकेरियां के हलका से एम० एल० ए० की सदस्यता के निर्वाचन में अत्यधिक वोटों से सफलता प्राप्त करते रहे हैं। विधान सभा में उनका कार्य प्रशंसनीय रहा है और आजकल पंजाबी रिजनल कमेटी के वह प्रधान हैं।

प्राईवेट शिक्षा संस्थाओं ने जो महान सेवा कार्य किया है उसकी प्रशंसा डा० राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अबुलक्लाम आजाद, डा० श्रीमाली तथा अन्य शिक्षा विशेषज्ञ करते रहे हैं। जो लोग प्राईवेट शिक्षा संस्थाओं पर साम्प्रदायकता की शिक्षा के प्रचार का आरोप लगाते हैं वह सर्वथा अन्याय करते हैं। प्राईवेट संस्थाओं के विद्यार्थी अधिक देश भक्त तथा त्यागी होते हैं। जो शिक्षा के क्षेत्र में सेवा प्राईवेट संस्थाओं ने की है और जितनी सहायता गवर्नमेन्ट को प्राईवेट स्कूलों तथा कालजों से प्राप्त हुई है वह अकथनीय है। गवर्नमेन्ट करोड़ों लाखों रुपया व्यय कर के भी वह कार्य न कर सकती जो प्राईवेट संस्थाओं ने किया है। जो त्याग की भावना महात्मा हंसराज, ला० दीवान चन्द, ला० साईं दास बख्शी राम रत्न, ला० मेहर चन्द, पं० मेहर चन्द, ला० सूरज भान, गोवर्धन लाल दत्त, ला० राम दास पं० रला राम, ला० भगवान दास, पं० सिरि राम ने दिखाई है वह हमारे देश के इतिहास में सदैव स्मरण रहेगी। आर्य संस्थाओं की सफलता का यह त्याग मुख्य रहस्य है। हमारी संस्थाओं के संचालक जनता के धन को निर्दयता से व्यय नहीं करते रहे। अत्यन्त सावधानी मितव्यता से यह जनता के रुपया को व्यय करते हैं। सदैव न्याय के प्रबन्ध का ध्यान रखते हैं। मुख्याध्यापक तथा प्रिंसिपल पर कमेटी का पूर्ण विश्वास रहा है। उनके आंतरिक प्रबन्ध में कभी हस्तक्षेप नहीं किया। स्टाफ को हमारी कमेटी नौकर नहीं समझती रही अपितु वह उन्हें सहकारी तथा सथा के निर्माणकर्ता समझती रही है। यह कुछ परम्पराएं हैं जिन के आधारभूत आर्य संस्थाएं सफल होती हैं। पं० रला राम जी ने अपने जीवन में इन परम्पराओं को ध्यान में रखते हुए ही इतनी महान सेवा की है।

आज समय में परिवर्तन देखने में आ रहा है। प्राईवेट संस्थाओं का व्यय बहुत बढ़ गया है। जनता से धन प्राप्त नहीं होता। सरकारी ग्रान्टे चीन के आक्रमण के कारण घटाई जा रही हैं। ऐसी अवस्था में स्कूलों तथा कालजों का अस्तित्व खतरा में है। सरकार की नीति प्राईवेट संस्थाओं

पं० रलाराम जी एम०ए० एम०एल०ए० की ४२ वर्ष की सेवा

(महामना ला. देवी चन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन होशयार पुर)

पं० रला राम जी ने १६ २१ में अपने पूज्य पिता पं० मेहरचन्द जी तलवाड़ा निवासी की प्रेरणा से डी० ए० वी कालज कमेटी की सेवा ग्रहण की। उस समय वह बी० ए० पास थे। उन के पिता जी के विचार आर्य समाजी थे। उन के ज्येष्ठ भ्राता पं० हंस राज तलवाड़ा गवर्नमेन्ट स्कूल में हैडमास्टर थे। पंडितजी सर्वप्रथम मेरे सहायक के रूप में नियुक्त हुए और उन का कार्य ज़िला होशियारपुर के आर्य स्कूलों का निरीक्षण करना था। जब वह एम० ए० की परीक्षा में सफल हुए तो वह साधारण निर्वाह मात्र पर स्टाफ के आजीवन सदस्य बन गए। जब १६२६ में डी० ए० वी० हाई स्कूल होशयारपुर इन्टर मीडिएट कालज बन गया तो पंडित जी उस के (वाईस प्रिंसिपल) उप आचार्य नियुक्त हुए। जब १६४० में डिगरी अर्थात बी० ए० की श्रेणियां भी खोल दी गईं और कालज बाहर होस्टल के समीप चला गया तो उस के ला० राम दास जी प्रिन्सिपल और पंडित जी वाईस प्रिन्सिपल थे। १६४५ में ला० राम दास जी रिटायर हुए तो पंडित जी को उन के स्थान पर प्रिन्सिपल नियुक्त किया गया। उस समय से ४ जनवरी १६६३ पर्यन्त वह प्रिंसिपल रहे ४ जनवरी को वह प्रिंसिपल के पद से मुक्त हो गए।

४२ वर्ष पर्यन्त अविरल महत्व पूर्ण सेवा का व्यक्तिगत इतिहास पंडित जी तथा हम सब के लिए गौरवास्पद है। इतनी दीर्घ कालीन, अनथक, निष्काम हार्दिक लग्न से पूर्ण सेवा कोई साधारण बात नहीं। यूनिवर्सिटी के नियमानुसार वह ६५ वर्ष पर्यन्त सेवा कर सकते थे परन्तु कमेटी ने उन्हें २ वर्ष पूर्व ही मुक्त कर दिया जिस से कालज २ वर्ष के लिए उन की और अधिक सेवा से वंचित हुआ इस का जनता को शोक है।

पंडित जी अत्यन्त सफल प्रिंसिपल रहे हैं। उन की योग्यता सुप्रसिद्ध है। उनका ज्ञान तथा अध्ययन सुविस्तृत है। प्रत्येक विषय पर वह बोल तथा लिख सकते हैं। उनके व्याख्यान गम्भीर तथा दार्शनिक हुआ करते हैं। मनुष्यत्व में पंडित जी अत्यन्त सज्जन स्वभाव तथा सौम्य स्वभाव के व्यक्ति हैं। क्रोध कभी उन के निकट नहीं आता शान्त रहते हैं। प्रतिकार की भावना उन में नहीं। अनेक व्यक्तियों ने उनकी सरलता का अनुचित लाभ उठाया है। उनका सुप्रबन्ध इतना प्रशंसनीय था कि १८ वर्ष के उनके प्रिंसिपली के समय में कालेज में कोई हड़ताल नहीं हुई। विद्यार्थियों, प्राध्यापकों तथा जनता से उनका व्यवहार अत्यन्त सराहनीय था। उनके समय में कालेज ने अत्यधिक उन्नति की। ६००

जानना चाहिये। सत्य व्यवहार करना धर्मानुकूल है यह उत्तम है यह सत्य है, इस में सन्देह नहीं। पर धोखेबाज शत्रु अपना विश्वासघात कर रहा है, यह जानकर यदि हम उसको दूर करने के लिये वैसे ही कपट प्रयोग न करेंगे, तो हमारी हानि होगी, इस में संदेह ही नहीं अतः वेद कहता है—

मायिनां मायाः प्र अमिनाः—कपट प्रयोग करने वाले शत्रुओं को कपट प्रयोग से ही दूर करो। अपनी सुरक्षा होनी चाहिये, कदापि अपनी हानि नहीं होनी चाहिये। अपना पक्ष सच्चा होना चाहिये। ऐसी अवस्था में शत्रु का नाश हमें करना आवश्यक ही है।

यह बताने के लिए महाभारत युद्ध में भीष्म-पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण आदि के नाश के लिये भगवान् श्री कृष्ण ने कैसी युक्तियां की थीं इसका जरा सा विचार कीजिये तो आपको मालूम पड़ेगा कि कपटियों से कपट प्रयोग करके ही अपना रक्षण हो सकता है। सदा सर्वदा यही प्रयोग वैसे शत्रुओं से करने होते हैं जो कपटी शत्रु हैं।

स्वामी दयानन्द जी के प्रति

(ले० श्री राममूर्ति कालिया, एम० ए० नई दिल्ली)

तम चाहे हो परम्पराओं से, फिर भी वह,
रवि की प्रखर रश्मियों से तत्क्षण मिटता है,
आप्त पुरुष! इस का प्रमाण शतशः मन वे,
ओजमयी वाणी का दीप जहां जलता है।

भारत की सांस्कृतिक नाव जब डोल उठी थी,
उस को खेने महापुरुष, पतवार बन गये,
शव-पाखण्ड दहन हेतु, सूखे ईंधन तुम,
संतप्त-मना विधवा हित, रसधार बन गये।

जीवन दीप जलाकर, तम हरण किया तुम ने,
वेदों का करके निनाद, मार्ग दर्शाया,
ऋषिवर! तेरे कृतज्ञ हैं भारतवासी,
स्वतन्त्रता का पाठ जिन्हें था पुनः पढ़ाया।

स्वकीयता अम्बुज पर तुम भ्रमर बने थे,
निर्भीकता गुंजरित हुई तेरे विचरण में,
कोटि-कोटि अभिनन्दन मेरा, हे साधुवर!
आर्यत्व का पाठ पढ़ें, तेरे विवरण से।

सिद्धान्त इतने अत्याचारों की अग्नि में भी कुन्दन की तरह अधिक प्रतिभा लिए हुए ही जन सामान्य के सामने आए। ऋषियों की तपस्या का फल सुफल हुआ करता है। मानव मन्तव्यों और ऋषि-मन्तव्यों में यही अन्तर है।

आज हमने उपर्युक्त इस सत्य तथ्य को समझाने में भूल की है। आज का मानव अधूरे, अपूर्ण तथा कथित वैज्ञानिकों को ही अपना सर्वस्व समझ उन्हें Progressive प्रगति वादी नाम देकर प्राचीन ऋषियों, या संतों के वचनों को निस्सार मान बैठा है। आज मानव जीवन का निर्माता ग्रन्थ "मनुस्मृति" एक "रूढ़ीवादी" ग्रन्थ कहा जाने के कारण त्याज्य वस्तु बन गया है। कैसी विषैली प्रगतिशील विडम्बना आज के मानव के गले का सांप बन गई है। भला जिस युग में सोने, उठने, बैठने, चलने, खाने, विद्या और तप आदि के नियम ही नहीं रहे, उसे हम 'प्रगति' का नाम देसकते हैं।

मुनि आपस्तम्ब ने अपने धर्म सूत्र में लिखा है—

'तस्माद् ऋषयोऽवरेषु न जायन्ते।
नियमातिक्रमात्'। १।२।५।४॥

आज ऋषि नहीं हो रहे क्यों? नियमों का उच्छेद हो जाने से।

प्रगतिशीलता का अज्ञान युक्त वाद ही आज संसार के अनेक दु:खों का और वर्तमान राजनीति के विकृत होने का मुख्य कारण है। आज कपिल जैसे सांख्याचार्य। बृहस्पति, इन्द्र, भारद्वाज और शाकटायन जैसे महान व्याकरणचार्य। धन्वन्तरि, औरभ, अग्निवेश, भोज, आत्रेय, विश्वामित्र जैसे आयुर्वेदाचार्य। कश्यप, पराशर, गर्ग जैसे ज्योतिषाचार्य, संसार में निर्मित नहीं हो रहे क्या यही विकास वाद या प्रगतिवाद का विषैला सर्प इन शुभ लक्षणों को खाने वाला नहीं है? यदि सांख्य ज्ञान पुनः प्रचलित हो गया, तो वर्तमान थोथा विकासवाद संसार में जीवित ही न रह सकेगा। सांख्य के विषय में अमेरिका के संस्कृताध्यापक ए०, डबल्यू, राईडर लिखते हैं कि पूर्व और पश्चिम के फिलासफी के सब मतों में से सांख्य का वाद सत्य के अधिक निकट है।'

"Nearer to the truth than any philosophy Eastern or Western"

इसी प्रगतिशीलता या 'मार्क्स के सहोदर भाइयों' का प्रभाव, राजनीति, समाजनीति, परिवार-नीति. व्यक्तिगत नीति सभी को अपने जंजाल, कुजाल में फांसे हुए हैं। इसी की रट संसार के बड़े बड़े कर्णधार सदा लगाते हैं और जनता को भ्रष्ट कर रहे हैं।

इसी प्रगतिशीलता के नाद ने भारत में भी एक अद्भुत तरंग उत्पन्न की है। यह तरंग है प्राचीनता से शत्रुता। आज के प्रगतिशील साहित्य की दृष्टि में प्राचीन नारी, प्राचीन पुरुष मूर्ख थे। प्राचीन धर्म, कर्म सभी संकुचित संस्कृति के प्रचारक थे। आज जो Composite Culture का प्रगतिशील नारा उदारतापूर्वक लगाया गया है वही भारतीय संस्कृति का मूलमन्त्र है। इसी प्रकार की संस्कृति का प्रचार आज के नेताओं का लक्ष्य है। पं० जवाहरलाल जी ने लिखा है। Behind the Rig-veda it self lay ages of civilized existence and thought, during which the indus valley and the Mesopotamian and other civilisations had grown

भारतीय संस्कृति की रक्षा राष्ट्र-रक्षा है

(लेखक--प्रो॰ वेदीराम शर्मा एम॰ ए॰ अध्यक्ष प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब)

वर्तमान वैज्ञानिक युग में, स्वामी दयानन्द जी महाराज का प्रादुर्भाव, ईश्वर की महान कृपा ही कही जावेगी। चारों ओर स्वार्थान्धता का बवण्डर धू धू कर मानव जाति को खा रहा था। मानव के रक्त का प्यासा तड़पता फिर रहा था। ईश्वरीय ज्ञान तिरोहित हो चुका था। ऐसे विकट समय मे महाराज का आगमन प्राणी मात्र के लिए अमृत स्वरूप ही सिद्ध हुआ। स्वामी जी ऋषि नहीं महर्षि थे। ऋषि त्रिकाल दृष्टा होता है। वह भूत को जानकर वर्तमान को समझ कर, मानव कल्याणार्थ भविष्य के लिए सिद्धान्त निश्चित करता है।

ईसा मूसा और मोहम्मद के अनुयायियों ने अपने नेताओं को Prophet या पैगम्बर कहा है। पैगम्बर पैगाम लाने वाला है वह पैगाम ईश्वर का हो या स्वकल्पना का, किंतु वह केवल सन्देश वाहक ही कहा जाएगा। इसी प्रकार Prophet भी केवल Prophocy ही करता है। Prophocy या भविष्यवाणी अपनी बुद्धि या कल्पना जनन ही हुआ करती है। इन सब की तुलना में ऋषि त्रिकाल दृष्टा होने से अलौकिक महापुरुष होता है। स्वामी दयानन्द जी महाराज में वही अलौकिक प्रतिभा थी। इसी प्रतिभा सम्पन्न ज्योति से उन्होंने विश्व को ज्योतित कर दिया। अज्ञान के अन्धे लोगों को आंखें दीं, नास्तिक, आस्तिक बन गए। सत्पथ से भ्रमित लोगों को मार्ग मिला। ज्ञान पिपासुओं को अमृत मिला, जिज्ञासुओं की जिज्ञासा शान्त हुई। यह थी ऋषि की अलौकिक ज्ञान प्रतिभा दूसरे सभी Prophets, पैगम्बर या नेताओं को वर्तमान का तो ज्ञान हो सकता है और उसी के आधार पर वे भविष्य निर्माण का अनुमान भी कर सकते हैं किन्तु अपने या संसार के भूत Past का ज्ञान उन्हें नहीं हो सका। यही कारण है कि सृष्टि विद्या या मानव उत्पत्ति के सम्बन्ध में उनके विचार वर्तमान विज्ञान की जरा सी भी चोट सहन न कर सके। अपने दोषों को छिपानेके लिए उन्होंने अपने विरोधियों पर अनन्त अत्याचार किये किंतु सत्य अमृत है। वह मारने से नही मरता। अत्याचार से उसका नाश नहीं होता। वेद के सत्य

वह स्वयं किसी पर आक्रमण नहीं करता। परन्तु यदि कोई उस पर आक्रमण करे तो वह गांडीव धारी अर्जुन बन जाता है और उस के कानों में भगवान कृष्ण का गीता का उपदेश गूंजने लगता है। भारत की अहिंसा कायर की अहिंसा नहीं है।

आओ आर्य वीरो! हम अपने गुरु महर्षि दयानन्द की आवाज को सुनें और संकट के समय अपने प्यारे देश के लिये सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार हो जावें। हम संसार को बता देवें कि हम दयानन्द के सच्चे सिपाही हैं। हम देश के लिये जीना भी जानते हैं और मरना भी। हम इस देश के हैं और यह देश हमारा है। हम खून की होली खेल जावेंगे परन्तु भारत माता के पाओं में फिर से परतन्त्रता की बेड़ियां नहीं पड़ने देंगे।

के चरणों में बैठ कर जिज्ञासु, मूलशंकर ने पेट भर इस अमृत का पान किया और अपनी धधकती प्यास को शान्त किया। इस ज्ञानामृत पान ने मूलशंकर को देव दयानन्द बना दिया।

दयानन्द के हृदय में दया का स्रोत्र बहने लगा। भारतवासियों को दुखित तथा अज्ञानता और जहालत में जकड़े देख उनका कोमल हृदय द्रवित हो पुकार उठा "मनुष्य को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रह कर सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।" जिस ज्ञानामृत के पान से उनकी प्यास बुझी थी वह उस अमृत का स्वाद सब को चखाना चाहते थे। वह समस्त संसार को अपने साथ उन्नति के पथ पर ले जाना चाहते थे।

जब ऋषिवर दयानन्द गुरु विरजानन्द की कुटिया से पठन-पाठन समाप्त कर बाहर निकले तो उन के हाथ में ओ३म् की पाखण्ड खन्डिनी प ाका थी और हृदय में समस्त ससार के उद्धार का दृढ़ निश्चय। प्रभु के अतिरिक्त उन का कोई सहायक व साथी नहीं था। जिस के साथ प्रभु हो उस को किसी और साथी व सहायक की आवश्यकता भी तो नहीं होती। निर्भीक दयानन्द अकेले एक ओर थे। समस्त संसार दूसरी ओर। उस समय सब उन के विरुद्ध थे और उन के शत्रु हो रहे थे क्योंकि स्वामी जी ने एक ईश्वर और एक ओ३म् का नारा लगाया था। उन्होंने बताया था कि केवल मन्दिर और मसजिद ही भगवान के घर नहीं हैं। ईश्वर तो सर्व व्यापक है और घर घर में रम रहा है। उस को पाने के लिये चौथे व सातवें आसमान पर जाने की आवश्यकता नहीं है। न ही उस को मिलने के लिये किसी दलाल व वकील की आवश्कता है। उन्हों ने यह भी समझाया था कि मनुष्य को अपने कर्मों के अनुसार नरक व स्वर्ग इसी संसार में मिल जाते हैं। नरक व स्वर्ग का कोई अलग स्थान नहीं है।

ऋषि दयानान्द भारत मे फैले अज्ञानता के अन्धकार को दूर करने के साथ भारत माता के पाओं में पड़ी पराधीनता की बेड़िओं को भी तोड़ना चाहते थे। कांग्रेस की स्थापना से लग भग पच्चास वर्ष पूर्व सर्व प्रथम उन्होंने ही भारत वासियों के सम्मुख पूर्ण स्वराज्य का ध्येय रक्खा था और उन को यह पाठ पढ़ाया था कि स्वदेशी राज्य बुरा भी हो तो भी वह अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य से अच्छा है। देश की एकता के लिये उन्होंने कहा था कि समूचे। भारत वर्ष में एक भाषा होनी चाहिये। इस के लिये उन्हों ने हिन्दी भाषा को देवनागरी लिपि में अपनाया था। गुजराती होते हुए भी उन्होंने अपने ग्रन्थ हिन्दी में लिखे थे। वह चाहते थे कि भारतवासियों के शरीर ब्रह्मचर्य बल से लोहे की तरह मजबूत हों। उन में आत्मिक तथा मानसिक शक्ति इतना प्रबल हो कि शत्रु उन की ओर आंख तक उठा कर न देख सके।

आज चीन ने हमारे साथ मित्र-घात किया है। चीन मुख से पंचशील का मन्त्र जपता रहा और हिन्दी-चीनी भाई भाई का नारा लगाता रहा परन्तु बगल में वह हमारे लिये छुरी छिपाए रहा। आज चीन अपने असली स्वरूप में हमारे सम्मुख आ गया है। ऐसे संकट समय में गुरुवर ऋषि दयानन्द की आत्मा मोक्ष धाम से हमें आह्वान कर रही है। उठो। आयो जागो। निन्द्रा तथा आलस्य त्याग कर संसार को बता दो कि तुम किस मिट्टी के बने हो। भारत अहिंसा-वादी है।

शिवरात्री का महा पर्व

(ले०—प्रिंसिपल विद्यावती जी आनन्द हंसराज महिला कालेज जालन्धर)

शिवरात्री का पर्व लगभग समूचे भारतवर्ष में मनाया जाता है। इस दिन भक्त जन उपवास रखते हैं और रात्रीको जागरण करके भगवान शिव की पूजा अर्चना करते हैं। भक्त जन दुष्टों के नाशक तथा दुःख भञ्जन भगवान शिव के चरणों में प्रार्थना करते हैं कि शिव जी महाराज उन के सङ्कटों को निवारण करें तथा उनकी मनोकामनाओं को पूर्ण करें।

आज से लगभग १२५ वर्ष पूर्व इसी शिवरात्री वाले दिन टङ्कारा में १३ वर्षीय बालक मूल शङ्कर ने दिन भर उपवास किया था। रात्री को वह अपने पिता तथा दूसरे भक्त जनों के साथ हृदय में एक सङ्कल्प लिए शिव-मन्दिर में जागरण करने गया था। उसकी मनोकामना थी कि सच्चे शिवके दर्शन हों। उस रात्री को उस मन्दिर में मूल जी को सच्चे शिवके दर्शन तो न हो पाए थे परन्तु वहां एक घटना ऐसी घटी थी कि जिसने उसे सच्चे शिव के दर्शन करने का मार्ग बता दिया था। मूलशंकर की आंखों ने देखा कि शिवजी की मूर्तिके ऊपर एक चूहा उछल कूद रहा है और शिव जी को लगाया भोग खा रहा है। यह देख नन्हें मूलजी के हृदय में यह प्रश्न उठा था कि क्या यह शिव की मूर्ति जो अपने ऊपर से चूहे को नहीं हटा सकती सारे विश्व का रक्षण तथा पालन पोषण कैसे कर सकतीहै। उसके मनकी कसौटी ने ही "नहीं" में उत्तर भी दे दिया था। इस घटना से मूलशंकर के हृदय में एक [illegible]। [illegible] जाग[illegible] थी। उस के निष्कपट निश्चल हृदय की उर्वर भूमि में एक बीज जड़ पकड़ गया था। पिता की झिड़कियां, माता का स्नेह तथा सगे सम्बन्धियों की दलीलें उस के हृदय से इस बीज को नहीं उखाड़ सकीं थीं। यह बीज मूल जी के हृदय में अनुकूल वातावरण पाकर पनपने लगाथा। थोड़े ही समयमें इस में से अंकुर फूट पड़ा था। धीरे धीरे इस अंकुर ने पौधे का रूप धारण कर लिया था। और इस ने मूल शंकर की सच्चे शिव-दर्शन की प्यास को उसके लिए असहय बना दिया था। एक रात्री के घने अन्धकार में मूल जी अपनी इस प्यास को बुझाने के लिये घर के सब सुख और आराम छोड़कर निकल पड़े थे।

बहुत भटकने पर भी मूल शंकर को वह सरोवर न मिला जहां वह अपनी प्यास बुझा सकते। प्यास शान्त होने के स्थान पर बढ़ती ही जाती थी। जहां भी वह सरोवर समझ कर अपनी प्यास बुझाने गये वहीं उन्हें ज्ञात हुआ कि जिस को वह अमृत का सरोवर समझते थे वह तो रूखी रेत का ढेर था। कहीं सरोवर मिल भी गया तो जाने पर अनुभव हुआ कि कई किस्म की मिलावट के कारण उसका जल गन्दला था तथा सच्चे शिव-दर्शन के प्यासे व्यक्ति के पीने के योग्य नहीं था। अन्त में वर्षों भर भटकने के बाद उन को गुरू विरजानन्द की कुटिया में सच्चे ज्ञानामृत से भरा सरोवर मिल गया। उस कुटिया में प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द

अर्थात् ऋग्वेद से पूर्व सभ्यता और विचार के अनेक युग थे। उनमें सिन्धु घाटी की सभ्यता और मैसोपोटेमिया आदि की सभ्यताएं वृद्धि को प्राप्त हुई थीं।

इसी प्रकार के विचार श्री के० एम० मुन्शी जी ने अपने इतिहास में लिखे हैं—It has been generally admitted, particularly after a study of both the basis of Dravidian and Aryan culture through language and through institutions, that the Dravidians contributed a great meny elements of paramownt importance in the evolution of Hindu civilization, which is after all (like all other great civilijations) a composite creation.

अर्थात् आर्य संस्कृति एक मिश्रण का परिणाम है।

अभी कुछ समय पूर्व कलकत्ता विश्वविद्यालय के अध्यापक श्री सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय ने बंगाल 'एशियाटिक सोसाइटी के जनरल सन् १९५०, भाग १६, संख्या १, में पृष्ठ ७३ से इस विषय पर एक लेख लिखा—'Ancient Indian Civilization A Composite Thing.' इसमें उन्होंने सिद्ध किया है कि वेद में दूसरी भाषाओं के शब्द और दूसरी संस्कृतियों के प्रभाव हैं।

इसी प्रकार एक ग्रन्थ Religious of India, अध्यापक कर्मरकर लिखित १९५० में प्रकाशित हुआ। उसमें श्री आर० आर० दिवाकर जी ने प्राक्कथन लिखा है कि वेद से पूर्व अन्य संस्कृतियां थीं और कोई Prehistoric काल भी था।

श्री रामधारी सिंह जी- दिनकर ने तो एक बहुत बड़ा ग्रन्थ 'संस्कृति के चार अध्याय' लिख कर सिद्ध ही कर दिखाया है कि भारतीय संस्कृति शक, कुशान, हूण, मुसलमान, अंग्रेजों की संस्कृतियों का मिश्रण है। न भारत में कभी एक संस्कृति रही और न आगे रहेगी।

यह है आज की प्रगतिशीलता। आज के नवयुवक को इसी प्रकार की शिक्षा से शिक्षित किया जा रहा है। हम इसे प्रगति का नाम दें या दुर्गति का ? आर्य सिद्धांत निश्चित है कि संस्कृति एक है और वह है वेद की संस्कृति। यही संस्कृति आदिकाल से अबाध गति से चली आई है। किन्तु ऐसी शिक्षा—दयानन्द के आर्यसमाज के अतिरिक्त देगा कौन ? आओ ! उठो प्यारे ऋषि के पावन जन्म-बोध दिवस पर हम प्रतिज्ञा करें कि प्राचीन वैदिक संस्कृति की रक्षा में ही हमारे राष्ट्र की रक्षा है। उसी के लिए जीएंगे उसी के लिए मरेंगे। यह भावना एक ऋषि की है। महर्षि दयानन्द की है।

****

इसे अवश्य पढ़िए

आर्यजगत के प्रेमी पाठकों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन है कि प्रस्तुत विशेषांक १०, १७, और ११ फरवरी के संख्या ६, ७, ८ का सम्मिलित अंक है। इससे अगला अंक ३ मार्च को प्रकाशित होगा। पाठक नोट करलें।

—व्यवस्थापक

****

आधुनिक भारत के निर्माता

महर्षि दयानन्द सरस्वती

[प्रो० वेदप्रकाश जी एम० ए० इंगलिश-हिन्दी) डी. ए. वी. कालेज जालन्धर]

महर्षि दयानन्द का आविर्भाव एक ऐसे समय में हुआ जब कि यह देश दासता की शृंखलाओं से जकड़ा हुआ था। हिन्दु न केवल अपनी प्राचीन सभ्यता को भूल चुके थे अपितु अज्ञान और भ्रम के शिकार भी हो चुके थे। इस महान् सुधारक के सामने एक कठिन कार्य था। दृढ़ निश्चय और अडिग धैर्य के साथ उन्होंने कठोर तथा तीव्र विरोध के होते हुए भी उन सामाजिक कुरीतियों के के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा किया। उन्होंने आदेश दिया कि मानव जाति का कल्याण अपने जीवन को वेद मार्ग पर लाने में है। वे हिन्दू समाज को ऊपर से नहीं उसके आधार से सुधारना चाहते थे। उनके विचार में हिन्दू समाज की सब सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक खराबियों का एक-मात्र इलाज वैदिक आदर्शों का अनुपालन ही है।

महर्षि दयानन्द ने अपने आप को कोई दिव्य व्यक्ति घोषित नहीं किया। वे गुरुडम के निर्भीक विरोधी थे। वे प्राचीन वैदिक धर्म के व्याख्याता होने में ही सन्तोष प्राप्त करते थे। उन्हें किसी मत का शिलान्यास करने की भी महत्वाकांक्षा न थी। उन्होंने आर्यसमाज का संरक्षक कहलाना भी स्वीकार नहीं किया था। उन्होंने अपना नाम आर्यसमाज के साधारण सदस्यों में ही लिखवाया था।

जिस बात को वे असत्य और पाखण्ड समझते थे उसका वे तीव्र खण्डन करते थे। कपट, छल और आडम्बर को वे एक क्षण के लिए भी सहन करने को तैयार न थे। वे सत्य, न्याय और स्वतन्त्रता के सबल सहायक थे। अपने सत्य पर आधारित उपदेशों द्वारा उन्होंने हिन्दुओं को अनेकानेक भ्रमों, कुविश्वासों, तथा स्वार्थी धर्म-पोपों से निवृत्ति दिलवाई।

आज कई अदूरदर्शी लोग ऋषि दयानन्द को एक पुराने ढंग का सुधारक समझते हैं और आर्यसमाज को ऐसी सुधारक संस्था घोषित करते हैं जिसके पल्लू में अब कुछ भी नहीं रहा। उनके विचार में अब देव दयानन्द और उसके चलाये आन्दोलन की कोई आवश्यकता नहीं रही क्योंकि उन्होंने जो कुछ सुधार करने चाहे थे उन में से बहुत से हो चुके हैं। भारत स्वतन्त्र हो गया है। हिन्दी को भारत की राष्ट्र भाषा मान लिया गया है। छुआ-छूत को समाप्त कर दिया गया है। बाल्य-विवाह का रिवाज समाप्त हो गया है। विधवा विवाह को वैधानिक रूप दिया गया है। अनाथालय स्थापित हो चुके हैं। शुद्धि कुछ राजनैतिक दलों को मान्य हो चुकी है। शिक्षा का विस्तार हो रहा है और लोग पौराणिक विचारों के भ्रम-जाल से मुक्त हो रहे हैं। अब वर्ण जन्म से नहीं अपितु

कर्म से माना जाने लगा है। महिलायें उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रही हैं। परन्तु ये लोग भूलते हैं कि गुरुदेव दयानन्द का सन्देश सनातन है और उनकी आर्य समाज का कार्य अभी समाप्त नहीं हुआ। जब तक हिन्दू जगत वेदों के अमर सत्य को समस्त मानव जाति के सामने रखने का बीड़ा नहीं उठाता, आर्यसमाज का कार्य शिथिल नहीं होना चाहिये। यदि हम इस नक्षत्र पर अमर शान्ति को स्थापित करने के अपने स्वप्न को सार्थक करना चाहते हैं तो हमें महर्षि दयानन्द के मार्ग का अनुसरण करते हुए वैदिक धर्म का प्रचार ससार के कोने कोने में करना होगा।

एक महान् धार्मिक नेता होते हुए भी ऋषि दयानन्द अपने अन्तस्तल की गहराईयों से एक देश भक्त और राष्ट्र-भक्त थे। सब से पहले स्वराज्य-प्राप्ति का आदर्श उन्होंने ही हमारे सामने रखा था, उन्हें पता था कि ब्रिटिश-साम्राज्य हिन्दू जनता के लिये विनाश-कारी सिद्ध हो सकता है। यदि हमें कहा जाय कि किसी एक महापुरुष की ओर इशारा करो जो कि सच्चे अर्थों में आधुनिक भारत का निर्माता है तो निस्सन्देह हमारा हाथ ऋषि दयानन्द की ओर ही मुड़ेगा। ऐतिहासिक काल में भारत ने तीन महापुरुष उत्पन्न किये हैं—बुद्ध, शंकर और दयानन्द। इन महापुरुषों मे से केवल देव दयानन्द को ही यह श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने समाज की उन्नति के मार्ग में कण्टक बनकर खड़ी हुई पुरानी कुरीतियों को जड़ से उखाड़ बाहर किया।

महर्षि दयानन्द की स्मृति उनके शिष्यों के कन्धों पर वैदिक सभ्यता के पुनुर्त्थान की कठोर जिम्मेदारी डालती है। अब भी समय है कि हम अपने कर्त्तव्य को पहचानें और न केवल वेद-वाणी के आदेशों को अपने जीवन में उतारें अपितु उन लोगों को भी जो कि दुर्भाग्य-वश हमारे समाज से बाहर पड़े हैं इस दिव्य अमृत का पान करायें। दयानन्द का धार्मिक-उत्साह, वाग्शक्ति, सत्य-प्रियता, दृढ़-निश्चय आदिग धैर्य, उदारता, ज्ञान, प्रतिभा तथा हिन्दू धर्म का संरक्षण उन आर्यों की पक्की निशानी होनी चाहिये जो कि अपने आपको दयानन्द का शिष्य कहलाने में गौरव मानते हैं। अपने अन्दर इन गुणों को उतार कर और वेदों के आदेश का पालन करके हम महर्षि के प्रति अपने कर्त्तव्य को कर सकते हैं और अपने आपको उस महान् कर्म-योगी के शिष्य कहलाने के योग्य बना सकते हैं।

आर्यजगत् के स्नेही पाठकों से

आर्यजगत सभा का साप्ताहिक मुखपत्र है। पत्र धर्म प्रचार में कितना सहायक होता है, यह तो सब को विदित ही है। सभा अपने साप्ताहिक पत्र द्वारा संन्यासी महात्माओं, समाज के पुराने अनुभवी नेताओं, विद्वानों कवि महोदयों तथा युवक भाई बहिनों को जीवन देने वाले आध्यात्मिक, राष्ट्रीय, एवं सामाजिक लेखों या कविताओं से धर्म प्रचार कर रही है। यत्न होता है कि प्रति सप्ताह दो तीन मननशील सज्जनों के लेख अवश्य पाठकों की सेवा में पहुंचाए जाएं। सभा की प्रचार सम्बन्धी सूचनाएं भी होती हैं। सभा अपने कर्त्तव्य को सदा से निभाती चली आरही है। सब लेखक सज्जनों की 'जगत पर अनुम्पा का आभार प्रदर्शन करते हुए जनता से प्रार्थना करते हैं कि आर्य जगत को अधिक से अधिक प्यारा बनाने का यत्न करेंगे। ग्राहक बनाकर सहयोग देंगे। अपने अमूल्य सुझाव भी देते रहेंगे।

—सम्पादक

सदा जागते रहो

(ले० श्री बृजलाल जी गुप्त प्रधान आर्यसमाज टोहाना)

सम्बत १८६४ की शिवरात्री को शिवमन्दिर में जबकि सारे भक्त निद्रा देवी की गोद में आनन्द ले रहे थे, अकेले बालक दयानन्द बार २ अपनी आंखों पर जल के छींटे देकर जागते रहने का प्रयत्न कर रहे थे। मानो वह कठोपनिषद् के आदेश –'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधित (उठो, जागो, इष्ट इच्छाओं को प्राप्त होकर जानो)' पर अमल कर रहे थे। तभी उन्होंने देखा कि एक चूहा शिवजी की मूर्ति पर चढ़कर फल आदि खा रहा हैं। बालक दयानन्द यह देखकर चकित रह गये। उन्हें तुरन्त विचार आया कि जो शिव एक चूहे को अपमान करने से नहीं हटा सकता वह कभी भी सच्चा शिव नहीं हो सकता। उसी दिन से दृढ़ निश्चय किया कि मै सच्चे शिव की खोज करूंगा। जो मनुष्य जीवन सग्राम में सफलता प्राप्त करना चाहते है, उन्हें हमेशा जागते रहना चाहिए अर्थात् सदा सावधान रहना चाहिये।

ऋषि दयानन्द ने सच्चे शिव की खोज के लिए बड़े २ कष्ट सहे। घर बार छोड़ा, माता-पिता, भाई बहन सगे सम्बन्धियों के मोह को त्याग कर जंगलों की खाक छानी। जगह २ मठों, मन्दिरो में गये। बड़े २ साधु महात्माओं के आश्रमों में पहुंचे परन्तु कहीं भी मनो कामना पूरी न हुई। अन्त में मथुरामें गुरु विरजानन्द की कुटिया में पहुंचे और शिक्षा की समाप्ति पर उनका आदेश लेकर देश और जाति के उद्धार में लग गये।

देव दयानन्द बड़ी से बड़ी मुसीबत में भी नहीं घबराये। उनकी आंखों में प्यारे चाचा की मृत्यु पर आंसु नहीं आये। उन्होंने अपनी प्यारी बहन के निधन पर भी शोक नहीं मनाया। उन्होंने तीव्र से तीव्र विष देने पर असह्य वेदना में भी मुंह से हाय नहीं की परन्तु वही दयानन्द एक देवी की दीन दशा को देखकर, जिस के पास अपने इकलोते लाल के शव को ढांपने के लिए एक गज कफन भी नहीं था, फूट २ रोने लगे। देश की दुर्दशा पर कितनी ही बार रात्री को आंसू बहाया करते थे। ऋषि दयानन्द अठारह २ घण्टे की समाधी लगाने की क्षमता रखते थे परन्तु उन्होंने समाधि के आनन्द को छोड़ कर दीन दुखियों की दशा सुधारने को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। ऐसे दयालु महात्मा के मुख से ही किसी कवि ने यह शब्द कहलवाये हैं :—

न त्वहंकामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःख तप्तानां प्राणिना मार्ति नाशनम्॥

अर्थात् मुझे राज्य नहीं चाहिये, न स्वर्ग और न मोक्ष, मैं तो केवल यही चाहता हूं कि दुःखियों पीड़ितों के कष्टों को दूर कर सकूं।

प्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द जी को एक बार उनके किसी संन्यासी मित्र ने उनसे कहा कि 'पहिले भक्ति द्वारा परमात्मा की खोज करो, संसार में भलाई करना एक भ्रम

है' इस पर स्वामी जी झट बोल उठे 'तुम्हारी भक्ति और मुक्ति की कौन परवाह करता है। मैं बड़ी प्रसन्नता से हजार बार नरक मे जाने के लिए तैयार हूं। यदि अज्ञान और अन्धकार में डूबे हुए अपने देश अपने देशवासियों को उनके पांव पर खड़ा करके उनके जीवन में कर्मयोग की आत्मा फूंक सकूं। जीवन एक संग्राम है और मै युद्ध करते हुए मरना चाहता हूं।' इसी प्रकार देव दयानन्द ने भी मुक्ति प्राप्ति की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया बल्कि वेद भानु से अज्ञान अन्धकार को दूर करने का निरन्तर प्रयत्न करते रहे। साथ ही देशवासियों के दुःख और कष्टों को दूर करने के लिए अपने जीवन तक का बलिदान दे दिया।

कुछ विद्वानों के मत के अनुसार शिव हमारा देश और पार्वती हमारी संस्कृति है। ऋषि दयानन्द ने इन दोनों की सेवा में ही अपना जीवन अर्पण कर दिया।

ऋषि दयानन्द

(कविवर श्री पं० हरबंस लाल जी मुजरिम दसूहा)

दयानन्द दुनियां दी अखा दा तारा
ऋषि मेरे भारत दा चानन मुनारा।
सच्चाई दा पुतला ते बातल दा दुश्मन,
ओ वेदां दा प्रेमी ते ईश्वर का प्यारा।
वतन दी आज़ादी दा पहला पैगम्बर,
आज़ादी दे मन्दिर दा पहला पुजारा।
यतीमां गरीबां अछूतां दा रक्षक,
मगर राजयां साथी कोरा करारा।
जो तूफान दा खौफ खांदी सी किश्ती,
एह उसी ही किश्ती दा बनया किनारा।
जिन्हें बादशाहत नूं ठोकर लगा के,
फकीरी दे विच आप कीता गुजारा।
जमाने दे संकट खुशी नाल हर लै,
गुरु विरजानन्द जी दा पाकै इशारा।
जमाने नूं आर्य बना देवां मै भी,
ऋषि वरगा जेकर मिले दिल उधारा।
मुबारक हैं नज़रां उन्हां दियां मुजरिम,
जिन्हां ने है डिठा ऋषि दा नज़ारा।

राष्ट्र-बोधक शिवरात्रि

(श्री प्रिंसिपल प्यारेलाल जी बेरी एम ए साईदास एंग्लो सं० हा० सै० स्कूल जालंधर)

पता नहीं कब से शिवपूजन की प्रथा चल रही थी और प्रतिवर्ष शिव के भक्त शिवरात्रि व्रत रखते थे और जागरण करते चले आ रहे थे किन्तु जो बात मूल शंकर को दयानन्द बना गई, वह किसी को न सूझी। बुद्धि पर अज्ञान और अन्धविश्वास का ऐसा पर्दा पड़ा हुआ था कि यद्यपि भक्त लोग शिवमूर्ति की जड़ता को मन में अनुभव करते थे किन्तु उस की असत्यता को प्रकट करते हुए झिझकते थे अर्थात उस पर अश्रद्धा प्रकट कर के अपने को नास्तिक कहलाना नहीं चाहते थे।

पर मूलशंकर का अन्धविश्वास पूर्ण वह जगराता पहला और अन्तिम सिद्ध हुआ। उस के अन्त करण ने ललकार कर कहा—यह मूर्ति सच्चा शिव नहीं हो सकती, यह तो शत प्रतिशत जड़ है, जब यह पतन चूहे तक को नहीं रोक सकती, तो हमारा कल्याण अथवा हमारे शत्रुओं का नाश

प्रभु परमात्मा ऋग्वेद १६।७१।१ में आदेश करते है 'आयु प्राणं प्रजां पशु कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्य दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्'। अर्थात् आयु प्राण, सन्तान पशु कीर्ति, धन, ब्रह्म तेज सब मुझे देकर मुक्ति को प्राप्त करो। वेद वाक्यनुसार मोक्ष का वही अधिकारी है जो कि सांसारिक वैभव ईश्वर के अर्पण करदे। ईश्वर के अमृत पुत्रों की इन चीजों से सहायता करना ही इन्हें ईश्वर अर्पण करना है। ईश्वर उन्हीं से प्यार करता है जो सब से प्यार करता है। इसी आशय को लेकर ही उर्दू के प्रसिद्ध कवि इकबाल ने कहा है —

खुदाके बन्दे हजारों लाखों बनों मे फिरते हैं मारे-मारे।
मै उसका बन्दा बनूंगा जिस को खुदा के बन्दों से प्यार होगा॥

एक पश्चिमी विद्वान ने भी तो कहा है —

He Prayeth best who loveth
best all things great and small

वही सच्ची भक्ति करता है जो कि छोटे बड़े सब से प्रेम करता है।

ऋषि दयानन्द ने तो न केवल छोटे बड़े सब से प्रेम किया बल्कि अपने घातक तक पर भी दया की और उस को दूर भाग जाने के लिये धन से सहायता की।

देव दयानन्द ने अपने देश की आत्मा मे ही सच्चे शिव के दर्शन किये और उसी की सेवा में अपने जीवन की आहुति दी। आज चीनी चूहों ने शिवजी की विशाल मूर्ति भारत वर्ष पर आक्रमण किया है हमें ऋषि दयानन्द की तरह जागते हुए रहना है और अपने अपमान का बदला लेना है। शिवरात्री का संदेश भी यही है:—

'सदा जागते रहो'

कैसे कर सकती है।'

यह विचार आते ही वह झट उठ खड़े हुए। अन्तःकरण की आवाज़ को दबाना महापुरुषों का लक्षण नहीं है, फिर यह आवाज़ तो ईश्वरीय प्रेरणा थी अतः मूलशंकर को सच्चे शिव की खोज में वह लगन लगी कि उन्होंने घर बार, सकल परिवार और मोहमाया में लिपटे संसार से सदा के लिये नाता तोड़ लिया और जब तक शंका का समाधान न मिला वह चैन से नहीं बैठे।

शिवरात्रि प्रतिवर्ष आती है, पर इस वर्ष वह समूचे राष्ट्र के लिये एक अनोखा संदेश ले कर आई है। यदि हम उतनी बुद्धि से भी काम लें कि जितनी उस समय बालक मूल शंकर प्रयोग में लाया था, तो राष्ट्र की आंखें सदा के लिये खुल जायें।

आज शिवभक्ति की हमें अत्यन्त आवश्यकता है। जिस प्रकार चेतन शिवभक्त कर्महीन हो कर शिव की जड़मूर्ति के सहारे बैठे रहते थे, और यही समझते थे कि वही हमारा कल्याण करेगी ठीक इस प्रकार समूचा राष्ट्र आज तक जड़ हिमालय को उत्तरी सीमा का रक्षक मान कर उस ओर से निश्चित बैठा रहा अर्थात् यही समझता रहा कि यह जड़ हिमालय हमारी रक्षा करेगा अतः हमें कुछ करने धरने की आवश्यकता नहीं।

किन्तु उस का परिणाम जो निकला करता है, वही परिणाम आज भी निकला अर्थात् जैसे जड़ मूर्ति पर चूहे चढ़ जाया करते हैं और खूब ऊधम मचाते हैं, ठीक उसी प्रकार हमारे जड़ रक्षक हिमालय पर चीनी चूहे चढ़ आये और उन्होंने वह ऊधम मचाया कि हमारी नींद हराम हो गई। हैरानी इस बात की है कि इस वैज्ञानिक युग में भी हम जड़ हिमालय पर पूरा भरोसा किये रहे अर्थात् यही समझते रहे कि यह जड़ हिमालय चेतन जनता की रक्षा करेगा किंतु इस अंधविश्वास का जो परिणाम निकला वह हमारे सामने है। सो अब हमारा कर्तव्य है कि जैसे शिवमूर्ति पर चढ़ने वाले चूहे की चेष्टा ने बालक मूलशंकर को सदा के लिये सजग कर दिया, उसी प्रकार चीनी चूहों की चेष्टाओं से हम भी सदा के लिये सजग हो जायें और जड़ हिमालय पर निर्भर न रह कर स्वयं राष्ट्ररक्षक बनें और अपने कर्तव्य को पहचानें, तभी हमारा बोधोत्सव मनाना सफल हो सकता है अन्यथा पर्व मनाने का ढोंग हमें रसातल को पहुंचा कर रहेगा।

—०—०—

वीर आर्य को उद्बोधन

ले०—श्री अमरसिंह जी आर्य पथिक 'अमर'

दुष्ट देश द्रोहियों को दर-दर मंगादे भीख,
दस्यु दानवों के दल दाल से दलेजा तू।
संकट में डालदे समग्र शत्रु सैनिकों को,
छेद-छेद छातियों को सेल ले सलेजा तू।

चीर चीर चीनियों के चार चार टूक करदे,
मार-मार मींड-मींड माटी में मलेजा तू।

आज 'अमर' आर्य अरि अनी में लगादे आग,
कपटियों कुचालियों के कादले कलेजा तू।

अविचल देवता दयानन्द

(ले० श्री. पं. रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर अमृतसर)

वेद परम पिता परमात्मा का अपना ज्ञान है जो न कभी पुराना होता है और न कभी मरता है। इस प्रकार संसार में समय समय पर अनेकों सभ्यताओं ने जन्म लिया, कुछ समय के लिए खूब चमकीं, परन्तु इस के पश्चात् समाप्त हो गईं और आज कोई उनका नाम लेने वाला भी दिखाई नहीं देता। परन्तु वेद का ज्ञान अरबों वर्षों से आज तक एक अटल सत्यता के रूप में ऐसे ही चमक रहा है जैसे भगवान के बनाये हुये सूर्य और चान्द। न जाने कितनी बार इस पर आपत्तियों के बादल छाये, परन्तु हर बार प्रभु की प्रेरणा से कोई विशेष शक्ति तथा दिव्य गुण सम्पन्न आत्मा अज्ञान और पाप का नाश एवं धर्म की स्थापना करने के लिए जन्म लेती रही। इस घोर कलियुग में जब वेद का स्थान कपोल कल्पित स्मृतियों, पुराणों और तन्त्र ग्रन्थों आदि ने ले लिया और वेद का नाम तक लेने वाला कोई दिखाई न देता था। यहां तक कि भारत वर्ष में वेद का पुस्तक मिलना अप्राप्य हो चुका था। पण्डित नील कण्ठ शास्त्री जैसे काशी के दिग्गज विद्वान् ईसाईयत के गढ़े में गिर रहे थे। उस समय महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म हुआ, जिन का समस्त जीवन और अन्त में मृत्यु भी वेद की रक्षा के निमित्त हुई। उन्होंने अपनी अपूर्व शक्ति और अनुपम योग्यता के साथ वेद विरोधी शक्तियों का सामना किया। ईंटों और पत्थरों की वर्षा तथा विष के प्याले उन्हें अपने मार्ग से विचलित न कर सके।

महर्षि दयानन्द वेद के मतवाले थे। वेद को भगवान् का आदेश मानते, इसपर चलना और संसार को चलाना अपना परम धर्म समझते थे। आन्धियां उठीं, तूफान आए, विरोधियों के ठाटें मारते हुए दरयाओं का सामना करना पड़ा परन्तु उनका पांव पीछे नहीं हटा। दु:ख-सुख, हानि-लाभ और अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों की परवाह न करते हुए महर्षि दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ते गये। उनके सामने एक ही लक्ष्य था :—

निन्दन्तु नीति निपुणाः यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ठम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथा प्रविचलन्ति पदं न धीरा ॥

सत्य और न्याय के मार्ग पर चलते हुए उन्हें कभी भय या शङ्का प्रतीत नहीं होती थी। बड़े से बड़े अंगरेज राज्याधिकारियों तथा राजाओंके सम्मुख पूरी निर्भीकता के साथ सत्यका मण्डन और असत्य का खण्डन करने को तयार रहते थे। वह यहां तक कह दिया करते थे कि दयानन्द के हाथों की उङ्गलियों को मोम बत्तियां बना कर जला दिया जाये और उन्हें तोप में गोले के स्थान पर रख कर उड़ा दिया जाये तब भी उस के मुंह से सत्य ही निकलेगा।

उन्हें काम क्रोध, लोभ, मोह और अहङ्कार पर

पूर्ण विजय प्राप्त थी। वह आजन्म अखण्ड ब्रह्मचारी रहे। विषय वासना के सम्बन्ध में उन्हें चिन्तन तक का अवकाश न था। धूर्त पापियों की प्रेरणा और प्रलोभन से एकान्त और निर्जन स्थान पर अपने समीप पहुंची हुई वेश्या को देख कर ऋषि ने जिस पवित्रता के साथ उसे माता के शब्द से सम्बोधन किया, उस से वेश्या के जीवन के पाप धुल गए। उन्हें गालियां देने वालों तथा पत्थर मारने वालों पर भी क्रोध नहीं आता था अपितु उन्हें फल मिठाई दिया करते और उनके लिए प्रभु से सद्बुद्धि की प्रार्थना किया करते थे। पैत्रिक सम्पत्ति त्याग कर तो वह घर से निकले ही थे। इसके पश्चात् अनेकों गद्दियों और मठों का प्रलोभन, यहां तक कि महाराणा उदयपुर की ओर प्रस्तुत उनके विशाल राज्य मन्दिर तथा उससे सम्बन्धित लाखों रुपयों की सम्पत्ति भी ऋषि को अपनी ओर आकर्षित न कर सकी। मोह को वह बाल्यपन से ही लात मार कर निकले थे। संसार के किसी भी व्यक्ति अथवा वस्तु से वह मोह ग्रस्त न हो सके। वैदिक धर्म के प्रचारार्थ उन्होंने विद्यालय खोले परन्तु जब देखा कि वे वेद प्रचार में सहायक सिद्ध नहीं हो रहे तो उन्हें तुरन्त तोड़ दिया। काश ! आर्यसमाज के प्रचार के लक्ष्य से और ऋषि के नाम पर स्थापित किए गए आधुनिक स्कूलों, कालिजों एवं गुरुकुलों के संचालक भी इससे शिक्षा प्राप्त करते हुए इन संस्थाओं को वास्तविक रूप में वेदप्रचार का साधन बनाने का हार्दिक प्रयास करें। अहङ्कार का उनमें नाम तक न था। विद्या का गम्भीर सागर होते हुए भी एक बार एक बालक के कहने पर अपने उच्चारण की अशुद्धि को स्वीकार कर लिया।

शिवरात्री के पवित्र अवसर पर महर्षि ने सच्चे शिव की प्राप्ति तथा संसार के उत्थान का दृढ़ व्रत लिया था। संसार साक्षी है कि कितने कठोर तप और त्याग एवं घोर आपत्तियों को सहन करते हुए अपनी परीक्षा में पूरे उतरे। दयानन्द की जय के नारे लगाने वाले और अपने आप को ऋषि का अनुयाई कहलवाने वाले आर्य वीरों को सच्चे हृदय से देखना होगा कि जिस महान कार्य के लिये महर्षि ने समस्त जीवन की आहुति देने के पश्चात् हमारे सपुर्द किया था, हम उसे आगे लेप जा सके हैं अथवा पीछे।

भगवान् की कृपा से आर्य समाज के पास हर प्रकार की शक्ति मौजूद है। विद्वानों की कमी नहीं, धनवानों की कमी नहीं। आर्यसमाजों तथा आर्य संस्थाओं में जितने त्यागी और तपस्वी कार्य कर्ता आज दिखाई दे रहे है, शायद ही किसी और जगह मिले। देश और धर्म पर सर कटाने वाले और हंसते हुए सीनों में गोलियां खाने वाले युवक आज भी ऋषि की सेना में पर्याप्त संख्या में विद्यमान हैं। इसपर भी आर्यसमाज में शिथिलता है। तो क्यों ? इसका एक ही कारण हो सकता है कि हम अपने लक्ष्य को भुला चुके हैं। आर्य नेताओं को इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए और अपनी शक्तियों का सदुपयोग करते हुए महर्षि के काम को पूरे वेग से आगे ले जाकर अपने आपको सच्चे ऋषि भक्त सिद्ध करना चाहिये।

—o—o—

'ऋषिवर से मैंने क्या सीखा'

(ले० .-कविराज राम सिह वैद्य आरोग्य मन्दिर यमुना नगर)

ओम् विश्वानि देव सवितर् दुरितानि परासुव यद् भद्र तन्न आसुव ।

हे ! परम पिता परमात्मा आप सब को पैदा वाले हमारे परम पूजनीय देव हैं। हम आप से प्रार्थना करते हैं कि हमारे सब दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुराचार और दुष्ट विचारों को हमारे जीवन से दूर करो और जो उत्तम भाव सर्वश्रेष्ठ भाव हैं वह हमारे जीवन में भरपूर कर दो !

इन भावनाओं से युक्त यह उक्त 'वेद मंत्र' महर्षि दयानन्द जी को बहुत प्यारा था। इस बात का अनुमान हमें उनके लिखे ग्रन्थों तथा उनके अन्य साहित्यों को पढ़ने से लगता हैं। क्योंकि उन की लिखी हर रचना के आरम्भ में यह मंत्र अवश्य लिखा हुआ मिलता हैं।

अपने प्रचार काल में वह जब कभी भी अपना व्याख्यान देना आरम्भ करते थे तो इस वेद मंत्र का उच्चारण अवश्य किया करते थे। यह अनुमान भी उन के द्वारा दिए गए उपलब्ध भाषणों को पढ़ने से लगाता हैं।

यह मत्र उस युग प्रवर्तक, प्रकाश स्तम्भ, ईश्वर के पूर्ण विश्वासी भक्त, वेद विद्या के परम श्रद्धालु, प्राचीन वैदिक सस्कृति के पुनरोद्धारक और मानव मात्र के सच्चे हित चिन्तक महापुरुष को बहुत प्यारा था। इससे यह अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है कि यह मंत्र वास्तव में ही महत्वपूर्ण होगा, निस्सन्देह यह मंत्र है भी महत्वपूर्ण,

क्योंकि जब तक मानव अपनी दुष्ट भावनाओं दुष्टविचारों, दुर्गुणों और दुर्व्यसनों और दुष्ट कर्मों का त्याग कर के अपने जीवन में सदविचारों, सद् भावनाओं और सत्कर्मों का समावेश नहीं करेगा तब तक मानव अपने जीवन के परम लक्ष्य सुख शांति और आनन्द की प्राप्ति का अधिकारी नहीं बन सकता।

परमात्मा की यह सुन्दर फुलवाड़ी तो आनन्द से भरपूर है किन्तु इस आनन्द का वही मानव अधिकारी बनेगा जो अपने जीवन को शुद्ध रखेगा।

यदि कोई मानव, परिवार, समाज या राष्ट्र इस श्रेष्ठ स्थिति से वंचित होकर दुर्गति मे पड़ा हुआ है तो यह विश्वास पूर्वक कहा जा सकता है कि उसने अपने जीवन को कल्याण मार्ग पर नहीं चलाया अर्थात उस प्रभु के नियमों के अनुकूल अपना जीवन व्यतीत नहीं किया।

समाज और राष्ट्र के सुधार से पूर्व मानव को अपने जीवन की त्रुटियों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए यह शिक्षा हमें महर्षि दयानन्द जी के दिव्य जीवन से मिलती है।

उनके जीवन की निम्न घटना से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है—

गुरु विरजानन्द जी के पास शिक्षा पूर्ण करने

महर्षि दयानन्द का जीवनोद्देश्य-वेदप्रचार

(ले०–पं० भक्तराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर)

आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान, अनुसन्धान कर्त्ता और शास्त्रार्थ केसरी पण्डित (ठाकुर) अमर सिंह जी 'आर्य पथिक' ने आ०स० पुल बंगश,दिल्ली के वार्षिकोत्सव पर 'वैदिक धर्म का महत्व' विषय पर अपने प्रभावोत्पादक व्याख्यान में एक रोचक घटना सुनायी थी। एक बार ठाकुर जी को मारवाड़ी घाट पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। वहां उन्होंने क्या देखा कि एक तिलकधारी हवन यज्ञ करा रहे थे पर मन्त्रोच्चारण न कर केवल ओ३म्-स्वाहा कहते हुए आहुतियां डलवाते जाते थे। ठाकुर जी की पूछताछ पर पण्डित जी ने उत्तर दिया कि मन्त्र न बोलने का कारण यह है कि शूद्र के वेद मन्त्र सुन लेने पर वह पाप के भागी बनेंगे। यह तो आज कल की स्थिति है।

कोई समय था जब 'स्त्री शूद्रौ नाधियाताम्' कपोल कल्पित श्रुति के आधार पर वेद मन्त्र सुनने वाले शूद्र के कानों में सिक्का भरवा दिया जाता था और वेद मन्त्र बोलने वाले शूद्र की जिह्वा काट दी जाती थी। भला हो आर्य समाज के प्रवर्त्तक का जिस ने वेद तथा श्रौत सूत्रादि के प्रमाणों ओ३म् यथेमां वाच' और'इमं मन्त्रं पत्नीपठेत' द्वारा उस अविद्या का नाश कर वेदाधिकार से वंचित स्त्रीजाति और शूद्र वर्ण के लिए वेद का द्वार खोल दिया। मैंने 'स्त्री शिक्षा' पर शास्त्रार्थ

के पश्चात अपने गुरु जी के आदेशानुसार जब दयानन्द जी ने वैदिक धर्म का प्रचार आरम्भ किया और हरिद्वार में कुम्भ के मेले के अवसर पर 'पाखण्डखंडनी' पताका गाढ़ कर भाषण दिया तो स्वामी जी ने यह अनुभव किया कि उनका जनता पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा।

स्वामी जी इस से निराश नहीं हुए और न ही जनता को इस के लिए दोषी ठहराया अपितु एकांत में ध्यानावस्थित होकर इसका कारण खोजने लगे अन्त में उनके हृदय से यह आवाज आई कि 'अभी और तपस्या द्वारा आत्म बल के बढ़ाने की आवश्यकता है।'

यह अनुभव करने के पश्चात अन्तरात्मा की प्रेरणा पर प्रचार कार्य त्याग कर एकांतवास के लिए चले गए और योगाभ्यास द्वारा पूर्ण आत्म ज्ञान और ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात कार्य क्षेत्र में आए, और अपने लक्ष्य की पूर्ति में सफलता प्राप्त की।

ऋषिवर की इस जीवन घटना से मुझे यह महान शिक्षा मिली है कि यदि हम अपने जीवन, परिवार और राष्ट्र के जीवन को उन्नत करना चाहते हैं तो सर्वप्रथम योगाभ्यास द्वारा हम अपनी आत्मा के बल को बढ़ावें अपने जीवन को पवित्र बनाए, फिर जिस शुभ काम को भी हम हाथ में लेंगे इस कार्य मे प्रभु की कृपा से हमें पूरी २ सफलता मिलेगी।

होते देखे हैं। अब आर्यसमाज के प्रचार से स्त्री शूद्रों में विद्या तो बहुत फैल गयी है पर वेद की शिक्षा आर्यसमाज ही देता है।

मैंने यहां सनातन धर्म के मंच पर एक देवी (स्यात् उपदेशिका वा शिक्षिका थीं) के मुखारविन्द से सुना था कि 'हमारी लड़कियां संस्कृत के श्लोक तो बोल सकती हैं पर वेदमन्त्र नहीं। यह श्रेय महर्षि को है जिसने डंके की चोट से कहा कि जैसे जल, वायु और प्रकाश प्राणी मात्र के लिए हैं वैसे ही वेद विद्या के अधिकारी सब हैं। आर्य समाज के वेद प्रचारक होने का प्रमाण इस से बढ़कर और क्या हो सकता है कि उसके संस्थापक ने 'वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना उसके सदस्यों के लिए परम धर्म बताया। आप दूसरों से रामायण, महाभारत, श्री मद्भगवद्गीता, भागवत पुराणादि की तो कथा सुन सकेंगे पर वेद तथा उपनिषद् की कथा आर्यविद्वान् ही सुनायेगा। वेद कथावाचक आर्यसमाज में ही मिलेंगे।

उन्हीं ठाकुर अमरसिंह जी ने एक बड़े महत्व की बात कही थी कि जिस देवी को एक भी वेद मन्त्र स्मरण है वह (१) आर्यसमाजी की पत्नी होगी। (२) आर्य कन्या पाठशाला में पढ़ी होगी। (३) आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित होती होगी। अथवा (४) आर्यसमाज के सम्पर्क में आयी होगी। इन चार कारणों के अतिरिक्त कोई और न होगा। हिंदू बच्चों को आप उनके धर्म पुस्तक का नाम पूछेंगे तो वे जुदा २ ग्रन्थ का नाम लेंगे पर आर्य पाठशाला की पहली श्रेणी का विद्यार्थी भी झट उत्तर देगा—'मेरा धर्म पुस्तक वेद है।' हिन्दुओं का धर्म एक नहीं तो धर्म पुस्तक एक कैसे होगा? ईसाई, मुसलमान और सिख का बच्चा अपना धर्म पुस्तक क्रमश. अञ्जील, कुरान और ग्रन्थ साहिब बतायेगा। उन्हें जन्म घुट्टी में धर्म शिक्षा प्राप्त होती है।

मुझे मेरे एक मित्र ने बताया था कि यहां सनातन धर्म के वार्षिकोत्सव पर स्व० गोस्वामी गणेशदत्त जी ने अपने व्याख्यान में कहा था—कि वह वेदों से अनभिज्ञ हैं और पास बैठे हुए एक विद्वान का नाम लेकर कहा—'उन्होंने स्यात् पढ़े हों पर मेरा विचार है कि इन्होंने भी नहीं पढ़े।' व्यंग्य में बोले कि आर्यसमाजियों ने वेद प्रचार का ठेका लिया था परन्तु उन्होंने भी उर्दू मे सन्ध्या दी। इसमें संदेह नहीं कि जब हिंदी का अधिक प्रचार नहीं हुआ था तो हमने उर्दू जानने वालों के लिए उर्दू में छपवायी (मेरे पास तो गुरुमुखी में छपी वैदिक-संध्या भी है) और वेद मंत्रों का ज्ञान कराया पर दूसरे तो स्वयं वेद से अनभिज्ञ थे। अन्यों को वेद सन्देश देने का प्रश्न ही नहीं उठता।

मेरे स्वर्गीय पिता जी अमृतसर में खुली पढ़ाई एक संस्कृतज्ञ द्वारा करते थे (उन दिनों संस्कृत पाठशालाएं बहुत कम थीं)। वह बताते थे कि उनके गुरु सुनाया करते—'स्वा० दयानन्द सरस्वती जब व्याख्यान से पूर्व वेदमन्त्र द्वारा मङ्गलाचरण किया करते तो बड़े २ पण्डित बोल उठते—'यह साधु स्वयं मन्त्र बना कर वेद का नाम ले रहा है।' स्वामी जी के प्रादुर्भाव से पूर्व लोग वेद का नाम तक नहीं जानते थे। यदि किसी के पास वेद के पुस्तक थे तो वे अल्मारियों में बन्द पड़े थे इसीलिए

स्वामी जी को वेद जर्मनी से मंगवाने पड़े थे। एक अवसर पर स्वामी जी ने ब्रह्मसमाज के संस्थापक राजा राम मोहन राय से वेद मांगे तो उन्होंने उपनिषद् प्रस्तुत कर दिए।

वेद भक्त स्वा० दयानन्द ने वेद को छोड़ कर किसी से सन्धि नहीं की। वेद के सम्बन्ध में मत भेद होने के कारण लाहौर के ब्रह्मसमाजी उन से बिगड़ बैठे। पूना में अनेक सज्जनों ने आर्य समाज में सम्मिलित होने से इस लिए इन्कार कर दिया कि वेदों को ही आर्य समाज का आधार क्यों रक्खा गया है? महर्षि दयानन्द के प्राण, महर्षि का धर्म और महर्षि का उद्देश्य 'वेद' थे। स्वामीजी वेद विश्वासी और वेदानुगामी थे। आर्य समाज की स्थापना ही उन्होंने वेद प्रचारार्थ की। उन्होंने वेद पढ़े और पूर्ण पाण्डित्य पूर्वक ऋग्वेद के सात मण्डलों का और यजुर्वेद का सम्पूर्ण भाष्य किया (यजुर्वेद भाषा भाष्य के प्रथम भाग में तो ये शब्द मिलते हैं— 'ऋग्वेद के भाष्य करने के पश्चात् यजुर्वेद के मन्त्र भाष्य का आरम्भ किया जाता है)।

हम स्वा० दयानन्द को 'महर्षि' यूं ही तो नहीं कहते। जब एक मन्त्र का द्रष्टा 'ऋषि' कहलाता है तो ऋग्वेदादि चारों वेदों के भाष्य की भूमिका का लेखक और एक पूरे वेद और दूसरे के आधे से अधिक भाग का भाष्यकार महर्षि क्यों नहीं? स्वामी जी के पश्चात् आर्य विद्वानों में पं, तुलसी राम स्वामी, पं. क्षेम करणदास जी, पं. जयदेव जी और आचार्य विद्यानन्द विदेह ने भाष्य की दिशा में स्तुत्य कार्य किया है परन्तु सार्वदेशिक आ० प्र० नि० सभा को चाहिए कि वह धुरन्धर विद्वानों द्वारा प्रमाणिक भाष्य कराये। महात्मा ला० देवीचन्द जी एम० ए० होशियारपुर ने यजुर्वेद का भाष्य अंग्रेजी में छपवा कर एक महती आवश्यकता को पूर्ण किया है। उन्हीं के द्वारा सामवेद का भाष्य भी त्यार है और छपा गया है। अस्तु! प्रत्येक विद्वान् का प्रयत्न सराहनीय है पर एक योगी ही प्रमाणसंगत अर्थ कर सकता है।

वह भी समय था जब वेदों को गडरियों के गीत और बच्चों की बिलबिलाहट समझा जाता था (मोक्ष मूलर)। मेकाले ने तो यहां तक लिख दिया था कि वेद शास्त्रों में इतनी भी बुद्धि की बात नहीं जितनी बिल्ली कुत्ते की कहानी में है। महर्षि के प्रति हमें कृतज्ञता प्रकाशित करनी चाहिए जिन्होंने वेद का महत्व हमारे सम्मुख रक्खा। योगी अरविन्दघोष के शब्दों में वेद के विषयों का मार्ग यदि किसी को ज्ञात हुआ है तो वह दयानन्द है। उसने हमें वेद की कुंजी दे दी है जिस से हम वेदों में से उत्तम २ रत्न निकाल सकते हैं। कोई माने या न माने यह युग ही दयानन्द का युग है। यदि हम आर्यसमाजी वस्तुतः महर्षि को वेद रक्षक मानते हैं तो ऋषि बोधोत्सव मनाते समय हमें प्रण करना चाहिए कि संसार हमें छोड़ दे परन्तु हम ऋषि के उद्देश्य की पूर्ति करके ही दम लेंगे।

—०—०—

बोध की रात्रि जागने के दिन

(ले० श्री सत्यदेव जी एम० ए० प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज जालन्धर)

महाशिवरात्रि को शिव मन्दिर में रात्रि भर जागरण कर ऋषि दयानन्द ने बोध प्राप्त किया। इस बोध अर्थात ज्ञान ने बालक मूलशंकर को ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य, फिर दयानन्द सरस्वती और अन्त में परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती बना दिया। यह रहस्य रातें जागने का है। रातें वह जागना है जिसे कोई लगन होती है, तड़प होती है, बेचैनी होती है। नहीं तो दुनिया सोती है, सोती ही नहीं घोड़े बेच कर खुर्राटे मार कर सोती है और सोती ही रह जाती है। जागने वाले आगे निकल जाते हैं।

जागना व्यक्तिगत रूप में भी है और समष्टि रूप में भी। गीता में जो कहा गया—

'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।'

अर्थात् जो सब प्राणियों के लिए रात है उस में जितेन्द्रिय को जागरूक रहना पड़ता है, यह बात व्यक्ति के लिए है।

वेद में जो कहा गया—

'यो जागार तमृचः कामयन्ते।'

अर्थात्—जो जागते हैं वेद ज्ञान उन्हीं की चाहना करते हैं।

या

'उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः।'

अर्थात्—एक मन और एक ज्ञान से युक्त होकर जागो।

यह विचार व्यक्ति के लिए भी है और जाति या समाज के लिए भी।

क्या हमारा समाज जागरूक है—जाग रहा है? विशेषकर इस बोध रात्रि के पवित्र अवसर पर। आइए, इसका उत्तर ढूंढे।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर, आर्यसमाज के विशिष्ट मान्य महानुभाव और नेता श्री सूर्यभानु जी ने ३ फरवरी को एक विशेष उद्घाटन समारोह में भाषण देते हुए कहा :—

'हमारा प्रयत्न है कि हम प्राचीन और नवीन का ऐसा समन्वय उपस्थित करें जिस से उत्कृष्टतम भारतीय मान्यताओं का अमरीका तथा यूरोप की क्रियाशक्ति के साथ मिश्रण हो।'

'Our effort has to producer a synthesis of the old and the new, of the East and the west, a fusion of the finest Indian values with the Dynamisme of Europe and Amrica'

आगे फिर विचार प्रकट किया :—

'यह विश्व विद्यालय भारत के अतीत के प्रति आस्था उत्पन्न करेगा तथा इस देश की प्राचीन गौरव पूर्ण उपविधियों के प्रति अभिभाव का भाव संचारित करेगा।'

'This University will instit reverence

per India's post and a pride inher ament achiverments.'

कितने सुन्दर शब्द हैं यह! क्या यही वास्तव में दयानन्द ने जो वैदिक कालिज नायक संस्थाओं का लक्ष्य नहीं? लाला लालचन्द एम.ए. ने नवम्बर १८८३ में अपनी पहली अपील में कहा था :—

'इसी उद्देश्य से दयानन्द कालिज स्थापित करने का निश्चय किया गया है, जहां पश्चात्य विद्या के साथ पूर्वी ज्ञान विशेष कर वेदों की शिक्षा दी जा सके।'

आज जब कि डी.ए.वी. अन्दोलन को प्रारम्भ हुए प्राय. ८० वर्ष हो चके हैं मान्य श्री सूर्यभानु जी ने इस विचार परम्परा को एक विश्व विद्यालय में मूर्तरूप देने का संकल्प किया है, इससे बढ़कर और अभिनन्दनीय कार्य क्या हो सकता है, आर्य समाज के लिए कामयाबी की बात और क्या हो सकती है।

पर इस विषय भी हमारा एक नम्र निवेदन है। भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कहा :—

'दरिद्रान् भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्'

अर्थात् हे कुन्ती पुत्र, दरिद्रों का पालन कर धनवान् को धन मत दे।

जिस कार्य के लिए कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय की स्थापना हो रही है, गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना भी इसी उद्देश्य से हुई थी। प्रयत्न इस दिशा में सब अत्यन्त प्रशंसा के योग्य हैं, पर क्या जालन्धर, अमृतसर, लुधियाना की धरती जो भारतीय-वैदिक विचारधारा के लिए दिन-दिन ऊसर बन रही है, उस पर कोई अमृत न बरसाएगा। सच बात तो यह है कि यदि पूर्वी पंजाब में संस्कृत और हिन्दी की रक्षा करनी है, आर्य समाज की—डूबते आर्य समाज की रक्षा करनी है तो हमारी तुच्छ बुद्धि में केवल दो ही बातें आती हैं।

पहली बात तो यह है कि इस इलाके में दयानंद विश्व विद्यालय की स्थापना की जाए। यह विश्व विद्यालय समस्त पंजाब की आर्य शिक्षा संस्थाओं का केन्द्र हो, हिन्दी, संस्कृत तथा प्राचीन भारतीय मान्यताओं को बढ़ावा देने वाला हो। दयानन्द विश्व विद्यालय ही केवल एक ऐसा उपाय है जो दिन-दिन होने वाले गवर्नमैंट के नए-नए, पर यूरोप की नकल ही किए गए परिवर्तनों से आर्य संस्थाओं को बचा सके। आर्य या डी० ए० वी० शिक्षा-दीक्षा के स्वरूप की रक्षा कर सके।

इस विषय में यह भी विचारणीय है कि प्राचीन भारतीय साहित्य के विषय में दो विचार धाराएं हैं। एक विचारधारा स्वा० दयानन्द तथा श्री अरविन्द घोष आदि की है। जिनकी दृष्टि में वेदादि प्राचीन साहित्य एक ऊंचा और गौरव मय संदेश देता है। दूसरी विचारधारा वह है जिसका परिवर्तन करने वाले पाश्चात्य विद्वान हैं जिन का अनुकरण कर श्री के.एम. मुंशी के उपन्यास तथा श्री राहुल सांकृत्यायन की 'वोल्गा से गंगा तट' जैसी पुस्तक लिखी गई हैं। इस विचार धारा के अनुसार प्राचीन साहित्य एक बिलकुल अनुदात्त और हीन परम्पराओं द्योतक है। भारत सरकार के आधीन खोले जाने वाले विश्व विद्यालयों में ऋषि दयानन्द के दृष्टिकोण से प्राचीन भारतीय साहित्य को देखा

जायगा, इस की आशा कम है। इस दृष्टिकोण को विश्व के सामने रखना एक बहुत बड़ा और परिश्रम साध्य कार्य है जिसे दयानन्द विश्व विद्यालय में ही किया जा सकता है, अन्यत्र नहीं।

आर्यसमाज को यदि समय की आवश्याओं को देखकर जागना है तो पहली बात पूर्वी पंजाब में दयानन्द विश्व विद्यालय की स्थापना है। दिल्ली जैसी जगह इसकी स्थापना समुद्र में वर्षा के समान होगी।

दूसरी बात जागने की यह है कि पंजाब में दो दुर्बल आर्य प्रतिनिधि सभाओं के स्थान पर एक प्रबल प्रतिनिधि सभा की स्थापना की जाय। किसी पर दोषारोपण करना हमारा लक्ष्य नहीं पर एक विचार के, एक सिद्धान्त के, एक आचार्य के अनुयायी, एक सत्यार्थ प्रकाश से सहमत लोग यदि एक नहीं होंगे तो और कौन होगा। एकता मे बल है, सम्पन्नता है, जीवन की पुकार है। दो होने का खेल खेल लिया, अब एक होकर भी देखना चाहिए। पंजाब में आर्यसमाज की जितनी आवाज है, महत्त्व है वह सब के सामने ही है। बिना कोई बड़ा कदम उठाए इस निराशा के वातावरण को दूर नहीं किया जा सकता। यह समय है भी नाजुक और साथ २ उपयुक्त। ऐसे समय बार २ नहीं आया करते।

अपनी बात को समाप्त करने से पहले सब आर्य भाइयों का ध्यान एक अपनी जातीय त्रुटि की ओर भी दिलाना आवश्यक है।

जनवरी ३०, १९६३ के ट्रिब्यून में फुटबाल में डी. ए. वी. कालिज की विजय का हर्षदायक समाचार है। इसके लिए कालिज के प्रिंसिपल महोदय तथा अन्य सब सम्बद्ध व्यक्ति बधाई के पात्र हैं। डी. ए. वी. कालिज अब खेल और पढ़ाई दोनों में ही प्रान्त की सबसे प्रमुख संस्था है।

पर हम अपने पाठकों का ध्यान एक और बात की ओर ले जाना चाहते हैं। इस अन्तिम मंच में भाग लेने वाली दोनों टीमों के निम्न खिलाड़ी हैं। डी. ए. वी. कालिज टीम टीम में—बगीचासिंह, दलजीत सिंह, गुरमेलसिंह, करनैलसिंह, गुरबचनसिंह, सुरिन्दर कुमार, जरनैलसिंह, करमजीतसिंह, अजीतसिंह, इम्तियाज मसीह, जोगिन्दरसिंह।

खालसा कालिज अमृतसर के खिलाड़ी हैं— प्यारा लाल, वीरेन्दर सिंह, गुरदीप सिंह, मोहनसिंह, हरबंस सिंह, जोगिन्दर सिंह, हरपाल सिंह, प्यारासिंह, अजायब सिंह, राज सिंह, धर्मवीर।

दोनों टीमों के २२ खिलाड़ियों में एक ईसाई, तीन हिन्दू तथा १८ सिख हैं। हम खेल में साम्प्रदायिकता की भावना बिलकुल ही नहीं चाहते। हम यह भी नहीं कहना चाहते कि किसी कालिज की टीम में किसी एक सम्प्रदाय के लोग भी हैं जो शरीर से बलवान हैं, पुष्ट हैं खेलों में आगे आयेंगे ही, कोई इस बात को रोक नहीं सकता। हमारा कहने का अभिप्राय केवल यह है कि जहां सिख सम्प्रदाय अपने बच्चों के पुष्ट और बलवान शरीरों के लिए बधाई का पात्र हैं वहां अपनी शारीरिक दुर्बलता के इस प्रदर्शन पर क्या हिन्दुओं को डूब नहीं मरना चाहिए। मुर्दा बच्चों के आसरे यह जाति कबतक जीवित रहेगी।

देवता का देवत्व

(ले० श्री. दयानन्द जी आर्य विद्यावाचस्पति लेखराम नगर कादियां)

शिव के मन्दिर में तेरह वर्ष के बालक के हृदय में सच्चे शिव को जानने की जिज्ञासा पैदा हुई। ईश्वर का साक्षात्कार कर के संसार की पीड़ित जनता को ईश्वर भक्ति का ज्ञान देने आए भगवान् दयानन्द, बालक के अन्दर जो देवत्व की भावना उठी, वह उन तक सीमित न रही, सारे विश्व में फैलाने का यत्न किया गया। मन्दिर की घंटी बजाने वाले तो सारी रात न जाग सके पिता भी सो गए। पर पुत्र नेतो कमाल कर दिया। सारी रात जागा, सारा जीवन जागा, उस देव का आत्मा जागता रहा अत. सब के सुप्त मन को जगा दिया, पुत्र पिता से बढ़ गया। तभी तो **T. L. Waswani** जी ने **'Rishi Dayanand'** पुस्तक में लिखा, **He will, I believe, challange attention in coming days'** जाग कर भारत को भारत बनाया। आज स्वतन्त्रा के नाम लेवा महर्षि का पढ़ाया पाठ ही पढ़ते हैं। न केवल जागे, किन्तु प्रकाश भी दिया। जागने को तो और भी जागे थे, किन्तु उन का जागना आसुरी-वृत्तियों से भरपूर था। ऋषि ने संसार को सत्पथ दिखाया। देवता यही तो करता है। अछूतों को गले लगाकर आने वाली सन्तति में अछूतोद्धार का बीज बो दिया। लोगों को कहा, पूजा न करना। उस की पूजा करो, जिस ने मुझे बनाया है वह है परमात्मा। देवने यजुर्वेद ३३-४० का मंत्र प्रस्तुत किया :—बट् सूर्य श्रवसा महां, असि सत्ता देवमहां असि। महना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभुः ज्योतिरदाभ्यम्।"

अर्थात् मनुष्यो। जिस ईश्वर ने पालना के लिए अन्नादि को उत्पन्न करने वाली भूमि और मेघ का प्रकाश करने वाला सूर्य रचा है वही परमेश्वर उपासना करने योग्य है। आज लोग एक प्रभु को भूलते जा रहे हैं। मतो के पोते-प्रपोते आज बढ़ते जा रहे हैं। वेद का प्रसार होना

ये खेलों के ग्राउण्ड सेना और पुलिस की योग्यता के मापदण्ड हैं। शरीर के बलवान लोग ही खेलों में आगे आते हैं और वे ही सेना और पुलिस में ऊंचे रहेंगे।

क्या हमारी गवर्नमेण्ट ऐसा नहीं कर सकती कि शरीर की दृष्टि से हिन्दुओं की पिछड़ी जाति **(Backward Class)** मान कर कुछ प्रबन्ध करे। सरकार तो जब करेगी तब करेगी, हिन्दू संस्थाओं का कर्त्तव्य पहले है। वे लाखों करोड़ों रुपया हिन्दुओं से लेती हैं। क्या उनकी जिम्मेदारी नहीं कि हिन्दू बच्चों के शरीरों के सुधार के लिए वे प्रबन्ध प्रयत्न करे। इस दौड़ के युग में शरीर से कमजोर लोगों के लिए संसार में कोई स्थान नहीं।

इस बोधरात्रि के अवसर पर क्या हम जाग कर अपने कर्त्तव्य का विचार करेंगे?

उन्नति के तीन नाद

(प्रिंसिपल भगवानदास जी एम. ए. डी० ए० वी० कालेज शोलापुर)

व्यक्ति समाज तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए तीन अत्यावश्यक नाद ऋषि ने हमें दिए थे। धर्मभावना, समष्टि जीवन भावना और देश प्रेम भावना। उन्होंने वेद को धर्म भावना का आधार बताया। इसी में एकेश्वरवाद तथा आध्यात्मिक जीवन विकास आदि आ गये। इस रामबाण बूटी को लेकर हम सब मत मतान्तरों का मुकाबला कर सकते हैं। इसलिए प्रत्येक आर्यसमाजी, आर्य सभा, समाज और संस्था का पहला कर्त्तव्य यह होना चाहिए कि आज का खिचड़ी पंथ छोड़ कर बड़ी कट्टरता से महर्षि के बताये मार्ग पर चलें। हम अपने हाथों अपने आर्य सिद्धांतों का खून होता सहन न करें। आज व्यक्तिवाद जोरों पर है। देशहित के नारों की बजाये अब व्यक्तियों की जय के नारे लग रहे हैं। जय तो उस व्यक्ति की बोलनी चाहिए जिसने अपना सर्वस्व जनता के अर्पण कर दिया हो जैसे कि ऋषि दयानन्द अथवा महात्मा गांधी जी आदि थे। इस भावना को बन्द करना होगा। आर्यसमाजी भाईयों को समष्टि जीवन की भावना का संचार करना है। सर्वहित-कारी कार्यों के सामने व्यक्तिगत हितों का स्थान ही क्या रह जाता है। प्रत्येक आर्यसमाजी को व्यक्तिवाद से ऊपर उठकर अपने किसी भी स्वार्थ लाभ की परवाह न करते हुए समष्टि भावना का प्रचार करना चाहिए।

देश का हितचिन्तन कौन करे? आर्यसमाज को राजनीति से दूर रहकर देशहित में जुट जाना चाहिए। यह देश सब का सांझा है। प्रत्येक देशवासी को उसमें पूर्ण अधिकार और उन्नति के अवसर मिलने चाहिए।

चाहिए। युवक-संगठन, फिर उसमें आर्यत्व भरना है। स्वाध्याय व अतिथिसेवा, विद्वानों का यथोचित आदर युग की पुकार है। आर्य समाज ने ही ये काम करने हैं। मूलशंकर जब मन्दिर में बैठे थे, तो आकाश में चांद नहीं था, धरती मां ने कहा, 'नभ देवता, आप का दीपक कहां, तू सूना क्यों है? नभ कहने लगा, मूल शंकर रूपी ज्ञान के चांद ने धरती व आकाश को आलोकित कर दिया है, अतः नभ के चांद का प्रकाश फीका पड़ गया है। शिवरात्रि! तू ही बता, कितनों ने मूलशंकर की तरह तुझ से शिक्षा पाई है।

आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी का सहयोग

आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर की इस संस्था ने ४०००० रुपए के डिफैंस डिपोजिट सर्टिफिकेट खरीद करके देश रक्षा कार्य में सहयोग दिया है।

—संतोषराज मन्त्री सभा

आवश्यक सूचना

प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब के निर्वाचन के लिए जो बैठक २२ फरवरी १९६३ शिवरात्री के दिन डी० ए० वी० कालेज जालन्धर के छात्रावास में बुलाई गई थी, उसे विद्यार्थियों की परीक्षा अति निकट होने के नाते स्थगित कर दिया गया है। सभी सम्बद्ध प्रतिनिधिगण सूचित रहें।

वेदीराम शर्मा अध्यक्ष
प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब

आर्य जगत के लेखकों व कवियों से नम्र निवेदन

जिन महानुभावों ने लेख व कविता भेजकर आर्यजगत से अपना स्नेह प्रकट किया है हम उनके अति आभारी हैं। लेकिन कुछ मैटर असमय पर पहुंचने और स्थानाभाव से अप्रकाशित रहा है। अतः हम उन सज्जनों से क्षमा चाहते हैं। शेष लेख व कविता साधारण अंकों में समय समय पर प्रकाशित होती रहेंगी। —व्यवस्थापक

महर्षि स्वामी दयानन्द और शिवरात्री (कव्वाली की तर्ज पर)

(ले०—श्री जगदीश प्रसाद जी कौशिक)

ऋषिवर ने दिखाया रास्ता, सच्चा जमाने को।
हकीकत में बदल कर रख दिया, उस ने फ़साने को।

यही शिवरात्री की रात का अन्धेर छाया था।
इसी अन्धेर में से, उस ऋषि ने नूर पाया था।

चूहा इक आ गया, शिव लिंग पर मीठा उठाने को, ऋषी—१
न शिव का लिंग चूहे से, था अपने को बचा पाया।

न वह खुद हिल सका था, न उस को था भगा पाया,
सोचा महज यह भगवान है, दिल के लुभाने को। ऋषी—२

नहीं पत्थर के बुत मेरे, कभी भगवान बन सकते।
कभी भी जगत का बेजान न, कल्याण कर सकते।

महज पाखण्डियों का जाल है जनता फसाने को। ऋषी—३
इसी घटना को देखा था, हकीकत को पहचाना था।

नहीं आकार ईश्वर का, इसे स्वामी ने जाना था,
लगादी जिंदगी कौशिक, अज्ञान का परदा उठाने को। ऋषी—४

आर्य प्रादेशिक सभा के अधिकारियों का निर्वाचन

(सभा के प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० द्वारा घोषणा)

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के वार्षिक साधारण अधिवेशन ता० २७ जनवरी १६६३ को प्रिंसिपल राम जी एम० ए०, एम० एल० ए० होश्यारपुर सर्वसम्मति से सभा के प्रधान निर्वाचित हुए। सब अधिकारियों, अन्तरंग सदस्यों तथा सार्वदेशिक सभा देहली के लिए सदस्यों के चुनने का अधिकार उनको ही सौंप दिया गया। माननीय प्रधान जी ने निम्नलिखित निर्वाचन की घोषणा की है है—

उस अधिकार के अनुसार जो कि आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की जनरल बैठक में मुझे २७-१-६३ को दिया गया, मैं निम्नलिखित सज्जनों को उक्त सभा के अधिकारी तथा अन्तरंग सभा के सदस्य मनोनीत करता हूं।

उपप्रधान—१. श्री ज्ञानचन्द जी भाटिया सिनियर
२. श्री देशराज जी महाजन
३. श्री भीमसेन बहल प्रिंसिपल
४. श्री चमन लाल जी

मन्त्री—श्री सन्तोषराज जी

सहायक मंत्री—१. प्रो० वेदीराम जी
२. श्री दुर्गादास जी आर्य गजट

कोषाध्यक्ष—कैप्टन शिवराम जी।

पुस्तकाध्यक्ष—श्री शंकरदास जी त्रैहन।

अन्तरंग सभा के सदस्य

१—महात्मा आनन्द स्वामी जी, २—महात्मा देवी चन्द जी, ३—श्री सूर्यभान जी वायस चांसलर ४—श्री सत्यप्रकाश जी शिमला ५—श्री यशजी जालन्धर, ६—श्री हरिराम जी चण्डीगढ़, ७—ज्ञानी पिंडी जी दास जी, ८—श्री रुद्रदत्त अमृतसर, ९—श्री जितेन्द्र कुमार होश्यार पुर, १०—श्री भगवान् दास पुरी दिल्ली, ११—श्री राजकुमार दिल्ली, १२—श्री चमन लाल सेठ यमुना नगर, १३—श्री एम. सी. जौली अम्बाला छावनी, १४—श्री मुरारी लाल शास्त्री हिसार, १५—श्री बृज लाल गुप्ता टोहाना, १६—जमेदार भरतसिंह मोखरा, १७—श्री हुकम चन्द मल्ला।

निम्नलिखित सज्जनों को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिध सभा दिल्ली के प्रतिनिधि मनोनीत करता हूं—

१—श्री रलाराम प्रधान सभा, २—श्री यश जी जालन्धर, ३—श्री प्यारे लाल बेरी हैडमास्टर, ४—श्री खुशहाल चन्द पराशर, ५ स्वा. सोमानन्द सरस्वती, ६—महात्मा देवी चन्द, ७—श्री दयाराम शास्त्री ८—ला० सन्तोष राज, ९—ज्ञानी पिंडीदास, १०—श्री सूर्य भानु वायस चांसलर, ११—श्री दरबारीलाल दिल्ली।

रलाराम
प्रधान
आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा
जालन्धर

डी०ए०वी०कालेज कमेटी का वार्षिक चुनाव

डी० ए० वी० कालेज कमेटी चित्रगुप्त रोड नई देहली का वार्षिक निर्वाचन ता० २१-१-६३ को डा० मेहर चन्द जी महाजन पूर्व चीफ जस्टिस सुप्रीमकोर्ट की प्रधानता में हुआ। निम्नलिखित अधिकारी चुने गये—

१ प्रधान—डा० मेहरचन्द महाजन रिटायर्ड चीफ जस्टिस सुप्रीम कोर्ट।

२. उपप्रधान—जस्टिस जे० एल० कपूर रिटायर्ड जज सुप्रीमकोर्ट।

३. ,, रायबहादुर डा० महारज कृष्ण कपूर सीनियर डायरेक्टर पंजाब नैशनल बैंक।

४. ,, रायबहादुर मनमोहन रिटायर्ड डिपटी डायरेक्टर पंजाब।

५. ,, श्री एच० एल० जैरथ रिटायर्ड डायरेक्टर पोस्ट एण्ड टेलीग्राफ।

६. ,, रायबहादुर बृजमोहन लाल रिटायर्ड चीफ इंजनीयर पंजाब।

७. ,, श्री सूर्यभानु वायस चासलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्टि।

८. जनरल सैक्रेटरी—श्री सी० एल० आनन्द बार एट०ला०रिटायर्ड प्रिंसिपल ला. कालेज।

९. सैक्रेटरी—राय बहादुर डा० जी. डी. कपूर।

१० ,, श्री लालचन्द खन्ना रिटायर्ड कमिश्नर इन्कम टैक्स।

११. ,, श्री एस. एल. वर्मा चीफ एकाऊंटेंट पंजाब नैशनल बैंक।

१२. ,, श्री बृजलाल धवन एडवोकेट।

१३. ,, श्री डी. आर. मेहता रिटायर्ड डायरेक्टर आफ हैल्थ सर्विस पंजाब।

१४. ,, श्री आर. एन. गुप्ता नई दिल्ली।

१५. आर्गनायर्जिग सैक्रेटरी—श्री लाल चन्द धवन रिटायर्ड प्रिंसिपल।

१६. ,, एकाऊंटेंट श्री पन्नालाल सूद मैनेजिंग डायरेक्टर पी. एल. सूद कम्पनी नई देहली।

१७. ,, श्री जैसा राम नई दिल्ली।

१८. ,, श्री टी० आर० तुली नई देहली।

१९. ,, श्री भगवान् दास पुरी रिटायर्ड जनरल मैनेजर बैंक आफ लाहौर कृष्णानगर देहली।

जी० डी० कपूर
सैक्रेटरी
डी० ए० वी० कालेज मैनेजिंग कमैटी
चित्र गुप्ता रोड नई देहली

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

शुभ घड़ी की याद

(ले० पं० चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी उपदेशक प्रादेशिक सभा सोनीपत निवासी)

बन्धुओ—हमारे जीवन में कई शुभ घड़ियां आती हैं आएंगी भी पर एक वे शुभ घड़ी गिनी जाती हैं जो इतिहासों के पन्नों में लिखी जाती हैं। कौमें इनकी याद मनाकर अपने जीवन में नया उत्साह पैदा करती हैं। शिवरात्रि की शुभ घड़ी अपना विशेष स्थान रखती है, इस रात्रि को महाकाली रात्री कहते हैं, अन्धेरे में यकायक प्रकाश हो जाए तो अचम्भा होता है परन्तु आज से लगभग १३७ वर्ष पूर्व इस महाकाली शिवरात्री को एक महान पवित्र आत्मा में सत्य और आस्तिकता का प्रकाश हुआ। इस प्रकाश ने इन्सान को अचम्भे में डाल दिया। यह प्रकाश की ज्योती आदर्श बालक मूलशंकर की आत्मा में जगी, जो बाद में संसार निर्माता आर्य समाज के जन्मदाता सुधारक दयानन्द सरस्वती कहलाए। शिवरात्री सभी मनाते हैं, पर किसी खोजी को ज्ञान मिलता है कुछ पिछले संस्कारों का प्रभाव होता है, कई पाखण्डी लोग जनता को ईश्वर के दर्शन कराने वास्ते आडम्बर रचाते हैं रंगरेलियां करते हैं भोली लड़कियों की लाज लूटते हैं कई कलयुगी कृष्णा दादा लेखराज, ब्रह्मकुमारी मत चला कर रास लीलाएं करते हैं, ईश्वर दर्शन का ढोंग रचाते हैं बादमें ऐसे लोगों की पोल खुलती है ऐसी काली करतूतों के कारण कई साधु जनता के हाथों जूतां पिटते देखें आज भी कई साधु इसी ढोंग के कारण जेलों में सड़ रहे हैं कईयों पर केस चल रहे हैं। पर निशकलंक साध दयानन्द जैसा त्यागी शुभचिन्तक नहीं सुना। प्रभु दर्शन की प्यास थी शिवरात्री का व्रत रखा चूहों को शिव मूर्ति पर दौड़ लगाते फलफूल खाते देखा मूलशंकर को शिव रात्रि के जागरण में असली मूल का पता चला, व्रत तोड़ा जीवन में इस की खोज की अन्त में प्रभु दर्शन पाये। श्री गुरुदत्त एम.ए. जैसे नास्तिक को आस्तिक बनाया इस आस्तिकताकी झलक संसारको दिखा दी। इस मुख्य प्रचारार्थ आर्य समाज की स्थापना की जब तक आर्य लोग महर्षि दयानन्द के सच्चे अनुयायी रहे जनता को आस्तिक बनाया, जब स्वयं ऋषि भक्त नहीं रहे सन्तान भी नास्तिक और अनार्य बनती जा रही है। तभी तो देश में कम्यूनिजम छा रहा है इस से देश में चरित्र हीनता तथा अधर्म फैल रहा है, आस्तिकता संसारको पवित्र करती है मनुष्य सही आर्यों में मनुष्य बनता है पाप नहीं बढ़ता मानव में परतत्रता की भावनाएं पैदा नहीं होतीं मनुष्य राष्ट्र भक्त बनता है कोई विदेशी ऐसे देशों पर कब्जा नहीं करता हम आज किस

अदालती नोटिस

इश्तहार जेर दफ़ा ५ रूल २० मजमूआ जाब्ता दीवानी

बा अदालत श्री ओंकार नाथ साहब
सब जज दरजा अव्वल होशियार पुर

मुकद्दमा न १६० बाबत १६६२।

मुद्दई श्रीमती मनसा देवी बेवा बसंता जात बानी।

सकना मौजा नई कामरां हुशियारपुर सायला।

बनाम—

श्रीमती राम प्यारी दावा इस्तकरार हक्क निस्बत अराज़ी, बनाम-श्रीमती राम प्यारी बेवा दुर्गा दास कौम बाती सकना फुंगा तहसील होशयारपुर।

मुकद्दमा अनवान बाला ने मुसम्मात श्रीमती राम प्यारी मज़कूर तामील सम्मन से दीदा वा दानिस्ता गुरेज़ करती है और रुपोश है। इसलिए इश्तहार हज़ा बनाम राम प्यारी मज़कूर जारी किया जाता है कि अगर राम प्यारी मज़कूर २७. २. ६२ को मुकाम हुशियार पुर बावकत ७ बजे सुबह हाज़िर अदालत नहीं होगी तो उस की निसबत कारवाई यकतरफ़ा अमल मे आवेगी। ४. २, ६३.

दसखत................मोहर

हाकिम अदालत

"जीवन का उपासक"

ले०-श्री उत्तमचन्द जो 'शरर' M A. पानीपत

एक जीवन का उपासक जड़ जगत से दूर।
था शिवालय में कहीं आराधना में चूर।

सत्य में श्रद्धा संजाये साधना में लीन।
सरल मन अपलक नयन छल से कपट से हीन।

भाल पर वह तेज प्रतिमा को भी जो चमकाये।
मन मे वह साहस जो हर आपत्ति पर मुस्काये।

प्रबल जिज्ञासा लिए, हो सत्य निष्ठा युक्त।
पाप से पाखण्ड से, भय से घृणा से मुक्त

एक बालक हृदय का नैवेद्य ले निष्पाप
सामने प्रतिमा के था बैठा हुआ चुपचाप

एकदम जैसे हवा का तेज़ झोंका आये
और क्षण में बादलों को घेर कर ले जाये

सूर्य रश्मि से अचानक जगमगाये व्योम
या उषा के अरुण अंचल में छिपे तमतोम
भ्रांति पर यों एक घटना से हटा तत्काल

साधना सोपान पर साधक चढ़ा तत्काल
और मानव मन से जड़ की दासता छूटी

रात्री के तम से किरण आलोक की फूटी

दौर में से गुजर रहे हैं दिल धड़कता है हाय दुनियां का क्या बनेगा। ये बुरे विचार, क्यों हमारी आत्माए दुर्बल हैं इस का मूल कारण नास्तिकता की ओर जाना, आस्तिकता ही सब बुराईयों को दूर करने की रामबाण औषधि है यही औषधि महर्षि दयानन्द को शिवरात्री की शुभ घड़ी में मिली हमें भी उसे औषधि का रस दिया स्वयं आस्तिक बने जगत को बनाए ताकि संसार सुख का सांस ले सकें आर्य बन्धुओ १६६३ की शिवरात्री मनाने चले हो असली मूल को समझो यही शुभ घड़ी की याद है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सन्तोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा द्वारा वीर मिलाप प्रैस मिलाप रोड जालन्धर में मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय निकट कचहरी जालन्धर नगर में प्रकाशित— —स० श्री निरंजन नन्द शास्त्री



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. o.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे, वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष ७३ अंक ९) रविवार २० फाल्गुण २०१९— ३ मार्च १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

मयि रन्ति रस्तु

हे प्रभो ! मुझ मे सदा आनन्द प्रसन्नता बनी रहे। मैं सदा जीवन मे प्रसन्न रहूं। कभी भी विपत्तिमे घरबाने व व्याकुल न होने पाऊ—

ऊर्जं न आ भर

हे भगवन् ! हमें ऊर्ज या अन्न बल पराक्रम और तेज प्रदान कीजिये। हम जीवन यात्रा के पथ पर चलते हुए तेजस्वी बलशाली बन कर आगे बढ़ते जाये। बाधाओं में न रुकें।

रायस्पोषण संसृज

हे परमेश्वर ! हमें हर प्रकार के धन से पुष्ट करने वाली सम्पत्ति से, ज्ञान के भण्डार से तथा कल्याण के ऐश्वर्य से भर दीजियेगा। माला माल करें

अथर्व वेद.

वेदामृत

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्यदधातु मे ॥

अथर्व काण्ड १ प्र १ मन्त्र १

अर्थ.—(ये) जो (त्रिषप्ता) तीन×सात अर्थात इक्कीस तत्व (परियन्ति) बदलते रहते हैं, नानाविधगति में रहते हैं (विश्वा) सारे, अनेक (रूपाणी) रूपों को (बिभ्रत) धारण किए हुए। ये इक्कीस पदार्थ ही नाना रूपों, आकारों प्राकारों में बदल २ कर गति करते हैं हमारे सामने आते रहते हैं। वह (वाचस्पतिः) ज्ञान का स्वामी भगवान् (बला तेषां) उन इक्कीस पदार्थों के बल को (तन्व.) शरीर में जीवन में (अद्य) आज (दधातु) धारण करायें, प्रदान करे (मे) मेरे। शरीर में प्रभु की कृपा से उनका बल आ जाये। भाव:—भगवान् की सृष्टि कितनी विचित्र, विशाल और विविध रूप वाली है। जिस मनुष्य को देखें उस की आकृति दूसरे से नहीं मिलती। कितनी अनेकता है पदार्थों में कितनी विविध रूपता है। एक पदार्थ दूसरे से नितान्त भिन्न है। ये सारे अनेक रूपों में, नाना आकृतियों में बदल २ कर सामने आते हैं जल के कितने रूप हैं? दूध के कितने पदार्थ बनते हैं। मिट्टी कितनी आकृतियोंमें सामने आती हैं। तीन गुण वाली, पांच भूतो वाली प्रकृति बदल २ कर अनेक रूप धारण करती है। इन में कितनी शक्ति सुन्दरता है। प्रभु करे कि हमारे शरीर जीवन में इन तत्वों की शक्ति, सुन्दरता, शुद्धता आजाये। अग्निवत् दीप्त, जलवत् शीतल आदि गुणों से भर जायें—सं०

मानव निर्मित दीवारें खत

करने का आह्वान

राष्ट्रपति डा. राधा कृष्णन ने नई देहली में ऋषिबोध उत्सव प जनताको सम्बोधित करते हुए कहा कि उत्तरी सीमा पर हुई हा को एक चुनौती समझें और मान निर्मित सभी बंधनों को खतम कर राष्ट्र को सुदृढ़ बनाएं। यह तभी सकता है कि जब हम एक समुदा का रूप धारण कर लें और ए राष्ट्र के रूप में खड़े हो जाएं!

इसी संबन्ध में आप ने आ कहा कि स्वामी दयानन्द समा सुधारक, एक प्रतिभा शाली व्यवि थे। उनके उपदेश हमारे लिए आ सर्वाधिक महत्व के हैं। क्यों आज हमें अनेक प्रकार की कटुता और विवादों का सामना कर पड़ रहा है।

अतीत में हम पराधीन हुए आंतरिकफूट व आपसी असहिष्णु के कारण। यदि हम अतीत शिक्षा ग्रहण नहीं करेंगे तो हम अतीत की पुनरावृत्ति होगी।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

"बृहदारण्यकोपनिषद् में आत्मा व ब्रह्म तत्व"

बलदेव राज एम. ए. (विद्यार्थी) साधु आश्रम होश्यार पुर

घनघोर निशा की कालिमा ज्यों अज्ञान में ग्रस्त जीव की क्या अवस्था होगी ईश्वर ही जाने। मुक्ति पथ का मुख्य साधन ज्ञान है जिसका साम्राज्य उपनिषद् में है। आत्मा व ब्रह्म का जितना चिंतन बृहदारण्यकोपनिषद में है। उतना शायद ही अन्यत्र दुर्लभ हो। मैं थोड़ा सिंहावलोकन कराना चाहता हूं।

सर्वप्रथम आत्मा ही पुरुष के रूप में था। आत्मा के अतिरिक्त कुछ नहीं था। जो मैं शब्द है वह भी आत्मा ही है। जैसे किसी का द्वार खटकटाते समय अन्दर से आवाज आती है 'कौन रे' उत्तर में 'मैं अमुक नाम वाला हूं'। मैं अर्थात् आत्मा मुख्य और नाम अर्थात शरीर गौण है। कठोपनिषद में आत्मा के लिए हंस शब्द भी है। उसका उलटा करके लिखे तो सोऽहम पढा जाएगा (सः हं = सोऽहम) इसमें भी बृहदारण्यक निर्दिष्ट 'अहम' का महत्व है। सभी भूत-प्राणियों का लोक (गति, मुक्ति के गमन का मार्ग) आत्मा ही है। पूर्व काल में आत्मा जैसे ऊपर कहा गया है पुरुष के ही रूप में था। एक के बिना तो निर्वाह नहीं हो सकता। इसीलिए आज भी अकेला व्यक्ति दूसरो को अपना बनाना चाहता है। इसी तरह पुरुष रूप आत्मा ने स्त्री की कामना की (दोनों के सम्पर्क से सुख-पूर्वक समय बीतने लगा। यदि अपनी ही आत्मा की तरह दूसरों की आत्मा समझें तो अपने पराये का भेद ही मिट जाए)

आत्मा के सम्बन्ध में बृहदारण्यकोपनिषद् मे मैत्रीय को याज्ञवल्क्य द्वारा दिया गया उपदेश अनुपम है। इस संसार मे स्वार्थ का ही साम्राज्य है। दूसरे व्यक्ति के साथ सच्चा प्रेम करने में भी स्वार्थ निहित है। कम से कम यदि धन आदि का स्वार्थ न भी हो तो आत्म सन्तुष्टि का स्वार्थ तो रहता है। याज्ञवल्क्य के लम्बे-चौड़े उपदेश का इतना ही सार है। आज हम किसी को अपना मित्र बनाते हैं। वह हमें बहुत ही प्यारा लगता है। इससे उसको कोई लाभ नहीं पहुंचता हमारी अपनी ही सन्तुष्टि होती है। पतिको अपनी पत्नी अपनी ही संतुष्टिके लिए प्यारी है न कि पत्नी की कामना के लिए। इसी प्रकार अन्य संबन्धी व मित्र भी अपनी सन्तुष्टि के लिए ही प्यारे लगते हैं। इसी लिए याज्ञवल्क्य आत्म-ज्ञान को महत्व देते हुए मैत्रेयी से कहते हैं 'आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्या मन्तव्य निदिध्यासितव्य मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेद सर्वं विदितम्' भावार्थ यह कि आत्मा के श्रवण, मनन, दर्शन व ज्ञान से सब ज्ञान हो सकता है। इसी प्रकार जनक की सभा में याज्ञवल्क्य ने अनेक प्रश्नों के उत्तर में आत्मा की सर्वव्यापकता को सिद्ध किया है कि जो आत्मा सब भूतों में रहता हुआ भी उन से बाहिर है। और सभी को नियमों में रखता है।

ब्रह्म शब्द को उपनिषदों ने नेति नेति कहकर छुटकारा पाया है। बृहदारण्यकोपनिषद् में यथा स्थान इसका विवेचन है। अन्य उपनिषदों के अनुसार आत्मा व ब्रह्म एक ही है सृष्टि के पूर्व ब्रह्म ही था। सिर्फ आत्मा को ही इस ब्रह्म तत्व का ज्ञान था। और वह ब्रह्म एक ही था। एक होने से वह समृद्ध नहीं हो सकता था इस लिए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ण व उनके धर्मों को बनाया। इस बृहदारण्यकोपनिषद का ब्रह्मोपदेश दर्शनीय है। गार्ग्य आदित्य, चन्द्र, आकाश वायु, अग्नि, जल दिशाओं व आत्मा मे ब्रह्म की सत्ता मानकर उसकी उपासना करता है। परन्तु अजात शत्रु का गार्ग्य की युक्तियों पर सन्तोष नहीं होता है। अन्त में अजात-शत्रु गार्ग्य को शिष्य बना कर उसे उपदेश देता है। अजात शत्रु गार्ग्य को हाथ से पकड़ कर खड़ा हो गया और सोए हुए व्यक्ति के पासले गया। उस सुप्त को अनेक विशेषणों से बुलाया तो वह न उठा न जगा। अन्त में हाथ से मलकर जगाया। तब वह उठ खड़ा हुआ। तब अजात शत्रु ने समझाया यह आत्मा (ब्रह्म) हृदय आकाश में सोता है। उस समय इन्द्रियां इसी में समाविष्ट हो जाती हैं वह स्वपिति नाम कहलाता है। स्वप्नावस्था में ऊंच-नीच भावों को प्राप्त होता है। सुषुप्त अवस्था में हिता नाम की नाड़ियों से होकर शरीर में सोता है।

इस उपनिषद् में ब्रह्म के मूर्त व अमूर्त दो रूप बताए हैं। याज्ञवल्क्य बताते हैं कि ब्रह्म ज्ञान क्यों नहीं होता। जैसे कि वीणा के बजने पर उसके बाह्य शब्दों को पकड़ा नहीं जा सकता उसी प्रकार ब्रह्म को पकड़ा नहीं जा सकता केवल अनुभव किया जा सकता है। जैसे अग्नि पर रखी गीली समिधा से धुएं निकलते हैं उसी प्रकार इस परमेश्वर ब्रह्म से ही श्वास रूप में वेद उपनिषद् आदि निकले। जैसे जल में डाला नमक का ढेला जल में ही मिल जाता है उसको अलग नहीं कर सकते। इसी प्रकार ब्रह्म तत्व भी कण २ में समाया है। हम उन से अलग नहीं कर सकते। ब्रह्म लोक में ही सर्वस्व ओत-प्रोत है। उसी ब्रह्म शब्द के शासन में सूर्य चांद द्यावापृथिवी नदियां मनुष्य पितर लोक-लोकान्तर अपना कर्म करते हैं। 'विदित्वाऽस्माल्लोकात्प्रैति स ब्राह्मण.' अर्थात जो ब्रह्म को जान कर मरता है वह ब्राह्मण है। विस्तार भय से इस उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म का स्वरूप बताकर लेखनी को यहीं रोकता हूं। वह ब्रह्म अक्षर न स्थूल, न सूक्ष्म, न ह्रस्व, न दीर्घ, न लाल न चिकना है। वह छाया रहित वायु रहित आकाश रहित, रस रहित, गन्ध रहित, नेत्र रहित, श्रोत्र रहित, मन रहित...परिमाण रहित, अन्तररहित बाहिर रहित है। वह अविनाशी कुछ नहीं खाता, इसे कोई नहीं खाता।

आर्य समाज, बाजार सीताराम देहली का चुनाव

प्रधान—श्री पं० रूपलाल जी, उपप्रधान—श्री ला० बालकिशनदास मन्त्री—श्री नरेन्द्र नाथ गुप्ता, सहायक मंत्री—श्री राजाराम जी शास्त्री, उपमन्त्री—श्री श्याम बाबू जी महेश्वरी, श्री कृष्णलाल जी कक्कड़, कोषाध्यक्ष—श्री बाबू राम जी आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री राजा रामसिंह जी, लेखानिरीक्षक—श्री बैजनाथ जी अरोड़ा।

अन्तरंग सदस्य

श्री प्रिं०ईश्वरदास जी, श्री नन्दकिशोर जी खन्ना, श्री प्रिं० रामदास जी, श्री वाचस्पति जी, श्री ला० दौलतराम जी, श्री बाबूराम जी लोहिया, श्री मा० भगवानदास जी, श्री रामचन्द्र जी मिस्त्री, श्री केशोराम जी, श्री न्यादरमल जी, श्री देव प्रकाश जी बग्गा, श्री चन्द्रभानु जी, श्री देवदत्त जी भारद्वाज, श्री बनवारी लाल जी, श्री सुरजन सिंह जी, श्रीमती सत्यवती जी, श्रीमती अंगिरा देवी जी।

मन्त्री नरेन्द्रनाथ गुप्ता

आर्यसमाज पुल बंगश नवाबगंज दिल्ली—६ का चुनाव

प्रधान— श्री राजकुमार जी,
उपप्रधान—श्री किशोरीलाल जी,
मन्त्री—श्री सुदेश कुमार जी,
उपमन्त्री—श्री रामधन जी,
कोषाध्यक्ष—श्री विद्यासागर जी,
पुस्तकाध्यक्ष—श्री प्रभुदयाल जी,

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २० फाल्गुण २०१९, ३ मार्च १९६३ [अंक ९

वयं राष्ट्रे जागृयाम

अपने राष्ट्रिय और सामाजिक जीवन में सदा जागते रहो—यह वेदभगवान का उपदेश है। शिवरात्री का महापर्व मनाने के पश्चात् तो इसका महत्व और भी विचारणीय है। जागने वाला मूलशंकर दयानन्द बन कर सारे समाज को ही नहीं वरन् आधुनिक ससार के मानव समाज को जगा गया। सब ने अपने २ मतों के मन्तव्यों की पड़ताल की। सिद्धान्तों की पुरानी परिभाषाएं बदलीं। अपने २ मतग्रन्थों के भाष्य बदले, प्रवचनों की शैली मे, साहित्य तथा अन्य लेखों में भारी परिवर्तन किया। दयानन्द के जागरण के प्रकाश में सब ने अपने २ घर को टटोला मुख से कहें या न कहें, किन्तु मन से सब ने टंकारा के देवता की बाते स्वीकार कर लीं। राजनीति हो अथवा समाज सुधार, शिक्षा का क्षेत्र हो या धर्म प्रचार प्रत्येक मैदान में आर्यसमाज के विचारों का ही योग दान का वरदान स्पष्ट है। आर्यसमाज जागरूक रह कर सब को जगाने का काम अपने जन्मकाल से किये जा रहा है। आज सब की वाणी पर यही है कि विश्व सुधार का प्राय. सारा श्रेय इसी को ही है। वर्ष बीत गया। राष्ट्र अपने वार्षिक बजट अधिवेशन में सारे वर्ष के आय-व्यय के दर्पण को सारी जनता के सामने रखता है। देशकी कमजोरियों को दूर करने के लिए सब को सचेत करता है। जागते रहने की बात कहता है। आज के चीनी आक्रमण पर तो दिन रात जागना परमावश्यक है। थोड़ी सी निद्रा तथा इतना विश्राम देश को कहां पहुंचा देता है? इसका उदाहरण सामने है। जाग कर चीन द्वारा किये गये जातीय, राष्ट्रिय अपमान का बदला लेना होगा। यह काम जागने से ही होगा। राष्ट्र रक्षा के लिए बड़े से बड़ा बलिदान भी देना पड़ेगा। भारतीयों की निद्रा से इतिहास में क्या २ घटनाएं घटीं। यह पढ़कर लज्जा से मुख नीचे करना पड़ता है। सतर्क होकर जागरूक बनते हुए तन मन धन का समर्पण करते रहना है। राष्ट्र का जागरण सारे जन जीवन का जागरण है।

इस विषय मे एक बात आर्य समाज के दीवानो भाई बहिनों से भी कहनी है। अभी जनवरी मे अपनी आर्य प्रादेशिक सभा पजाब जालन्धर का भी वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ। आवश्यक बाते प्रचार के बारे मे बातचीत का विषय बनी। सभा का अपना शानदार संगठन है। समाजों का विशाल जाल बिछा है। समाजें जागती हैं। तो निस्सन्देह बाकी जनता जागती है। सभा के वार्षिक अधिवेशन में सब मान्य समाजों से सज्जनों ने पधार कर व्रत लिया है। धर्म प्रचार करने का संकल्प धारण किया है। सब ने मिलकर इस वर्ष सभा के मान्य प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी के कन्धों पर उत्तरदायित्व डाला है। हम सारे समाजों, संस्थाओं के सज्जनों से कहना चाहते हैं कि यह वर्ष भी विशेष महत्व तथा जागने का है। आप सभा के समाजों के महान कार्यों में जागते रहेंगे तभी सभा का राष्ट्र भी आगे बढ़ता जायगा। सभी का कर्तव्य है कि सभा के मान्य प्रधान जी तथा सारे अधिकारियों को पूरा सहयोग देते जावें। तन से मन और धन से सभा की सेवा मे जुट जावें। इस वर्ष सभा को और भी आगे ले जाना है। इस प्रकार राष्ट्र मे भी सचेत होकर जागें विघ्न बड़े हैं पर हमने तो जागना व आगे बढ़ना ही सीखा है।

महात्मा हंसराज शताब्दी

भारत मे महापुरुषों की गणना मे स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का पवित्र नाम भी आता है। हम तो पूज्य महात्मा जी को जीवनदानी, सर्वमेधी, त्याग की अप्रतिम जीवित प्रतिमा पुकारते हैं। अपने यौवन काल से एक पैसा समाज कालेज से लिये बिना आयुपर्यन्त सेवा करना दैवी आत्मा का ही काम है। स्वर्गीय पूज्य स्वामी सर्वदानन्द जी ने कहा था कि इस सफेद वस्त्रों वाले महात्मा पर कई गेरू कपड़ो वाले साधओ को भी अर्पित किया जा सकता है। शिक्षा के मैदान मे उनका विशाल कार्य सारे भारत तथा बाहर भी अमिट रहेगा। नदी की जलधारा तो किसी पर्वत से निकल कर कुछ २ स्थानों पर जाती तथा सागर में मिल जाती है। किन्तु डी. ए वी. आंदोलन की ज्ञानधारा देश के कोने २ मे प्रवाहित है। एक २ नगर मे इसका प्रवाह चलता है। इस ज्ञानधारा का मानसरोवर महात्मा हंसराज ही है। सारे देश में इस देवदानी की प्रतिष्ठा है। अपने लिए कुछ न बनाया, सब कुछ समाज का और समाज के अर्पण कर दिया। धर्मप्रचार में आर्य प्रादेशिक सभा के वही संस्थापक है। दयानन्द कालेज कमेटी जैसी विशाल शिक्षा का प्रबन्ध करने वाली संस्था के वस्तुतः वही प्राण थे। अपने पराये मुक्तकंठ से प्रशंसा करते है।

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी को पैदा हुए अगले अप्रैल १९६४ में पूरे सौ वर्ष हो जायगे। उनके जीवन की शती हो जाएगी। स्मृति दिवस तो प्रतिवर्ष मनाया जाता है परन्तु जन्मशताब्दी आ गई। एक वर्ष शेष है। हम चाहते है कि इस स्वर्गीय देवता का शताब्दी ऐसे समारोह से मनाई जाये कि अपने ढङ्ग की आप हो। अभी गत दिनों स्वामी विवेकानन्द जी की जयन्ती सारे देश में मनाई गई। भारत सरकार ने उनकी स्मृति में टिकटें भी जारी कीं। राष्ट्र के बड़े २ नेताओं ने भाषण भी दिये। समारोह भी हुए। प्रसन्नता है कि महात्माओ की जयन्ती होती है।

महात्मा हंसराज जी भी भारत के महापुरुष थे। उनका जीवन सारे देश के लिए है। उनका कार्य शिक्षा के मैदान मे सारे राष्ट्र के लिए आदिम प्रकाशस्तम्भ है। मानसरोवर है। सारी धाराएं तथा ज्योतियो की किरणें उसी से निकली है। वह केवल समाज के नहीं वरन सब के हैं। इसलिए जहां देश के बड़े अधिकारियों तथा नेताओं से हम कहना चाहते हैं कि महात्मा हंसराज जी की जयन्ती पर उनकी विशेष टिकटें प्रकाशित करें। यह सच्ची प्रतिष्ठा तथा कृतज्ञता है। इस मे सारे देश का मान है। आर्यसमाज पर विशेष उत्तरदायित्व है। आर्य प्रादेशिक सभा और डी० ए० वी० कालेज कमेटी का विशेष कर्तव्य है कि इस दिशा में मिल कर अभी से जनता मे जयन्ती मनाने की तैयारी करने का सन्देश देवें। मान्य डा० मेहरचन्द जी महाजन प्रिंसिपल दीवानचन्द जी कानपुर, पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज, प्रिंसिपल रलाराम जी प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा,

(शेष पृष्ठ ६)

आर्यसमाज के क्षेत्र से उस के पुराने महारथी अपनी जीवन-लीला समाप्त करके परलोक वासी होते जा रहे हैं और उन की अनुपस्थिति में एक ऐसा शून्य-स्थल बढ़ता जा रहा है जिसकी निकट भविष्य में शीघ्र पूर्ति होने की कोई सम्भावना दिखाई नहीं देती। इस दृष्टि से सन् १९६२ विशेष रूप से दुर्भाग्य पूर्ण है क्यों कि इस वर्ष में जितनी अधिक आर्यसमाजी विभूतियों का देहावसान हुआ है. उतना शायद किसी एक वर्ष में पहले नहीं हुआ। इस वर्ष की महान् क्षतियों में एक क्षति श्री पूज्य पं. परशुराम जी मैत्रेय अमृतसर निवासी का देहांत है, जो ९२ वें वर्ष की आयु में ता० २७.१०-६२ को मध्यान्ह के तीन बजे परलोक वासी हुए।

स्वर्गीय पं० परशुराम जी मैत्रेय

एक श्रद्धांजलि

(ले० —श्री धर्मपाल जी बी. ए., म्युनसिपल कमिश्नर अमृतसर)

✻✻✻✻✻✻★✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

मानवीय पण्डित जी अमृतसर में आर्यसमाज के ऐसे वयोवृद्ध नेता थे जिन्हों ने आजीवन एक आदर्श ब्राह्मण के रूप में आर्य समाज की अवैतनिक पुरोहित के रूप में सेवा की। आप का जन्म ज़िला होशियारपुर के शामचौरासी ग्राम में ८ माघ संवत् १९२७ में हुआ। आपके पिता जी पं. गैंडाराम जी राज-ज्योतिषी थे जिनकी मृत्यु के समय परशुराम जी की आयु केवल ७ वर्ष की थी। एक कट्टर पौराणिक परिवार में जन्म होने के कारण आप अपनी किशोरावस्था में उन्हीं विचारों से प्रभावित रहे और पौराणिक कर्मकांड में पूरी निष्ठा रखते थे, पर वेद के प्रति स्वाभाविक जिज्ञासा आपको आर्य समाज के निकट ले आई, क्योंकि आपको अपनी किशोरावस्था में ही ऐसा अनुभव होने लगा कि पौराणिक क्षेत्रों में वेद का नाम ही है, काम नहीं। शामचौरासी में डी. ए. वी. मिडल स्कूल में अध्यापक पद पर नियुक्त होने के पश्चात् आप आर्यसमाज की गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने लगे, जिस के कारण इन के ग्राम के कूएं से इन के परिवार का पानी लेना बन्द कर दिया गया।

जालन्धर निवासी ला० शंकर दास जी ने जो उन दिनों डी.ए.वी. स्कूल शामचौरासी में एक अध्यापक थे, पं. परशुराम जी को सूचित किया कि अमृतसर में आर्यसमाज मन्दिर लोहगढ़ में एक पुरोहित की आवश्यकता है और उन्होंने पण्डित जी को प्रेरणा की कि आप इस पद को अवश्य ग्रहण कर लें। सन् १९०० के अप्रैल मास में पूज्यपडित जी पहली बार अमृतसर पधारे और तब से लेकर देहान्त तक अमृतसर के ही होकर रहे। आपने २०/-रुपया मासिक पर आर्य समाज लोहगढ़ का पुरोहित पद ग्रहण किया, पर आपको इस पद पर अभी डेढ़ मास ही हुआ था कि स्वर्गवासी पूज्य महात्मा हंसराज जी ने आप को दीवान उत्तमचन्द जी के पास जम्मू में शुद्धि-कार्य के लिये नियुक्त करके भेजा। आप वहां हरिजन वस्ती में तीन महीने तक कार्य करते रहे. और पूज्य महात्मा हंसराज जी आप के कार्य से इतने प्रभावित हुए कि जब आप जम्मू से वापिस लौटे तो पूज्य महात्माजी ने पण्डित जी को दो पौंड और एक दुशाला भेंट करके सम्मानित किया।

सन् १९०६ में आप ने आर्य-समाज के उत्कृष्ट विद्वान श्री स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज से संस्कृत का विशेष अध्ययन प्राप्त किया और तब से आप ने अपना सारा जीवन आर्यसमाज की सेवा तथा हिन्दी और संस्कृत के प्रचार में लगा दिया। आप के प्रयत्नों के फलस्वरूप आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर में आर्य युवक समाज की प्रस्थापना हुई और इस युवक समाज के लिए किशोरों और युवकों का प्रशिक्षण उस समय आप का मुख्य कार्य था। शीघ्र ही आर्ययुवक समाज एक ऐसे शक्तिशाली संगठन के रूपमें उदय हुआ जिसकी धाक सारे पंजाब में व्याप्त हो गई। इन पंक्तियों का लेखक भी इस युवक समाज का एक सक्रिय कार्यकर्त्ता रहा है और वह इस बात का साक्षी है कि उन दिनों का आर्य युवक समाज आर्य समाज के मिशन के मतवाले, जोशीले आर्य युवकों का एक विलक्षण केन्द्र था।

सन् १९०६ में अमृतसर में डी. ए. वी. स्कूल की स्थापना हुई तो आप उसके प्रारम्भ-काल के अध्यापकों में एक थे और वहां आप हिन्दी संस्कृत की शिक्षा के साथ साथ धर्मशिक्षा एवं आर्य समाज के सिद्धांतों का भी विद्यार्थियों में प्रचार करते रहे—पर कालांतर में आप के हृदय में यह भावना उठी कि ब्राह्मण को नौकर होकर अध्यायन-कार्य नहीं करना चाहिये। इस विचार के उठते ही एक आदर्श ब्राह्मण के रूप में आप ने स्कूल से त्यागपत्र दे दिया और स्वतन्त्र रूपसे हिन्दी और संस्कृत के अध्यापनमें लग गए। यह वह युग था जब पंजाब में उर्दू का प्रभुत्व था और हिन्दी की ओर जन रुचि किंचिम्मात्र भी न थी। हिन्दी को उन दिनों "शास्त्री" कहा जाता था और हिन्दु-समाज में जन-साधारण की यह भावना थी कि हिन्दी पढ़ना केवल ब्राह्मण का काम है। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में हिन्दी का विद्यालय खोलना और वह भी स्वतन्त्ररूपमें, यह सचमुच एक बड़े ही साहस का काम था, पर पण्डित जी ने इस क्षेत्र में जो अद्भुत सफलता प्राप्त की वह उन की निर्भीकिता, सिद्धांतप्रियता, निष्ठा और साहस का एक ज्वलन्त उदाहरण है। आज अमृतसर में जो हिन्दी का इतना प्रचार और व्यापक अध्ययनाध्यापन-क्षेत्र है, उसका वास्तविक श्रेय पूज्य पण्डित जी के व्यक्तित्व को ही है, अमृतसर हिन्दी-प्रचार का यदि उन्हें प्रवर्तक कहा जाए, तो इसमें लेशमात्र भी अत्युक्ति नहीं। पंजाब यूनिवर्सिटी की ओर से हिन्दीरत्न, भूषण और प्रभाकर की परीक्षाओं की व्यवस्था थी, पर इन परीक्षाओंमें बैठने वाले परीक्षार्थियों की संख्या समस्त पंजाब भर में एक शतक को भी न हो पाती थी। पं० परशुराम जी ने अमृतसर में सर्वप्रथम इन परीक्षाओंकी व्यवस्थित योजना बनाई और सन् १९२६ में हिन्दीरत्न परीक्षा के लिए पहला छात्र-वर्ग तैयार करके परीक्षा में भेजा जिसका परीक्षा-परिणाम शत प्रतिशत रहा। उस समय प्रायः लोग पण्डितजी के इन प्रायसों का उपहास उड़ाते थे और भारी निराशा प्रकट करते थे, पर पंडित जी की अनवरत साधना का यह फल निकला कि कुछ ही वर्षों पश्चात् यह परीक्षाएं इतनी लोकप्रिय हुईं कि सहस्रों की संख्यामें छात्र छात्रा इन परीक्षाओं में बैठने लगे। आपने 'धर्म विद्यालय' नाम से एक शिक्षा-संस्था की भी स्थापना की, जिसको यह विशेषता थी कि अपने समय में यह एक मात्र ऐसा स्कूल था जहां आधुनिक पद्धति की शिक्षा के साथ २ प्रथम श्रेणी से ही हिंदी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाती थी। पूज्य पं. जी की अध्यापन शैली भी बड़ी विलक्षण एवं मनोविज्ञानिक आधार पर थी। उच्चारण की शुद्धता एवं सुलेख पर आपका विशेष उद्योग रहता था।

आज अमृतसर नगर में लगभग १४ आर्य समाजें हैं और यह देख कर आश्चर्य होता है कि प्रायः सब

(शेष पृष्ठ ६ पर)

महर्षि पतंजलि ने अपने योग शास्त्र में लिखा है—

"तपः स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधानानि क्रिया योगः"

अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधानानि क्रिया योग है। इस प्रकार से 'कर्मयोग' के तीन अंग बताये गये हैं।

प्रथम तप है। जिस मनुष्य के जीवन में तपस्या नहीं, वह कर्मयोगी नहीं बन सकता। तप क्या है? अपने जीवन को सफल बनाने व उसके उद्देश्य पूर्ति के लिए यत्न करना, उसके लिए किसी विपत्ति की परवाह न करना ही तप है। सोना जब अग्नि में डाला जाता है तो वह कुन्दन बनकर अधिक चमकीला तथा मूल्यवान हो जाता है। नगीना जो आभूषणों में लगाया जाता है। अकीक अर्थात खान से निकाले हुए बेढब हीरे को कई बार काट कर बनाया जाता है। कहा गया है "सौ बार जब अकीक कटा तब नगीं हुआ।" लोहा जब खान से निकाला जाता है तो उसमें कई प्रकार के मैल होते हैं। न इसमें कठोरता होती है न दृढ़ता, परन्तु जब आग की भट्टी में गर्म किया जाता है तो वह फौलाद बन जाता है, अब वही लोहा जो साधारण सी चोट से टुकड़े २ हो सकता था, अब इतना दृढ़ और कठोर हो जाता है कि हजारों मन बोझा अपने ऊपर सहन कर सकता है। तप ही कांच से निर्बल लोहे को फौलाद बनाता है। एक कच्ची ईंट वर्षा होने पर घुल जाती है, परन्तु वही ईंट आग की भट्टी में जब तपाई जाती है तो इतनी पक्की हो जाती है कि सैकड़ों वर्षायें उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकतीं। इसी प्रकार मनुष्य के लिये तपस्या शक्ति प्राप्ति का साधन है। इसकी नींव जीवन के प्रथम भाग में पड़ती है। इसलिए शास्त्र कहते हैं कि ब्रह्मचारी के लिए विलासता का जीवन निषेध है।

कर्मयोगी दयानन्द

(श्री ज्ञान सिंह जी नई देहली)

विलियम जेमस ने कहा है कि जीवन में तपस्या का वही अंश है जीवन में बीमा चन्दा के तुल्य है। जब तक कोई विपति नहीं आती तब तक यह चन्दा निष्प्रयोजन प्रतीत होता है। विपति आने पर ही उसका मूल्य ज्ञात होता है।

प्रकृति में भी तपस्या का प्रत्येक ओर दर्शन होता है। अनाज अथवा फल आदि अपना जीवन बड़ी कोमल अवस्था में आरम्भ करते हैं। परन्तु पकने के लिए उन्हें भी महीनों धूप तपना पड़ता है। अनाज व दूसरे अन्य खाद्य पदार्थ वर्षा से पैदा होते हैं। वर्षा का कारण समुद्र की तपस्या है। इसी प्रकार से मनुष्य को भी शक्ति प्राप्त करने के लिए तप की आवश्यकता है। स्वामी दयानन्द जी का जीवन तपस्या का जीवन था। उन्होंने जब सच्चे शिव की खोज में घरबार छोड़ा तो कई वर्षों तक जंगलों की खाक छानी। उन्होंने निरन्तर कई सर्दी की रातें नदियों की रेत पर व्यतीत कीं। कई हिम नदियों को पार किया। स्वामी विरजानन्द के आश्रम में उन्होंने तीन वर्ष एक ऐसी कोठरी में व्यतीत किए जिस में वे पूरी तरह से लेट भी नहीं सकते थे। जब सन १९६६ में वे हरिद्वार में कुम्भ मेले के उपरान्त उन्होंने अपने जीवन में तपस्या की मात्रा को बढ़ाने का निश्चय किया तो एक दुशाला व तीन रुपये जो उनके पास थे अपने गुरु विरजानन्द को मथुरा भेज दिए। शेष जो कुछ भी था हरिद्वार में बांट दिया तथा केवल लंगोटी तथा एक कमण्डल के साथ भ्रमण आरम्भ किया। यदि लंगोटी को धोना होता तो एकान्त स्थान में धोकर उसे धूप में डाल देते और उसके सूखने तक आप नदी में ही रहते। आप जमीन पर ही सोते थे यदि अधिक किया तो ईंट को सिराहना बना लिया।

कुछ समय पश्चात तपस्या का रूप बदल गया परन्तु इसका तत्व उनके जीवन का अंग बना रहा। वे सारी आयु ब्रह्मचारी रहे। वास्तव में ब्रह्मचारी जीवन ही तपस्या का जीवन ही होता है। उनकी दृढ़ संकल्प शक्ति उनकी तपस्या का ही फल थी।

'कर्मयोग' का दूसरा अंग स्वाध्याय है। विचार शक्ति एक महान शक्ति है। एक अंग्रेज लेखक ने लिखा है कि जैसा मनुष्य विचार करता है वैसा ही वह बन जाता है। विचार ही किसी मनुष्य व जाति को नीचे गिराते हैं तथा विचार ही उन्हें ऊपर उठाते हैं। विचारों ने ही अर्जुन को युद्ध से विमुख होने की प्रेरणा दी और भगवान श्री कृष्ण ने विचारों के इन्जैक्शन से ही कायरता को दूर भगाकर उसकी शंकाओं को मिटाकर उसे युद्ध के लिए तैयार किया।

स्वामी दयानन्द जी ने विचारों के द्वारा ही मृत हिन्दू जाति में नई जान फूंक दी उनके अन्दर अपने उज्ज्वल अतीत, संस्कृति व सभ्यता के लिए मान उत्पन्न किया। स्वाध्याय विचारों के बनाने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है।

तपस्वी जीवन हमें कार्य की शक्ति देता है। परन्तु यह जानने के लिए हमें क्या करना चाहिए ज्ञान की आवश्यकता है। ऐसे ज्ञान की प्राप्ति के लिए हम उन विद्वानों तथा महात्माओं के विचारों से लाभ उठा सकते हैं जिन से हमारा सम्पर्क न हो सकता हो या जो अब संसार में विद्यमान नहीं। स्वाध्याय, वेद, उपनिषद्, अन्य धार्मिक ग्रन्थों व आत्मा को उन्नत करने वाली रचनाओं के अध्ययन के नाम है। स्वामी दयानन्द एक आदर्श विद्यार्थी थे। उनके जीवन के दो प्रमुख कार्य थे—मौखिक प्रचार वा पढ़ना लिखना। वह स्वाध्यायी थे। शायद ही कोई वैदिक साहित्य व धार्मिक ग्रन्थ होगा जो उनकी दृष्टि से न गुजरा हो। इसी कारण वे विद्या के सागर समझे जाते थे। जब उनका देहांत हुआ तो सर सैय्यद अहमद खां ने ठीक ही कहा था कि आज संस्कृत विद्या का सूर्य अस्त हो गया है।

मनुष्य में जीवन शक्ति का होना आवश्यक है। इसके साथ ही साथ मानसिक शक्ति भी आवश्यक है। जीवन शक्ति के लिए तपस्या की आवश्यकता है तथा मानसिक शक्ति के लिए स्वाध्याय की; परन्तु यह दोनों कर्मयोग के लिए पर्याप्त नहीं। केवल ज्ञान व शक्ति का होना ही पर्याप्त नहीं। इसके साथ यह भी आवश्यक है कि मनुष्य इस शक्ति व ज्ञान को किस उद्देश्य के लिए प्रयोग में लाये।

कर्मयोगी की जांच यह है कि उसकी दृष्टि एक ऊंचे आदर्श पर लगी हो। वह जो कुछ भी करना चाहता हो उसे ईश्वरीय आज्ञा समझकर अपनी सभी शक्ति उसमें लगा दे। उसे ईश्वर पर दृढ़ विश्वास हो। वह अपना सब कुछ ईश्वर के अर्पण कर दें। इस भावना को धार्मिक भाषा में 'प्रणिधान' कहा जाता है तथा यही 'कर्मयोग' का तीसरा अंग है।

आत्मिक उन्नति की अन्तिम सीमा यह है कि मनुष्य अपने आप को परमात्मा के सम्पर्ण कर दे। स्वामी दयानन्द जी का सारा जीवन दया से ओत-प्रोत था। उनकी प्रत्येक क्रिया पर ईश्वरीयता की छाप थी।

सारांश यह है कि स्वामी दयानन्द जी का जीवन तपस्या का जीवन था। वेदशास्त्र का स्वाध्याय और उनका प्रचार जीवन का मुख्य कार्य था। वे एक सच्चे ईश्वर भक्त थे। जब दीपावली की रात्रि को उनकी आत्मा ने मानव चोले को छोड़ा तो उनके अन्तिम शब्द यही थे—'परमात्मा तेरी इच्छा पूर्ण हो।' जो मनुष्य अपनी इच्छा ईश्वर की इच्छा में विलीन कर देता है, मानो उसने तो कर्मयोग में सफलता प्राप्त करली है। कर्मयोग का ऐसा उज्जवल उदाहरण और कहां मिलेगा। परमात्मा करे कि हम भी स्वामी दयानन्द जी के गुणों तप, स्वाध्याय, ईश्वरापर्ण को अपने जीवन में ग्रहण करें।

(पृष्ठ ४ का शेष)

उनमें से मुख्य कार्यकर्ता वही लोग हैं, जो पूज्य पण्डितजी के सम्पर्क एवं प्रशिक्षण से ही आर्य समाज की सेवा में आये। अमृतसर का आर्य जगत् आप का चिरऋणी रहेगा, क्योंकि अमृतसर में आर्य समाज की प्रगति में आपकी एक विशिष्ट एवं प्रमुख भूमिका है। आर्य समाज के सत्संगोंमें आपके प्रवचन उच्चकोटि के होते थे। आपके सिद्धांत संबंधी लेख भी महत्वपूर्ण समझे जाते थे। आर्यसमाज के सदस्यों मे वेदमन्त्रों के शुद्धोच्चारण के लिए आपने कई कक्षाएं स्थापित की। आपका गृहस्थ जीवन भी एक आदर्श आर्य ब्राह्मण के अनुरूप था और आपने धनको कभी धर्म के ऊपर सवार होने नहीं दिया। धन के प्रति इस उपेक्षा के कारण ही आपका समस्त जीवन आर्थिक कठिनाइयों के साथ व्यतीत हुआ, पर कठिनाइयों के साथ होते हुए भी आपने अपने पुत्र पुत्रियां को उच्च शिक्षा से दीक्षित किया। आपके तीनों पुत्र पं. रामदेव जी मैत्रेय, डा० परमानन्द जी शास्त्री M.A. phd, तथा पं जगदीश मित्र सुयोग्य एवं सुशिक्षित हैं। डा० परमानन्द M.A. phd पंजाब गवर्नमेंट के हिंदी विभाग के निर्देशक(Director)हैं और पंजाब के शिक्षा-क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं।

स्वर्गीय पूज्य पं० परशुराम जी की प्रतिभा बहुमुखी थी और उनके विविध गुणों और विशाल कार्य-कलाप का उल्लेख इस एक लेख के कलेवर में लिपिबद्ध होना सम्भव नहीं। अत: उनकी केवल एक ही और विशेषता का संकेतमात्र करके लेखनी को विराम देना चाहता हूं और वह विशेषता थी उनका वैदिक कर्मकाण्ड का गम्भीर अध्ययन तथा उसके प्रति निष्ठा का प्रचार। कर्म-काण्ड सम्बन्धी उनका ज्ञान इतना परिपक्व था कि संस्कारों के विषय में उनके मौलिक विचारों तथा परिपाटी की बड़े २ विद्वान भी सदा प्रशंसा करते थे। ऐसे महान् कर्म-काण्डी विद्वान का हमारे मध्य से चला जाना सचमुच ही बड़े दुःख का कारण है। कल तक जो हमारे मध्य में थे और अपनी पितृतुल्य छत्रछाया से हम सब को आच्छा-दित किये हुए थे, वह आज अतीत का विषय हो गए हैं, इतिहास की सामग्री बन गए है—पर व्यक्तियों की व्यथा को विधाता के विधान में व्यवधान रूप होने की कोई व्यवस्था नहीं। ईश्वरेच्छा के आगे नतमस्तक होना ही आस्तिक बुद्धि है। अत: उस कर्मकाण्ड पारगत दिवंगत आत्मा की पवित्र स्मृति में एक छोटी सी पद्यात्मक श्रद्धांजलि अर्पित करके विषादपूर्ण हृदय के साथ विराम लेता हूं—

दानियों मे कर्ण जैसे,
ज्ञानियों में याज्ञवल्क्य,
ध्यानियों में जैसे शुकदेव
जी थे अग्रणी।
मानियों में श्रेष्ठ,
महाराणा प्रताप जैसे।
वाणियों में जैसे वेद वाणी
की अमर ध्वनि।
रानियों में जैसे
महारानी मिथला कुमारी
प्राणियों में जैसे
रघुकुल के महाप्राणी।
मानियों में जैसे गंगा
वैसे परशुराम जी थे।
कर्मकाण्ड ज्ञानियों में
पण्डित शिरोमणि॥

आर्यसमाज किला जालन्धर शहर का वार्षिक चुनाव

३ मार्च १९६३ को सायं ५ बजे आर्यसमाज मन्दिर किला मुहल्ला में होगा। कृपया सब सदस्य नोट कर लेवे।

खुशहाल चन्द पाराशर
मन्त्री

आर्यसमाज की शिथिलता का कारण

[लेखक श्री पिशौरीलाल 'प्रेम' रेणु का जिला सिरसौर (H.P.)]

आर्यसमाज के योग्य व्यक्तियों ने कई वार इस विषय पर अपने विचार प्रकट किए हैं। एक विचार यह है कि कई आर्यसमाजी जो कि आर्य शिक्षा संस्थाओं को चला रहे हैं इन संस्थाओं को चलाने में उनकी सारी शक्ति व्यय हो जाती है और आर्यसमाज के प्रचार की ओर उनका ध्यान नहीं होता। इसके अतिरिक्त संस्थाओं को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है धन एकत्र करने के लिए कई धनी चरित्रहीन व्यक्तियों को, जो कि आर्यसमाज के सिद्धान्तों को न जानते हैं न मानते हैं उन्हें पदाधिकारी बनाना पड़ता है और ऐसे पदाधिकारियों के निरीक्षण में जो संस्थाएं चलती हैं वह आर्य-समाज के प्रचार का कारण कदापि नहीं हो सकतीं। इसके विपरीत कई महानुभाव इन संस्थाओं को आर्यसमाज के प्रचार का मुख्य साधन समझते हैं इनके विचार मे यह संस्थाएं गैर आर्यसमाजी नवयुवकों को आर्यसमाज की ओर आकर्षित करती हैं इन संस्थाओं ने आर्यसमाज को कई अच्छे-अच्छे रत्न दिए हैं।

एक विचार यह है कि आर्य-समाज को सामुहिक रूप में राज-नीति मे भाग लेना चाहिए। क्योंकि जैन, बौद्ध, इस्लाम और ईसाईयत आदि साम्प्रदायों के प्रचार का कारण यही था—कि इनके पीछे राज्य शक्ति कार्य करती थी। राज्यशक्ति से ही धर्म का प्रचार सुगमता से हो सकता है। इसके विपरीत कई महानुभावों का विचार है—कि आर्यसमाज को राजनीति में बिल्कुल भाग नहीं लेना चाहिए। क्योंकि धर्म प्रचार के लिए राज-नीति में भाग लेने की आवश्यकता नहीं है। वर्तमान राजनीति का आधार छल-कपट और झूठ है। अगर आर्यसमाज ने राजनीति में भाग लिया तो यह सत्यपथ से विचलित हो जाएगा। धर्म का आधार है सत्य। सत्य के बिना धर्मप्रचार कैसा?

(क्रमशः)

(पृष्ठ ३ का शेष)

प्रिंसीपल सूर्यभानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी एवं सारे कालेज कमेटी तथा सभा के अधिकारियों से निवेदन है कि इस जयन्ती के बारे में अपने प्रथम अवकाश में ही निर्णय करके एक जयन्ती समिति बनाकर सारे देश में तैयारी करें। भारत सरकार पर टिकटें प्रकाशित करने तथा रेडियो पर विशेष प्रोग्राम ब्राडकास्ट करने पर जोर देवे।

—त्रिलोक चन्द्र

शिवरात्री विशेषांक

आर्य जगत् का आप के सामने है। हम ने अपने कर्तव्य को निभाया। विद्वानों ने कृपा पूर्वक अपने अमूल्य विचारों का प्रसाद लेखों कविताओं के रूप में इसके लिए प्रदान किया। उनका विशेष धन्यवाद है। संस्थाओं तथा समाजों ने बड़ी कृपा की है। आप की ही सभा है उसका यह पत्र भी आप का ही तो है हम तो केवल आज्ञा पालते हुए केवल सिपाही हैं। इस में जो कुछ त्रुटियां, न्यूनताएं हैं वे हमारी तथा जो विशेषताएं हैं वे आप की अपनी हैं। कई विद्वानों के लेख देर में आने के कारण रह गये। नम्रता पूर्वक क्षमा चाहते हैं कई समाजों के संस्थाओं के प्रतियों के लिए आर्डर देर से आने पर रह गये। क्षमा प्रार्थी हैं। आप का इसी प्रकार सहयोग तथा आशीर्वाद मिलता रहे। —सं०

प्रादेशिक सभा के वेदप्रचार का कार्य

आ० स० पुराना मंडी-जम्मू में—शिवरात्रि महोत्सव १६ से २२ फरवरी तक धूमधाम से सम्पन्न हुआ। खुशी राम शर्मा की कथा और हजारी लाल जी के भजन होते रहे। २१ ता० रात्रि को आ० स० कोटली कालोनी जम्मू में बोधोत्सव समारोह से मनाया गया। दोनों समाजों ने जनता को प्रसाद बांटा।

आ० स० पुरानी मंडी जम्मू का उत्सव—सम्मिलित रूप में मनाने का निश्चय हुआ। ३०—३१ मार्च १ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आ० स० अखनूर (जम्मू) का उत्सव—३१ मार्च १, २ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ चंमा से श्री प० ओंप्रकाश जी की कथा और श्री मेलाराम जी के भजन होंगे।

आ० स० शामचौरासी का उत्सव—५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ३० मार्च से कथा और यज्ञ होगा। कथा खुशीराम शर्मा करेंगे। और श्री राजपाल जी मदनमोहन जी के भजन होंगे।

आ० स० लारेंस रोड अमृतसर—में ३ मार्च से १० मार्च तक खुशी राम शर्मा की कथा और श्री ताराचन्द जी के भजन होंगे।

आ० स० पजौड का उत्सव—१८ मार्च से सम्पन्न हो रहा है।

आ० स० मोगरा का उत्सव—मार्च के अन्तिम सप्ताह में सम्पन्न हो रहा है।

आ स कुंजपुरा (करनाल) का यज्ञ उत्सव—११ से १७ फरवरी तक समारोह से सम्पन्न हुआ। श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री मेलाराम जी, श्री अमरसिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी, श्री रामकरण जी, श्री महावीर जी, श्री नत्थूराम जी, श्री पं० मुरारीलाल जी पधारे।

आ स दसूआ का उत्सव—२२ से २४ फरवरी को धूमधाम से सम्पन्न हुआ। १६ ता० से प० साजनदेव जी की कथा और श्री ताराचन्द जी के भजन होते रहे। उत्सव पर मान्यवर पं० रलाराम जी प्रधान सभा, म० देवीचन्द जी, श्री प० ओम् प्रकाश जी, श्री मेलाराम जी, श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी, श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी, श्री बूटाराम जी आदि महानुभाव पधारे।

आ स कुरडी (हिसार)—में बोधोत्सव २२ ता० से २६ फरवरी तक धूमधाम से सम्पन्न हुआ श्री पं० मुरारी लाल जी, श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री राजाराम जी, श्री मदनमोहन जी, श्री चन्द्रसेन जी आदि महानुभाव पधारे।

आर्यसमाज अमृतसर की ओर से शिवरात्रि पर्व धूमधाम से १६ से २२ तक मनाया गया। श्री पं० ओंप्रकाश जी, १६ से कथा आ. स. लारेंस रोड में करते रहे। २१ ता० को भारी जलूस निकाला गया।

आ० स० नंगल टाउन शिप—में ३ मार्च से १० मार्च तक सामवेद यज्ञ और प्रचार हो रहा है। श्री राजपाल जी मदनमोहन जी पधार रहे हैं।

आ० स० कठूआ में बोधउत्सव—धूमधामसे मनाया गया। श्री पं० साजनदेव जी मा० ताराचन्द जी पधारे।

आ० स० तरवाडा में शिवरात्रि पर्व—धूमधाम से मनाया गया। श्रीमान् मान्यवर प० रलाराम जी प्रधान सभा, श्री मेलाराम जी पधारे।

२ से ४ न्टिोली ५ से ७ मार्च—, से ८ मदाना डागो, ११ से १३ खरकडा, यह उत्सव श्रीमान् जमादार भरतसिंह जी तथा चौ० भूराराम जी के प्रबन्ध में सम्पन्न हो रहे हैं—ठा० दुर्गासिंह जी, पं० प्रभुदयाल जी मडली प० चन्द्रसेन जी, चौ० भूराराम जी, जमादार भरतसिंह जी पधार रहे हैं।

१६ से १८ मु डाल—१६, २०—मातरस्याम, २७, २८ १ मार्च पौली, १२ से १४ सोसर ६ से ८ भिडी ६ से ११ मिर्जापुर खेडी २ से ४ भभेवा यह उत्सव फरवरी मास में जमादार भरतसिंह जी, चौ० भूराराम जी के प्रबन्ध में समारोह से सम्पन्न हुये। जमादार भरतसिंह जी, चौ० भूराराम जी प० चन्द्रसेन जी ठा० दुर्गासिंह जी, पं० जयनारायण जी प० प्रभुदयाल जी मडली, यह सज्जन पधारे।

आर्यसमाजों से निवेदन

सभी सम्बन्धित आर्यसमाजों के अधिकारी महानुभावों से निवेदन है कि ऋषिबोध उत्सव हो चुका है। कृपया वेदप्रचार के लिए चार आना फंड शीघ्र सभा में भेजने की कृपा करें।

—खुशीराम शर्मा अधिष्ठाता वेदप्रचार

आ० स० पुरानी मंडी जम्मू में सुरक्षाकोष

६ फरवरी १९६३ को मुख्यमंत्री जम्मू काश्मीर राज्य को पांच हजार की भेंट सुरक्षाकोष के लिये दी गई। और १३ तोले के लगभग सोना भी भेंट किया गया।

पांच हजारकी राशि में एक हजार श्री बा० कृष्णलाल जी गुप्ता प्रधान आर्यसमाज पुरानी मंडी जम्मू ने दिया।

—व्यवस्थापक

ग्राहक महानुभाव पत्र व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

आर्य प्रादेशिक सभा

का

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग

बड़ी लगन से साहित्य द्वारा आर्य जगत की सेवा निरन्तर चालीस पचास वर्ष से कर रहा है। इसके स्टाक में भारी संख्या में उपयोगी ग्रन्थ मौजूद हैं।

सत्यार्थ प्रकाश प्रथम और द्वितीय समुल्लास का भाष्य लेखक श्री वाचस्पति जी *M.A.* लेखक महोदय ने बड़ी योग्यता के साथ स्वामी दयानंदजी के हर एक विचार की व्याख्या की है तथा समुल्लासों के अन्तर्गत सिद्धांतों पर भी प्रकाश डाला है जिससे मध्यम कक्षा के विद्यार्थी भी लाभ उठा सकते हैं ये दोनों भाग स्कूल के छात्रों के लिए धर्म शिक्षा के विषय को अति उपयोगी बनाने में सहायक सिद्ध होंगे। २०×३०/८ पर छपी हुई पुस्तक का दाम १.०० मात्र है।

अमृतवाणी—

इसके लेखक हैं स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज—जैसा कि पुस्तक के नाम से ही प्रकट है कि इस छोटी सी पुस्तक में अमृत भरी वाणियों का संग्रह किया गया है। मन पर प्रभाव डालने वाली कविताओं मे ईश्वर भक्ति तथा यम नियमों का वर्णन विषाद रूप से है। जिस प्रकार सिख जनता प्रातः नित्य कर्म से निवृत होकर सुखमणि का पाठ करती हैं उसी ढंग पर हिंदु देवियों तथा कन्याओं के लिए प्रातः पठनार्थ अमृत वाणी की रचना हुई है। बाइंडिंग क्लाथ की बनी हुई सुन्दर मजबूत जिल्द की कीमत ५० नये पैसे और बिना जिल्द की ३१ न[illegible]. है।

[illegible] पचीस रु० या इससे [illegible] माल मंगाने पर ५०% कमीशन प्राप्त करें तथा ५० रु० से कम के माल पर २५%प्राप्त करें।

प्राप्ति स्थान महात्मा हंसराज साहित्य विभाग निकटकोर्ट जालन्धर

देश के समाचार

भारत सरकार के सूचना कार्यालय से प्राप्त

राष्ट्रीय रक्षा कोष में [illegible] करोड़ रु० से अधिक

नई दिल्ली, २३ फरवरी १९६३ महा राष्ट्रीय रक्षाकोष के केन्द्रीय खातों में आज शाम तक ४५ करोड़ २८ लाख रु० जमा हुआ है। इस में से २७ लाख ६ हजार रु० ब्रिटेन और ४० लाख ६२ हजार रु० अन्य देशों से मिला है। इस के अलावा १५,६६,८६१ ग्राम सोना भी जमा हुआ है।

मछली पालने का कार्यक्रम

नई दिल्ली २४ फरवरी—सामुदायिक विकास और सहकार मंत्रालय ने देश भर के ६०० चुने हुए विकास खंडों में मछली पालने का कार्यक्रम शुरू किया है जिस में खाद्य और कृषि मंत्रालय भी योग देगा।

बूडापेस्ट के वाणिज्य मेले मे भारतीय मण्डप

हंगरी की राजधानी बूडापेस्ट में जो प्रदर्शनी ७ मई को शुरू होने वाली थी, अब वह १७ मई को शुरू होगी और १० दिन तक चलेगी।

इस में भारतीय मण्डप भी लगाया जाएगा, जिस में भारत की निर्यात योग्य वस्तुएं रखी जाएंगी।

[illegible]यर में नया रेडियो स्टेशन

रांची में पत्रकारों से बात करते हुए डा० गोपाल रेडी ने कहा कि तीसरी योजना में ग्वालियर में एक रेडियो-स्टेशन खोला जाएगा। साथ ही भागलपुर, रायपुर और अगरतल्ला में रिले केन्द्रों के खोलने की योजना है।

अप्रैल मे उपचुनाव

चुनाव आयोग ने निर्णय किया है कि संसद के ६ और विधानसभा के २८ चुनाव क्षेत्रों के उपचुनावों को स्थगित रखना अब जरूरी नहीं है। चुनाव आयोग ने सरकार की सलाह लेने के बाद यह निर्णय किया है। मतदान की तिथि अप्रैल में निर्धारित होने की संभावना है।

श्री हाजरनवीस गृह मत्रालय मे राज्य मंत्री नियुक्त

खान और ईंधन मंत्रालय में उपमंत्री, श्री रामचन्द्र मार्तण्ड हाजरनवीस गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री नियुक्त किये गये हैं।

जनवरी मे अधिक निर्यात

जनवरी १९६३ में भारत से ६२ करोड़ ५० लाख रु० का माल निर्यात हुआ, जो पिछले वर्ष की जनवरी से ५ करोड़ ५० लाख रु० अधिक है।

१९६२-६३ के पहले १० महीनों में ८ अरब ६० करोड़ रु० का माल विदेशों से मंगाया गया, जो प्रायः १९६१-६२ के पहले १० महीनों के आयात जितना ही है।

राष्ट्रीय रक्षा कोष में योगदान

मिलिटरी लैंड्स और कैंटोनमेंट सर्विस और उस से सम्बद्ध संगठनों ने अब तक रक्षा कोष में १,३६,३५१,८० रु० दिया है। इन संगठनों के कई कर्मचारी अपने वेतन का १ प्रतिशत रक्षा कोष में दे रहे हैं।

विश्व सड़क कांग्रेस की स्मृति मे टिकट नही

भारत में जो बारहवीं विश्व सड़क कांग्रेस होने वाली थी, वह रद्द कर दी गई है, अतः इसकी स्मृति में जो विशेष डाक-टिकट जारी होने वाले थे, वे अब नहीं होंगे।

शोक समाचार

आर्यसमाज लक्ष्मणसर-भारत माता के सच्चे सपूत हिन्दू जाति के उद्धारक, आर्यसमाज के मस्ताने, सत्य और निर्भयता के दीवाने श्री महाशय कृष्ण जी के देहांत पर हार्दिक वेदना प्रकट करता है। घोर संकट में ग्रस्त देश और जाति की महान् हानिकारक और न पूरी होने योग्य क्षति समझता है।

रुद्रदत्त शर्मा, प्रधान आर्यसमाज

शोक समाचार

आर्य जगत व हिन्दु जाति के विख्यात नेता तथा उच्च कोटि के सम्पादक और लेखक श्री महाशय कृष्ण जी का कल रात १२ बज कर १० मिंट पर उनके अपने निवास स्थान पर आकस्मिक देहावसान होने का दुःखद समाचार सुनकर किसी भारतीय को दुःख नहीं हुआ होगा? इन के निधन से आर्य परिवार की और सम्पादक मंडल की जो क्षति हुई है उसकी पूर्ति होना अत्यन्त कठिन है। हम उनकी आत्मा की सद्गति के लिए तथा उनके परिवार को दारुण दुःख सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए प्रभु से हार्दिक प्रार्थना करते हैं।

—संतोषराज मंत्री सभा

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जलन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५५ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. o.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे | वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक १०) रविवार २७ फाल्गुण २०१९— मार्च १० १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

ऋषि दर्शन

गुणान् महह्यं देहि

हे प्रभो! जितने भी शुभ गुण है, जिन मे जीवन ऊंचा बन जावे—वे सारे उत्तम गुण मुझ को प्रदान करें। मैं शुभगुणो वाला बन जाऊं।

दोषान च विनाशय

और जितने भी दोष, दुर्गुण दुर्व्यसन और दुर्विचार है जिन से जीवन पतन की ओर जाता है—उन सब का नाश करो—उन को दूर करो।

त्रिविधं सर्वं जगत्

यह सारा संसार तीन प्रकार का है। जितना भी यह विश्व दिखाई देता है। तीन प्रकार मे विभक्त है। उत्तम मध्यम और नीच स्वभाव मे है।

भाष्य भूमिका

वेदामृत

शंन इन्द्राग्नी भवनामवोभिःशंन इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ॥ —ऋक् मं० ७ सूक्त ३५ मं० १

अर्थ —(शं नः) हमें शांति और कल्याण देने वाले हों (इन्द्राग्नी) इन्द्र और अग्नि (भवताम्) होवे (अवोभि) अपने रक्षा करने के साधनों से तथा (शंन) हमारा कल्याण करें (इन्द्रा वरुणा) इन्द्र और वरुण बिजली और जल (रात हव्या) लेने और देने वाले (शम्) शांति देवें (इन्द्रासोमा) इन्द्र और सोम बिजली तथा सोमरस आदि ओषधियां (सुविताय) सुख के लिए (शंयो) कल्याणकारी हों (इन्द्रा पूषणा) इन्द्र और पूषा वायु हमारे प्रत्येक जीवन क्षेत्र में कल्याण करते रहें—

भाव.—इस विशाल विश्व में भगवान के नियत विधान मे कितने तत्व काम में लगे हैं। ये सारे पदार्थ हमारे सुख के लिए ही तो हैं। ये वायु, अग्नि, जल, विद्युत, सोम आदि नाना ओषधिया वनस्पतियां आदि जितने दिव्य गुणों से भरे देव हैं—हमें शांति देते हैं, जीवन को सुखी बनाते हैं, सदा कल्याण करने वाले हैं। नाना प्रकार के रोगों का निवारण करते हैं। यह सारी उसी परमपिता की दी हुई सृष्टि है, उसी का अपनी प्यारी सन्तान को महान दान ही तो है। यदि हम इन अत्यन्त लाभ व गुणकारी पदार्थों से कोई लाभ नहीं उठाते या अपने अज्ञान के कारण हानि उठाते हैं, इनका विपरीत प्रयोग कर बैठते हैं—तो यही शांति के स्थान अशांति देने लगते हैं। इसलिए प्रत्येक का कर्त्तव्य है कि इन सारे अग्नि, वायु, जल, ओषधियों के पूरे २ ज्ञान पूर्वक उपयोग की विद्या को सीखे। इनसे सारे विश्व को लाभ पहुंचायें। हे प्रभो! आप महादेव हैं। ये देव हमें सुख देवें—सं०

वेद सूक्तयः

द्विषतां वर्च आददे

सारे सुनलें। मैं शत्रुओं की, राष्ट्र, धर्म, संस्कृति, सम्पत्ति को नष्ट करने वाले वैरियों की शक्ति को नष्ट कर दूंगा। मेरे सामने शत्रु का बल समाप्त हो जायगा।

जितम् अस्माकम्

कान खोल कर शत्रु सुन लेवें—कि विजय हमारी है और होगी। हमें न कोई पराजित कर सका है और न ही कोई हरा सकेगा। जीत हमारी है, हमारी है। घोषणा है—जीत हमारी ही है।

अभ्यष्ठां विश्वाः पृतनाः

विश्वा—जितनी भी पृतना शत्रु की सेना है, उन को मैं ने अपने राष्ट्रबल से अभ्यष्ठा—हरा दिया है। सर्वथा पराजित कर दिया है मेरे सामने सेना टिक नहीं सकती।

अथर्ववेद

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकास्तपसा पिपर्ति।

ब्रह्मचर्य बड़ा पवित्र और चित्ताकर्षक शब्द है। ब्रह्मचर्य का साधारण और भौतिक अर्थ है वीर्य रक्षा। वीर्यरक्षा करना बहुत कठिन काम है परन्तु इस कठिन कार्य को पूरा करने का महत्व और लाभ भी उतना ही अधिक है। वीर्य वह वस्तु है जो कि सम्पूर्ण शरीर का तेजःसार है, सम्पूर्ण शरीर का स्वत्व है, सम्पूर्ण शरीर का सारांश है। वीर्य के एक कण में बहुत से जीवनों को उत्पन्न करने की शक्ति है। ऐसी दशा में रक्षित वीर्य मानव को कितना जीवन सम्पन्न कर सकता है, यह सोचा जा सकता है। इसके महत्व को सुकरात ने इस प्रकार बतलाया है। एक बार स्त्री पुरुष के सहवास के विषय मे एक शिष्य ने सुकरात से पूछा—पुरुष को स्त्री प्रसग कितनी बार करना उचित है?

सुकरात—जीवन में एक बार।

शिष्य—यदि इस से तृप्ति न हो सके तो?

सुकरात—तो प्रतिवर्ष एक बार।

शिष्य—यदि इस से संतुष्टि न हो तो?

सुकरात—फिर महीने में एक बार।

शिष्य—इस से भी मन न भरे तो?

सुकरात—महीने में दो बार पर मृत्यु शीघ्र आजायेगी।

शिष्य—इतने पर भी इच्छा बनी रहे तब क्या करे?

सुकरात—फिर ऐसा करे कि पहले कफन लाकर घर में रख ले तब जो इच्छा हो करे।

सचमुच वीर्य में अद्भुत शक्ति होती है। स्वामी दयानन्द ने जगत् में आकर जो इतना महान कार्य किया। भारी अज्ञान को हटाया,

यम नियम-चर्चा (४)

—ब्रह्मचर्य—

(प० सुरेश चन्द्र जी वेदालंकार एम० ए० एल० टी० डी-बी कालेज गोरखपुर)

बहुत से जीवनों को पलटा, सत्य का डंका बजाया और अपने युग को ही बदल दिया, इसका यदि कोई भौतिक कारण खोजा जाय तो वह उनके शरीर मे रक्षित किया हुआ वीर्य था। इस ब्रह्मचर्य के प्रचलित अर्थ के अनुसार वीर्य रक्षा आवश्यक वस्तु प्रतीत होती है। पर आज की भौतिकवादी संस्कृति वीर्य रक्षा को उपहासास्पद वस्तु समझती है। परिणाम यह है कि आज चारों तरफ ब्रह्मचर्य विरोधी वातावरण उत्पन्न हो गया है। सिनेमा में कला का नाम लेकर गन्दे दृश्य दिखाये जाते हैं, वेश्याओं द्वारा संगीत के नाम पर अश्लील गीत गाए जाते हैं, सांस्कृतिक प्रदर्शनों के नाम पर माताओं एव बहनों का नंगा शरीर दिखाया जाता है, पाठ्यपुस्तकों में साहित्य के नाम पर कामुकता और विलासिता की बाते पढ़ाई जाती हैं। ऐसी स्थिति में कामदेव हमारे युवकों के सिर पर चढ़कर उनकी चोटी पकड़कर बैठ जाय तो आश्चर्य क्या।

अब प्रश्न उठता है कि ब्रह्मचर्य शब्द का जो वीर्य रक्षा अर्थ है यह तो बड़ा कठिन काम है। यह कैसे किया जा सकता है? अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त का एक मन्त्र है 'ब्रह्मचारी समिधा, मेखलया, श्रमेण लोकास्तपसा पिपति' अर्थात् ब्रह्मचारी 'समिधा, मेखला, श्रम और तपस्या' से लोकों को पूर्ण करता है और उनको पालित करता है। 'समिधा' शब्द का अर्थ है अपने को ज्ञानाग्नि से दीप्त करना। ज्ञान का भण्डार मस्तिष्क है। मस्तिष्क का स्थान सब से ऊपर है। वीर्य की दो गतियां हो सकती हैं एक तो नीचे की ओर जा सकता है और दूसरा ऊपर की ओर। स्वामी रामतीर्थ महाराज ने वीर्य की उपमा तेल से दी है। दीपक में पड़ा तेल बत्ती के सहारे ऊपर चढ़कर प्रदीप्त होता है—प्रकाश बनता है। यदि तेल नीचे की ओर जाय तो दीपक जल न सकेगा। इसी प्रकार यदि मनुष्य वीर्य रक्षा करना चाहता है और प्रकाशित होना चाहता है तो हमें अपने मस्तिष्क को कार्य देना होगा, खूब मनन करना होगा, गम्भीर विचार करना होगा, मस्तिष्क से खूब काम लेना होगा। इस तरह ज्ञान प्राप्ति वीर्य रक्षा का पहला साधन है।

ब्रह्मचर्य के लिए दूसरी वस्तु है मेखला। मेखला से कमर बांधी जाती है। कमर बांधने का भाव है कि हममें कटिबद्धता आनी चाहिए। आलस्य में न पड़कर जीवन के समर में हम को तत्पर रहना चाहिए। जो व्यक्ति कटिबद्ध होकर कार्य करते हैं उनको वीर्य पात का अवसर ही नहीं मिलता।

वीर्य रक्षा का तीसरा साधन है श्रम। शारीरिक श्रम और व्यायाम से वीर्य रुधिर मे सम्मिलित होता है और परिश्रमी व्यक्ति को एकान्त में बैठकर शैतानियत की बातें सोचने का अवसर ही नहीं मिलता है। स्वामी श्रद्धानन्द ब्रह्मचारियों को सुमण्डल में उपदेश देते हुए कहते थे कि तुम कभी खाली मत रहो। यदि तुम्हारे पास कभी परिश्रम का कोई कार्य न हो तो तुम अपनी धोती फाड़ो और उसको सीओ। पर खाली कभी मत बैठो, खाली मन शैतान का घर होता है। अतः हमें परिश्रमी बनना चाहिए।

ब्रह्मचर्य को प्राप्त करने के लिए चौथा साधन है—तप। द्वन्द्वों का सहन तप है। सुख-दुःख, शीत उष्ण भूख-प्यास आदि सहन करने की आदत हमें अपने में डालनी चाहिए। तपस्या जीवन निर्माण का एक उत्कृष्ट साधन है।

ब्रह्मचर्य शब्द का एक दूसरा अर्थ गांधी जी ने लिया है और वे इसे अधिक व्यापक करते हुए कहते हैं कि ब्रह्मचर्य किसी एक इन्द्रिय का संयम नहीं ब्रह्मचर्य जीवन का संयम है। ब्रह्मचर्य का पालन उसी समय संभव है जबकि कान, आंख, नाक, जबान आदि सभी इन्द्रियों का संयम किया जाय। कानों से शृंगारिक गीत नहीं सुनेंगे, आंखों से शृंगारिक चित्र नहीं देखेंगे, स्त्रियों की ओर वासनात्मक रूप में अपलक दृष्टि से नहीं ताकेंगे, शृंगारिक कहानियां नहीं पढ़ेंगे, मसालेदार और उत्तेजक पदार्थों का सेवन नहीं करेंगे नरम गद्दों पर नहीं सोयेंगे। जब इस प्रकार व्रतों का पालन करेंगे तभी ब्रह्मचर्य का पालन होगा, अन्यथा नहीं।

ब्रह्मचारी को दीक्षा देते हुए कहा जाता था। ज्यादा मत खाना, ज्यादा मत सोना, ज्यादा मत खेलना ज्यादा मत कुछ करना। इसके पीछे भी यही भावना थी कि इन्द्रियों पर संयम रखना आवश्यक है। वास्तव में जब इन्द्रियों पर संयम होगा तभी मानव जीवन का उद्देश्य 'ब्रह्म' हमें प्राप्त हो सकेगा। हम उसकी ओर चल सकेंगे। 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ है बड़ा, महान, विशाल। 'चर्य' शब्द 'चर गति आश्रयोः' धातु से बना है, जिसका अर्थ है चलना गति करना। ब्रह्म होने के लिए क्षुद्र से महान् होने के लिए विषयों के छोटे-छोटे रूपों में से आत्म तत्व के विराट (क्रमशः)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३ | रविवार २७ फाल्गुण २०१९, १० मार्च १९६३ | अंक १०

हमारे सन्त राष्ट्रपति

माननीय प्रभुभक्त डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी पूर्व राष्ट्रपति के शोकजनक निधन पर कौन सा ऐसा दिल है, जो अतीव शोकातुर नहीं हुआ तथा कौन-सी वह आंख है जो अश्रुधारा बहाती हुई रोई नहीं। भारत के राष्ट्रपति के सर्वोच्च आसन पर बैठकर सारे देश के कार्य करने के लिए सब से प्रथम श्रेय स्वर्गीय डा० राजेन्द्र बाबू जी को ही है। स्वाधीनता के संग्राम में जिन भारतीय महापुरुषों, वीरों, हुतात्माओं तथा देशभक्तों ने अपने तन मन धन की आहुति दी है उन में राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी का स्थान बहुत ही ऊंचा है। आपको सन्त राष्ट्रपति पुकारा जावे तो अनुचित न होगा।

डाक्टर राजन बाबू बिहार प्रान्त से सम्बन्ध रखते थे। किन्तु सारे भारत के लिए थे। ऊंची से ऊंची एम० ए० तक विद्या प्राप्त की। लिखने तथा भाषण में बड़ी प्रसिद्धि पाई। आरम्भ से ही जीवन के विचारों में इतनी ऊंची विद्या शिक्षा पाने पर भी सरलता, सादगी तथा सहानुभूति, गम्भीरता कूट कूट भरी हुई थी। स्वराज्य के आन्दोलन में मातृभूमि की सेवा के लिए युवावस्था में ही कूद पड़े। जेलों की तंग कोठरियों की यातनाएं हसने २ सहन कीं। लाठियां खाईं, कष्ट उठाये। सारे बिहार प्रान्त को जगा दिया। भारत के स्वराज्य के इतिहास में स्वर्गीय डाक्टर राजेन्द्र बाबू का नाम काम बहुत ऊंचा रहेगा। नेताओं की पहली पंक्ति के सेनानी थे। भारतीयता का रंग, धर्म का प्यार एवं प्रभु की निष्ठा तो आप के श्वास २ में भरी हुई थी। विदेशी सत्ता समाप्त हो कर स्वदेश का शासन अपने लोगों के हाथ में आया। भारत का विधान बना। उस में आप प्रमुख थे। आजाद भारत का आप को सर्व प्रथम माननीय राष्ट्रपति बनाया गया। आप राष्ट्रपति भवन में आ गये। किन्तु आप के जीवन की सादगी में किसी प्रकार का अन्तर न आया। राष्ट्रपति के रूप में आप की योग्यता का ... विदेशों के प्रधानमन्त्री तथा राजा ... में ... जब ... से सम्पर्क जब हुआ तो आप के जीवन, ऊंचे विचारों से प्रभावित होते थे।

आप का व्यक्तिगत जीवन बहुत ही ऊंचा था। प्रभु की भक्ति का आप के जीवन में बड़ा स्थान था। आज का व्यक्ति साधारण सी वस्तु पा कर भगवान को भुला देता है। पर आप के सारे जीवन में प्रभुनिष्ठा की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी ही। प्रातः सायं प्रभुवन्दना आप के जीवन की विशेषता थी। धर्मग्रन्थों का स्वाध्याय नित्य की बात थी भारतीय संस्कृति के दीवाने थे। त्याग तप की अनुपम प्रतिमा थे। आप के विचारों में बहुत गम्भीरता थी। सच्चे अर्थों में सन्त राष्ट्रपति थे। भारत ने आप के स्वर्गवास पर बड़ा भारी नेता, देवता खो दिया। हमें उनके जीवन से पाठ पढ़ना चाहिए।

प्रकाशस्तम्भ बुझ गया

आर्यजगत का एक और चमकता प्रकाशस्तम्भ देखते २ बुझ गया समाज व देश की पुरानी पीढ़ी का नेता मान्य महाशय कृष्ण जी भी मौत के कराल हाथों से हम से छीन लिये गये। उस दिन उन की अचानक मृत्यु के दुःखद समाचार को सुन कर सारा समाज तथा सारी जनता स्तब्ध सी रह गई। इस वार देहली के सारे आर्यसमाजों ने शिवरात्री के उपलक्ष्य में ऋषि बोध महापर्व मनाया। मान्य महाशय जी इस के अध्यक्ष बने। समारोह से दिवस मनाया गया। इस में अन्य समाज के महान् नेताओं के साथ २ श्री. महाशय कृष्ण जी भी बोले। फिर बाद में दूसरा समारोह भी सम्पन्न हुआ जिस में भारत के राष्ट्रपति मान्य डाक्टर राधा कृष्णन भी पधारे तथा बोले। उसमें भी मान्य महाशय जी पधारे। लम्बी बीमारी से ... कर उठे। सारे समाज तथा देश ने उनके स्वस्थ होने पर प्रभु को विशेष धन्य वाद किया था। ... कितना प्रसन्न था जब वह पहली बार बीमारी के बाद, मौत के पन्जों से बच कर इस पर्व में शामिल हुए। किन्तु क्या पता था कि आर्यसमाज का महान् लेखक, लेखन कला का शिरोमणी, निर्भीक तथा कभी किसी से भी न दबने वाला समाज का पुरातन पीढ़ी का यह जनरल अन्तिम बार आर्यों को अपना दिव्य सन्देश दे रहा है। सन्देश भी वह दिया जो समाज के इतिहास मे अमर रहेगा। वहां से वापस आकर रात को देखते २ सदा की सुख की नींद में सो गया। प्रातःकाल सारे समाज देश ने जब उनके निधन का दुःखदायक समाचार सुना तो हैरान हो गये। विश्वास ही नहीं होता था कि महाशय जी चले गये हैं।

मान्य महाशय क्या थे। इस के सम्बन्ध में लिखना तो लिखने को भी संकोच होता है सचमुच वह तो स्वयं ही आर्यसमाज थे। भारी संस्था थे। उनके योग्य सुपुत्रों श्री वीरेन्द्र जी एम० ए० तथा श्री नरेन्द्र जी एम० ए० के लिए तो वह पिता थे। पर मान्य महाशय जी का जीवन या उनका कुल सारे समाज के रूप में विशाल परिवार था। आर्यसमाज की, संस्थाओं की, जाति की, आर्य प्रतिनिधि सभा की जितनी सेवा उन्होंने की है उस सम्बन्ध में वर्णन करना सरल नहीं। उनके निधन पर लेखन कला का शिरोमणी चल बसा। सारे रो दिये। देश सेवा में, धर्म सेवा तथा समाज सेवा, शिक्षा सेवा में उनके कार्य तथा नेतृत्व कभी भुलाया नहीं जा सकता। उनका प्रताप प्रताप बनकर हर मकान में प्रताप ही दिखता रहा। निर्भीक नेता थे। हम उनके सारे परिवार से भारी समवेदना प्रकट करते हैं। महाशय कृष्ण अपने रूप में आप ही थे।

—त्रिलोक चन्द्र

आर्य समाज, पंजाबी बाग दिल्ली

भगवान की असीम कृपा से महर्षि दयानन्द की तपश्चर्या के फल स्वरूप पंजाबी बाग में आर्य समाज कल स्थापित हो गई, इसके सदस्य ९२ बन चुके हैं।

इस समाज के प्रधान पं० भगवद्दत्त जी, मन्त्री श्री बिहारी लाल जी २८।३० पंजाबी बाग, कोषाध्यक्ष मलिक मुरारी लाल जी २४।६० पंजाबी बाग और ७ अन्तरंग सदस्य निश्चित हुए हैं। श्री चूटा मल जी मल्होत्रा C-५६।७ शिवाजी पार्क वालों ने समाज के लिये एक तख्त पोश, एक चौकी, तांबे के हवन पात्र और २० सत्संग गुटके देने की प्रतिज्ञा की है। आर्य समाज मन्दिर के लिये डेढ़ एकड़ भूमि Refugees Housing Co-operative Society, Punjabi Bagh दे रही है।

भवदीय
मेहर चन्द पुरी

आर्यसमाज के प्रवर्तक परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामी के निर्वाण पद प्राप्ति के पश्चात् जिस आर्यवीर ने अपनी जान को हथेली पर रखकर वैदिक धर्म का नाद बजाया और अन्ततः उसी पुनीत कार्य को करता हुआ एक कायर पुरुष की छुरी का शिकार हुआ उसको लाखों प्रणाम। भाई की मृत्यु हो जाती है, इकलौता पुत्र काल का ग्रास बन जाता है और पिता प्राण त्याग देते हैं परन्तु एक साधारण मनुष्य को पागल कर देने वाली ये सब विपत्तियां इस धर्मवीर के धार्मिक जोश को ठण्डा नहीं कर सकतीं।

स्वर्गीय पण्डित जी प्रभावशाली वक्ता और उच्च कोटि के लेखक थे। उन्होंने अपना जीवन एक सिपाही (पोलीस) के रूप में आरम्भ करके 'आदर्श ब्राह्मण,' 'निर्भय प्रचारक' और 'अमर हुतात्मा' की पदवियां प्राप्त कर समाप्त किया था। पण्डित जी अपनी धुन के इतने पक्के थे कि उन्हें धर्म-चर्चा और धर्म-रक्षा के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही न था। सत्यवक्ता, निर्भय और आत्मविश्वासी भी परले दर्जे के थे। सत्य वीर कहो, धर्म वीर कर्म वीर कहो, जो कहो सब कुछ उनके लिए सङ्गत हो सकता है।

बाल्य काल से ही वह धर्मानुरागी थे। अपने चाचा के वर्जित करने पर भी एक बार उन्होंने 'एकादशी व्रत' रखा था। वह सन्ध्या में कभी नागा नहीं करते थे। एक समय वह गाड़ी में सन्ध्या कर रहे थे। किसी ने आपत्ति उठाया कि उन्होंने स्नान किये बिना सन्ध्या का तो बोले 'स्नान कर्म है और सन्ध्या धर्म है। कर्म के लिए धर्म का त्याग नहीं करना चाहिए।' उनका अधिक समय धर्मप्रचार में लगता था पर जब अवसर मिलता

जिनका बलिदान दिवस आज है

आर्य पथिक पं० लेखराम जी

[लेखक—श्रीभक्तराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

तो पुस्तकें लिखते। धर्मप्रचारक के लिए आवश्यक सब गुण उस धार्मिक पुरुष में कूट २ कर भरे हुए थे।

सदा प्रचार यात्रा में रहने से पंडित जी ने अपना उपनाम 'आर्य-मुसाफिर' (आर्य पथिक) अथवा 'आर्य प्रवासी' रख लिया था। वह मुस्लिम की भान्ति जोशीले थे। उन के निर्भीक और साहसी होने से स्वा० आचार्य रामदेव जी के एक मित्र (ब्रह्म समाजी नेता) उन्हें 'आर्यसमाज का अली' कहा करते थे। वह ऊंचे स्वर से और उतावली में (जल्दी २) बोला करते थे। ज्ञान के भण्डार उन के व्याख्यान जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर लेते थे। अन्वेषण कार्य में उनकी बड़ी रुचि थी। इसका प्रमाण उनकी कृति 'दुनिया की तारीख' और उनकी अन्य रचनाओं के संग्रह 'कुलियात आर्य मुसाफिर' के पाठ से मिल सकता है।

स्वा० आर्य प्रवासी अरबी और फारसी के तो विद्वान् थे पर अंग्रेजी बिल्कुल न जानते थे। हां, संस्कृत का यत्किञ्चित्ज्ञान था वह संस्कृत के उद्धरणों के लिए और अंग्रेजी के उद्धरणों के लिए अंग्रेजीदां लोगों को एक दूसरे से भिड़ा कर प्रमाण जमा कर लेते थे। वेद प्रचार के लिए वह पत्रों को भी एक साधन समझते थे अतः अजमेर में महर्षि दयानन्द के दर्शनों और उनसे अनेक शंका समाधान करने के पश्चात् 'धर्मोपदेश' पत्र जारी किया। सन १८८७ में 'आर्य गजट' के सम्पादन का कार्य भी उन्हीं को सौंपा गया और उन्होंने अवैदिक मतों का खण्डन और आर्य सिद्धान्तों का मण्डन उसके द्वारा प्रबल रूप से किया।

पण्डित जी सच्चे सिद्धान्ती थे। एक बार आर्यसमाज पेशावर के सभासद् एक तहसीलदार को, जिसके घर पर साप्ताहिक सत्सङ्ग लगा करते थे, प्रधान बनाने लगे। पण्डित जी वहां विद्यमान थे। झट बोल उठे—'यह मांस खाते और शराब पीते हैं। ऐसा आदमी प्रधान नहीं बनाया जा सकता।' सिंह गर्जना सुन कर सब सहम गये और किसी को साहस न हुआ कि तहसीलदार को प्रधान बनाने का नाम लेता। स्पष्ट वक्ता होने के कारण वह धर्म मार्ग में जान हथेली पर लिये फिरते थे। उनकी कथनी और करनी एक थी। शान्ति प्रकरण के अन्तिम दो मन्त्रों (अथर्व० कां० १९। सू० १५। मं० ५।६।) को वह केवल पढ़ते ही न थे अपितु उनके अनुसार आचरण कर निर्भयता का जीवन व्यतीत करते थे।

मौखिक प्रचार इतना करना पड़ता था कि उनको एक दिन भी एक स्थान पर जम कर बैठना न मिलता था फिर भी पुस्तकें लिखने और अन्वेषण कार्य (रिसर्च) के लिए समय निकाल लेते थे। स्वामी दयानन्द के जीवन चरित्र के लिए ग्राम २ घूम कर सामग्री एकत्रित करना कोई सुगम कार्य न था। वह आदर्श धर्म प्रचारक थे। 'भय' का शब्द उनके शब्दकोष में ही न था। आर्यसमाज के नेता तक उनकी धर्म लग्न से प्रभावित थे। ला० मुन्शीराम जी उनके आने पर खड़े होते थे और बैठ जाने पर ही बैठा करते थे। लाला जी ने, जब वह आ. प्र. नि. सभा के प्रधान थे, पण्डित जी से डांट भी खाई थी।

धर्म प्रचार की धुन में ही वह अद्भुत प्रचारक ६ मार्च, १८९७ में एक नीच यवन के हाथ बलिदान हुए। उनका भौतिक शरीर अवश्य नष्ट हुआ पर 'यशः शरीर' अमर हो गया। ला० लालचन्द जी 'फ़लक' के शब्दों :—

"धर्म रक्षक मर मिटा
ज़िंदा हकायत रह गई।
क़ातिल ज़ालिमके हिस्से
में मलामत रह गई॥
हां फ़लका इन्सां को
ऐसी मौतमरना चाहिए।
नाम अपना इस जहांमें
ज़िन्दा करना चाहिए॥

उस शिरोमणि बलिदानी को मरते समय न हत्यारे के प्रति क्रोध था और न ही माता व पत्नी की चिन्ता थी। यदि ध्यान गया तो आर्य समाज की ओर। उन्होंने अन्तिम इच्छा निम्न लिखित शब्दों द्वारा प्रकट की थी :—

'आर्यसमाज से 'लेख' का कार्य बन्द नहीं होना चाहिए'।' उपरि लिखित वसीयत को हम आर्य समाजी भूल गए। पं. लेखराम जी के उपनाम 'आर्यमुसाफिर' और काम को जीवित रखने के लिए स्व० पं भोजदत्त जी 'आर्यमुसाफिर' ने १ सितम्बर सन १९०२ में 'आर्य मुसाफिर विद्यालय' की स्थापना की। 'आर्य मुसाफर' पत्र भी सम्पादन किया। पं० भोजदत्त जी के देहावसान के पश्चात् उनके दोनों सुपुत्रों (डा० लक्ष्मीदत्त और पं.नारायणदत्त) और धर्म पुत्र कुंवर सुखलाल जी ने मुसाफिर मिशन का बहुत कार्य किया। लगभग ८ वर्ष तक समस्त भारत में वैदिक धर्म का डंका बजा कर विद्यालय और पत्र दोनों बन्द हो गए।

कुछ वर्ष हुए आर्यसमाज के दो रत्नों और चचेरे भाइयों (प्रसिद्ध प्रवक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफिर' और शास्त्रार्थ केसरी ठाकुर अमरसिंह जी 'आर्य मुसाफिर') ने अपने जन्म स्थान अरनियां जि० बुलन्द शहर में 'आर्य मुसाफिर विद्यालय' पुनः स्थापित किया परंतु धनाभाव के कारण वह भी न चल सका। अब भी समय है कि हम धर्मवीर पं० लेखराम जी की पुण्य स्मृतियों में 'आर्य मुसाफर विद्यालय' स्थापित करें और 'आर्य मुसाफिर' साप्ताहिक पत्र प्रकाशित हो। यही स्वर्गीय पण्डित जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है।

परमात्मा की असीम कृपा से ठाकुर अमरसिंह जी और कुंवर सुखलाल जी इस समय जीवित हैं। प्रभु उनकी आयु दीर्घ करें। उन दोनों भाइयों में स्व० पं० लेखराम जी और स्व० पं० भोजदत्त जी की भांति वे सब गुण विद्यमान हैं जो एक सच्चे धर्म प्रचारक में होने

(शेष पृष्ठ ६ पर)

'आर्य समाज की शिथिलता का कारण'

लेखक : श्री पिशोरी लालजी 'प्रेम' रेणुका जिला सिरमौर (H P.)

(गतांग से आगे)

एक विचार यह है कि आर्य समाज ने खडन-मंडन और शास्त्रार्थो को त्याग दिया है इसलिए शिथिलता आ गई है। आरम्भ काल में जब कि आर्य समाज खूब खंडन मंडन और शास्त्रर्थ करता था तब इस का प्रचार भी खूब होता था। इसके विपरीत कई महानुभावों का विचार है कि उस समय लोग अनपढ़ थे, अज्ञान अन्धकार अधिक था इस लिए खंडन मंडन और शास्त्रार्थों की आवश्यकता थी। अब लोगों में विद्या का प्रचार बढ़ गया है। लोग आर्य सामज के सिद्धांतों को समझने और मानने लगे है इसलिए आर्य समाज को सबके साथ मिलजुल कर प्रचार कार्य करना चाहिए।

इस के अतिरिक्त अन्य भी कई विचार प्रस्तुत किए जाते हैं। परन्तु विशेषकर ऊपर लिखित विषयों पर ही अधिक वाद-विवाद होता है।

इस विषय पर मेरी तुच्छ सम्मति यह है कि आय शिक्षा संस्थाएं प्रचार का साधन तभी हो सकती हैं कि इनके पदाधिकारी दृढ़ आर्य समाजी चुने जाएं और संस्थाओंमें सब अध्यापक गण भी आर्य समाजी हों यदि ऐसा सम्भव न हो तो फिर यह संस्थाएं प्रचार में बाधक ही हैं। क्योंकि जितनी शक्ति और धन इन पर व्यय होता है यदि इतनी शक्ति और धन केवल मात्र आर्य समाज के प्रचार में व्यय हो तो इस से आर्य समाज का प्रचार बहुत अधिक हो सकता है। आर्य समाज का राजनीति में भाग लेने का तात्पर्य है लोक सभा, प्रांतीय विधान सभाओं, नगरपालिकाओं आदि के चुनावों में भाग लेना जैसे कि हमारे अकाली भाई भाग लेते हैं) इन चुनावों में भाग लेने का लाभ तभी हो सकता है यदि हमें आर्य समाज के टिकट पर चुनावों मे सफलता की आशा होती। परन्तु आर्य समाजियों की संख्या इतनी अधिक नहीं कि केवल मात्र आर्य समाजियों के वोटों से सफलता सम्भव हो। और गैर आर्य समाजियों के वोट प्राप्त करने के लिए आर्य समाज के टिकट के स्थान पर किसी राजनैतिक संस्था के टिकट पर या स्वतन्त्र रूप से चुनाव लड़े जाएं। और ऐसी अवस्था मे हमें वह सब कुछ करना पड़ेगा जो कि चुनाव जीतने के लिए लिए दूसरे लोग किया करते हैं अर्थात् छल-कपट और झूठ का सहारा लेना पड़ेगा। ऐसी अवस्था मे (सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।') आर्यसमाज के इस नियमका पालन हम कैसे कर सकेंगे। महर्षि स्वामी दयानन्द और उनके पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द, पंडित लेखराम, पंडित गुरुदत्त, महात्मा हंसराज, आदि के हाथ में कौन सी राज्य शक्ति थी--कि जिसके द्वारा उन्होंने इतना अधिक आर्य समाज का प्रचार किया। अब तो राज्य सभा, लोकसभा और विधान सभाओं में कई आर्यसमाजी हैं उनके द्वारा आर्यसमाज का कितना प्रचार हो रहा है। इस पर पाठक गण स्वयं विचार कर सकते हैं।

शास्त्रार्थों से आर्यसमाज का, प्रचार तभी सम्भव हो सकता है यदि प्रतिपक्षी भी प्रेम पूर्वक हठ और दुराग्रह को त्याग कर सत्य असत्य का निर्णय करने के लिए शास्त्रार्थों के लिए उद्यत हों। परन्तु वर्तमान समय में चरित्र-हीनता और स्वार्थ के कारण प्रतिपक्षियों से ऐसी आशा करना सम्भव नहीं। इसके अतिरिक्त अवैदिक सिद्धांतो का खडन और वैदिक सिद्धांतों का मंडन अवश्य होना चाहिए। परन्तु यह खडन-मंडन युक्ति-युक्त वेद-शास्त्रों के प्रमाणों सहित मीठे शब्दों में होना चाहिए। कड़वे शब्दों में खंडन-मंडन प्रचार का साधन नहीं अपितु बाधक है।

अब मैं पाठकों की सेवा में आर्य समाज की शिथिलता को दूर करने के लिए यह निवेदन करूंगा कि यदि आप को आर्यसमाज के प्रचार की सच्ची लगन है तो आप को उपरोक्त वाद-विवाद से अलग रह कर निम्नलिखित सादा और सरल क्रियात्मक कार्यों में लग जाना चाहिए।

१ महर्षि दयानन्द कृत समस्त ग्रन्थों का नियमानुसार स्वाध्याय करना चाहिए और इसके साथ-साथ आर्यसमाज के उच्चकोटि के अन्य विद्वानों के ग्रन्थों का स्वाध्याय भी नियमानुसार करना चाहिए जिससे आयसमाज के सिद्धांतों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सके।

२ प्रत्येक आर्यसमाजी को अपना चरित्र इतना उज्जवल बनाना चाहिए कि उनके विरोधी भी उनके चरित्र पर उंगली न उठा सके अपितु उनका अनुकरण करें।

प्रदेशिक सभा का वेद प्रचार

५ से ७ मार्च आ. स नूरनखेड़ा--का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

२ से ४ मार्च टटौली--का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

६ से ८ मदीना दांगी--का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

८ से १० मोरखी--का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

९ से ११ मार्च मिर्जापुर बेड़ी का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

१३ से १५ मार्च मीमर-- का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ये उत्सव जमादार भरतसिह जी की देखरेख में सम्पन्न हुए और हो रहे हैं। श्री प्रभुदयाल जी, श्री दुर्गासिह जी, चौ० भूराराम जी जमादार भरतसिह जी पधारे।

१ से ३ छोंती करनाल, ६ से ८ बुढ़ाखेड़ा, ११ से १३ गुंगलो, १५ से १८ फ़ूसगढ़, १५ से १८ मीधपुर, १८ से २० सुभरी, २२ से २४ सुलतानपुर, २६ से २८ बुर्ज, २६ से ३१ मुलाना। यह उत्सव मार्च मास मे श्री प० अमरसिंह जी अध्यक्ष के प्रबन्ध में सम्पन्न हो रहे हैं। श्री प० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री हजारीलाल जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी, श्री शमशेर कुमार जी, श्री रामकरण जी, श्री महावीर जी, श्री नत्थूराम जी पधार रहे हैं।

आ० स० जलालाबाद-- में कथा के रूप में उत्सव समारोह से अप्रैल मास में सम्पन्न हो रहा है। १० से १५ अप्रैल खुशीराम शर्मा कथा कहेंगे।

निवेदन

कृपया शिवरात्रि पर्व पर इकट्ठा किया चार आना फंड शीघ्र सभा में भेजने की कृपा करें।

—खुशीराम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

कक्कड़माजरा कुंजपुरा के शानदार समारोह

आर्यनगर कुरड़ी का भव्य शिविर

वेदपारायण यज्ञ व प्रचार की धूम

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब की नगरों की समाजों में तो शानदार महोत्सव होते हैं। साथ २ ग्रामों व कस्बों में भी प्रचार के भव्य समारोह जारी हैं। अभी-अभी अम्बाला के एक ग्राम कक्कड़माजरा करनाल के साथ के कस्बे कुंजपुरा में तथा हिसार के पास ग्राम आर्य नगर कुरड़ी में जो शानदार, उत्साह वर्धक धर्मप्रचार के लिए सुन्दर यज्ञ व शानदार जल्से हुए हैं। उनको देखकर ग्रामों में धर्मप्रचार के बहते प्रवाह को देखकर मन प्रसन्न हुआ है। अम्बाला करनाल में सभा के प्रचारमंडल के अध्यक्ष श्री पं० अमरसिंह जी के उत्साह तथा उन २ ग्रामों कस्बों के मान्य धर्म प्रेमी सज्जनों के धर्म प्रेम तथा हिसार समाज व संस्थाओं के, आर्यनगर के प्रभु प्रेमियों एवं स्वामी देवानन्द जी महाराज के तप से भारी समारोह सम्पन्न हुए।

कक्कड़ माजरा में गत वर्ष की भांति इस वर्ष भी भारी यज्ञ व प्रचार का प्रबन्ध था। ग्राम के समाज तथा सारे नरनारियों का प्रेम उत्साह दर्शनीय था। श्री मन्त्री समाज, प्रधानजी और श्री काश्मीरी लाल जी, श्री रामस्वरूप जी, श्री जगन्नाथ जी आदि सबने भारी भाग लिया।

यही अवस्था कुंजपुरा में थी। यज्ञकमेटी के प्रधान श्री चौ. गणेश दास जी, मंत्री हरि चंद जी, श्री सुन्दर दास जी, श्री गोविन्द राम जी तथा उन के सारे सम्बन्धियों ने सारे नगर के नर नारियों के धर्मोत्साह को देख कर सब का दिल उछलता था। सारा दिन यज्ञ के बाद प्रचार जारी था। रात के बाहर २ बजे तक प्रचार होता ही रहता था। पूर्णाहुति ४ दिन को तो क्या कहा जाये। सारा कस्बा, ग्राम तथा इलाका ही उमड़ आया था। आस पास रंधौली से श्री प्रभु प्रेमी मंगत राय जी, सुमरी करनाल, नली खुर्द आदि पास के ग्रामों से काफी सज्जन पधारते रहे। सभा से पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री, पं राज पाल मदनमोहन जी की चिमटा मंडली, पं. मेला राम जी रोडयो सिंगर, पं. जगत् राम जी, बस्ती राम जी, श्री राम करण मंडली महावीर जी, श्री कंवर सुख लाल जी आर्य मुसाफिर हिसार से पं. मुरारी लाल जी शास्त्री आर्य मुसाफिर स्वामी रामेश्वरानन्द जी M.P. पं. विश्वम्भर दत्त जी डा मोहनलाल जी पधारे। हर प्रकार का प्रबन्ध दर्शनीय था। आर्य नगर कुरड़ी में भी कमाल था। हिसार नगर से भारी संख्या में नर नारियां वहां पधारे। दयानन्द ब्रह्म विद्यालय के सारे विद्यार्थी, प्रो. राम विचार जी एम. ए पं. सत्यप्रिय जी, पं. रामस्वरूप जी, प. मुरारी लाल जी शास्त्री प्रधान समाज, पं. राजपाल मदन जी मंडली, पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री, स्वामी रामेश्वरा नन्द जी M P. आचार्य भगवान देव जी, कैप्टन रणजीत सिंह जी पं. भूराराम जी पं प्रभुदयाल जी की रोहतक मंडली, पं. जय नारायण शास्त्री, श्री बलवन्त राय जी तायल श्री कृपा राम जी, सेठ फतह चन्द जी, श्री सेठ जय देव जी पं. जगदीश चन्द जी, श्री नन्द लाल जी मंत्री समाज, आदि भारी संख्या में हिसार नगर भाई बहिनें शामिल हुई। मेला सा लग गया। बहिनों ने वहां बड़ी सेवा की। सारा दिन प्रचार होता था। इलाके में इस का बड़ा प्रभाव पड़ा। आर्य समाज हिसार दयानन्द ब्रह्मविद्यालय, स्वामी देवानन्द जी, दयानन्द भवन की स्त्री समाज तथा कुरड़ी वालों के इस धर्म प्रेम पर बधाई। सभा को भी वेद प्रचार मिला। पं. राज पाल मदनमोहन चिमटा मंडली की खूब धूम मची रही।

पूज्य डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी

(ले०—श्री सतोषराज जी मन्त्री प्रादेशिक सभा)

लोग आते हैं और चले जाते हैं, यह प्रकृति का नियम है। जिसे कोई नहीं बदल सकता। काल का चक्कर चलता रहता है, इसी काल चक्कर ने भारत माता के एक वीर सुपूत को अपनी लपेट में ले लिया। भारतीय गणराज्य के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी का २८ फरवरी रात के सवा दस बजे सदाकत आश्रम, पटना में देहांत हो गया। भारत मां का यह महान् सुपूत करोड़ों भारतीयों के दिलों को रुलाता हुआ हमसे अलग हो गया।

डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी एक ऐसा चमकता हीरा था जिसे जहां भी जड़ा गया, सत्यता, सादगी व बलिदान की किरणें फैलाता रहा, वह ऐसा रोशन चिराग था जिसने अपने चारों ओर के अन्धेरे को उजाले में बदल दिया। पूज्य राजन बाबू गुणों की खान थे, मानव अवश्य थे, परन्तु देवताओं से भी उच्च। विद्यार्थी जीवन में विद्यार्थियों के सिरमौर रहे। जीवन का पहला कदम उठाया तो चम्पारन में बलिदान की राहें प्रशस्त करदीं। राजनीति में आए तो महात्मा गांधी के असूलों को निखार कर रख दिया। संविधान कमेटी के प्रधान बने और अपनी देखरेख में संविधान तैयार करवाया तो ऐसा जो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है। स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया तो गांधी जी के निष्ठावान् साथी और विनम्र सेनानी के रूप में। राष्ट्रपति पद को सुशोभित किया तो संविधानिक अध्यक्ष की प्रतिष्ठा के अनुरूप परम्पराओं की नींव रख दी। व्यक्तिगत जीवन में सादगी, आडम्बर-हीनता, विनम्रता और धार्मिकता की मूर्ति बने रहे।

दिवंगत आत्मा का कहां तक गुणानुवाद किया जाए। गांधी जी ने उनको 'अजात शत्रु' कहा था। अर्थात वह सज्जन जिस का कोई शत्रु न हो। निस्सन्देह जिसने अपने चारों ओर प्रेम की सुरभित मिट्टी बिखेर रखी हो उस में घृणा का पौधा पनपना असम्भव है। श्रीमती सरोजनी नायडू ने कहा था कि डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व को लेखनीबद्ध करने के लिए स्वर्ण की लेखनी और मधु (शहद) की स्याही चाहिए। उनके देशवासी उन्हें कलियुग का महाराज जनक कहते हैं। ऐसे थे हमारे परम पूजनीय, परम आदरणीय राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी। उनकी आज भी हमें वैसी ही आवश्यकता थी। इस संकट काल में उनके नेतृत्व की जैसे इससे पूर्व कभी थी। आज वे हमारे मध्य में नहीं हैं। परन्तु उनकी पुण्य स्मृति, उनके महान् आदर्श आज भी हमारा पथ प्रदर्शन कर सकते हैं। यह देश सदा उनका ऋणी है।

(पृष्ठ ४ का शेष)

चाहिएं। वे आर्य-मुसाफिर मिशन के विद्यालय तथा पत्र का संचालन बड़ी दक्षता से कर सकते हैं यदि आर्य जनता उन्हें आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त कर दे। मुझे पूर्ण आशा और विश्वास है कि आर्य भाई इस महत्वपूर्ण कार्य की ओर ध्यान देंगे अन्यथा आर्य-समाज का ईश्वर ही रक्षक है।

'शिवरात्री सन्देश'

(लेखिका—शशि प्रभा जी अध्यापिका आर्य विद्यालय राजौरी)

आई शिवरात्री पुनः देने को नव सन्देश।
आलस्य की निद्रा त्यागो है यही आदेश॥
तपस्वियों ने तपमय फल अन्त पाया,
पक्षियों में अनान्दोन्माद है छाया,
प्राकृतिक रानी पा कर नवजीवन सार,
छोड़ रही ज्ञान तरङ्गे बिना रुके ही निर्मेश।
आलस्य की निद्रा त्यागो है यही आदेश॥
फूलों ने कोपलों का पा कोमल स्पर्श,
अपना सौन्दर्य निखारा हो सहर्ष,
पीले नीले वल्कन को सर पर डाल
चली धरणी मां मिलने पिया बसंत से सर्वेश।
आई शिवरात्री पुनः देने को नव सन्देश॥
मानस खेत पर फूट पड़े थे प्रेमाकुंर,
मूल भी चल पड़े थे पाने सत्य शंकर,
कर के सत्य शिव रहस्योद्‌घाटन,
बन गये 'मूल' से दयानन्द सभी के हृदयेश।
आई शिवरात्री देने को नव सन्देश
अज्ञान अन्धेरा चहुं ओर था छाया,
भारतीय संस्कृति का था हुआ सफाया,
प्रज्ञा चक्षु मय दण्डी जी को कर सर्वस्व अपण,
कर दिया स्वतन्त्र दीप प्रज्वलित उस प्रणेश।
आलस्य की निद्रा त्यागो है यही आदेश॥
आज पुन. छाई क्षोभ मय तमरात्री
विदेशी गृद्ध ताक लगा सज रहे बाराती,
दुल्हिन श्रृंगार से हो कर सुसज्जित,
स्वयंवर में चली मुण्डों की माला पहनने को सर्वेश।
आलस्य की निद्रा त्यागो है यही आदेश॥
बहिनों बन तितली न शान की कलंक लगाओ,
आर्य वीरो कायरपन से न संस्था मिटाओ,
कर के उद्‌बोध भारतीय सुप्त आत्मा,
बनना पड़ेगा आर्यों को अब विमलेश।
आलस्य जी निद्रा त्यागो है यही आदेश॥

श्रद्धेय डा० राजेन्द्र प्रसाद जी

(ले० श्री राम मूर्ति जी कालिया एम. ए., नई दिल्ली)

लो धरा नक्षत्र से अब एक तारा और टूटा।
भागीरथी की लोल लहरे
आज क्यों कर हैं ललकतीं ?
क्यों शशि की शीत किरणे
आज ज्वाला हैं उगलतीं ?
एक चक्र ! चक्र तेरा
आज क्यों रुक सा गया है ?
भू फटी सी आज, क्यों
लगता मुझे सब कुछ नया है?
जानता हूं, विधि कठिन ने
कठिन मन से भाग्य लूटा,
लो धरा नक्षत्र से,
अब एक तारा और टूटा।

(२)

आज लगता है मुझे
परकीयता ने मुंह चिढ़ाया,
दीन, दलितों ने हो जैसे
घोर रोदन रव मचाया,
मां भारती है मन मसोसे
आज चुप सी है खड़ी,
धर्मरत इस देश पर है
घोर विपदा आ पड़ी,
दीप्त थीं जिस से दिशायें
आज उस से साथ छूटा,
लो धरा नक्षत्र से
अब एक तारा और टूटा॥

प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार का कार्य

आ. स. पुरानी मंडी जम्मू—का उत्सव ३० ३१ मार्च १ अप्रैल को धूम धाम से सम्पन्न होगा। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी, श्री ठा. दुर्गा सिंह जी, श्री जगत राम जी, श्री वस्ती राम जी पधारेंगे।

अ. स. अखनूर (जम्मू)—का उत्सव ३१ मार्च १—२ अप्रैल को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ से कथा और यज्ञ के लिये श्री पं. ओमप्रकाशजी श्री मेलाराम जी पधार रहे हैं। उत्सव पर पं. त्रिलोक चन्द्र जी, श्री मा. तारा चन्द्र जी, श्री ठा. दुर्गा सिंह जी पधार रहे हैं।

आ. स. पंजौड़—का उत्सव १८ से सम्पन्न हो रहा है।

आ. स. शामचौरसी—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ मार्च से कथा पं० खुशी राम शर्मा करेंगे। और राज पाल जी, मदन मोहन जी, के भजन होंगे।

आ. स. योगेन्द्र नगर (हिमाचल का)—उत्सव, यज्ञ ७ अप्रैल से १४ अप्रैल को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। ७ से श्री ओंप्रकाश जी की कथा और दुर्गा सिंह जी के भजन होंगे।

आ स रेलवे कालोनी जालन्धर—का उत्सव १२ से १४ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी, राजपाल जी मंडली तारा चन्द्र जी आदि महानुभाव पधार रहे हैं।

आ सा. गोपरा—का उत्सव २० से २२ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है।

आ. सा. लारेंस रोड़ अमृतसर—में ३ मार्च से १० मार्च तक खुशी राम शर्मा कथा करेंगे। मा. तारा चन्द्र जी के भजन होंगे।

आ. स नगल टाऊन शिप—में ३ से १० मार्च तक यज्ञ और प्रचार हो रहा है। श्री राज पाल जी, श्री मदन मोहन जी पधार रहे हैं।

२ से ४ मार्च आ. स. भभेवा—का उत्सव धूम धाम से सम्पन्न हुआ।

देश के रु

भारत सूचना कार्यालय से प्राप्त

भारत में राकेट केन्द्र

नई देहली ३ मार्च १९६३—अन्तरिक्ष का शांति-कार्यों के लिए उपयोग की संयुक्त राष्ट्र समिति ने भारत के इस प्रस्ताव का सिद्धांततः समर्थन किया है कि संयुक्त राष्ट्र की योजना के अन्तर्गत केरल में एक राकेट केन्द्र बनाया जाए।

अमरीका से ११४ करोड रु० का ऋण

भारत सरकार और अमरीका की सरकार के बीच २५ फरवरी को नई दिल्ली में, एक ऋण-समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इसके अनुसार अमरीका भारत की तीसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कुछ चीजें आयात करने के लिए २४ करोड़ डालर (११४ करोड़ रु०) का ऋण देगा।

१९६३-६४ का बजट पेश

लोकसभा में २८ फरवरी को १९६३-६४ का बजट पेश करते हुए वित्त मन्त्री ने घोषणा की कि रक्षा-व्यय बढ़कर ८६७ करोड़ रु० हो जाएगा, जो चालू वर्ष के संशोधित अनुमान से ३६२ करोड़ रु० अधिक होगा।

पाकिस्तान-चीन सन्धि

प्रधान मन्त्री ने २७ फरवरी को लोकसभा में कहा कि श्री भुट्टो की पीकिंग यात्रा के बावजूद भारत कश्मीर के विषय में पाकिस्तान से बातचीत करेगा।

बिहार मे रक्षा कोप मे ७ करोड ३२ लाख रु० जमा

बिहार में राष्ट्रीय रक्षा और जवान कल्याण कोप में अब तक ७ करोड़ ३२ लाख रु० से अधिक जमा हो चुके हैं। इसके अलावा फरवरी के मध्य तक १,३४,७६७,२६६ ग्राम सोना भी इकट्ठा हो चुका था।

आर्य समाज थियवाल को बधाई

श्री पं० चेतराम जी प्रधान आर्य समाज थियवाल के सुपुत्र श्री ब्रह्मदत्त जी का शुभ विवाह अजनाला निवासी श्री कर्मचन्द्र जी की सुपुत्री श्रीमती सुरेश कुमारी के साथ पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ इस शुभ अवसर आपने १०१/- भिन्न-भिन्न संस्थाओं को दान दिया। जिस में से २०) श्री पं० दुर्गादत्त जी द्वारा आर्य प्रादेशिक सभा को प्राप्त हुआ। धन्यवाद व बधाई।

—व्यवस्थापक

...ाह

माननीय पं० जगन्नाथ जी शारदा प्रधानाध्यापक डी. ए. वी. H/S स्कूल दौलतपुर के सुपुत्र पं० रामानन्द जी शारदा बी-एस. ई. बी एड. का शुभ विवाह श्रीमती कृष्णा कुमारी जे. बी. टी. सुपुत्री प० रामलोक जी पृथ्वीपुर निवासी के साथ बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ भगवान् इस दम्पति को दीर्घायु करें। —जयराम शर्मा, मंत्री

वेदों का पढ़ना, पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परमधर्म है।

स्वर्गीय राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद जी

भारत देश के पूर्व राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद जी के निधन का दुःखद समाचार पढ़ कर हृदय विदीर्ण हो गया।

आप स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति पद को १२ वर्ष तक बड़े उत्तर दायित्व से निभाते रहे। भारतीय जनता के तो आप प्राण ही थे विशेषकर निर्धनों पर आपकी दया दृष्टि सर्वदा रहती थी। वास्तव में ही आप महाराजा अशोक का सा शान्ति प्रिय व्यवहार करते थे।

आप का स्वर्गारोहण २८ फरवरी ६३ की रात को १० बज कर १३ मिनट पर सदाकत आश्रम पटना में हुआ। और इसी आश्रम से ही आप भारत के प्रथम राष्ट्रपति पद को सुशोभित करने के लिए स्वागत समारोह के साथ देहली पहुंचे थे। आप के निधन से देश की जो क्षति हुई है वह पूरी होनी अति कठिन है।

परम पिता प्रभु से आपकी आत्मा की शुभ गति व परिवार को दारुण कष्ट सहन करने की सहृदय से प्रार्थना करते हैं।

संतोष राज मंत्री
आर्य प्रादेशिक सभा

—o—

दिवंगत राष्ट्रपति डा. राजेन्द्रप्रसाद जी के निधन पर

निम्न संस्थाओं ने शोक प्रकट किया और उनकी आत्मा की शुभगति की याचना करते हुए उनके परिवार से संवेदना प्रकट की।

साईंदास H/S स्कूल जालंधर. डी० ए० वी० H/S स्कूल दसूहा, आर्य समाज दसूहा, डी० ए० वी० हायर सै० स्कूल कादियां विशेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान हुशियारपुर। व्यवस्थापक

हिन्दी साप्ताहिक पत्र 'आर्यजगत्' जालन्धर के स्वामित्व अधिकार तथा अन्य विषयों का ब्योरा

फार्म ४

(अधिनियम ८ देखो)

१. प्रकाशन स्थान :—कार्यालय आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर नगर।

२. प्रकाशन की अवधि :—साप्ताहिक

३. मुद्रक का नाम :—श्री संतोष राज जी

जाति— भारती

पता :—मंत्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर

४. प्रकाशक का नाम :—श्री संतोष राज जी

जाति— भारती

पता :—मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर

५. सम्पादक का नाम :—श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री B.A.

जाति— भारती

पता :—महोपदेशक आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर नगर

६. पत्र के स्वामी व्यक्तियों के नाम अथवा पते जो उसके साझेदार हैं अथवा इस की सम्पूर्ण पूंजी के १ प्रतिशत से अधिक भागों के मालिक हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा रजिस्टर्ड संस्था ही इस पत्र की स्वामिनी है।

मैं संतोष राज इस लेख द्वारा घोषित करता हूं कि ऊपर लिखे विषयों की सूचना मेरे ज्ञान व विश्वास के अनुसार सर्वथा तथ्यपूर्ण है। (हस्ताक्षर) संतोष राज प्रकाशक 'आर्यजगत' जालन्धर।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जलन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ११) रविवार ४ चैत्र २०१९ — १७ मार्च १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

एनमधराञ्चं पादयामि

मैं वीर हू ! इस राष्ट्र-घाती, धर्मनाशक, हिंसक लुटेरे शत्रु को नीचे भूमि पर पटक कर मार दूंगा। उसकी बुरी तरह गत बनाऊंगा। उसके सारे दलबल को मिट्टी मे मिलाकर रख दूंगा।

शिरः अपि वृश्चाम्योजसा

मैं शत्रु के सिर को भी अपने ओज से, शस्त्रो की तथा देश-प्रेम की शक्ति से काट दूंगा। मेरे हाथो से शत्रु बच कर जा नही सकेगा। उसके सारे दल का सिर काट कर शत्रुता का मजा चखा दूंगा।

उद्यन् तेजांसि आददे

मैं सूर्य बनकर चमकता हुआ शत्रु के सारे तेज को हर लूंगा। उसकी सारी शक्ति को दबा दूंगा। सूर्य के सामने ये उलूक, सियार कहां ठहर सकते हैं।

अथर्ववेद

वेदामृत

शंनो भगः शमु नः शंसो अस्तु शंना पुरन्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शंनो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ ऋक् मं० ७ सू० ३५ मं० २

अर्थ:—(शंनः) हमारे लिए कल्याणकारी हो (भग.) यह ऐश्वर्य (शम् उ न.) और हमें सुख शांति देवे (शंसः) विद्वज्जनों का उपदेश (अस्तु) होवे और (शं न.) हमें शांति देवे (पुरन्धिः) यह आकाश तथा राजा (शम् उ सन्तु) और ये सुख देने वाले बनें (रायः) सारी सम्पत्तियां (शंनः) सदा सुखी करें (सत्यस्य) सत्य का (सुयमस्य) सुन्दर नियमों वाले का (शंस.) उपदेश नियम हमारा कल्याण करे तथा (शंनः) सदा हमें शांति देवे (अर्यमा) न्याय कर्ता (पुरुजातः) सर्वत्र प्रसिद्ध कीर्तिमय (अस्तु) हमारे लिए सुखमय होवे।

भाव:—संसार में सर्वत्र ऐश्वर्य के भण्डार भरे हैं, किन्तु इन से वही सुख शांति पा सकता है, जो इनका सदुपयोग और शोभन प्रयोग करना जानता है। अग्नि से विश्व का कल्याण भी किया जा जा सकता है तथा उसी से दानवता की प्रचंड ज्वाला जलाकर नगरों को भस्म भी किया जा सकता है। भगवान् हमें ऐसा ज्ञान, विवेक, सद्बुद्धि प्रदान करे कि हम इस ऐश्वर्य का उचित प्रयोग कर सकें। ये सम्पत्तियां ये सुखकर उपदेशकों के उपदेश, नियम में चलने चलाने वाले राजा, देवाओं का शांतिमय उपदेश नियम हमें सुखी बनाता रहे। जिस की कीर्ति यश, आचार विचार की ख्याति सर्वत्र फैली है—ऐसे महापुरुषों के जीवन संदेश हमें सदा सत् पथ पर चलाते रहें। चारों दिशाओं में तथा जीवन की चारों दशाओं में हमारे लिए विश्व के चेतन और अचेतन दिव्य देव मंगल मांगल्य का, सुख शांति का, विचारों की शांति का ही सदा सन्देश देते रहें—सं०

ऋषि दर्शन

सर्वे तस्मादेव

यह सारे पदार्थ उसी परमेश्वर से ही उत्पन्न होते है। वही सब का निमित्त कारण है। सब को नियम अनुशासन मे रखे हुए है।

सर्वे लोका भ्रमन्ति

ये जितने भी छोटे और बडे लोक लोकान्तर विद्यमान है—सारे ही भ्रमण करते है। अपनी परिधि पर या नियम मार्ग पर घूमते रहते है। तनिक भी इधर उधर नही होते।

लोकानाम् आकर्षणम्

सारे लोक लोकान्तरो का आपस मे आकर्षण विकर्षण है। एक दूसरे को नियम में रहते हुए आकर्षित करते हैं।

भाष्य भूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

महर्षि दयानन्द सरस्वती

(ले०—श्री सत्यपाल जी तलवाड, एम० ए०)
उपमन्त्री-आर्यसमाज, मालवीय नगर, नई दिल्ली।

(१)

अज्ञान के बादल थे नभ में और घोर अन्धेरा छाया था।
धर्म का प्रकाश था लुप्त हुआ और अधर्म ने मुंह दिखलाया था।।

यह आर्य जनता अनार्य हुई,
और ईश की सत्ता को भूली।
पंडित जी ने इक पत्थर में,
शिवजी भगवान बसाया था।।

(२)

वेदों का सूर्य था अस्त हुआ,
हमको पाखण्डों ने घेरा।
वह जर्मनी में प्रकाश मान हुए,
भारत मे कर गये अन्धेरा।।
यहां मूर्ती पूजा प्रधान हुई,
और राज्य हुआ बस पण्डों का।
मृतकों के नाम का भोजन खा,
कल्यान हुआ मुश्टण्डों का।।

(३)

ऐसा पतन देख प्रभु का हृदय कुछ नरम हुआ।
गुजरात के इक ब्राह्मन कुल में मूलशंकर का जन्म हुआ।।
मिथ्या धर्मी, मिथ्या बाणी, पंडितो के प्रवचनों को सुनकर।
पाखंड का खन्डन करने को बालक का हृदय गरम हुआ।।

(४)

इसका ध्येय है शिवरात्री को,
जो ऋषिवर को ज्ञान हुआ।
शिवलिंग के ऊपर चूहे के,
आक्रमण का असर महान हुआ।।
मूर्ती पूजा से विमुख हुए,
घर तजा व बन गये संन्यासी।
गुरु विरजा नन्द के आश्रम में,
शिक्षा हेतु प्रस्थान हुआ।।

(५)

शिक्षा पाके दयानन्द हुए,
और भारत की किस्मत जागी।
वेदों का हुआ प्रकाश फिर से,
अज्ञान की रात्री दूर भागी।।
मूर्ति पूजा को त्यागो,
और त्यागो पित्रों की पूजा।
ईश्वर भक्ति ही सच्ची है,
यह बात सबके चित्त को लागी।।

(६)

भारत की प्राचीन सभ्यता की,
महानता को जतलाया।
आर्य जाति के गौरव का,
इक बार परिचय करवाया।।
स्वदेश प्रेम के रंग में रंग,
भारत माता की सेवा कर।
स्वराज्य की मांग पेश करके,
भारत का भाग्य चमकाया।।

(७)

दयानन्द दया के सागर थे,
और सत्य के उपासक थे।
शत्रु का भी हित करते थे,
सब के हृदय के शासक थे।।
हम पर उनके उपकार बहुत, जिनका विवर्ण असम्भव है।
वह धर्म के थे जीवन दाता, और अधर्म के विनाशक थे।।

ब्रह्मचर्य

(श्री सुरेश चन्द्र जी वेदालंकार एम.ए.एल.डी.डी.बी. कालेज गोरख पुर)

(गतांक से आगे)

रूप में अपने को अनुभव करने के लिए चल पड़ना 'ब्रह्मचर्य है। यह ब्रह्मचर्य का विस्तृत है।

समिधा शब्द का अर्थ अभी हमने बताया कि हमें ज्ञान की अग्नि में तपने से ब्रह्मचर्य की प्राप्ति हो सकेगी। वास्तव में जिसने अपने को ब्रह्म की ओर चला दिया वह संयमी हो जायेगा, विषय भोग उस का कुछ न बिगाड़ सकेंगे। स्वामी दयानन्द महाराज से किसी ने पूछा भगवन् क्या आप को काम भाव कभी नहीं सताता स्वामी जी ने उत्तर दिया वह आता है, दरवाजा खट-खटाता है परन्तु मुझे कार्य में लीन देख अपना सा मुंह लिए लौट जाता है'। इस लिए ब्रह्म प्राति के लिए हमें समिधा, मेखला, श्रम और तपस्या का सहारा लेना होगा।

योगदर्शन के साधन पाद में ब्रह्मचर्य के गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है 'ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः' अर्थात् ब्रह्मचर्य की दृढ़ स्थिति हो जाने पर सामर्थ्य लाभ होता है। नियमानुकूल ब्रह्मचर्य धारण करने वाले के मन बुद्धि इद्रिय और शरीर में अपूर्व शक्ति प्रकट हो जाती है। ऋषियों मुनियों, चिकित्सकों, आयुर्वेद विशारदों ने ब्रह्मचर्य की महिमा का बखान किया है। वेदों में लिखा है कि ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने वाला ही तेजो मय ब्रह्म को धारण करता है और उस में समस्त देवता ओतप्रोत होते हैं अर्थात् उसे सभी देवता शक्ति देते हैं। आगे लिखा है ब्रह्मचर्य के तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है और ब्रह्मचर्य के द्वारा ही आचार्य ब्रह्मचारी को शिक्षार्थ चाहता है।

ब्रह्मचर्य के तप से देवताओं ने मृत्यु को दूर भगा दिया है। ब्रह्मचर्य के द्वारा ही इन्द्र ने देवताओं को दिव्य प्रकाश लाकर दिया।

कृत्रिम संतति निरोध या कुछ करोड़ मानवों की गर्भ में हत्या मानव को शांत और सुखी नहीं कर सकती है यदि हम विश्व को संहार से बचाना चाहते हैं तो ब्रह्मचर्य का वातावरण बनाना होगा। ब्रह्मचर्य का तेज महान् है। वह आंखों में दिखाई देता है, शरीर में फैलता है, चेहरे पर खिल उठता है। विवेकानंद को देखते ही आंखें चौंधियां जाती थी, स्वामी दयानन्द को देखते ही आनन्द, प्रसन्नता और ज्योति की धारा हृदयों में बहने लगती थी राम तीर्थ स्वामी और महात्मा गांधी में ब्रह्मचर्य का बल प्रतीत होता है, स्वामी श्रद्धानन्द में ब्रह्मचर्य के द्वारा ही कार्य बल अनुभव हुआ। अतः आइए हम यम नियमों में से इस ब्रह्मचर्य के पालन का व्रत लें और इस दिशा में चल कर अपनी सब प्रकार की शक्तियों की वृद्धि करें।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ४ चैत्र २०१९, १७ मार्च १९६३ [अंक ११

आर्यसमाज देखता रहेगा ?

देव दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना इसी लिए की थी कि विश्व में फैले हुए अज्ञान, अन्याय, अभाव आदि महा शत्रुओं, कुरीतियों के विषैले रोगों एवं बुरी विनाशकारी जीवन घातक प्रथाओं को हर कीमत पर मूल सहित नष्ट करने में तत्पर रहेगा। आर्यसमाज ने अपने जन्म के स्वल्प काल में इस दिशा में जो शानदार काम किया है व कर रहा है उसके लिए उसे सारा श्रेय मिलना ही चाहिए किन्तु आज एक आवश्यक बात की ओर हम सारे समाज का ध्यान बलपूर्वक खींचकर जोरदार शब्दों में अनुरोध करना चाहते हैं कि इस फैलने वाले महासंक्रामक रोग का इलाज कब करेगा ? क्या वह स्वय भी इस भयकर प्रवाह में बहता जायगा, या टक्कर लेकर उसे रोक कर सारे देश का भला करेगा। जीवन के जीवन और परिवार के परिवार नष्ट हो चुके हैं। परिवारों की बहिनें अपने शरीर पर मिट्टी का तेल डालकर जाति की इस कुप्रथा की वेदी पर अपने आप को भस्म कर रही हैं। माता पिता आत्महत्या कर रहे हैं। अपनी लड़कियों को जहर पिलाकर मार रहे हैं। सारा समाज देखता है पर मौन है ?

कितना पतन तथा शोक का स्थान है कि आज विवाह की मंडियों में परिवारों के लड़के खुल्लम खुल्ला बिक रहे हैं। उनकी बोली हो रही है, वे नीलामी पर चढ़े हुए हैं। जो भी अधिक नीलामी, बोली दे सकता है, उसी की लड़की स्वीकार की जाती है। इससे बढ़ कर परिवार की पुत्रियों के जीवन का और अपमान क्या हो सकता है, मातृशक्ति का तिरस्कार और क्या हो सकता है ? कानपुर नगर में अभी २ एक नहीं पता नहीं कितनी बहिनों ने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिडक कर या अन्य साधनों से इस लिए जीवन समाप्त कर दिया कि उन के माता पिता उन के विवाह पर लड़के वालों को भारी दहेज नहीं दे सकते थे। शाहदरा देहली में एक पिता ने बाजार से जहर ला कर अपनी तीनों बेटियों को पिला कर इस लिए मार दिया कि उस अभागे के पास लड़कियों के व्यय के लिए कुछ न था। बंगाल की बहिन स्नेहलता तो पुरानी हो गई। आज तो परिवारों में कितनी युवती बहिनें समाज के इस बुरे कर्म पर खून के आंसू बहाती तथा मर जाती हैं। हम ने ऐसी बी. ए बी. टी. और एम. ए. बी. टी. बहिनों को देखा व सुना है। तीस पैंतीस वर्ष तक उन को बैठे देखा है। जो भारतीय समाज के लड़के वालों के इस दहेज प्रथा के घोर अन्याय पर धिक्कार दे रही हैं। ऐसी भी देखी हैं जिन के विवाह को अनमेल विवाह कहा जा सकता है। इस अन्याय को देख कर ऐसी भी हैं जिन्हों ने आजीवन विवाह न करने का निश्चय किया है। किन्तु क्या इन बहिनों के बलिदान से, जल मरने से या विष खा लेने से लोगों के मन पर कोई प्रभाव पड़ा। सर्वथा नहीं। यह रोग संक्रामक बन गया है। आज लड़की की योग्यता, कुलीनता, कुशलता तथा सौम्यता का कोई मूल्य नहीं। आज तो लड़कों को जितना अधिक मोटर, सायकल, रेडियो, भूषण तथा पैसा अन्य वस्तुएं दे कर खरीद सकता है। वही लड़की विवाह कर सकती है। आज लड़कों की बुकिंग Advance Booking जारी है। लज्जा का विषय है। लड़की के बारे में सब कहते हैं पर जब अपने लड़के का प्रश्न आता है तो उन की गर्दन भी ढीली पड़ जाती है। वाणी पर ताला लग जाता है। विचित्र तमाशा जारी है। सत्य यह है कि समाज भी इस दिशा में वह नहीं कर सका जो उसे करना चाहिए था। इस महारोग ने भारतीय समाज जिसे हिन्दु समाज कहा जाता है, को खोखला कर दिया है। आज इसीलिए लड़की और बहिन अभिशाप मानी जाती हैं। बुरी समझी जाती हैं। उनका जीवन सारे परिवार के लिए समस्या बना हुआ है। आर्यसमाज से कहना है। उसी ने विश्व कल्याण की दीक्षा ली है। क्या वह भी इस प्रवाह में बहता रहेगा। इससे टक्कर न लेगा। कई बार योजनाएं बनीं पर कागजों पर ही रह गईं। रोग बढ़कर भयंकर हो गया है। सारा समाज दुःखी है। आर्यसमाज को इस विष प्रवाह को रोकने के लिए आगे आना पड़ेगा। विशेष योजना. ठोस प्रबन्ध तथा क्रियात्मिक पग उठाना पड़ेगा तभी सुधार हो सकेगा। दयानन्द के भक्तो ! राष्ट्र में चलने वाले दूसरे विषैले विचारों के प्रवाह जब आपने रोक दिए तो इसको रोकने के लिए मौन क्यों ? व्यवस्था बनाकर इसे रोको देश का भला होगा। आज के परिवारों की बहिनें बेटियां कुमारिल की भान्ति आपकी ओर देखकर पूछ रही हैं—आर्य वीर ! कोऽस्मानुद्धरिष्यति ? हमारा तथा हमारे जीवन का उद्धार कौन करेगा ?

हम ने क्या दिया

गत ६ मार्च का दिवस अमर शहीद पण्डित लेखराम आर्य मुसाफिर का बलिदान-दिवस था। समाजों में समारोह के साथ मनाया गया। हमने तो आर्यसमाज दयालपुरा करनाल में आंखों से इस महान् दिवस के शानदार समारोह को देखा। विचारों को सुना व सुनाया। समाज के उत्साह पर भारी प्रसन्नता हुई। और स्थानों पर भी मनाया गया होगा। ऐसे दिवस समाज के विराट् शरीर में चेतना, जीवन का टीका लगाने का काम किया करते हैं। बलिदान दिवस पर आर्य समाज के सज्जनों से कहना तथा पूछना है कि आप ने क्या दिया ? इस दिन आप ने जीवन में क्या व्रत लिया, क्या संकल्प धारण किया। आर्य समाज के जिस अमर शहीद ने अपना सारा जीवन इकलौता लड़का तथा अन्त में अपना पेट भी फड़वा कर शरीर अर्पण करते हुए कहा कि आर्य समाज से लेख का का कार्य बंद न हो—उस का बलिदान पर्व मनाते हुए हम ने समाज सेवा में क्या देने का निर्णय किया ? यह सब ने मनमें ही विचारना है। आज समाज को हर प्रकार का दान देने वाले चाहिएं। समय देने वाले, सम्पत्ति दानी, सम्मति दाता तथा सर्वस्वदानी भी चाहिएं। बिना दिये काम न चलेगा। अतः आप समाज सेवा के लिए समय देवें, धन देवें तथा इसे आगे ले जाने में अपनी सम्मति देवें।

(शेष पृष्ठ ५ पर)

सामयिक लेख—

हमारा कर्त्तव्य-पथ

(लेखक श्री सत्यपाल जी 'सहदेव' लेखराम नगर कादियां)

आज सारा भारत चीनी बौनों की धांधली को देखकर एकता की माला में संगठित हो चुका है किसी स्वतन्त्र राष्ट्र की सुरक्षा वा समृद्धि उसकी आन्तरिक एकात्मक ढांचे पर ही निर्भर है। अभी भारत माता के वीरों ने अपनी मातृ-भूमि को स्वतन्त्र करवाये केवल १५ वर्ष ही बीते हैं कि इस बाल रूप भारत को एक दुराग्रही कम्यूनिस्ट चीन देश के साथ वास्ता पड़ रहा है। अभी हम अपनी सुव्यवस्था की स्थिरता में लीन थे कि अचानक कृतघ्न चीनी बौनों ने हमारी स्वाधीन-प्रभुसत्ता को आह्वान दिया है हमारे वीर नेताओं ने हृदय से इस आह्वान रूपी चिनौती को स्वीकार किया। खुले आम बौनों ने भारत की सीमा पर आक्रमण किया जिस का परिणाम क्या होगा या क्या हो रहा है? यह अभि भविष्य पर निर्भर है। भारत ही एक ऐसा देश था जिस ने चीन को अपना घनिष्टतम मित्र बनाया। चीनीयों ने अपने देश में हिन्द-चीनी भाई-भाई के जय-बोलों से आकाश गुंजाया था परन्तु न मालूम था कि इस जय घोषों में आस्तीन के सांप छिपे हुए हैं। भारत ही एक ऐसा देश था जिसने सब से पहले चीन का नाम १४ सितम्बर १९५० को General Assembly of the U.N. में ले जाने का प्रयत्न किया चीन को अपना मित्र बनाया वा समझा परन्तु चीन अपनी गद्दारी से बाज न आया। मित्र घात किया अब भारत उस कमीने कम्यूनिस्ट चीन देश की चाल को भांप चुका है। यद्यपि उस समय भी भारत चीनी नीति को समझ चुका था जब कि वह भारत को अपना मित्र बनाता था तो भी भारत को चीनी सरकार की बुद्धि में विकार प्रतीत हो रहा था परन्तु इतना कुछ होते हुए भी भारत ने अपनी प्राचीन मर्यादा को स्थिर रखने के लिए चीन के साथ-भ्रातृ-भाव का महान् आदर्श ही प्रकट किया। परन्तु चीन ने भारत के साथ विश्वासघात करके केवलमात्र एशिया को नहीं बल्कि समूचे विश्व की आंखों में धूल झौंकने का प्रयत्न किया है और कर रहा है। लेकिन भारतको विश्वास है कि स्वतन्त्र साहस और स्वतन्त्र विचारधारा रखने वाले देश, इन चीनी बौनों की कुचालों में फंस नहीं सकते। भारत ने चीन के प्रति अच्छा कर्त्तव्य निभाया था परन्तु बौने अपनी गद्दारी छिपा नहीं सके। आखिर वह भी संसार को अपना विषैला नाटक दिखाना चाहते थे उन्होंने जी खोलकर भारत के साथ नाटक खेल कर दिखा दिया। महात्मा गांधी जी ने एक बार कहा था कि प्रेम और सहानुभूति के साथ सब को दबाया जा सकता है परन्तु डण्डे से किसी को भी दबाया नहीं जा सकता। बात भी सही है चीन ने भारत की आन पर धक्का लगाया था अपने बाहुबल से। परन्तु उसे ही अब मुंह की खानी पड़ रही है चीन ने समझा था कि डण्डे की शक्ति द्वारा सारे एशिया पर कम्यूनिज्म का रंग चढ़ा लूंगा परन्तु इसका फल उल्टा ही हो रहा है इसके ही भाई इस से नाता छोड़ते हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं। अब यह नाटक एक एकांकी का स्वरूप बन रहा है। यह खेल एक ऐसे देश के साथ खेला जा रहा है जो देश चीनियों को अवसर पड़ने पर नाकों चने चबायेगा।

भारत का एक २ बच्चा कृत-सकल्प हो चुका है कि 'जब तक हम चाऊ-माऊओं को अपनी ऋषि-कुटिया हिमालय से निकाल नहीं फैंकेंगे तब तक हम चैन से नहीं बैठेंगे।' आज भारत में नये रक्त का प्रवेश हो रहा है आज हमारा पड़ोसी देश पाकिस्तान भी चिड़ियां उड़ा रहा है यह भी पीठ के पीछे से नाक को पकड़ना चाहता है परन्तु इसका तो केवल रोना ही है मूर्खों का बोलना ही होता है, चलते बैठते, उठते, घूमते मूर्ख लोग टैं टैं ही करते हैं सभ्य लोग उनकी ओर दृष्टि भी नहीं लगाते।

नवयुवको—जिस आशा में आप थे वह दिन निकट आ चुके हैं कभी कभी हम अपने स्कूल व कालिज के समय यह विचारा भी करते हैं कि हम भी स० भक्तसिंह के जमाने में जन्म लेते तो क्या ही अच्छा होता? परन्तु वीरो! आज भी वही समय है स० भक्तसिंह जी ने तो विदेशियों के साथ टक्कर ली परन्तु हमें अब अपने घर के शत्रुओं से टक्कर लेनी पड़ेगी तभी हम अपनी मातृ-भूमि के सच्चे उपासक हो सकते हैं।

उन वीरों ने स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए अपना बलिदान दिया आज हमें स्वतन्त्रता की रक्षा के हेतु अपने अमूल्य जीवन को राष्ट्रीय पवित्र धर्म की ओर,

(शेष पृष्ठ ५ पर)

भारत के हित

(लेखक—श्री वेदप्रकाश जी बी० ए० खन्ना)

जिए सदा से भारत हित हम मरते आए।
वन्दन उसका ऋषि मुनि गण हैं करते आए॥

पुण्य धरा वह भारत सुख कल्याणमयी है,
धर्म कर्म उत्थान प्राण निर्माणमयी है,
राम राज्य आदर्श हर्ष जिस भू के न्यारे,
धर्म युद्ध में जहां सदा तन मन धन वारे।
वहीं शत्रु के नाश हेतु रण बिगल बजाए।
जिए...... ॥

देवासुर संग्राम हुए विष पीने वाले,
सुधाधार को बहा सर्वदा जीने वाले,
शरणागत हित हम्मीरों ने सब कुछ वारा,
दुष्ट दलन हित रहा चमकता सदा दुधारा।
बांध कफन सिर वहीं शौर्य ने पैर बढ़ाए।
जिए...... ॥

गौरव को हम कभी आंच न आने देंगे,
एक इंच पर भी ना पैर जमाने देंगे,
वज्रपात भूकम्प प्रलय का नाश करेंगे,
रग रग में हम महानाश तूफान भरेंगे।
बढ़ कर अपनी आप न कोई मौत बुलाए।
जिए...... ॥

कण कण हित अब बच्चा बच्चा टूट पड़ेगा,
श्वास आखिरी तक यौवन अभिमान लड़ेगा,
अर्पण होंगे भामाओं के कोष खजाने,
अचलों को कर देंगे विचलित अटल निशाने।
चट्टानों से चंगेजी न अब टकराए।
जिए...... ॥

आर्यसमाज किला मुहल्ला का वार्षिक चुनाव

आज ३—३—६३ सायं समय प्रधान जी के चुनाव के पश्चात् प्रधान जी को अधिकारी चुनने तथा अन्तरंग सभा बनाने का अधिकार दे दिया था। निम्नलिखित अधिकारी चुने गए—

प्रधान—श्री शंकरदास त्रेहन। उपप्रधान—श्री भीमसैन बहल, श्री डा॰ हुकमचन्द भल्ला, श्री सन्तोष राज, श्री प्यारे लाल बेरी, श्रीमती विद्यावती आनंद। मन्त्री—प्रो॰ वेदीराम जी। उपमन्त्री—श्री नरदेव मोंगा, श्री आनन्द सागर, श्री वेदमित्र चड्ढा, श्री देवीदास गुप्ता। पुस्तकाध्यक्ष व प्रकाशन विभाग—श्री प्रकाशदेव जी। कोषाध्यक्ष—पं॰ सीता राम जी।

अन्तरंग सभा के सदस्य

श्री देशराज महाजन, श्री ज्ञानचन्द भाटिया, श्री चंचलदास जी, श्री यशपाल एम॰ एल॰ ए॰, श्री चमन लाल एम॰ एल॰ सी॰, श्री जगन्नाथ सग्गी, श्री केदारनाथ सग्गी, प्रो॰ सत्यदेव जी, प्रो॰ पृथ्वीपाल तारा, श्री बरकत राम जी मैनेजर पंजाब नैशनल बैंक, श्री भीमसैन जी मेहरा, पं॰ खुशहाल चन्द पाराशर, श्री बन्सीलाल वाली, डा॰ दर्शनलाल जग्गी, पं॰ अयोध्या प्रसाद, श्री ज्ञानचन्द त्रेहन, श्री ज्ञानचन्द उचानी, पं॰ दुर्गादत्त जी, प॰ रामदास पराशर, ला॰ दूनीचन्द जी, पं॰ सरला, 'कौशल'।

भवदीय—वेदीराम शर्मा
मन्त्री—आर्यसमाज, किला

२६ मार्च आया

(३ पृष्ठ का शेष)

इस वार आर्य समाज का स्थापना दिवस २६ मार्च को है। महर्षि ने इसी शुभ दिन विश्व में वैदिक धर्म प्रचार के, लिए आर्य समाज की स्थापना कर के यह प्रकाश स्तम्भ प्रदीप्त किया था। यह समाज का जन्म दिन है। हम अपना, बच्चों का तथा कई और भी चीजों का जन्म दिन धूम धाम से मनाते हैं। किन्तु समाज का का जन्म दिन तो विशेष समारोह से मनावे। इसी दिन वास्तव में हम पैदा हुए थे। प्रभात फरी हो, भारी जलसे हों, ट्रेक्ट बांटें जाये तथा रात को समाज मन्दिर, समाज की संस्थाओं तथा सारे आर्यों के मकानों पर शानदार दीप माला हो। यह हमारा जन्म पर्व है। अभी से तयारी आरम्भ कर देवें—

त्रिलोक चन्द्र

हमारा कर्त्तव्य-पथ

(पृष्ठ ४ का शेष)

न्योछावर करना होगा। तभी हम अपने शहीदों की पुण्य-स्मृति चिर-स्थाई रख सकेंगे। आज विशेषकर आर्यसमाज के आर्य युवकों को पहरेदार बनना होगा। एकात्मक व दृढ़ भावनात्मक ठिकरी पैहरा गांव २ नगर २ व प्रांत २ में देना होगा ताकि कहीं देश-द्रोही अपनी कुचालों में सफल न हो जाए।

आर्य समाज की इस देश में कितनी ही शिक्षण संस्थाएं हैं उन में कितने ही आर्य वीर हैं उन सब का कर्त्तव्य है कि वे जहां भी रहते हैं सच्चे देश भक्त सिपाही होने का प्रमाण दें ताकि सारा भारत ही दृढ़ शक्तिक भावनाओं से सुसज्जित हो जाए। जिनकी भावना महान् है उनके आगे कोई विपत्ति घर नहीं कर सकती। आज चीन ने हमारे भारतीय पौरुष को चुनौती दी है इस चुनौती को स्वीकार कर भारतीय युवकों ने जिस कर्त्तव्य-पथ को अपनाया है निश्चय ही भारत का गौरव है। त्याग और तप ही हमारा कर्त्तव्य-पथ होना चाहिए। निश्चय ही हम सफल होंगे।

भारत की महान एकता को देखकर चीनो बौने छटपटा रहे हैं। आज हमें समझना चाहिए कि हमारी स्वाधीनता का मुल्यांकन असंख्य शहीदों ने अपने महान बलिदानों से किया था। हमें प्रत्येक कदम को सोच समझ कर उठाना चाहिए। छोटी सी आग की चिंगारी भी महान अंगार का रूप धारण कर सकती है। परमात्मा हमें शक्ति व सद्बुद्धि प्रदान करे जिस से कि हम सच्चे आर्य बन कर समाज तथा राष्ट्र की सुरक्षा के लिए सब कुछ बलिदान कर दें। आज यही समय की पुकार है।

हिन्दी के उपन्यास सम्राट्

मुन्शी प्रेमचन्द और आर्यसमाज

ले॰—श्री भवानीलाल जी भारतीय एम. ए. पाली (राजस्थान)

हिन्दी और उर्दू के कथा साहित्य के पाठक मुन्शी प्रेमचन्द के नाम से परिचित हैं। जिस समय कथा के क्षेत्र में ऐयारी और तिलिस्मी उपन्यासों की बहार थी और जीवन की ज्वलन्त समस्याओं से उपन्यासकार का दूर का भी सम्बन्ध नहीं था, उस समय प्रेमचन्द जी ने अपने उपन्यासों और कहानियों के द्वारा देश की सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक अवस्था का चित्रण कर यह सिद्ध कर दिया कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। प्रेमचन्द जी के समाज सुधार और राष्ट्रीय पुनरुत्थान विषयक विचारों के निर्माण में आर्यसमाज का बहुत बड़ा हाथ था। हिन्दी के सभी आलोचकों और साहित्य के इतिहास लेखकों ने इस बात को स्वीकार किया है कि सामाजिक क्रान्ति के मार्ग प्रशस्त करने वाली प्रेमचन्द जी की रचनायें आर्य समाज की विचारधारा से प्रभावित होकर लिखी गई हैं।

अभी विगत ८ अक्तूबर १९६२ को प्रेमचन्द की निधन तिथि पर उनके कनिष्ठ पुत्र श्री अमृतराय द्वारा लिखित स्वर्गीय उपन्यास सम्राट् की एक बृहद् जीवनी 'कलम का सिपाही' के नाम से प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक में प्रेमचन्द जी और आर्यसमाज के सम्बन्धों पर बहुत कुछ प्रकाश डाला गया है। उक्त पुस्तक के पृ॰ ४८ पर लिखा गया है—

(क्रमशः)

साम वेद का अंग्रेजी अनुवाद छप गया

आर्य हिन्दु जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि महात्मा देवी चन्द जी एम॰ ए॰ ने वैदिक साहित्य में वेदों का अंग्रेजी में अनुवाद करने का भार अपने कन्धों पर ले कर एक महान् न्यूनता को पूर्ण किया है। सर्व प्रथम उन्होंने यजुर्वेद का अनुवाद अंग्रेजी में किया था। अब साम वेद का अंग्रेजी अनुवाद छप चुका है। इस का मूल्य २५) रुपया है।

जो भाई इस पुस्तक को खरीदना चाहें अपना आर्डर सीधा महात्मा जी को अखिल भारतीय दयानन्द सालवेशन मिशन के पता पर भेजें।

देवराज वैदिक मिशनरी
होशायारपुर

—०—०—

पूज्य महाशय कृष्ण जी

(ले०—श्री सतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक सभा)

चल बसे। जाना तो सब ने है परन्तु कुछ एक ऐसी महान आत्मायें होती हैं जिन के चले जाने पर ऐसी जगह खाली होती है कि भर नहीं पाती। शेरे-पंजाब लाला लजपतराय की मृत्यु हुई तो आज तक इस अभागे देश को उन सा तेजस्वी नेता न मिल सका। अब पूज्य महाशय जी के निधन से पंजाब एक बार फिर वैसा ही अनाथ हो गया है।

महाशय जी का जन्म वजीराबाद जिला गुजरात के (पाकिस्तान) एक रूढ़ीवादी हिन्दू घराने में हुआ और शिक्षा इस्लामिया कालेज लाहौर में हुई। परन्तु आश्चर्य यह कि वे बने सुधारवादी और कट्टर आर्य समाजी। हिन्दू रूढ़ीवाद का प्रभाव तक न रहा, इस्लाम का प्रभाव तो क्या होना था। उनके अन्दर क्रांति की भावना पैदा हुई। पूज्य महाशय जी में यह क्रांति केवल धर्म सम्बन्धी ही न थी राजनीति सम्बन्धी भी थी। महर्षि दयानन्द जी के अनन्य भक्त से ऐसी ही आशा हो सकती थी।

धर्म के क्षेत्र में उन्होंने आर्यसमाज की तन मन धन से सेवा की। गुरुकुल के अधिष्ठाता रहे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री और प्रधान के रूप में वर्षों आर्यसमाज की सेवा की। हैदराबाद सत्याग्रह और हिन्दी रक्षा सत्याग्रह में उनकी सेवाएं भुलाई नहीं जा सकतीं। उनकी लेखनी से निकले शब्दों ने जादू का काम किया और आर्यजगत में जीवन का संचार किया। देश सेवा और राजनीति में भी उनकी सेवा चिर स्मरणीय रहेगी। उनके अपने सिद्धान्त थे और वे उनपर निश्चल, अडिग रहे। कोई शक्ति, कोई सख्ती और कोई लालच, कोई प्रेरणा उनको अपने मार्ग से विचलित न कर पाई। अंग्रेज की सख्ती को उनका एक ही जवाब था—यह गर्दन कट सकती है झुक नहीं सकती। जमानतें जब्त हुईं, प्रैस बन्द हुआ, अखबार पर पाबन्दी लगी, जेल में बन्द हुए। सब कुछ हंसी खुशी से सहन किया।

स्वतन्त्रता संग्राम में महात्मा गांधी के साथ पूरा साथ और पूरा सहयोग दिया। परन्तु जहां मतभेद हुआ उनका डट कर मुकाबिला किया। स्वतन्त्र भारत में भी देश निर्माण में कांग्रेस सरकार के साथ रहे परन्तु जहां सरकार की नीति को देशहित के विरुद्ध पाया उसकी आलोचना करने से भी न घबराए इसके लिए हानि हुई और कष्ट भी परन्तु सब कुछ हंसी खुशी से सहते रहे।

उनकी कलम में जादू था, मोहिनी थी। जनसाधारण पढ़े लिखे, और राजनीति के माहिर सभी उनके अग्रलेख पढ़ने के लिए उतावले रहते थे। तभी तो उनको देशीय भाषाओं के समाचार पत्रों का सम्राट कहा जाता है और उनका स्थान भारत में पत्रकारिता में सब से अगली पंक्ति में माना गया है। आज वे हमारे मध्य में नहीं हैं परन्तु देश सेवा, धर्म सेवा और समाज सेवा में उनका नेतृत्व और कार्य सदा अमर रहेगा और उनका प्रताप बनकर और वीर अर्जुन के रूप में ही हम सबका मार्ग दर्शन करता रहेगा। उनके निधन पर उनका परिवार ही नहीं सारा आर्यजगत शोकग्रस्त है।

———

जीवन और स्वास्थ्य

(श्री० डा. धर्मदेवजी धर्मशाला (कांगड़ा)

श्री० डा. धर्मदेव जी आर्यसमाज के बड़े ही प्रेमी कार्यकर्ता सज्जन हैं। जब सरकारी सर्विस में थे तब भी आर्यसमाज के सेवा कार्य में तत्पर रहते थे। वहां से सेवामुक्त होने पर भी उसी प्रकार समाज सेवा में लगे हुए हैं। बड़े अनुभवी तथा लेखक है। आर्यजगत् उनके अमूल्य विचारों से भी लाभ उठाये इसी विचार से उनके स्वास्थ्य के उत्तम लेख भी समय २ पर दिये जाते रहेंगे। —सं०

आर्यसमाज का एक उद्देश्य संसार की उन्नति करना है अर्थात् शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति व प्रगति करना है। जब तक शरीर दृढ़ एवं बलशाली न हो, तब तक न दिमागी तथा न ही आत्मिक उन्नति सम्भव है क्योंकि एक बलशाली शरीर में ही एक बलवान दिल रह सकता है। यदि हम मानसिक तथा आत्मिक उन्नति के इच्छुक हैं तो हमें सब से पूर्व अपना शरीर स्वस्थ और नीरोग बनाना चाहिए। क्योंकि परमात्मा ने जितने पदार्थों के वरदान दिए हैं उन सब में स्वास्थ्य सबसे बड़ा वरदान है। दूसरे पदार्थों में यह सर्वोत्तम माना गया है। यदि स्वास्थ्य है तो हम हर कार्य कर सकते हैं, सोच विचार सकते हैं, जनता की सेवा तथा प्रभु की पूजा भी कर सकते हैं यदि स्वास्थ्य ही ठीक नहीं है तो हम न तो अपना ही कोई काम कर सकते हैं तथा न दूसरों की सेवा। वरन् दूसरों पर एक अनुचित भार ही होंगे।

शरीर के स्वस्थ होने का नाम स्वास्थ्य है। जब हमारा शरीर सर्वविधि ठीक हो कर सारे कार्यों के करने में समर्थ होता है, तो हम अपने को स्वस्थ समझते हैं। स्मरण रखो-शरीर तब तक ठीक नहीं रह सकता, जब तक साथ २ मन भी ठीक न हो। शरीर स्थूल और मन सूक्ष्म है। सूक्ष्म भाप जैसे भारी इञ्जन को चलाती है। वैसे ही मन शरीर पर राज्य करता है। मन के विचार को ही शरीर एक क्रियात्मिक रूप देता है। मन है राजा और शरीर उसका मंत्री है। ये दोनों मिल कर अपने जीवन साम्राज्य को दृढ़ करते हैं।

शुद्धवायु आवश्यक

स्वास्थ्य के लिए शुद्ध एवं पवित्र वायु से बढ़ कर और कोई आवश्यक पदार्थ तत्व नहीं है। आप खुले मैदान या नदी के तट पर लम्बे २ और गहरे २ श्वास लेवें। जिस मात्रा में शुद्धपवित्र वायु सेवन करेंगे, उसी प्रकार आप अपनी आयु को लम्बा कर रक्त को शुद्ध तथा शरीर को स्वस्थ बनायेंगे। शुद्ध वायु जल तथा भोजन से बढ़ कर आवश्यक है। इस लिए आप के मकान खुले साफ तथा हवादार होने चाहिए। रात को भी द्वार, खिड़कियां खुली रहें ताकि एक ओर से शुद्ध वायु आपके कमरे में प्रविष्ट हो और दूसरी ओर से खराब वायु निकल जाये। शुद्ध वायु को भोजन के समान अथवा उस से भी आवश्यक मान कर हम को प्रतिदिन अपने घर में वायुशुद्धि के लिए हवन करना चाहिए। इस से बड़ा लाभ यह होगा कि आप प्रत्येक रोग से सुरक्षित रहेंगे। परमात्मा की कृपा आपके साथ रहेगी। प्रभुपूजा के साथ२ पवनशुद्धि भी होगी (क्रमशः)

———

प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार का कार्य

आर्यसमाज लारेंस रोड में– खुशीराम शर्मा की कथा ३ से ११ तक होती रही और श्री मा० ताराचन्द जी तथा श्री हजारी लाल जी के भजन होते रहे। आ० स० लारेंस रोड ने ५०१) रु० वेद प्रचार के लिये सभा को भेंट किये। अतिरिक्त इसके २४ सदस्य मासिक सहायता सभा को देने वाले भी बनाये। इस कार्य के लिये आ० स० लारेंस रोड के आर्य भाई बहिनों से विशेषतः अधिकारियों और कार्यकर्ताओं के प्रति हार्दिक कृतज्ञता।

आ० स० रेलवे रोड भटिंडा–का वार्षिक उत्सव २२ से २४ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। १४ से श्री राजपाल जी मदन मोहन जी पधारे हुए हैं। १७ मार्च से श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री कथा करेंगे। उत्सव पर श्री पं० दौलतराम जी शास्त्री अमृतसर, श्री मा० ताराचन्द जी, श्री ठा० दुर्गासिंह जी, श्रीमान पं० रलाराम जी प्रधान सभा के भी पधारने की आशा है।

आ० स० शामचौरासी–का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ मार्च से यज्ञ और कथा हो रही है। कथा के लिये खुशीराम शर्मा और राजपाल जी मदन मोहन जी पधार रहे हैं।

आ० स० अखनूर (जम्मू) का उत्सव ३१ मार्च १, २ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २४ मार्च से कथा यज्ञ के लिये श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री मेलाराम जी पधार रहे हैं। उत्सव पर श्री मा. ताराचन्द जी। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी पधार रहे हैं।

आ. स पुरानी मंडी जम्मू–का उत्सव ३०, ३१ मार्च १ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्ती राम जी पधार रहे हैं।

आ० स० मिर्चपुर हिसार–का उत्सव १५ से १७ मार्च को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री जमादार भरतसिंह जी चौ० भूराराम जी, प्रभुदयाल जी मंडली पधार रही है।

आ० स० जोगेन्द्र नगर–का यज्ञ, उत्सव ६ अप्रैल से १४ तक सम्पन्न हो रहा है। यज्ञ, कथा के लिये श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री मा० ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

आ० स० नूरनखेड़ा–का उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

आ० स० छेतो–आ० स० गूसलों, आ० स० बुड्ढा खेड़ा, आ० स० फूसगढ़, आ० स० सीधपुर के उत्सव श्री पं अमरसिंह की अध्यक्षता में धूमधाम से सम्पन्न हुए। श्री पं० अमरसिंह जी, श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री, श्री मा० ताराचन्द जी, श्री शमशेर कुमार जी, श्री बस्तीराम जी, श्री जगत् राम जी, श्री रामकरण जी, श्री महावीर जी, श्री नत्थूराम जी पधारे।

१८ से २० सुभरी, २२ से २४ सुल्तानपुर, २६ से २८ बुर्ज, २६ से ३१ [illegible] ये उत्सव मार्च मास में श्री पं० अमरसिंह जी की देख रेख में सम्पन्न हो रहे हैं।

६ से ८ मदीनादांगी, ८ से १० सोरखी, ११ से १३ खरकड़ा ये उत्सव मार्च मास में रोहतक मंडल की देखरेख में सम्पन्न हुये। श्री जमादार भरतसिंह जी, श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री जयनारायण जी, श्री चौ० भूराराम जी, श्री प्रभुदयाल जी की मंडली आदि सज्जन पधारे।

आ० स० न्यू रेलवे कालोनी जालन्धर–का उत्सव १२ से १४ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है।

आ० स० पंजौड़, पाहुड–के उत्सव १८ से २१ तक सम्पन्न हो रहे हैं।

आ० स० जलालाबाद गर्वी मे–२४ अप्रैल से ३० अप्रैल तक खुशीराम शर्मा कथा कहेंगे। उत्सव के रूप मे।

निवेदन

सभी सम्बन्धित आर्य समाजों के अधिकारी महानुभावों से निवेदन है कि अपने-अपने उत्सव की तिथियां शीघ्र सभा कार्यालय में भेजने की कृपा करें। ताकि प्रबन्ध में सुभीता रहे।

शिवरात्रि फंड भी शीघ्र सभा कार्यालय में भेजने की कृपा करें।

खुशीराम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, हुशियारपुर
पं० ऋषिराम जी के प्रवचन

होश्यारपुर, भारतीय संस्कृति के विख्यात, प्रचारक पं० ऋषिराम जी जिन्होंने अनेक बार विदेश भ्रमण किया है, १२ मार्च से रोज सायं ४ ० बजे साधु आश्रम होश्यारपुर में उपनिषद् तथा गीता पर प्रवचन करेंगे। इस मे सभा रुचि रखने वाले सज्जनों की उपस्थिति प्रार्थनीय है।

कैलाशनाथ उपसचालक

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार

अन्तर्गत डी० ए० वी० कालिज प्रबन्धकर्त्री सभा, नई देहली

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों ने आर्यसमाज के साप्ताहिक कार्यक्रम को निम्न लिखित प्रकार से सम्पादन किया।

ब्र० गोविन्द प्रसाद जी ने माडल टाउन हिसार में भाषण दिया।

ब्र० कृष्णलाल जी ने हांसी समाज में भाषण दिया।

ब्र० देवदत्त जी ने नागौरी गेट आर्य समाज मे सन्ध्या कराई। सब ब्रह्मचारियों ने समाज के साप्ताहिक सत्संग मे जाकर धर्मलाभ उठाया

निवेदक–ब्र० वेदप्रिय विद्यावाचस्पति

शोक समाचार

आज स्थानीय आर्य समाज तथा डी० ए० वी० हा० सै० स्कूल, दसूहा की यह शोक सभा भूतपूर्व ओवरसीयर श्रीमान् ला० नत्थूराम जी रल्हन के अकस्मात् देहावसान पर हार्दिक शोक प्रकट करती है।

लाला जी का आर्य स्कूल तथा आर्य समाज से गहरा संबन्ध था। आप समाज के निष्काम सेवक थे, तथा स्कूल निर्माण-कार्य में सक्रिय भाग लेते थे।

भगवान् से प्रार्थना है, कि वह लाला जी की आत्मा को सद्गति प्रदान करें, तथा परिवार को इस असह्य वेदना को सहने की शक्ति दें।

चिरंजीव लाल 'ऋषि'

दिवंगत राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद

जी के निधन पर निम्न आर्य संस्थाओं ने शोक प्रकट किया और उनकी आत्मा की शुभ गति की याचना करते हुए उनके परिवार से समवेदना प्रकट की।

साईंदास H/S स्कूल जालन्धर डी. ए. वी. H/S स्कूल दसूआ, आर्यसमाज दसूआ, डी. ए. वी. हायर सै० स्कूल काद्रियां विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर स्त्री आर्यसमाज फिरोजपुर, स्त्री आर्यसमाज कालिज विभाग फिरोजपुर छावनी' आर्यसमाज सैक्टर ८ चंडीगढ़, जिला वेद प्रचारिणी सभा होशियारपुर, आल इंडिया दयानन्द सालवेशन मिशन हुशियारपुर, दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार, आर्यसमाज धारीवाल,

—व्यवस्थापक

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा, दल्ली

पूज्जनीय महात्मा हसराज जी का जन्म दिवस

दिल्ली की सब आर्यसमाजों की ओर से आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा दिल्ली के तत्वावधान में तिथि १४ अप्रैल को डी. ए. वी. स्कूल चित्र गुप्त रोड दिल्ली के विशाल पण्डाल में विशेष समारोह पूर्वक मनाया जाना निश्चित हुआ है। यह उत्सव पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज की अध्यक्षता में होगा। राजकुमार मंत्री सभा।

आर्यसमाज बाढ़

ता: १६-२-६३ से २२-२-६३ तक ऋषि बोधोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। और सात दिनों तक सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय हुआ।

ता० २२-२-६३ को विशेष यज्ञ का आयोजन, गायत्री जाप, महर्षि के जीवन चरित्र पर व्याख्यान हुआ इस समारोह में आर्यसमाज के सदस्य गण, महिला आर्यसमाज की सदस्याएं भी शामिल थीं और और बालविद्या सदन के छात्रगण भी उपस्थित थे।

... स्कूल दयानन्द नगर जालन्धर

१९ अप्रैल १९६३ को पूज्य स्व० महात्म हंसराज जी के शुभ जन्म दिवस पर खुल रहा है। आज पश्चिमी शिक्षा की ओर भुकाव बढ़ रहा है। संरक्षकों की इस मांग को पूरा करने के लिए डी. ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी चित्रगुप्त रोड देहली सदैव की भांति जागरुक है और वह माडल स्कूल नई देहली भटिंडा, अंबाला, और चंडीगढ़ में खोल चुकी है। अब इसी प्रकार का उत्तम स्कूल जालन्धर में खुल रहा है। बच्चों को अच्छी शिक्षा देने के लिए संरक्षक अपने बच्चों को यहां दाखिल करवाएं।

संतोष राज
मुख्याध्यापक दयानन्द माडल स्कूल जालन्धर

स्वर्गीय महाशय कृष्ण जी

के देहावसान पर निम्न आर्य संस्थाओं के शोक प्रस्ताव प्राप्त हुए दिवंगत आत्माकी सद्गति व उनके परिवार को शान्ति प्रदान करने की प्रभु से हार्दिक प्रार्थना की गई।

आर्य प्रचार समिति कच्छ केसल, आपेरा हाऊस बम्बई ४, आर्यसमाज गोहाना (रोहतक) डी. ए. वी. H/S स्कूल कादियां, वेद प्रचारिणी सभा हुशियारपुर, डी. ए. वी. H/S स्कूल दसूहा, व आर्यसमाज दसूहा, लब्भूराम दोआबा H/S स्कूल जालन्धर गुरुकुल महाविद्यालय भज्जर (रोहतक) डी. ए. वी. हाई स्कूल गुरदासपुर, प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब, आर्य युवक समाज डी. ए. वी. कालिज जालंधर, आर्य हाई स्कूल नाभा, डी. ए. वी. H/S स्कूल करनाल, स्त्री आर्य केन्द्रीय सभा फिरोजपुर, स्त्री आर्य समाज कालिज विभाग फिरोजपुर छावनी, आर्यसमाज सैक्टर ८ चंडीगढ़, जिला वेद प्रचारिणी सभा हुशियारपुर, दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय हिसार, आर्यसमाज धारीवाल।

—व्यवस्थापक

आर्य समाज लारेंस रोड (अमृतसर)

में वेद प्रचार

५०१/- की राशि सभा को दान

आर्य समाज लैरेंस रोड में ३ से ११ मार्च तक प्रतिदिन श्री पं खुशी राम जी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठता सभा की बृहदारण्यक उपनिषद के अध्यात्मवाद पर कथा होती रही नगर के कोने २ से नर नारियों ने पधार कर इस अमृत वर्षा का लाभ उठाया। समाज की ओर से आर्य प्रादेशिक सभा को 501/- वेद प्रचारार्थ प्राप्त हुआ तथा 24 सदस्यों ने मासिक सहायता देने का प्रण किया। इस शुभ कार्य को सम्पन्न करने का श्रेय श्री देवव्रत मंत्री सभा तथा विद्यासागर जी वैद्य को प्राप्त है। प्रादेशिक सभा की ओर से शतशः धन्यवाद।

व्यवस्थापक

आर्यसमाज हिसार में

तारीख २७ फरवरी से लेकर ३ मार्च रविवार तक रात्रि को धूमधाम से कथा प्रचार होता रहा। जिसमें पंडित त्रिलोक चन्द्र शास्त्री की वेद कथा तथा पं. राजपाल मदनमोहन चिमटा मंडली के ओजस्वी भजन हुए। समाज का हाल खचाखच भरा होता था। साथ २ आर्यसमाज दयानन्द भवन में भी स्त्री समाज में प्रचार हुआ। वहां पर मान्या माता जी, बहिन कान्ता मंत्री जी, कौशल्या जी, सीता जी, शकुन्तला जी आदि बहिनों का अतीव उत्साह है। मान्य दीवान धर्मचन्द जी के आईडियल स्कूल में भी प्रचार हुआ। Ideal स्कूल सचमुच हर बात में Ideal स्कूल ही है। आर्य कन्या हाई स्कूल में भी प्रचार किया। परिवारों में भी प्रचार हुआ। आर्य समाज हिसार ने सभा के वेदप्रचार शिवरात्रि फंड तथा जगत के लिए १५०) रु. दिये। मार्ग व्यय अलग। हिसार हमारा केन्द्र है। वहां पर शानदार समाज, विशाल D.A.V. कालेज, सी. ए. वी. स्कूल, दयानन्द ब्राह्म विद्यालय, आर्य कन्या हाई स्कूल, दयानन्द भवन समाज है। बड़ा उत्साह है।

दयालपुरा करनाल

आर्यसमाज दयालपुरा करनाल में दैनिक सत्संग होता है। बड़ी रौनक है। ६ मार्च रात को अमर शहीद पं. लेखराम बलिदान-दिवस धूमधाम से मनाया गया। जिसमें श्रीयुत मामचन्द जी उपप्रधान समाज, प्रि. मेलाराम जी वर्क, पं. तेजभान जी भजनोपदेशक, पं. त्रिलोकचन्द जी शास्त्री ने अमर शहीद के जीवन पर विचार रखे। सुन्दर संगीत हुए। समाज का भवन भरा हुआ था। दोनों समाजों के सज्जन पधारे।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जलन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे **आर्य समाज स्थापना दिवस अंक** वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक १२) रविवार ११ चैत्र २०१९ — २४ मार्च १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

तपनी अस्मि पिशाचानाम्

मैं सारे पिशाचो को, राष्ट्र शत्रुओ को तपाने वाला हू। उन की बुरी गत करने वाला हूं। अग्नि बन कर उन को जला देता हूं। भस्म करने की शक्ति रखता हूं।

श्वानः सिंह मिवदृष्ट्व

कुत्ते जैसे सिह को, शक्ति से भरे शेर को देख कर भय से कांपते ल ते है। अपना होश भो भूल ते हैं। उन को कोई ठौर ठिकाना नही मिलता है–

ते न विन्दन्ते न्यचनम्

उसी प्रकार शत्रु भी मुझे देख कर अपनी सारी चौकड़ी भूल जाते है मुझे सामने देख उ. का कुछ भी नही रहता। सारी शक्ति उन की जाती रहती हैं–

अथर्ववेद

आर्य समाज के महान संस्थापक



महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

नेता की ललकार

चीन किसी भी समय फिर हमला कर सकता है हमें रक्षा की पूरी तैयारी करनी होगी

प्रति रक्षा मन्त्री श्री चह्वाण जी के ओजस्वी विचार

प्रतिरक्षा मन्त्री श्री यशवंतराव चह्वाण ने आज लोगों को चेतावनी दी कि चीनी हमले का खतरा अभी बना हुआ है और हमें देश रक्षा की पूरी तैयारी करनी है।

देश की रक्षा-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के हेतु देश के सर्वतोमुखी विकास के साथ-साथ एकता की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा: 'अब हमारा नारा यह होना चाहिए कि हम केवल भारतीय हैं, और कुछ नहीं।'

आगे आप ने कहा कि हम सब का विकास एक हिमालय की छाया में हुआ है। यह हमारी एकता का सबसे बड़ा सबूत है। चीन ने धोखे से हम पर हमला किया है। आज, जबकि देश पर सङ्कट आया हुआ है, हमें सङ्गठित होकर एक हो जाना चाहिए और देश को रक्षा के लिए जुट जाना चाहिए।

अधिष्ठाता— संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक— त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

प्यारी माँ आर्यसमाज का जन्म दिन

(लि: पंडित चन्द्रसेन आर्यहितैषी उपदेशक सभा सोनीपत निवासी)

बन्धुओं—ऋषि मुनियों के प्यारे भारत वर्ष के गुजरात प्रान्त जिसे आज सौराष्ट्र कहते हैं मौरवी स्टेट टंकरा ग्राम में भारत के भाग्य विधाता व राष्ट्र निर्माता आदर्श बालक मूलशंकर ने जन्म लिया जो आज युग प्रवर्त्तक दयानन्द सरस्वती के नाम से जगत विख्यात हैं ये आज से १३७ वर्ष पहले की बात है इस आदर्श त्यागी एवं योगी के आने से पहले भारत गारत की ओर जा रहा था। धार्मिकता, देशभक्ति एवं चरित्रता सब समाप्त होती जा रही थी, इसके विपरीत कुप्रथाएं चल रही थीं गैर आर्य (हिन्दु) भारतीयों पर छा रहे थे व ईसायत तथा इस्लाम आदियों का बोलबाला था अपने भी कई ढोंगी रंग रेलियों में मस्त थे। भारत मां परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ी हुई थी सात समुद्र पार के चन्द गोरे इस पवित्र भूमि पर अधिकार किये बैठे थे ये सत्ता धारी कहते थे ब्रिटिश राज्य का सूर्य कभी अस्त न होगा, इनकी मीठी नीति ने भाई-भाई को लड़ा रखा था वैदिक मर्यादा सब समाप्त थी देव दयानन्द ने बड़ी गम्भीरता से देश की अवस्था पर विचार किया अपने पराये की पर्वा की खन्डन-मन्डन की पताका लहरा दी समस्त विरोधियों को ललकारा राजनीति का बिगुल भी सत्यार्थ-प्रकाश के छटे समुल्लास के रूप में बजा दिया फिर क्या था पाखन्डी व सभी मतावलम्बियों में खलबलि मच गई फिर क्या था दयालु दयानन्द की जान खतरे में पड़ गई ईंट पत्थरों, लाठियों, तलवारों, ज़हर आदि से इस साधु का सत्कार किया, परन्तु दयानन्द ने अपना दयालुपना नहीं छोड़ा ये तो ऋषि के पवित्र जीवन चरित्र के पढ़ने से ज्ञात होता है। धीरे २ ऋषि की आवाज़ को भारतीयों ने पहिचाना भारी संख्या में लोग दयालु दयानंद के चमत्कार के आगे झुके अंग्रेजी सत्ता धारियों ने भी ये समझ लिया ये साधारण साधु नहीं बल्कि क्रांतिकारी रिफार्मर है अवश्य इस की वाणी रंग लायेगी सचमुच हुआ भी ऐसा। भक्तजनों ने प्रार्थना की महाराज ऐसी सभा व संस्था बनाएं जिस के नियमानुसार से वैदिक गंगा बहती रहे, इस पर दूर दर्शी योगी ने अन्तर ध्यान किया सोच समझकर प्यारी मां आर्यसमाज रूपी संस्था स्थापित करने की घोषणा की जिसका हृदय से स्वागत किया ये लगभग ८४-८६ वर्ष पूर्व की बात है जब से इस प्यारी मा आर्यसमाज ने जन्म लिया है तभी से लेकर आज तक इसका जीवन संघर्षमय रहा पढ़ी-लिखी जनता आर्यसमाज के इतिहास को भूली न होगी। ऋषि के स्वर्ग सिधारने के बाद इस समाज को समाप्त करने में विरोधियों ने कोई कसर नहीं रखी पर ये तो अग्नी पर घी पड़ने वाली मिसाल साबित हुई इस से आर्य समाज आगे बढ़ा इसका प्रकाश विदेशों तक फैला बल्कि ऋषि के सच्चे दिवाने पैदा हुए ऋषि की मृत्यु के तुरन्त बाद कुछ दिवानों ने लाहौर में डी० ए० वी० कालिज की स्थापना कर दी बाद सन् १६०० में कांगड़ी हरिद्वार में गुरुकुल की स्थापना की गई। फिर क्या था आयसमाज चहुं ओर फैला स्वतन्त्रता संग्राम में शत प्रतिशत आर्य समाज का पूर्ण सहयोग रहा अंग्रेज कांग्रेस से भय नहीं खाते थे उन्हें आर्यसमाज से अवश्य भय रहा हकूमत ने हमेशा आर्यसमाज को तिरछी नज़र से देखा समयानुसार आर्यों ने वैदिक प्रचार में अपना जीवन दान दिया कितने आर्य वीर तो बलिदान हो गये सामाजिक और राजनीतक क्षेत्र में जो भी त्रुटियां रहीं उसे दूर करना आर्य समाज का मुख्य काम रहा शिक्षा क्षेत्र में भारत भर में आर्य समाज की सेवाएं सब से अधिक हैं नारी जाति को शिक्षा का अधिकार इस समाज के द्वारा मिला स्व० पंडित नेहरू ने आर्यसमाज की इस सम्बन्ध में भरपूर प्रसंशा की। इस स्वतन्त्र देश में यानी आजकल भी हर दृष्टि से राष्ट्र की आर्यसमाज सेवा कर रहा है भारतीय लोक सभा में भी आर्यसमाज की आवाज का सन्मान है चीन के हमले से जो उलझनें इस देश में पैदा हुई उसे सुलझाने में भारत सरकार का पूर्ण सहयोग दिया और दे रहा है आय बन्धुओ ! आर्यसमाज का स्थापना दिवस मनाने चले हो प्रतिज्ञा करें आर्य समाज को सही आर्यसमाज बनायें इस के नियम पर चलना अपना धर्म समझें आपस के मन-मुटाव को समाप्त करें स्वार्थ सिद्धि में न पड़ें दूसरे के हित में अपना हित समझें संकटकाल में धैर्य रखते हुए आर्यसमाज स्थान २ पर स्थापित करें इस में हमारा और आर्यसमाज का गौरव है ये तुच्छ भेट प्यारी मां आर्यसमाज के जन्म दिन पर आर्यों की सेवा में है स्वीकार हो।

दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय, हिसार

(अन्तर्गत डी० ए० वी० कालिज प्रबन्धकर्तृ सभा, नई देहली)

'नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा'

श्रद्धेय स्वामी देवानन्द जी सरस्वती के परमपुरुषार्थ से आर्य नगर (कुरड़ी) ग्राम मे २२ फरवरी से २६ फरवरी तक एक बृहद् शिविर सम्पन्न हुआ। इस शुभा-वसर पर २६ फरवरी पूर्णा-हुति के दिन दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय हिसार के एक त्यागी तपस्वी श्री ब्रह्मचारी विद्याव्रत तपो-मूर्त्ति एवं आर्य जगत के महान धन आचार्य भगवानदेव जी के द्वारा नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा ली। दीक्षित ब्रह्मचारी विद्याव्रत जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन वेद प्रचार के लिये समर्पित कर दिया है। ब्रह्मचारी जी जहां राष्ट्र भक्त हैं वहां सच्चे गौ भक्त भी हैं। वे शीघ्र ही तीन चार महिनों में विद्यालय के स्नातक बन कर राष्ट्र सेवा एवं वेद प्रचार के कार्य को सम्भाल लेंगे ! दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय को ऐसे राष्ट्र भक्त और भक्त ब्रह्मचारी पर पूरा गौरव है ! —ज्ञानचन्द आचार्य

—

भूल सुधार

आर्यजगत के १७—३—६३ के अंक के महात्मा देवीचन्द्र जी लिखित सामवेद अंग्रेजी भाष्य की कीमत १५) के स्थान पर २५) छप गई है। वास्तविक कीमत १५) है। पाठक नोट करलें। —व्यवस्थापक

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ११ चैत्र २०१९, २४ मार्च १९६३ [अंक १२

आर्यसमाज का जन्म दिन

जन्म-दिन का विशेष महत्व है। इस में बड़ा आकर्षण है। यह नाम सुनते ही प्रत्येक के मन में प्रसन्नता की लहर दौड़ने लगती है। बालक हो, युवा अथवा वृद्ध हो, नर हो या नारी, निर्धन हो या धनवान, व्यक्ति हो अथवा परिवार सब को अपने २ जन्मदिन से अतीव प्यार अनुराग होता है। अपने धार्मिक तथा सामाजिक, राष्ट्रिय नेताओं एवं महापुरुषों का जन्म-दिवस तो जनता मिलकर समारोह से मनाती रहती है! उसी प्रकार आर्यसमाज का जन्मदिन भी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस विश्व जनीन, सार्वभौमिक सब का कल्याण चाहने और करने वाली विशाल संस्था के जन्म का पर्व तो सब के लिए बड़े गौरव का स्थान रखता है। सत्य यह है कि आर्यसमाज का जन्मदिन केवल साधारण दिवस ही नहीं अपितु एक महान पर्व है। इस दिन सब के दिल में उल्लास की भावनाएं ठाठें मारती हैं। सारे प्रसन्नता से फूले नहीं समाते।

इस बार समाज का स्थापना दिवस अथवा जन्मदिन इस २६ मार्च मंगलवार को आरहा है। इसी दिन आर्यसमाज के प्रवर्त्तक पूज्य महान ऋषि दयानन्द जी सरस्वती ने सारे विश्व में वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करने के पवित्र उद्देश्य से इस विशाल आंदोलन की स्थापना की थी। सरल शब्दों में यह है कि इस दिन आर्यसमाज ने जन्म लिया था। हम सारे आर्य नरनारी जिस विशाल मानसरोवर की धाराएं हैं, वह इस दिन बना था। हम जिस की अमृत सन्तानें हैं, वह आर्यसमाज रूपी माता का यह दिन जन्म दिवस पर्व है। कौन है जो इसको महान पर्व समझ कर नहीं मनायेगा? इस वार इस पुनीत पर्व को विशेष समारोह के साथ मनाना होगा। आर्यसमाज की राष्ट्र में भारी संगठित शक्ति है। इसके पास बड़ी २ शिक्षण की छावनियां हैं, विद्या मन्दिर तथा अन्य भी बड़ी २ संस्थाएं हैं। भारत के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक समाजों का जाल बिछा हुआ है। आर्यों की बहुत बड़ी संख्या है। शानदार सभाएं हैं। जिसका इतना विस्तृत परिवार है, उसका जन्म बड़ी धूमधाम से मनाया जाना चाहिए। समाजों में बड़े २ जल्से, सभाए तो होनी चाहिएं, जिनमें दूसरों को भी विशेष रूपसे निमन्त्रित किया जाए। वहां पर इसके साथ २ इस वार दो तीन बातों की ओर विशेष एवंम् आवश्यक ध्यान दिया जाये।

जितनी भी प्रांतीय सभाएं हैं, हमारी समाजें तथा उससे सम्बद्ध अन्य शिक्षण संस्थाएं हैं जिनमें अपने डी० ए० वी० आर्यस्कूल, गुरुकुल हैं और नगरों व ग्रामों में आर्यों के परिवार हैं। इन सब स्थानों पर इस जन्मदिवस पर यदि अधिक नहीं तो निशानी के रूप में कुछ दीपमाला तो अवश्य की जाये। राष्ट्र के संकटकाल में इस पर अधिक दिखावा न हो पर सीमितमात्रा में दीप अवश्य जलाये जायें ताकि पता लग सके कि इस दिन हमारी इस व्यापक-संस्था का जन्मदिवस है समाज का साहित्य विशेष रूप से दूसरों में वितरित किया जाये। रेडियो पर विशेष कार्यक्रम प्रसारित करने का अभी से प्रबन्ध किया जाये। उस दिन प्रभात फेरी का खास प्रबन्ध होना चाहिए। प्रत्येक समारोह में समाज के उद्देश्य को जनता में पहुंचाया जाये। आर्यसमाज के विशेष मन्तव्यों, सिद्धान्तों तथा नियमों को लोगों में बांटा जाये। इस दिन प्रत्येक आर्य भाई बहिन समाज सेवा में दैनिक रूप में थोड़ा बहुत समय देने का व्रत धारण करें। वेद प्रचार का संकल्प लेवें। इस पवित्र कार्य के लिए प्रत्येक परिवार इस महान मिशन में एक रुपया श्रद्धापूर्वक सभा के वेद प्रचार कोष में भेंट करना अपना कर्तव्य जाने। जन्म दिवस को समारोह पूर्वक मनावें। सारी सामाजें अभी से इसकी तैयारी आरम्भ कर देवें।

—त्रिलोकचन्द्र

इसे अवश्य पढ़ें

आर्यजगत का स्व० महात्मा हंसराज विशेषांक उनकी पुण्य स्मृति में १४—४—६३ को प्रकाशित हो रहा है। यह अंक पाठकों की सेवा में उनके जन्म दिवस १९—४—६३ से पूर्व पहुंच जायगा। उसके बाद २८—४—६३ के अंक की प्रतीक्षा करें।

२—इस विशेषांक को आकर्षक व उपयोगी बनाने के लिए आर्यजगत के पाठकों, संन्यासी महानुभावों और कवियों से सानुरोध निवेदन है कि अपनी रचनाएं १ अप्रैल तक भेजने की कृपा करें।

३—आर्यसमाजें व आर्य संस्थाएं अपने आर्डर देकर कर्त्तव्य का पालन करें।

—व्यवस्थापक

आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका की स्थापना

२९-३०-३१ दिसम्बर १९६२ को पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की प्रधानता में आर्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका की स्थापना हुई। उसी अवसर पर १९ महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित हुए।

ईस्टरन अफ्रीका आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना के साथ२ यह निर्णय हुआ कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज के बताये परम पुनीत वेद मार्ग पर जनता को लाने का पूरा यत्न किया जाये। ईस्टर्न अफ्रीका निवासियों की विशेषतः महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के प्रताप से यह सभा स्थापित हुई है।

इस सभा के उत्साही उदार कार्यकर्ताओं से यह आशा की जाती है कि वे अपने कार्य में अवश्य सफल होंगे।

ईस्टरन अफ्रीका को वेदामृत पान करवा कर जीवन का ऊंचा तत्व बता कर सफलता की ओर ले जावेंगे।

—व्यवस्थापक

—

आर्य समाज क्या मानता है ?

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, जो ईश्वर ने सृष्टि के आदि में मनुष्यों के पथप्रदर्शन और ज्ञानार्थ प्रदान किया। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब वैदिक धर्मियों का परमधर्म है। वेदों को पढ़ने का अधिकार, विना भेदभाव के संसार भर में सब स्त्री पुरुषों को है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त सर्व व्यापक, अनादि सृष्टिकर्ता आदि गुण युक्त तथा मनुष्यमात्र का उपास्य देव है। एक मात्र उसी की उपासना करनी चाहिए।

३. ईश्वर निराकार और सर्वव्यापक है। उस की मूर्ति नहीं हो सकती। ईश्वर स्थान मे देवी देवताओं की कल्पित मूर्तियों की पूजा वेद विरुद्ध है। मन्दिर वही कहलाने योग्य है जहां धर्म और सुकर्म का उपदेश मिले।

४. जीव ब्रह्म से भिन्न है। अद्वैत वादियों का 'अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूं)' कहना अयुक्त है। हमीं ब्रह्म हैं तो पूजन किस का? दुःख सुख मे फिर हमे आश्रय किस का?

५ विद्वान पुरुषों का सत्संग और वेदशास्त्र का अध्ययन तथा विषय विकार रहित मन तीर्थ है।

६. सूर्य तथा चन्द्र ग्रहण छाया मात्र हैं, यह सभी लिखे पढ़े जानते हैं। उन्हें राहुकेतु से पुकारा जाना और तीर्थों पर जा स्नान करने में पुण्य मानना अन्धविश्वास है।

७. ईश्वर कभी किसी मनुष्य, शूकर वच्छ आदि की देह धारण कर के अवतार नहीं लेता। ईश्वर निराकार है और सर्वव्यापी है। वह सब साक्षी शोक, हर्ष, काल और कर्म के बंधन से रहित है।

८. ईश्वर कर्मों का फलदाता है और उस के न्याय नियम से कर्मों का फल अवश्य मिलता है। कोई ईश्वर का अवतार, खुदा का पैगम्बर या खुदा का बेटा दुष्कर्म के फल भोग से नहीं बचा सकता। ऐसा मानना पाप को बढ़ावा देना है।

९. स्वर्ग-नरक का कोई विशेष स्थान नहीं है। सुख का नाम स्वर्ग और दुःख का नाम नरक है और वे इसी संसार में तथा इसी शरीर मे भोगे जाते हैं।

१०. पुण्य, दान, ईश्वरोपासना, स्वाध्याय, सत्सग, सदाचार, माता पिता, गुरुजनों तथा दीन दुःखी की सेवा एवम् अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य आदि दस यम नियमों का पालन ये मनुष्य को देव पद प्राप्त कराते हैं।

११. मातापिता और आचार्य तीन गुरुजनों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना श्राद्ध है। मृत पितरों के नाम पर श्रद्ध करना वेद विरुद्ध और निरर्थक है।

१२. वर्ण व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव से है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि आचार विद्या से विहीन हो तो शूद्र वर्ण हो जाता है।

१३. पशुओं के बलिदान से ईश्वर प्रसन्न नहीं होता धर्म या यज्ञ के नाम पर मन्दिर आदि में पशु हिंसा करना पाप है।

१४—भूतप्रेत जादु टोना, तागा, तावीज, झाड़ फूंक सब मूर्खों को बहकाने और ठगने को हैं।

१५—विना किसी स्वार्थ के संसार का उपकार करना, अविद्या, अज्ञान नास्तिकता और कुप्रथाओं का नाश करना, सदाचरण, दीन दुःखी की सेवा और प्रभुभक्ति आर्यसमाज के मूलमंत्र है।

१६—शुद्रों या अन्य जाति के साफ सुथरे स्त्री पुरुषों द्वारा पकाये हुए भोजन से धर्म भ्रष्ट नहीं होता हिंसा, अधर्म, अन्याय से प्राप्त हुए धन से खरीदे हुए अन्न के खाने से अवश्य धर्म भ्रष्ट होता है।

१७—आर्यसमाज कोई अलग सम्प्रदाय नहीं। आर्य का अर्थ श्रेष्ठ सदाचारी आस्तिक, ईश्वर विश्वासी और वैदिक धर्मी जनों का संगठन है।

१८—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

डी. ए. वी. कालेज जालन्धर का पारितोषिक वितरणोत्सव

(पृष्ठ ७ का शेष)

और खेलों में तो लगभग सभी चैंपियन शिप जीत ली हैं।

डी. ए. वी. कालेज जालन्धर सदा ही देश भक्ति का आधार लेकर चलता रहा है। वर्तमान स्थिति में भी इस कालेज ने सरकार की काफी आर्थिक सहायता की है। सभी प्राध्यापकों और छात्रों ने बड़ी उदारता से धन व रक्त प्रदान किया। कालेज में N C C. की शिक्षा अनिवार्य कर दी है।

श्री प्रतापसिंह जी कैरो ने अपने अध्यक्षीय भाषण में देव दयानन्द के प्रति श्रद्धांजली अर्पित करते हुए बताया कि आर्य समाज ही ऐसी संस्था है जिस ने भारत को राष्ट्रीय व सांस्कृतिक दृष्टि प्रदान की है। भारत का वर्तमाल रूप दयानन्द ने ही दिया। उन्होंने कालेज की सभी प्रगतियों की बड़ी प्रशंसा की है। उन्होंने सब प्रकार की सहायता का भी आश्वासन दिया।

श्री यश जी भूतपूर्व शिक्षा मन्त्री पंजाब ने मान्य अतिथि का धन्यवाद दिया।

इसी अवसर पर श्री मुख्य मन्त्री व श्री जस्टिस जीवन लाल कपूर ने रसायन विभाग के भवन का उद्घाटन भी किया। इस अवसर पर पहले प्रभात में यज्ञ हुआ तथा उद्घाटन कार्यक्रम वेद मन्त्रों के पवित्र उच्चारण के साथ किया गया। बड़ा ही भव्य दृष्य था। रसायन विभाग में कुछ 'प्रयोगों' का निरीक्षण भी दोनो मान्य अतिथियों व नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने किया। सभी ने इस कार्यक्रम की प्रशंसा करते हुए श्री भीमसेन जी बहल को वधाई दी। हम सभी आर्य जगत की ओर से मान्य प्रि० महोदय को अपनी बधाई प्रेषित करते हैं।

व्यवस्थापक

शोक-प्रस्ताव

आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मा॰ नई दिल्ली की यह साधारण सभा, आर्य जाति के उन्नायक, कर्मठ नेता श्री महाशय कृष्ण के निधन पर हार्दिक शोक तथा शोकातुर परिवार के साथ समवेदना और सहानुभूति प्रगट करती है तथा परमात्मा से प्रार्थना करती है कि वह दिवंगत आत्मा की शांति और परिवार को धैर्य प्रदान करें।

दरबारी लाल

मन्त्री

आर्यसमाज स्थापना दिवस धूमधामसे मनायें

सार्वदेशिक सभा के महामन्त्री जी की घोषणा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन नई देहली के मान्य महामन्त्री श्री स्वामी अखिलानन्द जी महाराज ने सारे समाजों के नाम इस बारे में अपने परिपत्र में लिखते हैं कि—

आर्यसमाज का स्थापना दिवस आर्यसमाज के स्वीकृत पर्वों में से एक महान् पर्व है। सभा के निश्चयानुसार इस वर्ष २६ मार्च १९६३ को मनाया जायगा। इसकी सूचना अपने नगर में बहुत विस्तार से दे और इसका प्रबन्ध बहुत उत्तम ढङ्ग से किया जाये। सब समाजों के लिए कार्यक्रम निम्न प्रकार निश्चय किया गया है—

संकीर्तन—प्रातःकाल नर-नारी अपने-अपने ग्रामों में संकीर्तन और उसके पश्चात् मन्दिर में सन्ध्या हवन करें। प्रयत्न यह होना चाहिए कि नगर का बाजार मोहल्ला छूटने न पाये। सकीर्तन में भजनों की संख्या बहुत अधिक करने की आवश्यकता नहीं परन्तु जो भजनादि सुनने वालों के लिए रुचिकर और शिक्षा प्रद हों, वही गाये जायें।......आर्यसमाज के स्थापना दिवस का सन्देश विश्व-शांति और आध्यात्मिक तथा सामाजिक उन्नति का सन्देश हो, इसी को लक्ष्य में रखा जाये।

नारे और जयघोष——

आर्य समाज अमर रहे, वैदिक धर्म की जय, गोवध बन्द हो, महर्षि स्वामी दयानन्द की जय, नेताओं में से एक दो सर्व मान्य नेताओं के नाम की जय बुलाई जाये। समाज के क्षेत्र के बाहर के किसी भी नेता का कदापि नाम न लिया जाये। मुख्य कार्यकर्ता पहले ही दिन सब निश्चय कर लें।

सार्वजनिक सभा

प्रातः, दोपहर या सायंकाल को सुविधानुसार आर्य मन्दिरों इत्यादि में सार्वजनिक सभाएं की जायें। सभा में पर्व पद्धति के अनुसार प्रथम सरस्वती (वेदवाणी) और ईश्वर की महिमा के प्रदर्शक वेद-मन्त्रों का पाठ, प्रवचन और व्याख्या हो। तत्पश्चात् आर्यसमाज स्थापना दिवस की स्मृति में आर्यसमाज स्थापना के इतिहास, आर्यसमाज की उपयोगिता, अब तक के प्रमुख कार्य, सार्वजनिक सेवायें, संस्थाएं और समाज के कार्यक्रम पर निबन्ध पाठ तथा भाषणादि किये जायें। देशकाल और स्थिति के अनुसार परोग्राम उचित समय लें, तथा सभा से लोग जाकर कह सकें कि आर्यसमाज स्थापना दिवस के समारोह में सम्मिलित होकर बहुत कुछ प्राप्त किया, बड़ा आनन्द आया। स्मरण रहे कि सार्वजनिक सभाओं में आर्यसमाज के सद्गुणों और आर्यसमाज की इस युग में विशेष आवश्यकता पर बल देना चाहिए। त्रुटि का वर्णन करने का स्थान अन्तरग सभा से बाहर कहीं नहीं, यह बात आप के ध्यान से ओझल न होने पाये।

प्रीतिभोज :–

इस के अतिरिक्त इस दिन आर्य नर नारियों को प्रीतिभोज आदि की व्यवस्था कर के आर्य परिवारों का पारस्परिक मेल जोल, प्रेम प्रदर्शन और सम्वर्धन की भी योजना करनी चाहिए। नगर के अन्य उदार और आर्य समाज के प्रति सत्कार भाव रखने वाले नागरिकों को भी निमन्त्रित किया जा सकता है।

मन्दिरों में दीपमाला

यदि अधिक न कहा जाये तो आर्यों के लिए प्रचलित दीपमाला के बराबर का यह उत्सव है। अतः इसदिन प्रत्येक आर्य परिवार अपने घरों में दीपमाला को जलावें। ओ३म् का ध्वज प्रत्येक आर्य घर पर तथा समाज मन्दिर पर लहराया जाना अभीष्ट है। इसी दिन आर्य समाज मन्दिरों और सस्थाओं में भी रोशनी की जाये।

समाजों की स्थापना

आशा है, आप इस वर्ष पूरे उत्साह से दान की राशि एकत्र कर के भेजने की कृपा करेंगे। यह भी यत्न किया जाये कि उस दिन अधिक संख्या में निकटवर्ती स्थानों में जहां आर्यसमाज नहीं है आर्यसमाजें स्थापित की जाएं।

दयानन्द माडल स्कूल दयानन्द नगर जालन्धर

मे १९ अप्रैल १९६३ को पूज्य स्व० महात्म हंसराज जी के शुभ जन्म दिवस पर खुल रहा है। आज पश्चिमी शिक्षा की ओर झुकाव बढ रहा है। संरक्षको की इस मांग को पूरा करने के लिए डी. ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी चित्रगुप्त रोड़ देहली सदैव की भांति जागरुक है और वह माडल स्कूल नई देहली भटिंडा, अबाला, और चडीगढ मे खोल चुकी है. अब इसी प्रकार का उत्तम स्कूल जालन्धर में खुल रहा है। बच्चो को अच्छी शिक्षा देने के लिए संरक्षक अपने बच्चो को यहा दाखिल करायें।

संतोष राज

मत्री आर्य प्रादेशिक सभा

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार)

आपको यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि आपके प्रिय गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का ५५ वां वार्षिक महोत्सव आगामी वैशाखी के शुभ अवसर पर १२, १३, १४, १५ अप्रैल सन् १९६३ ई० को बड़े समारोह के साथ गुरुकुल महाविद्यालय की परम पावन पुण्य भूमि में मनाया जाना निश्चित हुआ है। इस अवसर पर अनेक महत्वपूर्ण एवं शिक्षाप्रद सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है।

मुख्यधिष्ठाता

प्रादर्श देवी रेणुका (H.P.)

आर्यजगत को यह दुःखद समाचार पढ़कर अति खेद होगा कि आर्यजगत के प्रसिद्ध लेखक व सच्चे आर्य श्री पिशोरी लाल जी 'प्रेम' ददाहु (रेणुका) निवासी की पूज्या माता का गत दिनों ९० वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया है। आप सच्चे अर्थों में आर्य गृहणी थीं, यहां तक कि अपनी सन्तान को भी बिना संध्या हवन किए भोजन नहीं देती थीं। ऐसी धर्म परायणा देवियों के सहारे ही आर्य-धर्म का अबतक अस्तित्व बना हुआ है। आर्यजगत उनकी आत्मा की सद्गति व परिवार की शांति के लिए प्रभु से मंगल कामना करता है। व्यवस्थापक

वैदिक साधन आश्रम यमुना-नगर (अंबाला)

का वार्षिक साधना शिविर १६ से २० चैत्र को आश्रम में सम्पन्न हो रहा है। जिस में आनंद स्वामी जी महाराज, स्वामी अखिलानन्द जी, स्वामी रामेश्वरानन्द जी आदि संत महात्मा विद्वान पधार रहे हैं। प्रतिदिन आध्यात्मिक प्रशिक्षण प्राणायाम व योग पर प्रवचनों द्वारा हुआ करेगा। जनता इस शिविर से लाभ उठाए। अध्यक्ष वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर।

महर्षि दयानन्द का उत्तराधिकारी—आर्यसमाज

[लेखक—श्री भक्तराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

पाखण्डनानां विनाशाय
वेदानां रक्षणाय च ।
धर्म संशोधनार्थाय
दयानन्दस्य जीवनम् ॥

एक आर्य कवि के उपरोक्त वचनानुसार महर्षि दयानन्द का जन्म वस्तुतः पाखण्डों के विनाश, वेदों की रक्षा और धर्म के संशोधन के लिए हुआ था। जिस समय आर्यावर्त्त में 'अन्धेर नगरी गवर्गण्ड राजा टके सेर भाजी टके सेर खाजा' वाली लोकोक्ति अक्षरशः चरितार्थ हो रही थी। आर्य जनता को सत्यासत्य का विवेक न था। सहस्रों वर्षों के प्रगाढ़ अन्धकार के पश्चात् परम सौभाग्य से भारत में दयानन्द रूपी ज्योति का प्रकाश हुआ। उस दिव्य ज्योति ने सत्य की खोज में जो वेदनाएं सहन कीं उन्हें स्मरण करते ही शरीर रोमाञ्चित हो जाता है। अन्त तो गत्वा अपने अन्तिम गुरु स्वामी विरजानन्द जी से वेद शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त कर उनकी आज्ञी दक्षिणानुसार महर्षि ने मत-मतान्तरों के खण्डन और वैदिक धर्मप्रचार पर अपना जीवन न्यो-छावर कर दिया।

महर्षि ने कोई नया मत न चला कर ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त ऋषियों के ही विचार सन्सार के सम्मुख रक्खे। उन वैदिक सिद्धांतों का प्रचार वह लेख तथा वाणी (प्रेस और प्लेट फार्म) द्वारा अपने जीवन काल में करते रहे। यावज्जीवन किया हुआ वह कार्य भविष्य में भी बराबर चलता रहे इस पवित्र भावना से सर्व सम्मति से निर्वाचित राज मान्य राजे श्री पाना चन्द्र आनन्द जी पारिख द्वारा निर्मित नियमोपनियमों के उपस्थित होने और महर्षि के अनुमोदन करने पर उन्हीं के आदेशानसार मुम्बई नगर के गिरगांव मुहल्ले में, डाक्टर माणिक चन्द्र की वाटिका में चैत्र शुक्ल १ सम्वत् १९३१ तदनुसार ७ एप्रिल सन् १८७५ बुद्धवार सायं काल सर्वप्रथम 'आर्य समाज' की स्थापना हुई।

आर्यसमाज स्थापना की तिथि मैंने आर्यसमाज मन्दिर बम्बई पर लगे शिला लेख के आधार पर लिखी है अन्यथा स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा लिखित 'श्रीमद्दयानन्द प्रकाश' में चैत्र शुदि ५ सम्वत १९३२ विक्रमी शनिवार अंकित है। अन्य शिला लेखों के फोटो भी मेरे पास हैं जो सन १९४६ के आरम्भ में जहाज से पिछड़ जाने के कारण वहां सपरिवार रहने के समय प्राप्त हुए थे। अस्तु! बाद में भारत में ही नहीं अपितु विश्व भर में आर्य समाज स्थापित हुए। वेद प्रचार की धूम मच गयी। देश में किसी क्षेत्र मे भी जो जागृति दिखाई देती है इस का श्रेय महर्षि दयानन्द को है जिस ने सुषुप्त भारत को प्रबुद्ध कर महान् उपकार किया। सच पूछो तो यह युग ही दयानन्द युग है जिस मे देश के नेता किसी न किसी अंश मे महर्षि के परम पुनीत उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न हैं।

भूतपूर्व गृह मन्त्री स्व० सरदार वल्लभ भाई पटेल ने एक आर्योत्सव (दिल्ली) का सभापतित्व करते हुए अध्यक्षीय भाषण में स्वर्णीय अक्षरों मे लिखने योग्य ये शब्द कहे थे। 'स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आर्य समाज की पहिले की अपेक्षा अधिक आवश्यकता है।' उन आर्य भाईयों की बुद्धि को न जाने क्या हुआ जो सदा यह रट लगाते हैं कि अब आर्यसमाज की आवश्यकता नहीं। मै पूछता हूं कि जिस उद्देश्य से संस्थापक ने उसकी स्थापना की थी क्या वह पूर्ण हो गया? क्या आर्य समाज के उद्देश्य (जैसा कि नियमों में वर्णन किये गये हैं) तथा मन्तव्य (जो वेदों के आधार पर ऋषि दया-नन्द के ग्रन्थों में लिखे गये हैं) मान लिये गये हैं और उनके अनुकूल आचरण हो गया?

क्या परोपकारिणी सभा की तीसरी धारा के अनुसार उपदेशक मण्डली को देश देशान्तरों और द्वीप द्वीपान्तरों में भेज कर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करा दिया गया? क्या बन्धन पुराने टूट गये और ढोङ्ग व पाखण्ड दूर हो गये? संसार का उपकार तो दूर रहा अभी तो अपना ही कल्याण नहीं हुआ। मै तो कहता हूं कि अभी गोढे में से एक पूणी भी नहीं काती गयी और यही कहते बनता है कि दिल्ली अभी दूर है पर हम सन्तुष्ट हो कर बैठ गये हैं! मत मतान्तर कम होने के स्थान बढ़ रहे हैं। भ्रष्टाचार मे वृद्धि हो रही है और हम अपने कर्तव्य की इति श्री समझ बैठे हैं।

किसी विचार धारा के प्रचार के दो साधन होते हैं। एक साहित्य और दूसरा व्याख्यान अर्थात लेख बद्ध और मौखिक। इन दोनों साधनों द्वारा ही आर्यसमाज उन्नति के शिखर पर चढ़ा और अब दोनों के अभाव में उस की गति रुकी नहीं तो मन्द अवश्य पड़ गयी है। देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुख लाल जी आर्य मुसाफिर के शब्दों में :—

न वे लेखक रहे हम में न वे तक्कार हैं बाकी।
कि इस गुलशन के गुल मुरझा गये अब खार हैं बाकी।

आर्याधिकारी लेखकों और वक्ताओं को खण्डनात्मक लेख लिखने और भाषण देने से रोकते देखे और सुने गये हैं। जब यह कहा जाता है कि महर्षि ने सर्व प्रिय बनने का मोह छोड़ कर खण्डन खड्ग का ही आश्रम लिया था तो उत्तर मिलता है कि 'खण्डन ऋषि के समय उप-योगी होगा पर अब नहीं। हम दयानन्द तो नहीं हैं?'

साहित्य कार्य पीछे पड़ने के दो कारण हैं। एक यह कि आर्य लेखकों को प्रोत्साहन नहीं मिल रहा। प्रकाशक 'नमस्ते जी'! 'चाय पियो'! और 'धन्यवाद महाराज!' आदि शिष्ट वचनों द्वारा लेखक की उदर पूर्ति करना चाहते हैं दूसरे प्रकाशकों को यह शिकायत है कि धार्मिक पुस्तकों की माङ्ग बहुत कम है। हम आर्य समाजी ही स्वाध्याय में प्रमादी हैं तो गैर आर्य समाजियों का गिला क्या? आर्य पत्र भी वेद प्रचार के साधन हैं परन्तु उन में अनेक घाटे पर चल रहे हैं। सभाएं तो घाटा स्थिर कोष से पूरा कर देती हैं परन्तु वैयक्तिक पत्र भार सहन न कर बन्द हो जाते हैं। कुछ एक आर्यसमाज कई वर्षों का शुल्क चुकाने का नाम तक नहीं लेते और न ही बन्द करने के लिए लिखते हैं। व्यवस्थापकों की उदारता की प्रशंसा करनी चाहिए कि वे प्रचार की दृष्टि से पत्र जारी रखते है।

अब रहा मौखिक प्रचार का प्रश्न। इस समय भी थोड़े प्रभावशाली प्रचारक हैं पर न हम उन्हें निर्वाहार्थ पर्याप्त धन देते हैं और न ही उनका मान करते हैं। परसों एक आर्योपदेशक कह रहे थे कि उन्हें आर्यसमाज के भविष्य की चिन्ता हो रही है कि प्रचार का क्या बनेगा क्योंकि इच्छुक होते हुए भी उपदेशक अपनी सन्तान को प्रचारक बनाना नहीं चाहते और दूसरे आर्य विद्वान स्कूलों और कालेजों में अध्यापक और प्राध्यापक बनने को प्रमुखता देते हैं। वहां उन्हें धन की प्रचुर राशि के साथ मान भी पर्याप्त प्राप्त होता है। वे प्रचार-यात्राओं के कष्ट क्यों भोगने लगे? हम सब गृहस्थियों से पं० लेखराम जी जैसे और सन्यासियों से स्वा० सर्वदानन्द जी के सदृश बनने की आशा नहीं रख सकते। 'आर्यसमाज स्थापना दिवस' मनाते हुए हमें महर्षि दयानन्द के अधूरे काम को पूर्ण करने का प्रण करना चाहिए। तभी आर्यसमाज उनका सच्चा उत्तराधिकारी बन सकेगा।

प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार का कार्य

आ० स० रेलवे रोड भटिंडा—का वार्षिक उत्सव २२ से २४ मार्च को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। माननीय श्री पं. रलाराम जी **M. A.** प्रधान सभा २४ मार्च को भटिंडा आर्य समाज रेलवे शैड के उत्सव पर पधार रहे हैं। २४-३-६३ की रात्री को उन का स्वागत और भाषण होगा। १४ से श्री राजपाल जी मदन मोहन जी पधारे हुए हैं। १७ मार्च से श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री कथा कहेंगे। उत्सव पर श्री पं० दौलतराम जी शास्त्री अमृतसर, श्री मा० ताराचन्द जी, ठा० दुर्गासिंह जी, श्री धर्मेन्द्र कुमार जी एम. ए., पं० चन्द्रसैन जी, खुशी राम शर्मा भाग ले रहे हैं।

आ० स० शामचौरासी—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ मार्च से यज्ञ और कथा हो रही है। कथा के लिये खुशीराम शर्मा और राजपाल जी मदन मोहन जी पधार रहे हैं।

आ० स० अखनूर (जम्मू) का उत्सव ३१ मार्च १, २ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २४ मार्च से कथा यज्ञ के लिये श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री मेलाराम जी पधार रहे है। उत्सव पर श्री मा. ताराचन्द जी। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी प० चन्द्र सेन जी पधार रहे हैं।

आ स. पुरानी मंडी जम्मू—का उत्सव ३०, ३१ मार्च १ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्ती राम जी पधार रहे हैं।

आ० स० मिर्चपुर हिसार—का उत्सव १५ से १७ मार्च को सम्पन्न हुआ। श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री जमादार भरतसिंह जी चौ० भूराराम जी, प्रभुदयाल जी मंडली पधारी।

आ० स० जोगेन्द्र नगर—का यज्ञ, उत्सव ६ अप्रैल से १४ तक सम्पन्न हो रहा है। यज्ञ, कथा के लिये श्री पं० ओमप्रकाश जी श्री मा० ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

१८ से २० सुभरी, २२ से २४ सुल्तानपुर, २६ से २८ बुर्ज, २६ से ३१ मुलाना ये उत्सव मार्च मास में श्री पं० अमरसिंह जी की देख रहे में सम्पन्न हो रहे हैं।

आ० स० न्यू रेलवे कालोनी जालन्धर—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है।

आ० स० पजौड़—के उत्सव १८ से २१ तक सम्पन्न हो रहा है। श्री हजारीलाल जी और पं० साजनदेव जी तथा मेला राम जी पधार रहे हैं।

आ० सं० जलालाबाद गर्वी में—२४ अप्रैल से ३० अप्रैल तक खुशीराम शर्मा कथा करेंगे। उत्सव के रूप में।

डी. ए. वी. कालेज जालन्धर का पारितोषिक वितरणोत्सव

डी० ए० वी० कालेज जालन्धर, पंजाब की शिक्षा संस्थाओं में अपना सर्वोच्च स्थान रखता है। इस संस्था की नींव का पूज्य प्रि० मेहरचन्द जी, ला० ज्ञानचन्द जी व मान्य श्री प्रि० सूर्यभानु जी ने अपने सतत प्रयत्नों से ऐसा सुदृढ़ बना दिया है कि पंजाब का मस्तक सदा ही गौरव से ऊंचा रहेगा। यह कालेज जहां शिक्षा की दृष्टि से सब से आगे है, वहां खेलों व अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी अपना एक विशेष स्थान रखता है।

कालेज की इस वर्ष की रिपोर्ट को देखने से पता चला कि शिक्षा व अध्ययन आदि के साथ-साथ सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा भी छात्रों को शिक्षित करने के लिए २० संस्थाएं कालेज में विद्यार्थियों द्वारा कार्य कर रही हैं। आर्य युवक समाज के सदस्यों की संख्या तो कालेज में देव दयानन्द की भावनाओं का सच्चा प्रतीक ही प्रतीत होती है। इन सभी संस्थाओं के उत्सव बड़ी शान और उत्साह से होते रहते हैं।

कालेज का वार्षिक उत्सव भी एक दर्शनीय वस्तु होता है। गत बार भारत के पूज्य राष्ट्रपति देशरत्न श्री स्वर्गीय बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी अध्यक्ष के रूप में पधारे थे। इस वर्ष पंजाब के मुख्य मन्त्री श्री प्रतापसिंह जी कैरों विद्यार्थियों को पारितोषिक देने और उत्सव की अध्यक्षता करने के लिए १० मार्च १९६३ ई० को प्रात १०।। बजे पधारे। इस वर्ष के उत्सव की सफलता का श्रेय कालेज के युवक प्रिन्सिपल श्री भीमसेन जी बहल को है। उत्सव से एक दिन पूर्व वर्षा की झड़ी लगी देखकर सभी का मन बैठ रहा था। प्रत्येक व्यक्ति के मुह पर यही बात थी कि उत्सव कैसे होगा। किन्तु प्रि० बहल जी की दृढ़ता अटूट निश्चय और परिश्रम वृत्ति ने सभी को दङ्ग कर दिया। ६ तारीख की रात्रि को सारी रात लगे रह कर उत्सव की सभी तैयारी पूर्ण कर दी। प्रात: आकर लोगों ने देखा कि सभी कार्य पूर्ववत है। सभी दङ्ग रह गए। उत्सव के पण्डाल की शोभा अनोखी थी। सभी प्राध्यापक वर्ग गणवेश धारण किए हुए बड़े ही दर्शनीय लग रहे थे। मंच को अच्छी प्रकार सजाया गया था।

श्री जस्टिस जीवनलाल जी कपूर उपप्रधान डी० ए० वी० कालेज कमेटी ने मुख्य अतिथि का स्वागत करते हुए उन्हें पंजाब का लौह पुरुष कहा। श्री कपूर ने कहा कि हमें ऐसे संकट कालीन स्थिति में ऐसा ही मुखर मन्त्री चाहिए था। श्री प्रतापसिंह जी कैरों ने पंजाब का मस्तक ऊंचा किया है। इतिहास में वह अपना एक स्थान रखते है।

वार्षिक रिपोर्ट पढ़ते हुए श्री प्रि० भीमसेन जी बहल ने मान्य अतिथि श्री प्रतापसिंह जी कैरों की वर्तमान संकट कालीन स्थिति में की गई देश सेवा की भूरि-भूरि प्रशंसा की। प्रिन्सिपल महोदय ने बताया कि कालेज ने अपनी पूर्व मर्यादाओं की रक्षा करते हुए इस वर्ष भी यूनिवर्सिटी परीक्षाओं में ६ प्रथम स्थान प्राप्त किए। खेलों में तो इस वर्ष कमाल ही हो गया। इस कालेज ने इस वर्ष भी सर शादीलाल ट्रोफी तीसरी बार में लगातार प्राप्त कर ली है। और खेलों मे तो लगभग सभी चैम्पियनशिप जीत ली है। (शेष पृष्ठ ४ पर)

प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब

—का प्रगतिशील कार्य

कई महीने से पंजाब, दिल्ली व हिमाचल प्रदेश के आर्य बन्धुओं की सेवा में उपयुक्त संगठन को बलवान करने के हेतु अपील करता आ रहा हूं। मुझे प्रसन्नता है कि पंजाब के कोने २ से मुझे उत्साह प्राप्त हुआ है। इस थोड़े से समय में ही काफी स्कूल और कालेजों के युवक समाजों का सम्बन्ध केन्द्र से हो गया है। गुरुदासपुर जिले ने तो कमाल ही कर दिया है। उस क्षेत्र का कोई भी स्कूल ऐसा नहीं रहा कि जिसका सम्बन्ध संगठन से न हो चुका हो। इस सभी कार्य का श्रेय लेखराम नगर कादियां के युवकों को ही है। उन्होंने मेरी पग-पग पर सहायता की है। इस युवक समाज का मैं सर्वदा आभारी रहूंगा। इन कर्मठ युवकों के उत्साह और समाज निष्ठा को प्रभु इसी प्रकार बनाए रक्खे।

होश्यारपुर और हिमाचल प्रदेश का भ्रमण अप्रैल और मई के महीनों में करूंगा। मुझे पूर्णाशा है कि इस जिले का कार्य भी खूब अच्छी प्रकार चल निकलेगा। अभी तक निम्न युवक समाजों का सम्बन्ध केन्द्र से हो चुका है। अगले सप्ताह से इन सभी का संक्षिप्त परिचय क्रमशः आपकी सेवा में प्रकाशित होता रहेगा।

१—आर्य युवक समाज लेखराम नगर कादियां जिला गुरुदासपुर
२— „ „ „ डी० ए० वी० हाई स्कूल बटाला
३— „ „ „ „ „ „ „ गुरुदासपुर
४— „ „ „ „ „ „ „ अमृतसर
५— „ „ „ „ „ „ कालेज अमृतसर
६— „ „ „ साईंदास हायर सेकन्डरी स्कूल जालन्धर
७— „ „ „ डी० ए० वी० हाई स्कूल बस्ती शेख जालन्धर
८— „ „ „ „ „ „ „ नकोदर
९— „ „ „ „ „ „ कालेज जालन्धर
१०— „ „ „ „ „ हाई स्कूल अम्बाला छावनी
११— „ „ „ „ „ „ कालेज अम्बाला शहर
१२— „ „ „ „ „ हायर सेकन्डरी स्कूल चण्डीगढ़
१३— „ „ „ सेक्टर २२ चण्डीगढ़
१४— „ „ „ माडल टाऊन यमुनानगर
१५— „ „ „ टिटौली रोहतक
१६— „ „ „ आर्य अनाथालय फिरोजपुर
१७— „ „ „ डी० ए० वी० कालेज अबोहर
१८— „ „ „ „ „ „ „ होशियारपुर
१९— „ „ „ जलालाबाद गर्बी
२०— „ „ „ ब्रह्म महाविद्यालय हिसार

इन युवक समाजों के अतिरिक्त निम्न युवक समाजों से पत्र-व्यवहार चल रहा है और आशा है शीघ्र ही इनका सम्बन्ध भी हो जावेगा।

१—आर्य युवक समाज डी० ए० वी० कालेज चण्डीगढ़
२— „ „ „ „ „ „ हिसार
३— „ „ „ शकरगढ़ गुरुदासपुर
४— „ „ „ डी० ए० वी० हाई स्कूल धारीवाल
५— „ „ „ दीनानगर
६— „ „ „ डी० ए० वी० हा० से० स्कूल सिरसा
७— „ „ „ „ „ „ „ „ „ जगाधरी
८— „ „ „ „ „ „ „ „ „ ऊना

मैं प्रत्येक स्कूल, कालेज व आर्यसमाजों के अधिकारियों से विनम्र प्रार्थना करता हूं कि बच्चे राष्ट्र की सम्पत्ति हैं। भारत राष्ट्र एक धर्म प्रधान राष्ट्र है। अतः इन बच्चों को भारतीय आत्मा के दर्शन कराने के पुनीत कार्य में सहयोग प्रदान करने के हेतु युवक समाजों के सदस्य बनाइए। सभी युवक समाजों के सम्बन्ध केन्द्र से कराने का कष्ट कर अनुगृहीत कीजिए।

इसी में हमारा, भविष्य उज्जवल है।

आपका कृपाकांक्षी
वेदीराम शर्मा एम० ए०
अध्यक्ष
प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब

दयानन्द सालवेशन मिशन हुशियारपुर, १०००) का दान

श्री धर्म भारायणा श्री कपूर देवकी निवासी ने अपने स्व० पिता श्री कांशीराम जी कपूर (हाफिजाबाद) जिला गुजरांवाला निवासी की स्मृति में दयानंद निशुल्क औषधालय खोलने के लिए मिशन को दान दिया है। मिशन इस राशी से पानतोल जिला मुजफ्फरगढ़ (कलोला) में यह औषधालय खोल रहा है। इससे पूर्व वहां के एक दानी सज्जन ने ४०००) औषधालय का भवन बनाने वाले दिया है। भवन बनने के पश्चात् औषधालय शीघ्र खोल दिया जावेगा।

२—स्व० लाला दौलतराम जी के ट्रस्ट बिजवाड़ा निवासी जिला हुशियारपुर ने १०००) मिशन को जिला हुशियारपुर के आर्य स्कूलों के निर्धन छात्रों को छात्रवृत्ति देने के लिए १९६३—६४ के लिए दान दिया।

—शान्ती स्वरूप, मन्त्री मिशन।

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवाल कलां (जि० रोहतक)

का विशाल वार्षिक महोत्सव विगत दिनों सम्पन्न हुआ। जिसमें बीस हजार से अधिक जनता उपस्थित हुई।

उत्सव के प्रारंभ में भारत के महान् राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी तथा आर्यजगत के मूर्धन्य नेता महाशय कृष्ण जी के सम्बन्ध में शोक प्रस्ताव पास किया गया। दोनों ही महापुरुषों को अनेक विद्वान् पुरुषों ने श्रद्धांजलियां अर्पित कीं। इसके बाद उत्सव का कार्यक्रम होता रहा। अपील पर १३०००) एकत्रित हुआ।

अधिष्ठाता
गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No.P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक १३) रविवार १८ चैत्र २०२०— ३१ मार्च १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

सहे पिशाचान् महसा

सुनो ! मैं इन सारे पिशाचो को, राष्ट्र के वैरियो, देश के शत्रुओ तथा लुके छिप कर घात करने वाले नर राक्षसो को अपने सहसा-बलसे, शक्ति तेज से सहे-हरा दूंगा । चने चबवा दूंगा ।

एषां द्रविणं ददे

ये शत्रु वैरा. मेरे राष्ट्र का भूमि, गौ पशु, स्वर्ण आ द का धन क्या लेगे उल्टा मैं ही इन वै रयो का सारा धन सम्पत्ति छीन लूगा । वे तो अपना ही सब कुछ गवा जायेगे उनको तो लेनेके देनेपड जायेगे ।

सर्वान् दूरस्यतो हन्मि

मैं तो उन सब को, जो शत्रु बन कर दुरस्यत —दुष्टता शत्रुता करने वाले है, घातक हैं । मार दूंगा । जान से समाप्त कर दूगा । उन सब की जान ले कर ही छोड़ूंगा । [illegible] के [illegible] जायेगा ।

[illegible] वे द

वेदामृत

शंनो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शंन उरूची भवतु स्वधाभिः शं रोदसी बृहती शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ऋक् मं० ७ सूक्त ३५ मं० ३

अर्थ :—(शंन·) हमें सुख शान्ति देवे (धाता) यह धारण करने वाला शासक और (शम उ) शान्तिदेवे (धर्ता) नियम अनुशासन का धारक (न. अस्तु) हमारे लिए होवे (शंन.) कल्याण कारी (उरूची) यह वसुन्धरा पृथ्वी (भवतु) होवे (स्वधाभि.) अपने द्वारा धारण किये जाने वाले अन्न जल आदि पदार्थों से तथा (शम्) शान्ति देवें (रोदसी) ये द्युलोक व पृथिवी लोक (बृहती) बड़े विशाल (शंन.) हमारा कल्याण करें (अद्रिः) यह सारा पर्वत मंडल तथा जल बरसाने वाला मेघसमूह तथा (देवानां) दिव्यगुणों वाले देवों विद्वानों का (सुहवानि) सुन्दर आदेश उपदेश जीवन सन्देश (शंन : सन्तु) हमारे लिए शान्तिदायक, सुखकारक और कल्याण प्रद होवे—

भाव:—जिस ऋत और सत्य ने सारे विश्व को धारण कर रखा है, जिन नियन्ता के अटल नियमों, विधाना के विधानों से यह चराचर जगत कार्य कर रहा है । वे सारे नियम तथा उन का धारण करने वाला जगदीश्वर हमारा सदा कल्याण करे । नाना प्रकार के रत्नों से भरी, अन्नों की भंडार, विविध जलों से युक्त यह विशाल भूमि, इस के सारे पदार्थ हमें सुखदायी होवें । यह द्युलोक और इस के समस्त ग्रहमण्डल हमें शान्ति देने वाले हों । ये सारे पर्वत अपने सारे भौतिक विभूति भरे भण्डारों से हमारा कल्याण करें । दिव्यजनों के दिव्य सन्देश हमारा सदा ही मार्ग प्रदर्शन करने वाले हों । हमें ऐसा विवेक मिले जिस से हम सारे संसार के भौतिक तत्वों से तथा विद्वज्जनों से पूरा २ लाभ उठाते रहें ।

सं०

मुख्यमन्त्री का आदेश

चीन की कूट चालों के सामना के लिए पंजाबी हर समय तैयार रहें

मुख्यमन्त्री श्रीप्रतापसिंह करो का आह्वन

मुख्यमंत्री श्री प्रतापसिंह कैरों ने लोगों से रक्षा-प्रयास मे ढ ल न करने और चीन को कुटिलतापूर्ण मुकाबिला के लिए सदा तैयार रहने का आह्वान किया ।

श्री कैरों ने हाल ही मे सम्पन्न हुए चीन-पाक सीमा समझोते का उल्लेख करते हुए कहा कि भारत के प्रति पाकिस्तान का मन भी कम शत्रुता पूर्ण नहीं उसने भारत के लिए बाधएं पैदा करने के मुख्य उद्देश्य से इस संकट काल में चीन से सीधा समझौता किया है । उन्होंने हर कीमत पर राज्य में शान्ति कायम रखने के सरकार के दृढ़ निश्चय को दोहराया ।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

कठोपनिषद् का सारांश

(श्री ज्ञान सिंह जी आर्य नई दिल्ली)

आत्मा के संबंध में यम ने नचिकेता को जो कुछ कहा उसका वर्णन गत लेखों में किया गया है। परमात्मा के विषय में कुछ बातें इस लेख में पाठकों की सेवा में प्रस्तुत की जा रही हैं।

परमात्मा ने आंख, कान नाक, जिह्वा आदि ज्ञानेन्द्रियों को रूप, शब्द, गन्ध, रस आदि विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये बाह्य मुख वाला बनाया है। ये इन्द्रियां बाहर की ओर खुलती हैं। इसलिये मनुष्य स्वभाव से ही बाहमुखी प्रवृत्तियों वाला है, वह बाहर के पदार्थों को देखता है और उनकी ओर ही झुकता है। वह अन्तर्मुखी नहीं बनता और न अन्तरात्मा में देखता है। संसार में दो प्रकार की प्रवृत्तियों वाले मनुष्य हैं। एक वह जो बाहर के विषयों में ही लिप्त रहते हैं। वह इस संसार के भोगों को जितना हो सके भोगना चाहते हैं। उनका शरीर तो प्राकृतिक जगत का भार होता ही है वह अपने आत्मा को भी उसी मे लीन कर देते है। वह संसार के विषय-वासनाओं में फंसे रहते हैं। उन्हें अमरत्व की प्राप्ति की कोई परवाह नहीं। वह साधन वा साध्य में भेद नहीं करते। साधनों के पीछे ही दौड़ते हुए अपना जीवन व्यतीत करते है। इन्द्रियां उनकी सेवक नहीं बल्कि स्वामी बन जाती हैं। सांसारिक सुख ही उनके जीवन का लक्ष्य होता है। ऐसे लोगों को उपनिषद् मे बाल-बुद्धि कहा गया है। दूसरी श्रेणी में वे लोग हैं जिनकी गिनती थोड़ी है। वे इस प्रकार के पशु जीवन से संतुष्ट नहीं होते। वे जीवन के लिये आदर्श की खोज करते हैं। ये लोग बाहर नहीं अन्दर देखते हैं आत्मतत्व के दर्शन उनके जीवन का उद्देश्य होता है। इन्द्रियां उनकी सेवक होती हैं। वे उनको साधन के रूप में अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयोग में लाते हैं। जिस तरह कछुआ अंगों को अपनी खाल के अन्दर संकुचित कर लेता है उसी तरह वह अपनी इन्द्रियों को बाहर के विषयों की ओर से लौटा कर आत्मतत्व की अनुभूति करने के लिये अन्तर्मुख हो जाते हैं। इन लोगों को उपनिषद में धीर कहा गया है। पहली श्रेणी के लोग जन्म मरण के चक्कर में फंसते रहते हैं और दूसरी श्रेणी के लोग अमृत पान करते हैं। वे मुक्ति प्राप्त करते हैं। जो लोग इस सर्व-व्यापक ब्रह्म को अपने आत्मा में अनुभव न कर के जगत के बाहरी पदार्थों में लिप्त रहते हैं, वे क्षण भंगुर संसारिक सुख को प्राप्त करते हैं। परन्तु इस परम सुख से जो ब्रह्मज्ञान का फल मिलता है उससे वे वंचित रहते हैं।

जब पहाड़ पर वर्षा होती है तो उसकी चोटी पर गिरा हुआ पानी इधर-उधर भटकता हुआ, नीचे बह जाता है और शिखर शुष्क एवं जलहीन ही रहता है। इस तरह नास्तिक लोग ईश्वर से पृथक् किसी अन्य शक्ति को संसार का शासक मानकर सदा इस परम आनन्द से वंचित रह शुष्क हृदय ही रहते हैं और विवेक भ्रष्ट होकर अज्ञानता में फंस कर नीचे की ओर जाते हैं, उनकी आत्मा कभी भी उन्नति नहीं कर सकती। इसका एक और अर्थ भी विद्वानों ने किया है और वह यह है कि मनुष्य के अन्दर मानसिक एवं आत्मिक शक्तियां हैं परन्तु मनुष्य अज्ञानता से मन व इन्द्रियों के अधीन होकर इन बलवान एवं उपयोगी शक्तियों को इधर-उधर पहाड़ से बहते हुए पानी के समान नष्ट कर देता है। जिस तरह पहाड़ से गिरते हुए पानी को यदि एक बांध के द्वारा एक निश्चित नाले से गुजारा जाए तो हम उस से बहुत लाभ उठा सकते हैं, इसी तरह यदि हम अपनी मानसिक शक्तियों का नियन्त्रण कर ले, उन्हें संयम में रखकर जीवन को सरल एवं पवित्र और विचारों को शुद्ध बना दें तो ये शक्तियां आत्म-तत्व के अनुभव करने मे सहायक हो सकती है और आत्मा में प्रबल शक्ति का विकास होता है।

ब्रह्म के दर्शन, आत्मलोक, पितृ-लोक, गंधर्वलोक व ब्रह्मलोक में होते हैं, जैसे दर्पण में वैसे आत्मा में, जैसे स्वप्न में वैसे पितृलोक, जैसे जल में वैसे गंधर्वलोक में ब्रह्म दिखाई देता है। वह ब्रह्मलोक में छाया और धूप की तरह स्पष्ट दिखाई देता है। आत्मलोक पितृ-लोक, गंधर्वलोक व ब्रह्मलोक के कई अर्थ किये गये हैं, जिन में से कुछ निम्नलिखित हैं—

आत्मलोक अर्थात अपने अंतः-करण में ब्रह्म के दर्शन ऐसे होते हैं जैसे शीशे मे कोई अपना प्रतिबिम्ब देखता हैं। पितृलोक अपने बड़े, बूढ़ों, बुजुर्गों का लोक है। पितृलोक मे अर्थात बड़े, बूढ़ों के सहारे से उसके दर्शन ऐसे होते है जैसे कोई स्वप्न मे किसी वस्तु को देखता है। गंधर्वलोक ज्ञानियों का लोक है। गंधर्वलोक में अर्थात ज्ञानी पुरुषों के सहारे इसके दर्शन ऐसे होते हैं जैसे पानी की लहरों में कोई चीज भिन्न-भिन्न प्रकार से दीखती है। ब्रह्मलोक, ध्यानियों का लोक है। ब्रह्मलोक में ध्यानी पुरुषों की सहा-यता से ब्रह्म के दर्शन ऐसे होते हैं जैसे धूप और छाया को कोई पृथक् पृथक देख सकता है, अर्थात मनुष्य जगत व ब्रह्म को छाया और धूप की तरह बिल्कुल साफ२ दीखने लगता है।

कई विद्वानों ने लिखा है कि पितृलोक का अर्थ है कर्मकाण्डी लोक। इसलिये शुद्ध भाव से संध्या, अग्निहोत्र, यज्ञ आदि में प्रवृत्त हो कर्मकाण्डी लोग अपनी आत्मा में ब्रह्म के अनुभव तो करते हैं परन्तु वह अनुभव अस्पष्ट होता है। जैसे स्वप्न अवस्था में मनुष्य पदार्थों को साफ-साफ एवं श्रृंखला युक्त नहीं देखता। गंधर्वलोक का अर्थ है—गायन, भजन व कीर्तन द्वारा भक्ति करने वाले का लोक। इन लोगों को भी आत्मा में ब्रह्म के दर्श होते हैं। अर्थात् अनुभूति होती हैं परंतु ये अनुभव भी अस्पष्ट होता है। जैसे जल में शरीर का प्रतिबिम्ब दिखाई तो देता है परन्तु साफ नहीं। ज्ञान की उच्च अवस्था ही ब्रह्मलोक है। इस अवस्था में पहुँचते हुए लोग ही ब्रह्म के स्पष्ट दर्शन करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि संध्या, अग्निहोत्र, यज्ञ आदि कर्म करने वाले या गायन, भजन या कीर्तन करने वालों को ब्रह्म की अनुभूति होती है परन्तु नहीं। स्पष्ट दर्शन ऐसे विवेकी लोगों को ही होते हैं जिन्होंने ज्ञान की उच्च अवस्था प्राप्त कर ली है ऐसे लोग ही जगत् व ब्रह्म में ठीक-ठीक भेद जान लेते है। सारांश-मनुष्य ब्रह्म की अनुभूति के लिये अपनी योग्यता एवं प्रवृत्ति के अनुसार भिन्न-भिन्न साधन को प्रयोग में लाते हैं और उनका परि-णाम भी भिन्न-भिन्न होता है। जब मनुष्य को विशुद्ध ज्ञान प्राप्त हो जाता है या ध्यान या समाधि की अवस्था प्राप्त हो जाती है तो ब्रह्म के दर्शन स्पष्ट रूप से होते हैं। बाकी साधनों के उपयोग से थोड़ी सी झलक ही दिखाई देती है।

इसका अर्थ यह भी किया गया है कि एक ही पदार्थ को लोग अपनी अपनी रूचि व आवश्यकता के अनुसार भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से देखते हैं और अपनी योग्यता के अनुसार ही देख पाते हैं। एक किसान सब्जी तरकारी की बाबत अपनी आवश्यकता के पर्याप्त ज्ञान रखता है।

सम्पादकीय--

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार १८ चैत्र २०२०, ३१ मार्च १९६३ [अंक १३

यह भयंकर आक्रमण

भारत की भूमि पर आज विश्वासघाती, विस्तारवादी तथा अभिमानी चीन ने हमला किया। हमारे राष्ट्र की वीर सेना ने चीनी लुटेरों के सम्मुख डट कर शस्त्र का उत्तर शस्त्र से देकर उनकी कुत्सित कामनाओं को पूर्ण नहीं होने दिया सारा देश राष्ट्र की सरकार के साथ खड़ा होकर अपनी देश रक्षा में तन, मन, धन की आहुति दे रहा है। यह हमला देश की भूमि पर हुआ और इतिहास बताता है कि अतीत में भी भारत पर अनेक आक्रमण होते रहे, जिन का प्रतिकार युग के वीर पुरुषों ने समय २ पर किया है। किन्तु भूमि के आक्रमण के अतिरिक्त एक दूसरा भी भयंकर हमला भारत की भावनाओं पर होता रहा तथा वर्तमान काल में भी होता है। यह हमला विचारो का, सिद्धान्तो एवं भिन्न २ प्रवृत्तियों का है। इस में तलवारों की बजाय विचारों का प्रयोग होता है। भावनाओं से खेला जाता है। सभ्यता व संस्कृति पर भारी चोट की जाती है। राष्ट्रिय जीवन की जड़ों पर ही कुठाराघात किया जाता है।

भारतीय जीवन में पुरातन काल से वैदिक संस्कृति को बड़ा महत्व दिया गया है। प्राचीन युग पुरुष श्री रामचन्द्र जी, महात्मा कृष्ण जी, दर्शनों के निर्माता तथा अन्य ऐतिहासिक पुरुष इसी सस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये हर प्रकार का प्रबन्ध करते थे। रावण का आक्रमण केवल भूमि तथा मातृशक्ति का ही आक्रमण न था वैदिक संस्कृति पर भी हमला था। आसुरी, भौतिक शक्तियां धार्मिक, देवी शक्तियों को मिटाना चाहती थीं। कौरव दल भी इसी मार्ग पर चल रहा था। भारत की जनता ने सब आक्रांताओं से इसी लिए टक्कर ली क्योंकि वे भूमि और भावना पर चोट करते थे। भूमि शरीर तथा संस्कृति आत्मा की प्रतीक मानी जाती है। जो दोनों पर हमला करे उसका प्रतिकार करना ही पड़ता है। भारत ने सदा प्रतिकार किया।

चीनी सेना का प्रतिकार सारा देश मिलकर कर रहा है यह जीवन की निशानी है। किन्तु आज भूमि के अतिरिक्त भारतीय भावना, संस्कृति, वैदिक सभ्यता पर भी विचारों के भीषण हमले हो रहे हैं। ऐसे २ प्रवचन दिए जा रहे हैं, लेख लिखे जाते, योजनाएं बनाई जातीं तथा ग्रन्थ लिखे जाते हैं, जिन से भारतीय संस्कृति पर भारी चोट पड़ती है। इन विचारों को कौन रोकेगा? पुराने पौराणिक, तांत्रिक व वाममार्गी युग में कितने हमले हुए। सायण, महीधर तथा अन्य भाष्यकारों के भाष्य, वेद प्रतिकूल ग्रन्थों के विचार, पश्चिमी देशों के प्रयास सब इसी प्रकार के आक्रमण थे। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज को ऐसे आक्रमणों का प्रतिकार करने का आदेश दिया। आर्यसमाज ने वैदिक धर्म के बारे में किसी के साथ भी समझौता नहीं किया। आज के समय में कैसे २ ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं। विद्याभवन की वैदिक एज, डिस्कवरी आफ इण्डिया, दिनकर की संस्कृति के चार अध्याय श्री विनोबा जी के गीता प्रवचन में गोमांस खाने का प्रसंग, डा० हरिदत्त जी एम०ए० कानपुर की रूप रेखा की अनर्गल बातें, देहली की सरिता के आये दिन के लेख, आज की संस्थाओं की पाठ्य पुस्तकों में लिखी नितांत असत्य बातें तथा पश्चिमी विचारों का यह तूफान भारतीय भावनाओं पर कितना बड़ा हमला है। बड़े २ लोगों के लिखे ग्रन्थ, दिए गए प्रवचन एवं विचार दूर २ तक जाते, लोगों के मन पर अपना प्रभाव डालते हैं। वेद और इसके सिद्धांतों के बारे में आज कितना कुछ असंगत लिखा जा रहा है। हम पूछते हैं कि इसका प्रतिकार कौन करेगा? कौन उत्तर देगा कौन इससे टक्कर लेगा? गुरु विरजानन्द जी का स्वप्न तो ऋषि दयानन्द ने पूर्ण किया था पर आज महर्षि का मिशन कौन फैलायेगा? यह गम्भीर प्रश्न है जिसपर पूर्ण ध्यान दिए बिना काम न चलेगा। आर्यसमाज के सिवा और कौन विशाल आंदोलन है जो इस हमला को रोकेगा?

आर्यसमाज! यह हमला भी बड़ा है, भीषण है, इसे भी रोकना आवश्यक है। विचारों का प्रतिकार विचारों से ही किया जा सकेगा। भावनाओं पर चोट सहन न हो सकेगी। समाज की स्थापना का यही उद्देश्य था। आर्यो! इस ओर से अपनी आंखों को बन्द न करना। भूमि और भावना, सत्ता और संस्कृति दोनों की रक्षा नितांत आवश्यक है। आर्यसमाज सदा सचेत व सतर्क रहे—त्रिलोक चन्द्र

महात्मा हंसराजांक

अभी शिवरात्री पर आर्यजगत का शिवरात्री अंक निकला। मान्य नेताओं, विद्वानों का मीठा प्रसाद पाठकों को मिला। सब ने पसंद किया। हमें बड़ा ही मनस्तोष है। अब उस तपस्वी देवता की स्मृति में प्रतिवर्ष की भान्ति इस बार भी महात्मा हंसराज विशेषांक प्रकाशित हो रहा है। हमारी समाजें, संस्थाएं तथा परिवार सज्जन इसे भी उसी प्रकार से अपनाएंगे। जिस महान तपस्वी सच्चे सन्त महात्मा हंसराज जी ने अपना सर्वस्व समाज के अर्पण कर दिया। उसका जहां १९ अप्रैल दिवस समारोह से सारे मनायें, वहां उनकी स्मृतिरूप सभा पत्र आर्यजगत का यह विशेषांक भी प्रसाद का काम देगा। अधिक से अधिक इस का प्रचार होना चाहिए।

स्त्री आर्य समाजें

जितना अधिक वेद प्रचार देवियों में होगा, उतना आर्यसमाज फैलेगा। इसीलिए स्त्री आर्यसमाजें बनती हैं। स्थान २ पर ऐसी समाजें बड़ा सुन्दर काम कर रही हैं। उन में कई तो बड़ा ही प्रशसनीय काम करती हैं। उन मे करनाल की स्त्री आर्य समाज सदर भी एक है। मान्या बहिन सत्यावती जो बड़ी ही लगन श्रद्धा से काम में लगी हैं। उनके उत्साह स्वरूप समाज का अपना शानदार मन्दिर है तथा सत्संग समारोह होता है। हम बहिन जी तथा सारी बहिनों को बधाई देते है। ऐसे २ समाजों पर मान है।

शुभ सूचना

(मोहन आश्रम) हरिद्वार

महर्षि जी के भक्तों को यह जान कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि, महर्षि दयानंद सरस्वती जी महाराज की पाखंड-खंडनी पताका के नीचे मोहन आश्रम हरिद्वार में पूर्ववत् इस वर्ष भी ता० ८-९-१० और ११ अप्रैल सन ६३ को ऋषि-उत्सव मनाया जाएगा।

जिसमे आर्य-समाज के बड़े-बड़े पूज्य महात्मा संन्यासी और विद्वान् महानुभावों के सदुपदेश होंगे।

निवेदक—सच्चिदानन्द तीर्थ
अधिष्ठाता

हिन्दी के उपन्यास सम्राट्

मुन्शी प्रेमचंद और आर्यसमाज

(लेखक श्री प्रो० भवानीलाल जी भारतीय एम० ए०)

(गतांक से आगे)

नोट—इस का पूर्व भाग १७-३-६३ के अंक में पढ़ें।

आर्य समाज में उनकी पूरी दिलचस्पी थी। जल्सों में तो खैर जाते ही थे, शायद वह आर्य समाज के बाजाब्ता सदस्य भी थे। परतावगढ़ का हाल तो पक्का नहीं मालम लेकिन इस के कुछ ही साल बाद हमीरपुर न आर्य समाज के बाकयदा मेम्बर थे।' यहां से उन्होंने अपने मित्र उर्दू जमाना के सम्पादक मुन्शी दयानारायण निगम को पत्र लिखते हुये उनसे प्रार्थना की थी कि वे १० रु. हमीरपुर आर्य समाज के मंत्री को मनिआर्डर से भेज दें क्योंकि ये रुपये चंदे के रूप में उन में बाकी निकलते थे। हमीरपुर आर्य समाज के उत्सव में ही उन की भेंट सुप्रसिद्ध आर्य विद्वान प. महेशप्रसाद मौलवी, आलिम फाजिल से हुई जो बाद में काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के अरबी फारसी विभाग के अध्यक्ष रहे। मौलवी जी से प्रेम चन्द जी की घनिष्टता आजीवन बनी रही। यह सन १९१२ की बात है जब प्रेम चन्द जी हमीरपुर जिले में शिक्षा विभाग के सब डिप्टी इन्सपैक्टर थे।

प्रेमचन्द जी की रचनाओं में भी उन के आर्य समाजी विचारों की झलक यत्र तत्र सर्वत्र दिखाई पड़ती है। उन के 'वरदान' नामक उपन्यास में जिस संन्यासी का चित्रण हुआ है, वह स्वामी श्रद्धानन्द की ही प्रतिमूर्ति है, यह अमृतराय की सम्मति है। 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में विधवा विवाह की जिस समस्या का चित्रण हुआ है, वह भी आर्य समाज से प्रभावित होकर ही किया गया है। मुन्शी प्रेमचन्द केवल समाज सुधार के विषय में जबानी जमा खर्च के ही हामी नहीं थे, उन्होंने स्वयं भी एक बाल विधवा शिवरानी देवी से विवाह किया, जो १९०६ की शिवरात्रि को सम्पन्न हुआ। उनके श्वसुर मुन्शी देवी प्रसाद स्वयं आर्य समाजी थे और उन्होंने विधवा विवाह के समर्थन में एक पुस्तिका 'बाल विधवा उद्धारक' प्रकाशित कराई थी, जिस में ऋग्वेद, यजुर्वेद, वसिष्ठ स्मृति, नारद-स्मृति, प्रजापतिस्मृति, कात्यायनस्मृति, मनुस्मृति आदि शास्त्रों के प्रमाणों के आधार पर विधवा के पुनर्विवाह का समर्थन किया गया था। प्रेमचंद जी के पुत्र अमृतराय का भी अन्तर्जातीय विवाह हिन्दी की सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कवियित्री स्व० सुभद्राकुमारी चौहान की पुत्री से हुआ था।

आर्य समाज के सुप्रसिद्ध नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी के विषय में मुन्शी जी ने बहुत आदर के भाव व्यक्त किये हैं। अमृतराय प्रेमचन्द जी की जीवनी के पृ. ३६१ पर लिखते हैं 'स्वामी श्रद्धानन्द के लिए मुन्शीजी के हृदय में सच्ची श्रद्धा है। उनके देश-प्रेम के लिये, साहस के लिये, आत्म बलिदान के लिये, उन स्वामी श्रद्धानन्द के लिये जिन्होंने रौलट एक्ट के दिनों में गोरों की संगीनों के आगे अपना सीना खोल दिया था।" शुद्धि समाचार के श्रद्धानन्द बलिदान अङ्क के लिये प्रेमचन्द जी ने एक लेख भेजा और स्वामी जी की अपनी श्रद्धांजलि इन शब्दों में अर्पित की—"यों तो स्वामी जी प्राचीन आर्य आदर्शों के पूर्ण रूप से प्रवर्तक थे, पर मेरे विचार में राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान में उन्होंने जो काम किया है उसकी कोई नजीर नहीं मिलती। ऐसे युग में जब अन्य बाजारी चीजों की तरह विद्या भी बिकती है यह स्वामी जी का ही दिमाग था जिस ने प्राचीन गुरुकुल प्रथा में भारत के उद्धार का तत्व समझा। बौद्धकाल तक गुरुकुल प्रथा जीवित रही। मुस्लिम युग में यह प्रथा नष्ट हो गई और उसके नष्ट होते ही राष्ट्र नौका का लगर उखड़ गया। वर्ण और आश्रम जो आर्य संस्कृति के स्तम्भ थे, *अपना असली रूप* खोकर जात-पांत के रूप में आ गये और गेरुए वस्त्रधारी, अकर्मण्य पेट के बंदों ने संन्यास और बान-प्रस्थ का स्थान छीन लिया।"

अप्रैल १९३६ में लाहौर आर्य-समाज की जुबली के अवसर पर मुन्शी प्रेमचन्द को उस अवसर पर आयोजित आर्य-भाषा सम्मेलन की अध्यक्षता करनी पड़ी। इस अवसर पर उन्होंने अपने भाषण में आर्यसमाज के कार्य की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा करते हुए कहा—"मैं तो आर्यसमाज को जितनी धार्मिक संस्था समझता हूं उतनी तहज़ीबी (सांस्कृतिक) संस्था भी समझता हूं। उसके तहज़ीबी कारनामे उसके धार्मिक कारनामों से ज्यादा प्रसिद्ध और रौशन हैं।.... हरिजनों के उद्धार में सब से पहले आयसमाज ने कदम उठाया। लड़कियों की शिक्षा की जरूरत को सब से पहले उसने समझा। वर्ण-व्यवस्था को जन्मगत न मान कर कर्मगत सिद्ध करने का सेहरा उसके सर है। जातिभेद भाव और खानपान में छूतछात और चौके चूल्हे की बाधाओं को मिटाने का गौरव उसी को प्राप्त है। यह ठीक है कि ब्रह्म समाज ने इस दिशा में पहले कदम रक्खा। पर थोड़े से अंग्रेजी पढ़े लिखों तक ही रह गया। इन विचारों को जनता तक पहुंचाने का बीड़ा आर्यसमाज ने ही उठाया। अंध-विश्वास और धर्म के नाम पर किये जाने वाले हजारों अनाचारों की कब्र उसने खोदी, हालांकि मुर्दे को उसमें दफन न कर सका और अभी तक उसकी जहरीली दुर्गन्ध उड़-उड़ कर समाज को दूषित कर रही है। उसके उपदेशकों ने वेदों और वेदांगों के गहन विषय को जन साधारण की सम्पत्ति बना दिया, जिनपर विद्वानों और आचार्यों के कई-कई लीवर वाले ताले लगे हुए थे। गुरुकुलाश्रम को नया जन्म देकर आर्यसमाज ने शिक्षा को सम्पर्ण बनाने का महान उद्योग किया है। सम्पूर्ण से मेरा आशय उस शिक्षा का है जो सर्वांगपूर्ण हो, जिसमें मन बुद्धि चरित्र और देह सभी के विकास का अवसर मिले।'

यह थे प्रेमचन्द जी के आर्य-समाज विषयक विचार।

आर्य सभा मोरिशस

पूज्य आनन्द स्वामी जी
महाराज के कर-कमलों
में समर्पित

आप का शुभागमन मोरिशस द्वीप में दिनांक १६—११—६२ ई० को हुआ। आर्यसभा ने अपना कर्त्तव्य पालते हुए आपका स्वागत सहस्त्रों आर्य नर-नारियों के बीच में किया। गत पचास वर्षों में आर्य सामाजिक क्षेत्र के आधार से शिक्षा-प्रसार, समाज सुधार, धार्मिक, आर्थिक, और राजनीतिक क्षेत्र में आपने युगान्तकारी कार्य किया है। आप की असीम समाज सेवा, महान तप और आदर्श त्याग ने आप को एक कुशल कर्मयोगी और आदर्श पथ-प्रदर्शक बना दिया है।

स्वामी जी। आपके प्रति मोरिशस आर्यसमाज और सभी जो कि आप के सम्पर्क में आए हैं, सदैव ऋणी रहेंगे। भारतमाता और महर्षि दयानन्द सरस्वती के संदेश जो आप हमें देकर जा रहे हैं, हम कभी न भूलेंगे। आपके स्वदेश वापसी के शुभावसर पर श्री आर्यसभा मोरिशस आपका सुखद स्वास्थ्य और दीर्घायु के लिए प्रभु से हार्दिक प्रार्थना करती है।

मन्त्री रामकृत जगेसर

चीन हमारे चक्रवर्ती राज्य के अधीन था (महर्षि दयानंद जी)

(ले० श्री ज्ञानी पिंडीदास जी अमृतसर)

जबसे चीन पर नास्तिक कम्यूनिस्टों का आधिपत्य हुआ है, तब से नित्य नये सूर्य वहां के कतिपय 'नक्शे बाज' किसी न किसी नई दिमागी गढ़न्त का प्रदर्शन करते रहते हैं । लेखनी पकड़कर कागज पर नीली पीली लकीरें डाल कभी यह कह देते हैं कि कैलाश तथा बद्री नाथ' हमारे हैं, कभी मान सरोवर से लद्दाख तक अपना प्रभुत्व सिद्ध करते हैं, कभी कामरूप और असम पर दांत पीसते हैं, और कभी संयुक्त प्रान्त के तराई के इलाके तक पर अपना कब्जा साबत करने की चेष्टा करते हैं परन्तु यदि देखा जाय तो इतिहास साक्षी है कि आज से पांच सहस्र वर्ष पूर्व चीन ने हमें 'कर' देकर हमारे चक्रवर्ती राज्य को स्वीकार किया था। और हमारी आज्ञानुसार राजसूय यज्ञ और तत्पश्चात महा-भारत युद्ध में सेना सहित भाग लिया था।

१. महर्षि दयानन्द ने अपनी अमर पुस्तक (सत्यार्थ प्रकाश) में लिखा है—'सुनो ! चीन का भगदत्त, अमेरिका का बभ्रुवाहन, यूरोप देश का विडालाक्ष अर्थात् मार्जार के सदृश आंख वाले, यवन जिसको यूनान कह आये, और ईरान का शल्य आदि सब राजा राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में आज्ञानुसार आये थे।' समुल्लास ११ पृष्ठ ४०२ (शताब्दी सस्करण)

२. जब महाराज युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ का घोड़ा छोड़ा और वह भारत की पूर्वोत्तरीय सीमा का उल्लंघन करके गाण्डीवधारी वीर अर्जुन की संरक्षता में कालकूट "...खण्ड में कालकूट पर्वत के ...का देश,) पुलिन्द(किरात प्रदेश) तथा आनर्त आदि राज्यों पर विजय प्राप्त करते हुए प्राग्ज्यो-तिषपुर में प्रविष्ट हुआ तो—

तत्र राजा महानासीद् भगदत्तो विशाम्पते !
तेनासीत् सुमहद् युद्ध पाण्डवस्य महात्मनः ॥८॥

महाभारतसभा पर्व अध्याय २६

अर्थात्—प्राग्ज्योतिषपुर के प्रधान राजा भगदत्त थे । उनके साथ महात्मा अर्जुन का बड़ा भारी युद्ध हुआ।

स किरातैश्च चीनैं वृत:
प्राग्ज्योतिषोऽभवत्
अन्यैश्च बहुभिर्योधै
सागरानूपवासिभिः

अर्थात-प्राग्ज्योतिषपुर के नरेश किरात प्रदेश, चीन तथा समुद्र के टापुओं में रहने वाले अन्य बहुतेरे योद्धाओं से घिरे हुए थे ॥ ६ ॥

राजा भगदत्त ने अर्जुन के साथ आठ दिनों तक युद्ध किया, तो भी उन्हें थकने न देख कर वे हंसते हुए बोले—'मैं संग्राम में तुम्हारे सामने खड़ा नहीं हो सकूंगा । बताओ, तुम्हारी इच्छा क्या है ? मैं तुम्हारा कौन सा प्रिय कार्य करूं तुम जो कहोगे, मैं वही करूंगा।

श्लोक १०—१३

अर्जुन ने कहा—'महाराज युधिष्ठिर बहुत दक्षिणा दे कर राज सूय यज्ञ करने चले हैं।

तस्यपार्थिवतामीप्से करस्तस्मै प्रदीयताम्
भवान् पितृसखाचैवप्रीयमाणो मयापिच
ततो ना ज्ञापयामित्वां प्रति पूर्व प्रदीयताम् ॥१५॥

अर्थात्—मैं चाहता हूं कि वे युधिष्ठिर चक्रवर्ती सम्राट हों। आप उन्हें 'कर' दीजिये। आप मेरे पिता के मित्र हैं अत. मैं आपको आज्ञा नहीं दे सकता, आप प्रेम भाव से ही उन्हें भेंट दीजिये । इस पर भगदत्त ने कहा—

सर्वमेतत् करिष्यामि किंचान्यत्
कर वाणि ते ॥१६॥

अर्थात्—मैं यह सब कुछ करूंगा। बोलो तुम्हारे लिये और क्या करूं।

३. राजसूय यज्ञ के बाद द्यूत-क्रिया हुई और राज्य लक्ष्मी महाराज युधिष्ठिर से रूठ कर दुर्योधन को प्राप्त हो गई। बारह वर्ष के बनवास और एक वर्ष के अज्ञात वास के पश्चात् जब भगवान् कृष्ण के भरसक प्रयत्न करने पर भी कौरव न्याय पथ का अनुसरण न कर सके और विनाशकारी महाभारत युद्ध की ज्वालाएं धधक उठीं, उस समय उक्त चीनियों का राजा भगदत्त, भारत के चक्रवर्ती नरेश दुर्योधन की आज्ञानुसार युद्ध में ससैन्य सम्मिलित हुआ वहां वीर अर्जुन से उसका घोर युद्ध हुआ। (क्रमशः)

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर का

पारितोषिक-वितरणोत्सव १७ मार्च १९६३ को, कुरुक्षेत्र विश्व-विद्यालय के उपकुलपति माननीय श्री सूर्यभानु जी के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ । सबसे प्रथम विद्यालय की छात्राओं ने वेदमन्त्रों का मधुर गान किया विद्यालय की आचार्या सुश्री विद्यावती आनन्द ने वार्षिक-रिपोर्ट में विद्यालय की गत-वर्ष की विभिन्न क्षेत्रों में की गई प्रगति का ब्यौरा प्रस्तुत करते हुए बी० ए० श्रेणी के सराहनीय परिणामों और अन्तर्विद्यालय वाद-विवाद भाषण, संगीत तथा ललित कला प्रतियोगिताओं में प्राप्त किए गए, चलविजयोपहारों तथा व्यक्तिगत पुरस्कारों का संक्षेप मे उल्लेख किया और कहा कि यह विद्यालय दिन प्रति दिन सर्वांगीण उन्नति के शिखर की ओर बढ़ता चला जा रहा है। इसके साथ ही साथ इन्होंने विद्यालय के छात्रावास, पुस्तकालय तैरने के तलाव और भवन के निर्माण कार्य की प्रगति के सम्बन्ध में भी प्रकाश डाला।

माननीय सभापति श्री सूर्यभानु जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में विद्यालय की आचार्या के अनथक प्रयत्नों, अध्यापक वर्ग के सहयोग और विद्यालय के उज्ज्वल अतीत की चर्चा करते हुए इसके उज्ज्वल तर भविष्य के प्रति आशा व्यक्त की। इन्होंने शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के अन्तर्निहित गुणों को उभार कर उनका विकास करने में हैं। उपाधि-धारी-युवक-युवतियों की संख्या वृद्धि करने में नहीं। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो हमें अच्छाई से अवगत कराती हुई अच्छाई के पथपर चलना सिखाए।

सम्माननीय अध्यक्ष ने इस बात पर बल दिया कि विद्यार्थी वर्ग में अच्छाई की भावना को उत्पन्न करने का उत्तर दायित्व अध्यापक वर्ग के कंधों पर है। आगे उन्होंने चीन के आक्रमण की चर्चा करते हुए कहा कि आज देश को सैन्य शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। पर सैन्य शिक्षा के साथ ही साथ देश वासियों का नैतिक स्तर भी उन्नत होना चाहिये क्योंकि इसी से देश वासी अपने साहस और संकल्प को बनाये रख सकते हैं। शिक्षा का ध्येय व्यावहारिक और प्राविधिक होना चाहिए।

उत्सव के अन्त में श्री यश जी ने अध्यक्ष महोदय का धन्यवाद किया और फिर राष्ट्रगान के साथ उत्सव समाप्त हुआ। तत्पश्चात उपस्थित वर्ग ने जलपान किया।

विद्यावती 'आनन्द' एम० ए०
प्रिंसिपल महिला महाविद्यालय
जालन्धर

विदा—नमस्ते

(ले०—श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' धुरी)

श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम०ए० बहुत शीघ्र शोलापुर कालिज में जा रहे हैं उनकी इस विदाई के समय हमें दुःख और हर्ष दोनों हैं। दुःख इसलिए कि आप अपनी मातृभूमि पंजाब को तथा अपने सुहृदय वर्ग को अपने से दूर कर रहे हैं। हर्ष इस बात का है कि आप दक्षिण भारत में आर्य युवकों का संगठन तथा वैदिक धर्म का प्रचार तीव्र करने के लिए जा रहे हैं। आपको आचार्य भी (श्री भगवानदास जी एम० ए०) दृढ़ आर्य तथा उत्साही नव युवक मिले हैं। इस विदाई के समय आर्यजगत की शुभ कामनाएं आपके साथ हैं। आशा है कि आप अपने लक्ष्य को पूर्ण करते हुए पंजाब के पत्रों को नहीं भूलेंगे।

—व्यवस्थापक

आर्य जगत के कई पाठकों को साप्ताहिक आर्य गजट में मान्यवर 'शरर' जी व आदरणीय प्रि० भगवान दास जी के लेखों के प्रकाशन से पता चल चुका है कि मैं पंजाब से जा रहा हूं। कर्त्तव्य की पुकार सुनकर मैं दक्षिण की ओर जा रहा हूं। अब पंजाब के आर्य बन्धुओं से मिलाप की कड़ी आर्य जगत आदि पत्र ही होंगे जिनके द्वारा मैं आर्यजनों की सेवा करता रहूंगा।

मैं दयानन्द कालेज सोलापुर में इतिहास के प्राध्यापक के रूप में जा रहा हूं कालेज में प्राध्यापक के रूप में तो अपने कर्त्तव्य का पालन करूंगा ही इस के अतिरिक्त कालेज के छात्रों में देश धर्म के प्रति अनुराग पैदा करने और दक्षिण में महर्षि का सन्देश सुनाने के सुपावन कर्त्तव्य का अदम्य उत्साह से पालन करता रहूंगा।

मुझे पंजाब में ही रखने के लिये कुछ आर्य नेताओं, साधुओं व आर्य बन्धुओं ने बड़े प्रयत्न किये हैं और बहुत दबाव डाला है परन्तु अब मेरे दिमाग पर जो भूत सवार हो चुका है उसको उतारना अब मेरे बस की भी बात नहीं। मैं वहां जा रहा हूं जहां कार्यकर्ताओं की सेवकों की और सैनिकों की आवश्यकता है। एक सफल और कर्मठ सेनानी का मुझे पथ-प्रदर्शन प्राप्त होगा। युवक पथ प्रदर्शन के बिना जोश में कभी-कभी मार्ग से इधर-उधर हो जाते हैं। मैं जाते समय आर्यजन को विश्वास दिलाता हूं कि मैं कर्त्तव्य मार्ग पर अविरत और अविराम बढ़ता रहूंगा। चूंकि मुझे एक अनुभवी और सुधीर नेता का पथ-प्रदर्शन वहां प्राप्त होगा अतः कर्त्तव्य पथ से विचलित होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

मैं उमंगों से भरपूर हृदय को लेकर वहां जा रहा हूं। समय से पूर्व कुछ कहना नहीं चाहता। पर इतना कह सकता हूं कि ईश्वर की कृपा से और आप सब के आशीर्वाद से दक्षिण में आर्य समाज का प्रभाव हृदयों पर अंकित करने के लिये अपनी समस्त शक्ति जुटा दूंगा। मैं वहां जाकर अपने विषय इतिहास का गहरा अध्ययन करना चाहता हूं ताकि लोग उंगली उठा कर कह सकें कि पूज्य पं० भगवद्दत्त जी, स्व० आचार्य रामदेव जी, मान्य डा० गोकुल चन्द जी नारंग, भाई परमानन्द जी महाराज व श्रीयुत प्रि० श्रीराम जी शर्मा आदि अद्वितीय इतिहासकारों के आर्य समाज की नई पीढ़ी में भी कोई इतिहास को समझने वाला है। वहां जाकर मराठी भाषा पर पूरा अधिकार पाने का प्रयत्न करूंगा ताकि जिस मिशनरी स्पिरट से मुझे हमारे नेता प्रि० भगवानदास जी ने बुलाया है और दयानन्द कालेज कमेटी जिन आशाओं के साथ मुझे वहां भेज रही है मैं जन साधारण तक ऋषि सन्देश पहुंचा कर उनका सपना साकार कर सकूं।

पंजाब में रहते हुए एक सक्रिय कार्यकर्ता बन कर मैंने समाज का ऋण चुकाने का सदैव प्रयत्न किया। एक भावुक युवक होने के नाते बीसियों भूलें मैंने की होंगी। माता आर्यसमाज का एक अनजान अबोध बालक मुझ को समझ कर सब आर्यजन मुझे मेरी भूलों के लिये क्षमा करें। मैंने कभी भी कुछ भी अपने स्वार्थ को सामने रखकर किसी को रुष्ट नहीं किया। मैं समाज का हूं और समाज का रहूंगा। आर्यो! अपने आशीर्वाद और प्यार की सम्पदा मुझे दीजिए ताकि मैं वहां उस महान लक्ष्य की पूर्ति के लिये कुछ कर सकूं जिस के लिये ऋषि ने प्राण दिये, पं० लेखराम महात्मा हंसराज आदि ने सुख साज लुटाया।

सत्यार्थ प्रकाश की परीक्षाएं

आर्य युवक परिषद दिल्ली ने सत्यार्थ प्रकाश की चार परीक्षाएं नियत कर रखी हैं स० रत्न स० भूषण स० विशारद स० शास्त्री इनकी परीक्षाएं सारे देश में ११—४—६३ को होंगी। अधिक जानकारी और पठविधि आदि मुफ्त प्राप्त करने के लिए श्री सुरेन्द्रकुमार मन्त्री परीक्षा नया बांस २१२ दिल्ली से पत्र व्यहार करें।

गणेशदत्त आर्य सेवक उपप्रधान
आर्य युवक परिषद दिल्ली

आर्य समाज की शिथिलता के कारण

नोट—यह लेख स्थानाभाव के कारण कुछ शेष रह गया था पाठक १०-३-६३ का अंक देखें—

३—प्रत्येक आर्यसमाजी को नियमानुसार ईश्वर स्तुति प्रार्थना और उपासना तथा यज्ञ आदि करने चाहिएं। जिससे उनकी आत्मिक शक्ति बढ़े और वह अधिक से अधिक प्रचार कर सकें।

४—प्रत्येक आर्यसमाजी के मन में पदाधिकारी बनने के स्थान पर तप त्याग और सेवा की भावना होनी चाहिए।

५—प्रत्येक आर्यसमाजी के मन में आर्यसमाज के प्रचार की सच्ची लगन और तड़प होनी चाहिए।

बस यह हैं वह सरल साधन जिनसे आप आर्यसमाज की शिथिलता को दूर कर सकते हैं। आप बड़े से बड़े पदाधिकारी हों अथवा साधारण व्यक्ति, वकील, डाक्टर, अध्यापक, दुकानदार, किसान, मजदूर, शिल्पकार आदि कुछ भी हों, धनी, निर्धन, नगरों में रहने वाले, चाहे गांव में रहने वाले हों, आप आर्यसमाज के सिद्धांतों का प्रचार कर सकते हैं आपकी निराशा दूर हो सकती है और आप को आर्यसमाज की शिथिलता के कारण ढूंढने की आवश्यकता नहीं रहती।

आर्य हाई स्कूल नाभा

के कर्मठ तपस्वी ला० रामनिरंजन जी खोसला हैड मास्टर आर्य हाई स्कूल-नाभा का पटियाला हस्पताल में दर्द गुर्दा के कारण २२-३-६३ को स्वर्गवास हो गया उनका निधन, नाभा शहर, नाभा आर्य स्कूल तथा उनके परिवार के लिए असह्य है आर्य स्कूल के स्टाफ ने शोक प्रस्ताव पारित करते हुए उनकी निर्मल आत्मा को शुभगति तथा परिवार को इस दारुण कष्ट सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए प्रभु से याचना की।

आर्य प्रादेशिक सभा के वेदप्रचार का कार्यक्रम

आ० स० पुरानी मंडी जम्मू—का उत्सव ३०—३१ मार्च १ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी पधार रहे हैं।

आ० स० अखनूर—(जम्मू) का उत्सव ३१ मार्च १—२ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २४ मार्च से कथा और यज्ञ पं० ओंप्रकाश भी सम्पन्न कर रहे हैं। श्री मेलाराम जी के भजन, उत्सव पर श्री ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

आ० स० रेलवे कालोनी जालधर—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोक चन्द जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

आ० स्त्री समाज नाहन (हिमाचल)—का यज्ञ उत्सव श्री अमरसिंह जी की अध्यक्षता में १ से २ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। श्री प० दौलतराम जी, श्री रामकरण श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी, श्री रामकरण जी मंडली पधार रहे हैं।

आ० स० जोगेन्द्र नगर—(हिमाचल प्रदेश) का उत्सव १२ से १४ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ६ अप्रैल से यज्ञ और कथा के लिए श्री प० ओंप्रकाश जी श्री दुर्गासिंह जी पधार रहे हैं। उत्सव पर श्री पं० हरिश्चन्द्र जी जम्मू वाले श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

आ. स. भटिंडा रेलवे समाज—का उत्सव २२ से २४ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हुआ। उत्सव से पूर्व श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी की कथा और श्री राजपाल जी मदन मोहन जी के भजन होते रहे। २६ ता० से श्री दुर्गासिंह जी और श्री चन्द्र सेन जी पधारे। उत्सव पर श्री मान पं. रलराम जी एम. ए. प्रधान सभा २४ मार्च को पधारे। रात्रि को प्रधान जी का भाषण और स्वागत समाज की ओर से किया गया सभा को वेद प्रचारार्थ थैली भेंट की गई। खुशी राम शर्मा श्री मा. तारा चन्द जी श्री प. दौलत राम जी श्री प्रो. धर्मेन्द्र कुमार जी, श्री ज्ञानेद्र जी शास्त्री उत्सव पर पधारे। समाज के अधिकारियों और कार्यकर्ताओं का उत्साह व प्रेम प्रशंसनीय है विशेषत: प० बृजलाल जी शर्मा प्रधान समाज, मंत्री जी कोषाध्यक्ष जी आदि का।

आ. स ग्राम चौरासी—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ मार्च से यजुर्वेद यज्ञ और कथा खुशी राम शर्मा करेंगे और राजपाल जी मदन मोहन जी के भजन होंगे। उत्सव पर श्री त्रिलोक चन्द्र जी, श्री प० चन्द्र सेन जी, श्री मेलाराम जी, श्री ताराचन्द जी, श्री हजारी लाल जी श्री ज्ञानेन्द्र जी आदि महानुभाव पधार रहे हैं।

आ. स. मिर्चपुर हिसार—का उत्सव २५ से २७ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हुआ श्री जमादार भरतसिंह जी। श्री पं० ओं प्रकाश जी, श्री चौ. भूरा राम जी, श्री पं० प्रभुदयाल जी मंडली, श्री पं० चन्द्र सेन जी, श्री इन्द्रसिंह जी पधारे।

आ. स. फूसगढ (करनाल)—का उत्सव १५ से १७ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हुआ। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री ताराचन्द्र जी, श्री रामकरण जी, श्री महावीर जी, नत्थू राम जी पधारे।

आ स सीधपुर (करनाल)—का उत्सव १५ से १७ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हुआ। श्री पं० अमर सिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्ती राम जी पधारे।

आ स सुभरी—१८ से २० आ. स. सुलतानपुर २२ से २४ आ. स. बुर्ज २६ से २८ मार्च को श्री पं० अमरसिंह जी की देख रेख में ये उत्सव धूम धाम से सम्पन्न हुये। श्री जगतराम जी, श्री बस्ती राम जी, श्री रामकरण जी श्री महावीर जी, श्री नत्थूराम जी पधारे।

आ स. मुलाना का—उत्सव २९ से ३१ मार्च को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है।

महात्मा हंसराज मेला बिजवाड़ा—(होशियारपुर) मे सभा की ओर से १९ अप्रैल को धूम धाम से मनाया जा रहा है। १३ अप्रैल से कथा श्री प० त्रिलोक चन्द्र जी, और भजन हजारीलाल जी के होंगे।

आ स धारीवाल मे—१५ से २१ अप्रैल को खुशी राम शर्मा कथा कहेंगे। उत्सव के रूप में।

आ स जलालबाद गर्वी—२४ से ३० अप्रैल को उत्सव के रूप मे कथा होगी।

आ० स० लारेन्स रोड अमृतसर—में १० से १४ अप्रैल तक खुशीराम शर्मा कथा कहेंगे। और श्री ला० जगतराम जी महाजन रिटायर्ड एस० डी० ओ० दयानन्द नगर के यहां यज्ञ सम्पन्न होगा।

निवेदन

सभी आर्यसमाजों के अधिकारी महानुभावों से प्रार्थना है कि १९ अप्रैल को स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस समारोह से सम्पन्न करने का आयोजन करें।

खुशीराम शर्मा अधिष्ठाता वेद प्रचार सभा

सूचना

बहाई मत दर्पण श्री ला० जगतराम जी रिटायर्ड एस० डी० ओ० दयानन्द नगर मकान न. १०० अमृतसरने जनता की जानकारी के लिए अपने मूल्य से छपवाया है। ताकि लोगों को बहाई मत के जाल में फंसने से सावधान किया जाए जो सज्जन बहाई मत दर्पण मंगवाना चाहें उनसे मंगवा लेवें। सभा को भी उन्होंने कुछ प्रतियां दी हैं सभा से भी मंगवा सकते हैं। —व्यवस्थापक

आर्यसमाज मालवीय नगर

नई देहली का उत्सव ३०—३१ मार्च को सम्पन्न हो रहा है २५ से २९ मार्च तक श्री शिवराम सिंह जी शाम को साढ़े सात से साढ़े नौ बजे तक कथा करेंगे। १—४—६३ को आर्य स्त्री समाज का उत्सव होगा। सब देवियां दर्शन देकर उत्सव का लाभ उठाएं।

डी० आर० जुनजा मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज किला मुहल्ला

में ३१—३—६३ रविवार को साप्ताहिक सत्संग में आठ बजे प्रातः यज्ञ संध्या आदि के पश्चात श्री प्रो० हरबंस लाल जी 'ओबराय' दर्शनाचार्य का योग पर मनोहर व्याख्यान होगा। सब नर नारी समय पर पधार कर लाभ उठाएं।

—नरदेव प्रचारमन्त्री (किला समाज)

आर्यसमाज यमुना

में पिछले दिनों शिवरात्री कामहोत्सव नगर की
चित रूप से मनाया गया। स्थानीय आर्य स...... के छात्र-छात्राओं और नगर के अन्य लोगों ने ऋषि जीवन के सम्बन्ध में कविताओं, भजन, व्याख्यानों द्वारा श्रद्धांजली अर्पित की जनता ने उत्साह सहित पधार कर लाभ उठाया।

वैद्य रामसिंह

आर्यसमाज बुढाखेड़ा

का उत्सव धूमधाम से हुआ, जिस में जालन्धर से पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, अम्बाला करनाल की मंडली पं० अमरसिंह जी, जगतराम जी, शमशेर कुमार जी, बख्तीराम जी पधारे। पंडित विद्याभानु जी शास्त्री को भगवान् ने पुत्ररत्न प्रदान किया है। उस प्रिय शिशु का भी नामकरण यज्ञ किया गया। स्वामी भीष्म जी ने आशीर्वाद दिया। पंडित विद्याभानु जी के पिता जी आर्यसमाज के बड़े प्रेमी तथा निष्ठावान व्यक्ति हैं। पंडित जी को बधाई।

आर्यसमाज गुगलों

का उत्सव भी बड़े समारोह से मनाया गया। जिस में पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, पं० अमरसिंह जी, पं० जगत् राम जी, बख्तीराम जी, चौ० रामकरण जी, श्री महावीर जी, नत्थूराम जी स्वा० भीष्म जी पधारे। बड़ा ही शानदार जलसा सम्पन्न हुआ। ग्राम के सारे नर-नारियों में बड़ा उत्साह व समाज प्रेम था।

आर्यसमाज फूंसगढ़

सभा का यह पुराना समाज है। चौ० नेवलसिंह जी चौ० मित्रसेन जी, चौ० बलवीरसिंह जी एडवोकेट के उत्साह प्रेम से धूमधाम से जल्सा हुआ। स्वामी रामेश्वरानन्द जी M.P. पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, मा० ताराचन्द जी, चौ० रामकरण जी की मंडली पधारे। जलसा खूब धूमधाम से सम्पन्न हुआ—

चुनाव

आर्य युवक परिषद देहली का चुनाव निम्नप्रकार से हुआ।

प्रधान—श्री पं. देवव्रत जी धर्मेन्दु, मन्त्री—श्री ओमप्रकाश जी, परीक्षा मन्त्री—श्री सुरेन्द्र कुमार जी।

सुदर्शन 'सरीन'—प्रचार मन्त्री

दयानंद चाननलाल आदर्श बाल शिक्षा मंदिर फाजलका

श्री डा. मेहरचन्द जी महाजन प्रधान डी. ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी ने १७ मार्च को इस संस्था के निरीक्षण किया इस अवसर पर श्री चाननलालजी ने जो इस इलाका का प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं) २००००/- नकद तथा अपना निवास स्थान जो कि ४० कनाल जमीन के क्षेत्रफल में है इस संस्था को दिया। श्री चाननलाल जी अहूजाने श्री डा. मेहरचद जी का स्वागत करते हुए १०००/- रुपए दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा के लिए दान दिया।

श्री K. C. बत्रीमैनेजर स्कूल की अध्यक्षतामें छात्रों ने एक विरायटी शो उपस्थित किया।

N. D. ग्रोवर डी. ए. वी. कालिज अबोहर

स्वा दयानन्द सालवेशन मिशन होशियारपुर

इस मिशन ने दिसम्बर ६२ से मार्च १९६३ तक उड़ीसा, बिहार, पंजाब और जम्मू के इलाकों में १०६७४ अहिन्दुओं को वैदिक धर्म में दीक्षित किया।

शादीलाल—मन्त्री मिशन

स्व० महात्मा हंसराज विशेषांक

आर्यजगत का महात्मा हंसराज विशेषांक उनकी पुण्य स्मृति में १४-४-६३ को बड़ी सजधज के साथ प्रकाशित हो रहा है। मुख पृष्ठ पर महात्मा जी का सुन्दर चित्र भी अंकित होगा। यह अंक १४ और २१ अप्रैल का सम्मिलित अंक होगा उसके बाद २८ अप्रैल के अंक की प्रतीक्षा करें।

आर्य संस्थाओं से निवेदन

स्व० महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस १९-४-६३ को बड़े उत्साह से मनाएं। इस अवसर पर छोटे-छोटे ट्रैक्ट समाजों में प्रचारार्थ मुफ्त बांटे जाएं तथा महात्मा हंसराज जी के जीवन चरित्र की पुस्तकें आधी कीमत पर बांटी जाएं। जिससे सर्वसाधारण जनता उनके जीवन से लाभ उठा सके। सभा ने भी पूज्य आनन्द स्वामी लिखित महात्मा हंसराज जी का सचित्र जीवन प्रचार की दृष्टि से २/- के स्थान पर १/- कीमत कर दी है। और मुफ्त बांटने योग्य ट्रैक्ट "वैदिक धर्म का महत्व" १०/- सैकड़ा कर दिया है। इस भारी रियायत से लाभ उठाने के लिए सब समाजें, स्कूल और कालिज बड़ी संख्या में शीघ्र आर्डर देकर महात्मा जी के प्रति अपनी श्रद्धा का परिचय दें।

संस्थाओं का कर्तव्य पालन

आर्य जगत का ऋषिबोध अंक १८-२-६३ को सभी समाजों, स्कूलों और कालिजों को पहुंच चुका है और उनके बिल भी साथ ही पहुंच चुके हैं। लेकिन अभी तक बहुत सी संस्थाओं ने बिलों की कीमत नहीं भेजी कृपा करके शीघ्र ही M.O. द्वारा मूल्य सभा के कार्यालय में भेजने का कष्ट करें।

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज सलोगढा के दृढ़ आर्यसमाजी तथा अविरल कार्यकर्त्ता श्री भक्तराम जी इरठ निवासी का ६० वर्ष की आयु में ११-३-६३ को देहावसान हो गया है। आप वृहद पारिवारिक थे। इससे आर्यसमाज सलोगढ़ा को अत्यन्त हानि उठानी पड़ी है। आर्यसमाज उनकी आत्मा की शुभगति के लिए तथा उनके परिवार से समवेदना प्रकट करता है।

आर्यसमाज सोलापुर—की यह सभा पंजाब के प्रसिद्ध नेता श्री महाशय कृष्ण जी के दुःखद निधन पर गहरा शोक प्रकट करती है। उनके निधन से आर्यसमाज को जो हानि हुई है, उसकी पूर्ति असम्भव है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को सद्गति तथा उनके संतप्त परिवार को दुःख सहने की क्षमता प्रदान करें।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर।



टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक १४) रविवार २४ चैत्र २०२०— ७ अप्रैल १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार प्रदेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

परेणैतु पथा वृक:

भेड़िया हम से दूर चला जाये। भेड़िये के समान हिंसावृत्ति ना है। अत्याचारी है, अपना जिस का कभी नहीं भरता। ा दुष्ट शत्रु हम से दूर हट वे।

परमेणोत तस्कर:

तस्कर चोर हम से परे भाग ये। अरे चोर! राष्ट्र की धरती, ं, सम्पत्ति, संस्कृति को चुराने ले चोर! दूर भाग जाओ हट ओ। परे हो जाओ। हमारे स मत आओ।

परेण दत्वती रज्जु:

अरे विषैले दान्तों वाले सांप! र भाग जाओ। नहीं तो हम म्हारे सारे दान्त तोड़ देंगे। सारा ष निकाल देंगे। सर्पो! दूर हट ओ। भाग जाओ।

थ र्व वे द

वेदामृत

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानिसन्तु शं नः इषिरो अभिवातु वातः॥ ऋ. मं. ७ सू. ३५ मं. ४

अर्थ :—(शंनः) हमारा कल्याण करें (अग्निः ज्योतिः) यह प्रकाश देने वाली अग्नि, (अनीकः) प्रदीप्त मुख वाली (अस्तु) सुखकारी होवे और (शंनः) हमें सुखी करें (मित्रावरुणो) मित्र और वरुण, हमारे अंदर के प्राण और उदान (अश्विना) बढ़ाने और उपदेश देने वाले (शम) हमारा सुख बढ़ाएं। (शंन.) हमें शान्ति देव (सुकृतां) शुभ कर्म करने वाले धर्मात्मा सज्जनों के (सुकृतानि) शुभ कर्म (सन्तु) होवे तथा (शंनः) हमें सुखी करे यह (इषिरः) गति करने वाला सदा चलने वाला (वातः) वायु (अभिवातु) बहता रहे—

भाव :—मानवजीवन में कौन-सा विश्व का आवश्यक तत्व है जो काम नहीं आता? सारे पदार्थ हमारे लिए केवल आवश्यक ही नहीं नितान्त आवश्यक हैं। इनके बिना चारा गुज़ारा नहीं है। किन्तु यही तत्व लाभकारी भी हैं और विनाशकारी भी हैं। इन में जीवन और मृत्यु दोनों विद्यमान हैं। निर्माण तथा संहार के भी साधन हैं। विवेकी के लिए ये सेवक की भान्ति सारा काम करके सुखशान्ति कल्याण के भण्डार भर देते हैं। पर अविवेकी के सामने मौत बन कर आते हैं— इसलिए कहा जाता है कि यह प्रदीप्त मुख वाली अग्नि, यह प्राण और उदान वायु, यह सदा चलने वाला वायु, शुभ कर्म में लगे देवों के शुभ कर्मों का आदर्श हमें सदा सुखी बनाते रहें। हम जीवन में विवेकशील, ज्ञानी पुरुषों के ज्ञान प्रकाश में चलकर विश्व के इन भौतिक तत्वों का, पदार्थ-विज्ञान द्वारा पूरा २ लाभ उठाते रहें। ये सुखदायी हों, कल्याण देने वाले ही बनें।

—सं०

वित्तमंत्री श्री देसाई के उद्गार

यदि पाकिस्तान ने हमला किया तो पूरी शक्ति से मुकाबला किया जाएगा

केन्द्रीय वित्तमंत्री श्री मोरार जी देसाई ने आज यहां एक जन-सभा में भाषण देते हुए घोषणा की कि यदि पाकिस्तान ने भारत पर हमला किया तो उसका पूरी शक्ति से मुकाबिला किया जाएगा।

चीन का उल्लेख करते हुए वित्तमंत्री ने कहा कि चीन भारत पर हमला तो कर सकता है परन्तु इसे नष्ट नहीं कर सकता।

श्री देसाई को राष्ट्रीय रक्षाकोष के लिए सोना और चांदी तथा लगभग ४० लाख रुपया भेंट किया गया।

——

प्रकाशक—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

जन जातियों में आर्य प्रथाएं

श्री हरिश्चन्द्र जी विद्यार्थी, बी. ए. (आनरज़) बी. टी जम्मू

प्रायः लोग यह कहते हैं कि जन जातियों के लोग भारत के असली निवासी हैं, अनार्य हैं, अहिन्दू हैं, भूतपूजक हैं, और प्राचीन काल में आर्य विदेशियों ने इन को उपजाऊ मैदानी भूमियों से जंगलों और पर्वतीय स्थानों में खदेड़ दिया था, जहां अब तक यह रहते हैं। स्कूली पुस्तकों से लेकर विश्वविद्यालयों तक के ग्रंथों में इन विचारों का प्रचार किया जाता है। हमारे अपने पढ़े लिखे लोगों का ज्ञान भी केवल किताबी है अतः वह लोग भी इस विचार धारा के आगे नत मस्तक से प्रतीत होते हैं।

मगर वर्षों तक इन जन जातियों के सम्पर्क में रहने से और इनकी प्रथाओं, विचारों, भावनाओं तथा प्रवृत्तियों का सीधा अध्ययन करने से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि यह बातें पूर्णतया गलत, भ्रामक और खतरनाक हैं। इन की प्रचलित प्रथाएं प्रायः शुद्ध आर्य प्रथाएं हैं। इन में प्रचलित बातें हमारे संस्कारों में सुरक्षित प्रथाओं के अधिक निकट हैं। एक दो उदाहरण ही इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त होंगे।

अतिथि सत्कार की प्रथा, इन में ठीक ऐसी है, जैसी विवाह संस्कार के समय हम दोहराते हैं, और जिस का लेश मात्र भी अब हमारे घरों में दिखाई नहीं देता।

विवाह के समय सर्व प्रथम अतिथि (वर) को आसन दिया जाता है, फिर पांव-प्रक्षालनार्थ जल, फिर आचमनीय और फिर मधु पर्क। आज कल यह प्रथा केवल संस्कार विधि की शोभा है। हमारे घरों में सिगरट-पान मिठाई का जोर है, जो सब की सब एक, समय में आ जाती हैं। जता बूट पहने, बिना हाथ, पांव, मुख साफ किए यह सब आतिथ्य पूरा होता है।

मगर जन जातियों में प्रथा ठीक उसी प्रकार की है जैसी संस्कार विधि में सुरक्षित है और जिसे हम केवल विवाह के समय होता देखते हैं।

जब कोई अतिथि किसी जन-जाति-परिवार में जाता है तो सर्व प्रथम गृह-स्वामिनी दोनों हाथों में जल का लोटा लेकर उस का स्वागत करती है। इस जल से पांव प्रक्षालन के पश्चात दूसरे लोटे में आचमनीय दिया जाता है। इस से मुंह साफ किया जाता है आवश्यकता-अनुसार एक आध घूंट पी भी लिया जा सकता है। तब अतिथि घर के अन्दर साफ पुती भूमि पर कुशा-आसन पर बैठाया जाता है। खाने के बाद पुनः शुद्ध जल से हाथ-मुख साफ करने की प्रथा प्रचलित है।

यदि कोई अतिथि विशेष रूप से आदरणीय हो, जैसे गवर्नर, राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री या कोई अन्य विशेष तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति तो उसके सत्कारार्थ द्वार पर तोरण बनाए जाते हैं। जल-कलश दोनों ओर रखे जाते हैं; कुमारी कन्याएं सिरों पर जल-कलश (जन्हें मंगल-कलश कहते हैं) रखे, अतिथि के रास्ता के दोनों ओर लाइन में खड़ी रहती हैं रास्ता पर पत्ते और फूल बिछाए जाते हैं। कथाएं स्वागत गीत गाती हैं और फूल-पत्तों की चंवरियों से अतिथि के आगे और दोनों ओर चंवर डुलाती, गीत गाती चलती हैं। अतिथि को तिलक दिया जाता है, आरती उतारी जाती है।

इस प्रकार का अतिथि सत्कार देखने से सम्बन्ध रखता है। ऐसा प्रतीत होने लगता है कि हम प्राचीन रामायण युग में पहुंच गए हैं। वायुमंडल इतना भावना भरा, शुद्ध और एक शब्द में इस प्रकार का आर्य हो जाता है कि मन मोहित हो जाता है।

और हम हैं कि इन आर्य पुत्रों और आर्य पुत्रियों को जो आज भी शुद्ध आर्य प्रथाओं को सजीव रखे हुए हैं—अनार्य और अहिन्दू कह कर अपने से दूर हटा रहे हैं।

धार्मिक चर्चा—

कठ उपनिषद् का सारांश—१२

(श्री ज्ञानसिंह जी आर्य नई दिल्ली)

[गतांक से आगे]

लेकिन एक जीवन विद्या(बायोलोजी) का विद्यार्थी इसके अध्ययन में चार या पांच वर्ष लगा देता है। एक अनुसंधान करने वाला प्रोफेसर इसकी खोज में जीवन का एक बड़ा भाग समाप्त कर देता है। ब्रह्म विद्या के जिज्ञासुओं में भी इसी प्रकार का भेद है।

हम जब दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं तो ऐसा समझते हैं कि किसी अन्य व्यक्ति को देख रहे हैं। वास्तव में हम अपने आप को ही देखते हैं। इसी तरह साधारण मनुष्य जब परमात्मा का चिंतन करता है तो उसके सामने एक बहुत बड़े मनुष्य का चित्र आ खड़ा होता है। वह ब्रह्म को देखना चाहता है और इसके लिये अपने सामने दर्पण रख लेता है। इस में वह देखता तो अपने आप को है परन्तु समझता है कि वह परमात्मा को देख रहा है। इस तरह मनुष्य परमात्मा को अपने रूप में देखता है। शायद इसी वजह से हमने परमात्मा को राम, कृष्ण व अन्य अवतारों की शक्ल दे दी। जो लोग साधारण मनुष्य अवस्था से ऊपर उठते हैं वो तीन श्रेणियों में विभक्त किये जा सकते हैं।

१—वे लोग जो ब्रह्म को शिव या मंगल का रूप देते हैं, वे पितृ-लोक के वासी इसे स्वप्न या आदर्श में देखते हैं।

२—वे लोग जो ब्रह्म को सौंदर्य के रूप में देखते हैं। एक अंग्रेज कवि ने कहा है, 'सत्य सौंदर्य है और सौंदर्य सत्य है।' मनुष्य इतना ही जान सकता है और इससे अधिक जानने की आवश्यकता भी नहीं समझता। गंधर्व लोक-वासी कलाकार हैं। वह सत्ता को ऐसे देखते हैं जैसे उस जल में देखा जाता है। जल, सौंदर्य को बढ़ाने-वाला है। गंगा के किनारे वृक्षों व मकानों की कतार खड़ी है, उनका प्रतिबिम्ब पानी में पड़ता है जो बहुत ही सुन्दर दिखाई देता है और आकर्षक प्रतीत होता है। जल का सम्बन्ध सौंदर्य से है। कलाकार सौंदर्य के पुजारी होते हैं इसलिये वे परमात्मा को सौंदर्य के रूप में देखते हैं।

३—वे लोग जो दार्शनिक हैं वे ब्रह्म लोक के यात्री हैं। वे सत्ता को उसके वास्तविक रूप में देखते हैं। दार्शनिक का ज्ञान इन्द्रियजन्य नहीं होता। वह मनन करता है। इससे आगे बढ़ता है और सत्ता अर्थात् ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। अर्थात् साधारण मनुष्य ब्रह्म को अपने रूप में देखते हैं, छाया-वादी उसे शिव या मंगल के रूप में और कलाकार सौंदर्य के रूप में और दार्शनिक उसको वास्तविक रूप में देखते हैं। इस तरह दो दृष्टिकोण प्रस्तुत किये गये हैं—

१—मनुष्य अपनी रुचि व योग्यता के अनुसार भिन्न-भिन्न साधन ब्रह्म की अनुभूति के लिये

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २४ चैत्र २०२०, ७ अप्रैल १९६३[अंक १४

अन्याय का प्रतिकार करने आर्य समाज आगे आये

आज मैं जो विचार रखना चाहता हूं, समाज उससे उदासीन है। तात्विक भाव सुनने की रुचि कम होती जा रही है। देश में जो परिस्थितियां हैं, उनके मूल में क्या वस्तु है—समाज का प्रकृति से भ्रष्ट हो जाना। हमारी भूमि पुण्य भूमि है। जीवन का चरम-लक्ष्य कर्मद्वारा प्राप्त करने मानव यहां आते रहे। यह संस्कृति का क्रम आज भी कायम है। आज की बिखरी स्थिति में भी वही युगों की सुवास पर्याप्त मात्रा में है। यहां पवित्रतम भूखण्ड का समाज विशेष लक्ष्य लेकर आया है। यह देश विश्व को संदेश देता आया और दे रहा है। खेद है कि आज हम पुरातन आदर्श मालिका से भटक गए है। जीवन का मूलतत्व ओझल हो गया है, अब तो उसका विचार भी नहीं आता। लोगों में भ्रम अधिक है अतः योग्य परिणाम नहीं निकलता। हमारी धरती पर चार करोड़ की जाति शासन करती आई है। अब दासता से मुक्त हुए। गत पन्द्रह वर्षों से प्रयत्न जारी है पर परिणाम पूरा नहीं निकलता। धरती सिकुड़ती जा रही है, आदर्श बदलते जा रहे हैं कारण क्या है?

जीवन की प्रेरणा है। सारा समाज इसी के कारण ही काम में लगा है। दुर्योधन पाण्डवों को तो एक चप्पा भूमि भी देने को तैयार न था पर कर्ण को अंग का राज्य दे देता है। सुख दो प्रकार का है, प[illegible] के सुख और मानवीय सुख। जो पशु वृत्तियों से तृप्त होने वाला सुख है वह पाशविक है। किन्तु मानव आदर्श का धरातल ऊंचा है। यह सुख श्रेष्ठ है। इस में तृप्ति आहार निद्रा से नहीं होती। ऋषिदयानन्द को मठाधीशों ने कहा कि हमारे मठों के उच्चासन पर बैठें पर ठोकर मार दी। भौतिक आवश्यकताओं के होते हुए भी उस का विशेष लक्ष्य रहता है। वीर भक्तसिंह जैसा देशभक्त इसके लिए अपने प्राणों को भी दे देता है। यौवन भर शरीर भी छोड़ने को तैयार हो जाता है तो विशेष लक्ष्य ही है। जितना मानवता का विकास होगा उतना अधिक महत्व होगा। इसके पीछे निश्चित लक्ष्य होते हैं। मानवीय सुख के तीन रूप हैं। सात्विक, राजसिक, तामसिक। ये विचार गीता के हैं। जहां ज्ञान तृप्त हो वह सात्विक सुख है, जहां इन्द्रियां तृप्त हों वह राजस और यहा अज्ञान तृप्त हो वह तामस सुख माना गया है। जिसका अन्त सुखमय वह सत्व, जिसके परिणाम में दुःख वह राजस और यहां दोनोंमें दुःख हो वह तामस है। इनके लिए चार सम्पदाएं कही गई हैं। सुसाध्य आजीविका अन्तः शान्ति, स्वतन्त्रता पौरुष। जहां चारों पूर्ण हैं वहां सुख होता है। रथ और रथी की कल्पना इसी लिए है। पहली सम्पदा में ऐसा प्रयत्न हो जिसमें अधिक परिश्रम न करना पड़े ताकि शरीर में ग्लानि न पैदा होने लगे। मन की शान्ति भी अनिवार्य है। दासता के होते जीवन की वृत्तियों का विकास नहीं होता। पौरुष के बिना जाति बिनाप्राण के मानव तुल्य है। ये चार सम्पदाएं लाभकारी है। समष्टिमें ये गुण होने चाहिएं तभी सुख होगा। सारा समाज अन्याय को देखकर मौन हो जाता है। निर्धन समाज में यदि एक धनी है, अशान्त समाज में यदि एक शान्त तथा परतन्त्र समाज में यदि एक स्वतन्त्र है तो सुख नहीं आयेगा। ये चारों विभूतियां जब समूचे समाज में व्याप्त हो जायेंगी तभी मानव सुखी बनेगा।

—संपादक

श्री राजेन्द्र जिज्ञासु

उदीयमान युवक हैं। आर्य परिवार में जन्मे, पले और बड़े हुए हैं। डी. ए. वी. स्कूल में शिक्षा पाई और डी. ए. वी. कालेज से एम. ए किया है। अब तक आर्य स्कूल में कार्य किया है। आर्य समाज उन को जीवन घुट्टी में मिला है। इन के मान्य पिता जी भी, जिन का अभी स्वर्गवास हुआ है, आर्य समाज के बहुत बड़े कार्यकर्ता और दीवाने थे। श्री जिज्ञासु जी पर सारे समाज को मान है ही किन्तु मुझे तो उन पर आरम्भ से ही व्यक्तिगत भी बड़ा मान है। आर्य समाज इन के रोम २ और श्वास २ मे है। आर्य समाज के लिए अपने पराये किसी से भी समझौता नहीं करते। युवक हैं युवकों में बिजली भर देते हैं। अब पंजाब से आर्य समाज के प्रसिद्ध मान्य प्रिंसिपल भगवान दास जी डी.ए.वी. कालेज शोलापुर के प्रेम आदेश पर वहां कालेज में जा रहे हैं। गत आर्य जगत् मे श्री जिज्ञासु जी ने विदा-नमस्ते का अपना लेख भी लिखा है। हम चाहते थे कि पंजाब में ही किसी कालेज में उन को रखा जाता। समाज का बड़ा लाभ था। हमारी आन्तरिक शुभ कामनाएं सदा इन के सर्वत्र ही साथ हैं। प्रभु इस योग्य युवक को कार्य की अधिक शक्ति देवें ताकि समाज की खूब सेवा करते रहें।

हंसराज दिवस

स्वर्गीय महात्मा हंसराज का दिवस इस बार भी १६ अप्रैल को समीप आ रहा है। महात्मा जी त्याग, तपस्या, बलिदान के जीवित जागृत प्रतीक थे। उन के त्याग की कौन समता कर सकता है। सब कुछ समाज की भेंट कर दिया। सारी समाजों संस्थाओं का कर्तव्य है कि उन्नीस ए[illegible] पर यह दिवस बड़े ही समारोह से मनाये। त्याग, तपस्या तथा समाज सेवा का इस दिन व्रत धारण करें—सं

'जय भारत भू के एक्य देव'

ले०—श्री राममूर्ति जी कालिया, एम ए., नई दिल्ली

जय भारत भू के एक्य देव,
अर्चन तेरा मम ध्येय देव,
था लुप्त हुआ यह रूप देव,
जो हुआ आज साकार देव।

(२)

कैसा अद्भुत यह रूप देव,
कितना विराट व सौम्य देव,
जो अरि हित में विकराल देव,
बस रहे सदा यह दीप्त देव।

(३)

तुम कोटि रूप के एक देव,
सब तेरे ही हैं रूप देव,
बनकर सदेह वे आज देव,
तेरा ही रक्षण करें देव।

(४)

हम मांग रहे बस आज देव,
आवें तेरे ही काज देव,
जन जन का हित है इस में देव,
मम हित की फिर क्या बात देव।
जय भारत भू के एक्य देव॥

(गतांक से आगे)

महाभारत द्रोण पर्व अध्याय २९ में हम पढ़ते हैं कि भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि 'भगदत्त बहुत बूढ़ा है, इसके सारे बाल पक गये हैं, ललाट आदि अंगों में झुर्रियां पड़ जाने के कारण पलकें झपी रहने से इसके नेत्र प्रायः बन्द से रहते हैं। इसने अपने नेत्रों को खुला रखने के लिये पलकों को कपड़े की पट्टी से बांध रखा है। भगवान की आज्ञा पाकर अर्जुन ने बाण मारकर भगदत्त के मस्तक की पट्टी अत्यन्त छिन्न-भिन्न कर दी। इस से भगदत्त की आंखें बन्द हो गई'—श्लोक ४५ से ४६।

तमोमयं जगन्मेने भगदत्त प्रतापवान
ततश्चन्द्रार्ध बिम्बेन बाणेन नतपर्वणा ॥४७॥

बिभेद हृदयं राज्ञो भगदत्तस्य पांडवः
शरासनं शरांश्चैव गताम् प्रममोचह॥
स भिन्न हृदयो राजा भगदत्त.
किरीटिन ॥४८॥

अर्थात—फिर तो प्रतापी भगदत्त को सारा जगत् अन्धकार प्रतीत होने लगा। उस समय झुकी हुई गांठ वाले एक अर्धचन्द्राकार बाण से पाण्डुनन्दन अर्जुन ने राजा भगदत्त के वक्षःस्थल को विदीर्ण कर दिया।

शिरस्तस्य विभ्रष्टं
पपात च वरांशुकम्
नाल ताड़न विभ्रष्टं
पलाशं नलिनादिव ॥४९

अर्थात्—किरीटधारी अर्जुन द्वारा हृदय विदीर्ण कर दिये जाने पर राजा भगदत्त ने प्राण शून्य हो अपने धनुष-बाण त्याग दिए। उनके सिर से पगड़ी और पट्टी का वह सुन्दर वस्त्र खिसक कर गिर गया जैसे कमल नाल के ताड़न से उसका पत्ता टूट कर गिर जाता है। महाभारत द्रोणपर्व अ० २९

हिमालय हमारा है और हमारा ही रहेगा।

४. चीनी शासक हिमालय पर अपना अधिकार जताते फिरते हैं।

चीन हमारे चक्रवर्ती राज्य के आधीन था (महर्षि दयानन्द जी)

(ले०—श्री ज्ञानीपिंडीदास जी अमृतसर)

इसके लिए अपने कतिपय मनगढ़न्त मान चित्रों का आश्रय लेते हैं, परन्तु सर्गारम्भ से ही हमने हिमालय के साथ प्रेम किया है; इसकी पूजा की है; इसे परमात्म-स्तुति की सोपान समझा है और इसके स्तोत्रों का पाठ किया है। तनिक देखिये तो सही—प्रभु भक्त आर्य प्रभात वेला में भगवती भागीरथी के पवित्र जल में डुबकी लगाकर जब उसके पावन तट पर खड़े होकर उत्तर की ओर मुख करके वेदगान करते हुए उच्च स्वर से कहते हैं—

यस्ये मे हिमवन्तो महित्वा
यस्य समुन्द्रं रमया सहाहु.
यस्येमा. प्रदिशो यस्य बाहू
कस्मै देवाय हविषा विधेम।

'हम उस सुख स्वरूप परमात्मा का पूजन-अर्चन करते हैं, जिस की स्तुति यह (उत्तर की ओर हाथ का इशारा करके) हिमाच्छादित हिमालय करता है। फिर दक्षिण को मुख फेर कर घोषणा करते हैं। हम उस प्रभु का गुणगान करते हैं, जिसकी महिमा का गान जल परिपूर्ण सागर कर रहे हैं, (तत्पश्चात् दाहिनी ओर ब्रह्मपुत्रा तथा ब्रह्मदेश को और बायीं तरफ सिन्धु नद को लक्ष्य करके घोषणा करते हैं कि) हम उस अनन्त जगदीश का भजन-स्मरण करते, ये विशाल दिशाएं जिसकी भुजाएं हैं।

ऋग्वेद मण्डल १०सूक्त १२१ मन्त्र ४

महाराज! हमने हिमालय के स्तोत्र गाए हैं और उसके माध्यम से मातृवन्दना की है—यथा

सागरालि ङ्गतां लक्ष्मीं,
जगज्जनक कन्यकाम्।
स्थितां हिम नगस्याङ्के,
पार्वतीमपरां भजे ॥१॥
शुभ्रं धर्मध्वजं मातः,
किं वा राशि कृतं यशः।
रौप्य वा मुकुटं दिव्यं,
वन्देहं तं हिमालयम्॥२॥
नगाधिपं धारयन्तीं,
मस्तके रत्नमद्वयम्।
काश्मीरञ्च ललाटे भ्रू,
मध्ये नेपालिकां शुभाम्॥३॥
जाह्नवी यमुना सिन्धु,
ब्रह्मपुत्रा शतद्रुभि।
भू-देवीं पञ्च धाराभि.
सतत सोऽभिषिञ्चति॥४॥

—भवन जर्नल बम्बई

अर्थात्—हमारी जननी जन्म भूमि वह है, जिसे सागर (तीन ओर से) आलिङ्गन कर रहे हैं; जो दूसरी पार्वती की भान्ति हिमालय की गोद में स्थित है; ऐसी परमात्म-पुत्री, लक्ष्मी-स्वरूपा भारतमाता को मै नमस्कार करता हूं ॥१॥

भारत माता के शुभ्र धर्मध्वज रूप अथवा संग्रहीत यशोराशिरूप, किंवा दिव्य रौप्य मुकुट रूप हिमालय को मैं नमस्कार करता हूं ॥२॥

पर्वत रत्न हिमालय को धारण करने वाली भारत माता दो रत्नों (मस्तक पर काश्मीर को और भवों के मध्य में तिलक रूप शुभ नेपाल) को धारण करती है। ॥३॥

यह हिमालय गंगा, यमुना, सिन्धु, ब्रह्मपुत्रा एवं शतद्रु (सतलुज) इन पांच धाराओं द्वारा भू-देवी (भारत) का सतत सिंचन करता रहता है ॥४॥

५—आज से लगभग अढ़ाई सौ वर्ष पूर्व श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने अपने दशम ग्रन्थ में अपने पूर्व जन्म की कथा यूं लिखी है—

अब मै अपनी कथा बखानो—
तप साधत जिहि बिधि मोहि आनो
हेम कुंट परबत है जहां
सपत स्रिंग सोभित है तहां ॥१॥
सपत स्रिंग तिह नामु कहावा,
पंड राज जह जोग कमावा
तह हम अधिक तपसिआ साधी,
महाकाल कालका अराधी ॥२॥
इह बिधि करत तपस्सिआ भयो
द्वै ते एक रूप ह्वै गयो ॥३॥

दशम ग्रन्थ पृष्ठ ५५

जिसका तात्पर्य यह है कि द्वापर युग के अन्त में जहां पाण्डु राज ने तपस्या की थी वहीं सप्त श्रृंग नामक पर्वत पर. हेमकुण्ट के पास ही श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी भी तपस्या करते रहे हैं।

इतनी साक्षियों और प्रमाणों के होते हुए भी यदि कोई धृष्टतापूर्वक हम से हिमालय को छीनने का दावा करे तो समझिये उसका मस्तिष्क विचलित हो गया है और उसके साथ यथा योग्य वर्ताव करके उसके मस्तिष्क को ठीक करना चाहिए।

भूल सुधार

३१-३-६३ में आर्य युवक परिषद दिल्ली—६

परीक्षा की तिथि ११-८-६३ के स्थान पर ११-४-६३ छप गई है। तिथि ११-८-६३ है पाठक नोट कर लें।

नाम परिवर्तन

मैंने (सतनाम) पिता का नाम श्री गिरधारीलाल जी आर्यसमाज हिसार अपना नाम अशोक कुमार अभी रखा है।

—अशोक कुमार आर्य

शोक समाचार

आर्यसमाज जुलाना मंडी के कोषाध्यक्ष श्री जगन्नाथ जी आर्य की धर्मपत्नी का देहावसान हो गया है वह अपने पीछे अनेक सन्तानें छोड़ गई हैं उसकी आत्मा की सद्गति के लिए तथा उसके परिवार को शान्ति प्रदान करने की प्रभु से मंगल कामना करते हैं।

मन्त्री आर्यसमाज जुलाना मं

विद्वानों और प्राचीन ग्रन्थो की दृष्टि में,

नारी की महत्ता

—कु. अरुण जी आर्या प्रभाकर, टोहाना—

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

'ऐ नारी ! तू घर की मालकिन बन के जा वहां जितने पुरुष हों उन से रानियों के समान बात कर।

—ऋग्वेद।

पिता, भ्राता पति और देवर आदि अपना कल्याण चाहें तो उन्हें उचित है कि वे अपनी पुत्री, बहन, स्त्री और भाभी का कभी भूलकर भी अपमान न करें। क्योंकि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता, यत्रास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफला क्रिया।' जहां स्त्री की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं तथा जहां उनकी पूजा नहीं होती वहां सब प्रकार के उत्तम कार्य भी निष्फल हो जाते हैं। —मनुस्मृति।

नारी पुरुष की अर्धांगिनी है तथा यह उसका सबसे बड़ा मित्र है, धर्म अर्थ और काम का मूल है। जो उसका अपमान करता है काल उसे नष्टकर देता है। —महाभारत।

नारी बन को राजभवनों के समान सुखमय बना देती है।—रामायण।

ऐ मनुष्य ! तेरा स्वर्ग तेरी मां के पैरों के तले हैं। —हजरत मुहम्मद।

यदि तुम पत्थर हो तो पारस पत्थर बनो। यदि वृक्ष हो तो लाजवन्ती का पौधा बनो। यदि मनुष्य हो तो स्त्री का मान करो।

—विक्टर ह्यूगो।

स्त्री इसलिये बनी है कि नर की संगिनी बने। प्रकृति यह चाहती है और ईश्वरीय नियमों को पूर्ण करती हुई स्त्री ईश्वरीय शासन को पूर्ण करे। —शिल्लर

हे सुकुमारी ! ईश्वर ने तुझे पुरुषों को ठीक करने के लिए बनाया है। यदि तू न होती तो हम पशुवत होते [illegible] में क्या है जो तुझ में [illegible] ज्योति - पवित्रता, सत्य, अनन्त आनन्द और अमर प्रेम सब कुछ तुझ में विद्यमान है।

—आटवे

भारतवर्ष का धर्म भारत के सुपुत्रों से नहीं वरन पुत्रियों की कृपा से स्थिर है। यदि भारतीय रमणियां अपना धम छोड़ देतीं तो अब तक भारत नष्ट हो जाता।

—स्वामी दयानन्द

जो पर स्त्री को पाप की दृष्टि से देखता है वह ईश्वरीय कोप को जगाता है और अपने लिए नरक का मार्ग साफ करता है।

—स्वामी रामतीर्थ

किसी रमणी का सतीत्व नष्ट करने से पहले मर जाना बहुत ही अच्छा है। किसी स्त्री को पाप कर्म से बचाना सबसे बड़ा तीर्थ है।

—महात्मा गांधी

सारे संसार का राज्य मिल जाए परन्तु यदि स्त्री न हो तो वह पुरुष भिक्षुक से भी बुरा है। इस से तो वह कगाल व्यक्ति लाख गुणा सुखी है जो सारे दिन परिश्रम करे सन्ध्या समय स्त्री का मुख देखकर सारा दुःख भूल जाता है।

—कूपर

जब तक आदमी अकेला था तब तक स्वर्ग भी उसके लिये दुःखमय था, देवताओं के गीत, पक्षियों का मधुर कलरव, पुरुषों की मुस्कराहट और वायु के मन्द-मन्द झोंके सब उसके लिए नीरस थे। वह सदैव उदास रहता था। परन्तु जब उसे नारी मिल गई तो उसका सारा दुःख सुखमें परिवर्तित होगया।

—कैम्बल।

इस असार संसार में और सब पदार्थ तो परिश्रम से मिल जाते हैं परन्तु सुलक्षणा स्त्री केवल ईश्वर की कृपा से ही मिलती है।

—पोप।

मैं नारी का महत्व इस लिए नहीं मानता कि ईश्वर ने उसे सुन्दर बनाया है। परन्तु मैं उसे इसीलिए पूजनीय मानता हूं। क्योंकि मनुष्य का मनुष्यत्व केवल इसी से टिका है। —लौविल।

स्त्री के नयनों में ईश्वरने अपने दो दीपक रख दिए हैं ताकि संसार के भूले भटके लोग उन के प्रकाश में अपना खोया हुआ मार्ग देख सकें।

—विलिस।

नारी मानव के लिए अभिशाप नहीं है, और न नारी मानव की उपेक्षा की कन्दुक, जिसे जहां चाहो वहा फेंक दो। नारी मानवका प्राण है, जीवनका आधार है और मानव की सत्ता है, चिरसंगिनी है।

—अज्ञात।

संसृति के प्रथम प्रभातमें जिसने मानव के जीवन में आकर्षण चेतना और गति प्रदान की, वह नारी ही है। —अज्ञात।

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर ने स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की पुण्य स्मृति में वैदिक धर्म सम्बन्धी पुस्तकों के प्रकाशन का विभाग खोला हुआ है जिसने समय २ पर समयानकूल पुस्तकों के प्रकाशन द्वारा महात्मा जी के नाम व काम को चिरस्थायी कर दिया है। अब आर्य समाजों, व महात्मा जी के श्रद्धालु भक्तों का कर्त्तव्य है कि इस विभाग की अधिक से अधिक पुस्तके मंगाकर उनके नाम को अमर करें। साथ ही इस विभाग की आर्थिक सहायता करें।

आर्य समाजों के सदस्य व आय-व्यय सम्बन्धी सुन्दर पक्की जिल्द के रजिस्टर	१ ००
महात्मा हंसराज जी का सम्पूर्ण विस्तृत तथा सचित्र जीवन	२.००
प्रभु दर्शन	०.५० न०पै०
महर्षि दर्शन (प्रि.दिवानचन्द कृत)	०.५०
गीता दिग्दर्शन	.५०
जीवन ज्योति	.६२
स्वाध्याय सग्रह (नयाप्रकाशन)	.५०
दयानन्द शतक	१.००
आर्य भजन संग्रह	५०
सत्यार्थ प्रकाश भाष्य I	१ ००
„ „ II	१ ००
स्वामी दयानन्द जी के पत्र व्यवहार III	५०
„ IV	५०
पातंजल योग अरविंद की योग पद्धति	७५
अमृतवाणी सजिल्द	.५०
अजिल्द	.३१
आयसमाज की सदस्यता के प्रवेश पत्र	०.५०
चारों वेदों की मूल पुस्तक	२२.५०
संस्कार विधि	१.२५
पंचमायज्ञ विधि	.२०
आर्याभिविनय	.४०
वैदिक सत्संग गुटका (उर्दू)	.२५
वैदिक धर्म का महत्व	१००.०
वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है ?	१ ५०
चारों वेदो के शतक बढ़िया चित्ताकर्षक जिल्द प्रति कापी	१.००
राधा स्वामी मत अलोचन	.३७
दयानन्द हिज लाइफ एण्ड वर्क अग्रेजी में (प्रि सूर्य भानु जी **M.A.** द्वारा लिखित)	१ ५०
टीचिंग ओफ ईशोपनिषद् (अंग्रेजी) में श्री दीवान चन्द जी लिखित)	१ ५६

नोट—इनके अतिरिक्त आनंद स्वामी जी महाराज लिखित स्वाध्याय व अध्यात्मवाद संबन्धी सभी पुस्तके हमारे यहा से प्राप्य हैं।

मिलने का पता—

प्रबन्धक—महात्मा हंसराज साहित्य विभाग **A P P.** सभा निकट कचहरी जालन्धर।

मनुष्य क्या नहीं बन सकता ?

(ले०—श्री शक्ति कुमार जी बी ए आर्य युवक समाज माडलटौन यमुना नगर)

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

सचमुच कितने भाग्यशाली है हम, और आप जिन पर उस प्रभु की कृपा है जिसके कारण हमें यह सुन्दर जीवन रूपी चोला मिला है। क्या हम इसे व्यर्थ गवा दे ? क्या हम विषय विकारों के दागों से इसे गन्दा कर लें ? क्या देश-देशांतरों में घूम ले ? बस इतना ही ध्येय है इस सुन्दर चोले का ? नहीं, अपितु एक उच्च तथा महान व्यक्ति बनकर दूसरे आने वाले बच्चों के लिए पथ-प्रदर्शन का काम करे, ऐसा हमारा ध्येय होना चाहिए।

प्रत्येक रोग के लिए कोई न कोई दवाई निश्चित होनी है इस लिए हमे भी एक उच्च-महान व्यक्ति बनने के लिए किसी उच्च-तम पदार्थ की आवश्यकता होनी चाहिए। वह उच्चतम पदार्थ 'हमारा अपना दूसरों के प्रति व्यवहार का होना।' बस यही कुंजी है इस जीवन रूपी ताला खोलने की।

प्राय. देखा जाता है कि आधुनिक काल में हजारों ही मिनिस्टर और स्पीकर अलग-अलग प्लेट-फार्मों से अनेकों ही अच्छे शब्दों से ओत-प्रोत एवं लच्छेदार भाषण दे डालते हैं और उनका असर क्या होता है कि केवल थोड़ी देर के लिये ही उसकी 'वाह' हो जाती है और अपने-अपने घरों को वापिस आते ही भाषणों का असर लोगों पर समाप्त हो जाता है और हमारा लक्ष्य पूरा नहीं हो पाता। केवल इसका एक ही कारण है कि जो शब्द वह लोग बोलते हैं वह स्वयं अपने जीवन मे उनको नहीं लाते केवल-मात्र शब्दों मे ही खो देते हैं।

यदि हम चाहते हैं कि हम भी दुनियां में कुछ बन सके तो अपना यह लक्ष्य बना ले कि हम जो कुछ भी कहेंगे वह करके प्रत्यक्ष रूप में दिखाएंगे जैसा कि एक Proverb मे आता है. **"Do as you wish to be done by."**

एक समय की बात है कि एक मनुष्य ने शराब की आधी बोतल पीकर बाकी की आधी बोतल को अपने बगल मे छुपाकर रख लीता है। क्या देखता है कि उसका छोटा भाई भी शराब की मस्ती में चूर इधर ही आ रहा है। इस प्रकार की बुरी अवस्था में उसे देखकर उससे रहा न गया और उसे अपने समीप बुलाकर समझाने लगा कि शराब अच्छी वस्तु नहीं है यह मनुष्य के जीवन एवं घर को बरबाद कर देती है इसलिए अब भी तू मेरे सुझाव को मान और शराब पीना बंद करदे। परन्तु स्वय उसने अपनी आधी बोतल शराब की अपने बगल में छुपा रखी हुई थी, जरा सोचें कि क्या उसके उपदेश से कुछ लाभ हो सकता है ? कदापि नहीं।

जितने भी महापुरुष हुए हैं उन्होंने जो कुछ कहा वह कर के दिखाया, अपितु यह कहना चाहिए कि उन्होंने केवल मात्र किया ही। स्वामी दयानन्द का उदाहरण हमारे सामने है। एक बार जबकि उन्होंने ने ब्रह्मचर्य का वर्णन करते हुए कहा कि इसमें अनेक गुण हैं, ऐसा लोगों को समझाया ही नहीं अपितु सिद्ध करके भी दिखला दिया जबकि इन्होंने बग्घी के पिछले पहिए को पकड़ लिया और गाड़ी घोड़ों के पूर्ण जोर लगाने पर भी न हिल सकी। ऐसे अनेक उदाहरण हमारे इतिहास में मिलते हैं।

पाठकवृन्द ! इस पृथ्वी पर कोई किसी का मित्र या शत्रु बनकर नहीं आता परन्तु हमारा व्यवहार ही किसी को शत्रु अथवा मित्र बना डालता है। इसलिये प्रयत्न यह करना चाहिए कि हमारा व्यवहार दूसरों के प्रति शुद्ध हो, केवल इसी सीढ़ी से हम इस ससार में ऊपर चढ़ सकते हैं।

आर्यसमाज बाढ़

२६—३—६३ को आर्यसमाज बाढ़ की ओर से आर्यसमाज स्थापना दिवस खूब धूमधाम से मनाया गया। प्रातः ८ बजे आर्य-समाज मन्दिर में ओ३म् ध्वज फहराया गया इसके बाद यज्ञ हवन हुआ। रात के ८ बजे आर्य-समाज मन्दिर में एक बैठक हुई जिसमें आर्य समाज के इतिहास सम्बन्धी बातों पर प्रकाश डाला गया। महिला आर्य समाज मन्दिर में भी महिला आर्य समाज की सदस्याओं ने भी उत्साह पूर्वक आर्य-समाज स्थापना दिवस मनाया।

शिवनन्दन प्रसाद
मन्त्री समाज बाढ़

आर्य समाज जाम नगर गुजरात

में २६—३—६३ को आर्य-समाज स्थापना दिवस बड़े उत्साह से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर ४०० से ऊपर स्त्री पुरुषों ने भाग लिया।

साधारण कार्यक्रम के पश्चात श्री मगन लाल जी जोशी पूर्व स्पीकर सौराष्ट्र लैजिस्लेटिव कौंसिल ने अघमर्षण मन्त्र की विस्तार से व्याख्या की। तत्पश्चात डा० केसरवानी जी स्वामी मेधानन्द जी के प्रभावशाली व्याख्यान हुए।

इसी प्रकार सायंकाल को भी श्री धवन जी मैनेजर पंजाब नैशनल बैंक के निवास स्थान पर जोशी जी, स्वामी जी महाराज के भक्ति विषयक भाषण हुए। उसके बाद जामनगर समाज के मन्त्री जी का आर्यसमाज स्थापना दिवस तथा उसके नियमो पर सारगर्भित प्रवचन हुआ। इस सारे कार्यक्रम में दयानन्द कन्या महाविद्यालय की छात्राओं ने मुख्य भाग लिया। धन संग्रह के बाद शांतिपाठ से सभा विसर्जित हुई।

हरिश्चन्द्र थापर मन्त्री समाज

आर्य प्रादेशिक सभा के वेदप्रचार का कार्यक्रम

आ० स० पुरानी मंडी जम्मू—का उत्सव ३०—३१ मार्च १ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री दुर्गासिंह जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी पधारे। उत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

आ० स० अखनूर—(जम्मू) का उत्सव ३१ मार्च १—२ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २४ मार्च से कथा और यज्ञ पं० ओंप्रकाश जी ने सम्पन्न किया। श्री मेलाराम जी के भजन हुए। उत्सव पर श्री ताराचन्द जी पधारे। धूमधाम से उत्सव सम्पन्न हुआ।

आ० स१ रेलवे कालोनी जालन्धर—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री ताराचन्द्र जी पधार रहे हैं।

आ० स्त्री समाज नाहन (हिमाचल)–का यज्ञ उत्सव श्री अमरसिंह जी की अध्यक्षता में १ से ४ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० दौलतराम जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी, श्री हजारी लाल जी पधार रहे हैं।

आ० स० जोगेन्द्र नगर—(हिमाचल प्रदेश) का उत्सव १२ से १४ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ६ अप्रैल से यज्ञ और कथा के लिए श्री प० ओंप्रकाश जी श्री दुर्गासिंह जी पधार रहे हैं। उत्सव पर श्री पं० हरिश्चन्द्र जी जम्मू वाले श्री जगतराम जी, बस्तीराम जी पधार रहे हैं।

आ० स० शाम चौरासी—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ मार्च से यजुर्वेद यज्ञ और कथा खुशी राम करेंगे और राजपाल जी मदन मोहन जी के भजन होंगे। उत्सव पर श्री त्रिलोक चन्द्र जी, श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री मेलाराम जी, श्री ताराचन्द जी, श्री हजारी लाल जी श्री ज्ञानेन्द्र जी आदि महानुभाव पधार रहे हैं।

महात्मा हसराज मेला बिजवाड़ा—(होशियारपुर) में सभा की ओर से १६ अप्रैल को धूमधाम से मनाया जा रहा है। १६ अप्रैल से कथा श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी, और भजन श्री राजपाल जी मदन मोहन जी के होंगे।

आ. स जलालाबाद गर्वी—२१ से २६ अप्रैल को उत्सव के रूप में कथा होगी। पं० त्रिलोक चन्द राजपाल जी मदनमोहन जी पधारेंगे।

आ० स० लारेंस रोड अमृतसर—में १० से १४ अप्रैल तक खुशीराम शर्मा कथा करेंगे। और श्री ला० जगतराम जी महाजन रिटा[illegible]स० डी० ओ० दयानन्द नगर के यहां यज्ञ सम्पन्न होगा। [illegible] के भजन होंगे।

आ. स. शुगर मिल खतौली—(उत्तरप्रदेश) समाज का उत्सव २७ से २६ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ अप्रैल से खुशीराम शर्मा कथा करेंगे और हजारीलाल जी के भजन होंगे।

आ स. राजपुरा टाऊनशिप—समाज में १७ से २३ अप्रैल तक पं० ओंमप्रकाश जी कथा करेंगे। मा० ताराचन्द जी के भजन होंगे।

आ स फतहबाद अमृतसर—का उत्सव ३ से ५ मई को सम्पन्न हो रहा है। २६ अप्रैल से प० ओंप्रकाश जी कथा करेंगे ताराचन्द जी के भजन। उत्सव पर श्री पं० दुर्गासिंह जी, राजपाल जी की मण्डली। पं० दौलतराम जी शास्त्री पधारेंगे।

आ स राम नगर करनाल—का उत्सव ३ से ५ मई को सम्पन्न हो रहा है। २६ से पं० चन्द्रसेन जी कथा करेंगे। श्री मेलाराम जी के भजन होंगे। उत्सव पर पं० त्रिलोकचन्द जी पधारेंगे।

१७ अप्रैल से १९ तक अलावलपुर—समाज में महात्मा हंसराज दिवस के उपलक्ष्य मे श्री मेलाराम जी पधार रहे हैं। महात्मा हसराज हाई स्कूल भठिंडा मे महात्मा हंसराज दिवस १७से१८ अप्रैल को समारोह से मनाया जा रहा है। पं०चन्द्रसेन जी, श्री दुर्गासिंह जी पधार रहे हैं।

आ स ठाकुर बस्ती, दिल्ली—का उत्सव ३ से ५ मई तक सम्पन्न हो रहा है। २८ अप्रैल से प० त्रिलोक जी कथा करेंगे और राजपाल जी, मदनमोहन जी के भजन होंगे २ मई तक।

आ स महरौली दिल्ली—का उत्सव २६ से २८ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है।

—खुशीराम शर्मा

निवेदन

सभी आर्य समाजों के अधिकारी महानुभावों से प्रार्थना है कि १६ अप्रैल को स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस समारोह से सम्पन्न करने का आयोजन करें।

खुशीराम शर्मा अधिष्ठाता वेद प्रचार सभा

दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय, हिसार के साप्ताहिक सत्संग का कार्य

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के उत्साही नवयुवक ब्रह्मचारियों ने आर्य समाज के साप्ताहिक कार्यक्रम को निम्न प्रकार सम्पादन किया।

१. ब्र० भीष्म जी महाराज ने नागोरीगेट आर्य समाज में भाषण दिया।

१. ब्र० वेदप्रिय जी ने आर्यसमाज माडल टाउन हिसार में भाषण दिया।

ब्र० जगदीशचन्द्रजी वसु ने हांसी आर्यसमाज में भाषण दिया।

ब्र० ब्रह्मानन्द जी ने दयानन्द भवन मे भाषण दिया।

ब्र० रामेश्वदत्त जी ने नागोरी गेट आर्य समाज में संध्या तथा—

ब्र० गोविन्दप्रसाद जी ने सत्यार्थ प्रकाश की कथा की। तथा अन्य ब्रह्मचारी भी उपस्थित हुये।

—ब्र० वेदप्रिय विद्यावाचस्पति

सूचना

समाचार पत्रों में आया था कि शिक्षा विभाग के अधिकारियों की ओर से सरकारी प्राइमरी स्कूलों के नाम आदेश जारी हुए हैं कि नए वर्ष से पहली जमात में केवल उन बच्चों को प्रवेश दिया जाए जो गुरमुखी लिपि के माध्यम द्वारा शिक्षा प्राप्त करें। हिन्दी भाषा की तालीम तीसरी श्रेणी से शुरु होगी। अमृतसर के एक असिस्टेंट डिस्टिक्ट इन्सपेक्टर आफ स्कूलज के ऐसे आदेश की विशेष रूप से चर्चा रही है। इस पर पंजाबी क्षेत्र के हिन्दी प्रेमियों में रोष उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। कई चिट्ठियां सभा के कार्यालय में आईं। पंजाब कौंसिल में भी कई प्रश्न उठाए गए। हर्ष की बात है कि स्पष्ट रूप से कह दिया गया है कि सेक्रेटेरियट अथवा डायरेक्टर महोदय की ओर से इस प्रकार का कोई आदेश जारी नहीं हुआ। साथ ही यह भी पता चला है कि असिस्टेंट डिस्ट्रिक्ट इन्सपेक्टर आफ स्कूलज अमृतसर ने अपना वह आदेश वापिस ले लिया है और चिट्ठी नं. ६६१/६७ तिथि २६. ३. ६३ के द्वारा स्कूलों को कह दिया गया है कि अभी पुरानी नीति पर ही काम चलेगा।

हिन्दी प्रेमी भाइयों को जहां इस से सन्तोष होना ताना चाहिए वहां वे सावधान भी रहें और देखें कि स्कूलों में नए प्रवेश में किसी प्रकार भी पुरानी सरकारी नीति में भेद न होने पाए।

सन्तोषराज मन्त्री सभा

डी० ए० वी० कालिज अबोहर का पारितोषिक वितरणोत्सव

१७ मार्च १९६३ को डी० ए० वी० कालिज अबोहर का तीसरा पारितोषिक वितरणोत्सव श्री डा० मेहरचन्द जी महाजन प्रधान डी० ए० वी० कालिज कमेटी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सबसे पूर्व श्री प्रिंसिपल महोदय व कुमारी सुवर्षा ने संस्कृत में प्रधान जी का स्वागत किया। तत्पश्चात् श्री ग्रोवर जी ने कालिज की वार्षिक रिपोर्ट पढ़ी।

डा० मेहरचन्द जी ने अपने कर कमलों से छात्रों को तकसीम इनामात किया तथा अध्यक्षीय भाषण में कहा कि यह कालिज बड़ी तीव्रगति से उन्नति कर रहा है। स्व० हंसराज जी ला० लाजपतराय जी रायबहादुर लालचन्द जी आदि महानुभावों ने अपना खून पसीना एक करके तथा घर घर में झोली फैला २ कर धन अर्जित करके जिस संस्था की नींव रखी थी आज उसकी अनेक शाखाएं देश के कोने-कोने में फैल गई हैं। इन संस्थाओं के अध्यापक प्राध्यापक वर्ग त्याग की भावना से और अपने पवित्र विचारों से संस्थाओं का नाम उज्जवल कर रहे हैं। आरम्भ में इस कमेटी के पास उन्नति करने का कोई साधन न होते हुए भी इसके संस्थापकों ने इसे सफल बनाने में पूर्ण यत्न किया। जिसका परिणाम यह हुआ कि आज इस कमेटी के आधीन हजारों स्कूल कालिज चल रहे हैं।

ग्रोवर जी ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि 2½ लाख रु० दान और 2 लाख रु० म्यूनिसिपल कमेटी व मार्कीट कमेटी की ओर से सहायता मिली है।

इस अवसर पर चौ० रत्तिराम जी बरयामखेड़ा निवासी ने अपने भाई चौ० लेखराम जी वृद्ध की पुण्य स्मृति में कालिज में एक कमरा बनवाने के लिए 10000/- रु० दान दिया। तथा लोकल आर्यसमाज ने 10000/- दयानन्द स्मारक ट्रस्ट वास्ते दान दिया।

श्री चाननलाल जी आहूजा ने स्वामी दयानन्द जी लिखित ग्रन्थ कालिज लायब्रेरी वास्ते भेंट किए। राय साहब कुन्दनलाल जी आहूजा ने प्रधान जी का इस अवसर पर पधारने का धन्यवाद किया। कौमी गीत के साथ जलसा समाप्त हुआ।

एम० डी० ग्रोवर प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज

दयानन्द माडल स्कूल दयानन्द नगर जालन्धर

मे १९ अप्रैल १९६३ को पूज्य स्व० महात्म हंसराज जी के शुभ जन्म दिवस पर खुल रहा है। आज पश्चिमी शिक्षा की ओर झुकाव बढ रहा है। संरक्षकों की इस मांग को पूरा करने के लिए डी. ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी चित्रगुप्त रोड़ देहली सदैव की भाति जागरुक है और वह माडल स्कूल नई देहली भटिंडा, अबाला, और चडीगढ मे खोल चुकी है। अब इसी प्रकार का उत्तम स्कूल जालन्धर में खुल रहा है। बच्चों को अच्छी शिक्षा देने के लिए संरक्षक अपने बच्चों को यहां दाखिल करायें

संतोष राज

मन्त्री आर्य प्रादेशिक सभा

कठोपनिषद् का सारांश (पृष्ठ २ का शेष)

वर्तते हैं और इसका भिन्न-भिन्न परिणाम होता है। ध्यान अथवा समाधि सब से उत्तम साधन है।

२ मनुष्य अपनी योग्यता ए' रुचि के अनुसार ब्रह्म को भिन्न २ रूपों में देखते हैं। सारांश

१ वह लोग जो सदा बाहर के विषयों में लिप्त रहते हैं इंद्रियों को अपना सेवक नहीं बल्कि स्वामी समझते हैं, संसार के सुखों के पीछे ही भागते रहते हैं, वे जन्म मरण के चक्कर में फंसे रहते हैं।

२ वे लोग जो अन्तर्मुखी होते हैं, इन्द्रियों के सेवक नहीं होते, उनके विषयों के पीछे नहीं दौड़ते वे अमृत पान करते हैं, मुक्ति के अधिकारी बनते हैं।

३ हमें अपनी मानसिक वा आत्मिक शक्तियों का नियन्त्रण और आत्मिक शक्तियों का विकास करना चाहिये। उन्हें संयम में रख आत्मतत्व के अनुभव करने का साधन बनाना चाहिये।

४ ध्यान की या समाधि अवस्था को पहुंचे हुए या ऐसे दार्शनिक लोग जिनका ज्ञान केवल इंद्रिय जन्य नहीं बल्कि मनन चिन्तन और दर्शन का फल होता है, ब्रह्म का वास्तविक स्वरूप देख सकते हैं।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित व आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मासिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब।

ओ३म्

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब

महात्मा

आर्य जगत का



हंसराज अङ्क

त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज जी

अधिष्ठाता - संतोषराज
मन्त्री सभा

मूल्य २५ नए पैसे

सम्पादक—त्रिलोकचन्द्र शास्त्री
महोपदेशक सभा

❀ ओ३म् ❀

आर्य जगत्

का

—महात्मा हंसराज अंक—

१६ अप्रैल १९६३ तदनुसार ७ वैशाख २०२०

वर्ष २३] १४, २१ अप्रैल १९६३, २ बैशाख, ९ वैशाख २०२० [अंक १५-१६

वेदामृत का पान

ओ३म् यदंग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि । तवेत्तत्सत्यमंगिरः ॥

हे परम प्यारे ! जीवन के आधार परमेश्वर ! जो अपने आप को आप के अर्पण कर देता है, अपना जीवन तेरी भेंट कर देता है। अपनी सारी आयु प्रसाद को लेकर तेरे समर्पण किया करता है। हे सारे विश्व के नायक ! ऐसे व्यक्ति का, दानी तथा पूजन, वंदन करने वाले का सदा ही आप कल्याण किया करते हो। उसका निरन्तर मंगल मांगल्य ही सम्पादन करते हो। ऐसा आप का सनातन, सत्य नियम बना हुआ है। जो आप का परम भक्त हो जाता है उसके आप सुखदाता, परित्राता बनते हो।

हे परमदेव ! आप का आज के भोले भक्त पता नहीं क्या-क्या रूप बना कर जगत् की भौतिक वस्तुयें भेंट करते हैं। अपने भ्रम और अज्ञान का ही परिचय दे रहे हैं। आप तो अरूप, विश्वरूप, अनन्त रूप हो। आप की मूर्त्ति, प्रतिमा कैसी ? चढ़ावा कैसे चढ़ाया जाए ? भक्तों की कितनी भ्रांति है। दिव्य जीवन के भक्त, आप के उपासक तो अपना सारा जीवन ही आप की भेंट कर देते हैं। भक्तिमय भावमय होकर श्रद्धा, सेवा, साधना में प्रवीण हो जाते हैं। उनका जीवन विश्व सेवा के अर्पण हो जाता है। महात्मा बन जाते हैं। परमेश्वर ! हमें भी यही यज्ञभावना दो। हमारा जीवन भी परोपकार मय बन जाये। जीवन दान करते रहें।

—सम्पादक

सम्पादकीय—

आर्यों का देव यज्ञ

आर्य समाज वैदिक परम्परा के अनुसार पांच महा-यज्ञों को जीवन मे आवश्यक मानता है। उन मे देवयज्ञ भी शामिल है। यज्ञ हवन को देवयज्ञ कहते हैं वहा समाज राष्ट्र के यज्ञमय जीवन वाले महा मानवों को भी देव की संज्ञा दी जाती है। जिन का जीवन परोपकार मय, सेवामय तथा विश्व मय होता है, उन्हें देव कहा है। जो देता है स्वयं प्रकाशित हो कर दूसरों को प्रकाश देता है। आचार, विचार, व्यवहार में उन्नत होता है—उसे देवता का नाम दिया जाता है। ऐसे देवों का पूजन देवयज्ञ या देव पूजा है। पूजा का अर्थ उन के किये गये पवित्र कार्यों का सम्मान करना उन को जनता तक पहुचाना तथा उन का स्मृति दिवस मना कर उन के जीवन सम्बन्धी दैवी गुणों को निजी जीवन में धारण करना होता है।

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी एक आदर्श, ऊंची कोटि के दिव्य गुणों वाले देव थे। उन का सारा जीवन समाज के लिए था। राष्ट्र सेवा, शिक्षा, लोक सेवा, धर्म प्रचार आदि के क्षेत्र में महात्मा जी का जो विशिष्ट स्थान है। उसे कौन नहीं जानता। समाज की सेवा में अपने यौवन की समिधा बना कर भेंट कर देना क्या सरल कार्य है? आज भारत में शिक्षा की जो विशाल, व्यापक धारा एक कोने से दूसरे कोने तक प्रवाहित हो रही है। उस का महान स्रोत स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी ही थे। तीन प्रकार की लोकैषणा, वित्तैषणा, पुत्रैषणा एषणाओं में कोई भी उन के जीवन को छू तक नहीं सकी। कमल पत्र के समान सारी आयु समाज मे रह कर बिता दी पर क्या मजाल भौतिकता, भोगों तथा प्रलोभनों आकर्षणों का थोड़ा सा जल भी उन को छू तक सका हो। सारी उमर निर्लेप रहे। राजनीति के बड़े प्रलोभन आये किन्तु उन का एक ही उत्तर था कि हंसराज के पास एक ही शरीर, मन तथा आत्मा है, सो वह तो समाज धर्म सेवा की भेंट कर दिया है। अब दूसरे काम के लिए मैं शरीर व मन कहा से लाऊं। उस देव का कितना सुन्दर उत्तर था।

उन की स्मृति का हम देवयज्ञ मना रहे हैं। अपने जीवन में उन के समान समाज सेवा का व्रत, धर्म प्रचार श्रद्धा धारण करें। अगले वर्ष अप्रैल १६६४ को उन के सौ वर्ष जन्म के होंगे। आर्य प्रादेशिक सभा व दयानन्द कालेज कमेटी मिल कर उन की जयंती मना कर देवयज्ञ समारोह करने की अभी से तैयारी करें—त्रिलोक चन्द

आर्यसमाज और राजनीति

(श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी संसत्सदस्य घरौंडा)

'आर्य जगत्' के महात्मा हंसराज विशेष अंक के लिए अपना विशेष सन्देश दिया है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती तथा उनके निष्ठा वाले शिष्यों ने लोक जागरण के लिए जो महान् कार्य किया वह अभूतपूर्व है। छूतछात को दूर करने, शिक्षा प्रसार करने तथा अन्ध विश्वास हटाने में जो कार्य आर्यसमाज ने किया एवं वतमान युग में कर रहा है, वह सारे देश के सामने है। आज जीवन के विविध क्षेत्रों और राष्ट्र की कल्याणमयी योजनाओं में जितनी भी चेतना, प्रेरणा व प्रगति हो रही है, उसका सारा श्रेय आर्यसमाज को ही है। ऋषि दयानन्द के आदर्श पथ पर चलने वाले पुरातन युग के समाज के नेताओं ने जितना तप, त्याग, बलिदान और अद्भुत निष्ठा का परिचय दिया, उसी का ही परिणाम है कि आज भारत अपने जीवन को उन्नत कर सका है। स्वर्गीय महात्मा हंसराज सरीखे तपस्वी, सन्त प्रकृति के समाज के प्रति किये गये भारी उत्सर्ग ने जनता को नई शक्ति प्रदान की। यह सब कुछ होता हुआ भी हमारे सारे काम इस लिए अधूरे रह गये, क्योंकि आर्यसमाज राजनीति से दूर रहा। यह बात सुनते हुए बड़ा आश्चर्य होता है कि समाज के वर्तमान नेता लोग एक ओर तो यह कहते और लिखते हैं कि कृण्वन्तो विश्वमार्यम्—सारे संसार को आर्य बनाना समाज का विशाल कार्य होना चाहिए। साथ ही वे आर्य समाज को राजनीति से दूर रहने का उपदेश देते हैं। मुझे ऐसे नेताओं पर सन्देह होता है कि वे समाज के नेता हैं भी या नहीं?

जब आप सारे संसार को आर्य बनाना चाहते हैं तो क्या लोक सभा व प्रांतीय सभा को आर्य नहीं बनाना चाहते। क्या ये विश्व से पृथक् हैं? विश्व के सभी मजहब प्रायः राज्य के सहारे बढ़े तथा फैले हैं। वैदिक धर्म भी जब तक आर्य राजाओं का धर्म रहा, तब तक धर्म का प्रचार, प्रसार रहा। जब से राजा विधर्मी होते रहे तब से हमारा ह्रास होता गया। यदि आज भारत के मान्य राष्ट्रपति जी व प्रधानमन्त्री जी दृढ़ आर्यसमाज के विद्वान् होते, तो आर्यसमाज को बड़ी शक्ति मिलती। अतः शासन भी अवश्य रहेगा। हम ने राय भी अवश्य देनी है और कोई न कोई बनेगा भी। यदि वह चुना हुआ वैदिक धर्म का हो तो हमारे लिए गौरव होगा। अतः समाज को इस में सक्रिय भाग लेना चाहिए। महात्मा जी के दिवस पर इस पर गम्भीर विचार होना चाहिए।

—०—

ऋषि के अनन्य भक्त हंसराज

(श्री स्वामी भीष्म जी महाराज सरस्वती)

श्री स्वामी भीष्म जी आर्य समाज के प्रसिद्ध पुराने संन्यासी हैं। पंजाब में हरियाणा में भारी कार्य किया। आप का शरीर तथा प्रचार कार्य दोनों ही प्रभावशाली हैं। आप ने बीसियों शिष्य प्रचारक बना कर आर्य समाज को दिये तथा अब भी दे रहे हैं। स्वर्गीय महात्मा जी के बारे में अपना संस्मरण सन्देश दिया है—

— —

महात्मा हंसराज जी आर्य समाज के महान नेता थे। आप का त्याग, तप, सरलस्वभाव तो वस्तुतः आदर्श कमाल के थे। शिक्षा के प्रसार क्षेत्र में जितना भी आज भारत में दयानन्द शिक्षण संस्थाओं का विशाल जाल बिछा हुआ है, इस के अग्रणी महात्मा जी ही थे। आप तीनों ऐषणाओं से सर्वथा मुक्त थे। इन में से कोई भी एषणा उन को जीवनपर्यन्त न बांध सकती थी और न ही बांध सकी सदेह होते हुए भी आप विदेह थे। जीवन अत्यन्त सरल किन्तु विचार तथा प्रभाव बहुत ऊंचा था। बड़े से बड़ा प्रलोभन, आकर्षण आप को तनिक भी विचलित न कर सका। सचमुच महात्मा थे।

महात्मा हंसराज जी ऋषि दयानन्द जी सरस्वती के अनन्य भक्त थे। ऋषि के प्रति श्रद्धा तो सारे जीवन में कूट २ कर भरी थी। मुझे आप की ऋषि भक्ति का अन्तस्तल से निकला हुआ दिया हुआ उत्तर आज भी याद है और मेरे कानों में गूंजता रहता है। विलायत से जब नेत्र बनवा कर वापस लौटे तो मैंने हरिद्वार में मोहनाश्रम में आप के दर्शन कर के पूछा कि महात्मा जी! क्या आप ने महर्षि दयानन्द जी के दर्शन किये थे? तो मेरा प्रश्न सुन कर आप ने बड़ी गम्भीरता से मेरी ओर देख कर उत्तर दिया भीष्म जी! यदि मैं स्वामी जी महाराज के दर्शन कर लेता तो फिर मुझे अपने नेत्रों को बनवाने के लिए विलायत जाने की आवश्यकता न पड़ती जो ऋषि दयानन्द के दर्शन कर लेता था वह सचमुच उन के उपदेशामृत पान कर के दिव्य जीवन तथा ज्योतिर्मय नेत्रों वाला हो जाता था।

महात्मा हंसराज जी सचमुच राम युग के महामानव थे। उन का सारा जीवन एक शानदार खुली हुई पुस्तक है। जो भी इस पुस्तक का कोई पृष्ठ पढ़ लेता है अपने जीवन में बहुत कुछ पा लेता है। आर्यों को इस दिन अपने जीवन में इन का तप, त्याग सीखना चाहिए।

महात्मा हंसराज जी

[ले०—स्वामी सोमानन्द जी सरस्वती गुरदासपुर]

महर्षि दयानन्द के पश्चात धार्मिक, सामाजिक और शिक्षा जगत में जिन महापुरुषों ने महा न कार्य किया, उनमें महात्मा हंसराज जी मुख्य थे।

लाहौर आर्य समाज में ऋषि के स्मारक में कालिज बनाने का निश्चय हुआ, उसी समय ला० हंसराज जी ने बी० ए० पास कर लिया था, पंजाब भर में आप दूसरे नम्बर पर रहे, उस समय ग्रेजूएटों (Graduates) की संख्या उंगलियों पर गिनी जा सकती थी, उस समय विविधि उन्नति के मार्ग आप के सामने थे, लोग कह रहे थे, हंसराज माता पिता की गरीबी दूर कर देगा, परन्तु आप अपना जीवन परोपकार में लगाना चाहते थे। अपने बड़े भाई से सलाह की, ला० मुलकराज जी ने हंसराज के सारे परिवार का भार अपने ऊपर ले लिया।

लाहौर आर्य समाज का आठवां वार्षिक उत्सव आया आप ने समाज की वेदी से घोषणा कर दी कि मैं अपना सर्वस्व (जीवन) आर्य समाज की वेदी पर चढ़ाता हूं, आर्यों में इस घोषणा पर एक नवीन उत्साह पैदा हो गया, और जोश की लहर दौड़ गई।

१८८५ ई० के जून मास में डी० ए० वी० हाई स्कूल लाहौर की स्थापना हुई, ला० हंसराज जी आनरेरी (Henraiy) हैडमास्टर बनाए गए, उन दिनों लाहौर गवर्नमेंट स्कूल का हैडमास्टर स्टेन (Stain) नामक अंग्रेज था, उसने कहा, कि यह मूर्ख पगड़ी वाला लड़का क्या हाई स्कूल चला सकेगा, परन्तु आप ने शीघ्र ही अपनी योग्यता, प्रबन्ध शक्ति और कार्यकुशलता का परिचय देकर उसकी भ्रान्ति को निर्मूल कर दिया, स्कूल की इतनी उन्नति हुई, कि दो वर्ष में ही कालिज बन गया। १८८८ ई० में एफ० ए० क्लास आरम्भ हो गई आप हैडमास्टर से प्रिंसिपल बना दिये गए, १८६० ई० में बी० ए० और पश्चात एम० ए० की क्लासें भी आरम्भ हो गईं।

धर्म प्रचार की लग्न

महात्मा हंसराज जी कालिज के प्रिंसिपल होते हुए भी एक अच्छे प्रचारक थे, आर्य मिशनरी बन कर वार्षिक उत्सवों पर घूमते थे, नित्य धार्मिक साहित्य का स्वाध्याय करते रहते थे।

स्त्रियों की शिक्षा के लिए महिला विद्यालय की स्थापना की, १८८८ ई० में आयुर्वेदिक कालिज खोला, जिस समय यह खुला, नितान्त एक नूतन वस्तु था।

१८८६ से १८११ ई तक २५ वर्ष का जीवन इस त्यागी, तपस्वी ने दयानन्द वैदिक स्कूल व कालिज के अर्पण किये रखा।

जन सेवा

१८६५ ई में बीकानेर के अकाल में पहुंच

पीड़ितों की सेवा करते रहे, १६०५ ई० में कांगड़ा भूकम्प में पीड़ितों की भारी सहायता की, १६१८ ई० में गढ़वाल में भयङ्कर अकाल में, १६१६ ई० में छत्तीस गढ़ (दुर्ग) १८२० ई में जगन्नाथ पुरी (उड़ीसा) के अकाल पीड़ितों की बड़ी प्रशंसनीय सहायता की।

१६२१ ई में मालाबार के हिन्दुओं पर बड़ी भारी मुसीबत आई, धर्मान्ध मुसलमानों द्वारा दो हज़ार हिन्दु तलवार के घट उतार दिये गए, अढ़ाई (2½) हजार की चोटियां साफ कर दी गईं और हज़ारों पतिव्रता देवियों का बलात सतीत्व नष्ट किया गया, ऐसे भीषण अत्याचार के अवसर पर बहुत दूर दिक्षण में हिन्दू जनता की सहायता के लिये आप ने भारी काम किया। १६२४ ई में कोहाट बरबाद हो गया और मुज़फ़र गढ़ जिला में बाढ़ आ गई, सभी अवसरों पर गरीब, दुःखी पीड़ितों की सहायता के लिये दर्द दिल रखने वाला त्याग, तपस्या व सादगी का देवता हंसराज पहुंचता रहा। १६३४ ई० व १६३५ ई० बिहार, क्वेटा में बड़े भयङ्कर भूकम्प आए वहां आप की सहायता का हाथ पहुंचा।

ऊपर लिखित पीड़ित, दुःखियों व निराश्रितों की सेवा तथा सहायता का सुअवसर इस सेवक को भी महाराज देते रहे।

ऐसे दर्द दिल रखने वाले महान पुरुष के लिये कवि का कथन है।

इक हूक सी दिल में उठती है इक दर्द जिगर में होता है।

हम रात को उठकर रोते हैं जब चैन से आलिम सोता है॥

आप के इन महा कार्यों न के फल स्वरूप जनता ने आप को महात्मा पद से सम्मानित किया, जिस के आप सर्वथा अधिकारी बन चुके थे।

रोगियों की सेवा

कालिज विद्यार्थी प्लेग से रोगी, स्वयं जा जा कर देखते, दवाई देते ला. साईं दास जी तपेदिक से रोगी हो गए, अपने साथ काशमीर ले गए आप की सेवा ने उन्हें बचा लिया, पं मेहर चन्द जी भी तपेदिक के रोगी हुए, अपने मकान पर ले गए, पंडित जी के मुंह का खून स्वय पोंछते, हाथों से बलगम निकालते। मैं स्वयं तपेदिक का रोगी हुआ, एक बार हरियाना जिला होशयार पुर में अति भयङ्कर रोग से रोगी हुआ दोनों अवसरों पर आप ने जहां मेरा इलाज कराया वहां हर प्रकार से सहायता की।

सादगी

आप प्रायः रेलवे के तीसरे दर्जे में यात्रा करते थे अपना बिस्तरा भी कई बार स्वय उठा लेते थे, टांगा पूरा न कर एक या दो आने देकर दूसरी सवारियों के साथ ही बैठ जाते थे, गरीबों की भांति गाजरें व मूलियां बड़े आनन्द से खाते थे, प्यास लगी तो हाथों को मिलाकर पानी पी लिया, देसी प्रायः बजवाड़ा का बना जूता, सस्ती से सस्ती साधारण सोटी रखते, बन्द गले का कोट, साधारण पाजामा, सारा शीत दो जुराबों से गुजार देते, आप सादगी के देवता थे।

महाराज जी की सादगी का ही परिणाम था, कि कालिज पार्टी अपने हिसाब-किताब में अद्वितीय मानी जाती रही है।

महात्मा हंसराज जी शिक्षा के क्षेत्र में

(ले.—श्री सूर्यभानु जी एम. ए., वाईस चांसलर, कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी)

विदेशी राज्य ने भारत पर अनेक वज्रपात किये थे। उन सब में अत्यन्त भयानक था, भारत की शिक्षा को नष्ट-भ्रष्ट करना, उसकी विचारधारा को समूल उखाड़ फैंकना, उसकी संस्कृति तथा सभ्यता से उसे काट देना। इसी प्रयत्न की पूर्ति के लिए उनका मिशन था। मिशनरी व उनके धर्मप्रचारक भारतीय जनता को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए अनेक षड्यन्त्र रच रहे थे। उनके पास उस जाल के फैलाने के लिए भरपूर साधन थे। राज्य बल था, धन था, उनके प्रयोग की बुद्धि व निपुणता भी थी।

ईसाइयों ने भारत में चिकित्सालय खोले थे, दीनों व अनाथों की पालना के लिए अनाथालय चलाये थे। युग की मांग तथा अंग्रेजों की नीति द्वारा निश्चित पाठ्यक्रम के अनुसार स्कूल तथा कालिजों का जाल सा बिछा दिया था। इन्हीं साधनों की आड़ में उनका निरन्तर प्रयत्न चला करता था; कि जिस से उनके धर्म की संस्कृति की तथा सभ्यता की भावना का प्रचार होता चले। आरंभ में उनका यह प्रयत्न सुफल हुआ। देश की जनता शासन में नौकरी व मान के लाभ से नई शिक्षा की ओर आकर्षित हो रही थी। सभी वर्गों के धनी-निर्धन युवक इन विद्यालयों में पढ़ने आते थे। वहां पादरी के भाषणों से; भविष्य की उन्नति के प्रलोभनों से उनके जालों में फंस जाया करते। सैंकड़ों नहीं सहस्रों भारतीय परन्तु इसी प्रकार लुट गए। विदेशियों से मिल कर वे और भी देश के अहित में सहायक बने।

युवक 'हंसराज' स्वयं लाहौर के मिशन स्कूल में अपनी मित्र-मण्डली के साथ विद्या प्राप्त करता रहा। उसे आर्य-समाज के सम्पर्क से अपनी उच्चता की चेतना मिल चुकी थी। वहां अपने देश व जाति की दुर्दशा देख उसे बड़ा दुःख होता था। कई बार

दूसरों को उन्नत देख कर, अपने आधीन कार्यकर्ताओं की उन्नति देखकर प्रसन्न होते थे।

धन का त्याग, बेगानों को अपनाना, हिन्दी प्रचार की लग्न आदि आप के विशेष गुण थे।

हंसराज क्या थे

सच्चे कर्म योगी, तपस्वी थे, त्याग के जीविन उदाहरण थे, ऋषि दयानन्द के भक्त थे, आर्य-समाज के सरगरम मिशनरी थे, वह प्रभु भक्त थे, प्राचीन सभ्यता के शैदाई थे, शुद्धि व हिन्दू-संगठन के पूर्ण सहायक थे, दीन, दुखियों के गमख्वार थे वह रोशनी के स्तम्भ थे, उन्होंने आर्य जाति (हिन्दू जाती) की नौका को कई भंवरों से निकाला।

आप की मृत्यु पर अंग्रेजी समाचार पत्र ट्रीब्यून (Tribune) ने पहले पृष्ठ पर सुर्खी (Heading) दी थी—The maker of modern Punjab passes away.

उस वीर को पादरियों से भी उलझना पड़ जाता। किन्तु इसका सुलझाव क्या हो, यही वह मन ही मन सोचा करता।

आज के युग में बी. ए., एम. ए. व इस से भी बड़ी-बड़ी उपाधियां डाक्टरेट भी साधारण जान पड़ती है। बीसियों व्यक्तियों को हम साधारण-पदों की प्राप्ति के लिए भटकते देखते हैं। किन्तु युग था, बी. ए. एक बहुत बड़ी मान की उपाधि थी। उस व्यक्ति को बड़े से बड़ा पद व ऊंचा सम्मान मिल जाता था। युवक हंसराज ऐसे युग में इस सम्मान को प्राप्त कर गया। छोटा सा डी.ए.वी.स्कूल प्रारम्भ किया जा चुका था। मित्र-मण्डली ने, उन की अपनी आत्मा की पुकार ने उन्हें कर्तव्य पथ की ओर ललकारा। हंसराज ने उस ललकार को सुना। प्रलोभनों को त्याग कर यह वीर इस दीनता और सेवा के मार्ग पर दृढ़ता से आगे बढ़ा।

मन की वृत्तियों पर विजय पाना कोई सरल बात नहीं है। फिर परिवार का विरोध, मित्रों का भी रोड़े अटकाना, देशवासियों का बाधाएं देना, राज्य-बल की उलझनों से जूझना, आर्थिक संकट, सहायकों का अभाव-प्रभु भरोसे तथा कुछ सच्चे मित्रों के उत्साह से वे उन सभी कष्टों को पार कर गए।

वे पहले हैडमास्टर बने। पश्चात डी. ए. वी. कालिज के प्रिंसिपल बने। उन्होंने जिस प्रेम से देश के युवकों को विद्या पढ़ाई, चरित्र की शिक्षा दी, देश-प्रेम का पाठ पढ़ाया, अपनी संस्कृति व अपनी सभ्यता की उच्चता का उन्हें ज्ञान कराया, यह आज का युग इस बात का प्रमाण है। उन्हीं की तपस्या से यह शिक्षा का विशाल वृक्ष फला-फूला है। सारे भारत में उसकी शाखाएं तथा उपशाखाएं फैली हैं। देश की स्वतन्त्रता के यज्ञ में हंसते-हंसते अपनी आहुति देने वाले वीर इसी वृक्ष की छाया में फले-फूले। भारत के निर्माण में सहायक, न्यायाधीश, उच्चाधिकारी, वीर सैनिक, व्यापारी, इंजीनियर व दूसरे सभी क्षेत्रों के योग्य पुरुष, उन्हीं के परिश्रम से लगाए विशाल शिक्षा-केन्द्रों में सुशिक्षित हुए हैं।

फिर वे एक योग्य अध्यापक थे। उनकी दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण थी। वे युवकों की शक्तियों का आभास पाकर उन्हें उत्साहित करते थे। उन्हें सदा सहायता देकर ठीक मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते थे। बच्चों में कौन क्या बन पाएगा, की गम्भीर खोज करके, उन्हें वे वैसे ही साधन जुटाते थे। उन्हीं युवकों में से वे कईयों को अपना साथी चुन लेते थे। उन्हें अध्यापक, प्रोफैसर व दूसरे पदों पर नियुक्त कर देश-सेवा के कार्य का क्रम निरन्तर चलाने में सफल होते थे।

उनका हृदय एक ओर शांत, संतुष्ट, विशाल तथा संसार के प्रलोभनों से विरक्त था, दूसरी ओर मानवता के अनोखे गुणों से पूर्ण था। साथी उन के बन्धु से बढ़ कर थे किसी को दुःखी देख वह चुप न रह पाते थे। उसकी भरपूर सहायता करते थे। आप गृहस्थी होकर भी एक तपस्वी थे। उन के दर्शन कर बड़े-बड़े व्यक्ति श्रद्धा से उनके लिए अपनी पलकें बिछा दिया करते थे। उन में अपार-क्षमता एवं क्षमा थी। अपने युवकों को भी वे प्यार व निष्ठा के बल से सुधार लेते थे। अधीनस्थ कर्मचारियों को भी अपने मधुर-वचनों से वे मोह लेते थे। शिक्षा के उत्तम अनुभव व सुझाव उनके सामने रख देते थे। उनकी भक्ति, प्रेम, उदारता और

सरस्वती के पुजारी महात्मा हंसराज जी

[ले०—श्री भीमसेन जी बहल एम.एस.सी., प्रिन्सिपल डी.ए.वी. कालेज जालन्धर]

संसार में प्रत्येक मनुष्य का एक ही लक्ष्य माना जाता है कि वह पहिले मनुष्य बने और उस के उपरान्त देवत्व की ओर बढ़ चले। किन्तु देवत्व प्राप्त कैसे हो ? वेद भगवान ने देव बनने के अनेक साधन बताए हैं। ऋषियों ने भी उनका अनुसरण करके मनुष्य को मनुष्य कोटि से ऊपर उठाकर देव-दिव्य गुण युक्त बनने के कई विधि विधान लिखे हैं। ऋग्वेद के दशम मण्डल के सत्रहवें सूक्त के सातवें मन्त्र का एक चरण है—

सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते

अर्थात्—सरस्वती को देवत्व की कामना करने वाले (मानव) बुलाते हैं। इसका सीधा भाव यही है कि जो मनुष्य सरस्वती की पूजा (विद्या का आदर) करते हैं वे देव कोटि में पहुंच जाते हैं।

भारत में इसी लिए विद्यादान सभी दानों और कर्मों में श्रेष्ठ समझा जाता है। आचार्य का सम्मान राष्ट्र में ईश्वर से दूसरे स्थान पर माना जाता रहा है क्योंकि आचार्य ही शिष्य में वह बौद्धिक शक्ति और सामर्थ्य पैदा करता है कि जिस से वह इस समस्त संसार को अपने ज्ञान से पार करता हुआ, देव श्रेणी में पहुंच, अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

इसी आचार्य परम्परा में पंजाब प्रदेश में जिला होश्यारपुर के बिजवाड़ा कस्बे में, १६ अप्रैल १८६४ ई० को प्रातः उषःकाल के पुनीत समय देव श्रेणी को गौरवान्वित करने वाले, स्वनामधन्य श्री पूज्य महात्मा हंसराज जी ने जन्म धारण किया। बचपन से ही उन में दिव्य गुण अपनी अपनी प्रखर किरणों से चारों ओर के वायुमण्डल को प्रकाशमान किए रहते थे। विद्यादान का पुनीत कार्य वह प्रारम्भ से ही दूसरों की सहायतार्थ करते थे। एक बार का प्रसंग है कि जब महात्मा जी प्राइमरी कक्षा में ही पढ़ते थे, उस समय एक वृद्धा ने उन्हें एक पत्र पढ़ने के लिए दिया। महात्मा जी की

तन्मयता पर उनके कट्टर शत्रु-मुसलमान अंग्रेज व दूसरे मतों के बड़े अधिकारी भी मुग्ध हो जाते थे।

डी० ए० वी० नाम आज शिक्षा के रूप में बड़ा लोकप्रिय हो चुका है। जनता पूर्ण विश्वास के साथ अपने बच्चों व युवकों को इन संस्थाओं में भेजती है। अनेकों त्रुटियों व अपूर्णताओं के होते हुए भी आज केवल पंजाब में ही नहीं, प्राय. समूचे भारत में जो सम्मान इस संस्था को प्राप्त है, उसके मूल में महात्मा हंसराज जैसे महापुरुषों की आत्माओं का तप तथा बलिदान छिपा हुआ है। आज जनता को मिल कर जहां उस महात्मा को श्रद्धाञ्जलि भेंट करनी है, वहां सभी को यह पुण्य भी करना है कि हम भी इस विशाल संस्था के प्रति अपना कर्तव्य निभाकर उनकी स्मृति को अमर बनाने में सहायक बनें।

माता जी ने बीच में ही रोक कर कहा, 'हंसराज! तू दूसरों के ही खत पढ़ा करता है, अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान क्यों नहीं देता?' उस समय महात्मा जी ने विनम्रता पूर्वक कहा था, 'माता जी! फिर पढ़ने का लाभ ही क्या है?' यह है देवत्व का वास्तविक लक्षण!

महात्मा जी के जीवन को यदि एक वाक्य में कहना हो तो उपयुक्त वेदमन्त्र के अनुसार कहा जा सकता है कि वे आयु पर्यन्त सरस्वती (विद्या) की पूजा करते और कराते रहे हैं। उन्हीं की अपूर्व कृपा का फल है कि आज पंजाब भारत भर में शिक्षा और विद्या की दृष्टि से किसी भी अन्य प्रांत से पीछे नहीं अपितु यदि मैं सर्वोपरि भी कह दूं तो अत्युक्ति न होगी।

प्रत्येक दृष्टि से, महात्मा जी वर्तमान पंजाब के निर्माता थे। महात्मा जी के जन्म के समय पंजाब एक पिछड़ा हुआ प्रांत था। बङ्गाल ही शिक्षा का केन्द्र था। सामाजिक सुधार आंदोलन (ब्रह्म समाज और देवसमाज के रूप में) उसी प्रांत में प्रारम्भ हुआ। भारत में सर्वप्रथम विलियम कालेज कलकत्ता भी बङ्गाल में ही खुला।

१८८३ में महात्मा हंसराज के साथ केवल २० ग्रेजुएट पंजाब यूनिवर्सिटी से पास हुए थे। माध्यमिक शिक्षा का सारा प्रबन्ध भी राज्याधीन ही था। उस समय की पंजाब यूनिवर्सिटी की सीनेट में एक भी व्यक्ति आर्य समाजी न था, और साथ ही भविष्य में भी कोई ऐसी आशा न की जा सकती थी कि आर्यसमाज कभी भी शिक्षा के कार्य में कोई भाग लेगा।

किन्तु ५० वर्षों में ही पंजाब की कायापलट गई। यह सब पूज्य महात्मा हंसराज जी के पुनीत पुरुषार्थ का ही फल था। दयानन्द कालेज लाहौर की स्वर्ण जयन्ती की रिपोर्ट में लिखा गया था कि—"१८८६ में जो एक छोटा-सा बीज बोया गया था वह आज एक महान् वटवृक्ष का रूप धारण कर गया है जिस की पुनीत छाया में लाहौर में ५००० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। इसके अतिरिक्त ५०,००० लाहौर के बाहर की आर्य शिक्षण संस्थाओं में प्रविष्ट हैं जिसके लिए लगभग ३००० अध्यापक नियुक्त हैं। १९३६-३७ में डी० ए० वी० कालेज लाहौर और उससे सम्बद्ध संस्थाओं का वार्षिक व्यय ४,५०,००० रुपये था। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों पर स्थापित स्कूलों, कालेजों व गुरुकुलों का कुल वार्षिक व्यय लगभग १५,००,००० था। अकेली लाहौर की दयानन्द कालेज सोसाइटी के साथ सम्बद्ध सम्पत्ति का अनुमान १२,००,००० रुपया था।"

सोसाइटी को गर्व है कि उस समय तक डी० ए० वी० कालेज लाहौर ने ही अकेले २५८६ ग्रेजुएट निर्माण किए। जालन्धर और कानपुर के ग्रेजुएट जिनकी संख्या १०९३ थी, इससे पृथक् थे। आयुर्वेदिक कालेज और टेक्नीकल कालेज के विद्यार्थियों की संख्या इस से पृथक् थी।

यही नहीं डी० ए० वी० संस्थाओं ने अपने प्रांत में जन्मे, पले और पढ़े विद्यार्थियों को सारे भारत के उच्च से उच्च पदों पर जाने का सुअवसर प्रदान किया। बड़े २ डी० ए० वी० छात्र, इंजीनियर, जज, मैजिस्ट्रेट, पुलिस अफसर सभी कुछ बने हैं।

महात्मा हंसराज तथा आर्य्य समाज

(ले.–श्री म० देवी चन्द्र जी M.A. होशियारपुर)

महात्मा हंसराज जी आर्य्य समाज के उच्च कोटि के नेता थे। उनका त्याग अपूर्व था। समस्त आयु पर्यन्तु एक कौड़ी समाज से प्राप्त किये बिना अनथक सेवा ऋषि दयानन्द के मिशन की वह करते रहे। सरलता की वह मूर्ति थे। मान तथा अभिमान का भाव उनके हृदय में कभी उत्पन्न नहीं हुआ। वह नम्र, मिलनसार तथा दृढ़ विचारों के महां पुरुष थे। आपत्ति में हताश तथा निराश नहीं होते थे। निराशा उनके निकट नहीं आने पाती थी। जो व्यक्ति विपत्ति समय उत्साह हीन हो जाता है वह ज्ञानी नहीं कहला सकता और न ही महां पुरुप हो सकता है। वेद कहता है कि ज्ञानी वह है जिस में निकृष्टता का भाव न हो। जो सदैव आशावादी हो और कामी न हो। आर्य्य समाज की शिक्षा तथा प्रचार के क्षेत्र में जो सेवा महात्मा हंसराज जी ने की है वह भावी सन्तति भूल नहीं सकती।

कहां तक गिनाऊं ! उस महान देव, महान ऋषि, महान आचार्य महात्मा हंसराज जी की तपस्या का फल आज हम सभी भोग रहें हैं। वह पंजाव के गौरव थे, महान मनीषी थे। वह पंजाव के कण २ में विराजमान है। पंजाब ही नहीं समस्त भारत उनके उपकार को भूल न सकेगा। आज उनके जन्म दिवस पर हम उन्हें शत २ बार प्रणाम करते हैं।

महान् सेवक वह है जो सेवा निष्काम भाव से करता है। सेवा करके उस का श्रेय प्राप्त करने की इच्छा नहीं करता। जो ख्याति का भूखा नहीं जो कर्तव्य को कर्तव्य रूप में पालन करता है। जो संग दोष से बच कर शुभ कर्म करता है। जिस का आत्मा पुरुषार्थी परोपकारी, सर्व हितकारी त्यागी, तपस्वी है। महात्मा हंस राज इस प्रकार के सेवक थे।

डी० ए० वी० कालज लाहौर, दर्जनों स्कूलों, कालजों आर्य समाजों के वह संस्थापक थे। उन का जीवन हमारे लिए प्रकाश गृह का कार्य करता है। महात्मा जी का विचार था कि वेदों का अनुवाद अंग्रेज़ी तथा अन्य भाषाओं में हो जावे परन्तु उन का यह मनोरथ उन के जीवन में सफल नहीं हो सका।

शोक का स्थान है कि महात्मा हंसराज जैसे त्यागी पुरुष अब आर्य समाज में दिखाई नहीं देते। स्वार्थी लोग आर्य समाज में भरती हो गए हैं। वेद पर श्रद्धा न रखने वाले, ईश्वर को न मानने वाले भी आर्य समाज के आज सदस्य बने हुए हैं। आर्य समाज में प्रवेश के लिए आचार का स्तर ढीला हो गया है। अनुशासन तथा नियन्त्रण की न्यूनता हो गई है। मन्त्री प्रधान की आज्ञा का उलंघन करता है। हम अयोग्य मन्त्री प्रधान को अपने स्थानों से हटा तो सकते हैं परन्तु जब तक

वे किसी पद पर नियुक्त हैं तब तक हम उनका निरादर नहीं कर सकते। और न उनकी आज्ञा का पालन करने से इन्कार कर सकते हैं। ऐसा करना अनुशासन के विरुद्ध होगा। जिस सभा अथवा संस्था में नियन्त्रण की कमी है वह संस्था चिर-काल पर्यन्त जीवित नहीं रह सकती। नेपोलियन ने एक घायल सैनिक को घोड़े पर चढ़ाया और उस घोड़े के सवार को पैदल चलने की आज्ञा दी। दूर जा कर उस ने घायल सैनिक को घोड़े से उतार दिया और स्वयं सवार हो गया। जब नेपोलियन ने उसे दूर से देखा तो गोली मार कर उसे समाप्त कर दिया। यह है अनुशासन। कैसा बिश्रंका (Casabincae) को उस का पिता जहाज़ पर एक डियूटी पर खड़ा कर जाता है। जहाज़ को आग लग गई, वह अपनी डियूटी पर खड़ा रहा। चिल्ला २ कर उच्च स्वर से वह पूछता है पिता जी! मुझे जाने की आज्ञा है? उत्तर नहीं मिलता वह डियूटी पर खड़ा अग्नि की भेंट हो जाता है। इस का नाम अनुशासन है। जापान रूस पर आक्रमण करता है। मार्ग में एक खाई आ जाती है। कमान्डर आज्ञा देता है कि इस खाई में कूद कर सिपाहियों! इस को अपनी लाशों से भर दो। आज्ञा पाते ही सहस्रों सैनिक छलांग लगा कर झट खाई को भर देते हैं और उन की लाशों पर से सेना गुज़र जाती है। यह है अनुशासन।

एकलव्य गुरु द्रोणाचार्य की आज्ञा पा कर अपनी उंगली काट कर रख देता है। पदम पाल गुरु शंकराचार्य की आज्ञा पा कर नदी में छलांग लगा कर उसे पार करके गुरु के सम्मुख उपस्थित होता है। अरुणि अपने गुरु की समाधि में विघ्न न पड़े बहते जल को लेट कर अपने शरीर से रोकता है। महर्षि दयानन्द अपने गुरु विरजा नन्द के लिए प्रति दिन जल लाते थे, और उन के कमरे में झाड़ू देते थे। एक दिन झाड़ू दे कर कड़ा बाहर नहीं फैंका। वह स्वामी विरजा नन्द जी के पाओं को लगा। उन्हों ने ऋषि दया नन्द को चपत लगाए ऋषि ने डन्डा दे कर कहा। मेरा शरीर तो फौलाद की भांति वज्र है। आप मुझे डन्डा से दन्ड दिया करें ताकि आप के हाथ को कष्ट न हो। यह हैं उदाहरण अनुशासन के। जेनरल नेलसन ने अपने सैनिक को ठीक कहा था।

T is not yours to reason why
T is yours to do and died.

तुम्हारा कार्य यह पूछना नहीं कि यह आज्ञा क्यों दी गई है। तुम्हारा कार्य आज्ञा का पालन तथा मर जाना है। प्रत्येक आर्य समाजी को आज्ञा का पालन करते हुए जीवन की भेंट देने के लिए उद्यत रहना चाहिये। मेरा शरीर, मेरा धन, बल आर्य समाज के लिये है। आर्य समाज मुख्य है। मैं उस के सम्मुख तुच्छ हूं। आवश्यकता पड़ने पर मैं अपना सर्वस्व न्योछावर कर सकता हूं। जो व्यक्तिगत स्वार्थों समाज के हितों पर बलिदान करने के लिए उद्यत रहता है वह सच्चा आर्य है।

महात्मा जी के जीवन से हम अनुशासन तथा नियन्त्रण की शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। जो आज्ञा का पालन करना नहीं जानता वह शासन करना भी नहीं जान सकता महात्मा हंस राज जी ने जब लाला लाल चन्द जी प्रधान थे स्टेशनरी के बिल में कुछ पैनसलें अधिक खरीद ली थीं। ला० लाल

एक संस्मरण—

महात्मा हंसराज जी से मैंने क्या सीखा

(ले०—श्री प्रो. वेद प्रकाश जी मलहोत्रा, एम. ए. डी. ए. वी. कालेज जालन्धर,)

जब मैं १९३६ में डी. ए. वी. कालेज लाहौर में विद्यार्थी के रूप में प्रविष्ट हुआ तो महात्मा जी को अवकाश प्राप्त किये हुए कई वर्ष हो चुके थे। वे पंजाब के एक महान् नेता थे। आर्य समाज तथा देश-सुधार के लिये उन्होंने बड़ा त्याग किया था। वे पंजाब के निर्माता थे। उनका पंजाब में एक विशेष स्थान था। वे हमारे कालेज के पास ही एक सुन्दर भवन में रहते थे। एक दो बार वे कालेज में व्याख्यान देने भी आये। प्रायः उनके दर्शन मुझे गोल बाग के पास वाली सड़क पर होते थे जब वे सैर को बाहर निकलते थे। मेरे पूज्य पिता जी भी उन के शिष्य रह चुके थे इस लिये मेरे मन में उन के लिये बड़ा आदर था। महात्मा हंसराज जी से न तो मैंने कभी बात चीत का अवसर ही प्राप्त किया और न ही उन से कभी पढ़ा परन्तु उन के प्रति मेरे मन में एक अगाध श्रद्धा थी।

एक दिन मैं सवेरे कालेज गया तो पता लगा कि आज कालेज में पढ़ाई नहीं होगी। महात्मा हंसराज जी का देहान्त हो गया है। महात्मा हंस राज जी का शव एक तख्त पर कालेज के हाल की स्टेज पर धरा था। गैलेरी के एक दरवाजे से छात्र तथा लाहौर के नागरिक उन के दर्शनों को जाते थे और दूसरे से निकलते थे। मैं भी इसी शृंखला में शामिल हो गया। जितनी देर महात्मा जी का शव वहां पड़ा रहा मैं उसी ही शृंखला में आता जाता रहा। मुझे उस दिन उनके मुख की दिव्य ज्योति ने ऐसा आकर्षित किया कि मैं उनके चेहरे से अपनी आंखें उठाना ही नहीं चाहता था। इस से पहले मैं किसी शव के पास जाने से डरता था। महात्मा हंसराज जी के अन्तिम दर्शनों ने मुझे मृत्यु से निडर बना दिया।

हमने ग्यारह बजे के करीब उनकी अर्थी उठाई और उसे पंजाब यूनिवर्सिटी ले गये। वहां पर यूनिवर्सिटी के कुलपति तथा अन्य अधिकारियों ने महात्मा जी का स्वागत किया। वहां पर नारे लगाये गये 'आधुनिक पंजाब के पिता महात्मा

चन्द जी ने बिल में से उन को काट दिया था और महात्मा जी ने अप्रसन्नता प्रकट नहीं की थी। आर्य समाज के पैसे को वह निर्दयता से व्यय नहीं करते थे। अत्यन्त मित व्ययता का ध्यान रखते थे। परमात्मा करें कि हम महात्म हंस राज जी भांति त्यागी, तपस्वी, ईश्वर भक्त, समाज के सेवक और अनुशासन में कार्य करने वाले बनें।

युवक-निर्माता महात्मा हंसराज

(ले०-प्रो. वेदी रामजी शर्मा एम. ए., अध्यक्ष प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब)

महात्मा हंसराज जी का जन्म एक ऐसी परिस्थिति में हुआ था जबकि भारतीय युवक को पूरी तरह अंग्रेज बनाने का प्रयत्न हो रहा है। भारतीय संस्कृति को कुचला जा रहा था । जान-बूझ कर हमारे इतिहास को भ्रष्ट करने के सभी षड़यन्त्र पूर्ण हो चुके थे । १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के पश्चात तो भारत के लोगों के मुंह पूर्णतः बन्द कर दिए गए थे । ऐसी भयावह स्थिति में महर्षि दयानन्द जी महाराज ने वेद का मन्त्र पुनः भारत के कौने २ में गुंजायमान कर दिया । उसी मन्त्र से शिक्षित और दीक्षित महात्मा हंसराज जी जैसे युवक भारतीयता की तड़प लेकर मैदान में आ कूदे ।

महात्मा जी ने अपने थोड़े से समय में ही वह कार्य कर दिखाया, जिसे भारत का जनसामान्य सदा स्मरण रखेगा। भारत की दीन हीन अवस्था से वह कितने दुखी थे, यह उनके १६१६ के अखिल भारतीय सामाजिक सुधार सम्मेलन में दिए गए अध्यक्षीय भाषण से ही ज्ञात होता है पूज्य महात्मा जी ने कहा था।

'मैं नहीं समझता कि आधुनिक हिन्दूसमाज अपने संगठन और नियन्त्रण के लिए प्रशंसा का पात्र है। हमारी सामाजिक पद्धति बहुत गिर चुकी है और इसकी जड़ों में घुसी अमर्यादा को हटाये बिना प्राचीन गौरव का उत्थान एवं स्थिरता असम्भव है। आज हम अपनी प्राचीन परम्परा और गौरव की रक्षा करने की जुर्रत भी नहीं कर सकते। इन त्रुटियों का कारण हमारा प्राचीन आदर्शों को

हंसराज अमर रहें।' इस प्रकार अर्थी सारे नगर के गली कूचों, बाजारों से एक विशाल जलूस का रूप धारण करती हुई सायं काल रावी के तट पर पहुंची जहां महात्माजी का अन्त्येष्टी संस्कार किया गया।

उस समय मेरे मन में यह भाव उठ रहे थे कि मृत्यु से डरना नहीं चाहिए और मरते हुए भी मुस्काना चाहिए। यदि मैं महात्मा जी से पहले सम्पर्क में आता तो न जाने उनसे कितना प्रसाद पाता, परन्तु स्वर्ग सिधारते हुए भी भारत मां के इस अमर सेवा व्रती पुत्र ने मुझे जन सेवा का एक अत्युत्तम पाठ पढ़ा ही दिया । मरते हुए भी मुस्काना चाहिए। यह मुस्कराहट न जाने किसी का कितना कल्याण कर दे। महात्मा हंसराज जी के अन्तिम दर्शन मेरे हृदय पर एक अमिट छाप छोड़ गये हैं और मेरे जीवन का एक अनोखा अनुभव बन कर रह गये हैं। क्या ऐसे ही अन्तिम अवसर पर मेरे मुख पर भी ऐसी ही दिव्य ज्योति होगी ! परन्तु इसके लिये जीवन-पर्यन्त कठोर तपस्या की आवश्यकता है । मेरे अन्दर बड़ी न्यूनतायें हैं और मैं उनको भली भान्ति जानता हूं।

भूल जाना और समय के संकेतों को न समझना है। हमारी बुराइयों के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था—

'हमारा पहला दोष हमारी गरीबी है। यह विचित्र बात है कि भारत जैसी सर्व सम्पन्न मां की गोद में खेलते हुए हम अत्यन्त निर्धन हैं। मेरे एक मित्र ने मुझे बताया कि भारत में पांव रखते ही उसे लगा, जैसे वह किसी अनाथालय में आ गया हो।'

महात्मा जी के इन शब्दों में कितनी तड़प है। भारत की गरीबी। भारत की सामाजिक हीन स्थिति से देव दयानन्द का यह महान पुजारी किस प्रकार दु:खी रहा। उसने जीवन भर इसी हीनता को दूर करने के लिए क्या कुछ न किया? आप गरीब रहे क्योंकि मां निर्धन है किन्तु अपने विद्यार्थियों को इस योग्य बनाया कि जिस से वह अपनी गरीबी दूर करते हुए भारत से इस रोग को सदा के लिए समाप्त कर दें।

पूज्य महात्मा जी ने आर्य समाज के सन्देश को सर्वत्र पहुंचाने के लिए जहां डी० ए० वी० कालेज और स्कूलों की स्थापना की, वहां उन्हीं स्कूलों और कालेजों में युवकों को धार्मिक दृष्टि से शिक्षित करने के हेतु आर्य युवक समाजों की स्थापना भी की। इन युवक समाजों में वह युवकों को शिक्षाकाल में ही पूर्ण आर्यसमाजी बना कर जीवन में प्रवेश करने करने को उत्साहित करते थे। महात्मा जी के जीवन काल के बने आर्य युवक आज तक भी उन्हें और उनके उपदेशों को स्मरण करके अपना जीवन सफल करते हैं।

महात्मा जी सदा ही नव से नए युवकों को समाज के सम्पर्क में लाने का प्रयत्न करते रहते थे। ४ अप्रैल १९२३ की अपनी डायरी में वह लिखते हैं कि...Piofessèr.... addressed the weekly congrcation of the Lahore Arya Samaj. He needs much improvement. I am glad, Rowever, that I have introduced a new worker into this field.

अर्थात्—"प्रोफेसर...ने आर्यसमाज लाहौर के साप्ताहिक सत्संग में अपना व्याख्यान दिया। अभी उन्हें अधिक उन्नति की आवश्यकता है। फिर भी, मैं प्रसन्न हूं कि मैं इस क्षेत्र में एक नए कार्यकर्ता को ले आया हूं।"

यही नहीं वह नव कार्यकर्ताओं को आगे लाने के लिए हर समय किस प्रकार चिन्तित रहते थे। ८ जुलाई १९२१ की अपनी डायरी में वह लिखते हैं कि—

'I said Pandit Lakhpat Rai that we should utilize young men. Sadhus and Vanprasthis. New workers should come out their ranks. They should spend your months together in retreat like the Buddhist Bhikshus and devote the rest of their time to missionary work.'

मैंने पंडित लखपतराय जी से कहा कि नवयुवकों, साधुओं और वानप्रस्थियों का प्रयोग करना चाहिए नए कार्यकर्ता अपने २ वर्गों से बाहर निकलें और बुद्ध भिक्षुओं के समान चार महीने एक साथ बिता कर सेवा कार्य करना चाहिए।

इसी भावना को वह बार २ कहते रहे हैं। एक अन्य स्थान पर वे १० अक्टूबर १८२३ की डायरी में लिखते हैं—?

अडिग सेनानी महात्मा हंसराज

(ले०—पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का दिव्य सन्देश)

एक केवट मिला था जगमगाती नैया को। नैया के सवारोंने उसे नदी में धकेल दिया। नदी में सागर की लहरें नैया को खाने के लिए बढ़ रही हैं। आतंक फैल गया। निराशा उभरने लगी। चिन्तित जाति सोचने लगी अब क्या होगा ? तब दयानन्द की ज्योति से प्रकाश पा एक युवक ने इस निराशा को चीर नैया की पतवार थामने का निश्चय किया इस निश्चय की पूर्ति में उसे अपना जीवन बलिदान कर देना पड़ा।

महात्मा हंसराज चाहते तो अन्य सांसारिक लोगों की तरह उच्च पद प्राप्त कर लाखों की सम्पत्ति जुटा लेते। लेकिन जाति की दुरवस्था ने उन्हें बलिदान के इस मार्ग पद बढ़ने को प्रेरित किया। उन्हें कई प्रलोभन दिये गये। देश के नेतृत्व का स्वर्ण जाल फैलाया गया। प्रबल राजनैतिक आन्दोलन के समय उन्हें कहा गया कि यदि आप इस में शामिल हो जायेंगे तो सारे देश के नेता बन जायेंगे। तब महात्मा जी ने केवल इतना ही

'Professor Mehr Chand came to see me. I suggested to him that he should select five students and train them.

इसी प्रकार ६ जुलाई १६२१ को वे लिखते हैं कि—

'I put forward my own point of view and emphasized that it is necessary to create new workers. I told him that I consider this to be my life work now'

पूज्य महात्मा जी इसी ध्येय को सामने रखते हुए 'साईंदास कार्यकर्ता सदन' की स्थापना की थी। वे अपने अनुभव सामने रखते हुए नए २ कार्यकर्ताओं को उत्साहित करते रहते थे। महात्मा जी का एक २ क्षण आर्यसमाज के लिए व्यतीत होता था। खाते, पीते, उठते बैठते, चलते फिरते उन्हें आर्यसमाज के अतिरिक्त अन्य कोई विचार ही नहीं होता था।

हम सभी को आज उनकी पूज्य जन्म तिथि पर बैठ कर इस पर विचार करना चाहिए। आज आर्यसमाज में नए रक्त का प्रवेश रुद्ध है। यह एक गम्भीर स्थिति है। यदि इस ओर अभी से ध्यान न दिया तो कल को आर्य समाज का शरीर तो रहेगा किन्तु उसमें आत्मा के दर्शन न होंगे। आओ आज व्रत लें कि अपने बच्चों को आर्यसमाज के निकट लाने में अपना पूरा बल लगा देंगे। इसी में हमारा भला है।

वेदप्रचार की ही चिन्ता

(ले०—श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर.)

श्री कुंवर लाल जी आर्य मुसाफिर आर्यसमाज की पुनीत पुरातन पीढ़ी की उंगलियों पर गिनी जाने वाली विशिष्ट विभूतियों में हैं। सारा जीवन समाज की वदी पर वेदप्रचार करते बीत रहा है। आप की वाणी के साथ २ नाम में भी जादू है। हमारी प्रार्थना पर पूज्य महात्मा जी के सम्बन्ध में अपना दिव्या सन्देश देकर कृतार्थ किया है।

मुझे यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ है कि 'आर्य-प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र 'आर्य जगत' अपवा 'महात्मा हंसराज' विशेषांक निकाल रहा है। 'आर्य समाज के महान और पवित्र मान-सरोवर पर यां तो अनेकों हंस विचरते रहे हैं परन्तु श्रद्धेय महात्मा हंसराज उन में 'हंसराज' थे। श्री महात्मा हंसराज जी में इतने गुण थे और इतनी विशेषताएं थीं कि उन्हें गिना नहीं जा सकता उनका जीवन, त्याग, तप और आस्तिकता का साक्षात और साकार रूप था। मुझे उनके साथ उनके चरणों में रहने का अनेकों बार अवसर मिला। मैंने सदा उनके आचार, विचार और व्यवहार में, महानता और विशालता देखी। उनके मन, वचन और कर्म में एकता थी और ऐसे ही महापुरुषों को वास्तव मे महात्मा कहते हैं। उनके पास

कहा—मै नींव में पड़ने वाला पत्थर हूं, रचनात्मक कार्य में लगा हूं और इसी में लगा रहूंगा। उनका सारा जीवन तप और त्याग का जीवन है। महात्मा जी के जीवन का एक ही उद्देश्य था। ऋषि का मिशन सफल हो ताकि हिन्दु जाति में नया जीवन आये इस के लिए उन्हों ने उपयुक्त साधन बरते। दयानंद कालेज की निस्वार्थ एव निष्काम सेवा, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की स्थापना; महिला विद्यालय की स्थापना इसी कार्यक्रम की कड़ियां थीं। महात्मा जी दृढ़ ईश्वर विश्वासी थे। इस विश्वास का प्रमाण लोगों ने तब देखा जब कि दिल्ली षड्यन्त्र केस में उनका बेटा कैद था। इतना बड़ा मुकदमा चला। घर में फूटी कौड़ी न थी। धर्मपत्नी मृत्युशय्या पर थी। तब एक स्त्री ने कहा—मालूम होता है कि ईश्वर कोई नहीं। यह सुनते ही महात्मा जी को क्रोध आया और कहने लगे—सावधान! फिर ऐसा न कहना। भगवान् है। वही हम सब के सच्चे हितैषी हैं जो करेंगे अच्छा करेगे।

जीवनभर उन्होंने कठिन तपस्या की। अपनी प्रणपूर्ति के लिए उन्होंने सर्वस्व त्याग दिया। एकदम मर जाना आसान है पर आजन्म पग २ पर अपनी भावनाओं, उमंगों और लालसाओं को रौंदते रहना और अपने पथ से विचलित न होना सबसे बढ़ कर वीरता और साहस को बात है।

यथा नाम तथा गुण

(ले०-श्री स्वा० प्रणवानन्द जी प्रणवाश्रम घनाल (जम्मू)

एक दिन विचार मगन बैठे २ एक संस्कृत श्लोक स्मरण हो आया। वाणी रसवती यस्य परम भार्या पुत्रवती सती। लक्ष्मीदानवती यस्य सफलं तस्य जीवितं॥ इति पुन. अन्वेषणात्मक मनोवृत्ति हुई तो एक अपने जीवन की ही घटना स्मृति पथ हो आई। जब मैं सन् ई० १६११ में डी० ए० वी० कालेज लाहौर में मैं आयुर्वेद पठनार्थ गया तो महात्मा हंसराज जी का प्रसंगवश कभी २ दर्शन लाभ हुआ करता था तो उन में मुझे यह श्लोकोक्त कथन सार्थक प्रतीत हुआ। विद्यार्थियों की वार्षिक परीक्षा हो रही थी तो परीक्षकों ने बिना सूचना के ही दो पुस्तकों के प्रश्न पत्र को पृथक् पुस्तक के दो प्रश्न पत्र बना दिये। इस कारण विद्यार्थियों ने परीक्षा देने से इनकार कर दिया और उठ कर शोर करना आरम्भ कर दिया। तो महात्मा जी आ पहुंचे जब उन्हों ने अपना कथन आरम्भ किया तो जैसे भबकती अग्नि पर मेघवर्षा हो एवं रसभरी वाणी से विद्यार्थियों का सहेतुक क्रोध भी शान्त हो गया था। एक और उनका सादा पहिरावादेख कर प्रतीत होता था कि इन का धन सब दान हो जाता होगा सुना गया कि गृह की बहुसादगी है और इन के वीर पुत्र भी थे। इन की सुपुत्री डा० सिव-लसर्जन जी के हां पालम्पुर कोठी बना कर बान प्रथा श्रमव्यतीत कर रहे हैं पर साल मुझे ७ दिन का आतिथ्य स्वीकार करना पड़ा था। कहने का तात्पर्य है कि विद्वानों के कथन का ही सफल चरितार्थ भी होजाता है। महात्मा जी तो यथा नाम तथा गुण थे। उन पर मेरी बड़ी भक्ति व श्रद्धा थी।

उनके उपदेशक और मेरे जैसे सामान्य भजनोप-देशक भी जाते थे तो महात्मा जी अपनी कुर्सी छोड़ कर खड़े हो जाते थे और उनके सुख दुःख और कठिनाईयों का हमेशा ध्यान रखते थे। सोते, जागते, खाते, पीते, चलते, फिरते उन्हें हर समय आर्यसमाज और वेद प्रचार की ही चिन्ता रहती थी अपने देश और हिन्दू कौम में जो २ कमजोरियां थीं उनको वे पूरी तरह दुख और चिन्ता के साथ महसूस करते थे और उन्हें दूर करने के उपाय सोचने मे ही लगे रहते थे। अपनी बड़ी २ संस्थाओं की रक्षा और उन्नति का ख्याल आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा और वेद प्रचार का ख्याल उन्हें हर वक्त सताता था। उनका जीवन वास्तव में एक सच्चे संन्यासी का जीवन था वृद्ध अवस्था में भी एक विद्वान् मण्डल उन्हें नित्य नियम से वेद सुनाने आता था सादगी सरलता, और सहृदयता, की तो वे साक्षात मूर्त्तिथे मैं उनके महान गुणों का क्या वर्णन करूं—वे अपने व्यक्तित्व में अनुपम थे वे मिसाल थे—आर्य समाज के वर्त्तमान नेता महात्मा हंसराज के जीवन से शिक्षा लेकर कार्य करें तो आर्य समाज में जो दुर्बलता आ रही है—उसे अवश्य दूर कर सकते हैं—और अपना तथा देश और समाज का कल्याण कर सकते हैं।

—श्री हंसराज पंचक—

(कविवर श्री 'प्रणव' जी शास्त्री एम. ए. फिरोज़ाबाद)

मातृभूमि के पुत्र वीर आखों के तारे
नत मस्तक हैं आर्य चरण में आज तुम्हारे
नीतिरीतियुत शिक्षा की शुचि किरण प्रसारी
यतिवर, तुम पर त्याग तपस्या है बलिहारी ॥१॥

श्री ने उपकृति का ही सात्विक नियम निभाया
मन मन्दिर में अहंकार आने नहीं पाया
हानि लाभ थे आर्य जाति के लक्ष्य मनोहर
तमो गुणों का नाश वैदिकी ज्योति धरोहर ॥२॥

मानस गुण के शुचि मौलिक मुक्ता चुन लाए
हंस रूप तुम वन्द्य विवेकी सदा सुहाये
समता की क्षमता के मुखरित हे वरदानी,
राष्ट्र-भावना-शलभ सन्त से प्रिय बलिदानी ॥३॥

जगती में आलोक तुम्हारा आज अमर है
जीवन का गुण-गान तुम्हारा आज अमर है
कीर्ति-पताका उच्च गगन में उज्वल लहरी
सरल बह रही 'प्रादेशिक' गंगा सी गहरी ॥४॥

दाता तुम सा धन्य बने जो जीवन-दाता
जयी नित्य निष्काम साम-गानों का गाता
यह श्रद्धा के सुमन भाव-सूत्रों की माला
हो स्वीकृत श्रीमान्, प्रेरणा दे उजियाला ॥५॥

युग पुरुष महात्मा हंसराज जी

[ले०—श्री पं० रघुवीर सिंह जी शास्त्री पूर्व मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली]

श्रद्धेय महात्मा हंसराज जी उन गिने-चुने महापुरुषों में से एक हैं, जिन्होंने महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारियों के रूप में उन के महान् उद्देश्य को आगे बढ़ाया और आर्य समाज को एक सुसंगठित संस्था के रूप में खड़ा किया। महात्मा जी सच्चे अर्थों में युगपुरुष थे, क्योंकि उन्होंने अपने पुरुषार्थ, तप तथा प्रतिभ के बल पर युग धारा को एक मोड़ दिया। भारत में विदेशी शासक अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के लिये प्रयत्न शील थे। उन का उस के पीछे अपना एक विशेष प्रयोजन क्या दुर भिसन्धि थी, जिस से भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा राष्ट्रियता के मूल पर कुठारा घात हो रहा था। राष्ट्रसन्तति पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध में स्वगौरव को सर्वथा भुलाये जा रही थी। महर्षि के क्रान्तिकारी शिष्य महात्मा जी की क्रान्तदर्शिनी आंखों ने इस अनर्थ परंपरा के भयानक परिणामों को भांपा और इस का निराकरण करने का प्रबल संकल्प मन में लेकर अपना अभियान आरंभ किया।

वस्तुतः किसी विचार धारा के प्रतिष्ठापन का सब से उपयुक्त स्थान शिक्षा का क्षेत्र ही है। यही राष्ट्रसन्तति अथवा मानव समाज के निर्माण एवं विकास की असीम संभवनायें उपलब्ध होती हैं। बस महात्मा जी ने समाज निर्माण के इसी विन्दु पर उंगुली रखी, इसी रचनात्मक कार्यक्रम को जीवन का प्रमुख ध्येय बना पर उस के पीछे अर्थ साधना तथा त्याग की शक्ति लगा दी। सफलता महात्माओं के चरणों को चूम कर कृतकृत्य होती है, समाज उन के संकेत में अपने कल्याण का सन्देश पाता है। उन का तपःपूत व्यक्तित्व जन मानस के आकर्षण का केन्द्र बन जाता है।

महात्मा जी ने अपना परिवार छोड़ा, विशाल परिवार बसाने का व्रत ले कर डी. ए. वी. कालिज लाहौर में खोला, थोड़े ही दिनों में यह संस्था सारे पंजाब के आर्य समाज तथा राष्ट्रीयता की गतिविधियों का केन्द्र बन गई। इस प्रकाश स्तम्भ से चहुं दिशाओं में नवालोक फैला। स्कूलों तथा कालिजों का पंजाब में तो जाल सा बिछा ही, अन्यत्र भी भारत के अनेक प्रमुख नगरों में इसी प्रकार की शिक्षा संस्थायें चालू हुईं। इन संस्थाओं की लोकप्रियता दिनों दिन बढ़ती गई और इन की उपयोगिता तथा सुन्दर व्यवस्था की धाक जमती चली गई। इन संस्थाओं ने बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विद्वान् पैदा किये जिन्होंने आर्य समाज तथा राष्ट्र की प्रायः सभी क्षेत्रों में प्रशंसनीय सेवा की, अपनी योग्यता तथा सेवावृत्ति से आर्य समाज के गौरव को बढ़ाया। उनमें से अनेक कालिजों के प्रिंसिपल, उच्चन्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय

महात्मा हंसराज के संबंध में पुरानी याद

(ले०—श्री कैप्टन केशवचन्द्र जी प्रधान जनसंघ पंजाब अमृतसर)

जो महान पुरुष आत्मा में पूर्ण विश्वास रखते हैं उन की आत्माएं इस विश्वास से सदैव ऐसी उन्नत हो जाती हैं कि वह सदा एक रस रहती है उन के लिए दुखःदुख और सुख में सुख कोई विशेष महत्व नहीं रखता। वह प्रत्येक अवस्था में प्राय. एक रस रहते हैं। आत्मा की उच्चावस्था से वे ऐसे विशेष कार्य कर जाते हैं जिस से उन की स्मृति ससार में सदियों तक चली जाती हैं। महात्मा जी के सुपुत्र श्री बलराज जी से मेरा विशेष सम्पर्क रहा। वह १६१४ में दिल्ली षड़यन्त्र केस में गिरफ्तार हुए। तब भी मैं उन से और महात्मा जी से मिलता रहा। आज तो उन से पारिवारिक सम्बन्ध का भी सौभाग्य प्राप्त है। मैं ने महात्मा जी के मुख पर कभी चिन्ता के चिन्ह नहीं देखे वह अपने सब कार्य वैसी ही सरलता से करते रहे जैसे उन्हें कोई कष्ट हुआ ही नहीं।

फिर १६१६ में जब जल्यांवाला बाग् का खूनी कांड हो चुका। सब ओर मार्शल ला का आतंक छाया हुआ था। All India Congress' High Command यह सोचने में लगा हुआ था कि ऐसी परिस्थिति में उन का वार्षिक अधिवेशन जो अमृसर में होना था हो सकेगा कि नहीं और इस की पं. मदनमोहन जी मालविया और स्वामी श्रद्धानन्द जी कई बार अमृतसर आये और अमृतसर निवासियों के विश्वास दिलाने पर कि यहां से पूर्ण सहयोग मिलेगा अन्तिम निश्चय हुआ कि यह अधिवेशन अमृतसर में ही किया जाय उस समय मेरे कंधे पर **All India Volunter Corper** संगठित करने का भार पड़ा। इस उद्देश्य के लिए पंजाब के भिन्न २ कालिजों के **Principal** से मैं मिला उस समय महात्मा जी ने मुझे कहा कि विद्यार्थियों को स्वयं-सेवक तो बनाओ पर राजनीति में न घसीटो। ऐसा विचार निर्भयता से उस जमाने में प्रकट करने का यदि कोई साहस कर सकता था तो केवल महात्मा हंसराज। अंधेरी और तूफान में जो पुरुष अपने आपको स्थिर रख सकता है वह निश्चय ही लोह पुरुष है यही बुनयादी कारण है कि D A V. College जैसी महान संस्था महात्मा गांधी और ला० लाजपतराय जैसे अंधेरी और तूफानों में फूलती-फलती गई और आज सारे भारतवर्ष में अपने पैर जमा लिए ऐसे महात्मा महा पुरुष के आगे मैं नत मस्तक हूं।

के न्यायाधीश, विख्यात वकील तथा उद्योगपति बने और सर्वदा पद-पद पर आर्यजीवन की विशेषता की छाप लगाते रहे।

इस प्रकार निस्सन्देह यह कहा जा सकता है कि महात्मा जी ने एक नयी सृष्टि के विधाता के रूप में सार्वजनिक सेवा की भूमिका में पदार्पण किया और इस कार्य तथा उद्देश्य में उन्हें भरपूर सफलता भी मिली। राष्ट्र संतति अपने इस युगपुरुष पितामह की सदा कृतज्ञ रहेगी और उनके आदर्श जीवन से सदा पवित्र प्रेरणाएं प्राप्त करती रहेगी।

"एक यज्ञमय जीवन"

(ले०-श्री प्रो. ओम प्रकाश नारंग डी. ए. वी. कालेज जालन्धर,)

अमर शहीद पं० लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज—आर्यसमाज की त्रिमूर्ति के स्मरण मात्र से हृदय गद्गद् हो उठता है और मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है। इन में से पहले दो देव तो वीर गति को प्राप्त हुए परन्तु तीसरे आयु पर्यन्त देश, समाज एव संस्कृति की सेवा करते रहे। महर्षि स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज रूपी वट वृक्ष का बीजारोपण किया और उसको अपने रक्त से सींचा भी। आपके जीवन काल में आर्यसमाज ने भरपूर उन्नति की। परन्तु दैव को यह स्वीकार ना था कि आप चिरंजीव होकर इस कल्पवृक्ष को पानी दे और इसे परवान चढ़ा हुआ देख सकें। इसलिए आप 'देव ! तेरी इच्छा पूर्ण हो 'कहते हुए परम ज्योति में समा गये।

महर्षि के देहावसान के पश्चात आर्यसमाज के व्यापक कार्य को दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है—प्रचार एवं शिक्षा। जब हम शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज की अमूल्य सेवाओं पर विचार करते हैं तो हम स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गुरुकुल कांगड़ी की नींव रखी जो आज एक विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुका है। दूसरी ओर महात्मा हंसराज जी ने डी० ए० वी० कालेज लाहौर को जन्म दिया। इस संस्था ने गत ३३ वर्ष में कितनी उन्नति की इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि इस समय डी. ए. वी. कालेज जालन्धर में लगभग २५०० विद्यार्थी और डी. ए वी. कालेज कानपुर में ६००० छात्र शिक्षा पा रहे हैं।

परन्तु ये इस महान वृक्ष की केवल दो शाखाएं हैं। देशभर में डी. ए. वी. कालेजों, स्कूलों, टैकिनकल तथा इंजनीयरिंग संस्थाओं एव महिला विद्यालयों का एक जाल सा बिछा हुआ है। महात्मा हंसराज जी ने जिस कार्य को प्रारम्भ किया वह आज एक महान अनांदोलन का रूप धारण किये हुए है और उसकी छत्रछाया में आज भारत के असंख्य बालक एवं बालिकाएं शिक्षा पा कर तथा देश का गौरव बढ़ा रहे हैं। इस पुनीत कार्य में यद्यपि अनेकों कार्यकर्ता शरीक हैं जो अपने अनथक परिश्रम प्रखर बुद्धि और निस्वार्थ सेवा से भारतीय समाज के होनहार बिरवान् को महान बनाने में सहायक हो रहे हैं। तथापि इसका एक मात्र श्रेय उस महान आत्मा को है जिसने ने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को लात मार कर सामाजिक शिक्षा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया और अपने रक्त का एक २ बिन्दु इस महान साधना की पूर्ति में लगाया।

स्थित प्रज्ञ–स्थित धीः महात्मा हंसराज जी

(ले० ज्ञानी पिण्डी दास जी प्रधान आर्य. स. लोहगढ, अमृतसर)

पूज्य महात्मा हंसराज जी का जन्म होश्यारपुर मण्डलस्थ बिजवाड़ा ग्राम में श्री ला० चूनीलाल भल्ला के गृह में माता गणेश देवी जी की पवित्र कुक्षि से १६ अप्रैल १८६४ को और आप के ज्येष्ठ भ्राता श्री ला० मुलख राज जी का २३ अप्रैल १८६० को हुआ था।

३० अक्तूबर १८८३ को महर्षि दयानन्द सरस्वती का देहावसान हुआ। आर्यजगत् में उनकी पुण्य स्मृति में उचित स्मारक स्थापित करने का संकल्प दृढ़ हो गया, परन्तु इतना बड़ा कार्यभार किस के कन्धों पर डाला जाए, यह समस्या सुलझने में न आती थी। सौभाग्यवश इसी मध्य १८८५ में ला. हंसराज जी ने बी. ए. पास कर लिया और अपने ज्येष्ठ भ्राता ला. मुलखराज जी के प्रोत्साहन से (जिन्होंने अपनी आय में से, जो उन दिनों केवल ८० रुपये मासिक थी, आधा भाग उनके अर्पण करते रहने की प्रतिज्ञा कर दी थी) उक्त आर्य संस्था के लिये आजीवन निःशुल्क सेवा करने की घोषणा करदी जिसके परिणाम स्वरूप १-६-१८८६ को लाहौर में डी. ए. वी. स्कूल का उद्घान कर कर दिया गया, ला. हंसराज जी उस संस्था के प्रथम मुख्याध्यापक नियत हुए और जो प्रण किया उसे

सद्भिस्तु लीलया प्रोक्तं शिला लिखितमक्षरम्

के अनुसार प्राण-प्रण से निभाया।

२. श्री मद्भगवद्गीता में अर्जुन के प्रश्न पर कि स्थित प्रज्ञ के लक्षण क्या हैं भगवान् कृष्ण ने कहा—

महात्मा हंसराज जी का जन्म बिजवाड़ा जिला होशियारपुर में हुआ। पिता की मृत्यु और पारिवारिक परिस्थितियों के कारण आप को लाहौर में Settle होना पड़ा। यद्यपि आरम्भ में आपका सम्बन्ध किसी धनवान परिवार से न था तथापि आप अपने पौरुष और बुद्धिबल से क्या कुछ न बन पाते। परन्तु आप ने सारा जीवन दरिद्रता में गुजार कर एक ऐसी महान संस्था की नींव रखी जो आपके तथा आपके सहकारियों के परिश्रम द्वारा एक अमर ज्योति बन चुकी है। देश के कोटि-कोटि नवयुवक आज महात्मा जी को हृदय से धन्यवाद दे रहे हैं। सचमुच देश के कोने २ में फैली हुई डी० ए० वी० संस्थाएं महात्मा हंसराज जी के त्याग, तपस्या, योजनाशक्ति, दूरदर्शिता तथा कार्यकुशलता के अमर निशान हैं। पर—

'फूल खिले और बगिया महकी,
हर क्यारी गुलबन की टहकी।
भूल गये हैं सब अंकुर को,
जिसने सारा खेल रचाया॥

दु:खेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीत राग भय क्रोध: स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥२-५६

अर्थात् जिसका मन कष्टों-क्लेशों में स्थिर रहता है और सुखों के लिये लालायित नहीं होता, जिसे मोह, भय तथा क्रोध छू नहीं गये, ऐसा मुनि स्थितधी: अथवा स्थित प्रज्ञ कहलाता है। हमारे महात्मा हंसराज जी के जीवन में उक्त समस्त गुण पराकाष्ठा को पहुंचे हुए थे।

आप पूरे पच्चीस वर्ष डी० ए० वी० कालिज की निस्स्वार्थ सेवा करके १९११ में निवृत्त हुए। १९१५ में आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री बलराज जी पर बादशाह के विरुद्ध युद्ध करने के षड्यन्त्र में सम्मिलित होने के अभियोग चला दिया गया। श्री महात्मा जी की कोठी की तलाशी ली गई। मुकद्दमा कई महीने चलता रहा। मिस्टर हैरीसन स्पैशल सेशन जज देहली ने धारा १२०-बी तथा १२४-ए के आधीन बलराज जी को आजन्म कालेपानी की सजा दी जो कि हाई कोर्ट ने सात साल कड़ी कैद कर दी।

इसी मध्य बलराज जी की माता ने मृत्यु शय्या पर से अपनी अन्तिम अभिलाषा के रूप मे अपने पुत्र का मुंह देखना चाहा, परन्तु निष्ठुर सत्ताधारियों ने इसे भी पूरा न होने दिया और यह हसरत दिल में ले कर ही माता जी स्वर्ग सिधार गईं।

दण्डित होने के बाद बलराज जी को सुझाव दिया गया कि वह क्षमा याचना करें जो उन्हें अवश्य मिल जायगी; परन्तु उनके नकार करने पर उन्हें महात्मा जी का आदेश प्राप्त करने का परामर्श दिया गया। महात्मा जी ने पत्रोत्तर में लिखा—

'प्यारे पुत्र! यदि तुम अपराधी हो तो जो दण्ड दिया गया है उस को भुगत कर उस का प्रायश्चित्त करो। और यदि तुम अपराधी नहीं हो तो तुम्हारे क्षमा-प्रार्थी होने के बगैर ही सरकार को तुम्हें मुक्त कर देना चाहिये।'

जब तक मुकद्दमा चलता रहा, बलराज जी को बाहर से भोजन तथा फल आदि प्राप्त करने की आज्ञा थी। कुछ फल उन्हें भेजे गये, जिन्हें उन्हों ने यह कह कर लौटा दिया कि जेल में इन के बगैर ही गुजारा करना पड़ेगा। महात्मा जी से पूछा गया तो उन्हों ने लिखा—

'बेटा! प्रभुप्रदत्त पदार्थों की प्राप्ति पर उन का उपभोग करो; परन्तु उन में इतने लवलीन न हो जाओ कि अप्राप्ति पर उनके लिये तड़पने लगो।'

धर्म पत्नी की मृत्यु, पोलीस के अत्याचार पुत्र की सजा आदि अनेकानेक कष्ट क्लेशों की भरमार में भी पूज्य महात्मा जी तनिक भी विचलित नहीं हुए, प्रत्युत निरन्तर अपने दैनिक कृत्यों को निभाते, रुग्णावस्था में धर्म पत्नि की चिकित्सा आदि करते, बेटे के मुकद्दमे की पैरवी करते, आर्य समाज के उत्सवों में पधारते, कालिज में पढ़ाते, नियन्त्रण को (जो कि उनके चरित्र की विशेषता थी) दृढ़ता से स्थिर रखते, आगन्तुक सज्जनों के साथ उसी प्रकार मुस्कराते हुए भेंट तथा वार्तालाप करते जैसे कुछ हुआ ही नहीं। इस प्रकार उन्होंने सिद्ध कर दिय कि

उदये सविता रक्तो रक्ताश्चास्तमये तथा
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेक रूपता।

जैसे सूर्य उदय के समय रक्त वर्ण होता है। उसी प्रकार अस्त होने के समय भी सुर्ख ही रहता है। इसी प्रकार सम्पत्ति और विपत्ति में महात्माओं की एक रूपता में अन्तर नहीं पड़ने पाता।

याद आते हैं महात्मा हंसराज

[ले०—श्री पं. भक्तराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

जब २ कोई समाज, जाति अथवा देश अधोगति को प्राप्त होता है तब २ उस समाज, जाति अथवा देश को उन्नति के शिखिर पर पहुंचाने वाले महापुरुषों का स्मरण हो आना स्वाभाविक है। महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज ने प्राचीन धर्म रीति नीति का प्रसार कर वैदिक युग लाने के लिए भरसक प्रयत्न किया। आर्य समाज के प्रमुख महापुरुषों ने भी उसी कल्याण मार्ग को अपनाते हुए आर्य समाज के मुख्य उद्देश्यानुसार संसार का उपकार शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति द्वारा करने की ठानी पर सब से पहिले अपनी, अपने देश की, पश्चात् हो सके तो और की। महापुरुषों के जन्म दिन और मृत्यु दिवस हम उनके जीवन के आदर्शों से प्रेरणा लेने के उद्देश्य से प्रति वर्ष मनाते हैं परन्तु क्या हम आचरण के समय उन महात्माओं को भुला नहीं देते ? २ अप्रैल को मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी का जन्म दिन देश में और विदेशों में भी मनाया गया पर रावण के मार्ग पर चलते हुए राम के गीत गाने का हमें कोई अधिकार नहीं।

३. महात्मा जी के सम्पर्क में आने वाले सौभाग्यशाली व्यक्ति जिस क्षेत्र से भी सम्बद्ध होते वहां चमक कर दिखा देते। व्यक्तियों का चयन करना और उन्हें सुसंस्कारित तथा सुवासित करके ससार में उज्ज्वल चरित्र बनाना महात्मा हंसराज जी की विशेष महानता थी और यही गुण उन्हें बड़े से बड़े महात्माओं की श्रेणी में उच्चतम स्थान प्रदान करता है जैसा कि भर्तृहरि जी ने लिखा है—

किं तेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा
यत्राश्रिताश्च तरवस्तरवस्त एव
मन्यामहे मलयमेव यदाश्रयेण
कङ्कोल निम्ब कुटजा अपि चन्दनाः स्युः

अर्थात् उस सोने के पर्वत सुमेरु अथवा चांदी के पहाड़ कैलाश से क्या लाभ जिनके आश्रित वृक्ष जैसे के तैसे वृक्ष ही बने रहते हैं। हम तो मलयगिरि को ही श्रेष्ठ मानते हैं कि जिस के संसर्ग से कङ्कोल, निम्ब और कुटज आदि अधम वृक्ष भी चन्दन समान ही सुवासित हो जाते हैं।

धन्य हैं महात्मा हंसराज जिनके सत्सङ्ग से अनेक साधारण पुरुष भी उच्च पदवियों को प्राप्त कर सके हैं।

ऐसे तपस्वी, सुख दुःख में समान रहने वाले, परोपकारी, पर दुःखापहारी, धर्म, जाति तथा देश पर सर्वस्व न्योछावर करने वाले, सहस्रों के चरित्र निर्माता, पथप्रदर्शक स्थित-प्रज्ञ अथवा स्थितधीः महात्मा हंसराज जी के चरण-कमलों में शतशः प्रणाम।

नैत्यिक दृष्टि से पर्व मनाते के कारण ही समाज, जातियां और देश अपना गौरव खो बैठते हैं। आर्य समाज का मान भी इसी लिए घटा कि हम आर्यों ने अपने आदर्श नेताओं के दिव्य गुण अपने जीवनों में धारण न कर केवल मात्र उनके गुणानुवाद गाने में उत्सवों की सार्थकता और अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ ली। फल स्वरूप हमारी अवस्था दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। हम अपने कर्त्तव्यों से विमुख होकर अकर्त्तव्य कर्म कर रहे हैं। इस सङ्कट काल में रह २ कर वह गम्भीर वक्ता, शांत धीर, वीर उदात्त महापुरुष (महात्मा हंसराज) याद आ रहे हैं।

जब मैं देखता अथवा सुनता हूं कि आर्यसमाज के वर्त्तमान नेता मुंह में लड्डू दिये जाने पर आर्य-समाज को विस्मृत कर देते हैं और बिक कर आर्य समाज के लिए हानि कर सिद्ध होते हैं तो याद आते हैं वह त्याग मूर्त्ति जिन्होंने आर्यसमाज लाहौर की ९ नवम्बर सन् १८८३ की जङ्गी पबलिक मीटिङ्ग के निश्चयानुसार १ जून सन् १८८६ से स्थापित होने वाले दयानन्द ऐङ्गलो वैदिक कालेज के आधार रूप डी० ए० वी० स्कूल में अवैतनिक मुख्याध्यापक का उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सम्भाला। सन् १८८८ में जब वह स्कूल कालेज हो गया तो अपूर्व स्वार्थ त्याग, अनुपम साहस और विलक्षण कार्य कुशलता आदि गुणों के कारण उन्हीं को प्रिंसिपली का काम सौंपा गया। आचार्य पद से मुक्त होकर कालेज की प्रबन्ध कर्तृ सभा के प्रधान, धर्म प्रचारक, समाज-सुधारक, शिक्षा शास्त्री और लेखक के रूप में उस कर्मयोगी की महान् सेवा पद लोलुपों और स्वार्थियों के लिए जीता जागता उदाहरण है।

आज आर्य स्कूलों के प्रधानाध्यापक और कालेजों के आचार्य रोबदाब दिखाने के लिए बढ़िया २ वस्त्र धारण करते और शानदार कोठियों में ठाठ बाठ के साथ रहते दीखते हैं तो याद आते हैं सादगी और साधुता की मूर्ति आचार्य हंसराज जी जीवनभर सज-धज, साज-सजावट और अकड़-मकड़ से कोसों दूर रहे। जिनका वेश था पगड़ी, बन्द गले का कोट, पजामा, जूता और गृह-सामग्री थी। एक तख्तपोश, दो चार काठ की काली टूटी फूटी कुर्सियां और कई जगह से फटा हुआ कम्बल। उन्होंने यूरोप यात्रा में भी देशीय वेष न त्यागा था। सादापन की इस पराकाष्ठा के बलिहार।

जब मेरा ध्यान गुरुकुल विभाग द्वारा स्थापित स्कूलों और कालेजों की ओर जाता है तो याद आते हैं शिक्षा शास्त्री महात्मा हंसराज जी जिन्होंने एक आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर अपने व्याख्यान में कहा था—'शिक्षा की समस्या बहुत जटिल है और वह कुछ एक बालकों को एकान्त में लेजाकर पढ़ाने से सुलझायी नहीं जा सकती। धन्य थे वह शिक्षणकला के विशेषज्ञ।

जिस समय हम अपने आपको अल्प-स्वल्प संकट आने पर भी घबराया हुआ पाते हैं तो याद आते हैं धैर्य देवता (हरिश्चन्द्र) महात्मा हंसराज जिन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री बलराज के दिल्ली अभियोग में फंसने, धर्मपत्नी के मृत्यु का ग्रास होने, बलराज को पहिले काले पानी और फिर अपील पर ७ वर्ष का कड़ा दण्ड होने और दूसरे पुत्र योधराज व पुत्री चमन देवी के विषमज्वर से

पीड़ित होने पर अपने आचार विचार से किसी को पता न चलने दिया था कि उनके ही सिर पर घोर विपत्तियों के बादल घिरे हुए हैं। 'विपदि धृतिः' का कैसा अत्युत्तम दृष्टान्त।

पदों की लोलुपता के लिए प्रतिदिन आर्य-आर्य लड़ते और लड़ाते देखे जाते हैं तो याद आते हैं निःस्वार्थ आर्य सेवक महात्मा हंसराज जिन्होंने सार्वदेशिक सभा में स्वयं स्थान रिक्त कर दिया था जब उन्हें विदित हुआ कि उनकी वहां उपस्थिति अन्यों को पसन्द नहीं है। परनिमन्त्रण पर गुरुकुल कांगड़ी और वच्छो वाली समाज में चले गये। आर्य समाज के हित की भावना से प्रेरित हो कर।

आज जब आर्य समाजों और आर्य सभाओं में आर्य प्रचारकों को सेवक समझने की मनोवृत्ति पायी जाती है तो याद आते हैं निरभिमानी महात्मा हंसराज जो घर पर पधारे उपदेशकों का आतिथ्य नौकरों से न कराकर साधारण गृहस्थी की भांति स्वयं करते थे। अब देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य पथिक' के शब्दों में :—

'अदाएं शासकों की हैं मगर सेवक कहाते हैं'

मैं जब सुनता हूं कि सन्ध्या में मन नहीं लगता, साप्ताहिक सत्संग में जाकर क्या करना है, आर्य समाज का मुख्योद्देश्य संसार का उपकार करना है और बाद में देश का, पत्र पत्रिकाओं का पढ़ लेना भी स्वाध्याय है और सेवा का कार्य सरकार कर ही रही है तो याद आते हैं दीर्घदर्शी महात्मा हंसराज जो आर्यसमाज के सत्संगों में सन्ध्या, समाज, स्वदेश, स्वाध्याय और सेवा पंच सकार का उपदेश दिया करते थे।

आज जब कि आर्य समाजों के अधिकारियों को यह भी पता नहीं होता कि कौन समाज व उत्सव में आया(किसी के रुग्ण होने की खबर का तो प्रश्न ही नहीं उठता) तो याद आते हैं-प्रधान हंसराज जी जो प्रत्येक सभा सभासद् से निजी परिचय और सम्पर्क पैदा किया करते और सुख दुःख में सम्मिलित हुआ करते थे।

जब मैं अपने आर्य भाइयों को परस्पर झगड़ते और लोगों की उनकी खिल्ली उड़ाते देखता हूं तो याद आते हैं समुद्र सम शान्त और गम्भीर महात्मा हंसराज जो लड़ाई की नौबत ही न आने देते थे और कहा करते थे--"मैं अपने आलोचकों और विरोधियों को इस बात का विश्वास नहीं दिलाना चाहता कि मैं उन के लेख पढ़ लेता हूं।"

जब मैं आर्य नेताओं की परस्पर मान प्राप्ति के अर्थ उलझते देखता हूँ तो याद आते हैं मान को विष और अपमान को अमृत समझने वाले सच्चे ब्राह्मण महात्मा हंसराज जो मलकाना शुद्धि के दिनों में स्वा० श्रद्धानन्द जी के आगरा पधारने पर उन्हें पलंग पर बिठाते थे। कहा करते थे कि 'संन्यासी, शुद्धि सभा के प्रधान और अतिथि के नाते स्वामी जी हमारे पूज्य हैं।'

उस 'निष्काम ऋषि' का जीवन ही उपदेश था इसी लिए उनके त्याग और तपस्या के गुणों को अपने जीवनों में धारण करते हुए अनेक नवयुवकों ने उन के समान अपनी जवानी आर्य समाज के लिए लुटा दी। आर्य समाज की वर्त्तमान अवस्था पर आंसू बहाते हुए आर्यों को देख कर उस त्यागी और तपस्वी महात्मा की याद तड़पा रही है।

आदर्श संन्यासी

(ले०—श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आ० स० लक्ष्मणसर अमृतसर)

मनुष्यों के संगठित समूह अथवा समुदाय का दूसरा नाम समाज अथवा सोसायटी है। जिस प्रकार के व्यक्ति किसी सभा, समाज या जाति के अन्दर अधिक संख्या में होंगे उसके अनुसार, संसार की दृष्टि में ऊंचा या नीचा उसका स्तर समझा जाएगा। पक्की ईंटों या पत्थरों से निर्मित भवन शताब्दियों पर्यन्त दृढ़ता के साथ खड़ा रहता है ठीक इसी तरह सदाचारी और तपस्वियों की समाज अथवा जाति भी अधिक से अधिक समय तक पूरी शान और मान के साथ जीवित रहती है। हमारे पूर्वज अपने आचार और व्यवहार की उच्चता के कारण ही संसार में लाखों वर्षों पर्यन्त चक्रवर्ती राज्य भोगते रहे। अधिक समय नहीं हुआ जब महर्षि दयानन्द तथा उसके सुयोग्य महारथियों ने अपने महान त्याग और तपस्या के बल पर समस्त संसार में आर्य जाति का सर ऊंचा किया। महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द पण्डित गुरुदत्त एम० ए०, पण्डित लेखराम और लाला लाजपत राय आदि ने जो महान कार्य किए उन्होंने इनके नामों को सदा के लिए अमर कर दिया।

देश और जाती की डूब रही नय्या को किनारे पर लगाने वाले एक मात्र खेवट महर्षि दयानन्द के आपनों ही के हाथों समाप्त किये जाने पर समस्त देश में दुःख और शोक की लहर दौड़ गई। वेद के अलौकिक प्रकाश द्वारा जहालत और अन्धकार को दूर करने का शुभ कार्य जो महर्षि ने आरम्भ किया था उसे आगे ले जाने के लिए देश भर के नेता एकत्रित हुए और सर्व सम्मति से लाहौर में एक डी० ए० वी० कालेज के रूप में ज्योति स्तम्भ कायम करने का निश्चय किया गया, जो पहले डी० ए० वी० हाई स्कूल के नाम से आरम्भ किया गया। विदेशी राज्य के अन्दर देश के उत्थान और जाति के कल्याण के हित सरफिरोशों की संस्था का निर्माण करना कितना कठिन कार्य होगा और इसके मार्ग में किस २ प्रकार की कितनी रुकावटें आईं, आज इसका अनुमाण लगाना असम्भव है। उस समय के आर्य नेताओं ने इस शुभ कार्य में बढ़-चढ़ कर भाग लिया, परन्तु महात्मा हन्सराज ने तो अपना जीवन ही इस यज्ञ के अन्दर झोंक दिया। उस समय प्रांत में इने गिने ग्रैजुएट दिखाई देते थे। जब कोई युवक B.A. पास करता, तुरन्त सरकार भारी वेतन देकर

आवश्यकता है। परमावश्यकता है महात्मा हंसराज जैसे चट्टान की तरह दृढ़ और ध्रुव तारे के समान अटल नेता की जो वर्त्तमान आर्यसमाज को महर्षि दयानन्द का आर्य समाज बना दे।

उसके सामने बड़े से बड़ा पद प्रस्तुत कर देती थी। ऐसे समय में महात्मा हंसराज जी ने B.A. पास करके अपनी अमूल्य सेवायें बिना वेतन इस संस्था की भेंट कर दीं और अपने भाई मुल्कराज जी से बहुत थोड़े रुपये मासिक अपने गुज़ारा के लिये लेना स्वीकार किया। इन हालात में महात्माजी और उनके को कई कई दिन भूखे रहना पड़ता था, परन्तु क्या मजाल, उनके दृढ़ व्रत में कोई कमी आई हो।

इस संस्था की उन्नति को देख कर और इसे अपने प्रभाव में लेने के लिये सरकार ने अनेकों बार आर्थिक सहायता देने की स्वयं प्रस्तावना की परन्तु महात्मा हन्सराज इस विचार को अस्वीकार कर देते रहे कि इस संस्था का एक मात्र लक्ष्य वेद का प्रचार है, हम सरकारी सहायता लेकर अपने महान लक्ष्य में किसी प्रकार की बाधा नहीं आने देंगे। महात्मा जी ने मृत्यु पर्यन्त सरकार से एक पैसा लेना स्वीकार न किया और निर्भयता से विद्यार्थियों के हृदय में देश जाति और धर्म के लिये मर मिटने की भावना का सञ्चार करते रहे। और उसी भावना के परिणाम स्वरूप इस संस्था ने श्री भक्त सिंह जैसे जान पर खेल जाने वाले दीवानों का निर्माण किया। डी. ए. वी. संस्थाए निस्संदेह हीरो की कान है, और सञ्चालक महानुभाव चाहे तो इनके द्वारा दिलों मे देश और जाति की काया पलट सकते है। काश आर्य समाज में फिर से कोई महात्मा हंसराज जन्म ले।

महात्मा जी गृहस्थी होते हुये भी उच्चकोटि के त्यागी और एक आदर्श संन्यासी थे। काम, क्रोध, लोभ मोह और अहङ्कार पर उन्हें विजय प्राप्त थी। भय इनके समीप फटक नहीं सकता था। जाति की हीनता और देश की पराधीनता के दुःख बेचैन रहना उन्हें अपने गुरु से विरसा में मिला था। देश के किसी भी कोना में भूकम्प, अकाल, अथवा हिन्दु मुसलिम दङ्गा की सूचना पर वह तड़प उठते थे और तन, मन तथा धन द्वारा दुखी भाइयों की सहायता में दिन रात एक कर दिया करते थे। सच्च तो यह है कि उन के जीवन से आर्य समाज में जीवन था। आज भी उन्हीं के पद चिन्हों पर चल कर ही अपना और संसार का कल्याण कर सकते हैं।

श्री. सेवकराम जी यात्री

आर्य प्रादेशिक सभा के पुराने महारथी, कार्यकर्ता तथा एबटा बाद सीमाप्रांत समाज के प्राण कहे जाते थे। आज कल शूगरमिल आर्यसमाज खतौली में सेवा में लगे हैं। समाज मन्दिर का उद्घाटन महात्मा आनन्द स्वामी जी के हाथों हो रहा है तथा आर्यप्रादेशिक सभा के वेद प्रचाराधिष्ठाता पं. रुशीराम जी की कथा हो रही है।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

प्रादेशिक सभा के नेता की याद

(ले०—श्री पण्डित चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी, उपदेशक सभा, सोनीपत निवासी)

दूरदर्शी महान आदर्श त्यागी साध मनोवृत्ति के नेता पूज्य महात्मा हंसराज जी जिन पर लाखों साध जो कपड़े रंगे फिरते हैं, कुर्बान किये जा सकते हैं, ये शब्द थे जो स्वर्गीय वीतराग साध स्वामी सवदानन्द जी महाराज ने कहे थे, जो स्वयं मैंने लाहौर के एक उत्सव पर सुने थे। वे वास्तव में पंजाब के निर्माता थे। इन्होंने लगभग ६०-६५ वर्ष पूर्व लाहौर ही में आर्य प्रादेशिक सभा की स्थापना कर दी। जिस सभा का सुनहरी इतिहास बहुत ही उज्ज्वल है। भारत के किसी कोने में अकाल, भूचाल आदि कष्ट आया, ये महात्मा वहां दौड़े सभा के त्यागी प्रचारक पहुंचते। सभा की सेवा कार्य को देखकर गैर हिन्दू भी धनादि से सहयोग देते थे। हिन्दू धनी मानियों ने तो अपनी धन की पेटियां खोल प्यारे आर्य नेता की सभा की झोली भर देते रहे। आर्य प्रचारकों के पांओं धोया करते व आदर करते। वह युग श्रद्धा का युग था महात्मा जी ने प्यारे गुरु दयानन्द के मिशन को चहुं ओर फैलाने में रात दिन एक कर दिया करते। सैकड़ों प्रचारक व विद्वान सभा के द्वारा जनता की सेवा करते रहे, अंग्रेजी सरकार और कई राजनीतिक नेता इन्हें अपनी ओर फिसलाने की करते रहे। विश्व को आर्य बनाने वाले दूरदर्शी नेता इस चंगुल में न फंसें कहीं भी अपने सिद्धान्तों हित आन्दोलन चले, इस प्यारे की सभा ने कमाल का जौहर दिखाया। शुद्धि का कार्य इस सभा का अनोखा और गौरवशाली कार्य रहा। कई अपने भी स्वार्थी नेता गिरि में सामाने आए पर जनता ने पूज्य महात्मा जी का १६ आने साथ दिया ये सभा चहुं दिशाश्रम की कालिज आदि संस्थाएं इस सभा को अपनी सभा समझा और साथ दिया, लाखों की राशि इसकी बैंकों में थी। इनके स्वर्गवास बाद सन् १९४६ के अन्त तक सभा का कार्य खूब फैला। कुछ एक नेताओं ने विशेषकर वर्तमान आदेश आर्ययोगी महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने सभा की सेवा की। योग्य साधु और वानप्रस्थियों के कारण सभाएं जीवित रह सकती हैं। दुर्भाग्य से १९४७ में देश का विभाजन हुआ। सभा की करोड़ों की सम्पति नष्ट-भ्रष्ट हो गई। लाखों की राशि बैंकों द्वारा हुई। आए वर्ष पूज्य महात्मा जी की याद मनाते हैं। वेद प्रचार की ओर एवं सभा का ध्यान नहीं रखते उनकी बनाई सभा को को भूलते जाएं और दम भरें कि हम पूज्य महात्मा हंसराज जी के भक्त हैं। जड़ों को पानी न देना पत्तों को पानी देने वाली कहावत चरितार्थ होती है। अभी थोड़े समय में शुभ घड़ी आने वाली है। जिन्हें जन्मशताब्दी कहेंगे आर्य बन्धु संगठित हो कर जन्म शताब्दी मनाएं सरकार की रुचि भी इस ओर दिलानी चाहिये कितने आर्य दिवाने सरकारी ऊंचे पदों पर हैं वे अवश्य प्रयत्न करें और सदैव

महात्मा हंसराज जी के संस्मरण

[ले०–श्री किशोरी लाल जी प्रेम, सिरमौर (हि० प्र०)]

महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की निर्माण अर्ध शताब्दी के अवसर पर अजमेर में मुझे पूज्य महात्मा हंसराज जी के शुभ दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस समय मैं नया-नया आर्यसमाजी था। मेरी आयु भी कम थी परन्तु फिर भी मैं महात्मा जी की सौम्य मूर्ति और मधुर वाणी से बहुत प्रभावित हुआ। उस समय उत्सव में एक प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ। क्या था ये तो मुझे याद नहीं परन्तु इतना याद है कि उस प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष में दोनों ओर से बहुत वादविवाद हुआ। दोनों पक्षों ने एक दूसरे की कटु आलोचना की वातावरण में बहुत अधिक तनाव उत्पन्न हो गया था उस समय यद्यपि म० हंसराज जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं था फिर भी उन्हें दो महानुभावोंने

काल के लिये आर्थिक संकट से सभा को बचाएं। पूज्य महात्मा जी के बनाए नियमों पर सभा को चलाएं प्रचारकों का पूरा सम्मान रखें इसमें बर्तमान पूज्य म० हंसराज जी के भक्तों का सम्मान व गौरव होगा वर्तमान युग में इस सभा द्वारा बहुत देश सेवा करनी है। कई सामाजिक और राजनीतिक त्रुटियां हैं इसे निडरता से सुलझाना होगा। वर्तमान अवस्था पर एक टक नज़र डालें पूज्य महात्मा जी की सभा के हर पहलु को सुदृढ़ करें यही प्रादेशिक सभा की याद है।

दोनों बाहुओं से पकड़ कर धीरे-धीरे वेदी पर लाया गया। थोड़े से शब्दों में महात्मा जी ने अपने विचार, प्रकट किए और इस के साथ सारा वातावरण शांत हो गया। इसके पश्चात मुझे महात्मा जी के पुनः शुभ दर्शन न हो सके परन्तु जिस समय मुझे उनका ध्यान आता है उनकी सौम्य मूर्ति मेरी आंखों के सामने आ जाती है।

महात्मा जी की सादगी सरलता तप त्याग वीरता और अमृत भरी मीठी वाणी के विषय में विस्तार से कुछ न कह कर दो तीन घटनाओं का वर्णन अवश्य करना चाहता हूं। महात्मा जी के बाल्य-काल की एक घटना इस प्रकार है कि जब वे मिशन हाई स्कूल लाहौर में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे उस समय एक बार पाठशाला के मुख्याध्यापक ने प्राचीन आर्यों के सम्बन्ध में कुछ अनुचित शब्द कह दिए उन्होंने कहा कि प्राचीन आर्य मूर्ति पूजक थे वृक्षों तथा पत्थरों की पूजा करते थे। वे असभ्य और अशिक्षित थे। बालक हंसराज इन बातों को न सह सके। उन्होंने बड़ी निर्भीकता से मुख्याध्यापक की इन बातों का विरोध करते हुए उनके आक्षेपों का उत्तर दिया। इस पर उन्हें स्कूल से निकाल दिया गया। परन्तु उनके अन्य सद्गुणों के कारण दो दिन के पश्चात उन्हें पुनः स्कूल में बुला लिया गया।

इसके पश्चात उनके जीवन का सबसे

महत्वपूर्ण क्षण वो था जब उन्होंने अपने लक्ष्य को साकार रूप देने का मार्ग चुना। बी० ए० की परीक्षा में सारे कालेज में द्वितीय रहे (प्रथम आने वाले भी आर्यसमाज के महाविद्वान पं० गुरुदत्त जी थे) यदि महात्मा जी चाहते तो वकालत पास करके लाखों में खेलते अथवा सरकारी नौकरी कर के धन और मन दोनों का अधिकाधिक उर्पाजन कर लेते। यदि वह चाहते तो एक और परीक्षा देकर **Extra-Assistant-Commissionar** बन सकते थे परन्तु तप और त्याग की मूर्ति हंसराज ने सुख और वैभव के मार्ग को ठोकर मारते हुए कांटों भरे मार्ग को अपनाया। उस समय आर्य समाजी महर्षि दयानन्द के मृत्यु-स्मारक के रूप में दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना करना चाहते थे। परन्तु धनाभाव के कारण ऐसा करना असम्भव प्रतीत होता था। उस तपस्वी महात्मा ने बड़ी वीरता से कालेज को अपनी अवैतनिक सेवाएं अर्पित कर दीं। महात्मा जी ने २५ वर्ष तक डी. ए. वी. कालेज में कार्य किया। इसके पश्चात जब उन्होंने आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का कार्यभार सम्भाला तब भी वे अपना कुछ समय कालेज को देते रहे। कहने की आवश्यकता नहीं कि आज स्थान २ पर डी. ए. वी कालेज और स्कूल फल फूल रहे हैं तथा अन्य सब स्कूलों और कालेजों से अधिक उन्नतिशील हैं।

महात्मा जी सादगी के अवतार थे अभिमान तो उन्हें छू भी नहीं गया था। एक बार रावलपिंडी के एक सज्जन जो कि आर्य समाजी न थे अपने पुत्र के बहुत अनुरोध पर उसे डी. ए. वी कालेज में प्रविष्ट कराने के लिए लाहौर आए। वापिस जाने से पहले उन्होंने प्रिंसिपल से मिलने की इच्छा व्यक्त की। पहले तो वे हिचकिचाए। उन्होंने सोचा कि डी. ए. वी कालेज का प्रिंसिपल बड़े ठाठ बाठ से एक बड़ी कोठी में रहता होगा। परन्तु उस समय उनके आश्चर्य की कोई सीमा न रही जब उन्हें एक साधारण से मकान में ले जाया गया वहां उन्होंने एक सज्जन को बहुत ही सादे कपड़ों में तख्तपोश पर बैठे हुए पाया। वे सज्जन उन से प्रेम से वार्तालाप करते रहे। बाद में उन्हें पता लगा कि जिन से वे बातें कर रहे थे वे ही प्रिंसीपल महोदय थे। वे व्यक्ति महात्मा जी की सादगी से इतने प्रभावित हुए कि उसी समय से आर्यसमाज के सदस्य बन गए।

कहां तक वर्णन करूं ? यदि हम उनके जीवन के किसी एक गुण को भी अपने जीवन में धारण कर सकें तो हमारा सौभाग्य होगा।

आर्यसमाज माटुंगा (बम्बई)

माटुंगा व दयानन्द विद्यालय का वार्षिकोत्सव २५ से २८ अप्रैल तक आर्यसमाज मंदिर में बड़ी सजधज के साथ सम्पन्न हो रहा है। इस अवसर पर अनेक समयोपयोगी सम्मेलनों का प्रबंध किया गया है तथा देश के अनेक संन्यासी महात्माओं तथा विद्वानों के अमृतमय उपदेश तथा भाषण होंगे। जनता दर्शन देकर अधिकारियों का उत्साह बढ़ाएं।—ओंकार नाथ मन्त्री समाज

आर्यसमाज पुलबंगश देहली

में आर्यसमाज स्थापना दिवस तथा रामनवमी के त्योहार बड़े उत्साह के साथ सम्पन्न हुए। इस समाज ने १७००) का ऋण भी अदा कर दिया है। सदस्यों की संख्या बढ़ाने का कार्य भी तेजी से हो रहा है।—सुरेश कमार मन्त्री, समाज।

ओ३म्

आर्य

टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का स.

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक

वर्ष २३ अंक १७) रविवार १६ वैशाख २०२०— २८ अप्रैल १९६३ दयानन्दाब्द

वेद सूक्तय:

कामानस्माकं पूरय

परमदेव ! हमारी शुभ कामनाओ को पूर्ण कर दो । जीवन मे जो जो हम शुभ कामना करते है और करे, जिस से विश्व का भला होता है—आप की कृपा से वह सदा पूरी होती रहे ।

प्रतिगृह्णाहि नो हवि:

हे दयामय ! नः-हमारी हविः-प्रार्थना, समर्पण स्वीकार करिये हम आपके है आपको आत्म-समर्पण करते है—कृपा करके अपना जान कर स्वीकार करे। हम आपके ही है—

शतं जीव शरद:

हे मनुष्य ! तू कम से कम सौ वर्ष तक जीता रह । मानव जीवन में कम से कम सौ वर्ष तक आनन्द से काम करता रहे। [illegible] से पहले कभी न मर।

[illegible] अथर्व वेद

वेदामृत

शंनो द्यावा पृथिवीपूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो शंन ओषधीर्वनिको भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु

ऋक् म० ७ सू० ३५ ।

अर्थ:—(शंनः) हमें सुखकारी हों ये (द्यावा पृथिवी) द्युलोक और उसके सूर्य आदि तथा भूमि व उसके अन्नादि सारे तत्व (पूर्वहूतौ) आगे चलने वाले शुभ कर्मों में (शम) शांति हो। (अन्तरिक्षम्) यह अन्तरिक्ष लोक (दृशये) देखने के लिए (नो अस्तु) हमें कल्याण वाला हो। इसके चन्द्र आदि पदार्थ हमे सदा शांति शीतलता देने वाले हो। (शंनः) और सुखकारक हों ये (ओषधीः) सारी ओषधिया (वनिनः) वन आदि में पैदा होने वाली (भवन्तु) होवे (शं न.) शांति देने वाला हो (रजसः पतिः) सारे विश्व लोकों का स्वामी (जिष्णु) सदा विजयी प्रभु (अस्तु) होवे—

भाव :—तीन लोक हैं—पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक। इन मे नानाप्रकार के अन्न, चन्द्र आदि और सूर्य आदि दिव्य पदार्थ विद्यमान हैं। हे प्रभो ! आप सारे लोक लोकान्तरो मे सर्वत्र ही व्यापक हो रहे हैं—इसी लिए आप विष्णु कहलाते हैं तीनों लोकों के पदार्थ हमें सुख शान्ति और कल्याण देने वाले बनें। जीवन में हम आप की कृपा से नाना प्रकार के ज्ञान विज्ञान को प्राप्त कर विविधतत्वों का भली प्रकार से विवेचन कर सकें। पृथिवी के सारे पदार्थ हमें कल्याण कारी हों चन्द्र विद्या, सूर्य ज्ञान से हम अपना तथा सब का भला कर सकें। प्रभो ! आप विजयशील हैं। सारे लोकों के धारक, नियामक, पालक हैं। हम भी तो आपके ही अमृत पुत्र हैं। हमें अपना सदा अशीर्वाद देते रहें—सं.

शहीदी सम्मेलन म जन-सम्पर्क प्रगति के प्रधान श्री यश ने नेफा तथा लद्दाख मे चीनियो का साहसपूर्वक मुकाबिला करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए भारतीय वीरो को श्रद्धाजलि भेट करते हुए मशालो के जलूस के महत्व पर प्रकाश डाला।

उन्होने कहा कि चीनी शत्रु के विरुद्ध जनता के सकल्प और विश्वास को दृढ़ करने तथा लोगो को इस सकटकाल मे अपनी जिम्मेदारियो से अवगत कराने के लिए मशालो के साथ जलूस निकालने का फैसला किया गया।

१० हंसराज

(.ोश प्रसाद कौशिक रुडकी कलां)

्द के आकाश का रौशन सितारा हंसराज।
बेकसों की जिन्दगी का सहारा हंसराज।
तप था उसका उत्कृष्ट, आदर्श था उसका त्याग।
गूंजा था उसके सितार से वैदिक धर्म का राग।
डूबती किश्ती धर्म की, का किनारा हंसराज।
जो बताया था ऋषि ने, चल पडा उस राह पर।
रो पड़ा करता था दिल, दुखियों की एक आह पर।
भारत का सच्चा पुत्र था, सबका प्यारा हंसराज।
हिन्द के आकाश का......
पाखण्ड को खण्डन किया, और बचाया धर्म को।
पत्थर कभी ईश्वर नहीं, न मिटने दिया इस मर्म को।
पहुंचा वहां, जिसने जहां, कौशिक पुकारा हंसराज।
हिन्द के आकाश का .....

जो लोग मोक्ष की अपेक्षा सांसारिक सुख को बहुत महत्व देते हैं वे वस्तुत वास्तविकता से अपरिचित हैं। संसार में सुख तो है परन्तु आनन्द नहीं है और सुख भी दु.ख मिश्रित है। कपिलाचार्य ने ठीक ही कहा था "उत्कर्षादपि मोक्षस्य सर्वोत्कर्ष श्रुतेः।"

मोक्ष प्राप्ति के दो साधन ज्ञान और कर्म हैं जिन को यजुर्वेद में ४० अध्याय में "विद्यां चाऽविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह" कह कर पुकारा गया है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यत्यार्थ प्रकाश मे मोक्ष-प्राप्ति के ४ साधन लिखे हैं विवेक बैराग्य, षटक सम्पत्ति और मुमुक्षुत्व यदि देखा जाए तो विवेक ज्ञान के

भ ।
। ा के
द्या, अस्मिता,
.भिनवेश (मृत्यु
पृथक हो जाते हैं।
्क्तावस्था में भौतिक
ा आनन्द प्राप्त नहीं
कोई भौतिक अंश जीव के
हीं रहता। शुद्ध जीव और
ा शक्ति ही रहती है जिस
के आधार पर वह ब्रह्मानन्द
। करता, मुक्त जावों से
लोक-लोकांतरों मे विचरण
' वह उस अवस्था में
र्थों से सुख को प्राप्त
अपितु ब्रह्म के आधार
पर आ प्राप्त करता है। वह एक निश्चित स्थान पर बद्ध हो कर नहीं रहता। मुक्ति का समय ३६००० बार सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय के समय के बराबर है। एक ब्रह्म दिन या ब्रह्म रात्रि का समय ४, अरब और ३२ करोड़ वर्ष है इस को ७२००० से गुणा करने पर यह समय ३१ नील १० खरब ४० अरब वर्ष बनता है। इतना समय जीव आनन्द को प्राप्त कर के फिर मनुष्य शरीर को धारण करता है। मुक्ति से पुनरावृत्ति वेद सांख्य दर्शन और मुण्डकोपनिषद ने स्वीकृत की है।

चारवाक 'देहस्य नाशो मुक्तिः' शारीर का नाशा ही मुक्ति होती है ऐसा कहता है। परन्तु यह कोई मुक्ति नहीं है। यदि मुक्ति यही है तो यह गधे और कुत्ते को भी प्राप्त है। इस मे पुरुषार्थ की तो आवश्यकता ही नहीं है।

बाईबल एक विशेष ध्यान पर स्वर्ग के अस्तित्व को स्वीकार करती है। यदि स्वर्ग को एक निश्चित स्थान पर माने तो यह मुक्ति भी जीव के लिए एक बन्धन ही सिद्ध होगा। फिर उस स्वर्ग में २० करोड़ पड़चढ़ी सेना का होना स्वर्ग मे ईश्वर पूजन शैतान के साथ लड़ाई इत्यादि ये सब बाते तर्क से हीन हैं।

कुरआन ने जन्नत का चित्र खींचा है और संसार को एक बहुत बड़े धोखे में रखा है। उस जन्नत में दूध की नहरें होंगी, जन्नत वाले सोने के कंगन पहनेंगे, तख्तों पर विश्राम करेंगे, अंगूर और मांस खाएंगे और मदिरा पान करेंगे। यदि यही पदार्थ वहां भी मिलने हैं तो यह स्वर्ग संसार से कुछ विशिष्ट नहीं हैं। जब कुरआन ने शराब का पीना यहां अनुचित ठहराया तो वहां आज्ञा क्यों दी? जन्नत में विशेषता यही है कि वहां के लग सदा रहेंगे दूसरे वहां ७२,७२ स्त्रियां (हूरे) मिलेंगी। जो संयोगज शरीर है वह सदा नहीं रह सकता। सदा के लिए आनन्द भी विष के तुल्य हो जाएगा। निश्चित कर्मों का फल अनन्त मिलेगा। तो ईश्वर अन्यायकारी सिद्ध होगा। क्या एक व्यक्ति ७२ हूरों को संभाल पाएगा यह भी एक विचारणीय समस्या है। हूरों ने कौन से पवित्र कर्म किए थे जिनके फलस्वरूप उन्हे सदा के लिए जन्नत मिली। यदि जन्नत में सदा रहने वाली स्त्रियां खुदा ने बनाई तो सदा रहने वाले पुरुष क्यों न बनाए? इससे पता चलता है कि खुदा को स्त्रियों से अधिक मोह है। वे स्त्रियां कयामत तक दिन कैसे काटती होंगी? यदि खुदा के आश्रय पर दिन काटती हैं तो फिर खुदा जन्नत की हूरों में फंसा हुआ है। कुरआन की यह जन्नत, यह फल प्राप्ति और मोक्ष का यह स्वरूप सब और युक्ति हीन बातें हैं।

अन्ततः यही स्वीकार करना पड़ता है कि वैदिक सिद्धांत ही सर्वोत्कृष्ट सिद्धांत है जो कि सबको स्वीकार करने योग्य है। उसी के स्वीकार करने में हम सब का कल्याण है।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार १६ बैसाख २०२०, २८ अप्रैल १९६३ [अंक १७

वेदों का अंग्रेज़ी भाष्य

आर्यसमाज की स्थापना वेद-प्रचार के लिए हुई। वेद आर्यों के लिए परमधर्म माना गया है। वेद पर पुरातन काल में भारतीय और विदेशी भाष्यकारों ने जितने कुत्सित आक्रमण किये उनको पढ़ कर पढ़ने वालों को वेदों से ही अश्रद्धा होने लगती है। आर्य-समाज के सामने वेदभाष्य विशेष कार्य था इस ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। सार्वदेशिक सभा जैसी प्रमुख संस्था भी इधर-उधर के कामों में लग गई। कुछ मान्य व्यक्तियों ने इस दिशा में व्यक्तिगत रूप में यह काम अपने हाथ में लिया। वे वधाई के पात्र हैं। वेदों का हिन्दी भाष्य तो मिल जाता है। पर अंगरेजी भाष्य की ओर तो किसी का भी ध्यान नहीं गया। पश्चिमी इंगलिश भाष्यकारों ने वेदों के जो अनर्थ किए हैं उनसे भाष्य स्वयं लज्जित होते हैं। सबके सामने वही भाष्य हैं।

महामना ला० देवीचन्द जी एम० ए० प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यारपुर आर्यसमाज के पुराने मान्य नेता हैं। गवर्नमैंट कालेज लाहौर से इंगलिश की एम० ए० करने के बाद जवानी में अपना जीवन समाज की सेवा में अर्पण कर दिया। होश्यारपुर जिला को अपना कार्य क्षेत्र बना कर शिक्षा व प्रचार कार्य किया। दयानन्द साल्वेशन मिशन की स्थापना करके भारत में ईसाईयत के प्रवाह को रोका। होश्यारपुर जिला में समाज के कितने स्कूल, कालेज तथा समाजें हैं—यह श्रेय [illegible] महामना जी को ही है। स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के दाये हाथ रहे हैं। आर्य प्रादेशिक सभा के आरम्भ से स्तम्भ चले आ रहे हैं। लेखक व वक्ता हैं। सारा आर्य-समाज उनके नाम तथा काम से परिचित है। वेदों के इंगलिश भाष्यकार के रूप में उनका काम और स्थान इतिहास में ऊंचा रहेगा। उनके मन में इस कमी को देखकर विचार हुआ तथा इस कार्य को अपने हाथ में लेकर अंगरेजी भाष्य आरम्भ कर दिया। इस पचासी वर्ष की आयु में कितना बड़ा काम था—पर समाज के नेता, वेदों के परम श्रद्धालु, ऋषि के भक्त जुट गये। गत दिनों यजुर्वेद का सारा इंगलिश भाष्य करके प्रकाशित हो चुका है। महामना जी की इंगलिश भाषा पर पूरी कमांड है। अब दिन रात एक करके सामवेद का इंगलिश भाष्य भी पूर्ण करके छप गया है। पुस्तक, भाष्य कितना सुन्दर है—मन्त्रों के कितने सुन्दर, ज्ञान बढ़ाने वाले, सरल भाषा में, दिल में उतर जाने वाले अर्थ किये हैं जिन को पढ़ कर वेदों पर श्रद्धा बढ़ जाती है। इस के लिए कितना परिश्रम किया गया है यह तो देखने व पढ़ने से पता चलता है। जो काम बड़ी से बड़ी सभा न कर सकी—वह महान् कार्य आर्य समाज के मान्य महारथी ने अपने हाथों में ले कर घोर परिश्रम कर के व्यक्तिगत रूप में सम्पन्न कर दिया है—सारे आर्य जगत् की ओर से वधाई के पात्र हैं। मैक्समूलर ग्रिफिथ आदि के पीछे सारा योरुप था, बड़े विश्व-विद्यालय थे, करोड़पति लोग थे—तब भी कितना निंदनीय उन लोगों ने भाष्य किया। पढ़ कर लज्जा भी लज्जित होने लगती है। पर इस मान्य महामना ने सारा यह काम व्यक्तिगत किया, कितना देश व संसार पर उपकार किया। यदि कोई दूसरा देश होता तो वेद के इस महान् भाष्य के परिश्रम पर इस मान्य नेता स्कालर को सरकार तथा विश्वविद्यालयों से भारी पुरस्कार मिलता। पर भारत में ऐसी आशा कहां? हम मान्य प्रधान जी को उनके दो वेदों के शानदार भाष्यों पर हार्दिक वधाई देकर नम्र निवेदन भी करना चाहते हैं कि अभी दो वेद बाकी हैं। वे इन से बहुत बड़े हैं। हम चाहते हैं कि श्री ला० देवीचन्द जी अन्य इधर उधर के सारे कार्यों से अपना सारा समय निकाल कर ऋग्वेद तथा अथर्व वेद का भी इंगलिश भाष्य पूर्ण करने में लग जावें। दूसरे कार्य करने वाले तो और योग्य लोग मिल जायेंगे पर वेद भाष्य का काम और कौन करेगा? सारा समय इसी पवित्र कार्य में लगा देना चाहिए। समाज की यह अमूल्य सम्पत्ति होगी। यह भाष्य भारत के सारे पुस्तकालयों, समाजों, स्कूलों कालेजों के पुस्त-कालयों में रखे जाने आवश्यक हैं। इस पर सार्वदेशिक सभा तथा सरकार की ओर से पुरस्कार भी मिलना चाहिए। हम पुनः मान्य प्रधान जी को हार्दिक वधाई देते हैं कि इतने महान कार्य में वह लगे हैं। बाकी सारे कार्य सर्वथा छोड़ कर अन्य वेदों के भाष्यों में लग जायें। प्रभु उनको इस कार्य में स्वास्थ्य, शक्ति अधिक प्रदान करें ताकि इस आवश्यक शानदार वेद-भाष्य के कार्य को पूर्ण कर सकें। इतिहास में उनकी यह कृति अमर रहेगी। वेदों के इंगलिश भाष्यकारों में आर्यसमाज की इस विभूति का नाम सर्वोपरि रहेगा। —त्रिलोक चन्द्र

आर्यसमाज जम्मू का दर्शनीय समारोह

इस बार भी जम्मू नगर की आर्यसमाज पुरानी मंडी, हस्पताल रोड़ तथा अन्य समाजों की ओर से सम्मिलत वार्षिक महोत्सव बड़े ही समारोह से मनाया गया। नगर कीर्तन का जलूस तो वहां इतिहास की वस्तु बन गया है। इतना शानदार, भारी तथा उत्साह से भरा था—सारा नगर छतों पर, बाजारों में, गलियों में, चौराहों में इकट्ठा हो गया था। श्री कुंवर सुखलाल जी जीप में बैठे थे। जल्से में पं० रुद्रदत्त जी शास्त्री, पं० त्रिलोक चन्द शास्त्री, पं० रघुवीर सिंह शास्त्री देहली, स्वा० प्रणवानन्द जी, ठा० दुर्गासिंह, जगतराम, बस्तीराम मंडली ठा० शमशेरसिंह, यात्री जी मंडली पधारे थे। सारा नगर ही जलूसमय तथा उल्लासमय बन गया था। अपने स्कूलों की लड़कियां, देवियां, समाजों के सज्जन, युवक, जनता का उत्साह देखकर समाज की पुरानी याद आ गई। जलसा क्या था मानो मेला ही लगा हुआ था। समाजों के सज्जन श्री कृष्णलाल जी प्रधान, श्री मोहनलाल मोत्याल श्री मुल्क-राज जी मैनेजर, श्री ओंप्रकाश जी, श्री गोपाल जी मन्त्री, श्री ईश्वर-दास जी प्रधान, श्री अमरनाथ जी व सारी स्त्री समाजको हार्दिक वधाई सब प्रकार का प्रबन्ध उत्तम था। जम्मू की जनता इस समारोह को देर तक याद करेगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

अपनी हीरक जयन्ती १० से १२ मई को लखनऊ के डी० ए० वी० [illegible] की भूमि में मना रही है। इस अवसर पर भारत सरकार के [illegible], विद्वान् व संन्यासी [illegible] रहे हैं। —मन्त्री

दिल्लीमें महात्मा हंसराज जी के जन्मदिन पर मैंने आर्य नेताओं और जनता में अनोखी झलक देखी

(ले०—प चन्द्रसेनजी आर्य हितैषी उपदेशक सभा, सोनीपत निवासी)

बन्धुओ ! हर वर्ष की १९ अप्रैल को आर्य जगत के वीतराग सफेद कपड़ों में रहने वाले आदर्श साधु नेता स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी का जन्म दिन बड़ी श्रद्धा से आर्य सज्जन मनाते हैं महात्मा जी का जन्म १९ अप्रैल सन् १८६४ में बजवाड़ा ग्राम जि० होशियारपुर में हुआ परन्तु दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों एवं आर्य-प्रादेशिक उपसभा ने इस १४ अप्रैल रविवार को डी० ए० वी० हायर सेकैंड्री स्कूल चित्रगुप्ता रोड के विशाल ग्राऊंड में प्रातः ८। बजे से ग्यारह बजे तक ये जन्म दिवस बड़ी धूमधाम से आर्यजगत के आदर्श आर्य योगीराज पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती की प्रधानता में मनाया गया जिस में दिल्ली के सारे आर्य स्कूलों के विद्यार्थियों के अतिरिक्त बड़ी भारी संख्या में आर्य सज्जन भी आए जिस में स्कूलों के कुछ लड़कों ने भी अपने प्यारे नेता को श्रद्धांजलि दी, माननीय गौरवशाली आर्य नेता आदर्श आर्य साधु पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती प्रधान आर्य सार्वदेशिक सभा माननीय परम ऋषि भक्त तथा आर्य नेता श्री मेहरचन्द जी महाजन प्रधान डी० ए० वी० कालिज मैनेजिंग कमेटी दिल्ली पुराने आर्य नेता पूज्य डा० गोकलचन्द जी नारङ्ग श्रीमान ला० रामगोपाल जी शालवाले प्रधान आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली कविराज ला० हरनामदास जी बी० ए० आदि नेताओं ने पूज्य महात्मा जी को श्रद्धांजलि दी मुझ सेवक को भी बोलने का तथा श्रद्धांजलि भेंट करने का शुभ अवसर मिला स्टेज मन्त्री श्री राजकुमार जी जो आर्यप्रादेशिक उपसभा के महामन्त्री हैं ने कार्यक्रम चलाया जब मेरा समय आया मैंने वेदप्रचार की प्रगति की ओर संकेत किया ये कार्य शिथिल अवस्था में हैं महात्मा जी की बनाई सभा को जीवत रखना पूज्य महात्मा हंसराज जी की सच्ची याद है श्री महाजन जी ने कालिजों का जाल बिछा दिया वेद प्रचार के कार्य को बन्द नहीं करना चाहिये मेरे बाद सार्वदेशिक सभा के प्रधान पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती ने मेरे मन की और आज सभाओं की तथा आर्य समाजों की अवस्था को देख कर खूब गम्भीर चेतावनी देते हुए पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज से प्रार्थना की कि आर्य प्रादेशिक सभा की अवस्था को देख आज क्या हालत है ये स्वर्गीय आर्य नेता की सभा है इसे शिथिल क्यों होने देवे महात्मा आनन्द स्वामी जी इस सभा के प्रधान हों संन्यासी ही सभाओं को सुदृढ़ करते हुए वेद का प्रचार करें मान अपमान की परवाह नहीं करनी चाहिये इस मार्मिक अपील से सारी जनता में खुशी की लहर दौड़ी इस पर श्री राजकुमार जी ने जालन्धर के वार्षिक अधिवेशन के एक प्रस्ताव की चर्चा कर दी फिर पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने खड़े होकर जनता से कहा सब खड़े होकर श्री महात्मा जी को मजबूर करो वे सभा के प्रधान पद को लेवे, सारी जनता ने खड़े होकर प्रार्थना की, पूज्य महाजन जी ने भी खड़े होकर महात्मा जी को इस कार्य को हाथ में लेने का आग्रह किया। परम ऋषि भक्त ला० भगवानदास जी पुरी ने चरण छूकर कहा सभा की हालत खराब है इस के प्रधान बनें पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने कहा अधिक नहीं तो कम से कम तीन वर्ष तक इस सभा को समय दे हर चिन्ता से मुक्त कर देवें इस महान आग्रह को तथा अनोखी झलक को देखकर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी हैरान से रह गये जनता के अपार प्रेम को देख कर अपने स्वर्गीय आर्य नेता को श्रद्धांजलि देते हुए कहा मैं स्वतन्त्र रह कर समाज सेवा करना चाहता हूं आप के इस आग्रह पर मैं अवश्य विचार करूंगा इस के बाद जयकारों के बीच सभा की कार्यवाही समाप्त हुई सारा आर्य जगत और सभा का स्टाफ व समस्त प्रचारक मंडल भी ऐसा चाहता है तो आदर्श आर्य साधु पूज्य म० आनन्द स्वामी जी महाराज को चाहिये जिस स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी ने जब ये सभा आप को देदी तब आप इसे लड़खड़ाती अवस्था में क्यों छोड़ते हैं इसे तीन वर्ष में अति शक्तिशाली बना सकते हैं बनाये इस सभा को अपने पाऊं खड़े होने वाली बना दें जनता के इस आग्रह को देख ये प्रार्थना स्वीकार करें अब आप की अपील पर पूज्य श्री मेहरचन्द जी महाजन आदि नेता भी पूर्ण सहयोग देंगे इस आर्य प्रादेशिक सभा को सुदृढ़ करेंगे हम आशा करते हैं पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी तथा माननीय महाजन जी हैं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी से स्वीकृति लेकर नई घोषणा उत्साह जनक करें ताकि वेद प्रचार का कार्य बढ़ सके इसी में सभी आर्य नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओं का गौरव है

आर्य समाज हुशियारपुर का चुनाव

आर्य समाज हुशियारपुर के अधिकारी तथा अन्तरंग सभा के सदस्यों का चुनाव रविवार ५ मई तथा पार्वती महिला महाविद्यालय के सदस्यों का चुनाव १२ मई रविवार प्रातः ६ बजे डी० ए० वी० H/S स्कूल हुशियारपुर में होगा। इसलिए सब सदस्य ठीक समय पर पधार कर निर्वाचन में भाग लें।

दोनों पार्टियों का सम्मिलित निर्णय आर्यसमाज हुशियारपुर में १८-४-६३ को हुआ। यह चुनाव कार्य आर्य प्रादेशिक सभा के अधिकारी श्री ला० शंकरदास जी त्रेहन की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा।

ज्ञानचन्द भाटिया
सीनियर उपप्रधान सभा

आर्यसमाज लारेंस रोड अमृतसर

गत दिनों आर्यसमाज लारेंस रोड में श्री पं० चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी व पं० हजारी लाल जी की कथा व भजन प्रातः समाज मन्दिर में और सायं कम्पनी बाग में होते रहें। धर्म प्रेमियों ने इस सुअवसर से काफी लाभ उठाया। इस समाज में प्रतिदिन ही कथा का प्रबन्ध रहता है।

इस अवसर पर ५०/- वेदप्रचार को प्राप्त हुआ। यह समाज समय-समय पर सभा की भारी सहायता करती रहती है।

श्री पं. अमर सिंह जी अध्यक्ष आशाला करनाल

मंडल की अध्यक्षता में निम्न जलसे सम्पन्न हो रहे है।

१९. २. २१ अप्रैल को आर्य समाज बुंज, २२-२३-२४ को आ. स. जौली, २६-२७-२८ को दास माजरा, २९-३० अप्रैल १ मई को सैदुपुर, २ ३ ४ को लेदा, ५ मई को भैंणीखुई (शादी) ६-७-८ को जानपुर मारजरी, १० ११-१२ को आर्य समाज जयधर, १७-१८-१९ को बसतली ३१ मई १-२ जून को मिर्जापुर फार्म ७-८-९ को महिउद्दीनपुर २१ से २७ मई तक नाहन का यज्ञ।

आर्य समाज की प्रगति के निमित्त कुछ विचार तथा सुझाव

(लेखक–कै० बूटाराम, जी मन्त्री जि० वे० प्र० सभा होशियारपुर)

महर्षि दयानन्द का एक तुच्छ अनुयायी होते हुये मैं चिरकाल से ऐसा महसूस करता आया हूं कि महर्षि के अगण्य उपकारों को ध्यान में रखते हुए हम आर्य समाजस्थ नर नारियों, पर एक बड़ा भारी ऋण और उत्तरदायित्व है जिसे पूरा करने के लिए समस्त आर्यजगत नानाविध प्रयत्न तो करता चला आया है और अब भी कर रहा है, परन्तु यथेष्ठ परिणाम की प्राप्ति अभी तक दुर्गम और दूर की वस्तु ही नज़र आती है।

हमारे सभी प्रयत्नों का मुख्य और केन्द्रीय लक्ष्य एक ही है और यही रहना भी चाहिये, और वह है "वेदों और वेदानुकूल शास्त्रों का प्रचार और प्रसार।" सभी साधन इसी एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए हैं। यदि यह ध्येय सिद्ध नहीं होता तो अपनाये गए साधनों की उपयोगता पर समय २ पर विचार करते रहना चाहिये और यथा आवश्यकता उनको बदलते रहना चाहिए। जो समुदाय ऐसा नहीं करता वह प्रगतिशील नहीं रहता बल्कि रूढ़िवादी हो जाता है और संसार की अन्य वस्तुओं की भांति उन साधनों के मुंह में पड़ जाता है। और प्रायः उन के कुचक्र (भंवर) में ऐसा पड़ जाता है कि उन से निकलना दुष्कर हो जाता है। क्या आर्य समाज अपनी संस्थाओं के चक्कर में ऐसा ही तो नहीं फंस गया, हम जितना इन संस्थाओं से उपराम हो कर और detached दृष्टिको[illegible]र सोचते हैं हमें यही नज़र आता है कि यह इस मोह के जाल में बुरी तरह फंस गया है। कभी इस जाल से निकलने के लिये फड़फड़ाता भी है तो भी निकल नहीं सका और शायद निकल भी नहीं सकेगा। फिर, ऐसी दुष्तर और शोचनीय दशा से बच निकलने और 'असली' उद्देश्य की ओर अग्रसर होने का कोई उपाय है भी हां है और वही आज वैदिक धर्म के प्रेमियों की सेवा मे निवेदन करना है।

आर्य समाज ने आज तक जो निर्माण कार्य किया है वह बड़े महत्व का है इस में कोई संदेह नहीं और उस कम करने का किसी का लेश-मात्र भी अभिप्राय नहीं हो सकता, बल्कि इसे और बढ़ाना हम सब का कर्त्तव्य है।

वर्तमान संस्थाएं भी कायम रहें और हमारे उपरोक्त उद्देश्य की भी पूर्ति हो ऐसी कोई योजना बनानी चाहिये मैं नहीं जानता कि आर्य समाज के कर्णधार (विशेषतः पंजाब के) इस योजना को किस दृष्टि से देखेंगे। फिर भी आर्य समाजके विशाल हित को दृष्टि में रखते हुए मैं यह निवेदन करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि पंजाब की दोनों प्रतिनिधि सभाएं आपसी मिलवर्तन की भावना (Co. operative spirit) से काम लेते हुए "कार्य-क्षेत्र" की बांट कर लें। यह दोनों सभाएं अब सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित हैं और वह इन दोनों में ऐसा वातावरण उत्पन्न करने में इनको अपनी सहायता, सहयोग और पथ-प्रदर्शन प्रदान कर सकती है।

बांट इस प्रकार हो कि दोनों सभाओं की सम्मिलित दो उप-सभाएं हों। एक उप-सभा विद्या सभा हो और दूसरी धर्मसभा।

विद्या सभा समस्त गुरुकुलो, कालिजों, स्कूलों और पाठशालाओं का प्रबन्ध चलायें और धर्म-सभा "प्रचार-कार्य" को जिस में मौखिक प्रचार और साहित्य प्रचार दोनों को बराबर की महानता हो। जहां प्रचारक मण्डल की शक्ति को ज्यादा से ज्यादा बढ़ाया जाये वहां एक बड़ा शक्तिशाली "प्रेस" कायम किया जाये जो "गीता प्रेस गोरख-पुर" के समान विशाल, सस्ता तथा लोक प्रिय हो। दोनों उपसभाएं (विद्या सभा और धर्म सभा) अपना-अपना विधान और संगठन (Constitution व organisation) स्वयं व्यवस्थित करें।

चूंकि वर्तमान युग राजनीति–प्रधान युग है, इस लिये दोनों प्रतिनिधि सभाएं यदि एक राज्य-आर्य-सभा भी बना लें तो उचित ही होगा जो कि इस क्षेत्र में उतरने वाले आर्य महानुभावों को अपना परामर्श सहयोग और पथ-प्रदर्शन दे सके। इस से न केवल आर्य समाज के हितों की रक्षा हो सकेगी अपितु वह देश की राजनीति पर भी वैदिक धर्म के दृष्टि बिन्दु से एक प्रभाव उत्पादक असर डाल सकेगी। इस क्षेत्र में उतरने वाले सभी आर्य सज्जनों को ऐसी उपसभा के नियंत्रण को न केवल स्वीकार ही करना चाहिये बल्कि उसके अनुशासन में रह कर काम करना चाहिये।

वैदिक साधन आश्रम, यमुनानगर (अम्बाला)

साधना शिविर बड़ी सफलता पूर्वक समाप्त हो गया साधक और यात्री बड़ी संख्या में पधारे ब्र० बलदेवजी का योग के अंगों (आसन प्राणायाम और धारणा) की शिक्षा का कार्यक्रम बड़ा प्रभाव शाली रहा जिस का साधकों ने अच्छा लाभ उठाया।

—प्रबन्धक

आर्य समाज भटिंडा शेडवाली गली

सिरकी बाजार के अधिकारियों श्री पं. बृजलाल जी शर्मा प्रधान तथा श्री सोभराज जी मन्त्री तथा अन्य सारे सज्जनों ने आर्य प्रादेशिक सभा द्वारा अपना प्रथम शानदार जलसा किया। जिस में पं. त्रिलोक चन्द शास्त्री प, खुशी राम जी वेद प्रचाराधिष्ठाता सभा, सभा प्रधान मान्य श्री प्रिंसिपल रला राम जी एम. ए., पं. दौलतराम जी शास्त्री अमृतसर, प्रो. धर्मेन्दु जी एम. ए. पं. ज्ञानेन्द्र जी, पं. राजपाल मदन जी चिमटा मंडली, मा. तारा चंद जी, डा. दुर्गासिंह जी, आदि पधारे। जल्से में बड़ा ही समारोह था। कथा, जलूस तथा उत्सव धूम धाम से हुआ। समाज के अधिकारी भाईयों तथा बहिनों का समाज प्रेम दर्शनीय था। महात्मा हंसराज स्कूल भटिंडा के मान्य प्रिंसिपल श्री जैतली जी ने स्कूल का सारा सहयोग दिया। श्री बृजलाल जी शर्मा प्रधान, मंत्री जी व सारे अधिकारी समाज के बड़े दीवाने हैं। उत्सव धूम धाम से समाप्त हुआ

आर्यसमाज शामचौरासी

श्री ला० परमेश्वरी दास जी बहल शाम चुरासी समाज के प्रधान आर्यसमाज प्रादेशिक सभा के पुराने महारथी हैं। समाज प्रेम तो इनके रोम २ में है। प्रतिवर्ष चण्डीगढ़ से आकर शामचुरासी में समाज का धूमधाम से जलसा करते हैं। सभा की आर्थिक रूप से बहुत ही सहायता करते हैं। निस्वार्थ, निष्काम सभा के ऐसे महारथियों पर सभा को हमेशा मान है। श्री बहल जी का समाज प्रेम व सेवा देखकर मस्तक झुक जाता है।

प्रणवाश्रम घनाल (जम्मू)

प्रादेशिक सभा की ओर से ठा. दुर्गासिंह जी व मा० ताराचन्द्र जी घनाल पहुंचे। श्री प्रणवानन्द जी सरस्वती की अध्यक्षता में दो तीन दिन तक भजन व उपदेश होते रहे। आस पास के ग्रामों से भी जनता ने पधार कर इस प्रचार से लाभ उठाया तथा वेद प्रचार से उन में श्रद्धा पैदा हुई। इस सम्पूर्ण कार्यक्रम का श्रेय स्वामी जी महाराज पर ही है।

महात्मा हंसराज जयन्ती

महात्मा हंसराज जयन्ती गत रविवार को आर्य समाज सैक्टर ८, (डी. ए. वी. स्कूल) चंडीगढ़ में डा. गोपीचन्द भार्गव की अध्यक्षता में मनाई गई। इस में श्री नानकचन्द प्रिंसिपल श्रीराम शर्मा, प्रिंसिपल गिरधारी लाल, पं० ऋषिराम वैदिक मिशनरी ने व्याख्यान दिए। डी. ए. वी. स्कूल, दयानन्द माडल स्कूल तथा मोतीराम आर्य कन्या विद्यालय के विद्यार्थियों ने गीत गाए।

शोक प्रस्ताव

आर्यकुमार सभा प्रधाना मोहल्ला रोहतक की इस साधारण दैनिक सभा को यह जानकर शोक हुआ की श्री रामरंग जी वकील प्रधान आर्यसमाज कालिज विभाग रोहतक के सपुत्र श्री जगदीशचन्द्र जी का भारत-चीन सीमा पर युद्ध में देहांत हो गया।

शोक के साथ इस सभा को यह हर्ष भी है कि इस वीर ने देश की रक्षा के हित वीर गति प्राप्त की है।

यह सभा प्रभु से प्रार्थना करती है कि वह सन्तप्त परिवार को इस महान कष्ट के सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

मन्त्री आर्य कुमार सभा
प्रधाना मोहल्ला रोहतक

आर्यसमाज माडल टाउन गुड़गावां

२-४-६३ को त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज दिवस—श्रीयुत राजकुमार जी मुख्य मंत्री आर्य प्रा० प्र० उप सभा, दिल्ली की अध्यक्षता में आर्यसमाज मन्दिर माडल टाउन गड़गावां में पूरे समारोह से मनाया गया। इस में गुड़गावां नगर की समस्त आर्य समाजों तथा आर्य संस्थाओं, डी. ए. वी. हाई स्कूल गुड़गावां, वैदिक कन्या पाठशाला गुड़गावां छावनी ने बढ़चढ़ कर भाग लिया। अनेक विद्वानों ने महात्मा जी को श्रद्धांजलियां भेंट कीं।

—त्रिलोकनाथ मन्त्री

आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब

(उपकार्यालय नई देहली—१)

परोपकारिणी सभा ने अपनी बैठक तारीख ७ ४ ६३. में लाला हंसराज जी गुप्त को स्व० म० कृष्ण जी के स्थान पर परोपकारिणी सभा अजमेर का सर्वसम्मति से प्रधान निर्वाचित किया है।

—जगन्नाथ उपमंत्री सभा

आर्यसमाज लारैंस रोड

२३ से ३० अप्रैल को प्रतिदिन प्रात वेद चर्चा होती रहेगी। श्री पं० चन्द्र सैन जी आर्य हितैषी की मनोहर कथा होगी।

आर्यसमाज जालन्धर छावनी

का उत्सव १५ से २१ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हुआ इस अवसर पर राजपाल जी व मदन मोहन जी की मंडली के भजन होते रहे। १६ से २१ तक श्री पं० चन्द्रसैन जी (सोनीपत निवासी) व श्री राजपाल मदनमोहन जी के व्याख्यान व मधुर भजन होते रहे। २२ को स्त्री समाज का उत्सव भी मनाया गया। उत्सव हर प्रकार से सफल रहा इस का श्रेय श्री प्रिंसीपल जावेद जी व समाज अधिकारियों को है। इस अवसर पर ५१) वेद प्रचारार्थ सभा को प्राप्त हुए।

जगाया तुमको कितनी बार

वेदों का उपदेश यही है
गीता का आदेश यही है
अर्जुन का सन्देश यही है
चलते वीरो अब तुम क्यों न कृष्ण की शिक्षा के अनुसार
जगाया तुमको……

शङ्कर ने जीवन दे डाला
आत्म पतन से तुम्हें उबारा
अन्धेरे में किया उजाला
दिव्य मार्ग के निर्देशक को तुमने दिया बिसार
जगाया तुमको……

पानीपत के महासमर में
अस्सी घाव हुए थे तन में
तब भी व्यथा नहीं थी मन में
तुम्हें बचाने को चमकी थी सांगा की तलवार
जगाया तुमको……

दयानन्द ने तुम्हें जगाया
वेदों का शुचि सुपथ सुझाया
राष्ट्र हेतु मरना सिखलाया
ऋषि के मन्तव्यों को मानो कर दो राष्ट्र सुधार
जगाया तुमको… ..

चीन शत्रु शिर पर चढ़ आया
महासमर का बिगुल बजाया
लेकिन तुमको होश न आया
कुम्भ कर्ण की उस निद्रा से करो न ज्यादा प्यार
जगाया तुम को……

—कुंवर जयरामसिंह त्यागी

आर्यसमाज बहावलपुर

गत दिनों आर्यसमाज स्थापना दिवस बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। मन्दिर में दीपावली की गई। हवन यज्ञ से कार्य आरम्भ हुआ। रात को श्री बाबूराम जी हैडमास्टर, शास्त्री जी, महता जगन्नाथ जी, आदि सज्जनों के व्याख्यानों तथा भजनों का अच्छा तांता बंध गया। देवियों के भी व्याख्यान व भजन होते रहे।

—देवराज प्रचारमन्त्री

आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर

ने अपने प्रस्ताव में पंजाब किताब के विरुद्ध रोष प्रकट किया सरकार से मांग की गई कि इसे जल्दी ज़ब्त करे, लेखक तथा प्रकाशक के विरुद्ध मुकदमा चला कर उन्हें कड़ा दण्ड दिलाया जाये। महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस बड़े उत्साह से मनाया गया।

आर्यसमाज माडल टाऊन पानीपत

का उत्सव १७ से १९ मई को सम्पन्न हो रहा है। १३ मई से कथा और यज्ञ। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी, श्री राजपाल जी, श्री मदनमोहन जी, श्री हजारी लाल जी, श्री दुर्गासिंह जी, पं. खुशीराम जी शर्मा भाग ले रहे हैं।

आर्यसमाज मुकेरियां

१७ से १९ मई को सम्पन्न हो रहा है। श्री ओम् प्रकाश जी, श्री चन्द्र सैन जी, श्री तारा चन्द जी पधार रहे हैं।

आर्य प्रादेशिक सभा के वेदप्रचार का कार्यक्रम

आर्य स्त्री समाज नाहन (हिमाचल)—का यज्ञ उत्सव श्री अमरसिंह जी की अध्यक्षता में २१ से २४ मई को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं० दौलतराम जी, श्री जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी और श्री हजारी लाल जी पधार रहे हैं।

आ० स० शाम चौरासी—का उत्सव ५ से ७ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हुआ है। ३१ मार्च से यजुर्वेद यज्ञ और कथा प० खुशी राम जी की हुई। राजपाल श्री मदनमोहन जी के भजन हुए। उत्सव पर श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी, श्री पं० चन्द्रसेन जी, श्री मेलाराम जी, श्री ताराचन्द जी, श्री हजारी लाल जी श्री ज्ञानेन्द्र जी आदि महानुभाव पधारे। २००/— सभा को दान प्राप्त हुआ।

महात्मा हसराज मेला बिजवाड़ा—(होशियारपुर) में सभा की ओर से १६ अप्रैल को धूमधाम से मनाया गया। १६ अप्रैल से कथा श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी और भजन श्री राजपाल जी मदनमोहन जी के होते रहे।

आ० स० जलालाबाद गर्बी—२४ से ३० अप्रैल को उत्सव के रूप में कथा होगी। पं० त्रिलोकचन्द जी और श्री दुर्गासिंह जी पधारेंगे।

आ. स. शूगर मिल खतौली—(उत्तर प्रदेश) समाज का उत्सव २७ से २६ अप्रैल को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। २३ अप्रैल से खुशीराम शर्मा कथा कहेंगे और हज़ारीलाल जी के भजन होंगे।

आ. स. राजपुरा टाऊनशिप—समाज में १७ से २३ अप्रैल तक पं० ओमप्रकाश जी की कथा होती रही। मा० ताराचन्द जी के भजन हुए।

आ. स. फतहबाद अमृसर—का उत्सव १० से १२ मई को सम्पन्न हो रहा है। २६ अप्रल से पं० ओम्प्रकाश जी कथा कहेंगे ताराचन्द जी के भजन। उत्सव पर श्री पं० दुर्गासिंह जी, राजपाल जी मण्डली। पं० दौलतराम जी शास्त्री पधारेंगे।

आ. स. राम नगर करनाल—का उत्सव ३ से ५ मई को सम्पन्न हो रहा है। २६ से पं० चन्द्रसेन जी कथा कहेंगे। श्री मेलाराम जी के भजन होंगे। उत्सव पर पं० त्रिलोक चन्द जी पधारेंगे।

१७ अप्रैल से १९ तक अलावलपुर—समाज में महात्मा हसराज दिवस के उपलक्ष्य में श्री मेलाराम जी के भजन होते रहे।

महात्मा हसराज हाई स्कूल भठिंडा—में महात्मा हंसराज दिवस १७ से १९ अप्रैल को समारोह से मनाया गया। पं० चन्द्रसेन जी, श्री दुर्गासिंह जी पधारे।

आ० स० शकूर बस्ती, देहली—का उत्सव ३ से ५ मई तक सम्पन्न हो रहा है। २८ अप्रैल से पं० त्रिलोक जी कथा कहेंगे और राजपाल जी, मदनमोहन जी के भजन होंगे २ मई तक।

आ० स० महरोली दिल्ली—का उत्सव २६ से २८ अप्रैल को सम्पन्न हो रहा है।

—खुशीराम शर्मा

ईसाई पादरियों की देशद्रोही गतिविधियां

(ले०—श्री रुद्रदत्त जी शर्मा लक्ष्मणसर अमृतसर)

धार्मिक प्रचार की आड़ में भारत सरकार के विरुद्ध घृणा फैलाने की चालें

'ईसाई षड्यन्त्र मे फसे एक युवक के आखो देखे हालात'

अमृतसर का एक शिक्षित हिन्दू युवक जो कुछ समय ईसाइयों की चिकनी चुपड़ी बातों का शिकार हुआ रहा, इसके बियान के अनुसार जो कटु अनुभव उसे प्राप्त हुए वह भोले-भाले हिन्दु युवकों तथा तीव्र गति से पथभ्रष्ट किये जा रहे हरिजन भाइयों के लिये बहुत दिलचस्पी और जागृति का कारण होंगे।

पिछले दिनों अमृतसर स्टेशन के समीप कैनाल आफिस के सामने 7th Day Church & Primary School में एक पादरी पधारे, जिन्होंने "कासिदे जदीद" नामक पाकिस्तानी रिसाले (मासिक पत्र) बांटे और व्याख्यान देते हुए हिन्दुओं और भारत सरकार के विरुद्ध विष वमन करते हुए यहां तक कहा कि भारत सरकार हमें मिटा देना चाहती है। उपरोक्त चर्च का एक और पादरी भी इसी प्रकार का प्रचार करता फिरता है। उपरोक्त युवक ने चर्च के अध्यक्ष से शिकायत की कि हकूमत के विरुद्ध ऐसा प्रचार क्यों किया जा रहा है तो अध्यक्ष महोदय पहले तो टाल मटोल करने लगे, परन्तु दोबारा पूछने पर बिगड़ गये और अत्यन्त क्रोधित हो गये।

इस युवक ने विनय पूर्वक अपनी शंका के समाधान की प्रार्थना की, परन्तु संतोषजनक उत्तर न दे सकने पर चर्च के अध्यक्ष गालियां देने लगे और मारने की धमकी दी। युवक ने गालियों का उत्तर न देते हुए इतना कहा कि "मैं तो नया मसीही हूं आप पुराने और विख्यात मसीही होकर भी हजरत मसीह के शान्ति के नियम को तोड़ कर बलात्कार (तशद्दुद) पर उतर रहे हैं। इस पर वह और भी उत्तेजित हो गये और युवक को मार पीट कर बाहिर निकाल दिया। यह युवक इस घटना से अत्यन्त निराश हुआ हमारे पास पहुंचा, हमने समझा बुझा कर शान्त किया और उसने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया कि प्रभु का शुकर है कि ईसाई पादरियों के देश-द्रोही प्रचार ने तथा इनके दुर्व्यवहार ने मेरी आंखें खोल दी हैं। युवक इस बात पर बहुत विस्मित था कि हिन्दुओ और भारत सरकार के विरुद्ध विषैला प्रचार करने में इनका धार्मिक उद्देश्य काम कर रहा है अथवा राजनैतिक ?

इस युवक ने बताया कि यह पादरी भोले-भाले युवकों और युवतियों को कई प्रकार के सब्ज बाग दिखाकर फुसलाते और नौकरी आदि का प्रलोभन देकर अपने फन्दे में फंसा लेते हैं जब कोई इनकी घृणित चालों पर शंका प्रकट करे तो इधर-उधर की बाते बना कर टाल देते हैं। वास्तव में कोई आत्म-अभिमानी (बाजमीर) व्यक्ति इनके जाल में अधिक देर तक नहीं रह सकता और न उसे वहां पसन्द ही किया जाता है। उनके अनुचित कार्यों और विषैले प्रोपागण्डा पर शंका प्रकट करने पर ही इस युवक को न केवल मारपीट की गयी अपितु इसे विधिवत ईसाई बना चुकने के बावजूद इसे बपतिस्मा का प्रमाण पत्र देने से इनकार कर दिया गया।

(शेष पष्ठ ८ पर)

आर्य समाज धर्म[illegible]

प्रधान ला० जगदिश मित्र जी। उपप्रधान [illegible] राम जी भल्ला। उपप्रधान श्री प्रताप सिंह जी ठुकरा[illegible] प्रिंसिपल [illegible] हायर सेकण्डरी स्कूल कादियां। मन्त्री कुमारी [illegible]ाष वेदी [illegible] वेद कौर आर्य कन्या पाठ शाला कादि[illegible] उपमन्त्री [illegible] कोषाध्यक्ष श्री मनसा राम जी अन्तरङ्ग सभा चुनने [illegible] महोदय को दिया गया।

रोशन लाल उपमन्त्री सभा

आर्य समाज दयालपुरा करनाल का चुनाव

प्रधान—श्री ला० मामचन्द जी। उपप्रधान—श्री पं० पूर्णचन्द जी आर्य। उपप्रधान—श्री हुकमचन्द जी। मन्त्री—श्री रघुवीर सिंह वर्मा। उपमन्त्री श्री विशन स्वरूप जी। उपमन्त्री—श्री ब्रह्मचारी हरीदेव जी। कोषाध्यक्ष—श्री ला० ज्ञानचन्द जी। पुस्तकाध्यक्ष—श्री श्याम जी। आडीटर—श्री ला० अमरनाथ जी।

अन्तरग सदस्य

श्री चौ० पंजाब सिंह जी वकील, श्री डा० गणेशदास जी, श्री गिरधारी लाल जी, श्री ला० मोती राम जी, श्री पं० चारूदत्त जी, श्री चौ० पूर्णसिंह जी, श्री पं० मन्साराम जी, श्री भागीरथ कुमार जी, श्री दीवान विशन दास जी, श्री वीरेन्द्र जी।

मन्त्री आर्य समाज दयालपुरा करनाल

परीक्षा परिणाम

डी० ए० वी० हाई एण्ड ट्रेनिंग स्कूल गढ़दीवाला

मैट्रिक का परीक्षा परिणाम ९३.५ प्रतिशत रहा। जिला के सभी स्कूलों से प्रथम रहा। ६२ छात्रों में से ५८ सफल हुए। इस सफलता का श्रेय कमेटी के चेयर मैन श्री बी० एस० बहल जी को है हम उन्हें धन्यवाद देते हैं।

—हैडमास्टर स्कूल गढ़दीवाला

कमाही देवी होशियारपुर

डी० ए० वी० हाई स्कूल कमाही देवी (होशियार पुर) का गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी मिडल कक्षा परिणाम शानदार रहा। अर्थात् ६६ छात्रों में से ६२ पास हुए, परिणाम ९४ प्रतिशत है।

इस सफलता का सेहरा श्री रामप्रकाश जी सेठी और उनके योग्य स्टाफ पर आधारित है। —मन्त्री धर्तीराम कवर

डी० ए० वी० हा० सै० स्कूल करनाल

इस स्कूल की मिडिल परीक्षा का परिणाम ९१ प्रतिशत अर्थात् सब स्कूलों से अच्छा रहा है। निम्न छात्रों ने स्थानीय स्कूलों में उत्तम स्थान प्राप्त किया। (१) अश्वनी कुमार ५६४ (२) कृष्ण गोपाल ५२० (३) सुभाष चन्द्र ५१२ (४) सुशील भारद्वाज ५०६। इस सफलता का सेहरा स्कूल के प्रिंसिपल महोदय और उनके योग्य स्टाफ के सिर पर है।

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर ने स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की पुण्य स्मृति में वैदिक धर्म सम्बन्धी पुस्तकों के प्रकाशन का विभाग खोला हुआ है जिसने समय २ पर समयानुकूल पुस्तकों के प्रकाशन द्वारा महात्मा जी के नाम व काम को चिरस्थायी कर दिया है। अब आर्य समाजों, व महात्मा जी के श्रद्धालु भक्तों का कर्त्तव्य है कि इस विभाग की अधिक से अधिक पुस्तके मंगाकर उनके नाम को अमर करें। साथ ही इस विभाग को आर्थिक सहायता करे।

- आर्य समाजों के सदस्य व आय-व्यय सम्बन्धी सुन्दर पक्की जिल्द के रजिस्टर १.००
- महात्मा हंसराज जी का सम्पूर्ण विस्तृत तथा सचित्र जीवन २.००
- प्रभु दर्शन २.५० न०पै०
- महर्षि दर्शन (प्रि.दिवानचन्द कृत) २.५०
- गीता दिग्दर्शन .५०
- जीवन ज्योति .६२
- स्वाध्याय संग्रह (नयाप्रकाशन).५०
- दयानन्द शतक १.००
- आर्य भजन संग्रह .५०
- सत्यार्थ प्रकाश भाष्य I १ ००
- „ „ II १ ००
- स्वामी दयानन्द जी के पत्र व्यवहार III ५०
- „ IV .५०
- पातंजल योग अरविंद की योग पद्धति ७५
- अमृतवाणी सजिल्द .५०
- अजिल्द .३१
- आयसमाज की सदस्यता के प्रवेश पत्र २.५०
- चारों वेदों की मूल पुस्तक २२.५०

- संस्कार विधि १.२५
- पंचमायज्ञ विधि .२०
- आर्याभिविनय .४०
- वैदिक सत्संग गुटका (उर्दू) .२५
- वैदिक धर्म का महत्त्व १००/०
- वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है? १.५०
- चारों वेदों के शतक बढ़िया चित्ताकर्षक जिल्द प्रति कापी १ ००
- राधा स्वामी मत अलोचन .३७
- दयानन्द हिज लाइफ एण्ड वर्क अंग्रेजी में (प्रि सूर्य भानु जी M A. द्वारा लिखित) १ ५०
- टीचिंग ऑफ ईशोपनिषद् (अंग्रेजी) में श्री दीवान चन्द जी लिखित) १ ५६

नोट—इनके अतिरिक्त आनंद स्वामी जी महाराज लिखित स्वाध्याय व अध्यात्मवाद सबन्धी सभी पुस्तके हमारे यहा से प्राप्य हैं।

मिलने का पता—

प्रबन्धक—महात्मा हंसराज साहित्य विभाग A.P.P. सभा निकट कचहरी जालन्धर।

(पृष्ठ ७ का शेष)

भगवान करें कि हिन्दू नेता तथा भारत सरकार इन हालात पर गहरे दिल से विचार करें। चीन, लंका और बर्मा आदि देशों ने स्वतन्त्रता मिलते ही विदेशी पादरियों को तुरन्त अपने देशों से बाहिर निकाल दिया था। परन्तु भारत को स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात यहां विदेशी पादरियों की संख्या आठ गुणा से भी अधिक बढ़ चुकी है। हमारा देश आज हर ऐरे गैरे के लिए नूर महल की सराए बना हुआ है। न जाने यह मुवाद (Foreign matter) किसी समय कितना भयानक सिद्ध हो?

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित
आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक १८) रविवार २३ वैशाख २०२०— ५ मई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

ऋतेन स्थूणामधिरोह

हे मनुष्य ! तू सत्य के आधार-स्तम्भ पर खड़ा रह ! तेरे जीवन की आधार शिला सत्य होनी चाहिए। इस बुनियाद पर खड़ा होने वाला व्यक्त किसी प्रकार भी विच लत नहीं हो सकता।

अवबृढ्द्ढ शत्रू न्

हे वीर ! तू अपने सत्य के बल से शुद्ध आचार व्यवहार से, अपनी शक्ति से सारे शत्रुओं को, मानवता और सत्य धर्म क विराधियो को उखाड़ दो। उनकी शक्ति समाप्त कर दो।

शतं जीवेम शरद:

हम सौ वर्ष तक जीने वाले हों। भगवन् ! हमे ऐसी शक्ति दो, ऐसा जीवन बल और स्वास्थ्य दीजिये जिस से हम सौ वर्ष तक [illegible] कर सकें।

[illegible] वेद

वेदामृत

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुण: सुशंस:।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाष: शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु॥

ऋक् म० ७ सू० ३५ मंत्र ६

अर्थ :—(शं न.) हमें सुख शांति देवे (वसुभि) निवास के साधन बने हुए जो पृथ्वी आदि वसु हैं, उनके साथ (देव) प्रकाश करने वाला (इन्द्र) सूर्य (अस्तु) कल्याण कारी होने तथा (शम्) हमे शां न दे (आदित्येभि:) अन्धकार नाशक किरणों से युक्त और (वरुण) रुद्र देव परमात्मा (रुद्रेभि.) पापियों का पापकर्म के फल देकर रुलाने वाली शक्तियों का स्वामी (जलाष.) शांतिदान करने वाला कल्याण करे और (श न.) सुखदायक हो (त्वष्टा) विद्या वाला विवेक पुरुष अपनी (ग्नाभि) शुभवाणियों, पवित्र उपदेशों से (शम् न) हमे सुख से (शृणोतु) सुनावे। जीवन देने वाले उपदेशों से सदा कल्याण करता रहे।

भाव :—भूमि माता ने अपनी सन्तान के लिए अपनी प्यार भरी गोदी में क्या २ पदार्थ रत्न ऐश्वर्य भण्डार भर रखे हैं। प्रकाश वाली किरणों से युक्त सूर्यदेव तथा जीवन की प्यास बुझाने वाला, ताप संताप दूर करने वाला वरुण हमे ये सारे सुख शान्ति देते रहें। भगवन ! आप माता भी है, शिव शंकर भी हैं तथा आप रुद्र बन कर रुलाते भी है। पापियो को उनके पाप कर्मों का दण्ड रूप फल देकर उनको रुद्र बनकर रुलाते हैं। आपसे कौन बच सकता है? शांति के धाम भी हो और तपाने वाले भी हो। प्रभो ! संसार में जो सज्जन, देव, दिव्य गुणों से सजे परोपकारी हों, उनका जीवन भरा सन्देश हमें सदा सुनने को मिलता रहे। उनके संग मे रह कर हमारा कल्याण हो—सं०

भारत किसी भी दबाव में नहीं आएगा

श्री नेहरू जी की घोषणा

डीघा. प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने आज यहां कहा कि सीमा के प्रश्न पर भारत और चीन में सीधी वार्ता का अभी कोई मार्ग नहीं निकला।

उन्होंने आगे कहा कि भारत की स्थिति यह है कि चीन पहले कोलम्बो प्रस्तावों को स्वीकार करे फिर सीधी बातचीत शुरू की जा सकती है। भारत एक शान्तिप्रिय देश है और वह किसी से युद्ध नहीं चाहता लेकिन इस का मतलब यह नहीं कि हम किसीके दबाव के आगे झुक जाएंगे।

उन्होंने कहा कि चीन ने हम से विश्वासघात किया है और हमे उसके द्वारा उत्पन्न स्थिति का सामना करना होगा। लेकिन यह हम चीन को गालियां देकर या कड़ी भाषा के प्रयोग मात्र से नहीं कर सकते।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद के मार्ग पर चलने वाले अभ्यासी सज्जन अपने अनुभव के आधार पर बतलाते हैं कि बाहर के विश्व के समान हमारे अन्दर भी विश्व है। रूप, रस, गन्ध, शब्द तथा कोमल स्पर्श सब कुछ है—अन्दर बड़ा ही अद्भुत विश्व है। पर देखने वाली आंख चाहिए। पूज्य महात्मा जी योग-मार्ग के अभ्यासी हैं, अनुभव प्राप्त किया है—उनके अपने शब्दों मे अध्यात्मवाद का अमृतपान करें—सं०

अध्यात्मवाद

अन्दर की ओर

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती महाराज)

योग का अर्थ है व्यष्टि को समष्टि में मिला देना। एक मन आपके अन्दर है. इसी प्रकार का एक मन सारे विश्व मे फैला है, उसे समष्टि बुद्धि कहते है। एक चित्त आपके अन्दर है, इसी प्रकार का एक समष्टि चित्त बाहर है समस्त संसार मे अपने मन को, बुद्धि को चित्त को और प्राण को विश्व में फैले हुए इस समष्टि बुद्धि, समष्टि चित्त और समष्टि प्राण के साथ मिला देने से योग का पहला अंग पूर्ण होता है। ऐसा करने से शम की सम्पत्ति उत्पन्न होती है। आप कहेंगे कि यह व्यष्टि और समष्टि की बात तो समझा, परन्तु ऐसा करने का उपाय क्या है? मै उपाय भी बताता हू। ऐसा उपाय है जिसे सीखने और प्राप्त करने म साधु लोग वर्षों लगा देते है। मै आपको कुछ वाक्यों में बताता हूं, फिर करना न करना आपका कार्य है

देखिये—प्रात तीन बजे से छः बजे तक का समय चौबीस घण्टों में सबसे उत्तम होता है। इस समय नहा धो कर, नहीं तो मुंह हाथ धोकर एक स्थान पर बैठ जाओ। ऐसे स्थान पर बैठो जहां ध्यान भक्ति और यज्ञ के अतिरिक्त और कुछ न होता हो। परन्तु प्रतिदिन उसी स्थान पर बैठो, कोई भी अन्य बात वहां न होने दो। यदि बड़ा घर है तो एक कमरा इस कार्य के लिए निश्चित करो। बड़ा नहीं एक कमरा ही है तो उसके एक भाग को इस कार्य के लिए निश्चित करो। अपने समक्ष धूप या अगरबत्ती जलाओ, घी का दीपक जला के रख लो, पानी का लोटा रख लो और बैठ जाओ। एक आसन का अर्थ है बैठने की ऐसी विधि, जिस में साधक अधिक से अधिक समय तक बिना किसी कष्ट के बैठ सके। सदा एक ही आसन में बैठो। पद्मासन सिद्धासन, शवासन ऐसे कई आसन हैं। उन सब में से किसी एक आसन को अपना लो। उसको अपनाये रखो सिद्धासन और पद्मासन उत्तम है। उन में पालती मार कर पीठ और ग्रीवा को एक सीध में रखकर बैठना होता है।

परन्तु आजकल तो विचित्र समय आगया है। कई स्थानों मे लोगो का पालती मारना ही भूल गया है। मै अफ्रीका मे गया वहां कुछ लोग पालती मारना ही नहीं जानते। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जो लोग सिद्धासन या पद्मासन में नहीं बैठ सकते, वे योग के मार्ग पर चल ही नहीं सकते। जो लोग पालती न मार सकें, उनके लिए अच्छा है कि वे शवासन को अपना ले। शव कहते हैं लाश को। लाश की भांति लेट जाओ। पाव के अंगूठों को कपड़े का एक छल्ला बनाकर उसमें डाल दो, कमर के ऊपर कपड़ा लपेट कर हाथों को कपड़े के अन्दर डाल दो, जिससे हाथ और पांव न हिले। फिर चित्त लेटे रहो। इस को शवासन कहते हैं। परन्तु इस आसन को अपनाओ या किसी अन्य आसन को, जिसे अपनालो उसे छोड़ो नहीं, सदा उसको अपनाये रखो। आसन लगाने के पश्चात् पांच बार गायत्री मन्त्र का जाप इस प्रकार करो कि तुम्हारे कान तुम्हारी आवाज को सुन सकें। फिर आंख बन्द कर क पाच बार इस प्रकार जाप करो कि होंठ हिले, आवाज सुनाई न दे। तब होंठ भी बन्द कर दो। पाच बार इस प्रकार जाप करो कि बन्द मुख के अन्दर जिह्वा हिले और कुछ भी न हो। तब जिह्वा भी बन्द कर दो। कण्ठ मे करो, फिर कण्ठ मे जाप करना भी बन्द कर दो। दो आंखों के मध्य में, भौंवों के बीच, माथे में जो स्थान है, जिसे भृकुटि कहते हैं, वहां ध्यान करो। इस स्थान को प्रयाग भी कहते हैं। यहां इडा, पिंगला और सुषुम्णा नाम की तीन नाड़िया तीन नदियों के रूप में आकर मिलती है। इन नदियों को देखने का प्रयत्न करो। बार २ प्रयत्न करने से यह नदिया दृष्टिगोचर होंगी। एक विशाल नदी मे मिलती हुई प्रतीत होंगी। उस नदी के किनारे बैठ जाओ, वहां बैठकर ऊपर देखो। भृकुटि से ऊपर सिर सिर के उस भाग में जो मस्त० से ऊपर है, जिसे ललाट कहा जाता है। वहां ध्यान लगाने से एक चमकता हुआ आकाश दिखाई देगा। उस से भी ऊपर चमकता हुआ सूर्य दिखाई देगा। इस से भी आगे शीतल प्रकाश वाला चन्द्रलोक भी दिखाई देगा और यह सब कुछ करते हुए आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देंगे।

यह है ध्यान योग का सही और सीधा मार्ग। कहने को मैंने यह बात कुछ वाक्यों में कह दी परन्तु इस पर अभ्यास करने में पर्याप्त समय लगेगा। समय लगे तो घबराओ नहीं। परिश्रम करते जाओ। अन्ततः उस लक्ष्य पर पहुंच जाओगे।

महात्मा हंसराज दिवस

लेखराम नगर कादियां में इस बार महात्मा हंसराज दिवस १९ अप्रैल को बड़े ही समारोह से पहली बार मनाया गया। इस का श्रेय प्रिंसिपल श्री प्रतापसिंह जी ड० ए० वी० हायर सैकंडरी स्कूल, आर्यसमाज धर्मपुरा वेद और आर्य गर्ल्स हाई स्कूल को है। दिन में नगर में दोनों स्कूलों का, समाज के सज्जनों का बड़ा ही शानदार जलूस महात्मा हंसराज की जय के नारे लगाता निकला। दिन को स्कूल में तथा रात को समाज मे धूमधाम से जलसा किया गया। जिस मे प्रिंसिपल राणा प्रतापसिंह जी, श्री रमेश जी जीवन एम० ए० श्री रोशनलाल जी, पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री ने महात्मा जी के जीवन पर श्रद्धांजलियां भेंट की। युवकों ने मीठे सगीत बोले पहली बार धूम-धाम से मनाया गया। इस के लिए प्रिंसिपल राणा जी, प्रिं० कुमारी सन्तोष जी एम० ए० तथा सारे सज्जनों को बधाई।

आर्यसमाज लक्ष्मणसर

अमृतसर का यह अधिवेशन पार्लियामैंट की ओर से विधान के सर्वथा प्रतिकूल १९६५ के पश्चात भी हिन्दी के साथ अंग्रेजी जारी रखने का बिल पेश करने को विधान की खिलाफवर्जी समझता है तथा उसके कठोर व्यवहार को घृणा की दृष्टि से देखता है।

—तेलूराम

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २३ बैसाख २०२०, ५ मई १९६३ [अंक १८

तब और अब

भारत विभाजन के पूर्व सारा देश विदेशी सत्ता के सूत्रों में बन्धा हुआ था। शिक्षा विभाग का सारा पाठ्य क्रम उसी रीति नीति से चलता था। फिर भी इतना कहा जा सकता है कि विदेशी युग में भारतीय भावनाओं से इतना खिलवाड़ नहीं था। समाज की भावना भी जागती थी तथा विदेशी शासन भी सतर्क रहता था। इतिहास में गड़बड़ थी जिस का प्रतिकार समय २ पर होता रहता था। मिस मेयो ने भारत पर मदर इण्डिया नामक पुस्तक लिखी—उसका मुंह तोड़ ऐसा उत्तर दिया गया कि उसे फिर कभी ऐसा लिखने बोलने का साहस ही न हो सका। उन लोगों पर भारतीयों को गिला भी क्या हो सकता था—वे लोग विदेशियों—भारत की हर पवित्र परम्परा बदलना चाहते थे। हमें आत्म विस्मरण के पथ पर चलाने में लगे थे यह तथ्य है कि यदि ऋषि दयानन्द जी न आते तो भारत को आत्मप्रबोध कभी न हो सकता। भारतीय जनता अपनी हर परम्परा भूल चुके थे।

किन्तु अब ? तब और अब के मुकाबिले में अब और ही विषादमय बन गया है। स्वदेशी शासन में तो पाठ्य पुस्तकों में क्या २ लिखाया और पढ़ाया जाता है जिसे पढ़ कर लज्जा से सिर नीचा हो जाता है। पंजाबी विभाग की ओर से प्रकाशित पंजाबी पुस्तक 'पंजाब' में योगेश्वर कृष्ण जी के दिव्य जीवन के बारे में जिन घटिया शब्दों में निन्दनीय बात लिखी गई हैं। उन पर बहुत कुछ कहा और लिखा जा रहा है। पता नहीं कि लेखक को इतने महान् पुरुष के सम्बन्ध में ऐसी बातें लिखने का साहस कैसे हो गया ? जाति दुर्बल है पर अभी इतनी नहीं जितना समझा जाता है। हिन्दु-समाज की जितनी जल्दी आंखें खुलें उतना अच्छा है। स्कूलों में पढ़ाने वाली किताबों में भी क्या कुछ है—कौन नहीं जानता अंडों व मांस का जितना खुला प्रचार स्वदेशी शासन में हुआ व इन पुस्तकों द्वारा किया जा रहा है। उस पर सारे मौन हैं। इस सरकारी घोषणा से किसे दुःख न होगा कि स्कूली बच्चों को दैनिक एक २ अंडा मिलेगा। आरम्भ से ही नई सन्तान को अंडा सेवी बनाया जाने लगा है। यदि अंडे की बजाय हरेक बच्चे को आध पाव दूध देने की योजना घोषणा होती तो क्या ही उत्तम होता ? पढ़ाने वाली पुस्तकों में विटामिन की आड़ लेकर क्या २ लिखा गया है। नई सन्तान क्या बनेगी विचार कर कष्ट होता है। और भी निकलने वाली पुस्तकों में जनता को क्या २ विचार दिये जा रहे हैं। श्री विनोबा जी के गीता प्रवचन में गोमांस भक्षण के अप्रासंगिक प्रसंग को निकाल देने की जनता की ओर से कितनी मांग हुई, शिष्टमंडल मिले, आंदोलन हुआ पर सन्त जी पर प्रभाव न पड़ा। आज भी पुस्तक बिक रही है। वह था विदेशी शासन का तब और यह है स्वदेशी शासन का अब—

—त्रिलोकचन्द्र

यह सम्मिलित शिक्षा

भारतीय ऋषियों के अनुभव सारे मानव समाज के लिए हैं। पश्चिम अपने नये २ अनुभव कर के अन्त में उसी हमारे पुरातन पथ पर आ रहा है। पश्चिमी देशों ने शिक्षा के क्षेत्रों में लड़के-लड़कियों की सम्मिलित शिक्षा को जारी करके कड़वा तथा विनाशकारी फल चख लिया। इसका जो भयंकर परिणाम हो रहा है उसके आकड़े पढ़कर लज्जा को भी लज्जा आती है। अब वे लोग अपने पथ को बदल रहे हैं। पर शोक है कि हमारे लोग पुराने अनुभवों से लाभ न उठाकर सहशिक्षा को जारी कर रहे हैं। पजाब में तो लड़के लड़कियों की सहशिक्षा आरम्भ भी हो गई है। आर्य-समाज इसके विरुद्ध है। दोनों के लिए इसके परिणाम घातक होंगे। आर्यसमाज को इस विषय में अपना मौन तोड़ कर भरपूर शक्ति लगा कर सहशिक्षा का विरोध करना चाहिए ताकि यह विष न फैल सके।

अंडे नहीं दूध

पंजाब के स्कूली बच्चों को प्रतिदिन एक अण्डा देने का समाचार निकला है। हम पंजाब सरकार से अनुरोध पूर्वक कहना चाहते हैं कि बच्चों को बालपन से अंडे क्यों खिलाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसकी बजाये दूध देने की योजना क्यों नहीं बनाई जाती जिससे बच्चों का मस्तिष्क भी विकसित हो। जो काम अंगरेज भी न कर सका पता नहीं अपने शासक लोग क्यों वह काम करने लगे हैं।

महात्मा आनन्द स्वामी जी

आर्यजगत के प्रसिद्ध तपस्वी, त्यागी महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज भारत से बाहिर मारीशस अफ्रीका में कई महीने तक वहां की जनता को अपना उपदेशामृत पिला कर वापस आ गये हैं। हम पूज्य महात्मा जी का हार्दिक स्वागत करते हैं। अब भारत की आर्यसमाजों को आप की प्रवचन सुधा पीने का सौभाग्य प्राप्त होगा। हम महात्मा जी से नम्र निवेदन करते हैं कि आप पंजाब के नगरों, कस्बों आदि के लिए भी अपना अमूल्य वेदामृत देने की कृपा करें। जनता आपके दर्शनों के लिए लालायित है तथा अमृत-पान की प्यासी है।

सत्यपाल जी को बधाई

लेखराम नगर कादियां का आर्य युवक समाज उत्साही समाज है। प्रो० वेदीराम जी एम० ए० अध्यक्ष पंजाब आर्ययुवक सगठन के आदेश पर यह युवक समाज सारे जिला में खूब काम कर रहा है। इसका दैनिक सत्संग लगता है। इसके मन्त्री आर्ययुवक प्रिय सत्यपाल जी सहदेव भारत वर्षीय आर्य विद्या परिषद के विद्या-वाचस्पति की परीक्षा में सारे भारत में सर्वप्रथम आये हैं। आर्यजगत के मूर्धन्य नेता डा० सूर्यदेव जी एम० ए० डी० लिट् अजमेर परिषद् के परीक्षा मन्त्री हैं। हम आर्यजगत की ओर से प्रिय सत्यपाल जी को हार्दिक बधाई देते हैं। धार्मिकता के क्षेत्र में भी लेखराम नगर कादियां के इस युवक ने युवकसमाज का मस्तक ऊंचा कर दिया है।—सं०

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

स्वास्थ्य चर्चा।

शुद्ध जल और लस्सी

(ले० डा० धर्मदेव जी मन्त्री आर्यसमाज धर्मसाला)

वायु से दूसरे दर्जे पर शुद्ध था ताजा जल की आवश्यकता। जल सब से पहिले है। सब से मुख है। चाय, शर्बत, सोडा और न्य वस्तुएं बाद मे है। क्योंकि दि पानी न हो तो उनका अस्तित्व हो? इसलिए परमात्मा का दिया द्ध और ताजा जल ही सदा सेवन रना चाहिए। दूसरी वस्तुओ से र ही रहना चाहिए। क्योंकि ये चनशक्ति, दिल और दिमाग को गाड़ने वाली है। जानबूझ कर वास्थ्य बिगाड़ने वाले पदार्थ का यों सेवन किया जाये?

झरने का जल प्राय शुद्ध व नमल होता है। खड्ड का पानी उस सा साफ नहीं होता। जब खड्ड का जल ही प्रयुक्त करना पड़े तो से उबाल कर ठण्डा करके पीना चाहिये। बिना उबालने के खड्ड का पानी पीने से एक या दूसरे रोग का भय लगा रहता है। जल क पात्रो को प्रतिदिन खूब अच्छी तरह साफ करना चाहिए। कई लोग सप्ताहो व महीनो तक साफ नही करते। पानी का बर्तन सदा ढाप कर रखना चाहिए। यदि जल धुला हुआ तो फटकड़ी, कायले या शुद्ध रेत से उसे साफ कर लेना चाहिए। जब कभी दस्त, हैजा या पेचिश की शिकायत हो तो सदा जल को उबाल कर और छान कर पीना चाहिए, क्योंकि रोगों का प्रारम्भ खराब पानी से होता है।

लस्सी—जब हम लस्सी का प्रयोग करते हैं तो हम अपनी आयु को लम्बा करते हैं। स्मरण रखो। बुढ़ापा एक सार्व भौमिक बीमारी है। यह जीवन की एक आवश्यक मंजिल नहीं है। हम अप्राकृतिक भोजन तथा कार्यों से बूढ़े होते हैं। समय के बीतने के साथ २ आंतड़ियों में एक प्रकार के कीटाणु पैदा हो जाते हैं जो कि शरीर में सुकड़ा को उत्पन्न कर देते हैं। इस से झुरियां पड़ जाती हैं तथा कपोल पिचक जाते हैं। जितनी लम्बी आंत उतनी कम आयु, जितनी छोटी आंत उतनी दीर्घायु—यह एक सम्मत सिद्धांत है। इसके अनुसार मनुष्य की कम से कम आयु एक सौ वर्ष की होनी चाहिए। इस लिए वेद भगवान जीवेम् शरदः शतम् सौ वर्ष जीवित रहने का आदेश करते है। अन्तड़ियों में बुढ़ापे नामक रोग को पैदा करने वाले कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए लस्सी से बढ़ कर और कोई वस्तु नहीं है और न हो सकती है। अत: स्वास्थ्य के लिए तथा दीर्घायु पाने के लिये आप लस्सी का प्रयोग करें। यदि यह अनुकूल न आये तो नमक, काली-मिर्च, सोंठ जीरा, पीपल, दार-चीनी जायफल और जावित्री आदि लस्सी में प्रयुक्त कर सकते हैं। इस से स्वास्थ्य की सम्पत्ति भी प्राप्त होगी तथा साथ २ बुढ़ापा भी शीघ्र जीवन के पास नहीं आने पायेगा। लस्सी अमृत है।

—०—

उड्डयन का प्रशिक्षण

चण्डीगढ़ १ मई—पंजाब के उड्डयन विभाग ने पटियाला में १७ से २० वर्ष तक की आयु वाले मैट्रिकुलेट युवकों के लिए एक मास का उड्डयन कोर्स आरम्भ किया है।

श्रद्धांजलि

शहीदों को

वह आए-वह आए,
मुझ दुःखी को बताए,
'मत रो-मत रो।'

मैं रोऊं - मैं रोऊं,
औ' मैं कहता जाऊं.
'मुझे तुम रोने दो।'

वह हंसे - वह हंसे
हसना हुआ कह दे,
'अय ! तुम भी हंसो।'

मै क्रोधित होऊं,
फिर मै बोल दूं,
'धन्! मुझे रोने दो।'

वह फिर मुझे कहे,
'क्यों तुम रो रहे?
चुप होओ-चुप होओ,'

मै उसे कह दूं,
सब कुछ सुना दूं,
'मुझे यूं छोड़ दो।'

'देखो वह भारत माई,'
कहूं मै, 'रो रही,
तो मुझे भी रोने दो।'

'जो वीर शहीद हुए,
उन्हें इन आंसुओं से,
मुझे धो लेने दो।'

'यह आंसू नहीं हैं,
मेरी श्रद्धांजलि सी है,
मुझे दे लेने दो।'

—'अरुण सरीन'

ऋषि दयानन्द : एक दार्शनिक के रूप में

[लि०—प्रो० भवानीलालजी भारतीय एम० ए०, गवर्नमैंट कालेज पाली राजस्थान]

महर्षि दयानन्द की प्रतिभा बहुमुखी थी। उन्होंने अपने अल्पकालीन जीवन में विविध प्रवृत्तियों का सूत्र संचालन किया और धर्म, राजनीति, समाज और दर्शन क्षेत्रोंमें क्रान्तिकारी उद्भावनाएं प्रस्तुत कीं। उन्हें हम वैदिक धर्म के उद्धारक, अपूर्व समाज सुधारक और राष्ट्रीय चेतना के उन्नायक के रूप में जानते हैं; परन्तु उन्होंने दर्शन के क्षेत्रमें भी अभूतपूर्व मौलिक विचार प्रस्तुत किए हैं, यह अभी तक सब लोग नहीं जान पाए हैं।

अत्यन्त खेद का विषय है कि आर्यसमाज ने जहां महर्षि के बहुमुखी व्यक्तित्व का परिचय विश्वको कराया, वहां उनके दार्शनिक रूपका विशदीकरण करने का कोई प्रयास नहीं किया। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके समाज-सुधार देशोत्थान तथा अन्यान्य कार्यों की जहां पर्याप्त चर्चा हुई वहां उनका दार्शनिक रूप अप्रकट सा ही रहा। आज कितने लोग यह जानते हैं कि महर्षि दयानन्द भी शंकर, रामानुज और मध्व आदि की परम्परा में आते हैं जिन्होंने स्वतन्त्र रूप से वैदिक दर्शन का प्रोज्ज्वल स्वरूप जन समाज के सम्मुख रक्खा था और एक व्यावहारिक, यथार्थवादी एवम् वैज्ञानिक दार्शनिक मतवाद की स्थापना की थी।

यहां इतना स्थान नहीं है कि महर्षि के दार्शनिक मन्तव्यों की विस्तारपूर्वक चर्चा की जाए, परन्तु उनकी एक-दो विशेषताओं की ओर हम पाठकोंका ध्यान अवश्य आकृष्ट करेंगे। सर्वप्रथम उल्लेखनीय तथ्य है। महर्षि द्वारा प्रतिपादित वैदिक त्रैतवाद अपने पूर्ववर्ती दार्शनिक आचार्यों से अपने मत को विभिन्न रखते हुए उन्होंने ईश्वर, जीव और प्रकृति इन तीनों नित्यपदार्थोंकी अनादि सत्ता स्वीकार की है। वे शंकराचार्यकी तरह ईश्वर और ब्रह्म में भेद की कल्पना नहीं करते और न रामानुज की तरह जीव को ईश्वर का अंश मात्र ही मानते हैं। प्रकृति को 'माया' कह कर उसके अस्तित्व को सम्पूर्णतया अस्वीकरण कर देना भी उन्हें अभिप्रेत नहीं है। अपने त्रैतवाद को सिद्ध करने के लिये वे ऋग्वेद का यह सुप्रसिद्ध मंत्र उद्धृत करते हैं।

'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं' आदि। यह मंत्र उपनिषद् में भी विस्तार पूर्वक व्याख्यात हुआ है। श्वेताश्वतर उपनिषद् का 'अजामेकां लोहित शुक्ल कृष्णां' बह्वीं प्रजा सृजमाना सरूपा यह मंत्र भी त्रिगुणात्मिकता प्रकृति के स्वतंत्र अस्तित्व के लिये प्रस्तुत किया गया है।

अपने से पूर्ववर्ती वेदान्ताचार्यों की भांति महर्षि ने अपने दार्शनिकमत को प्रस्थानत्रयी (वेदान्त सूत्र गीता और उपनिषद्) पर आधारित नहीं किया है। यों उपनिषद् और वेदान्त दर्शन को उन्होंने प्रामाण्य के रूप में स्वीकार किया है परन्तु सर्वोपरि रूप से प्रामाणिक उनकी दृष्टि में वेद ही हैं। उपनिषद् और वेदान्त भी वहीं तक प्रामाणिक हैं जहां तक वे वेदों के अनुकूल हैं। ऋषि यह भी स्वीकार नहीं करते कि उपनिषद् और वेदान्त दर्शन अद्वैतवादी विचार धारा का प्रतिपादक करते हैं। उनके मत में शंकर ने नवीन वेदान्त को एक नीति के रूप में स्वीकार किया था, अन्यथा यह मत सर्वथा दोष पूर्ण है।

शांकर वेदान्त का खण्डन महर्षि ने अपने ग्रन्थों में सर्वत्र किया है। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में वेदान्त की विस्तृत समालोचना की है और वेदान्त सूत्रों के आधार पर ही भेदवाद को सिद्ध किया है। उनके अनुसार उपनिषद् में कथित तत्वमसि अहं ब्रह्मास्मि, 'अयमात्मा ब्रह्म', 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म', 'प्रज्ञानात्मा ब्रह्म' आदि तथा कथित महावाक्य न तो महावाक्य कहलाने के ही अधिकारी हैं और न इनका वह अभिप्राय ही है जो वेदांत के आचार्य इन से निकाला करते हैं। नवीन वेदांत के खण्डन में महर्षि ने एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की भी रचना की है जो 'वेदांतिध्वान्त निवारण' के नाम से प्रसिद्ध है। खेद है कि इस ग्रन्थ का भी अध्ययन आर्यसमाज के क्षेत्रों में बहुत कम हुआ है। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी हो चुका है।

जहां महर्षि ने नवीन वेदांत की विस्तृत समालोचना सत्यार्थप्रकाश में की है, वहां चार्वाक, जैन, बौद्ध आदि स्वदेशीय नास्तिक दर्शनों का भी उन्होंने विस्तृत खण्डन द्वादश समुल्लास में किया है। बौद्धों के चारों अवांतर सम्प्रदायों का खण्डन और जैनियों के स्याद्वाद, अनेकांतवाद आदि का खण्डन महर्षि की क्रांतदर्शिता का परिचायक है।

षट् दर्शनों के समन्वय के विषय में महर्षि ने जो नितान्त मौलिक विचार प्रस्तुत किये हैं वे तो अपने आप में पृथक् निबंध के विषय हैं आज आवश्यकता इस बात की है कि महर्षि के दार्शनिक मत का ठीक २ अध्ययन और स्वरूप निरूपण किया जाय और उसे प्रकाश में लाया जाय। यह सर्वविदित है कि महर्षि के तिरोभाव के पश्चात् बंगाल में रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द ने शाङ्कर वेदान्त को एक नये रूप में प्रस्तुत कर उसे विश्व व्यापी दर्शन बनाने का उपक्रम किया था। अपने विस्तृत अध्ययन प्रकाशन और प्रचार के द्वारा उक्त स्वामियों ने वेदान्त का प्रचार अमेरिका और यूरोप के देशों में भी किया था। आज भी अमेरिका और यूरोप के लोग वेदान्त की विचार धारा से जितने प्रभावित और परिचित हैं उतने आर्यसमाज के दार्शनिक मत से नहीं। यह हमारे प्रचार की अक्षमता सूचित करता है।

वेदान्त का शंकर प्रतिपादित रूप अनेक त्रुटियों और न्यूनताओं के होते हुए भी विश्व का सब से अधिक लोकप्रिय दर्शन बन सका, राजगोपालाचार्य, राधाकृष्णन आदि मनीषियों ने उसे स्वीकार किया, इसे प्रचार और प्रसार का ही प्रभाव कहना चाहिये।

आर्यसमाज ने अपने दार्शनिक मत को साहित्य के रूप में निबद्ध करने का अब तक कोई महत्वपूर्ण प्रयास नहीं किया है। इस सम्बन्ध में केवल डा० सत्यप्रकाश द्वारा लिखित A critical study of the philosophy of Dayanand और पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय लिखित Philosophy of Dayanandके ही नामलिये जा सकते हैं। यों उपाध्याय जी ने 'आस्तिकवाद' 'अद्वैतवाद' 'जीवात्मा' 'मैं और मेरा भगवान' शाङ्कर भाष्यालोचन आदि ग्रन्थ लिखे हैं वे सब महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित दार्शनिक सिद्धान्तों के मूलरूप ही हैं। फिर भी हमारा दार्शनिक पक्ष अभी दुर्बल ही है यह मानने में किसी को विपत्ति नहीं होनी चाहिये। क्या वेदप्रचार का उत्तरदायित्व उठाने वाली सभायें और समाजें महर्षि के दार्शनिक मन्तव्यों के प्रचार और प्रसार के लिये भी कोई महत्वपूर्ण कदम उठायेगा ?

—

सिनेमा का जीवन पर कुप्रभाव

ले०—नरेन्द्र कुमार शर्मा आर्य युवक समाज लेखराम नगर कादियां

सिनेमा भी विज्ञान की दी हुई एक देन है। जिसे चलचित्र भी कहते हैं। नवयुवकों को चरित्रहीन बनाने तथा अपनी मां बहिनों को नाचता देखने वाली पाठशाला का नाम सिनेमा घर है।

आर्य सज्जनो ! वह भी समय था जबकि सिनेमा का अभी तक आविष्कार भी नहीं हुआ था। लोग उस समय में भी बड़ा सुखमय जीवन व्यतीत करते थे। आजकल के लोगों से उनका जीवन बहुत ही अच्छा था पुरातन समय में मनुष्य की आयु १०० वर्ष तक आम चली जाती थी और बीमारी का नाम ही न था। उस समय में अर्जुन, भीम, राम, कृष्ण, लक्ष्मण तथा दयानन्द जैसे बड़े २ महापुरुष हुए हैं। सरदार भक्तसिंह ने भी अपनी भारतमाता को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए फांसी के तख्ते को हंसते हुए चूमा था। उन पर सिनेमा का कुप्रभाव नहीं पड़ा था तथा उनके गुरुओं ने उनके दिल में देश-भक्ति कूट २ भर दी थी भीम में १६०० हाथियों का बल था परन्तु आज का नवयुवक तो ब्रह्मचर्य के नाम पर ही हंसी उड़ाता है। मैं तो कहता हूं आजाद भारत का नवयुवक सिनेमा के गन्दे २ गीत गाकर अपने पांवों पर आप कुल्हाड़ा चला रहा है। पुरातन समय में विदेशी भारत में शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे परन्तु अब तो यहां सिनेमा ही सर्वेसर्वा हैं।

एक बार महात्मा गांधी जी इंगलैंड में एक होटल पर गये। तो उस होटल वाले ने अपने होटल के ऊपर लिख रखा था कि—

'Indians and dogs are not to allowed.'

महात्मा जी ने इस का कारण पूछा तो पता चला कि यह काला लोग Charcter हीन तथा सादा होते । हैं तो सज्जनों उस समय महात्मा जी का उत्तर सुनिये :—

In England toioyl makes gentalman

But In India charcter makes a man gentalman.

परन्तु भाईयो आज कल तो वह महात्मा जी वाला चरित्र भी युवकों में नहीं रहा। जिन्होंने बड़े होकर देश की बागडोर को अपने हाथों में संभालना है अब तो इंग्लैंड वाला ही हिसाब भारत में आ गया है। आज का युवक सिनेमा के बिना पल भर भी जीवित नहीं रह सकता और अपना मां बहनों को नाचता देखकर खुश होता है परन्तु मैं तो कहता हूं कि उसके लिए डूब मरने का मुकाम है

सिनेमा का आज विश्व में कितना प्रचार हो रहा है इस को जानने के लिए जरा अर्वाचीन पत्रों को उठा कर तो देखिये। मैं तो कहता हूं कि इस ने भारत की पुरातन सभ्यता तथ सस्कृति पर पानी फेर दिया है। भारत को उन्नति के शिखर से नीचे गिरा दिया है। बेशक यह पश्चमी देशों के लिए फायदे मंद हो परन्तु हमारे देश के लिए यह बहुत हानिकारक है। यद्यपि विलास का एक मुख्य कारण है। सज्जनों हिन्दी के एक व्याकरण में लिखा है कि यदि एक लड़का इतिहास में अकबर का प्रश्न याद करता है तो उसे वह १० या १५ दिन में याद होता है। इसलिए यदि उसे वही प्रश्न सिनेमा रूप में याद कराया जावे। तो काफी समय के लिए याद रख सकता था। इसका उत्तर यह कि लड़के की आंखें खराब होंगी दूसरे वह तीन घण्टे में एक ही प्रश्न याद कर सकेगा। और दूसरे इतना समय नहीं होता जिस से हर इतिहास का प्रश्न सिनेमा से याद करे, परन्तु उसको कई विषय तैयार करने होते हैं।

दूसरे वह कहते हैं कि जो अंग शरीर का खराब हो इस को सुधारना चाहिये न कि उसको काटकर फैंक देना चाहिये। इस का उत्तर यह कि पुरातन समय में आपके शरीर का यह अंग कहां था उस समय के लोग बड़े २ जवान थे परन्तु आजकल तो हड्डियों का पिंजर हैं।

'लोग कहते हैं जमाना बदलता है अक्सर, पर मर्द वे जो जमाने को बदल देते हैं।

आर्यो अच्छे कामों के लिए रास्ते में अनेक बाधायें आती हैं परन्तु मर्द वो जो उनकी परवाह न करता हुआ अपने काम में सफलता प्राप्त करता है।

माता आज बुलाती है

(ले० श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु, डी० ए० वी० कालिज शोलापुर)

निकलो जिनमें प्यार वतन का जिनकी चौड़ी छाती है।
जिनमें यौवन हिम्मत साहस उनको मात बुलाती है॥
देश कौम की पीड़ा जिनको जो खेले अंगारों से।
रण भूमि में राग सुनावें जो हृदय के तारों से॥
और भारत मां की पीड़ा जिनको आज सताती है।
उनको मात बुलाती है॥

जिनके अन्दर खून उबलता राम कृष्ण भगवान् का।
रक्त मांगता आज जवानो कण-कण राजस्थान का॥
याद शिवा राणा की जिसके मन में आग लगती है।
उनको मात बुलाती है॥

नेफा में फिर आज गुंजा दो नलवा की हुंकार को।
निकलो आगे लड़कर बढ़ कर दुश्मन को ललकार दो॥
ऋषियों की यह पावन प्यारी जननी हमें जगाती है।
उनको मात बुलाती है॥

जो फांसी का रूप धार कर रण में आज दहाड़ सकें।
क्या करना है बिन सोचे जो मन में आज विचार सकें॥
पद्मनियों की गाथा पुरानी राग आग के गाती है।
निकलो जिनमें प्यार वतन का जिन की चौड़ी छाती है॥
उनको मात बुलाती है।

आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन हुश्यारपुर

श्री जगजीवन राम मनिस्टर आफ ट्रांस्पोर्ट ५५ड कम्युनीकेशन भारत की सामवेद के अंग्रेजी अनुवाद पर समालोचना। भाई श्री देवीचन्द जी मैं सामवेद की पुस्तक के लिए जो आपने मुझे भेजी था कृतज्ञ हूं। यह एक अमूल्य पुस्तक है और इस अनुवाद पर आपके वैदिक साहित्य के अगाध अध्ययन तथा विद्वत्तापूर्ण अनुवाद की मोहर लगी है यह उन लोगों की बहुत सहायता करेगा जो संस्कृत नहीं जानते और सामवेद पर एक दृष्टि डालना चाहते हैं इस अमूल्य रचना के लिए हार्दिक बधाई हो।

—जगजीवनराम

आर्यसमाज और नई पीढ़ी

(श्री शंकर लाल जी दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

वर्ष-प्रति-पदा का त्यौहार आदि काल से चला आ रहा है। प्रत्येक हिन्दू एक नये वर्ष के शुभागमन् के रूप में इसे मानता आता है। परन्तु आयसमाज के इतिहास में यह त्यौहार एक विशेष स्थान रखता है। ई० सन् १८७५ से इसके साथ एक नई ऐतिहासिक घटना जुड़ गई है, वह है—आर्य-समाज की स्थापना।

इस दिन महर्षि दयानन्द जी ने बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना करके नए वर्ष के साथ नई विचार-धारा का सन्देश दिया। वह संदेश उनका अपना नहीं था। वह तो वेद का सन्देश था। उन्होंने आर्य समाज की स्थापना वेद के सत्य सिद्धांतों के प्रचारके लिए ही की थी। उनके हृदय मे मानव-कल्याण के लिए एक टीस थी। उनका अपना एक मांगलिक स्वप्न था जिसे वह साकार देखना चाहते थे। वह चाहते थे कि संसार में प्राणी मात्र सुखी रहे। यह भी तभी सम्भव है, जबकि लोगों का जीवन वेदानुकूल हो। इसके लिए उन्होंने बचपन जवानी, ऐश्वर्य, सुख, सम्पत्ति, मान-प्रतिष्ठा सभी कुछ त्याग दिया। दुनिया ने बुरा-भला कहा, धोखा किया, विश्वासघात किया, मखौल उड़ाया, परन्तु वह भारत माता का सपूत, सच्चा कर्म-योगी, ईश्वर का अटल विश्वासी, वेद का अनुरागी अपने पथ से विचलित न हुआ। उसका जीवन आशा की डोर से बंधा हुआ था जो कभी टूटती नहीं। वह घर से भी अकेला निकला था और गुरु कुल से भी अकेला ही निकला था। अपने ईश्वर विश्वास, अखण्ड ब्रह्मचर्य और अनुपम पांडित्य के कारण संसार में दयानन्द की तूती बोलने लगी। दुनिया आश्चर्य चकित होकर इस नंगे फकीर की ओर देखने लगी। उन्होंने संसार की [illegible] अन्याय, अत्याचार के विरोध में आवाज उठाई, लोगों को बताया कि जिस मार्ग में भटक रहे हो। वह मार्ग मृत्यु की ओर ले जाने वाला है, अगर अमृतमय जीवन चाहते हो तो वेद की शरण में आओ। उनके विचारों से लोग प्रभावित हुए। लोगों में एक नई चेतना का संचार होने लगा। यह देख विरोधियोंने उसे नष्ट करने के लिये आक्रमण किया परन्तु सत्य के एक ही झकोरे ने उनकी जड़ों को हिला दिया। इस प्रकार आर्य समाज दिन दूना और रात चौगुना बढ़ता गया।

आर्यसमाज रूपी जिस यज्ञ का शुभारम्भ ऋषि ने किया, अपने प्राणों की आहूति देकर उसे प्रज्वलित किया, बाद में अनेकों वीरों ने अपनी प्राणाहूतियां डाल कर उसे आगे बढ़ाया। इसी सफलता को देखकर अमरीका के प्रसिद्ध दार्शनिक एण्ड्रो जैक्शन ने कहा था—'मुझे एक आग दिखाई दे रही है, जो सर्वत्र व्यापक है। जो नि.सन्देह राज्यों, और साम्राज्यों और सारे संसार की नीति तथा प्रबन्ध के सब दोषों को जला डालेगी। भारत में एक परम योगी ऋषि दयानन्द के हृदय में वह प्रकाशमान हुई थी—जब यह आग सुन्दर पृथ्वी को नवजीवन प्रदान करेगी तो सर्वत्र सुख शांति और सन्तोष छा जायगा।' इन थोड़े से शब्दों से दयानन्द और उसके बाद की पीढ़ी की कार्यशीलता का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

क्या आज का आयसमाज उसी गति से आगे बढ़ रहा है? क्या आज आयसमाज अमरीका के उस तत्वदर्शी के स्वप्नों को साकार रूप देने में समर्थ हुआ है? क्या 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का नारा लगाने वाला आयसमाज अपने ही देश को या अपने ही आपको आर्य बनाने में सफल हुआ। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का नारा तो लगाया, परन्तु अपने समाज को भी देखा कभी। दुनिया के लोग आशा की अजली लेकर आर्यसमाज के दरवाजे पर आये परन्तु अन्दर-अन्दर के कोलाहल को सुन निराश होकर लौट गए। आज एक दुनिया यह भी कहती है कि धोखे में मत आओ यह दयानन्द, श्रद्धानन्द, लेखराम का आर्यसमाज नहीं है वह तो उन्हीं के साथ समाप्त हो गया। यहां भी वही हाल है, जो अन्यत्र दिखाई दे रहा है। इसी आपस की फूट के कारण आर्य समाज की प्रगति रुकी हुई है। आने वाली नई पीढ़ी इस फूट और कलह को देखकर मुख मोड़ रही है। कैसे आर्य समाज का कार्य बढ़ेगा? वेदों का प्रचार होगा? आज वह लगन और स्फूर्ति दिखाई नहीं दे रही जो पुरानी पीढ़ियों में था। इसी कारण समाजों में ताले डले हुए हैं। गन्दी राजनीति ने घर कर लिया है। कैसे देश का उद्धार होगा? सभी जगह यही हाल है। नेतागण समाजों में आकर धर्म, संस्कृति, सभ्यता, गुरुकुल-शिक्षा प्रणाली के ऊपर रसीले-रसीले व्याख्यान दे जाते है, और जब घरों में जाकर देखो तो लड़के लड़कियां कालेजों में डाक्टरी पढ़ रहे हैं। गुरुकुलों में ७० फीसदी लड़के पौराणिक परिवारों के मिलेंगे। स्वयं लड़कों को यह भी पता नहीं कि 'सत्यार्थ प्रकाश' क्या बला है व किस ने लिखा है। यह मै व्यवहृत बात कह रहा हूं। ऐसे कई परिवार मैंने देखे हैं।

सज्जनो! अगर इसी प्रकार आर्य युवक-युवतियां अनभिज्ञ रहे तो आर्य समाज की उन्नति होना असम्भ है। अत. मैं समस्त आर्य सज्जनों से निवेदन करूंगा कि वे अपनी संतान को ऋषि के मिशन के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए अपनी सन्तानों को आगे लाये और लगन से प्रेम से वैदिक धर्म का प्रचार कार्य करें। हमे ईसाइयों के प्रचारकों से शिक्षा लेनी चाहिये। वह समुद्र-पार से आकर किस लगन और प्रेम से भारत के जंगलों में घूम २ कर अपने मत का प्रचार करते हैं। आर्यसमाज की बागडोर नवयुवक अपने हाथों में लें और ऋषि के कार्य को पूरा करें।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा रामलीला मैदान

नई दिल्ली—१

सार्वदेशिक आर्य वीरदल ग्रीष्मकालीन शिविर

भारत पर चीनी आक्रमण से देश की सुरक्षा को दृष्टि में रखते हुए सार्वदेशिक आर्यवीर दल की ओर से प्रत्येक प्रान्त में ग्रीष्मकालीन शिविरों का आयोजन किया जा रहा है जिन में देश की भावनात्मक एकता को उत्पन्न करने वाले धार्मिक व सांस्कृतिक शिक्षण के साथ २ नवयुवकों को विशेष रूप से शारीरिक व सैनिक शिक्षण भी दिया जायगा। ओ३म् प्रकाश त्यागी

प्रधान सचालक

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज पुलबंगश देहली ने श्री प्रिंसिपल ईश्वरदास जी की मृत्यु पर शोक प्रस्ताव पास किया। आपने सारी आयु समाज सेवा में व्यतीत की प्रभु उनकी आत्मा को सद्गति और परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—सुदेश कुमार मन्त्री

देश के सम

भारत सूचना कार

देहली २६ अप्रैल ६३—डाक व ता ... के अलावा प्रादेशिक भाषा में भी साइन बोर्ड और नोटिस बोर्ड लगाने का निश्चय किया गया है।

—केन्द्रीय सरकार ने उर्दू पत्रिका 'वांग' और 'हिन्दुस्तान ... मुसलमानों पर मजालिस की कहानी—हिन्दुस्तानी अखबार ... जवानी' नाम उर्दू पुस्तक को जब्त कर लिया है।

—सभी चीनी विक्रेताओं को सूचित किया जाता है कि ज ... भी चीनी के थोक या खुदरा भाव निर्धारित कर दिये गये हैं, वे ... निर्धारित भाव से अधिक दाम बेचने पर चीनी बेचना गैर-कानूनी समझा जाएगा।

—राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कोष के नई दिल्ली के केन्द्रीय खाते में आज तक ५२ करोड़ ८६ लाख रु० जमा हुआ। इस में ब्रिटेन से प्राप्त २८ लाख रु० तथा अन्य देशों से प्राप्त ४४ लाख रु० की राशि भी शामिल है। इसके अलावा, कोष में सोना तथा सोने के गहनों के रूप में २१, १८, ६३३ ग्राम सोना (लगभग १,८१,७०१ तोला) जमा हुआ है।

—विश्व बैंक ने व्यास योजना लिए भारत को ६० लाख डालर की मशीनें और उपकरण मंगाने की अनुमति दी है। इस तरह बैंक ने भारत को कुल ६५ लाख डालर खर्च करने की अनुमति दी है।

—जमशेदपुर की प्रयोगशाला में खनिज के सुधार का कारखाना खोला जा चुका है, जो इस प्रकार का सब से बड़ा कारखाना है।

—खेतड़ी (राजस्थान) में तांबा फ्लोटिंग मिल और पन्ना (मध्य प्रदेश) में हीरे का कारखाना खोला जाएगा।

—केन्द्रीय सरकार ने इण्डियन एयरलाइन्स कारपोरेशन को तीन करवेल विमान खरीदने की अनुमति दे दी है। इन विमानों के लिए फ्रांस की एक कम्पनी से बातचीत हो रही है और वर्ष के अन्त तक इन विमानों के भारत पहुंच जाने की आशा है।

—इसमें ८० व्यक्ति बैठ सकते हैं। इसकी गति ५६६ मील प्रति घण्टा है। यह बम्बई से दिल्ली १ घण्टा ४५ मिनट में पहुंच सकता है।

—वाराणसी में डीजल इंजन कारखाना बनाने और अमरीका से ५० इंजन खरीदने के लिए अमरीका भारत को १६ करोड़ ६० लाख रु० का ऋण देगा।

—खेती की मुख्य फसलों की बीमा योजना लागू करने के बारे में केन्द्रीय सरकार विचार कर रही है। शुरू-शुरू मे इस योजना के अन्तर्गत चुने हुए इलाकों में एक या दो मुख्य फसलों का बीमा किया जाएगा।

—केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालयने सार्वजनिक संस्कृत संगठनों, संस्थाओं, पाठशालाओं आदि को आर्थिक सहायता देने की योजना को १९६३-६४ में भी जारी रखने का निर्णय किया है।

—१९६२-६३ में भारत से कुल ७ अरब १० करोड़ १० लाख रु० का निर्यात हुआ। इसके अलावा १९६२-६३ में पिछले वर्ष के बनिस्बत १३ : करोड़ रु० के माल का कम निर्यात हुआ।

ईश्वर दास जी के स्वर्गवास पर ... के समस्त आर्य जगत तथा शिक्षण संस्थाओं में घोर शोक

२४ अप्रैल ६३ को प्रातःकाल साढ़े दस बजे स्वर्गवास हो गया। समाचार के मिलते ही सैंकड़ों नर नारी उनके निवास स्थान ८ स्कूल लेन पहुंच गए। निगम बोध घाट पर उनके मृतक शव का ... रीति से दाह संस्कार किया गया।

आर्य केन्द्रिय सभा

...ी की समस्त आर्यसमाजों की ओर से २६ अप्रैल १९६३ ...यंकाल ६ बजे आर्यसमाज रीडिंग रोड में शोक सभा हुई। जिस में देहली के अनेक प्रिंसिपलों ने उन्हें श्रद्धाजलियां पेश की और सब ने कहा कि प्रिंसिपल ईशवर दास ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त तथा दूसरों के दु:ख दूर करने पर तत्पर रहते थे।

चौथा

२७ अप्रैल ६३ को सायंकाल ५ बजे उनके निवास स्थान पर चौथे की रसम यज्ञ हवन से हुई।

आर्यसमाज बाजार सीताराम मे

२८ अप्रैल रविवार को प्रातःकाल ६ बजे श्री पं० भगवत दत्त जी के प्रधानत्व में विशाल शोकसभा हुई, जिसमें उनके अगाध गुणों की प्रशंसा करते हुए अपनी २ श्रद्धांजलियां अर्पित कीं। श्री नन्दकिशोर खन्ना तथा श्री राम लाल प्रि० ईशवर दास जी इन दोनों के ५० वर्ष के साथी थे। दोनों ने अपने भाषणों में कहा कि हमसे हमारा इतना पुराना साथी बिछुड़ गया है। ईश्वर दास जो हमारे पथ प्रदर्शक थे। शिक्षा का सरकारी दफ्तर उनके सुझाओं को बड़ा महत्व देता था। वो दिल्ली के समस्त स्कूलों के अध्यापकों-प्रिंसिपलों तथा प्रबन्धकर्ताओं की सभाओं के प्रधान थे। उनके रिक्त स्थान की पूर्ति असम्भव है।

दिल्ली के अध्यापको का शोक समारोह

२८ अप्रैल रविवार को सायंकाल ५ बजे डी० ए० वी० स्कूल दरयागज में ५ बजे हुआ जिसमें स्कूलों व कालिजों के प्रिंसिपल तथा हजारों अध्यापक जमा हुए और श्री ईश्वर दास जी के प्रति बहुत सज्जनों ने अपनी २ श्रद्धांजलियां पेश कीं।

—नन्दकिशोर खन्ना आर्यसमाज
बाजार सीताराम दिल्ली

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे   वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ -अंक १९) रविवार ३० वैशाख २०२०— १२ मई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

एको वो देव:

हे मनुष्यों! व:—तुम्हारा देव परमात्मा एक ही है। उसी एक हो परमेश्वर को मानो, जानो और भक्ति करो। इधर उधर मत जाओ। वही एक मात्र उपास्य देव भगवान् माना गया है।

सं व: सृजत्वर्यमा

वह अर्यमा—न्यायकारी परमेश्वर व:— आप लोगोंको संसृजतु—पालन करे। हे लोगो! वही भगवान् सब का पालक पोषक है वही आप सब का पालन पोषण करे—पुष्ट करे।

मयि संज्ञानमस्तु

प्रभो! मुझ में शुद्ध ज्ञान तथा पवित्र विचार होवें। ऐसा ज्ञान जो मुझे सुमार्ग पर ले चलने में समर्थ हो तथा जिस विचार से मेरा [illegible] सके।

वेदामृत

शं न: मोमो भवतु ब्रह्म शं न: शं नो ग्रावाण: शमु सन्तु यज्ञा:। शं न: स्वरूणां मितयो भवन्तु शं न: प्रस्व: शम्वस्तु वेदि:॥ ऋ० मं० ७ सू० ३५ मंत्र ७

अर्थ—(शं न:) हमें सुखकारी (सोम:) चन्द्रमा (भवतु) होवे (ब्रह्म) ज्ञान और धन बल (शं न:) कल्याणकारी हों और (ग्रावाण:) महान विद्वान् (शम् उ) शान्ति देने वाले (सन्तु) होवें (यज्ञा:) परोपकार के यज्ञ मय कार्य (शं न:) सुख शान्ति दें (स्वरूणां) ज्ञान से भरे शब्दों के, उपदेशों के (मितय:) परिमाण (भवन्तु) हों और (शं न:) कल्याणकारी हों (प्रस्व:) ओषधियां वनस्पतियां (शम उ) और शान्ति आनन्द देवें (वेदि:) यह भूमि रूपी यज्ञ वेदी या यह देह रूपी यज्ञ की वेदी सुखकर होवे।

भाव:—अन्तरिक्ष में शीतलता का भण्डार यह चन्द्रमा हमें सुखकर हो! चन्द्र विद्या सीख कर इससे पूर्ण लाभ उठाते रहें। यह ज्ञान धन और बल हमें शान्ति प्रदान करता रहे। हम पशुबल के स्वामी न बनें अपितु दिव्यबल व दैवी शक्ति के उपासक हों। हमारा बल दूसरों को पीड़ा देने वाला न होकर सुखकारी हो। हमारा धन स्वार्थ का साधन न बन कर परोपकार, लोक सेवा और विश्व कल्याण में लगने वाला हो। हमारे शब्दों के, भावों के, विचारों के परिमाण दूसरों का भला करने वाले हों। जीवन पथ दिखलाने वाले हों। दूसरों के जीवन को विपथ, कुपथ दुष्पथ पर डालने वाले न बनें। ये सारी ओषधियों वनस्पतियों का भण्डार विश्व के प्रत्येक प्रकार के रोगों को दूर करता रहे। सब को नीरोग करता रहे। यह सारी धरती यज्ञ की वेदी बनकर सबका कल्याण करती रहे। इसके भण्डार भरे ही रहें और हमारा यह शरीर यज्ञ के, परोपकार के कार्य के अर्पण होवे—सं.

ऋषि दर्शन

त्वयि शुक्रमनन्तम्

हे परमेश्वर! आप में अनन्त अपार शुक्र है—बल है। आप में जो शक्ति व बल है उसका कौन पार पा सकता है। अनन्त बली हो नाथ!

त्वमनन्तबलमसि

हे प्रभो! आप अनन्त बल वाले हो। संसार में जितने भी बलवान हैं—वे आप के सामने तुच्छ हैं। आपके समान किसी का भी बल नहीं है। अनन्त वीर्य हो।

उत्तमं बलं धेहि

बलों के भण्डार! मुझे उत्तम, श्रेष्ठ बल शक्ति प्रदान करो। ऐसा बल जो दीनों की रक्षा के कार्य आ सके। जिससे मैं लोक सेवा करता रहूं—ऐसी शक्ति भर दो।

भा ष्य भू मि का

[illegible]—संतोषराज मंत्री सभा   सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद—

'बृहदारण्यकोपनिषद् का सार (अध्याय १)'

श्री बलदेवराज M. A. विद्यार्थी साधु आश्रम होशियारपुर

बृहदारण्यकोपनिषद् के प्रथम अध्याय में अश्वमेध यज्ञ का वर्णन है जिसके भिन्न-भिन्न अंगों व व्यापारों को बाहिर की प्रकृति के साथ समन्वित करके दोनों में अभिन्नत्व स्थापित किया है। दार्शनिक दृष्टि से अनेकत्व में एकत्व की ओर प्रयास किया गया है। दूसरे ब्राह्मण में सृष्टि के मूल को ढूंढते हुए सर्वप्रथम मृत्यु की कल्पना की गई है। उसने अर्चना की और जल उत्पन्न हुआ। जल से पृथिवी, पृथिवी से अग्नि पैदा हुआ। प्राथमिक तत्व मृत्यु से फिर अन्य तत्व पैदा हुए। उसी से वेद आदि जन्मे। जिसके आधार पर अश्वमेध यज्ञ की रचना हुई।

तीसरे ब्राह्मण में भिन्न २ इन्द्रियों में प्राण की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया गया है एक कथा के अनुसार प्रजापति के दो प्रकार के पुत्रों में देवताओं के लिए उद्गीथ का काम करने वाली इन्द्रियों को असुर लोगों ने पाप से बींध लिया। परन्तु प्राण का वे कुछ न बिगाड़ सके तथा वे स्वयं नष्ट हो गए। इस प्राण को अयास्य आङ्गिरस कहा गया है जो पाप व मृत्यु को समाप्त कर अन्य इन्द्रियों को मृत्यु से बचा ले गया। मृत्यु से मुक्त होकर प्राण ने वायु, चक्षु ने आदित्य, श्रोत्र ने दिशाओं का रूप धारण कर लिया। इसके उपरान्त पवमान मन्त्रों के जप का उल्लेख है जैसे तमसो मा ज्योतिर्गमय—Lead me from darkness to Light मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।

चौथे ब्राह्मण में पुरुष के रूप में आत्मा की कल्पना की गई है। वह अकेला होने से उद्विग्न हो गया। उसने अपने आप को दो भागों में बांटकर पति व पत्नी को उत्पन्न किया उस पुरुष ने फिर जल व अग्नि को रचा। अव्यक्त सृष्टि को नाम व रूप के द्वारा अभिव्यक्त किया। इस आत्मा की महिमा को बताते हुए पुनः सारी इन्द्रियों का इसे आधार माना गया। इस आत्मा व व्यक्ति के अहम् में स्पष्ट भेद नहीं हो पाया है। इसी ब्राह्मण में ब्रह्म को प्रत्येक प्राणी में विराजमान बताया है। ईश्वर की उपासना अपने आपको उससे पृथक् मानते हुए करना बेकार समझा गया है। इसके उपरान्त ब्रह्म शब्द का अर्थ ब्राह्मण मानकर मीमांसा की गई है। तदुपरान्त ज्ञान को इस लोक की उन्नति का साधन माना गया है। पांच महा यज्ञों में आत्मा को मुख्य तत्व माना गया है। मन को आत्मा का स्वरूप, वाणी को पत्नी, प्राण को प्रजा तथा चक्षु को आत्मा का धन माना गया है।

पांचवे ब्राह्मण में सात अन्नों की बात कही गई है जिनमें एक समान रूप से सबका है। दो देवताओं के, तीन आत्मा के, एक पशुओं का है। अन्न इसलिए क्षीण नहीं होता क्योंकि वह प्राण-पुरुष के द्वारा उत्पन्न हुआ है। आत्मा के तीन रूप मन, वाणी व प्राण बताए हैं। वाणी ऋग्वेद, मन यजुर्वेद और प्राण सामवेद है। अथवा क्रमश. ये देव, पितर व मनुष्य हैं। वाणी के द्वारा ज्ञान का रूप देखा जाता है प्राण के द्वारा प्रतिष्ठित है। वाणी पृथिवी का रूप है जो पुनः अग्नि का प्रतीक है। मन द्यु लोक है जो सूर्य का प्रतीक है। प्राण जगत है जो चन्द्रमा का प्रतीक है। इसके बाद १६ कला वाले संवत्सर को प्रजापति कहा गया है। इसी प्रजापति को आत्मा का प्रतीक माना गया है जिनमें १५ कलाएं स्थूल शरीर हैं अन्तिम कला आत्मा है। जिस के द्वारा व्यक्ति जीता रहता है। इसी ब्राह्मण में तत्कालीन परम्पराओं जैसे मरणासन्न पिता के द्वारा पुत्र के लिए धरोहर रखना आदि पर भी प्रकाश डाला गया है। व्रत मीमांसा प्रकरण में कहा है भिन्न-भिन्न इन्द्रियों ने अपने महत्व को प्रति-पादित किया परन्तु मृत्यु ने उन्हें क्लान्त कर दिया। प्राणों की महत्ता स्थापित करके ईश्वर का रूप माना गया है।

छठे ब्राह्मण में सृष्टि को नाम, रूप व कर्म से बना हुआ कहा है। नाम के पीछे वाणी है। रूप के पीछे चक्षु और कर्म के पीछे आत्मा कर्त्ता माना गया है। तीनों एक आत्मा के रूप हैं। इसके साथ ही प्रथम अध्याय समाप्त होता है। यथा-समय अन्य अध्यायों के सम्बन्ध में भी मैं लेख लिखूंगा।

भजन

भारत के इतिहास की है इक बड़ी पुरानी बात।
इक बालक को ज्ञान हुआ था थी वह सुहावनी रात॥

ज्ञान को पाकर देश जगाया
वेद का अमृत पान कराया
ऊंच नीच का भेद मिटाया
आजादी का घोष लगाया
उसके तप और त्याग से आई भारत में प्रभात!
भारत के...

हर तरफ अन्धकार था छाया
ओ३म् की धुन गा दूर भगाया
सत्य अहिंसा नाद बजाया
हम को आगे बढ़ना सिखाया
ऐसे ऋषि दयानन्द की महिमा कही न जाय!
भारत के...

बैठ विरोध की आग बुझाकर
सत्य धर्म की राह दिखाकर
मौत से लड़ना भी सिखलाकर
आर्य समाज की बेल लगाकर
ऋषिवर की वह अनुपम प्यारी दिवाली की रात!
भारत के...

दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर का चुनाव

दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर का ६३-६४ के लिए चुनाव।

प्रधान—श्री ला० रामदास जी पूर्व प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज हुशियारपुर। उपप्रधान—श्री पं० रलाराम जी M. A., M. L. A. पूर्व प्रिंसीपल हुशियारपुर, श्री पं० बहादुर मल जी पूर्व प्रिंसिपल हुशियारपुर। श्री चौ० हरिराम जी एडवोकेट हुशियारपुर। मन्त्री—बाबा शादीलाल जी एडवोकेट हुशियारपुर। उपमंत्री—पं० ठाकुरदास जी एडवोकेट हुशियारपुर।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ३० वैसाख २०२०, १२ मई १९६३ [अंक १९

महत्वपूर्ण बात

आर्य समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इसी लिए की कि सारे संसार को आर्य बनाया जावे। इसके लिए सब से बड़ा साधन वेद प्रचार है। वेद के पढ़ने पढ़ाने और सुनने सुनाने को परम धर्म लिखा। आर्य समाज से पूर्व गीता धर्म, रामायण धर्म, महा भारत धर्म, पुराण धर्म ही परमधर्म माने जाते थे। इन की ही सर्वत्र कथाएं चलती रहीं। इनके पारायण तथा अखण्ड पाठ भी होते थे।

आर्यसमाज ने जनता की रुचि वेदों के प्रचार की ओर मोड़ी, समाज के सारे कार्यों में वेद प्रचार ही का तत्त्व काम करता है इसी कारण समाज फैला लोकप्रिय बना किंतु अब अनेक स्थानों पर इस आवश्यक बात के प्रति उदासीनता प्रतीत होती है। गीता मंदिर रामायण मन्दिरों में उन २ ग्रन्थों की कथाएं होती रहती हैं, पर वेद मंदिर तो केवल मात्र समाज ही हैं, यहां पर वेदों के प्रवचन होवे हैं, होने चाहिए। लोग आर्यसमाज में केवल गीता कथा, रामायण कथा, महाभारत कथा तथा अन्य कथाएं सुनने नहीं आते। ये सारी कथाएं अन्य स्थानों पर सुनाई जाती हैं। किन्तु आर्यसमाज में तो वेद कथा एवं वेदों के प्रवचन ही विशेष रूप से सुनने की इच्छा लेकर लोग आते हैं यदि यहां पर वही कथाएं केवल मात्र सुनाई जाएं तो वेद कथा कौन और कहां सुनाई जा सकेगी? इस परमधर्म को और कौन सुनायेगा। हम यह नहीं कहते कि उन पुरातन महान ग्रन्थों को ओझल कर दिया जाये। उन से इस विषय के प्रसंग लिये जा सकते हैं हमारे महापुरुषों के उदात्त चरित जीवन के प्रकाश देने वाले हैं। फिर भी वेद कथा को प्रमुखता दी जाये समाज का यह परमधर्म है।

भटिण्डा से आर्यसमाज शैड के प्रधान पण्डित बृजलाल शर्मा ने इस ओर विशेष समाजों का ध्यान दिलाने को लिखा है। उनका इस पर विशेष बल है कि आर्यसमाजें वेदकथाओं को प्रमुखता देवें। भटिण्डा में समाज की कथा मे वहां के एक सनातन धर्मी सज्जन ने किसी एक विद्वान् की केवल रामायण तथा महाभारत की कथा को सुन कर श्री शर्मा जी से कहा कि मैं तो आर्यसमाज में इस लिए आता हूं और आया हूं ताकि वेदों के बारे में एवं वेदमन्त्रों को लेकर विशेष प्रवचन यहीं पर सुनने को ही मिलते हैं। यदि यहां पर भी वही बाते केवल सुनने को मिले तो समाज का विशेषता कहां रही। वैदिक धर्म की जय तभी होगी जब कि वेदों पर प्रवचन होंगे। गत दिनों डा० सम्पूर्णानन्द जी राज्यपाल राजस्थान ने कहा था कि यदि वेद हमारे पास होंगे तभी गीता आदि उन के सन्देश से आत्मवाद आदि को लेकर बनाई जा सकती है। वेद प्रमुख हैं तथा अन्य सारे ग्रन्थ गौण हैं। यह बात है भी ठीक। आर्यसमाजों को इस वेदकथा, वेदप्रवचन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। जनता समाज में वेदप्रवचन सुनने आती है। उनकी इसी भावना को कायम रखा जाये। समाज के सिवाय वेद कौन सुनायेगा।

—त्रिलोक चन्द्र

प्रिंसिपल ईश्वरदास जी

भी अब हमारे मध्य में नहीं रहे। आर्यसमाज का एक और महान कार्यकर्ता, शिक्षा शास्त्री तथा देहली में डी० ए० वी० की ज्ञान-धारा को प्रवाहित करने वाला चल बसा है। इस अत्यन्त दुःखद समाचार को सुन पढ़ कर दिल एकदम बैठ गया। स्वर्गीय प्रिंसिपल जी ने अपनी जवानी में लाहौर से पूज्य महात्मा हंसराज जी के आदेश पर देहली को अपना कार्यस्थान बनाया। उस समय राजधानी मे शिक्षा का इतना विस्तार तो था नहीं। इस पर आर्यसमाज की शिक्षा संस्था तक का नाम भी नहीं था। प्रि० ईश्वरदास जी ने एम. ए. करके वहां पर अपना डेरा डाल दिया। डी. ए. वी. स्कूल खोला। उसके मुख्याध्यापक बन कर इस प्रवाह को आगे बढ़ाया। भारी तप किया। कष्ट सहन किये। उस तपस्वी के तप का विशाल प्रभाव पड़ा। आज इसी राजधानी मे लगभग पचीस डी० ए० वी० हायर सैकंडरी स्कूल तथा कालेज हैं। समाजों की संख्या का तो कहना क्या? देहली आर्य समाज का केन्द्र है। इस शिक्षा प्रसार व समाज विस्तार का सारा श्रेय स्वर्गीय प्रिंसिपल जी को है। समाज के अतिरिक्त उनका राजकीय क्षेत्र में भारी प्रभाव था सारी देहली के अध्यापक संघ के देर से प्रधान बने चले आरहे हैं। शिक्षा क्षेत्र में बड़ा मान था। आर्यसमाज में तो उनकी पूजा होती थी। ऋषि के अनन्यभक्त, महात्मा हंसराज के परमश्रद्धालु तथा आर्यसमाज के महान कार्यकर्ता थे। मैं देहली में उनके सम्पर्क में रहा हूं। उनके विचारों में समाज प्रेम देखकर मस्तक श्रद्धा से झुक जाता था। वह सर्वतोमुखी नेता थे। उनका स्वर्गवास न केवल देहली अपितु सारे समाज तथा शिक्षा क्षेत्र की महती हानि है। हम उनके सारे परिवार के साथ इस कभी न पूरी होने वाली क्षति में हार्दिक समवेदना प्रकट कर प्रभु से उनके आत्मा की शान्ति तथा परिवार को महान धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं।

प्रभु स्वास्थ्य देवें

आर्यसमाज के नेता डी. ए. वी. कालेज शोलापुर के माननीय प्रिंसिपल भगवान दास जी एम. ए. कई दिनों से अस्वस्थ थे। वहां रुग्णालय में प्रविष्ट होकर चिकित्सा कराते रहे। श्री प्रिंसिपल जी अनथक कार्यकर्ता हैं। वहां कालिज का काम उनके जाने पर बहुत बढ़ गया है। समाज के प्रचार का तो बड़ा विस्तार हो गया है। बीमारी से सब को बड़ी चिन्ता लगी थी। आर्यसमाज के पास अपनी संस्थाएं चलाने के लिए योग्य, मंजे हुए सज्जन है ही कितने। अब मान्य प्रिंसिपल जी के पत्र से ज्ञात हुआ है कि वह हस्पताल से वापस घर आगये हैं। महीनों बीमार रहे हैं। हम भगवान से प्रार्थी हैं कि श्री प्रिंसीपल जी शीघ्र पूर्णरूप से स्वास्थ्य लाभ करें उनके उधर जाने से सारे प्रान्त में समाज का नाम गूंज गया है। अब तो उन्होंने श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम. ए. को भी अपने पास कालिज में बुला लिया है।—सं०

परीक्षा परिणाम

ए. एस. हाईस्कूल अलावलपुर की अष्टम श्रेणी का परीक्षा परिणाम गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी अत्युत्तम रहा है। अष्टम श्रेणी का छात्र सत्यपाल सुपुत्र श्री जगतराम जी मिडिल परीक्षा में ५४५ अंक लेकर इलाका के सभी स्कूलों में प्रथम रह कर हाईस्कूल छात्रवृत्ति प्राप्त करके स्कूल के नाम को उज्ज्वल किया है। इस सफलता का श्रेय स्कूल के मुख्याध्यापक तथा अध्यापक वर्ग के सिरों पर है।

—व्यवस्थापक

आनन्द की ओर

(ले०—कविराज श्री रामसिंह जी वैद्य वाचस्पति)
संस्थापक—आरोग्य मंदिर यमुना नगर

ओम् त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतोबभूविथ अघाते सुम्नमीमहे।

(ऋग्वेद ८—९८—११)

हे परम पिता परमात्मा आप ही हमारे सच्चे पिता और सैकड़ों उपकार करने वाली माता हैं। मैं आप के पवित्र स्वरूप का ध्यान करता हूं और आप से यह विनती करता हूं कि मैं आप का आज्ञाकारी अमृत पुत्र बनूं। आप शांत शिव सुन्दर हैं और हम सब जीवों के परम कल्याणार्थ आपने यह सुन्दर सृष्टि रची है। मैं सब दुर्गुण, दुर्व्यसनों से बच कर सदा शांत गम्भीर मधुर भाषी कर्तव्य परायण बनूं। जैसे आप सदा सब का कल्याण करते हैं मुझे भी गुणवान ऐश्वर्यवान बनाओ ताकि मैं अपने सम्पर्क में आने वाले प्राणि मात्र का कल्याण करके आपका शिव पुत्र बनूं और जैसे आप ने इस महान् सुन्दर सृष्टि की रचना की है मुझे भी शक्ति और भक्ति प्रदान कर ताकि मैं अपने मन, वचन, कर्म से आप की इस सृष्टि को सुन्दर बनाने में अपना कर्तव्य पालन करके आप का शांत शिव सुन्दर अमृत पुत्र बन जाऊं।

ओम् शान्ति, शान्ति, शान्ति॥

मेरे प्यारे मानव बन्धुओ। परम पिता परमात्मा की अपार कृपा से मुझे यह पूर्ण विश्वास हो चुका है कि उस प्रेम मयि माता ने अनंत गुणों से युक्त वे अंत पदार्थों से भरपूर यह सुन्दर सृष्टि प्राणि मात्र के कल्याणार्थ अर्थात् सुख, शान्ति और आनंद की प्राप्ति के लिए रची है। यदि कोई प्राणी इन से वंचित है तो इस में उसकी अपनी ही कोई आहार, विहार, चेष्टा और कर्म सम्बन्धी मूल कारण हैं।

मानव को अन्य प्राणियों की, अन्य योनियों की अपेक्षा परम-पिता ने यह विशेषता प्रदान की है कि वह अपने दुर्गुण, दुरव्यसनों का त्याग करके अपने आहार, विहार, चेष्टा और कर्म का सुधार कर सकता है और अपने जीवन में सुख, शांति, आनन्द प्राप्त कर सकता है तथा इस प्रकार अपने पुरुषार्थ में अपने लिए स्वर्ग की रचना स्वयं कर सकता है। अतः जो मानव अपने जीवन का कल्याण चाहता है उसका यह प्रथम कर्त्तव्य है कि वह उसके लिए पूर्ण प्रयत्न करे और अपने जीवन का कल्याण करे। आनद की ओर बढ़ने के लिए किस प्रकार यत्न करना है प्रभु कृपा से प्राप्त अनुभव के आधार पर उसका वर्णन इस प्रकार किया जाता है।

मानव के दुख का कारण अज्ञान है। अतः सर्वप्रथम यह ज्ञान प्राप्त करे, यह समझने का यत्न करे कि मैं क्या हूँ। यह सारा जीवन क्या है और मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है। इन सब प्रश्नों का उत्तर उपनिषद् के एक वचन में दिया गया है।

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथ मेव तु
बुद्धिं तु सारथिम् विद्धि मनः प्रह मेव च
इन्द्रियाणी ह्यानाहु विषिया-स्तेषु शिव गोचरान
बुद्धिमतुं सारथिं विद्धि
आत्मेन्द्रिय मनोयुक्ता भोक्ते त्याहु मंनीषिणः

कठोपनिषद् अः १ बल्ली ३

अर्था—यह शरीर रथ के समान है और आत्मा इस शरीर रूपी रथ में यात्रा करने वाला रथि अर्थात् यात्री है। इन्द्रियां उस रथ के घोड़े हैं और विषय इन इन्द्रियों रूपी घोड़ों के घास के रूप में है। बुद्धि इस शरीर रूपी रथ का सारथी (चालक) है। दूसरा कारण अपने ज्ञान के अनुसार आचरण न कर सकना जिसका मूल है आत्म बल की कमी युक्त हुआ २ संसार का भोग भोगता है और मन इन इन्द्रियों की लगाम है, आत्मा इन्द्रिय और मन से है।

(क्रमशः)

आदर्श विवाह

श्री संतोषराम जी डायरैक्टर दयानन्द मोडल स्कूल व मन्त्री प्रादेशिक सभा की सुपुत्री श्रीमती निर्मल M. A. का पाणि ग्रहण श्री अशोक साहनी सुपुत्र श्री चिरंजीत जी साहनी के साथ ७ मई १९६३ को उनके निवास स्थान पर सम्पन्न हुआ मिलनी के समय श्री वीरेन्द्र जी सम्पादक प्रताप, श्री यश जी सम्पादक मिलाप, श्री इन्द्रसैन जी तेल व्यापारी, डा० हुकमचन्द्र जी भल्ला, श्री चंचलदास जी डायरैक्टर मेहरचन्द्र टैकनीकल इन्स्टीच्यूट. श्री अत्रिदेव जी प्रिन्सिपल आयुर्वैदिक कालिज, श्री बेरी जी प्रिं० साईंदास H/S स्कूल, श्री चिमनलाल जी पूर्व प्रि० साईंदास H/S स्कूल, कैप्टन शिवराव जी, श्री शंकरदास जी त्रेहन प्रधान किला समाज, प्रो. वेदीराम जी शर्मा, प्रो० सत्यदेव जी, श्री जमनादास जी हैड क्लर्क A.P.P सभा, सुश्री विद्यावती जी M.A. प्रिन्सीपल महिला महाविद्यालय श्रीमती सुवर्णा जी आदि अनेक प्रतिष्ठित नागरिकों ने उपस्थित होकर बरात का स्वागत किया।

विवाह के समय कन्या के माता-पिता को शुभ आशीर्वाद दिए। विवाह कार्य श्री पं० बलदेवकृष्ण जी ने संभाला, और सम्पूर्ण कार्य वैदिक रीति से सम्पन्न होकर उत्साह प्रेम व श्रद्धा के साथ समाप्त हुआ।

—व्यवस्थापक

आर्यसमाज हुशियारपुर का चुनाव

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के अन्तरंग सदस्य श्री ला. शंकर दास जी त्रेहन के नेतृत्व में ७ मई १९६३ को प्रातः ९ बजे डी० ए० वी० हायर सैकंडरी स्कूल के विशाल हाल में सम्पन्न हुआ। प्रधान जी की सहायतार्थ श्री प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम० ए० तथा श्री ज्ञानचन्द्र जी भाटिया अन्तरग सदस्य भी उपस्थित थे। श्री बैजनाथ जी महेन्द्र प्रिंसीपल डी० ए० वी० H/S स्कूल १९ वोट अधिक लेकर आर्यसमाज के प्रधान मनोनीत हुए। श्री बैजनाथ जी १७८ वोट तथा श्री हरिराम जी एडवोकेट को १५९ वोट मिले।

पुरानी मंडी जम्मू समाचार

यह सम्मेलन पूज्य लाला दीनानाथ जी महाजन [illegible]मिनिस्टर को उनके पोता के मुंडन संस्कार पर हार्दिक बधाई देता है।

—यह सम्मेलन श्रद्धेय ला. मेहर चन्द जी महाजन रिटायर्ड चीफ जस्टिस के साथ उनके नौजवान दामाद श्री देवराज जी की अकाल मृत्यु पर उनके परिवार से पूर्ण सहानुभूति और खेद प्रकट करता है और ईश्वर से स्वर्गीय आत्मा को सद्गति और सम्बन्धियों को धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना करता है।

—तमाम आर्य नर-नारियों को यह जान कर बड़ा ही दुःख हुआ है कि आर्यसमाज के पुराने पुरोहित पं० धर्मचन्द जी का अचानक देहान्त हो गया है। सब उनके परिवार से पूर्ण सहानुभूति प्रकट करते हैं।

—गोपाल कृष्ण मंत्री समाज

श्री देव राज जी

श्रद्धेय ला. मेहर चन्द जी महाजन रिटायर्ड चीफ जस्टिस के दामाद श्री देवराज जी की अकाल-मृत्यु पर हार्दिक सम्वेदना प्रकट करता हुआ उनके परिवार को, तथा स्वर्गीय आत्मा को धैर्य व सद्गति प्रदान करने के प्रभु से प्रार्थना करता है। विशेष कर श्री ला. मेहर चन्द जी महाजन व उन के परिवार के साथ इस दारुण दुःख में सम्मिलित होता है।

व्यवस्थापक

"क्या ईश्वर है ?"

(शक्ति कुमार जी बी० ए० माडलटौन यमुनानगर)

आज का युग एक विज्ञान का युग है जिसमें मनुष्य की शक्ति को ही विशेषता दी जाती है। हम देख भी रहे हैं कि साईंस यहां तक पहुंच चुकी है कि Russia वाले कहते फिरते हैं कि May day को उनका व्यक्ति राकेट में बैठकर अन्तरिक्ष में जाएगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि विज्ञान ने एक से एक आश्चर्यजनक व प्रभावशाली कार्य करके दिखाये हैं परन्तु इसके साथ-साथ उन्हें यह भी अच्छी प्रकार से अनुभव हो चुका है कि इस समस्त मंडल को चलाने वाला भी कोई न कोई अवश्यमेव है। अर्थात् आधुनिक उच्च वैज्ञानिक भी कुछ एक आधारों पर यह स्वीकार करते हैं कि "There is some supreme power working properly in the world." वह शक्ति है 'ईश्वर'।

सब से ठोस आधार, जिस पर वैज्ञानिकों का सर उस सर्वशक्तिमान 'ईश्वर के आगे झुक जाता है वह है इस ब्रह्माण्ड की भौगोलिक स्थिति।

सचमुच हमारी आंखें वहीं की वहीं रह जाती हैं जब हम इस भूमि की ओर दृष्टिपात करते हैं। कोई स्थान नीचा है तो कोई ऊंचा। कहीं मैदान हैं कहीं आकाश को चूमते हुए पर्वत की शृंखलाएं। कहीं मिट्टी सफेद है तो कहीं काली, कहीं लाल है तो कहीं रेतीली। कहीं वन हैं तो कहीं बड़ी-बड़ी चिट्टानें जो कि जहाजों को भी चकनाचूर करने की शक्ति रखती हैं। ओह—ओह भूमि को खोदो नहीं तो कोयला निकलता है, कहीं सोना तो कहीं लोहा, कहीं तांबा तो कहीं पैट्रोल और न जाने कितने-कितने मूल्यवान खनिज-पदार्थ निकलते हैं इस भूमि से।

जैसे जैसे हम इस भौगोलिक स्थिति की ओर बढ़ते चले जाएंगे हमारा निश्चय उस परमात्मा में बढ़ता ही दिखाई देगा। हम प्रायः देखते हैं कि यह चांद, सितारे व सूर्य आदि नक्षत्र किस प्रकार से नियम-पूर्वक व समय पर अपना कार्य कर रहे हैं। यह सूर्य जो कि अब हमें सुख व शान्ति प्रदान करता है, हमें जीवनरस देता है यदि इस पृथ्वी के कुछ ही समीप होता तो सुख देने की अपेक्षा हमें जला देता परन्तु उस ईश ने इसे इस भूमडल से इतना ही दूर रखा है कि यह सुख का ही हेतु बन सके। यह चांद जिसे बच्चे प्यार से 'मामा' भी कहते हैं हमारी वनस्पतियों और अन्न में रस का उत्पादन करता है और यही यदि अपनी स्थान से थोड़ा सा भी नीचे होता तो समुद्र में इतनी ज्वार आये कि सर्वत्र जल ही जल हो जाएं। सचमुच किस बुद्धिमता से उस ईश्वर ने इन सब वस्तुओं का निर्माण किया है।

एक समय की घटना आती है कि 'जार्ज ने शासन करने के लिये लन्डन से दिल्ली आना था। जब वह बम्बई में पहुंचा तो उच्च कर्मचारियों ने एक स्पेशल गाड़ी तैयार करवाई जॉर्ज के लिये जिस में बैठकर वह दिल्ली पहुंचेंगे। इस प्रकार से पूर्ण प्रबन्ध कर दिया गया और समय तक भी निश्चित हो गया कि इतने बजे गाड़ी बम्बई से चलेगी और ठीक इस समय पर दिल्ली राजधानी में पहुंच जाएगी। समय का बहुत ध्यान रखने पर भी जब गाड़ी दिल्ली, पहुंची तो १५ मिन्ट लेट थी और दूसरी ओर देखिए वह सूर्य व चांद कभी एक सैकिंड भी लेट हुए हैं? कदापि नहीं अपितु लोग अपनी घड़ियां इन से मिलाते हैं इसी लिये तो किसी कवि ने कहा है 'Strange are the ways of Good.'

हाथ थक जाता है लिखते २ परन्तु उस प्रभु की महिमा का वर्णन समाप्त नहीं हो पाता। सचमुच मन कितना प्रसन्न होता है इन प्राकृतिक वस्तुओं को देखकर कहीं गुलाब खिला हुआ है तो कहीं चमेली, कहीं गेंदा है तो कहीं मोतिया। सब के रंग अजीबो-गरीब मन को खैंच लेने वाले। है कोई ऐसा ईश्वर के अतिरिक्त चित्रकार जो इनके रंगों व सुगन्धि से प्रतियोगिता कर सके। कदापि नहीं, कदापि नहीं।

जैसा कि आजकल लोगों की धारणा है कि वैज्ञानिक ईश्वर पर विश्वास नहीं करते बिल्कुल गलत है। परन्तु इस भौगोलिक स्थिति तथा व्यवस्था को देखकर 'ऐरेस्ट' जैसे उच्चकोटि के वैज्ञानिक का भी सर झुक जाता है उस परमशक्ति ईश्वर के सम्मुख और उन्हें अपने मुखारविन्द से कहना पड़ता है कि 'ईश्वर है।"

रेलवे कालोनी सभा।

आर्यसमाज रेलवे कालोनी जालन्धर में समाज का कार्य करने वाले सज्जन श्री प्यारेलाल जी कोहली, श्री चौ. देवकी नन्दनजी, श्री जगदेव जी तथा अन्य सज्जन बहुत थोड़ी संख्या में हैं। परन्तु इनका समाज के प्रचार के लिए उत्साह बहुत ही प्रशंसनीय है। प्रति वर्ष समाज का बड़ी ही धूमधाम से उत्सव करते हैं। अपना समाज मन्दिर बना लिया है। इस बार का उत्सव भी बड़े ठाठ का था। जिसमें श्री पं. सत्यदेव विद्यालंकार एम. ए. प्रो. वेदीराम जी एम.ए. श्री वीरेन्द्र जी एम.ए. प्रताप, स्वामी सुवानन्द जी, पं. त्रिलोकचन्द शास्त्री, पं. राजपाल मदनमोहन चिमटा मडली, बा० ताराचन्द जी आदि पधारे। जनता ने बड़ा लाभ उठाया। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन बड़ा प्रभावशाली था। देवियों तथा स्त्री समाज ने भी खूब काम किया।

ऐसा क्यों ?

गत दिनों आर्यसमाज भटिंडा गुरुकुल विभाग के उत्सव से पूर्व पं० मदनमोहन जी की कथा हुई। उन्होंने कथा में कहा कि द्रोपदी के पांच पति थे। सुनने वालों में कुछ आर्य भाईयों ने इस पर आपत्ति की कि समाज की वेदी से ऐसी सिद्धान्त प्रतिकूल बातें नहीं कही जानी चाहिएं। किन्तु उत्तर मिला कि मैं सच्ची बात कह रहा हूं। और भी कुछ ऐसी वैसी बातें आपत्तिजनक कही गईं। हम उक्त पण्डित जी से तथा समाज के अधिकारी सज्जनों से निवेदन करेंगे कि ऐसी २ भ्रान्तिमूलक बातें अपनी वेदी से किसी को भी कहने की अनुमति न दिया करें। द्रोपदी के पांच पति बताना सर्वथा निराधार है उस का पति केवल अर्जुन था। भविष्य में ऐसी अनर्गल बातें कहने का किसी को भी साहस न होवे तथा कहने वाले से पूछताछ होनी चाहिए।

आर्यसमाज के वीर सेनानी श्री पं. मेहरचंद जी महान कष्ट में

(श्री वेदीराम शर्मा एम. ए. अध्यक्ष प्रादेशिक)
आर्य युवक संगठन पंजाब

आर्यसमाज के पुराने लोग आज हमसे पृथक होते चले जा रहे हैं। आचार्य नरदेव जी गए। महाशय कृष्ण जी भी छोड़ गए। पं. भीमसेन जी भी बिछुड़ गए। पं. परशुराम जी भी अब नहीं रहे। चारों ओर से महान अंधकार छाया जा रहा है। हमारे मध्य पुरानों का स्थान लेने वाले नए लोग भी नहीं आ रहे। कारण लिखने की आवश्यकता नहीं।

पुरानी पीढ़ी के लोगों से सुनी आर्यसमाज की कहानियां भी बड़ी उत्साह वर्धक हैं। उन लोगों की समाज सेवा से कौन ऐसा है जो प्रभावित न हुआ? उनकी उसी सेवा को देख, अन्य मतावलम्बी आर्य समाज के निकट आते थे। आर्य समाजी का अपना निजी व्यक्तित्व आस-पास के रहने वालों पर अपनी सेवा से छाया रहता था। आर्य-समाजी प्रत्येक के दुःख में में दुःखी हो उठता था। दुःखी, निराश्रित, असहाय की सेवा ने हा आर्यों क के प्रति सब का मन आकर्षित कर लिया था। क्या अच्छा जीवन था?

आज की अवस्था आप लोगों के सम्मुख है। आज दूसरों की बात को जाने दीजिए। आज तो वह व्यक्ति भी जिन्होंने जीवन भर आर्यसमाज को अपनी माता समझ उसकी सेवा की, आर्यसमाज के आन्दोलनों में अपने शरीर की आहुति दी, आर्यसमाज के लिए ही तन, मन, धन सभी न्योछावर कर दिया बुरी दशा में अपने दिन काट रहे हैं।

ऐसे ही व्यक्तियों में से एक हैं आर्य वीर के सम्पादक श्री पं. मेहरचन्द जी शर्मा। उन्होंने जीवन भर लेखनी द्वारा आर्य विचारों का प्रचार किया। गत हिन्दी आन्दोलन में फिरोजपुर जेल के लाठी चार्ज में उनका एक बाजू बेकार हो गया। हिन्दी प्रेम के कारण धन के घाटे की चिन्ता न करते हुए भी अपना पत्र उर्दू से हिन्दी में कर दिया। ऐसा कौन-सा कार्य है जो आर्यसमाज प्रचार के लिए उन्होंने न किया हो। किन्तु आज उसी फिरोजपुर जेल के लाठी चारज के परिणाम स्वरूप वह पंगु हुए बैठे हैं। इसी बीमारी के बढ़ जाने से कार्य करने में अशक्त हो जाने और अधिक विवशता के कारण उन्हें अपना वीर पत्र आर्य वीर भी बन्द कर देना पड़ा है। दवाई तो क्या होगी, उन को रोटी कपड़े की भी समस्या सता रही है।

क्या आर्य समाज के इस विशाल परिवार में अपने ही एक बन्धु के लिए भी कोई सहयाता की आशा न की जाए। हम दूसरों की आलोचना करते हैं किन्तु हमारा अपना क्या हाल है? रामकृष्ण मिशन में आज ऐसा व्यक्ति इस प्रकार तिल २ कर भूखा न मरता। सिखों में भी इनकी सहायता हो जाती। ईसाई और मुसलमानों की बात तो पृथक ही है।

अतः मैं इन पंक्तियों के माध्यम से अपनी दुःख भरी पुकार आर्य समाज के बन्धुओं तक पहुंचाना चाहता हूं। कृपा कर के सभी आर्य समाजें और आर्य नर और नारी अपने इस दुःखी आर्य वीर बन्धु की सहायता कर अपने कर्तव्य का पालन कर अनुगृहीत करें। श्री पं० मेहरचन्द जी का पता—आर्यवीर पुस्तकालय कूचा होश्यारपुर जालन्धर नगर है। उनके पते पर ही आर्थिक सहायता जितनी भी हो सके पहुंचा कर पुण्य के भागी बनें। व्यक्ति के बाद में हम बड़ी २ सभाएं करके उनका गुणगान करते हैं अच्छा यही है कि उनके जीवन में ही उनके गुणों का मान हम कर सकें। महान कष्ट में उन की सहायता और सेवा कर सकें।

आशा है मेरी इस अपील का प्रत्येक आर्य नर नारी स्वागत करेगा।

आर्य भाई किसी भ्रांति में न रहें

(ले०—श्री बूटाराम जी मन्त्री वेदप्रचारिणी सभा)

"आर्य गजट जालन्धर" के २८-४-६३ के अंक में "आर्य समाज होशियारपुर के झगड़े" के शीर्षक से एक नोट 'एक होशियारपुरी' की ओर से प्रकाशित हुआ है जिस में जिला वेद प्रचारिणी सभा के बारे में कुछ निराधार तथा नितांत गलत बातें लिख कर भ्रांति फैलाने की अनुचित चेष्टा की गई है। क्या ही अच्छा होता यदि यह अज्ञात सज्जन प्रचारिणी सभा के कार्य-कर्ताओं से मिल कर समस्त बातों का पता कर लेते। मैं उनकी तथा आर्य भाईयों की जानकारी के लिये इस सभा के सम्बन्ध में सही २ तथ्य नीचे निवेदन करता हूं:—

होशियारपुर का जिला बहुत विस्तृत है प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के पास इतने प्रचारक नहीं हैं कि वह इस जिले के ग्राम-ग्राम में प्रचार कार्य को निभा सके। इस त्रुटि को अनुभव करते हुये आर्य-समाज होशियारपुर के सुझाव पर जिला भर की समाजों और शैक्षणिक संस्थाओं ने मिल कर १९५८ में जिला वेद प्रचारिणी सभा की स्थापना की। इस का विधिवत् विधान बना हुआ है और यह एक रजिस्टर्ड बाडी है। इसका प्रादेशिक सभा के साथ पूरा २ सहयोग है। यह संस्था प्रादेशिक सभा की सहायता न की विरोध के लिए स्थापित की गई है। जितनी समाजें होशियारपुर जिला में प्रचारिणी सभा खोलती है उन सबका संबंध प्रादेशिक सभा के साथ कराया जाता है। वह समाजें अपने प्रतिनिधि प्रादेशिक सभा के चुनाव पर भेजती हैं। अपना दशांश भी प्रादेशिक सभा को भेजती हैं। शिव रात्री और दीवाली पर जो धन एकत्रित होता है वह प्रादेशिक सभा को भेजती हैं। प्रचारिणी सभा के उपदेशकों को जब प्रचारकों की जरूरत पड़ती है प्रादेशिक सभा जलसों पर भेज देती है। प्रचारिणी सभा अभी अभी एक सौ रुपया प्रादेशिक सभा को सहायता के रूप में भेजा है। प्रचारिणी सभा के कल्प में यह साफ लिखा है कि ईश्वर न करे यदि किसी समय प्रचारिणी सभा बन्द हो जावे तो इस की सारी सम्पत्ति की मालिक प्रादेशिक सभा होगी। इस से बढ़ कर और क्या अधिक सहयोग दोनों सभाओं के मध्य हो सकता है।

आशा है कि इन पंक्तियों को पढ़कर आर्य भाईयों की भ्रान्ति दूर हो जायेगी। प्रचारिणी सभा का लग भग पांच हजार रुपये वार्षिक का खर्च है और उस ने पांच वर्ष अवधि में लग भग चालीस नई समाजें स्थापित की हैं। हजारों रुपये का साहित्य वितरण किया है।

"देश की बलिवेदी पर कैप्टन जगदीशचन्द्र का बलिदान"

(बावा परमानन्दजी विद्यार्थी, प्रधान आ. स. प्रधाना मुहल्ला रोहतक)

देशके अनगिनत आर्य परिवारों ने भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति और उसकी सुरक्षार्थ जो बढ़ चढ़ कर भाग लिया है, यदि उनका विवरण एकत्रित करके पुस्तक का रूप दिया जाए तो वह एक महाकाव्य का रूप धारण कर लेगी। आज मैं आपकी सेवामें एक ऐसे परिवार के रत्न का विवरण प्रस्तुत करने लगा हूं कि जिसकी जीवन गाथा से अनेक युवक प्रेरणा पाकर देश जाति और धर्म के लिए कृतसंकल्प हो उठेंगे।

पश्चिमी पंजाबके प्रसिद्ध जिला झंगके निवासी आर्यसमाज रोहतक के प्रसिद्ध नेता महर्षि दयानन्द के के कार्य के दीवाने, परवाने, मस्ताने श्री रामरंग जी वकील प्रधान आर्य-समाज कालिज विभाग रोहतक को कौन सा पढ़ा लिखा व्यक्ति न जानता होगा। आप डी० ए० वी० कालिज लाहौर के विद्यार्थी हैं। वहां की शिक्षा-दीक्षा से आर्य समाज की ज्योति से प्रज्वलित होकर अपनी संतान को भी उसी मार्ग पर अग्रसर करके जो कार्य किया है, वह बहुत कम आर्य परिवारों के भाग में आता है।

वकील साहब के तीन पुत्र हैं—श्री प्रकाशचन्द्र, कैप्टन जगदीशचंद्र तथा श्री हरिश्चन्द्र। हमारा अभिप्राय कैप्टन जगदीश चन्द्र के सम्बन्ध में है :

कैप्टन जगदीश चन्द्र अपने माता-पिता के मंझले पुत्र थे। देश विभाजन से पूर्व Matric की शिक्षा पा रहे थे। रायपुर (C. P.) में आकर Metric उत्तीर्ण की। पुन. देहली के हायर सैकेन्डरी स्कूल में प्रविष्ट हुए। इस शिक्षा काल में Dehradun Academy के मुकाबले की सैनिक परीक्षा में बैठे, जिस में वे उत्तम स्थान प्राप्त कर "देहरा-अकादमी" में चार वर्ष तक Cadet के रूप में शिक्षा प्राप्त की। इसप्रकार Physics और Mathematics में प्रथम रह कर सरकारी पुरस्कार प्राप्त किया। जब आपको सैनिक कालिज में प्रोफेसर के पद की पेशकश की गई तो आपने ये शब्द कह कर यह पद लेना अस्वीकार कर दिया कि मैं प्रोफेसर बननेकी अपेक्षा Active life अधिक पसंद करता हूं। परिणाम स्वरूप आप 'संगरूर' अर्थात पंजाब में २/lt. के पद पर नियुक्त हुए, पश्चात Captin पर आरूढ़ हुए। 'किड़की' (पूना में) इन्जीनिरिंग का कोर्स अढ़ाई वर्ष में पास किया। इस प्रकार इन्जीनियर के रूप में सरकार के निर्देशानुसार प्रथम काश्मीर पश्चात नेफा में दो वर्ष तक बड़ी कर्तव्य परायणता से कार्य कर रहे थे कि एकाएक दुर्दान्त दस्यु चीनियों ने २० अक्तूबर को भारत के भू-भाग पर अधिकार करने के लिए हिमालय के सब ओर से आक्रमण कर दिया। उस समय यह वीर सेनानी ५०० वीरों सहित देश की सुरक्षार्थ संलग्न था। अकस्मात राक्षसों ने २० नवम्बर को युद्ध विराम की घोषणा कर दी। तब हमारा युद्ध नायक ५०० सैनिकों सहित वापिस लौट रहा था कि आसाम की सीमा से १५ मील की दूरी पर हजारों की संख्या में मानवता विरोधी क्रूर चीनियों ने छिपकर इनके ४५५ साथियों को गोली वर्षा कर भून दिया। इस भंयकर कांड में कतिपय वीरों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाया परन्तु स्वय प्रतिरोध करते हुए वीर गति को प्राप्त हुए। ज्योंही यह समाचार १६ अप्रैल को तार द्वारा माननीय वकील साहिब को मिला तो समस्त आर्यजगत तथा झंग निवासी भाई शोक ग्रस्त हो गए। ध्यान इस बात पर जाता है कि वकील साहब ने अपने आर्य पुत्र को देश पर बलिदान हुआ सुनकर तनिक भी दुःख अनुभव नहीं किया, अपितु ऋषिवर के उन शब्दों को दुहराया "प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो"

कैप्टन जगदीशचन्द्र अविवाहित थे, सुन्दर, सुडौल और लम्बे कद के युवक थे। माता-पिता के आज्ञा पालक, भाई बहनों के साथ अगाध प्रेम रखते थे। दुखी जनों के दुख दूर करने तथा विद्वानों के सत्कार करने में उन्हें विशेष प्रेम था। पिता समान आर्यसमाज का ध्यान सामने रहता था।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सदगति और उनके परिवार को शान्ति प्रदान करें।

आईए हम भी आगे बढ़ें

(ले०—श्री सत्यपाल "सहदेव" लेखराम नगर कादियां)

भारत की महानता का प्रतिभा-विभूतिमय-अरुण अस्त हो रहा था आर्य (हिन्दु) राजाओं की शक्ति एकताके अभाव के कारण विपथगा में परिवर्तित हो चुकी थी बाह्य शक्तियों के आने से जो छोटी २ रियासतेंथीं वेभी समाप्त प्रायः हो चुकी थी। राज्य की प्रभुसत्ता खुले आम विदेशियों के पदाक्रांत हो रही थी। कई यवन-कुल आए और अपने राज्य को दृढ़ करने के लिए कई ओछे षडयन्त्र रचे। कृतघ्न औरगजेब एक ऐसा अन्तिम मुगल शासक था जिस ने आर्यो (हिन्दुओं) को कुचलने का अथात् जड़ से उखाड़ देने का स्वप्न साकार करने का प्रयत्न किया ऐसे समय में देश के कोने २ में एक महान अग्निमय संघर्ष चल रहा था चारों ओर विकल मेघ नभ में मंडला रहे थे। भारत धरती-मां त्राहि त्राहि कर रही थी। देश की एकात्मक राष्ट्रीय सत्ता विभिन्नता को महान परिखों में दबी जा चुकी थी। अन्तिम मुगल शासक औरंगजेब की धर्मान्धता के कारण उसके अपने ही कुल में कलह ने घर बना लिया जिस के कारण स्वरूप मुगल राज्य की उत्कृष्टता पतन के महान गढ्ढे में गिरती जा रही थी अर्थात् आंतरिक अशांतिके कारण ऐसे समय में मुगल साम्राज्य का बोल बाला समाप्त हो चुका था। मरु-धरा के आवरण पर विचरने वाली सजग वीरता निराशा के कारण मरुस्थलों एवम् पर्वतों की गुफाओं में प्रवेश हो चुकी थी। पेशवा और सिंधिया शक्तियां समाप्त प्राय. हो चुकी थीं।

ऐसे भयानक समय में भी धर्म देश की नौका समुन्द्र के मध्य तूफान से डगमगा रही थी भय और आतंक सब दिशाओं की ओर से छा रहा था। अधर्म और अज्ञानता की महान खाई में भारतीय लोग अपने आत्म-सम्मान को भी जलांजली दे रहे थे। आर्य (हिन्दु) समाज में भी धर्म के महन्त वा ठेकेदार बन चुके थे वर्तमान काल में भी धर्म की ठेकेदारी चल रही है मृतक-श्राद्ध, पत्थर या मूर्ति पूजा, हाथ-हथेली लीला और ब्राह्मणों के अन्धविश्वास आदि ने ब्रह्म-बल, क्षात्र बल आदि को मृत्यु तुल्य बना दिया था।

ऐसे समय में ज्योतिमय-प्रकाश किरण भारत भूमि मे गुजरात

(शेष पृष्ठ ८ पर)

रजिस्टर्ड नं० पी० १२१

आर्य ... प्रसाद

में ... ओर से वेद कथा का सुन्दर प्रबन्ध किया गया। जिस में सभा की ओर से पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री तथा ठा. दुर्गासिंह तूफान पधारे। ता. २४ से ३० अप्रैल तक निरन्तर एक सप्ताह प्रातः और सायं यज्ञ वेद कथा और मीठे भजन होते रहे। जनता बड़ी श्रद्धा से आती रही। समाज में श्री बालमुकन्द जी, श्री वैद्य काशीरामजी, श्री चमनलाल जी, श्री देसराज जी, डा. ऋषिराम जी, मास्टर पोखरमल जी आदि थोड़े सज्जन हैं पर उत्साह, प्रेम तो दर्शनीय था। वैद्य काशीराम जी का परिवार तो समाज का परम भक्त है। सभा को सौर्म व्यय के अतिरिक्त ७४ रु. वेदप्रचार दिया।

आर्यसमाज खतौली यू.पी.

के मान्य प्रधान श्री. सेवकराम जी यात्री आरम्भ से ही समाज के परम भक्त तथा सभा के श्रद्धालु हैं। इस बार शुगर मिल समाज में श्री पं. खुशीराम जी शर्मा सभा वेद प्रचाराधिष्ठाता की मनोहर कथा तथा श्री पं. हजारीलाल जी के भजन होते रहे। सारी जनता ने बड़ा ही लाभ उठाया। वेद कथा में नर-नारियों की बड़ी उपस्थिति होती रही। मान्य यात्री जी के जीवन प्रभाव से सारी शुगर मिल में समाज प्रचार का प्रवाह ही उमड़ता रहता है। वेद प्रचार के लिए सभा को १०१/- प्राप्त हुआ।

आर्यसमाज राजपुरा

में श्री पं. ओम्प्रकाश जी आर्य तथा श्री. ताराचन्द जी भजनोपदेशक पधारे थे। समाज में बड़ी मनोहर वेद कथा पण्डित जी की होती रही। भजनों का भी साथ-साथ प्रवाह चलता रहा। राजपुरा समाज के सज्जनों का प्रेम तथा कार्य उत्साह प्रशंसनीय है। एक सप्ताह जनता ने सभा का वेद प्रचार ... रुपए मिले।

आर्यसमाज जालन्धर छावनी

का वार्षिकोत्सव बड़े समारोह से सम्पन्न हुआ। सभा की ओर से श्री पं. राजपाल मदन मोहन जी चिमटा मण्डली पधारी। उत्सव से पूर्व प्रभावशाली कथा हुई। छावनी समाज का कार्य बड़ा उत्तम है। श्री. प्रिंसिपल रामचन्द जावेद जी एम. ए. प्रधान समाज तथा उन के सारे साथियों का धर्मभाव वर्णन करने के योग्य है। उत्सव बड़ा सुन्दर रहा।

आवर एजुकेशन मिशन

(इंगलिश में)

ले०—श्री प्रिंसिपल श्रीराम शर्मा एम० ए०, डी० ए० वी० कालिज चण्डीगढ़। पृष्ठ संख्या १४० मूल्य सजिल्द १.२५ एन. पी.।

पुस्तक क्या है विभाजन से पूर्व पंजाब के सभी आर्य स्कूलों व डी० ए० वी० स्कूलों का विस्तृत इतिहास है।

स्कूलों की स्थापना कब, कैसे हुई स्कूल का पूर्व रूप क्या था और आधुनिक रूप क्या है आदि विषयों की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपरोक्त पुस्तक अति उपयोगी है। पूर्वी पंजाब के सभी स्कूल अपने स्कूल का प्राचीन इतिहास जानना चाहते हैं तो इस पुस्तक को मंगाकर आद्योपांत अवश्य पढ़ें तथा स्कूल लायब्रेरियों के लिए अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है।

प्राप्ति स्थान—

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग ए. पी. पी. सभा निकट कोर्ट जालन्धर

हम भी आगे बढ़ें

(पृष्ठ ७ का शेष)

काठियावाड़ की पवित्र धरा टंकारा नामक ग्राम में विकसित हुई, वही किरण मूलशंकर के नाम से सर्वस्व भारत में विस्तृत रूप को धारण करने लगी। इसी प्रकाश-पुंज ने अपने प्रतिभाशाली गुरु विरजानन्द जी से शिक्षा प्राप्त कर, महर्षि स्वामी दयानन्द जी के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे ऋषि कितने महान थे? पढ़िये राजा मोती चन्द्र जी के शब्दों में—वे लिखते हैं कि "I am not an Arya samajist yet I ackneneledge swami Daya Nand to be the pratector of the Hindus He saved the Nation from further degeneration and brought vision to them." इसी प्रकार देवदयानन्द महत्ता का वर्णन करते हुए Sadhu T. L. Vas wani लिखते हैं कि Daya Nand was a great nationalist and a patriot of the highest order, I, therefore pay my humble homage to him." यहां तक ही नहीं है प्रसिद्ध विद्वान् योगी अरविन्द घोष भी ऋषिवर की महानता पर अपने विचारों को लिखते हैं कि "Rishi Daya Nand a cquired the heys of those gates which were closed to the humanity since ages and he opened the mouths of the springs (of knowledge)

महर्षि स्वामी दयानन्द जी की सज्जनता वा महानता इतनी महान थी जिस का पारावार कोई भी नहीं पा सका। लेखराम नगरी में मिर्जा गुलाम अहमद साहिब जैसे पैगम्बरों ने कई चमत्कारों वा भविष्यवाणियों से अपनी सज्जनता वा महानता का मुख आडम्बरों के दर्पणों से देखना चाहा, परन्तु सत्य की अन्तिम विजय होती है सत्यार्थ—प्रकाश के कारण सभी भविष्य-वाणियां रद्दी की टोकरी में पड़ गईं। देश-काल-वातावरण को जान कर अनुमान लगाना कोई ईश्वर की भविष्यवाणी नहीं हो सकती। मानव अपने विचारों को ... भविष्यकाल में प्रकट करता है तो उसको ईश्वर की भविष्यवाणी कहना मूर्खता को प्रकट करना है, यह तो मनुष्य का स्वयं रचा हुआ अनुमान होता है जिस पर वह अपने विचारों का भवन बनाता है।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज का प्रचार क्षेत्र एक महान तथा विस्तृत रूप धारण कर चुका था, अखण्ड ब्रह्मचर्य देवता ने कोई नया-मत नहीं चलाया था। हां! वैदिक नाद संसार में बजाने के लिए इस विश्व-भू पर आर्यसमाज नामक संस्था का निर्माण किया गया। इस संस्था का उद्देश्य केवल मात्र वैदिक धर्म की रक्षा तथा अपनी मातृ-भूमि के प्रति अगाध देश-भक्ति को जागृत करना है। आज उसी दिव्य विभूतिमय देवता की महान देन आ० समाज का स्थापना दिवस है। इस लिए आईए सभी देशवासी उस ऊर्ध्व शक्ति-वाहन देवता के बताए हुए पथ पर चलते हुए अपने भविष्य का आगे बढ़कर निर्माण करें युग बदल रहा है इस लिए आईए हम भी इस युग की विषैली विचार-धारा को कुचल कर आगे बढ़ें।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन न० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र Regd. No P.121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक १०) रविवार ६ ज्येष्ठ २०२०— १९ मई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

स ईशानो धनदा

वह ईश्वर सारे धनों और सम्पत्ति यों का देने वाला है। वह प्रभु ही धनपति है, सारा भण्डार उसी का है—वही जीवन में हर प्रकार का धन वैभव देने वाला है।

शुनं नो अस्तु

हे शंकर! नः—हमारा शुनं-कल्याण होवे। आप शिव हैं-स्वयं सुखमय हैं, शंकर हैं सब को सुख देने वाले हैं, सब का कल्याण करने वाले हैं। अतः हमारा सदा कल्याण करते रहें—

तन्मे भूयो भवतु

मेरे और हमारे पास जो भी ज्ञान, बल, विद्या तथा सम्पत्ति आदि का धन है—वह बढ़ता रहे कभी कम न हो—जीवन में उन्नति होती रहे—

अ थ र्व वे द

वेदामृत

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शंनः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शंनः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥ ऋ. मं. ७ सूक्त ३५ मं. ८

अर्थ.—(शं न) हमें सुखशान्ति देवे (सूर्यः) सूर्यदेव (उरुचक्षा) बड़े तेज वाला (उदेतु) उदय होता रहे। (शं नः) शान्ति देवे (चतस्र.) चारों (प्रदिशः) दिशाएं (भवन्तु) होवें। (शंन.) हमें सुख देवे (पर्वता.) सारे पर्वत (ध्रुवय.) ध्रुव स्थिरता वाले (शंनः) और सुखकारी हों (सिन्धव.) सागर तथा नदियां (शम् उ) शान्ति सुख देने वाले (सन्तु) होवें (आप) जल। ये सागर, नदियां तथा सारा जल हमारे लिए कल्याण करने वाला होवे। जल से जीवन में पूरा २ लाभ उठाते रहें—भाव.—आकाश में दिव्य ज्योति वाली किरणों से भरा यह सूर्य हमें सदा प्रकाश, स्वास्थ्य तथा ताप आदि देता रहे। प्रतिदिन इसका उदय आनन्द देवे। ये चारों दिशाएं सदा कल्याण की वर्षा बरसाने वाली हों। हम जिधर भी जाएं उधर हमें सुख शान्ति मिलती रहे। कार्यों में सर्वदा सफलता लाभ होती रहे। ये सारे स्थिर पर्वत पहाड़, उन पर पैदा होने वाली औषधियां, वनस्पतियां तथा अन्य नानाविध भरे भण्डारों से हम जीवन में उत्तम २ लाभ उठाते रहें। ये सारे सागर, नद-नदियां, सरोवर उत्स झरने तथा झीलें इनका जल एवं जल में छिपे सारे रत्न आदि अमूल्य पदार्थ हमारे जीवन में काम आते रहें। इनके द्वारा हमारी सम्पन्नता में वृद्धि होती रहे। मेघों का मीठा, गुणकारी जल, फलों का रस सदा मिलता रहे। भगवान के विशाल विश्व का सारा विविध वस्तु भण्डार हमारे लिए सुख-शान्ति आनन्द देने वाला हो—शंन.—सुखकर हो—सं.

चीन ने पुनः हमला किया तो उसे छठी का दूध याद दिला देंगे—कैरों

अब भारत उसके धोखे में नही आ सकता

१० मई—पंजाब के मुख्यमंत्री सरदार प्रतापसिंह कैरों ने आज यहां कहा कि यदि चीन ने भारत पर अब पुनः हमला किया तो भारतवासी उसे वह पाठ सिखाएंगे जो वह जीवन भर नहीं भुलाएगा। चीनियों को यह बात भूल जानी चाहिए कि वे भारत पर बलपूर्वक कब्जा कर सकते हैं। एक बार तो भारत उनके धोखे में आ गया परन्तु अब वह जाग उठा है। अब यदि फिर हमला हुआ तो आक्रांता को छठी का दूध याद करा दिया जाएगा। चीनियों का सिद्धांत धोखाबाजी है परन्तु उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि उनकी धोखाबाजी अब फिर नहीं चलेगी। अब भारत चीन का मुकाबिला करने के लिए काफी शक्तिशाली है।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

भारतीय दर्शन

(ले० श्री भद्रसेन जी दर्शनाचार्य हुशियापुर)

उत्तर प्रदेश राज्य विभिन्न-विभिन्न विषयों पर विभिन्न विभिन्न विषयों के विद्वानों से कुछ ग्रन्थ लिखवाये हैं। जिन में से 'दर्शन संग्रह' और 'पश्चिमी दर्शन' श्रद्धेय डा० दीवानचन्द जी भूतपूर्व प्रिंसीपल दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज कानपुर एवं भू० पू० उपकुलपति आगरा विश्वविद्यालय ने लिखे हैं। वैसे तो डाक्टर जी की लेखनी से कोई विरला ही व्यक्ति अपरिचित होगा। आपने दर्शन जैसे गम्भीर और रूखे प्रतीत होने वाले विषय को भी बड़े रोचक, आकर्षक और खोज पूर्ण ढग से लिखा है। दोनों प्रकार के दर्शनों का परिचय प्राप्त करने के लिए ये दोनों ग्रन्थ अत्युत्तम हैं। ग्रन्थों को आदि से अन्त तक पढ़ जाने पर स्पष्ट रूप से यह अनुभव होता है कि लेखक अपनी ओर से कुछ भी नहीं लिख रहा है, केवल दूसरों की ही बात प्रस्तुत कर रहा है। प्राय. ऐसा ग्रन्थों में कम ही मिलता है, स्वाभाविक रूप से पाठक उसके साथ ही साथ प्रवाहित होता हुआ प्रतीत होता है। लेखक ने बड़ी योग्यता के साथ इन ग्रन्थों की रचना की है, जो कि सर्वथा ही श्लाघ्य एवं पठनीय है। 'दर्शन संग्रह' के अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि आप प्रणीत षडदर्शनों में परस्पर विरोध नहीं है, उन्होंने मुख्य रूप से अपने अपने विषय का ही प्रतिपादन किया है, जैसा कि महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में प्रतिपादित किया है। सामान्य रूप से यह प्रसिद्ध है कि ऋषि प्रणीत षड्दर्शनों में परस्पर विरोध है, कई महान् विद्वान भी ऐसा ही स्वीकार करते हैं। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ के अध्ययन से यह बात निराधार प्रतीत होती है। भारतीय दर्शन के सामान्य परिचय के लिए यह ग्रन्थ अत्युत्तम है। जिस के महत्व को अनुशीलन से ही अनुभव किया जा सकता है।

भारतीय दर्शन के यम नियमों की महत्ता आज किसी से छिपी हुई नहीं है। जोकि प्रत्येक राष्ट्र, समाज एवं व्यक्ति के जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी है। ये ही महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं तथा ईसा के पहाड़ी उपदेश का मूलभूत आधार है। यम नियमों की व्याख्या विभिन्न २ विद्वानों ने की है। परन्तु जो सार्वभौमिक, सुन्दर और बुद्धिप्रद डाक्टर जी ने की है। वह तो सर्वथा ही ग्राह्य है। उदाहरण के रूप में यमों की व्याख्या के कुछ अंश का भाव पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता हूं, जिससे इस ग्रन्थ की उपादेयता का अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है।

तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमा.।

अहिंसा—संसार का प्रत्येक प्राणी सदैव जीवित रहना चाहता है, जीवन पथ में आने वाली प्रत्येक बाधा का सामर्थ्यानुसार निवारण करने का सतत प्रयास करता है। प्रत्येक प्राणी के जीने की चाह तभी पूर्ण हो सकती है, जब प्रत्येक मन, वचन और कर्म से अहिंसा का पूर्ण पालन करे। जितने अंश में प्राणी अहिंसा का पालन करते हैं, उतने ही अंश में प्राणियों का जीवन सुरक्षित हो जाता है।

सत्य—इस समय ठीक रूप में तो याद नहीं डाक्टर जी ने सत्य की व्याख्या किस प्रकार की है, सम्भवत. उस का भाव यह है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मानव का जीवन समाज पर ही अवलम्बित है, समाज के बिना उस का जीवन सर्वथा दूभर हो जाता है। वह जन्म से मरण पर्यन्त समाज के आश्रित हो जीवन पूर्ण करने में समर्थ हो पाता है। समाज का सारा का सारा ढांचा परस्पर के सामाजिक व्यवहार पर ही आश्रित है। सामाजिक व्यवहार की नींव विश्वास है। यतो हि विश्वास से ही समाज का सारा का सार व्यवहार चलता है विश्वास के बिना एक क्षण भी समाज का व्यवहार चल नहीं सकता। विश्वास केवल सत्य पर ही आधारित होता है, सत्य के अभाव में विश्वास कभी भी दृढ़ मूल नहीं हो सकता है। जब तक व्यक्ति यह समझता है कि यह सत्य है तभी तक ही उस पर विश्वास करता है। इस का अनुभव प्रतिदिन के व्यवहार से किया जा सकता है।

अस्तेय—माता पिता कुछ काल तक सन्तान का पालन पोषण करते हैं, योग्य होने पर सन्तान स्वयं स्वनिर्वाह करती है। सामाजिक जीवन में यह आवश्यक है कि जो व्यक्ति कमाता है वह उस का स्वामी हो। कोई दूसरा किसी ढंग से उस के स्वत्व का अपहरण न करे। क्यों कि सुरक्षा के अभाव में सामाजिक जीवन की सारी ही व्यवस्था गडबड़ में पड़ जाती है। सामाजिक जीवन की व्यवस्था के लिए सम्पत्ति की सुरक्षा का अधिकार प्रत्येक को प्राप्त होना चाहिये। अत एव प्रत्येक राष्ट्र व्यवस्था के सम्पादनार्थ हर सम्भव उपाय करता है।

ब्रह्मचर्य—मानव जीवन परिवार में प्रारम्भ होता है, परिवार ही समाज का आधार है। स्त्री पुरुष के संयुक्त जीवन व्यतीत करने के निश्चय का नाम ही परिवार है। समाज का कल्याण इसी में है कि कोई उनके सांझे जीवन पर किसी प्रकार का आक्रमण न करे। आक्रमणों में निकृष्टतम आक्रमण लैंगिक है। इस प्रकार के आक्रमण परिवार का सुख ही नहीं, आत्म-सम्मान भी नष्ट कर देते हैं।

अपरिग्रह—सम्पत्ति की सुरक्षा के अधिकार के साथ ही साथ सब को कार्य करने का (अधिकार) समान अवसर प्राप्त होना चाहिये। आधुनिक जीवन में एक सब से बड़ी कठिनाई यह है कि जिन व्यक्तियों के पास धनादि की अधिकता है अथवा जिन में ऐसा करने की योग्यता है, वे हर ओर से भोग सामग्री एकत्र करने में लग जाते हैं। इस से दूसरों की उन्नति में, अथवा स्वगुह्य शक्तियों के विकास में बाधा आती है। अत. प्रत्येक को स्वशक्तियों के (विकास) उपयोग का अधिकार प्राप्त होना चाहिये।

यम कर्तव्य भी हैं और अधिकार भी, इनका सामाजिक जीवन में समाज की व्यवस्था के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। इसलिए इन को सार्वदेशिक सार्वभौम महाव्रत कहा जाता है।

योगदर्शन की प्रक्रिया को हृदयङ्गम करने के लिए अविद्या के स्वरूप को जानना अत्यन्त आवश्यक है। योग दर्शन के अनुसार अविद्या के के मुख्य चार भेद हैं। 'अनित्याशुचि दु.खानात्मसु नित्य शुचि सुखात्म ख्याति विद्या' अनित्य को नित्य, नित्य को अनित्य,(अशुचि = अपवित्र, अभद्र,अकल्याणकर, पाप) अशुचि को शुचि, शुचि को अशुचि, दु.ख को सुख, तथा अनात्म को आत्म और आत्म को अनात्म समझना अविद्या कहलाता है अर्थात् जो जैसा है उस को वैसा न समझ कर, उससे विपरीत जानना। 'दर्शन संग्रह' श्रद्धेय डा. दीवानचंद जी ने योग दर्शन की चर्चा में बहुत सुन्दर प्रकार से समझाया है कि

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ६ ज्येष्ठ २०२०, १९ मई १९६३ [अंक १९

सह शिक्षा का परिणाम

शिक्षा जीवन के लिए नितान्त आवश्यक है। भारतीय सभ्यता में आरम्भ से ही इसे प्रमुख स्थान दिया गया है। हमारे देश की प्राचीन शिक्षा प्रणाली का यह प्रभाव था कि सारा देश ही आचार विचार तथा लोक व्यवहार में बहुत ऊंचा था। विदेशी यात्री यहां आ कर वर्षों रहे—वापस जा कर अपने देशवासियों को यहां के उदात्त जीवन का परिचय दिया। वास्तव में भारत हो पारस था जिस के साथ कोई भी देश लग कर आचार विचार में स्वर्ण मय बन जाता था। यहां की गुरु शिष्य परम्परा की पवित्रता की आज भी सर्वत्र मुक्तकंठ से प्रशंसा की जाती है। यह इस की शिक्षा की विशेषता थी। लड़के लड़कियां अपने २ शिक्षा मंदिरों में जीवन की प्रत्येक शिक्षा लेते थे ऋषि दयानंद जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाशमें आरम्भ के सम्मुल्लासों में कितना भावपूर्ण वर्णन किया है। आर्य समाज ने शिक्षा के क्षेत्र में तो लड़के-लड़कियों की अलग २ संस्थाएं स्थापित कर सारे समाज का नेतृत्व किया है। इस में आर्यसमाज अन्य सारी संस्थाओं की माता है।

पश्चिमी देशों ने इस के प्रतिकूल अपनी संस्थाओं में लड़के लड़कियों को इकट्ठा कर दिया। सहशिक्षा की अपनी प्रणाली आरम्भ की। इस को प्रोत्साहन दिया। वहां पर सहशिक्षा का एक प्रबल प्रवाह चला जिस ने भारत के पश्चिमी विचार धारा रखने वालों को भी प्रभावित किया। वहां के स्कूलों कालेजों में लड़के लड़कियां इकट्ठे हो कर पढ़ने लगे। धीरे २ उस का परिणाम सामने आने लगा। वहां की वार्षिक रिपोर्टों में इस प्रणाली के फलस्वरूप क्या २ काण्ड हुए और होते हैं उन को पढ़ कर आंखें लज्जा से नीचे हो जाती हैं। जीवन और यौवन का सारा स्तर ही दूषित हो गया। अब वहां होश आने लगी है तथा इन परिणामों को देख कर दोनों को जुदा २ पढ़ाने का प्रबन्ध होना चाहिए—इस विषय का प्रबल आन्दोलन होने लगा है।

भारत का दुर्भाग्य है जिस बात से उन की अब आंखें खुली हैं हम उसी सहशिक्षा की विषैली प्रणाली को भारत में और विशेष कर के अपने पंजाब में अपनाने लगे हैं। पंजाब सरकार के द्वारा दोनों की सहशिक्षा की घोषणा से हमें बड़ा दुःख हुआ है कि हम ने अभी तक कुछ भी अनुभव नहीं किया। जिस प्रणाली को अब पश्चिमी लोग त्यागने लगे; हम उसे अपनाने पर तुले हैं। युवक लड़के लड़कियों का मिल कर एक ही संस्था में पढ़ना क्या परिणाम दिखायेगा कहने की आवश्यकता नहीं। पश्चिमी संस्थाओं के वार्षिक आंकड़ों से भी हमें शिक्षा नहीं मिली। हम क्यों अपनी युवक सन्तान को जान बूझ कर अपने हाथों से विष देने लगे हैं। आर्य समाज तो पैदा ही इसी लिए हुआ है कि हर बात में जनता का पथप्रदर्शन करे। जो भी संस्था या राज्य सरकार ऐसी बात करे उसे रोकने के लिए जनता में अपना प्रचार करे। आर्यसमाज का जन्म ही इसी निमित्त हुआ है। इस समय मौन रहना है। प्रान्त में सहशिक्षा का काम आरम्भ होने लगा है। आर्यसमाज के सारे वरिष्ठ सज्जन बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी सभा के भेद के, मिलकर गम्भीरता से इस पर विचार तथा निर्णय करें। सरकार भी तथा उसके अधिकारी भी सारे अपने ही हैं। विदेशी नहीं हैं। उनके पास शिष्टमण्डल भेजकर विचार कराये ताकि सहशिक्षा के प्रवाह को रोका जा सके। तर्क संगत बात सब मान लेते हैं। अलग २ प्रस्तावों से न कुछ बना है और न बना करता है। बड़ी शांति से सम्मेलन किए जाएं। आर्यसमाज सबको एक मंच पर लाकर मिला कर, संगठित करके सहशिक्षा की इस बढ़ने वाली धारा को अभी से रोक देवे। इसी में सबका कल्याण है—त्रिलोक चन्द्र

अमर त्यागी महात्मा हंसराज

—. जगदीश प्रसाद 'कौशिक' :—

हिन्द के आकाश का रौशन सितारा हंस राज।
बेकसों की जिन्दगी का सहारा हंस राज।
तप था उसका उत्कृष्ट, आदर्श था उसका त्याग।
गूंजा था उसके सितार से वैदिक धर्म का राग।
डूबती किश्ती धर्म की, का किनारा हंसराज। —१

जो बताया था ऋषि ने, चल पड़ा उस राह पर।
रो पड़ा करता था दिल, दुखियों की एक आह पर।
भारत का सच्चा पुत्र था, सब का प्यारा हंस राज।
हिन्द के आकाश का रौशन सितारा हंस राज। —२

पाखण्ड का खण्डन किया, और बचाया धर्म को।
पत्थर कभी ईश्वर नहीं, न मिटने दिया इस मर्म को।
पहुंचा वहां, जिसने जहां, कौशिक पुकारा हंस राज।
हिन्द के आकाश का रौशन सितारा हंस राज। —३

अतीव शोकजनक

माननीय डा० मेहरचन्द जी महाजन प्रधान डी० ए० वी० कालेज प्रबन्धक कमेटी देहली के योग्य, युवक दामाद श्री देवराज जी के आकस्मिक देहांत का दुःखद समाचार सुनकर सारा आर्यजगत अतीव दुःखी है। इस भारी वेदना में मान्य डाक्टर जी तथा उस परिवार के साथ हार्दिक समवेदना प्रकट करता हुआ प्रभु से दिवंगत आत्मा को शांति देने की प्रार्थना करता हुआ दोनों परिवारों को भारी चोट सहन करने की शक्ति की प्रभु से प्रार्थना करता है।

—०—०—

आर्यसमाज पुरानी मंडी जम्मू का चुनाव

श्री हंसराज जी तनेजा मैनेजर नैशनल बैंक लाहौर—प्रधान, श्री कृष्ण लाल जी—मुख्य उपप्रधान, कुमारी सुशीला तुली—उपप्रधान, श्री मोहन लाल जी गोनयाल—महामन्त्री, श्री गोपाल कृष्ण जी—मन्त्री, मास्टर राम रक्खा मल जी—उपमन्त्री, श्री तेजराम जी अबोल—कोषाध्यक्ष, श्री जयदयाल जी—पुस्तकाध्यक्ष।

अन्तरंग सभा के मेम्बरों के चुनाव का अधिकार प्रधान जी को दिया गया और वे अन्तरंग सभा आर्य कन्या विद्यालय के प्रबन्धकों व विद्या सभा के समासदों की नियुक्ति करेंगे। —मन्त्री

स्वास्थ्य चर्चा

दिन चर्या

(श्री डा० धर्मदेव जी मन्त्री आर्य समाज धर्मसाला)

पानी जहां पीने के काम आता है, वहां नहाने, वस्त्र तथा घर को शुद्ध पवित्र करने के काम भी आता है। आप प्रतिदिन प्रातः उठें। क्योंकि सूर्य भगवान के उदय होने से पूर्व आप नित्य कर्मों से निवृत्त होकर सन्ध्या स्नान करें। स्वाध्याय करने के पश्चात् अपने दैनिक कामों में जुट जाये। श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती प्रतिदिन प्रात: चार बजे उठा करते थे और आठ दस मील भ्रमण करते थे। आप भी प्रात जागने के अभ्यासी बने। इस से चुस्ती, फुरती तथा बुद्धि मिलती है हो सके तो प्रातः रोज शुद्ध तेल की खूब मालिश करें अन्यथा सप्ताह में तो एक बार आवश्यक है। खाये हुए घी से मालिश द्वारा शरीर का भाग बना हुआ तेल आठ गुना शक्ति प्रदान करता है। इस लिए आप निर्धन होते हुए भी तेल की मालिश से बड़ा लाभ प्राप्त कर सकते हैं! खूब भली प्रकार स्नान करें। क्योंकि पसीने के मार्ग से शरीर के विष को बाहर निकालने का केवल इसी समय अवसर मिलता है। जब आप के रोमकूप साफ हों। स्नान करने से जहां शरीर शुद्ध सुन्दर, स्वस्थ, लचकीला तथा फुर्तीला होता है वहा आप का मन भी शीघ्र एकाग्र तथा पवित्र होता है। शरीर नीला है तथा खुजली है तो आप मन को किस प्रकार एकाग्र करके परमात्मा के दरबार मे उपस्थित हो सकते हैं। तन के साफ होने पर मन को शुद्ध होने मे सहायता मिलती है। इस लिए शीत ऋतु मे निरन्तर स्नान करें। अपने बच्चों को भी स्नान करायें। जिस प्रकार से आप चुस्त बनेंगे वैसे ही आप के कार्य भी शीघ्र होते जायेंगे। हर बात स्वभाव पर निर्भर होती है। अतः स्वास्थ्य को स्थिर रखने वाले स्वभाव को बनायें। हां बीमारी की अवस्था में स्नान आवश्यक नहीं है।

सफाई

पानी तथा साबन से वस्त्र साफ होते हैं। पानी सर्वत्र सुलभ है। किसी निर्धन को गिला नहीं करना चाहिए तथा साबन आप अपने घर पर भी बना सकते हैं। एक भाग कास्टक सोडा तथा सात २ भाग पानी और तेल महवा-अलसी गिरी, मूङ्गफली लेवे। सोडे में पानी मिला कर चौबीस घण्टे के बाद धीरे २ तेल मिलाते जाय और खूब हिलाते जाये। आवश्यकता हो तो धोबी सोडा, मैदा, वेसन, बरोजा, सुहागा आदि मिला सकते है। साबन को हल्का करने के लिए नमक मिलाते हैं। दूसरे दिन काट कर चकी बना लेवें। आप आसानी से अपने घर में साबन बना कर हर प्रकार से सफाई के नियम पर आचरण कर सकते हैं। ऐसे ही फर्श को पानी से धो डालें या इस पर चूना फैला दो। इसके अतिरिक्त बिस्तर को धूप मे फैला दो गरम कपड़े, चारपाईया तथा अन्य वस्तुओं को भी धूप मे रखो। क्योंकि धूप रोग कीटों को नष्ट कर देती है। थोड़ी-सी सावधानी से बिना व्यय ही आप सारी चीजें साफ कर लेते हैं।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

दुश्मन को मार भगा देंगे

हम पुत्र हैं भारत माता के
माता की रक्षा करने को
हमें देश की उन्नति है करनी
हम दोनों बातें जानते हैं
है पंचशील से प्यार हमें
जो जैसा चाहेगा उसको
मक्कार, फरेबी, दगाबाज
हम ऐसे धोखेबाजों को
जो केवल लड़ना चाहता है
इन राक्षस चीनी चोरों को
यह तन-मन-धन सब देश का है
इस देश की रक्षा करने को
प्रताप, शिवा, बैरागी का
हम मौत से खेलना जानते हैं
उन वीरों की सन्तान हैं हम
भारत के शत्रु चीनिया को
'प्रेम' का है सन्देश यही
मन में अपने यह प्रण कर लो

माता के कष्ट मिटा देंगे
अपना सर्वस्व लगा देंगे
और देश की रक्षा भी करनी
संसार को यह बतला देंगे
नहीं युद्ध से भी इन्कार हमें
वैसा हो पाठ पढ़ा देंगे
चीनी भारत में घुस आए
भारत से दूर भगा देंगे
वह राक्षस है इन्सान नहीं
लड़ने का मजा चखा देंगे
हम देश के देश हमारा है
सब तन-मन-धन लगा देंगे
है खून हमारी नस-नस में
दुश्मन को यह दिखला देंगे
जो खून की होली खेले थे
ललकार के यहां बतला देंगे
भारत के वीरो जाग उठो
दुश्मन को मार भगा देंगे

पिशोरी लाल 'प्रेम' रैणुणा (हि० प्र०)

आर्य समाज योगेन्द्र नगर (H.P.)

में वैशाखी उपलक्ष्य में ७ से १४ अप्रेल ६३ तक गायत्री यज्ञ व उत्सव बड़े उत्साह से सम्पन्न हुआ। पूर्णाहुति के दिन, मण्डी, पालमपुर, कांगड़ा के प्रमुख कार्यकर्ता सपरिवार पधारे। आर्य स्त्री समाज मण्डी की ओर से श्रीमती द्रौपदी देवी जी पधारीं। पूर्णाहुति के दिन योगेन्द्र नगर की समाज मेले का रूप धारण कर गई थी। प्रादेशिक सभा के महोपदेशक श्री ओम प्रकाश जी व ठा. दुर्गासिंह जी तूफान के व्याख्यान व मनोहर भजन होते रहे सभा को १०१/- वेद प्रचार के लिए मिला। इस सारे कार्यक्रम में आर्य महिला समाज का पूर्ण सहयोग मिलता रहा सनातन धर्म महिला मण्डल योगेन्द्र नगर के आग्रह पर सनातन धर्म मंदिर योगेन्द्र नगर में भी पं. ओम प्रकाश जी का भाषण तथा ठाकुर जी के भजन होते रहे।

—कपूर साहब को विदाई पार्टी—

आर्य समाज योगेन्द्र नगर की ओर से ४ मई को एस. पी. कपूर साहब स्टेशन मास्टर योगेन्द्र नगर जो कि समाज के उपप्रधान पद पर कार्य करते थे विदाई पार्टी दी गई। तबदील हो कर माधोपुर चले गए हैं। आप को गृहिणी ने भी आर्य समाज में बढ़ चढ़ कर कार्य किया। इस परिवार के तबदील होने से आर्य समाज को काफी क्षति पहुंची है।

मुरारी लाल
मंत्री समाज

आर्य समाज चंडीगढ़ सेक्टर २२ A का चुनाव

चौधरी रूप चन्द जी (प्रधान) सर्व श्री सन्तराम जी तथा सोमदत्त जी (उपप्रधान) जयदेव जी (मन्त्री) सर्व श्री शिवचरण जी तथा दौलतराम जी (उपमन्त्री) श्री शिवनाथ जी (कोषाध्यक्ष) श्री गिरधारी लाल जी (पुस्तकाध्यक्ष) बाबू राम जी महाजन (स्टोरकीपर) कल्पतराय जी (लेखा निरीक्षक)। —जयदेव मंत्री सभा

(गतांक से आगे)

इस दृष्टांत से आत्म ज्ञानी ऋषियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि यह जीवन एक यात्रा है और सुन्दर शरीर परम पिता की ओर से अपने भोगों के आधार पर भिन्न-भिन्न स्थिति का आत्मा को प्राप्त हुआ है। जो आत्मा अपने लक्ष्य परमानन्द की ओर बढ़ना चाहती है उस का यह कर्तव्य है कि वह आत्मा इस शरीर रूपी गाड़ी के घोड़ों, इन्द्रिय पर मन रूपी लगाम के सहारे बुद्धि रूपी सारथी द्वारा पूर्ण नियंत्रण रखे, क्योंकि जिस स्वामी का सारथी उसका आज्ञाकारी होगा और सारथी के नियन्त्रण मे घोड़े होंगे और गाड़ी का पूर्ण नियन्त्रण होगा वही अपने लक्ष्य की ओर पहुंचने का अधिकारी हो सकता है अन्यथा वश से बाहर हुए घोड़े और सारथी स्वामी की इच्छा के विरुद्ध उसको जहां कहीं भी लेकर पटक सकते हैं। अत. सुख, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति के इच्छुक प्रत्येक मानव का यह कर्तव्य है कि वह अपनी बुद्धि को शुद्ध रखे और मन तथा इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखे।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि इन पर नियंत्रण किया कैसे जाये? इसकी सुन्दर विधि भी बड़े सरल ढंग से समझाने के लिए उपनिषदों में आई है। एक कथा आधार पर लिखी जाती है—कथा इस प्रकार है—

एक बार शरीर की पांचों ज्ञान और पांचों कर्मेंद्रियों में परस्पर झगड़ा हो गया। प्रत्येक इन्द्री अपने आपको बड़ा मानने लगी। ऋषियों ने मानव जाति के कल्याण के लिए इन्द्रियों पर नियन्त्रण करने की विध समझाने के लिए यह एक बहुत सुन्दर दृष्टांत पढ़ा है वैसा झगड़ा कभी नहीं होता। इस विवाद का निर्णय करने के लिए सब इन्द्रियां प्रजापति की सेवा में उपस्थिति हुई।

आनन्द की ओर

(ले०—कविराज श्री रामसिंह जी वैद्यवाचस्पति)

बहुत विचार के पश्चात प्रजापति ने यह निर्णय दिया कि शरीर में से जिस इन्द्रिय के निकाल दिये जाने पर शरीर जीवित न रह सके वही सब से बड़ी मानी जायेगी। निर्णय युक्ति-युक्त था अत. सब इन्द्रियों ने इसे स्वीकृत कर लिया और इस निर्णय के अनुसार सर्व प्रथम आंख को शरीर से बाहर निकल जाने की आज्ञा मिली। आंख शरीर से बाहर निकल गई। आंख विहीन मनुष्य अधा हो गया किन्तु वह मरा नहीं और इस प्रकार से जीवित रहा जैसे ससार में अनेकों अंधे जीवित रह कर अपनी जीवन यात्रा को चलाते रहते हैं।

जब शरीर आख के बिना समाप्त न हुआ तो आंख को आज्ञा हुई कि वह वापिस आ जाये। इस के पश्चात कान को शरीर से बाहर निकल जाने की आज्ञा हुई। कान के निकल जाने पर मनुष्य बधिरा तो अवश्य हो गया किन्तु वह फिर भी जीवित रहा। इसी प्रकार क्रमश. पाचों ज्ञान और कर्मन्द्रियों के शरीर से निकल जाने पर शरीर में कमी तो आई लेकिन वह जीवित ही बना रहा मरा नहीं।

सब से अंत में प्राण को शरीर से निकल जाने की आज्ञा हुई। जब प्राण शरीर से निकलने लगा तो मामला चौपट होने लगा। सब इन्द्रियों में अंधकार छा गया और सब इन्द्रियां हाथ जोड़ कर एक स्वर मे पुकार उठीं—हे प्राण देव। आप के बिना हम जीवित नहीं रह सकती अतः वापस आने की कृपा करें।

इन्द्रियों की यह करुण पुकार सुनने पर प्रजापति ने प्राण को वापस आने की आज्ञा दी और यह निर्णय दे दिया कि हे इन्द्रियो प्राण ही तुम्हारे में सब से बड़ा है।

इस दृष्टान्त से यह महान तत्व आत्म-ज्ञानी ऋषियों ने मानव हित के लिए निकाला है कि जो मानव अपनी इन्द्रियों और मन पर नियत्रण करना चाहे वह अपने प्राण पर नियंत्रण करे और उसके साथ सम्बन्धित रहे। प्राण के साथ सम्बन्ध होने पर सब इन्द्रियां और मन बुद्धि की आज्ञा में चलेगा। आत्मा के सारथी बुद्धि की आज्ञा में चल कर उसके परम कल्याण का साधन बनेगी। दूसरा महान् रहस्य और परम कल्याणकारी भाव इस दृष्टान्त से यह प्रकट हो रहा है कि जो मानव अपना कल्याण चाहे वह इस सारे ब्रह्मांड के प्राण रूप और एक मात्र आधार उस परम पिता परमात्मा के साथ अपना सम्बन्ध जोड़े। उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने पर उस परम पिता के प्रकाश और आनन्द को मानव अपनी अतरात्मा में प्राप्त करके आनन्द विभोर हो उठेगा। उस परम पिता के साथ सम्बन्ध जोड़ने के लिए भी शात, शुद्ध और निर्मल मन एक अनिवार्य माध्यम है तथा इस मन को पवित्र और निर्मल बनाने का साधन भी प्राण पर नियंत्रण है।

प्राण पर नियन्त्रण की विधि

अब प्रश्न यह है कि प्राण पर नियंत्रण कैसे किया जाए? बहुत अन्वेषण और अनुसंधान के पश्चात् आत्मा ज्ञानी ऋषियों ने अपने अनुभव के आधार पर प्राण पर नियन्त्रण का साधन प्राणायाम मानव जाति के कल्याण के लिए खोज निकाला है। अब प्रश्न होता है कि प्राणायाम क्या है?

प्राणायाम का रूप

प्राणायाम का शब्दार्थ है प्राण (श्वास) का आयाम प्राण का बढ़ाना। स्वस्थ मानव एक मिनट में लगभग १५—१८ तक सांस लेता है। इन सांसों के द्वारा हम प्राण वायु भीतर फेफड़ों में भरते हैं जिसके सम्पर्क से शरीर का रक्त शुद्ध होता है। यह श्वास जितना गहरा जावेगा उतना ही फेफड़ों की सूक्ष्म से सूक्ष्म नीचे तक की प्रणालियों में भी भली भांति संचार कर जावेगा।

प्राणायाम के लाभ

जैसे वायु साधारणतया वैसे तो सामान्य संचार सब जग करता ही रहता है किन्तु जब तेजी के साथ आंधी के रूप में चलती है तो कमरों के कोनों मे यहां तक कि बीमारियां अलमारियों और घर के एकांत से एकांत स्थान पर भी पहुंच जाती है। उसी प्रकार जब हम प्राणायाम करते हैं उस समय शुद्ध वायु का संचार हमारे सब फेफड़ों में विशेषकर और सामान्यता सारे शरीर में हो जाती है। जिस से जहां हमारे वातसम्यपान को बल मिलता है वहां मन पर भी नियंत्रण प्राप्त होता है। जैसे छत पर जाने के लिए सीढ़ी साधन हुआ करती है वैसे ही यह प्राणायाम भी सुख शान्ति और आनंद की ओर जाने के लिए बड़ी उत्तम सीढ़ी है। प्राणायाम से जहां शरीर शक्ति प्राप्त करता है वहां मन पर भी नियन्त्रण प्राप्त होता है, प्राणायाम का लाभ निम्न श्लोक में मनु जी महाराज ने प्रकट किया है।

दह्यन्ते ध्यायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥
मनु: ६-७१

निसंदेह प्राणायाम शरीर को स्वस्थ बनाने और मन को शुद्ध और नियन्त्रण में लाने के लिए एक

(शेष पृष्ठ ६ पर)

युवक स्तम्भ

चरित्र की सच्ची कहानियां

(ले०—श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' M A.)

पौराणिकों ने पापों को छिपाने के लिये या अपनी दुर्बलता और बेबसी को ढांपने के लिये एक कल्पना कर रखी है कि यह कलियुग है इस में धर्म का ह्रास होता है। सत्य को कोई नहीं पूछता परन्तु यह तो एक मिथ्या मत है जो वीर पुरुष इस युग में भी धर्म के पथ पर छाती तान कर चल पड़ता है संसार को उसका सत्कार करना पड़ता है। विघ्न तो सन्मार्ग पर आते ही हैं। आर्य कुमारों को कैसे चरित्रवान बन कर वेद पथ पर चलकर धर्म ध्वजा को फहराना चाहिए इसका उदाहरण चरित्र की इन सच्ची कहानियों में मिलेगा।

प्रांतीय आर्य कुमार परिषद् के उपमन्त्री श्री राम स्नेही जी बी. ए. बी. टी. ने उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिये एक शिक्षा संस्था में १९५६ में प्रवेश पाया। उस शिक्षा संस्था में प्रवेश पाने के लिये एक शर्त यह भी थी कि प्रवेश पाने वाला किसी नौकरी पर हो। आप ने भी नौकरी का एक प्रमाण पत्र उपस्थित कर दिया दो मास बाद आपने अपने कालिज के प्रिंसिपल महोदय को एक प्रार्थना पत्र दे दिया कि मैंने आपको एक झूठा प्रमाण पत्र देकर प्रवेश पाया है अतः मुझे दण्ड दिया जावे।

प्रिंसिपल महोदय आपके इस नैतिक साहस को देख कर बड़े दंग रह गये। आप को बुला कर कहा कि अब कोई बात नहीं आप पढ़ाई जारी रखो। परन्तु आप अपनी बात पर अड़ गये अन्त में यह बात तय पाई कि आप चूंकि अपनी बात पर अड़े हुए हैं अतः आप कालिज छोड़ दें इस प्रकार आपने कालिज छोड़ दिया।

आर्य युवकों को अपने श्रद्धेय आर्य वीर के जीवन की इस घटना से शिक्षा ग्रहण करके अपने आपको व अपने देश को ऊंचा उठाना चाहिए। ऐसे वीर ही राष्ट्र और समाज के नेता बनने के अधिकारी होते हैं। ऐसे वीर ही ऋषि के समाज की शोभा हैं।

एक आर्य वीर का नाम देना मैं यहां ठीक नहीं समझता। वह बंधु एक वर्ष पूर्व कुछ आर्य युवकों के संपर्क में आकर आर्यसमाजी बने। आर्य समाजी क्या बने दयानन्द का जादू उनको हो गया। उनके एक अत्यन्त निकट के रिशतेदारों की किसी दूसरे से लड़ाई हो गई। झगड़ा भयंकर रूप धारण कर गया। पुलिस ने दोनों ओर के व्यक्ति पकड़ लिये। ऐसी सम्भावना थी कि उस आर्य वीर के एक रिशतेदार को कठोर दण्ड मिलेगा। कछ आर्य मित्र सहानुभूति प्रकट करने गये तो वह हंस कर बोले आप सहानुभूति प्रकट करते हो मैं कहता हूं कि दण्ड मिलना ही चाहिए। वह बोले भाई जिस का दोष है उसको दण्ड न मिलेगा तो देश में शांति और व्यवस्था कहां रहेगी। सब बन्धु उस वीर का यह उत्तर सुन कर हैरान रह गये। हम सब की तब तो उनके प्रति और भी श्रद्धा बढ़ गई।

अम्बाला में हिसार जिला के एक आर्य वीर रोहताश कुमार जी पढ़ते हैं। आप पहले हिसार पढ़ते थे। आप वहां आर्य युवकों के के सम्पर्क मे आकर आर्य समाजी बन गये। आप बहुत स्वस्थ लम्बे चौड़े जवान हैं। आप के इलाके में बाल-विवाह की कुप्रथा है। आप की सगाई के लिये आप के पूज्य पिता जी पर लोग दबाव डालने लगे आपके पिताजी भी बड़े सज्जन पुरुष हैं रोहताश जी की आर्यसमाज में प्रवृत्ति को देखकर आपने दबाव डालने वालों को स्पष्ट कहा कि मेरा पुत्र तो आर्यसमाजी बन गया अब क्या किया जा सकता है। २५ वर्ष से पूर्व तो विवाह की बात सुनने को भी वह तैयार नहीं। जो लोग ४० या ५० या ६० वर्ष से आर्य समाज के सदस्य चले आ रहे हैं क्या वे छाती पर हाथ रख कर कह सकते हैं कि उनकी बाबत भी कोई यह कह सकता है कि चूंकि वे आर्यसमाजी हैं अतः वेद विरुद्ध कुप्रथाओं और कुकर्मों के पास भी नहीं फटक सकते ?

मुझे गत दिनों एक कुमार सभा के एक कार्यकर्त्ता मिले मैंने हाल-चाल पूछा तो बोले कि जी हालचाल अब क्या पूछते हो। यदि मुझे आर्य कुमार सभा का सत्संग न मिला तो ऋषि की पावन विचारधारा में कहां स्थान होता ? वह बोले आर्यसमाज ने बचा लिया अन्यथा वह कौन-सा घटिया नीच कर्म है जो मैंने नहीं किया ? मैंने उनके ये शब्द सुने और अपने आप का ध्यान उठ गया। क्या आर्य घरानों में पैदा होने वाले हम लोगों को ऋषि के उपकार की ऐसी कदर है ?

आनन्द की ओर

(पृष्ठ ५ का शेष)

अनुपम साधन हमारे ऋषियों ने बड़ी खोज के पश्चात् निकाला है। स्वस्थ, बलवान रोग रहित शुद्ध, सात्विक विकारों से रहित मन मानव-जीवन के विकास का अनिवार्य साधन है। यह जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं। पक्षी के दो पंखों की भांति आत्मा के विकास के अनिवार्य साधन हैं।

अतः जो मानव अपनी जीवन नैया को आनंद की ओर ले जाना चाहता है यह परम कर्तव्य है कि इन दोनों शरीर और मन को स्वस्थ, बलवान, रोग रहित बनाये और अपने नियंत्रण में रखे। शरीर तो हमारी यात्रा के लिए घोड़ा है उसको बलवान बनाओ और काबू में रखो क्योंकि हमारा घोड़ा यदि बलवान है और वह हमारे काबू का नहीं तो वह हमें हमारे लक्ष तक पहुंचाने की जगह अपनी इच्छा से कहीं भी लेकर पटक सकता है और हमारे जीवन का नाश कर सकता है। इसके विपरीत यदि घोड़ा काबू में है तो है किन्तु मरियल

(क्रमशः)

महर्षि दयानन्द जन्म भूमि टंकारा में विशेष उत्सव

बुधवार दिनांक ८-५-६३ को वैशाख पूर्णिमा के पवित्र पर्व पर महर्षि दयानन्द जन्मभूमि टंकारा में 'ब्रह्मचर्य सूक्त' द्वारा बृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया। जिसके लिये भिषगाचार्य श्री मेधार्थी स्वामी विद्यालंकार एम. ए. को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था। बृहद् यज्ञ के पश्चात् आचार्य प्रभाकर मिश्र एम. ए. डी. एस.सी. प्रस्तोता (रजिस्ट्रार) दयानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय टंकारा (सौराष्ट्र) का सारगर्भित भाषण हुआ। भाषण में घोषणा की गई कि बी.ए. अथवा शास्त्री पास उन छात्रों को छात्र-वृत्ति दी जाएगी जो उपदेशक बन कर जीवन भर वैदिक धर्म प्रचारार्थ प्रण करेंगे। जो एक वर्ष शिक्षा ग्रहण करेंगे उन्हें "सिद्धांतालंकार" जो दो वर्ष शिक्षा ग्रहण करेंगे उन्हें "सिद्धांतवाचस्पति" जो तीन वर्ष शिक्षा ग्रहण करेंगे उन्हें "सिद्धांत-मार्तण्ड" की पदवी प्रदान की जाएगी। विस्तृत पाठ्यक्रम जानने के लिए प्रस्तोता (रजिस्ट्रार) दयानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय टंकारा वा मोरवी (सौराष्ट्र) को तुरन्त लिखिये

गल्प——

जीवन का गन्तव्य

(लेखक—श्री बृज भूषण शर्म्मा)

शीलेन्द्र ने गंगा की लहरों में सन्तोष के फूलों को छोड़ दिया। कुछ क्षणों तक फूल एक ढेर के समान उसके सामने चक्कर काटते रहे, फिर ढेर की परिधि धीरे धीरे टूटने लगी, फूल अनेक रेखाओं में बिखर-बिखर कर बहने लगे.. फूल बह गए, न जाने कहां ? सम्भवत. क्षितिज के उसपार, दूर बहुत दूर... शीलेन्द्र खाली कपड़ों को देखता रहा, गंगा की लहरों पर निस्पन्द दृष्टि से विदा की हुई अपनी पत्नी को।

अन्धकार बढ़ता आ रहा था, रात हो गई, किंतु शीलेन्द्र नदी के तट पर स्तब्ध खड़ा किसीकी अनुपम प्रतीक्षा में सुध-बुध भूल एक ईश्वरीय प्रेम का आनन्द ले रहा था। सहसा किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रखा। शीलेन्द्र चौंक पड़ा, उसे लगा कि किसी ने उस से उस के संसार को छीन लिया हो। 'बेटा ! अब रोने से कुछ नहीं बनने वाला, वेदना से केवल अनर्थ की सम्भावना हो सकती है। अब रोना व्यर्थ है, मेरे बेटे ! उठो ! बहुत रात होने को है, अपने छोटे से मन को क्यों ग़म लगाते हो ?" शीलेन्द्र के मुख से कोई शब्द न निकल सका, अवाक् उठ पिता के साथ हो लिया। घर पहुंच कर बिस्तर पर लेट रहा किंतु आज निद्रा उससे विद्रोह कर रही थी। उसका जी सन्तोष को मिलने के लिए तड़प रहा था। आज उसे घर की दीवारों से डर आ रहा था।

सहसा उसका ध्यान बड़ी बहिन की ओर चला गया, एक दिन उसने कहा था, "शीलेन्द्र भैया ! जब तुम ब्याह करके अपने रेशमी दुपट्टे के छोर उसे बांधे हुए आंगन में उतरोगे: उस समय मैं तुम दोनों की आरती उतारूंगी और कृतार्थ हो जाऊंगी। तु शीलेन्द्र, वह सन्तोष, कितनी आदर्श जोड़ी है भइया तुम्हारी !" लेकिन वह जोड़ा, वह बहन का गाना, सब कहां गये ?

शीलेन्द्र आवेश में उठकर दोनों हथेलियों को एक सीध में फैला कर देखने लगा। इन हथेलियों में कुछ समय पहले भी सभी रेखाएं थीं—पति की, भाई की, भाग्यवान की, प्रगति की, आशा, विश्वास और आस्था सभी की रेखाएं थीं। पर अब मिट चली थीं। दोनों हथेलियां साफ और निश्चिन्ह थीं। शीलेन्द्र का सर चक्कर खाने लगा, उसका जी चाहा कि वह सदा के लिए कहीं ऐसी जगह पर चला जाए जहां उसका अपना व पराया कोई न हो, जहां वह सदा के लिए खो जाए। जलती हुई अपनी हथेलियों में उसने अपने मुंह को छुपा लिया, सिर को अपनी बांहों में लपेट लिया।

बिस्तर से उठ, वह गंगा की ओर भागा ताकि जान सके जीवन का गन्तव्य क्या है। शीलेन्द्र पागलों की भान्ति तूफान की गति से भागा जा रहा था। रास्ते में सूखा हुआ एक पेड़ मिला। उसकी एक शाख पर उसे सन्तोष की लटकती हुई लाश दिखाई देती है। उस लाश की छाया में उसे सिर झुकाए, अपने सिर के बालों को पश्चाताप में नोचता हुआ शीलेन्द्र दिखाई देता है। वह ऊपर देखता है, नीचे देखता है, उस का हृदय भयभीत हो जाता है वह भाग उठता है और गंगा की ओर ... जीवन का गन्तव्य......

सहसा उसकी दृष्टि एक नवयुवक पर पड़ी। उसकी आयु कोई उन्नीस-बीस के लगभग थी किंतु शरीर पर सजावट का नाम नहीं। गरीब माता-पिता की संतान। भूख प्यास से पीले पड़े मुख पर मृत्यु ताण्डव नृत्य कर रही थी। मरणासन्न मनुष्य का फीका चेहरा, मृत्युकी काली छाया उसके ओठों पर, कपोल पर निमीलित नेत्रों की पलकों पर—उसके बाद यम और मनुष्य के बीच कैसी लड़ाई ? 'कंगाल भिखारी की तरह आकाश की ओर दोनों हाथ उठा कर सिर्फ 'हाय-हाय' करके मरने के लिए भगवान ने गरीब को जन्म नहीं दिया' सहसा चिल्लाते हुए कह उठा। उसके बढ़ते हुए पैरों में कोई लिपट गया। शीलेन्द्र रुका, उसने मुड़कर देखा। वह कर्तव्य था। देश को पतित अवस्था से उठाने की तड़प। एक अथाह स्नेह-मातृत्व के बन्दनवार थे जो उसके पैरों में उलझ गए थे। आंसुओं से भरी आंखें थीं। भारत माता के लम्बे-लम्बे हाथ, सुडौल बाहें थीं। उसका पवित्र आंचल था, जिसमें शीलेन्द्र के पर फंस गए थे। भारत माता आंचल पसारे कह रही थी—शीलेन्द्र तुम्हारी गति इसमें नहीं, यह तुम्हारा जीवन, उसकी गति, उसका गन्तव्य तुम से नहीं, मुझ में है, हम लोगों में है, इन भूख से तड़प-तड़प कर मरने वाले असंख्य लोगोंके उत्थान में है। तुम व्यक्ति नहीं, एक महान् स्वप्न हो—अपने नहीं, हम लोगों के। देखो ! पहिचानो, कितनी अमित आशा और विश्वास से भरी हुई ये तमाम आंखें तुम्हें देख रही हैं। ये आंखें उदास हैं, आंसुओं से भरी हुई हैं। ये आंखें माता की हैं, ये आंखें पिता की हैं इन सबको छोड़ कर तुम कहां जा रहे हो ? मृत्यु के पास ? नहीं यह गलत है, तुम्हारी इस भयङ्कर गति में मानवता की विनष्टि है, कितने ही देखते हुए प्राणियों और उनकी स्वप्नसत्ता का खून है। चलो, उठो, लौट चलो। तुम्हारे जीवन का गन्तव्य यही है। जीवन उसके लिए नहीं जिसे जीवन मिला है, अपितु उसके लिए है जिसने तुम्हें यह जीवन दिया है। इसे तुम नष्ट नहीं कर सकते। यह एक अमूल्य धरोहर है।

आर्य साहित्य मण्डल लिमिटेड अजमेर

के द्वारा प्रकाशित पंडित जयदेव जी विद्यालंकार व डा. सूर्यदेव जी शर्मा द्वारा लिखित, आर्यसमाज के उज्वल रत्न नामक पुस्तक में स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी के जीवन चरित्र में कुछ पंक्तियां आपत्ति-जनक लिखी गई हैं। इस पर आर्य प्रादेशिक सभा ने आपत्ति उठाई है जिसके उत्तर में विभाग के डाइरैक्टर महोदय ने पूछताछ करने के बाद उन पंक्तियों को निकाल देने का आश्वासन दिया है। व्यवस्थापक

आर्यसमाज लक्ष्मणसर अमृतसर

ने अपने सत्संग में श्रीयुत मेहरचन्द जी महाजन के दामाद तथा श्री ईश्वरदास जी प्रिंसीपल की असामयिक मृत्यु पर गहरा शोक प्रकट किया गया और दोनों परिवारों के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट की गई। दूसरे प्रस्ताव में प० शांति-स्वरूप जी पुरोहित आर्यसमाज पठानकोट तथा प्रधान आर्यसमाज फतेहाबाद के सुपुत्र की आकस्मिक मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रदर्शित किया।

रुद्रदत्त शर्मा

प्रधान आर्यसमाज

भारतीय द

(पृष्ठ २ का शेष

अविद्या के ये चार भेद स्थिति के ... व्यवहार ... होते हैं। जिसका कुछ भाव इस प्रकार है।

मनुष्य एक विवेकशील है, वह अपनी स्वाभाविक जिज्ञासा वृत्ति के अनुसार अपने चारों ओर फैले हुए जगतस्थ पदार्थों तथा अपने सम्बन्ध में विचार करता है। उन विचारों में से एक विचार, पदार्थों की नित्यानित्यता के सम्बन्ध में भी उद्भूत होता है। जब वह दार्शनिक क्षेत्र में अपनी योग्यता के अनुसार जितने अंश में दूर दर्शी दृष्टि से विचारता है, उतने ही अंश में नित्यानित्य के रहस्य, को समझने मे समर्थ होता है। परन्तु जब व क्षेत्र दूरदर्शी दृष्टि तथा दार्शनिकता के क्षेत्र से नीचे उतर आता है तब वह नित्य को अनित्य, और अनित्य नित्य अनुभव करने लगता है।

धार्मिक दृष्टि से व्यक्ति जब विचार करता है, तब वह समझता है, कि ईश्वर पूर्ण है, अत: व्यक्ति को पूर्णता की ओर पग बढ़ाने के लिए प्रभु के सान्निध्य का प्राप्त करना चाहिये। इस दृष्टि से आत्मा के स्वरूप का समझना अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु व्यक्ति जब शरीर अथवा शारीरिक वासनाओं के चक्र में फंस जाता है और धार्मिक दृष्टि बिन्दु को आंखों से ओझल कर देता है, तब वह आत्म-अनात्म के भेद को समझने में असमर्थ होने के कारण अपने मार्ग से भटक जाता है।

इस प्रकार से श्रद्धेय डाक्टर जी ने प्रस्तुत ग्रन्थ में अनेक प्रेरणादायक और ज्ञान वर्धक बहुत ही सुन्दर विचार प्रकट किए हैं। वस्तुत: जिसकी उपादेयता को ग्रंथ के रसास्वादन के अनन्तर की भली प्रकार से समझा जा सकता है।

...चन्द्र जी का लिखित

(इंगलिश)

... की

समा... से हैं जिन्होंने ... वैदिक ज्योति के फैला... समर्पित कर रखा है, महात्मा देवी चन्द जी के रग रग में वेद के प्रति अटूट प्यार भरा हुआ है युवा काल ही से उन्हीं तप तथा त्याग का मार्ग इस उद्देश्य को सामने रख कर अपनाया ताकि भिन्न २ प्रकार से वेद विचार का प्रसार हो सके। दयानन्द कालेज होश्यार पुर का सफल प्रिंसीपल पद त्यागने के पश्चात उन्होंने सफलता से इस महान संस्था का सफलतापूर्वक प्रबध किया सारे जीवन में वेद मन्त्रों को आधार बना कर व्याख्या न देते रहे। महात्मा देवीचन्द जी ने तब एक बड़ी भारी कमी को अनुभव किया और यजुर्वेद का इंगलिश भाष्य प्रकाशित किया। मौरिशस तथा पूर्वी अफ्रीका में जब मैं ने इंगलिश के विद्वानों को यह इंगलिश यजुर्वेद दिखलाया तो उनकी प्रसन्नता की सीमा न रही, वह कहने लगे अब हम विदेशियों के सामने अपना परम प्रमाण ग्रन्थ रख कर अपना सर ऊंचा कर सकेंगे।

अब महात्मा देवी चन्द जी ने साम वेद का इंगलिश अनुवाद कर के अपना नाम अमर कर लिया है। साम वेद भक्ति प्रधान वेद है और संसारी झंझटों तथा संतापों से तपे हुए लोगों के लिये भक्ति ही परम औषध है, भौतिकवाद में फसे इस युग के लोगों के आत्मा, मन तथा बुद्धि को एक विलक्षण संतोष तथा शान्ति देने वाला यह साम वेद है, इंगलिश जानने वालों के लिये महात्मा देवीचन्द जी ने अमृत का स्रोत खोल दिया है।

एक और महत्व पूर्ण काम सामवेद इंगलिश भाष्य मे महात्मा देवीचन्द जी ने यह किया है कि श्री के० एम० मुन्शी जैसे पश्चिमी ... भ्रममूलक ... धारा है, भारतीय ... बम्बई की ओर से ... Vedic Age में वेद के ... घात बातें लिखी गई हैं, उन का बहुत सुन्दर तथा प्रामाणिक उत्तर दिया है, इसी प्रकार ग्रिफिथ महोदय के कितने ही भ्रम दूर करने का सफल प्रयत्न किया है। साम वेद इंगलिश भाष्य का कागज तथा छपाई भी बड़ी आकर्षक है। हर प्रकार से यह वेद भाष्य सराहनीय है।

आवर पंजुआ ... मिशन

(इंगलिश में)

ले०—श्री प्रिंसिपल श्रीराम शर्मा एम० ए०, डा० ए० वी० कालिज चण्डीगढ़। पृष्ठ संख्या १४० मूल्य सजिल्द १.२५ एन. पी.।

पुस्तक क्या है विभाजन से पूर्व पंजाब के सभी आर्य स्कूलों व डी० ए० वी० स्कूलों का विस्तृत इतिहास है।

स्कूलों की स्थापना कब, कैसे हुई स्कूल का पूर्व रूप क्या था और आधुनिक रूप क्या है आदि विषयों की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपरोक्त पुस्तक अति उपयोगी है। पूर्वी पंजाब के सभी स्कूल अपने स्कूल का प्राचीन इतिहास जानना चाहते हैं तो इस पुस्तक को मंगाकर आद्योपांत अवश्य पढ़ें तथा स्कूल लायब्रेरियों के लिए अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है।

प्राप्ति स्थान—

महात्मा हंसराज साहित्य विभाग ए. पी. पी. सभा निकट कोर्ट जालन्धर

सरोज के नाम पत्र

लेखक—श्री डा० साईंदास जी भण्डारी (करतारपुर)

प्रकाशक—आत्मानन्द प्रकाशन मन्दिर (यमुना नगर)

पृष्ठ संख्या ३६ मूल्य ३१ न० पै०

लेखक के १२ पत्र आर्य वीर मासिक में समय २ पर प्रकाशित होते रहे हैं अब इन का संग्रह पुस्तक रूप में वैदिक साधन आश्रम यमुना नगर ने प्रकाशित किया है।

लेखक ने प्रिय सरोज के नाम १२ पत्रों में सामायिक विषयों को लेकर शिक्षा दी है। जो कि कन्याओं के लिए अति उपयोगी है। पश्चिमी वातावरण में बड़ी तीव्र गति से बहती हुई देवियों के लिए अतीव लाभकारी, पुस्तक है। आचरण करने पर गृहस्थ स्वर्गधाम बन सकता है। प्रत्येक गृहस्थ मे इस लघु पुस्तिका का होना अति आवश्यक है।

शोक प्रस्ताव

डी० ए० वी० हायर सेकण्डरी स्कूल बटाला के अध्यापकों तथा छात्रों की शोक सभा हुई, जिसमें भूतपूर्व प्रिंसिपल तथा आर्य विद्या सभा के जनरल सैक्टरी श्री ईश्वर दास जी के आकस्मिक निधन पर शोक प्रस्ताव पास किया गया। उनकी शिक्षा तथा धार्मिक क्षेत्र में की गई सेवाओं की सराहना की गई।

प्रभु से प्रार्थना की गई कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करें और उनके वियोग सन्तप्त परिवार को इस असह्य दु:ख को सहन करने की शक्ति तथा धैर्य प्रदान करें। जुगल किशोर 'भारद्वाज' प्रिंसिपल स्कूल बटाला

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० २०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २०) रविवार १३ ज्येष्ठ २०२०— २६ मई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

देवानां सुमतौ स्याम

हम दिव्य जनों, देवपुरुषों, यज्ञ परोपकार में अपना जीवन लगाने वाले देवों की अनकूलता में रहें। देवों के बताये मार्ग पर ही सदा चलते रहें। दैवी विचार हमारा जीवन प्रदर्शन करते रहें।

वयं भगवन्त: स्याम्

हे धनपते परमेश्वर! हम आपके अमृतपुत्र सारे ही भगवन्त, ऐश्वर्य के, धनधान्य के, वभव-भण्डारों वाले बन जावें। जीवन की सारी सम्पदाएं हमें प्राप्त होवें।

इद ब्रह्म संशितम्

यह भगवान सदा तथा सबसे प्रशंसित है। इस विशाल विचित्र विश्व के चित्र चमत्कार को देखकर कौन है जो उसकी मौन होकर प्रशंसा नहीं करता।

● अथर्ववेद

वेदामृत

शंनो अादितिर्भवतु व्रतेभिः शंनो भवन्तु मरुत: स्वर्क्का:। शंनो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शंनो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥ ऋ कू मं. ७ सू. ३५ मं. ६

अर्थ.—(शं न.) हमे सुख देवे (अदिति) व्रती (व्रतेभि.) शुभ व्रतो से (भवतु) सुखकर हो और (शं न) शान्ति देवें (मरुत.) विद्वान लोग (स्वर्क्का) शुभ विचारो से युक्त लोग सुख देने वाले बने। यह (विष्णु.) सर्वव्यापक परमेश्वर (पूषा) सबं बलों का भण्डार (शं न.) हमे सुखकर हो और (भवित्रम्) भविष्य भी शान्ति दायक हो तथा (वायु) यह वायु भी (शमु उ न.) हमारे लिए कल्याण करने वाला हो।

भाव.—जितने भी शुभ व्रतों को धारण करने वाले व्रती ब्रह्मचारी हैं, जो अज्ञान के अन्धकार को दूर करने वाले हैं, जो उत्तम विचारों के, पवित्र भावों से भरे, उत्तम आशयों से भरे, उत्तम आशयों वाले महाशय हैं, प्राण के समान प्यारे विद्वान हैं, मरुत हैं। वे सारे हमारे लिए सुख शान्ति, कल्याण करने वाले हों। अपने नियमों, विधानों, व्रतों कार्यों से हमें जीवन का सुपथ दर्शाते हैं। नेता बन कर हमारा मार्ग प्रदर्शन करते रहें। प्रभो! आप का तो आशी. सदा हमे मिलता ही रहे। हमारा भविष्य सदा ही उत्तम होता जाये। सदा शुभ कार्य ही करने में तत्पर रहें। यह गतिशील वायु भी आप की कृपा से हमे जीवन, प्राण देता रहे। विश्व के सारे भौतिक तत्व हमें सुखदायक बने रहें। हमारा जीवन भी एक आदर्श जीवन हो। सारा वस्तु जगत्, प्राणि मंडल में शान्ति, कल्याण और सुखदायक होवे—सं

जनता देशरक्षक सैनिकों से समुचित व्यवहार करे

श्री प्रतापसिंह कैरों की चेतावनी

१८ मई—मुख्यमन्त्री सरदार प्रतापसिंह कैरों ने जनता को चेतावनी दी है कि वह देश की सीमाओं की रक्षा कर रहे जवानों के साथ समुचित व्यवहार करें।

श्री कैरों ने जो यहां भूतपूर्व सैनिकों की सभा को सम्बोधित कर रहे थे जिला होशियारपुर को १० हजार जवान भर्ती के लिए पेश करने पर बधाई दी। उन्होंने कहा कि जवानों की भर्ती देने मे यह जिला सर्वप्रथम है। उन्होंने उन अध्यापकों तथा ग्राम सेवकों की प्रशंसा की जो नागरिक प्रतिरक्षा के लिए होम गार्ड्ज़ मे शामिल हुए हैं.

श्री कैरों ने कहा कि चीन तथा पाकिस्तान दोनों की ओर से भारत को खतरा पूर्ववत बना हुआ है फलत. जनता को हर समय तैयार रहना चाहिए। उन्हें देश की प्रतिरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए अधिकतम परिश्रम करना चाहिए।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

बृहदारण्यकोपनिषद् का सार (२)

(—श्री बलदेव राज जी विद्यार्थी साधु आश्रम होशियारपुर)

दूसरे अध्याय में दृप्तबालाकि और काशी के राजा अजात-शत्रु का ब्रह्म के ऊपर संवाद है। गार्ग्य एक के बाद दूसरे ब्रह्म सम्बन्ध में कल्पना उपस्थित करता जाता है और अजात-शत्रु उसे अपूर्ण बताता जाता है। सबसे पहले गार्ग्य आदित्य में कल्पित-पुरुष को ब्रह्म मानकर चलता है जिसे अजात-शत्रु अस्वीकृत कर देता है फिर वह क्रमशः चन्द्रमा, बिजली, आकाश, वायु, अग्नि, जल, दर्पण आदि में स्थित-पुरुष को ब्रह्म बताता जाता है। उसके उपरान्त शब्द को फिर दिशाओं मे पुरुष को, छाया को तथ हृदय में स्थित-पुरुष को बता करके चुप हो जाता है। अजात-शत्रु उसे फिर ब्रह्म उपदेश देता है। सोए हुए पुरुष का उदाहरण देकर अजात-शत्रु पूछता है कि सोते समय इसका आत्मा कहां था तथा जागने पर कहां से आ गया। वह समझाता है कि हृदय के अन्दर आकाश है तथा उसमें बुद्धि-मय कोष है वहां यह चैतन्य आत्मा इन्द्रियों के चैतन्य को ग्रहण करके भीतर विचरता है और राजा की तरह इन्द्रिय रूपी मनुष्य को साथ लेकर भीतर शरीर में विहार करता है तथा सुषुप्ता अवस्था में अत्यन्त आनन्द अनुभव करता है मकड़ी तथा अग्नि की भांति निकलने वाले तार अथवा चिंगारियों की भांति इस आत्मा से सारे प्राण, जीवन शक्तियां, लोक, प्राणी निकलते हैं। शरीर में यह सच्चा सामर्थ्य की आत्मा है। (इस संवाद में दर्शन व मनोविज्ञान दोनों का सन्निवेश है एक ओर आत्मा के रूप को सुप्त मन से जोड़ा गया है। दूसरी ओर इसे सभी प्राणियों को सञ्जीवन-शील बनाने वाला कहा गया है। शरीर के भीतर हृदय आकाश की कल्पना एक मनो-वैज्ञानिक संभावना की ओर इशारा करती है और अन्तर्जगत की कल्पना के इर्द-गिर्द विचारों की गति प्रदान करती है।

दूसरे ब्राह्मण में पहेली के रूप में आत्मा के नायकत्व उसके अधिष्ठान, खूंटा, रज्जु का वर्णन किया है। नेत्र की महिमा गाई गई है तथा उसमें आत्म-शक्ति का विशेष प्रकाश माना गया है। पुन. एक पहेली कही गई है जिसमे सिर को एक ऐसा पात्र कहा गया है जिसमे सात ऋषि रहते हैं जो सात इन्द्रियां (दो नेत्र, दो कर्ण, नासिका छिद्र आदि) आठवी वाणी है जो ब्रह्म से संवाद करती है इन इन्द्रियों को मुख्य २ ऋषियों के प्रतीक मान लिया गया है। इन सातों इन्द्रियों के रहस्यात्मक तत्त्व को जानने की महिमा गाई गई है।

तीसरे ब्राह्मण में अमूर्त व मूर्त दो ब्रह्म के रूपों की कल्पना की गई है। मूर्त नाशवान, चलने वाला और अव्यक्त है। अमूर्त तत्त्व इसके विपरीत है। अमूर्त तत्व में वायु व आकाश से भिन्न प्राकृत पदार्थ हैं। वायु व आकाश का कोई नहीं। मूर्त तत्वों का प्रतिनिधित्व सूर्य करता है। इसी धारणा को यदि हम आध्यात्मिक पक्ष में देखें तो आत्मा अव्यक्त है और शरीर व्यक्त। यह आत्मा वायु का रूप है इस आत्मा की कल्पना प्रकाशमय स्वरूप है जिसकी तुलना अग्नि, ज्वाला, सफेद-कमल व बिजली के प्रकाश से की गई है इस आत्मा का सत्य का सार, इन्द्रियों की चेतनता का कारण माना गया है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सुनो ऐ ! दक्षिण वालो........
करनी, मैंने तुम से इक बात।

सुना नहीं, पढ़ा भी है,
तुम कर रहे हाहाकार,
अंग्रेजी तुम पर बनी रहे,
है ! यही तुम्हारी पुकार ?
सोचते हैं, जब हम आप के मन्तव्य को,
कुछ हैरत सी होती है इस पर हमको.
क्यों कर रहे हो तुम निज हथकड़ियों से प्यार,
उठो ! आवरण पराधीनता का, चीर डालो,
भगाओ विदेशी भाषा को,
लगाओ इसे दो-तीन लात।
सुनो ऐ ! दक्षिण वालो.. ......
जरा खोलो तुम इतिहास कपाट,
हुए यहां दयानन्द सम महान,
देश एवम् जन कल्याणार्थ,
किया जिन्होंने हिन्दी-प्रचार,
क्यों भूले तुम उस गांधी को,
जिस की भाषा हिन्दी थी।
जिस ने जन-जन के सम्मुख
केवल, हिन्दी ही तो बोला था ॥
आज भूल गए तुम उस को,
उठो ! पुन. फिर कर लो याद।
सुनो ऐ ! दक्षिण वालो...........
तुम्हारे ही कारण है,
गूंगा हमारा राष्ट्र आज,
सोलह वर्ष के इस लम्बे अरसे में,
तुम फिर भी न आए बाज,
तुमने न सिखी अपनी भाषा।
लगी तुम पे, फिर भी देश को आशा ॥
क्यों निज पर है तुम को नाज।
"अंशु" खोल दो तुम अपना राज ॥
उठो ! सुधार में देर नहीं,
दिखाओ ! तुम भी कुछ करामात।
सुनो ! ऐ दक्षिण वालो ....
आज समूचा भारत-वासी।
बन रहा है हिन्दी-भाषी ॥
देखो ! तुम पीछे रह जाओगे।
उठो ! अन्यथा पछताओगे ॥
त्यज अंग्रेजी ! करो श्री गणेश हिन्दी का।
देखो ! माथा ठनक रहा भारत-मां का ॥
'रामेश्वरानन्द' और 'अन्नादुराई'।
पृथक् नहीं, तुम भाई-भाई ॥
अपनाओ इस हिन्दी को,
यही तुम्हारी है सगी-मात।
सुनो ! ऐ दक्षिण वालो...........

—सुदर्शन "अंशु" नई दिल्ली

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार १३ ज्येष्ठ २०२०, १९ मई १९६३ [अक २०

शिक्षा का उद्देश्य

क्या है? क्या कुछ पुस्तकों को पढ़ना या स्मरण कर लेना ही शिक्षा है, परीक्षा भवन में बैठकर आये हुए प्रश्न पत्रों के जैसे तैसे उपाय से उत्तर लिखकर उसमें उत्तीर्णता पा लेना पर्याप्त है, परीक्षा देकर किसी स्थान पर लग कर धन कमा लेना भी शिक्षा का लक्ष्य नहीं है, अपने आप को शिक्षित बनाकर चार शब्द बोलने मे चतुरता प्राप्त कर लेना या लच्छेदार भाषा में लिख लेना भी शिक्षा नहीं है। यदि शिक्षा से जीवन मे सुन्दरता नहीं आई, आचार-विचार में उच्चता न पाई एवं मानवीय गुणों के द्वारा सभ्यता का स्तर ऊंचा न हुआ तो ऐसी शिक्षा केवल किताबी शिक्षा होगी। ऐसी शिक्षा से व्यक्ति तथा सारे समाज को तनिक भी लाभ नहीं हो सकता। शिक्षा जीवन शुद्धि और विचार का ही नाम है।

अभी गत सतरह मार्च जालंधर नगर में आर्यसमाज की प्रसिद्ध व विशाल संस्था हसराज महाविद्यालय का शानदार वार्षिक पारितोषिक वितरण करने का महोत्सव मनाया गया। जिसमें शिक्षा के महान् नेता कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के वायस चांसलर प्रिंसिपल सूर्यभानु जी एम० ए० सभापति बने थे। उस समारोह में माननीय उप-कुलपति जी ने अपने गम्भीर, अनुभव भरे भाषणमें इस आवश्यक बात के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा—'शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के अन्तर निहित गुणों को उभार कर उनका विकास करने मे है। उपाधि धारी युवक युवतियों की संख्या मे वृद्धि करना नहीं। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो हमें अच्छाई से अवगत कराती हुई अच्छाई के पथ पर चलना सिखाए।...विद्यार्थी वर्ग मे अच्छाई की भावना को उत्पन्न करने का उत्तर दायित्व अध्यापक वर्ग के कन्धों पर है। आज देश को सैन्य शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। पर सैन्य शिक्षा के साथ ही साथ देश वासियों का नैतिक स्तर भी उन्नत होना चाहिए, क्योंकि इसी से देशवासी अपने साहस और संकल्प को बनाये रख सकते हैं। शिक्षा का ध्येय व्यावहारिक और प्राविधिक होना चाहिए।

शिक्षा के सम्बन्ध मे कितना सरल, स्पष्ट, सार्वजनिक, सर्वसम्मत, आवश्यक तथा अनुभवों से भरा गम्भीर प्रवचन है। आज के युग मे शिक्षा के विशाल संस्थानों मे बैठ कर पढ़ने और पढ़ाने वाले दोनों छात्र एवंम् अध्यापक वर्ग के लिए कितना उत्तम मार्ग प्रदर्शन है। जिस का सारा जीवन इसी क्षेत्र में बीता और बीत रहा है। जिस ने भारत तथा लंडन आदि पश्चिम के शिक्षा संस्थानों मे बैठ कर बहुत कुछ सीखा व सिखाया है—उन के उत्तम विचारों से कौन लाभ न उठायेगा। सरल शब्दों में कहा गया है कि शिक्षा इसी लिए प्राप्त की जाती है ताकि जीवन का नैतिक स्तर ऊंचा बने और मानव के अन्दर के गुण विकसित हो कर व्यक्ति तथा समूचे समाज के जीवन में अच्छाई पैदा कर सके। यदि ये दोनो बाते नहीं आती तो उस शिक्षा का क्या लाभ है। आज के समय शिक्षा की क्या अवस्था है। जितनी २ शिक्षा बढ़ती जाती है उतना २ जीवन स्तर गिरता जा रहा है। आज के शिक्षित समाज के आचार, विचार, उच्चार, व्यवहार को देख कर शिक्षा कितनी बदनाम हो रही है। युवक युतियों का मार्ग कौन सा बनता जा रहा है—सबके सामने है। पुरातन भारत मे शिक्षा का यही ध्येय था कि पढ़ा व्यक्ति अपने जीवन की समिधा से बुझी हुई समिधा को प्रदीप्त कर देता था। महर्षि दयानंद जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में दो समुल्लास इसी आवश्यक बात पर लिखे हैं। जब तक शिक्षा के इस ध्येय को जीवन का विशेष अग नहीं बनाया जायगा। राज्य तथा सारी संस्थाए इसी उद्देश्य का प्रचार नहीं करेंगी, क्रियात्मिक रूप से इसे लागू न करेंगी—तब तक वर्तमान शिक्षा समाज, राष्ट्र या विश्व का कदापि भला न कर सकेगी। इस ओर जितना भी शीघ्र ध्यान दिया जायेगा, उतना ही राष्ट्र का कल्याण होगा। —त्रिलोक चन्द्र

एम. जे. देसाई सैंडीज भेंट

लण्डन २१ मई—भारत के पर राष्ट्र सचिव श्री एम० जे० देसाई जो अमरीका से स्वदेश लौटते आज लण्डन पहुंचे, आज शाम ब्रिटेन के राष्ट्रकुल विभाग के मन्त्री श्री डंकन सैंडीज से भेंट कर रहे हैं।

डा. राधाकृष्णन स्वदेश लौटे

नई दिल्ली २१ मई—राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन अफगानिस्तान और ईरान की ग्यारह दिन की राजकीय यात्रा के बाद वापस राज-धानी पहुंच गए।

पालम हवाई अड्डे पर पत्रकारों से बातचीत करते हुए राष्ट्रपति ने कहा—"मेरी यात्रा बहुत ही लाभ-दायक रही और मुझे स्वदेश लौटने पर खुशी है।" हवाई अड्डे पर प्रधानमन्त्री श्री नेहरू और अन्य मंत्रियों ने उनका स्वागत किया। जैसा ही राष्ट्रपति विमान से बाहिर आए उन्हें ३१ तोपों की सलामी दी गई।

अमरीका से ४ करोड़ रुपये ऋण मिलेगा

दिल्ली मे हस्ताक्षर सम्पन्न

नई दिल्ली २१ मई—भारत और अमरीका की सरकारों में आज एक समझौता हुआ जिस के अधीन आंध्र प्रदेश मे स्थित रामगुन्दम थर्मल पावर स्टेशन की क्षमता के विस्तार के लिए भारत को चार करोड़ रुपया ऋण मिलेगा। इस ऋण से उक्त केन्द्र की क्षमता में विस्तार के लिए विदेशी-मुद्रा का खर्च वहन होगा।

इस समझौते पर अमरीकी राजदूत प्रो० जे० के० गालब्रेथ और वित्त मत्रालय के सयुक्त सचिव श्री के० एस० सुन्दरराजन ने हस्ताक्षर किए।

इस अवसर पर गालब्रेथ ने घोषणा की कि परियोजना के रुपये मूल्य के लिए अमरीका उपरोक्त ऋण के अतिरिक्त ३.७ करोड़ रुपया और देगा।

आर्य समाज लोहगढ़ अमृतसर

१९-५-६३ को आर्य समाज लोहगढ़ के साप्ताहिक सत्सङ्ग में श्री डा० मेहरचन्द महाजन जी के युवक दामाद श्री देवराज जी की अकाल मृत्यु पर शोक और उनके दुःखी परिवार के साथ सहानुभूति का का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

भवदीय—पिण्डीदास ज्ञानी

सिद्धांत चर्चा

मानव आयु समीक्षा

(ले०—धर्मव्रत जी वेद वाचस्पति गुरुकुल झज्जर)

'मनुष्य की आयु कितनी' इस विषय में 'आर्योदय' के अङ्कों मे मेरा विस्तृत विवेचनात्मक लेख प्रकाशित हुवा है। उसमें मैंने विशेषतया किसी व्यक्ति पर आक्षेप नहीं किया, केवल ऋषि प्रतिपादित सिद्धान्त का ही निरूपण किया है। यहां पर अब पुनः किंचित मानव आयु की समीक्षा करता हूं।

मनुष्य की आयु का जहां तक सम्बन्ध है और वेद, शास्त्र, तथा ऋषि सम्मत सिद्धान्त है वह यह है कि मनुष्य अधिक से अधिक ४०० (चार सौ) वर्ष तक जी सकता है और न्यून से न्यून शत वर्ष तक (शतायुर्वै पुरुष) ॥

कई कई हजार वर्षों की, लाखों वर्षों की तथा हजार वर्ष की मानव आयु मानना नितान्त ही असंगत और असम्भव सिद्धान्त है। यह हमें शोक है कि कई आर्य विद्वान् भी विज्ञान की आड़ लेकर इस प्रकार के असम्भव सिद्धांतों का प्रचार करते हैं। क्या यही उनका आर्यत्व है कि वे अपने ऋषि के और वेद के सिद्धांत का खण्डन करें। वास्तव में आर्य वही है जो सिद्धांत जैसा हो उसको वैसा ही माने, वैसा ही उसका मनन करे तथा आचरण करे। यह नहीं कि वह अपने स्वार्थ में आकर, अपने स्वार्थ को देखकर सत्य से अन्यथा आचरण कर लेवे ॥

मैंने विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात किया है कि श्री पंडित भगवद्दत्त जी बी० ए० वैदिक रिसर्चस्कालर मेरे पूर्व प्रकाशित लेख पर आपत्ति उठाते हैं और कहते हैं कि यह इन्होंने अशुद्ध लिखा है। साथ में उनकी यह भी घोषणा है कि ऋषि कई-कई हजारों वर्ष तक जीते थे। और इस विषय में शास्त्रार्थ करने के लिये चैलेञ्ज देते हैं। मैं श्री पण्डित जी से सविनय अनुरोध करूंगा कि वे अपने विचार, अपने पक्षपुष्टि के लिये आर्य जनता के सन्मुख लेख के रूप में उपस्थित करें। उन में जो कोई सैद्धान्तिक विरोध होगा उस का मैं सहर्ष उत्तर दूंगा। ऋषि के तर्कांशु के सामने और वेदमानु व प्रमाणों के सामने अल्पमति मानव के प्रमाण कार्य नहीं कर सकते हैं। इस लिये कृपया सावधानी से लिखें, अन्यथा आर्य जनता में विरुद्ध सिद्धान्त का प्रचार होगा।

पूर्व के लेख में ऋषि के मानव आयु विषयक पर्याप्त प्रमाण उपस्थित किये थे। अब एक प्रमाण अन्य उपस्थित करता हू। ऋषि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश चतुर्दश-समुल्लास में यवनों के कुरान ग्रन्थ का समीक्षण करते हुए १२२ वे प्रकरण में लिखते हैं—'.. ...और अवश्य भेजा हमने नूह को तर्फ कौम उसके कि बस रहा बीच उन के हजार वर्ष परन्तु पचास वर्ष कम (मं०४।सि०२०। सू०२९। आ० ७।१३)॥ समीक्षा .....और प्रथम मनुष्यों की हजार वर्ष की आयु होता थी तो अब क्यों नहीं होती? इस लिये यह बात ठीक नहीं॥' यहां पर ऋषि ने स्पष्ट ही यह लिख दिया है कि यदि हजार वर्ष की मानव आयु पहले होती थी तो इस समय मानव की हजार वर्ष आयु क्यों नहीं होती? कृपया पण्डित जी इसका उत्तर दें। आज का वातावरण बिगड़ गया है अत. मानव शिथिल हो गया, स्वास्थ्य बिगड़ गया है, आहार विहार की कमी और खराबी के कारण मनुष्य अब इतने वर्ष नहीं जी सकता है, इस प्रकार के बहाने अपने आप को बचाने के लिये करने की आवश्यकता नहीं है। यदि वेद का और ऋषि का कोई प्रमाण हो तो उपस्थित करे।

पण्डित जी यह न समझ लवे कि विशेषतया यह मेरे पर ही आक्षेप है। अ य भी बहुत से आर्य विद्वान हैं। जो इस अन्धकार के अन्दर निमग्न हैं और अन्यथा प्रचार करते है। मैं उनका यहां पर नाम उपस्थित नहीं करना चाहता। यदि कभी आवश्यकता हुई तो उनका नाम भी अवश्य ले दिया जायेगा। इस प्रकार के उल्टे प्रचार करना आर्य सिद्धांतों पर सीधी करारी चोट है। ऋषि और वेद के सिद्धांत का हनन करना है।

आचार्य दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वादश-समुल्लास मे जैनियों के ग्रन्थ रत्नसार भाग १, पृष्ठ १३६-१६७ का समीक्षा करते हुए लिखा है—" इन्हीं जैनियों के गपोड़े लेकर जो पुराणियों ने एक लाख, दश सहस्र, और एक सहस्र वर्ष आयु का लिखा सो भी सम्भव नहीं हो सकता तो जैनियों का कथन सम्भव कैसे हो सकता है।" इस प्रकार से आचार्य महर्षि दयानन्द ने इस विषय में अपना सिद्धान्त बना कर मार्ग प्रशस्त कर दिया है। उनके सम्भव प्रमाण के सामने चाहे ऋषि हो चाहे अनृषि हो, कोई भी इतनी आयु का ग्रहण नहीं किया जा सकता। यदि ऋषि चार सौ वर्ष से अधिक भी जी सकते थे तो ऋषि दयानन्द और भी अधिक स्पष्ट कर देते कि इतनी आयु मनुष्य ही जीता है, ऋषि तो इससे भी अधिक जी सकते हैं। किन्तु उन्होंने चार-सौ वर्ष से अधिक जीने को असम्भव मानकर सबका इससे अधिक जीना निषिद्ध कर दिया, खण्डित कर दिया।

ऋषि दयानन्द ने सत्यासत्य की पांच परीक्षाओं में से एक परीक्षा में आठ प्रमाण भी स्वीकार किए हैं उनसे जो निश्चित है वह सत्य है अन्य असत्य है। उन आठ प्रमाणों में एक सम्भव प्रमाण भी है। उस सम्भव प्रमाण के द्वारा भी इतना जीना सिद्ध नहीं होता। अतः पांच-पांच, छः-छः, सात-सात हजार वर्ष ऋषियों का जीना सम्भव नहीं और युक्ति सयुक्त भी नहीं है।

यदि यह आपके मत में मान लिया जाये कि ऋषि दयानन्द इस बात को कि ऋषि कई हजारों वर्ष जी सकते हैं, लिखना भूल गये या उनको यह लिखना स्मरण नहीं रहा तो क्या आपके मन में ऋषि दयानन्द मूर्ख थे? यदि नहीं, तो उनके सिद्धांत के स्वीकार करने में हिचकिचाहट क्यों?

अन्त में पण्डितजी से पुनः मैं निवेदन करना चाहता हूं कि वे अपने मत की पुष्टि में वेद का और ऋषि का कोई प्रमाण हो तो उपस्थित करें। हम पुराणों के गपोड़ों को नहीं सुनना चाहते। उनको कोसों दूर रखिए। 'सारं ततो ग्राह्यमपास्य फल्गु' के अनुसार सार रूप में अपना मत प्रकाशित कीजिये। जिससे समस्त आर्यजगत् और विद्वन्मण्डल आपके इस नवीन विज्ञान से विदित हो जाये तथा वास्तविक स्वरूप को समझ जाये।

इस लेख में यदि कोई कटु शब्द हो तो मुझे क्षमा करें। केवल मेरा भाव यही है कि आप अपने विचार को वेद और ऋषि के प्रमाणों से सिद्ध करके दिखायें, तब आपका विचार मन्तव्य हो सकता है, अन्यथा आपका विचार मन्तव्य कोटि में नहीं आ सकेगा। आपका विचार केवल उषर भूमि में बोये बीज के समान निष्फल ही रहेगा। 'अजर्य नोऽस्तु संगतम्'॥

आर्य क्या से क्या हो गया

(पृष्ठ ६ का शेष)

तक अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा जारी रखने का विधेयक स्वीकार न करती। सरकार भी हमारी निर्बलताओं से अभिज्ञ है।

हमें जेल में डालने और हमारे मुंह पर ताला लगाने में कुशल है। हमारे देखते २ पंजाबी बोली और रोमन लिपि में तार लेने का प्रस्ताव हो रहा है। हम कहते हैं कि हिन्दू बहुमत होते हुए भी पिट रहे हैं। उनके मार खाने का कारण यह है कि जो आर्यसमाज आर्य (हिन्दू) जाति को अपमानित होने से बचाता था वह स्वयं अपयश का भागी बन रहा है। जिस आर्यसमाज ने हिन्दुओं का जनाज़ा उठने नहीं दिया वह स्वयं मरणासन्न है। आर्यसमाज जीवित रहेगा तो हिन्दू जाति जिन्दा रहेगी अन्यथा उसकी भी 'बोलो ही राम' समझो। आर्यसमाज के कर्णधारों को इसकी रक्षा के उपायों पर विचार की सर्वप्रथम आवश्यकता है। सम्मेलनों के आयोजन द्वारा उन में स्वीकृत प्रस्तावों को मूर्त रूप दिया जाए न कि फाइल हो जायें। आज जब कि संसार में भ्रष्टाचार अपनी पराकाष्ठा तक पहुंच चुका है और नये मत सिर उठा रहे हैं (पहिले बल पकड़ रहे हैं) राष्ट्र का पुरोहित आर्यसमाज निद्रा भगवती की गोद में पड़ा रहे यह शोभा नहीं देता।

सरकार हमारी सहायक नहीं, विद्वान हमारे हां न्यून हैं और त्यागी तपस्वी संन्यासी न होने के बराबर है। वैतनिक उपदेशक महीनों अपने परिवारों से अलग रह कर और यात्रा के कष्ट उठाकर यथाशक्ति प्रचार कर रहे हैं पर वे अपर्याप्त हैं। समाधिकारियों की आज्ञानुसार शीतोष्ण सहते हुए रोगी होने की दशा में भी प्रचार करने पर जब उन्हें धन और मान द्वारा प्रोत्साहन नहीं मिलता तो वे निरुत्साहित होकर अपनी सन्तानों को प्रचारक बनाने का विचार तक नहीं रखते। कोई धर्म देवियों में फैले बिना नहीं पनपता पर देवियों में प्रचार करने के लिये हमारे पास उपदेशिकाएं ही कहां हैं? फल स्वरूप हमारे घरों में वही रीतियां प्रचलित हैं जो पौराणिकों के हां हैं।

हम ने बहुत बातें बनायीं। अब करने का समय है। आर्य भाईयो! सोचो, समझो और अपना प्रारम्भिक काल स्मरण करो। हम क्या थे और क्या हो गये? यही अचम्भा है। जो बीत चुकी। सो बीत चुकी। अब हमें सावधान हो जाना चाहिये। पूरे बल के साथ आर्यसमाज रूपी नैया को पार लगा कर दम लेना होगा। पिछली भूलों के प्रायश्चित का यही एक ढङ्ग है। यदि हम चाहें तो अब भी हमारी बिगड़ी बन सकती है और हमारे मतभेद समाप्त होकर हम संगठित हो सकते हैं।

आर्य समाज पुलबंगश देहली—६

जब से पं० गणेशदत्त जी समाज में पधारे हैं समाज की हर प्रकार से उन्नति हो रही है संस्कारों की आमदनी बढ़ रही है पिछले महीने चार विवाह संस्कार एक जन्म दिवस, एक नामकरण, एक गृह प्रवेश संस्कार और कई यज्ञ कराए। सामवेद का यज्ञ जमना घाट पर कराया था।

अब यजुर्वेद यज्ञ लक्ष्मी बाई नगर में कराया है पं० जी ने हजारों पोस्टर मुफ्त वितरण किए हैं आप को प्रचार की बड़ी लग्न है।

राज कुमार प्रधान
आर्य समाज पुलबंगश

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा

कन्याओं का नया प्रवेश

आर्य कन्या महाविद्यालय, बड़ौदा का नवीन सत्र ता० १३ जून से आरम्भ होता है। कन्याओं को प्रविष्ट कराने के लिये, आचार्या आर्यकन्या महाविद्यालय, कारेली बाग, बड़ौदा को लिख कर, प्रवेश पत्र मंगवा कर ता० १० जून से पूर्व भर कर भज दें। नवीन कन्याओं का, ता० १६ से ३० जून तक प्रवेश किया जाएगा।

संस्था का सैकेन्डरी विभाग सरकार द्वारा मान्य है, एस एस सी. तथा स्नातिका दोनों का अभ्यास क्रम रखा गया है। प्रवेश शुल्क रु० ६०/- है, मासिक फीस रु. ४५/- है।

निवेदिका—
यशोदाकुमारी आचार्या

आर्यसमाज नया बांस देहली का चुनाव

प्रधान—श्री सत्यदेव जी विद्यालंकार, उपप्रधान—श्री— बनवारी लाल जी शर्मा, श्री मनोहर जी विद्यालंकार, मन्त्री—श्री धर्मपाल जी आर्य, उपमन्त्री—श्री फूलचन्द जी जिन्दल, श्री सुरेन्द्र कुमार हिन्दी कोषाध्यक्ष—श्री रामजी लाल जी गर्ग, पुस्तकाध्यक्ष—श्री प्राणनाथ जी।

भवदीय
सुरेन्द्र कुमार हिन्दी

आर्यसमाज बाढ़ (बिहार) का चुनाव

श्री महावीर दास जी प्रधान, श्री देवेन्द्र कुमार जी उपप्रधान, श्री रामलखन जी आर्य प्रधान मन्त्री, श्री शिवनंदन जी उपमन्त्री, चन्द्रदीप जी उपमंत्री, श्री जयदेव जी कोषाध्यक्ष, श्री लक्ष्मीकांत जी लेखा निरीक्षण व पुस्तकाध्यक्ष।

—चन्द्रदीप उपमंत्री समाज

आर्यसमाज रन्दौली में वेद प्रचार

रन्दौली (जिला करनाल) में ५-६ अप्रैल को वेद प्रचार कार्य सम्पन्न हुआ जिस में सभा की मंडली श्री रामकरण जी की पधारी दो दिन प्रचार होता रहा जनता-मंडली के भजनों से अति प्रभावित हुई। ३३/- सभा को वेदप्रचार प्राप्त हुआ। २—एक शोक प्रस्ताव में पूज्य स्व० ईश्वर दास जी के आकस्मिक निधन पर गहरा शोक प्रकट करते हुए उनकी आत्मा व परिवार को सद्गति व धैर्य देने की प्रभु से प्रार्थना की गई।

मंगतराय आर्य,
मन्त्री आर्यसमाज

आर्यसमाज कालिज विभाग फिरोजपुर का चुनाव

प्रधान—श्री मेहरचन्द जी अग्रवाल, उप प्रधान—श्री चौधरी अर्जुनदास जी, श्री एल० डी० कालड़ा, मन्त्री—श्री ब्रह्मदत्त जी, उपमन्त्री—श्री ओम्प्रकाश जी बहल, श्री लक्ष्मीनारायण शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री लखपत राय जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री मोहनलाल जी गुलाटी। श्री जगदीशचन्द्र जी, श्री मुन्शी रामजीलाल जी और श्री रामनाथ जी बुकसेलर अन्तरंग सभा के सदस्य मनोनीत किए गए।

श्री मेहरचन्द जी कटारिया को आडीटर नियत किया गया।

—ब्रह्मदत्त शर्मा मन्त्री

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

आर्यसमाज क्या से क्या हो गया

[ले०—श्री भक्तराम शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

आर्यसमाज तू बड़ा भाग्यशाली है जो तुझे परम हंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामी जैसा विलक्षण शक्तिशाली प्रवर्त्तक मिला। उस अद्भुत धर्म प्रचारक ने संसार भर में खलबली मचा दी। मतवादियों के होश उड़ गये। प्राणी ढीले पड़ गये, किरानी घबरा गये और कुरानियों की आंखें खुल गयीं। पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली द्वारा लालित व पालित लोग चकित हुए। बड़े बड़े दुःखी होकर यह कहने पर विवश हो गये—'यह बला कहां से आ गयी?' आर्यसमाज की स्थापना के पश्चात स्वामी जी महाराज के जीवन काल में और मृत्यु के अनन्तर मुट्ठी भर आर्यसमाजियों ने अल्प स्वल्प साधनों द्वारा आशातीत कार्य किया। उनके आश्चर्यजनक कार्य की तुलना नहीं की जा सकती।

प्रारम्भिक काल में आर्यसमाजी ही 'आर्य' कहलाने के अधिकारी थे और आर्य बनने का वही समय था। उत्साह! उत्साह!! उत्साह!!! जिधर दृष्टि डालो उत्साह—जहां उत्सव व संस्कार का पता चल जाता है वहां आर्य भाई दौड़े २ जाते हैं, कहीं पारिवारिक हवन यज्ञ हो रहे हैं, कहीं सेवा संघों द्वारा जनता में सेवा कार्य हो रहा है, कहीं आर्यसमाजी होने के कारण सिर पर पड़े विपत्तियों के पहाड़ों का हंसते खेलते सहन हो रहा है और कहीं एक आर्य विपद् ग्रस्त होता है तो समस्त आर्य उसके कष्ट को अपना कष्ट समझते हुए सगेपन का प्रमाण दे रहे हैं। सारांश यह कि तब के आर्यों ने अपूर्व उत्साह। अनुपम साहस और अत्यन्त सहिष्णुता का परिचय दिया। स्वयं सजग थे और संसार को जगा दिया।

वैदिक धर्म के प्रचार के लिये आवश्यक साधन न्यून होने पर भी आर्य समाज ने उन्नति करने में कमाल कर दिखाया। दूसरा कोई समाज उन परिस्थितियों में जीवित ही नहीं रह सकता था। अपनों के घोर विरोध और राज्य के प्रकोप के कारण इसका जीवित रहना ही गनीमत था पर इस ने तो विश्व भर में अपनी धाक जमादी। विचित्र हल चल मचा दी दुनिया दङ्ग रह गयी। परन्तु जब हम आर्य समाज के मुख्योद्देश्य 'संसार का उपकार करना' और उसके घोष 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का विचार करते हैं तो हमारा काम न' के बराबर जान पड़ता है और यही कहते बनता है कि अभी तक संसार का कल्याण करने और उसे आर्य (श्रेष्ठ) बनाने के लिये बड़े जोर से धक्का देने की आवश्यकता है। दिल्ली दूर है। अभी बहुत दूर है।

संसार में वेद प्रचार तो दूर की बात है। मैं अपने ज्येष्ठ पुत्र के विवाह पर केरल गया। वहां के मुख्य नगरों में भी आर्य समाजें नहीं हैं। शिक्षित व्यक्तियों तक को 'दयानन्द और आर्य समाज' शब्दों का परिचय नहीं। हमारे सिद्धांत अटल और सार्वभौम हैं। हमारे उद्देश्य पवित्र हैं। यह ठीक पर केवल सिद्धान्तों और नियमों की श्रेष्ठता से ही किसी समाज की उन्नति नहीं हो जाती। दूरदर्शी महर्षि ने अपनी पुस्तक, धन, यन्त्रालय आदि समस्त वस्तुओं का अधिकार देने निमित्त तेईस सज्जन आर्य पुरुषों की 'परोपकारिणी' नाम से जिस सभा का निर्माण किया था उसके तीसरे नियम में लिखा था—'वेदोक्त' धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश देशांतरों द्वीप द्वीपांतरों में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य को त्याग के लिये। उस नियम का पालन नहीं हुआ।

अन्य देशों में जो थोड़े बहुत आर्य विद्वान् प्रचारार्थ गये वे प्रवासी भारतीयों में ही चक्कर काटते रहे। विदेशियों पर तो वही प्रचारक सिक्का जमा सकते हैं। जो विदेशों की भाषाओं के पूर्ण ज्ञाता और निपुण वक्ता हों। उनके अभाव में ही वैदिक धर्म के सार्वभौम होने के योग्य होने पर भी निकट भविष्य में इसका पृथिवी भर में प्रचार होना असम्भव दिखाई देता है।

(१) त्यागी प्रचारकों की अधिकता (२) विद्वानों का बाहुल्य और (३) राजाओं की सहायता—इन तीन साधनों के प्रतिकूल होने से कोई धर्म कृतकार्य नहीं हो सकता। आर्य समाज की दशा में भी यही हुआ। आर्यसमाज में त्यागी उपदेशकों का अभाव-सा है। विद्वान् अंगुलियों पर गिने जा सकते हैं। और हमारी धर्मनिरपेक्ष सरकार सहायता प्राप्ति का प्रश्न ही नहीं उठती। जब राजे थे तो भी किसी से सहायता नहीं मिलती थी अस्तु!

यह चमत्कार समझना चाहिए कि बूढ़े पहलवानों के तप और त्याग के प्रताप से आज संसार आर्य सिद्धांतों को स्वीकार करता जाता है। महर्षि को सुधारक मानने में भी अपना गौरव समझता है। आर्यसमाज के प्रभावशाली प्रचारकों के व्याख्यान सुनने के लिए जनता बड़ी उत्सुक रहती है। आर्य कालेजों व स्कूलों तथा आर्यकन्या महा विद्यालयों व विद्यालयों को लोग उदारता पूर्वक दान भी देते हैं यह समझ कर कि यह समाज शिक्षा की दिशा में अच्छा काम कर रहा है पर ये सब बातें किसी समाज की उन्नति की व्यापक नहीं। एक समाज की प्रगति उसके सदस्यों के आचार-विचार-व्यवहार द्वारा जानी जाती है। जब हम आर्यसमाजी स्वयं ईर्ष्याद्वेष, पद लोलुप्ता, दल बन्दी, फूट, स्वार्थ परता, पाखंड, ढोंग इत्यादि रोगों द्वारा ग्रस्त हैं तो इन रोगों के रोगियों को स्वस्थ करने में कैसे समर्थ हो सकते हैं।

केवल वेद और महाप के नाम रूपी छू मन्त्र से तो हम जगत् को आर्य बनाने से रहे, वैदिक धर्म, ऋषि दयानन्द, भारत माता और गौमाता के जय घोषों तथा 'हिन्दी भाषा अमर रहे' के महानाद से लोगों को आकृष्ट कर लोगे क्या? दयानन्दानुयायी ८७ वर्ष में ही थक कर चूर हो गये। दूसरों को जगाने वाला स्वयं नींद के खुराटे लेने लगा और विश्व के प्रहरी होने का दम भरने वाला समाज अपने लिए पहरेदार की खोज में है। शोक! आर्यसमाज क्या से क्या हो गया। अब भी समय है कि हम सम्भल जाएं माना कि हम निर्बल होते जा रहे हैं। वेद का वेदी का जैसे आज अनादर हो रहा है वैसे मैंने तो कभी नहीं देखा। अधिकारी वर्ग जिस किसी को भी उसका चाव पूरा करने और राजनैतिक लाभ उठाने के लिये वेदी का उपयोग करने की आज्ञा दे देता है।

आज आर्यसमाज की आवाज में कोई प्रभाव नहीं होता तो पंजाबी क्षेत्र में हिन्दी को पंजाबी की दासी न बना दिया जाता, पंजाब सरकार राज्य कर्मचारियों के 'नमस्ते' कहने पर प्रतिबन्ध न लगा देती, राष्ट्रीयता एकता स्थापनार्थ राज्य ने जिन धर्म संस्थापकों का जन्म दिन मनाने का निश्चय किया उनकी सूची में मुख्य एकता स्थापक महर्षि दयानन्द का नाम अंकित करने की भूल न करता, सरकार को सहशिक्षा प्रचलित करने का साहस न होता, स्कूलों में बच्चों को अंडे खिलाने की योजना तैयार न होती और भारत सरकार सन १९६५ के पश्चात अनिश्चित समय

(शेष पृष्ठ ५ पर)

आनंद की ओर

(ले०—कविराज श्री रामसिंह जी वैद्यवाचस्पति)

(गतांक से आगे)

और कमज़ोर है तो वह भी हमें हमारे लक्ष्य तक पहुंचाने मे असमथ रहेगा कहीं रास्ते में ही थक कर बैठ जावेगा और हमारी यात्रा अधूरी रह जायेगी।

अतः यदि जावन में सफलता चाहते हो, सुख, शांति और आनद की इच्छा आपको है तो शरीर और मन को बलवान बनाओ और मन तथा इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखो और उसके लिए प्राणायाम का अभ्यास नित्य प्रति प्रातः सायं सूर्योदय और अस्त के समय कम से कम ३ वार अपनी सुविधा तथा शक्ति अनुसार २१ अंक तक करो।

प्राणायाम की विधि

प्रात. तथा सायंकाल सूर्योदय तथा अस्त के समय एकांत और शुद्ध स्थान पर सिद्धासन से बैठ जावें। सिर, कमर और गर्दन को एक सीध में रखें। दोनों हाथों को दोनों घुटनों पर रखें और पूर्ण शांत भाव से बैठ जावें। आंखें बद रखे। ध्यान दोनों आंख के बीच का जो स्थान है जिसे त्रिकुटी कहते हैं वहां रखें और धीरे-धीरे वायु को नाक के द्वारा बाहर निकालें और जितनी देर सुविधा पूर्वक वायु को बाहर रोक सकें रोक रखें फिर जब सांस लिये बिना न रहा जा सके तो धीरे-धीरे वायु को भीतर भर लें और भीतर भर कर भीतर ही रोक दें और जितनी देर आसानी से रोके रख सकें रोके रखें। जब सांस लिये बिना न रहा जावे फिर धीरे-धीरे नाक के रास्ते ही वायु को बाहर निकाल दें। यह एक प्राणायाम पूरा हुआ। इस प्रकार कम से कम तीन बार करें और फिर अपनी शक्ति और सुविधा के अनुसार धीरे-धीरे बढ़ा कर २१ तक ले जा सकते हैं।

यह प्राणायाम का अभ्यास शरीर को स्वस्थ बनाने और चित्त वृत्तियों का निरोध करके अपनी अन्तरात्मा में विद्यमान उस सच्चिदानन्द स्वरूप, शान्ति, शिव सुन्दर परम पिता आनन्द स्रोत उस भगवान के द्वार पर ले जाकर खड़ा कर देगा। इसके भीतर प्रवेश करने का साधन उपासना है। जिसकी विधि इस प्रकार है।

उपासना की विधि

योगीराज कृष्ण जी महाराज ने उपासना की विधि गीता में इस प्रकार वर्णन की है।

शुचौ देशे प्रतिष्टाप्य स्थिरमासनमात्मनः नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्। तत्रैकाग्र मन. कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रिय., उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्न-चलं स्थिर.। संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन॥

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थित.। मन· संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीन् मत्पर.॥

गीता अध्याय ६ श्लोक ९

श्लोक ११ से १३ तक

जैसा कि प्राणायाम के प्रकरण में बताया गया है कि शुद्ध स्थान पर मध्यम स्थिति के आसन पर बैठ कर (जो आसन न बहुत ऊंचा हो न बहुत नीचा हो) मन को एकाग्र करके चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को नियन्त्रण में लाकर आत्मा की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करें। शरीर सिर और गर्दन को एक सीध में रख कर इधर उधर सब दिशाओं से ध्यान को हटा कर नासिकाग्र अथवा भृकुटि में ध्यान करें।

परम पिता परमात्मा की अपार कृपा से अभ्यासी आत्मज्ञानी पवित्र आत्माओं के सम्पर्क में आकर जो विधि ज्ञात हुई और जिस पर चल कर प्रभु कृपा से चित्त शांत और स्थिर हुआ जीवन में अपूर्व सुख शान्ति और आनन्द की अनुभूति हुई अपने अन्य मानव बन्धुओं के कल्याणार्थ उसका वर्णन किया जाता है—

जैसे किसी नदी के किनारे बैठ कर उस में बहते हुए पानी की तरंगों को देखते देखते देखने वाला मस्त हो जाया करता है इसी प्रकार इस जीवन रूपी नदी में प्राण रूपी जल को बहता हुआ देखते देखते इस मे मस्त होने का अभ्यास और इस श्वास प्रश्वास रूपी तरंगों को देखते देखते उनके साथ प्रभु के प्यारे ओम नाम का सम्बन्ध जोड़िये।

इसके जोड़ने की विधि यह है कि जैसे लकड़ी के दो टुकड़ों को जोड़ने के लिए शिल्पी लोग उसके दोनों सिरों को आधा काट कर सरेश लगा कर जोड़ देते हैं इसी प्रकार श्वास और ओम् का सम्बन्ध जोड़ना है। श्वास के दो भाग कर ले। जैसे श्वास और प्रश्वास जब हम सांस अन्दर ले जाते हैं तो यह श्वास कहलाता है और जब इसे बाहर निकालते हैं तो यह प्रश्वास कहलाता है। इस प्रकार इन दोनों के मेल से एक पूर्ण श्वास बनता है।

इसी प्रकार ओम् के दो भाग कर ले। जैसे ओ अम्।

जब श्वास बाहर की ओर ले जावें तो मन ही मन में ओ का उच्चारण करें और जब श्वास बाहर निकालें तो अम का उच्चारण करें।

यह सारी प्रक्रिया मानसिक रूप से होगी। वाणी बंद रहेगी। आंख भी बंद होंगी शांत और स्थिर भाव से उपरोक्त प्राणायाम की विधि से बैठ कर ही इसका अभ्यास किया जायेगा। प्राणायाम और उपासना में यह अंतर है कि प्राणायाम उपासना की आरम्भिक तैयारी है। उसमें प्राण को बाहर और फिर भीतर रोका गया था किन्तु उपासना मे प्राण को रोका नहीं जावेगा। प्राकृतिक रूप से जैसे वह चलता है उसे चलने दें। बस इतना कार्य विशेष करना है कि उस चलते चलते प्राण को मानसिक रूप से लिखना आरम्भ कर दें और ऊपर बताई विधि के अनुसार परम-पिता के प्यारे ओम नाम का जाप मानसिक रूप से शांत और स्थिर भाव से मन ही मन मे करते जावें। उसका निरन्तर अभ्यास करते हुए यह ध्यान बड़ी सावधानी से रखना है कि बाहर का कोई भी विचार मन में न आने पावे। यदि कोई विचार आवे भी तो अपनी मानसिक शक्ति से उसे बाहर निकाल दे और उस विचार को यह कहें कि मैं इस समय अपनी माता की गोदी में जा रहा हूं अभी यहां से चले जाओ।

जब आप निरन्तर यह अभ्यास प्रातः सायं कम से कम आध-आध घंटा लगा कर निरन्तर करते जायेंगे तो आपके मन को परम पिता परमात्मा के आनन्द रस की अनुभूति भीतर ही भीतर होने लगेगी और ऐसी शान्ति तथा आनन्द की अनुभूति होने लगेगी जो वाणी से वर्णन नहीं की जा सकती। वह तो केवल अनुभव का विषय है। जैसे अभ्यासी स्वयं कुछ समय के अभ्यास के पश्चात अनुभव कर सकता है।

यह है वह स्थिति जिसको प्राप्त करके अन्तरात्मा आनन्द विभोर हो उठती है और फिर बाहर के विषय इस मन और इन्द्रियों को विष रूप प्रतीत होने लगते हैं।

(क्रमशः)

रजिस्टर्ड नं० पी० १२१

प्रादेशिक सभा

नगर करनाल—१६

हुआ जिस में श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, श्री राजपाल मदनमोहन जी पधारे।

भीम नगर गुडगावां—१३ से २० मई तक भीम नगर का जलसा सम्पन्न हुआ, पं. त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री श्री राजपाल मदनमोहन जी मंडली पधारी।

आ. स. नहान—२१ से २४ मई को यज्ञ सम्पन्न हो रहा है जिस में पं. त्रिलोकचन्द्र जी, श्री राजपाल जी की चिमटा मंडली पधार रही है।

आर्य समाज गन्नौर—३० से २ जून तक उत्सव सम्पन्न हो रहा है जिस में त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री श्री राजपाल मदनमोहन जी की पधार रहे है।

१२ मई को फतेहाबाद, १५ से १७ मई पाठनकोट प्रचार १८ से १६ नूरपुर विवाह २४ से २ जून गांधी नगर दिल्ली कथा, ५ से १५ जून तक कथा श्री ओम प्रकाश जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज लौरस रोड अमृतसर—१३ से १६ मई तक लौरस रोड में कथा सम्पन्न हुई श्री पं. खुशी राम जी शर्मा श्री ताराचन्द्र पधारे २१ से २६ धारीवाल। २८ से २ जून जम्मू।

आर्य समाज धारीवाल—२१ से २६ जून तक कथा सम्पन्न हो रही हैं। २८ २ जून जम्मू समाज में पं. खुशीराम जी शर्मा व ताराचन्द जी पधार रहे हैं।

आर्य समाज गुरदासपुर—में २५ से २ जून तक प्रचार कार्य सम्पन्न हो रहा है श्री ताराचंद जो पधार रहे हैं।

आर्य समाज मुकेरियां—१७ से १६ मई तक उत्सव सम्पन्न हुआ इस अवसर पर पं. चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी, श्री हजारी लाल जी पधारे

सूचना—कोटली आर्य समाज के मंदिर का उद्घाटन व यज्ञ सम्पन्न हो रहा है। पं. खुशी राम जी व हजारी लाल जी पधार रहे हैं।

मुकेरियां का सफल महोत्सव

१७-१८-१६ मई को बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ अपनी सभा की ओर से पं. चन्द्रसेन आर्य हितैषी तथा श्री हजारीलाल जी भजनोपदेशक पधारे। जनता बड़ी प्रभावित हुई १८-५-६३ का रात्रा को यश जी मालिक मिलाप की प्रधानता में राष्ट्र रक्षा सम्मेलन हुआ हाजरी काफी थी। श्री पं. चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी महात्मा देवी चन्द्र जी तथा श्री यश जी के प्रभाव शाली व्याख्यान हुए उत्सव में सभा के माननीय प्रधान प्रि: रला राम जी का भी भाषण हुआ समाज के नए पुराने अधिकारियों के सहयोग से ये उत्सव सफल हुआ।

भवदीय
केवलकृष्ण
मन्त्री आर्य समाज
मुकेरियां

कहां ढूंढूं ?

हे इष्ट ! हे आत्मा !!
तुझे मैं ढूंढू कहां ?

ढूंढा तुझे मैंने धूल में,
इंगित किया प्रति अवशेष में
मैं तो अर्भक हूं नादान,
तुम तो अशठ हो महान्।

करू क्या द्रोही बतला,
क्यों नहीं मुंह खोलता ?

छेना में ढूंढू आनन्द हुआ
अपनी में खोजू बद्ध हुआ,
क्यों बने तुम इतने विदूर ?
चाहूं केवल पावों की धूर।

हे परम प्रिय, पूज्य बतला,
तुझे मैं ढूंढू कहां ?

—अरुण सरीन

बृहदारण्यकोपनिषद् का सार

(पृष्ठ २ का शेष)

चौथे ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य संवाद में ब्रह्म व आत्मा की मीमांसा की गई है। आत्मा का रूप मनो-वैज्ञानिक आधार पर स्थूल-रूप में अहं तत्व (Egoism) के इर्द-गिर्द रहता है यहां से दार्शनिक उड़ान लेकर उस आत्मा को मुख्य एवं सार-भूत तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है आत्मा सारे व्यापारों का सृजन करता है आत्मा के ज्ञान से सारे व्यापारों का, पदार्थों का ग्रहण हो जाता है। इस प्रकार अन्य व्यापार एवं पदार्थ आत्मा के अन्तर्भूत हो जाते हैं तथा आत्मा से भिन्न अन्य पदार्थ की सत्ता नहीं रहती तथा द्वैत-भाव समाप्त हो जाता है।

पांचवें ब्राह्मण में मधु-दर्शन दिया है। ऋषि जो इस दर्शन-तत्व को जानने वाला है प्रकृति के भिन्न २ पदार्थों को लेता है और उसे थोड़ी देर के लिए सार वत्व के रूप में ग्रहण करता है। उसमें मूल-तत्व की खोज करके मूल-तत्व के प्रकाशमय, आनन्दमय, तेजोमय, अमृतमय सब व्यापारों का कर्ता मूल-तत्व को बताता हुआ आत्मा का प्रतिपादन करता है। यह आत्मा वास्तव में सब प्राणियों का मधु है और सारे प्राणी इसके मधु हैं रथ-नाभी की तरह सारे प्राणी इसमें समर्पित हैं। यह मधु-विद्या का रहस्य है जिसका वेदादि ग्रंथों में संकेत मिला है।

आवश्यकता है

आर्य समाज कालेज विभाग फिरोजपुर शहर को एक योग्य पुरोहित की आवश्यकता है। केवल विवाहित और ३५ वर्ष से ऊपर की आयु के सज्जन ही प्रार्थना पत्र भेजें। न्यूनतम वेतन और योग्यता के प्रमाण पत्रों के साथ मंत्री समाज को प्रार्थना पत्र भेजें।

भवदीय—ब्रह्मदत्त शर्मा मन्त्री

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक २२) रविवार २० ज्येष्ठ २०२०— २ जून १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रदेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

अहमायुधा संस्यामि

मैं अपने राष्ट्र के वीरों का, प्रजा जनों को आयुधा—शस्त्रों से संस्यामि—तेज, बलशाली बनाता हूं। शस्त्रशक्ति में उनको निपुण करने में पूरा २ सहयोगी हूं—

राष्ट्रं सुवीरं वर्धयामि

मैं अपने राष्ट्र को उत्तम वीर जनों से बढ़ाता हूँ। ऐसा प्रयत्न करता हूँ कि हमारे राष्ट्र में बड़े २ वीर पुरुष बढ़ते रहें ताकि राष्ट्र विरोधी तत्व अपना सर न उठाने पावें।

एषां चत्रमजरमस्तु

इन राष्ट्रीय वीर लोगों का क्षात्र-पन, वीरता सदा जवान बनी रहे इस में कभी बुढ़ापा, निर्बलता न आने पाये। देश के वीरवरों का बल पराक्रम एकरस रहे।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥

ऋ० मं० ७ सक्त ३५ मन्त्र ९

अर्थ—हे भगवन (शं नः) कल्याणकारी हो हमारे लिए (अदिति.) पूर्णव्रत वाला ब्रह्मचारी तथा माता पिता (व्रतेभिः) अपने २ शुभ कार्यों के द्वारा, व्रतों से (भवतु) होवे। (शं नः) हमें सुखकारी (भवन्तु) होवें ये (मरुतः) ऊंचे २ पवित्र आचरण वाले, मरुत के समान उपकारक विद्वान् (स्वर्काः) श्रेष्ठ जीवन वाले विद्वज्जन सुखकर हों और (शं नः) हमें शान्ति देवे (विष्णुः) सर्वव्यापक (पूषा) भरण पोषण करने वाला प्रभु शान्ति देवे तथा (शं नो) हमें सुख देवे (भवित्र) आगे आने वाला समय तथा पदार्थमंडल तथा (शमु अस्तु) हमारे लिए कल्याणकारी हो यह (वायु) निरन्तर चलने वाला प्राणदाता वायु-वायु जीवनदाता बना रहे।

भाव:—संसार के वे ब्रह्मचारी, अखण्ड व्रत को धारण करने वाले प्रभु भक्त एवं ब्रह्म-ज्ञान के प्रचार के तथा दिव्य व्रती माता-पिता हमारा उपदेशों द्वारा सदा कल्याण करें। पवित्र आचार विचार वाले विद्वान, महात्मा हमारा भला करते रहें। सर्वव्यापक तथा सर्वपालक परमेश्वर हमें सदा सुख देवे। सुपथ पर चलता रहे। वर्तमान के समान हमारा भविष्य का समय भी मंगलमय हो और यह जीवन-दाता पवन भी हमें सदा प्राणशक्ति, जीवन, स्वास्थ्य देता रहे। प्रभु कृपा से सारा विश्व हमारा मंगल करता रहे—सं.

कोई स्वतन्त्र

देश धमकी या दबाव के सामने नहीं झुक सकता

हमने सभी समस्याओं का बहादुरी से मुकाबिला करना है

पजिम में प्रधानमन्त्री नेहरू की घोषणा

२४ मई—प्रधानमन्त्री नेहरू ने आज भारत के इस दृढ़ निश्चय को दोहराया कि चीनी अभ्याक्रमण का सामना किया जाएगा। उन्होंने घोषणा की कि हम इसका सामना करेंगे क्योंकि कोई भी स्वतन्त्र देश किसी धमकी या दबाव के सामने नहीं झुक सकता। हम किसी अभ्याक्रमण के साथ समझौता नहीं कर सकते। शांति और अहिंसा में विश्वास रखने वाला व्यक्ति बुराई के सामने नहीं झुकता।

प्रधानमन्त्री ने कहा कि किसी भी क्रान्तिकारी और जीवित देश के सामने राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याएं होती हैं। हमें उनका बहादुरी से मुकाबिला करना है।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

वैदिक देवता-वाद

(श्री बलदेव जी एम.ए. पठानकोट)

वैदिक साहित्य की गंगा में स्नान करके अमृत-पान करने के पूर्व वैदिक ऋषि, छन्द, देवता का ज्ञान आवश्यक है। इस लघु-लेख में केवल देवता पर अपने विचार रखूंगा।

सर्व-प्रथम एक गलत-फैमी को दूर करना परम कर्तव्य समझता हूं। कई लोग देवता को ईश्वर समझकर उनकी पूजा करना आरम्भ कर देते हैं। किन्तु देवता तो दैवी-शक्ति हैं। उस ईश्वर की अनेक शक्तियों का रूप ही देवता है। जैसे इन्द्र (विद्युत-शक्ति) वरुण (जल की शक्ति) आदि। इसीलिए तो वेदों में अनेक देवता होते हुए भी एक देवता-वाद है।' तद्वेवताया: महाभाग्यात् एकस्यापि बहूनि नामधेयानि भवन्ति' इसी भ्रांति निवारण के लिए देवता के अर्थ पर विचार करना भी समाचीन होगा।

देवता शब्द संस्कृति के 'दिव्' धातु (क्रीड़ायाम्, द्योतने) से बनता है। हलश्च सूत्र से घञ् प्रत्यय फिर टाप् प्रत्यय करके देवता शब्द बनता है। यास्क ने देवता यानि देव की सुन्दर परिभाषा की है।

'देवो दानाद् वा दीपनाद् वा, द्योतनाद् वा, द्यु स्थानो भवतीति वा' अर्थात् देवता वह है जो देता है, चमकाता है, चमकता है और द्यु लोक में निवास करता है। कठोपनिषद् में भी मनुष्य व देवों की तुलना करते हुए कहा है कि मनुष्य पार्थिव (इस) लोक में रहते हैं जबकि देव द्युलोक में यानि इस सांसारिक प्रपञ्चों से ऊपर उठकर दिव्य लोक में रहते हैं। कई मन चले लोगों के अनुसार जिसके साथ चतुर्थी विभक्ति लगे वही देवता है जैसे नवनाय स्वाहा,। इस प्रकार तो मेरे निजी विचार में देवताओं की गणना शायद ३३ करोड़ से भी ज्यादा हो जाए।

डा० मंगलदेव मनुष्य के आदर्श-वाद को ही देवता का प्रतीक मानते हैं उनकी परिभाषा इस प्रकार है 'संस्कृतेस्तारतम्ये ये आदर्शा वर्तयन्ति न ते एव देवता रूपा दृश्यन्ते'

देवता की एक सुन्दर परिभाषा दी जाती है जिस को मैं सर्वोत्तम मानता हूं। इस परिभाषानुसार वेदों में वर्णित-विषय का नाम ही देवता है। इसी परिभाषा के आधार पर ही सूक्तों का नाम रखा गया है। जैसे अग्नि सूक्त मे अग्नि के गुणों की प्रशंसा, सविता-सूक्त में सविता का वर्णन और वही विषय उन सूक्तों का देवता है। देवता की अंतिम परिभाषा को स्वीकार मे सब से बड़ा लाभ यह रहेगा कि वेदों के अर्थ आसानी से निकाले जा सकते हैं। जिस सूक्त का जो देवता होगा उसी का उस में वर्णन होगा। स्वामी दयानन्द जी के अनुसार भी देवता को देख कर अर्थ निकालना चाहिए। किन्तु उन विद्वानों का जो कि बिना ऋषि, छन्द व देवता की सहायता से स्वतंत्र अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं मैं किस कोटि में रखूं। उनके सम्बध में लेखनी उठाना अनुचित समझता हूं, क्योंकि मेरा भी इस समय ज्ञान अधूरा है न कि पूरा है। अस्तु ईश्वर करे कि वेदों अनर्थ करने वालों के लिए 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रार्थना सफल हो। देवता-वाद के अर्थ के साथ अटूट सम्बंध को मध्य नजर रखते हुए देवता-वाद के महत्व पर प्रकाश डालना भी समाचीन होगा।

स्वामी दयानन्द जैसे विद्वान अनुसार ही नहीं अपितु पुराणों के अनुसार भी जो देवता को जाने बिना अर्थ निकालता है अश्व-गर्त नामक नरक में पड़ता है। पुराणों को प्रमाणिक न भी माना जाए तो अन्यत्र भी इसका महत्व वर्णित है:-

१. वेदितव्य दैवतं हि मन्त्रे २ प्रयत्नतै: दैवतज्ञो हि मन्त्राणाम् तदर्थम-धिगच्छति' अर्थात् देवता को जान कर मंत्रों के अर्थ की गहराई को पा सकता है। (अन्यत्र देवतज्ञहीन मंत्रकण्टक कहा गया है)

२. 'अविदित्वा ऋषि छन्दो दैवतं योगमेवच। योऽध्यापयेज्जपेद्वापि पापीया-ञ्जायते तु सः। भाव यह है कि जो ऋषि छन्द व देवता को न जानकर मंत्रों को पढ़ता-पढ़ाता व जाप करता है वे पापी हैं (यानि वे पापी के समान दण्ड के अधिकारी हैं) कि बहुना यदि देवता-वाद का अर्थ निकालने में सहयोग नहीं तो वैदिक साहित्य में इस देवता-वाद का इतना प्रपञ्च क्यों हैं।

डा० सूर्य-कान्त के अनुसार वैदिक देवताओं का चरित्र आज के मानदण्ड की दृष्टि से अत्यन्त उच्च कोटि का ठहरता है। अपने देवी देवताओं की चरितवली समाज के चरित का आदर्श बना करती है।

देवता-वाद पर अभी बहुत कुछ लिखा जा सकता है ईश्वर ने चाहा तो आगामी लेखों में देवतावाद का स्रोत, गणना, स्वरूप आदि पर प्रकाश डालूंगा।

फिर आया है आमन्त्रण

(रच०—सुशीला देवी आर्या एम० ए०, नरवाना)

आज हिमालय की चोटी से फिर आया है आमन्त्रण।
रणचण्डी का भीषण ताण्डव हो रहा देश की सीमा पर,
जो हैं शौकीन नृत्य के अब तो देखें नृत्य वहीं जाकर,
है संग्राम पाप पुण्य का उसके जीवन और मरण,
आज हिमालय की..........

नहीं तान सुनने की बेला मारू बाजा बजता है,
क्या तन साज सजें अपना रणसाज निराला सजता है,
आई चढ़ी लाल आंधी करती वसन्त मद का मर्दन,
आज हिमालय की...........

फूलों से नहीं, शूलों से है आज खेलने का अवसर
दूषित पद शत्रु के पुन: पड़ रहे हैं भारत भू-पर,
न रसराज राज की बेला आज शौर्य का आवाहन,
आज हिमालय की चोटी...........

नहीं समय है मधुर गीत गा सोने और सुलाने का,
आज शक्ति का पर्व समय है जगने और जगाने का,
बलवानों की दाढ़ों मे निर्बल मदमस्त बने भोजन,
आज हिमालय की...........

आती उमड़ी घनी घटा सी नहीं घटने में आती है,
सुख समृद्धि शांति कृषि पर ओले से बरसाती है.
भानु तेज से चढ़कर आज हटाना है घन अवगुंठन,
आज हिमालय की...........

भीषण रव विध्वंस तत्व का नहीं सुनाई देता क्या ?
मां का वक्ष रौंदता रिपुदल नहीं दिखाई देता ?
हो आराम हराम हमें, जब तक है यह गर्जन तर्जन,
आज हिमालय की चोटी से फिर आया है आमन्त्रण।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २० ज्येष्ठ २०२०, २ जून १९६३ [अंक२२

आर्यसमाज आगे आये

क्योंकि आज का मानव जीवन पतन की ओर जा रहा है। भोगवाद का प्रवाह इतने वेग से चल रहा है, जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि यदि ऐसी स्थिति बनी रही और इसे रोकने का भरसक प्रयत्न न किया गया तो सारा ही वातावरण भोगमय बन जायगा। जीवन में इतना बिगाड़ पैदा हो रहा है जिस के कारण विचार दूषित होते चले जा रहे हैं। आचार बिगड़ रहा है, विचार विकृत होते जा रहे हैं, शृंगार नंगारूप धारण कर रहा है, परिवार बिगड़ते जाते हैं तथा आहार का तो कुछ कहना ही क्या आज तो सारा संसार ही कुछ का कुछ बन रहा है। इस अवस्था में और कौन आगे आकर प्रतिकार करेगा? ऋषि दयानन्द जी ने आर्य समाज की स्थापना इसीलिए की कि सारे विश्व का सुधार करे। इस ने दीक्षा ही इसी बात की ली है। अपने जन्मकाल से इसी महान मिशन में लगा हुआ है।

इस समय आर्यसमाज से एक विशेष बात कहनी है। सारे भारत की बात न कह कर हम अपने प्रान्त पंजाब की एक गिरावट की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं। राष्ट्र-विभाजन के बाद भी इस हालत को देख पढ़ कर कितना अचम्भा तथा मन को खेद होता है। जीवन के पतन की दूसरी बातें तो हो ही रही हैं पर इन के साथ २ जीवन का बिगाड़ कितनी तेजी से हो रहा है। इस का अनुमान इस से किया जा सकता है। अभी कुछ दिन हुए। प्रान्त के एक प्रमुख व्यक्ति ने अपने प्रवचन में बतलाया कि पंजाब में एक वर्ष में पचास करोड़ की शराब पी गई है। शराब पीने की प्रवृत्ति अधिक फैलती जा रही है। ग्रामों मे भी लोग शराब निकालने में लगे रहते हैं। इतना रुपया जनता शराब पीने में व्यय कर देती है। सरकारी शराब के ठेके प्रतिवर्ष अधिक होते जाते हैं तथा उनकी बोली बढ़ती जाती है। जो ठेका दस हजार मे बिकता था आज वह पचास हजार में बोली में जाता है। ठेका लेने वालों की होड़ लगी होती है। क्योंकि वह जानते हैं कि वर्ष के बाद हम अधिक कमा लेंगे लोग अधिक शराब पीने लगे हैं। यह तो केवल अपने प्रान्त की एक बात शराब के बारे में कही जा रही है। लोगों ने शराब पीने की सीमा सर्वथा तोड़ दी है। जिस एक छोटे से प्रान्त में पचास करोड़ की शराब पी जाती हो—उसमें और भी क्या कुछ होता होगा—इसका सहज ही अनुभव हो सकता है कि की दशा क्या है। यह आर्यसमाज की आंखों के सामने हो रहा है?

आर्यसमाज आगे आये? आज की राजनीति की दलदल में दूसरों के पांव धंस रहे हैं। किन्तु आर्यसमाज के होते हुए भी यदि जीवन की यह अवस्था है तो देश कहां पहुंचेगा? इसकी चिन्ता किसे है? आर्यसमाज अपनी प्रगति को खूब तेज करे। जीवन के पतन को रोकने के लिए तथा शराब के इस प्रवाह को रोकने के लिए जल्दी मैदान में आयें। प्रत्येक समाज अपने-अपने नगर में अपनी आवाज उठाये। नगर की जनता को मिलाकर स्थान २ पर शराब निरोधी सम्मेलन करे। जनमत जाग्रत करे। इस कार्य में तो सरकार का भी उसे अवश्य सहयोग मिलेगा। साधारण रीति से यह काम न बनेगा। इसके लिए आर्यसमाज को बड़ा बल लगाना पड़ेगा। प्रबल विचार देने होंगे। जनता को झंझोड़ना होगा। स्थान स्थान पर सम्मेलन करने होंगे। शराब के विरोध में भाषणों का प्रबन्ध करना होगा। इस बढ़ती हुई बुराई तथा बीमारी को रोकने के लिए बहुत कुछ कार्य करना होगा। तब कहीं इसका प्रवाह रुक सकेगा। आज शराब परिवारों में, क्लबों में, होटलों, पार्टियों, शादियों मे तथा अन्य स्थानों पर भी पहुच गया है। जीवन का अंग बनता जा रहा है। यह बुराई जड़ पकड़ती जा रही है। इसे उखाड़े बिना यह विषैला वृक्ष नहीं गिरेगा। हम चाहते है कि आर्य-समाज प्रान्त की अन्य धार्मिक संस्थाओं को साथ मिला कर इस दिशा में आगे आकर शराब के विरुद्ध एक प्रबल अभियान चलाये ताकि उसके सक्रिय आंदोलन से पंजाब का यह पचास करोड़ रुपया किसी पवित्र कार्य में लग सके। विश्वास है कि आर्यसमाज सुनेगा।

—त्रिलोक चन्द्र

महात्मा आनन्द स्वामी जी

महाराज ने भारत में वापस लौटने के बाद अपनी अमृत कथाओं का पवित्र प्रसाद देना प्रारम्भ कर दिया है। देहली में भी कई स्थानों पर आपने अपनी मधुर कथाओं से जनता को आनन्दित किया। देहली से आप जालन्धर, अमृतसर होते हुए फिर आप कुल्लू की ओर चले गये हैं। कुल्लू के इलाके की जनता का सौभाग्य है कि उसे महात्मा जी के वेद प्रवचन के अमृत पान का सौभाग्य प्राप्त होगा। पूरा स्वास्थ्य भी नहीं मिला पर प्रचार पर लग गये। प्रभु आपके स्वास्थ्य को पूर्णतया ठीक करें ताकि जनता को वेदामृत का पान कराते रहें।

श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु

पंजाब से शोलापुर मे डी० ए० वी० कालेज में प्राध्यापक के रूप में कार्य करने पहुंच कर शिक्षा कार्य प्रारम्भ कर दिया है। यह नवयुवक योग्य तथा समाज का अनथक काम करने वाला भाई जहां भी जायगा वहीं आर्यसमाज का कार्य करता रहेगा। आर्य युवकों का मण्डल संगठित होकर समाज के प्रचार को आगे ही आगे ले जायगा। आज आर्य समाज को जिज्ञासु जी एम० ए० जैसे आर्य युवकों की परमावश्यकता है। प्रभु करे कि जिज्ञासु जी प्रिंसिपल भगवान दास जी के अनुभवपूर्ण हाथों में समाज कार्य में आगे ही आगे बढ़ते जायें।

उत्तर प्रदेश की जयन्ती

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की जयन्ती बड़े ही समारोह से लखनऊ में सम्पन्न हुई। इसका हमारे प्रधान मन्त्री श्री नेहरू जी ने उद्घाटन किया। रक्षा मन्त्री श्री चह्वान तथा उत्तर प्रदेश के मुख्य-मन्त्री श्री गुप्त जी ने पधार कर आर्य समाज के महान् कार्य की भूरि २ प्रशंसा की। हम जयन्ती सफलता पर हार्दिक बधाई देते हैं।

सं०

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

महाराष्ट्र में आर्य समाज

(श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम.ए. दयानन्द कालेज शोलापुर)

शोलापुर आते हुए मैं मार्ग में कुछ दिन बम्बई ठहरा। वहां आर्य समाज के कुछ कार्यकर्त्ताओं से मिलकर आर्यसमाज की स्थिति की कुछ जानकारी प्राप्त की। नगर में घूमकर इसाइयों की गगन चुम्बी इमारतें देखीं। पारसियों के एक मन्दिर में प्रवेश कर कुछ जानकारी प्राप्त करनी चाही परन्तु उनका यह नियम है कि गैर पारसी इसमें प्रवेश पा ही नहीं सकता। बहुत याचना करने पर भी मूल्य लेकर भी पारसी धर्मगुरु ने अपना साहित्य देने से इनकार कर दिया।

पारसी लोग धनी हैं। अपनी धार्मिक शक्ति व संगठन के बल से यह जीवित हैं। मुसलमान भी संगठित हैं और अपने मतोंके प्रचार में जागरूक हैं। बौद्धों का प्रचार भी खूब है। लाखों दलितों को बौद्ध बनाकर इस मत ने नई शक्ति प्राप्त की है। इन नवीन बौद्धों में बौद्ध बनकर हिन्दुओं के प्रति घृणा की भावना बड़ी प्रबल हो गई है। अपने को हिन्दुओं से सामाजिक दृष्टि से वह दूर ही रखते हैं। इस का राजनैतिक प्रभाव जो देश के वर्तमान पर व भविष्य पर हो सकता है वह व्यक्त करने को आवश्यकता नहीं। पाठक स्वयं समझ लें।

ईसाइयों के प्रकार की गति और विधि आर्य-जन जानते ही हैं। विदेशों से खूब धन आता है। क्या कमाल है कि इसाई पादरी मुसलिम बस्तियों में जाकर कभी प्रचार नहीं करते उनका शिकार निर्जीव हिंदु ही होता है। बम्बई में कई समाजें हैं और कई पुराने आर्य समाजी कार्य-कर्त्ता हैं पर माया नगरी में प्रायः कमाने की धुन के कारण सामाजिक गति-विधियों से विमुख हैं। फिर भी माटुंगा, फोर्ट, प्रदेश, सान्ता करूज आदि समाजें क्रियाशील हैं। मिशनरी स्प्रिट के और हलचल मचाने वाले एवं संगठन बुद्धि के प्रचारक व सन्यासी महानुभावों का इधर अभाव है इस कारण ईसाईयों की शक्ति क्षीण नहीं हो रही।

फिर भी बम्बई में कुछ सक्रिय आर्य समाजी बन्धुओं को बुद्धि ने अपने कौतुक से विदेशी पादरियों का अब सफलता से मुंह मोड़ने का प्रयास किया है। हिन्दुओं के धार्मिक मेलों पर पादरी जाकर प्रचार किया करते थे। इस बार पादरियों को साहस नहीं हुआ कि हिन्दुओं के मेले पर जाकर प्रचार करें। उनके प्रचार का प्रतिकार करने के लिए संगठित एवं व्यवस्थित कार्यक्रम बनाया जा चुका है।

बम्बई में मुझे सबसे शानदार आर्य मिशनरी जो जचा वह हैं मान्य डा० सुन्दर लाल जी। आर्य गजट में उनके लेख मैं पहले पढ़ा करता था। वह बड़े प्रेम से मिले। इतने प्यार से कि मानों हमारा वर्षों पुराना घनिष्ठ सम्बन्ध है। मैंने इतना दूरदर्शी और सूझ बाला मिशनरी आर्यसमाज में नहीं देखा। मिशनरी तो बहुत देखे। तड़प में अद्वितीय आर्य वीर भी देखे पर जो तड़प वाला भी हो और संगठन बुद्धि भी कमाल की रखता हो और जो परिस्थिति का लाभ उठाना भी जानता हो वह डा० सुन्दर लाल जी ही देखे हैं। यद्यपि वह किसी राजनीतिक दल से बंधे हुए नहीं हैं पर राष्ट्र के हितों में राष्ट्रघाती तत्वों की कुचालों का गम्भीर अध्ययन करके समय से पूर्व ही होने वाली घटनाओं को भांप कर देशवासियों व सरकार को चुनौती देते रहते हैं। देश की राजनीति पर कई घटनाओं का व्यापक प्रभाव इन दिनों पड़ा है। जब देश के नेता इन होने वाली घटनाओं से बेखबर थे तब इस आर्यवीर ने देश को सावधान करने और बचाने के लिए सरकार को सजग किया। प्रेस में लोककीर्ति की चाह से मुक्त हैं।

माटुंगा समाज के मन्त्री श्री ओंकार नाथ जी भी एक श्रद्धालु और कर्मवीर आर्य पुरुष हैं। श्री डा० सुन्दर लाल जी व प्रसिद्ध आर्यसमाजी नवयुवक श्री गुलजारी लाल जी आर्य आदि कुछ सज्जनों ने इसाईयों के कुचक्रों को निष्फल बनाने के लिए एक योजनाबद्ध कार्यक्रम बना रखा है जिसका उल्लेख जान बूझ कर यहां नहीं करना चाहता। इनको अपने कार्य में पर्याप्त सफलता मिली है। डा० सुन्दर लाल जी का आर्यसमाज से बाहर सब प्रकार के लोगों से सम्पर्क है। दूसरों को अपने विचार का बनाने की कला उनको आती है।

बम्बई में इसाई मत का प्रचार इसाई मिशनरी ही नहीं करते अपितु अंग्रेजी समाचार पत्रों में हिन्दु सम्पादक भी इसाई गिरजों में मूर्तियों के चमत्कारों की चर्चा खूब करते हैं। रोगियों को इसाई देवी देवताओं की प्रतिमाएं स्वास्थ्य प्रदान करती हैं ऐसे मिथ्या विचार इन पत्रों में छपते हैं पर सिवाय आर्यसमाज के कोई इस भ्रम का भण्डा फोड़ने वाला नहीं।

इन सब अवैदिक मतों के कारण दक्षिण में अराष्ट्रियता पनप रही है। मुसलमलीग हिन्दी विरोधी तो थी ही अब केन्द्र में अंग्रेजी समर्थक भी बन गई है। इसाई तो हैं ही अंग्रेजी पोषक। आने वाली विपदा जो राष्ट्र का सर्वनाश करने पर तुल गई है वह है उत्तर दक्षिण का भेद-भाव जिसको राजगोपाल जी जैसा पुराना नीतिज्ञ बल दे रहा है।

इस भयंकर विपदा को टाल सकता है तो आर्य समाज। राजनैतिक दलों का ध्यान तो वोटों का ओर है। आर्यसमाज के वे लोग जिनको वोटों की चाह नहीं जो केवल प्रचार के विचार से राष्ट्रहित में जीवन लगाना चाहते हैं उनके लिये सारा दक्षिण एक विस्तृत कार्य क्षेत्र है। मातृ-भूमि का भविष्य सेवकों को पुकारता है। सभाएं इस प्रश्न पर सोचें और कुछ ठोस कार्यक्रम बनाएं। (क्रमशः)

गुरुकुल-झज्जर की 'आर्य-कुमार सभा' का चुनाव

प्रधान—श्री पं. बलदेव जी आध्यापक, उपप्रधान—श्री पं.गंगाराम जी, मन्त्री—ब्र० धर्मवीर जी व्याकरणाचार्य, उपमन्त्री—ब्र० योगेन्द्र जी व्याकरणाचार्य, पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० यज्ञवीर जी आर्य, सः—ब्र० सत्यव्रत जी व्याकरण शास्त्री कोषाध्यक्ष—ब्र० महेन्द्रकुमार जी व्याकरणाचार्य, सः कोषाध्यक्ष—ब्र. हरिदेव जी।

निवेदक

ब्र० धर्मवीर मन्त्री

शोक समाचार

आर्यसमाज अखनूर के अनथक कार्यकर्ता श्री जियालाल जी की धर्मपत्नी का चिरकाल तक रुग्ण रहने के पश्चात २१—५—६३ को देहावसान हो गया। आर्यजगत दिवंगत आत्मा की सद्गति के साथ २ श्री जियालाल जी के परिवार से गहरी समवेदना प्रकट करता है।

—व्यवस्थापक

दक्षिण भारत और हिन्दी

(ले०—श्री सुदर्शन जी "अंशु" नई दिल्ली)

लार्ड मैकाले के मतानुसार जब समूचे भारत में अनिवार्य रूप से अंग्रेजी लागू की गई तो सर्व प्रथम दक्षिण वाले ही इसका शिकार बने। यद्यपि उस समय के कई विद्वानों ने उक्त निर्देश का प्रतिरोध किया, परन्तु ब्रिटिश राज्य में उनकी एक न चली, परिणाम स्वरूप सब पर जबरदस्ती अंग्रेजी ठोंसी गई और इस प्रकार लोगों को भारतीय साहित्य से दूर और काफी दूर फैंका गया। विरोधियों की आवाज़ नक्कारखाने की तूती में परिणत हो गई।

किसी ने सत्य कहा है—"किसी जाति को समाप्त करने के लिए गोली और बारूद की आवश्यकता नहीं हुआ करती, उस जाति को उसकी निज भाषा एवं संस्कृति से विमुख कर दो, वह स्वयं पराधीन एवं निर्जीव हो जाएगी।" चतुर अंग्रेज जाति ने हमें भारतीय सभ्यता से विमुख करने के निमित्त क्या-क्या नहीं किया? इतिहास साक्षी है। हिन्दुओं और सिखों को अलग करने के लिए खालसा कालिज अमृतसर में एक अंग्रेज ने सर पर बाल आदि रख कर प्रिंसिपल के रूप में क्या-क्या गुल खिलाए, वेदों में विषय वस्तु को बदलने के लिए कई अंग्रेज काशी में संस्कृताभ्यास करने लगे एवं नाना प्रकार की मन्त्रों के विषय में भ्रांतियां फैलाने लगे। अस्तु! संक्षेप में—वे लोग निज व्यापारिक उन्नति के लिए आए थे परन्तु बन बैठे हमारे शासक और इस प्रकार हम पराधीनता के चिंगुल में बुरी तरह से जकड़ गए। लेकिन सौभाग्यवश एक समय ऐसा भी आया जब हमें प्रगाढ़-निन्द्रा से झकझोड़ा गया और इस भांति हमें अग्रसर किया गया उस स्वाधीन एवं गांधी के स्वप्नवत राम-राज्य वाले भारत की ओर जहां स्वतन्त्रता के बाद हम हर उचित पग उठाते हुए उन्नति को प्राप्त करेंगे। अन्ततः वीर-पुरुषों की महती कुरबानी के उपरांत हमारा देश स्वतन्त्र हुआ। स्वतन्त्रता के बाद जैसा कि प्रायः हुआ करता है कई विकट समस्याएं उत्पन्न हो गईं जिन में एकता भी एक मुख्य उलझन थी यह एकता तभी बनी रह सकती है जब हम जनमत की मुख्य भाषा को स्वीकार करते हुए उसके निमित्त अपने कर्त्तव्य का पालन करें परन्तु इस ओर ध्यान नहीं दिया इतना ही नहीं बल्कि १९५० में बने संविधान में स्वीकृत राज-भाषा हिन्दी के निमित्त कोई विशेष दिलचस्पी न ली गई लेकिन सुअवसर समझ यह दो प्रतिशत लोग ९८ प्रतिशत पर शासन करने लग पड़े। और गत १३ वर्षों में इन्होंने हिन्दी को उन्नति न करने दी इस प्रकार हर सम्भव तरीके से देश की एक मुख्य भाषा को दबाया गया और अपने मुंह मियां मिठ्ठू यह लोग अब भी अंग्रेजी की वकालत करने से बाज नहीं आते।

आज दक्षिण वालों से पूछा जा सकता है कि क्या कारण है जो वे अभी तक भी हिन्दी को नहीं अपना सके? क्या उनके लिए चौदह वर्ष का समय कम था क्या? स्मरण रहे जबकि महात्मा गांधी के मतानुसार हिन्दी केवल तीन मास में अच्छी तरह सिखी जा सकती है। अभी पिछले दिनों समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार के अनुसार लगभग २०० अहिन्दी-भाषी प्रांत के व्यक्तियों ने हिंदी सिखी और उक्त अवधि तक तो वह गाना बजाना भी सीख गए।

मैं समझता हूं हमारी सरकार इस बारे में स्वयं ही ढील दे रही है और दक्षिण वालों को यह कह कर हिन्दी से और भी अधिक विमुख कर रही है कि हिन्दी के बारे में जबरदस्ती नहीं की जाएगी, यह तो कुछ ऐसी बात हुई कि जैसे कोई पिता अपने लड़के को जो कि स्कूल के नाम से ही डरता है उसे स्कूल भेजने का हर सम्भव प्रयत्न करता है परन्तु माता उसके किए हुए पर पानी उंडेलती हुई बच्चे को यह कहती हुई और भी बिगाड़ देती है कि 'बच्चे को अपनी इच्छा पर छोड़ दो यह स्वयं ही अपने भविष्य को बनाएगा, चाहे यह पढ़े अथवा न, इसे जबरदस्ती स्कूल आदि में न भेजो।' तनिक विचारिए ऐसा बच्चा पढ़ेगा? कदापि नहीं। अपने भविष्य को उज्वल तो क्या करेगा बल्कि अज्ञान के गहरे गड्ढे में जा गिरेगा।

अतः मेरा दक्षिण वालों से कहना है कि वे अपनी कृपालु मां रूपी इस वर्तमान शासन के अधिक लाड-प्यार में न खोए रहें।

अब जबकि १९६५ के पश्चात राष्ट्र-भाषा हिन्दी सक्रिय रूप धारण करेगी तो क्या तब ये लोग रह जाएंगे? मेरे विचारानुसार इन को अविलम्ब हिन्दी अपना लेनी चाहिए इस में इन का और साथ ही साथ स्वदेश का भी भला निहित है। इसी से एकता सम्भव हो सकती है। इस सम्बन्ध में श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के निम्न विचार पठनीय हैं।

'जो सज्जन हिन्दी भाषा द्वारा भारत की एकता को स्थिर रखना चाहते हैं, वे निश्चय ही भारत-बन्धु हैं। हम सब को संगठित होकर इस ध्येय प्राप्ति के निमित्त प्रयास करना चाहिए। और अन्ततः इस में सफलता अवश्य ही मिलेगी।'

पर हित में निरत शरीर रहे

(रचयिता श्री वेद प्रकाश जी बी० ए० प्रभाकर, खन्ना)

यों तो दुनिया में लाखों ही चट्टानें राहें रोक रहीं,
पर चलने वाले कब रुकते झुकते थकते घबराते हैं।
कायर हैं वे जो इस जगसे मुंह मोड़ शिथिल तन मन करते,
वर वीर वही सरदार वही सरदार विचार न लाते हैं॥
हंसते-हंसते तूफानों से बोरानों से बम खानों से।
टकरा-टकरा मुस्कराते जो वज्रांग वीर कहलाते हैं॥
पर मुझे खेद उन लोगों पर जिनका तन लोहू पानी है,
पानी भी वह जो पड़ा सड़े और काम किसीके ना आए।
प्रत्युत दुर्गन्धित करे जगत कृमि तक ना प्यास बुझा सकता,
उलटा फैलाए दोष घने घन बन बरसे जो वो छाए॥
पानी पानी में आ सकता कुछ करें यत्न कुछ सोचें जो।
कुछ हलचल कर बिजली तन भर जगमग जगमग को कर जा॥
करना चाहें कवि नव प्रयोग इच्छा मेरी भी खूब करें,
उर घट में आसव भर-भर कर नवजीवन शाश्वत मान भरें।
यौवन मधु मादकतामय जग नव तत्वों से निर्माण करें,
सुख वैभव प्रेम प्रबलता भर उत्कर्ष हर्ष कल्याण भरें॥
गूंजे फिर मुरली कान्हा की औ राम लिखें पाषाण तरें।
रोके से सूरज रुक जाए भवत्राता कवि जब त्राण भरें॥
ऋषि मुनियों के शुचि पथ को जग अति उत्कण्ठा से खूब गहे,
सब की रग रग में पावन तम सद्मर्यादामय खून बहे।
आंधी ओले बिजली गोले हंसते-हंसते वर वीर सहें,
सर्वस्व विनष्ट भले होवे पर धर्म विहीन न पन्थ गहे॥
दहता हो अपना ही तन मन यदि दीन दुखी की देह दहे।
चिन्ता हो औरों की पहले पर हित में निरत शरीर रहे॥

आत्म निरीक्षण

(ले०—श्री सांई दास जी भडारी करतारपुर)

आत्मनिरीक्षण का भाव अर्थ यह होता है कि मनुष्य अपने गुणों और दोषों की पड़ताल करे। जो व्यक्ति भी ऐसा निरीक्षण करता है वह अपना सुधार कर लेता है। दूसरे के दोषों की खोज करना कोई उत्तम गुण नहीं। अपने दोषों का सुधार करना।

'If every man looks to his own reformation How very easy to reform a nation.'

जब भी मनुष्य के अन्दर अपने सुधार के विचार जागृत होते हैं उस का जीवन फिर बन जाता है। मनुष्य जीवन का महान् कल्याणकारी वृक्ष से सम्बोधित किया गया है। जिस की छाया में धर्म का प्रेम धर्म पर दृढ़ता और ब्रह्म विद्या का ज्ञान प्राप्त होता है। ईश्वर का नाम लेना ईश्वर के नाम का जाप करना अथवा ईश्वर भक्ति का जो ढंग आजकल प्रचलित है वह कुछ और बात है ईश्वर को अपने हृदय मे बसाकर उसे अपने जीवन का साथी बना लेना जीवन का ऊंचा आदर्श है। जो मनुष्य अन्ध परम्परा में जीवन व्यतीत करता है उस के लिए यो कहा गया है।

'A man of words not of deeds Is like a garden full of weeds.'

अर्थात्: मनुष्य कहता कुछ और है करता कुछ और है। महा-कल्याणकारी वृक्ष के महत्व को खो देता है।

खुदा का नाम अक्सर जबा पर
तो है आ जाता
लुत्फ उसका तब आता अगर
दिल में समा जाता

सोई हुई भावनाओं को जागृत करने के लिए विचार शील होने की आवश्यकता है।

गीता में भी ऐसा ही योगी राज कृष्ण का वचन है जो अपने आप को नहीं पहचानता वो अपने साथ स्वयं शत्रु का व्यवहार करता है। कैसे सुन्दर शब्दों में शुद्ध आचरण और बाहर भीतर से एक होने का उदाहरण दिया गया है। इसलिए भगवान से ऐसी प्रार्थना की गई है कि हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।' आत्म निरीक्षण के लिए स्वाध्याय एक बड़ी रहस्य की बात है। इसकी प्रशंसा भी बड़ी की गई है। स्वाध्य से ही दैवी गुण प्राप्त होते हैं। जब ज्ञान ब्रह्म से सम्बन्धित होता है तब मनुष्य का जीवन बनता है। वास्तव में तो मनुष्य मन धातु से बनता है। इस कारण से मनन-शील और विचार शील होना मनुष्य के गुणों में है। प्रसिद्ध बात तो यही है कि जिसकी नींव धर्म के उद्धार पर होती है वो व्यक्ति कभी दूषित मनोवृत्ति की ओर नहीं जाता। मगर देखने में ऐसा प्रतीत होता है कि संसार में बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो भीतर का विचार करते हैं। जो करते हैं वह ही संसार के अन्दर इसके फल को प्राप्त करते हैं। शारीरिक, मानसिक और सामाजिक उन्नति उनके पास ही रहती है जो धर्म परायण जीवन को बनाते हैं। सारा जीवन एक महत्व की बात का जीवन होता है—

मन काला तन उजला
बगले का सा भेख।
तुम से तो कागा भला
जो बाहर भीतर एक॥

संसार में प्रत्येक वस्तु गुण दोष से युक्त होती है। जैसे शिक्षा का दुरुपयोग हानिकारक बन जाता है और शिक्षा का सदुपयोग लाभ देता है। आत्म निरीक्षण का विचार मनुष्य में जीवन पैदा करता है। अपने दुर्गुणों और दोषों को ढूंढ २ कर उनको दूर करने शुद्ध आचरण और शुद्ध जीवन बनाना परम कर्त्तव्य है।

'बिना सोचे बिना समझे
बशर जो काम करता है।
वो अपने हाथ से अपना
बुरा अनजाम करता है।।'

वेद का प्रसाद-मानवता

(ले. पं. चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी, उपदेशक सभा, सोनीपत निवासी)

बन्धुओं, वेद प्रभु की वाणी है जो कि सृष्टि के आदि में महान ऋषियों द्वारा प्रगटे, समस्त संसार के सुखादि का भन्डार वेद ही हैं। वेद का अर्थ ज्ञान है, मनुष्य मात्र वास्ते है चाहे किसी भी जाति-पाति का क्यों न हो जैसे वेद में कहा है यथेमां वाचम कल्याणी मावदानि जनेभ्यः आदि लिखा है। वेद में विशेषतयः मानवता की झलक दिखाई देती है मुक्ति प्राप्ति का साधन किसी व्यक्ति का सहारा नहीं बताया बल्कि कर्म-क्षेत्र रूपी सुन्दर सीढ़ी बताई है। सौ वर्ष से अधिक जीने की इच्छा भी किसी महान उद्देश्य को चलने की आज्ञा दी है। वेद में लिखा है कुर्वन्नेहवेह-कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमा, एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्तिति न कर्म लिप्यतेनरे, ये यजुर्वेद का प्रसिद्ध मंत्र विद्वान लोग सुनाया करते हैं शुभ कर्म करना अपना लक्ष्य समझोगे वेद को प्राणी मात्र का हित समझोगे तभी हम में मानवता की झलक पैदा होगी। वेद का मुख्य वाक्य है मनुर्भव अर्थात मनुष्य बन मननशील को संसार आदर देता है। प्रभु तथा वेद के नियमानुसार चलने वाला व्यक्ति मानवता की सुगन्धि से भरा होता है वह ही धर्म की रक्षा कर सकता है, मनु महाराज ने ठीक लिखा है। धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षतः शब्द सुलझे हुए हैं, आज संसार की आबादी लगभग चार अरब है मानव तो है परन्तु मानवता नहीं, तभी तो ससार में अशान्ति है। बड़े २ राष्ट्र छोटे राष्ट्रों तथा मुल्कों को हड़पने पर तुले हुए दीखते हैं एक दूसरे पर विश्वास नहीं जो कभी मित्र थे उन्होंने विश्वासघात किया। चीन की मिसाल सामने है आज किसी पर क्या विश्वास किया जा सकता है। अपने पराये बनते हैं पराये अपने बनते हैं कैसा अनोखा इन्कलाब है इसे मानवता नहीं कहते सच्चे हृदय से एक दूसरे के शुभचिन्तक बनें मन में मलीनता तथा छलकपट न होवें तभी संसार का कल्याण है। दूसरे का अधिकार छीनना मानवता नहीं राक्षसपन है स्वाभिमान का जीवन चाहिये पर किसी पर अत्याचार करके नहीं मेल-मिलाप तथा प्यार से जियें और जीने दें। वेद भगवान आज्ञा देते हैं सच्चे अर्थों में मननशील चरित्रता के देवता बनो सब प्रभु के अमृत पुत्र व पुत्रियें हैं ऐसा समझेंगे तब मनुष्य को सही मनुष्य कहा जा सकता है तभी तो मैंने लिखा वेद का प्रसाद मानवता, वे है ठीक यह और इस प्रसाद को बांटने की आवश्यकता है। इस का मिठास तो बाद में पता चलेगा जब इस मानवता की सुगन्धी को प्राप्त करने का यत्न करोगे।

राष्ट्रीय एकता

ले० पं० सुरेश चन्द्र जी वेदालंकार एम० ए० एल० टी० डी० बी० कालेज कालेज गोरखपुर

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्। सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ॥

अनेक प्रकार की भाषा बोलने वाले तथा नाना प्रकार के कर्तव्य करने वाले मनुष्यों को अनेक प्रकार से एक ही घर में रहने के समान (बिभ्रती) धारण करने वाली (ध्रुवा) स्थिर मातृभूमि मुझे धन की सहस्र धारायें दे। जैसे निश्चल गौ दूध की धारा देती है।

भारत पर चीन का आक्रमण हुआ। इस आक्रमण से अनेक लाभों में भारत को एक लाभ यह हुआ कि देश के सामने नेशनल अन्टेमेशन (राष्ट्रीय एकता) का प्रश्न कुछ समय के लिए सुलझ गया। किसी भी देश की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय एकता की अत्यन्त आवश्यता है। इस एकता में बाधक तत्व है स्वार्थ। यह स्वार्थ भाषावाद को लेकर, धार्मिकता-साम्प्रदायिकता को लेकर देश के प्रति अटूट निष्ठा की भावना से हीन होने से उत्पन्न होता है। महर्षि दयानन्द ने इस तत्व को बहुत पहले समझा था। शायद आज का राजनीतिज्ञ और ऐतिहासिक जो सत्य को दूर से ही देखता है उनके महत्व को उतना न समझे परन्तु यह निश्चित है कि सत्य तो सत्य है। वह छिप नहीं सकता। उनकी बातों के महत्व को अवश्य समझेगा। इसलिए उन्होने राष्ट्रीय एकता के वैदिक दृष्टिकोण से कुछ उपाय बताये और उन पर चलने का राष्ट्र को प्रेरित किया। वेद के दूसरे मन्त्र में कहा है—

या भारती भारतीभिः सजोषा इडा देवैः मनुष्येभिरग्निः सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवी बर्हिरेदं सन्दन्तु॥

अर्थात् जहां लाखों करोड़ों मनुष्य रहते हैं, जहां नाना प्रकार की भाषाओं का प्रयोग होता है और जहां नाना प्रकार की भाषाओं में भी अनेक प्रकार की बोलियां बोली जाती हैं और एक बोली बोलते हुए भी उनके मुख से ध्वनियों के भेद के कारण उनकी वाणियों की ध्वनियां भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। इस प्रकार अनन्त प्रकार की भाषाओं, बोलियों और ध्वनियों को धारण करने वाले, नाना प्रकार के व्यवहारों का अनुष्ठान करने वालों अध्यापक सैनिक, दुकानदार कृषक आदि विभिन्न प्रकार के कार्यों का करने वाले व्यक्तियों को अपनी भाषा, धर्म एवं भावना सम्बन्धी विभिन्नताओं को समाप्त करने के लिए हमें प्रत्येक प्रांत की बोलियों के विकास के साथ-साथ एक अन्तर्प्रान्तीय भाषा या राष्ट्र-भाषा का विकास करना होगा। यह अन्तर्प्रान्तीय भाषा पारस्परिक मतभेदों और विषमताओं को बढ़ाने के स्थान पर उनका नियन्त्रण कर सकती है। यह ठीक है कि यह भाषा दूसरी भाषाओं पर अपना साम्राज्य नहीं कायम करेगी परन्तु दूसरी भाषाओं द्वारा अपना विकास करेगी और इस प्रकार देश में एकता और सामंजस्य उत्पन्न होगा। यह तभी सम्भव है जब हम इस राष्ट्र को एक गृह के समान समझेंगे। घर में अनेक प्रकार के व्यक्ति होते हैं। वे अपने २ धर्मों का पालन करते हैं। कोई खेती का कार्य देखता है तो दूसरा भोजन पकाने का काय करता है उसी प्रकार हमारे राष्ट्र मे विभिन्न प्रकार की बोलियां बोलते हुए, विभिन्न प्रकार के धर्मों को मानने वाले निवासी भी परस्पर प्रेम से मिल कर रहें, यह आवश्यक है। इस एकता के महत्व का सब से पहले स्वामी दयानन्द ने समझा था और यही कारण था कि उन्होंने अपनी मातृ-भाषा गुजराती होते हुए तथा संस्कृत के महान् विद्वान् होते हुए भी हिन्दी को आर्य भाषा नाम से राष्ट्र भाषा घोषित किया। राष्ट्रीय एकता में भाषा का तत्व उपेक्षणीय नहीं। राष्ट्रीय एकता का ही फल था कि अचानक आक्रमण करके आगे बढ़ती हुई चीनी सेनाओं को विमुख करने में देश ने अद्भुत् योग्यता का परिचय दिया।

राष्ट्रीय एकता उन्नति का पथ प्रशस्त करती है। हमारी योजनायें निर्माण की ओर बढ़ती हैं। इस राष्ट्रीय एकता का फल यह होता है कि स्थान की दूरी मिट जाती है। दूसरों का दुःख हमारा दुःख होने लगता है। नेफा, लद्दाख या काश्मीर का आक्रमण मद्रास और केरल के निवासियों पर आक्रमण होता है। देश में से अनुचित बातें जैसे ब्लैक मार्केटिंग वस्तुओं का मूल्य बढ़ाना आदि समाप्त हो जाता है। उस समय पारस्परिक प्रेम को उत्पन्न करने वाली यह मातृभूमि हमें द्रविण देती है। सब प्रकार के धन, ऐश्वर्य प्रदान करती है। जिस प्रकार उत्तम प्रकार की गाय बिना हिले-डुले अपने दोग्धा के लिए दूध की धारायें देती है उसी प्रकार यह मातृभूमि रूपी गौ अपने निवासियों के लिए कृपामयी होकर उनके कल्याण और सुख समृद्धि के लिए सहस्रों प्रकार की ऐश्वर्य की धाराओं को स्थिर रूप से प्रवाहित करती रहती है। हे मां! हम तेरे पुत्र हैं। तेरे ये पौने चवालीस करोड़ पुत्र एक घर में रह रहे हैं। क्या हुआ कोई नेफा में है और कोई पंजाब में। आखिर पुत्र तो तेरे ही हैं न। तू विश्वास रख, तेरे हम ये करोड़ों पुत्र अब पारस्परिक मतभेदों को दूर कर दो हाथ, दो पैर, दो आंख वाले होकर राष्ट्र रक्षा करेंगे। ऐसा करने पर ही राष्ट्र का प्रत्येक घर और प्रत्येक गांव एक दुर्गम दुर्ग होगा और ससार में कोई दुष्ट दृष्टि से हमें न देखेगा। आक्रमण की तो बात ही क्या? यही उज्ज्वल सदेश हमें आज से बहुत पहले स्वामी दयानन्द ने दिया—आज हम उस पर चलें। यही हमारा निश्चय है।

अब ज़ोर बाजुओं का दिखलायें तो अच्छा हो

(लेखक—श्री प० प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न अजमेर)

सेवक स्वदेश के हम बनजायें तो अच्छा हो।
ऐसे कठिन समय में काम आयें तो अच्छा हो॥
होते नहीं दुखी जो दिल, दूसरों के दुख मे।
ऐसे कठोर दिल बस जल जायें तो अच्छा हो॥

ये भ्रष्टाचार चोरी, जारी व घूंस खोरी।
दुर्गुण विकार सारे मिट जायें तो अच्छा हो॥
मिलजुल के आओ बेड़ा भारत का पार करलें।
आपस के झूठे झगड़े बिसरायें तो अच्छा हो॥
होता नहीं गुजारा दुनिया मे भोलेपन से।
अब जोर बाजुओं का दिखलायें तो अच्छा हो॥
होवें 'प्रकाश' विजयी, यह भारतीय झण्डा।
हम शत्रु के किले पर फहराय तो अच्छा हो॥

आनन्द की ओर

(श्री रामसिंह जी वैद्य आरोग्य मन्दिर यमुनानगर)

(गतांक से आगे)

एक बालक अपना अज्ञानता ... मिट्टी में खेलने में अभी तक सुख अनुभव करता है ... सच्चा सुख प्राप्ति के श्रेष्ठ साधन का ज्ञान नहीं होता। ... प्रकार हमारा यह मन और इन्द्रियां सांसारिक विषयों में सुख की भावना से उसी समय तक फसे रहते हैं जब तक इनको शुद्ध सात्विक निरन्तर शान्त रहने वाले अन्तरात्मा में विद्यमान उस परम पिता के आनन्द की अनुभूति नहीं हुआ करती।

इस परम आनन्द का थोड़ा सा भी रस मिल जाने पर यह मन विषय विकारों से स्वयं घृणा करने लग जाता है। क्योंकि उसे यह स्वयं साक्षात् अनुभव हो जाता है कि विषय इन्द्रियों के स्पर्श से पैदा होने वाले सब सुखों का अन्त दुःख में होता है। फिर यह अस्थाई और दुख में अन्त होने वाले विषय दुखों को छोड़कर इस शुद्ध सात्विक शाश्वत आनन्द में मस्त रहने लगता है।

फिर ऐसे व्यक्ति का खाना पीना सोना जागना आदि व्यवहार केवल मस्त होकर अपने कर्तव्य को निष्काम भाव से प्रभु आज्ञा समझ कर करेगा। उस परम-पिता के आनन्द की प्रसादी को प्राप्त करके स्वयं सदा शांत, गम्भीर, मधुर भाषी, कर्तव्य परायण और आशावादी तथा आनन्द में मग्न रहेंगे और अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों को सब प्राणियों को अपने जीवन से कल्याण करता हुआ अपना जीवन व्यतीत करेगा। इस प्रकार उसका जीवन सौंदर्य और आनन्द से भरपूर हो जावेगा और उस शांत शिव सुन्दर प्रभु का शांत शिव सुन्दर पुत्र बनकर अपने जीवन के परम लक्ष्य आनन्द को प्राप्त करके अपने जीवन को सफल बनाने का सौभाग्य प्राप्त करेगा।

परम-पिता परमात्मा से यही प्रार्थना है कि जैसे इस श्रेष्ठ मार्ग पर चलाकर मेरे जीवन का कल्याण किया। सब मानव बन्धुओं को शक्ति प्रदान करें ताकि हम सब अपने जीवनों को पवित्र बनाकर इस सृष्टि को सुन्दर बनाने में अपना कर्तव्य पालन करें और इस प्रकार अपने परम-पिता के अमृत पुत्र बनकर उस परम पिता के इस आनन्द की प्राप्ति करें और दूसरों को इसकी प्राप्ति में सहयोग देते हुए अपना जीवन व्यतीत करें।

आर्यसमाज नंगल टाउनशिप का वार्षिक चुनाव

प्रधान—श्री जसवंत राय जी उपप्रधान—बलबीर बहादुर जी धवन और मोहनलाल जी बजाज, मन्त्री—श्री कृष्णलाल जी गुप्ता, उपमंत्री—मनोहरलाल जी नन्दचहल, प्रचारमन्त्री—कलीराम भार्गव, खजांची—श्री धर्मवीर खन्ना, जागीरिलाल जी शर्मा, पुस्तकाध्यक्ष—सत्यपाल जी भाटिया व नारायणदास जी भाटिया, श्री प्रधान जी को अंतरंग सभा के सदस्यों को चुनने का अधिकार दिया गया। नये मन्त्री मंडल ने वेद प्रचार के कार्य को धूमधाम से आरम्भ करने का निश्चय किया है उत्सव भी धूमधाम से हो रहा है। —निवेदक: मनोहरलाल

आर्य समाज भीमनगर—आर्य समाज भीमनगर गुड़गांव में निरन्तर एक सप्ताह तक सामवेद का यज्ञ होता रहा। इस में सभा की ओर से पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री तथा पं. राजपाल मदनमोहन जी की चिमटा भजन मंडली सम्मिलित हुई। प्रातः काल यज्ञ तथा प्रवचन तथा भजन होते थे। दोपहर को भिन्न २ स्थानों पर प्रचार चलता तथा रात को मन्दिर में वेद कथा व भजन होते थे। वहां के नर नारी बड़ी श्रद्धा से भारी संख्या में आते थे। पूर्णाहुति के दिन तो भारी समारोह था। उस में आचार्य सत्य भूषण जी पधारे। पं. बलदेव जी, पं. जयदेव जी शास्त्री शामिल थे। समाज के प्रधान श्री. आत्मप्रकाश जी, मन्त्री श्री राम चन्द जी, मान्या माता जी तथा सबने समाज सेवा में कमाल किया। सभा को १०१) रु. वेदप्रचार मार्ग व्ययमें दान मिला। धन्यवाद।

आर्यसमाज राम नगर करनाल का वार्षिक महोत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया गया जिस में स्वामी रामेश्वरा नन्द जी महाराज, पं० त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, पं० ज्ञानेन्द्र जी शास्त्री, पं० राजपाल मदन मोहन जी मंडली, पं० जयदेव जी, पं० चन्द्रसैन जी आर्य हितैषी आदि पधारे। समाज के सारे अधिकारी डा. जयदयाल जी प्रधान, हकीम चोथूराम जी मन्त्री तथा सारे भाई बहन बड़ी ही लग्न से काम करते हैं। अपना मंदिर बन रहा है। करनाल से पं. विश्वम्भर दत्त जी तथा समाज के अन्य सज्जन भी काफी संख्या में पधारे। प्रि. मेलाराम जी वर्क, लाला माम चंद जी प्रधान श्री रामधन जी डा. गणेशदास जी तथा अन्य सज्जन भी पधारे। बड़ा ही शानदार समारोह था।

आर्य गर्ल्स स्कूल करनाल—करनाल का नगर इस समय आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं का एक शानदार केन्द्र बना हुआ है। अपना डी० ए० वी० स्कूल, डी० ए० वी० कालेज फार वोमेन तथा जेहलम वाला आर्य गर्ल्स हायर सैकंड्री स्कूल है। इस गर्ल्स स्कूल में १२ सौ लड़कियां शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। स्कूल में मुझे और पंडित राजपाल मदन मोहन जी की भजनमंडली को प्रचार करने का सौभाग्य मिला। शिक्षा की यह विशाल छावनी है जहां पर इतनी संख्या में लड़कियां शिक्षा पा रही हैं। देखकर मन बड़ा प्रसन्न हुआ। जहां पर प्रतिवर्ष परीक्षाओं में शानदार परिणाम रहते हैं वहां पर इस बार भी नतीजे कमाल के हैं। साथ ही इस देहली की धार्मिक ज्ञान परीक्षा में ५० लड़कियां बैठीं और सारी पास हो गईं। उनमें अमिता ने ८१ अंक लेकर सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया है। वहां की माननीया प्रिंसिपल श्रीमती कपिला जी एम० ए० बड़ी ही योग्य, शासनकार्य में प्रवीण तथा जीवन में बड़ी सरल किन्तु उच्च हैं। उनकी देखरेख में स्कूल बड़ी उन्नति कर रहा है। हमें बड़ी प्रसन्नता यह देखकर हुई कि स्कूल में आर्यसमाज के पुराने अनुभवी, सौम्यमूर्ति, आदर्श जीवन श्री रामधन जी अपने जीवन तथा शिक्षण से बड़ा भारी कार्य कर रहे हैं। सारी लड़कियां उनको पिता जी कहकर पुकारती हैं। स्कूल का वातावरण धार्मिक भाव, समाज प्रेम देखकर मन गद्गद् हो गया। प्रतिसप्ताह समाज में लड़कियां बड़े सुन्दर प्रस्ताव, भजन तथा कविताएं पेश करती हैं। इस संस्था से समाज का मस्तक ऊंचा है।—सं०

डी.ए.वी. हायर सैकण्डरी स्कूल करनाल का (कोर)परीक्षा परिणाम

स्कूल का हायर सैकण्डरी (कोर) का परीक्षा परिणाम ८० प्रतिशत रहा। ५ छात्र मैरिटलिस्ट में आये हैं। श्री गुरुचरण सिंह सपुत्र श्री सत्तनाम सिंह अध्यापक गवरनमैंट नार्मल स्कूल करनाल ६५३ अंक प्राप्त करके जिला करनाल में प्रथम रहा है। इस सफलता का श्रेय स्कूल के प्रिंसीपल श्री मोतीराम जी तथा उनके सुयोग्य स्टाफ के ऊपर है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०४७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये 6 JUN 1963

वर्ष २३ अंक २३) रविवार २७ ज्येष्ठ २०२०— ९ जून १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तयः

वृश्चामि शत्रूणां बाहून्

मैं शत्रुओं को, राष्ट्र का घात करने वाले तथा सबको पीड़ा देने वाले जितने भी शत्रु कहे जाने वाले बुरे तत्व हैं। उनकी अपनी शक्ति से भुजाओं को, शक्ति को काट देता हूं।

क्षिणामि ब्रह्मणा मित्रान्

मैं अपने ब्रह्मणा—ज्ञान से, ईश्वर विश्वास तथा बल से अमित्रों को—मानवता के शत्रुओं को क्षिणामि नष्ट करता हूं। प्रभु की दी शक्ति के द्वारा मैं सारे विरोधियों का विरोध शान्त कर देता हूं।

उन्नयामि स्वानहम्

मैं स्वान—जो अपने हैं अर्थात जो सबके भले में लगे हैं, विश्व के उपकारक हैं, राष्ट्र के हितैषी हैं उनको ऊंचा करता हूं। उनको उठाने में सहयोगी बनता हूं।

अथर्ववेद

वेदामृत

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः॥

ऋ० म० ७ सू० ३५ मन्त्र १०

अर्थ—(शं नः) शान्ति करने वाला हो हमारे लिए (देव.) प्रकाशमय प्रभु (सविता) सब का उत्पन्न करनेहारा और (त्रायमाणः) सब का त्राण-रक्षा करने वाला (शं नः) हमें सुख देवे और (भवन्तु) होवे ये (उषस.) उषाकाल प्रभात की अमृतमयी वेलाएं (विभाती.) प्रकाश से भरी हुई हैं। (शं नः) हमें शान्ति देवे यह (पर्जन्यः) मेघ बादल (भवतु) होवे (प्रजाभ्यः) सारे जीवों के लिए (श नः) हमें सुखदायक हो (क्षेत्रस्य) विश्व का (पतिः) स्वामी तथा राज्य का स्वामी राजा एवं भूमि का पति कृषक (अस्तु) कल्याणकारी हो (शम्भुः) शान्ति का देने वाला सदा हमें आनन्द देवे।

भाव.—हे सब के पालक, धारक, उत्पादक और शुभ पथ पर चलने की प्रेरणा देने वाले प्रभो! आपका शुभ आशीर्वाद सदा हमें मिलता रहे। ये प्रतिदिन प्रभात के समय चमकने तथा जीवन देने वाला उषा-काल हमे सुखी रखे। हमारी प्रति प्रभात कल्याण कारी हो। अमृत की वर्षा करने वाले बादल समय २ पर प्यासी धरती को तृप्त करें तथा अन्न भण्डारों से विश्व को पालने वाले हमारे कृषक लोग सदा कृषि पदार्थों से सबका मंगल करें। इस सारे जगत् रूपी खेत का पति शम्भु सबका कल्याण करे। सबका भला करो भगवान्—सं.

चीन ने पुनः हमला किया तो बड़ी गर्म-जोशी से गोलियों से स्वागत किया जाएगा

प्रतिरक्षामन्त्री श्री चह्वाण की घोषणा

नैनीताल २६ मई—प्रतिरक्षा-मन्त्री श्री वाई०बी० चह्वाण ने कल सायं यहां एक विराट् सार्वजनिक सभा को बताया कि यदि चीनियों ने हमारी सीमाओं पर दोबारा हमला किया तो उनका गोलियों से 'बड़ी गर्मजोशी के साथ' स्वागत किया जाएगा।

श्री चह्वाण ने कहा—हम अपनी प्रादेशिक अखंडता की हर मूल्य पर रक्षा करने को कृत संकल्प हैं। हम अपने देश को सैनिक और आर्थिक रूपसे मजबूत बनाने के लिए कठोर परिश्रम कर रहे हैं ताकि अपनी सीमाओं पर किसी भी भावी हमले को सफलता-पूर्वक असफल बना सकें।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

बृहदारण्यकोपनिषद् का सार

(श्री बलदेव राज जी साधु आश्रम होशियारपुर)

तीसरे अध्याय में बृहदारण्यकोपनिषद् का बहुत महत्व पूर्ण व्याख्यान प्रारम्भ होता है। कुरु-पांचाल के ब्राह्मण विदेह के राजा जनक के हां ब्रह्म तत्व का निर्णय करने पहुंचे और उन में अन्यतम ब्रह्म-तत्व के ज्ञाता के लिए जनक एक हजार गौएं जिन में सोना मढ़ा हुआ था देने का वचन करता है इतने सुन्दर पुरस्कार के लिए तथा इतने विद्वानों में प्रतिष्ठित होने के लिए प्रतिद्वन्द्वियों को होड़ सी लग जाती है परन्तु किसी की हिम्मत नहीं पड़ती कि उठकर अपने आपको सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म घोषित करे इतने में याज्ञ-वल्क्य अपने शिष्यों को कहता है कि वह उन गौओं को हांक ले चले इस पर ब्राह्मण-क्रुद्ध हो जाते हैं और याज्ञ-वल्क्य पर प्रश्नों की बौछार कर देते हैं जिनका उत्तर दिये बिना तुम गौएं नहीं ले जा सकते। प्रथम ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य और अश्वल का संवाद है। अश्वल पूछता है कि यजमान किस प्रकार मृत्यु की पहुंच से बाहिर होता है उसका जवाब है होता के रूप में ऋत्विज के द्वारा अग्नि से और वाणी से। इसी प्रकार दिन-रात की पहुंच से बाहिर यजमान अध्वर्यु के रूप में ऋत्विज से, चक्षु से तथा आदित्य से, पक्षों की पहुंच से बाहिर उद्गाता के रूप में ऋत्विज से, वायु तथा प्राण से बाहिर होता है। स्वर्ग-लोक को जाने का साधन याज्ञवल्क्य ने ब्रह्म के रूप में ऋत्विज से, मन से तथा चन्द्रमा से बताया है। अश्वल बाद में और भी याज्ञिक कर्म-काण्ड सम्बन्धी प्रश्न करता है, आहुतियों की संख्या पूछता है उन से प्राप्त होने वाले लोक की संख्या पूछता है जिसका उत्तर याज्ञवल्क्य भली भांति देता है। इन प्रश्नों के अन्तर्गत यज्ञ में देवताओं, स्तोत्रों की संख्या, पुरोनुवाक्या, याज्या व शस्या प्रतीक प्राण अपान और व्यान को बताता हुआ अश्वल को चुप करा देता है।

दूसरे ब्राह्मण में आर्त-भोग याज्ञवल्क्य से प्रश्न करता है वह ग्रहों के सम्बन्ध में पूछता है। याज्ञवल्क्य प्राण, वाणी, जिह्वा, श्रोत्र, मन आदि को ग्रह बताता है क्योंकि यह अपने-अपने सहायक गुणों से अपने व्यापारों का ग्रहण करते हैं। दूसरा प्रश्न वह यह पूछता है कि मृत्यु किसका अन्न है। जिसका उत्तर यह है कि अग्नि ही मृत्यु है और उसको बुझाने वाला पानी है। तीसरे प्रश्न के उत्तर में याज्ञवल्क्य कहता है कि मरने वाले व्यक्ति के साथ उसके प्राण नहीं जाते वे पंच-भूतों में लीन हो जाते हैं। अगले प्रश्नोत्तर में नाम की महिमा गाई गई है। अन्त में मरने वाले व्यक्ति की सारी इन्द्रियां पंच-भूतों में मिल जाती हैं तो पीछे क्या रहता है याज्ञवल्क्य का उत्तर है कि कर्म रह जाते हैं। शुभ-कर्म से मनुष्य पवित्र और पाप कर्म से पापी हो जाता है।

तीसरे ब्राह्मण में भुज्य और याज्ञवल्क्य का संवाद जिस में पतञ्चल-काप्य के घर मे उसकी लड़की पर आए गन्धर्व के पूछे जाने पर उत्तर मिलता है कि वह गन्धर्व सुधन्वा आंङ्गिरस है तो उस गन्धर्व को पूछा गया कि पारीक्षित लोग कहां है वही सवाल याज्ञवल्क्य से भी पूछा गया। अश्व-मेध यज्ञ का नाम पतञ्चल और उस यज्ञ के करने वाले को पारी कहते हैं याज्ञवल्क्य कहता है कि वे उस लोक को जाते हैं जिसके चारों ओर दुगनी पृथ्वी और दुगना समुद्र फैला हुआ है इस प्रकार एक बड़ा बुद्धि को चकराने वाला जवाब देकर याज्ञवल्क्य ने चुप करा दिया।

चौथे ब्राह्मण में उषस्त ने याज्ञ-वल्क्य से पूछा कि प्रत्यक्ष ब्रह्म कौन है ? याज्ञवल्क्य ने कहा वह तेरा सर्वान्तर आत्मा है आगे चल कर इसी की व्याख्या करते हुए कहा है कि व्यान, अपान, समान आदि प्राण-वायुओं को संचालित करता है तथा सब प्राणों में विद्यमान रहता है वही ब्रह्म है। आगे बताते हुए कहा है कि जैसे दृष्टि के देखने वाले, श्रवण शक्ति के सुनने वाले और बुद्धि के बोधा को कोई नहीं जानता। वह जाननेवाला आत्मा है।

पांचवें ब्राह्मण में कहोल ने वही प्रश्न याज्ञवल्क्य से किया कि वह प्रत्यक्ष ब्रह्म जो सर्वान्तरात्मा है कौन है ? याज्ञवल्क्य ने कहा जो कि भूख, प्यास, शोक, मोह व मृत्यु को लांघ जाता है। संसार की ऐषणाओं से ऊपर उठकर भिक्षावृत्ति धारण करता हुआ अभिमान से शून्य पाण्डित्य-पूर्ण रहता हुआ मौन का अवलम्बन करे तब वह पूर्ण ब्राह्मण है। ऐसा व्यक्ति आत्मा को पा लेता है।

छठे ब्राह्मणमें गार्गी याज्ञवल्क्य से प्रश्न पूछती है कि यह सब-कुछ किस में ओत-प्रोत है उसका उत्तर यह है तो जल किसमें ओत-प्रोत हैं तो वायु में। याज्ञवल्क्य धीरे-धीरे ब्रह्मलोक तक पहुंचता है। गार्गी के प्रश्न में याज्ञ-चुप हो जाता है।

सातवें ब्राह्मण में उद्दालक प्रश्न पूछता है कि पतञ्जल काप्य के घर में उसकी पत्नी गन्धर्व गृहीता थी। उस गन्धर्व ने पतञ्जल को पूछा कि तू सारे लोक व परलोक के प्राणियों को ग्रंथित व नियमित करने वाले सूत्र को जानता है। पतञ्जल ने कहा 'नहीं' अतः 'हे याज्ञवल्क्य ! गान्धर्व का कौन वह सूत्र था। याज्ञवल्क्य ने कहा कि वह सूत्र वायु है जिससे सब लोक, प्राणी व शरीर संग्रथित रहते हैं। अन्तर्यामी तत्त्व के सम्बन्ध में उसने कहा कि अग्नि, अन्तरिक्ष वायु व द्यु लोक के भीतर व बाहिर आत्मा अन्तर्यामी अमृत है वही आत्मा अन्य वस्तुओं सूर्य चांद सितारे शरीरों के अन्दर बाहिर है। वाणियों के भीतर रहता हुआ भी वाणियों से नहीं जाना जाता। आंख से न देखा जाता हुआ भी देखने वाला है। इस आत्मा से भिन्न सब निर्लेप (अन्त-हीन, सान्त्वना) ज्ञान है। आठवें ब्राह्मण में गार्गी के दो प्रश्नों में प्रथम यह कि वह कौन-सा तत्व है जो द्यु लोक से ऊपर व पृथिवी के अन्दर है याज्ञवल्क्य ने कहा वह तत्व आकाश के अन्दर है और इन दोनों के बीच में है। दूसरा प्रश्न यह था वह जो तत्व है वह यदि आकाश में है तो आकाश किस में ओत-प्रोत है। याज्ञवल्क्य ने कहा 'आकाश उस अक्षर तत्व (ब्रह्म) में ओत-प्रोत है जो इन्द्रियातीत, गुणातीत व स्वभावातीत है। इसी की आज्ञा में दिन-रात, मास-ऋतुएं चलती हैं यह काल का नियंता है इसको न जानते हुए मनुष्य का सकल श्रम व्यर्थ है। यह तत्व सब का द्रष्टा, श्रोता, मनन करने वाला है।

अन्तिम-ब्राह्मण में शाकल्य ने प्रश्न किए। 'हे याज्ञवल्क्य देवता कितने हैं ?' याज्ञवल्क्य ने कहा 'देवता या तो छः हैं, तीन हैं, दो हैं डेढ़ हैं अथवा एक है' उसने फिर पूछा कि वे तीन सौ तीन और तीन हजार कौन हैं। उत्तर में कहा 'वास्तव में३३देवता हैं अन्य रूप इन्हीं की महिमा हैं। वे ८ वसु, ११ रुद्र १२ आदित्य, इद्र व प्रजापति हैं। इन सभी का रूप याज्ञवल्क्य बताते हैं। फिर वह छः व तीन सम्बन्ध में बताता है कि तीन देवों में तीन लोक हैं दो देवताओं में अन्न व प्राण हैं। अध्यर्ध वायु है, एक ही ब्रह्म है। इस आत्मा का स्थान पृथ्वी, अग्नि लोक है देखने की क्रिया इसका

(शेष पृष्ठ ३ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २७ ज्येष्ठ २०२०, ९ जून १९६३ [अंक २३

राष्ट्र के ये शत्रु

राष्ट्र के शत्रु कई प्रकार के होते हैं। एक वे जो बाहर से आक्रमण करके देश को नानाविध हानि पहुंचाते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो अन्दर बैठे हुए अपने कुत्सित कार्यों के द्वारा जनजीवन को विघटित करने में लगे रहते हैं। इन राष्ट्रघाती लोगों में एक वे भी हैं जो देश में रहते हुए खाने-पीने आदि जीवन के उपयोगी पदार्थों में मिलावट करके अपने स्वार्थ के लिए दूसरों के स्वास्थ्य एवं जीवन के साथ खिलवाड़ करते हैं। इनके स्वार्थमय कार्यों से देश की जनता को जितनी हानि होती है—उसका अनुमान लगाना कठिन है। जब तक देश की सरकार राष्ट्र के इन भयंकर शत्रुओं के विरुद्ध कड़ा पग न उठायेगी, ऐसे लोगों को कठोर दंड न देगी तथा देश की जनता इन आसुरी प्रवृत्तियों वालों का विरोध करने के लिए प्रबल आंदोलन करें। देश के ऐसे लोगों को क्षमा करना या उनकी उपेक्षा करना देश की सेवा नहीं प्रत्युत् राष्ट्र के प्रति द्रोह है। इन देश घातक तत्वों को ठीक करना होगा।

आये दिन समाचार सुनने में मिलते हैं कि खाने-पीने के पदार्थों में स्वास्थ्य घातक पदार्थ मिला कर लोगों को खिलाये जा रहे हैं। आज की कोई भी तो वस्तु नहीं मिलती। जिधर देखो मिलावट ही मिलावट है। मिलावट के साथ २ बनावटी पदार्थों का भी भारी प्रवाह चल रहा है। दूध में सप्रेटा मिला कर शुद्ध दूध के भाव बेच कर जीवन से खिलवाड़ हो रहा है। न जाने पानी मिले दूध से कितनी बीमारियां पैदा हो रही हैं। अभी २ समाचार पत्रों में सब ने पढ़ लिया होगा कि दूध बेचने वाले रात के अन्धेरे में पटियाला से सप्रेटा दूध लेकर अपने २ दूध में मिला कर ऊंचे भाव दिन में आकर बेचते हैं। वे छापे मार कर पकड़ लिये गये। यह केवल पटियाला में ही नहीं अपितु प्राय. सब जगह यह नाटक खेला जाता है। नगरों की जनता कैसा शुद्ध दूध पीती है सब जानते हैं। केवल दूध की ही बात नहीं बल्कि खाने-पीने के प्रत्येक पदार्थ मे मिलावट होती है। अभी २ पटियाला में क्या हुआ। वहां की नगर पालिका के कुछ सज्जनों ने कई दुकानों पर छापे मारे। उनको कई दुकानों से बच्चों को खिलाने वाले मीठे चने तथा मीठी फुलियां के ऊपर जो खांड चढ़ी होती है उस में भी दूध पथरी को पीस कर मिलाया गया था। उसे पानी में घुल गई किन्तु उस में **Soap Stone** का चूर्ण था वह पानी के नीचे बैठ गया। अब तनिक सोचिये कि बच्चों के भोले जीवन स्वास्थ्य का भी ऐसे स्वार्थी लोगों को विचार न आया। चार पैसों के लोभ के लिए दूध पथरी का चूर्ण मिलाकर खिलाने में भी संकोच लज्जा नहीं की। न जाने कितना लकड़ी का बुरादा मिरचों में मिलाया जाता है। हल्दी तथा चाय में पता नहीं क्या २ मिश्रण हो रहा है। और तो और दवाई में भी मिलावट की जाती है। आज कोई भी ऐसी वस्तु नहीं जिसमें मिलावट न की जाती हो। गत दिनों तेल में मिलावट करके पकौड़ों से कई अमूल्य जीवन चले गये थे। अब भी सरसों के तेल में विषैला पैट्रियोलियम मिला कर खिलाने में चातुरी अनुभव की जाती है। ऐसे लोगों को न प्रभु का भय, न धर्म का विचार, न समाज की मर्यादा, न पाप का डर तथा न किसी प्रकार की मानवता का ध्यान है। उनके सामने केवल एक ही बात है कि किस प्रकार से चार पैसे अधिक कमाये जा सकते हैं। यही कारण है कि आज कोई भी पदार्थ शुद्ध नहीं मिलता। हर वस्तु मे धोखा एवं प्रत्येक काम मे मिलावट है। यह लोग भी राष्ट्र के बड़े शत्रु हैं, वैरी हैं, घातक है तथा जीवन से खिलवाड़ करने वाले हैं। देश मे बैठे हुए देश की भारी हानि का कारण बने हैं। ऐसे राष्ट्रविरोधी तत्वों का इलाज क्या है?

केवल एक है कि सबसे पहले सरकार ऐसे दुष्टों के विरुद्ध शीघ्र कड़ा पग उठाये। साधारण से दण्ड से कुछ सुधार नहीं हो सकता। जब तक इन को उचित दण्ड देने के लिए कठोर कदम नहीं उठाया जाता तथा विशेष अपराधी मान कर विशेष व्यवहार नहीं किया जाता, तब तक ऐसा सुधार नहीं होगा। विधान में दण्ड है पर इतने वर्षों के बाद भी भारत की अवस्था प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। खाद्य पदार्थों में मिलावट बढ़ती ही जा रही है। सरकार को जैसे चीनी शत्रु का समुचित प्रबन्ध करना पड़ता है उसी प्रकार से इनके अन्दर के घातक शत्रुओं का भी पूर्ण रूपसे कड़ा प्रबन्ध करना चाहिए जो पापी लोग अबोध बच्चों के जीवन के साथ भी खिलवाड़ कर सकते हैं उन से और किस अच्छी बात की आशा की जा सकती है? ऐसे लोगों को कभी भी क्षमा नहीं करना चाहिए। नम्र व्यवहार करना उचित नहीं। दस बीस को कठोर दण्ड दे दिया जाये तो आगे के लिए सब के कान खड़े हो जायेंगे। साथ २ हम जनता से भी कहना चाहते हैं कि वह भी समाज के शत्रु बने ऐसे लोगों के विरुद्ध प्रबल अभियान आरम्भ करे। तभी देश का कल्याण होगा। ये देश के शत्रु हैं। इन से उपेक्षा देश से द्रोह करना है। इन शत्रुओं का समुचित कड़ा प्रबन्ध करना पड़ेगा।

—त्रिलोक चन्द्र

उपनिषद् का सार

(पृष्ठ २ का शेष)

साधन और सब जीवों का आश्रय वही ब्रह्म है। धीरे २ याज्ञवल्क्य इच्छा, रूप आकाश, अन्धकार, जल, रेतस, आदि को इस ब्रह्म का आश्रय बताता है। तथा इसके गुणों व व्यापारों को इस आत्मा के ही अन्तर्भूत मान कर इसका ही बखान करता है। इस प्रश्न के उपरांत याज्ञवल्क्य ने शाकल्य को कहा कि तुम्हें इन ब्राह्मणों ने आगे करके जलते कोयलों की अंगीठी बना दिया है। उसने पूछा, 'तुम्हें क्या आता है' याज्ञवल्क्य ने कहा, 'मैं सभी दिशाओं व उनके देवताओं को जानता हूं'। प्राची दिशा का आदित्य आंख में, रूप में प्रतिष्ठित है। रूप हृदय में प्रतिष्ठित है क्योंकि हृदयों रूप प्रकट होते हैं। इसी अन्य देवताओं के सम्बन्धित प्रश्नोत्तरों में याज्ञवल्क्य बताता है कि सत्य, वाणी, रेतस आदि प्रतिष्ठित होते हैं। हृदय की प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में प्रश्न किए जाने पर याज्ञवल्क्य करता है।

अन्त में शाकल्य प्रश्न करता है: 'तुम्हारी आत्मा व शरीर कहां' उत्तर में कहा 'प्राण में प्राण व्यान में, व्यान उदान मे, उदान समान मे' वास्तव मे आत्मा शब्द को नेतीनेति कहकर बताया गया है। आत्मा को इन्द्रियों व तप से ग्रहण नहीं किया जाना सकता जो आत्मा अविनाशी, असंग, निर्लेप है। न हनन न पीडन इसका होता है। जो पृथ्व्यादी आठ स्थानों अग्न्यादि आठ लोकों, अमृतादि आठ देवों को, शरीर आदि आठ पुरुषोंको पहचान लेता है वह विशुद्धात्मा हो जाता है।

आर्यसमाज के दीवाने, मस्ताने और परवाने

(ले०—श्री भवतराम जी शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर)

कोई राष्ट्र, जाति अथवा समाज धुन के धनियों के बिना उन्नत नहीं हो सकता। उसके सदस्यों की लग्न शीलता यहां तक बढ़ गयी हो कि दुनिया उन्हें, दीवाने, मस्ताने और परवाने कहने पर विवश हो जाए। आर्यसमाज भी ऐसे पागल व्यक्तियों के त्याग और तपस्या के कारण ही समाज शिरोमणि कहलाया। इस समय भी यदि वह जीवित है तो उन आर्य वीरों के पुरुषार्थ से जिन्हों ने उसकी सेवा में शरीर का मोह त्याग दिया है और सब कुछ भुला कर आर्यसमाज को ही अपना इष्ट देव मान रखा है।

'कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं'

विभाजन के पश्चात् जो आर्य भाई भारत पधारे उन्होंने स्वयं को लुटकर आर्यसमाज को मालामाल कर दिया। आप बेघर हुए परन्तु आर्यसमाज को आबाद कर दिया। उन पुरुषार्थियों ने सोलह वर्षों में चमत्कारिक कार्य किया। जहां २ बसे वहां २ आर्यसमाज स्थापित किये, और स्कूल व कालेज खोल दिए और उन मतवाले आर्य भाइयों के आगे मैं नत मस्तक होता हूं। आर्यसमाज के स्वर्णिम युग में महात्मा हंसराज जी ने हस २ कर तन, मन और धन लुटा दिया। महात्मा मुंशीराम जी ने सर्वस्व न्योछावर कर दिया।

धर्मवीर प० लेखराम जी ने भी गजब ढा दिया जब वह मुसलमान होने वाले कुछ हिन्दुओं को बचाने सम्बन्धी पत्र की प्राप्ति पर खाना बाच में छोड़ने के अतिरिक्त अपने रोगी पुत्र की सुध-बुध बिसार कर चल पड़े। दूसरे दिन घर से पुत्र की मृत्यु का तार मिलता है तो कहते है—'फिकर ही क्या है हर इक आया है जाने को' कैसा धर्म प्रेम' प० गुरुदत्त जी एम० ए० 'विद्यार्थी' ने तो दिन रात मौखिक और लेखबद्ध कार्य करते हुए क्षय रोग सहेड़ लिया और उसी नामुराद बीमारी से वह अकाल मृत्यु (२६ वर्ष की आयु में) का शिकार हुए।

आचार्य रामदेव जी को प्रचार की लग्न में अपने तन की भी सुध न थी। स्वाध्यायशील उनके सामने कौन होगा? सादगी की साक्षात मूर्त्ति! जब दर्शन किये नंगे पांव और नंगे सिर ही मैंने उन्हें देखा। बाल तो उन्होंने संवारने ही क्या थे। आर्यसमाज दारेसलाम (ईस्ट अफ्रीका) की फाइल में मैंने मोम्बासा से उनका लिखा पत्र पढ़ा था। उन्होंने वहां के प्रचार का विवरण देकर अपने आने की तिथि और पहिले व्याख्यान के विषय से सूचित किया था। विषय था 'धर्म की नय्या डूब रही है, बचालो।' उस पत्र को पढ़ने २ मैं ऐसा अनुभव करता था मानो वह तूफान मेल की भान्ति शीघ्र २ उत्सुकता पूर्वक अपने विचारों के प्रवाह में बहाये लिये जा रहे हैं। जिस प्रवाह से बोलते थे लिखने की शैली भी वैसी प्रवाह धारा थी।

प्रचार की लग्न सम्बन्धी उनके जीवन की एक घटना ही पर्याप्त है। मृत्यु के कुछ वर्ष पूर्व आर्य समाज के किसी काम पर कलकत्ता गए। उन दिनों उनके रुधिर का दबाव बढ़ा हुआ था। डाक्टरों ने उन्हें विश्राम करने की अनुमति दी किन्तु वह जमशेदपुर चले गये। वहां के डाक्टर ने उनकी शारीरिक परीक्षा की तो रुधिर का दबाव बहुत अधिक निकला और परामर्श दिया कि वह लेटे रहें। उनके व्याख्यान की घोषणा हो चुकी थी पर डाक्टर के आग्रह पर निश्चय हुआ कि भाषण स्थगित कर दिया जाये। ऐसी घोषणा करने के लिए समाजाधिकारी मन्दिर को चल दिये परन्तु अब यह घोषित किया जा रहा था कि रुग्णावस्था के कारण उन का व्याख्यान स्थगित कर दिया गया है आचार्य रामदेव जी वहां जा पहुंचे और व्याख्यान देने के लिए खड़े हो गए। उनके स्मरणीय शब्द थे—"डाक्टर कहते हैं कि मैं न बोलूं परन्तु मैंने मौन को अहान कर रक्खा है। चिकित्सकों का कथन है कि यदि मैं व्याख्यान देता रहा तो शीघ्र मर जाऊंगा किन्तु मैं आचरण से सिद्ध करना चाहता हूं कि मैं आर्य समाज की सेवा के लिए जीवित रहूंगा।" कैसे थे वह लग्नशील व्याख्याता!

पुराने आर्य भाई आर्य प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक पं. पूर्णानन्द जी को जानते हैं। संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे और वेद शास्त्रों का अच्छा ज्ञान था। उन दिनों वही शास्त्रार्थ करने वाले थे। वह 'स्वामी' से 'पंडित' बने थे। वह पहिले आर्य प्रचारक थे जो सन् १९०८ में अफ्रीका प्रचारार्थ गए। दूसरी बार सन् १९१० में और तीसरी बार प० माथुर शर्मा भजनोपदेशक सहित सन् १९२२ में पहुंचे थे। उन के सम्बन्ध में स्व० पं. चमूपति से सुना था कि सभा ने उन्हें प्रचार का पुरुगम देकर भारत में कहीं भेजा था। उनकी अनुपस्थिती में उनके पुत्र का देहान्त हो गया और उनकी धर्मपत्नी ने तार द्वारा सूचित किया तो उन्होंने उत्तर दिया था— "जो होना थ सो हो गया। अब आने की क्या आवश्यकता है? मैं प्रोग्राम पूरा करके ही लौटूंगा।" धन्य थे वह धुनी प्रचारक! श्री देवीदयाल चख्ढोक के ज्येष्ठ भ्राता महात्मा चरण जीत लाल का बच्चा काल का ग्रास हो जाता है। वह अपने वचनानुसार समाज मे व्याख्यान देने चले जाते हैं। व्याख्यान ५ मिन्ट पूर्व समाप्त करते हुए घोषणा करते हैं—'मेरे बच्चे की मौत हो गयी। क्षमा करें। ५ मिनट पहिले जा रहा हूं। जाकर अन्त्येष्टि संस्कार करना है।' प्रादेशिक सभा के महोपदेशक पं त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री की पुत्री दिवंगत होती है और वह अन्तिम क्रिया के पश्चात् आर्यसमाज के व्याख्यान मंच पर देखे जाते हैं। मोह त्याग और धर्मप्रचार की लग्न का कितना सुन्दर उदाहरण!

पूज्य पं. सत्यपाल जी सिद्धान्तालंकार ने २६ वर्ष ईस्ट अफ्रीका में प्रचार कार्य किया। उद्भट विद्वान् है। 'आर्यसमाज के पण्डित जी, के नाम से सारे पूर्वी अफ्रीका की जनता में प्रसिद्ध थे। सारी हिन्दू जनता के पिता थे। स्वर्गीय स्वा० स्वतन्त्रतानंद जी ने अपनी एक कृति में लिखा है—'जहां और उपदेशक कुछ समय प्रचार करके भारत लौट आते थे वहां इन्होंने यह कथा प्रसिद्ध कर दी 'ज़मीं जुम्बद न जुम्बद न गुल मुहम्मद'—अर्थात् ज़मीं हिले तो हिले गुलमुहम्मद अपनी अपनी जगह से न हिलेगा। समाज सेवा के दीवाने हैं और हैं प्रभावशाली वक्ता। मेरे पूछने पर नैरोबी आर्य कन्या पाठशाला के प्रिंसिपल ने कहा था—'परमात्मा की खोज सुगम है पर पडित जी का मिलना कठिन है। कोई नहीं जानता कि पण्डित जी इस समय कहां होंगे? हस्पताल में किसी रोगी का सिर दबा रहे होंगे या किसी रुग्ण परिवार की सेवा में

(शेष पृष्ठ ५ पर)

मस्ताने और परवाने

(पृष्ठ ४ का शेष)

रात्रि जागरण कर रहे होंगे और नहीं तो जहां कहीं, कोई भी पुस्तक दिखाई पड़ गयी तो लेटे हुए अथवा घूमते फिरते पढ़ रहे होंगे।'

हिन्दू ही नहीं समस्त सम्प्रदायों के लोग उन्हें श्रद्धा से देखते थे। मांसाहारी अफ्रीकनों की बस्तियों में केवल उबले हुए शाक खाकर वह महीनों उनमें हिन्दी और हिन्दू संस्कृति का प्रचार करते रहे। अहिंसा की शिक्षा ग्रहण कर अनेक अफ्रीकन उनके शिष्य बन गए हैं। उनका अधिकांश समय सेवा और जन सम्पर्क में बीतता था। उत्सवों और संस्कारों पर भोर के समय पण्डित जो सारी सृष्टि के प्रजापति दीखते थे। पण्डित जी के व्याख्यान की विज्ञप्ति द्वारे सलाम में ही चुकी है। भाषण से दस मिनट पूर्व ही जनता का अपार समूह समाज मन्दिर में एकत्रित हो गया। मैं आर्य भाइयों के साथ उनके पास बैठा हूं। थोड़ी देर में पण्डित जी को कै होती है नब्ज़ देखो तो ज्वर चढ़ रहा है। मैं अपनी धर्म पत्नी को बुला कर उसे उठाने के लिए कहता हूं और स्वयं उनका हाथ मुंह धुलाता हूं। वहां बैठे प्रधान और मन्त्री व्याख्यान बन्द रखने का प्रस्ताव पारित करते हैं और पण्डित जी अस्वीकार कर झट वेदी पर विराजमान हो जाते हैं और उस दिन सवा घण्टे से कम क्या बोले होंगे।

पं० गणपति शर्मा के सम्बन्ध में अवश्य पढ़ रक्खा था कि एक बार १०३ डिग्री ज्वर होने की दशा में भी वह डेढ़ घण्टा बोले थे पर इन आंखों ने पंडित जी की प्रचार की सच्ची लग्न का अनुभव किया। देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफिर' की तो ताजी घटना है। मैं दिल्ली गया तो आ० स० नया बांस में जहां वह रोग शैया पर पड़े थे बीमार पुरसी के लिए पहुंचा। वह निर्बल थे। दूसरे दिन रविवार था। मैं साप्ताहिक सत्संग में सम्मिलित होने गया तो साश्चर्य देखा कि उनका उपदेश था। मैं और भी चकित हुआ जब पता चला कि उन्होंने रात आ० स० पुल बंगश के वार्षिकोत्सव पर भी व्याख्यान दिया और उस रात फिर वहां उनका व्याख्यान सुना। ऐसे गरजे कि उपस्थित लोग 'वाह-वाह' कर रहे थे। इन दिग्गज प्रवक्ता का भजनोपदेश सुनने के लिए जनता रात के १२ बजे तक उठने का नाम नहीं लेती। आर्यसमाज सीता राम बाज़ार के उत्सव पर तो युवावस्था जैसी गर्जना सुनो मानो बुढ़ापा और रोग उनके पास तक नहीं फटके। फलस्वरूप दूसरे दिन उन्हें तीव्र ज्वर हो गया। पं० लेखराम जी जैसे जोशीले हैं। देखने की नहीं सुनने की चीज़ हैं।

जिन पुराने और आधुनिक प्रचारकों के प्रचार की लग्न का उल्लेख प्रस्तुत लेख में किया गया है उनका पुण्य स्मरण कर एक प्रकार की चिन्ता लग जाती है कि वैसे व्याख्याता आर्यसमाज में बहुत कम हैं और मन में विचार पैदा होता है कि वर्त्तमान दो-चार कब तक निभाते रहेंगे और उनकी स्थान पूर्ति सम्भव भी है अथवा नहीं? प्रभावशाली वक्ता ही जनता को आर्यसमाज की ओर आकर्षित कर सकते हैं। परमात्मा करे कि कोई ऐसा मार्ग निकल आए जिस के द्वारा आर्यसमाज संसार का पथ प्रदर्शन कर सके।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में एम० ए० कक्षाएं प्रारम्भ

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को भारत सरकार द्वारा यूनिवर्सिटी के समकक्ष स्वीकार किए जाने की सूचना आर्य जनता को पहले मिल चुकी है। इस सूचना द्वारा हम यह हृदयग्राहक समाचार आर्य जनता तक पहुंचाना चाहते हैं कि गुरुकुल में इसी वर्ष १५ जुलाई से निम्न विषयों में एम० ए० कक्षाएं प्रारम्भ हो रही हैं—१ वैदिक साहित्य २. संस्कृत साहित्य ३. दर्शनशास्त्र ४. प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा इतिहास ५. मनोविज्ञान। स्वतन्त्र रूप से वैदिक साहित्य विषय में एम० ए० का प्रबन्ध आज तक किसी भी यूनिवर्सिटी में नहीं हुआ है। सर्वप्रथम इसे चालू करने का श्रेय गुरुकुल को है। आशा है अन्य यूनिवर्सिटियों के लिए यह अनुकरणीय होगा। संस्कृत साहित्य में इस से पृथक् एम० ए० रखी गई है। उस में लौकिक संस्कृत की प्रधानता है, यद्यपि एक-एक पत्र वेद तथा दर्शनशास्त्र को भी दिया गया है। दर्शनशास्त्र को एम० ए० के पाठ्यक्रम में यह ध्यान रखा गया है कि इस में प्राच्य तथा पाश्चात्य दर्शनों का पूर्ण समन्वय रहे। प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा इतिहास के अध्यापन तथा अनुसंधान में गुरुकुल स्वभावतः विशेष देन दे सकता है। मनोविज्ञान आजकल का एक लोकप्रिय तथा महत्वपूर्ण विषय है। इसके लिए अत्युत्तम प्रयोगशाला गुरुकुल में पहले से विद्यमान है। इन विषयों के अतिरिक्त अन्य भी कुछ विषयों में एम० ए० कक्षाएं चालू करने पर विचार हो रहा है। हम आर्य जनों को प्रेमपूर्वक निमन्त्रित करते हैं कि वे एम० ए० की उच्च शिक्षा के लिए अपने नवयुवक छात्रों को गुरुकुल के पवित्र वातावरण में भेजें। शिक्षण, छात्रावास, खेल, व्यायाम, पुस्तकालय, संभाषण-कला आदि का उत्तम प्रबन्ध विद्यमान है। योग्य गुरुओं के निरन्तर सम्पर्क में रह कर छात्र सर्वतोमुखी उन्नति कर सकते हैं। रामनाथ वेदालंकार

प्रस्तोता, गुरुकुल कांगड़ी

आर्यसमाज मोडलटौन गुड़गांवां

का चुनाव श्री मूलचन्द जी कपूर की अध्यक्षता में निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ।

प्रधान— मूलचन्द जी कपूर, उपप्रधान—चौ० ढालूराम जी, श्री त्रिलोकनाथ जी, मंत्री—श्री जसवंत सिंह वोहरा, उपमंत्री—श्री कुन्दनलाल जी, श्री रामप्रकाश जी, कोषाध्यक्ष—पं० तीर्थराम जी, आडीटर—श्री केवल कृष्ण जी, पुरोहित—प० जयदेव जी शास्त्री, पुस्तकाध्यक्ष—(१) श्री जीवनदास जी पथिक (२) श्री ज्ञानचन्द जी। स्टोरकीपर—मा० गिरधारीलाल जी, प्रतिनिधि—वैद्य राज जगदीश चन्द्र जी मेहता।

अन्तरग सभा के सदस्य

ला० नवनीत राम जी, श्री यशपाल खन्ना, श्री जगदीश चन्द्र मेहता, मा० होतूराम जी, श्री भीमसेन आर्य वीर, श्री सुभाष चन्द्र, मा० निरंजनदेव जी, श्री मंघूराम जी।

—जसवंतसिंह मन्त्री समाज

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

क्या ऐसे परिवार-नियोजन होगा अथवा...

(ले०—श्री करनैलसिंह 'विद्यार्थी' आर्य युवक समाज कादियां)

हमारी भारत सरकार ने परिवार नियोजन के लिये जो कदम उठाने की सोची वह तो सब ठीक ही है। अर्थात् परिवार को बढ़ाने से रोका जाये यह कदम तो अच्छा था क्योंकि इस से एक तो थोड़ी सात्विक सन्तान होती है और दूसरे उनका जीवन तन, मन आदि हृष्ट-पुष्ट होते हैं। माता-पिता का भी जीवन सुखी और समृद्धशाली बन जाता है। जिससे परिवार समाज राष्ट्र और सारा का सारा देश उन्नति की ओर अग्रसर होता है।

यद्यपि यह सारा का सारा प्रयत्न, कदम प्रशंसा के योग्य है तथापि इस कदम को आगे बढ़ाने की ओर, इसे उन्नति देने का कार्य सरकार कर रही है वह अप्रशंसनीय साबित हो रहा है। अर्थात् कई एक ऐसे कार्य हमारी सरकार करने की सोच रही है जो इस 'परिवार-नियोजन' को बहुत ठेस पहुंचा ही नहीं रहे, बल्कि भारतीय सभ्यता का भी साथ २ नाश कर रहे हैं।

अंत: मैं अपनी प्रिय सरकार से यह विनती करूंगा कि वह ऐसे २ बुरे कार्यों को, जिन को करने की वह सोच रही है सोच समझकर करने का प्रयास करे अर्थात् बन्दकर दे क्योंकि यह कदम परिवार, समाज राष्ट्र और देश ही नहीं बल्कि भारतीय सभ्यता के बिल्कुल विरुद्ध है। ये काय कौन से हैं ?

वे कार्य यही है कि स्कूलों में 'सह-शिक्षा' को उन्नत करने के लिए जो कार्य हमारी सरकार कर रही है, वे कार्य यही हैं कि स्कूलों में दूध के स्थान पर अण्डा देने की जो हमारी सरकार कोशिश करने की सोच रही है। आदि २।

क्या यह प्रयत्न हमारे 'परिवार-नियोजन' में सहायक सिद्ध हो सकते हैं ? क्या यह सारे यत्न परिवार, समाज, राष्ट्र व देश के लिए लाभप्रद हैं ? क्या यह यत्न भारतीय-सभ्यता को उन्नत होने के लिए सहायक प्रतीत हो रहे हैं। अथवा उन के डी०ए०वी० स्कूलों के के लिए जिन को स्वतन्त्र रहनेके लिए महात्मा हंसराज जैसे नौजवान ने चला कर दिखा दिया था उन डी. ए. वी संस्थाओं में-यह उक्त प्रयत्न उपयुक्त होंगे ? नहीं, नहीं यह कभी लाभप्रद नहीं हो सकते, एक, दो लाभ अनेक हानियों के समक्ष कुछ नहीं है। फिर चरित्र बेच कर यदि यह शिक्षा ली जाये तो कहां की बुद्धिमत्ता होगी।

क्यो लाभप्रद नही :—

आज विज्ञान का युग है। प्रत्येक वस्तु तर्क की कसौटी पर कस कर ही उपयुक्त मानी जाती है। फलस्वरूप विज्ञान का एक नियम है कि जैसी वस्तु, जैसा पदार्थ कोई खाता है वैसे ही गुण अर्थात् जैसे गुण उस मे होते है वैसे ही गुण खाने वाले में आ जाते हैं।

सो यही हिसाब मांस, शराब अण्डे खाने वालों में पाई जाती है। कोई भी मांस खाने वाला आप देखलें उसमे मुर्गे के, बकरे आदि के वो सभी गुण आ जायेंगे जो उसके मांस मे मिले हुए होते हैं। पर वे गुण भला कौन से होते हैं। अर्थात, जब बकरे अथवा दूसरे जानवरों को मौत के घाट उतारने के लिए ले जाया जाता है तो पहले तो उसको भय लग रहा होता है कि न जाने मेरे पर क्या बीतने वाली है इसलिए वह 'मैं-मैं' की आवाजों से आकाश-पाताल एक कर डालता है। और दूसरे उस बकरे या मुर्गे को जब झटका जाता है अर्थात् जब वह छुरी देख लेता है तो फिर वह यह समझ लेता है कि मेरी मौत नजदीक आ रही है। और तीसरे झटके के पश्चात उस जानवर का मांस तड़प रहा होता है।

अस्तु यह तीनों गुण जो कि उस मास मे होते हैं जो कि मरे हुए बकरे मे मिले होते है यह सारे गुण उसको खाने वाले मे आ जाते हैं। फलत. आप देख लीजिये मांस खाने वाले मनुष्य बहुत जल्दी डर जाते हैं। उनको किसी मुश्किल कार्य को करने के लिये क्रोधित होना पड़ता है। और ऐसे कार्य जब उनकी वश से बाहर चले जाते हैं तो फिर वह आत्म-हत्या अथवा दूसरे कार्य करने के लिये बाधित हो जाता है। इन सब के अतिरिक्त एक बड़ा गुण मास खाने वालों में यह भी देखा गया है कि वे बड़े उत्तेजित होते हैं। अब यदि वे उत्तेजित हों तो फिर वे पशुओं जैसा कार्य करने से कैसे बच सकते हैं फलतः परिवार - नियोजन कैसे सफल हो सकता है फिर।

और फिर स्कूलों में बच्चों, बच्चियों को अण्डे जैसे उत्तेजित करने वाले पदार्थ देकर, सहशिक्षा जैसी पद्धति चला कर यह कहा जाये देश मे कि परिवार नियोजन हो यह कौन मान सकता है। इन से सेहत का बनना, ऐसे मानने वाले शायद डैनमार्क में उन लोगों की सख्या से अनभिज्ञ होंगे जो लम्बी आयु और बलवान शरीर वाले है और मांस नहीं खाते अतः सरकार स्वयं सोचे कि किस में सब का भला है। और परिवार नियोजन का भी।

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यो का परम हितकर कर्त्तव्य है

आर्यसमाज सीसमऊ, कानपुर

उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा की हीरक जयन्ती समारोह के अवसर पर आर्यसमाज सीसामऊ कानपुर ने बढ़िया आर्ट पेपर पर २२×१५ इंच आकार का महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती का भव्य चित्र छपवाया, इस प्रकार का अद्भुत चित्र पहले कभी नहीं छपा, इसके किनारों पर आर्यसमाज के दस नियम अंकित हैं। चित्र के अन्दर स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी सुन्दर रूप से लिखी गई। हजार से अधिक चित्र लखनऊ में ही बिक गये थे, केवल थोड़े ही चित्र शेष हैं। मूल्य लागत मात्र केवल ॥) आने प्रतिचित्र है। २५ अथवा अधिक चित्र मंगवाने वालों के लिये डाक-व्यय मुफ्त होगा। निश्चय ही चित्र को देख कर आप को प्रसन्नता होगी। प्रत्येक आर्य के गृह में यह चित्र होना आवश्यक है।

—बलराम गम्भीर मन्त्री

श्री यशपाल सिद्धान्तालंकार

आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता आचार्य रामदेव जी के बेटे और अनथक कार्यकर्त्री श्रीमति सीतादेवी के भाई श्री यशपाल सिद्धांतालंकार का देहरादून में देहांत हो गया। श्री यशपाल ने जीवन-भर आर्य समाज की सेवा के अतिरिक्त और कोई काम नहीं किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की जिम्मेवारी वह वर्षों तक सम्भाले रहे और पूरे परिश्रम और लगन के साथ इस महान संस्था की सेवा करते रहे। श्री यशपाल सिद्धांतालंकार की मृत्यु के साथ आर्य समाज का एक निष्काम सेवक, एक विद्वान और पंजाब का एक सपूत चल बसा।

—यश

आय समाज नाहन में शानदार महायज्ञ

देवियों की श्रद्धा का ठाठें मारता सागर

सभा को वेद प्रचार के लिए चार सौ रु. मिला

आर्य समाज में गत दिनों ता. २१ मई से३० तक शानदार महायज्ञ सप्ताह मनाया गया। वहां का समाज मन्दिर तो शानदार है ही, साथ २ समाज को कार्य करने में विशेष कर माताओं और बहिनों का अनुपम उत्साह तथा यज्ञ, प्रचार में विशेष श्रद्धा देख कर मन अतीव प्रसन्न हुआ। समाज का कार्य वहां की माताओं बहिनों, के कारण बहुत ही उत्तम हो रहा है। माता सुशीला देवी, बहिन यशवती जी, द्रौपदी जी, बहिन राज राणी, बहिन सुनीता जी आदि ने समाज प्रचार तथा यज्ञ में जिस कमाल की श्रद्धा का परिचय दिया उसे देख कर तो मस्तक श्रद्धा से झुक गया। यदि ऐसी भावना और धर्म श्रद्धा दूसरे स्थानों पर भी पैदा हो जाये तो समाज का काम ऊंचा हो सकता है। मातासुशीला जी ने जिस समाज के कार्य में अपनी सारी सहयोग देनी वाली बहिनों ने समाज के प्रति निष्ठा का परिचय दिया है। उन के परिवार तथा अन्य परिवारों द्वारा सेवा श्रद्धा भावना को दिखलाया है। वह स्मरण की वस्तु रहेगी। श्री पं. अमर सिंह जी अध्यक्ष अम्बाला करनाल मंडल के उत्साह से निरन्तर एक सप्ताह तक यज्ञ और प्रात. रात्रि को प्रचार होता रहा। इस में सभा की ओर से पण्डित त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, पं. राजपाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली, पं. शमशेर सिंह जी, श्री बस्ती राम जी, ब्रह्मचारी केशव देव जी विद्यालंकार, पं. अमर सिंह जी अध्यक्ष अम्बाला करनाल मंडल श्री नत्थू राम जी पधारे। चिमटा मंडली तथा मैं निरन्तर भ्रमण कर गुड़गावां में प्रचार में दिन में तीन तीन बार बोलने के कारण यद्यपि थकावट अनुभव करते एवं गला भी बैठा हुआ था—फिर भी नाहन में समाज की माताओं, बहिनों की श्रद्धा को देख कर निरन्तर उसी अवस्था में दो तीन २ बार प्रचार करते रहे। प्रातः तथा सायं दोनों समय यज्ञ होता था। काफी संख्या में मातायें बहिने पधारती रहीं। रात के प्रचार में बड़ी उपस्थिति होती रही वहां के परिवारों में बड़ी श्रद्धा देखी। सभा के लिए बड़ा प्रेम देखा। प्रातः सायं वेद की सूक्तियां स्मरण कराई जातीं तथा रात को उपदेश भजन होते। पं. राजपाल मदन मोहन मंडली के भजनों से जनता बड़ी प्रभावित हुई। नगर की गण्य मान्य जनता आती रही। माता सुशीला जी का तथा सारी बहिनों का नगर में धर्म भावना का बड़ा प्रभाव है सभी समाज का कार्य प्रशंसनीय है। पूर्णाहुति का समारोह सचमुच दर्शनीय था। बड़ा ही पवित्र, शान दार दृश्य था। नगर के समाज के कार्यकर्ता श्री वर्मा जी आदि सज्जनों ने भी प्रेम का परिचय दिलाया। सभा को वेद प्रचार के लिए चार सौ रुपये दिया गया। नाहन का यज्ञ और सप्ताहका प्रचार निर्विघ्न समाप्त हुआ। हम नाहन समाज की माता सुशीला जी, यशवती जी, द्रौपदी राजराणी जी, सुनीता जी को इस धर्म लगन, वेद प्रचार प्रेम के लिए बधाई देते हैं। यदि समाजों में इस प्रकार की श्रद्धा भरी हो तो समाज के प्रचार को चार चांद लग सकते हैं। विशेष कर जहां की मातायें, बहिनें जागने वाली हों, धर्म प्रचार में श्रद्धा रखने वाली हों तथा सभा के वेद प्रचार का ध्यान हो, वहां समाज में निश्चित रूप से जीवन होता है। नाहन समाज में इस समाज के जीवन का दर्शन कर के मन बड़ा ही प्रसन्न हो गया प्रभु से प्रार्थना है कि यही प्रचार लगन का जीवन सवत्र पैदा हो जावे—सम्पादक

आर्यसमाज में शक्ति का संचार कैसे ?

(ले०—श्री जियालाल जी आर्य अखनूर)

वह आर्यसमाज जिसकी स्थापना भारत के महान योगी त्यागी तपस्वी वेदज्ञ ज्ञानी गुणी श्रेष्ठ सदाचारी सदविचारी लोक हितकारी परोपकारी क्रांतिकारी देव दयानन्द ने विश्व को वेद की ज्योति से आलोकित करने के लिये की थी जिस आर्यसमाज के गौरव को ऋषि भक्त महात्मा श्रद्धानन्द ने बढ़ाया बलिदान के मार्ग को अपनाया जिसके मिशन को विस्तृत करने के लिये अमर हुतात्मा धर्मवीर पं० लेखराम ने अपना जीवन भेंट चढ़ाया मुनिवर पं० गुरुदत्त ने अपने जीवन को कण-कण करके जलाया जिसकी शक्ति बढ़ाने के लिये देवता स्वरूप भाई परमानन्द शेरे पंजाब ला० लाजपत राय महात्मा हंसराज ने जीवन लुटाया महात्मा स्वामी दर्शनानन्द राजपाल वीर रामचन्द जी ने जीवन घोल घुमाया! वह आर्यसमाज आज शक्ति हीन हो रहा है जीवन शक्ति खो रहा है गौरव खो रहा है उसका संगठन बल घट रहा है वह अब सिद्वात वाद के मार्ग से कट रहा है तप-त्याग और बलिदान के मार्गसे पीछे हट रहा है।

अब न तो वह त्यागी तपस्वी नेता इसके पास रहे जिन को सत्य से प्रेम हो 'जीवन में निर्लोभता है न ही स्वार्थ के स्थान में परार्थ का दिव्य गुण उनके जीवन में है एक वह स्वर्णिम युग था जब आर्यसमाज के हित के लिए जीवन भेंट चढ़ाया जाता था आज अपने तुच्छ स्वार्थों के लिये आर्यसमाज को बलि वेदि पर चढ़ाया जाता है अब न नेताओं में नेतापन है न आर्यों के जीवन में आर्यत्व की ही भावना है आर्यसमाज की आज की दशा पर जब दृष्टी पात करता हूं तो दिल मसोस के रह जाता हूं हृदय पर कटारें चलती हैं सोचता हूं जिसे मिशन के लिये मेरे ऋषिवर ने अपने घर बार को मात-पिता के प्यार को छोड़ा संग सम्बन्धियों से नाता तोड़ा जंगलों को खाक छानी ईंटें और पत्थर खाये ज़हर के प्याले पिये वह विश्व कल्याणकारी मिशन आज के ऋषि अनुयाईयों के हाथों किस तरह नष्ट-भ्रष्ट हो रहा है। आज के कालेज, स्कूल, पाठशालायें गुरुकुल विद्यालय जिनके के साथ आर्य समाज और ऋषि दयानन्द का नाम जुड़ा हुआ है वह शिक्षा संस्थाएं अब ऋषि मिशन के प्रचार का साधन ही रही है। न सभाओं द्वारा ही इतना प्रचार अब होता है आर्यों का धन अब बड़े भवन बनाने पर ही नष्ट होता है।

आज के आर्य समाज की दशा देख कर हर सच्चे ऋषि भगत को दुख होता है यदि हम चाहते हैं कि आर्य समाज में पुनः वह स्वर्ण युग आए तो इसके लिए हमे स्वार्थ छोड़ कर परार्थ के मार्ग को अपनाना होगा वेद की आज्ञाओं को जीवन में लाना होगा आर्य समाज के सिद्धान्तों को अपनाना होगा आर्य समाज मे घुसे हुये ढोंगी पाखंडी

(शेष पृष्ठ ८ पर)

रजिस्टर्ड नं० पी० १२१

क्या आप जानते हैं?

—१६६२ के शुरू में १२६ भारतीय दूतावास मिशन और पोस्ट थे।

—१६६३ में क्यूबा, डेन्मार्क, अलजीरिया, और तोगो में नए दूतावास स्थापित किए गए हैं।

—सन ५७ के गदर में विहार के महाराजा कुंवरसिंह ने नाव में बैठ कर गंगा पार करते समय अंगरेज सेनापति की गोली हाथ में लगने पर हाथ को अपवित्र जान उसे काट कर गंगा माता की भेंट कर दिया था?

—सन ५७ के स्वतन्त्रता संग्राम में तत्कालीन भारत के मुगल सम्राट बहादुर शाह को तीन दिन भूखा रहने के बाद नाजीमुद्दीन की दरगाह में चिस्ती साहब के घर से दो दिन की बासी चने की रोटी और सिरके की चटनी खाने को मिली थी।

—"कृशे कस्याति सौहृदम्" निर्मल की कोई सहायता नहीं करता। सभी बलवान का ही सहारा ढूंढते हैं। बलवान ही सर्वगुण की कान समझा जाता है।

—विज्ञान रूपी वृक्ष से ऐसे विषैले अंकुर फूट रहे हैं जो संसार को समूल नष्ट करके ही रहेंगे?

—विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टागौर की गीतांजलि का अनुवाद संसार की सभी प्रसिद्ध भाषाओं में हो चुका है।

—अमरीकी अंतरिक्ष यात्री मेजर गार्डन कूपर ने हाल ही में अंतरिक्ष में उड़ान करते हुए पृथ्वी की २२ परिक्रमाएं की हैं। इस सफलता पर पं० नेहरू जी ने अमरीका के प्रधान कैनेडी को वधाई का संदेश भेजा है।

—मेजर कूपर ने १७५४६ मील प्रति घंटा की रफ्तार से ८८ मिन्ट ४५ सैकंड में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी की।

आर्यसमाज पुरानामण्डी

के सज्जनों व देवियों द्वारा वेदप्रचार के लिए सहयोग

श्री बूटाराम जी सेठ	१०१/-
श्री केदारनाथ जी	११/-
श्री भक्त छज्जूराम जी	१०/-
श्री विनोद कुमार जी	१२/-
श्री मोहनलाल जी मोत्याल	१२/-
श्री वेद जी	१२/-
श्री बावा दुसहरा नाथ जी	१२/-
श्री नौबतराय जी	१२/-
श्री देवेन्द्र जी	२५/-
श्री गोपाल कृष्ण जी	१२/-
श्री जितेन्द्र जी	१२/-
श्री चूनीलाल जी	१२/-
श्री मा. सोहनलाल जी	७/-
सुश्री सुशीला जी तुली	१२/-
कु० रीता कुमारी जी	१२/-
कु० प्रेम कुमारी जी	१२/-
कु० कमला जी	१२/-
माता चन्दन देवी जी	१२/-
श्रीमती दुर्गादेवी जी	१२/-
	३२२/-

इसके अतिरिक्त कुछ धन देने के वचन दिए गए हैं जो कि शीघ्र ही प्राप्त हो जाने की सम्भावना है।

खुशीराम शर्मा
वेदप्रचार अधिष्ठाता

आवश्यकता

आर्य समाज राजेन्द्र नगर नई देहली-५ को एक सुयोग्य भजनोपदेशक की शीघ्र आवश्यकता है। जो सज्जन संस्कार तथा संस्कृत का ज्ञान रखते हों और भजनोपदेश में प्रवीण हों, वे ही महानुभाव प्रार्थना पत्र भेजने की कृपा करें।

निवास स्थान के साथ-साथ २ सौ रुपये से डेढ़ सौ रुपये तक वेतन दिया जाएगा।

भवदीय.—
देवप्रकाश शास्त्री
मंत्री आर्य समाज
राजेन्द्रनगर-नई देहली

...ल झज्जर

का वार्षिक चुनाव

प्रधान—म० फतहसिंह जी, ... सि० शास्त्री, उपप्रधान—पं० गंगा राम जी, मन्त्री—म० ... व्याकरणाचार्य, उपमन्त्री ... ओम् प्रकाश जी, कोषा... चन्द्रपाल आयुर्वेदाचार्य, पुस्तकाध्यक्ष—श्री रामकुमार जी आर्य।

निवेदक
दयानन्द सभामन्त्री

शोक समाचार

आर्यसमाज किला मुहल्ला

ने अपने साप्ताहिक सत्संग में श्री रघुवीर जी की आकस्मिक मृत्यु पर अत्यन्त शोक प्रकट किया।

आप भारत के माने हुए नेताओं में से थे। आपकी मृत्यु से देश को जो क्षति पहुंची है वह शीघ्र पूरी होनी असम्भव है।

हम उनकी आत्मा की सद्गति के लिए व उनके परिवार को धैर्य प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना करते हैं।

देवीदास गुप्त
उपमंत्री समाज

आर्यसमाज अखनूर

ने श्री जियालाल जी आर्य की धर्मपत्नी के स्वर्गवास पर गहरा शोक प्रकट किया तथा मृतका की आत्मा की सद्गति के लिए और उनके परिवार को इस दारुण दुःख सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए प्रभु से प्रार्थना की।

प्रधान आर्य समाज

(पृष्ठ ७ का शेष)

लोगों को भगाना होगा बढ़ते हुए पाखंड को मिटाना होगा तब ही आर्य समाज ऋषि के स्वप्नों का आर्यसमाज बनेगा संसार से अज्ञान मिटेगा वेद का ज्ञान फैलेगा और ऋषि भगतो उठो यदि तुम्हारे जीवन मे कुछ शक्ति है तो शक्ति का परिचय दो। आगे बढ़ो अपना और अपने ऋषि का मस्तक उन्नत करो।

हार्दिक शोक

यह दुःखद समाचार अत्यन्त शोक से सुना जायगा कि आर्य समाज अखनूर (जम्मू) के अनथक कार्यकर्त्ता, ऋषि दयानन्द के परमभक्त समाज के मन्त्री श्री जियालाल जी आर्य की जीवन संगिनी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया है। भगवान ने आप को पुत्ररत्न दे कर वापस ले लिया। अभी यह दुःख समाप्त नहीं हुआ था कि अब उन की पत्नी के देहावसान सुन कर भारी हार्दिक दुःख हुआ। समाज के काम में श्री मन्त्री जी तथा उन का सारा परिवार अनथक सेवा करते रहते थे। हम इस महान दुःख में श्री जियालाल जी के साथ हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए प्रभु से प्रार्थी हैं कि दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा इस भारी दुःख सहन करने की शक्ति मन्त्री जी को प्रदान करें।

इसी प्रकार आर्य समाज पठानकोट के पुरोहित श्री पं० शान्तिस्वरूप जी सिद्धान्ती का भी आकस्मिक निधन का दुःखदायक समाचार सुन कर अतीव शोक हुआ। वह स्वस्थ तथा सर्वथा ठीक थे। बड़ी योग्यता पूर्वक कार्य करते थे, बड़े हंस मुख थे उन के निधन पर उन के सारे परिवार से हृदय से सहानुभूति प्रकट करते हुए उन की दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं। पाठनकोट समाज ने उन के परिवार को सहायता के लिए जो शानदार सहयोग दिया है सभा का वधाई देते हैं। —सं.

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २४) रविवार २७ ज्येष्ठ २०२०— १६ जून १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

नो वर्धया रयिम्

हे परमेश्वर ! न .—हमारे रयि को धन ऐश्वर्य को बढ़ाते रहें। आप की कृपा से हम सदा माला माल होते जावें। धन सम्पदा के भण्डारों में हम खेलते रहें।

विशांपते धनदा असि

हे सारी प्रजाओं के स्वामिन् ! सब को पालने वाले पाता ! आप ही सारा धन देने वाले हो। आप का धन भण्डार सब के लिए सदा खुला हुआ है। धन दाता हो।

रयि देवी दधातु

दिव्य गुणों से भरी प्रभु की दिव्य शक्ति हम में धन दौलत भर दे। हमारे जीवन में ऐसे दिव्य गुण भर जावें जिन से हमार जीवन दिव्य भण्डार से भर पूर हो जाये।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीतिभिरस्तु। शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः॥

ऋ० मं० ७ सू० ३५ मत्र ११

अर्थ—(शं नः) हमें कल्याणकर होवें ये (देवाः) उत्तम गुणों वाले देव (विश्व देवाः) सारे विद्वान् लोग (भवन्तु) होवें। (शं) सुख देवें यह (सरस्वती) जीवन की विद्या तथा पवित्र वाणी (सह धीतिभिः) अपने श्रेष्ठ ज्ञान के भण्डारों के साथ हमारा भला करे (अस्तु) होवे। (शम्) कल्याण करें ये (अभिषाचः) परोपकार यज्ञ में लगे हुए (शम उ) और सुख देवें ये (रातिषाचः) दानमें लगे कल्याणकारी लोग(शं नः) हमें शान्ति देवें ये (दिव्याः) उत्तम (पार्थिवाः) पृथिवी की सारी वस्तुएं तथा (शंनः) हमें सुखी करें ये (अप्याः) जल तथा जल में उत्पन्न होने वाले सारे पदार्थ हमारे लिए सदा सुख-शान्ति देते रहें।

भावः—जगत में जितना भी देवों का समाज है परोपकारी लोग हैं—वे हमारा अपने जीवन द्वारा मंगल करें। अनेक ज्ञान के विचारों से यह सरस्वती विद्या तथा दिव्य वाणी हमारे लिए शुभ होवे। जिनका जीवन यज्ञ, लोक सेवा में लगा है। ऐसे अभिषाचः सज्जन तथा अपना सब कुछ दूसरों की सेवा में भेंट करने वाले रातिषाचः दानी हमारा मंगल करें। भूमि के सारे पदार्थ और जल की सारी वनस्पतियां, बूटियां औषधियां और गुण शक्तियां सदा हमारा भला करें—सं.

भारत किसी भी नए हमले के मुकाबिले को पहले से अधिक सबल—नेहरू

देशवासी चुनौती का मुकाबिला करने को तैयार रहें

६ जून—प्रधान मन्त्री श्री नेहरू ने कल यहां एक जनसभा में कहा कि देश को सुदृढ़ बनाने के लिए एकता और एक-दूसरे के प्रति आदर-भावना की आवश्यकता है, तभी देश किसी भी क्षेत्र से अपनी सीमा पर हुए आक्रमण का सामना कर सकने के योग्य होगा। अतः हमें भाषा आदि छोटे-छोटे मामलों पर झगड़ कर अपनी शक्ति को नष्ट नहीं करना चाहिए।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

जीवन साफल्यम्

लेखक—श्री प्रणवानन्द जी संन्यासी वर्तमान आर्यसमाज डलहौजी

विद्वान् आचार्यों ने मानव के मन को खूब टटोला है। और उस की प्रवृत्तियों को भली भांति भांपा है तदनन्तर अपनी विचारधारा को जनता के आगे फिर सूक्तियों के रूप में प्रवाहित किया (प्रकट किया) जैसे कहा (सुखार्थाः सर्वभूतानां मताः सर्वाः प्रवृत्तयः॥ सुखं न विना धर्मा-त्तस्माद्धर्मं परोभवेत्॥ अर्थ सब प्राणी मात्र की जितनी भी चेष्टायें (हरकतें) हैं सब की सब सुख प्राप्त करने के लिए की जाती हैं मगर सुख का साधन धर्म है जब तक उस पर न चलोगे अर्थात धर्म को न अपनाओगे तो—सुख न पाओगे। अब प्रश्न उठता है धर्म क्या वस्तु है इस पर लोगों की भिन्न-भिन्न सम्मतियां हैं कोई सज्जन तो उन को धर्मात्मा के नाम से कथन करेंगे जो प्रातः दूर की नदी में स्नान करके घण्टों किनारे बैठकर सन्ध्या पाठ किया करते हैं और दूसरे जो प्रतिदिन मन्दिर व गुरुद्वारे जाते हैं। तीसरे वे धर्मात्मा हैं जो कीर्तन मण्डलियों में चिमटा ढोलक बाजा आदि बजाकर राम कृष्णादि नामों को बड़े जोर से झूम-झूम गाते हैं एक यह है जो कानों में रूई देकर बैठ जाते हैं और अनहद शब्द सुनना ही धर्म मान बैठे हैं अब जिसकी रुचि में जो आया वही उस को धर्म मान बैठा है। अब उक्त श्लोक में जो सुखं नविनाधर्मात् पढ़ा है वह कौन सा धर्म है यह प्रश्न बन गया। निर्णय कर्ता तो आप्त वचन हुआ करते हैं कणाद मनु आदि से बढ़कर आप्त और कौन हो सकता है दर्शनकार तो यतोऽभ्युदय निःश्रेय सोत्पत्तिः सोधर्मः दूसरे ईज्याध्ययन दानादि तपः सत्यं धृतिः क्षमा अलोभ इतिमार्गोऽयं धर्मस्याष्टविधः स्मृतःएवं मनुने दश लक्षण धर्म के लिखे हैं इस प्रकार शतशः धर्म के रूप कथन में स्मृतिकारों ने कहा है किन्तु सर्वपदा हस्तिपदे निमग्नः सत्य तो यह है कि जिस कर्म के करने में भय शङ्का और लज्जा न हो और जिस के न करने से मानवता न रहे वह मनुष्य धर्म है यथा अग्नि तब तक है जब उस में प्रकाश और उष्णता है शीत स्निग्धतागुण नहीं तो जलत्व नहीं है एवं जड़पदार्थों में यदि गुण नष्ट होने से उस का अस्तित्व मिट जाता है तो क्या इस चेतन मानव के कर्तव्य कर्म के न करने से वह मनुष्य कहलवाने का अधिकारी बना रहेगा। प्रश्न हो सकता है क्या है वह कर्तव्य कर्म सुनो प्रभुस्मरणं भृत्य भरणं वनेचोद्धरणा मात्मन.। तुर्यावस्था ज्ञान मस्पत्तो तेषा चोत्तमै नरै.॥ सर्व प्रथम उस परम पिता परमात्मा का दोनों शुभ संधिवेला में एकाग्रता से शतशः धन्यवाद् गुणस्मरण स्तवन करे जिस ने हमें जीवन के उत्तम साधन और साथरही उनकी सेवन विधि रूपी वेद दिया है जिस के स्मरण से जीवात्मा में शक्ति तत्तुल्यता आती जाती है अन्त में पुरुष का पुरुषोतम और नर का नारायण हो जाता है जो इस अपने इस कर्तव्य का पालन नहीं करते वह कृतघ्न हैं और इस अवसर को खो कर अधम योनियों में दु.ख भोगा करते है दूसरा कर्तव्य (धर्म) है यदि गृहस्थ अपनाया है तो जो भृत्य वर्ग प्रभुने आप के आधीन किये है उनका यथा योग्य निष्काम भाव से पालन पोषण करना है शुद्ध पवित्र कर्म द्वारा धन का संग्रह करें यह कर्म आप का यज्ञ मय होगा आप शतक्रतु बनेंगे यदि लूटखसूट धोखा छलकपट की कमाई से करोगे तो आप भी गले साथ यजमाया भी गाली) कहावत चरितार्थ होगी गृहस्थ आश्रम से ही मोक्ष महल की सीढ़ी (सोपान) आरंभ होती है—

यह सीढ़ी मानवता को (जो बड़े पुण्यों से प्राप्त होती है) इस को सफल करने के लिये ये चार कर्म अवश्य करणीय हैं यथा (प्रभुस्मरणं भृत्यभरणं वने चोद्धरसामात्मनः। योगेनान्ते तनुस्त्यागः कथ्यते कार्यं-तुर्यकम्॥ प्रथम तो प्रतिदिन करणीय है उस प्रभु दाता का धन्यवाद दोनों शुभ सन्धिवेला में करे जिस ने हमें जीवन के उत्तम साधन द्रव्य प्रदा किये और साथ २ ही उनकी सेवन विधि रूपी वेद ज्ञान दिया है जो इस दयालु परमपिता का चिन्तन नहीं करते वह उन पशुओं से भी निषिद्ध हैं कि जो स्वार्थी स्वामी के समक्ष होने पर कोई पूंछ हिला कर कोई हिनहिनाट से और कोई रम्भा कर स्वामी प्रेम प्रदर्शन करते हैं और इन को परमात्म चिंतन से जो लाभ तद्गुण प्राप्ति तत्सदृशतादि होते हैं उन से वंचित होकर कृतघ्नत्व पाप प्राप्त करते हैं और बुद्धि-जीवी योनियों से आगामी जन्म में गिर जाते हैं और दूसरा भृत्य भरण यदि गृहस्थ ग्रहण किया है तो जो जीव प्रभु ने तुझे सेवार्थ समर्पित किये हैं उनके पालन पोषण की सामग्री निष्कपट यथार्थ व्यवहार से एकत्र करो और निष्काम भाव से इन की सेवा यथाशक्ति करो यह प्रतिदिन का अश्वमेध यज्ञ है इसी से जीव शतक्रतु है बृहदारण्यकोपनिषद में जगत को अश्व के रूपक में वर्णन किया है यथा-योग्य निष्काम सेवा ही यज्ञ है यज्ञ के विचार से किया हुआ कर्मबन्धन हेतु नहीं होता व्यासोक्त गीता में कहा है (यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयंकर्म बन्धनः) अर्थात यहां मनचले लोक कर्म ही बन्धन हेतु हैं ऐसा समझ कर अथवा मूर्ख लालबझडों के उपदेशों से गृह कर्म त्याग कर छोटे २ अबोध बच्चों को वृद्ध माता पिता को और अबला स्त्री को त्याग कर भाग निकलते हैं प्रभु पाने के लिये किन्तु इस धर्म्य कर्म के त्याग के बदले से मोक्ष के बदले तर्क के दृढ़ बन्धनों से जकड़े जाते हैं क्योंकि चतुर्विध पुरुषार्थ है जिस युवती से सभा मध्य प्रतीज्ञा की थी ममेयं मस्तु पोष्या मैं इसका पोषण करूंगा अहं गृह पतिस्त्वं धर्मणा इत्यादि को भंग किया पुनः धर्मात्मा बन प्रभु को पाना चाहते हैं ऐसा हो नहीं सकता मोक्ष महल की यह प्रथम सिढ़ी थी इस को त्याग असंभ सम्भव बनाना चाहते हैं यह कभी हो नहीं सकता तभी तो ऋषियों ने मान व जन्म की सफलता के लिए आश्रमों को निर्माण किया। जब तक यह चंचल चित्त वुभूक्षित है तब तक इष्टानिष्टा की नदी के चक्र में फंसा ही रहेगा छुटकारा नहीं इसकी कामना को तृप्त करने का साधन गृहस्थ है हमने देखा मूर्ख साधु छोटे बच्चों को वर्गला कर साधु बना लेते हैं ज्ञान ध्यान तो इन अनपढ़ों में होता नहीं इस चमकीली दुनिया की चकाचौंध में अंधे हो जाते हैं आप भी पतित हो जाते हैं और संन्यास आश्रम को भी कलंकित करते हैं अत. गृहस्थी की स्तुति में लिखा है किसी ने उपार्ज्य वित्तं परि पालयन्ति।

विद्यार्थि बालान्वनिता तिथींश्च वृद्धान्वनस्थान् गृहवासिजन्तु।

निःस्वार्थभावे न हेतुधन्याः॥

बात तो सोलह आने सत्य है जब तक ऋणी ऋण रज्जू से मुक्त नहीं होता यह ऋण धर्म निज कर्तव्यता का ऋण है उपकारी का

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय--

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २ आषाढ़ २०२०, १६ जून १९६३[अंक२४

जीवन का मूल मन्त्र

राष्ट्र के जीवन का निर्माण करने के लिए यह परमावश्यक है कि सर्वप्रथम व्यक्ति का निर्माण किया जाये। व्यक्तियों के समूह का नाम ही तो समष्टि जीवन है। समष्टि को सुन्दर बनाने के लिए व्यक्ति पर ध्यान देना पड़ेगा। आज का सारा वातावरण दूषित तथा कलुषित हो रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक कार्य एवं प्रत्येक विचार में व्यक्तिगत जीवन को स्वस्थ, सदाचारी तथा सर्व-प्रिय बनाने के लिए विशेष प्रयास करना होगा। आचार, विचार का आधार लेकर राष्ट्र का सारा कार्य व्यापार चलता है। यदि यह आध.र आचार से भरे भावों तथा स्वार्थ-त्याग की निष्ठा पर होगा तो सारे समाज के जीवन में सुगन्धि पैदा हो जायगी, अन्यथा समूचे जीवन के पतन में कोई सन्देह न ही है। भारत की प्राचीन राष्ट्र परम्परा में कितना महान् आचार का बल था। क्या मजाल कि मन, वचन और कर्म में तनिक भी किसी प्रकार की गिरावट आ सके। धनवान् हो या निर्धन राजमहल का निवासी हो अथवा वनवासी क्या मजाल कि विचारों में किसी प्रकार का भी विचलन पैदा हो सके। जीवन के आचार की आधार शिला बड़ी दृढ़ थी। नानाविध भीषण महावातों से भी इधर-उधर नहीं होती थी। ईश्वर विश्वास, धर्म-निष्ठा, पापभय की भावना ने समूचे राष्ट्र में एक पवित्रता पैदा कर दी थी। मार्ग में सुवर्ण पड़ा होकर उठाने वाला कोई न था। मातृ-भावना, धन में त्यागभाव तथा आत्म-सम्मान व्यवहार का बोलबाला था इस का कारण यह था कि जीवन प्रारम्भ की बालावस्था में राष्ट्र की सन्तान को ईश्वर का विश्वास तथा धर्म का भाव मिलता था। उसके मन में पुलिस का भय अथवा कानून के दंड का केवल भय न था अपितु जीवन के प्रत्येक स्थान व क्षेत्र में परमेश्वर पर अटूट विश्वास एवं धर्मशिक्षा के कारण पाप कर्म करते हुए भय की भावना थी। इसी कारण कोई भी एकान्त स्थान पर भी पाप विचार तक भी मन में नहीं ला सकता था। मानव समाज देवसमाज बना हुआ था।

आज का जीवन सर्वथा बदल रहा है। कानून मौजूद है, उसे आचरित कराने वाले राज्य के दण्ड अधिकारी तथा कर्मचारी भी हैं, किन्तु लोगों में भ्रष्टाचार, अनाचार व नैतिक पतन निरन्तर बढ़ता जाता है। सारे कहते और चाहते हैं कि यह भ्रष्टाचार, गिरावट, खाने पीने के पदार्थों में मिलावट समाप्त हो जाये। सम्मेलन होते हैं, भाषण होते हैं, दण्ड की विभीषिका है, अभियान भी जारी है, नाना प्रकार प्रयास भी होता है, पर मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों २ दवा की के अनुसार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह अनाचार बढ़ता ही जा रहा है। यह रुक भी नहीं सकता। इस का कारण यह है कि पत्तों को पानी दिया जा रहा है, मूल की ओर किसी का भी ध्यान नहीं। रोग को दूर करने के लिए ऊपर २ उपचार जारी हैं अन्तर में मूल कारण को समाप्त करने का कोई प्रयत्न ही नहीं। जहां से कलह नैतिक पतन पैदा हो रही है, उसे दबाने की चेष्टा नहीं की जाती। हवा में गोलियां चलाई जाती हैं। जहां प्रहार करना है उसकी तो किसी को चिन्ता ही नहीं। तब इलाज हो तो कैसे। भारतीय ऋषियों ने जीवन का मूलमन्त्र बताया था ईश्वर विश्वास, धर्मनिष्ठा के पालन को। ऋषि दयानन्द जी ने ईश्वर विश्वास पर बार २ जोर दिया था। यह राष्ट्रिय जीवन का प्राण है। सारे रोग बुराईयां इसके द्वारा स्वयं समाप्त हो जाती हैं। इसका प्रारम्भ बालपन में शिक्षा द्वारा, धार्मिक भावना द्वारा होता था। तब जीवन दैवी जीवन था। यही बात आज के नेता लोग अनुभव करके कहने लगे हैं। श्री के० एम० मुन्शी जी ने अपने एक वक्तव्य में अपील करते हुए कहा है कि—शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा शुरू की जानी चाहिए। आज के युग की विडम्बना है कि शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा इतनी दृढ़ता से नहीं दी जाती जितनी कि दी जानी चाहिए। इस समय हमारे समाज में सभ्य जंगली मानवों की वृद्धि होती जा रही है, जिनमें धार्मिक भावना की कमी है और ईश्वर के अस्तित्व का उन के लिए कोई महत्व नहीं।'

आज सभी नेता इस पुरातन भारतीय तथ्य को अनुभव करके कहने लगे हैं। यह है भी सर्वथा सत्य कि जब तक आरम्भ में ही शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायगी तब तक जीवन का यह भ्रष्टाचार कदापि दूर नहीं होगा। देश के बड़े-बड़े अधिकारी जितनी जल्दी इस तथ्य को मानकर आचरण करें उतना ही जल्दी राष्ट्र का कल्याण है। जीवन का यही मूल मन्त्र है, इसकी उपेक्षा करके देश समुन्नति नहीं कर सकता।

—त्रिलोक चन्द्र

आडम्बर कम करो

आजकल विवाह शादियों पर नित नये आडम्बरों की वृद्धि हो रही है। विवाह भी एक मर्यादा होती है। जब यह टूट जाती है तो सारा ताना बाना बिखर जाता है। बरात में जितना हो सके कम से कम बराती जाने चाहिएं। पचास सौ की बरात ले जाना सर्वथा अनुचित है। आतिशबाजी, अधिक दिखावा बिल्कुल बन्द कर देना चाहिए। भंगड़ा नाच नई कुप्रथा चल पड़ी है इस का प्रबल विरोध हो। प्रसन्नता है कि सरकारने व्यर्थ व्यय की जाने वाली शादियों पर बिजली पर अधिक बिल अदा करने का नियम लगा कर बिजली के दिखावे को एक प्रकार से समाप्त ही कर दिया है। विवाह तो सरल से सरल तथा सादगी से भरे होने चाहिएं। आर्यसमाज के परिवारों को अब इस दिशा में आगे आकर विवाहों की सादगी के आदर्श को स्थापित करके अन्य लोगों का पथ प्रदर्शन करना चाहिए।

एक बड़ी आवश्यकता

बहुत-सी आर्यसमाजें सभा को लिखती रहती हैं तथा समय २ पर आने जाने वाले प्रचारक वर्ग को भी कहा जाता है कि हमें समाज के लिए योग्य पुरोहित देवें। किन्तु समाजों की यह मांग पूरी नहीं हो पाती। कारण यह है कि योग्य पुरोहित नहीं मिलते या बनना नहीं चाहते। योग्य युवक स्कूलों में बैठ जाते हैं पर पुरोहित नहीं बनते। आर्य समाजों, सभाओं को इस पर गम्भीर विचार करके योग्य पुरोहितों को तैयार करने की समुचित योजना बनानी चाहिए। समाजों में यदि योग्य पुरोहित बैठ जावें तो प्रचार की बड़ी प्रगति हो सकती है—सं०

——

'युवक-जागृति का सरल उपाय' नं. १

(श्री दयानन्द जी आर्य विद्यावाचस्पति कादियां)

पाठकों को ज्ञात होगा कि दयानन्द कालिज जालन्धर के सुयोग्य प्रो० श्री वेदीराम जी शर्मा एम. ए. युवक-संगठन में तत्पर हैं। ये बातें तो सब सम्यक्तया जानते हैं कि जब तक कुमारों को एक सूत्र में न पिरोआ जाए तब तक आर्य-समाज उनमें पनपना जरा कठिन प्रतीत होता है। मनुष्य वही है जो समझने वाली बात को तो समझे व करने योग्य बात को करे वेद की इस सूक्ति में मार्मिक सत्यता का आलोडन है कि 'कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्याहितः' अर्थात् दहिने हाथ में कर्मठता की समानता बांया हाथ विजय से करता है। फिर जब कभी २ हमारे मुख से निकल जाता कि शिथिलता बढ़ रही है तो समझ लेना चाहिए कि वेद की इस विचारधारा से हमने कोई लाभ नहीं लिया।

आर्यसमाज को अपनी शक्ति युवक-संगठन पर केन्द्रित करनी चाहिए। जिस प्रकार आज से ७-८ वर्ष पूर्व स्थान २ पर गोहत्या-निरोध के बारे में सभाएं, सम्मेलन, प्रचार, प्रकाशन होता था वैसे यदि हम एक अभियान प्रत्येक स्थान पर चला दें कि युवकों में आर्यसमाज का प्रेम हो तो स्थिति बहुत सीमा तक सुधर सकती है। हमारे अंदर थोथी आलोचना अपने पांव जमा रही है। जो हमें प्रत्येक कार्य में आशा का अंधेरा पक्ष भर देती है। इस बात को गलत नहीं किया जा सकता कि आर्यसमाजी की सन्तान वैसी नहीं बन रही है, सुधार घर से चले। 'कृण्वन्तो विश्व-मार्यम्' का अमूल्य सन्देश का प्रारम्भ घर से हो तो हम कह सकेंगे कि शीघ्र ही कुमार सभाएं बनेंगी। वास्तव में देखा जाए तो दयानन्द के नाम पर चले स्कूल दयानन्द स्वामी की छावनियां हैं, हमारे इन विद्यालयों में जो वैदिक—शिक्षा दी जा सकती है, वह सम्भवतः अन्य में न हो। क्योंकि शिक्षा के साथ धार्मिकता का रंग चढ़ाया जाए तो हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं। आर्य-कुमार सभाएं भविष्य में आने वाली आर्यशक्ति हैं। यही चाहिए कि उन्हें संगठित किया जाए। गलती तब पड़ती है जब हम इस पहलू पर विचार करते हुए दो-चार विरोधी बातों को कह कर चुप हो जाते हैं। कार्यकर्ता मिलने कठिन नहीं। प्रो० वेदीराम जी ने इस आन्दोलन को उठाया है। वे बाहर प्रचारार्थ जाते रहते हैं। उनका उत्साह प्रशंसनीय है। आर्यसमाजों व आर्य संस्थाओं को चाहिए कि उनके नेतृत्व में युवक-जागृति में सहयोग दें। हमें विश्वास है कि युवक आर्य बनेंगे, तभी हम कह सकते हैं कि दयानन्द का मिशन पूरा हो रहा है। यही आर्य युवक-जागरण का सरल उपाय है।

१५ जून से २२ जून तक भर्ती सप्ताह

आगामी १५ जून से २२ जून तक जिला जालन्धर में भर्ती सप्ताह मनाया जा रहा है। इसके दौरान हृष्टपुष्ट लोगों को सेना में भर्ती के लिए प्रेरित किया जायगा। १५,१६ जून को नकोदर में, १७,१८ जून को फिल्लौर में, १९, २० जून को नवांशहर में तथा २१, २२ जून जालन्धर में भर्ती होगी। जालन्धर में भर्ती मेले की अध्यक्षता गृहमन्त्री पं० मोहन लाल करेंगे। भर्ती के लिए मैट्रिक पास हृष्टपुष्ट जवानों को अधिमान दिया जाता है।

राष्ट्रीय जागृति गान

(रचि० श्री विद्यासागर जी शर्मा 'दक्ष' हिसार)

प्रवीण वीर देश के सजग रहो, सजग रहो।
सजग रहो, सजग रहो, सजग रहो, सजग रहो॥
कुदुष्ट चीन आज है मटक-मटक देखता।
हिमाद्रि तुङ्ग शृङ्ग पर पैर को पसारता॥
प्रशस्त पुण्य भूमि पर गृद्ध दृष्टि डालता।
पवित्र नीर गङ्गा का आज है ओ चाहता॥
धुरीय वीर देश के कुदुष्टों का स्खलन हो।
प्रवीण वीर देश के सजग रहो सजग रहो॥
अद्रीन्द्र ध्वंस हो रहा अराति सैन्य वृन्द से।
प्रणष्ट हुई घाटियां अराति सैन्य भृंग से॥
विदीर्ण हुए शृंग से तुम्हें विशुद्ध भारती—
सुरेता वीर देश के स्वतन्त्रता पुकारती॥
अजेय वीर देश के कुशत्रु का विष्टम्भ हो।
प्रवीण वीर देश के सजग रहो सजग रहो॥
प्रवीर देश के भला अपमान क्यों हो देखते।
उठो स्वदेश प्रेम से निज धर्म लाज राखते॥
चमक चमक २ उठे प्रगत प्रखर वीरता।
धधक धधक २ जले कुदुष्ट चीन की चिता॥
तरुण वीर देश के निज हाथ वैजयन्ती हो।
प्रवीण वीर देश के सजग रहो सजग रहो॥
प्रशस्त पुण्य भूमि के विभाग यवनों के लिये।
हिन्दू और इस्लाम है पृथक् २ आज हुए॥
आज भी है देश पर दुष्ट दृष्टि डालते।
निकल पड़ो देश हित सिंह से चिंघाड़ते॥
युयुत्सु वीर देश के प्रचण्ड शक्ति साथ हो।
प्रवीण वीर देश के सजग रहो सजग रहो॥

सदा मुस्कराऊं

(श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' प्राध्यापक दयानन्द कालिज, शोलापुर)

सदा संकटों में प्रभु मुस्कराऊं।
कभी आपदाओं में न लड़खड़ाऊं॥
सदा गर्म सीना हो साहस से मेरा।
निराशा हिये में करे न बसेरा॥
मैं निर्भय सबल बन के जीवन बिताऊं...
प्रभु सपन साकार हों सकल मेरे।
सदा काज हे देव हों सफल मेरे॥
सदा लोक सेवा में जीवन लगाऊं...
बड़ों की बड़ाई सदा याद रखूं।
हिये वलवलों से मैं आबाद रखूं॥
मैं जी जान से ऋण ऋषि का चुकाऊं......

आर्यसमाज एक प्रगतिशील और जीवित संस्था है

स्वामी दयानन्द जी ने स्वाभिमान की भावना को जगाया

लखनऊ में सुरक्षा मन्त्री श्री चह्वाण जी का भाषण

भारत के केन्द्रीय सुरक्षा मन्त्री श्री यशवन्तराव जी चह्वान ने आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश लखनऊ की हीरक जयन्ती पर आर्य समाज तथा इसके संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरवमय उदात्त जीवन तथा कार्यके सम्बन्धमें अपनी ओजपूर्ण श्रद्धांजलि पेश करते हुए जो मार्मिक सारगर्भित प्रभावशाली भाषण दिया। उसके कुछ भाग आर्य जगत के प्रेमी पाठकों को सेवा में पेश किये जा रहे हैं ताकि पता लग सके कि देश के प्रतिरक्षा मन्त्री के दिल में देवदयानन्द तथा समाज के प्रति कितना सुन्दर सम्मान का भाव भरा हुआ है—सं०

आर्य समाज एक प्रगतिशील संस्था है। किसी भी संस्था या संगठन के लिए यह बड़े गौरव की बात है और यह देश के लिए भी गौरव का विषय है। हम जानते हैं कि आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द जी ने देश के लिए क्या २ कार्य किए और अपने त्याग और बलिदान से देश को किस प्रकार ऊंचा उठाया। उन दिनों, जिस समय आर्यसमाज की स्थापना हुई थी, हमारे समाज की हालत काफी गिरी हुई थी। उस समय समाज सुधार का काम कोई आसान काम नहीं था। फिर भी सभी तरह की परिस्थितियों का मुकाबिला करने पर उन्होंने समाज में जो जागृति और क्रांति पैदा की, उस ने जन-जीवन में एक नई चेतना और नई भावना को जगाया। मुझे यहां यह कहने में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं कि एक प्रकार से उसी समय से समाज में स्वाभिमान, स्वदेशी और स्वतन्त्रता की भावनाओं के बीज बोए गये जो निरन्तर अंकुरित, पल्लवित और विकसित होते गये। आर्य समाज का सामजिक तथा सांस्कृतिक चेतना से विशेष सम्बन्ध है और इस में सन्देह नहीं कि सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना लानेवाली क्रान्तियों द्वारा देश में आमूल परिवर्तन हो जाता है। उन्नीसवीं शती में हमारे देश ने ऐसी ही सामाजिक क्रान्ति के दर्शन किए जिस के फल स्वरूप जनता में नई चेतना फैली, तथा उत्साह आया और लोग पुरानी रूढ़ियों, अन्धविश्वासों व पुरानी विचार धारा की परिधि से निकल कर नवीन विचारों को ग्रहण करने लगे।

मैं आज आप से एक विशेष बात के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूं। वह बात है समाज सुधार। इधर कई वर्षों से प्रायः यह सुनने में आ रहा है कि यद्यपि हमारे देश में राजनीतिक क्रान्ति को सफल हुए आज १६ वर्ष हो चुके हैं, किन्तु सामाजिक क्रान्ति की ओर हमारी गति अभी भी कुछ धीमी है। मुझे यह बताने की आवश्यकता नहीं कि राजनीतिक उथल पुथल और आर्थिक नवनिर्माण को समाज के हित में स्थायी रूप सामाजिक क्रान्ति द्वारा ही दिया जा सकता है। किसी भी स्वाधीन देश के नेता समाज के कल्याणार्थ जो कुछ भी करने का यत्न करते हैं वे प्रयत्न तभी सार्थक हो पाते हैं जब समाज की स्थिति उन परिवर्तनों के अनुकूल हो जैसे भूमि से कुछ भी पैदा करने के लिए यह जरूरी है कि उस भूमि को ठीक से जोत कर उर्वरा बनाया जाये। उसी प्रकार यह आवश्यक है कि अनुकूल परिस्थितियों द्वारा जनता के जीवन को उन्नत करने के लिए समाज की व्यवस्था में उचित परिवर्तन लाए जायें। हमारा समाज एक प्राचीन समाज है। उस ने अनेक विप्लव व क्रांतियां देखी हैं और उन सभी परिस्थितियों से टक्कर लेने की उस में क्षमता रही है। यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो इस क्षमता का मूल आधार समय के अनुसार बदलने अथवा परिस्थितियों के साथ समन्वय करने की योग्यता को ही माना जायेगा। हमारा दीर्घ-कालीन इतिहास इस बात का साक्षी है कि अनेक विषमताओं, विपत्तियों और संघर्षों के बावजूद किसी न किसी तरह अन्त में इस अपने राष्ट्र को जीवित और अपनी सांस्कृतिक तथा सामाजिक धारा को प्रवाहित रख सके हैं। आज जहां हमें अपने समाज की परम्परा गत क्षमता पर गर्व होता है वहां हम यह भी अनुभव करते हैं कि आधुनिक विचार धारा और जनतंत्रीय प्रणाली की मांग के सामने भारतीय समाज की कुछ कमजोरियां अभी भी हमारी प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध किये हुए हैं। हमारा समाज स्वस्थ है। इसका प्रमाण यही है कि एकमत से हमने जनतन्त्र, समानता और शांति पूर्ण सह-अस्तित्व के आदर्श को अपनाया है। इस उच्च आदर्श को अपनाने से जो भारी दायित्व समाज के शिक्षित और जागृत वर्ग पर आता है उसी की ओर मेरा संकेत है। इस वर्ग में आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायियों ने जिन सुधारों पर गत अस्सी वर्षों से बराबर जोर दिया है उन्हीं सुधारों को समाज के जीवन में उतारने के लिए आज हम लोग उतावले हैं। (अपूर्ण)

देश के उज्ज्वल भविष्य के लिये अच्छी शिक्षा

—जाकिर हुसैन

शिमला ११ जून—उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन का कल यहां पहुंचने पर हजारों पंक्तिबद्ध लोगों ने स्वागत किया।

मुख्यमंत्री श्री प्रतापसिंह कैरों, पंजाब विधानसभा के अध्यक्ष श्री प्रबोधचन्द्र, हिमाचल तथा पंजाब के संसत्सदस्यों और हिमाचल प्रादेशिक परिषद के सदस्यों ने उपराष्ट्रपति का स्वागत किया।

इस से पूर्व सोलन नगरपालिका द्वारा प्रस्तुत नागरिक अभिनन्दन का उत्तर देते हुए डा० जाकिरहु ने वहां कहा कि लोगों को निजी हितों पर राष्ट्रीय हितों को उच्च स्थान देना चाहिए।

उन्होंने कहा कि अगर देशवासियों ने निजी हितों को सर्वोपरि समझा तो देश का उज्ज्वल भविष्य रेत की दीवार की तरह नष्ट हो जाएगा।

उन्होंने कहा कि अगर विश्व में भारत को प्रतिष्ठा का स्थान दिलवाना है तो मौजूदा संतति को अच्छी शिक्षा मिलनी चाहिए।

महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन काल में विधर्मियों से अनेक शास्त्रार्थ किये। यह खेद का विषय है कि उन सभी शास्त्रार्थों का कोई लिखित विवरण आज हमें उपलब्ध नहीं होता। परन्तु कुछ शास्त्रार्थ लोगों के द्वारा इतने महत्वपूर्ण समझे गये कि उनके विवरणों को सुरक्षिततया लिपिबद्ध किया गया और उन्हें प्रकाशित भी किया गया। महर्षि दयानन्द के सभी लघु ग्रन्थों का संग्रह जो गोविन्द राम हासानन्द के द्वारा 'दयानन्द ग्रन्थ संग्रह' के रूप में प्रकाशित हुआ है उस में स्वामी दयानन्द द्वारा किये गये निम्न शास्त्रार्थ पुस्तकों को सम्मिलित किया गया है।

(१) काशी शास्त्रार्थ—यह वह सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ था जो स्वामी जी के प्रथम बार काशी आगमन के अवसर पर काशी नरेश के अनुरोध पर विशुद्धानन्द, बालशास्त्री, ताराचरण तर्क रत्न, वामनाचार्य आदि पण्डितों ने मूर्ति पूजा विषय पर स्वामी जी से करना स्वीकार किया। यह काशी के आनन्द बाग स्थित दुर्गाकुण्ड में हुआ था और इस में काशीस्थ पण्डित मण्डली के ज्ञान का दिवालियापन दर्शकों पर भली भांति प्रकट हो गया था। एक ओर अकेले किन्तु निर्भीक मूर्ति पूजा को वेदों से विरुद्ध सिद्ध करने में तत्पर ऋषि दयानन्द थे और दूसरी ओर शतशः पण्डित थे जो अपने विद्याबल और शास्त्र ज्ञान का अभिमान रखते थे। श्री रघुनाथ प्रसाद कोतवाल का आर्य जनता को कृतज्ञ होना चाहिये जिन की सुव्यवस्था के कारण महर्षि के पुण्यश्लोक शरीर को किसी प्रकार भौतिक क्षति नहीं पहुंची अन्यथा की पण्डित मण्डली तो महर्षि का अपमान करने के लिये कृत संकल्प होकर आई थी, और उसने कसर भी क्या रखी। शास्त्रार्थ के अन्तिम

आर्य साहित्य का सर्वेक्षण

आर्यसमाजके प्रकाशित शास्त्रार्थ

(ले० प्रो० भवानीलाल जी भारतीय एम० ए०)

निर्णय के पूर्व ही ऋषि की पीठ थपथपा कर उनकी पराजय की घोषणा करना स्वामी विशुद्धानन्द की सनातनधर्मी सभ्यता का नमूना था। उसके बाद तो जो ईंट, पत्थर, कीचड़ और गोबर की वर्षा हुई उस असभ्यता पूर्ण विवरण का देना भी असम्भव है। ऐसा था काशी शास्त्रार्थ।

काशिराज के आश्रित समाचार-पत्रों ने भी महर्षि के पराजित हो जाने का विज्ञापन किया परन्तु सत्यव्रत सामश्रमी जैसे तटस्थ विद्वानों की सम्मति भिन्न ही थी, जो उस समय उपस्थित थे। इस घटना के पश्चात् महर्षि अपने जीवन काल में अनेक बार काशी पधारे और पुनः काशी की विद्वन् मण्डली को शास्त्रार्थ संग्राम में प्रवृत्त होने के लिए आहूत किया, परन्तु फिर उनका साहस ऋषि के समक्ष आने का नहीं हुआ।

इस शास्त्रार्थ का विवरण वैदिक यंत्रालय से पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुआ है। यह संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में है। प० युधिष्ठर जी मीमांसक की सम्मति में यह संस्कृत भाषा महर्षि की ही रचित है परन्तु गोविन्दराम द्वारा प्रकाशित ग्रन्थावली के सम्पादक पं० जगत कुमार शास्त्री इससे सहमत नहीं हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में प्रबन्धकर्ता वैदिक यंत्रालय के नाम से एक भूमिका मिलती है। सम्भवतः यह आर्यसमाज का और ऋषि का भी प्रथम शास्त्रार्थ था।

(१) देखो ऋषिदयानन्द के ग्रंथों का इतिहास

(२) हुगली शास्त्रार्थ और प्रतिमा पूजन विचार के नाम से अन्य पुस्तिका उपलब्ध हुई है जिसका उल्लेख पं. लेखराम स्वरचित महर्षि के जीवन चरित्र में किया था। इसे गोविन्दराम हासानन्द ने भी पृथक् रूप से छापा है। यह शास्त्रार्थ स्वामी जी और पं. ताराचरण तर्क-रत्न के बीच हुगली (कलकत्ता) नगर में हुआ था और शास्त्रार्थ के अन्तमें तर्करत्न महोदयने 'उपासना मात्रमेव भ्रममूलम्' कहकर स्वतः ही निग्रहस्थान को प्राप्त हो गए थे।

(४) सत्यधर्म विचार अथवा मेला चांदापुर। यह ग्रन्थ वैदिक यंत्रालय द्वारा निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। शाहजहांपुर जिले के चांदापुर ग्राम निवासी मुन्शी प्यारेलाल साहब नामक एक रईस प्रतिवर्ष एक धार्मिक गोष्ठी का आयोजन करते थे जिसमें विभिन्न धर्मावलम्बी एकत्रित होकर धर्मचर्चा किया करते थे। सन् १८७७ के मार्च मास में लगने वाले मेले में स्वामी दयानन्द और मुरादाबाद निवासी मुन्शी इन्द्रमणि आर्यों के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए थे, तथा ईसाइयों के प्रतिनिधि रूप मे पादरी स्काट, नोबिल, पार्कर और जान्सन नाम के चार महानुभाव एवं मुसलमानों की ओर से मौलवी मुहम्मद कासिम तथा सैयद अब्दुल मंसूर नाम के दो मौलवी सम्मिलित हुए। यह धर्मचर्चा केवल दो दिन (१९-२० मार्च) को हो चली। महर्षि ने वैदिक धर्म के मन्तव्य को भली भांति प्रस्तुत किया। इसका अंग्रेजी अनुवाद भी तो हो चुका है।

डी. ए.वी. हायर से. स्कूल मीरां कदल श्रीनगर का शानदार परीक्षा परिणाम

आज १० जून का काश्मीर मिडिल परीक्षा बोर्ड का परिणाम घोषित हुआ। जिस में डी. ए. वी. हायर सेकंडरी स्कूल अमीरा कदल के सब के सब विद्यार्थी अर्थात ८८ में से ८८ ही उत्तीर्ण हो गए। परीक्षा परिणाम शत प्रतिशत रहा।

पहले दर्जे में—२८
दूसरे दर्जे में—४८
तीसरे दर्जे में—१२
—
८८

इस की सफलता के श्रेय श्री मुख्याध्यापक जी व उनके सहयोगी अध्यापक वर्ग पर आधारित है।

—व्यवस्थापक

(४) गोविन्द राम हासानन्द द्वारा प्रकाशित 'दयानन्द ग्रन्थ संग्रह' में 'सत्यासत्य विवेक' के नाम से महर्षि का बरेली के पादरी टी. जी. स्काट से पुनर्जन्मादि तीन विषयों पर निरन्तर तीन दिन तक के शास्त्रार्थ का विवरण दिया हुआ है। यह शास्त्रार्थ २५, २६, २७ अगस्त १८७६ को हुआ था।

उपर्युक्त शास्त्रार्थों के अतिरिक्त महर्षि के अन्य शास्त्रार्थों का कोई लिखित अथवा पुस्तक रूप में प्रकाशित उल्लेख उपलब्ध नहीं होता। महर्षि के मोक्ष लाभ के पश्चात् तो आर्य समाज में शास्त्रार्थों की बाढ़ सी आ गई। पं. भीमसेन शर्मा इटावा, स्वामी तुलसीराम (मेरठ), स्वामी दर्शनानन्द आदि पुराने खेवे के शास्त्रार्थी विद्वान् थे।

मेरे ज्ञान में निम्न शास्त्रार्थ ग्रन्थ आर्य समाज के द्वारा प्रकाशित हो चुके हैं। यह सूची अपने आप में पूर्ण नहीं है। परन्तु एक प्रयास अवश्य है।

"नारी की पुकार कौन सुने ?"

(कु० अरुण जी आर्य प्रभाकर, टोहाना)

जिस भी देश में उसकी आन, धर्म एवं अस्तित्व की रक्षा के कारण उसकी वीर सन्तानों ने अपने प्राणों को बलि चढ़ा दिया, वह देश उन शहीद वीरों का निरन्तर गान करता रहता है। तथा उनकी जीवन गाथा का वर्णन इतिहासों में अंकित हो जाता है। इतिहास भावी सन्तानों को समय २ पर उनको सदेश स्मरण करवाता रहता है।

लेकिन आज अवस्था कुछ बदलती और बिगड़ती चली जा रही है। आज सैकड़ों बहने इस समाज की बन्द आंखों को खोलने के लिए, अपने माता-पिता को ऋण से मुक्त करवाने के लिए अपने शरीर पर मिट्टी का तेल डाल कर जाति की इस कुप्रथा को मिटाने के लिए अपने आपको भस्म कर रही हैं। वो बहने तो अपने प्राणों को इसलिए खोती है कि शायद अब समाज कुछ समझ जाएगा लेकिन नहीं ? समाज में तो यह प्रथा दिन प्रतिदिन जोर पकड़ती जा रही है।

कहते थे कि भारत में नारी का सम्मान होता है। कोई भी पुरुष उसका अपमान सहन नहीं कर सकता। पिता अपनी पुत्री की इज्जत बचाने के लिए अपने प्राणों से हाथ धो बैठता है, भाई अपनी बहन की खातिर मर मिटने को तैयार रहता है पर अफसोस ! आज वही देश है जहां नारी की आज दुर्दशा और अपमान हो रहा है। देखकर लज्जा से सिर झुक जाना चाहिए। उन लोगों का—जो स्वयं को समाज सुधारक कहाते हैं। कहते तो सभी हैं लेकिन करने का किसी में साहस नहीं ? यदि कोई लाखों में से एक करता भी है तो लोग उसके ऊपर हजारों लांछन लगा देते हैं।

आर्यसमाज का यह मूल उद्देश्य था कि समाज की कुरीतियों का खण्डन करना। लेकिन आज वह भी अपने कर्त्तव्य पथ से विमुख हो रहा है। यह तो एक ऐसी कुरीति है जो समाज को घुन की तरह खाए चली जा रही है।

इस दहेज की कुप्रथा को मिटाने के लिए बंगाल की बहिन स्नेहलता ने अपने शरीर पर मिट्टी का तेल डाल कर अपने आपको जीवित जला दिया था। उस समय अवश्य थोड़ी देर के लिए युवकों में हलचल मची थी और उन्होंने आन्दोलन खड़ा कर के सभाओं में प्रस्ताव भी पास करवाए थे किन्तु वह आवेश दूर होते ही फिर सब बाते ठण्डी पड़ गई। अब तो दहेज के साथ ही आगे की शिक्षा या विदेश जाने के लिए व्यय, अंगूठी एवं बहुमूल्य आभूषण, सोने की रिस्ट वाच, साईकल, स्कूटर मोटर इत्यादि की मांग भी खुल्लम-खुल्ला की जाती है। दूसरे शब्दों में यह कहना ठीक रहेगा कि लड़कों के नाम पर व्यापार किया जाता है। किन्तु यथार्थ में यदि देखा जाए तो लड़के या लड़की के नाम पर रुपया मांगना सर्वथा निन्दनीय है। कहां तो हमारा वह महान उदार धर्म। जो गौ तक को बेचने का निषेध करता हो; और कहां उसके अनुयायी अपने लड़के-लड़कियां तक को बेचने में भी नहीं लजाते। कितना अध. पतन है। इससे बढ़कर दूसरा अधर्म या कुकर्म क्या हो सकता है। मुह से तो धर्म की ठसक सब दिखाते हैं किन्तु प्रत्यक्ष व्यवहार में प्राय. सभी बगलें झांकने लगते हैं। जिन युवको के उदार हृदय होने चाहिएं वे भी आज मुर्दार बने हुए है। किन्तु यह मेरा विश्वास है कि जब तक इस निन्दनीय प्रथा के विरुद्ध विद्रोह मचाने का साहस मेरे नवयुवक भाई जो मेरे देश के भावी कर्णधार हैं, के हृदयों में नहीं होता तब तक इस कुप्रथा का हटना सर्वथा असम्भव है।

मेरे भाईयों में अपनी प्यारी बहनों के जीवन को संकटापन्न बना देने वाली रूढ़ियों और कुप्रथाओं को मिटाने का यदि साहस नहीं है तो उन्हें स्वतन्त्रता प्यारी है ये हम कैसे कह सकते हैं। वो किस मुख से रक्षा-बन्धन के दिन अपनी कलाई पर बहनों से राखी बंधवाते हैं ? संसार भी उन्हें कैसे स्वातन्त्र्य प्रिय कह सकता है ?

आज लड़की की योग्यता, कुलीनता एवं सौम्यता का कोई मूल्य नहीं रहा। आज तो लड़कों को जितना दो उतना थोड़ा। आज लड़कों की Advance Booking जारी है। लज्जा का विषय है। आज कोई भी इस से टक्कर लेने का साहस नहीं रखता। सभी की वाणियों पर ताला लगा हुआ है। इस प्रथा ने लड़कियों के जीवन को अभिशाप बना दिया है।

अब दुखी बहनों की पुकार को उनकी दर्द भरी आवाजों को कौन सुनेगा ? आर्यसमाज ने विश्व कल्याण की दीक्षा ली है। उसी से कहना है कि सर्वप्रथम वह इस ओर ध्यान दे। इस महारोग का विनाश कर दो। इस विषैले रोग को दूर कर दे तभी कुछ समाज में सुधार हो सकता है। आर्यसमाज ही इन शहीद बहनों के संदेश को संसार में सुना सकता है।

'आर्य समाज से'

(श्री 'शरर' M.A आर्य कालिज पानीपत)

क्यों न तेरे गीत गाऊं ?
मेरे जीवन में तेरी करुणा से सुन्दर प्रात आया
मेरा पथ तेरे ही पुण्य लोक से है जगमगाया
तेरे जैसा, कारुणिक मां, मै तो जगती में न पाऊं।

क्यों न तेरे गीत गाऊं ?
ज्ञान का अमृत पिला कर, मृत्यु से मुझ को उबारा
डग मगाते पग चले, मा, जब दिया तूने सहारा
तेरे चरणों से लिपट कर

क्यों न मन में शान्ति पाऊं
आज उपवन में वसन्त आया तो तेरी ही कृपा से
पुष्प ने यदि गन्ध को पाया, तो तेरी ही कृपा से
आज मै सर्वस्व दे कर भी कहां ऋण को चकाऊं ?
क्यों न तेरे गीत गाऊं

नवीन आर्यसमाज की स्थापना

ग्राम नांगली जालान निकट तिलक नगर नई दिल्ली में पं० गणेशदत्त जी आर्य सेवक ने ४ रोज प्रचार किया। उनके प्रभाव से नई आर्यसमाज ५-६-६३ को स्थापित हो गई है। अधिकारी निम्न प्रकार से है—

प्रधान—श्री लखीराम जी, मंत्री—श्री हृदयराम जी, कोषाध्यक्ष—स्वरूप सिंह जी।

आर्य कुमार सभा भी बन गई है।

हृदयराम मन्त्री

जीवन साफल्यम

(पृष्ठ २ का शेष)

प्रत्युपकार करना ही सफलता है वरना कृतघ्नता है इत्यादि नाना विध गृह कर्मों को पूरा करके वानप्रस्थ में जाकर उसके धर्म पालन करें उसके धर्म यह है पुत्र के पुत्र जब हो अर्थात् गृह की छोटी सेवा को बड़ी सेवा में परिणत कर दे गुरुकुल खोल ले अथवा पूर्व वन में ही यदि पठित हैं तो पढ़ावें भोजन वसन ग्रहण करें यदि सामान्यज्ञान है तो गुरुकुल गो सेवा भूमि वाटिका ब्रह्मचारियों की देख भाल करें अब शिष्ट समय में स्वाध्याय आर्य ग्रन्थों का और आत्म चिन्तन करें एवं करते हुए जब तक गृह जन धन से मन मोह नहीं हटा और आत्मा में शान्ति सत्य ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ तब वनी बने रहें अन्यथा संन्यास का कोई लाभ नहीं इस आश्रम से देश सेवा बहुत होती है जब से आश्रम प्रथा लुप्त हुई तब से ही देश गुलाम हुआ वानप्रस्थ के लोप से विद्या बहुत महंगी हो गई वरना वानप्रस्थी ही निःशुल्क सेवा बड़े प्रेम से समीपस्थ विद्यालयों की किया करते न फीस थी न बिल्डिगों की शान थी सादा जीवन व्यतीत होता था लोगों में उन दिनों की प्रथा है आचार्यों को दान देना अर्थात् गुरुकुल लोगों के दान से चलते थे धनाढ्य दान देते थे निर्धन सघन सभी सामे रूप में विद्या प्राप्त करते थे। जैसे कृष्ण वैसे ही सुदामा गुरु आश्रम में निवास करते थे। अब अमीरों के बच्चे गरीबों के बच्चों से घृणा करते हैं अध्यापक भी धनवान का आदर करता ट्यूशन लेनी है ना अतः देश में द्वेष बहुत है अब चतुर्थपाद जीवन सफलता का है संन्यास पूर्ण ज्ञान जब जड़ चेतन जीव ब्रह्म पुत्र पत्नी, आदि का [illegible] में क्या ग्राह्य है क्या त्याज्य है और परम उपास्य कौन है आदि २ फिर लेना चाहिये यह नहीं रांड मुई घर सम्पत नासी मूंड मुनाय भये संन्यासी॥ यह तो देश पर बोझ है संन्यासी स्वामी हैं सब का जिस में जो धार्मिक त्रुटी देखे फौरन डांट दे इतर तीन आश्रमों का द्रष्टा (नीरिक्षक इंस्पेक्टर) है ग्राम २ धाम २ फिरे संसार का सुधार करे देश को उन्नत बनाने वाले वेदानुकूल धर्म कर्म का प्रचार करें एवं जब तक मानव समाज अथवा व्यक्ति का आश्रम विभाग में विश्वास और आचरण न होगा तब तक मनुष्य जन्म की साफल्यता आकाश पुष्प और शशशृंग होगा।

वैदिक साधनाश्रम [illegible]सपुर

[illegible] बार भी ता. २५ मई से दो जून तक धूमधाम से यज्ञ तथा प्रचार होता रहा। आश्रमके अध्यक्ष श्री स्वामी सोमनन्द जी सरस्वती तथा उनके सहयोगी स्वामी प्रकाशानन्द जी सरस्वती ने यज्ञ प्रचार का बड़ा सुन्दर प्रबन्ध किया। सभा की ओर से पहिले पं. खुशीराम जी शर्मा वेद प्रचाराधिष्ठाता, श्री ताराचन्द जी, पं. त्रिलोकचन्द जी शास्त्री पं. राजपाल मदनमोहन चिमटा मण्डली गए थे। स्वामी आत्मानन्द जी यज्ञ कराते थे। प्रातः सायं यज्ञ तथा मण्डली के सुरीले भजन तथा शास्त्री जी प्रवचन होते थे। नगर के सज्जनों तथा परिवारों की देवियों का बड़ा सहयोग, श्रद्धा सेवा भाव था। डी.ए.वी. स्कूल, शंक्करगढ़ स्कूल, समाज सारे ही शामिल थे। पूर्णाहुति पर बड़ी ही रौनक थी। जनता ने आश्रम के भण्डारे के लिए पूर्ण सहयोग दिया।

[आ]र्यसमाज बस्तली [क]रनाल

का उत्[सव] [illegible] [उत्सा]ह से मनाया गया। पं. अमरसिंह जी अम्बाला करनाल मंडल के अध्यक्ष की देख-रेख प्रबन्ध में यह उत्सव मनाया गया। जिसमें श्री स्वा० भीष्म जी महाराज, पं. त्रिलोकचन्द शास्त्री, पं- अमरसिंह जी, पं. राजपाल मदनमोहन जी भजन मंडली रोहतक से पं. प्रभुदयाल जी प्रभाकर तथा उनकी मंडली श्री हरिश्चन्द्र जी श्री सुमेर जी, अम्बाला मण्डली पं. जगतराम जी, पं. शमशेरसिंह जी श्री बस्तीराम जी, श्री अर्जुनदेव जी, श्री नत्थूराम जी आये। बस्तली में नम्बरदार श्री चौधरी बलवन्तसिंह जी प्रधान आर्य समाज, चौ मण्डराम जी, चौ. मुंशीराम जी चौ. पूरणसिंह जी, चौ. धन सिंह जी, पं. लक्ष्मी दत्त जी, श्री राम धारी जी श्री धर्म चन्द जी आदि का समाज प्रेम अनथक उत्साह देखने वाला था। बड़ा ही समारोह था। देवियों का उत्साह भी खूब था। वेद प्रचार के लिए मार्गव्यय के अतिरिक्त सभा के लिए १७६) रु. दान मिले। छोटे से गांव में समाज का यह समारोह देख कर मन प्रसन्न हुआ।

गुरुकुल श्री दयानन्द वेद विद्यालय गौतम नगर नई दिल्ली—१६

सर्वथा निःशुल्क गुरुकुल संस्कृत पढ़ने वाले निर्धन छात्रों को शुभ अवसर

गुरुकुल श्री दयानन्द वेद विद्यालय देहली में छात्रों का निःशुल्क प्रवेश हो रहा है। यहां आर्ष पाठनिधि के माध्यम से संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी की प्रथमा, मध्यमा, शास्त्री, आचार्य परीक्षा का प्रबन्ध है। छात्रों का भोजन आदि का व्यय गुरुकुल की ओर से होगा। प्रवेशार्थी स्वयं या उनके माता पिता शीघ्र बच्चों को प्रवेश करावें।

पत्र व्यवहार का पता—
आचार्य विश्वश्रवाः व्यास
मन्त्री

अरुण आर्य प्रभाकर की आदर्श शुभ सगाई

'आर्य जगत' के पाठकों को यह जान कर बड़ा हर्ष होगा कि अरुण आर्या प्रभाकर जिन के लेख प्रायः 'आर्य जगत' में छपते रहते हैं। की सगाई १ जून को टोहाना में जीरा निवासी ला० हंसराज जी रईस सुपुत्र श्री सतीश कुमार के साथ हो गई। लड़के वालों की तरफ से किसी प्रकार के टीका की मांग नहीं की गई। सगाई में केवल एक रुपया वारिमज दिया गया। इस का सारा श्रेय श्री सतीश कुमार के बड़े भ्राता बाबू मुन्नीलाल जी को है। बाबू मुन्नीलाल एक आदर्श वादी नवयुवक हैं। पिछली सर दयों में उनका विवाह अरुणा आर्य की बड़ी बहन शोभा देवी के साथ पूर्ण वैदिक रीति से हुआ था। विवाह में किसी प्रकार दिखावा नहीं किया गया था और न ही किसी के दहेज की मांग की गई थी। यदि समाज में नवयुवक इसी प्रकार के आदर्श को अपना ले तो लड़कियों के विवाह की समस्या हल हो जाये।

(बृजलाल गुप्त प्रधान आर्य समाज टोहाना)

मास्टर सेवाराम रेडियो कलाकार

आर्यसमाजों तथा आर्यभाईयों की सेवा में निवेदन है कि जो सज्जन किसी शुभ अवसर तथा उत्सव पर मेरी सेवा लेना चाहें नीचे लिखे पते पर पत्र लिखने की कृपा करें।

सेवाराम रेडियो कलाकार
रघुनाथ मन्दिर कमरा नं० ६
जम्मू तवी

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २५) रविवार ९ आषाढ़ २०२०— २३ जून १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

प्रेता जयता नर:

हे लोगो! नेता-गण! प्रेता-आगे बढ़ो और जयत—विजय प्राप्त करो आगे बढ़ने में ही जय मिला करती है। नेता सदा आगे ही बढ़ते रहें ताकि सब को उत्साह मिलता जाए।

उग्रा: व: सन्तु बाहव:

हे वीरो! तुम्हारी भुजाएं बड़ी उग्र-बल शक्ति से भरी हुई होवें भुजाबल बढ़ा हो। इस में कभी दुर्बलता न आने पाये। वीर भुजा वाले ही सदा विजयी होते हैं।

जय अमित्रान्

जो तुम्हारे राष्ट्र के अमित्र हैं। विरोधी तथा शत्रु बने हुए हैं उनको 'हे वीर नेत: ! अपनी शक्ति से जीत ले। उनकी हार हो।

अ थ र्व वे द:

वेदामृत

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥

ऋ. मं. ७ सू. ३५ मन्त्र १२

अर्थ:—(शं न:) हमें शान्ति देवें ये सारे (सत्यस्य) सत्य के (पतय:) स्वामी, पालन करने वाले दिव्य लोग (भवन्तु) होवें और (शं न.) हमारा मंगल करें ये (अर्वन्त:) वेग वाले घोड़े (शमु सन्तु) हमें सुख देंवे (गाव.) दूध वाली गौवें। (शं न:) हमारा सुख करें ये (ऋभव:) ऋभु-ज्ञानी पुरुष, दिव्य आचार विचार वाले देव जन (सुकृत:) शुभ कर्म करने वाले (सुहस्ता:) जिनके हाथ सदा शुभ परोपकार वाले कामों में लगे रहते हैं, ज्ञान विज्ञान में जो निपुण हो कर अपने हाथों से नये २ आविष्कार करते रहते हैं ऐसे सुहस्त लोग (शंन:) हमारे लिए सुखकर (भवन्तु) होवें। तथा (पितर:) पालन करने वाले, रक्षा करने वाले सारे पितर इन (हवेषु) विश्व उपकारी यज्ञों में सदा हमारा मंगल करते रहें।

भाव:—जिन में सत्य विचार, सत्य उच्चार, सत्य आचार है ऐसे सत्य के प्यारे हमें सुख देवें। ये ज्ञानी शुभ कर्मी तथा जिन के हाथ सदा परोकार के कार्यों में लगे रह कर नये २ आविष्कार करते रहते हैं ऐसे सुकृत, सुहस्त ऋभु लोग तथा हमारे माता, पिता, गुरु, दिव्य पुरुष, रक्षक पितर लोग हमारे उपकारी कामों में हमारा मंगल करते रहें—सं.

ऋषि दर्शन

चक्रवर्ति राज्यं स्थिरम्

हमारा चक्रवति राज्य हो तथा वह सदा स्थिर हो, सदा रहने वाला बना रहे। हम कभी पराधीन न रहें स्वराज्य, सुराज्य और चक्रवर्ति राज्य के स्वामी बनें।

शत्रूणां पराजयश्च

जो भी प्रकट या गुप्त राष्ट्र के, धर्म तथा मानवता के शांत न करने वाले या नाशकारी शत्रु हैं—उनकी सदा हार हो। वे सामने ठहरने न पावें।

साम्राज्याय पिन्वस्व

हे भगवन्! हमें स्वराज्य और सुराज्य के साथ सदा जोड़े रखो। हम सदैव स्वाधीन रहें। हर प्रकार से ऊंचे राज्य में जीवन बितावें।

मा ध्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा[स्त्री]

अध्यात्म-चर्चा

आत्मा की प्राप्ति का साधन

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज सरस्वती)

पूज्य महात्माजी की मधुर, जीवन देने वाला आध्यात्मिक प्रसाद आर्यजगत के मान्य पाठकों की सेवा में समय-समय पर पहुंचाया जाता है। श्री महात्मा जी का उपदेशामृत इतना स्वादु होता है कि उसे पान करने का बारम्बार मन करता है। जैसा उनका जीवन मीठा है। उसी प्रकार उनकी उपदेश बहुत मीठा है। जो सुनते हैं वही रस लेते हैं—सं.

जिस व्यक्ति के चित्त की वृत्तियां एकाग्र नहीं उसको भी यह आत्मा नहीं मिलता। आप कहेंगे कि यह अच्छी आपत्ति है। बहुत कठिनता से मन को समझाया, अब यह चित्त महोदय आ गये। परन्तु स्मरण रखो—यह चित्त साधारण वह तो दिन भीता है। एक समय में एक कार्य ही वह कर सकता है। वह तीव्र बहुत है। अभी जो करता है अभी कनाट प्लेस में पहुंच गया फिर वापस आ गया। एक सैकिंड के करोड़वें भाग से भी कम समय में वह मीलों की दूरी तक जा पहुंचता है। वहां से वापस भी आ जाता है। परन्तु अरब मील जाये या खरब मील, एक समय में रहता एक ही एक स्थान पर है—परन्तु यह चित्त— एकमनेकार्थमवस्थितं चित्तम् एक ही समय में अकेला ही जो बहुत स्थानों पर विद्यमान रहता है वह चित्त है। यह वास्तविक बात है जो टिकती वस्तु नहीं है। क्या है यह? कहां से आया है? सम्बन्ध में खोज की तो पता लगा कि यह प्रकृति के कुटुम्ब से बना है। माया के परिवार से इसका सम्बन्ध है। अहंकार से यह उत्पन्न हुआ है। तब और अन्वेषण हुआ कि इसका काम क्या है, कर्तव्य क्या है, करता क्या है? तब पता लगा कि जितनी भी वासनाएं, जितने भी संकल्प, जितनी भी इच्छाएं, जितने भी संस्कार और जितने भी विचार हमारे भीतर उत्पन्न होते या एकत्रित होते हैं उन सबका मालगोदाम वह चित्त है। कई लोग मन को गालियां देते हैं कि यह टिकता नहीं। अरे भाई! नहीं। यह सब से बड़ा विघ्न है। जब तक यह ठीक न हो जाये प्रभु की कृपा नहीं होती। आप कहेंगे यह एक और संकट आ गया जो एक होता हुआ भी अनेक स्थानों पर रहता है। उसे टिकायेंगे किस प्रकार? ऐसा किये बिना प्रभु की कृपा तो मिलती नहीं तो फिर करें क्या?

परन्तु हमारे पूर्वज और ऋषि समस्याओं को केवल उत्पन्न नहीं करते थे, उन का समाधान भी खोजते थे। इतनी खोज की उन्होंने प्रत्येक बात की कि उसे देख कर हृदय कमल खिल उठता है। अद्भुत कौशल दिखलाया उन्होंने। शरीर की एक २ नाड़ी को गिन डाला, उस के गुण को समझा। उस के भीतर जो कुछ होता है उसे देखा। किस प्रकार इस प्रकृति को बदला जाये यह भी देखा। चित्त के सम्बन्ध में अन्वेषण कर के उन्होंने कहा—तत्प्रतिषेधार्थ एकतत्वाभ्यासः—इस चित्त को टिकाने का, इस की चंचलता को दूर करने का साधन है एक तत्व का अभ्यास। संसार में कई लोग २५ तत्व मानते हैं, कई १२ मानते हैं और कई पांच। परन्तु यह एक तत्व क्या है? यह एक तत्व है ब्रह्मतत्व और ब्रह्मतत्व के बारे ऋषियों ने कहा—तस्य वाचकः प्रणवः—उसका वाचक ओ३म् है। अब इस ओम् के नाम के अभ्यास का क्या अर्थ है। यह कि उसी का ध्यान करो। उठते बैठते, चलते फिरते, हर समय उसी का ध्यान करो। प्रत्येक स्थान पर उसी की शक्ति को देखो। उसके सौंदर्य को निहारो। उसकी महिमा का अवलोकन करो। उसके विस्तार को देखो और जब किसी एकांत शांत स्थान में सिद्धासन या पद्मासन या कोई दूसरा आसन लगा कर बैठो तो माथे के भीतर आज्ञाचक्र में, वक्षःस्थल के भीतर हृदय चक्र में या किसी भी दूसरे स्थान पर जहां ध्यान टिके—ओम् का ध्यान करो। निरन्तर यह अभ्यास करते रहो, अन्ततः मन टिक जायेगा। यह है एक तत्व का अभ्यास इस अभ्यास के बिना चित्त में एकाग्रता नहीं आती एकाग्रता न आये तो फिर प्रभु की कृपा नहीं मिलती और कृपा न मिले भगवान् का दर्शन भी नहीं होता।

दर्शन होने की यह बात कुछ लोगों को विचित्र सी लगती है। परन्तु सुनो—भगवान के दर्शन भी होते हैं। उसका कोई स्वरूप नहीं, कोई रङ्ग नहीं रूप नहीं। मूर्ति नहीं। मुण्डकोपनिषद् का ऋषि घोषणापूर्वक कहता है—तं पश्यते निष्कल ध्यायमानः—स्पष्टरूप से उन्होंने कहा—तं निष्कलं पश्यते उस निराकार को, उस स्वरूप को जिस में कोई कला नहीं, कोई रूप नहीं, उसे देखता है—उसका साक्षात्कार करता है। परन्तु कब? ध्यायमानः ध्यान में। इस लिए मैं कहता हूं कि चित्त की वृत्तियों को रोक देने के पश्चात् भगवान की कृपा होती है और उनका दर्शन होता है तो कविता की भाषा में नहीं कहता अपितु वस्तुतः दर्शन की बात कहता हूं। देखने की बात कहता हूं। इसी देखने की बात को उपनिषद् कहता है।

पूज्य महात्मा जी मनाली में

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज मारीशस अफ्रीका से लौटने पर कुछ अस्वस्थ थे फिर भी नाना स्थानों पर कथा मृत का प्रवाह बहाते रहे। अब कुछ स्वास्थ्य लाभ करने तथा कुछ साधना अभ्यास के लिए आज कल कुल्लू मनाली मे पधारे हुए हैं। वहां भी अपना अमृत पिला रहे हैं।

ग्राम रन्धौली में वेदप्रचार

दो मई सन ६३ को वीरवार के दिन गुरुकुल घरौंडाके श्री हरलाल जी की भजन मंडली ने ग्राम रन्धौली में बड़ी धूमधाम के साथ वेद प्रचार किया गया तथा गुरुकुल को ११/- दान दिया गया। जनता ने इस अवसर से लाभ उठाया। इसी अवसर पर डा० रघुवीर जी की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया तथा उनके परिवार के साथ सहानुभूति प्रकट की गई।

दयानन्द—मंगतराम आर्य

आर्यसमाज श्रद्धानन्द बाजार अमृतसर का चुनाव

प्रधान श्री विश्वनाथ जी ग्रोवर, उपप्रधान श्री विश्वेश्वर नाथ जी सेठ उपप्रधान श्री अमृतलाल जी उपप्रधान श्री पं० भूपालसिंह जी शास्त्री मन्त्री श्री द्वारका नाथ जी विद्यालंकार उपमन्त्री श्री रलाराम जी उपमन्त्री श्री जितेन्द्रनाथ जी कोषाध्यक्ष श्री मदनमोहन जी सेठ निरीक्षक महता रामरत्न जी।

पुस्तकाध्यक्ष श्री सत्यपाल जी

—बलदेव कृष्ण पुरोहित

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ९ आषाढ़ २०२०, २३ जून १९६३[अंक २५

आर्यजगत के प्रेमियों से

आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब जालन्धर अपने वेद प्रचार के विशाल मिशन में निरन्तर आगे बढ़ती जा रही है। आर्थिक साधनों की कठिनता में भी प्रचार के कार्य में इसने कभी न्यूनता नहीं दिखाई। इसका कारण यह है कि सभा के जितने भी हितचिन्तक हैं। चाहे मान्य अधिकारी हों, संस्थाओं रूपी छावनियों में बैठकर कार्य करने वाले इसके मान्य प्रबन्धक व कार्यकर्ता हों समाजें तथा परिवार हों, अथवा जनता हो। सबका हित सभा के साथ है। यह बात गौरव की है। अपने मुखपत्र आर्यजगत के द्वारा भी सभा अपने सन्देश को दूर २ तक पहुंचती रहती है। इसमें समाज के प्रसिद्ध मान्य सन्यासी महात्माओं, नेताओं, विद्वान भाई बहिनों के कीमती विचार, अनुभवपूर्ण सन्देश लेखों, कविताओं के रूप में प्रकाशित होकर जनता की सेवा में पहुंचते रहते हैं। यह भी जीवन का एक प्रसाद है जो मीठा, पुष्टिकारक है। हम तो केवल सेवक हैं। प्रसाद देने और अमृत पिलाने वाले दूसरे ही हैं। इस बार इस अङ्क में कुछ विशिष्ट लेख भाषण हैं। प्रति रक्षा मन्त्री श्री चह्वाण जी का, पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी तथा मान्य प्रिंसिपल सूर्य भानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के ओजस्वी भाषण हैं। अतः इस अंक में पूरा अग्रलेख न लिख कर इतना ही पर्याप्त है। पाठक प्रेमी उनके गम्भीर ओजस्वी, जीवनप्रद विचारों से पूर्ण लाभ उठावें। —त्रिलोक चन्द

स्वामी दयानन्द सरस्वती देश के महान् थे

कठोर परीक्षा की घड़ी सामने खड़ी है

सुरक्षा मन्त्री श्री चह्वान का भाषण

स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज ने अछूतोद्धार जातिभेद निवारण, बाल विवाह का विरोध, स्त्रीशिक्षा, पुरानी निरर्थक रूढ़ियों अन्धविश्वासों के खण्डन के लिए यथा शक्ति यत्न किया। इन के अतिरिक्त शिक्षा, संस्कृति और भाषा के क्षेत्र में भी दयानन्द जी ने देश के गौरव को ध्यान में रख कर कार्य किया और देशभिमान की भावना को जगाया इन प्रयत्नों के फलस्वरूप निस्सन्देह देश में जागृति आई किन्तु संयोग से अन्य दिशाओं में देश जितना आगे बढ़ सका है, सामाजिक दृष्टि से उतना अभी नहीं बढ़ पाया है। मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि अन्धविश्वास, रूढ़िवाद और जातिभेद को अभी हमें दूर करना है। मैं जानता हूं कि यह महान् कार्य शिक्षा के बिना नहीं हो सकता, पर साथ ही यह भी मानना चाहिए कि ऐसे सुधार कार्य के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करना भी कम आवश्यक नहीं। इस राष्ट्रिय काम के लिए आर्य समाज जैसी संस्थाएं जो मिशनरी भाव से अभी तक इस में लगी हुई हैं, वही इसे सम्पन्न कर सकती हैं।

आप सब के सामने स्वामी दयानन्द जी और आर्य समाज के कार्यों के सम्बन्ध में अधिक कहने की मुझे आवश्यकता नहीं। आप उन सब से बहुत अच्छी तरह परिचित हैं। मैं तो इस शुभ अवसर पर उन्होंने देश के लिए जो महान् कार्य किया, सेवा की और त्याग किया, उस के स्मरण में अपनी श्रद्धांजलि के दो शब्द कहना चाहता हूं। वह एक ऐसे महापुरुष थे, जिन की गणना वास्तव में देश के महान निर्माताओं में की जायगी। धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक इन तीनों क्षेत्रों मे उन्होंने जो कुछ किया उस की छाप हमारे समाज पर आज भी स्पष्ट दिखाई देती है। राष्ट्रिय जीवन के इन तीनों पहलुओं को प्रभावित करने वाले उन के उपदेशों का उद्देश्य भारत की भावात्मक एकता स्थापित करना था। भारत को एक राष्ट्र बनाने के लिए वे विदेशी शासन का अन्त चाहते थे। समाज की एकता के लिए वे जन्मजात वर्ण और जातपात का अन्त चाहते थे। इस कार्य में उन्हें काफी सफलता मिली। भारत के नेताओं ने जिस स्वराज्य और प्रगतिशील समाज व्यवस्था का सुनहला स्वप्न देखा था, उस की नींव रखने में निश्चय ही स्वामी दयानन्द का हाथ रहा है।

आज चीनी आक्रमण से देश की रक्षा का प्रश्न सर्वोपरि है। इस के कारण हमारी स्वतन्त्रता के लिए भी खतरा पैदा हो गया है। अभी भी कठोर परीक्षा की घड़ी हमारे सामने बनी हुई है। इस संकट को दूर करने और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए हमें जागरूक और प्रयत्नशील रहना होगा। यह हर्ष का विषय है कि इस संकट काल में देश के सभी लोगों और संस्थाओं ने एक स्वर से उत्साह पूर्वक रक्षा कार्य में अधिक से अधिक योगदान देने में दृढ़ संकल्प दिखाया है। फिर भी यह अनुचित न होगा कि यदि राष्ट्र इस दिशा में आय समाज से विशेष आशा रखे, क्योंकि इस सस्था के जन्म और जीवन की भावात्मक एकता के आदर्श ने असाधारण रूप से प्रेरित किया है। उस प्रेरणा को ले कर ही लाला लाजपतराय स्वामी श्रद्धानन्द जैसे नेताओं ने स्वाधीता आन्दोलन में जी जान की बाजी लगाई। महर्षि दयानन्द की इस उक्ति को हम भूल नहीं सकते कि "प्रत्येक देश के लिए अपना राज्य ही सब से उत्तम राज्य है। विदेशी राज्य चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो, वह निकृष्ट है।" इसी सिद्धांत को लोकमान्य तिलक ने देश के जीवन का मूल मन्त्र बनाया कि स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है। मैं जानता हूं कि इस कार्य में भी आर्यसमाज पीछे नहीं। आर्यसमाज से सम्बद्ध सभी संस्थाएं और व्यक्ति हर प्रकार से राष्ट्रीय रक्षा के इस कार्य में हर तरह से सहयोग दे रहे हैं। राष्ट्रीय रक्षा कोष में भी उन्होंने बड़े उत्साह से योग दिया है। इस संकटकाल में देश की रक्षा के लिए जनता ने एक होकर जो अपूर्व उत्साह प्रदर्शित किया है वह हमारे लिए गौरव का विषय है। हम सब को यही प्रयत्न करना है कि इस उत्साह में किसी प्रकार की शिथिलता न आने पाये। जातीयता, प्रांतीयता अथवा कोई वाद या भेद इस में बाधक न हो। हमारे ये संकल्प ही उन महापुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलियां हैं और तभी हमारी ये जयन्तियां सच्चे माने में सार्थक होंगी। मेरा तो पूरा विश्वास है कि हमारे प्रयत्न सफल होंगे।

हम विजयी होंगे, क्योंकि कर्म हमारे हाथ है और धर्म हमारे साथ है। धर्म की सदा विजय होती है। हमारी विजय भी निश्चित है।

प्रिंसपिल सूर्यभानु जो एम. ए. वायस चांसलर कुरूक्षेत्र यूनिवर्सिटी आर्य समाज की विभूतियों में हैं। इतने उच्चासन पर बैठ कर तथा इतना व्यस्त जीवन बिताते हुए भी आर्य समाज एवं आर्य प्रादेशिक सभा के कामों में उसी प्रकार सहयोग देते रहते हैं। आर्य समाज देव नगर (मिर्जा पुर) करनाल के वार्षिकोत्सव पर रात्रि को आप ने अपना ओजस्वी, गम्भीरता पूर्ण जो भाषण दिया-उस का प्रसाद जगत् के प्रेमियों की सेवा में भेंट है—सं.

स्वामी दयानन्द ने असत्य से कभी समझौता नहीं किया

आर्य समाज ने हर क्षेत्र में देश का नेतृत्व किया

कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के वायसचांसलर प्रि. सूर्यभानु जी

सत्तर अस्सी वर्ष की बात है कि भारत के वायसराय नार्थ ब्रुकने स्वामी दयानन्द जी को मिलने का निमन्त्रण दिया-वार्तालाप में कहा कि यदि आप को दूसरे मतों के सिद्धान्त पर समालोचना करते किसी प्रकार का यदि हमारे राज्य के प्रबन्ध के कारण भय नहीं है तब तो आप अपनी प्रार्थना में परमेश्वर से अंगरेजी के राज्य के भारत में देर तक कायम रखने प्रार्थना किया करें। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मै तो यह प्रार्थना करता हूं कि मेरा देश भारत आप की दासता से जितनी जल्दी मुक्त हो उतना उत्तम है। अपना राज्य कैसा भी हो विदेशी राज्य से अच्छा है। यह स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा भी है। स्वामी जी बोले कि मैं ने तो सत्य का प्रचार करना है। जहां भी असत्य और त्रुटि होगी मैं लोगों के सामने रखूंगा। सत्यप्रचार में चाहे जान भी चली जावे पर मैं सत्य प्रचार से कभी न हटूंगा। यह वह समय था जब कि अंगरेजी राज्य के बारे में कहा जाता था कि The sun never sets over the British Empere. अर्थात् अंग्रेजी राज्य में सूर्य कभी अस्त नहीं होता। कितने साहस का काम था ऐसा साहस निर्भीक दयानन्द ही कर सकते थे।

सन् १९४२ में Quit India भारत छोड़ो का आन्दोलन चलाने वाले महात्मा गान्धी थे पर इस आन्दोलन का बीज बोने वाले तो स्वामी दयानन्द थे। ऋषि के आरम्भ किये हुए काम को ही महात्मा जी ने उत्तमता से पूरा किया। भारत के स्वराज्य लाने में स्वामी दयानन्द का स्थान बहुत ऊंचा है। अभो तक लोगों ने इस दिशा में स्वामी जी से न्याय नहीं किया।

राष्ट्रिय एकता unity के लिए भी स्वामी ने कितना अनुपम कार्य किया। सर सैयद खां तथा पादरी इत्यादि को बुला कर एकता सम्मेलन के रूप मे उन का राष्ट्रिय एकता का मनोभाव तथा प्रयास अमर रहेगा। वे चाहते थे कि देश का भेदभाव दूर हो जावे। उन को सत्य कहने में भय नहीं था। भारत के उत्थान में ऋषि दयानन्द का स्थान इतिहास में बहुत ऊंचा है और रहेगा। समाज सुधार और राष्ट्रनिर्माण का आज जितना भी कार्य हो रहा है यह सारा प्रोग्राम बहुत पहिले स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन में आरम्भ किया था। महात्मा गांधी श्री गोखले जी को अपना गुरु मानते थे, गोखले जी रानाडे जी को अपना गुरु समझते थे। जब रानाडे से उन के गुरु के बारे में पूछा जाता तो वह स्व. दयानन्द जी को अपना गुरु बतलाते थे। इस प्रकार राष्ट्रियता के जन्मदाता ऋषि दयानन्द ही थे। महापुरुषों का मुकाबिला अच्छा नहीं किन्तु मैं यह चाहता हूं कि इस दिशा में स्वामी दयानन्द के साथ न्याय होना चाहिए। जब आर्य समाज का काम शुरू हुआ उस में देश भक्ति कूट २ कर भरी हुई थी। इस कार्य में आर्यसमाजी लोग ही अग्रणी थे। उस समय कांग्रेस का आंदोलन चलाने वाले आर्य समाजी ही तो थे। डी. ए. वी. कालेज केवल कालेज ही न था अपितु स्वयं एक आंदोलन था। इसके बारे में कहा जाता था कि D.A V. College is a hot-leed of sedition यह संस्था विद्रोह का केन्द्र है। इसकी Boat club को navy तथा इसके जिमनेजियम को तोपखाना समझा जाता था। स्वराज्य आंदोलन में आर्यसमाज का महान् योगदान है। इंजीनियर देश जाति के लिए बहुत आवश्यक हैं। पर जो सोशल इंजीनियर होते हैं वे तो सारे राष्ट्र की विचारधारा ही बदल देते हैं। ये इंजनीयर नदियों की जल धारा बदल देते पर सामाजिक इंजनीयर सारी जाति का जीवन मोड़ ही तबदील करके रख देते हैं स्वामी दयानन्द एक महान् सामाजिक इंजनीयर थे जिन्होंने सारी विचार धारा ही तबदील कर दी। ला० लाजपतराय ने Problems of Education in India नामक पुस्तक में लिखा है कि भारतीय अपनी संस्कृति, महापुरुषों, सभ्यता, परम्परा से शर्मिन्दा थे। स्वामी जी ने सब की इस उदासीनता को बदल कर स्वाभिमान, आत्मगौरव तथा आत्म सम्मान का सुन्दर भाव पैदा कर दिया। यह राष्ट्र की भारी सेवा थी। इसी लिए मैं उनका दर्जा बहुत ऊंचा समझता हूं।

स्वामी जी बतौर इन्सान भी बहुत ऊंचे थे। मनुष्य काम. क्रोध, लोभ मोह अहंकार का शिकार हो जाता है। काम का मुकाबिला तो बड़ा कठिन है पर स्वामी जी का इन पर पूर्ण अधिकार था। A.K. दत्त ने बंगला की पुस्तक में लिखा है कि मैंने स्वामी जी से पूछा कि क्या काम कभी आप में प्रबल हुआ है ऋषि बोले कि मुझे फुर्सत ही नहीं। काम फिर कैसे प्रबल हो सकता है। जिस में यह तड़प हो कि मैंने सारे संसार का कष्ट दूर करना है उसे और बातों के लिए अवकाश कहां? आर्त व्यक्ति ही भगवान् को याद करता है। स्वामी जी रात को उठ २ कर देश की अवस्था पर रोया करते, तड़पा करते। उन के दिल में देश का, विधवाओं, अनाथों, सब की पीड़ा का दर्द था। मैं समाज के लिए हूं और मेरी भस्म भी खेत में डाल देना ताकि खाद के काम आसके। क्रोध कैसे हो सकता है मैं तो आजाद कराने आया हूं कैद कराने नहीं—कह कर विषदेने वाले को भी मुक्त करवा दिया। यदि वह चाहते तो गुरु, महन्त बन जाते पर लोभ, मोह अहंकार उनको छू तक नहीं गया। सुकरात और दयानन्द को विष देने वालोंको क्या पता कि विष उनको मार नहीं सकता। उस समय आज जैसी रेल, तार. लाऊडस्पीकर आदि सुविधाएं न थीं फिर भी कितनी पुस्तकें लिखीं—कहां २ भ्रमण करते थे। उनका मिशन जीवित है और रहेगा। आर्यसमाज स्वामी जी की प्रतिनिधि संस्था है। आज कार्य की और भी अधिक आवश्यकता है। आर्यसमाज का सारा कार्यक्रम सारे देश ने स्वीकार कर लिया है, बड़े गौरव की बात है। मेरे में जो त्रुटियां हैं वे मेरी और जो गुण हैं वे आर्यसमाज से सीखे हैं। प्रभु शक्ति दें ताकि मैं देश सेवा में लगा रहूं।

Bari Doab Bank imited.

Registered Office :

Gowshala Bazar, HOSHIARPUR.

Subscribed Capital	... Rs. 2,00,000
Paid up Capital	... Rs. 2,00,000
Reserves	... Rs. 8,40,000

FORTY-EIGHTH REPORT BY THE DIRECTORS

The Directors beg to submit to the shareholders the Balance Sheet and Profit and Loss account of the Bank for the year ended 31st December 1962, together with the Auditors' Report.

The net profit for the year amounts to Rs. 91,431 53 which with Rs. 2,24,555 40 brought forward from the previous year makes a total of Rs. 3,15,986·93 available for disposal.

The Directors recommend the amount to be disposed of as under :—

	Rs.	nP
To Statutory Reserve Fund	25,000	00
To Dividend @ 15% p. a. ...	30,000	00
To Provision for Income Tax ...	40,000	00
To Dharmada ...	2,000	00
To Carry Forward ...	2,18,986	93
TOTAL ...Rs.	3,15,986	93

The Bank's business continued to function satisfactorily.

Hoshiarpur,
30th March, 1963.

JAS RAJ
SHAM SINGH
JANAK RAJ } Directors.

Report of the Auditors to the Shareholders

We have audited the foregoing Balance-sheet of Bari Doab Bank Limited, Hoshiarpur, as at 31st December, 1962, and also the foregoing Profit and Loss Account of the Bank for the year ended upon that date.

In accordance with the provisions of Section 29 of the Banking Companies Act, 1949, read with the provisos to sub-section (1) and (2) of Section 211 and sub-section (5) of Sections 211 and 227 of the Companies Act, 1956, the Balance-sheet and Profit and Loss Account are not required to be and are not drawn up in accordance with the Sixth Schedule to the Companies Act, 1956, they are, therefore, drawn up in conformity with Forms A and B of the Third Schedule to the Banking Companies Act, 1949.

We report that :–

(a) We have obtained all the informations and explanations which, to the best of our knowledge and belief, were necessary for the purpose of our audit and have found them to be satisfactory.

(b) The transactions of the Bank which have come to our notice have been within the powers of the Bank.

(c) In our opinion proper books of account as required by law have been kept by the bank so far as appears from examination of those books.

(d) The Bank has got no branch.

(e) The Bank's Balance-Sheet and Profit and Loss Account dealt with by this report are in agreement with the books of account.

(f) In our opinion and to the best of our information and according to the explanations given to us, the said accounts give the information required by the Companies Act, 1953, in the manner so required for banking companies and on such basis the said Balance-Sheet gives a true and fair view of the state of the affairs of the Bank as at 31st December. 1962, and the Profit and Loss account gives a true and fair view of the profit for the year ended upon that date.

NEW DELHI,
Dated : 30th March, 1963.

SODHBANS & Co.,
Chartered Accountants.

Bari Doab Bank Limited. HoShiarpur.

PROFIT & LOSS ACCOUNT FOR THE YEAR ENDING 31st DECEMBER, 1962.

31.12.1961 Rs.	EXPENDITURE	Rs. nP
54,457	1. Interest paid on Deposits, borrowing etc. ...	51,210 18
16,559 (4,920)	2. Salaries allowances and Provident Fund (including Rs. 4,920/-paid to manager)* ..	16,949 90
—	3. Directors' and Local Committee Members' Fees and allowances ...	—
1,663	4. Rent, Taxes, Insurances, Lighting etc. ..	2,395 91
914	5. Law Charges ..	235 81
613	6. Postage, Telegrams and Stamps ..	587 68
300	7. Auditors Fees	300.00
1,430	8. Depreciation on and Repairs to the Banking Company's Property ...	1,117 21
504	9. Stationery, Printing and advertisements etc. ...	843 13
—	10. Loss from sale of or dealing with non-banking assets	—
—	11. Net loss on sale of shares and securities ...	—
34,574 (33,088)	12. Other expenditure (including income-tax paid at source Rs. 31,185—00) ...	32,182 01
896	13. Bad debts written off ..	604 55
1,03,266	14. Balance of Profit (Subject to Taxation) ...	91,431 53
2,15,176	*(beside perquisites, monetary value Rs. 204) TOTAL ..	1,97,857 91

31.12.1961 Rs.	INCOME		Rs. nP.
	(Less provision made during the year for bad and doubtful debts and other usual or necessary provision)		
1,12 129	1. Interest and Discount ...		1,11,032 93
249	2 Commission, Exchange and Brokerage ...		302 70
—	3, Rent ...		—
—	4 Net profit on sale of investments, Gold, Silver, Land and other assets (not credited to Reserves or any particular fund or account) ...		—
—	5. Net profit on revaluation of investment Gold and Silver, land premises and other assets (not credited to Reserves or particular fund or account) ...		—
21, 618	6. Income from non-banking assets	21,137 80	
16, 323	Less expenses	11,981 01	9 153 79
5, 295			
	7. Other Receipts		
83, 629	(i) Dividend on shares	73,967 00	
2, 379	(ii) Miscellaneous Earnings	2,498 49	
11,495	(iii) Written off debts realized	900 00	77,365 49
97 503			
2,15.176	TOTAL ...		1,97,857 91

DURGA DASS,
Manager.

JAS RAJ
SHAM SINCH
JANAK RAJ } Directors.

Bari Doab Bank

BALANCE SHEET AS

31. 12. 1961 Rs.	CAPITAL & LIABILITIES		Rs. nP.	Rs. nP.
	1. Capital :			
(2,00,000)	Authorised Capital 4000 equity shares of Rs. 50 each ...			2,00,,C00 00
	Issued, Subscribed and paid up Capital :			
2,00,000	4000 equity Shares of Rs. 50 each fully paid up ...			2,00,000 00
8,10,000	2. Reserve Fund and other reserves ...			8,40,000 00
	3. Deposits and other Accounts :			
12,12,736	Fixed Deposits ...		12,25,114 46	
3,35,695	Saving Bank Deposits ...		3,36,552 37	
2,26,784	Current accounts, Contingency accounts etc, ...		2,62,236 41	
2,500	Employee's Security Deposit ...		2,500 00	18,26,403 24
17,77,715				
—	4. Borrowing from other Banking Companeis, agents etc....			—
—	5. Bills payable ...			—
—	6. Bills for Collection being bills receivable as per contra...			1,470 40
	7. Other liabilities : ...			
	Provision for Income-tax : ...			
15,674	Balance as per last Balance Sheet	55,639 13		
40,000	Additions during the year	40,000 00		
55,674		95,639 13		
35	Less Income-tax paid	45,320 68	50,318 45	
55,639				
3,055	Dharmada ...		4,143 50	
239	Dividend unpaid ...		222 20	54,684 15
58,933				
—	8. Acceptances, endorsements and other obligations as per contra ...			Nil
	9. Profit and Loss Account : ...			
3,29,289	Balance as per Balance Sheet as at 31st December, 1961. ...		3,32,555 40	
	Less appropriations : ...			
30,000	Statutory Reserve	30,000 00		
28,000	Dividend	36,000 00		
2,000	Dharmada	2,000 00		
40,000	Provision for Incom-Tax	40,000 00	1,08,000 00	
2,29,289			2,24,555 40	
1,03,266	Add. Profit for the year ended 31.12.62.		91,431 53	3,15,986 93
3,32,555				
	10. Contingent Liabilities			
(12,250)	On Partly paid Shares Rs. 16,559			
31,79,203	TOTAL			32,38,544 72

Limited, Hoshiarpur.

ON 31st DECEMBER, 1962.

31. 12. 1961 Rs.	PROPERTY & ASSETS		Rs.	nP.	1	
	1. **Cash**					
78,467	In hand & with Reserve Bank & State Bank of India (including foreign currency notes).				1,14,324	66
	2. **Balanae with other Banks :**					
	(i) In India					
80,367	(a) On current account		74,968	66		
9,58,084	(b) On deposit account (including Rs, 2500/- on a/c of Employees' Security Deposit).		9,09,777	94		
—	(ii) Outside India		—		9,84,746	60
10,38,451						
—	3. **Money at call and short notice**				1,90,000	00
	4. **Investments at Cost below market value :**					
8,63,881	(i) Securities of the Central and the State Governments		8,63,881	01		
—	(ii) Shares—Preference (fully paid up)		—			
3,01,041	Ordinary (fully paid up)		2,86,640	46		
27,841	Ordinary (partly paid up)		33,044	11		
—	(iii) Debentures or Bonds		—			
—	(iv) Other investments		—			
10,934	(v) Gold		10,934	16	11,94,499	74
12,03,697						
	5. **Advances**					
	(Other than bad and doubtful debts for which Provision has been made to the satisfaction of the auditors)					
	(a) Loans, Cash Credits and Overdrafts					
7,26,958	(i) In India		6,03,883	84		
—	(ii) Outside India		—			
—	(b) Bills discounted and purchased		—		6,03,883	84
	Particulars of Advances :					
(6,95,150)	(i) Debts Considered good in respect of which the Bank is fully secured		5,78,482	71		
(31,809)	(ii) Debts considered good for which the bank holds no other security than the debtor's personal security		25,401	13		
—	(iii) Debts considered good, secured by the personal liabilities of one or more parties in addition to the personal security of the debtors		Nill			
—	(iv) Debts considered doutdful or bad, not provided for		Nill			
—	(v) Debts due by directors or officers of the Bank or any of them either severally or jointly with any other person		Nill			
—	(vi) Debts due by companies or firms in which the directors of the Bank are interested as directors partners, or managing agents or in the case of private companies as members		Nill			
—	(vii) Maximum total amount of loan including temporary advances made at any time during the year to directors or managers or officers of the Company or any of them either severally or jointly with any other person		Nill			
—	(viii) Maximum total amount of loan including temporary advances granted during the year to the companies or firms in which the directors of the Bank are interested as directors, partners or managing agents or in the case of Private companies as members		Nill			
—	(ix) Due from Banking companies		Nill			
—	6. **Bills receivable bing bills for collection as per contra**					
—	7. **Constituents liabilities for acceptances, endorsements and other obligations as per contra.**				1,470	40
					—	
—	8. **Premises less depreciation**				—	
	9. **Furniture and Fixture less depreciation**					
3,618	Last Balance	3,831 59				
213	Addition during this year	135 46	3,967	05		
3,831						
1,492	**Less** depreciation upte 31-12-61	1,632 78				
140	Depreciation during this year	132 42	1,765	20	2,201	85
2,199						
	10. **Other Assets :**					
25	(i) Miscellaneous recoverable		1,373	14		
9,345	(ii) Interest accrued but not realised		9,195	25		
	(iii) Agricultural mechinery at cost					
5,408	Last Balance	4,596 99				
—	Addition during the year	—				
811	**Less** Depreciation during the year	689 55	3,907	44		
4,597						
26,364	(iv) Advance Tax		44,360	67	58,836	50
40,331						
	11. **Non-Banking Assets acquired in satifaction of claims (at cost):**					
90,968	Last Balance (including property left in Pakistan Rs 22,573.08)		89,100	32		
1,683	**Less** Sale during the year	338 94				
185	„ Depreciation during the year	180 25	519	19	88,581	13
89,100						
31,79,203	TOTAL				32,38,544	72

चार नए ऋण

आन्ध्र-प्रदेश में बिजली और बिहार में कोयले का उत्पादन बढ़ाने में मदद देने के लिए पिछले सप्ताह नई दिल्ली मे चार नये अमेरिकी ऋणोंकी घोषणा की गई।

ये ऋण कुल मिलाकर १३करोड़ ८० लाख रुपये के हैं। इनमें से तीन ऋण डालरों में हैं ये ऋण २ करोड़ १२ लाख डालरके हैं। इनके द्वारा भारत को बिजली तथा कोयले की योजनाओं का विस्तार करने के निमित्त बाहर से मशीनें और उपकरण मगाने के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा प्राप्त हो जायेगी।

आन्ध्र-प्रदेश के रामगुण्डम ताप बिजलीघर के लिए ८४ लाख डालर (४ करोड़ रुपये) दिया गया है।

राजदूत गैलब्रैथ ने जिन अन्य दो ऋणों की घोषणा की, उनमें एक तो झरिया के कोयला-क्षेत्रों में रस्से का मार्ग बनाने के लिए विदेशी मुद्रा के रूप में होने वाले खर्च की की पूर्ति के लिए ७७ लाख डालर (३ करोड़ ७० लाख रुपये) का ऋण है और दूसरा दुगडा के कोयला धोने के कारखाने की क्षमता को दुगुना करने के लिए ५१ लाख डालर (२ करोड़ ४० लाख रुपये) का ऋण है।

ये दोनों योजनाएं बिहार में हैं और इनसे भारत के इस्पात-कारखानों को मिलने वाले कोयले की मात्रा बढ़ाने में महत्वपूर्ण मदद मिलेगी।

डालरों में दिये जाने वाले तीनों ऋणों के लिए समझौते की बातचीत अमेरिका की 'अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेन्सी' की मार्फत की गई है। इन ऋणों का भुगतान ४० वर्षों में किया जाएगा और अदायगी के लिए १० साल की और छूट मिल जाएगी। इन ऋणों पर कोई व्याज नहीं लिया जाएगा।

[मिर्ज़ापुर] करनाल ...रोह

वेदप्रचारार्थ प्रि. सूर्यभानु जी को २५१) भेंट

धर्म प्रचार की धूमधाम

कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के समीप ही देवनगर (मिर्ज़ापुर) नाम का एक बहुत छोटा किन्तु मकानों, गलियों तथा रहनसहन में नगरों जैसा ग्राम है। वहां आर्य प्रादेशिक सभा के द्वारा अम्बाला करनाल वेद प्रचार मंडल के प्रबंधक पंडित अमर सिंह जी के प्रबन्ध में वार्षिकोत्सव बड़े ... मनाया गया। ग्राम ... प्रधान श्री. बा. अनन्तराम ... बड़े ही योग्य, सुलझे हुए ... धार्मिक सज्जन हैं। उनके उत्साह एव मा. कृष्ण लाल जी प्रधान, तथा उन के दूसरे साथियों के प्रयास से जल्सा बड़ा ही शानदार हुआ। जिस में कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी के मान्य वायस चांसलर प्रिंसिपल सूर्य भानु जी एम. ए. ने अत्यधिक व्यस्त होते हुए भी रात को पधार कर अपने ओजस्वी, गम्भीर प्रवचन से सारे ग्राम में जीवन भर दिया। आप के इतने उच्चासन पर बैठकर भी समाज प्रेम, सभानिष्ठा तथा निरभिमानिता को देख कर सारी जनता गद्गद् प्रसन्न हो गई। आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के वेद प्रचार के लिए श्री. अनन्तराम जी प्रधान ने आर्य समाज की ओर से श्री. प्रिंसिपल जी की सेवा में २५१) रु. की थैली भेंट की।

इस उत्सव में अम्बाला करनाल वेद प्रचार की पण्डित अमरसिंह जी की मंडली श्री. जगत् राम जी, श्री. शमशेर सिंह जी, श्री. वस्तीराम जी, श्री. स्वामी रामेश्वरानन्द जी M. P. स्वामी भीष्म जी, पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, पं. राजपाल मदनमोहन जी चिमटा मंडली पधारे। ग्राम तो छोटा सा है, पर गांव की जनता का धर्म प्रेम देखते ही बनता हैं। आर्य समाज ने ग्रामों में कितना कार्य किया तथा कर रहा है—इस का दृश्य गांव के जल्सों पर ही देखा जा सकता है। उत्सव धूमधाम से हुआ। पास गुरुकुल कुरुक्षेत्र से भी कई सज्जन पधारे हुए थे। श्री. अनन्तराम जी प्रधान सरपंच, श्री कृष्ण लाल जी श्री पं. मातूराम जी आदि सारे सज्जन बधाई के पात्र हैं जिन के द्वारा ग्राम में जीवन है। इस गांव का नाम मिर्ज़ापुर से देव नगर रखा गया। सफलता के लिए सब को बधाई।

आर्य समाज मोदीनपुर

का उत्सव भी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। शानदार पण्डाल तथा हाज़री का क्या कहना। यहां के सज्जन मुलतान इलाके के हैं तथा समाज के बड़े प्रेमी हैं। सारा ग्राम ही आर्य समाजी हैं शानदार समाज मंदिर बन गया है। जलसे में श्री ठा. यशपाल सिंह जी M. P. पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, पं. अमर सिंह जी अम्बाला करनाल मंडल अध्यक्ष, पं. राजपाल मदन मोहन जी मंडली पं. जगत् राम जी, पं. शमशेर सिंह जी। श्री वस्ती राम जी, स्वामी भीष्म जी महाराज पधारे प्रधान श्री दयालचंद्र जी आदि सारे सज्जनों ने खूब काम किया। करनाल से श्री पं. विश्वम्भर दत्त जी, ठा. मोहन लाल जी भी पधारे वहां पर गांव के सारे बच्चे बच्चियों को सारी सध्या हवन तथा भजन कण्ठस्थ हैं। यह देख सुनकर तो मन अतीव प्रसन्न हो गया। इस का श्रेय मास्टर धनसिंह जी को है। श्री वेदव्रती आदि युवक वीरों का उत्साह प्रशंसनीय है। सभा को ८०) वेद प्रचार में मार्ग व्यय के अतिरिक्त मिले। उत्सव बड़ा कामयाब था। मोदीनपुरका नामभी आर्यनगर रखा गया।

पं. यशपाल जी चल बसे

आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता स्वर्गीय आचार्य रामदेव जी के सुपुत्र श्री पं. यशपाल जी सिद्धान्तालंकार भी आंखें बन्दकर चल बसे। आप कुछ समय से बीमार थे। यह बीमारी आप को ले गई। आर्यप्रतिनिधि सभा के आप वर्षों वेद-प्रचार के अधिष्ठाता रहे। आजकल आप कन्या गुरुकुल देहरादून में कार्य कर रहे थे। आपके देहावसान पर सारे समाज की बड़ी क्षति हुई है। सारे परिवार से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए प्रभु से दिवंगत आत्मा की शान्ति के प्रार्थी हैं।

डी.ए वी. हायर सैकंडरी स्कूल कांगड़ा के मान्य प्रिंसिपल श्री रतनलाल जी मिश्र के पूज्य पिता जी के स्वर्गवास के दुःखद् समाचार पर हार्दिक शोक है। उस इलाके में बड़ा काम किया है आर्यसमाज के बड़े प्रेमी थे हम मान्य मिश्रा जी से आन्तरिक शोक प्रकट करते हुए भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को शान्ति तथा सारे परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—स.

शोक प्रस्ताव

जिला वेदप्रचारिणी सभा होशियार पुर श्री यशपाल जी सिद्धांतालंकार की शोक जनक मृत्यु पर उनके परिवार तथा सम्बन्धियों के साथ इस दारुण दुख से हार्दिक सहानुभूति तथा सम्वेदना प्रकट करती है।

प्रभु दिवंगत आत्माको सद्गति तथा उनके वियोग में दुखी परिवार को धैर्य प्रदान करें।

बटाराम मन्त्री

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २६) रविवार १६ आषाढ २०२०— ३० जून १९६३ दयानन्दाब्द १३९ । तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

विशांपते धनदा असि

हे सारी प्रजाओं के स्वामिन् ! आप ही सब प्रकार का हमें धन देने वाले हैं। शरीर, ज्ञान, विद्या बल तथा हर प्रकार की सम्पत्ति के दाता आप ही हैं। सारा धन भी आपका और दाता भी आप हैं।

प्रणो यच्छ

परमात्मन् ! कृपा करके आप ही हमें उत्तम धन देवें। आप से ही हम सब प्रकार के धनों की प्रार्थना करते हैं। ज्ञान तथा भौतिक एवं भक्ति धन भर देवे।

रयिंदेवी दधातु मे

दिव्य गुणों से भरी वह देवी माता परमेश्वर मुझे रयि—धन के भण्डार प्रदान करे। उत्तम सम्पदा से मालामाल कर दे। मुझे पवित्र धन से धनवान बनादे।

अथर्ववेद

वेदामृत

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः। शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्नि-र्भवतु देवगोपाः॥

ऋ० मं० ७ सू० ३५ मन्त्र १३

अर्थ—(शं नः) हमारे लिए वह (अजः) जो कभी जन्म नहीं लेता अजन्मा (एकपात्) सारे विश्व को धारण करने वाला (देवः) परमेश्वर (अस्तु) मंगल करने वाला होवे। (शं नः) शांति देवे हमे यह (अहि.) वर्षा से तृप्त करने वाला बादल (बुध्न्यः) आकाश मे विचरने वाला और हमारे लिए यह (समुद्र.) विस्तृत समुद्र तथा व्यापक आकाश रूपी सागर हमारा मंगल करे। (शं नः) सुख देवे हमें यह (अपां) जलों में (नपात्) एक किनारे से दूसरे तट पर ले जाने वाले ये नौकाए, जहाज हमें (पेरु. अस्तु) सुख से पार ले जाने वाले हों। और (शं नः) मंगल करें हमारा (पृश्नि.) ज्ञानदाता (भवतु) होवे (देवगोपाः) देवों का रक्षक परमेश्वर हमारा मंगल करता रहे।

भावः—हे जन्म के बन्धन रहित अज, अजन्मा प्रभो ! सारे विश्व को अपने शासन, नियमों में धारण करने हारे पितः ! आपका हम सदा आशीर्वाद रूप मंगल मांगते और चाहते हैं। जलभरा, आकाश के झूले में मस्त झूमने वाला बादल हमें रसों से शान्त व तृप्त करता रहे। यह आकाश, सागर तथा इन में चलने वाले वायुयान, जलयान सारे हमारे लिए मंगलमय बन जावें। देवों का रक्षक ज्ञान भण्डार पिता सदा हमारा कल्याण करे—सं०

संसार के राष्ट्र

स्वतन्त्र राष्ट्रों का परिवार बन जाएं तो मानवता सुरक्षित हो जाए

राष्ट्रपति डा० राधाकृष्ण का लंदन मे भाषण

लंदन—राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने यहां लंकास्टर हाऊस में ब्रिटिश सरकार द्वारा आयोजित एक राजकीय भोज में भाषण करते हुए आशा प्रकट की कि दुनिया के राष्ट्र स्वतन्त्र राष्ट्रों का एक परिवार बना—मानवता के लिए वैसा ही सुरक्षित स्थान बना सकते हैं, जैसे कि ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के अन्तर्गत विभिन्न द्वीपों तथा विभिन्न जातियों के लाखों लोग एक-दूसरे के साथ बंधे हुए हैं।

*

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

वैदिक श्रेय मार्ग

(ले०—शंकरलाल जी दयानन्द ब्राह्म महा विद्यालय हिसार)

मनुष्य जीवन में दो मार्ग आते हैं—एक निवृत्ति मार्ग दूसरा प्रवृत्ति मार्ग। इसी को कठ उपनिषद् में यों कहा है-'श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतः' अर्थात् श्रेय मार्ग और प्रेय मार्ग दोनों ही मनुष्य को अपनी जीवन यात्रा में मिलते हैं। आधुनिक परिभाषा में इसी को आध्यात्मिक वाद एवं भौतिक वाद कह सकते हैं। ये दोनों ही मार्ग आदि काल से चले आरहे हैं। समय-समय पर विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्यों ने अपनी-अपनी अभिरूचि के अनुकूल इनमें से चुना। इन में कौन सा श्रेष्ठ है या दोनों ही श्रेष्ठ हैं अगर नहीं तो वैदिक श्रेय मार्ग कौन सा है, इसका विवेचन करेंगे। इसके पहले हम यह बता दें कि उपर्युक्त मार्गों को किस-किस ने किस रूप में अपनाया व उसका क्या परिणाम हुआ।

महाभारत के बाद बृहस्पति नाम के आचार्य ने चार्वाक मत चलाया उसने निवृत्ति-मार्ग की सर्वथा उपेक्षा की और प्रवृत्ति-मार्ग का अनुकरण करके 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' का उपदेश दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज में नैतिक सिद्धान्तों को स्थान न रहा। उनका स्थान अनैतिक प्रवृत्तियों ने ले लिया। आगे चलकर इसी के परिणाम स्वरूप वाम मार्ग पैदा होता है। समाज में अनाचार, दुराचार, व्यभिचार एवं भ्रष्टाचार फैला। समाज का व राष्ट्र का नैतिक पतन हुआ। इसने धर्म के नाम पर क्या नहीं किया। यह सभी इतिहास पाठक जानते हैं। सभ्यता, संस्कृति एवं मानवीय मर्यादाओं को तिलांजलि दे दी गई। इस तरह का भयंकर विषाक्त वातावरण पैदा हुआ जो मनुष्यता की सभी सीमाओं को लांघ गया तो इस (प्रवृत्त-मार्ग) की सतप्त अवस्था को देखकर महावीर और बुद्ध को अत्यन्त दुख होता है। इन्होंने निवृत्ति-मार्ग अपना कर संसार में अनीश्वर वाद का प्रचार किया। संसार को दुःख का सागर बनाकर जनता को वैराग्य का उपदेश दिया। वैदिक ईश्वर वाद की सर्वथा उपेक्षा कर दी गई। एक ने सांसारिकता को छोड़ने एवं सर्व त्यागी बनने और शरीर को अत्यधिक कष्ट देने में ही सुख एवं शांति की प्राप्ति बताई। दूसरे ने भी संसार को निरर्थक बताकर वैराग्य को प्रवृत्ति जगाई। इन दोनोंने कर्म-काण्ड को निरर्थक बताया। वाममार्ग के थपेड़ों से सताई हुई जनता को इसी में जीवन ज्योति दिखाई दी और परिणाम यह हुआ कि लोग धड़ाधड़ इन मतों के अनुयायी बने इस में बुद्ध को अधिक सफलता मिली। क्योंकि इनका मार्ग कुछ सरल था। जैनमत की तुलना हम टुड्रा के निवासी से कर सकते हैं जिसका शरीर अत्यधिक शीत में जन्मने के कारण बौना ही रह गया। वह आज भी वहीं खड़ा है जहां से उसने चलना प्रारम्भ किया था। अहिंसा-अहिंसा का उपदेश देकर इन्होंने एक भीरू एवं पंगु समाज का निर्माण किया। भावनाओं के आवेश में आकर युवक और युवतियों ने भिक्षु-भिक्षुणियों का रूप लिया। जब यौवन को ये न सम्भाल सके तो मठों और विहारों में व्यभिचार होने लगा। बुद्ध के समय में ही बौद्ध धर्म का पतन होने लगा। इन्होंने संन्यास की कोई निश्चित मर्यादा नहीं बनाई। वैदिक आश्रम व्यवस्था की उपेक्षा की गई। फल यह हुआ कि जिसकी इच्छा हुई वही भिक्षु बन गया। इस प्रकार समाज अव्यवस्थित हो गया। इसी को श्रेयमार्ग, निवृत्तिमार्ग समझा। अगर इन महात्माओं ने वेदों को समझने का प्रयत्न किया होता तो पता चलता कि निवृत्ति मार्ग किसे कहते हैं। असली श्रेय मार्ग क्या है? वेद कहते हैं आओ मेरे पास मैं बताऊंगा जीवन का श्रेय मार्ग कौन सा है।

ईशावास्यमिदꣳसर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यस्विद् धनम्॥

वेद कहते हैं—ओ संसार के पुरुषो! जगत् के कण-कण में ईश्वर की सत्ता व्याप्त है। उसी के कारण उस में गति है यह संसार भोगने के लिये है, परन्तु त्याग भाव से इसका भोग कर क्योंकि यह धन तेरा ही नहीं है इस पर अन्यों का भी अधिकार है। तू इस में लिप्त न हो। आगे दूसरे मंत्र में कहते हैं—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥

भावार्थ है—'कर्म करो तभी कर्म के बन्धन से छुटकारा मिलेगा यह संसार कर्म क्षेत्र है, कर्म करने के लिये ही जन्म हुआ है कर्म न करोगे तो कायर कहलाओगे। कितने सुन्दर व स्पष्ट शब्दों में श्रेय मार्ग का प्रतिपादन किया है। वेद ने कायरता नहीं दिखाई। वेद यह नहीं कहते कि संसार को छोड़कर लंगोटी लगाकर कर्म के डर से जंगलों में भाग जाओ। वेद यह नहीं कहते कि अपने शरीर को नाना प्रकार के कष्ट देने पर ही सुख-शांति मिलेगी, और न संसार को दुःख का सागर कहकर मनुष्यों को निराशावादी बनाया। वेद कहते हैं ईश्वर ने यह संसारिक भोग पदार्थ सब प्राणी मात्र के लिए बनाए हैं इनपर सबको भोगने का अधिकार है। वेद ने यह भी नहीं कहा कि ऊपर ईश्वर है और नीचे तू ही अकेला है बस और कोई नहीं। न वेद ने यह कहा कि तू ही तू है न कोई नियन्ता शक्ति है। इसलिए ऋण किये जा और घी पिये जा। वेद कहते हैं जगत् ईश्वर की चेतन सत्ता से युक्त है। वही इसका नियन्ता है। सबका ध्यान रखते हुए त्याग भाव से संसार के भोगों को भोग और अपने को प्रभु को शरण में अर्पण करदे। यह है वास्तविक वैदिक श्रेय मार्ग। इसी श्रेय मार्ग की सुगमता से प्राप्ति के लिए वैदिक ऋषियों ने आश्रम-व्यवस्था का विधान बनाया था जिससे कि मनुष्य संसार के कार्यों को सुन्दर ढंग से करते हुए अपने जीवन को सफल बना सके। कठोपनिषद् इसी वैदिक श्रेय मार्ग की ओर संकेत कर रहा है। इसी आश्रम व्यवस्था से मनुष्य जीवन का क्रमिक विकाश होता है। तभी सुख और शांति मिलती है। यही सच्चा वैदिक श्रेय मार्ग है।

—०—०—

श्री सत्य मुनि जी महाराज का नाम परिवर्तन

आपने अपना नाम सत्यानन्द सरस्वती रखा है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के नाम की परिपाटी ही हमारे संन्यासियोंमें मान्य होनी चाहिए। एतदर्थ उन्होंने अपना नाम बदला है इसकी घोषणा सार्वदेशिक सभा की बैठक १६—६—६३ में सभा प्रधान स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने की।

सन्तोषराज
मन्त्री A.P.P.
सभा जालन्धर

—०—०—

दा पंजाब को-अपरेटिव बैंक लि०

The Punjab co-operative Bank Ltd.

प्रधान कार्यालय : अमृतसर

शाखाएं : देहली चांदनी चौक जालन्धर तथा रोपड़

संचालकों की विज्ञप्ति

भागधरों की सेवा में

वर्ष १९६२ के काम काज पर संचालकों की विज्ञप्ति :

१. इस वर्ष का लाभ रु० १४००४०/९९ हुआ और रिज़र्व बैंक के हुक्म के अनुसार संचालक लाभ को बिना बांटे यह सब रकम **Contingent Reserve** में डालने का प्रस्ताव करने पर मजबूर हैं क्योंकि कानून के मुताबिक यह हुक्म मानना ही पड़ता है। हमने रिज़र्व बैंक को २८.२.६३ को लिखा था कि वह डिविडेण्ड (लाभांश) बांटने पर जो रोक की हुई है उसे हटा दें परन्तु अभी तक कोई हुक्म नहीं मिला ना ही इन्कार हुआ है।

२. आयकर की अपीलों की निगरानी की हाई कोर्ट द्वारा अभी तक कोई तारीख नियुक्त नहीं हुई। जो दूसरों के फैसले ऐसे ही आयकर के बारे में दूसरी हाई कोर्ट ने किए हैं उनसे आशा है कि फैसला हमारे हक में होगा।

३. पाकिस्तान में वसूली की समस्या में कोई सुधार अभी नहीं हुआ। दोनों देशों के प्रतिनिधियों में इस विषय पर कई बार बात चीत हुई पर ऐसा प्रतीत होता है कि कोई निश्चित फैसला नहीं हो सका। गत वर्ष हुए फैसले के अनुसार जो जायदाद हमारी **Nonevacuee** घोषित कर दी गई थी उसका भी कब्ज़ा हमें अभी तक नहीं दिया गया। इन कारणों से सुप्रीम कोर्ट पाकिस्तान में की गई अपील की पैरवी करना आवश्यक हो गया है।

४. धारा २१७ कम्पनीज़ एक्ट के अनुसार जो विशेष बातें पिछले २—३ मास में हुई हैं उन्हें नीचे उधृत किया जाता है :—

बैंक की जो बिरानी तथा सैलाबी जमीन उधोपुर ग्राम ज़िला जालन्धर में थी उसे रु० ७५०००/- में बेचने का सौदा हो गया है और उसमें से रु० १००००/— अग्रिम प्राप्त हो गया है। शेष रकम इस वर्ष के अन्त तक देने का ग्राहक के साथ फैसला है। इस ज़मीन की बाकी लागत रु० १८६३०/८३ है और इसमें रु० ५६,३६९/— का लाभ होगा।

बैंक का काम सुचारु रूप से चल रहा है और आशा की जाती है कि आगे को काम में वृद्धि होगी क्योंकि **Moratorium** का प्रभाव क्षीण हो गया है, संचालक आशावादी हैं।

जगराज
चिरन्जीव लाल अग्रवाल
दीना नाथ
चन्द्र गुप्ता
} संचालक

तिथि २०.४.६३

Auditor's Report

We have audited the annexed Balance Sheet of the Punjab Co-operative Bank Ltd. as at 31st December 1962 and the annexed profit and loss account of the Bank for the year ended upon that date in which are incorporated audited returns from all Branches in India visited by us for the purpose of the report and the unaudited return of Lahore branch outside India not visited by us.

In accordance with provision of Section 29 of the Banking Companies Act, 1949 read with the proviso to Sub-Section (1) and (2) of Section 211 and Sub Section (5) of Section 211 and 227 of the Companies Act, 1956, the Balance Sheet and the Profit and Loss Account are not required to be and are not drawn up in accordance with the sixth schedule to the Companies Act 1956. They are therefore, drawn up in conformity with form A and B of the Third schedule to the Banking Companies Act, 1949.

We report that :

(a) We have obtained all the information and explanations which to the best of our knowledge and belief were necessary for the purpose of our audit, and have found them to be satisfactory.

(b) The transactions of the Bank which have come to our notice have been within the powers of the Bank.

(c) In our opinion proper books of accounts as required by law have been kept by the Bank so far as appears from examination of those books and proper returns adequate for the purpose of our audit have also been received from Branches of the Bank, except the Lahore City Branch which was burnt during the communal disturbances in 1947.

(d) The Bank's Balance Sheet and Profit & Loss account dealt with by this report are in agreement with the books of account and returns.

(e) The assests and liabilities of Lahore branch have been incorporated at par.

(f) In our opinion and to the best of our information and according to the explanations given to us the said accounts give the information required by the Companies Act, 1956, in the manner so required for Banking Companies and on such basis the said Balance Sheet gives a true and fair state of the affairs of the Bank as at 31st December 1962 and the profit and loss account gives a true and fair view of the profit for the year ended upon that date.

Sodhbans & Co.
Chartered Accountants
Auditors.

New Delhi.
Dated : 15th April 1963

The Punjab Co-operative

BALANCE SHEET AS

Previous Year's Figures	CAPITAL & LIABILITIES	AMOUNT Rs. nP.	TOTAL Rs. nP.
	1. Capital :		
25,00,000	Authorised Capital 50000 Shares of Rs. 50/-each	25,00,000 00	
10,00,000	Issued & subscribed capital 20000 Shares of Rs. 50/-each	10,00,000 00	
10,00,000	Amount called and paid in full ..		10,00,000 00
	2. Reserve Fund and other reserves		
10,00,000	(i) General Reserve ...	10,00,000 00	
2,93,498	(ii) Contingent Reserve ...	4,56,846 64	14,56,846 64
12,93,498			
	3. Deposits and other Accounts :		
39,49,951	Fixed Deposits ..	36,86,072 46	
9,46,566	Saving Bank Deposits ..	8,97,790 69	
28,52,102	Current accounts, and Contingency accounts etc, ...	26,32,127 04	
12,758	Employee's Security Deposit ...	9,664 65	72,25,654 84
77,61,377			
	4 Borrowing from other Banking Companies, Agents etc. ..		
Nil	In India ...		Nil
Nil	Outside India ...		Nil
	Particulars		
Nil	(i) Secured (against pledge of Govt. Securities) ...	Nil	
Nil	(ii) Unsecured ...	Nil	
Nil	5. Bills payable ..		Nil
	6. Bills for Collection being bills receivable as per contra ...		
1,83,451	Payable in India ...	5,32,754 41	
Nil	Payable outside India .	Nil	5,32,754 41
	7. Other Liabilities :		
296	(i) Rebate interest ...	433 25	
11,198	(ii) Dividend unclaimed ...	11,068 00	
3,243	(iii) Dharmada (Benevolent Fund) ...	2,832 89	
10,000	(iv) Gratuity & Pension Fund ...	10,000 00	
3,874	(v) Investment Depreciation reserve ..	44,874 31	
Nil	(vi) Provision for Bad & doubtful debts ...	1,01,000 00	
Nil	(vii) Provision for interest charged on specified accounts or Bad & doubtful debts ...	5,744 86	1,75,953 31
28,611			
2,43,050	8. Acceptances, endorsements and other obligations as per contra ...		3,49,714 50
	9. Profit and Loss Account :		
1,61,776	Profit as per last balance sheet ..	3,12,009 26	
	Less Appropriation		
1,60,863	Contingent Reserve ...	3,11,096 41	
913	Balance brought Forward ..	912 85	
3,11,096	Add Profit for the year brought from		
3,12,009	Profit & Loss Account ...	1,40,040 99	1,40,953 84
	10 Contingent Liabilities		
	(a) Income tax assessments for accounting year 1960 & 1961 are pending.		
	(b) Guarantees given by the Bank for Rs. 325214.50 (Previous year Rs. 243050.00)		
	Note :		
	(1) No depreciation has been charged on immovable property left in Pakistan.		
	(2) The adequacy of the Provision of gratuity is subject to ascertainment of the amount.		
1,08,21,996	TOTAL		1,08,81,877 54

SODHBANS & CO.
Chartered Accountants
Auditors.

Bank Limited, Amritsar.

AT 31ST DECEMBER 1962

Previous Year's Figures	PROPERTY & ASSETS		AMOUNT Rs np	TOTAL Rs, np
	1. Cash			
8,81,382	In hand and with Reserve Bank and State Bank of India (including foreign currency notes)			10,43,755 24
	2. Balance with other Banks in current account			
2,62,847	(i) In India		9,49,494 68	
35,541	(ii) Outside India		2,751 82	9,52,246 50
26,87,000	**3. Money at call & short notice**			Nil
	4. Investment at Cost			
	(i) Securities of the Central & State Govt and other Trustee Securities including treasury bills of the			
11 32,189	Central & State Govts Market value	10,76,093 50	11,32,189 25	
	(Previous Year)	10,89,987 00		
	(ii) Shares			
11,154	(a) Ordinary shares fully paid up	11,153 75		
6,78,279	(b) Preference shares do	6,78,279 19	6,89,432 94	
18 21,622	Note , (a) Shares on which market quotations are available			
	Previous year 6,69,349 19 Book Value	6 69,349 19		
	7,63,710 75 Market Value	7,38,048 75		
	(b) Shares for which market quotations are not available Book value	20,083 75		
	(Previous year)	20,083.75		
Nil	(iii) Debentures or Bonds		Nil	
Nil	(iv) Other investments		Nil	
Nil	(v) Gold		Nil	18,21,622 19
	5. Advances			
	(a) Loans, Cash Credits & Overdrafts			
28 53,855	(i) In India		42,97,352 93	
9,26,108	(ii) Outside India		9,21,622 21	
	(b) Bills discounted & Bills purchased			
28,401	(i) In India		67,697 40	
4,200	(ii) Outside India		4,200 00	52,90,872 54
38,12,564	particulars as per separate schedule attached (provision for bad & doutful debts has been made as per contra)			
	6. Bills receivable being Bills for collection as per contra			
1,83,451	(i) Payable in India		5,32,754 41	
Nil	(ii) Payable outside India		Nil	5,32,754 41
2,43,050	**7. Constituents liabilities for acceptances endorsements and other obligations as per contra.**			3,49,714 50
1,93,215	**8. Premises at cost as at 31—12—61**		1,93,215 45	
61,943	Less Depreciation upto 31—12—61	63,376 05		
1,433	For the current year	1,397 45	64,773 50	1,28,441 95
1,29,839				
	9. Furniture and Fixtures			
44,312	Last Balance	44,312 47		
Nil	Addition during the year	809,80	45,122 27	
24,684	Less Depreciation upto 31—12—61	25,860 00		
1,176	For the current year	1,155 72	27,015 72	18,106 55
18,452				
	10. Other Assets			
27,553	(i) Interest accrued on investments but not realized		11,710 07	
57,600	(ii) Misc account recoverable		36,303 27	
11,634	(iii) Due from Banks in Liq and under scheme		11,634 33	
92,471	(iv) Income Tax deducted at source on yield of investment		1,39,898 49	
58	(v) Agricultural implements		57 68	
136	(vi) Stamps in hand		156 12	
12,348	(vii) Advance payment of Income Tax		Nil	
Nil	(viii) Advance payment of deposit insurance premium		874 56	2,00,634 52
2,01,800				
	11. Non-Banking Assets Acquired in Satisfaction of claims			
4,27,107	(i) Land & House Property at cost	3,80,368 14		
44,680	Aditions during the year	Nil		
4,71,787	Total	3,80,368.14		
91,419	Less sales during the year	719.00	3,79,649 14	
3,80,368				
3,39,830	(ii) Other assets at cost	1,64,080 00		
1,75,750	Less Sales during the year	Nil		5,43,729 14
1,64,080			1,64,080 00	
1,08,21,996	Total			1,08,81,877 54

VED PAL SURI
Manager

JAGRAJ
Managing Director.

CHIRANJIV LAL
DINA NATH
CHANDRA GUPTA
} Directors.

THE PUNJAB CO-OPERATIVE BANK LIMITED, AMRITSAR

Profit & Loss Account for the year ended 31st December 1962.

Previous Year's Figures	EXPENDITURE	AMOUNT Rs. nP.	TOTAL Rs. nP.
1,95,905	1 To interest paid on deposits, borrowings etc.		1,74,437 73
Nil	2 (a) To salary & Allowances and Provident Fund to Managing Directors ..	Nil	
1,15,455	(b) To salaries & Allowances to staff (Previous year Rs 4,577/25 paid as salary and allowances to G M & Rs. 6,750/ gratuity to Ex : G. M.)	1,13,254 10	
1,800	3 To Directors and Local Committee member's fees and allowances	1,000 00	
18,667	4 (a) To Rent Taxes, Insurance, Lighting etc. 20,101 78		
Nil	(b) To Deposit insurance premium 2,612 71	22,714 49	
8 833	5 To Law Charges	7,830 29	
5,650	6 ,, Postage, Telegrams and Stamps	5,576 62	
900	7 ,, Auditor's Fee	900 00	
2,960	8 , Depreciation on and repairs to the Banking company's property	4,890 38	
5,246	9 ,, Stationery, Printing and Advertisement ..	3,839 39	1,60,005 27
5,750	10 ,, Loss on sale of or dealing with non-banking assets ...		Nil
Nil	11 ,, Loss on Redemption of Government Securities		Nil
	12. ,, Other Expenditure		
2,972	Bad Debts written off	16,990 74	
99,087	Income tax paid	2,303 51	19,294 25
3,11,096	13 ,, Balance of profit ..		1,40,040 99
7,74,321	Total		4,93,778 24

Previous Year's Figures	INCOME	AMOUNT Rs. nP	TOTAL Rs. nP.
	1. By Interest and Discount		
3,04,233	(a) Interest and Discount	2,77,808 68	
38,925	(b) Interest on Govt. Securities	38,925 00	3,16,733 68
17,949	2 ,, Commission, Exchange and Brokerage		25,369 02
6,256	3. ,, Rent		5,852 94
45,648	4 ,, Net profit on sale of investment, gold and silver, land, premises and other assets (not credited to reserve or any particular fund or account)		Nil
Nil	5 ,, Net profit on revaluation of investment, gold and silver or any particular fund or account)		Nil
	6 ,, Income from non-banking assets and profit from sale of or dealing with such assets		
17,130	(a) Rents on Property	16,934 11	
1,240	(b) Income from Agricultural land	150, 00	
2,47,548	(c) Profit on Sale Property	Nil	17,084 11
	7 ,, Other Receipts		
2,291	(a Miscellaneous Earnings	4,088 75	
93,101	(b) Dividend on Shares	1,20,168 00	
Nil	(c) Refund of Income Tax	4,481 74	1,28,738 49
7,74,321	Total		4,93,778 24

Schedule of particulars required by the Banking Companies Act, 1949 (Act X of 1949) attached to and forming part of the Balance Sheet as at 31st December, 1962.

Previous Year's figures		Loans, Advances, Cash Credits and Overdrafts	
			Rs nP.
31,41,999	(i) Debts considered good in respect of which the bank is fully secured		40,69,608 76
6,70,565	(ii) Debts considered good, for which the bank holds no other Security than the debtor's personal security		7,13,762 78
Nil	(iii) Debts considered good, secured by the personal liabilities of one or more parties in addition to the personal security of the debtor		5,07,501 00
Nil	(iv) Debts considered doubtful or bad, not provided for.		Nil
38,12,564			
Nil	(v) Debts due by Directors or Officers of the Bank or any of them either severally or jointly with any other person.	Nil	
10,358	(vi) Debts due by companies or firms in which the Directors of the Bank are interested as directors, partners, or managing agents or in the case of private companies, as members.	Nil	
Nil	(vii) Maximum total amount of loans, including temporary advances, made at any time during the year to Directors or Managers or Officers of the company or any of them either severally or jointly with any other person.	Nil	
2,50,249	(viii) Maximum total amount of loans, including temporary advances, granted during the year to the companies or firms in which the Directors of the bank are interested as Directors Partners or Managing Agents or, in the case of private asmembers.	30,000 00	
1,000	(ix) Due from a Banking company in Liquidation.	1,000 00	
	TOTAL		52,90,872 54

SODHBANS & Co.
Chartered Accountants
Auditors

VED PAL SURI
Manager

JAG RAJ
Managing Director

CHANDRA GUPTA
CHIRANJIV LAL
DINA NATH
} Directors.

(गतांक से आगे)

आर्यसमाज के अन्य स्वाध्यायशील विद्वानों से मेरा अनुरोध है कि वे इसे पूर्ण करने का यत्न करें।

पौराणिक पण्डितों से हुये शास्त्रार्थ जो अब तक प्रकाशित हो चुके हैं निम्न हैं :—

(१) सिकन्दराबाद का शास्त्रार्थ-लेखक पं० देवेन्द्रनाथ शास्त्री—यह मुरारी ट्रैक्ट सोसाइटी से छापा है। पं० मुरारीलाल शास्त्री आर्य-समाज की पुरानी पीढ़ी के विद्वान् थे, उन्हीं के पुत्र पं० देवेन्द्रनाथ शास्त्री अपने समय के सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी थे। सिकन्दरा-बाद (उ.प्र.) गुरुकुल का संचालन पं० मुरारीलाल शास्त्री ने वर्षों तक किया था।

(२) शास्त्रार्थ कोपागंज—यह पं० शिवशर्मा और पौराणिक पंडित अखिलानंद के बीच हुआ था। अखिलानन्द पहले आर्यसमाजी ही थे, परन्तु स्वार्थवश सनातनी शिविर में प्रविष्ट हो गये थे।

(३) शास्त्रार्थ भिवानी इस में आर्यसमाज की ओर से पं० मंगल-दत्त पुराणमार्तण्ड थे। यह शास्त्रार्थ आर्यसमाज भिवानी द्वारा प्रकाशित हुआ है।

(४) शास्त्र चर्चा अर्थात् दिल्ली दिग्विजय—द्वितीय महायुद्ध के समय जब सनातनी नैया के एक मात्र खेवनहार करपात्री जी दिल्ली में विश्व शांति के नाम से एक बहुत बड़ा यज्ञ का आडम्बर कर रहे थे, और अकाल और अन्नाभाव की देशव्याप्य परिस्थिति की अवहेलना करते हुये सहस्रों मन घृत और अन्न को यज्ञ के नाम पर फूंक रहे थे, उस समय आर्य पण्डितों ने सनातनी विद्वानों से यह शास्त्रार्थ किया। आर्यसमाज की ओर से स्व. व्यासदेव शास्त्री और डा० हरिदत्त शास्त्री आदि थे। यह पुस्तक सेकसरिया ग्रन्थमाला संख्या दो के अन्तर्गत आगरा से छापी थी।

आर्य साहित्य का सर्वेक्षण

आर्यसमाज के प्रकाशित शास्त्रार्थ

(ले०—प्रो० श्री भवानीलाल जी भारतीय एम. ए)

(५) शास्त्रार्थ सुजानगढ़—यह शास्त्रार्थ कुख्यात पौराणिक पं० कालूराम से हुआ था। मन्त्री आर्यसमाज सुजानगढ़ (राजस्थान) ने इसका विवरण पुस्तक रूप में छपाया था। कालूराम ने भी सनातनी दृष्टिकोण से पृथक् रूप से इसे छापा। दोनों पुस्तकें आर्य-समाज सुजानगढ़ के पुस्तकालय में हैं।

(६) शास्त्रार्थ किराणा—यह मेरठवासी पं० तुलसीराम स्वामी द्वारा किया गया।

(७) शिवलिंग पूजा पर शास्त्रार्थ-यह महाशय प्रभुदयाल द्वारा लिखित और आर्यसमाज चौक प्रयाग द्वारा प्रकाशित ट्रैक्टमाला २३ के अन्तर्गत छापा है।

(८)राजघन वार (विहार)के दो शास्त्रार्थ—सुप्रसिद्ध आर्य विद्वान् शास्त्रार्थ महारथी प. (ठाकुर) अमर सिंह जी ने पौराणिक पं. माधवा-चार्य से ये शास्त्रार्थ किये। आचार्य रामानन्द शास्त्री ने इन्हें सम्पादित कर प्रकाशित किया।

(९)नीमच शास्त्रार्थ—यह पं.बुद्ध देवजी विद्यालंकार द्वारा माधवाचार्य से किया गया। इसे पं. बलदेव राज प्रसाद अजमेर ने प्रकाशित किया।

(१०) शास्त्रार्थ नीमच—यह एक और पुराना शास्त्रार्थ विवरण है जिसे मास्टर शकुनचन्द ने प्रका-शित कराया है। मूल पुस्तक आर्य समाज कृष्णपोल बाजार जयपुर के पुस्तकालय में है।

(११) शास्त्रार्थ खुर्जा - इस में मेरठ वासी स्वामी तुलसीदास जी ने भाग लिया।

(१२) खुर्जा शास्त्रार्थ का पूर्व-रंग—यह पुस्तिका भी उपर्युक्त शास्त्रार्थ से ही सम्बन्धित है।

(१३) शास्त्रार्थ अमरावती—यह श्री मोतीलाल जी गुप्त मन्त्री आर्यसमाज अमरावती ने प्रकाशित कराया। उपर्युक्त पुस्तकें संख्या १० से १३ तक आर्यसमाज जयपुर के पुस्तकालय में है।

(१४) अपूर्व शास्त्रार्थ—यह सन १९५३ में डीडवाना (राजस्थान) में सनातनी और आर्य विद्वानों के बीच हुआ। इन पंक्तियों का लेखक स्वयं उक्त शास्त्रार्थ में उपस्थित था। आर्यसमाज की ओर से पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार, डा० हरि-दत्त जी शास्त्री, स्व० पं० लोकनाथ जी तर्क वाचस्पति थे और सनातनी पंडित माधवाचार्य जी तथा अखिला-नन्द विरोध पक्ष मे थे। यह शास्त्रार्थ लिखित और मौखिक दोनों प्रकार से हुआ। मृतक श्राद्ध, यज्ञ में पशुहिंसा, महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों की प्रामाणिकता और पुराणों की अवैदिकता ये चार विषय विचारार्थ प्रस्तुत थे। पौराणिक पण्डितों का घोर पराजय हुआ और जनता को वैदिक मत की सत्यता का ज्ञान हो गया। यह शास्त्रार्थ डीडवाना आर्यसमाज के तत्कालीन मंत्री रतनलाल आर्य द्वारा प्रकाशित हुआ है। ये महाशय अब स्वार्थवश आर्यसमाज का त्याग कर श्री वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षित होकर ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाते हैं। माधवाचार्य ने इस शास्त्रार्थ का पक्षपात पूर्ण ढ़ंग से लेखबद्ध शीर्षक नाम देकर महावीर प्रसाद शास्त्री के सम्पादन में प्रका-शित कराया है। इन पंक्तियों के लेखक ने इस शास्त्रार्थ का विवरण आर्य जगत् (जालन्धर) में विस्तार-पूर्वक प्रकाशित कराया था।

(१५) एक महत्व पूर्ण शास्त्रार्थ ज्वालापुर महाविद्यालय में स्वामी दर्शनानन्द जी तथा पं० गणपति शर्मा के मध्य वृक्षों में जीव विषय पर हुआ था। दोनों ही पंडित आर्यसमाज के ही मान्य विद्वान् थे परन्तु उपर्युक्त विषय पर उनका मत वैभिन्य था। स्वामी दर्शना-नन्द जी वृक्षों में जीव की सत्ता अस्वीकार करते थे और पं० गणपति शर्मा उसका प्रतिपादन करते थे। यह शास्त्रार्थ भारतोदय (महा-विद्यालय का मुख पत्र) सम्पादक हिन्दी के सुप्रसिद्ध समालोचक पं० पद्मसिंह जी शर्मा के द्वारा सम्पा-दित हो कर प्रकाशित हुआ था। इसका यदि पुनः प्रकाशन हो जाए तो उक्त विवादास्पद विषय पर बहुत सी महत्वपूर्ण सामग्री जिज्ञासुओं के समक्ष आ सकती है। इसकी एक प्रति नगर आर्यसमाज, जोधपुर के पुस्तकालय में है।

जैन विद्वानों से हुये शास्त्रार्थों का उल्लेख मैं अपने लेख 'जैनमत सम्बन्धी साहित्य' में कर चुका हूं जो आर्योदय के अंक में प्रकाशित हो चुका है। मेरे विचारानुसार ईसाई और मुसल-मानों से आर्य विद्वानों के जो शास्-त्रार्थ हुए उनमें से शायद ही किसी का विवरण प्रकाशित हुआ हो। हुआ भी हो तो मेरे दृष्टिपथ में नहीं आया। सनातनी विद्वानों ने भी अपने दृष्टिकोण से आर्य-समाजियों से हुए शास्त्रार्थों को प्रकाशित कराया है। विशेष रूप से माधवाचार्य ने तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर इस प्रकार की पुस्तकें छापी हैं जिनमें आर्यसमाज के सैद्धान्तिक दृष्टिकोण और ऋषि के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व का जानबूझ कर उपहास करने की कुचेष्टा की है। हैदराबाद दक्षिण में पं. बुद्ध-देव जी विद्यालंकार से माधवाचार्य का जो शास्त्रार्थ हुआ था, उसका

(शेष पृष्ठ ८ पर)

डी० [illegible]वी० का[illegible]

का शानदार नतीजा

गत वर्षों की भांति इस बार भी मैदान जीत लिया

विनोद कंवर सिंह ने प्री इंजीनियरिंग में ६५० में से ५१७ अंक लेकर प्रथम रहा

प्रि मैडिकल में विपल कुमार महता सातवें स्थान पर रहा

१४ जून, जालन्धर—आज पंजाब यूनिवर्सिटी की मैडिकल व इंजीनियरिंग का परिक्षा परिणाम घोषित हुआ। जिसमें श्री विनोद कंवर सिंह ने सबसे ऊंचा स्थान प्राप्त करके रिकार्ड कायम किया। जालन्धर के १६ विद्यार्थियों में से १५ छात्र हमारे कालिज के थे।

श्री विनोद कंवर सिंह ने प्री इंजीनियरिंग में ६५० में से ५१७ अंक लेकर प्रथम दर्जे पर रहा।

श्री महेन्द्रपाल गुप्त चौथे दर्ज पर रहा।

वीस छात्र वृत्तियों में से हमारे कालिज के छात्रों ने पांच प्राप्त कीं। मैरिट लिस्ट में १४ स्थान प्राप्त किए जोकि स्टेट के सभी कालिजों से अधिक हैं।

५५ छात्रों ने प्रथम दर्जा लेकर सारी स्टेट में ऊंचा स्थान हासिल किया है।

कालिज ने ३५७ छात्र प्री इंजीनियरिंग में परीक्षा के लिए भेजे जिसमें ११८ अनुत्तीर्ण हुए ६७ प्रतिशत परिणाम रहा जबकि यूनिवर्सिटी का ४३.५ था।

प्री-मैडिकल परिणाम—

श्री विपल कुमार महता ७वें दर्जे पर रहा और जालन्धर जिले में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

यूनिवर्सिटी के ३० प्रथम दर्जों में से १५ हमारे कालिज के रहें।

यूनिवर्सिटी के ६७ प्रथम दर्जों के छात्रों में से २४ हमारे कालिज के हैं। जोकि पंजाब के सभी कालिज में से आगे रहे हैं। १२८ छात्रों में से केवल ४१ अनुत्तीर्ण रहे परिणाम ६८ प्रतिशत रहा जबकि यूनिवर्सिटी का ४७.५ रहा।

आर्यसमाज गन्नौर (रोहतक) चुनाव

१५-६-६३ को निम्न पदाधिकारी चुने गए।

संरक्षक—डा० अनन्तराम जी रिटायर सर्जन, प्रधान—मुखी नौ निहाल जी रईस जिमीदार, उपप्रधान—श्री कुंवर भानु जी, मंत्री—श्री प्रेमनाथ जी, उपमन्त्री—श्री ईश्वरचन्द्र जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री आत्मदेव जी कमरा, पुस्तकाध्यक्ष—डा० चांदगदाम जी, निरीक्षक—चौ० विष्णुदेव जी, ९ सदस्य अंतरंग सभा के निर्वाचित हुए तथा ४ जौलाई से १२ जौलाई तक वेद प्रचार सप्ताह धूमधाम से मनाया जाना पास हुआ।

—प्रेमनाथ मन्त्री समाज

[illegible]शक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक अधिवेशन

[illegible]न ६३ को सभा प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती जी की [illegible] में निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ अधिवेशन में भारत के सभी प्रांतों के मध्य दक्षिण, मदरास, मौरीशस के १३७ सदस्यों ने भाग लिया।

१—प्रधान—श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती
२—उपप्रधान—श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री एम० पी०
३—उपप्रधान—श्री डा० डी० राम जी पटना
४—उप-प्रधान—श्री वीरेन्द्र जी एम० ए० वीरप्रताप, जालन्धर
५—मन्त्री—श्री ला० रामगोपाल जी शालवाले
६—उप-मन्त्री—श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी
७—उप-मन्त्री—श्री वैणीभाई जी आर्य
८—कोषाध्यक्ष—ओ३म् प्रकाश जी कपड़े वाले
९—पुस्तकाध्यक्ष—कुमारा डा० रामप्यारी जी शास्त्री एम.ए. जयपुर

अन्तरग सदस्य

१—श्री देशराज जी चौधरी पंजाब
२—श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री (पंजाब)
३—श्री सूर्यभानुजी वाईसचांसलर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, पूर्व प्रधान आर्य प्रादेशिक प्र० नि० सभा
४—श्री छोटूसिंह जी (राजस्थान)
५—श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री (बम्बई)
६—श्री प० नरेन्द्र जी (हैदराबाद)
७—श्री वासुदेव जी शर्मा (बिहार)
८—श्री चन्द्र दत्त जी तिवारी (उत्तर प्रदेश)
९—श्री गणेशदास जी सलूजा (उत्तर प्रदेश)
१०—श्री रघुवीर प्रसाद जी गुप्त (बङ्गाल)
११—श्री डा० महावीरसिंह जी (मध्य भारत)
१२—श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त (मध्य प्रदेश)
१३—श्री विष्णुदेव जी मेघराज जी (मोरीशस)
१४—श्री अमरसिंह जी (सिन्ध)
१५—श्री बालमुकन्द जी आहूजा (आजीवन सदस्यों में से)
१६—श्री धर्मजीत जी जिज्ञासु (मदरास)
१७—श्री सोमनाथ जी मरवाहा
१८—श्री मिहिरचन्द्र जी धीमान (जनरल)

श्रीयुत नारायणदास जी कपूर आडीटर नियुक्त हुए।

सभा ने विविध कार्यों के सम्पादनार्थ कई उपसमितियां बनाईं। आगामी वर्ष केलिए १४३४४५)का बजट स्वीकृत किया।—सभामन्त्री

आर्यसमाज के प्रकाशित शास्त्रार्थ

(पृष्ठ ७ का शेष)

ऐसा ही अतिरंजनापूर्ण वर्णन उन्होंने स्वसंकलित पुस्तक में दिया है और उसका शीर्षक भी 'बुद्धदेव का जूता : दयानन्द के सिर पर' यह नितान्त अशिष्टतापूर्ण रखा है।

निष्कर्ष—(१) आर्यसमाज ने विपक्षियों से अपने जीवनकाल में जो सहस्रों शास्त्रार्थ किये हैं, उन में से बहुत कम लिपिबद्ध होकर पुस्तकाकार प्रकाशित हो सके हैं।

(२) इन में से बहुत से शास्त्रार्थों का विवरण आर्य समाज की पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है। उस सामग्री का भी ऐतिहासिक महत्व हो सकता है।

ये शास्त्रार्थ ग्रन्थ पढ़ने की दृष्टि से अत्यन्त रोचक सामग्री प्रदान करते हैं। इन के पढ़ने से शास्त्रार्थकर्त्ताओं का युक्ति और तर्क कौशल तथा विपक्षी को परास्त करने के दांव पेचों का तो ज्ञान होता ही है साथ ही सहस्रों ऐसे अद्भुत शास्त्रीय प्रमाण मिलते हैं जो आर्य समाज के सिद्धान्त की सत्यता और विपक्षी सम्प्रदायों के मिथ्यात्व को प्रकाशित करते हैं।

(४) शोक की बात है कि अब शास्त्रार्थों का प्रचलन कम हो रहा है और शास्त्रार्थ करने वाले विद्वान भी गिने चुने ही रह गये हैं।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



आर्य जगत

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २७) रविवार २: आषाढ २०२०— ७ जुलाई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

ब्रह्म यज्ञं च वर्धय

हे प्रभो ! आप हमारे ज्ञान तथा यज्ञ को बढ़ाएं । ब्रह्म ज्ञान तथा भक्ति का नाम है और यज्ञ परोपकार है । परमेश्वर देव ! अपने प्रति हमारी भक्ति भावना बढ़ाओ तथा हम परोपकारी बनते जावें ।

सर्व इज्जनः संगत्यां सुमनाः

सारे लोग सुसंगति से आप में उत्तम मेल मिलाप से अच्छे मन वाले, शुभ विचारों वाले बनते रहें । उत्तम संगति से परस्पर मेल प्रीति बढ़ती है तथा उनका मन पवित्र हो जाता है ।

नः सर्ववीरं नियच्छ

भगवन् ! हमें वीरता के भावों से भरे हुए वीर पुरुष प्रदान करें । सन्तान वीर हो, युवक वीर हों जीवन वीर रस से भरा हो तथा सारा समाज ही उत्तम तथा वीर हो ।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥

यजु. अ० ३६ मन्त्र ८

अर्थ :—हे परमात्मन् ! आप (इन्द्रः) इन्द्र हैं, सारे ऐश्वर्य भण्डारों के स्वामी हैं इस (विश्वस्य) चर अचर विश्व में सर्वत्र (राजति) विराजमान हो, व्यापक हो इसलिए प्रभो ! (शं नः) हमारा कल्याण (अस्तु) होवे जो भी (द्विपदे) दो पांव के मनुष्य आदि हैं तथा (चतुष्पदे) चार पैर आदि के पशु गौआदि हैं उन सब का कल्याण मंगल करते रहें ।

भाव :—हे महान् इन्द्र ! आप ही सारे ऐश्वर्यों के भण्डारों के स्वामी हो । विश्व में जितना और जिस प्रकार भी ऐश्वर्य है—यह सब आपका ही है । आप ही इन्द्र हैं, महेन्द्र हैं । आप ही सारे संसार में ऐश्वर्य का दान करते हैं । जड़ और चेतन जितना भी विश्व है । जिस को हम जानते या नहीं जानते हैं । आपकी महिमा, लीला सर्वत्र है । आप सर्वव्यापक हैं । तीनों लोकों तथा कहे जाने वाले चौदहों भुवनों में आप विराजमान हैं । तेरा नूर सब जा समाया हुआ है । जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है । आपसे परम प्यारे प्रभो ! हमारी यह प्रार्थना है कि सारे नर नारियों तथा जीवमात्र का कल्याण हो । सब को सुखी बना देवें । सर्वम् अस्तु अनातुरम् सर्वे भवन्तु सुखिन :— सारा विश्व सुखी होवे भगवन् ! सबका भला करो । —सं०

चीन ने

फिर हमला किया तो उसे करारी हार देंगे : कैरों

मुख्य मन्त्री सरदार प्रतापसिंह कैरों ने कल यहां कहा कि यदि चीन ने भारत पर फिर हमला करने की कोशिश की तो हम चीन को करारी हार देंगे ।

उन्होंने कुल्लू के लोगों से अपील की कि वे भारी संख्य में सेना में भर्ती हों अपने देश की रक्षा का भार उन्होंने कहा, विशेषतया सीमांत क्षेत्रा के लोगों पर है ।

मुख्यमन्त्री ने आगे कहा कि मनाली पहाड़ों की रानी है और कुल्लू देवताओं की सौंदर्यमयी घाटी है । उन्होंने लोगों से कहा कि वे बढ़िया किस्म का सेव पैदा करें तथा ऊन की चीजें तैयार करें । उन्होंने कहा कि कुल्लू घाटी को ८ वर्ष में एक समृद्ध क्षेत्र बना देंगे ।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

वैदिक देवता-वाद

२. देवताओं का स्रोत

(ले०—श्री बलदेव राज 'विद्यार्थी', पठानकोट)

वैदिक देवताओं का मूल स्रोत वैदिक साहित्य है क्योंकि वैदिक साहित्य के गूढ़ विषयों के विवेचन का आधार देवता है। ऋग्वेद प्राचीनतम ग्रन्थ है अतः वैदिक देवताओं का मूल स्रोत ऋग्वेद ही है। जैसे **macdonal** के अनुसार "वैदिक देव-शास्त्र के प्राचीनतम स्रोत हमें ऋग्वेद में प्रकृति के मानवीकरण और उसकी उपासना पर आधारित धार्मिक विश्वासों पर उपलब्ध हैं।' सामवेद में तो देवतावाद नहीं के बराबर है क्योंकि वह कर्मकाण्ड से सम्बन्धित न होकर गान-विद्या से सम्बन्धित है। यजुर्वेद व अथर्ववेद में अत्र तत्र यत्र प्रजापति ही मुख्य देवता माना गया है। उसी की प्रशंसा में अनेक मन्त्र हैं। वरुण आदि अन्य देवता भी उपलब्ध हैं ऋग्वेद के १० मण्डल में इने-गिने देवताओं को छोड़कर झांकी धुंधली है। इसीप्रकार वैदिक देवता का विकास इंडो-योरपीयन युग के तथा इंडो-इरानियन युग के देवताओं से लेकर आर्यों के भारत में व्यवस्थित होने तक होता रहा और कालान्तर में ज्यूं-ज्यूं सभ्यता और संस्कृति ने नई करवट ली त्यूं-त्यूं नए-नए देवताओं का विकास होता गया। और पुराने देवताओं को भुलाया जाता रहा। इस धारणा पर विचार करें तो मेरे कई आर्य भाई नुक्ता-चीनी करेंगे कि आर्यलोग तो मूल से ही भारत में रहे हैं उनके भारत व्यवस्थित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। मैं भी यह मानता हूं किन्तु यह उपर्युक्त धारणा पाश्चात्य है।

वैदिक देवता-वाद केवल वेदों में ही नहीं अपितु इसके स्रोत ब्राह्मणों व उपनिषदों आदि वैदिक ग्रन्थों आदि में उपलब्ध हैं। ब्राह्मण कर्म-काण्ड जो देवता के बिना अधूरा है न कि पूरा है। कात्यायन श्रौत - सूत्र में यज्ञ के लिए देवता, द्रव्य व दान तीन का होना आवश्यक माना है। उपनिषदों में भी देव असुर संग्राम की कथाएं आती हैं। उपनिषदों की आत्म-तत्त्व की प्रतिष्ठा के कारण प्रायः देवताओं का स्वतन्त्र महत्व भी समाप्त हो गया। वैदिक साहित्य के उपरान्त पुराणों ने शिव गणेश अनेक अनावश्यक देवता मान लिया। **Bloomfield** ने इन पौराणिक व वैदिक देवताओं की उत्पत्ति की तिथि का सम्बन्ध है मेरे निजी विचार में देवताओं का प्रादुर्भाव सृष्टि क आदि में हुआ चूंकि ऋग्वेद सृष्टि के आदि में बना जिसमें देवताओं का चरित्र है।

३. देवताओ की गणना व वर्गीकरण

यह प्रश्न सन्देहास्पद है। जिन्होंने जम्मू रघुनाथ मन्दिर देखा है। उन्हें पता होगा कि वहां ३३ करोड़ देवताओं के प्रतीक चित्रित हैं। इसी प्रकार देहली के बिरला मन्दिर व प्राचीन गुफाओं में अनेक देवताओं के चित्र उपलब्ध हैं। पुराणो मे देवताओं की गणना का अन्त ही नहीं। यत्पिण्डे तद्-ब्राह्मण्डे के अनुसार प्रत्येक मनुष्य देवता है जैसे शतपथ में कहा है 'मत्या वा अग्रे देवा आसु.' इस तरह भारत के ही ४८ करोड़ देवता हो जाते हैं और चीन के ६२ करोड़ देवता होजाते हैं तो शेष संसार के मनुष्यों की गणना करे तो कितने देवता होंगे यदि मरे हुए और आगामी मनुष्यों की भी गणना करें तो देवता असंख्य हो जाएंगे। ज्यूं २ आबादी बढ़ रही है देवता भी बढ़ते जाएंगे। इसलिए मुझे यह धारणा बिल्कुल नहीं जचती।

बृहदारण्यक उपनिषद् में याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया गया 'देवता कितने' उत्तर मिला '३३३६, ३३, छः, तीन, डेढ़; एक' अथर्ववेद, ऋग्वेद व ब्राह्मणों में भी ३३ देवताओं का उल्लेख मिलता है। इस तरह मनचले लोग कह सकते हैं 'वेदों में बहु-देवता वाद स्पष्ट है' किन्तु सहसा परिणाम निकलना भी ठीक नहीं। वास्तव में एक देवता की अनेक शाखाएं हैं। एक ही दैवी शक्ति के अनेक रूप हैं। एक ही देवता के अनेक नाम हैं जैसे एक ही मनुष्य किसी के लिए चाचा किसी के लिए जीजा ताया आदि अनेक नामों को धारण करता है जबकि वास्तव में वह एक है। वेदों में स्वयं एक देवता वाद के संकेत मिलते हैं 'एकस्यापि बहूनि नामधेयानि' 'एकं सद्विप्रा. बहुधा हे वदन्ति' 'तद्देवानामसुरत्वमेकम्' 'एको देवः सर्वभूतगुगूढः इसी प्रकार एक ही देवता को स्त्री पुरुष सर्वस्व माना है—

'त्वं स्त्री त्वं पुमान असि त्व कुमार उतवा कुमारी।' त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः।' अ०१०।८।२७ **A. C. Bose** के अनुसार **'All deities become one in इन्द्र'** अर्थात् इन्द्र में ही सभी देवता समा सकते हैं। अतः वेदों में एक देवता-वाद है।

नैरुक्तों ने जहां २ भी चैतन्य के दर्शन किए वहां ही प्रकृति के आधार पर देवता मान लिया। अतः निरुक्त अनुसार अन्तरिक्ष स्थानीय द्यौस्थानीय पृथिवी स्थानीय देवताओं के तीन वर्गीकरण हैं। मैकडानल महोदय देवताओं का ऐतिहासिक पक्ष भी मानते हैं जब कि भारतीय नहीं। श्री मैक्डानल के अनुसार देवताओं का यह भी वर्गीकरण है १. छोटे देवता—जैसे ऋभु २. युगल देवता—अश्वन—द्यावापृथिवी आदि ३. गण-मरुद्गण ४. भावात देवता शुद्ध मन्त्र,५ देवियां सविता ६० रत्नकदेवता प्रजापति आदि। कि बहुना देवताओं की संख्या व विभाजन वाद-विवाद के परिणाम स्वरूप अद्वैतवाद, द्वैतवात, त्रैतवाद, सर्वेश्वरवाद, एकेश्वरवाद, प्रकृतिवाद आदि का प्रादुर्भाव हुआ। ये सभी गूढ़ विषय हैं। इनको मैं आर्य-विद्वानों के लिए छोड़ता हूं।

४. देवताओं का स्वरूप

अब मेरा अन्तिम विषय आरम्भ होता है। स्वरूप का अर्थ पहचान है। जैसे संन्यासी की पहचान है कि वह भगवे कपड़े पहनता, स्त्री का त्याग करता है, उपकार करता है आदि-आदि। देवताओं का पूर्ण रूप से स्वरूप समझना कठिन है। मैक्समूलर आदि विद्वानों के अनुसारभी **'Gods in Rigveda are enigma'** अर्थात् ऋग्वेद के देवताओं को जानना कठिन है। फिर भी १. एक ही देवता एक जाति में पूज्य और दूसरी जाति में शायद द्वेष के कारण अपूज्य हो सकता है। वैदिक समाज में असुर का अर्थ शत्रु है जबकि अवेस्ता यनि ईरान में इसी शब्द का अर्थ देवता होता है।

२. यास्क के अनुसार देवता भी मनुष्य की तरह हैं। वे भी हमारी तरह काम करते हैं। मनुष्यों की तरह उनके भी घर हैं पत्नी हैं। उनके भी हाथ पाओं पेट है। 'यत्संगृभ्णा मघवन् काशिरित्ते' अर्थात् हे इन्द्र जिससे तूने पकड़ा वह तेरी मुट्ठी है। किंतु स्मरण रहे कि यास्क ने यह पूर्व-पक्ष दिया है। देवता मानव कदापि नहीं। फिर तो उनका महत्व ही न रहे।

३. देवता दैवी शक्ति हैं। उन की आज्ञा के बिना कोई काम नहीं

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय--

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २३ आषाढ़ २०२०, ७ जुलाई १९६३[अंक २७

देश भक्ति का भाव

भारत के पराधीनता के युग में सारे राष्ट्र में देशप्रेम की भावना कूट २ कर भरी हुई थी। हमारा इतिहास इस बात का साक्षी है कि जनता ने इस के लिए अपनी प्यारी से प्यारी सम्पत्ति भी समर्पित कर दी। धन, भूमि, सम्पत्ति, जीवन की अन्य सामग्री तो दे ही डाली, किन्तु जीवन और विशेष कर के यौवन जवानी को भी मातृभूमि की वेदी पर भेंट कर देना भी सुगम बन गया। इस स्वतन्त्रता के यज्ञ कुण्ड में तन को भी आहुत कर दिया। भारत के नाना प्रान्त पहले भी थे तथा उनके निवासियों के मन में अपने २ प्रान्त एवं उस की हर वस्तु के साथ स्नेह अनुराग भी था पर जिस समय विशाल राष्ट्र परिवार की सेवा का प्रश्न सामने आता था सबने प्रान्तीय भाव से न सोच कर भारतीय भाव से सोचा। अपने २ को प्रान्त का निवासी न विचार कर भारत का वासी मानते हुए सारी व्यष्टि को समष्टि पर बलिदान कर दिया। राष्ट्र का किसी भी विचार का स्थान या सम्प्रदाय का हो, इन बातों से सर्वथा ऊपर उठ कर राष्ट्र की सेवा में सब का इकट्ठा ही मिल कर रक्त बहा। यह हमारे लिए बड़े ही गौरव की बात है। यह देश प्रेम की भावना समूचे समाज का मस्तक ऊंचा करने वाली है। देश सेवा की अग्नि में बिना किसी भेदभाव के जीवन पतंग जले। बालपाललाल में सारे राष्ट्र का बलिदान संगम दिखाई देता है। तभी तो विदेशी सत्ता का शासन समाप्त हुआ। इस संगठन और राष्ट्र-भक्ति प्रवाह के सामने वह शक्ति टिक न सकी। भारतीयों के उत्कट देशप्रेम ने विदेशी शासकों को उन के समुद्र पार घर पहुंचा कर दम लिया। भारत माता की जय तथा इन्किलाब जिंदाबाद के घोषों से सारा देश गूंज उठता था। उसी का परिणाम स्वाधीनता के रूप में हुआ।

किंतु आज का राष्ट्रीय जीवन और भारतीयों का व्यवहार देखकर मन मे दुःख होता है। आज विदेशी सत्ता के सूत्रों को समाप्त करके अपना आसन, अपना ही शासन और अपना ही विधान, निशान व प्रधान है। अपने देश के हम स्वयं ही मालिक हैं। यह बात तो आगई परन्तु पुरानी देशभक्ति की उत्कट भावना भूलती जा रही है। समष्टि का विशाल, व्यापक विचार समाप्त होकर उसके स्थान पर व्यष्टि की संकीर्णता स्थान बनाने लगी है। भारतीयता का भाव भागने लगा तथा अब प्रान्तीयता का प्यार नस २ मे समाविष्ट होता जा रहा है सब को अपने २ प्रान्त की चिन्ता है। अपनी भाषा के विकास में रुचि है, प्रान्त की उन्नति का ध्यान है। सबका दृष्टिकोण अब महान् खेद से कहना पड़ता है राष्ट्रीय न होकर प्रान्तीय बनता जा रहा है। यह मेरा प्रान्त है, मैं इस प्रान्त का हूं, मेरे प्रान्त ने यह योग दिया है, राष्ट्र के लिए मेरा प्रान्त यह काम कर रहा है। मेरे प्रान्त के साथ अन्याय हो रहा है। मेरे प्रान्त की भाषा यह होनी चाहिए यह भूमि का भाग मेरे प्रान्त से कोई काट नहीं सकता या यह साथ लगने वाला भाग मेरे प्रान्त के साथ मिला कर विशाल बना देना चाहिए—ऐसे २ तथा इस प्रकार के दूसरे विचार भी आज जोरों पर हैं। इन से व्यष्टि का भावना उभर कर प्रान्तवाद को जन्म देकर राष्ट्रीयवाद, समष्टि के जीवन को निर्बल बना रही है। देशभक्ति मर रही है, इसके स्थान प्रान्त भक्ति पनप रही है। इसी व्यष्टिभाव ने भारत को पुराने युग मे विदेशियों के बन्धन में जकड़ दिया था। शतियों तक दासता की रस्सियों मे बन्धे रहे। आज फिर हम उसी विष को अमृत समझकर पीने लगे है। अपने सारे राष्ट्रीय अमर बलिदानी वीरों के किये कराये पर पानी फेरने लगे हैं। इन गत सोलह वर्षों मे राष्ट्र के विचारों मे व्यष्टि के भावों के आने से विघटन ही हो रहा है। अलग २ तार बिखरने लगा है। परिणाम क्या होगा ? यदि हम प्रान्तवादी हैं। भिन्न २ प्रान्त वाले ही केवल बन गए तो भारत क्या है? भारतीय कौन है ? इसकी समझ नहीं आएगी। यदि हमने अपने व्यक्तिमय इस संकीर्ण विचार को राष्ट्रीय व्यापक विचार में आहुत नहीं कर दिया तो भारत माता कहां रही देशकी भक्ति का क्या बनेगा ? यदि मुझे न राष्ट्र से प्यार है और न इसकी भाषा, भावना तथा भूषा से स्नेह तो मै क्या हूं, इसका उत्तर क्या होगा यह है स्थिति जो सामने है। इस संकीर्ण प्रान्तीयवाद के प्रबल प्रवाह को रोकने का प्रयास किया जाये। हमारी योजनाएं चलती हैं। उनमें राष्ट्रीयवाद की योजना शामिल हो जाये। प्रबल आन्दोलन किया जाए, सारी संस्थाओं मे आरम्भ से ही इसी देशभक्ति की भावना को भर दिया जाये कि हम प्रान्त नहीं हैं अपितु भारत हैं, राष्ट्र हैं। यह राष्ट्र हमारा है और हम भी तो इसी राष्ट्र के हैं। हमारी प्रत्येक वस्तु तन, मन, धन इसी राष्ट्र सेवा के लिए हैं। राष्ट्र शरीर और प्रान्त इसके सुन्दर अंग हैं। इसी प्रकार ही देश उन्नति करेगा। आर्यसमाज इसी देश भक्ति का भाव भरता है—

—त्रिलोक चन्द्र

आर्यजगत का वेदांक

श्रावणी का उपकर्म, वेद सप्ताह का पुण्य पर्व समीप आता जा रहा है। आर्यजगत सभा का साप्ताहिक मुख पत्र है इस बार वेद सप्ताह के अवसर पर आर्यजगत का वेदांक प्रकाशित होगा। इसमें आर्यसमाज के स्वाध्यायशील विद्वानों के भिन्न-भिन्न वेद विषयों पर बड़े खोज, पूर्ण, गम्भीर अमूल्य लेख विचार कविताएं प्रकाशित होंगे। मान्य विद्वानों की सेवा मे पत्र तथा वेद विषयक लेखों के भिन्न विषय भी निवेदित कर दिए गए है। अंक पढ़ने वाला होगा। सारी समाजों परिवारों, संस्थाओं तथा स्वाध्याय-शील भाई बहिनों से नम्र प्रार्थना है कि वे अभी से हमे इस अंक के लिए अधिक से अधिक अंकों के लिए सूचित करने की कृपा करें ताकि हमें भी सुविधा हो तथा उन को भी कठिनता न हो। वेद का स्वाध्याय परमधर्म है। विश्वास है कि सारी समाजे, सज्जन इसके लिए अपनी उदारता पूर्वक हमें पूर्ण सहयोग देंगे।

अंडों पर ज़ोर क्यों

पंजाब सरकार ने अपनी सूचना में कहा है कि प्रदेश के छोटे स्कूलों के बच्चों तथा साथ २ अध्यापकों को एक २ पाव दूध तथा एक २ अंडा दिया जाएगा ताकि भोजन के साथ स्वास्थ्य भी बना रहे। सूचना में यह भी कहा है कि जो नहीं लेगा उनको जबरदस्ती नहीं दिया जाएगा। उसके स्थान पर विटामिन या और दूध दिया जाएगा। हम सरकार से निवेदन करते हैं कि बचपन से स्कूली बच्चों को अंडे दिये ही न जाएं क्यों अंडे खाना सिखाया जाए। जब दूध देना है तो क्यों न दूध ही सबको पिलाया जाए। जिस पर आपत्ति हो वह वस्तु दी ही न जाए—सं.

महाराष्ट्र में आर्यसमाज नं० २

(ले० श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु दयानन्द कालेज शोलापुर)

शोलापुर पहुंच कर मान्यवर प्रिं० भगवान दास जी के दर्शन कर के मन को हर्ष हुआ। प्रिं० भगवान दास जी ने दक्षिण की परिस्थितियों का गम्भीर अध्ययन किया है। महाराष्ट्र में वह अत्यन्त लोकप्रिय हैं। प्रिं० साहिब का यहां भी ऐसा ही मान व प्रतिष्ठा है जैसी कि पंजाब व दिल्ली में। उनको तो अब एक धुन समाई हुई है कि दक्षिण में आर्य समाज का विस्तार कैसे हो।

आर्यसमाज को महाराष्ट्र में पहले ईसाई मत प्रचारक समझा जाता था परन्तु हैदराबाद सत्याग्रह के समय जब पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी, स्वा० स्वतन्त्रानन्द जी, श्री महात्मा खुशहाल चन्द जी (स० आनन्द स्वामी) आदि आर्य सन्त महात्मा इधर पधारे तो भ्रम का निवारण हुआ। इस क्षेत्र में सुशिक्षित समाज स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज, पंजाब केसरी ला० लाजपत राय जी, देवता स्वरूप भाई परमानन्द जी, श्री डा० गोकुलचन्द जी नारंग के नाम से सुपरिचित है। पं० रामचन्द्र जी देहलवी के नाम का भी पर्याप्त प्रभाव है। श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी तो अभी गत वर्ष यहां आये। सत्याग्रह के समय से ही उन का इधर स्थिर प्रभाव है। उनके प्रवचन यहां बड़ी श्रद्धा से श्रवण किये जाते हैं। आर्य समाज दक्षिण में फैलना चाहे तो कोई अति कठिन बात तो है नहीं। इधर साधु का बड़ा सत्कार होता है। यदि आर्य समाज के साधु इधर अपना मुंह कर लें तो जनता वैदिक विचारों का स्वागत करेगी। वेद, उपनिषद शास्त्र के प्रति गहरी निष्ठा लोग रखते हैं। अखबारी भाषण पसन्द नहीं किये जाते। वेद मन्त्रों के आधार पर गम्भीर धर्मचर्चा श्रद्धापूर्वक सुनी जाती है। यदि एक दर्जन साधु वानप्रस्थी भी दक्षिण को अपनी कर्मभूमि बना लें तो देश का बेड़ा पार हो जावे।

हमारे नेता इधर आते कब हैं? क्या हुआ जो वर्ष में एक बार बम्बई भाषण दे गये। दूर दक्षिण तक हम कब पहुंचे हैं? यह ठीक है कि अंग्रेजी जानने वाला प्रचार कार्य में सुविधा रखता है पर आर्य जगत द्वारा मैं इस भ्रम का निवारण करना चाहता हूं कि दक्षिण में लोग हिन्दी नहीं जानते हिन्दी का प्रचार खूब हो रहा है। सब नगरों में शिक्षित लोग हिन्दी समझते व बोलते हैं। एक और भ्रम उत्तर में कुछ लोगों ने फैला रखा है कि कठिन हिन्दी समझ में नहीं आती परन्तु दक्षिण में उर्दू वाली हिन्दी से काम नहीं चल सकता। यहां संस्कृत निष्ठ हिन्दी लोग सुगमता से समझ सकते हैं उर्दू मिश्रित नहीं। मराठी गुजराती तो विशेष रूप से संस्कृत निष्ठ भाषायें हैं। अत. आर्य साधु निःसंकोच इधर आयें। भ्रमण के लिये नहीं अपितु डेरा जमाने के लिये।

महाराष्ट्र में शोलापुर को विशाल केन्द्र बना कर आर्यसमाज जनता में लोकप्रिय बन सकता है। यहां तो समाज की संस्थाओं को विराट शक्ति है। यहां का दयानन्द कालेज दक्षिण में ऐसी ही कीर्ति रखता है जैसा जालंधर का दयानन्द कालेज उत्तर भारत में। आंध्र प्रदेश (भूतपूर्व हैदराबाद राज्य) में आर्यसमाज का संगठन व्यापक व सुदृढ है ही। महाराष्ट्र में भी कुछ जिले ऐसे हैं जो पहले हैदराबाद राज्य का अंग थे उन में आर्यसमाज का प्रचार अच्छा है। अमरावती जिला में तो अमरावती आदि की समाजों को अपने भवनों से अच्छी आमदनी है। सार्वदेशिक सभा के अधिकारी विज्ञपतियों का आश्रय न लेकर यदि स्वयं समय निकाल कर ऐसी धनाढ्य समाजों को प्रेरणा देकर इस रुपये का उपयोग वेद प्रचार में करावें तो कार्य खूब बढ़ सकता है। अच्छा हो यदि गुरुद्वारा प्रबधक कमेटी की भांति उतनी ही धन राशि स्वयं सभा प्रचार में यहां व्यय करे। यदि सभा इधर योजनाओं के कागजी-दायरे से बाहर जाने का साहस न करे तो आर्य समाज के कुछ मूर्धन्य संन्यासी यह कार्य हाथ में लें अन्यथा हम समय की दौड़ में पिछड़ जावेंगे।

प्रश्न उठता है उपदेशक कहां से मिलेंगे? इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार में इस समय आठ प्रांतों के छात्र हैं जिन में महाराष्ट्र आदि दक्षिणी प्रदेशों के युवक भी हैं। यदि नेतागण चाहें तो वह युवक कार्यक्षेत्र में उत्साह से उतरेंगे।

एक और प्रश्न शेष रह जाता है। सभायें अपने सम्मेलनों के समय आर्य जनता को बार-बार यह आश्वासन दिया करती है कि इतने लाख जमा करो। इस धन से विदेशी भाषाओं में व दक्षिण भारत की भाषाओं में वैदिक साहित्य प्रकाशित व प्रसारित किया जावेगा। इस दिशा में कितना कार्य हम कर पाये हैं यह तो हमारी प्रकाशन संस्थाओं की सूचियों से पता लग जाता है। मैं यह नहीं कहता कि कुछ नहीं हुआ परन्तु यह कठोर सत्य है कि हम ने इस दिशा में नाम मात्र का ही कार्य किया है। हमें अपनी इस भूल पर लज्जा आनी चाहिए और इसका सुधार शीघ्र होना चाहिए।

भारत में बड़े वेग के साथ अवैदिक भावनाओं का प्रचार कई साधनों से हो रहा है। अभी जो लोगों में वेद के लिये श्रद्धा है समय है कि इस श्रद्धा को सजीव बनाया जावे। मैं देखता हूं कि शोलापुर में दयानन्द उपदेशक विद्यालय यमुनानगर के स्नातक पं० सत्यवीर जी शास्त्री जब परिवारों में यज्ञ कराते हैं तो लोग कितने आनन्दित होते हैं। पं० जी हैं भी महाराष्ट्र के इसलिये अशिक्षित वर्ग जो हिन्दी नहीं जानते उनको भी वह वेद की बात समझा सकते हैं।

क्या आर्य जन मेरे भावों की पुष्टि करेंगे।

कार्यालय डी.ए.वी.कालिज प्रबन्धकर्तृ सभा नई दिल्ली

आर्यसमाज हिसार निर्वाचन कमेटी की बैठक रविवार दिनांक २८-७-६३ को सायं ५ बजे आर्य समाज हिसार के भवन में होगी। आप से प्रार्थना है कि आप इस में सम्मिलित होकर कृतार्थ करें। इस बैठक में डी० ए० वी० कालिज प्रबन्ध कर्तृ सभा नई दिल्ली, पर भेजे जाने वाले १० प्रतिनिधियों का निर्वाचन होगा और इस में जैसा कि इस से पूर्व सूचित किया जा चुका है, वही सदस्य भाग ले सकते हैं जिन्होंने आर्यसमाज का पिछला चन्दा दे दिया हो और साथ ही डी० ए० वी० कालिज सोसायटी का वार्षिक चन्दा भी ३ रु० के हिसाब से दे दिया हो।

इस पत्र की प्राप्ति पर सूचना देने की कृपा करें।

भवदीय
लालचन्द धवन
मन्त्री

आर्य वीरो जागो

(ले०—श्री जियालाल जी आर्य अखनूर)

आर्यसमाज की वर्तमान सोचनीय दशा देखकर किस ऋषि भगत आर्य के हृदय में दुख नहीं होता परन्तु दुखी होने से केवल काम न चलेगा इससे आर्यसमाज की बिगड़ती हुई दशा सुधर नहीं सकती यदि हम हरकत में न आवें तो हालत वद से बदत्तर होती जायेगी आवश्यकता है इस समय सचेत होने की केवल सचेत होने ही की नहीं अपितु कमर कस कर उठ खड़ा होने की उठकर खड़ा होने की ही नहीं अपितु संघर्ष रत होने की वह संघर्ष किसी व्यक्ति विशेष के साथ न हो सामुहिक रूप से उन बुराइयों के विरुद्ध हो जो आज आर्यसमाज में दृष्टि गोचर हो रही है आर्यसमाज में जो अनार्य अंसर घुस आया है जिस के द्वारा सिद्धांत वाद का विरोध हो रहा है उस अनार्य अन्सर से हमने टक्कर लेनी है। सिद्धांत प्रेमी लोगों को आगे लाना है जब सच्चे महर्षि भगत आर्य वीरों के हाथों में जिन के हृदय में ऋषि के पवित्र मिशन के लिये तड़प हो आर्य समाज का नेतृत्व होगा तो आज जो बुराइयां आर्यसमाज में आ गई हैं दूर हो ही जायेंगी। सच्चे आर्यों के आगे आने से आर्यसमाज में फिर प्रचार युग आ सकता है आर्यसमाज खोये हुए गौरव को पा सकता है ऋषि मिशन के परवाने मस्ताने आर्य वीरों के हाथ में जब आर्यसमाज की बागडोर होगी तो न आर्यसमाज की वेदि का अपमान होगा न वैदिक सिद्धांतों के साथ खिलवाड़ होगा। शुद्धि का चक्र फिर पूरे वेग से चलेगा। खण्डन का भी चक्र चलेगा। वैदिक धर्म का प्रचार होगा। देश का उद्धार होगा देश में यह बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार घूसखोरी अनीति अन्याय अत्याचार बन्द होगा जब हम स्वार्थी लोगों को पीछे हटायेंगे जो अपने तुच्छ स्वार्थों के लिये आर्यसमाज के हितों को बलिदान करते हैं। और परार्थ के मार्ग के दिव्य गुणधारी व्यक्ति को आगे लायेंगे तो मैं पूर्ण विश्वास से कहता हूं कि आर्यसमाज का वह स्वर्ण युग वापस लौट सकता है जब सारे विश्व में आर्यसमाज के नाम की गूंज भी हर बशर की जबान पर आर्यसमाज का चर्चा था। मगर यह सब कुछ केवल कहने से नहीं अथवा करने से होता है और आर्यसमाज में अब भी करने वालों की कमी नहीं। जरूरत है इस समय एक होने की इस लिये मेरी ऋषि भगत आर्य वीरों से जिनके दिल में तड़प है आर्यसमाज के मिशन के लिये प्रेम है वैदिक धर्म के लिये और सच्ची लगन और श्रद्धा है तो आलस त्याग कर निर्भय होकर आर्यसमाज को जीवन देने के लिये जीवन की बाजी लगाने को त्यार हो जाओ।

आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर

जनवरी ६३ से मई तक पंजाब, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश के ६६७५ अहिन्दु वैदिक धर्म में प्रविष्ट हुए, पांच कन्याओं को घुमक्कड़ वालों से बचाया गया। तथा दो कन्याओं का विवाह संस्कार किया गया।

—शादीलाल

सार्वजनिक जीवन फुटबाल का सा जीवन

(लेखक—श्री भक्तराम शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर)

आर्य नेता स्व० आचार्य नरदेव जी शास्त्री काव्यतीर्थ कुलपति महाविद्यालय ज्वालापुर ने एक बार स्व० स्वामी दर्शनानन्द जी प्रसिद्ध दार्शनिक और शास्त्रार्थ महारथी से कहा था—'लोग व्यर्थ की डाह करते हैं।' तब स्वामी जी ने महाभाष्य का निम्नलिखित वचन स्मरण कराया—

'न हि यूका भयात् कन्था परित्यज्यते, न हि भिक्षुका. सन्तीति स्थाल्यो नाधि श्रीयन्ते, न हि मृगा सन्तीति यवानोप्यन्ते।'

अर्थ—जूओं के भय से गुदड़ी नहीं छोड़ दी जाती, भिक्षुकों के भय से कोई अपनी रसोई बनाना बन्द नहीं करता, हरिण खेत में चुग जायेंगे इस भय से किसान अन्न बोना नहीं छोड़ देता। इसी प्रकार जब आचार्य जी ने स्व० प० मुरारिलाल जी शर्मा शास्त्रार्थ महामहारथी से शिकायत की कि—'लोग दिक करते रहते हैं। काम नहीं करने देते।' तब पण्डित जी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया था—'राव जी! घबराइये मत, फल पकने लगा है, कोव्वे मोटे फलों पर ही अधिक चोंच मारते हैं।'

सार्वजनिक कार्यकर्त्ता को सदैव सब प्रकार के आक्षेप वा कटाक्ष सुनने व शान्ति धैर्य पूर्वक उनका (यदि वे सत्य हों तो) निरसन करने के लिए उद्यत रहना चाहिए। यह स्मरण रहे कि पक्षीगण मीठे फलों पर ही अधिक चोंच मारते रहते हैं। नेक नियति से काम करते रहने पर भी जब ईर्ष्यालु स्वार्थी जन आक्षेप करने लगें तो समझ लेना चाहिए कि फल मीठा होने लगा।

सार्वजनिक जीवन फुटबाल का सा जीवन है। जब तक फुटबाल में हवा भरी रहेगी तब तक किक करने वालों अथवा खेलने वालों को भी आनन्द देगा। किक खाते २ कभी वह आकाश में ऊंचा जायेगा, फिर नीचे आयेगा, फिर ऊपर उठेगा, फिर किक खाकर दूर जा पड़ेगा। प्रतिक्षण उभय पक्ष के खिलाड़ियों द्वारा दोनों ओर से ठुकराया जायेगा। कभी खिलाड़ियों के पैरों में ही इधर उधर लुढ़काया जायेगा और धक्के खाता रहेगा। सार्वजनिक कार्यकर्त्ता में स्पिरिट हो तो ऐसे दृश्य देखने ही पड़ेंगे। फुटबाल में हवा न रहेगी अथवा पंचर (छेद) हो जायेगा अथवा फट जायेगा तो उसे कौन पूछेगा? सारी बात हवा की है चाहे फुटबाल की हो अथवा सार्वजनिक कार्यकर्ता की। सारी बात भीतरी स्पिरिट की है।

कायर हैं वे समाज सेवक जो जनता के विरोध पर सेवा क्षेत्र से भाग जाते हैं।

आर्य-युवक समाज लेखराम नगर का चुनाव

संरक्षक—श्री करनैल सिंह जी विद्यावाचस्पति, प्रधान—श्री सत्यपाल 'सहदेव' आर्य, उपप्रधान—श्री अरुण कुमार जी 'आर्य' महामन्त्री—श्री जनक राज जी 'आर्य', उपमन्त्री—श्री अशोक कुमार जी 'आर्य', पुस्तकाध्यक्ष—श्री नरेन्द्र जी 'आर्य' उप-पुस्तकाध्यक्ष—श्री रविन्द्र कुमार जी 'आर्य', प्रचार मन्त्री—श्री अमृतलाल जी 'आर्य', वाचनालयाध्यक्ष—श्री सुरेन्द्र कुमार जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री जनकराज जी तथा श्री करनैलसिंह जी विद्यावाचस्पति इन दोनों आर्य युवकों ने इस सेवा का उत्तरदायित्व स्वयं संभाला है।

जनकराज आर्य मंत्री आ. यु. समाज

'पंजाब' नामी पुस्तक द्वारा लगाए गए घावों पर नमक पाशी

(ले० श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा अमृतसर)

समाचार पत्रोंमें पजाब सरकार के चीफ पार्लीमैंटरी सैक्रैटरी स. गुलाब सिंह की ओर से 'पंजाब' नामी बदनाम पुस्तक के कुछ पृष्ठ निकाल देने के सम्बन्ध में मुख्य मन्त्री महोदय के विभाग की ओर सकेत करते हुए पुस्तक के लेखक सं. महेन्द्र सिंह रंधावा का बियान भी दोहराया गया है जिसमें उन्होंने लिखा है कि जो खिराफात उन्होंने इस पुस्तक में लिखी हैं वह पहले किसी हिन्दी की पुस्तक में मौजूद हैं, जहां से उन्होंने केवल नकल की है। क्या अच्छा होता यदि पुस्तक के लेखक तथा स. गुलाब सिंह इस विषैली पुस्तक को प्रकाशित करने के पक्ष में युक्ति देने से पूर्व इतना तो सोच लेते कि यदि किसी पुस्तक में भगवान् कृष्ण के विरुद्ध ऐसी लचर और असभ्य बातें विद्यमान हैं तो किसी सभ्य एवं समझदार व्यक्ति का कर्तव्य ऐसे लेखक को शरारती तथा शैतान वृत्ति समझ कर उसे धिक्कार भेजना है अथवा उसे अधिक विस्तृत रूप में प्रकाशित कर के भगवान् कृष्ण के करोड़ो भक्तों तथा अनुयाइयोंके हृदयों को जख्मी करना है ? निसंदेह यह पहले लेखक की अपेक्षा कहीं अधिक गम्भीर प्रकार की शठता एव अपराध और ऐसा कुकर्म करने वाले व्यक्ति को कड़ा दण्ड और पुस्तक तुरन्त जब्त किया जाना चाहिए।

भगवान कृष्ण शायद एक ही ऐसे सर्वप्रिय नेता और महां पुरुष हुए हैं जिन्हें समस्त संसार के लोग प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते हैं यहां तक कि महर्षि दयानन्द जिन्होंने अपने बेगाने छोटे बड़े किसी का पक्षपात न करते हुए सबको सत्य और न्याय की छलनी में छान कर रख दिया है उन्होंने महाराज कृष्ण के जीवन और उसकी रचना और पवित्रता की जितनी प्रशंसा की है उसकी उपमा नहीं मिलती। आज यदि भगवान् कृष्ण पर इस प्रकार का कीचड़ उछाला जा सकता है तो कल को दूसरे नेता और महांपुरुष भी कैसे सुरक्षित रह सकेंगे ? सभी जातियों तथा मत मतान्तरों के नेताओं, पैगम्बरों, गुरुओं, अपितु संस्थापकों के सम्बन्ध में ऐसे लिटरेचर विद्यमान हैं, जिन्हें नकल करके प्रकाशित किया जावे तो उन्हें लोगों की दृष्टि से गिराकर अपमानित किया जा सकता है। भगवान कृष्ण के विरुद्ध ऐसी बातें कहना तो चांद पर थूकने के समान है और उनकी स्थिति (Position) प्राचीन इतिहासों एवं प्रामाणिक ग्रन्थों के प्रमाणों से स्पष्ट हो जाती है परन्तु दूसरे मतावलम्बियों के लिए अपने नेताओं की इज्जत बचाना कठिन नहीं अपितु असंभव हो जाएगा। क्योंकि उनके सम्बन्ध में उनकी मिल रही सहायताओं को झुठलाना दुर्गम होगा।

भगवान् कृष्ण हिन्दुओं और सिक्खों दोनों के नेता माने जाते हैं। सिक्खों के धर्म ग्रन्थ महाराज राम तथा कृष्ण की महिमा से भरे हुए हैं। हत भाग्यता से यदि स० महेन्द्रसिंह रन्धावा और उनके कुछ साथी भगवान कृष्ण को अपना नेता नहीं भी मानते तो कम से कम अपने महापुरुषों की इज्जत को सुरक्षित रखने के लिए ही उन्हें दूसरों के पुरुषाओं के विरुद्ध विष वमन से बाज रहना चाहिए था।

क्या पंजाब सरकार समय की निजाकत को अनुभव करके और अपने कर्तव्य को पहचान कर इस विषैली एवं असभ्यता पूर्ण पुस्तक तथा इस के लेखक के विरुद्ध शीघ्रातिशीघ्र उचित पग उठाकर बढ़ रही बेचैनी तथा सुलगती हुई आग को शान्त करेगी।

प्रेम का विस्तार हो

(रचि० श्री पिशोरी लाल 'प्रेम' रेणुका हि० प्र०)

कार्य कर ऐसा कि जिससे विश्व का उद्धार हो
स्वार्थ में डूबे हुए मानव का बेड़ा पार हो
भूल कर ईश्वर को मानव धन की पूजा कर रहा
कर यत्न ऐसा कि मानव का प्रभु से प्यार हो
वेद अमृत ज्ञान का तू प्रेम से प्रचार कर
जिससे मानव के हृदय का दूर सब अन्धकार हो
दान दो विद्या का जिससे नाश हो अज्ञान का
ज्ञान का प्रकाश हो सद्धर्म का प्रचार हो
सत्य हो मन में वचन में कर्म में भी सत्य हो
सत्य हो तेरी कमाई सत्य का व्यवहार हो
बेकसों और बेबसों का गर सहारा बन सके
समझ ले सब से ज्यादा यह बड़ा उपकार हो
अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार जग में बढ़ रहा
दूर करने के लिए जग से इसे तैयार हो
ईर्ष्या और द्वेष तजकर 'प्रेम' का सन्देश सुन
प्रेममय बन जा कि जिससे प्रेम का विस्तार हो

कोटली बस्ती बख्शी नगर जम्मू में वेदप्रचार कार्य

वेद संदेश भवन का निर्माण

श्री हरिराम जी वानप्रस्थी ने २ जून सन् ६३ को यज्ञशाला की आधार शिला रखी। इस शुभ अवसर पर पं० खुशीराम जी शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता सभा तथा स्वामी सत्यमुनि जी महाराज के ओजस्वी भाषणों का जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। अपील के समय मंदिर निर्माणार्थ धन की वर्षा हुई।

श्रीमती दयादेवी जी रायज़ादा गोपीनाथ जी मारफत ला० मोतीराम जी खन्ना ६१००/-

मा० देवी दयालजी गुप्त (स्नान घर के लिए) १२००/-

श्री रामलाल जी फेनियांवाले (यज्ञशालार्थ) २०००/-

आर्यसमाज हस्पताल रोड व पुरानी मंडी समाज का सम्मिलित धन ८००/-

स्त्री आर्य समाज की सदस्या बहिन रामकली जी, कमलादेवी जी, बहिन विद्यावती जी ८००/-

मुतफरिक धन ६०००/-

इसके इलावा ला. डेराशाह जी, डा. गुरांदित्ता जी, श्रीमती ईश्वरां देवी मैनी, बहिन भागवंती देवी जी ने १५×१२ का एक ५ कमरा बनवाने का वचन दिया है दाता सज्जन कृपया दान से इस समाज मन्दिर को पूर्ण करें।

ओम् प्रकाश खन्ना
प्रधान आर्यसमाज
कोटलीवाली

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(ले० श्री देसराज जी आर्य रोहतक)

प्यारे ऋषि ने अपना घर बार माता पिता तथा सुख को त्याग कर सच्चे शिव की तलाश में निकले। जब हम उनके कष्टों को याद करते हैं तो हृदय कांप उठता है। उन्होंने इस सोई हुई जाति को वेदों का संदेश दिया और वेद प्रचार में अपना जीवन तक न्यौछावर कर दिया। वे स्वयं बीज बन कर एक विशाल वृक्ष आर्यसमाज के रूप में संसार में छोड़ गए।

आर्य समाज ने ऋषि के वचनों को पूरा करने का बीड़ा उठाया वेद प्रचार की जिमेवारी समाज पर आ गई।

आज यह शब्द प्रातः सायं सुनाई देते हैं 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' परन्तु ऐसा दिखाई पड़ता है कि आजकल हम बातें करने में होशियार बन गये हैं परन्तु कार्य करने की शक्ति कम हो गई है। जब तक हम जो कुछ कहते हैं वैसा करते नहीं तब तक ऋषि कार्य पूरा नहीं हो सकता। हम पहले अपने जीवन को आर्य बनाएं और तत्पश्चात अपने बच्चों को आदर्श आर्य बनाएं। जो भी कार्य करें वह वेद उपदेश के अनुकूल हो उसके विरुद्ध न हो। सब से पहला काम तो यह है कि यदि हम अपने आपको आर्य कहते हैं तो अपने नाम के साथ आर्य शब्द का ही प्रयोग करें कोई और जाति न लिखें और अनार्य लोगों से रिश्ता नाता बिलकुल तोड़ दें। परन्तु आज हम आर्य कहते हुए भी जाति के जाल में फंसे हुए हैं। और अपने नाम के साथ जाति जैसे शर्मा, वर्मा, ढींगडा, चड्ढा आदि लिखते हैं। पिछले दिनों की बात है मेरे घर में एक अतिथि आए। बातचीत के बाद पूछने लगे कि आप की जाति क्या है। मैं उनके मुंह की ओर देखने लगा, कि आप का मतलब नहीं समझा तो वह कहने लगे कि हमारे घर में लड़के लड़कियां विवाह योग्य हैं यदि जाति भिन्न हो जाए तो आपस में रिश्ता आदि कर लें। तो मैंने उत्तर दिया हम तो आर्य हैं, तो कहने लगे कि आर्य तो हम हैं हां पर फिर भी कोई जाति तो होगी ही। इस प्रकार की भावना रखने वाले न स्वयं आर्य बन सकते हैं और न ही दूसरों को आर्य बना सकते हैं। मैंने ऐसे कई परिवार देखे हैं जो पक्के आर्य होते हुए भी अपने परिवार को अपने अनुकूल नहीं बना सकते (क्योंकि वह रिशते करते समय उनको यह ध्यान नहीं होता कि घर में आर्य बिचार और वैदिक धर्म को मानने वाली बहू आए बल्कि यह अधिक सोचा जाता है कि धन अधिक कहां से आता है और जात बिरादरी मिलती है या नहीं। अरे भाई यदि सारे ससार को आर्य बनाना है तो जाति मोह को छोड़ना होगा और आर्य परिवार को ही अपना परिवार मानना होगा। धन आदि के लालच को छोड़ कर यह सोचना होगा कि घर में आने वाली बहू वेदों की अनुयाई हो और वैदक धर्म पर श्रद्धा रखती हो ताकि आने वाली संतान आर्य बन सके। इस प्रकार हमारी कन्याएं भी अनार्य घर में जाकर दुख न उठाएं। जो भी कार्य करें यह भली प्रकार जान लें कि वेद इस कार्य की आज्ञा देता है या नहीं तभी हम सच्चे आर्य बन सकेंगे और संसार को ऋषि का सदेश सुना सकेंगे।

——

स्वास्थ्य चर्चा

परिधान और भोजन

(ले०—डा० धर्मदेव जी प्रधान आर्यसमाज धर्मसाला)

पानी और सफाई के बाद परिधान का प्रश्न आता है। आप का पहिरावा स्थान तथा मौसम के अनुकूल हो। कीमती परिधान की आवश्यकता नहीं अपितु हर अवस्था मे स्वच्छ परिधान चाहिए। रात की पोशाक सदा अलग होनी चाहिए और दिन भर काम काज करने के लिए दूसरे वस्त्र होने जरूरी है। आप घर में खद्दर की बुनियान बना कर और धोती का प्रयोग करके रात आराम से बिता सकते है। रंगीन वस्त्र सुन्दर प्रतीत होते हैं और दिल को खुश करते हैं। बच्चों को खुशरंग कपड़े बहुत भले प्रतीत होते हैं। स्त्रियां तो रंगीन वस्त्रों की बड़ी रुचि लेती हैं। स्वदेशी कपड़ों के प्रयोग से एक बड़ा लाभ यह है कि अपने देश के मजदूरों का पेट भरता है। उन को जीविका मिलती है। देश का रुपया देश में ही रहता है।

वायु जल के बाद भोजन का दर्जा आता है। दूध, फल, सब्ज़ी और दाल रोटी से बढ़ कर कोई और पदार्थ उत्तम नहीं है। दूध मनुष्य का पूर्ण आहार है। जिन बच्चों को आरम्भ में छः वर्ष तक दूध मिलता है। जहां उनका शरीर कुन्दन होता है, वहां वे तीव्र बुद्धि वाले एवं ऊंचे मस्तिष्क के सिद्ध होते हैं। इस के अतिरिक्त उनकी वाणी व बातचीत बहुत शुद्ध होती है। इसलिए बच्चों को छः मास तक अनाज नहीं देना चाहिए अपितु धीरे २ बच्चों को शहद का प्रयोग कराना उनके शरीर को बढ़ाना है। शहद अमृत है। यह बच्चों के पोषण में भारी सहायक बनता है। साथ ही रोगों से भी बचाता है। दूध और शहद के साथ २ बच्चों को ताजा व सूखे मेवे देने चाहिएं। संगवश, आम सब से अच्छे फल हैं। ये रक्त को शुद्ध करते हैं। संगतरा का छिलका चर्म को सुन्दर बनाता है। छिलके का मुरब्बा अत्यन्त लाभकारी है। जिस फल में जिस कदर स्वाभाविक रस होता, वह उसी प्रकार लाभप्रद है। ऐसी वस्तु जो हरी ही हरी है, वह सब्जी में गिनी जाती है। हर प्रकार का शाक बन्दगोभी के अतिरिक्त मटर, चने, लोबिया, माश, मूंग, मोठ अतीव पौष्टिक हैं। टमाटर बड़े लाभदायक हैं। अमीर लोग अधिक फल प्रयुक्त करते हैं तथा निर्धन मौसम की सब्जी अधिक प्रयोग में लाते हैं। इसलिए अनाज के साथ२ जब हम दूध, फल और सब्जी को अधिक मात्रा मे प्रयुक्त करते हैं तो हम स्वास्थ्य और दीर्घायु पाते हैं। सेब, आम, नाशपाती अर्थात मौसम का हर एक फल प्रयोग करना आवश्यक है। मूली, गाजर तिली जिगर के लिए लाभदायक हैं।

दाल एक बड़ी लाभकारी वस्तु है जिस में प्रोनेडिया नाइट्रोजन पर्याप्त मात्रा में होती है जो कि उष्णता का साधन है। माश की दाल में बड़ी शक्ति, है परन्तु सदा धीमी आग पर पकाना अधिक उपयोगी है। मोठ का प्रयोग अमरीका में दिन प्रतिदिन अधिक हो रहा है। प्रायः मूंग, माश, मोठ और अरहर की मिली दाल बीमारी के बाद बड़ी लाभप्रद सिद्ध होती है। दाल पर खर्च थोड़ा होता है, परन्तु इस से लाभ बहुत पहुंचता है। इस का यह अर्थ नहीं कि हम सब्जी और फलों का साथ२ प्रयोग न करें। खटाई स्वास्थ्य को बिगाड़ने वाली वस्तु है। इस का यथाशक्ति प्रयोग नहीं करना चाहिए। इस से वीर्य पतला हो जाता है तथा दुर्बलता उत्पन्न होती है, हाजमा खराब होता है। मिर्च मसाला से भी परहेज़ आवश्यक है। इन से परिणाम मे हानि होती है। भूख कम पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है।

देश विदेश

—देहली २५ जून—राष्ट्रपति ने भारतीय संविधान ७५ की धारा (२) के अन्तर्गत हाफिज़ मुहम्मद इब्राहीन और केशवदेव मालवीय का मंत्री पद से त्यागपत्र खेद पूर्वक स्वीकार कर लिया है।

—राष्ट्रपति डा. राधा कृष्णन ने मलागासी गण राज्य के राष्ट्रपति को उनके देश स्वतन्त्रता दिवस पर अपनी ओर से भारत सरकार तथा जनता की ओर हार्दिक बधाई भेजते हुए अपार खुशी मनाई है।

—भारत सरकार द्वारा संशोधित नियमों और शर्तों को मान लेने पर कलकत्ता स्टाक एक्सचेंज को वायदा व्यापार करने की अनुमति दे दी गई है। इसी आधार पर बम्बई, मद्रास, अहमदाबाद आदि नगरों को भी वायदा व्यापार करने की अनुमति दे चुकी है।

—सूचना और प्रसारण मंत्रालय के फिल्म डिविजन ने अपने चार वृत्त चित्र रोबिनबरा अन्तर राष्ट्रीय फिल्म समारोह के लिए भेजे हैं। यह समारोह १४ अगस्त से प्रथम सितम्बर ६३ तक चलेगा।

—राज्यों में प्रायः भाषाई अल्प संख्यकों को उनकी मातृ भाषा में प्राइमरी शिक्षा प्राप्त करने की सुविधाएं दी हैं।

संविधान अनुच्छेद ३१० (क) के अन्तर्गत भाषाई अल्पसंख्यक विद्यार्थियों को अपनी मातृभाषा में प्राइमरी शिक्षा पाने का अधिकार स्वीकार किया गया है बशर्ते कि सारे स्कूल में उस भाषा के बोलने वाले ४० और एक कक्षा में १० विद्यार्थी से कम नहीं होने चाहिये।

—खान-पान प्रबंध की शिक्षा देने के लिए भारत सरकार इसी सितम्बर से मद्रास और कलकत्ता में दो संस्थाएं खोल रही है। दो संस्थाएं एक देहली में और एक बम्बई में खोली जा चुकी है।

—१ मार्च १९६३ को चीन सरकार ने भारत चीन सीमा के अनेक स्थानों पर २६ चौकियां स्थापित करने की घोषणा की है इनमें ६ चौकियां वे भी हैं जो चीन ने विसैन्यीकृत किए जाने वाले इलाके में स्थापित की हैं।

—भूगर्भ शास्त्रियों की हाल की जांच के अनुसार भारत के पश्चिमी तट पर सब से अधिक खनिज लोहे के भण्डार महाराष्ट्र के रेडी क्षेत्र में हैं। भूगर्भ शास्त्रियों के कथनानुसार इस क्षेत्र में परीक्षण के लिए एक खान खोदी जाए ताकि भविष्य में विकास के लिए खनिज लोहे के संबन्ध में जानकारी प्राप्त हो सके।

—सहारनपुर में स्वीडन के कारीगरोंकी सहायता से कागज उद्योगिक स्कूल खोला जाएगा। स्वीडन सरकार इस स्कूल के लिए विदेशी मुद्रा का खर्च, विशेषज्ञ और साजसामान देगी। इसमें १८० से २०० तक शिक्षार्थी काम सीख सकेंगे।

—अनिवार्य बचत योजना में रुपया जमा कराने की सुविधा देने के लिए डाकखानों रिजर्व बैंक ओफ इण्डिया की ब्रांचों में काम को थोड़ा करने के लिए कई साधन बनाए हैं जिनकी घोषणा करदी गई है।

—भारतीय हस्पताल जो कांगो में भेजा गया था २८ जून ६३ को भारत वापिस आरहा है। भारतने यह हस्पताल कांगो भेजकर यू.एन.ओ की कार्रवाई में महत्व पूर्ण भाग दिया था।

डी० ए० वी० कालिज जालंधर का

B.A./BSc का शानदार नतीजा

सतीन्द्रसिंह पंजाब यूनिवर्सिटी की बी. ए. आनर्स इन हिस्ट्री की परीक्षा में २१० अंक प्राप्त करके सर्व प्रथम रहा।

—इस कालिज ने इस वर्ष बी. ए. की भिन्न-भिन्न विषयों की परीक्षा के लिए १३ छात्र भेजे जो कि स्टेट में सब से अधिक संख्या थी।

—चार छात्रों, कृष्ण मुरारी ने गणित में २९६ अङ्क, नरेन्द्र कुमार सूद ने एकोनामिकस में २२१ अङ्क, पवन कुमार ने पोलिटीकल साईंस में २१७ अङ्क तथा बलदेव आका ने हिस्ट्री में २०० अङ्क लेकर बी. ए. के भिन्न-भिन्न विषयों में अङ्क प्राप्त किए।

—कृष्ण मुरारी बी. ए. मैथिमैटिक में ५०० में से ३९१ अङ्क लेकर जालंधर जिला में प्रथम यूनिवर्सिटी में पांचवें दर्जे पर रहा।

—B. Sc. में R.S. बत्रा और H.L. भाटिया ने जिला में प्रथम और द्वितीय स्थान तथा यूनिवर्सिटी में छटा और आठवां स्थान ३५६, और ३५४ अङ्क प्राप्त किए।

—१४ छात्रों ने B.A./B.Sc की परीक्षा फिजिक्स डिंस्टक्शन के साथ पास की जो कि पंजाब के सभी कालिजों से अधिक है।

—इस कालिजका बी. ए. की परीक्षाका परिणाम ७०.७ रहा जबकि यूनिवर्सिटी का ४१.७ रहा। B.Sc का ६०.२ जब कि यूनिवर्सिटी का ४२.३ रहा।

वैदिक देवता-वाद

(पृष्ठ २ का शेष)

हो सकता। इन्द्र ने तो पृथ्वी को एक पसली से थामा है। देवता अमर हैं मनुष्य मरण-शील हैं। देवता कठोपनिषद् अनुसार देवलोक (अर्थात् स्वर्ग) में रहने वाले हैं अब मनुष्य पृथ्वी लोक में रहते हैं। देवता एक कन्नी उंगली से सब कुछ कर सकते हैं।

एक देवता के विशेषण दूसरे देवताओं में भी लग सकते हैं। और एक ही देवता के पर्याय शब्द अलग-अलग देवता हो सकते हैं जैसे सूर्य व सविता अलग देवता हैं।

५. कई बार देवता के विषय के अतिरिक्त और ही सामग्री होती है जैसे मण्डूक सूक्त, अन्त्येष्टि वस्तु का वर्णन नहीं।

६. देवताओं का सबसे सुन्दरतम स्वरूप अलंकारिक वर्णन है जो बहुत पसन्द है। स्वामी दयानन्द जी तो देवताओं का अलंकारिक वर्णन ही मानते हैं। अरविंद महोदय नैरुक्तकार वा पाश्चात्य भी इस प्रतीकात्मक स्वरूप को स्वीकार करते हैं। बालगंगाधर इन्द्र-वृत्र युद्ध का प्रतीक मानते हैं। इस प्रतीकवाद की छड़ी से वेदों के सम्बन्ध में सभी ऊल जलूल भ्रांतियों का निराकरण हो सकता है।

७. देवताओं का महत्व नैतिकता की अपेक्षा शक्तिशाली की दृष्टि से ज्यादा है।

निष्कर्ष यही है कि देवताओं को अलग करने वाली इन्हीं-गिनी ही विशेषताएं हैं।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धरसे मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे | वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अक २८) रविवार ३० आषाढ २०२० — १४ जुलाई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ । तार-दैनिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

गोरजिं वाचमुदेयम्

मैं ऐसी वाणी बोलूं जो गौ से प्रभु भक्ति के भावों से सनी हुई हो। ज्ञान से पूर्ण हो तथा सब के साथ प्रीति की भावना से भरपूर हो। कड़वी, भक्ति हीन वाणी न हो।

वर्चसा माभ्युदिहि

हे पितः! आप मुझको वर्चसा-तेज से वर्चस् बल शक्ति से भर दीजिए, उन्नत कर देवें। मैं निर्बल होकर न जीवन बिताऊं। वर्चस्वी, तेजस्वी बनकर रहूं।

आरुन्धां सर्वतः

वह परमेश्वर मुझे सब ओर से सब प्रकार के पाप मार्गों, बुराई के कारणों से रोक देवे। मेरी सब ओर से रक्षा करे। जहां से गिरने की सम्भावना हो वहां से मुझे बचाता रहे।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

शं नो वातः पवतां शं नस्तपतु सूर्यः।
शं नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र १०

अर्थ—(शं नः) हमें सुखदायक होवे यह (वातः) वायु (पवतां) चलती रहे, बहती रहे और (शं नः) हमारे लिए यह (तपतु) तपता रहे, प्रकाश देता रहे, (सूर्यः) सूर्य तथा (शं नः) हमें मंगलदायक हो यह (कनिक्रदत्) गर्जने वाला (देवः) दिव्य गुणों, तत्वों जल, विद्युत रस आदि से भरा हुआ (पर्जन्य) मेघ (अभिवर्षतु) चारों ओर हम पर रस जल की वर्षा करता रहे। मेघ हम पर अमृत के समान मीठा, शीतल जल की समय २ पर वर्षा बरसाता रहे।

भाव—प्रभो! जिस वायु से हम जीवन पाते हैं, प्राण वायु बन कर हमें स्वस्थ रखती है—ऐसी यह वायु शुद्ध पवित्र होकर चलती रहे। मन्द मन्द मर्यादा में बहती हुई हमें शान्तिदायक हो। आंधी तूफान बन हमारी हानि न करे। यह सूर्य हमें सदा ज्योति देता रहे। हम भी वायु व सूर्य के समान दूसरों को जीवन तथा ज्योति देने वाले बनें। परमेश्वर! यह आकाश में गर्जने वाला मेघमण्डल धरती की प्यास तथा सन्ताप मिटा कर अपनी मीठी, शीतल तथा अमृतभरी वर्षा से हरी भरी करके जीवन देने वाला हो। जब २ आवश्यकता हो तब २ यह मेघ वर्षा से तृप्त करता रहे। अनावृष्टि और अतिवृष्टि करके धरती तथा इस के सारे जीवों के जीवन की कभी हानि न पहुंचावे। समय २ पर वर्षा से हमें जीवन, अन्न, धन प्राप्त होता रहे—सं०

ऋषि दर्शन

मनो मनन शीलम्

मेरा मन सदा मनन करने वाला हो। मैं जो भी सुनूं, देखूं तथा ग्रहण करूं उसे सदा मनन करता रहूं। उस पर विचार करके आचरण में धारण करता रहूं।

इष्टधर्मशुभगुण प्रियम्

और यह मेरा मन पवित्र धर्म तथा शुभ गुणों से भरा हुआ होवे। उत्तम कार्यों को करने वाला, प्रशंसित विचारों को धारण करने वाला हो।

न विष्णुरीश्वरः

वह विष्णु ईश्वर ही है। ईश्वर को विष्णु कहा जाता है क्योंकि वह सारे जगत् में व्यापक हो रहा है। विष्णु ईश्वर व ईश्वर विष्णु है

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा।

अध्यात्मवाद

परा और अपरा विद्या

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती महाराज)

अध्यात्मवाद अमृत है, बड़ा ही मीठा प्रसाद है, अनुपम रस है। जो पीता है वही इसका रस जानता है। पूज्य महात्मा जी इस परम रस को स्वयं भी पीते हैं और दूसरों को भी पिलाते रहते हैं। आर्यजगत् के प्रेमी भाई बहिनें इस रस का आस्वादन करें—सं०

सम्यक् ज्ञान यह है कि अपने आपको शरीर समझना बन्द करो। आत्मा का ज्ञान प्राप्त करो। संसार का ज्ञान भी प्राप्त करो, मैं इस का विरोध नहीं करता। वेद भी इस का विरोध नहीं करता। उपनिषद् भी नहीं करता। शौनक ऋषि गये महर्षि अंगिरा के पास बोले— महाराज! मैं वह ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूं, जिसे प्राप्त करने के पश्चात कुछ भी जानना शेष न रहे। तो महर्षि अंगिरा ने उन्हें कहा—आप पर और अपर विद्या को प्राप्त कीजिये। पर विद्या का अर्थ है आध्यात्मिक ज्ञान और अपर विद्या का अर्थ है भौतिक ज्ञान। दोनों को साथ २ चलाओं तब कल्याण होता है। आज का विज्ञान यदि मनुष्य को सच्ची शांति देने में असफल हुआ है तो क्यों? इसलिए कि उसने पर विद्या को भुला दिया। केवल अपर को ओर ध्यान दिया। पर और अपर को वेद भगवान और उपनिषदों ने विद्या और अविद्या का नाम भी दिया है। सम्भव और विनाश का नाम भी दिया है, तथा उपनिषद् ने इन सब बातों का बहुत सुन्दर वर्णन भी किया है।

ईशोपनिषद् यजुर्वेद का चालीसवां सबसे अन्तिम अध्याय है। इस लिए इस ज्ञान को वेदान्त ज्ञान भी कहते

लिए इस ज्ञानको वेदान्त ज्ञान भी कहते

हैं अर्थात् ऐसा ज्ञान जो वेद के अन्त में आता है। इस उपनिषद् में अथवा यजुर्वेद के इस अन्तिम अध्याय में विद्या और अविद्या का वर्णन है। इसी पर और अपर को अथवा विद्या अविद्या को सम्भूति अथवा सम्भव तथा विनाश का नाम भी दिया गया है। विचित्र कौतुक है यह। विद्या और अविद्या के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते हैं कि जो कुछ होता है वह विद्या से होता है, कुछ लोग कहते हैं अविद्या से। दोनों बहुत विद्वान् हैं, दोनों बहुत उपदेशक। इसी प्रकार सम्भूति या सम्भव और विनाश के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते हैं कि जो कुछ होता है वह सम्भूति या सम्भव से होता है। दूसरे लोग कहते हैं कि जो कुछ होता है वह असम्भूति या विनाश से होता है। दोनों में बहुत विद्वान् हैं। दोनों में बड़े उपदेशक।

तब मनुष्य करे क्या? पर को अपनाये या अपर को? विद्या के मार्ग पर चले या अविद्या के मार्ग पर। सम्भूती की ओर बढे या विनाश की ओर बढे। वेद साफ और सीधे शब्दों में इसका उत्तर देता है। सुन! यदि तू अपना कल्याण चाहता है तो विद्या और अविद्या दोनों को जान। अविद्या से तू मृत्यु को पार लेगा, इस जीवन को सुख से बिता लेगा। विद्या से तुझे वह अमृत मिलेगा जिसके पश्चात् जन्म और मृत्यु का संकट समाप्त हो जाता है। सम्भूति और विनाश दोनों को जान। विनाश अर्थात् भौतिक ज्ञान से तू मृत्यु को तर जायेगा, अपने जीवन को सुखी बना लेगा और सम्भूति आध्यात्मिक ज्ञान से अमृत

संभूति आध्यात्मिक ज्ञान से अमृत

को प्राप्त करेगा, जिस के पश्चात् आवा गमन से छुटकारा मिल जाता है। यह है वह बात जो महर्षि अंगिरा ने शौनक ऋषि को कही कि पर और ऊपर दोनों विद्याओं को प्राप्त कर। इन्हें प्राप्त करने के पश्चात् तुझे और कुछ जानना शेष नहीं रहेगा।

यह थी सम्यक् ज्ञान की बात। उसके बाद ब्रह्मचर्य—सदा का ब्रह्मचर्य। परन्तु यह सदा का ब्रह्मचर्य क्या हुआ। इसी का सीधा अर्थ है कि किसी भी समय अपने मन में खोटे विचार न आने दो। सदा उत्तम विचार मन में लाओ। इस का दूसरा अर्थ है ब्रह्म में विचरो अर्थात् यह अनुभव करो कि तुम्हारे ऊपर नीचे, आगे पीछे दाएं-बाएं सब ओर वह ईश्वर है। सदा तुम उस की गोद में हो, जैसे बच्चा कोई बुरी बात नहीं करता, वैसे ही कोई बात न करो। यह है ब्रह्मचर्य। जिस लक्ष्य तक पहुंचना है, वहां किसी त्रुटि, किसी न्यूनता, किसी दुरित को लेकर तो पहुंच नहीं सकते।

नायमात्मा बलहीनेन लभ्य :— यह आत्मा निर्बल व्यक्ति को मिलता नहीं। जिस में त्रुटि है, बुराई है, उसको इसके दर्शन नहीं होते। अतः प्रत्येक त्रुटि और बुराई को दूर करना होगा।

चित्त के दोष हैं तीन मल-विक्षेप और आवरण। तीनों को दूर करने के पश्चात ही चित्त में उस आत्मा के दर्शन होते हैं। शीशे पर धूल की परत चढ़ी हो, मैल लगा हो, वह हिल रहा हो, तब क्या उस में अपना मुख आप देख सकते हैं?

आर्यसमाज लारेंस रोड़ अमृतसर

अमृतसर नगर के आर्यसमाजों के समाज मालवीय पथ का यह आर्यसमाज भी एक विशिष्ठ स्थान रखता है। सड़क के किनारे इसका बना हुआ विशाल, भव्य मन्दिर देखकर मन बड़ा ही प्रसन्न होता है। कितना भारी भवन, कितना शानदार हाल है। मन्दिर में सब प्रकार आधुनिक काल की सुविधाएं हैं। जैसा सम्पन्न यह उपनगर है और जैसी-जैसी शानदार कोठियों में सम्पन्न सुपठित परिवार रहते हैं, वैसा यह मन्दिर भी है। प्रसन्नता है। विशेषता यह है कि यहां प्रातः काल दैनिक रूप से सत्संग वर्षों से जारी है। सन्ध्या-हवन से कार्य आरम्भ होकर भजन व कथा चलती है। यहां गम्भीर स्वाध्याय-शील नर-नारी है उपनिषदों, दर्शनों की कथाएं चलती हैं। सायं को कम्पनी बाग में भी दैनिक सत्संग चलता है। दोनों समय काफी उपस्थिति होती है।

गत १८ जून से लेकर ७ जुलाई तक २० दिन प्रातः साय समाज मन्दिर तथा बाग में श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री आर्यप्रादेशिक सभा जालन्धर की कथा जारी रही। प्रातः योगदर्शन की तथा शामको गीता की। साथ-साथ सभा के ही भजनोपदेशक श्री पं. हजारी लाल जी के तथा बहिन भाग्यवती जी व्यासाश्रमसप्त सरोवर हरिद्वार के भजन भी हुए। बहिनों और सज्जनों की धर्मरुचि, श्रद्धा तथा गम्भीर स्वाध्याय देखकर प्रसन्ता हुई।

समाज के मान्य अधिकारियों का यह सुन्दर प्रबन्ध तथा सारे परिवारों की आस्था प्रशंसनीय है।

ादकीय—

आर्य जगत्

२३]रविवार ३० आषाढ़ २०२०, १४ जुलाई १९६३[अंक२८

आगे ही आगे

आर्य समाज का विशाल न्दोलन प्रत्येक क्षेत्र एवं कार्य में । वर्तमान काल में भी भीषण परिस्थितियों, भारी बाधाओं और साधनों के अभाव में भी अपनी परम्परागत विशेषता को स्थिर रखे हुए हैं। राष्ट्र का समूचा जन-समाज भी समाज को इसी रूप में मानता वे इसी भावना से इसको बड़ा महत्व देकर श्रद्धा-पूर्वक सम्मान करता है। आज के देवा सुरसंग्राम में अर्जुन बने हुए मानव समाज के रथ का सारथी बनकर उसे उचित सन्देश देकर उसको कर्तव्य पथ पर चलाये जा रहा है। समाज सुधार के महान् कार्य हों या परोपकार सेवा का मिशन हो, नारि जाति के उत्थान का आन्दोलन हो अथवा जन जागरण हो, संस्कृति की भक्ति हो या कुरीतियों का निवारण कार्य हो, धर्म प्रचार हो या शिक्षा का प्रसार हो—हर मैदान में आर्यसमाज आगे ही आगे बढ़ता जाता है यह बात बड़े सम्मान की है।

प्रचार कार्य के साथ २ आर्यसमा ज के पास विद्या देने की बड़ी-बड़ी शिक्षण संस्थाएं हैं, जिन में नहीं वरन् हजारों छात्र-. शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं । ी है और ऊंचे २ कालेज । बड़ी भारी छावनियां हैं े ऐसे शिक्षा सम्पन्न वीर लड़के और लड़कियां सुशि-ोकर निकलते हैं जो देशतथा स्थानों पर फैले हुए अज्ञान मानव समाज के शत्रुओं से लेकर विद्या के प्रकाश से ा के अंधकार को मार भगाते ार्यसमाज की इन शिक्षण ओं में सब प्रकारका प्रबन्ध इतना सुन्दर, प्रशंसनीय, व्यवस्थित और इतन उत्तम है, जिसकी प्रशंसा अपने और पराये दोनों मिल कर करते हैं। आर्यसमाज की विचारधारा से लोगों को थोड़ा बहुत मतभेद होने हुए भी इस की संस्थाओं के आदर्श, पवित्र वातावरण, कार्यकर्ताओं के जीवन व सुन्दर पढ़ाई प्रबन्ध को देखकर सारे परिवार अपने बच्चे-बच्चियों को आरम्भ से ही इन्हीं संस्थाओं में प्रविष्ट कराते हैं। समाज की अपनी इन संस्थाओं में छात्र छात्राओं की इतनी भीड़ होती है कि स्थान के अभाव के कारण कभी २ विवशता हो जाती है। इन संस्थानों के लिए जनता का प्रेम इस बात का परिचय देता है कि आर्यसमाज के अनुशासन में चलने वाले यह शिक्षण सस्थान कितने उच्चकोटि के हैं। तभी तो सारी जनता खिंचती आती है। आर्यसमाज के लिए यह बात बड़े ही गौरव की है। हमें अभिमान है कि हमारी संस्थाओं में आज तक कोई ऐसी बात नहीं हुई जिस के लिये हमें कभी सिर नीचे करना पड़ा हो। आचार विचार तथा सद्व्यवहार में इन शिक्षण स्थानों के सुप्रबन्ध के नाते हमारा मस्तक ऊंचा रहा है और रहेगा इस का कारण यह है कि इनकी प्रबन्धक कमेटियां व उन में कार्य करने वाले तथा इन शिक्षा मन्दिरों में बैठ कर सेवा कार्य में लगे हुए मान्य सज्जन जीवन में इतने ऊंचे, मजे हुए, योग्य और चुने हुए हैं, जिन पर सारे समाज को मान है। उनके सामने केवल सर्विस का भाव नहीं, पैसा कमाने की कमना नहीं, दिन गुजारने का विचार नहीं, अपितु एक विशिष्ट लक्ष्य, व्रत, दीक्षा, निष्ठा व प्रयोजन है, जिस से प्रेरित होकर मौन हो कर इस विश्वसेवा के महाव्रत को ले कर साधना में लगे हुए हैं। इन में से कितने तो ऐसे हैं जिन के चरणों में बैठ कर न जाने कितने छात्र छात्राओं ने उन के जीवन आदर्श से अपने जीवन को बनाया है। अग्नि से अग्नि प्रदीप्त, समिधा से समिधा, ज्योति से ज्योति जली है। ऐसी दिव्य विभूतियों को जितना भी नमस्कार किया जाये, थोड़ा है। आर्य समाज के ये महाधन हैं जिन से समाज का भण्डार माला माल है। ऐसे आदर्श त्यागी तपस्वियों को प्रणाम है।

आर्य समाज की ये संस्थाएं सदा की भान्ति इस वार भी पंजाब युनिवर्सिटी की वार्षिक नाना विध परीक्षाओं में बड़े शानदार ढंगसे आगे ही आगे हैं। अपनी परम्परा को स्थिर रखा हुआ है। इस के लिए हम अपनी संस्थाओं के सारे प्रबन्धकों कमेटियों के सहयोगियों व अन्दर कार्य करने वाले सारे शिक्षकों को बहुत २ बधाई देते हैं। गत वर्ष की भान्ति इस वार भी डी. ए. वी. परिवार ने कमाल कर दिया है, धूम मचा दो है। डी. ए. वी. स्कूल और डी.ए.वी. कालेज जालन्धर, अमृतसर तथा अन्य नगरों की हमारी संस्थाओं ने सब से आगे रह कर अपने डी.ए.वी आन्दोलन का मस्तक ऊंचा किया है। हम अपने सारे मान्य प्रिंसिपलों, मुख्याध्यापकों तथा कार्यकर्ताओं को हार्दिक बधाई दे कर कहना चाहते हैं कि यह परम्परा कायम रहे। हर क्षेत्र में अपनी ये छावनियां आगे ही आगे रह कर सार थी बनी रहें—हमारे सामने सदा चरैवेति चरैवेति—आगे बढ़ो आगे बढ़ो—ये शब्द गूंजते रहें—आगे ही आगे —त्रिलोक चन्द्र

मंगलवार और मांस

पंजाब सरकार ने अभी २ घोषणा की है कि सारे पंजाब में मंगलवार को किसी प्रकार का भी पशु न मारा जा सकेगा तथा मांस का प्रयोग बन्द रहेगा। हम इस घोषणा का स्वागत करते हुए इतना और कहना चाहते हैं कि सरकार ने इस ओर यह पग उठा लिया तो इसे पीछे न हटाना होगा अपितु अब आगे ही आगे उठाने का बीड़ा उठाये। हम तो यह चाहते हैं कि केवल एक मंगलवार ही क्यों पशु हत्या बन्द हो, सारे दिन ही मंगलवार बन जाए। मांस का प्रयोग सर्वथा ही निषिद्ध हो जाये। अशोक स्तम्भ को अपना प्रतीक बनाने वाली भारत सरकार क्यों न अशोक के स्तम्भ के साथ २ उस प्रजा और देवानां प्रिय अशोक के समय का ऐसा भारत बनाती, जिसमें सारे देश में मांस का काम समाप्त हो जाये। पंजाब सरकार से यह भी कहना है कि स्कूली बच्चों को अण्डा देने के अपने निर्णय को भी वापिस लेकर उसके स्थान पर सब को दूध ही दिया जाए।

विषमकाल व शराब

पंजाब सरकार के एक मुख्य नेता ने अभी २ पंजाब की जनतासे कहा कि शराब पीना कम करो और बन्द करो। कम से कम इतना तो लोग करलें कि जब तक चीन के साथ विषम परिस्थिति का समय है, तब तक तो शराब पीना छोड़ दें। उत्तम सुझाव है। सरकारी ठेके स्थान २ चलते हों तो शराब पीना कौन छोड़ देगा? पंजाब सारे देश में पहल करे और शराब के ठेके सर्वथा बन्द कर के सारे प्रान्त में बन्द कर देवे—सं.

जीवन का सौंदर्य

(ले०—श्री लालचन्द्र जी भूतपूर्व फिनांशल औफीसर शिमला)

दृढ़ता से यह निश्चय करना परम आवश्यक है कि हम से पहले समय में जो अनुचित कार्य हो चुका, हम आगे कभी भी ऐसा न करेंगे; ऐसा दृढ़ संकल्प, ऐसा पक्का निश्चय, मनुष्य में विचित्र आत्म-बल उत्पन्न करने में समर्थ है। मनुष्य स्वयं अपना भाग्य विधाता है मनुष्य ने स्वयं अपनी स्थिरता तथा दृढ़ता से प्रगति करनी है निरन्तर आगे ही आगे बढ़ना है और भगवान को ही जीवन का उद्देश्य तथा उसी परम उपास्यदेव को ही जीवन का आदर्श समझ कर उसी सर्वश्रेष्ठ भगवान के परम दिव्य गुण धारण करके दिव्यजन बनना है। दिव्यजन ही देव है, वही आर्य हैं, क्योंकि उसने अर्थ भगवान के दिव्य गुण धारण किये हैं। दिव्यगुण धारण करना भगवान की उपासना के लिये भगवान का निकटवर्ती, भगवान का समीप्य पाने वाले उपासक बनने के लिए नितांत आवश्यक है, अनिवार्य है।

हमारी वैदिक संध्या पद्धति जिस का संकलन ऋषिवर श्री महा-मान्यवर पूज्यवर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने विश्व के मानवों के परम कल्याण के लिये किया है जीवन को सशक्त, स्वस्थ, और जीवन में सौंदर्य लाने में सब से अधिक उपयोगी अनुभव में आई है। इस संध्योपासना विधि से मनुष्य भगवान का उपासक सम्यक रीति से हो जाता है और वह भगवान की अत्यन्त निकटता तथा अभिन्न का निरन्तर का साथ अनुभव करता हुआ दीर्घ आयु पाता है और दिनों दिन अधिका-अधिक निरोग और स्वस्थ, अपना सुलक्ष बढ़ाता हुआ भगवान का प्रेम पात्र बन जाता है।

इस प्रकार भगवान का उपासक, भगवान का सखा हो जाता है वह अनुभव करता है कि भगवान उस के अपने हृदय मे उसके अपने साथ ही वास कर रहे हैं, और इसी प्रकार सभी प्राणियों में बस रहे हैं। ऐसा अनुभव करता हुआ भगवान का उपासक किसी से घृणा नहीं करता हुआ, अन्यजनों की उन्नति मे ईर्ष्या नहीं करता हुआ, आपस में द्वेष नहीं बढ़ाता, और राग द्वेष से अलग रहता हुआ, प्रभावशाली आकर्षक जीवन व्यवहार करता हुआ अपना विकास करता रहता है। उस में संकोच, हीनता, असमंजस, संशय, सन्देह, भ्रान्ति, द्विविधा, आदि दोष नहीं रहते, और वह निर्भीक और अभय रहता हुआ न केवल अपने जीवन का विकास करता है अपितु सब के जीवन पर अपना प्रभाव डालता है और गृहस्थ में शान्त रहता हुआ गृहस्थ में इसी भू पर स्वर्ग लाता हुआ स्वर्ग में,परम सुख में जीवन का विकास करता है। यही आर्यत्व है यही देवत्व है। ऐसा नर पुंगव श्रेष्ठ व्यक्ति है वह आर्य है, आर्य भगवान का अमृत पुत्र है उस में परम पिता परमात्मा के दिव्य गुण चरितार्थ हो रहे हैं वह आर्य है ऐसे सदाचारी लोगों का संगठन आर्य समाज है। यह आर्य समाज विश्व भर के मानवों के परमहित के लिए, परम कल्याण के लिये ही है। यह संगठन साम्प्रदायिक नहीं है इस का दृष्टिकोण व्यापक है यही है जीवन का सौन्दर्य।

हम कभी भी दुरितों में नहीं फंसेंगे, सदा पवित्र रहेंगे, पवित्रता फैलाएंगे, यह है व्रत एक आर्य का। हम भगवान के व्रत मे व्रती रहेंगे। भगवान का व्रत है उपकार करना। हम भगवान आर्य के सुपुत्र अमृत पुत्र और पुत्रियां आर्य रहेंगे, श्रेष्ठ रहेंगे, अपनी जीवनचर्या प्रभावशाली रखेंगे। हम सत्य प्रेम और आनन्द का अपने जीवन द्वारा प्रसार करते रहेंगे। हम वृथा जल्प नहीं करेंगे, वाद विवाद नहीं करेंगे, वैमनस्य नहीं बढ़ाएंगे आपस मे स्नेह बढ़ाएंगे, भगवान के सब में वास करने के नाते हम सभी को अपनाएंगे, सभी को अपने हृदय से लगाएंगे, इस प्रकार हम आर्य रहेंगे और आर्यत्व फैलाएंगे, यह होना चाहिये आर्यसमाज का रच-नात्मक कार्य।

इस कार्य को भगवान का उपा-सक रहने से ही आर्य जन कर सकेंगे। हमारे वेद भगवान ने संवाद करने का शुभ संगति करने का मिलने का मिले हुए रहने का और परस्पर सहयोग से जीवन से जीवन के विकास करने का आदेश दिया है आर्यजन अर्थ भगवान के अमृत पुत्र और पुत्रियें उस आदेश को जीवन भर प्राणपन से, पूरी लग्न से, पूरा निभाएंगी, यह है भगवान के व्रत में व्रती रहना। हम पूषण भगवान का अनुकरण करते हुए, हम अपनी शक्ति भर उपकार करते हुए भगवत जीवन बनाएंगे, भगवान के रहेंगे, और सब को भगवान का प्रिय उपा-सक बनाने में ही अपना गौरव समझेंगे यह है आर्य की प्रतिज्ञा, इस प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिए पुरुषार्थी यत्नशील मानव की भगवान अवश्य सहायता करते हैं, यह है जीवन का सौंदर्य। इस में आकर्षण है सौरभ है विचित्र सुगन्धि है जो सभी मनुष्यों को अपनी ओर खींचती है।

आर्य समाज माधव नगर उज्जैन में वेद प्रचार की धूम

पंजाब के प्रसिद्ध प्रचारक श्री पं० नन्द लाल जी वैदिक मिश्नरी मध्य प्रदेश के धार तथा रतलाम के उत्सवों पर पधारे। हमारी विशेष प्रार्थना पर पं० जी ने हमारी समाज में प्रचार करना स्वीकार कर लिया जहां प्रातः काल पं० जी का अध्यात्म प्रवचन होता था वहां रात्री को बहुत बड़ी उपस्थिति में प्रचार कार्य होता था।

चन्द्र प्रकाश मन्त्री

आर्य समाज कालिज विभाग नाभा का चुनाव

प्रधान—श्री शिव राम जी बत्रा,

उप प्रधान—श्री प्यारे लाल जी हैडमास्टर आर्य हाई स्कूल नाभा

मंत्री—श्री मा. परमानंद जी आर्य हाई स्कूल

उपमंत्री—श्री तरसेम लाल जी

कोषाध्यक्ष—श्री राधाकृष्ण जी

पुस्तकाध्यक्ष—श्री रघुवर दयाल जी

मंत्री समाज

आर्य समाज पुल बंगश देहली में यज्ञ वेद कथा

महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने ११-१२-१४-१५ जौलाई को प्रातः चारों वेद शतकों से बृहद् यज्ञ और रात्रि को वेद कथा करना स्वीकार कर लिया है धर्म प्रेमी सज्जन लाभ उठावें।

पं० गणेशदत्त जी पुरोहित आर्य समाज ने गत मास में १६ संस्कार वैदिक रीति से कराए।

पं० जी की सेवा लग्न को देख कर आर्य युवक परिषद दिल्ली ने सर्व सम्मति से सीनियर उपप्रधान चुन लिया है।

विश्व शान्ति का मार्ग

(ले० कुमारी सुदेश सैनी करनाल)

आधुनिक युग को विज्ञान का युग कहा जाता है। वस्तुतः इसे विज्ञान का युग न कह कर यदि अशांतमय, कोलाहल-पूर्ण वातावरण का युग कहा जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी। वैज्ञानिक कार्यों को सम्मुख रख कर यह कहा जाता है कि मानव ने प्रकृति पर विजय पा ली है। वास्तव में बात इस के विपरीत है, वह उसका दास बनता जा रहा है। यदि वह उसका विजेता होता तो आज मानव-संसार की यह (अशान्तमय) अवस्था न होती। यद्यपि आज वह वायु-मण्डल में उड़ सकता है और समुद्र की लहरों से भी टक्कर ले सकता है, तथापि उसे यह ज्ञान ही नहीं कि पृथ्वी पर कैसे रहना है। यही ज्ञानाभाव आज के अशांतमय वातावरण का कारण है।

इस अशांति का निवारण हम कैसे कर सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर हमें 'वेद' देता है। उस में लिखा है कि शांति का मूल स्रोत और शांति-प्रदाता एक ईश्वर ही है। अतः सब नर-नारियों को 'उस परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए। आज हम नास्तिकता की ओर अग्रसर हुए जा रहे हैं। हम ने परम-पिता परमेश्वर को विस्मृत कर दिया है। यही कारण है कि हम दूसरों पर अत्याचार करने से नहीं चूकते। एक बलवान आदमी निर्बल की सहायता करने के स्थान पर उसके स्वत्व को छीनने का प्रयत्न करता है। परन्तु हमें तो वेद ने आदेश दिया है कि "मा गृधः कस्य स्विद्धनम्" अर्थात् किसी के धन का लालच मत कर, किसी के स्वत्व को मत छीन।

अशांति का मूल कारण किसी व्यक्ति, जाति व राष्ट्र का स्वत्व-हरण ही हुआ करता है। परन्तु आज हम इसी पथ का अनुसरण कर रहे हैं। क्योंकि हम ने वेदों की ओर से मुख मोड़ा हुआ है। यदि चीन ने वेदों का अध्ययन किया होता तो आज वह भारत की स्वतन्त्रता पर आघात करने की चेष्टा न करता। यदि रूस और अमरीका ने वेद रूपी सागर में गोता लगाया होता तो उनके एक दूसरे के प्रति इस प्रकार के वैमनस्य युक्त भाव न होते।

विश्व में शान्ति की स्थापना के लिए हमें अपने सामाजिक जीवन को उन्नत करना पड़ेगा। क्योंकि संसार रूपी भवन का समाज ही मूल है। जब हमारा सामाजिक जीवन ऊंचा उठ जाएगा, उस में किसी प्रकार का अशान्ति का चिह्न न रहेगा तो सम्पूर्ण मानव जीवन भी शान्तमय हो जाएगा। अपने सामाजिक जीवन को ऊंचा उठाने के लिए 'वेद' ने हमें कितना सुन्दर उपदेश दिया है कि—

ओ३म् संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥

ऋ० १०।१९१।२

हे मनुष्यो! तुम सब मिल कर चलो। परस्पर प्रेम से अच्छी प्रकार बातचीत करो, तुम्हारे मन एक ज्ञान वाले हों। जैसे उत्तम ज्ञान से युक्त अनुभवी पूर्ण विद्वान् अपने कर्त्तव्य भाग का अच्छी प्रकार पालन करते हैं वैसे तुम भी करो।

इस मन्त्र के प्रथम भाग में सामाजिक उन्नति के लिए तीन बातें बताई गई हैं – मिल कर खेलो मिलकर बोलो और सभी के मन एक ज्ञान वाले हों। आधुनिक युग के निर्माता, वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् महर्षि दयानन्द जी ने भी हमें राष्ट्रीय उन्नति के लिए तीन बातें बताई थीं—एक लक्ष्य, एक भाषा, एक धर्म। इस वेद मन्त्र में हमें भगवान उपदेश देते हैं कि ऐ सांसारिक मनुष्यो! तुम सब मिल कर चलो। मिल कर हम तभी चलेंगे जब हमारा एक लक्ष्य होगा। उस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए हमें एक दूसरे के कदम के साथ कदम रख कर चलना होगा। जब तक हम ऐसा नहीं करेंगे, हमारी किसी प्रकार की भी उन्नति होना असम्भव है। आज मानव समाज दो दलों में विभक्त है, एक धनवान वर्ग दूसरा निर्धन। जो सबल है वह निर्बल को अपना ग्रास बना रहा है। हमें तो वेद ने आदेश दिया है कि 'संगच्छध्वं' परन्तु हम इसके विपरीत चल रहे हैं। हमारा जो लक्ष्य है, समाज की उन्नति, उस तक पहुंचने के लिए तो हमें इस ऊंच नीच के भेदभाव को मिटाकर सभी को एक समान बनाना होगा ताकि हम अपनी मंजिल पर पहुंच सकें।

दूसरी बात हमें वेद ने कही— 'संवदध्वम्' मिल कर परस्पर प्रेम से बातचीत करने के लिए सर्वप्रथम तो समानता की आवश्यकता है। जिसका आदेश वेद ने इस मन्त्र के आरम्भ में ही दे दिया। इसके लिए एक भाषा का होना भी आवश्यक है, जिसके माध्यम से हम अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकें। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से 'संस्कृत' ही पद पर आसीन होने के योग्य है। आगे वेद ने कहा—'सम वो मनांसि जानताम्' अर्थात् तुम्हारे सब के मन एक जैसे हों। सभी के मन एक ज्ञान वाले तभी होंगे जबकि सभी का धर्म होगा वस्तुतः सभी मनुष्यों का धर्म तो एक ही है परन्तु आज हम धर्म के उस वास्तविक रूप को जिसका प्रतिपादन वेद करते हैं, तिलांजलि देकर उसके कृत्रिम रूप, मतमतान्तरों के जाल में फंसे हुए हैं। जब धर्मरूप सूर्य की ज्ञान रूपी रश्मियां सभी के हृदय-पटलों पर समान रूपसे पड़ेंगी तो हमारे अज्ञानान्धकार का नाश हो कर ज्ञान रूप प्रकाश का प्रादुर्भाव होगा।

मन्त्रके द्वितीय भाग में भगवान ने उपदेश दिया है कि अपने कर्तव्य-भाग का अच्छी तरह पालन करो जैसा कि पूर्ण विद्वान लोग करते हैं। कर्तव्य पालन की भावना होनी चाहिए और साथ २ आत्मिक और मानसिक बल भी अनिवार्य हैं। जिनको आधुनिक विज्ञान प्रदान नहीं कर सकता। आधुनिक विज्ञान चाहे मानव को भौतिक उच्चता के आसन पर आसीन कर दे परन्तु वह उसे मानसिक उदारता से वंचित रखता है। यही कारण है कि हम उन्नति करते हुएभी देवत्व की ओर नहीं जा रहे बल्कि असुरत्व को प्राप्त हो रहे हैं।

इस प्रकार का मूल्य उपदेश हम वेदों से ही प्राप्त कर सकते हैं। विश्वशान्ति के लिए अथर्ववेद का निम्नांकित उपदेश भी अनिवार्य है:—

'जीवाख्य जीव्यासम'॥अ.-१६-६६-१॥ अर्थात् जीओ और जीने दो।

अतः विश्वशान्ति की स्थापना के लिए हमें वेद के बताए हुए मार्ग पर चलना पड़ेगा। एक न एक दिन विज्ञानवाद भी चिल्ला २ कर कहेगा कि अध्यात्म-उन्नति बिना केवल भौतिक-उन्नति से कुछ नहीं बन सकता। उपनिषद् में लिखा है:— 'यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति, भूमात्वेव विजिज्ञासितव्यः' ॥

अर्थात् यदि सुख की भावना करते हो तो सर्वोपरि परमेश्वर को जानों क्योंकि वह महान् है सुख, शान्ति का स्रोत है॥

वेद प्रचार कैसे हो ?

दिल्ली के पत्र 'आर्योदय' में 'वेद प्रचार कैसे हो' शीर्षक से एक लेख निकला है। अतः हम भी इस विषय में पाठकों के सामने अपने विचार रखते हैं।

सन् १८८५ में डी० ए० वी० कालेज की स्थापना हुई और बाद में कई कालेज आदि स्थापित होते गये आज भारत में सरकार के बाद

[ले० शंकर लाल जी]

शिक्षा के क्षेत्र में आर्य समाज प्रथम है। वेद प्रचार एवं ऋषि के कार्यों का विस्तार करने के लिये स्वामी श्रद्धानन्द जी और महात्मा हंसराज जी ने अपने-अपने पृथक्-पृथक् क्षेत्र चुने। एक ने गुरुकुल क्षेत्र, दूसरे ने कालेज क्षेत्र। दोनों महात्माओं का इन संस्थाओं को खोलने का लक्ष्य था—वेद का प्रचार एवं ऋषि के कार्य को पूर्ण करना। दोनों ने अपने-अपने क्षेत्र में कुशल विद्वान कार्य-कर्ता तैयार किये। उनका यह कार्य-कर्ता छांटने का एक मनो-वैज्ञानिक ढङ्ग था। इन्हीं कार्य-कर्ताओं के द्वारा देश-विदेश में वेद का एवं आर्यसमाज का प्रचार हुआ इन दोनों की मृत्यु के बाद कई महापुरुषों के हाथों में इन संस्थाओं की बागडोर आई. और लक्ष्य भी वही बना रहा जो उनका था।

समय बदला परिस्थितियां बदलीं इसके साथ-साथ इन संस्थाओं ने भी रूप बदला। आज गुरुकुल तो फिर भी स्वामी श्रद्धानन्द जी से जीवन-स्वांश ग्रहण कर रहे हैं परन्तु डी. ए. वी. कालेज और स्कूल तो लार्ड-मैकाले की गोद में जा बैठे हैं। आज जितने डी० ए० वी० कालेज व स्कूलों के आचार्य महात्मा जी की तरह पल-रख कर आर्य समाज के कार्य-कर्ता निकाल रहे हैं? कितनों ने कालेजों में वेदप्रचार व आर्य सिद्धांतों के प्रचार की ओर पूर्ण रूपेण ध्यान दिया है? कितने कालेजों में साप्ताहिक वैदिक सत्सङ्ग होता है? विरले ही निकलेंगे जो इस कार्य को प्राथमिकता देते हैं कई तो असूत्र पूरा करते हैं। विद्यार्थी क्या नहीं बन सकते बनाने वाला होना चाहिये। अगर ऐसा नहीं तो क्यों इन कालेजों स्कूलों से आर्यसमाजी कार्यकर्ता नहीं निकले? क्यों नहीं आर्य विद्वानों को प्राथमिकता दी जाती सर्विस में। क्या इसका कारण यह नहीं कि उनके पास वेद शास्त्रों की डिग्रियां तो हैं, परन्तु मैकाले की नहीं क्या इसीलिये वह अयोग्य हैं? यह सत्य है कि अगर इतने कालेज और स्कूल आदि ईसाईयों के होते तो

(दयानंद ब्रह्म महाविद्यालय हिसार)

अभी तक भारत की आधी जनता ईसाई बन चुकी होती। परन्तु हम २ करोड़ भी चोले आर्यसमाजी न बना पाये। इस समस्या का हल यही हो सकता है कि इन पदों पर आर्य समाज के हितैषी, शुद्ध पवित्र आर्य विचार के विद्वानों की नियुक्तियां की जायें। इसके अतिरिक्त इन बातों पर भी विशेष ध्यान देना होगा।

उपदेशक तैयार करना होगा, इतनी बड़ी संस्था के पास केवल दो उपदेशक विद्यालय हैं। उनकी भी आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। लाखों रुपया इन कालेजों पर तो खर्च किए जा सकते हैं किंतु इन विद्यालयों पर खर्च कर के उन्हें ढंग से नहीं चला सकती। बिल्डिंगों से आर्यसमाज का वा वेद का प्रचार नहीं होगा। उनमें पढ़ने वालों का सुन्दर प्रबन्ध होना चाहिए। तब उपदेशक तैयार होंगे। अधिक से अधिक उपदेशक विद्यालय खोले जाएं वेद-प्रचार ऋषि दयानन्द के शिष्य ही करेंगे। इन कालेजों में पढ़ने वाले मैकाले के शिष्यों से नहीं होगा। न वे करेंगे। ये उपदेशक इन्हीं विद्यालयों में तैयार होंगे। तभी 'ईसा के हव्वारी' और 'बुद्ध के भिक्षुओं' की तरह कार्य कर्त्ता निकलेंगे। तभी वेद का प्रचार होगा।

२. दूसरी चीज वेदप्रचार मन्दिरों की चारदिवारी से बाहर भी होना चाहिए। ताकि अन्य जनता आर्य सिद्धांतों से परिचित हो।

३. तीसरी चीज उपदेशकों, विद्वानों, संन्यासियों का आर्यजनता सम्मान करे, उनकी जीविका के उत्तम साधन जुटाये।

४. प्रत्येक आर्य परिवार एक लड़का, लड़की सम्राट अशोक की तरह वेदप्रचारक बनाकर निकालें। तब वेद का प्रचार होगा।

५. वैदिक साहित्य का देशी-विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो व अनुवादक तैयार हों। विदेशों में वैदिक साहित्य का प्रचार हो। वितरण हो। विद्वान ऋषि के वेद-भाष्य का भाष्य करें। वेद विज्ञान को प्रायौगिक रूप दिया जाय। आर्य-समाज का एक अखिल भारतीय दैनिक समाचार पत्र निकले। उत्सवों पर आर्य विद्वान व श्रेष्ठ कार्य-कर्त्ताओं को पुरस्कृत किया जाए।

६. किसी विशेष पार्टी को प्राथमिकता देने आर्य-समाजी को पदाधिकारी न बनाया जाए। इस प्रकार तो वेद प्रचार हो सकता है और आर्यसमाज का विस्तार भी होगा अन्यथा देवताओं की बोली बोलने से कुछ नहीं होने वाला।

बधाई ही बधाई

यह सुन कर अतीव प्रसन्नता हुई कि श्री पं० राजपाल जी चिमटा मस्तली वाले मन्त्री प्रचारक सभा के यहां पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ है। भगवान ने बड़ी कृपा की है। हम इस हर्षदायक शुभ समाचार पर पं० राजपाल जी व आचार्य धर्मदेव-जी के सारे परिवार को बधाई देकर प्रिय शिशु के दीर्घायु की प्रार्थना करते हैं। —व्यवस्थापक

हर्ष समाचार

श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री महोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के सुपुत्र श्री दयानन्द जी ने इस वर्ष बी. ए. की परीक्षा तथा सुपुत्री सरस्वती जी ने गवर्नमैंट बेसिक ट्रेनिंग स्कूल गुरदासपुर से बेसिक परीक्षा उत्तीर्ण करके शिक्षा का प्रथम चरण समाप्त कर लिया है। इस सफलता के लिए आर्य परिवार की ओर से पं० जी को तथा उनके सुपुत्र व सुपुत्री को बहुत २ बधाई।

—व्यवस्थापक

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मानव जीवन की सफलता के लिए आर्यसमाजों के नियमों में लिखा है कि इस संसार का कल्याण उसी दशा में कर सकते हैं जब हमने प्रारम्भिक तीन सबलताएं प्राप्त करली हों। सर्व-प्रथम शारीरिक, तत्पश्चात् आत्मिक,अंतमें सामाजिक उन्नति के लिए ही प्रेरित किया है। अब हमें सोचना है कि हम जीवन के आवश्यक प्रथम चरण को कितना पूर्ण करते हैं। हमारा जीवन इस दिशा में प्रायः शून्य-सा ही है एक समय था जब हम २५ वर्ष तक कठिन तपश्चर्या के साथ जीवन व्यतीत करके विद्यार्जन के साथ ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते थे। हमारा शरीर समस्त संकटों के सहन करने की क्षमता रखता था। तभी जीवन के भव्य प्रसाद को शताब्दियों तक स्थायी बनाये रखने में समर्थ होते थे। रुग्ण-विलासी क्या कभी किसी का उपकार कर सकता है। ऐसे व्यक्ति की दुर्बल आत्माएं क्या कभी सबल स्वस्थ विचारों का संचय करके किसी को प्रभावित न कर सकती हैं। जिस भवन की बुनियाद ही कमजोर होगी वह अपने ऊपर कितनी मंजिलों का निर्माण कर सकता है यह विचारणीय विषय है। यदि हमने शारीरिक सफलता को गौण रखा तो न हम अपनी संस्कृति की रक्षा कर सकते हैं, न भौतिकवाद के उन्माद में मग्न देशों से अपने अस्तित्व को ही बचा सकते हैं। हमारे पूर्वजों की घोषणा 'वीर भोग्या वसुन्धरा' अक्षरशः सत्य ही रही है।

धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने युग में यह घोषणा की थी कि 'सत्य ही शक्ति है यह पहली शिक्षा है।' किंतु हमने तो वर्तमान युग के लिए यही सत्य माना है कि—'शक्ति ही शक्ति है यह अब की शिक्षा है।'

हमारी असफलता क्यों ?

(ले०—श्री साहित्यरत्न कृष्णलाल 'कुसुमाकर' सिद्धान्त शास्त्री सदस्य सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा फीरोजाबाद)

लेखक महोदय ने स्वामी जी के रचित इस सिद्धान्त पर कि ,'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रह कर सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए" विस्तार से प्रकाश डालते हुए व्यक्तिगत जीवन समाज जीवन तथा राष्ट्र जीवन का मुख्य साधन बताया है इस सिद्धान्त के बिना हम किसी प्रकार का सुधार नहीं कर सकते यह अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है) बड़ी सरल और मार्मिक भाषा में व्यक्त किया है। व्य०

यह स्वतः सिद्ध है कि ईश्वर भी उन्हीं की सहायता करता है जो आत्म निर्भर, स्वस्थ एवं शक्ति सम्पन्न होते हैं। आप ने देखा होगा कि कोई भी सरकार गणना उन्हीं जीवों की कराती है जो बलशाली होते हैं। कीड़े-मकोड़े आदि अनेक जन्तुओं की नहीं; जो वर्षा के कीड़ों की भांति उत्पन्न होकर पैरों से कुचल जाते अथवा विद्युत की कड़क से ही नष्ट हो जाते हैं।

कितने ही व्यक्तियों के मुख से हमने सुना है कि जब वृद्धावस्था आयेगी तब वेद गीता आदि धार्मिक ग्रन्थों का अनुशीलन, मनन एवं चिन्तन करेंगे। अभी तो हमारा समय केवल सांसारिक उपभोगों को करना मात्र है। किन्तु जब हम उपनिषद् आदि धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं तो वह स्पष्ट लिखते हैं कि परमात्मा दुर्बल आत्माओं को प्राप्त नहीं होता— 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः' अतः आत्मिक उन्नति के पूर्व हम पूर्ण स्वस्थ शक्तिशाली हों तभी हमारे अन्दर निर्भयता, साहस, आत्म विश्वास आदि सद्गुणों की उत्पत्ति हो सकती है। दुर्बलों में आत्मबल कभी उत्पन्न ही नहीं हो सकता। जिसका शरीर सबल है उसके विचार सफल एवं सबल होंगे, उसकी समस्त क्रियायें पवित्र होंगी, उसका चिन्तन भी परमार्थ के लिए होगा। शुद्ध भावनाएं जिसकी होंगी वही आत्मिक उन्नति का भागी होगा। वही दृढ़ता से पशुता का सामना करने को सन्नद्ध एवं कटिबद्ध होगा। यही कारण है कि भविष्य द्रष्टा महर्षि दयानन्द ने संसार के कल्याणार्थ सब से प्रथम शारीरिक उन्नति को ही स्थान दिया है। उसके पश्चात् आत्मिक उन्नति को। अन्त में सामाजिक उन्नति करने का पवित्र आदेश किया है क्योंकि जिस व्यक्ति ने प्रथम दो बल प्राप्त किये होंगे वही सामाजिक जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है।

आज हमारी दशा क्या है कि हम ने दो सोपानों पर तो पग नहीं रक्खा तीसरी श्रेणी पर चढ़ने को उत्सुक हैं। भला इस प्रकार हम कैसे सामाजिक उन्नति कर सकते हैं।

ज्यों-ज्यों प्रयत्न किए गए देश में उतना अनाचार का बोलबाला होता गया। उच्छृङ्खलता, उद्दण्डता, अनैतिकता, पशुता, अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुके हैं। हमारे आचार विचार दोनों ही भ्रष्ट होते जा रहे हैं इनके प्रमुख तीन कारण हैं। अंग्रेजी में जिन्हें हम Carry, hurry and worry कह सकते हैं।

सर्व प्रथम (Carry) स्वादिष्ट पदार्थ को लीजिए। भक्ष्याभक्ष्य का विचार न करते हुये हम ने अपने को इतना पतित बना दिया है कि जहां महर्षि ने धर्म-शास्त्र एवं वैद्यक शास्त्र की दृष्टि से मधु-मांस एवं समस्त नशीली वस्तुओं के प्रयोग का निषेध किया है वहां स्वाद के नाम पर खाद्योज (विटामिन) के आधार पर, अण्डे, मांस, कहवा चाय आदि अभक्ष्य पदार्थों के उत्पादन को पराकाष्ठा पर पहुंचाने का प्रयत्न किया है। गौ पालन के स्थान पर मुर्गी पालन की योजना बनाई जा रही है समस्त पोषक अन्न अण्डों में दिखा-कर मधु-मांस को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। यह है भारतीय संस्कृति की रक्षा। जिसका ढोल इस राष्ट्रीय-सरकार में पीटा जा रहा है।

वास्तविक बात यह है कि अत्यंत शीघ्र राष्ट्र की आर्थिक दशा सुधारनी है इसमें **Hurry** को विशेष स्थान प्राप्त हो गया है। अति शीघ्रता भी असयम की जननी है जो फसल बोई गई है यदि उसे उसकी मर्यादा में समय नहीं मिलेगा तो वह कभी पककर तैयार नहीं हो सकती। प्रत्येक वस्तु स्थिति के संभालने के लिए मर्यादित काल की आवश्यकता होती है। जो देश शताब्दियों से पराधीन रहा है वह इतना शीघ्र अन्य राष्ट्रों के समक्ष कैसे खड़ा रह सकता है। हमें संयम-आत्मबल और साहस से ही काम लेना पड़ेगा। हथेली पर आम जमाने की बात को भुलाना होगा।

तीसरी **Worry** है जिसे हम चिंता के रूप में देखते हैं। इस देश में चिन्ता सभी को है कि हमारा राष्ट्र समुन्नत शील हो। किन्तु शेख चिल्ली की भांति निराधार हवाई

(शेष पृष्ठ ८ पर)



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २९) रविवार ६ श्रावण २०२०— २१ जुलाई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

त्वष्टा योषं दधातु मे

वह त्वष्टा-सबको उत्पन्न करने वाला प्रभु मुझे पुष्ट करे। मेरा पोषण करे। मेरी सब प्रकार से रक्षा करे। माता के होते बच्चा जैसे निश्चिन्त होता है वैसे मैं भी प्रभु में निश्चिन्त रहूं।

अग्निभ्यो हुतमस्तु

यह मेरा शरीर, मेरा जीवन, मेरा धन उपकार यज्ञ वेदी में जलने वाली अग्नियों के समर्पण हो उनकी आहुति भेंट हो। मैं सर्वस्य लोक कल्याण यज्ञ में भेंट कर दूं।

मा. अजन्तु वर्चसा

सारे देव-दिव्य गुणों वाले देव विद्वान् मुझको वर्चस् से बल तेज देने वाले शुभ विचारों से सुन्दर साधनों से राष्ट्र, धर्म के काम के लिए युक्त कर दें।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

अहानि शंभवन्तु नः शंऽरात्रिः प्रतियधीताम्। शं न, इन्द्राग्निी भवतामवोभि : शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शं न इंद्रापूषणा वाजसातौ शमिंद्रासोमा सुविताय शं यो : ॥

यजु. अ. ३६ मन्त्र ११

अर्थः—ये (अहानि)दिन (शं) सुख देने वाले (भवन्तु) हों (नः) हमें और (शं) सुखकारी हों (रात्रीः) रातें (प्रतिधीयतां) भरी हुई ये राते भी सुख से भरपूर होवें। (शं नः) हमें शान्ति देवें (इन्द्राग्नी) इन्द्र-बिजली और अग्नि (भवताम्) होवें (अवोभिः) रक्षा करने वाले साधनों उपायों से और (शं नः) शान्ति देवें ये (इन्द्रावरुणा) इन्द्र और वरुण, चमकने वाला सूर्य तथा तृप्त करने वाला बादल, अग्नि और वरुण जल देवता (रातहव्या) उपकारी सुख देने वाले। (शं नः) सुख देवे ये (इन्द्रापूषणा) इन्द्र बिजली अग्नि तथा पूषा-पुष्ट करने वाली धारण पालन करने वाली पृथिवी सुख देवे (वाजसातौ) जीवन के हर क्षेत्र में। और (शम्) मंगल करे (इन्द्रासोमा) इन्द्र-अग्नि और सोमा-शन्ति देने वाली औषधियां वनस्पतियां (सुविताय) सुख के लिए हमें ये (शंयोः) कल्याणकारी होवें।

भाव :—भगवन्! ये दिन, राते, यह अग्नि, बिजली जल, सूर्य, पृथिवी, औषधियां वनस्पतियां इन को पकाने वाला सूर्य तथा रस भरने वाला सोम चन्द्रमा हमारे लिए मंगलमय हों। वर्षा करने वाला मेघ शीतल जल वरसाये। हम नाना विद्याओं को सीखकर इनसे जीवन को सुखी बनावें—सं.

देश दर्शन

होमगार्डसंगठनको स्थायी रूप दे दिए जानेकी आशा—शास्त्री

१४ जुलाई—केन्द्रीय गृह-मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने आज कहा कि होमगार्ड को स्थायी रूप दे दिए जाने की आशा है ताकि शातिकाल में भी यह संगठन लोगों की सेवा कर सकें।

उन्होंने कहा कि चीन के हमले के बाद जहा सशस्त्र सेनाओ को मजबूत बनाने की आवश्यकता है वहां जनता के साहस को ऊंचा उठाना और लोगों को राइफल चलाने तथा नागरिक प्रतिरक्षा कार्यों का प्रशिक्षण देना भी बहुत जरूरी है।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा — सम्पदाक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री



टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक २९) रविवार ६ श्रावण २०२०— २१ जुलाई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

त्वष्टा योषं दधातु मे

वह त्वष्टा-सबको उत्पन्न करने वाला प्रभु मुझे पुष्ट करे। मेरा पोषण करे। मेरी सब प्रकार से रक्षा करे। माता के होते बच्चा जैसे निश्चिन्त होता है वैसे मैं भी प्रभु में निश्चिन्त रहूं।

अग्निभ्यो हुतमस्तु

यह मेरा शरीर, मेरा जीवन, मेरा धन उपकार यज्ञ वेदी में जलने वाली अग्नियों के समर्पण हो उनकी आहुति भेंट हो। मैं सर्वस्व लोक कल्याण यज्ञ में भेंट कर दूं।

मा अजन्तु वर्चसा

सारे देव-दिव्य गुणों वाले देव विद्वान् मुझको वर्चस् से बल तेज देने वाले शुभ विचारों से सुन्दर साधनों से राष्ट्र, धर्म के काम के लिए मुक्त कर दें।

अथर्ववेद

वेदामृत

अहानि शंभवन्तु नः शंर्ठरात्रिः प्रतियधीताम्। शं न इन्द्राग्निी भवतामवोभि : शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शं न इंद्रापूषणा वाजसातौ शमिंद्रासोमा सुविताय शं यो : ॥

यजु. अ. ३६ मन्त्र ११

अर्थः—ये (अहानि)दिन (शं) सुख देने वाले (भवन्तु) हों (नः) हमें और (शं) सुखकारी हों (रात्रीः) रातें (प्रतिधीयतां) भरी हुई ये रातें भी सुख से भरपूर होवें। (शं नः) हमें शान्ति देवें (इन्द्राग्नी) इन्द्र-बिजली और अग्नि (भवताम्) होवें (अवोभिः) रक्षा करने वाले साधनों उपायों से और (शं नः) शान्ति देवें ये (इन्द्रावरुणा) इन्द्र और वरुण, चमकने वाला सूर्य तथा तृप्त करने वाला बादल, अग्नि और वरुण जल देवता (रातहव्या) उपकारी सुख देने वाले। (शं नः) सुख देवे ये (इन्द्रापूषणा) इन्द्र बिजली अग्नि तथा पूषा-पुष्ट करने वाली धारण पालन करने वाली पृथिवी सुख देवे (वाजसातौ) जीवन के हर क्षेत्र में। और (शम्) मंगल करे (इन्द्रासोमा) इन्द्र-अग्नि और सोमा-शन्ति देने वाली औषधियां वनस्पतियां (सुविताय) सुख के लिए हमें ये (शंयोः) कल्याणकारी होवें।

भाव :—भगवन्! ये दिन, रातें, यह अग्नि, बिजली जल, सूर्य, पृथिवी, औषधियां वनस्पतियां इन को पकाने वाला सूर्य तथा रस भरने वाला सोम चन्द्रमा हमारे लिए मंगलमय हों। वर्षा करने वाला मेघ शीतल जल बरसाये। हम नाना विद्याओं को सीखकर इनसे जीवन को सुखी बनावें—सं.

देश दर्शन

होमगार्डसंगठनको स्थायीरूप दे दिए जानेकी आशा—शास्त्री

१४ जुलाई—केन्द्रीय गृह-मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने आज कहा कि होमगार्ड को स्थायी रूप दे दिए जाने की आशा है ताकि शातिकाल में भी यह सगठन लोगों की सेवा कर सके।

उन्होंने कहा कि चीन के हमले के बाद जहां सशस्त्र सेनाओं को मजबूत बनाने की आवश्यकता है वहां जनता के साहस को ऊंचा उठाना और लोगों को राइफल चलाने तथा नागरिक प्रतिरक्षा कार्यों का प्रशिक्षण देना भी बहुत जरूरी है।

आत्म-श्रद्धा

(श्री सन्त नागर जी)

तुम्हारा सबसे बड़ा भारी शत्रु संशय है। जो मनुष्य अपनी शक्तियों में संशय रखता है वह अपने आपको लंगड़ा-लूला बना लेता है। जो अपने संशय को भूल जाता है वह अधिक बलवान हो जाता है। संशय यह एक महान् घातक शक्ति है और मनुष्य को निरुत्साही, निकम्मा एवम् बलहीन बना देती है। श्रद्धा और विश्वास ही उन्नति के मूल साधन हैं। अपनी योग्यता में संशय मत करो। यदि तुम्हारे हृदय में दृढ़ और सच्ची आत्मश्रद्धा है तो तुम जो चाहोगे हो सकेगा महात्मा जीसस का कथन है कि यदि तुममें राई के दाने भर भी श्रद्धा है तो तुममें इतना बल होगा कि तुम्हारी आज्ञा पाते ही पहाड़ भी चलकर समुद्र में जा पड़ेंगे। आवश्यकता है पूर्ण दृढ़ श्रद्धाकी दृढ़ श्रद्धा द्वारा मनुष्यों में असाधारण आत्मिक बल पैदा होता है जिसके द्वारा वह अनेक प्रकारके जय-विजय प्राप्त कर सकता है। जय-विजय किसका ? लोकों और नगरों का नहीं, किंतु अपने आपे का। इस अपने आपे पर विजय पाने से, अपने पर अधिकार जमा लेने से, मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को पहिचान जाता है और उसको अनन्त शक्ति की प्राप्ति हो जाती है।

श्रद्धा में महान् बल है श्रद्धा पर्वतों को भी हिला सकती है। श्रद्धा की शक्ति से संसार के झमेलों में शान्त खड़े रह सकते हो, इन्द्रियों की चचल क्रियाओं में शांति कायम रख सकते हो, वासना और विकल्पों के हजारों आवेगों को चुपचाप सहन कर चट्टान के समान दृढ़ स्थिर रह सकते हो और अपने आप पर विजय प्राप्त कर उस अवस्था में प्रवेश कर सकते हो जहां पूर्ण श्रद्धा पूर्ण ज्ञान और पूर्ण मुक्ति का साम्राज्य है।

भूलकर भी अपनी शक्तियों में संशय न करो। अधम वृत्तियों से सावधान रहो। अधम वासनाएं ही तुम्हें फंसाये रखती हैं, बंधन में बांध रखती हैं एवं पथ से भ्रष्ट करती हैं। आत्मविश्वास रखो कि तुम में वासनाओं के दमन करने की पूर्ण शक्ति है। मुक्ति और आनन्द का मार्ग तुम्हारे अन्दर स्थित है। जिस ने अपने ऊपर विजय प्राप्त करली है। वही मनुष्य वास्तव में मुक्त है, वह सदा प्रसन्न ही रहता है। दु:ख और विपत्तियां, कदापि काल उसकी शांति में बाधा नहीं डाल सकते। अपने आपको ऐसा बनाओ कि भय, शंका, संशय, निर्बलता, दरिद्रता, पाप एवं द्वेष के पतित विचार तुम्हारे हृदय में स्थान न प्राप्त कर सकें। पवित्रता, निर्भयता एवं उदारता के उच्च विचारों से हृदय को भर दो। तुम्हारे घर में कूड़ा-कर्कट होगा तभी रोग के कीटाणु उत्पन्न होंगे, स्वच्छ और सुथरे मकान में रोग के जंतु किसी हालत में पैदा हो नहीं सकते। मन में गन्दे और दूषित विचारों के रहने से ही मलीन भावों की उत्पत्ति होती है। हृदय-प्रदेश में से संशय और अशुभ विचारों को प्रबल धक्का देकर बाहर निकाल दो और उनकी सत्ता से मुक्त होओ। तुम अपने अविश्वास के कारण ही इस स्थिति में सड़ रहे हो। तुम अपने को मिट्टी का पुतला समझ रहे हो। इन्हीं मिथ्या विश्वासों से तुमने अपनी दुर्गति कर ली है। निर्भयता और आत्मविश्वास के कवच को धारण करो और कोई भी हीन विचार तुम्हारे मनोरथ में प्रवेश न कर सकेगा। श्रद्धा, पक्की धारणा अथवा दृढ़ निष्ठा मनकी विधात्मक शक्ति है और संशय, संदेह निषेधात्मक वृत्ति है। आत्म-श्रद्धा ही इच्छाशक्ति है और इससे आयु, आरोग्य एवं ऐश्वर्य की वृद्धि होती है और संशय से असंख्य भयंकर यातनायें सहन करनी पड़ती हैं और सारा जीवन गुलामी में कटता है। श्रद्धा से ज्ञान की प्राप्ति होती है, ज्ञान से मनुष्य अपने पर शासन कर सकता है, अपने भाग्य, स्थिति और जीवन का स्वामी बन जाता है। चिन्ता, भय, शंका, शोक और द्वेष से सर्वथा मुक्त होकर जीवन-मुक्त हो जाता है। यदि तुम सुख, शांति और पूर्ण आनन्द भोगना चाहते हो तो अपने में आत्म-श्रद्धा उत्पन्न करो। शांत होकर अपने अंत. प्रदेश में विराजमान परमात्मा को जानो, उनका आश्रय लो और सदा अपनी अन्तरात्मा का आदेश मानो और तुम्हें वह चिरस्थायी आनन्द प्राप्त होगा जिसका कि तुम इस संसारिक जीवन में अनुमान नहीं लगा सकते।

'श्रद्धावांल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शांति मचिरेणाधि गच्छति॥

जिसमें श्रद्धा होती है, जिसने इन्द्रियों पर शासन किया है, जो उद्योग करता है उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है और ज्ञान को पाकर उसे जल्दी ही परम शांति प्राप्त होती है।

—'कल्प वृक्ष से'

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

विराट् तथा अत्यन्त शिक्षाप्रद शिविर

समस्त आर्य जनता को सूचित किया जाता है कि एक अगस्त से सात अगस्त तक दयानन्द मठ रोहतक में पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से एक आर्य कुमार शिक्षण-शिविर का आयोजन किया जा रहा है। आर्य समाजों, कुमार सभाओं, आर्य वीर दलों तथा आर्य युवक समाजों आदि से हार्दिक अनुरोध है कि अधिक से अधिक आर्य कुमारों को शिक्षण के लिए भेजें। व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि आप २१ जौलाई से पहले सूचित करें कि आपके यहां से कितने शिक्षक तथा शिक्षार्थी आ रहे हैं। सूचना उपकार्यालय (प्रो०रघुवीर सिंह, छोटूराम कालिज रोहतक) के पते पर भेजें।

रघुवीर सिंह मंत्री
पंजाब प्रांतीय आर्य कुमार परिषद्

आर्यजगत आधी कीमत में

आर्य समाज किला मुहल्ला के वर्तमान प्रधान श्री ला. शंकर दास जी की उदारता से सभा का आर्य-जगत पत्र आधी कीमत यानी ३/ में दिया जाएगा। शेष ३/— ग्राहक को स्वयं देना होगा। इस सुअवसर से आर्य-जगत के पाठक लाभ उठावें।

श्री आनन्द स्वामी जी महाराज

श्री बावा गुरमुख सिंह जी अमृतसर से सूचना देते हैं कि पूज्य आनन्द स्वामी जी महाराज १०.७.६३. को वैदिक साधन आश्रम P.O. तपोवन (देहरादून) में पधारे हुए हैं और जौलाई का महीना आश्रममें ही ठहरने की कृपा करेंगे।

—व्यवस्थापक

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार ६ श्रावण २०२०, २१ जुलाई १९६३ [अंक २९

आशा और उत्साह

महात्मा भर्तृ हरि जी ने मनुष्यों को तीन भागों में बांटा है। एक ऐसे हैं जो विघ्न या बाधा के के भय से किसी कार्य को आरम्भ ही नहीं करते। दूसरे वे हैं जो आरम्भ तो कर देते हैं पर बीच में ही उस काम को छोड़ बैठते हैं। किन्तु तीसरी कोटि के लोग वे हैं कि कार्य को प्रारम्भ करके उस मे लगे ही रहते है, चाहे कितने विघ्न आ जाएं, भय की भीषण भित्तियां खड़ी हो जायं, चारों ओर से काल की काली घटाएं घिर कर आजाएं पर वे लोग अपने निश्चित पथ पर निरन्तर ही आगेर बढ़ते जाते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति ही व्यक्ति वा समष्टि के जीवन मे शानदार सफलता प्राप्त करते हैं। संस्था हो या समाज, जाति हो या देश—ऐसे महारथियों के साहस, उत्साह से प्रगति तथा उन्नति के ऊंचे शिखर पर पहुंच जाता है। राष्ट्रिय जीवन के अतीत या वर्तमान काल के इतिहास में इनका ही सारा प्रभाव होता है।

आर्यसमाज के विशाल, व्यापक आन्दोलन में भी इस प्रकार के महान् आदर्श जीवन स्तम्भों का भारी हाथ रहा है और अब भी, है। ऐसों के कारण ही समाज इतने थोड़े समय में इतनी शानदार उन्नति कर पाया है। आर्य समाज के प्रचार में, नानाविध क्षेत्रों के कार्यों में कितनी बाधाएं आईं। चारों दिशाओं से कैसी २ भयंकर काली घटाएं घिर आईं, अपने पराये दोनों ओर से कितना विरोध हुआ। कौन २ से कष्ट हैं जो कि इन को देने का प्रयास नहीं किया गया। विष के प्याले, मारपीट, जीवन लीला समाप्त करने के षड्यन्त्र तथा अन्य बीभत्स साधनों का कितना खुला प्रयोग किया गया। किन्तु उन अडिग प्रभुभक्तों, वेद के प्यारों एवं दयानन्द के भक्तों के पग को कोई भी तो रोक न सका। आज समाज के सारे काम सबने स्वय अपना लिए हैं। समाज को अग्नि जानकर उससे ही सब प्रकाश ले रहे हैं। समाजकी यह विजय है।

हम मानते हैं कि व्यक्ति के समान समाज के विराट् शरीर मे भी कभीर रोग पैदा हो जाता है जो उसे कुछ मन्द गति भी बना देता है। किन्तु उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। समाज मर गया, मर गया—कहने वाले लोग आशा उत्साह वाले नहीं होते। ऐसे लोग समाज के मित्र नहीं वरन शत्रु हैं। कहीं धंसी हुई गाड़ी को निकालने वाले वीरों की आवश्यकता रहती है न कि निराशा की बाते करके ही उत्साह हीनता की चर्चा होवे। आज जब कभी कई समाचार पत्रों में निराशा की बाते पढ़ते हैं, कई लोगों के मुख से कोरी निर्बलता की चर्चा सुनते हैं तो खेद होता है। यदि घर मे कोई तनिक बीमारी आजाये तो बैठ कर जोर २ से रोने वाला घर का मित्र नहीं है। महाभारत वाले शल्य आज भी हैं। हम समाज को कभी न मरने वाला समझते हैं। यह नौका आगे २ ही बढ़ती जाती है। कभी २ प्रबल लहरे, तूफान भी आते हैं तो क्या उस समय उदास होकर बैठ जायें कि अब नौका डूबेगी—ऐसा कहना या ऐसा मानना जीवन का कायरपन है। उस समय तो साहस, उत्साह की आवश्यकता है। आर्यसमाज में हो सकता है कि कुछ मन्दावस्था आगई हो—किन्तु साहस का दामन क्यों छोड़ें। निर्बल विचार रखना, लिखना और सोचना, बोलना सर्वथा अनुचित है। निराशावादी लोगों से बचें। आईए। इस नौका को पूरी शक्ति लगा कर पतवार लगाकर खेते चलें। तूफान कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा • —त्रिलोक चन्द्र

उत्तम अभिनय

आजकल पंजाब में सरकारी अधिकारियों की ओर से शराब पीना छुड़ाने का अभियान चल रहा है। हम इस का स्वागत करते है। कई स्थानों पर लोग तथा कर्मचारी भविष्य में शराब न पीने की प्रतिज्ञाएं कर रहे हैं। मन से छोड़ी हुई वस्तु पक्की तथा सच्ची होती है इस अभियान को तेज किया जाये। प्रभु करे वह दिन जल्दी आये ताकि सारा पजाब कह सके कि हमारे प्रान्त में एक भी सुरापान करने वाला नहीं।

वेद सप्ताह पर्व

वेद सप्ताह अब निकट ही आ रहा है। ता० पांच अगस्त से श्रावणी उपाकर्म प्रारम्भ है सारी समाजे वेद प्रचार के परमधर्म के इस सप्ताह को धूमधाम से मनाने का अभी से प्रबन्ध करने में जुट जाये। वेद कथाएं, वेद प्रचार का विशेष कार्यक्रम तथा वेद सम्बन्धी साहित्य वितरण करने में पूरी शक्ति लगा देवे। आर्य समाज वेद प्रचार के विशाल आन्दोलन को लेकर स्थापित हुआ है। सभा के वेद प्रचार के कोष को दृढ़ बनाने में अधिक सहयोग दिया जाये—सं०

भारतीय संस्कृति की रक्षक नारी होती है

(कु. अरुण आर्या प्रभाकर टोहाना)

हमारे देश के सभी प्राचीन ग्रन्थों से पूर्ण रूप से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि किसी देश की संस्कृति उन्नति तथा सभ्यता का मूल्यांकन उस देश के महिला समाज की दशा देख कर लगाया जा सकता है।

हिन्दू समाज में हम नारी का स्थान सभी क्षेत्रों में श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं और अतीत के स्वर्णिम इतिहास से यह पूर्ण रूप से सिद्ध हो चुका है कि संस्कृति में प्रत्येक शुभ कार्यों में नारी की आवश्यता पड़ी है और बिना नारी के कोई भी कार्य, यज्ञ आदि सफल नहीं हो पाया है। स्मरण रहे कोई भी धर्म काय बिना स्त्री के सहयोग से सफल माना नहीं जाता था। राज्याभिषेक के अवसर पर मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी ने सीता जी की अनुपस्थिति में उनकी सोने की प्रतिमा बना कर और उक्त स्थान पर स्थापना करके ही कार्य चलाया था। याज्ञवल्क्य की स्त्री मैत्रेयी तथा कात्यायनी उस युग में ज्ञान के क्षेत्र में उच्च सीमा तक पहुंच चुकी थीं। जहां उन्होंने आध्यात्मिक धन के आगे इस सांसारिक लौकिक धन की सदैव ही उपेक्षा की। इस प्रकार से हिन्दू समाज में एक दो स्त्रियों की ही गिनती नहीं, सैकड़ों स्त्रियों की गिनती गिनाई जा सकती है, जिस के फलस्वरूप हमारी हिन्दू संस्कृति को बल मिला और हमारे देश की महिलाओं से समस्त विश्व को आश्चर्यान्वित कर दिया।

प्राचीन युग में महिलाएं विद्याध्ययन के अतिरिक्त धार्मिक कार्यों में भाग लेने के साथ २ लड़ाई के मैदान में भी पति के साथ जाया करती थीं और वहां समय पड़ने पर उनका सहयोग देती थीं।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

दक्षिण में हिन्दी का प्रचार व प्यार नं० ३

(ले० श्री राजेन्द्र जी एम.ए. जिज्ञासु दयानन्द कालेज शोलापुर)

साप्ताहिक धर्म युग बम्बई शाखा ने अपने ९ जून के अंक में देशवासियों की बड़ी भारी सेवा करते हुए दक्षिण वालों का हिन्दी के विषय में पक्ष रखा है। धर्म युग ने तामिल पत्रों के सम्पादकीय लेखों के कुछ अंश दिये हैं और कुछ प्रमुख विभिन्न विचार के लोगों के विचार दिये हैं। सब का मत यही है कि तामिल को या दक्षिण भारत की भाषाओं की विरोधी अंग्रेजी है न कि हिन्दी। दक्षिण वाले चाहते क्या हैं?

हिन्दी सीखने के लिये कुछ और समय मांगते हैं न कि देश जाति से कटना व पीछे रहना। दक्षिण में हिन्दी का प्रचार करने के लिये अनेक संस्थायें हैं प्राय: उनकी परीक्षाओं के परिणाम से समाचार पत्रों के पृष्ठ भरे देख कर मन प्रसन्न होता है परन्तु अंग्रेजी समाचार पत्रों के पृष्ठ रोमन चर्च के धर्म गुरु पोप जो के शोक से काले हो काले दीखते हैं, हिन्दी के प्रचार व गर्व के ऐसे समाचार इन में पढ़ने को नहीं मिलते। धर्म युग के शब्द में ये समाचार दक्षिण संबंधी उन्हीं समाचारों को बढ़ा चढ़ाकर छापते हैं जो राष्ट्रीय एकता और भारतीय भाषाओं के विरोध का पक्ष प्रस्तुत करते हैं। पंजाब व दिल्ली से आर्यों के दैनिक पत्र भी निकलते हैं। खेद है कि वस्तु स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के पूरे प्रयत्न उन्होंने भी नहीं किये।

तामिल नाड का सब से प्रख्यात पत्र आनन्द विकटन लिखता है "अहिन्दी भाषियों को हिन्दी भाषा के प्रति कोई घृणा या दुश्मनी नहीं। इतना ही मांगते हैं कि जब तक अहिन्दी भाषी अच्छी तरह हिन्दी नहीं सीख लें तब तक अंग्रेजी सह-भाषा बनी रहे।" हिन्दी विरोधी कहे जाने तामिल नेता म० पो० शिवज्ञानम् के नेतृत्व में चलने वाली संस्था तामिल अरसु कषगम के सम्मेलन में हिन्दी विवेय के सम्बन्ध में स्वीकृत प्रस्ताव में कहा गया है:— यह समिति इस विचार का तीव्र विरोध करती है कि अंग्रेजी निरन्तर काल के लिये चलती रहे। फिर भी हिन्दी सीखने तक अंग्रेजी सह-भाषा मान लेना अनिवार्य है।

श्री तामिलवाणन् एक विचारक अपना साप्ताहिक कलकण्ड निकालते हैं वह लिखते हैं ८०% लोग हिन्दी पोषक हैं और देश के केवल २०% लोग हिन्दी विरोधी हैं इस लिये हिन्दी का कितना भी विरोध हो यह रहेगी। आगे चलकर लिखा है कि हिन्दी के बिना राजा जी या अण्णादुरै आदि के पीछे फिर कर हमारी दशा बिगड़ेगी। विद्वान् लेखक ने अपने प्रांत वासियों को अंग्रेजी तामिल व हिन्दी तीन भाषायें सीखने का परामर्श दिया है।

मैंने धर्म युग में प्रकाशित तामिल भाषा-भाषी पत्रकारों, नेताओं व विचारकों के प्रकाशित विचारों में से कुछ एक के विचारों का सारांश दिया है।

आर्यसमाज का प्रत्येक साधु कार्यकर्ता, उपदेशक, सेवक व सदस्य अपना कर्तव्य समझ कर उत्तर भारत की जनता के मनो-मस्तिष्क पर अंग्रेजी पत्रों के बिठाये इस भ्रम को दूर करे कि दक्षिण वाले हिन्दी विरोधी हैं। राष्ट्रिय एकता के लिये इस भ्रम को दूर कर आर्यसमाज राष्ट्र का अग्रणी बन कर रचनात्मक सेवा का पुण्य लाभ प्राप्त करे। यह ठीक है कि कुछ तत्वों ने अपनी मन अंजना व स्वार्थ के कारण तीव्र गति से राष्ट्र भाषा को फैलने न दिया पर इस में दक्षिण वालों का क्या दोष? यहां तो दिल्ली से कम अंग्रेजी के साईन-बोर्ड मिलेंगे। आर्य साधु सन्त व आर्य युवक दक्षिण में घूम-घूम कर वेद सुधा बर्साने निकलें। देश एकता आर्य सन्तों के तपोबल से सुदृढ़ होगी।

भारतीय संस्कृति की रक्षक नारी होती है

(पृष्ठ ३ का शेष)

विवाहों में अपनी इच्छा से पति चुन सकती थीं और इस योग्य थीं कि अपनी भलाई बुराई अच्छी प्रकार से सोच सकें। यही नहीं अपनी योग्यता के बल से द्रौपदी की भांति पतिदेव को भी सुन्दर सीख देने में सदैव तत्पर रहती थीं। स्वभाव से भावुक, सवेदन शरीर होने के नाते प्रेम तथा आत्म-बलिदान की भावना से वे पुरुषों का अंगीकार स्वीकार कर लेती थीं।

प्राचीन ग्रन्थों में कहा गया है, 'जिस राष्ट्र में नारी का मान नहीं वह राष्ट्र कभी भी उन्नति नहीं कर सकता।' नारी की महानता एवं पवित्रता को पूर्ण रूप से सम्मान करते हुए प्राचीन काल में ऋषियों ने समाज को नारी मात्र को श्रद्धा की दृष्टि से देखने एवं 'परदारेषु मातृवत्' आदि का महान् आदेश दिया है। हिन्दू धर्म तथा भारतीय संस्कृति में एक महान् एवं महत्व-पूर्ण स्थान नारी के लिए समझा जाता था, आज इस धारणा को निकाल देने से हिन्दू समाज तथा हिन्दू धर्म की रूपरेखा में बहुत ही बड़ा परिवर्तन आ गया है। हिन्दू समाज ने धर्म की दृष्टि को देखते हुए नारी को गौरव सम्मान तथा पवित्रता की श्रेणी में रखा है और साथ ही साथ मातृशक्ति के महत्व को भली प्रकार से समझते हुए समाज में उसे विशिष्ट स्थान दिया है। हमारी हिन्दू संस्कृति के अधिष्ठाता मनु की कथा है कि, जो पति है वह अभिन्न रूप से पत्नी है, जहां स्त्रियों का पूजन होता है वहां देवता निवास करते हैं, यह गृह की ज्योति है, यह गृह लक्ष्मी के रूप में मान्य है, प्रजा को जन्म देना या मातृत्व ही नारी जीवन की पूर्ण सार्थकता है, उसका नित्य भरण पोषण करना तथा उसे सदा सन्तुष्ट रखना प्रत्येक पति का कर्त्तव्य है। स्त्री की प्रसन्नता ही सम्पूर्ण परिवार की प्रसन्नता, शान्ति तथा समृद्धि है।' नारी को मां के रूप में कहा गया है कि—

तुम्हारे अधरों का रस प्राण,
वासना पर पिया अधीर।
अरी ओ मां हमने है पिया,
तुम्हारे स्तनों का उज्ज्वल क्षीर।

नारी की महिमा हिन्दू समाज में क्या है? इस का उज्ज्वल उदाहरण एक कवि की तीन पंक्तियों में दीख पड़ता है—

मानवता है मूर्तिमती तू,
भव्य भाव भूषण भण्डार।
दया क्षमा ममता की आकार,
विश्व प्रेम की है आधार।
तेरी करुणा साधना का मां,
है मातृत्व स्वयं उपहार।

आर्य जगत के पाठकों से निवेदन

आर्य जगत का वेद सप्ताह अंक "वेदांक" के नाम से ८-८-६३ को १६ पेज का प्रकाशित हो रहा है। यह अंक ४ और ११ अगस्त का सम्मिलित अंक होगा। जिस में भारत के उच्चकोटि के विद्वानों के वेद विषयक लेखों का ही संग्रह होगा। सभी सस्थाएं अपने आर्डर देकर कर्तव्य पालन करें।

कीमत २५ नये पैसे

नोट—इस के बाद १८-८-६३ के अंक की प्रतीक्षा करें। व्यवस्थापक

देश की सामयिक परिस्थितियों को जब हम जानने लगते हैं तो हमारे सामने यही प्रश्न होता है कि युवकों को कैसे राष्ट्र सुरक्षा हेतु वीर बनाया जाए ? हमारे देश में कई छोटे २ संघ सम्प्रदाय हैं जो साम्प्रदायकता के भावों को कोमल हृदयों पर अंकित करते रहते हैं जिसका परिणाम राष्ट्र वा समाज रक्षा प्रतिकूल भी हो जाता है भारत में, राष्ट्रहित सच्ची देश-भक्ति, प्राचीन सभ्यता वा सस्कृति से सुसज्जित, यदि कोई धार्मिक संस्था है तो वह केवल आर्य समाज ही है। आर्य समाज का इतिहास रक्त रंजित वीरों के बलिदानों का इतिहास है कितने ही मां-लाडलों ने अपनी जान को हथेली पर धर कर शहादत् का अद्भुत आदर्श पेश किया, यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् आर्य-समाज को आवश्य धक्का लगा परन्तु साहसी आर्य वीर जवानों ने, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज तथा पं० लेखराम जी जैसे तपस्वियों के तपोबल पर आर्य समाज की क्षति को पूर्ण करने के लिए अपनी जवानी को इस आंदोलन (आर्य-समाज) के हेतु अर्पित कर दिया। जिसका फल आज हम देख रहे हैं कि कोई भी ऐसा स्थान नहीं है जहां पर आर्य समाज (मन्दिर) न हो। इन मन्दिरों की रक्षा एवं आर्य-सभ्यता के फैलाव के लिए यह आवश्यक है कि हम युवक संगठन के कार्य को सर्वप्रथम आवश्यक समझें।

कई आर्य-सज्जनों ने युवक समाजें, आर्य-वीर दल तथा कुमार सभाएं स्थापित कीं। जो अब भी स्थापित हो रही हैं लेखराम नगरी की आर्य युवक समाज पूज्य जिज्ञासु जी के अनथक प्रयत्न का ही फल है सायंकाल दैनिक सत्सङ्ग में कितने ही युवक आते हैं जो अपने

हम कहां हैं ?

(ले० श्री सत्यपाल जी 'सहदेव' लेखराम नगर कादिया)

विचारों को बड़े सुलझे ढङ्ग से पेश करते हैं। मैं आर्य जनता का ध्यान इस ओर लगाना चाहता हूं कि आज हम कहां हैं ? श्री जिज्ञासु जी के शोलापुर चले जाने के बाद पंजाब में प्रो० वेदीराम जी 'शर्मा' तथा प्रो० रघुवीरसिंह जी युवक संगठन का कार्य कर रहे हैं अपने-अपने स्थान पर जो काय यह महानुभाव कर रहें हैं प्रशंसनीय है।

पूज्य प्रो० वेदीराम जी के पत्र यु० समाज लेखराम नगर के नाम प्राय: आते रहते हैं उनके पत्र को पढ़ने से मालूम होता है कि वे कितना संगठन हेतु कार्य करते हैं। प्रो० जी पंजाब प्रादेशिक युवक संगठन के अध्यक्ष हैं इस लिए उनकी सेवा में मेरी प्रार्थना है कि बिखरे हुए फूलों को माला बना ली जाय जिस से पंजाब में आर्य वीरों का सबल संगठन कायम किया जाए।

यह कैसे हो ? इस का उत्तर प्रत्यक्ष है। प्रत्येक हाई तथा हायर (डी ए. वी.) सैकण्डरी स्कूल में युवक समाज की स्थापना हो इसके लिए श्री पं० जुगल किशोर जी एम. ए. प्रिंसीपल डी. ए. वी. हायर सै० स्कूल बटाला तथा श्री कर्मचन्द जी प्रिंसीपल डी. ए. वी. सै० स्कूल दीनानगर वालों से सहयोग लिया जाए। डी. ए. वी कालिज अमृतसर के श्री वेदव्रत जी M. Sc. वे भी आर्यसमाज के सतर्क युवक कार्यकर्ता हैं गुरदासपुर आर्यसमाज के प्राण श्री जतिन्द्र जी तथा श्री ओ३म् प्रकाश जी 'शर्मा' हैं पिछले दिनों गुरदासपुर आर्यसमाज (गुरुकुल-विभाग) का वार्षिकोत्सव हुआ जिस में लेखराम नगरी की युवक समाज के लगभग २८ सदस्यों ने प्रो० वेदीराम जी के आदेशानुसार भाग लिया।

वहां पर पूज्य भाई जीतेन्द्र जी तथा श्री ओ३म् प्रकाश जी के कार्य से जो प्रेरणा युवकों को मिली वह बहुत ही हृदय-अंकित थी। सभी युवक हृदय उनके कार्यों को देखकर प्रफुल्लित हो रहे थे। जहां पर ऐसे कार्यकर्ता दिन रात एक कर समाज के कार्य को आगे बढ़ाने वाले हों तो वहां क्या नहीं हो सकता ? इसीलिए तो कहना पड़ता है कि हम कहां हैं ? क्या कर रहे हैं ? लेखराम नगरी के डी. ए. वी. स्कूल के प्रिंसीपल शास्त्रार्थ महारथी श्री रामप्रताप जी भी सहयोगी सिद्ध हो सकते हैं केवल हम यही दुहाई दे रहे हैं कि युग बदल रहा है—परन्तु कभी हम ने यह नहीं विचारा कि युग को बदलाने वाले भी तो हम ही हैं कोई और तो नहीं। यदि हम बातें कम करें, कुछ रचनात्मक कार्य करें तो क्या नहीं हो सकता ? सब कुछ हो सकता है बदल रहे युग को रोकने के लिए यदि लोहे कि दीवार भी बनानी पड़े तो हमें बनानी होगी। लोहे की दीवार युवकों का संगठन ही है इसी द्वारा राष्ट्र के बदल रहे स्वरूप को रोकने के लिए लोहे की दीवार बन सकती है अन्यथा यदि आप कहें कि लोहे की धात को लेकर उसे पिघलाकर एक लम्बी दीवार बना ली जाए तो कहें कि देश में बढ़ रही विलासीता की आंधी रुक जाए तो यह केवल विडम्बना ही है और कुछ नहीं।

आज से कुछ वर्ष पूर्व पठानकोट आर्यसमाज में एक आर्य-वीर श्री पं० रामगोबिन्द जी 'आर्य' रहा करते थे अब मालूम नहीं कि वे वहां हैं या नहीं। परन्तु उस वीर का कार्य गुरदासपुर जिले में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है पठानकोट में लगभग तीन शाखाएं आर्य वीर दल की लगतो थीं परन्तु संगठन का एक रूप न होने के कारण उस वीर को कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। आर्यों की सार्वदेशिक सभा भी उसके कार्य में हाथ बटाया करती थी। परन्तु आज......!

लेख लम्बा न हो जाए इस लिए मेरा लिखने का तात्पर्य यह है कि यदि हम चाहते हैं कि देश-विदेश में आर्य सभ्यता का फैलाव हो, बदल रहे युग को रोकें, राष्ट्रहित युवकों का निर्माण करें तथा साम्प्रदायक भावनाओं का नाश करें तो पजाब में जितनी भी हमारी शिक्षा संस्थाएं हैं उन में युवक समाजों का निर्माण करें। पूज्य प्रो० वेदी राम जी की सेवा में यही विनय है कि ऊपर लिखित महानुभावों का सहयोग लेकर हमारे भविष्य का निर्माता बनें। संगठन को दृढ़ बना कर फिर हम कह सकें कि हम कहां हैं।

आशा है आर्य जन विचार कर युवक सगठन के कार्य को आगे बढ़ाएंगे।

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआडर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

मनुष्य का कर्तव्य

(ले०—श्री कैलाशचन्द्र सिन्हा गुरुकुल कांगड़ी) महाविद्यालय हरिद्वार)

संसार में प्रत्येक मनुष्य का कुछ कर्तव्य कर्म होता ही है। चाहे किसी स्थिति वाला मनुष्य हो। किन्तु कुछ काम ऐसे भी होते हैं जो उसके कर्तव्य बनते हैं।

उस कर्तव्य को पूरा करना ही चाहिए। यदि किसी मनुष्य से उस का कर्तव्य पूरा नहीं होता तो वह सदाचार को नहीं रख सकता। उद्योग दृढ़ निश्चय और मन संयम के बिना कर्तव्य का पूरा होना कठिन ही नहीं असम्भव है।

कर्तव्य कर्म किसी निश्चित समय तक ही मनुष्य के साथ नहीं लगा रहता, प्रत्युत जन्म भर मनुष्य के सामने उसका कर्तव्य बना रहता है। बचपन से माता-पिताकी आज्ञा में रहने का कर्तव्य प्रारम्भ होता है। फिर स्त्री पुत्र गुरू और भाई बन्धुओं के होने पर उनके सम्बन्धी कर्तव्य मनुष्य के सामने होते हैं। यह घर का सम्बन्ध हुआ। राजा से प्रजा का स्वामी से सेवक का मित्र का आदि अनेक प्रकार से मनुष्य का सदाचार बनाये रखने के लिए उसका कर्तव्य उसके सामने उपस्थित रहता है।

सदाचार को स्थायी रखकर समाज को लाभ पहुंचाना प्रत्येक मनुष्य का मुख्य कर्तव्य है। मनुष्य केवल खाने पीने और मरने के लिए ही नहीं बना है। प्रत्युत उसे जितने साधन प्राप्त हो सके है। उन्हीं के द्वारा अपने जीवन को सार्थक करने के लिये उसका कर्तव्य उसके सामने उपस्थित रहता है। और अगर ऐसा वे नहीं करते तो वे लोग दोषी हैं।

कर्तव्य कर्म पर लक्ष्य रखकर उसे दृढ़ निश्चय के साथ किये जाना ही सदाचार का सच्चा स्वरूप है। यही मनुष्य की उत्तम स्थिति है। यदि मनुष्य इस प्रकार नहीं करता तो उसके नाश का कोई ठिकाना नहीं है। यदि दृढ़ निश्चय के साथ कोइ कर्तव्य में जुटा हो। तो बड़ी २ आपत्तियों का डर उसे हानि नहीं पहुंचा सकता।

अपने कर्तव्य की ओर जिनका ध्यान है। उनके हाथ से अन्याय नहीं बन पड़ता। अन्याय न करना ही मनुष्य की उत्तमता का लक्षण है। किसी विशेष स्थिति और विशेष समय में ही कर्तव्य कर्म की ओर लक्ष्य देने की आवश्यकता नहीं है।

प्रत्युत प्रत्येक कार्य और प्रत्येक समय मे मनुष्य का लक्षण अपने कर्तव्य की ओर रहना चाहिये। कर्तव्य परायण मनुष्य कुछ भी काम करेगा तो उस मे दुराचार का सर्वथा डर नहीं रहेगा। यदि किसी के पास प्रचुर धन और उच्च विद्या है। किन्तु उसका लक्ष्य कर्तव्य कर्म की ओर नहीं है तो उसके हाथ से बड़े-बड़े अनर्थ हो जाना सम्भव है। कर्तव्य परायण मनुष्य भले बुरे का विचार करके जो काम करता है वह बड़े धैर्य का होता है। भले-बुरे का विचार मनुष्य की प्रवृत्ति करना है। बिना इस गुण के कोई सदाचार के मार्ग को पूरा नहीं कर सकता।

भले-बुरे का विचार करके जब मनुष्य उसे भली-भांति समझ लेवे तब भले कर्मों की ओर लक्ष्य करना उसकी इच्छा के आधीन है। इसी ही कारण से अनेक विद्वानों के हाथ से नीच कर्म हो गये हैं और अनेक छोटे कुल में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों से भले कर्म बने हैं। कर्तव्य कर्म की ओर लक्ष्य देकर किये हुये कार्य में यदि यश न प्राप्त हो तो भी चित्त को सन्तोष तो प्राप्त होता है।

प्राप्त हुए साधनों के पूरे उद्योग से जो कर्म किया जाता है। उसके सिद्ध न होने से पछतावा नहीं होता।

जिन मनुष्यों का लक्ष्य अपने कर्तव्य कर्म की ओर होता है वे केवल ऐश्वर्यादि ही नहीं, प्रत्युत अपने प्राणों का भी अधिक मोह नहीं करते।

जिस समय रामशास्त्री ने राघोबादादा से मृत्यु का प्रायोजन करने के लिए कहा था। उस समय उन्हों ने इस बात को नहीं सोचा था कि राज्य का आश्रय छुट जाने से मुझे दरिद्रता का भार घेर लेगी। उन्होंने यह भी नहीं सोचा था कि दूसरे कर्मचारी इससे मुझे क्या कहेंगे। उन्होंने निर्भीकता से अपने कर्तव्य को पूरा किया प्रजा के हित का कुछ भी ध्यान न रखते हुए सैंकड़ों पदाधिकारी राजा की इच्छानुसार अपना मत देते थे। किंतु रामशास्त्री ने ऐसा कभी नहीं किया यह संसार युद्ध क्षेत्र है। इससे निश्चित रूप से भय और पराजय होती ही है। संसार की इस जय और पराजय से न डर कर जो मनुष्य अपने कर्तव्य कर्म मे निश्चित रूप से लगा रहता है वही शूर है। मनुष्य को जो अनेक प्रकार के बल मिले हैं उनका सर्वथा उपयोग न करना पाप है।

चंचल बुद्धि और अस्थिर मन से कर्तव्य में अनेक बाधायें आती हैं। मनुष्य यदि भले बुरे का विचार भी कर ले तो उसका आलस्य प्रमाद और अस्थिरता उसे बीच मे ही घुमाए रहते हैं। यदि कुछ समय बाद भी कुछ निश्चित हो गया तो अच्छा नहीं तो उसे कोई ऐसा काम नहीं बन पड़ता। जिससे संसार में उसका नाम लिया जाए जिनकी इच्छा सदाचार दृढ़ करने की हो। उन्हें अपने में से इन दुर्गुणों को निकाल डालना चाहिए।

जब मनुष्य भले कामों में प्रेम नीच कामों से घृणा, इन्द्रियों पर विजय अपने हित पर प्रवृति आदि बातों को हृदय मे बैठा लेता है। तभी उसके हृदय मे कर्तव्य कर्म की प्रवृति होती है। जिसने मनोनिग्रह पूर्वक सद्गुणों से प्रेम पैदा कर लिया है। वही सच्चा वीर शूरवीर एवं कर्तव्य कर्म करने वाला है। अपने मन को जिसने इच्छा के आधीन कर दिया है। उसके समान कोई पापी नहीं।

'आज समय आया है'

आज समय आया है बन्धुओ।
उठो, उठाओ, अपना ये भाल,
अपने हर शत्रु को दिखा दो,
प्रताप की सी भौंहे कराल।
आज मां भारती के पगों में,
रख दो अपनामस्तिष्क विशाल,
आज समय आया है बन्धुओ!
दिखा दो वीर हाथों की चाल॥
मां भारती निराश न हो,
कह दो-तुम सपूत मरे नहीं।
राणा जिन्दा है शिवा जिन्दा है,
शत्रु के आगे जो गिरे नहीं।
ऋषि दयानन्द का ब्रह्मचर्य है
औ गांधी का सत्य भी डिगा नहीं,
जब तक रक्त की एक बूंद है
तब तक कोई भारतीय मरा नहीं॥
उठो-उठो, सोओ मत अब,
अब तुम्हें नहीं करना विश्राम,
कोनो-कलों मे हाथ जमाओ,
और गेहूं से भर दो खलिहान,
बढ़ो, जवानों को उत्साह दो,
दे, दो उनके लिए रक्त का दान,
आज समय आया है बन्धुओ!
करो जी खोल कर बलिदान॥

—अरुण सरीन

आर्य गजट के १६ जून सन् १९६३ अंक में 'एक प्रान्त में दो सभाएं क्यों चलें ?' शीर्षक टिप्पणी पढ़ी। पहिले भी इस निष्पक्ष पत्र में यह प्रस्ताव आता रहा है कि संसार को एकता का पाठ पढ़ाने वाले आर्यसमाज की एक ही प्रान्त में दो सभाएं इस क्रांतिकारी संस्था के नाम पर कलंक है इन दोनों उन्हें मिलाकर एक कर दिया जाये ताकि इस संगठन में फूट के बीज का नाश होकर एकता की स्थापना हो। एक अवसर पर जब आर्य गजट के योग्य सम्पादक पं० दुर्गादास जी ने आर्यसमाज के समस्त झगड़ों को पांच निष्पक्ष संन्यासियों के हाथों में सौंपने का सुझाव आर्य जगत के सामने रखा था तो इस सम्बन्ध में 'आर्य गजट' की फूट दूर करने की नीति की सराहना के प्राप्त पत्रों में अधिक गुरुकुल विभाग वालों के थे। कई पत्रों में यह लिखा था कि एक प्रबल आन्दोलन चलाना चाहिए जिस से दोनों सभाओं की एक सभा हो जाये और इस का नेतृत्व किसी त्यागी और सारा समय देने वाले सज्जन को सम्भाला जाये। 'आर्य गजट' के स्तम्भों में पाठक सभाओं और समाजों के झगड़ों के विरुद्ध विचार पढ़ते ही रहते हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का सम्बन्ध सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से कराओ सम्बन्धी चिरकालीन स्वप्न पूरा होने में भी 'आर्य गजट' का बहुत बड़ा हाथ है। जैसे वह शुभ इच्छा पूरा हो गयी थी वैसे ही इस शिव सकल्प की पूर्ति की आशा रखनी चाहिए। आर्य गजट के अवैतनिक सम्पादक श्री सन्तराम जी असमानी के सम्पादकीय लेख के निम्नलिखित वाक्य ध्यान पूर्वक पढ़ने से सम्बन्ध रखते हैं—

'मेरी इच्छा तो यह है कि इस वक्त कालेज और गुरुकुल की नाम नेहाद तफरीक की दीवार भी ढहा

पंजाब की आर्य प्रतिनिधि सभाओं का मिलाप

[लेखक श्री भक्तराम शर्मा(अफ्रीका वाले) जालन्धर]

देनी चाहिए। हालात साजगार हैं। फजा म्वाफिक है। दोनों सभाओंके तअलुकात निहायत खुशगवार हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बन्ध होने पर आर्यसमाज गुरुकुल विभाग फीरोजपुर छावनी के मन्त्री श्री रौशनलाल जी ने लिखा था 'आप ने वह काम किया जो बड़े २ नेता न कर सके। आर्य समाज कठूआ के मन्त्री श्री मुलकराज जी ने लिखा था—'सम्बन्ध की सूचना पढ़कर आर्यसमाज को बड़ी प्रसन्नता हुई। अच्छा हो यदि दोनों सभाएं भी एक हो जाये।' 'आर्य गजट' के सम्पादकीय लेख के शब्दों मे इस के सामने गुरुकुल और कालेज विभाग का भेदभाव नहीं। जिस सभा अथवा समाज का काम अच्छा होगा वह उस की प्रशंसा विना पक्षपात करेगा। आर्य गजट का, इस दिशा में कि आर्य समाज का एक ही संगठन होना चाहिए और दूई का कलङ्क हम में से समाप्त होना चाहिए, प्रयत्न सराहनीय है।

इस समय जब कि वातावरण शुद्ध है दोनों सभाओं का मिलाप हो जाये तो आर्यसमाज के लिए हितकर है। कैसी थी वह अशुभ घड़ी जब आर्य समाज के दो दल हुए थे और उस दिन से भी मनहूस दिन वह था जब स्वर्गीय पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर के समय दोनों दल इकट्ठ होकर फिर अलग हो गये थे। भागीरथ दयानन्द द्वारा लायी गयी आर्य गङ्गा के पृथक् प्रवाह न होते तो आर्य स्रोत की प्रारम्भिक अवस्था वाली निर्मलता, और मधुरता रहती। अस्तु! दो दल होने का मुख्य कारण पाठ्य प्रणाली का विषय ही था। यह बात स्वर्गीय लाला लालचन्द एम. ए. प्रधान डी० ए० वी० कालेज सोसाइटी के अपने पच्चीस वर्षीय वृत्तांत के पृष्ठ ६ पर अङ्कित है— 'झगड़ा प्रभुत्व (बड़ाई) के लिए था। घास मांस का नहीं था।' महात्मा दल के हंसराज मास्टर दुर्गाप्रसाद जी ने लिखा था—'पं० गुरुदत्त जी कहते थे कि डी. ए. वी. स्कूल में वैदिक सस्कृत ग्रन्थ पढ़ाये जायें और लालचन्द जी आदि इसके विरुद्ध थे। यह झगड़ा बहुत बढ़ा। यहां तक कि सन १८९३ में दो समाजे हो गयी।'

मैंने पत्रों में पढ़ा था कि आर्य-समाज के मतवाले और दयानन्द भक्त श्री देवी दयाल जी चण्ढोक ने प्रचुर राशि इस शर्त पर देने के संकल्प की घोषणा की थी कि दोनों सभाएं मिल जायें' परन्तु स्वार्थी नेताओं ने मिलाप न होने दिया था। आज से लगभग ४० वर्ष पूर्व भी मिलाप सम्मेलन हुआ था। जो आर्य भाई मांस का प्रश्न उठाते थे उन्हें स्व० स्वामी सर्वदानन्द जी ने उस सम्मेलन के प्रधान पद (स्यात) के आसन से उत्तर दिया था—'यदि एक दल का कोई सदस्य प्रत्यक्ष रूप में मांसाशन करता है तो दूसरे दल का लुकछुप कर। मांस भक्षी दोनों पक्षों में हैं। सन् १९५४ के आ० प्र० नि० सभा के अमृतसर में सम्पन्न वार्षिक अधिवेशन में फिर सभा का ध्यान मिलाप की ओर आकर्षित किया गया था तो उस अधिवेशन के प्रधान ने यह कह कर बात टाल दी थी कि समाजों की सम्पत्तियां इस में बाधक हैं। सारांश यह कि आर्यों के हृदय में दोनों विभागों के एक हो जाने के लिये बड़ी तड़प है और वे चाहते हैं कि शीघ्राति शीघ्र आर्य समाज के माथे पर से यह कलंक का टीका उतर जाये।

अब तो बहुत आर्य समाजों के अधिकारी दोनों सभाओंके प्रचारकों को अपने उत्सवों पर आमन्त्रित करने लग पड़े हैं परन्तु मैं आर्य समाज भेड़ा - तलवाड़ा के मन्त्री और डी. ए. वी. मिडल स्कूल के मुख्याध्यापक के रूप में समाज, स्कूल, कन्या पाठशाला और आर्य-कुमार सभा के वार्षिकोत्सवों तथा मेलों पर उस समय दोनों सभाओं के उपदेशक और भजनीक बुलाया करता था जब उन में संघर्ष की सम्भावना का भय मुझे दिखाया जाता था पर हुआ कभी न था। मेरी तो विद्यार्थी जीवन से ही प्रबल इच्छा रही है कि कालेज, समाज और गुरुकुल समाज का भेद-भाव मिट जाये। मैं विरोधियों का यह ताना, कि तुम आर्य समाजियों में भी दो पार्टियों के रूप में फूट है, सुनकर बहुत लज्जित हुआ करता था। आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर के मन्दिर के चौबारे में सन १९२० में बैठे हुए स्व० सत्यानन्द जी महाराज (उनके पास ब्रह्मचारी युधिष्ठर (स्वा० ब्रनानन्द जी) बैठे हुए थे) से भी मैंने शिकायत की थी। उन्होंने उत्तर दिया था— 'अपने-अपने ढंग से दोनों ठीक काम कर रहे हैं।'

लेख लम्बा न हो जाए इसी-लिए मैं आर्य भाइयों की सेवा में प्रार्थना करता हूं कि वे आर्य गजट के प्रस्ताव का स्वागत करते हुए तब तक शांति से न बैठें जब तक दोनों सभाओं का मेल न हो जाए। अब समय अनुकूल है। लोहा गरम है। केवल चोट लगाने का विलम्ब है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

...व की आर्य...

(पृष्ठ ७ का शेष)

...व जी शास्त्री काव्य तीर्थ ... में अब शिक्षा सम्बन्धी ... ही है कि स्कूलों व ... आरम्भ से अंग्रेजी पढ़ ... म. ए. बनते हैं और ... आरम्भ से संस्कृत पढ़ कर पीछे बी. ए. एम. ए. बनते हैं। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा और डी. ए. वी. कालेज कमेटी दो पृथक् संस्था हैं। कालेज और स्कूल कालेज कमेटी के अधीन हैं और सभा के अधीन वेद प्रचार का कार्य है परन्तु आर्य प्रतिनिधि सभा के आधीन गुरुकुल कांगड़ी, कन्या गुरुकुल देहरादून और कई शाखा गुरुकुलों के अतिरिक्त राज्य शिक्षा पद्धति के अनुसार शिक्षा देने वाले ५ कालेज, ३० लड़कों के स्कूल और ... कन्या पाठशालाएं हैं। ४ ... सभा के सीधे अधीन नहीं ... प्रभाव में हैं। ८ हाई स्कूल ...ओं के अधीन हैं। गुरुकुल वालों के पास उपदेशक विद्यालय और कालेज वालों के हां ब्रह्म-विद्यालय है। जब शिक्षा सम्बन्धी भेद ही जिसके आधार पर दो दल हुए थे मिट गया तो मिलाप न होने का कोई कारण नहीं।

अन्त में १४-२१ फरवरी सन् १९६० के आर्य गजट के शिवरात्री अंक में पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की मिलाप सम्बन्धी अपील के कुछ शब्द पाठकों के ज्ञानार्थ नीचे देता हूं:—

"इस इजलास (जिस में सार्वदेशिक सभा से प्रादेशिक सभा का सम्बन्ध करने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था) के बाद मैं जहां कहीं गया मुझे प्रत्येक प्रकार के लोगों ने हार्दिक बधाइयां दीं अपितु मुझे यह भी कहा गया कि पंजाब की दोनों सभाओं को भी अब मिला कर एक कर देंगे ... चाहिए ... इस कोशिश में हूं कि ... प्रचार का काम करने के लिए एक ही सभा होनी चाहिये इसके लिए मैंने कुछ आर्य नेताओं से विचार भी किया और मैं अपने हृदय की बात कहता हूं कि मुझे तो गुरुकुल विभाग और कालेज विभाग में रत्ती भर फर्क नजर नहीं आता। मैं तो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब से सम्बन्धित आर्य समाजों में जा कर वेद प्रचार करता और अब तक जीवन है ऐसी प्रकार करता रहूंगा। परन्तु मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस शरीर के त्यागने से पहिले ही पंजाब की दोनों आर्य सभाएं मिल कर एक हो जाएं और इनके संगठन से आर्य समाज में नव जीवन का संचार हो जाये और आर्य प्रादेशिक सभा का सम्बन्ध सार्वदेशिक सभा के साथ हो जाने से यह आशा ज्यादा प्रबल हो गयी है।"

मुझे पूर्ण आशा और विश्वास है कि आर्यसमाज की इस महान् समस्या 'मिलाप' की ओर आर्य-जनता ध्यान देगी और महात्मा आनन्द स्वामी जी की हार्दिक इच्छा पूर्ण करने में कोई प्रयत्न उठा न रखेगी।

शोक समाचार

आर्यसमाज मालवीय नगर देहली के ... श्री रामगोपाल जी गिरधर का ३-७-६३ को स्वर्गवास हो गया है। इस देहान्त से मालवीय नगर के समस्त आर्य परिवारों को गहरा आघात पहुंचा है। यह समाज उनकी आत्मा की सद्गति व उनके परिवार को इस कष्ट सहन करने की शक्ति प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना करती है।

देवराज जुनेजा
मन्त्री समाज

दयानन्द कालेज जालंधर अमृतसर

इस बार पंजाब युनिवर्सिटी के परीक्षा परिणामों में डी. ए. वी. कालेज जालन्धर ने जो शानदार स्थान प्राप्त किया है तथा अमृतसर के अपने कालेज के भी जो उत्तम परिणाम निकले हैं। उनसे सारे आर्यजगत् का मस्तक बहुत ऊंचा हो गया है। जालन्धर डी. ए. वी. कालेज ने तो कमाल कर दिया है। ... भी ... जालन्धर का अपना यह विशाल कालिज सर्वप्रथम आया है। अपनी परम्परा को कायम रखा है। प्रिंसिपल भीमसेन जी ... को हम हार्दिक बधाई देते हैं। अमृतसर कालेज के प्रिंसिपल जी को भी हार्दिक बधाई है। प्रभु करें कि आर्य समाज की यह भारी छावनियां इसी प्रकार आगे ही आगे बढ़ती जावें। —सं०

आर्यसमाज टोहाना में वैदिक धर्म की धूम

यहां पर ५ जुलाई से ८ जुलाई तक प्रातः और सांय काल आर्य प्रादेशिक सभा के सुयोग्य भजनोपदेशक श्री ठाकुर दुर्गासिंह जी, आर्य तूफान के बड़े जोशीले तथा धार्मिक उपदेश तथा संगीत हुए। आर्य समाज टोहाना के प्रधान श्री ला. कृष्णलाल जी गुप्त के पिता दानवीर श्री ला. देवीदयाल जी गुप्ता ने १००१) की थैली ठाकुर दुर्गासिंह जी को आर्य प्रादेशिक सभा के लिए दान दी। इसी प्रकार अन्य समाजें भी सभा को अधिक से अधिक धन देकर सहायता करें।

निवेदक :—
मंत्री आर्यसमाज, टोहाना

केन्द्रीय आर्य सभा कानपुर का निर्वाचन

प्रधान—डा० शिवदत्त जी, मन्त्री—श्री देवीदास जी आर्य, सभासद महापालिका, कोषाध्यक्ष—श्री बलराम जी गम्भीर।

देवीदास आर्य मंत्री

आर्यसमाज मन्दिर भिलाई के निर्माणार्थ दान

१. स्टील प्लांट के माध्यम से अनेक आर्य सज्जन भी भारत के कोने-कोने से यहां आ चुके हैं, और आर्यसमाज का काम बड़े उत्साह, लगन और तन्मयता से रहे हैं।

३. भिलाई नगर के देशीय व अन्तर्देशीय महत्व को ध्यान में रखते हुए यहां के आर्यसमाज ने एक सुन्दर एवं नगर के अनुरूप आर्यसमाज मन्दिर निर्माण करने का दृढ़ निश्चय किया है।

४. अतएव भारत वर्ष के समस्त आर्य समाजों, आर्य संस्थाओं और आर्य, दानप्रिय महानुभावों से अनुरोध पूर्वक निवेदन है कि वह मन्दिर निर्माणार्थ मुक्त हस्त से दान देकर पुण्य और यश के भागी बनें।

५. दान की राशि, मंत्री आर्य समाज भिलाई, क्वार्टर नम्बर ३ ए, सैक्टर नंबर १०, स्ट्रीट नंबर १५, ... हुई, ... प्र० या मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य प्रदेश व विदर्भ, दयानन्द भवन, ... सदर, नागपुर के पते से भेजने की कृपा की जाय।

मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्य प्रदेश व विदर्भ, दयानन्द भवन, नागपुर

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



आर्य जगत्

टेलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३०) रविवार १३ श्रावण २०२०— २८ जुलाई १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार-प्रादेशिक जालन्धर

वेद सूक्तय:

शतहस्त समाहर

हे मानव ! तू सौ हाथों से धन आदि पदार्थ एकत्रित कर, कमा। आलसी न बन अपि दो हाथों वाला होकर सौ हाथों के समान खूब धन धान्य कमा।

सहस्रहस्त संकिर

और हजार हाथों वाला बनकर उस कमाए हुए पदार्थों को बखेर दे, बांट दे, दान कर दे। स्वार्थी बनकर जोड़ता ही न रहे अपितु उसका दान भी करता रहे। खूब कमा और खूब बांट।

इह स्फाति समावह

इस प्रकार से इस जीवन में तू बड़ा भारी भण्डार प्राप्त करेगा। कमाने और दान देने से तुझे जीवन में बड़ा पुण्य मिलेगा। शुभ कर्मों का फल पायेगा।

• अ थ र्व वे द

वेदामृत

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः॥

अर्थ :—हे परमात्मन ! (शं नः) हमारे लिए कल्याणकारी हों (देवीः) दिव्य गुणों से भरे (आपः) ये जल तथा जल से उत्पन्न पदार्थ (अभिष्टये) अभीष्ट की सिद्धि के लिए, अपने मनोरथों तथा मंगल कामनाओं की सिद्धि के लिए और (पीतये) तृप्त करने के लिए, इन को पान करने के सुख के लिए (भवन्तु) सुख करने वाले होवें। प्रभो ! (शयोः) सदा सुख की, मंगल की, आनन्द ही आनन्द की (अभि) चारों ओर सब तरफ (स्रवन्तु) वर्षा के प्रवाह चलते रहें (नः) हमारे। हमारे चारों ओर सदा कल्याण की वर्षा होती रहे। मीठे २ जल भरे मेघ भी बरसते रहें।

भाव :—परमेश्वर ! आप दिव्य शक्तियों से भरे भण्डार हो। आप से ही प्रार्थना करते हैं, कृपा करो। हमारे मनोरथों, जीवन कामनाओं की पूर्ति करने के लिए तथा पूर्ण आनन्द की प्राप्ति के लिए अमृतमय रसों का पान करने के लिए मीठे, शीतल जलों की वर्षा होती रहे। आप का शुभ आशीर्वाद भी अमृतभरा मेघ बन कर हम पर बरसता रहे। हमारे चारों ओर सब स्थानों में, चारों आश्रमों, जीवन की चारों दशाओं अवस्थाओं में, विश्व के चारों कोनों दिशाओं में सुख की ही सदा वर्षा होती रहे। मंगल हो। —सं०

वेद सप्ताह रक्षा बंधन उत्साह से मनाओ

वेद आर्यों का परम धर्म, परम रस, और परम जीवन है। पांच अगस्त से १२ तक श्रावणी उपाकर्म, वेद सप्ताह, रक्षा बंधन और जन्माष्टमी के महापर्व हैं।

सब आर्य समाजें इस वेद सप्ताह को वेद समारोह से मनाएं। यज्ञ वेद कथा, का आयोजन करते हुए वेद स्वाध्याय का व्रत लें। वेद सम्बन्धी ट्रैक्ट दूसरों में बांटे वेद प्रचार के सभा कोष को दान बलिदान से भरे।

इस सप्ताह को क्रियात्मिक रूप देना है आज के विषम और अशांत युग में वेद का प्रचार बड़ा आवश्यक हैं आर्यो वेद प्रचार के कार्य में तन, मन, धन से जुट जाओ विश्व के कोने २ में वैदिक धर्म की पताका लहराने की दीक्षा ली है तो उसे पूर्ण करो।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद—

सत्यं शिवं सुन्दरम्

(ले०—श्री लालचन्द जी रिटायर फिनाञल डिपार्टमैंट)

सत्यं शिवं सुन्दरम् भगवान् सनातन है सदा से है। वह आदि और अनादि है। वह सत्यं शिवम् श्वाश्वतम् है, वह सत्य है शिव मंगलमय है और शाश्वत है। भगवान महान से भी महान है वह परम ब्रह्म है। वह खं ब्रह्म है, सर्वव्यापक है वह अन्तर्यामी है वह हृदयविहारी है। प्रत्येक हृदय में उसका वास है। वह हृदय में निवास करता हुआ आनन्दमय है। वह परम शक्तिमान है। वह अनन्त है असीम है उस मे सारी जगती है। वह समस्त जगती में रम रहा है। वही घट-घट वासी है। परम शक्तिमान भगवान हमारे समीपतम है। वह हम सब का परम बन्धु है। हमारा सच्चा सुहृद परम सखा है। वह सदा साथ रहता है वह सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म है। वह सत्य है ज्ञानमय है अनन्त है और वह परम महान है। वह कल्याणमय परम सुखमय है वह परम सुन्दर है उसका अनुपम सौन्दय उसकी सुन्दर सृष्टि से व्यक्त होता है। भगवान अनुपम है उसकी उपमा नहीं हो सकती, उसकी प्रतिमा भी नहीं बन सकती। जो उस भगवान की प्रतिमा बनाते हैं वे हैं घोर अन्धकार मे वे असीम को सीमित दिखाते हैं। अनन्त को सन्त दिखाते हैं भगवान सत्चित आनन्द-स्वरूप है। उसके गुण जानने से तथा उन्हें धारण करने से ही हम उस दयामय प्रेममय भगवान के उपासक बन सकते हैं। निष्काम जनसेवा ही भगवान की भक्ति है उसकी आराधना की जाती है उसके गुण-गायन करने से और वह स्तुति अधूरी है यदि भगवत गुण हम धारण करने का संकल्प न करे और उन्हें दृढ़ता से धारण करके पूरी लग्न से अपना संकल्प पूरा न करे। जो व्यक्ति भगवान का उपासक होना चाहता है उस के लिए भगवान के गुणों को जानना और भली प्रकार से उन्हें जानकर पूरे तौर से उन्हें समझ कर अपने जीवन व्यवहार मे धारण करना चाहिये।

भगवान के गुण दिव्य हैं। भगवान परम देव है देवाधिदेव हैं। वही हमारा उद्देश्य है वही ध्येय है। वही आदेश है। उस की प्रेरणा शुद्ध अन्तः करण मे हुआ करती है। भगवान की प्रेरणा की उपेक्षा नहीं होनी चाहिये। आत्मा की वाणी सुननी चाहिये। मन की कामना ही आत्मा की वाणी नहीं। आत्मा की वाणी भी निर्भ्रान्त होती है क्योंकि आत्मा अमर चेतन सत्ता है आत्मा की वाणी में सकल्प की अग्नि है। यह अग्नि श्रम और तप से और श्रद्धा से प्रदीप्त होती है और हविपाकर प्रज्वलित होती है। जो कार्य एक व्यक्ति सम्पन्न नहीं कर सकता वह मनुष्यों की संगठित शक्ति के लिए सुगम हो जाता है। सहकारिता और सहयोग में बल है उसे भगवान का संबल भी मिलता है। मिलना, मिले रहना और सदा मिल कर कार्य करना सर्व मंगल के लिए सर्वहित के लिए देव यज्ञ है। इस में संकल्प अग्नि प्रदीप्त होती है और स्नेह से यह अग्नि प्रज्वलित रखी जाती है। देव यज्ञ में दिव्यजनों का सहयोग अभिप्रेत है। द्वेष से यह यज्ञ भंग हो जाता है। द्वेष भावों को यज्ञ आरम्भ करने से पहले ही समाप्त करना उचित है। द्वेष रहित और क्षोभ रहित होकर पवित्र भावना से सब की मंगल कामना की पूर्ति के लिए देव यज्ञ होता है। देव यज्ञ से सभी दिव्यजन सम्मिलित शान्ति से कार्य करते हैं और परिणाम होता है सारे समाज का सम्यक् विकास समाज में ऐश्वर्य और समाज की सर्वोन्नति सारे दिव्यजन अपना भाग प्रसन्नता पूर्वक पूरी लग्न और इच्छा से पूरा करते हैं तभी देवयज्ञ संपन्न होता है। देवयज्ञ संपन्न होता जब सद्भावना और सर्व-मंगल की कामना चरितार्थ हो। संकल्प हमारा प्रबल रहे तभी हमारे कार्य में दक्षता आती है और सभी को सुख-शांति और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

सर्वेश्वर परमेश्वर श्री भगवान का उपासक जिसने भगवान के गुण धारण करके उसकी निकटता प्राप्त की है वह कभी दीन-हीन पराधीन नहीं रह सकता। वह अवश्य ऐश्वर्यवान सुसम्पन्न ही रहेगा और सदा साधन सम्पन्न रहेगा। भला सर्व समर्थ भगवान का उपासक भी कभी असमर्थ हुआ है। प्रतीक पूजा मूर्ति पूजा की कुछ भी उपयोगिता नहीं। मूर्ति पूजा करने वाला स्वय जड़वत हो जाता है वह पुरुषार्थ हीन व्यक्ति मूर्ति की अर्चना करता है और कुछ भी परिवर्तन जब वह अपने मे नहीं देखता तो उसका भगवान में निश्चय ही नहीं रहता। उसका आत्म-विश्वास गिर जाता है वह असमर्थ और तेज-हीन हतप्रभ रहता हुआ अपने भाग्य को ही कोसता रहता है। भगवान का उपासक समृद्ध और यशस्वी होता है। भगवान का उपासक सदा तेजस्वी वीर्यवान बलवान विश्वासी व्यक्ति है। उस में विपुल शक्ति होती है वह कभी भी घबराता नहीं क्योंकि उसे अपने अन्तर्यामी हृदय विहारी भगवान पर पूरा भरोसा है। उसका आत्मविश्वास बढ़ा रहता है उसमें महती कार्य क्षमता रहती है जिसके कारण वह अजेय होता है सदा विजयी होता है भगवान के उपासक की जीवन संघर्ष में कभी भी पराजय नहीं होती।

भगवान हम में है हम भगवान में हैं। वह हमारा बंधु है। हम भगवान से अलग नहीं हो सकते। उसको जीवन व्यवहार से भूल जाना ही उससे दूर होना है यह ही मनुष्य की मृत्यु है। भगवान से दूर रहने से, उसे भूल जाने से, मनुष्य अपने में जीवन का दुःख देखता है और उसका पतन आरम्भ हो जाता है।

हम सदा सत्य प्रेम में दृढ़ रहें और अपने अन्दर सद्गुणों का विकास करे, सदा स्थिर बुद्धि से सब से यथायोग्य धर्मानुसार प्रेम का व्यवहार करें तो हमें अनुभव होगा कि हम भगवान के निकट हो रहे हैं और उस जीवन, ज्ञान प्रेम और आनन्द के अक्षय स्रोत से जुड़े हुए हम निरंतर नव-जीवन, नया उत्साह और नया साहस प्राप्त कर रहे हैं और हमारे जीवन में उज्ज्वलता आ रही है और हमारे शुक्ल जीवन में हम निरंतर ऊपर ही ऊपर परम ज्योति की ओर चढ़ रहे हैं। हम सदा प्रगतिशील रहें और उन्नतिशील तथा प्रयत्नशील रहें तो भगवान से दैवी सहायता मिलती है और हमारे जीवन मार्ग में प्रकाश रहता है। आनन्दमय ज्ञानमय भगवान का परम प्रकाश जब निरंतर परम ज्योति में होता रहता है तो उपासक भी अपने में सामर्थ्य अनुभव करता है। सत्यं शिवं सुन्दरम् सत् चित् आनन्द-स्वरूप प्रभु का उपासक सदा उन्नत होता है परम सुन्दर का उपासक सुन्दर होता है उसके जीवन में सौन्दर्य और सदाचार का आकर्षक सौरभ रहता है।

—

म्पादकीय—

आर्य जगत्

२३]रविवार १३ श्रावण २०२०, २८ जुलाई १९६३[अंक३०

रक्षा बन्धन का पर्व

समीप आ रहा है। यह श्रावणी ाकर्म का भी उपक्रम होगा। ार्य समाज के लिए इस का विशेष हत्व है। बहिने तो अपने वीरों ाईयों के हाथों में सुन्दर २ रंगीन तारों से बनी राखियां बांधेगी। इस बार भारतीय सीमाओं पर ऊंची २ हिमवाली चोटियों पर ठहरे हुए दिन रात एक कर के चीनी वर्बर शत्रुओं से अपने मातृमन्दिर के सम्मान की रक्षा करने वाले वीर सैनिकों के लिए भी देश के परिवारों की लाखों बहिनें रक्षाबन्धन के सूत्र बांधने के लिए भेजेगी इस वार का रक्षाबन्धन विशिष्ट तथा गम्भीर पर्व बन कर आया है। ब्राह्मण भी अपने यजमानो के हाथ मे राखी बांधेगे। उन को स्मरण नही। वे तो केवल दो चार पैसे लेने के भाव से ऐसा कर देते हैं। पर यदि वे स्वयं भी वेद के विद्वान् हों तो अपने यजमानो से इस पर्व पर कह सकते हैं कि वेद प्रचार के लिए तन मन धन देना पड़े तो संकोच न करना। यह पर्व जहां भ्रातृप्रेम का परिचायक होता है वहां वेद प्रचार की ओर भी विशेष ध्यान दिलाता है। इस दिन से हमारे पुरातन लग वेद के स्वाध्याय का आरम्भ करते थे। यज्ञ की वेदी पर बैठकर इस दिन वेद स्वाध्याय के सकल्पी बनते थे। वेद प्रचार के परम धर्म के लिए कुछ न कुछ समय, सम्पत्ति देने की दीक्षा लेते थे। अब वर्षके बाद यह फिर आ रहा है। इस वार हम चाहते हैं कि आर्य समाजें इस पर्व को बड़े ही समारोह से मनाने का कार्य-क्रम बनाएं। कागजों या केवल मौखिक रूप में ही न अपि क्रियात्मिक रूप में जीवन मे आचरित करके निभाएं। वेद के लिए खास काम करना पड़ेगा तभी कुछ बन सकेगा। आज अन्य सब कुछ तो ठीक हो रहा है, प्रगति मन्द पर है किन्तु वेद प्रचार के कार्य की प्रगति मन्द है। अन्य कार्यों के लिए लाखो रुपया तथा सैकड़ों आदमी हैं पर इस काम के लिए न धन और न जन ही है, है तो बहुत थोड़े। काम बड़ा विशाल पर साधन बहुत ही थोड़े। इस का यह अर्थ नहीं कि धन या जनों का अभाव है। न धन की न जन की कमी है पर वास्तव मे बात यह है कि कमी मनोभाव तथा श्रद्धा की है। इस के बिना काम नहीं होता। हर काम के लिए धन है पर वेद प्रचार के लिए नहीं है। निश्चिन्त लोग भी वेद प्रचार के लिए कम बाहर निकलते है। सब चाहते है कि वेद प्रचार तो जोर से हो पर इस के लिए धन भी दूसरे देवे तथा बाहर भी दूसरे लोग निकलें। हमें कुछ न करना पड़े, सब कुछ दूसरे ही करते है। तभी काम नहीं बनना। इस बार सारा विचार बदलना होगा। सारे मिलकर इस बार संकल्प करें कि वेद प्रचार के पवित्र कार्य के लिए अपने घर से ही धन जन की आहुति देना आरम्भ करेंगे। यही सच्चा पर्व मनाना होगा।

—त्रिलोक चन्द्र

—

समय आ गया है

जबकि सारे समाज को इस आवश्यक बात पर विचार करना चाहिए कि आर्यसमाज के परस्पर समय २ पैदा होने वाले मतभेदों को दूर करने के लिए कोई ठोस उपाय सोचे जायें। विचारों की स्वतन्त्रता अच्छी है। अनेक बातों में मतभेद भी ठीक है। नानाविध विचारों के बाद ही तो एक निष्कर्ष निकलता है। विचारों में भेद पूर्व युग मे भी और आगे भी रहेगा पर मनोभेद ठीक नहीं है। मतभेद तो किसी स्थान पर पहुंचा देता है पर मनोभेद प्रगति को रोक देता है। आर्यसमाज में कई बातों मे मतभेद होता रहता है फिर भी सारे मिल कर सर्वसम्मत या बहुमत से कार्य सम्पन्न होते रहते हैं। जनतन्त्र की यही विशेषता और आजादी है। पर मनोभेद अच्छा नहीं। आर्यसमाज जनतन्त्र पर विश्वास रखता है। इसके सारे निर्णय इसी द्वारा ही होते हैं।

कुछ समय से भारत में आर्य-भाईयों का मतभेद मनोभेद मे बदलता जा रहा है। जिस के कारण एक ही परिवार मे थोड़ी बहुत कटुता आने लगी है और दूसरे लोग भी समाज की ऐसी बातों पर दुःखी होने लगे हैं। कई बार यह कटुता मुकदमों का रूप भी धारण कर जाती है। आर्यसमाज एक विशाल आंदोलन है। इस के पास क्या कुछ नहीं है। बड़ी २ समाजे है, विशाल संस्थाएं हैं, सभाएं हैं, नानाविध कार्यों के विभाग हैं, बड़ा व्यवस्थित संगठन है, राष्ट्र मे इस के पास आदर्श संन्यासी महात्मा, विद्वान तथा शिक्षा विशारद हैं। सारे समाज के सुन्दर अंग है। किन्तु एक चीज की सब से कमी है इस समय तो विशेष कर अनुभव की जा रही है। आर्यसमाज का एक ऐसा उच्च न्यायालय हो जिस में भारत भर के पाच दस ऐसे योग्य निष्पक्ष तथा आदर्श पंच नियत हो जो समय २ पर समाज में पैदा होने वाले हर प्रकार के मतभेद, मुकदमों को निपटायें। उन का निर्णयसर्वमान्य हो ऐसा ट्रिब्युनल सारे देश के समाज का एक तथा प्रसिद्ध हो यह हमारा सुप्रीम कोर्ट हो। इसका फैसला शिरोधार्य हो। इसके दो लाभ होंगे, एक तो सारे समाज के मतभेदों को निपटाने के लिए एक ही स्थान होगा। हमे इधर उधर नहीं जाना पड़ेगा। आपस के मतभेद अपनी जगह निपटाये जायगें। दूसरा व्यय तथा विघटन कारी प्रवृत्तियो से भी बच जावेगे। संगठन का रूप और भी विशाल हो जायगा हमें मान है कि ऐसे काम के लिए आर्यसमाज के पास बड़ी २ विभूतियां हैं। ऊंचे २ महान भाव, आदर्श सन्यासी, निष्पक्ष विद्वानों की कमी नहीं।

आज समाज में विघटन का तत्व आने लगा है। यही समय है कि हम इस आवश्यक बात पर जल्दी से जल्दी विचार कर अपना बड़ा सुप्रीम कोर्ट समाज का स्थापित करें और अपने सारे मतभेदों को वहां ही निपटायें इस गम्भीर विषय को अवश्य ही कि क्रियात्मक रूप देने का जितनी जल्दी प्रयत्न किया जाये उतना ही हमारा भला है—सं०

आर्यसमाज पुल बंगश दिल्ली

महात्मा आनन्द भिक्षु जी ने १२ से १५-७-६३ तक चार दिन रात्री को वेदों की मनोहर कथा की। १६-७-६३ को पूर्णाहुती का दृश्य अनुपम था। एक हजार से अधिक प्रेमी यज्ञ पधारे।

अब ५ से १२ तक स्वामी वेद मुनि जी परिव्राजक कथा कर रहे हैं। वेद जयन्ति सप्ताह में भी आठों दिन यज्ञ होगा और १२-८-६३ को जन्माष्टमी के रोज ऋषि लंगर चलेगा —सुदेशकुमार मन्त्री

सिद्धान्त चर्चा

बाइबल ईश्वरीय ज्ञान नहीं

(ले० आचार्य शिवपूजन सिंह कुशवाहा 'पथिक' बी. ए. कानपुर)

आर्यों का यह अटल सिद्धान्त है कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है अन्य कोई भी ग्रन्थ विश्व में ईश्वरीय ज्ञान नहीं है। मुसलमान और ईसाई भी यह दावा करते हैं कि कुरान और बाइबल भी ईश्वरीय ज्ञान है। हम इस पर अपनी पुस्तक 'पाश्चात्यों की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान' पुस्तक में सूक्ष्म रूप से विचार कर चुके हैं। हमारी में दृष्टि में कुरान और बाईबल दोनों ही इलहामी नहीं हैं। आर्य समाज के प्रवर्तक, आदित्य ब्रह्मचारी, वेदोद्धारक, महर्षि दयानन्द जी सरस्वती अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' त्रयोदश समुल्लास के अन्त में 'बाइबल' के विषय में लिखते हैं :—

'इनकी बाइबल में लाखों बातें खण्डनीय हैं। ...थोडी सी बातों को छोड शेष सब झूठ भरा है, जैसे झूठ के संग से सत्य भी शुद्ध नहीं रहता वैसा ही बाइबल पुस्तक भी माननीय नहीं हो सकता किन्तु वह सत्य तो वेदों के स्वीकार में गृहीत होता ही है।'

महर्षि जी का लिखना नितान्त सत्य है।

ईश्वरीय ज्ञान की परीक्षा के लिए निम्नलिखित कसौटी हैं :—

१. वह सृष्टि के प्रारम्भ प्रकाशित हुआ हो।

२. उसमें किसी प्रकार का अनित्य इतिहास न हो।

३. उसकी भाषा अलौकिक हो और किसी भी देश विशेष की न हो।

४. उसमें सभी प्रकार के ज्ञान हों।

५. सृष्टि क्रम के विरुद्ध कोई बात न हो।

६. किसी प्रकार का परिवर्तन, मिलावट और प्रक्षिप्तांश न हों।

जिन ग्रन्थों में उपर्युक्त लक्षण ठीक घटित हो जाय वे ही इलहामी हो सकते हैं अन्य नहीं। इन लक्षणों को हम 'बाइबल' पर घटा कर देखते हैं कि वह ईश्वरीय ज्ञान होने के योग्य है या नहीं या केवल ईसाइयों की अन्ध श्रद्धा ही है।

'बाइबल' दो भागों में है एक का नाम 'पुराना नियम' (ओल्ड टेस्टामेन्ट) और दूसरे का नाम 'नया नियम' इंजील, (न्यू टेस्टामेंट) है। दोनों भाग ईसाइयों के लिए माननीय हैं। दोनों भाग में कुल ६६ पुस्तकें हैं। पुराना नियम में ३९ और नये नियम में २७ पुस्तकें हैं। पुराना नियम में उत्पत्ति नाम पुस्तक, निर्गमन नाम पुस्तक, लैव्य व्यवस्था नाम पुस्तक, गिनती नाम पुस्तक, व्यवस्था विवरण नाम पुस्तक, यहोशू, न्यायियों का वृत्तान्त रूत नाम पुस्तक, शमूएल नाम पहिली पुस्तक, दूसरी पुस्तक राजाओं का वृत्तांत पहिला भाग, राजाओं का वृत्तांत दूसरा भाग, इतिहास नाम पुस्तक पहिला भाग, इतिहास नाम पुस्तक दूसरा भाग, एज्रा नाम पुस्तक, नहेम्याह नाम पुस्तक, एस्तेर नाम पुस्तक, अय्यूब नाम पुस्तक, भजन संहिता, नीति वचन, सभोपदेशक, श्रेष्ठ गीत, यशायाह भविष्यद्वक्ता की पुस्तक, यिर्मयाह नाम पुस्तक, विलाप गीत, यहेजकेल नाम पुस्तक, दानिएल नाम पुस्तक, होशे, योएल, आमोस, ओबद्याह, योना, मीका, नहूम, हबक्कूक, सपन्याह, हाग्गै, जकर्याह, मलाकी ३९ पुस्तकें हैं। नया नियम में, मत्ती रचित सुसमाचार, मरकुस रचित सुसमाचार, लूका रचित सुसमाचार, यूहन्ना रचित सुसमाचार, प्रेरितों के कामों का वर्णन, रोमियों के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री कुरिन्थियों के नाम पौलुस प्रेरित पहिली पत्री, कुरिन्थियों के नाम पौलुस प्रेरित की दूसरी पत्री, गलतियों के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, इफिसियों के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, फिलिप्पियों के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, कुलुस्सियों के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, थिस्सलुनीकियों के नाम पौलुस, प्रेरित की पहली पत्री, थिस्सलुनीकियों के नाम पौलुस प्रेरित की दूसरी पत्री, तीमुथियुस के नाम पौलुस प्रेरित की पहिली पत्री तीमुथियुस के नाम पौलुस प्रेरित की दूसरी पत्री, तितुस के नाम पौलुस प्रेरित की दूसरी पत्री, तितुस के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, फिलेमोन के नाम पौलुस प्रेरित की पत्री, इब्रानियों के नाम पत्री, याकूब पत्री, पतरस की पहिली पत्री, पतरस की दूसरी पत्री, यूहन्ना की पहिली पत्री' यूहन्ना की दूसरी पत्री, यूहन्ना की तीसरी पत्री, यहूदा की पत्री, यूहन्ना का प्रकाशित वाक्य २७ पुस्तकें हैं। यहूदी, ईसाई और मुसलमान तीनों ही इन पुस्तकों को इलहामी किताब मानते हैं। यहूदियों का धर्म पुस्तक केवल पुराना नियम है और विश्वासानुसार अन्तिम पैगम्बर अभी उत्पन्न होने वाला है। ईसाइयों की धर्म पुस्तक पुराना नियम के अतिरिक्त नया नियम, इंजील, भी है। इसमें यीशु मसीह के द्वारा अन्तिम सन्देश परमात्मा की ओर से प्राप्त हुए हैं। मुसलमान लोग बाइबल के अतिरिक्त, कुरान, को अपनी इलहामी किताब और हजरत मुहम्मद को अपना अन्तिम पैगम्बर मानते हैं।

श्री जार्ज ब्रेथवेट ने 'संसार में सब से अद्भुत पुस्तक' नामक ६ पृष्ठ का एक ट्रैक्ट लिखा है जो सन १९५३ ई० में, दी नार्थ इंडिया क्रिश्चियन ट्रैक्ट एन्ड बुक सोसाइटी १८ क्लाइव रोड, इलाहाबाद १ से प्रकाशित हुई है। इस में लेखक ने बाइबल का संक्षिप्त परिचय दिया है। आप इस ट्रैक्ट के प्रथम पृष्ठ में लिखते हैं, बाइबल में भिन्न २ बीस या तीस लोगों के द्वारा लिखी हुई ६६ पुस्तकों का संग्रह है। वे लेखक एक ही श्रेणी के लोग नहीं थे इन में से कुछ तो राजा, कुछ मछुए, कुछ विद्वान और कुछ किसान थे। ये लेखक पन्द्र सौ वर्षों के भीतर भिन्न २ समयों और स्थानों के थे। श्री जार्ज ब्रेथवेट भी यह निश्चित नहीं कर पाए कि कितने लेखकों ने बाईबल को लिखा है आप भी अपना अनुमान लगाते हैं कि बीस या तीस लोगों ने लिखा है। ईश्वरीय ज्ञान में यह अटकल पंजू सिद्धांत क्यों है ?

पुराना नियम में प्रथम की छः पुस्तकों में प्रथम पांच मूसा की जो १४५१ पूर्व ईस्वी में उत्पन्न हुए थे और छठी किताब यहोशू की है। व्यवस्था विवरण नाम पुस्तक के ३४ में मूसा की मृत्यु और गाड़े जाने का वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसी पर्व के आयत ५ और ६ में यह लिखा है। तब यहोवा के कहने के अनुसार उस का दास मूसा, वहीं मोआब के देश मर गया। और उसने उसे मोआब के देश में बेतपोर के सामने एक तराई में मिट्टी दी, और आज के दिन तक कोई नहीं जानता कि उसकी कब्र कहां है। मूसा अपनी मृत्यु के समय एक सौ बीस वर्ष का था।' अब यदि मूसा रचयिता होता तो अपनी मृत्यु और गाड़े जाने का वृत्तान्त कदापि नहीं लिख सकता था और इस की सिद्धि 'आज के दिन तक' शब्द से स्पष्ट हो रही है। इस से यह भी ज्ञात होता है कि मूसा को मरे बहुत काल व्यतीत हो चुका तब यह पुस्तक बनी है। क्रमशः

ला० घसीटा मल से एक भेंट

(पृष्ठ ७ का शेष)

सो भाई! भगवान ही बचाए और जो जो कहो करूं, पर सिपाही बनना तो मेरे वश का रोग नहीं। ये जोड़े दोनों हाथ।

देश०—वाह! असली लाला निकले आप भी। अच्छा मैं आप को सिपाही बनने का ऐसा नुस्खा बताता हूं जिस में हिंग लगे न फिटकरी रंग चोखा ही आए!

घसी०—हैं हैं! क्या ऐसा भी कोई उपाय है? तो झट से कह डालो।

देश०—देखो भाई! आज भारत का हर नागरिक देश का सिपाही है।

घसी०—हर आदमी सिपाही है। सो कैसे? क्या तुम्हारे पास कोई जादू की लकड़ी है जिसके फेरने से सब सिपाही दीखने लगते हैं?

देश०—हां, जादू की लकड़ी तो यही है कि हर आदमी अपनी जगह पर अपना काम ठीक उसी अनुशासन और सावधानी से करे जैसे सिपाही युद्ध में करता है। युद्ध में सैनिक के सिर पर मौत खड़ी होती है। हमें भी हर समय यह स्मरण रखना चाहिये कि जब तक चीनी चोर भारत की चप्पा २ भूमि से दफा नहीं हो जाएं, मौत हमारे सिर पर मण्डरा रही है। सैनिक मोर्चे पर लड़ता है किन्तु हम घर बैठे ही अपनी २ कर्त्तव्य-परायणता से उसके सिर विजय का सेहरा बान्ध सकते हैं।

घसी०—वाह भाई! आपकी बातों ने तो मेरा अन्धेरा दूर कर दिया। जरा बताओ तो सही मुझे क्या करना होगा सिपाही बनने के लिए।

देश०—वह भी कहे देता हूं। जरा कानों का मैल निकाल कर सुनना। सब से पहले तो तुम्हें जमाखोरी और मुनाफाखोरी का ओछा विचार मन से निकाल फेंकना चाहिए। अब तक इस विपरीत ढंग से जो धन तुम ने कमाया है उस से दुगुने दण्ड के पैसे मिला कर यह राशि रक्षाकोष में दे डालो। क्योंकि पैसा देश का है, देश के लिए है। तीसरे सेठानी को सोने से पीली करने का विचार जो मन में आया तो पीले चीनी घर में घुस आएंगे। इस लिए सोने के बौण्ड खरीद लो। बोलो, हैं ये सारी बातें मञ्जूर? बोलो, बनोगे देश के सिपाही या ला० घसीटा मल ही रहोगे?

घसी०—बनूंगा! जरूर बनूंगा किन्तु.........

देश०—किन्तु क्या? क्या अभी भी कुछ शंका शेष है या मार मार कर ही हकीम बनाए जाओगे?

घसी०—नहीं नहीं, ऐसी बात नहीं। किन्तु मुझे कुछ पता तो है नहीं ये बौंड कहां से खरीदने हैं।

देश०—सो कोई चिन्ता की बात नहीं। यह सब काम मैं कर दूंगा। चलो अभी जो सोचा है कर डालो। शुभस्य शीघ्रं। स्वेच्छा से यह सब करो तो भला नहीं तो जब सरकार गले में अंगूठा डाल कर सब कुछ उगलवाएगी तब भी तो करोगे।

घसी०—वाह मेरे छोटे भाई! तुमने मुझे बचा लिया। नरक में पड़ते का हाथ पकड़ लिया। भगवान तुम्हारा भला करें।

देश०—हां क्यों नहीं? यदि हम सब भारत वासी खुली आखों से देश की वर्त्तमान स्थिति को देख समझ कर अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे, तो भगवान सब का भला करेगा। चलो अब चलते हैं।

मां आर्य समाज से

रचयिता : श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु M.A. दयानन्द कालेज शोलापुर

कैसे तेरा ऋण चुकाऊं?

व्यक्त कर सकता नहीं मैं तुझ से जो कुछ मात पाया।
प्रेरणा से मात तेरी पग सदा आगे बढ़ाया॥
मात चरणों तुम्हारे शीश मैं अपना निवाऊं
कैसे तेरा ऋण चुकाऊं?

तेरी खातिर कष्ट सहकर मां सदा आनन्द पाऊं।
जूझ कर मैं झंझटों से खिलखिलाऊं मुस्कराऊं॥
पुण्य वेदी पर तुम्हारी जन्म जीवन सब लुटाऊं
कैसे तेरा ऋण चुकाऊं?

विश्व की सब वेदना मां वेद विद्या से मिटा दूं।
सुखके सूर्य को ढकीं काली घटाओं को हटा दूं॥
प्यारी महतारी तुम्हारी धूम मैं जग में मचा दूं
कैसे तेरा ऋण चुकाऊं?

तुझ से पाया प्राण जीवन अजब धुन मन में समाई।
बुझ नहीं सकती कदापि ज्योति जोत ने जगाई॥
झूम कर मस्ती से माता तेरे गौरव गीत गाऊं
कैसे तेरा ऋण चुकाऊं?

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई देहली के समाचार

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा की परीक्षाएं ४ अगस्त से [illegible] आरंभ हो रही हैं। इस संबन्ध का सारा पत्र व्यवहार सार्वदेशि. दयानन्द भवन नई देहली से करें।

श्री ओम प्रकाश जी त्यागी आर्य प्रतिनिध सभा ईस्ट अफ्रीका के निमंत्रण पर २०. ७. ६३ को वायु यान से बंबई होते हुए नैरोबी जा रहे हैं। वे कानिया, युगन्डा, टांगानीका और जंजीबार प्रांतों का भ्रमण करके आर्य समाजों के कार्य का निरीक्षण और आर्य वीर दल के संगठन की व्यवस्था करेंगे।

दयानंद पुरस्कार प्राप्त करने के लिए निम्न विषयों को पांच पांच पुस्तकें दिसंबर ६३ तक सभा के कार्यालय में पहुंच जानी चाहिए।

(क) वेद विषयक मौलिक अनुसंधान पूर्ण रचना

(ख) महर्षि के सिद्धांतों एवं उन पर किए गए आक्षेपों के समाधान विषय पर उत्तम रचना

(ग) त्रैतवाद अथवा महर्षि दयानंद की दार्शनिक प्रक्रिया के प्रतिपादन में उत्कृष्ट दार्शनिक रचना। राम गोपाल मंत्री सभा

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआडर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

वर्ण व्यवस्था और महापुरुष

(ले प भद्रसैन जी दर्शनाचार्य साधु आश्रम होश्यारपुर)

कुछ समय हुआ, श्रद्धेय स्वा. समर्पणानन्द जी (पं. बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने यमुना नगर आश्रम में इस सम्बन्ध में ओजस्वी भाषण दिया था। उस का सक्षेप जनता के लाभार्थ देना उचित समझा है—

मनुष्य को बिना पुरुषार्थ के फल प्राप्त करना तो दूर रहा, परन्तु फल प्राप्ति की इच्छा भी नहीं करनी चाहिये। पुरुषार्थ ही पुरुष की उन्नति का मुख्य साधन है। अत एव वेद में प्रेरणा देते हुए कहा गया है—

'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः'

मनुष्य को आजीवन कर्म करते हुए ही जीवन की इच्छा करनी चाहिए जिजीविषेत् शब्द जीव धातु से इच्छार्थक सन् प्रत्यय के द्वारा बनता है। मनुष्य को केवल कर्म ही नहीं परन्तु इच्छा भी पुरुषार्थमय करनी चाहिये। बिना पुरुषार्थ के फल प्राप्ति में द्यूत लाटरी आदि हेय है अत एव ऋग्वेद के दशम ३४ वे सूक्त मे 'अक्षैर्मा दीव्यः' द्वारा निषेध करते हुए मत्कृषस्व' की भावनाओं द्वारा पुरुषार्थमय (खून पसीने की) आजीविका का निर्देश किया है।

इन्हीं भावनाओं से ही ओत प्रोत हो कर वैदिक संस्कृति में हमारे जीवन की दिन चर्या को बड़े सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक कार्य के लिए तत्तद् बोधक मन्त्रों का निर्देश किया गया है, जिन में उस उस कार्य का बहुत ही सुन्दर ढंग से परिचय दिया गया है, जैसा कि भोजन, शयन तथा प्रांत. जागरण के मन्त्रों के मनन से अवगत किया जा सकता है। इतना ही नहीं किन्तु व्यक्ति के सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन को भी वर्णाश्रम की व्यवस्था से आबद्ध किया गया है। व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन के सुविकास के लिए आश्रम व्यवस्था का विधान है। आश्रम व्यवस्था के अनुसार गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होने पर वर्ण व्यवस्था की अपेक्षा होती है। वस्तुत मानव जीवन की सामाजिकता का केन्द्र बिन्दु गृहस्थ आश्रम ही है। समाज का आधार परिवार है तथा परिवार का श्रीगणेश गृहस्थ के विधि-विधानों से होता है। इसी आश्रम का अन्य कार्य कलाप के साथ ही साथ आजीविका भी एक अंग है, ऐसी स्थिति में वर्ण व्यवस्था की अपेक्षा होती है। अतएव वर्ण व्यवस्था का सम्बन्ध कर्म से है जन्म से नहीं। इतिहास के पृष्ठों तथा आज की परिस्थितियों का अवलोकन करने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस जन्मना की वर्ण व्यवस्था ने भारत की स्थिति को विचित्र ही बना दिया है। जिस के भयावह परिणामों को देख कर बहुत से लेखकों एवं विचारकों ने वर्ण व्यवस्था को सर्वथा ही अनुपयोगी माना है।

वस्तुत. जन्मना की वर्ण व्यवस्था भी एक प्रकार से बिना पुरुषार्थ के फल प्राप्ति के समान है और यह हराम का माल है। इतिहास इस का साक्षी है कि जब-जब जन्मना की वर्ण व्यवस्था स्वीकार करके व्यवहार किया गया तब-तब देश के विकास का ह्रास ही हुआ। (कभी हराम के माल से बरकत नहीं होती) इस के परिणाम स्वरूप सब को विविध क्षेत्रों में उन्नति का समान अवसर प्राप्त नहीं होता है, तथा समान अवसर प्राप्ति के अभाव में कार्य तथा राष्ट्र का समुचित विकास नहीं हो पाता। अतएव देश के ह्रास और पराधीनता में जन्मना की वर्ण व्यवस्था मुख्य कारण बनी। वीर शिरोमणि शिवाजी ने राष्ट्र के सम्मान और स्वाधीनता के लिए जो कुछ किया वह किसी से भी छिपा हुआ नहीं है, परन्तु ऐसे वीर शिरोमणि के राजतिलक के अवसर पर यज्ञोपवीत के सम्बन्ध मे विवाद, अपव्यय और बहिष्कार आदि जो जो कार्य हुए, वह सब हमारे लिए लज्जा का विषय है। वस्तुत. इस घटना की मूल भित्त मे जन्मना की वर्ण व्यवस्था का ही हाथ था। अतएव महापुरुषों ने स्व-स्व समय में सदा कर्मणा की वर्ण व्यवस्था को ही सर्वथा क्रियात्मक रूप दिया।

महामानव योगिराज श्री कृष्ण जी ने जहां अपने अमर काव्य में कर्मणा की वर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन किया वहां व्यवहार के द्वारा भी इसी का ही समर्थन किया। गीता में स्पष्ट शब्दों में लिखा है—

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः। तस्य कर्त्तारमपि मां विद्धि अकर्तारमव्ययम्॥ गी० ८-३

'इस समय तो गुण कर्म के अनुसार चारों वर्णों की व्यवस्था करने वाला मैं हूं, परन्तु मै अनादि कर्ता नहीं हूं अर्थात् अनादि कर्ता तो परमेश्वर ही है'। [मनुस्मृति, गीता अन्य स्मृतियों तथा अनेक शास्त्रों में चारों वर्णों के विभेदक 'यजनं याजनं—' इत्यादि गुणों का संकेत किया गया है। जिस से स्पष्ट ही कर्मणा वर्ण व्यवस्था का सिद्धांत प्रति पादित होता है।

इसी प्रकार महान राजनीतिज्ञ आचार्य चाणक्य के जीवन से सिद्ध होता है कि वे कर्मणा की वर्ण व्यवस्था को अंगी कार करते थे। प्रायः ऐसी मान्यता है कि न्याय दर्शन के भाष्यकर्ता वात्स्यायन और चाणक्य एक ही पुरुष के दो नाम हैं। न्याय दर्शन के वात्स्यायन भाष्य में एक स्थल से। ब्रह्मणो गृहस्थ समयचमानः.. में कर्मणा की वर्ण व्यवस्था का ही प्रतिपादन होता है। आचार्य चाणक्य ने स्व व्यवहार द्वारा भी कर्मणा की व्यवस्था को ही प्रोत्साहित किया। यतोहि उन्होंने राज कुलोत्पन्न नन्द का त्याग करके चन्द्र गुप्त का आश्रय लिया अर्थात् चन्द्र गुप्त को ही सहयोग दिया, जिस के लिए मुद्रा राक्षस मे वृषल शब्द का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार वीर शिरोमणि शिवा जी ने स्व यवन सेनापति को शुद्ध करके जन्मना के स्थान पर कर्मणा की व्यवस्था को ही प्रोत्साहित किया।

वस्तुत: बात तो यह है कि हमें अभिमान करना भी नहीं आया अतीत काल पर किया गया अभिमान विशेष शोभा नहीं देता वर्तमान पर ही गौरव का विषय हो सकता है, क्योंकि वह तो दूसरों का पुरुषार्थ है, अपने पुरुषार्थ पर ही किसी अंश मे अभिमान गौरव का विषय बन सकता है वही वास्तविक यश का कारण हो सकता है। हमारे पूर्वज महान थे की अपेक्षा मै महान बनूंगा की भावना उन्नति के लिए अधिक उत्तम है। देखने मे तो भेद बहुत साधारण है परन्तु परिणाम से ही इस की वास्तविकता का ज्ञान हो सकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वाणी, लेखनी एव व्यवहार द्वारा कर्मणा की वर्ण व्यवस्था का ही समर्थन किया है। वस्तुतः किसी समाज एवं राष्ट्र में योग्यता के आधार पर की गई व्यवस्था ही उसके विकास का मूल कारण हो सकती है। तभी सब को समुन्नति का समान अवसर प्राप्त होता है और इसी में ही व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र का हित निहित है।

देश के व्यापारी वर्ग को कर्त्तव्य का बोध कराने वाली-एक व्यंग्य वार्त्ता

ला० घसीटा मल से एक भेंट

(ले० बहिन सुशीला देवी जी आर्या एम० ए० (द्वय) नरवाना)

(ला० घसीटा मल और देश बन्धु प्रवेश करते हैं)

घसीटामल—सुनाओ यार! कैसी खबर सार है?

देश बन्धु—खबर तो बस यही है कि यदि जीने की इच्छा है तो आठ पहर चौसठ घड़ी होशियार रहो। वरना.........

घसीटा०—वरना क्या?

देश०—वरना मरने को तैयार हो जाओ।

घसी०—क्या मतलब? मेरे भाई, कैसी डरावनी बातें कर रहे हो? शुक्र करो उस नीली चादर वाले का अब तो देश के सिर से संकट टल गया है। छः महीने से अधिक हो गए युद्ध बन्द हुए। इस अमन चैन के समय में भी मरने मारने की बातें क्यों करते हो? दुआ मांगो भगवान से कि कोई न मरे।

देश०—श्रीमान् लाला जी! मरने मारने की बातों से भी डर लगता है आप को! किन्तु याद रखो। मौत तो डरने वालों के पास भागी आती है। होश में आओ जिसे तुम शान्ति कहते हो यह शान्ति नहीं श्मशान का सन्नाटा है। लड़ाई बन्द जरूर है किन्तु कब तक? इसका पता न आप को है न मुझे। हां इस मुसीबत से बचने का एक ही उपाय है कि लड़ाई को भूलो मत। मौत को आलमारी में बन्द कर के ताला मत लगाओ। सब अपना २ कर्त्तव्य निभाओ और देश को सशक्त बनाओ। क्यों?

घसी०—ओ भाई। क्या लड़ाई की रट लगा रखी है? क्या तुम समझते हो मैं लड़ाई से घबराने वाला हूं? देखो मैं तो उस टाइप का आदमी हूं जिस के लिए चित भी मेरी पट भी मेरी। लड़ाई हो चाहे न हो अब तो मेरे पौ बारह हैं। क्योंकि लड़ाई की तो चर्चा में ही वह जादू है जो मुझ जैसे व्यापारियों के सिर चढ़ कर बोलता है। सो भाई लड़ाई हुई, मह'गाई बढ़ी और हमारे लाभ की वृद्धि रफ्तार से नहीं बल्कि २, ४, ८, १६ की रफ्तार से होती है। बस अपनी तो चान्दी है चान्दी। अपने राम फौज में भर्ती तो होने से रहे जो लड़ाई में मारे जाएंगे।

देश०—वाह लाला। खूब समझे! अरे यह लड़ाई सोलहवीं सदी की नहीं जो सिपाही की ही जान खतरे में हो। ज़रा दिमाग के पुर्जों को तेल देकर सोचो कि यदि बमबारी हुई तो किस भौंरे में छिपोगे? भले आदमी! इस लिए अच्छा यही है कि सब की जान की खैर मनाओ और ऐसा यत्न करो कि देश युद्ध के अभिशाप से बचा रहे।

घसी०—लो भाई! तुम भी कैसी अटपटी बाते करते हो। भला मैं क्या यह चाहता हूं कि लड़ाई हो। पर मेरे चाहने न चाहने से बनता ही क्या है? फिर मुझे तो यह भी पूरा विश्वास है कि हमारा देश इतना निर्बल नहीं जो पीले बौने चीनियों के सामने मात खा जाए। क्यों तुम्हारा क्या विचार है?

देश०—बात तो तुम्हारी बावन तोले पाव रत्ती सही है कि हमारा देश इतना निर्बल नहीं। परन्तु मेरे भाई, तुम जैसे मुनाफाखोर और देशद्रोही अपना घर भरने के चक्कर में पड़ कर इसे निर्बल बना जरूर रहे हैं। देखो, यदि तुम जैसों ने अपना ही लाभ सोचा और संकट की इस घड़ी में वस्तुओं का अनुचित मूल्य बढ़ाने व जमाखोरी का काला धंधा जारी रखा तो चीनियों से पहले भारत के शत्रु तुम हो तुम। समझे। अच्छा जरा यह तो बताओ कि चोर-बाज़ारी करके तुम जो धन कमा रहे हो उसका क्या करोगे?

घसी०—हें हें हें !!! यह भली कही। धन का क्या करूंगा? अरे भोले भाई! धन भी कोई ऐसी चीज है जिसके लिए सोचना पड़े कि इसका क्या किया जाएगा? इसका उत्तर तो बड़ा सरल है—धन बैंक में जमा होगा, पोजीशन ऊंची उठेगी, बेटे बेटियों का व्याह रचाया जाएगा, कोठी बंगले बनेंगे, एकाध नई मिल खड़ी हो जाएगी। और तो और हमारी सेठानी तो इन दिनों रोज पांच नये पैसे का प्रसाद ठाकुर जी को भेंट करती हैं कि इस बार मैं इतना धन कमाऊं, इतना कमाऊं कि उसे सोने से पीली कर दूं। क्यों, लगा पता कि मुनाफाखोरी को धनसे मैं क्या करूं।

देश०—हां! लग गया पता। किन्तु तुमने कभी इन बातों की गहराई तक जाने का यत्न नहीं किया नहीं तो तुम्हें भी पता लग जाता कि तुम्हारी ये सब योजनाएं शेखचिल्ली की सी हैं। तुम एक भारी भूल से पड़कर न केवल देश को धोखा दे रहे हो अपितु स्वयं भी धोखा खा रहे हो।

घसी०—धोखा खा रहा हूं? सो कैसे?

देश०—लाला जी महाराज! धन और सोने का जो उपयोग आपने बतलाया है वह आपके सपनों की दुनिया में ही हो सकता है क्योंकि यदि आपकी तरह सभी लोग देश हित को आंखों से ओझल करके रुपये बटोरने में लगे रहें तो हमारे देश का बल घट जाएगा और हमारे देश के निर्बल होते ही शत्रु की बन आएगी। याद रखो! चीनी लुटेरे की नीति मच्छर की सी है। जैसे मच्छर पहले तो मनुष्य के कानों में मीठे गीत सुनाता है फिर जब छिद्र देखता है तो ऐसा काट खाता है कि मनुष्य तलमला कर रह जाता है। इसी प्रकार चीनियों ने पहले तो हमारे कान में 'हिन्दी चीनी भाई' के मीठे राग सुनाए। फिर गले में बांहे डाल २ गर्दन पर छुरी चला दी। अब वह बिल में घुस गया है, ऐसा मत समझो। वह हमारे छिद्र देख रहा है। आज यदि हम किसी भी स्थान या व्यवसाय में होते हुए अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करते तो याद रखो हम शत्रु का मोर्चा मजबूत कर रहे हैं। इस लिए तेल देखो तेल की धार देखो। यदि हम अपनी काली करतूतों से शत्रु को निमन्त्रण देते रहे तो होगा यह कि न आप रहेंगे न बैंक बेलैंस न कोठी न मिल, न बेटे बेटियां न सेठानी। किस का व्याह रचाओगे, और किसे सोने से पीली करोगे? सो तुम्हारी सब आशाएं धूल में मिल जाएंगी। फिर देश को धोखा देने का कलंक माथे पर लगेगा वह रक्त से धोए भी न धुलेगा। यह लोक भी जाएगा, परलोक भी। अगर तुम्हें अपने दोनों लोक बिगाड़ने हैं तो जो चाहो सो करो। नहीं तो देश के सिपाही बनो, सिपाही।

घसी०—ओहो देशबन्धु जी। आपने तो अपनी पते की बातों से मेरे कानों के कीड़े झाड़ दिए। पर भाई मैं सिपाही कैसे बनूं? अपने बाप दादों ने तो कभी सात पीढ़ी में बन्दूक नहीं देखी। सच कहता हूं मैं तो होली के पटाखों की आवाज सुन कर ही जान छिपाता फिरा करता हूं।

(शेष पाच पर)

अदालती नोटिस

इश्तहार जेर हुआ आर्डर५रूल२०मजमूआज

बा अदालत श्री देवराज जी महाजन पी० सी० एस० सब जज

दर्जा १ भठिंडा

हरनाम सिंह वलद जोवर सिंह सकना तुंगवाली तहसील व

जि० भठिंडा सायल

बनाम

मुखत्यार कौर उरफ सुखपाल कौर जोजा हरनाम सिंह सकना हाल बुर्ज ढल्ला, तहसील व जि० भठिंडा दर्खास्त जेर दफा ६ हिन्दु मैरेज एक्ट रसपांडेंट नोटस बनाम मुखत्यार कौर उर्फ सुखपाल कौर जोजा हरनाम सिंह सकना हाल बुर्ज ढल्ला—रसपांडेंट।

मुकदमा मंदर्जा बाला अवान में अदालत हुजा को कामल यकीन हो चुका है कि रसपांडेंट मस्मात मुखत्यार कौर उर्फ सुखपाल कौर जान बूझ कर तामील नोटस से गुरेज करती है और रुपोश है। जिस की तामील नोटस मामूल तारीका पर होनी मुश्किल व नामुमकिन है। लिहाजा नोटस बनाम रसपांडेंट मुखत्यार कौर उर्फ सुखपाल जारी किया जा कर उसको मुतला किया जाता है। कि वह तारीख पेशी १३-८-६३ का मकाम भठिंडा अदालत हुजा के सामने पेश होकर पैरवी मुकदमा करे वरना उसके खिलाफ कार्यवाही यकतरफा अमल में लाई जावेगी।

आज मवरखा १८-६-६३ को यह सबत मुहर अदालत और मेरे दस्तखत के जारी किया गया।

मोहर अदालत

हांसी व जाखल में प्रचार

ठाकुर दुर्गासिंह जी भजनोपदेशक सभा ने आर्यसमाज हांसी में एक सप्ताह तक भजनों द्वारा जोरदार प्रचार किया। जनता खूब आती तथा बड़ा प्रभाव पड़ा। सभा को समाज के अनथक कार्यकर्ता श्री पारसनाथ जी तथा डा० महाराज जी द्वारा ६५) रु० वेद प्रचार में दिया गया।

इसी प्रकार श्री ठाकुर जी ने जाखल मंडी समाज में भी प्रचार किया। वहां श्री हंसराज जी बरेटा निवासी समाज के अनन्य भक्त ने ३१) रु० सभा के वेद प्रचार में दान दिये।

बधाई हो

श्री वेदप्रकाश जी इस बार हिन्दी M.A. परीक्षा में सफल हो गये। हमें यह शुभ समाचार पढ़ सुन कर बड़ी प्रसन्नता हुई है। श्री वेद जी आर्यसमाज के अनथक कार्यकर्ता तथा योग्य कवि हैं आप की ओज पूर्ण कविताएं आर्य जगत् में प्रकाशित होती रहती हैं। आर्य जगत् परिवार की ओर से बहुत २ बधाई। —सं०

आर्य समाजों को वेद सप्ताह पर सूचना

देश की सभी समाजें वेद सप्ताह बड़ी धूम धाम से मना रही हैं इस को मनाना तभी सफल हो सकता है जब कि इस अवसर पर वेद विषयक छोटी २ पुस्तकें प्रचारार्थ निशुल्क बांटी जाएं। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए सभा के महात्मा हंसराज साहित्य विभाग ने 'वैदिक धर्म का महत्व, ट्रैक्ट छपवाया है जिस की कीमत 12o/o है लेकिन इस अवसर पर प्रचारार्थ १०% प्रति सैकड़ा कीमत रखी गई है अतः संस्थाएं अधिक से अधिक आर्डर देकर [illegible] को सफल बनायें —व्यवस्थापक

नाम करण संस्कार

सभा के भजनोपदेशक श्री शमशेर कुमार जी आर्य के घर नव जात शिशु का नाम करण संस्कार १६-७-६३ को [illegible] (अम्बाला) में सम्पन्न हुआ बच्चे का नाम दिनेश कुमार रखा गया।

इस अवसर पर पं० अमर सिंह जी, श्री रघुवीर सिंह जी वर्मा, श्री विद्याभानु जी शास्त्री आदि महानुभावों ने पधार कर नन्हे-मुन्ने को आशीर्वाद दिया तथा संस्कार की शोभा को बढ़ाया। श्री शमशेर कुमार जी ने ३०) रु० इस अवसर पर सभा को दान दिया। उपस्थित सज्जनों का मिष्ठान्न से सत्कार किया गया। आर्य जगत की ओर से श्री शमशेर कुमार जी को बहुत २ बधाई। —व्यवस्थापक

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी

श्री पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज १० जुलाई को तपोवन आश्रम पहुंच गये थे। २० जुलाई से ३ अगस्त तक पन्द्रह दिन का मौन व्रत आश्रम में धारण कर रहे हैं। ४ अगस्त को यज्ञ होगा और १६ अगस्त तक श्री पूज्य महात्मा जी महाराज आश्रम में निवास करने की कृपा करेंगे।

सेवक—जय राम सिंह, प्रधान वैदिक साधन आश्रम

तपोवन देहरादून (यू० पी०)

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कम्पनीबाग जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

कृगवन्तो विश्वमार्यम्

आर्य जगत्

टैलीफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P. 121

एक प्रति का मूल्य २५ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वेद सप्ताह अंक

वर्ष २३ अक ३१-३२) रविवार २० श्रावण २०२०— ४ अगस्त १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (८, ११ अगस्त का सम्मिलित अं

वेद सूक्तय:

सर्वान् कामान् पूरयति

उत्तम राज्य प्रवन्ध, राष्ट्र व्यवस्था सारी प्रजा की सारी कामनाओं को पूर्ण कर देता है। अच्छा राज्य सब को सुखी बना कर उनके सारे मनोरथ पूरे करता है।

त्वं विश्वेषांजनिता

प्यारे प्रभो! आप इन सारे विश्व के पदार्थों को उत्पन्न करने वाले हो। जितना भी यह सारा संसार दिखाई पड़ता है—सब के उत्पादक आप ही हो। नियामक हो।

हिरुङ् नमन्तु शत्रव:

हमारे सारे शत्रु पूर्ण रूप से मस्तक झुका देवें। हमारी शक्ति बल के सामने सर्वथा दब जायें। सिर न उठा सकें शत्रु सिर उठाने का कभी भी साहस न कर सकें'

अ थ र्व वे द



वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती

वेद सूक्तय:

देवदत्तं ब्रह्म गायत

परमेश्वर से दिये हुए ब्रह्म-वेद का गान करो। वेद परमात्मा की कल्याणी वाणी है। हे नर-नारियो! इसका सदा गायन करो। पाठ करो—जीवन में ढालो।

संश्रुतेन गमेमहि

हम वेद के अनुसार चलें। वेदों में जो-जो उपदेश दिये गये है—उनके अनुसार ही अपना जीवन बनावें। हमारा प्रत्येक कार्य, भाव, विचार तथा व्यवहार वेद के अनुकूल हो, वेद के भक्त बनें।

देवस्य पश्य काव्यम्

उस परमेदव भगवान् महान् कवि की अद्भुत वेद कविता को देखो। प्रभु महान कवि हैं। वेद उसकी परमपुनीत कविता है। परम कवि की यह ज्ञानमयी कविता सदा मीठी और सुन्दर है।

अधिष्ठाता—संतोषराज मंत्री सभा

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

श्रावणी उपाकर्म यज्ञ पद्धति

(ले० श्री पंडित ओम् प्रकाश जी आर्य महोपदेशक आ० प्रा० प्र० सभा पंजाब)

प्रायः देखा गया है कि जिन आर्य समाजों में सुयोग्य पुरोहित व अन्य विद्वान यज्ञ कर्त्ता नहीं होते अथवा जिन समाजों के पास आर्य-पर्व पद्धति की पुस्तक नहीं होती—वहां पर्व ही नहीं मनाये जाते। सभी आर्य समाजें श्रावणी उपाकर्म यज्ञ समारोह-पूर्वक और श्रद्धा से कर सकें इसलिये हम इस यज्ञ की पद्धति को अविकल रूप से प्रकाशित कर रहे हैं। सभी आर्य भाई और आर्य समाजें कृपया इसी पद्धति के अनुसार श्रावणी यज्ञ का अनुष्ठान करें और पर्व को मनाएं।

प्रथम संस्कारविधि में लिखी रीति से अग्निस्थापनादि करके आघार और आज्यभागाहुतियों को देकर निम्न दो आहुतियां दीजिए।

(१) ब्रह्मणे स्वाहा (२) छन्दोभ्यः स्वाहा। तत्पश्चात् निम्नलिखित घी की दस आहुतियां दें।

(१) सावित्र्यै स्वाहा (२) ब्रह्मणे स्वाहा (३) श्रद्धायै स्वाहा (४) मेधायै स्वाहा (५) प्रज्ञायै स्वाहा (६) धारणायै स्वाहा (७) सदसस्पतये स्वाहा (८) अनुमतये स्वाहा (९) छन्दोभ्य स्वाहा (१०) ऋषिभ्य स्वाहा।

तदनन्तर ऋग्वेद की निम्नलिखित ११ ऋचाओं से आहुति दें।

१. बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः। यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः।

२. सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत। अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि॥

३. यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्। तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते॥

४. उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्। उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः॥

५. उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु। अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम्॥

६. यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्॥

(७) अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः।
आदघ्नास उपकक्षास उत्वे ह्रदा इव स्नात्वा उत्वे ददृश्रे॥

(८) हृदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद् ब्राह्मणाः संयजन्ते सखायः।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभिरोह ब्रह्माणो विचरन्त्युत्वे॥

(९) इमे ये नार्वाङ् न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः।
त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः॥

(१०) सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः।
किल्बिषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय॥

(११) ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उत्वः॥

ऋ० १० । ७१ । १-११

इस के पश्चात यजुर्वेद के इस मन्त्र से—

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनि मेधामयासिषं स्वाहा॥ यजु० ३२।१३

यजमान वा गृहपति हवन करे किन्तु मन्त्र सब बोलें। पश्चात सब उपस्थित जन पलाश की तीन-तीन समिधाओं को घी से भिगो कर सावित्री मन्त्र से आहुति दें। इस प्रकार तीन बार करें पुनः स्विष्टकृत् आहुति देकर प्रातराश किया जाये।

पुनः पवित्र होकर वेदों के निम्नलिखित मन्त्र पढ़ें।

ऋग्वेदः

१. अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥

२. समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

यजुर्वेदः

१. इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥

२. हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम् ओ३म् खं ब्रह्म॥

सामवेद

१. अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि॥

२. मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठा परावत आजगन्था परस्याः।
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून्ताढि वि मृधो नुदस्व॥

३. भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥

४. स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

अथर्व वेद

१. शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तुनः॥

२. पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः। सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाँ इत् ताँ उप याता पिबध्यै।

पश्चात इस मंत्र को पढ़े।

सहनोऽवतु सहनौऽस्तु सह न इदं वीर्य्यवदस्तु।
ब्रह्मा इन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहे॥

इस वेद मन्त्र को पढ़कर संस्कारविधि में लिखे सामवेद वामदेव्य-गान करें।

वेद-सप्ताह धूमधाम से मनाइये

इस वर्ष वेद प्रचार सप्ताह ५ अगस्त सोमवार श्रावणी उपाकर्म (रक्षा-बन्धन) से आरम्भ होकर ता० १२ अगस्त (जन्माष्टमी) तक चलेगा समस्त आर्य समाजों तथा आर्यों का कर्तव्य है कि वेद सप्ताह प्रत्येक स्थान पर बड़े समारोह से मनाय।

आर्य प्रादेशिक सभा का प्रचार कोष लगभग समाप्त हो चुका है। प्रत्येक आर्य समाज और आर्य भाई का कर्तव्य है कि अधिक से अधिक धन एकत्रित करके इस कोष में भिजवायें ताकि आर्यसमाज के प्रचार का क्षेत्र अधिक से अधिक फैले।

संतोष राज मन्त्री
आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, ४ अगस्त १९६३ [अंक ३१-३२

पावकान: सरस्वती

ऋग्वेद का यह उपदेश है-वेद वाणी हमें पवित्र करे। जीवन का कोई और किसी प्रकार का भी क्षेत्र हो, उसका सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन के साथ हो अथवा समष्टि के साथ हो, उस में पवित्रता, निर्मलता आ जाये। उस में जितना भी दोष समूह हैं, विगाडने गिराने वाले तत्व हैं, वे सब समाप्त हो कर सर्वथा शुद्ध पवित्र बन जायें। इस के लिए सब से बड़ा एवं एक मात्र साधन वेद ही है। इस ही सरस्वती का नाम दिया है। वेद के पठन पाठन, मनन आचरण से समाज के सारे विकार उसी प्रकार भाग जाते हैं जैसे सूर्य के निकलने पर अन्धकार और उस में घूमने वाले नानाविध कीटाणु। आर्य सभ्यता की पुरातन पवित्रता का वेद का अध्ययन ही सब से बड़ा कारण था। भारत का, प्राचीन काल, राज्य, जीवन कितना सुनहरी, उज्जवल प्रशंसनीय था। न चोरी न चोर, अना चार और अविचार, न मर्यादाहीन तथा न नास्तिक था। धन धान्य के भण्डार भरे थे, वैभव की पराकाष्ठा थी, भौतिक विभूतियों के भवन थे, ज्ञान विज्ञान के पूर्ण साधन थे—किन्तु जीवन में किसी प्रकार का भी पतन न था। मनसा, वाचा, कर्मणा पाप का लेश भी न था—सब का जीवन, कर्म व्यवहार वेद के अनुसार था। संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि वेद के अनुकूल चलें, वेद के प्रतिकूल कभी न चलें का सन्देश समूचे समाज के जीवन में रमा था। सारा समाज, आदर्श जीवन से भर पूर था। उस स्वर्णयुग पर आज भी सब को मान है।

राजमहल से ले कर पर्ण कुटीर तक में वेद का स्वाध्याय चलता था। वेदो नित्यमधी यताम् के अनुसार नित्य घर २ मे वेद का पमन और प्रवचने चलता था यह परमधर्म, परमकर्तव्य, परमजीवन और परम-रस था। आबाल वृद्ध इस के प्रेमी थे। प्राचीन कोई ग्रन्थ हो, ब्राह्मण ग्रन्थ हो, श्रौतसूत्र हों, दर्शन हों या स्मृतियां, रामायण हो या महाभारत सब में वेद पढ़ने की महिमा मिलती है। वेद पाठ को पुण्य तथा त्याग को पाप माना गया है। महात्मा मन के शब्दों में—वेदश्चक्षु. सनातनम् वेद सत्यसनातन आंखे हैं वेदोऽखिलो धर्ममूलम् वेद सब विधाओं का मूल है। सर्वज्ञानमयो हिसः वेद सारे ज्ञान विज्ञान का भण्डार हैं। सब वेदात प्रसिद्धयति सब कुछ वेद से सिद्ध होता है। अनध्यायो नास्ति शबध्याये—वेद के पढ़ने में कभी अवकाश नहीं करना चाहिए। वेद...धर्मस्य लक्षणम् वेद ही धर्म का लक्षण है। दर्शनों मे भी शास्त्रयोनित्वात् वेदान्त। वेद परमात्मा से मिले हैं। तदवचना-दाम्नायस्य प्रामाण्यम्—परमेश्वर का उपदेश होने से वेदों की प्रामाणिकता है। उपनिषदे तो वेद महिमा से भरी हुई हैं। ऋषियोंको वेदों पर बड़ी आस्था थी। रामायण महाभारत में वेद की कितनी सुन्दर चर्चा है। चारों रामादिराजकुमारों के बारे में आता है—सर्वे वेदविद सारे वेदों को पढ़ते जानते थे। रामायण काल में वेद के प्रति वडी श्रद्धा थी। महाभारत में भी वेद का जनजीवन में वड़ा प्यार था। भीष्म ने श्री कृष्ण जी की बड़ाई बताते हुए उन के वेदप्रेम को सर्वप्रथमस्थान दिया था वेद वेदांग विज्ञानम् श्री कृष्ण जी वेद के ज्ञाता प्रेमी हैं। श्री कृष्ण जी अर्जुन को उपदेश करते हुए गीता मे भी वेदों पर बडी श्रद्धा व्यक्त की है। ब्रह्माक्षर समुद्-भवम्-वेद परमेश्वर से मिले हैं। इस प्रकार प्राचीन युगे सचमुच वेद युग था। इसी लिए सर्वत्र जीवन मे शान्ति थी। किन्तु बाद मे लोग इस परमधर्म को भुला बैठे। अपूज्य पूजे जाने लगे। वेद का स्थान मनुष्य कृत मामूली पुस्तकों ने ले लिया। घर २ मे नये स्तोत्र, नये जपग्रन्थ, नये पाठ तथा नवीन पुतकें आ गई। वेदों को भुला दिया गया उस का परिणाम भी सामने आ गया। सर्वत्र अशान्ति, पतन तथा स्वार्थभाव ने घर कर लिया।

ऐसी विषम अवस्था में भारत के टंकारा में एक सूर्य निकला। जो स्वामी दयानन्द बनकर चमका। सारा जीवन इसी वेद प्रचार में ही लगा दिया। नानाविध भीषण कष्टों में भी मुसकरा कर वेद प्रचार मे लगे रहे आर्य समाज की स्थापना भी इसी वेद प्रचार के निमिन्न हुई वेद प्रचार के परम धर्म के काम में लग गया यह वेद सप्ताह प्रतिवर्ष सारे आर्यों, आर्यसमाजों को इसी वेदप्रचार का स्मरण कराता है। बड़ी भारी दीक्षा ली है हम ने वेद-प्रचार की। समाजें वेद प्रचार का व्रत ले कर इस के लिए क्रियात्मिक पग उठावें। हम अन्य कामों वस्तुओं के लिए कितना परिश्रम करते हैं, कितना धन व्यय करते हैं। खानपान, वस्त्र परिधान, मनोरंजन विवाह शादियों पर कितना खर्च करते हैं पर खेद है कि वेद प्रचार के पवित्र कार्य मे हमारा उत्साह कम हो जाता है। कैसे काम चलेगा वेद प्रचार क्यों कर होगा। सभा का वेद प्रचार कोप किस अवस्था मे है—केन्द्र निर्बल तो सारा शरीर ही निर्बल हो जाता है। इस पुनीत पर्व पर सकल्प लेवे कि वेद का पाठ नित्य पढ़ेंगे या सुनेंगे तथा वेद प्रचार के लिए इस पर्व पर प्रति व्यक्ति कम से कम एक रुपया सभा के वेद प्रचार के कोप में अपना कर्तव्य समझ कर देगा। त्रिलोक चन्द्र

यह अंक

आप के सामने है। वेद सप्ताह के इस पुनीत पर्व पर थोड़ा बहुत अपना कर्तव्य निभाते हुए जो भी बन पड़ा है। विद्वान, महात्माओं के मीठे प्रसाद को सब तक पहुंचाने का प्रयत्न किया है। हमे मन का सन्तोष है। हम मान्य लेखक महानुभावों के आभारी हैं। इन के सुन्दर विचारों से जीवन में कुछ परिवतन आ जाये और हम वेद के प्रचार में अपने कर्तव्य का पालन करे—तभी सच्ची सफलता है। भगवान् कृपा करे। हम पुरातन स्वर्ण युग लाने मे जुट जावे। जिन के अमूल्य लेख देरी से मिलने के कारण रह गये हैं। उन से नम्रता पूर्वक क्षमा मांगते हैं। सं.

वेद शुभ सिन्दूर है

(चतुष्पदी)

जिन्दगी की मांगमें
वेद शुभ सिन्दूर है।
ज्ञान की पावन प्रभा
शान्ति सुखका मूर है।
दिव्यता का स्रोत है
धर्म का है प्राण यह
यह सुधा है,
वज्र जो पाप करता चूर है॥

मनुष्य को मनुष्य कौन बनाये ?

(ले०—श्री आनन्द स्वामी जी महाराज तपोवन देहरादून)

आधुनिक काल की सब से बड़ी समस्या यह है कि आज का मानव किस प्रकार से मानव बनाया जाये, मानवता की मात्रा प्रतिदिन कुछ कम होती जा रही है और भारत इस मे अधिक अग्रसर है, हां यह कहना अत्योक्ति नहीं कि चीन दानवता में सब से बाजी ले गया है, इसे दानवता के अतिरिक्त कुछ सूझता ही नहीं, हां तो प्रश्न यह है कि मनुष्य को मनुष्य कौन बनाये ?

इस के उत्तर में यदि मैं अपनी ओर से कुछ कहूं तो ठीक नहीं होगा, आज के युवक पश्चिम की ओर, योरुप तथा अमरीका की ओर देखते हैं, भारत का तो इन्हें कुछ पसन्द आता ही नहीं, उधर से जो आवाज आये; उसी पर वह कान लगाते हैं, जिस युवक-युवती को देखो सब अमरीका ही की ओर मुख किये खड़े दिखाई देते हैं कि वहां किसी न किसी प्रकार पहुंच जायें, अब भारतियों के तीर्थ गंगोत्री, जमनोत्री, बद्रीनाथ और द्वारका नहीं रहे, अपितु योरुप, अमरीका और मास्को हो गये हैं—इस लिये ऐसे लोगों के लिये उधर के विद्वानों ही की बात लिखूं तो अच्छा रहेगा। सब से पहला बात तो यह है कि आधुनिक विज्ञान (साईंस) मनुष्य को मनुष्य नहीं बना सका यदि साईंस में मनुष्य को मनुष्य बनाने की योग्यता होती तो विख्यात वैज्ञानिक आईन स्टीन दुनिया को सुखी बनाने के लिये यह कभी न कहता कि "दुनिया सुखी बनाने का तरीका यह है कि अच्छे मनुष्य पैदा किये जायें।

अपितु यह कहना कि साईंस की अधिक उन्नति करो ताकि मनुष्य ठीक बने और दुनिया सुखी हो, दूसरी बात यह कि पश्चिम के विद्वान किधर संकेत कर रहे हैं यह देखो—

त्रिशप हैरन अपनी पुस्तक में लिखता है कि :—

The Vedas alone stand serving as beacon of divine light in the onward marrle of Humanity.

अर्थात् "वेद ही मनुष्य मात्र को प्रगति के लिये दिव्य ज्योतिः स्तम्भ का काम देते हैं।"

और डा० जेम्स कजिन्स ने "Path to Peace" (शांति का मार्ग) में यह लिखा है :—

"On that Vedic ideal alone with its inclusiveness which absorbs and annihilates the causes of antagonisms, its symphathy which wins hatred away from itself is it possible to rear a new earth in the image and likeness of the eternal heavens."

"केवल वैदिक आदर्श पर चलने से ही, जो द्वेष भाव को दूर करके परस्पर प्रेम उत्पन्न करता है, यह सम्भव है कि पृथ्वी को सदा का स्वर्ग बनाया जा सके।" और फ्रांस के विद्वान Leon selhas ने लिखा :—

The Rigved is the most sublime conception of the great highways of humanity.

अर्थात् "मानवता के सर्वोच्च मार्गों का महान उच्च विचार प्रदान कर्ता ऋग्वेद ही है।"

नोबल पुरस्कार विजेता मैटर्लिङ्क ने वेदों को unrivalled wisdom "अनुपम ज्ञान" भण्डार बतलाया है फ्रांस सरकारने मिस्टर जकोलियट जो अपनी हाईकोर्ट का जज बना कर पांडीचरी भेजा था, उसने यहां के ब्राह्मणों से संस्कृत पढ़ कर वेद अध्ययन किया, तब 'Bible in India' की पुस्तक में लिखा :—

Gstonishing fact ! The Hindu revelation (Veda) is of all revelations the only one whose ideas are in perfect harmony with modern science as it pro-claims the slom and gradual formation of the world.

अर्थात्—"यह एक बड़ी ही आश्चर्य जनक बात है। ईश्वरीय धर्म ग्रन्थों में से एक मात्र वेद ही ऐसा ईश्वरीय ज्ञान है, जिस के विचार वर्तमान विज्ञान के साथ सम्पूर्णतया संगत हैं, क्योंकि उस (वेद) में भी साईंस के अनुसार दुनिया की क्रमिक रचना का प्रतिपादन है।"

अब अमरीका की विदुषी महिला mrs. Wheeler Willose की बात भी पढ़ लें, अपने पुस्तक "Sublimity of the Vedas" में वह लिखती हैं :—

We have all heard and read about the antients religion of India. It is the land of the great Vedas, the most remarkable works, containing not only religions ideas on a perfect life, but facts which all the science has since proved true - Electricity, Radium, Electrones, airships, all seem to be known to the sires who found the Vedas."

अर्थात "हम लोगों ने प्राचीन भारतीय धर्म के विषय में सुना और पढ़ा है, भारत उन अत्यन्त महत्वपूर्ण वेदों की भूमि है, जिन के अन्दर न केवल पूर्ण आदर्श जीवन के लिये धार्मिक तत्वों का निरूपण है, वरं उन सच्चाईयों का भी निर्देश है, जिनको तमाम साईंस विद्या ने सत्य प्रमाणित किया है, वैदिक ऋषियों को विद्युत, रेडियम, एलेक्ट्रोन, वायुयान इत्यादि सब का ज्ञान था, ऐसा प्रतीत होता है।"

और भी कितने ही पश्चिमी विद्वानों की बात लिखी जा सकती है, जर्मनी के प्रो० मैक्स मूलर तो वेदों पर लट्टू थे, ऋग्वेद की महिमा में उन्होंने एक संस्कृत श्लोक लिखा वह भी आप पढ़ लीजिये :—

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः
सरितश्च महीतले।
तावनृग्वेद महिमा
लोकेषु प्रचरिष्यति ॥

"जब तक इस भूतल पर नदी और पर्वत रहेंगे, तब तक लोगों में ऋग्वेद की महिमा बनी रहेगी।"

मनु भगवान ने वेदों में कुछ विशेषता देखी थी तभी तो उन्होंने घोषणा की कि—

विभर्ति सर्वं भूतानि
वेद शास्त्रं सनातनम्
तस्मादेतत्परं मन्ये
यज्जन्तोरस्य साधनम् ॥
(मनु १२-९९)

"सनातन वेद, सब भूतों को धारण करता है। इस लिये मैं वेद को ही मनुष्यों के परम पुरुषार्थ का कारण समझता हूं।"

जिस वेद की इतनी प्रशंसा है और जो वेद मनुष्य को सच्चा मनुष्य बनाने की शक्ति रखता है, वही वेद आज सब से अधिक तिरस्कृत हो रहा है, जिस आर्य समाज के कन्धों पर महर्षि दयानन्द ने वेद-प्रचार का भार रखा था वही आर्यसमाज वेद से जैसे रूठा बैठा हो; जितना भी वेद प्रचार कराने वाली

(शेष पृष्ठ १२ पर)

वेद का स्वाध्याय

वेदों में अध्यात्मवाद के गम्भीरतम उपदेश हैं वहां पर राष्ट्रिय विश्व का संचालन करने तथा मानवता विरोधी शत्रुओं का नाश करने के लिए बड़े सुन्दर वीर रस भरे सन्देश के सुन्दर सूक्त हैं। वेद का स्वाध्याय करने वालों को इस प्रभु के महान भण्डार से जीवन की बड़ी भारी सम्पत्ति मिलती है। यहां अथर्ववेद के प्रथमकाण्ड में १६वे तथा २१वे सूक्तों में चार २ मन्त्र हैं जिन में शत्रु नाश का उपदेश मिलता है। आज के विषम समय में प्रत्येक भारतीय को इस ओजस्वी उपदेश की कितनी बड़ी आवश्यकता है—

दुष्टों तथा शत्रुओं का विनाश करो

येऽमावस्यां रात्रिमुदस्थुर्व्राजमत्रिणः ।
अग्निस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रवत् ॥

अर्थ—(ये) जो दुष्ट, शत्रु (अमावस्यां रात्रिम्) अन्धकार वाली रात्रि में (उदस्थुः) उठ खड़े हों (व्राजम्) अपना मंडल गोल बना ले (अत्रिण) धन के चोर तथा जान के घाती शत्रु तो (अग्निः) आगे चलने वाला सेनापति (तुरीयः) तीव्रगति (यातुहा) शत्रु का नाश करने वाला (सः) वह (अस्मभ्यम् अधि ब्रवत्) हम को एसे कहता है—दुष्ट और शत्रु जो अपना दल बना कर अन्धेरी रात मे आकमण करने उठें तो हमारे वीर सेनापति तीव्र गति से ऐसा उपदेश करता है।

सीसायाध्याह्वरुणः सीसायाग्निरुपावति ।
सीसं म इन्द्रः प्रायच्छत् तदंग यातु चातनम् ॥

अर्थ—(सीसाय) सीसे का प्रयोग करने के लिए (अध्याह) उपदेश करता है (वरुणः) वरुण सेना पति तथा सीसे का ही (अग्निः) अग्रगामी सेना नायक उपदेश करता है। (इन्द्रः) राजा भी (सीसम प्रायच्छत्) मुझे शत्रु नाश के लिए गोली देता है। यह सीसा बारूद ही शत्रु का नाशक है। शत्रु के विनाश के लिए सीसे गोली बारूद का प्रयोग करना चाहिए ताकि शत्रु सर्वथा समाप्त हो सके।

इदं विष्कन्धं सहत इदं बाधते अत्रिणः ।
अनेन विश्वा ससहे या जातानि पिशाच्याः

अर्थ—यह सीसा ही (विष्कन्धं) फौजी दस्ते का (सहते) सामना करता है और यही उन अत्रिण शत्रुओं को (बाधते) रोकता है। इसी से ही (विश्वा) सारे पिशाचों के दलों प्रकारों का मुकाबला करता है। गोली बारूद से ही सारे शत्रु ठीक हो जाते हैं। सारे पिशाच रोके जा सकते हैं। गोला बारूद उत्पातियों को पाठ पढ़ा सकता है।

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम् तंत्वा सीसनेविध्यामो यथा नो सो अवीरहा— अथर्व प्रथम काण्ड सूक्त १६

अर्थ—हे दुष्ट शत्रो ! यदि तू हमारी (गां) गौ, पृथिवी को (हंसि) मारता हमला करता है, यदि (अश्वं) अश्व, राष्ट्र पर हमला करता और यदि जनता पर हमला करता है तो सुन ले—कि हम तुझ को सीसे की गोलियों से बींध डालेंगे ताकि तू हमारे वीरों को, राष्ट्र को, पशुधन, धराधन को मार न सके। शत्रु को गोलियों से भून देना चाहिए। ऐसा वेद का सुन्दर सन्देश है। राष्ट्र द्रोहियों शत्रुओं को मारदेना धर्म ही है।

राजन् ! शत्रुओं को कुचल दो

स्वस्तिदा विशांपतिर्वृत्रहा विमृधो वशी ।
वृषेन्द्रः पुर एतु नः सोमपा अभयंकरः ॥

अर्थ—(स्वस्तिदा) कल्याणकारी (विशांपतिः) प्रजापति राजा (वृत्रहा) शत्रु नाशक (विमृधः) वैरियों को कुचल देने वाला (वशी) जितेन्द्रिय (वृषा) सुख वर्षक (इन्द्र) राजा (पुर एतु न) हमारे आगे चले, हमारा नेता बने (सोमपा) प्रभु भक्त (अभयंकरः) निर्भय करने वाला राजा सेनानायक राष्ट्र का बने—राजा तथा सेनापति में ये सारे गुण होने चाहिए तभी राष्ट्र का कल्याण हो सकता है।

वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः ।
अधमं गमयातमो यो अस्माँ अभिदासति ॥

हे इन्द्र राजन् ! सेनानायक ! (नः) हमारे (मृधः) शत्रुओं को (जहि) मार डाल (नीचा) नीचों को (यच्छ) बान्ध दे (पृतन्यतः) सेनापते हमला करने वालों को जो (अस्मान्) हमें (अभिदासति) दास बनाता है उसे (अधमंगमयः) अधम को पहुंचा दे (तमः) अन्धेरे मे मौत लोक मे भेज दो। जो शत्रु बन कर सेना लेकर राष्ट्र पर चढ़ाई करते हैं और हमे या भूमि को अपने आधीन करना चाहते हैं हे राजन ! उनको मार डाल, कुचल दे मौत के लोक में पहुंचा दे। यही उनके लिए दण्ड है।

वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज ।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः ॥

हे इन्द्र ! जो राक्षस हैं, शत्रु हैं, इन्हें मार डाल इस असुर समूह रूपी वृत्र की दाढ़ों को उखाड़ दे, दान्त तोड़ दे। हे (वृत्रहन्) शत्रु नाशक वीर ! जो (अभिदासतः) हमे दास बनाना चाहता है उसे अमित्र शत्रु को कुचल डाल। सेनानायक का कर्तव्य है कि राष्ट्र विरोधी तत्वों को, दुष्ट शत्रुओं को अपनी शक्ति से कुचल कर रख दे ताकि फिर कभी कोई सिर न उठाने पाये।

अपेन्द्र द्विषतो मनोऽपजिज्यासतोवधम् ।
विमहच्छर्म यच्छवरीयो यावया वधम् ॥
अथर्व प्रथम काण्ड सूक्त २१

हे इन्द्र ! राजन् ! जो हम से, राष्ट्र से द्वेष करने वाले हैं सदा (जिज्यासतः) हमारी हानि चाहने वाले हैं उनके (मनः) कामना को षडयन्त्र को दूर कर दे, विफल बना दे। (वधम्) मारने के उनके प्रयत्न को भी विफल बना दे और हमें (महत्) बड़ा (शर्म) बचाव, सुख (यच्छ) दे तथा (वरीयः) बड़े (वधं) शत्रु के हमले को (यवय) दूर कर दे।

हे वीर सेनानायक ! राष्ट्र के शत्रुओं को हमें दास बनाने वालों तथा सेना लेकर चढ़ाई करने वालों को अपनी शक्ति से कुचल डाल मार दे। उनको दूर भगा दे। हम आप द्वारा सुरक्षित रहें।

प्राणायाम योगासन सीखिये

तपोवन देहरादून में प्राणायाम तथा योग आसनों के क्रियात्मक विद्वान पधारे हुए हैं, जो सज्जन सीखना चाहें, तपोवन पहुंच जायें। म० आनन्द स्वामी जी सरस्वती भी आजकल तपोवन मे हैं, पहली अगस्त को उनका मौन पूर्ण हो जायगा, फिर वह सत्संग मे कथा करेंगे। स्वामी विज्ञानानन्द जी शास्त्री जहां कहीं हों वह शीघ्र तपोवन पहुंच जाये। —स्वामी डा० आनन्द देव

श्री कृष्ण का उपदेश

(पृष्ठ १० का शेष)

राज्य के पांव अधिक दृढ़ न हो जाएंगे। संस्थायें, फूट, दलबन्दो, झगड़ों आदि से मुक्त न हो जाएंगे।

एक और बात का भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि कर्म ज्ञानपूर्वक होने चाहिएं। जैसे मोटर में इंजन और ब्रेक दोनों ही आवश्यक हैं यदि इंजन ही हो और ब्रेक न हो तो अवश्य ही मोटर कहीं न कहीं दुर्घटना ग्रस्त हो जाएगी। यदि केवल ब्रेक ही हो और इन्जन न हो तो मोटर चल ही नहीं सकती, इस लिए दोनों की आवश्यकता हैं। ज्ञान के बिना कर्म अन्धा है तथा कर्म के बिना ज्ञान पंगु, दोनों के मिलाप से ही कर्म की सिद्धि हो सकती है। जोश के साथ होश की आवश्यकता है। इसी विचार को अंग्रेजी कवि पोप ने इस प्रकार प्रकट किया है कि सफल जीवन के लिए व्यक्ति में दोनों गुण (Passion) जोश तथा (Reason) अर्थात् ज्ञान की आवश्यकता है। भगवान् कृष्ण ने भी यही उपदेश दिया है।

"योगः कर्मसु कौशलम्।"

अर्थात् ज्ञान पूर्वक तथा रचित ढङ्ग से कर्म करना ही योग है।

भगवान् कृष्ण गीता में यह भी उपदेश देते हैं कि हमारे कर्म निष्काम भाव से किए जाने चाहिएं प्रत्येक कर्म का फल तो अवश्य मिलता ही है, तथा शुभ कर्म भी अन्त में सुख या मुक्ति की प्राप्ति की लालसा से ही तो किए जाते हैं तो फिर निष्काम भाव से कार्य करने का क्या अभिप्रायः है।

एक किसान खून पसीना एक करके बड़े परिश्रम से खेत बोता है, लहराता खेत देख कर उसका हृदय फूला न समाता लेकिन जब खेती पक जाती है, ठीक उसी समय ओले पड़ जाते हैं तथा उसकी लहराती फसल नष्ट हो जाती है। उसकी सारी आशायें धूमिल हो जाती है। इसी प्रकार एक विद्यार्थी दिन रात के परिश्रम के पश्चात् भी फेल हो जाता है अथवा किसी बिमारी का शिकार हो जाता है और परीक्षा में नहीं बैठ सकता तथा बहुत दुःखी होता है। यदि वे दोनों यह समझ लें कि हम ने अपना अपना कर्तव्य ईमानदारी के साथ पालन किया है, यदि फल हमारी इच्छानुकूल नहीं तो इस में हमारा क्या दोष। ऐसा सोचने वाला मनुष्य असफलता के समय दुःखी न होगा। सारांश कर्म करने के उपरान्त मनुष्य कह दे कि हे ईश्वर मुझ से जो हो सका मैंने कर दिया अब फल देना तेरे अधिकार में हैं। भगवान कृष्ण भी यही कहते हैं :—

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्व-कर्मणि॥'

कि हे मनुष्य कर्म करना तेरा अधिकार है तथा फल देना ईश्वर के आधीन है। निष्काम भाव से कार्य करने का एक अर्थ यह भी है कि मनुष्य किसी कार्य में आसक्त न हो जाए। निम्न उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी।

'एक देवी ने अपने नन्हे शिशु के लिए एक आया को रखा। आया ही बच्चे को दूध पिलाती, सुलाती, नहलाती-धुलाती तथा उसकी देखभाल करती, शिशु भी उसके साथ इतना हिलमिल गया कि उसे ही अपनी माता समझने लगा तथा उसी से प्रेम करने लगा। माता की ओर वह बिल्कुल उदासीन था। माता को बहुत दुःख हुआ कि उसके पुत्र का उसके साथ तनिक भी प्रेम नहीं। उसने अपने पति की स्वीकृति से आया को सेवा मुक्त कर दिया। आया ने अपना वेतन लिया और चुपके से चल दी। उसे बच्चे से प्रेम था, परन्तु मोह या आसक्ति न थी। वह बच्चे को अपना कर्तव्य समझ कर पालती थी। यही है निष्काम भाव से कर्म करने का अभिप्रायः।

परमात्मा करे कि जन्माष्टमी के शुभ अवसर पर हम कृष्ण भगवान् के इस पवित्र उपदेश को धारण करें और कर्तव्य रूढ होने का व्रत लें जिस से हमारा भला हो, जाति का भला हो तथा राष्ट्र का भला हो।

स्वाध्याय-महिमा

(ले०—सुशीला देवी जी आर्या एम.ए. विद्यावाचस्पति, नरवाना)

स्वाध्याय की अनुपम महिमा निगमागम ने गाई है,
इसकी मर्यादा अति ऊंची ऋषियों ने बतलाई है।
अष्टांग योग के नियम पंच में स्वाध्याय भी गिना गया,
मोक्ष मार्ग को जाने की सीढ़ी सदृश वह चुना गया।
साधन चतुष्टय विद्या-प्राप्ति के उनमें भी यह एक है,
स्वाध्याय से मानव पाता सत्यासत्य विवेक हैं।
'स्वाध्यायान्मा प्रमदः' यह गुरु शिष्यों को बतलाता है,
ऋत, शम, दम, तप, सत्य, नियम का स्वाध्याय से नाता है
स्वाध्याय का भानु अविद्या भ्रमा निशा हर लेता है,
भ्रांति उलूक भगा कण-कण में दिव्यालोक भर देता है।
स्वाध्याय ने खोले जग के भेद मरण और जीवन के,
भ्रम के परदे फाड़ अविद्या जनित क्लेश काटे मन के।
हो विमल आत्मा स्वाध्याय से, वशो भूत मन हो जाता,
यज्ञा बुद्धि, सुगम पंथ, दीर्घायु, स्वस्थ तन हो जाता।
सत्य सबल होता इतना नहीं पांव झूठ के जम पाते,
तर्क ज्ञान के समक्ष जग में दुराग्रही भी नम जाते।
कि कर्तव्य विमूढ़ न हों स्वाध्याय नित्य करने वाले,
ऋषि कृत ग्रन्थ अमूल्य ज्ञान निधि सब संशय हरनेवाले।
मृत पूंजी भी न बढ़ती विद्या कैसे बढ़ पाएगी?
स्वाध्याय विनियोग करे तो कई गुणा हो जाएगी।
'वेदों का पढ़ना आर्यों का परम धर्म' ऋषि बता गए,
तृतीय नियम में स्वाध्याय की कुञ्जी हमें संभलवा गए।
पार सत्य ही होना चाहें यदि पाप के दल-दल से,
स्वाध्याय अभी आरम्भ करें न कहें कि 'कर देंगे कल से।
सत्ग्रन्थों का स्वाध्याय हमें निज का स्वाध्याय सिखाएगा,
तो अभय अमृत सुत आर्य जयी जीवन रण में, हो पाएगा।
आबाल वृद्ध नर-नारी लो स्वाध्याय सुदृढ़ व्रत धारें हम,
हो सफल श्रावणी उपा कर्म ऋषि का ऋण सकल उतारें हम

वीर प्रसू माता के रूप में

(पृष्ठ ६ का शेष)

वेद के इस सत्य ज्ञान को विस्मृत कर देने वाले लोगों ने नारी को केवल 'बच्चे पैदा करने की मशीन' की संज्ञा दी थी। किन्तु वेद उसे निर्जीव मशीन नहीं मानता। सन्तान को केवल जन्म देना ही उस के मातृत्व के लिए पर्याप्त नहीं अपितु 'मातृमान् पितृमाना चार्यवान् पुरुषा वेद' ब्राह्मण ग्रंथ के इस कथन के अनुरूप माता को प्रथम गुरु ठहरा कर गौरव का पद प्रदान करने का प्रथम साहस देव दयानन्द ने किया। नहीं तो संसार में वेद ज्ञान के होते हुए भी उसका पुनरुद्धार एवं प्रकाश किए बिना नारी जाति पतन के गम्भीर गर्त की ओर धकेली जा रही थी। ऋषिवर के इस ऋण से उऋण होने का एक ही साधन माताओं के पास है। वह है-उत्तम व वीर सन्तान का निर्माण कर वेद की इस कल्याणी वाणी को व्यवहार रूप में लाना।

आर्यों (हिन्दुओं) का प्रसिद्ध पर्व

(ले० श्री सतोष राज जी मंत्री आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर)

श्रावण (सावन) मास की पूर्णिमा आर्यों (हिन्दुओं) का एक प्रसिद्ध पर्व का दिन है। इस पर्व का नाम उपाकर्म वा उपाकरण है। इसी को ऋषि तर्पणी वा श्रावणी वा सलोनो भी कहते हैं। यही दिन राखी बान्धने का भी है।

यह पुण्य पर्व किस बात का का स्मारक है? इस से हमें इस लोक में क्या लाभ पहुचता है और परलोक में क्या लाभ पहुंचेगा? यह जिज्ञासा आज स्वभावतः हमारे हृदय में आ उत्पन्न होता है, जब कि यह पर्व पूरे वर्ष के पीछे आज फिर हमारे सामने आया है। ऐसे विषयों के पूर्ण ज्ञाता श्री गुरु देव जी ही हैं अतः गुरु शिष्य के संवाद रूप में 'श्रावणी' दिवस के महत्व और उस के लाभ पर प्रकाश डाला जाता है :—

एक शिष्य—भगवन! गुरुदेव जी! भगवान अन्तर्यामी की कृपा से आज हम आप के पुराने और नए शिष्य सभी यहां पर इकट्ठे हुए हैं और सब ने आप के साथ मिल कर उपाकर्म पूर्ण किया है। अब हे कृपालो! इस का रहस्य खोल कर समझाइये कि यह पर्व किस की स्मृति में मनाया जाता है? इस के 'उपाकर्म आदि नाम का क्या हेतु है? इस से हमारे लिए वा हमारी जाति और देश के लिए क्या लाभ अभिप्रेत है?

गुरुदेव—प्यारे शिष्य वर्ग और श्रोतृ वृन्द! एकाग्रचित्त हो कर सुनो यह पर्व वैदिक ऋषियों की स्मृति में मनाया जाता है। वैदिक ऋषि आर्य जाति के सब से पहिले धर्माचार्य हुए हैं। वे मन्त्र द्रष्टा हुए हैं। उन्हों ने धर्म का साक्षात किया और जगत में उस का प्रचार किया। हम भी उसी धर्म के अनुयायी हैं और उन्हीं ऋषियों की परम्परा में हैं। हम में से कुछ लोग तो जन्म के सम्बन्ध से और दूसरे विद्या के सम्बन्ध से उन के वंशज हैं। सो वे हमारे पूर्वज जिन पर भगवान की अपार दया थी, जिन के हृदय में उस ने अपने धर्म का प्रकाश किया और जिन को अपने धर्म के प्रचार के लिए चुना, तथा जिन की कृपा से वह ईश्वरीय धर्म हम तक पहुंचा और जिन्हों ने हमारे लिए वह ब्रह्म दाय (वेद का विरसा) छोड़ा है जिस से हम लोक परलोक दोनों को जीत सकते हैं—भला उन्हीं ऋषियों को हम भूल जायें, यह कैसे हो सकता है? हम इतने कृतघ्न हो कर उन को कभी नहीं भूल सकते इस लिए उन की स्मृति में प्रति वर्ष हम पर्व मनाते हैं॥

किसी भी महा पुरुष की सब से उत्तम स्मृति यही है कि उस के सार्वजनिक कार्य को पूरा किया जाये। ऋषियों को अभिप्रेत था वेदों का और वैदिक धर्म का प्रचार। उन्होंने अपना सारा जीवन इसी काम के अर्पण किया। और इस काम को चलता रखने के लिए स्वाध्याय की मर्यादा चलाई। जिस से हमे प्रति दिन धर्म की शिक्षा मिलती रहे और हमारा जीवन उच्च से उच्च होता चला जाये। इस मर्यादा को प्रचलित रखना ही उन की सच्ची स्मृति है। यही इस त्योहार के मनाने का अभिप्राय है॥

उपाकर्म वा उपाकरण का अर्थ है आरम्भ और इस का पूरा नाम है अध्यायोपाकर्म वा अध्यायोपाकरण अर्थात् स्वाध्याय का आरम्भ। नये वर्ष के लिए आज स्वाध्याय के आरम्भ की हम प्रतिज्ञा लेते हैं॥

एक गुरु के जितने शिष्य नये और पुराने हैं वे सब अपने गुरु के पास इकट्ठे होते हैं, पुराने शिष्य भी आ जाते हैं। सब मिल कर स्नान कर के नये यज्ञो पवीत धारण करते हैं, सभी मिल कर होम करते हैं और गुरु के सामने वर्ष भर के स्वाध्याय की प्रतिज्ञा लेते हैं। इस यज्ञ की कुछ आहुतियां तो सब की इकट्ठी हैं जो सारे शिष्य एक साथ मिल कर डालते हैं। तदनन्तर जिस २ ने ऋग्वेद का आरम्भ करना है अपनी नियत दो आहुतियां देते हैं। दूसरे उस समय चुप रहते हैं। उन के पीछे यजुर्वेद वाले, फिर साम वेद वाले, फिर अथर्व वेद वाले अपनी २ नियत दो आहुतियां देते हैं। जिन्हों ने चारों वेदों का इकट्ठा आरम्भ करना होता है वे आठों देते हैं। फिर और आहुतियां दे कर हवन को समाप्त करके शिष्य सारे पूर्वाभिमुख बैठते हैं और गुरु उन के सम्मुख पश्चिमाभिमुख बैठ कर तीन वार ओंकार सहित गायत्री मन्त्र उच्चारण करके सब को अपने २ स्वाध्याय का अलग २ आरम्भ करा देता है। फिर आचार्य और शिष्य सारे मिल कर पढ़ते हैं—

सहनोऽस्तु सहनोऽवतु सह न इदं वीर्यं वदतु ब्रह्म। इन्द्र— स्तद्वेद येन यथा न विद्विषा महे। (पारस्कर गृह्य०२।१०।२२)

अर्थ—हमारा (उपक्रम) एक साथ हो, वह हम सब की एक साथ रक्षा करे। हमारा यह ब्रह्म (वेद) एक साथ शक्तिमान हो। इन्द्र जानता है कि जिस से जिस प्रकार कभी कोई विद्वेष न हो (अर्थात् हम सब एक ही सच्चे मार्ग के अनुयायी और प्रदर्शक रहें)। इस प्रकार इस पर्व के दिन सभी यज्ञोपवीत धारी स्वाध्याय का व्रत धारण करते हैं। यह कर्म श्रावण की पूर्णिमा को किया जाता है इसी लिए इस को श्रावणी (श्रावण की पूर्णिमा) कहते हैं। सलोनो श्रावणी का ही अपभ्रंश है यद्यपि भादों की पूर्णिमा वा हस्त नक्षत्र से युक्त श्रावण की पञ्चमी को भी कर लेने की आज्ञा है तथापि श्रावण पर ही अधिक बल दिया है और यह एक ही दिन नियत रहना उत्तम है।

अब इस पर्व का महात्म सहज ही समझ में आ जाता है। जब सारे के सारे यज्ञोपवीतधारी नये यज्ञोपवीत बदल कर वेद की रक्षा और प्रचार की दृढ़ प्रतिज्ञा ले और वर्ष के वर्ष नये सिरे प्रतिज्ञा धारण करते रहें तो हमारे देश और जाति के हर एक पुरुष के जीवन में धर्म का बल आ जाये। सब के चेहरों पर फिर एक वार तेज और ब्रह्म वर्चस चमके और सभी सब प्रकार के दुःखों से विमुक्त और सुखों से सम्पन्न हो जायें।

रक्षा बन्धन (राखी वा रखड़ी बान्धना)—इसी दिन रक्षा बन्धन भी होता है। रक्षाबन्धन का विधान गृह्य सूत्रों में नहीं, पुराणों में पाया जाता है। यह रक्षा बन्धन का आचार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और हीन जातियों के लिए सब के लिए एक जैसा बतलाया है। सम्भवतः इस आचार का मूल भी वैदिकधर्म की रक्षा है। यज्ञोपवीत धारी इस दिन जहां वेद के स्वाध्याय का प्रण लेते हैं वहां हिन्दू मात्र चाहे वह शूद्र वा अतिशूद्र हो क्यों न हो हिन्दू धर्म की रक्षा का प्रण लेता है वह प्रण लेता है कि चाहे प्राण जाते रहें पर वह धर्म से कभी नहीं फिसलेगा और न हिन्दू धर्म पर कोई आघात होने देगा। राखी बान्धकर जो प्रतिज्ञा की जाती है वह एक अटल प्रतिज्ञा होती है बहिनों का भाइयों को और ब्राह्मणों का यजमानों को राखी बांधने का धर्म रक्षा ही मुख्य अभिप्राय है। ऋषि तर्पणी और रक्षा बन्धन का रहस्य न जान कर 'ऋषयस्तृप्यन्ताम' कहने से ऋषि तृप्त नहीं होंगे और पैसे ले कर राखी बांधने से धर्म का उद्धार न होगा।

पौराणिक वर्ग वेद, ब्राह्मण, उपनिषद् प्रभृति को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। मुसलमान कुरान को, ईसाई बाइबिल को, पारसी जिन्दावस्था को और सिख गुरुग्रन्थ साहब को ईश्वरीय ज्ञान होने का दावा करते हैं।

आर्य समाज का सिद्धान्त है कि केवल ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ये चार संहिता भाग ही ईश्वरीय ज्ञान हैं। ब्राह्मण वेदों के व्याख्या भाग तथा ऋषिकृत, उपनिषद् भी ऋषियों की कृतियां हैं अतः ये सभी ग्रन्थ परत प्रमाण और पौरुषेय हैं। ये ईश्वरीय ज्ञान नहीं हो सकते हैं।

क्योंकि—

(१) ईश्वरीय ज्ञान वही ग्रंथ हो सकते हैं जो सृष्टि के साथ ही दिये गये हैं। चार मुक्तात्मा ऋषि, अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा को सृष्टि के आदि में चारों वेद मिले।

(२) जो ग्रन्थ किसी देश-विशेष की भाषा में न हों। कुरान, अरबी, बाइबिल लैटिन, जिन्दावस्था पहलवी, गुरु ग्रन्थसाहब गुरुमुखी (पंजाबी) तथा ब्राह्मण, उपनिषद् लौकिक संस्कृत भाषा में हैं। अतः ये ईश्वरीय ज्ञान नहीं हो सकते हैं। वेद वैदिक संस्कृत में हैं जो किसी भी देश विशेष की भाषा नहीं है। वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत में अन्तर है। वैदिक संस्कृत से लौकिक संस्कृत निकली है और संस्कृत निखिल विश्व की भाषाओं की जननी है।

"वाप" साहब नामक पाश्चात्य विद्वान् भी कहते हैं—

At one time Sanskrit was the one language spoken all over the world (Edinburgh Review, vol XXXIII PP, 43)

अर्थात्—'एक समय संस्कृत निखिल विश्व की बोलचाल की भाषा थी।'

वेद ईश्वरीय ज्ञान क्यों ? कैसे?

लेखक—वैदिक गवेषक, आचार्य शिवपूजन सिंह कुशवाहा 'पथिक' बी० ए०, विद्यावाचस्पति, सि० शास्त्री, कानपुर

(३) (वह ज्ञान सृष्टि नियमों के विरुद्ध न हो।

वेदों में सृष्टिक्रम तथा विज्ञान के विरुद्ध कोई बात नहीं है। परमात्मा सृष्टिकर्त्ता और नियन्ता है और विशेष नियमों से इस ब्रह्माण्ड का सचालन कर रहा है—'ऋतञ्च सत्यंचाभिद्धातपसोऽध्यजायत उसी परमात्मा ने वे सब नियम बनाए जिन से विश्व का संचालन होता था।

बाइबिल व कुरान में सैकड़ों बातें विज्ञान के विरुद्ध हैं।

(४) परमात्मा के ज्ञान में सब सत्य विद्याओं के मूल सिद्धान्तों का होना अनिवार्य है।

वेदों में सब सत्य विद्याएं है। ज्योतिष, गणित, सगीत, वैद्यक प्रभृति सैकड़ों विद्याओं के बीज वेदों में हैं। इस सम्बन्ध में पाठकों को 'श्री ब्रजेन्द्रनाथ शीलकृत' The positive scinces of the ancient Hindus पुस्तक तथा पं० सत्यव्रत जी सामश्रमीकृत 'त्रयी चतुष्ट्य' पुस्तक देखना चाहिए।

(५) जिस में ईश्वर के गुण, स्वाभाव, न्यायपरायणता, सत्यता तथा दयालुता प्रभृति का परस्पर विरोध रहित विवरण हो।

यजु० ४०/८ में परमात्मा को निराकार, शरीर रहित, नस नाड़ी रहित, शुद्ध, कवि, स्वयम्भु आदि कहा है।

सम्प्रदायवादी परमात्मा को साकार, देहधारी मानते हैं जो उनका भ्रम है।

'न तस्य प्रतिमा अस्ति' न उस की कोई मूर्ति है और न उसकी कोई उपमा वा सादृश्य है। वेदों में एकेश्वर वाद का प्रतिपादन है।

(६) जिस में किसी प्रकार का अनित्य इतिहास न हो। कुरान में हजरत मुहम्मद, बाइबिल में मूसा, ईसा प्रभृति, जिन्दावस्था में जरदुश्त, गुरू ग्रन्थ साहब में नानक, दादू, कबीर प्रभृति, का वर्णन है। ये ग्रन्थ अनित्य इतिहासों से भरे पड़े हैं। ब्राह्मण, उपनिषद्, पुराणों में भी अनित्य इतिहास हैं। अतः ये सभी ग्रन्थ ईश्वरीय ज्ञान नहीं हैं।

वेदों के सभी शब्द यौगिक हैं, रूढ़ि नहीं हैं और न कोई अनित्य इतिहास है। जो कोई वेदों में अनित्य इतिहास ढूढ़ने का प्रयास करता है उसका भ्रममात्र और पाश्चात्यों की नकल है।

संसार में वैदिक नामों पर ही लौकिक नाम रक्खे जाते हैं जिसे अज्ञानी लोग वेदों से अनित्य इतिहास, भूगोल सिद्ध करने का कुप्रयास करते हैं।

राजर्षि मनु जी कहते हैं :—

"सर्वेषां तु स नामानि
कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवादौ
पृथक् संस्थाइच निर्ममे॥"

(मनुस्मृति १।२)

अर्थात्—"उस परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में उन सब के पृथक् २ नाम और कर्म और व्यवस्था वेद शब्दों से रची।"

सृष्टि से पूर्व भी वेद थे और हर कल्प में वेदानुकूल सृष्टि होने से वेद नित्य हैं। उन में इतिहास की कल्पना करना मूर्खता है।

वेदों में इतिहास नहीं है इसके लिए पाठकों को महर्षि दयानन्दजी कृत "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" पं० शिवशङ्कर शर्मा काव्य तीर्थ कृत "वैदिक इतिहासार्थ निर्णय" पं० प्रियरत्न जी आर्षकृत "वेद में इतिहास नहीं" आचार्य पं० वैद्यनाथ जी शास्त्री, एम. ए. कृत "वैदिक इतिहास विमर्श" पं० चमूपति एम. ए. कृत "यास्क युग", पं० हरिशरण जी सिद्धांतालङ्कारकृत "ऋग्वेद के ऋषि", पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार मीमांसा तीर्थ कृत "क्या वेद में इतिहास है" ग्रन्थों को पढ़ना चाहिए।

(७) जो नित्य हो।

वेदों को ही हम 'नित्य' कह सकते हैं क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान के दावे करने वाले सभी ग्रन्थ आधुनिक हैं। पाश्चात्य विद्वान् भी वैदिक शब्दों को यौगिक और नित्य मानते हैं। प्रो० मैक्समूलर लिखते हैं—"Names are to be found in the Vedas as it were, in a still fluid state. They never appear as appellatives, notyet as proper names, they are organic, nor yet broken of smoothed down." (Sanskrit literature" PP. 287)

अर्थात्—"क्या ही विचित्र है कि वेदों में जो नाम मिलते हैं वे नाम विशेष पुरुषों के नहीं, वे तो यौगिक हैं। वे द्रवावस्था के हैं, किसी विशेष पुरुष के नहीं कहे जा सकते।"

इस सम्बन्ध में पाठकों को मेरी लिखी हुई "पाश्चात्यों की दृष्टि में वेद ईश्वरीय ज्ञान" पुस्तक (जयदेव ब्रदर्स, आत्मारामपथ, बड़ोदा) द्रष्टव्य है।

इन उपर्युक्त प्रमाणों व तर्कों के आधार पर हम वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मान सकते हैं अन्य ग्रन्थों को नहीं।

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यो का परम हितकर कर्त्तव्य है

वेद में नारी का स्थान—

वीर प्रसू माता के रूप में

(ले०—सुशीला देवी जी आर्या एम० ए० नरवाना)

वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है, सर्वशास्त्रों का उद्गम स्रोत है। समाज-शास्त्र के मूल तत्व भी इस में पाए जाते हैं। पारिवारिक जीवन विधान का वेद में अत्यन्त उत्कृष्ट एवं विशद शैली में वर्णित किया गया है। परिवार के सदस्यों-माता पिता पत्नी पति, भाई बहिन, भाई भाई, सन्तान सभी के पारस्परिक कर्त्तव्यों का विश्लेषण स्पष्ट और सीधे शब्दों में हमें प्राप्त होता है। नारी समाज और परिवार का एक अभिन्न अंग है। दुहिता स्वसा, पत्नी और माता सभी रूपों में वह समाज की आधार-भित्ति का कार्य करती है। नारी के विविध रूपों का वर्णन वेद की अद्वितीय विशेषता है। नारी का जीवन रहन सहन, चाल ढाल, उठना बैठना, चलना फिरना, उस में वांछित मर्यादा व शालीनता का वेद में सूक्ष्मता पूर्वक आलेखन किया गया है, जिसे पढ़ सुन कर एक मधुर शिष्ट आनन्दमय पारिवारिक जीवन का सुखद चित्र नेत्रों के समक्ष दृश्यमान हो उठता है। प्रस्तुत लेख में हमें नारी के मातृरूप पर विचार करना है।

स्त्री वीरों की जननी है। देश व समाज के प्रति उस की कर्त्तव्य परायणता का सब से बड़ा मूल्यांकन उस की सन्तान से किया जा सकता है। वेद ने नारी को गृह का श्रृंगार। पति की अनुगामिनी रूप में प्रस्तुत किया है। पति ही उस का यश है। कामना है; किन्तु हमें इस तथ्य को कभी आंखों से ओझल नहीं कर देना चाहिये कि वेद में नर नारी के मधुर सम्बन्धों का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है उत्तम सन्तानोत्पादन। वेद ने नारी को माता के रूप में सर्वाधिक महत्व प्रदान किया है। उस का मातृ रूप ही साध्य है अन्य पूर्ववर्ती रूप इसी पश्चाद् वर्ती रूप की भूमिका मात्र हैं। वेद के शब्दों में :—

बृहस्पतिर्मरुतो सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयतु।

कहा जा सकता है कि जीवन का उद्देश्य शारीरिक भोग विलास मात्र मानते हुए भी सन्तान तो हो ही जाएगी किन्तु परिणाम भेदपर दृष्टिपात करने से आकाश पाताल का अन्तर प्रतीत होता है। किसी उच्च उद्देश्य को निर्धारित किए बिना उत्पन्न की हुई सन्तान उन आदर्शों के अनुकूल कदापि नहीं हो सकती जो प्रजावृद्धि के वेद ने स्वीकार किए हैं। यही कारण है कि वेद ने पुरुषों की भान्ति स्त्रियों के भी पू ब्रह्मचर्य पर बल दिया है। क्योंकि यही एक ऐसा मार्ग है जिस पर वेद विहित ढंग से चलने के पश्चात प्रजोत्पत्ति करने वाली नारी गर्व पूर्वक कह सकती है—

मम पुत्राः शत्रुहणोऽथ मे दुहिता विराट
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तम : ।

मेरे पुत्र शत्रु घाती हैं, मेरी कन्या तेजस्विनी है, मैं विजयिनी हूं, पति के विषय में मेरा यश उत्तम है

संसार के प्रत्येक राष्ट्र की सब से बड़ी सम्पत्ति उस के वीर। नागरिक ही होते हैं। नीतिकारों ने वीर भोग्यावसुन्धरा इन तीन ही शब्दों में हमें प्रेरणा प्रद चेतावनी दे डाली है। खेद है कि हमने वेद ज्ञान के प्रबल पोषक होने का दम भरते हुए भी वीर सन्तान का महत्त्व भुला दिया है। आज कितनी माताएं हैं जो वेद के शब्दों में वीर पुत्रों की कामना करती हैं? और इस उपेक्षा का परिणाम सामने है। आज हमारे देश की स्वतन्त्रता एवं सुरक्षा खतरे में है। इस विकट स्थिति में माताओं का दायित्व और भी बढ़ गया है। अब हमारी आंखे खुल जानी चाहियें और हमे यह समझ लेना चाहिये कि देश की यदि कोइ महत्तम आवश्यकता है तो वीर सन्तान की। और उसका निर्माण माताओं के किए होगा। पहले उन्हें अपना शरीर तथा तन इस लक्ष्य के अनुकूल ठीक उसी प्रकार तैयार करना होगा जैसे चतुर कृषक बीज बोने से पूर्व धरती तैयार करता है। क्यों हमारी माताएं पुत्रों को केवल अपने बुढ़ापे की लकड़ी के रूप में तैयार करने की ही चिन्ता करें? क्यों न वे उन्हें शत्रुघ्न बनाएं? शत्रुघाती पुत्र माता की रक्षा तो स्वतः करेंगे ही।

प्रस्तुत मंत्र में एक बात और विशेष ध्यान देने योग्य है। इस में पुत्रों के साथ साथ दुहिता को भी विशिष्ट रूप से चर्चा की गई है। वर्तमान समाज मे हमारी माताओं ने कन्याओं का स्थान कुछ इतना गिरा दिया है कि वे तो अकस्मात् पैदा हो जाएं तो हो जाएं अन्यथा उन के जन्म लेने का कोई लक्ष्य विशेष नहीं माना जाता। यह हमारी भूल है। भावी सन्तान की माताएं तो कन्याओं ने ही बनना है। इस लिए वेद मंत्र में जहां पुत्रों के 'शत्रुहणः' होने की कामना की गई है वहां दुहित के लिए भी 'विराट्ता' का वरदान मांगा गया है। देश, समाज तथा माता के लिए दोनों प्रकार की सन्तानें पुत्र हों या पुत्री समान होनी चाहियें। देश की समृद्धि घर की खुशहाली दोनों पर समान रूप से निर्भर है। अतः कन्याओं के विषय में हीनता की भावना को घर से या हृदय से जितनी शीघ्र निकाला जाएगा उतना ही अच्छा है। किसी भी देश के सभी निवासी बलवान सुदृढ़ होंगे तभी उस का बेड़ा पार होगा।

वेद ने माता के रूप में नारी का कर्त्तव्य पुत्र व पुत्री दोनों के प्रति स्पष्ट कर दिया है। इसी कामना के अनुसार आचरण कर सन्तान का निर्माण करने वाली माता जीवन रण में विजयिनी होने का दावा कर सकती है। (शेष पृष्ठ ६ पर)

श्री कृष्ण का उपदेश

(ले०—श्री ज्ञानसिंह जी नई दिल्ली)

शरीर और आत्मा के मेल का नाम जन्म है और उनके वियोग का नाम मृत्यु। शरीर पांच तत्वों का बना हुआ है। वह बनता तथा बिगड़ता है, नाशवान है। आत्मा अमर है, वह न जन्म लेता है न मरता है; नित्य और अविनाशी है। एक बच्चे का शरीर छोटा होता है परन्तु जब बच्चा आयु में बढ़ता है तो उसका शरीर भी बढ़ता है। बच्चा युवा और फिर बूढ़ा भी होता है परन्तु यह परिवर्तन केवल शरीर में ही होता है आत्मा मे नहीं, आत्मा तो अपरिवर्तनशील है। गीता में कहा गया है कि इसको शस्त्र काट नहीं सकता, आग जला नहीं सकती, सुखावायु नहीं सकती, तथा जल उसे गला नहीं सकता। वह तो विद्युत् की भांति एक परम सूक्ष्म शक्ति है जो शरीर रूपी कोष में बन्द हो रही है। शरीर के हनन पर आत्मा का हनन नहीं होता है। वह शरीर से इस तरह बाहर निकल जाता है जैसे कोष से बिजली या वायु की भरी हुई मशक में छेद होने पर वायु बाहर निकल जाती है।

बचपन जवानी तथा बुढ़ापा मनुष्य जीवन की भिन्न-भिन्न अवस्थायें हैं। इसी तरह मृत्यु भी एक अवस्था है। यह मनुष्य जीवन का अन्त नहीं। जिस प्रकार एक मकान वासी एक मकान को छोड़ कर दूसरे मकान में चला जाता है अथवा एक व्यक्ति अपने पुराने कपड़ों को उतार कर नये पहन लेता है इसी प्रकार आत्मा भी एक शरीर को छोड़कर अपने कर्मों के अनुसार दूसरे शरीर को धारण कर लेता है। एक शरीर के छोड़ने को हम मृत्यु कहते हैं तथा दूसरे शरीर के धारण करने को जन्म। इससे स्पष्ट है कि मृत्यु एक व्यावहारिक अवस्था है यह कोई भयानक वस्तु नहीं। यह जीवन-मरण का चक्र तो चलता ही रहता है। जब तक कि आत्मा अपने शुभ कर्मों से तथा ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर इस योग्य नहीं हो जाता कि अमरतत्व की प्राप्ति कर ले, अर्थात् विकास करता हुआ ब्रह्म के गुणों को अपने अन्दर धारण कर उस जैसा हो जाये, अर्थात् उसके अत्यन्त समीप पहुंच जाए।

साधारणतया यह विचार प्रचलित है कि "जिस ने पढ़ लयी गीता, उसने घर दा की कीता।" अर्थात जो गीता पढ़ लेता है वह ससार के किसी कार्य करने योग्य नहीं रहता, वह संसार को त्याग योग्य समझने लग जाता है। परन्तु यह विचार निर्मूल और निरर्थक है। गीता में भगवान् कृष्ण बार-बार कहते हैं कि यह संसार एक कर्मभूमि है, यह स्वप्न या माया नहीं कर्म बन्धन का साधन नहीं, हां कर्म के फल के लिए मोह या शक्ति बन्धन का कारण है। भगवान् कृष्ण तो यहां तक कहते हैं कि मनुष्य कर्म-हीन हो ही नहीं सकता। उनका उपदेश है काम करो, परिश्रम करो तथा अपना रास्ता बनाओ।" आलस्य को त्यागो दूसरों की दया पर निर्भर न रहो तथा सघर्ष से न डरो।

मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता है। जैसा वह कर्म करता है वैसा ही फल भोगने का वह अधिकारी हो जाता हो जाता है। यही उसका भाग्य बन जाता है। जब से हमारे देश के लोगों ने—

'राम भरोसे रह कर,
पड़ा खाट में सोय।
अनहोनी होनी नहीं,
जो होनी सो हो।

का पाठ पढ़ना आरम्भ किया, परिश्रम करना छोड़ दिया। देश का पतन हो गया। दूसरे देशों के वासियों ने जो आत्मविश्वास रखते थे। वह भाग्य पर निर्भर नहीं रहते थे बल्कि परिश्रम और बुद्धि पर विश्वास रखते थे, वास्तव में उन्होंने कितनी उन्नति की, पहाड़ों को चीरा नदियों पर पुल बनाये, समुद्र की छाती पर जहाज़ चलाये, हवाई जहाज़ चलाये, बिजली को सेवक बनाया। वास्तव में विज्ञान की सारी प्रगति, परिश्रम व पुरुषार्थ का ही फल है। वही जातियां उन्नत होती हैं जो परिश्रम व बाधाओं से नहीं घबरातीं। एक कवि ने कहा है—

'वही लोग पाते हैं इज्जत ज्यादा
जो करते हैं दुनियां में मेहनत ज्यादा।'

एक राज एक ईंट पर दूसरी ईंट रखता है तथा इस तरह एक मकान की दीवार बना लेता है। दूसरा मनुष्य जमीन को खोदता है और खाई बना देता है, यहां कार्य दोनों ही करते हैं परन्तु पहले का कार्य रचनात्मक है तथा दूसरे का विध्वंसपूर्ण। इसलिए केवल कर्म करना ही आवश्यक नहीं, बल्कि कर्म ऐसा करना चाहिए जो शुभ हो और दूसरों के भले के लिए हो वेद में भी कहा गया है—

'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'

अर्थात् ऐसे कर्म करो जिस से दूसरो को किसी प्रकार की हानि न पहुंचे। दूसरों के अधिकारों को कभी मत छीनों। दूसरों के साथ ऐसा वर्ताव करो जैसा कि तुम चाहते हो कि वह तुम्हारे साथ करें। एक कवि ने कहा है :—

"भूल कर न करना
किसी से सलूक ऐसा।
अगर तुमसे कोई करता
तुम्हें नागवार होता।"

गीता में भगवान कृष्ण ने यह भी उपदेश दिया है कि अपने निज धर्म का पालन करो। निज धर्म का अभिप्रायः यह है कि मनुष्य अपने कर्त्तव्य का पालन करे। शुभ कर्मों का दूसरा नाम कर्त्तव्य कर्म ही है। महाभारत आदि शास्त्रो में भी धर्म का अर्थ कर्तव्य पालन ही कहा गया है। आज हमें इस उपदेश का पालन करने की कितनी आवश्यकता है। अगर प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन करना आरम्भ कर दे, चाहे वह अफसर हो अन्य कर्मचारी, कारखानेदार हो या कार्यकर्ता, दुकानदार हो या ग्राहक, वकील हो या डाक्टर, व्यापारी हो या जमींदार अथवा अध्यापक हो या विद्यार्थी। सारांश कुछ भी हो यदि वह अपने कर्तव्य का ईमानदारी मुहब्बत और मन से पूरा करने का व्रत लेते हैं तो क्या देश में घूस, भ्रष्टाचार आदि रह सकता है। क्या हमारे देश की निर्माण योजनायें अधिक सफल न होंगी, क्या हमारे देश का बहुत सा रुपया जो व्यर्थ ही व्यय किया जाता है बच नहीं सकता, क्या दुःखियों, गरीबों, बीमारों की सेवा अधिक भलि-भांति न होगी, क्या देश से ईर्ष्या, द्वेष आदि दूर न हो जाएंगे, क्या देश सामाजिक व आर्थिक उन्नति की ओर अग्रसर न हो जाएगा, क्या देश में वर्तमान असंतोष के स्थान पर संतोष की लहर न आयेगी क्या निराशा के बादल छिन्न-भिन्न न हो जाएंगे और देश दिन-दिन उन्नति के शिखर पर न चढ़ता जाएगा?

यदि परिवार में पति-पत्नी, लड़का-लड़की, भाई-बहन, सास, बहू अपने-अपने कर्तव्य का पालन आरम्भ कर दें तो क्या परिवार स्वर्ग का दृश्य उपस्थित न करेंगे। यदि नागरिक अपना कर्तव्य पालन करें तो कहीं साम्प्रदायिकता रह सकती है। यदि मतदाता और उम्मीदवार अपने अपने कर्तव्य ईमानदारी से पूरा करें तो प्रजातन्त्र

(शेष पृष्ठ ६ पर)

वेदों में राष्ट्र का संरक्षण और युद्ध

[ले०—प० श्री दा. सातवलेकर स्वाध्याय मंडल पारडी (जि.सूरत)]

राष्ट्र का संरक्षण करने का कर्तव्य वेद मंत्रों में उत्तम रीति से कहा है। जो राष्ट्र के पुत्र हैं उनका कर्तव्य ही है कि वे अपने राष्ट्र का संरक्षण शत्रु का आक्रमण होने पर अवश्य करें 'पुत्र' का अर्थ ही 'तारण करने वाला' है। पुत्र का कर्तव्य जैसा माता पिता का संरक्षण करना है, उसी प्रकार राष्ट्र रूपी पिता का और मातृ भूमी रूपी माता का संरक्षण करना भी उसी का कर्तव्य है, अतः कहा है—

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।
अथर्ववेद १२।१।१२

'मेरी माता भूमि है और मैं उस मातृ भूमि का पुत्र हूं।'

इस मंत्र में स्पष्ट रीति से कहा है कि मैं मातृभूमि का पुत्र हूं। अर्थात मातृभूमि का संरक्षण करने के लिये सदा कटिबद्ध रहना मेरा कर्तव्य ही है। यदि वह मातृभूमिका सुपुत्र है तो उसका यह आवश्यक कर्तव्य है कि, वह सदा अपनी मातृभूमि की सुरक्षा के लिये तत्पर रहे।

यो नो द्वेषत्पृथिवि यः पृतन्यात्
योऽभि दासान्मनसा यो वधेन।
तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि॥

'हे मातृभूमि! जो हमारा द्वेष करेगा, हमारे ऊपर सेना भेजेगा, जो हमारा वध करने की इच्छा करेगा हे भूमे? उस का पूर्णता से नाश कर।

इस मंत्र में चार प्रकार के शत्रुओं का वर्णन किया है—

१ य. न. द्वेषत्—जो हमारा द्वेष करता है, द्वेष करना जिस का स्वभाव बना है।

२ य पृतन्यात्—जो हमारे ऊपर सैन्य भेजता है और हमारा नाश करने की इच्छा करता है।

३ यो मनसा अभिदासात्—जो मन से हम सब को दास बनाना चाहता है, जो अपने मन से हमें दास बनाना चाहता है।

४ य वधेन—जो हमारा वध करने की इच्छा करता है।

५ त नो भूमे रंधय—उसको, हे मातृभूमे, पूर्णतासे विनष्ट कर, उसको जीवित न रख।

जो हमारा द्वेष करता है, जो हमारे ऊपर सैन्य भेज कर हमारा पराभव करना चाहता है, जो मन से हमें दास बनाना चाहता है, तथा जो हमारा वध करने का इच्छुक हैं ये सब हमारे शत्रु है, उनका नाश करना चाहिये।

रमणीय प्रदेश

यस्याः पुरो देवकृताः क्षेत्रे यस्या विकुर्वते प्रजापतिः पृथिवीं विश्वगर्भमाशामाशां रण्यां नः कृणोतु॥ अथर्व १२।१।४३

'जिस मातृभूमि में देवों के के बनाये नगर हैं, जिस मातृभूमि के क्षेत्र में वीरों ने बड़े पराक्रम किये हैं, उस मातृभूमि के क्षेत्र को प्रजा का पालन करने वाला प्रभु प्रत्येक दिशा में रमणीय बनावे।'

मातृभूमि का प्रत्येक क्षेत्र रमणीय दर्शनीय तथा देखने के लिये अत्यंत सुन्दर बनाया जाय। वह बड़ा सुन्दर बनाया जाय, जिसको देखने के लिये चारों ओर से लोग आ जायें और उस प्रदेश को देख कर वे प्रसन्न हो जायें। अपना मातृभूमि में ऐसे सुन्दर भूप्रदेश बनाये जायें।

मैं विजयी बनूंगा

अहमस्मि सहमान उत्तरो
नाम भूम्याम्।
अभीषाडस्मि विश्वाषाडा-
शामाशां विषासहिः॥
अथर्व १२।१।५४

१ अहं सहमानः अस्मि—मैं शत्रुओं का पराभव करने के सामर्थ्य से युक्त हूं। निःसंदेह मैं सब शत्रुओं का पराभव करूंगा।

२. भूम्या उत्तर नाम—मैं अपनी मातृभूमि में अधिक श्रेष्ठ बन कर विराजूंगा।

३. अभीषाड अस्मि—चारों ओर के शत्रुओं का पूर्णतया पराभव करने वाला मैं महावीर हूं।

४ विश्वाषाट् अस्मि—मैं संपूर्ण शत्रुओं का पूर्ण रीति से पराभव करने वाला हूं।

५. आशांआशा विषासहि—प्रत्येक दिशा में मैं विजयी हूं। शत्रु का पूर्ण पराभव करके अपना विजय करने के विषय में मैं निश्चिंत हूं। मेरी ऐसी तैयारी है कि जिस से मेरा शत्रु पर निःसंदेह विजय होगा और शत्रु का ऐसा पराभव होगा कि वह फिर हमें उपद्रव न दे सकेगा। वह पूर्ण पराजित होकर अपने स्थान से सपूर्णतया हट जायगा।

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा
अस्मभ्य सन्तु पृथिवि प्रसूता।
दीर्घं न आयु. प्रतिबुध्यमानाः
वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥
अथर्व. १२।१।६२

१ अयक्ष्मा अनमीवा ते उपस्थाः—नीरोग और आरोग्य सम्पन्न होकर, हे मातृभूमे! हम सब तेरे पास, तेरी सेवा में आकर तेरी सेवा करेंगे। तेरी सेवा करने से हम कृतार्थ बनेंगे।

२ हे पृथिवि! ते प्रसूता अस्मभ्य सन्तु—हे मातृभूमे! तेरे से उत्पन्न हुए सब भोग हमारे लिये ही मिलते रहें। ऐसा कभी न हो, कि तुझ में उत्पन्न हुए सब भोग हमें न मिले और उनका शत्रु उपभोग करे, वे भोग शत्रु को प्राप्त हों और हम उन से वंचित रहें।

३ नः आयु. दीर्घ—हमारी आयु दीर्घ हो, हम पूर्णायु हों। आयु की समाप्ति तक हम तुम्हारी सेवा करते रहें।

४ प्रति बुध्यमानाः—हम उत्तम ज्ञानी हों, सब ज्ञान हमें प्राप्त हो किसी ज्ञान में हम कम न हों।

५ वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम—हम सब तुम्हारे लिये अपनी बली अर्पण करने लिये सदा तैयार हैं। हम पूर्ण रीति से बली तुम्हारे लिये अर्पण कर के तुम्हारी सेवा करने के लिये सिद्ध हों।

मातृभूमि के लिये अपनी बली देने की सिद्धता हरएक मातृभूमि के सुपुत्र की रहना चाहिये।

कपटी शत्रु का नाश करना।

सभी शत्रुओं का नाश करना चाहिये। उन शत्रुओं में जो छल करने वाले कपटी शत्रु हों, उन का तो सपूर्णतया विनाश करना चाहिये। देखिये—

गुहाहितं गुहां गूढमप्सु
अपीवृतं मायिनं क्षियन्तम्।
उतो अपो द्यां तस्तभ्वांस
अहन्नहिं शूर वीर्येण॥
ऋ. २।११।५

(गुहाहितं) गुफा में गुप्त रीति से रहने वाले (गुहां) गुप्त रीति से रहने वाले, (अप्सु गूढं) बल प्रवाहों के आश्रय से गुप्त रहने वाले (अपीवृत मयिनं) गुप्त रीति से रहने से कपटी शत्रु को (क्षियन्तं) किले में छिपकर रहने वाले (द्यां अपः तस्तभ्वांसं) जल प्रवाहों का स्तब्ध करके अपने आधीन रखने वाले (अ-हिं) शत्रु को (वीर्येण अहन) अपने पराक्रम से विनष्ट किया।

'अहि वीर्येण अहन—शत्रु को अपने बल से, अपने सामर्थ्य से मारें। वास्तव में अपना बल ऐसा बढ़ाना चाहिये कि जिसके सामने शत्रु का बल फीका पड़े। यही शत्रु का नाश करने का साधन है।

आर्यों का परम धर्म-वेद

(पृष्ठ १४ का शेष)

महर्षि दयानन्द ने भी एक अवसर पर कहा था कि जो कह दे कि वह 'वेद' को मानता है वह आर्य है इसी लिए मनु जी ने नास्तिको वेद निन्दक.' कह कर वेद को न मानने वाले को ही नास्तिक माना है ॥

आर्यों के धर्म के अन्य अनेक अंग दूसरे धर्मों के समान ही हैं परन्तु उन का परम धर्म-केवल मात्र वेद है। आर्य समाज के तीसरे नियम 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सब आर्यों का परम धर्म है।' के अभाव में न नियमों की ओर न ही आर्य समाज की स्थापना की आवश्यकता होती। वेद आर्य समाज की जीवन जड़ और इस की स्थापना के महत्व का मूल है। संस्कृतानभिज्ञ आर्य समाजी इन्हें न पढ़ सकें तो भाष्यों का आश्रय ले अथवा अनुवादित पुस्तकों का अध्ययन करे अन्यथा वे आर्य समाजी कहलाने के अधिकारी नहीं। वेद ज्ञान, शून्य जब हम स्वयं आर्य न बनेंगे तो 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' की प्रतीक्षा कैसे पूर्ण होगी ? पहिले हमें स्वयं आर्यगुणों से सम्पन्न होना चाहिए।

योग दर्शन मे वर्णित ५ नियमो मे एक नियम 'स्वाध्याय' है। स्वाध्यायादिष्ट देवता संप्रयोग : ॥४४॥ अर्थ-स्वाध्याय से इष्ट देवता का सम्बन्ध-मेल-साक्षात होता है । भाष्य—स्वाध्याय से इष्ट देवता का साक्षात होता है। व्यास भाष्य में लिखा है कि देवता, ऋषि और सिद्ध स्वाध्यय शील के दर्शन को आते है और इस के कार्य मे सहायी होते हैं। साधन पाद का पहिला सूत्र है—'तपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रिया योग : अर्थात तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान क्रिया योग है। जिन से धर्म और ब्रह्मविद्या की शिक्षा मिलती है उन वेद, उपनिषद आदि शास्त्रों का प्रतिदिन नियत समय पर पाठ करना, इस नियत से, कि उन से धर्म और ब्रह्मविद्या की शिक्षा को धारण धारण करे । और ओंकार तथा गायत्री आदि का जप 'स्वाध्याय है।

योग शास्त्र के समाधिपाद के २८, २६ सूत्र की व्याख्या मे महर्षि वेद व्यास लिखते हैं—'स्वाध्यायाद योगमासीत योगा स्वाध्यायत् मामनत्। स्वाध्याय योग सम्पत्त्या परमत्मा प्रकाशते। स्वाध्याय के पीछे योग (उसके अर्थ के ध्यान) मे बैठे और योग के पीछे स्वाध्याय अभ्यास करे। स्वाध्याय और योग की सिद्धि से परमात्मा प्रकाशित होते हैं । इस लिए योग के आदि और अन्त में ओ३म का जप करना चाहिए। ऐसा है स्वाध्याय का महात्मा स्वाध्याय द्वारा हमें वेद प्रतिपादित अपने कर्तव्य का बोध हो कर तदनुसार आचरण करने का सुअवसर मिलता है जिस से आर्यत्व की ओर हमारा पग बढ़ सके।

आर्य समाज के प्रचार युग में एक २ आर्यसमाजी प्रचारक था। उसे वैदिक सिद्धान्तों का इतना ज्ञान होता था कि वह विरोधी का युक्तियों और प्रमाणों से मुंह बन्द कर सकता था परन्तु आज आर्य समाजों के कई प्रधान तथा मन्त्री तक आर्य सिद्धान्तों से अपरिचित हैं। स्वाध्याय के त्यागने से हमारी ऐसी दयनीय दशा हो गयी है कि हम शंका समाधान के लिए समय देकर भी यह चाहते हैं कि कोई प्रश्न कर्त्ता खड़ा न हो। यदि कोई प्रश्न कर देता है तो हम उसे सन्तुष्ट नहीं कर सकते। कहां वह समय था जब देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य पथिक' के शब्दों में—

सवाल जब कोई 'सुख लाल' जड़ देता है कहीं।
मुखालिफ भागते हैं करके बहाना झूठा ॥

मतावलम्बी हमारे आह्वान करने पर भी सामने आने से घबराते (कतराते) थे।

'श्रावणी' के दिन प्रत्येक आर्य को प्रण करना चाहिए कि वह प्रतिदिन सब काम छोड़ कर वेद (आर्य समाज के प्राण) का स्वाध्याय करेगा। यदि वह केवल हिन्दी का ज्ञान रखता है तो वह महर्षि के हिन्दी में लिखे पुस्तक पढ़े पर उसे घर में मूल वेद अवश्य रखने चाहिएं। हो सकता है कभी भाषा भाष्य की सहायता से एक २ वेद मन्त्र के स्वाध्याय में उसकी रुचि हो जाये। आर्य नेताओं का कर्तव्य है कि वे सस्ते वेद भाष्य आर्यों के हाथों में देने की व्यवस्था करें। यदि एक आर्य ने वेदों के दर्शन भी नहीं किये तो वह आर्य कैसा ? भले वह नेता हो। बम्बई में मुझे एक विद्वान् ने बताया था कि वहां पं० अयोध्या प्रसाद जी कलकत्ता वालों ने अपने व्याख्यान मे कहा था कि भजनीकों के बनाये हुए आर्यसमाजी वेद प्रचार नहीं कर सकेंगे। इसी प्रकार स्व० आचार्य नरदेव जी शास्त्री ने लिखा था—वेद प्रचार कार्य ढोलक पन्थी भजनीकों और अखबारी लेक्चरारों द्वारा सम्भव नहीं (सब प्रचारक ऐसे नहीं (कृण्वन्तो विश्वमार्यम का स्वप्न वेद ज्ञान से पूरा होगा अन्यथा वेद प्रचार अरण्य रोदन के अतिरिक्त कुछ नहीं।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के प्रति

ले०—कुंवर जयरामसिंह जी 'त्यागी' दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हि०

कोकिल न कू कू के शब्द उच्चारण करो,
तुम को अब दूसरा राग अपनाना है।
चातक अब बन्द करो मधुर ध्वनि पी पी की,
सरगम की तानों से स्वर को मिलाना है ॥
त्याग दो चकोर तुम चन्द्रमा से प्यार अब,
तेरा और उसका संयोग नहीं होना है।
ऐरे शिखण्डी घन गर्जन में न हो तू मस्त,
दिव्य दयानन्द गीत अन्तः से गाना है ॥

मनुष्ये को मनुष्य कौन बनाय ?

(पृष्ठ ४ का शेष)

इस समय प्रतिनिधि सभा में हैं सब के वेद प्रचार कोष लग भग निराकार हो रहे हैं, इस वेद सप्ताह में सोचा कि यह अवस्था क्यों ? दो ही सकती हैं या तो आर्यों को वेद परविश्वास नहीं रहा और या वह यह समझे बैठे हैं कि वेद तो सच्चाई है यह अपने आप फैलेगा—यदि यह बात होती तो वेद भूल क्यों जाता, सच्चाई और सुगन्ध फैलाने से फैलती है सुगन्ध को वायु फैलता है, सच्चाई को मनुष्य अपनी वाणी तथा व्यवहार से फैलाता है। हां एक बात और भी हो सकती है कि आर्य सज्जन यह समझ रहे हों, कि इस समय मानव को मानव बनाने की जरूरत नहीं अतः वेद प्रचार की भी जरूरत नहीं, यदि यही सोचा जा रहा है, तो फिर क्या चीन जैसे दरिन्दों की उन्नति की इच्छा है, यह तो सर्व नाश का मार्ग है। मानव को दानव न बनने दो इसे मानव ही बनाओ अत एवं वेद प्रचार करो।

ऋषि तर्पण

(ले०—श्री प्रणवानन्द सरस्वती प्रणवाश्रम डा० विशनाह)

आजकल हम आर्य प्रतिनिधि सभा वा आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के साप्ताहिक आर्य-पत्रों में पढ़ रहे हैं कि वेद सप्ताह आ रहा है इस को बड़े धूमधाम से मनाना है इत्यादि बोधक विज्ञप्तियों द्वारा आर्यजनता को सचेत किया जा रहा है अस्तु इस में हमारा केवल नम्र निवेदन यही है कि प्रति वर्ष एवं वेद सप्ताह आता है और कतिपय नगरों की आर्य समाजों में न्यूनाधिक रूप से मनाया और चला गया मेरे विचार में यह तो एक रस्म अदायगी है वस्तुतस्तु यह प्रथा आर्ष है, नगरों के अतिरिक्त देहातों और उपनगरों में इसका मनाना अति उचित है और धर्म-प्रचारक देश सुधारक विद्वान संन्यासी विप्र ऐसा ही करते थे क्योंकि इसका उद्देश्य वैदिक सत्य-सनातनधर्म देश-रक्षा परम्परागत आर्य जाति चिह्न का सहेतुक बोध और सच्चे मानवत्व का बताना है यहां इसका वेद प्रचार सप्ताह ही नाम रख लिया है नहीं २ पूर्व के इस के बहुत नाम हैं श्रावणी रक्षा-बन्धनी और उपाकर्म आदि २ इस का कार्यक्रम इस प्रकार हुआ करता था जब प्रचारक परिव्राजक विद्वान् चौमासे के कारण विशेषतया वर्षा वृद्धि वाले श्रावण मास में भ्रमण रुक जाता था तो वह एक दश बीस ग्रामों का मध्य केन्द्र चुन लेते थे वहां ग्रामीण लोग प्रतिदिन अवकाश के समय एकत्रित हो जाया करते थे महात्मा लोग वैदिक आर्य धर्म की पद्धति के अनुसार संस्कार मानव जीवन की स्तुत्य नीति रीति का ज्ञान दिया करते थे एवं कभी २ महात्माओं का सत्संग तो हुआ ही करता था किन्तु विशेषतया इन दिनों में तो प्रति दिन का सदुपदेश संभव हो जाया करता था किंतु दासता की पराधीनता ने ऐसा भारत गारत किया कि अपनत्वभूल शास्त्र की जी हां में डूब गये फिर भी दयालु प्रभु ने गुजरात से आदित्य उदय किया किन्तु थोड़े से जागे फिर सो गये हां मैं कार्यक्रम कह रहा था फिर चौमासे का मध्य श्रवण नक्षत्र युक्त पूर्णम सी तिथि चुन लेते उस दिन बृहत्सम्मेलन मनाया जाता बादलों की रिमझिम झड़ी लगी है किसानों को छुट्टी है खेतियें परिवर्धित हो रही हैं क्षेत्रपति प्रसन्न हैं यह लोग सपरिवार उत्सव मे वर्ष भर के लिये गुरुजनों ने जो काम कथन किये हैं उन में संनद्ध-बद्ध होने के लिये जा रहे हैं आज के दिन विशेष हवन होगा यज्ञान्त में महात्मा लोग द्विजातियों के दोनों हाथों की सांगुष्ठ अंगुलियों पर शुभ्र यज्ञोपवीत धरा कर कहते हैं हे द्विजाति वर्ग ! प्रथम जन्म माता से द्वितीय जन्म सावित्री सरस्वती से होता है तो मनुष्य द्विजन्मा वा द्विजाति सम्पन्न होता है अन्यथा शूद्र वर्ग (वर्ण) मे उसकी गणना की जाती है इस भेद को प्रकट करने के लिये यह त्रितन्तु चिन्ह तुम्हें वाम स्कन्ध पर और दक्षिण भुजा के नीचे धारण कराया जाता है क्योंकि हृदय वाम स्कन्ध के नीचे और दक्षिण भुजा के नीचे की ओर झुका हुआ है और मनुष्यों की जितनी भी विचार-धाराए बहती हैं वह सभी मन मेरु से ही निकलती हैं शुद्ध हों वा अशुद्ध अतएव सूत्रधारी (यज्ञोपवीती) मनुष्य को बोध होते रहें देख ! पग सुमार्ग की ओर उठ रहा है न ! मन में शोच तीन कार्य तेरे ठीक चल रहे न ! आदि २ विचार इस से दिये जाते हैं क्योंकि मनोमय तत्व हृदेश में स्फुरित होता है। विद्वान् द्विजाति का कर्म-ज्ञान उपासना आवश्यकीय कर्तव्य हो जाते हैं अतः स्मरणार्थ त्रिसूत्री चिन्ह दिया जाता है कर्म में संक्षेप से देव-पितृ और ऋषि ऋण प्रदर्शित है ज्ञान से त्रिगुणात्मक प्रकृति का पूर्ण ज्ञान आत्मतत्व से पूर्ण विवेक कारण और उपासना के लिये उपास्यदेव कौन है इन का ज्ञान अन्तःकरण और उपासना की प्रक्रिया के अनुसार तदभ्यास प्रतिदिन द्विज को करना है एतदर्थ यह यज्ञोपवीत मनुष्य जन्म सफल करने के लिये जब पूर्व जात कर्मादि संस्कारों से संस्कृत मनुष्य शरीरधारी जीव हो जाता है तो सारस्वत यज्ञ के योग्य ८-९ वर्ष की आयु में समझा जाता है तो यह यज्ञोपवीत पाठशाला में प्रविष्टता का चिन्ह दिया जाता है अब द्विजाति वर्ग को धारण करके अपने कर्तव्यों को न भूलना चाहिए यथा सैनिकों को राजकीय नियमानुसार अपने २ धारित वस्त्रों पर कर्तव्य और अधिकार सूचनार्थ चिन्ह दिये जाते हैं कि लोगों को और सैनिक व्यक्ति को प्रतिपल प्रतीत होता रहे कि मैं अमुक श्रेणी का अधिकारी हूं और मेरा अमुक कर्तव्य है एतदर्थ जनसमाज की व्यवस्था का अभ्रान्त और सुकर करने लिये दूरदर्शी ऋषियों ने यह प्रथा प्रचलित की हुई है अत हे द्विजातियो ऋषि प्रणीत प्रेरणा को जब तक अपनाते रहोगे तो पनपते रहोगे अन्यों का अन्धानुकरण किया तो देश रसातल में चला जाएगा वैदिक धर्म की विधियें पद्धतियें और कर्मकाण्ड विधान सब बुद्धि पूर्वक हैं शास्त्राचार्यों ने कहा है बुद्धि पूर्वाकृति वेदे जैसे आजकल के बिगड़े दिमाग पश्चिम के रंग में रंगे हुए कह उठते हैं कि सूत के धागे को धारण करने से क्या होता है जो होगा किन्तु ऐसा नहीं यह कहना भूल है अपने देश की संस्कृति और सभ्यता को स्थिर रखना जीवन है त्यागना मृत्यु और इस अवसर पर रक्षा-बन्धन (रखड़ी) का उत्सव भी मनाया जाता है जिस का मुख्य हेतु है देश रक्षा जब गणराज्य की देश में शुद्ध शैली प्रचलित थी तो विद्वान ब्राह्मणों का अति आदर सम्मान था देश के कर्ता धर्ता और शुभ चिन्तक वही समझे जाते अतः इन दिनों में ही वर्ष भर के लिये देश रक्षक नियुक्त करना भी इन्हीं महात्माओं का कर्तव्य था आज दिन अगले वर्ष के लिये रक्षक क्षत्रिय पुत्र स्वयं सेवक अति प्रसन्नता से देश सेवा के लिये उत्सुक होते थे तो इन वीरों को आशीर्वाद कह कर इन की भुजादण्ड को मंगल मौली से मण्डित कर देते थे महात्मा यह ब्राह्मण लोग आज से यह वीर अगले वर्ष की देश रक्षा के लिये नियन्त्रित (धर्मबद्ध) समझे जाते हैं और यात्राकाल इनका मार्ग साफ होने पर है विजय दशमी आश्विन में शस्त्र पूजा (अपने शस्त्रास्त्र को संभाल करना) होती है और फिर दिवाली के तीसरे दिन शुभ कामना में भी बहनें वीरों को टीका लगा कर विदा करती हैं किंतु आज की जनता केवल उत्सवों की रस्म तो अदा कर देती है इन के तथ्य को नहीं जानती इस दिन लालची मूर्ख मनुष्यों ने हाथ में लाल धागे लिये हुए हैं और फिर रहे हैं आना दो आना के लिये पूर्व गुरुजनों के गौरव को कलंकित कर रहे यह तीसरा उपकर्म है आज द्विजाति जाति का श्रेष्ठतम कर्म के तत्व को खूब समझा अर्थात् उसके नजदीक लेजाना (अनावृष्टि अकाल देशापद्रव महामारी आदि सभी बुरे कर्मों की खेज है यह स्वाभाविक कर्म है।

——

'श्रावणी उपाकर्म' आर्यों के पावन पर्वों में एक विशिष्ट पर्व है। इस पवित्र पर्व के उपलक्ष्य में आर्य समाजें 'वेद सप्ताह' के कार्यक्रम द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार करती हैं और कुछ एक आर्य पत्र इस पुनीत अवसर पर वेद के स्वाध्याय सम्बन्धी प्रेरणात्मक सामग्री से युक्त विशेषाङ्क प्रकाशित करते हैं। इसे वेदप्रचार पर्व' का नाम देना सर्वथा उचित है। पर्व (त्योहार) जातीय जीवन का अङ्ग हैं। सुचारू रूप से मनाये गये उत्सव जाति की आयु दीर्घ करते हैं और उन की पद्धति बिगड़ने से जाति मृत्योन्मुख होने लगती है इस लिए जातिय जीवन में बल, पराक्रम और उत्साह की वृद्धि करने के लिए उत्सवों को अच्छी रीति से मनाना चाहिए।

यजुर्वेद के चौदहवें अध्याय के १५वें मन्त्र में वर्षाऋतु का व्याख्यान है। उस में श्रावण और भाद्रमासों के वैदिक नाम 'नभ' और 'नभस्य' आये हैं। 'नभ' का अर्थ महर्षि दयानन्द ने 'प्रवर्धित मेघों वाला श्रावण' किया है श्रावण मास में वर्षा का आरम्भ होता है और उस की पूर्णिमा तक प्रायः प्रत्येक स्थान पर बरसात हो जाती है। वर्षा के कारण ऋषि महाशय वनों को छोड़ कर ग्रामों में पधारते और वेदोपदेश की अमृत वर्षा करते थे। यह क्रम चार मास तक चलता था। आर्य समाज में यह परम्परा वेद प्रचार सप्ताह' तक सीमित है। हां, जन साधियां और जैन मुनि चतुर्मास (चौमासा में) एक स्थान पर टिक कर उस वैदिक मर्यादा का पालन करते हैं।

'पर्वात—पूरयति जनान् आनंदेन कर्त्तव्य भावनया वा'पर्व 'पूरणे'धातुसे इस की व्युत्पत्ति है अर्थात् मनुष्यों को आनन्द अथवा कर्त्तव्य भावना से भरपूर करना 'पर्व' कहलाता है। पर्व के अवसर पर लोग आनंद

आर्यों का परम धर्म-वेद पठन पाठन व श्रवण श्रावण

(ले:— भक्त राम शर्मा (अफ्रीका वाले) जालन्धर)

मङ्गलाचार करते हैं। श्रावणी (श्रावण की पौर्णमासी) के शुभ दिन वर्षा कालीन बृहद हवन यज्ञों का आयोजन कर यज्ञोपवीत बदला करते और वेद के स्वाध्याय का व्रत धारण किया करते थे इसी लिए इसे 'श्रावणी' कहते हैं और नये वर्ष के लिए स्वाध्यायके आरम्भ की प्रतीज्ञा का नाम 'उपाक्रम' वा उपाकरण है। इसे अध्यायोपाकर्म वा अध्यायोपाकरण (स्वाध्याय का आरम्भ) भी कहा जाता है।

मन्त्र द्रष्टा वैदिक ऋषियों के अभिप्रेत वैदिक धर्म प्रचार के लिए 'स्वाध्याय' की मर्यादा को प्रचलित रखने का यह पर्व प्रतीक है। वैशेषिक दर्शन कार कणाद मुनि के कथनानुसार कि 'यतोऽभ्युदय निश्रेयस सिद्धि: स धर्मः' अर्थात् जिस से अर्थ काम सम्बन्धी लोक सुख की और मोक्ष सम्बन्धी पर लोक सुख की सिद्धि हो वही धर्म है, उस धर्म के दाय (विरसा) आर्य (हिन्दू) जाति के धर्माचार्यों ने हमारे लिए छोड़ा। जिस प्रकार शरीर के लिए अन्न आवश्यक है उसी प्रकार आत्मिक उन्नति के लिए स्वाध्याय अनिवार्य है। हमारे पूर्वज यूं तो प्रतिदिन स्वाध्याय का आहार करते थे परन्तु वर्षा काल में बड़े परिमाण पर आयोजित धर्म समारम्भों द्वारा वेदादि सत्शास्त्रों का पठन पाठन तथा श्रवण श्रावण हुआ करता था।

'स्वाध्याय' शब्द के स्व+अध्याय (अपना अध्ययन) और सु+आध्याय (अच्छा अध्ययन) दो प्रकार हैं। अपने अध्ययम से तात्पर्य है आत्म निरीक्षण, आत्म शोधन और अच्छे अध्ययन का अर्थ है वेद, वेदानुकूल अन्य धर्म ग्रन्थों का और इतिहास के पुस्तकों का पढ़ना। पंच महा यज्ञ नित्य कर्म हैं। उन में एक ब्रह्म यज्ञ है। जिसे स्वाध्याय यज्ञ वा ऋषि यज्ञ भी कहते हैं। सन्ध्या करना और धर्म पुस्तकों का स्वाध्याय करना ब्रह्म-यज्ञ है। 'श्रावणी उपाकर्म' के माङ्गलिक प्रसङ्ग पर एक वर्ष के लिए 'स्वाध्याय' का व्रत लेना इस का वैदिक रूप है और पौराणिक रूप है उस दिन राखी बान्धना अर्थात् 'रक्षा बन्धन।'

राखी बान्धते समय पण्डित लोग जो श्लोक बोलते हैं वह निम्न लिखित है :—

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महा बलः।

तेनत्वामपि बध्नामि रक्षे मा चल माचल ॥

अर्थ—दानवों का पति महाबली राजा बलि जिस से बांधा गया (जिस प्रण के आधीन उस ने सर्वस्व दे दिया और सी तक न की) उस से मैं तुम्हें बांधता हूं। हे रक्षे! कभी फिसलना नहीं, कभी डोल नहीं जाना॥

गृह सूत्रों में रक्षा बन्धन का विधान न होने पर भी इस आचार का मूल वैदिक धर्म की रक्षा प्रतीत होता है। धर्म रक्षा के उद्देश्य से ही धर्म संकट के समय राजपूत वीरांगनाएं वीरों को राखी भेजा करती थीं और आज बहिनों का अपने भाइयों को रखड़ी बान्धने का भी यही रहस्य है। सारांश यह कि श्रावणी उपाकर्म (ऋषि तर्पणी और रक्षा बन्धन) दृढ़ सकल्प धारण का परम पुनीत पर्व है चाहे वह भाइयों का अपनी बहिनों को मातृ शक्ति का प्रतिनिधि समझ कर और उन के हाथों से ब्रह्म सूत्र बन्धवा कर उन की मान मर्यादा की रक्षा का हो, ब्राह्मणों के अपने यजमानों को राखी बान्ध कर उन से वेदानुकूल जीवन बिताने का हो अथवा यज्ञोपवीत धारी आर्य नर नारियों का वेद के स्वाध्याय द्वारा वैदिक धर्म की रक्षा का हो। है यह अटूट व्रत का दिवस॥

श्रावण शुक्ला पूर्णिमा से पुरा काल में वेदादि सत् शास्त्रों का नियमित रूप से स्वाध्याय आरम्भ हो जाता था। स्वाध्याय की बड़ी महिमा है। तैत्तिरीयोपनिषद् के वचन 'अप हत पाप्मा स्वाध्यायो देव पवित्रं वा एतत्' के अनुसार स्वाध्याय पाप से बचाने वाला है। यह परमात्मा की दी हुई पवित्र वस्तु है। स्वाध्याय (स्वयं वेद का पढ़ना) और प्रवचन (पढ़ाना वा प्रचार करना) ये दोनों धर्म प्रेमियों के प्यारे कर्म हैं। इन में नागा न होना चाहिए मनु महा राज कहते हैं—

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते। वार्यन्नगो मही वासस्तिल काञ्चन सर्पिषाम् ॥ (मनु० ४।२३३)

अर्थ—जल, अन्न, गौ, भूमि, वस्त्र, तिल, स्वर्ण और घी के दानों से बढ़ कर वेद का दान है।

महाभारत शान्ति पर्व में नित्य स्वाध्याय करने वाले को महान पुरुष और दुखों से पार होने वाला कहा गया है। तैत्तिरीयोपनिषद् में स्वाध्याय पुण्य कर्म बताया गया है और स्वाध्याय शील को तपस्वी व पुण्यात्मा से उपमा दी है। इसी उपनिषद में आया है-'स्वाध्यायान्मा प्रमदः' अर्थात स्वाध्याय से प्रमाद न करना। शत पथ ब्राह्मण में तो यहां तक लिखा है कि रुग्णावस्था में बिना स्नान किये लेटे २ स्वाध्याय कर ले। 'सर्वपदाः हस्तिपदे निमग्ना' न्याय से वेद को ग्रहण करने पर यह देखने की आवश्यकता नहीं रहती कि कोई क्या मानता है।

(शेष पृष्ठ १२ पर)

वेद और विज्ञान

(ले० श्री राम प्रकाश जी एम. एस. सी. करनाल)

श्री राम प्रकाश जी M. Sc. बड़े योग्य, लेखक और सुयोग्य वक्ता युवक हैं, सायंस कैमिस्ट्री में एम. एस. सी. प्रथम डिविजन में उत्तीर्ण हैं। आर्य समाज के युवक वर्ग में नया जीवन डाल देते हैं। आर्यसमाज में ऐसे योग्य लेखक व वक्ता युवक कम ही हैं। वेदों तथा ऋषि दयानन्द जी के अनन्य भक्त है। भाषण श्रोताओं में चेतना भर देते हैं। वेदों के बारे में इन के सुन्दर विचार पढ़िये—सं०

ऋषि दयानन्द जी के पवित्र कार्य की अमिट छाप पड़ी है। दयानन्द जी ने पाश्चात्य लेखकों के अग्रगामी मैक्समूलर का सिर भी झुका दिया वेदों को केवल 'uncultivated race of mere heathens and savages' के लिए मानने वाले मैक्समूलर ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका को पढ़ कर मानों प्रयश्चित्त करने के लिए —हम भारत से क्या सीख सकते हैं—नामक पुस्तक की रचना की। उस में वह स्वीकर करता है—मेरा यह निश्चित मत है कि संसार में मनुष्य मात्र के स्वाध्याय के लिए वेद के अतिरिक्त अन्य कोई आवश्यक ग्रन्थ नहीं है। मैक्समूलर एक और स्थान पर लिखता है कि—I maintain that to every body who cares for himself, for his ancestors for his history, for his inte lectual development, a study of the Vedic literature is indis, pensable अर्थात मेरा विचार है कि आत्मज्ञान की प्राप्ति की इच्छा रखने वाले तथा अपने पूर्वजों, इतिहास और मस्तिष्क उन्नति के लिए सचेत प्रत्येक व्यक्ति के लिए वेद का स्वाध्याय नितान्त आवश्यक है।

मैक्समूलर ही नहीं अपितु अन्य सभी विद्वान ऋषि के वेद सम्बंधी विचारों का समर्थन करने पर विवश हो गये हैं। वेद को केवल पूजापाठ की पुस्तक मानने वाले भी आज इसे समस्त ज्ञान का भण्डार मान चुके हैं। श्री पावगी Vedic India में लिखते हैं The Veda is the fountain head of all Knowledger वेद समस्त ज्ञान का स्रोत है। उन्हों ने यहां तक लिख दिया है—The Vedic fathers of Geology पुस्तक में—The Vedas Contain many things not yet known to any body, as they form a mine of inexhaustible literary wealth, that has only partially been apened and has still remained unexloved—अर्थात वेदों में बहुत सो ऐसी बातें हैं जिन का अभी तक किसी को ज्ञान नहीं। क्योंकि वे साहित्यिक धन की समाप्त न होने वाली खान हैं जिस का अभी थोड़ा मार्ग ही खुला है और जो अभी तक अज्ञात ही पड़ा है।

न केवल भारतीय विद्वान अपितु पाश्चात्य लोगों पर भी वेद का सिक्का बैठ चुका है। बेल्जियम के प्रसिद्ध दर्शनिक एवं नोबल पुरस्कार विजेता मैटरलिंक ने लिखा है—Only the glare of the chairvoyant directed upon the mysteries of the past may reveal unrivalled wisdom which has behind the Vedas अर्थात अतीत के रहस्यों पर डाली हुई अन्तर्दर्शी की एकमात्र दृष्टि ही वेदों में निहित अद्वितीय ज्ञान को प्रकट करती है। ऋषिदयानन्द तो वेद में विज्ञान भी मानते हैं। Biographacal Essays में मैक्समूलर लिखते हैं कि—स्वामी दयानन्द के लिए वेद में लिखी प्रत्येक बात न केवल पूर्णतया सत्य है अपितु वह इस से भी एक पग आगे गये तथा वह वेद की व्याख्या से दूसरों को यह निश्चय कराने में सफल हुए हैं कि प्रत्येक जानने योग्य बात वेद में पाई जाती है तथा आधुनिक विज्ञान के आविष्कार भी वेद में वर्णित हैं। ऋषि का यह विचार कि वेद में विज्ञान है, सत्य है? इस प्रश्न का उत्तर हम कुछ विद्वानों के मुख से दिलाना चाहेंगे Introduction to the message of the 20the Century में पी. एन. गौड लिखते हैं The Rigveda deals with the theorms and experements while the process of preparing the reagents and apparatus is recorded in the Yajurveda which is infact a laboratory guide—

अर्थात ऋग्वेद वैज्ञानिक सिद्धान्तों और परीक्षणों का वर्णन करता है जब कि रसायनिक वस्तुओं और सामान के तैयार करने की विधि यजुर्वेद में पाई जाती है। यजुर्वेद वास्तव में प्रयोगशाला मार्गदर्शक है। The Vedic gods डा. रैले स्वीकार करता है—Our present anatomical knowledge of the mervous system tallies so accurately with the literal description of the world given in the Rigveda that a Vedas are realy religious books or whethere they are books on anatomy and physiology of the nervous system अर्थात हमारा आज कल का नाड़ी सिस्टम की रचना का ज्ञान ऋग्वेद के जगत के शाब्दिक वर्णन से इतनी अच्छी तरह मिलता है कि मन में कई वार यह प्रश्न उठने लगता है कि क्या वेद वास्तव में धर्म ग्रन्थ हैं या वे शरीर विज्ञान और नारी सिस्टम की रचना विषयक ग्रन्थ हैं। सर विलियम जोन्स के विचारनुसार From the Vedas are deduced the practical arts of surgery, medicines music, dancing, archery and archited under which system of mechanical art is included अर्थात शल्य चिकित्सा औषधिशास्त्र, संगीतशास्त्र, नृत्य कला, धनुर्विद्या, तथा गृह निर्माण विद्या की व्यावहारिक कलाएं जिन मे यान्त्रिक कला की पद्धति भी सम्मिलित है, वेदों से ली गई है जैको लिपट अपनी पुस्तक Bihle in India में लिखता है Astonishing fact! the Ideas of only the Vedas are in perfect hermony with the modern Science कितनी आश्चर्य की बात है केवल वेद के ही विचार आधुनिक विज्ञान के साथ पूर्णरूप से मिलते हैं।

ऋग्वेद में एक मन्त्र आता है सूरो रथस्य नप्त : यहां सूर्य को सब का प्रकाशक होने से ('सूर) कहा है रथ शब्द रह धातु से बना है जिस का अर्थ गतिकरना (to move) है। नक्षत्र घूमते रहते हैं अतः उन्हें रथ की संघा दो गई है। रथ इंगलिश शब्द planet का सही अनुवाद है क्योंकि Pianet लैटिन शब्द Planeta से बना है जिस का अर्थ है wanderer नप्तः का अर्थ नहीं गिरने देना है। सायण भी मानता है कि नप्त्यः न पातयित्र्यः याभिर्युक्तभिः रथो यातिं न पतति तादृशी—अर्थात् जो इसे नहीं गिरने देते उन्हें नप्त्यः

(शेष पृष्ठ १६ पर)

वेदों में क्या नहीं

(श्री बलदेवराज जी एम. ए. पठानकोट)

आज मुझे अपने भाईयों के मुख से सुनते हुए खेद होता है जो कहते हैं कि वेद गडरियों के गीत है। चारवाक-मत वाले तो इतना भी कह देते हैं 'चत्वारो वेद कर्तार: भण्ड-धूर्त-निशाचरा:' वेदों की अनभिज्ञता के कारण ही ऐसी ऊल-जलूल बातें कही जाती हैं। यास्क महाराज ने कौत्स को वेदों की सार्थकता सिद्ध करते हुए काफी करारे जवाब दिए हुए हैं। विस्तार-भय से उनको न छेड़ते हुए इतना ही बताऊंगा वेदों में सब प्रकार की विद्या है। साधारण जनता के लाभ के लिए मूल मंत्रों का सार ही दे रहा हूं।

आज विज्ञान का साम्राज्य है। किन्तु स्मरण रहे विज्ञान की सभी बातें वेदों में मूल रूप से हैं। पृथ्वी का सूर्य के इर्द-गिर्द घूमना, पृथ्वी की गति ५०५६ कोष, सूर्य-ग्रहण आदि का वर्णन वेदों में ही है। स्वामी दयानन्द जी के अनुसार तो वायुयान सम्बन्धी विषय भी वेदो में ही उपलब्ध हैं।

आज अत्र तत्र सर्वत्र पाखण्डी ज्योतिषी मिलते हैं और अपने को ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित कहते हैं। किन्तु वेदों में वर्णित ज्यामिती-शास्त्र, नक्षत्र-गति आदि को तनिक नहीं जानते। ऋग्वेद में काल (Time) का बहुत महत्व बताया है। काल ही ज्योतिष का आधार है।

औषध-विज्ञान का भी मूल-स्रोत वेद ही है। गर्भ-रक्षा के अनेक मन्त्र वेद में आते हैं। अथर्व वेद तो औषध विद्या से भरपूर है। जलों से ही अनेक रोगों के निवारण का उपाय बताया है। खांसी, तपेदिक आदि अनेक रोगों के उपचार आदि ... श्री जयदेव ... अपनी अथर्व-वेद की टीका में इस विषय पर काफी प्रकाश डाला है।

जीवन में अनमोल रत्न अपना शरीर है। ऋग्वेद मे शरीर के अनेक अङ्गों का वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में इस शरीर को देवताओं की पुरी अयोध्या कहा है जिस के आठ चक्र और नौ द्वार हैं (अष्टचक्रा नवद्वारा देवानाम पूरयोध्या...) आज नवयुवक यौन-विद्या के सम्बन्ध में ऊल-जलूल पुस्तकें पढ़कर व्यर्थ में ही अनमोल रत्न वीर्य का नाश कर बैठते हैं। अथर्व-वेद मे उचित मर्यादा-पूर्वक संभोग का विधान बताया है। स्वामी दयानन्द जी ने भी सत्यार्थ प्रकाश मे संकेत दिया है।

आज चीन व भारत के बीच किसी भी समय युद्ध की घोषणा हो सकती है। वेदों में शत्रुओं को मार-मिटाने, उनकी सेना को वहीं थाम देने वाले, विघट करने वाले मन्त्रों की भरमार है। वेदों में ही अस्त्र-शस्त्रों का उल्लेख है। इस सम्बन्ध में मैं आगे भी अनेक लेख लिख चुका हूं।

भारत ऋषि-मुनियों का देश है। इसी पवित्र भूमि पर धर्म का उन्मूलन कोई नहीं कर सका। धर्म के सम्बन्ध में वेदों में अनेक मन्त्रों का वर्णन है। आज धर्म के ठेकेदार जात-पात के नाम पर एक दूसरे को लड़ा रहे हैं किन्तु वेद में कर्म के अनुसार ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों को चार जातियों मे बांटा है। वेद में तो सर्वत्र-सार्वभौम भावना दीखती है। यजुर्वेद मे 'ईशावास्यमिद...' इस मन्त्र में कितना सुन्दर बताया है कि दूसरे ...सा मत करो। नासदीय व पुरुष-सूक्तों में कितनी दार्शनिकता है। आत्मा व परमात्मा का जितना सुन्दर विवेचन वेद में है उतना शायद ही अन्यत्र दुर्लभ हो।

आज सनातनी भाई मूर्तियों को देवता मान बैठे हैं। वेदों में वास्तविक देवताओं के स्वरूप को पढ़कर आंखे खुल जाती हैं और पता चलता है कि देवता ईश्वर की ही दैवी-शक्ति का नाम है। सम्बन्ध में पूर्व लेखों में काफी लिख चुका हूं।

कहां तक लिखूं नाटक कथा-साहित्य का सृजन भी वेदों से हुआ। ओल्डन-बर्ग के अनुसार वेदोंमें जो यम-यमी आदि संवाद हैं उन्हीं के आधार पर नाटकों का प्रादुर्भाव हुआ। स्मरण रहे वेदों की कहानियां लाक्षणिक हैं।

... कर्म-काण्ड का स्रोत भी वेद हैं। वेदों में ही गार्हपत्य आदि अग्नियों का उल्लेख है ... में ही ब्रह्मा, उद्गाता आदि का वर्णन है। संगीत ... भाई को प्रिय नहीं। संगीत-विद्या का आधार भी तो सामवेद है। इसी प्रकार विवाह, अन्त्येष्ठि आदि सामाजिक विषय भी उपलब्ध हैं। इस सारे लेख का भाव यही है कि वेद में सब कुछ है। काल्टमेटी के अनुसार वेद में सब प्रकार की विद्या है जैसे कि रेत में सोने के टुकड़े हों। मनुमहाराज अनुसार भी 'सर्व वेद से ही सब सिध्यति' अर्थात् वेद से ही सब कुछ सिद्ध होता है।

वेद और विज्ञान

(पृष्ठ १५ का शेष)

कहते हैं अतः सूरो स्थस्य नप्तः का अर्थ है कि सूर्य इस सौर मंडल के नक्षत्रों को नहीं गिरने देता—ऋग्वेद में और स्थान पर आता है—उक्षा दाधार पृथिवीमुत धाम। सूर्य भूमि आदि नक्षत्रों को आकाश में रोके हुए हैं। अथर्व ने सूर्येणोत्तभिता द्यौः—कह कर इस सत्य का प्रतिपादन किया है। आज का भौतिक विज्ञान वेद मन्त्रों के एक २ शब्द का समर्थन कर रहा है। पर दूसरे मत वालों के पास एक भी ऐसी पुस्तक नहीं जिस में से विज्ञान निकाला जा सके।

भूल सुधार

२१ जौलाई के परचे में आर्य जगत के वेदांक की तिथि ८-८-६३ प्रकाशित हुई है उसके स्थान पर ४-८-६३ को वेदांक १६ पेज का प्रकाशित हो रहा है यह अंक ४ और ११ अगस्त का संमिमलित अंक होगा इसके बाद १८-८-६३ के अंक की प्रतीक्षा करें। कीमत २५ N. P.

—व्यवस्थापक

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरीजालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



[आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र]

टेलीफोन नं० [illegible] वार्षिक मूल्य ६ रुपये

एक प्रति का मूल्य [illegible] नये पैसे तार प्रादेशिक जालन्धर

वर्ष [illegible] अंक ३३) रविवार २ भाद्रपद [illegible] — [illegible] अगस्त १९६३ दयानन्दाब्द १३९

वेद सूक्तयः

परेणैतु पथा वृकः

यह भेड़िया मुझ को देख कर दूर से चला जाये। मेरे पास न आने पावे। भेड़िये! दूर हट जा। मेरे समीप आने का तेरा कोई काम नहीं है।

परमेणोत तस्करः

और चोर लुटेरा तस्कर भी उस दूर के मार्ग से भाग जाये। मेरे पास चोर का क्या काम है। खबरदार। अरे चोर! मेरे पास तेरे आने का साहस कैसे हो सकता है। फटक तक भी नहीं सकता।

परेण दत्वती रज्जुः

यह दांतों को रखने वाला रस्सी बना हुआ सांप भी परे २ चला जाये। मुझे सांप का भी कोई भय नहीं है। सांप मेरा क्या बिगाड़ सकता है।

अथर्ववेद

वेदामृतः

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र १७

अर्थ—यह (द्यौः) प्रकाशक तथा [illegible] [illegible] आदि (शान्तिः) हमें शान्ति देने वाले हों। अन्तरिक्ष और पृथिवी, जल आदि (शान्तिः) हमें शान्ति देने वाले हों। अन्तरिक्ष और पृथिवी के सब पदार्थ शान्ति देवें (आप) ये जल है, (ओषधयः) औषधियां हमें शान्ति सुख देने वाली हों। सब (विश्वेदेवाः) विश्व के सब चेतन देवता भी सुखी करें (ब्रह्म) ज्ञान भी शान्ति देवे। बिना व ज्ञान से उल्टे २ काम न करें। (सर्व) सब कुछ हमें शान्ति देवे। सब जगह शान्ति ही शान्ति हो। मन, वचन, कर्म तथा लोकों में शान्ति के विचार, शब्द तथा व्यवहार हुआ करें तथा ऐसा व्यापक शान्ति (सामा) वह शान्ति मुझे (एधि) मिले, प्राप्त होवे।

भाव.—आर्य संस्कृति में विश्व शान्ति का यह मन्त्र तथा इस मंत्र में मिला उपदेश सारे विश्व को शान्ति सन्देश देता है। वेद का यह व्यापक शान्ति का उपदेश संसार की किसी भी अन्य जाति, देश, मत तथा संस्कृति के पास नहीं है। आकाश, भूमि, जल, वनस्पतियां, अन्न तथा दिल, दिमाग तथा हाथों में सदा शान्ति होवे। आज के हिंसायुग में विश्वजनीन शान्ति लाने लिए इस से बढ़ कर और कोई उत्तम साधन नहीं है।—स

बाह्य व आंतरिक

खतरों का सामना करने को तैयार रहें —नेहरू

[illegible] अगस्त—प्रधान-मन्त्री नेहरू ने [illegible] की जनता से अपील की कि वह देश के सामने प्रस्तुत बाह्य और आन्तरिक खतरों का सामना साहस, दृढ़ निश्चय और दृढ़ता के साथ करें।

[illegible] आन्दोलन की [illegible] के लिए दिल्ली प्रदेश [illegible] के नाम एक सन्देश में श्री नेहरू ने कहा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] क्योंकि वे [illegible] [illegible] करती हैं। [illegible] हम संगठित होना चाहिए और [illegible] प्रवृत्तियों का निराकरण करना चाहिए। हमें अपने [illegible] सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए। क्योंकि उनमें ही हमें [illegible] [illegible] है।

सम्पादक—त्रिलोकचन्द्र [illegible]

अधिष्ठाता—संतापराज मंत्री सभा

वैदिक लेख

ऋषि दयानन्दकृत वेदभाष्य की विशेषतायें

(ले० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु)

इस लेख में अति संक्षेप से ऋषि दयानन्दकृत वेदभाष्य की कुछ विशेषतायें दर्शाना चाहते हैं—पहिले तो हमें उपयुक्त यास्काभिमत वेद सम्बन्धी सब की सब धारणायें ऋषि के भाष्य में वैसी की वैसी मिलती हैं, अर्थात् वेद का अपौरुषेयत्व-ऋषि मन्त्र द्रष्टा, प्रत्येक मन्त्र का तीन प्रकार का अर्थ, वेद में इतिहास नहीं, स्वर और पदकारों के पीछे ही अर्थ नहीं, अपितु अर्थ के पीछे स्वर और पदपाठ, व्यत्यय, मन्त्रगतपद ही देवता हों यह सर्वांश में नहीं, यौगिकवाद, और विनियोग इन सब में यास्क और दयानन्द एक मत हैं॥

ऋषि दयानन्द की दृष्टि से हम इस विषय को कुछ और स्पष्ट करना चाहते हैं—

(१) 'अग्नि' शब्द का अर्थ आचार्य दयानन्द ने ईश्वर, विद्वान, विद्युत् और भौतिक अग्नि आदि किया। कलकत्ता यूनिवर्सिटी के उस समय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष श्री पं० महेशचन्द्र न्यायरत्न ने स्वामी जी पर यह आक्षेप किया कि और जो हो सो हो, 'अग्नि' का अर्थ सिवाय आग के कुछ नहीं हो सकता। इसका उत्तर भ्रांति-निवारण मे श्री० स्वामी जी महाराज ने बहुत ही अच्छी तरह से दिया है, प्रत्येक आर्यबन्धु को वह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। यदि 'अग्नि' वायु आदि शब्दों का अर्थ परमात्मा न हो तो आर्यसमाज व स्वामीजीकृत सारा वेदभाष्य मिट्टी में मिल जाता है। हम यास्क के मत से हर एक मन्त्र का अर्थ तीन प्रकार से होता है, यह पहले दर्शा चुके हैं। वादी से हम पूछेंगे कि कहो आध्यात्मिक प्रक्रिया मे 'अग्नि' का अर्थ क्या करोगे और कैसे? सो उसको चुप ही होना पड़ेगा। दुर्जन सन्तोषन्याय से भी हम उससे पूछते हैं कि 'अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्॥ ऋग्वेद के इस प्रथम मन्त्र में सब भाष्यकारों सायण तक ने 'अग्नि' शब्द को विशेष्य माना है, और पुरोहित आदि शब्दों को विशेषण, अर्थात् परोहित का अर्थ हित करने वाला अग्नि। सो यदि अग्नि का अर्थ आग ही हो सकता है, और कुछ नहीं, तो पुरोहित का अर्थ भी पुरोहित ही हो सकता है, विशेषण, (adjective) हित करने वाला नहीं। इससे वेद के प्रथम मंत्र से ही यौगिक प्रक्रिया की सिद्धी स्पष्ट हो रही है॥

(२) सब मन्त्रों का अर्थ तीन प्रकार से होता है, यह सहस्रों वर्षों के पश्चात् विस्तार और प्रौढ़ता से ऋषि दयानन्द ने दर्शाया। इसमे यास्क का प्रमाण हम आचार्य स्कन्दस्वामी के शब्दोंमे भलीप्रकार दर्शा चुके हैं। "सर्वदर्शनेषु च सर्वे मन्त्रा योजनीयाः" अर्थात् सब मन्त्रों का अर्थ तीनों प्रक्रियाओं में करना चाहिए॥ भिन्न२ विद्वानों ने भिन्न२ अर्थ क्यों किया है सो कहता है।

"दर्शनभेदःपरस्पराविरोध्यध्यात्माधिभूताधिदैवानाम्। अनेकजन्मान्तराभ्यासवासनापरिपाकवशात् प्रतिमानव्यवस्था द्रष्टव्या॥" निरु० स्कन्दटीका भा० ३ पृ० ३६॥

इससे स्पष्ट है कि स्कन्द मानता है कि हर एक मन्त्र का अर्थ तीनों प्रक्रियाओं में होना चाहिए और उसमें प्रमाण यास्क का देता है॥

(३) यास्क और दयानन्द वेद में अनित्य इतिहास नहीं मानते, यह हम पूर्व दर्शा चुके हैं। स्वयं वेद इस विषयमें क्या कहता है सो सुनिए—

योरोपियन स्कालर और उनके बहुत से भारतीय शिष्य यह कहते हैं कि 'इन्द्र' 'अङ्गिरः' और 'कण्व' आदि शब्द ऋषियों के नाम वेदों में स्पष्ट पाये जाते हैं, अर्थात ये व्यक्ति विशेषों के नाम (Proper nouns) हैं। भला हम पूछते हैं थोड़ी सी अंग्रेजी जानने वाला बालक भी जान सकता है कि व्यक्ति विशेष (Proper nouns) के आगे आतिशायिक प्रत्यय 'तर और तम' जिन को अंग्रेजी में er est अथात् Comparative Superlative degrees कहते हैं कभी नहीं आ सकते। Rajaram, Rajaramer, Rajaramaest, और Brahmadatt, Brhmadatter, Brahmadttast कभी नहीं हो सकता? ये डिग्रियां विशेषणवाची शब्दों (Adjectives) के साथ लगती हैं। उधर स्वयं वेद भी इस विषय में क्या कहता है सो देखे—ऋ० ७।७६।३—

अभूदुषा इन्द्रतमा मघोन्यजीजनत् सुविताय श्रवांसि।
विदिवो देवी दुहिता दधात्यङ्गिरस्तमा सुकृते वसूनि॥

इस एक ही मन्त्र मे इन्द्र-अङ्गिरः-और कण्व तीनों से आगे तमस् (Superlative degree) लगी है। इस से स्पष्ट है कि वेद इन शब्दों को विशेषणवाची (adjectives) मानता है, व्यक्तिविशेष (nouns) नहीं मानता।

(इस विषय मे तथा ऋषि भाष्य की इन विशेषताओं को जो विशेष रूप से देखना चाहें, वे श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'वेद और निरुक्त' नामक पुस्तक तथा 'ऋषि दयानन्दकृत यजुर्वेदभाष्य-विवरण' की भूमिका मे देख सकते हैं)॥

(४) सुप्तिङुपग्रहलिङ्गनराणां कालहलच्स्वरकर्तृयङां च।
व्यत्ययमिच्छति शास्त्रकृदेषां सोऽपि च सिध्यति बाहुलकेन॥

(अ० ३।१।८५ भाष्ये)॥

महाभाष्यकार के इस प्रमाण से निरु० ५।२३ के आधार से आचार्य दयानन्द ने अपने भाष्य मे अर्थानुसारी व्यत्यय प्रायः माना है। इसके लिए हम पुनः किसी समय विस्तृत विचार उपस्थित कर सकेंगे।

(५) देवतावाद के विषय मे हम यहां इतना ही कहना पर्याप्त समझते हैं कि ऋषिदयानन्दाभिमत देवतावाद ही यथार्थ देवतावाद है। जो लोग उस पर आक्षेप उठाते हैं, वह उनकी अपनी अज्ञता है। सर्वानुक्रमणियां ही देवतावाद मे अन्तिम प्रमाण नहीं। उनसे भिन्न बहुत से स्थलों मे ऋषि ने भिन्न-भिन्न देवता दर्शाये हैं। यजुःसर्वानुक्रमणी तो है ही उवट के पीछे की। कात्यायन के नाम से घड़ी हुई प्रतीत होती है। यदि पहले थी तो उवट ने मानी नहीं। चाहे खरबूजा चाकू पर गिरे या चाकू खरबूजे पर, दोनों प्रकार से इस यजुःसर्वानुक्रमणी की कोई सत्ता नहीं रह जाती। वास्तव में यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में शाखा देवता हो ही कैसे सकता है? यह मन्त्र या मन्त्र भाग शाखा मे विनियुक्त है। यदि यहां 'शाखा' देवता है तो आगे 'व्रीहि के 'अवहन' में व्रीहि देवता क्यों नहीं? पुरोडाश देवता क्यों नहीं?, इत्यादि अनेक देवताओं की प्राप्ति होती है, जिसका कुछ भी परिहार नहीं हो सकता।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, १८ अगस्त १९६३ [अंक ३३

राष्ट्र के दो शत्रु

भारत की भूमि पर जब से विश्वासघाती चीन ने आक्रमण किया, तभी से देश की सारी जनता ने अपनी भारत माता के सम्मान के रक्षा के निमित्त क्या कुछ भेंट नहीं किया। सारा राष्ट्र एक होकर शत्रु से लोहा लेने के लिए तैयार हो गया। तन-मन-धन जीवन लगाने में एकता के सूत्र में पिरोया गया। देश प्रेम, बलिदान की इस परम्परा से मिली हुई भावना को देखकर कौन देशवासी ऐसा होगा, जिसका मस्तक गर्व से उन्नत नहीं होगया। जीवित जाति की यही निशानी होती है कि राष्ट्र पर आई आपत्ति को देखकर सारा समाज सर्वस्व अर्पण करने के लिए प्रस्तुत हो जाता है। राष्ट्र जनता का विराट् शरीर और महान् रूप होता है। राष्ट्र पर आने वाला विषम संकट समस्त समाज का संकट बन जाता है। समष्टि रक्षा के लिए व्यष्टियों को सब प्रकार का बलिदान देना ही चाहिए। चीन जैसा धोखेबाज देश और कौन होगा। जिस के नेता ने भारत की राजधानी नई देहली में लाखों की उपस्थिति में हिन्दी चीनी भाई-भाई का घोष लगाकर दूसरों से भी लगवाया। उसी ने अपनी सेना के द्वारा भारत की भूमि पर बिना कारण आक्रमण करके अपनी कुत्सित मनोवृत्ति का परिचय दिया तथा विस्तारवाद की लिप्सा को प्रकट करके सारे विश्व में नंगा हो गया। उसका स्वप्न पूरा नहीं हुआ। किन्तु काठ की हांडी एक बार ही चढ़ती है। जो भाई भाई का घोष लगा कर छुरा मारने में तनिक भी संकोच नहीं करता, उस दम्भी, कायर, विश्वासघाती का अब कौन विश्वास कर सकता है। भारतीय जनता की आंखें खुल गई और हम सदा के लिए सजग व सतर्क हो गये। भारत विश्व में शान्ति स्थापना में लगा था, किन्तु अहिंसा वादी को ऐसी स्थिति में अपनी सेना तथा तयारी के साधनों की ओर विशेष ध्यान देना पड़ा। क्योंकि खेत तोड़ कर घास खाने आई भैंस को बीन बजा कर नहीं निकाला जा सकता। इस के लिए तो यथा योग्य प्रबन्ध करना ही होगा। भारत की पुरानी राजनीति मे राम-नीति, कृष्णनीति, चाणक्यनीति तथा शिवानीति को अपनाये विना कार्य नहीं चलेगा। वेद मे विश्व शान्ति का सार्वभौमिक सन्देश है कि भूमि माता है और इस के निवासी भाई हैं। सब से मित्रता का व्यवहार करें। वहां विषम स्थिति तथा आक्रमण करने वाले शत्रुओं की गत बना कर उन का मुंह तथा दान्त तोड़ने का भी सन्देश मिलता है। शत्रु ठीक ही इसी प्रकार से हो सकते हैं।

आज हमारे देश के दो प्रकार के शत्रु हैं। एक वे जो बाहर से नाना प्रकार के उत्पात मचा कर आक्रमण करना चाहते हैं। चाहे किसी दिशा से और किसी भी मार्ग से आयें। ये खुले आततायी हैं। दूसरे वे हैं जो हमारे देश में ही बैठे हैं, यहां रहते हुए इसी भूमि का खाते पीते हुए भी शत्रु बन कर बैठे हैं गुप्त रूप से भारत की सूचनाएं शत्रु को देते हैं। अपनी स्वार्थ साधना के लिए राष्ट्र द्रोही बन कर अनेक प्रकार की जनता में गड़बड़ मचाते रहते हैं। ऐसे लोगों को घर के सांप कहा गया है। समय पाकर ये भी जनता को काट खाते हैं। आक्रमण करने वाले दुश्मनों का ये लोग मार्ग प्रशस्त करते हैं। अन्दर का रोग, भीतर लगी आग और कुर्ते का सांप अधिक भयानक होता है। क्योंकि यह छुप कर बैठता है। कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो देश की ऐसी विषम परिस्थिति को स्वर्णकाल समझ कर लाभ उठाते हुए अपनी तिजोरियां भरना चाहते हैं। हमारा कर्तव्य है कि राष्ट्र के इस संकटकाल में बाहर तथा अन्दर बैठे हुए इन दोनों प्रकार के घोर शत्रुओं से सतर्क रह कर इन का सिर कुचलने की पूरी तैयारी करते रहें। ये सांप हैं, विषैले हैं इन का सिर तो दण्ड से कुचलना ही पड़ेगा इस में देश हम से यही मांगता है। हमारा सर्वस्व भारत सेवा में अर्पित हो जावे। आज का यही काम है।

—त्रिलोक चन्द्र

मण्डी (हिमाचल) के समाचार

आर्य समाज मण्डी (हिमाचल प्रदेश) में गत दिनों आर्य समाज के प्रसिद्ध सन्यासी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने चार-पांच दिन अपनी अमृत कथा से सारे नगर की जनता को तृप्त कर कर दिया। मन्दिर सब नर-नारियों से खचाखच भरा रहता था। महात्मा जी के जीवन के समान उनके उपदेशामृत से सारी मण्डी ने बड़ा लाभ उठाया। भक्ति रस का प्रवाह बहता रहा।

गत ३० जुलाई से लेकर मन्दिर में आर्य प्रादेशिक सभा के पण्डित त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री तथा पं. हजारी लाल जी भजनोपदेशक के वेदकथा तथा भजन होते रहे। वेद सप्ताह जन्माष्टमी तक खूब प्रचार की रौनक रही। रक्षा बन्धन का पर्व भी मनाया गया जिस में श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज, श्री ला. दीनानाथ जी एडवोकेट मण्डी ने इस विषय पर बड़े ओजः पूर्ण विचार रखे तथा श्री इन्द्रसिंह जी व बहिन द्रोपदी जी के भजन हुए। कथा का यह कार्यक्रम बड़ा उत्तम रहा।

उत्सव आर्यसमाज मण्डी का वार्षिकोत्सव ता. २६-३० सितम्बर व १-२ अक्टूबर १९६३ को धूम-धाम से मनाया जा रहा है। जिस में महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज, कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर ब्रह्मचारी सर्तेश जी आदि सज्जन पधार रहे हैं।

(मन्त्री समाज)

शरण में आइए

(श्री वेदप्रकाशजी प्रभाकर M.A.)

वरद वेदों की सुखद
हितकर शरण में आइए।
आइए बस आइए—
जीवन सफल में लाइए॥
रोम रोम तन प्राण में
शुभ ज्ञान को भर जाइए।
मुक्त हाथों से सुधा के
स्वर्ण घट उलटाइए॥
प्रेम सुख औदार्य है—
बन्धुत्व इनमें विश्व का।
परम रस पी वरद वारिद-
बन इसे बरसाइए॥

खतौली आर्यसमाज (शूगर मिल)

में वेद सप्ताह का कार्यक्रम ५ अगस्त से १२ अगस्त सन ६३ तक नियम पूर्वक चलता रहा १ प्रातः ६॥ से ७॥ बजे तक परिवारों में बारी २ सत्संग चलता रहा।

२. रात्रि को ८॥ से १० बजे तक भजनों के पश्चात श्रीस्वामी अमृतानन्द जी यमुना नगर वाले यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय की कथा करते रहे प्रभाव बहुत अच्छा पड़ा।

आर्यसमाज और भारत

(ले०—प्रि. श्री भगवान दास जी, दयानन्द कालेज, सोलापुर)

आर्य समाज को लगभग अस्सी वर्ष होने को हैं। दस बारह वर्ष में हम शताब्दी मना रहे होंगे। सारे संसार में कोई आर्य समाजें और आर्य संस्थाएं हैं परन्तु आर्यसमाजियों की संख्या लगभग ढाई करोड़ से अधिक नहीं होगी। संसार की योग आबादी ढाई सौ करोड़ है। जिस से अनुमान लगाया जा सकता है कि अभी हमारा कितना कार्य होना शेष है। इस लेख में मैं इस बात पर विचार नहीं करना चाहता कि संसार में आर्यसमाज के फैलने और फैलाने में देर क्यों लग रही है। इतना कहूंगा कि विदेशी धर्मों के अनुयायी अब आय समाज के अन्दर तीव्र गति से आना तो एक ओर रहा आ ही नहीं रहे। इस बात पर नेताओं को विचार करना चाहिये, कि ऐसा क्यों हो रहा है।

इस लेख में मैं इस बात की चर्चा करना चाहता हूं कि अभी भारत में भी आर्य समाज का प्रचार बहुत होना बाकी है। यह बात मुझे दक्षिण में आकर हो पता चली है कि आर्य समाज के बारे में बहुत से ऐसे क्षेत्र भारत के हैं जिन में लोगों को परिचय भी नहीं कि आर्य समाज कोई संस्था भी है और कई क्षेत्र ऐसे हैं कि जहां बहुत भ्रान्ति भी है और दूसरी ओर यह भी दिखाई देता है कि हमारे प्रचारकों और नेताओं को यह भी पता नहीं कि भारत के कई इलाके हैं जहां आर्य समाज का परिचय भी लोगों को नहीं। आर्य संस्थाओं के प्रिंसिपल, हैडमास्टर भी अपने विद्यार्थियों में आर्य समाज और महर्षि दयानंद का नाम लेने से घबराते हैं और कभी अपने भाषणों में आर्य समाज का ठीक स्वरूप नहीं रखते और न ही अपने आचरण से यह प्रकट करने का यत्न करते हैं कि आर्य समाज में आने से क्या मिलता है। इस का कारण यह भी है नेता इस बात को कभी अनुभव नहीं करते हैं। इन सब बातों को दूर करने का मैं ने एक उपाय सोचा है। और आर्य जनता यदि उचित समझे तो इस को अपनाये वह यह है कि बंगाल, बिहार, उड़ीसा, हिमाचल, उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, हैदराबाद, मध्य प्रदेश, उत्तरी महाराष्ट्र और गुजरात यह ऐसे प्रदेश हैं कि जहां पर हमारी संथाएं भी हैं। शेष जितने प्रदेश हैं उन में आर्य समाज बहुत पीछे है। आसाम, केरल, मद्रास, कर्नाटक में तो आर्य समाज को बहुत कम लोग जानते हैं और बहुत ही थोड़े हीनाममात्र आर्य समाज को समझते हैं। इस लिये दस संस्कृत और अंग्रेजी जानने वाले योग्य व्यक्ति उत्तरी भारत से शिष्ट-मण्डल बनाकर चलें और स्थान स्थान पर जाकर देखें कि आर्य-समाज का कार्य कैसे बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार फिर दूसरा शिष्ट मण्डल दस व्यक्तियों का दक्षिण भारत से उत्तरी भारत को भ्रमण कर के देखे तो बहुत लाभ होगा। इस में सम्भवतः कठिनाई यह होगी कि इन दस व्यक्तियों के किराया आदि का प्रबन्ध कौन करे? मेरा यह सुझाव है कि इन का किराया आदि का प्रबन्ध आर्य समाजें करें। लगभग १० व्यक्तियों का हजार रु० का व्यय होगा। यह धन निकालना कठिन नहीं है, यदि समाजें भी चाहें तो यह धन निकल सकता है। उनका प्रोग्राम मैं बना दूंगा। आशा तो यही है कि उन को बड़े २ स्थानों पर थैलियां भेंट होंगी यह धन दक्षिण से जाने वाले शिष्टमंडल के व्यय के लिये पर्याप्त होगा। इस प्रकार से आर्य समाज का परिचय सारे देश में बढ़ जावेगा। मैं यह बात विश्वास के साथ कह दूं कि दक्षिण में आर्य समाज के लिये धन बहुत मिल सकता है क्योंकि लोगों के पास धन भी है, दान देने के लिये दिल भी है और धर्म के लिये निष्ठा भी है और इस समय इस बात के लिये मांग भी है कि कोई उनका ध्यान वैदिक धर्म की ओर आकर्षित करे। क्षेत्र तय्यार है केवल बीज बोना है और फल के भागी बनना है।

दूसरी बात यह कि नवयुवकों में यह भावना भरनी है कि वह दक्षिण में अधिक से अधिक आयें और देखें कि यहां प्रचार कैसे हो सकता है। दक्षिण को समझने में उत्तर वाले बहुत भूल कर भी देते हैं और शीघ्रता भी करते हैं, इस का उदाहरण भाषा का प्रश्न है। आर्य समाज को इस झगड़े में नहीं आना चाहिये था परन्तु आर्य समाज की पत्र पत्रिकाओं और आर्य समाज के नेताओं ने दक्षिण को समझने का यत्न नहीं किया और वैसे ही आन्दोलन में कूद पड़े। जितना प्रचार हिन्दी और संस्कृत का दक्षिण में है उतना उत्तर में नहीं। पंजाब में पंजाबी क्षेत्र में जो दुर्दशा हिन्दी की है वह यहां कहीं भी दिखाई नहीं देती। बहुत भागों में हिन्दी स्कूलों में अनिवार्य है और परीक्षा में सफल होना अनिवार्य नहीं। लोगों में हिन्दी सीखने के लिए उत्साह है और सरकार के लोग भी हिन्दी का प्रचार बहुत कर रहे हैं। कमी इसबात की है कि हिन्दी माध्यम में पढ़ाने वाले अध्यापक बहुत कम मिलते हैं। आर्य समाज यदि इस कमी को पूरा कर दे और अपना प्रचार इन क्षेत्रों में बढ़ा दे तो धन भी मिलेगा और देश का हित भी होगा। आर्य समाज को केवल दो चार प्रस्ताव पास कर देना और भाषा के विषय में ठोस भाव न लेने से बहुत हानि पहुंचेगी क्योंकि लोगों में यहां पर विचार आने का भय है कि वह कहने लग जायें कि आर्य समाज केवल उत्तरी भारत का है। इस भावना को शीघ्र रोकना चाहिये और अनुचित पग नहीं लेना चाहिये।

यहां पर संस्कृत प्रेम सारे दक्षिण में बहुत पुराना है और अब शुद्ध संस्कृतकी पढ़ाई स्कूलों में अनिवार्य है। स्मरण रहे कि आर्य समाज उत्तरी भारत में न केवल संस्कृत के प्रचार में पिछड़ रहा है अपितु अपनेस्कूलों कालेजों से संस्कृत धड़ाधड़ निकाल रहा है। इस लिये दक्षिण वाले हम पर हंसते हैं। परन्तु हिन्दी की पढ़ाई में भी दक्षिण बहुत आगे हैं। जो पुस्तकें यहां हिन्दी की स्कूलों में लगाई जाती हैं या हिन्दी माध्यम स्कूलों में उन का स्तर उत्तरी भारत की पुस्तकों से बहुत ऊंचा है और जहां पर उत्तरी भारत की पुस्तकों में गपोड़े मिलेंगे यहां शुद्ध हिन्दी साहित्य ही पढ़ा जाता है। ग्रामीण स्कूलों में हिन्दी सब जातियों के बच्चों को पढ़ाई जाती है लगभग अगले दस वर्षों में दक्षिण हिन्दी की जानकारी में उत्तर भारत से बढ़ जायेगा। ऐसा मेरा विचार ही नहीं अपितु सब नेताओं का विचार है। यही नहीं हिन्दी के प्रचार की यह दशा है कि स्थान २ पर हिन्दी प्रचारणी सभायें हैं जो प्रतिवर्ष लाखों विद्यार्थियों को हिन्दी निःशुल्क पढ़ा कर प्रमाण देती हैं।

(शेष पृष्ठ ५ पर)

सभाएं विचार करें

आर्य समाज समय २ पर अपनी अनेक समस्याओं पर विचार करता रहता है। उन की पूर्ति के लिए उचित साधन भी प्रयोग में लाता है। कार्य करने का यही उत्तम ढंग है। जीवित संस्था का यही कर्तव्य होता है कि अपनी न्यूनताओं की ओर ध्यान देता रहे। आज एक अत्यन्त ही आवश्यक समस्या की ओर हम सारे आर्य समाज तथा सभाओं का ध्यान विशेष रूप से दिलाना चाहते हैं। इस बात को बहुत ही अनुभव किया जा रहा है कि इस समय आर्य समाजों में बैठ कर कार्य करने वाले योग्य पुरोहित नहीं मिलते। समाजें चाहती हैं, इस प्रयत्न में रहती हैं कि उन को अच्छे २ पुरोहित मिलें, किन्तु बड़ी निराशा हो रही है। अनेक समाजों के मान्य अधिकारियों ने हमें कहा है तथा सभा को लिखते रहते हैं कि हमारे लिए किसी पुरोहित का प्रबन्ध करें। किन्तु नहीं हो सका। कारण यह है कि योग्य पुरोहित मिलते ही नहीं या थोड़े से यदि मिलते भी हैं तो वे पुरोहित बन कर बैठने में संकोच करते हैं। स्कूल में तो चले जाते हैं पर समाजों के लिए नहीं मिलते। कई बड़ी २ समाजें इस लिए खाली हैं कि उन को योग्य सज्जन नहीं मिलते। कुछ भी कारण हों पर यह सच्चाई है कि योग्य सज्जनों का अभाव है। दिन प्रतिदिन अभाव बढ़ता जाता है। इस के कई कारण हैं। प्रमुख बात तो यह है कि इस आवश्यक कार्य के लिए कोई एक संस्था तो नहीं है। स्कूलों, कालेजों में कार्य करने वालों के लिए कितनी संख्या में संस्थाएं खुली हैं। जहां हजारों छात्र युवक पढ़ते तथा प्रशिक्षण लेते हैं। संस्कृत पंजाब में वैसे ही समाप्त होती जा रही है। यदि आर्य समाज के विचार का कोई युवक शास्त्री या अन्य कोई निकलता भी है तो स्कूल में या कालेज में सेवा करना तो स्वीकार कर लेता है पर समाज में पुरोहित नहीं बनता। न ही पुरोहित तयार करने की आर्य समाज के पास संस्था ही है। अथवा समाजों का वातावरण कुछ ऐसा है कि वहां योग्य पुरोहित ही काम चला सकता है। फिर भी समाज के अनुरूप पुरोहित भी होना ही चाहिये। अतः यह अभाव आज बुरी तरह से खटकने लगा है। इस के लिए हम सारे आर्य समाज को, अपनी सभाओं का तथा अपनी विशाल डी. ए. वी कालेज प्रबन्धक कमेटी देहली को नम्रता से कहना चाहते हैं कि इस आवश्यक समस्या की ओर भी शीघ्र ध्यान देने की कृपा करें। समाज के कार्य विस्तार, धर्म प्रचार एवं परिवारों के सुधार के लिए योग्य पुरोहितों को तयार करना नितान्त आवश्यक हैं। समाज के पास इतनी बड़ी शिक्षण संस्थाएं हैं। एक संस्था इस महान् मिशन की पूर्ति के लिए भी शीघ्र खोली जाये जहां तीन चार साल का उत्तम कोर्स नियत कर के युवकों तथा अन्यों को प्रशिक्षण दे कर पुरोहित बना कर सभा या कमेटी, संस्था की ओर से ही समाजों में पुरोहित लगाने की परिपाटी चलाई जाये। उन को भी जीवन यात्रा के लिए पूरा सम्मान व साधन दिये जायें। इस आवश्यक समस्या पर अवश्य तथा शीघ्र ही ध्यान दिया जाये—सं,

सब अन्धविश्वास मिटाते चलो

(लि०—श्री पिशोरीलाल 'प्रेम' रैणुका (हि. प्र.)

ओ३म् का ध्वज लहराते चलो जग से पांखड मिटाते चलो
वेदों का नाद बजाते चलो जग को प्रकाश दिखाते चलो
जो अजर, अमर, अविनाशी है घट-घट के अन्दर वासी है
उस निराकार परमेश्वर की पूजा सब को सिखलाते चलो
शिव, शंकर, विष्णु, ब्रह्म, इन्द्र सब नाम उसी भगवान के हैं
ये पृथक देवता कोई नहीं संसार को यह समझाते चलो
राम, कृष्ण महर्षि दयानन्द महापुरुष और योगी थे
ये मानव थे भगवान न थे सारे जग को बतलाते चलो
यह जितने मतमतांतर हैं, है अन्ध विश्वास भरा सब में
प्रचार से वेदों के इनका सब अन्ध विश्वास मिटाते चलो
'प्रेम' का है सन्देश यही ऐ आर्यो वेद प्रचार करो
भूले भटके पथिकों को वेदों का पथ दिखलाते चलो

आर्य समाज और भारत

(पृष्ट ४ का शेष)

अभी २ शिक्षा जी शिक्षण प्रसारक मंडल इसकी ओर से बड़े-बड़े सुन्दर कालेज और स्कूल चल रहे हैं और लाखों रुपया जो प्रति वर्ष दान में इकट्ठा करते हैं उन्हों ने लन्दन में विद्यार्थी गृह अथवा हिंदी माध्यम विद्यालय खोला है। यह कार्य आर्य समाज को करना चाहिये था परन्तु आर्य समाज अपने कार्य में पिछड़ रहा है। दक्षिणी भारत भी राष्ट्रीय तबले को बढ़ाने में बहुत आगे हैं। पंजाब सरकार ने तो जालन्धर में हमारा लगभग २० वर्ष से चल रहा हिन्दी माध्यम नार्मल स्कूल बन्द करा दिया है परन्तु इधर की सरकारें ऐसे स्कूलों पर जान देती हैं केन्द्रीय सरकार भी धन से भी सहायता करती है लगभग १५ प्रतिशत पढ़ाई का कार्य जनता के हो हाथ में है। उत्तरी भारत में हिन्दी का अपमान सरकार की ओर से हो सकता है परन्तु दक्षिण भारत के लोग यह सहन नहीं करते। विद्यार्थियों में इतना जोश है कि बिना किसी सम्प्रदायक भाव के हिन्दी की ओर झुके चले आ रहे हैं। पिछले तीन वर्ष में हमारे कालेज का एक मुसलमान विद्यार्थी हिन्दी के वादविवादों में जहां भी जाता था प्रथम स्थान प्राप्त करता था। इस प्रकार अनेक विद्यार्थी शुद्ध हिन्दी भाषा का प्रचार तथा प्रसार करने में आगे बढ़ते चले जा रहे हैं इसलिये यह अवसर हाथ से नहीं योजना पर ध्यान देना चाहिये। इस योजना को सफल करने के लिये मेरी सेवायें आर्य समाज को सदैव मिलेंगी। अब तो यहां पर श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी जैसे कार्यकर्त्ता भी हैं।

वेदों का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

आप्त पुरुष श्री कृष्ण जी का शिक्षाप्रद जीवन

ले०—श्री ओम् प्रकाश जी महोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा

समस्त भूगोल में आर्यावर्त्त देश ही एक ऐसा देश है जहां उच्च कोटि के महामानवों का जन्म होता रहा है और वे सच्ची मानवता के दर्शन संसार भर को कराते रहे हैं। ऐसे महामानवों की प्रथम पंक्ति में महाराज श्री कृष्णचन्द्र जी का स्थान है।

आपका जन्म आज से लगभग ५०३५ वर्ष पूर्व यदुवंशियों के एक विशिष्ट कुल (वृष्णि कुल) में हुआ था। इस कुल के लोग ब्रह्म के उपासक, संयमी, दानशील, सत्यवादी गुरु, ब्राह्मण और वृद्धों का मान करने वाले थे। इन गुणों के साथ २ शूरवीरता का गुण भी इन में कमाल का था। महाभारत वन पर्व में श्री कृष्ण जी के लड़के प्रद्युम्न ने सौमनगर के राजा शाल्व के साथ युद्ध समय अपने सारथी दारुक से वृष्णि वीर कैसे होते हैं इस के सम्बन्ध में कहा—

न स वृष्णि कुले जातो
यो वै त्यजति संगरम्।
यो वा निपतितं हन्ति
तवास्मीति च वादिनम्॥
तथा स्त्रियं च यो हन्ति
बालं वृद्धं तथैव च।
विरथं विप्रकीर्णञ्च
भग्नशस्त्रायुधं तथा॥

जो रण भूमि से भाग जाए वह वृष्णि कुल में उत्पन्न ही नहीं हुआ। जो गिरे हुए पर या 'मैं तेरा हूं' ऐसा कहने वाले पर स्त्री-बालक अथवा बूढ़े पर या रथ-विहीन गिरे हुए पर या उस पर जिस का शस्त्र टूट चुका हो प्रहार करे। वह वृष्णि कुल में पैदा नहीं हुआ।

इन्हीं वृष्णियों में से श्रीकृष्ण जी थे। इनके पितामह का नाम शूर था। शूर का बड़ा लड़का वसुदेव था। वसुदेव के अनेक पुत्र-पुत्रियां हुई। श्रीकृष्ण जी उन में से एक थे। इनकी माता का नाम देवकी था जो कुकुर जाति की थी। देवकी के पिता देवक थे और देवक के भाई उग्रसेन थे जो उस समय सिंहासनारूढ़ थे। उग्रसेन जी का लड़का कंस था जिस ने कालांतर में अपने श्वसुर जरासंध की प्रेरणा और उसी की अपार सैन्य शक्ति के सहारे अपने पिता को बन्दी बना कर स्वयं राज्य संभाल लिया था।

श्री कृष्ण जी का महाभारत में जैसा जीवन वृत्त उपलब्ध होता है उसके आधार पर कहा जा सकता है कि आप के विधिवत् समय २ पर सारे संस्कार वैदिक रीत्यनुसार कराये गये और वेद-वेदाङ्ग की शिक्षा दीक्षा का भी समुचित प्रबन्ध आप के लिए किया गया। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में जब अर्घ देने का समय आया तो पितामह भीष्म ने कहा—आचार्य, ऋत्विज, सम्बन्धी स्नातक और राजा को अर्घ दिया जाता है। किस-किस को अर्घ दिया जाना है इसका निश्चय कर लेना चाहिए। इस पर महाराज युधिष्ठिर ने कहा—कोई एक ही ऐसा पुरुष निर्धारित कीजिए जिस में ये सब गुण विद्यमान हों। भीष्म ने विचार कर श्री कृष्ण जी का नाम प्रस्तुत किया और कहा—

मैंने बहुत ज्ञान वृद्ध महात्माओं का सत्सङ्ग किया है। वे श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर अब तक के महत्व-पूर्ण कर्मों का वर्णन प्रशंसा पूर्वक करते हैं। हम कृष्ण के यश और शौर्य पर मुग्ध हैं यहां मैं किसी ऐसे राजा को नहीं देखता, जिसे कृष्णाने अतुल तेज से न जीता हो। वेद-वेदांग का ज्ञान और बल पृथिवी के तल पर इन के समान किसी और में नहीं इन का दान, इन का कौशल, इन की शिक्षा और ज्ञान, इन की शक्ति इन की शालीनता, इनकी नम्रता, धैर्य और सन्तोष अतुलनीय है। ये ऋत्विज हैं, गुरु हैं, स्नातक हैं और राजा हैं तथा सम्बन्धी हैं। ये सब गुण इस एक पुरुष में मानो मूर्त्त हो गये हैं इसलिए इन्हें ही अर्घ दिया जाना चाहिए।

ऐसे चरित्रनिष्ठ और गुणवान व्यक्ति अपनी जाति, देश और समाज का सदा कल्याण ही किया करते हैं। श्री कृष्ण जी ने भी अपने यादव वंश की तात्कालिक अवस्था पर खूब विचार किया। यह देख कर कि अठारह सहस्र नर-नारियों के यदुवंश में ही पर्याप्त फूट पड़ी है जब तक इस पापिन फूट को दूर नहीं किया जायेगा। यदुकुल का उधार न हो सकेगा। उन्होंने वृष्णि वंश के प्रमुख अक्रूर जी और अन्धको के बड़े आहुक जी को—जो एक दूसरे के शत्रु थे निकट लाने का विचार स्थिर किया। यादव कुल के ये ही दो मुख्य उप-वंश थे इन का मिल जाना आवश्यक था अतः आहुक की लड़की सुतनु का विवाह अक्रूर जी से निश्चित करा कर श्री कृष्ण जी ने घर की फूट को समाप्त करा दिया।

इस प्रकार सब से पहली शिक्षा जो आपके जीवन से मिलती है वह है घर की फूट को समाप्त करना।

ऊपर लिख आए हैं कि कंस ने अपने पिता उग्रसेन को बन्दीगृह में डाल कर राज्य स्वयं सम्भाल लिया था। वह अपने अत्याचारी श्वसुर जरासंध—'जो कि बड़ा बलशाली राजा था' के बल बते पर मनमाने ढंग से राज्य करने लगा। प्रजा इस के अन्याय और अत्याचार से बहुत दुखी हो रही थी ऐसे समय में श्री कृष्ण जी ने जन-साधारण को इस के विरुद्ध संगठित करना प्रारम्भ किया। सभा में प्रश्न सामने आया कंस तो आप का मामा है आप उस का वध कैसे करायेंगे? श्री कृष्ण जी का उत्तर बिल्कुल सीधा, सरल और स्पष्ट था—'जो राजा-प्रजा पालक नहीं उसका विरोध सब को करना चाहिए। मेरे सामने अपने किसी विशेष बन्धु का नहीं—सारे देश का और देश की प्रजा का हित है।

सुविज्ञ पाठक जानते हैं कि कंस का वध महाराज ने किस नीतिमत्ता और बुद्धि चातुय एवं वीरता से किया था और इस प्रकार समक्ष यह आदर्श उपस्थित किये—कि अन्यायी कोई हो उसका विरोध करना हमारा कर्त्तव्य है तथा राष्ट्र-समाज और जाति का हित पहले सोचो और करो—बन्धु-बांधवों का पश्चात्।

इन सुन्दर शिक्षाओं की आज कितनी आवश्यकता है इस पर कुछ लिखना अनावश्यक है। अपने देश को अन्दर से और बाहर से कितना भय उपस्थित है इसे हम ने अभी तक अनुभव नहीं किया—किया होता तो हम आपसी फूट का सिर फोड़ने को सन्नद्ध और तत्पर नज़र आते परन्तु यहां तो बात ही उल्टी हो रही है। ज्यों-ज्यों भय बढ़ता जा रहा है आपसी फूट और दलबन्दी भी बढ़ाई जा रही है। कृष्ण जन्म मनाते-मनाते शताब्दियां व्यतीत हो गई परन्तु हम कृष्ण के सच्चे अर्थों में अनुयायी बनने के स्थान पर दुर्योधन के ही अनुयायी बनते चले गये। घर की फूट कृष्ण को नहीं—कंस को और दुर्योधन को प्रिय थी क्या इस फूट से प्यार करने वाले और इसे पैदा करने वाले तथा बढ़ावा देने वाले कृष्ण भक्त कहला सकते हैं? आज इस बात का उत्तर अपने से प्राप्त करने की आवश्यकता है।

(क्रमशः)

'आर्य समाज की प्रगति'

(ले०—श्री जयदेव जी आर्य एम. ए. साहित्य-मन्त्री पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद्)

अभी गत २८ जुलाई को टोहाना में आर्य कुमार परिषद् का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ। उस में पूज्य स्वा० वेदानन्द जी महाराज प्रधान परिषद् ने एक चर्चा चलाई कि क्या कारण है कि आर्य समाज की प्रगति नहीं हो रही। आर्य समाज के प्रचार के प्रवाह की गति अवरुद्ध सी हो गई है। यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका समाधान खोजने के लिए प्रत्येक आर्य को प्रयत्नशील होना चाहिए। इन कारणों को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं? बाह्य कारण तथा ? आन्तरिक कारण। बाह्य कारण वे हैं जिनमें हमारी प्रचार-प्रणाली के दोष सम्मिलित हैं यथा साहित्य-प्रकाशन तथा वितरण, हमारी उत्सव-प्रणाली तथा हमारे मंच का संकोच, हमारे प्रचारकों की संख्या तथा स्तर आदि। आन्तरिक कारण हैं हमारे जीवन में हमारे सिद्धान्तों के पालन का अभाव, स्वाध्याय की प्रवृत्ति का कम होना आदि। हमें इन सभी विषयों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए तथा उस के अनुसार सुधार करके आर्य समाज के प्रचार को प्रगति देनी चाहिए।

आर्यसमाज के दो पक्ष हैं प्रथम खण्डनात्मक तथा दूसरा मण्डनात्मक। आज सामान्य रूप से लोगों के सामने हमारा केवल खण्डनात्मक रूप तो उभरा है परन्तु मण्डनात्मक नहीं। यह बात हमें निश्चित समझनी चाहिए कि इन दोनों पक्षों पर समान रूप से जोर देकर ही आर्यसमाज वास्तविक प्रगति कर सकता है। परन्तु जब कोई व्यक्ति आर्य समाजी बनता है तो वह खण्डनात्मक रूप को ही सामने रखता है और मण्डनात्मक रूप को भूल जाता है। बहुत सीमा तक पाखण्ड से नास्तिकता तक पहुंचने में आर्यसमाज का वर्तमान रूप एक सीढ़ी का कार्य करता है, जो सर्वथा ऋषि के मन्तव्यके विरुद्ध है। एक व्यक्ति आर्य समाजी बनकर इस बात पर तो आचरण करने के लिए लालायित हो जाता है कि नामधारी ब्राह्मणों को श्राद्ध तथा अन्य अवसरों पर भोजन कराना पाखण्ड है परन्तु प्रतिदिन अतिथि यज्ञ करना आवश्यक है, इस बात को वह महत्व नहीं देता। इस बात का अनुभव हम पग २ पर कर सकते हैं कि आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में किसी पंडित के उत्तम व्याख्यान के पश्चात् आर्य समाजियों की शेष पद्धति तथा कर्त्तव्य कर्म इतना ही है, 'वाह पंडित जी! आपने कमाल कर दिया! आप बहुत सुन्दर बोलते हैं। आप फिर भी कभी अवश्य आइए, हम आप का व्याख्यान रखेंगे। अच्छा नमस्ते!' यदि वक्ता इनकार कर दे तो यह भी सुनने को मिल जाता है, "नहीं! हम आप को आने जाने का किराया दे देंगे।" मानो किराया दे देना उपदेशक पर बड़ा भारी अहसान है। यह तो सामान्य बात है कि उत्सवों पर तथा अन्य अवसरों पर उपदेशकों को घरों पर भोजन न करवा कर समाज के व्यय से होटलों पर भोजन करवाया जाता है। क्या यह हमारे अतिथि-यज्ञ के सिद्धांत की अर्थी नहीं निकाली जाती। और फिर यह स्थिति आज कल ही नहीं हुई अपितु स्वा० सर्वदानन्द जी महाराज के जीवन काल में ही प्रारम्भ हो गई थी और उन्होंने स्वयं इस स्थिति पर शोक प्रकट किया था। मैंने देखा है कि जिला वेदप्रचारिणी सभा होशियारपुर के उपदेशक एक रविवार को आर्यसमाज में ही भूखे मरते रहे क्योंकि रविवार के कारण उन्हें आटा तथा कोयला नहीं मिल सका। क्या यही उपदेशकों का सम्मान है? दूसरे लोग क्या कहते हैं, "इस लिए आर्यसमाजी बने हो ताकि खर्च न करना पड़े क्योंकि सनातनी रहने पर सौ खर्च करने पड़ते हैं।" वे लोग कहां तक सत्य कहते हैं तथा कहां तक असत्य, यह प्रत्येक आर्य के विचारने की बात है और जहां जिस पर यह उक्ति चरितार्थ हो, उसे इसको एकदम सुधारने की आवश्यकता है।

ठीक यही अवस्था मूर्ति पूजा, तीर्थ स्नान आदि के सम्बन्ध में है। एक बात प्रसिद्ध है कि एक सनातनी मूर्ति पूजा कर रहा था। आर्यसमाजी ने देखा तो कहा अरे! यह ईश्वर नहीं, इसकी पूजा करना बेकार है। उस ने मूर्ति उठा कर एक ओर रख दी तो आर्यसमाजी आगे चल पड़ा। उसने कहा, "अरे भाई! मैंने तुम्हारे कहने से इसकी पूजा तो छोड़ दी पर अब यह तो बतलाता जा कि अब पूजा किस की किस प्रकार करूं।" उत्तर मिला, "भाई! इसका पता तो मुझे भी नहीं। मैं तो केवल इतना जानता हूं कि यह पत्थर ईश्वर नहीं।" अब वह क्या करेगा। इसकी हम सहज ही कल्पना कर सकते हैं और सोच सकते हैं कि आर्यसमाज का इस प्रकार कहां तक प्रचार हो सकता है। आज सन्ध्या, यज्ञ आदि के विषय में हमारे मस्तिष्क स्पष्ट नहीं। इस विषय में आर्यसमाज के कर्णधारों को गम्भीर विचार करना चाहिए, अन्यथा गुजारा सम्भव नहीं, यह बात निश्चित है।

यही अवस्था स्वाध्याय की है। हम पुराणों का खण्डन तो भलीभांति कर सकते हैं पर वेद का मण्डन हमारे लिए एक स्वप्न मात्र है। परिणाम, वेद पर हमारा साहित्य न के बराबर है और जो है उसे न आर्यसमाजी पढ़ते हैं तथा न ही अनार्य-समाजी! तो वेद का प्रचार कैसे हो? वेद की अनेक समस्याएं ज्यों की त्यों असमाहित हैं जैसी कि ऋषिवर उन्हें छोड़ गए थे। हमारे स्कूल, कालिजों के अधिकारी निद्रा-मग्न हैं, वे साहित्य के प्रचार-प्रसार में कोई योग नहीं देते। यदि वे सजग हों तो आर्यसमाज का साहित्य बड़ी प्रगति कर सकता है। वे छात्रों को पारितोषिक रूप में सब वैदिक साहित्य ही दें। इस विषय में कुमार सभाओं को भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हमारी आर्य कुमार परिषद् ने अभी २ प्रकाशित पं० लेखराम की स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा लिखित १५० पृष्ठ की जीवनी की १०० प्रतियां इकट्ठी खरीद ली हैं ताकि आर्य कुमार सभाएं इसे सस्ते मूल्य पर प्राप्त कर सकें। इसका मूल्य १।) है परन्तु कुमार सभाएं ५-१० प्रतियां १२ आने प्रति के हिसाब से आर्य प्रतिनिधि सभा, जालन्धर से मुझे सूचित करके क्रय कर सकती हैं। इसी प्रकार 'वेदों का यथार्थ स्वरूप' ६।।) मूल्य की ५) में तथा 'Social Reconstraction by Budda & Dayanand by G. P. Upadhyaya मू० २) को १।।) प्रति के हिसाब क्रय कर सकती हैं। यदि हम सब सजग हो जाए और प्रत्येक स्कूल तथा कालिज के पुस्तकालय में ये पुस्तकें कुछ अधिक या पूरे मूल्य पर तथा विद्यार्थियों को सस्ते मूल्य पर पहुंचाएं और उनको २-३ आर्य वीर मिल कर या संस्थाओं के

(शेष पृष्ठ ८ पर)

पुस्तक समीक्षा

धर्मवीर पं. लेखराम (जीवन

पृष्ठ संख्या १४३ मूल्य १.२५ नै.पै. मूल लेखक स्व०

श्री महाराज।

प्रकाशक—साहित्य प्रकाशन विभाग आर्य प्रतिनिधि सभा जालंधर(पंजाब) पुस्तकके आरम्भ में 'कुछ शब्द' शीर्षक देकर श्री रामचन्द्र जी जावेद मुख्या. ध्यापक N.D. विक्टर हाई स्कूल जालन्धरछावनी ने उसीका पुस्तक का निचोड़ दे दिया है। पढ़ने से पुस्तक की वास्तविकता समझ आ जाती है। महात्मा मुन्शीराम जी (बाद में श्रद्धानन्द जी) ने लेखराम जी के सहवास में रहकर उनकी जीवन गाथा की घटनाओं का ठीक २ रूप आर्यजगत के सामने रखा है। पुस्तक का तीसरा संस्करण प्रकाशित होना ही इस बात का प्रमाण है कि यह जीवन चरित्र कितना लोकप्रिय और उपादेय रहा है। पुस्तक का आकार कागज छपाई और विशेषकर मुख पृष्ठ की आकर्षणता सराहनीय है। पुस्तक के आरम्भ में चित्रों ने सोने में सुहाग का काम किया है। स्कूलों समाजों और हिन्दु मात्र के हाथों में जाने योग्य है। पुस्तकालयों की निराली शोभा है।

हवन यज्ञ और विज्ञान लेखक—श्री रामप्रकाश जी M.S. S.c आनर्ज) प्रो. डी. ए. वी. कालिज

प्रकाशक—आर्य युवक समाज सैक्टर २२, चंडीगढ़। कीमत १.०० पृष्ठ संख्या-१२४

अग्निहोत्र पर वैज्ञानिक ढंग से विस्तार के साथ अभी तक हिन्दी साहित्य में एक भी पुस्तक नहीं थी इस कमी को प्रो. रामप्रकाश जी ने बड़ी खोज और विद्वता के साथ पूर्ण किया है। देव यज्ञ के प्रत्येक अंग का (हवन कुंड का परिमाण, काष्ठ, सामग्री, घृत, हवन द्वारा वर्षा, हवन से अनेक बिमारियों का निराकरण आदि २ विषयों पर वैज्ञानिक रीति से विशद वर्णन किया है। पुस्तक चार अध्यायों में समाप्त की गई है। प्रत्येक अध्याय में हवन के भिन्न-भिन्न अंगों का वर्णन किया है। पुस्तक प्रत्येक समाज के पुस्तकालयों में संग्रह योग्य है। पुरोहितों के लिए विशेष उपयोगी है।

आर्यसमाज यमुना नगर में वेदप्रचार

श्री पं० नन्दलाल जी वैदिक मिशनरी द्वारा बड़ी धूमधाम से प्रचार किया गया। रक्षा-बन्धन का त्यौहार भी बड़े समारोह से मनाया गया—उपस्थिति बहुत अच्छी रही प्रभाव बड़ा सुन्दर रहा। निवेदक :—

कविराज रामसिंह वैद्य

प्रधान, आर्यसमाज

आर्यसमाज समाजमंदिर, बाढ़ (पटना)

अन्य वर्षों की भांति इस साल भी तिथि ४. ८. ६३. को वेदप्रचार सप्ताह का समारम्भ आर्यसमाज मन्दिर बाढ़ में दैनिक सत्संग के कार्यक्रम के साथ हुआ। आज श्रावणी पर्व भी था अतः विशेष आहुतियों के द्वारा यज्ञ-हवन और वेद-पाठ हुआ। फिर झण्डोत्तोलन हुआ और यज्ञ की समाप्ति पर मिष्ठान्न वितरण किया गया। राम लखन आर्य

मन्त्री आर्यसमाज बाढ़

इस सुवर्ण अवसर से लाभ उठाएं
आर्य जगत आधी कीमत में

आर्य समाज किला मुहुला के वर्तमान प्रधान श्री ला० श्री शंकरदास जी ... न की उदारता से सभा का आर्यजगत पत्र आधी कीमत यानि ३/-में दिया जाएगा शेष ३/-ग्राहक को स्वयं देना होगा। इस सुअवसर से पाठक गण व संस्थाएं लाभ उठाएं। —व्यवस्थापक

भाली आनन्द पुर में यज्ञ व वेदप्रचार

भाली आनन्द पुर जि० रोहतक में आर्य प्रादेशिक सभा के उपदेशक श्री बानप्रस्थी म० भूरा राम जी प्रभुदयाल जी आर्य प्रभाकर श्री हरिश्चन्द्र जी श्री सुमेरसिंह जी व श्री स्वामी देवानन्द जी ने प्रचार व यज्ञ करवाया और यज्ञोपवीत भी दिये गए। इस पवित्र कार्य में विशेष कर चौ० सुरतसिंह जी प्रधान चौ० हुकमसिंह मन्त्री ने सहयोग दिया। आर्य समाज भाली आनन्द पुर की ओर से सभा को वेदप्रचार आदि में ५४) दान दिया।

इस भजन मण्डली ने भगवती पुर (रोहतक) में प्रचार किया २१) दान वेद प्रचार में मिला।

सेवक—प्रभुदयाल आर्य प्रभाकर।

आर्य समाज की प्रगति

(पृष्ठ २ का शेष)

अधिकारी ये पुस्तकें पढ़ने तथा क्रय करने की प्रेरणा दें तो आर्यसमाज का अच्छा और सस्ता साहित्य तैयार हो सकता है और आर्यसमाज के दृष्टिकोण को जनता के समक्ष ठीक प्रकार से उपस्थित कर सकता है। क्या कोई सुनेगा? पत्र-व्यवहार निम्न पते पर कर सकते हैं:—
जयदेव आर्य एम० ए०, ग्रा० पो० बेलरवा, तहसील नरवाना जिला संगरूर

शोक समाचार

रन्धौली (करनाल)

मैं प्रिय शिवराज कुमार सुपुत्र बाबू अयोध्या नाथ कपूर का आकस्मिक देहावसान हो गया इस पर रन्धौली समाज के कार्यकर्ताओं ने हार्दिक शोक प्रकट किया तथा उनके परिवार से सहानुभूति दर्शाई। छात्र की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई।

मंगतराय कृष्ण कुमार, दयानन्द रन्धौली

(२) श्री राम चन्द्र जी महता शास्त्री जयपुर के ज्येष्ठ पुत्र नरदेव चन्द्र जी महता का सिकन्दराबाद में स्वर्गारोहण हो गया इस के लिए आर्य परिवार की ओर से महता जी व उन के परिवार के साथ समवेदना प्रकट करता हुआ नरदेव चन्द्र जी की आत्मा की शुभ गति के लिए याचना करता है। व्यवस्थापक

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टेलीफोन नं० [illegible] [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 121

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३४) रविवार ९ भाद्रपद २०२० — २५ अगस्त १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अनड्वान् दाधार पृथिवीम्

सर्वधारक भगवान ने इस सारी पृथिवी को धारण किया हुआ है प्रभु के नियम से धरती धारित है। वही अनड्वान है जिसके सामर्थ्य से सारा विश्व धारण किया गया है।

अनड्वान् उत द्याम्

इस चमकने वाले द्युलोक को भी उसी अनड्वान रूप भगवान ने अपने बल से धारण कर रखा है प्रभु के बिना और धारक हो भी कौन सकता है। वही धारक है।

अनड्वान् विश्वं भुवनम्

वही सबको धारण करने वाले परमेश्वर ने इस सारे महान तथा चित्र विचित्र विश्व को धारण कर रखा है। वही विश्वपति धारक है—

• अ थ र्व वे द

वेदामृत:

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मममित्रं भवन्तु ॥ अथर्व का १९ सू. १५ मं ६

अर्थ—हे परमात्मन्! हमें (अभय) निर्भयता हो (मित्रात्) मित्र से (अभयं) अभय हो, (अमित्रात्) वैरी शत्रु से (अभय) निर्भयता हो (ज्ञातात्) जो ज्ञात हो जिसे जानते हैं, ज्ञाति जनों से (अभय) निर्भय बने (परोक्षात्) अज्ञात अनजाने लोगों से। (अभय) अभय हो (नक्तम्) रात को (अभय) अभय हो (दिवा) दिन में भी (नः) हमें (सर्वा) सारी (आशा) दिशाएं (मम) मेरे हमारे लिए (मित्रं) मित्र अपने ही (भवन्तु) हो जावें—सारे विश्व के रहने वाले हमारे मित्र बन जावें। किसी से भी हमें भय भीति न होवे।

भाव—हे शिव शंकर! हम धर्मपथ पर चलते हुए नया नया कार्य करते हुए भयभीत हो जाते हैं, कभी मित्र मोह से और कभी शत्रु के डर से रुक जाते हैं। कभी जाति सम्बन्धियों के कारण हमें सत्य दबाना छिपाना पड़ता है, कभी अपरिचयने में हम डर जाते हैं। हमारे सारे जीवन के काम बन्द हो जाते हैं। आप से प्रार्थना करते हैं कि हम मित्र हो अमित्र, जाना हुआ हो या अनजाना, अपना सगा हो या दूसरा हो, रात हो या दिन, कभी भी किसी काम में भय न करें। यह सारी दिशाएं हमारे लिए भय से रहित हो जावें। जिधर भी जावें निर्भय होकर विचरें, निर्भीक बनें—सं०

कोई शक्ति

भारत को नहीं झुका सकती

स्वतन्त्रता-दिवस पर श्री नेहरू का लाल किले की प्राचीर से भाषण

स्वतन्त्रता-दिवस पर ऐतिहासिक लाल किले की प्राचीर से भाषण देते हुए प्रधान-मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने देश-वासियों से एकतावद्ध और अनुशासनबद्ध रहने की अपील की और कहा कि बाह्य खतरे से देश की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के हेतु हर्ष-पूर्वक बोझ सहन करें।

श्री नेहरू ने कहा कि सीमा पर खतरा पूर्ववत् बना हुआ है। मौजूदा समय पर शिथिलता का प्रदर्शन आत्मघात के समान होगा।

हमारे राजनीतिक या अन्य विचार कुछ भी हों, देश की प्रतिरक्षा के प्रश्न पर दो मत नहीं होने चाहिएं। भारतीयों के रूप में एक आवाज से बोलना है।

हम एक स्वतन्त्र राष्ट्र हैं, और रहेंगे। हम दृढ़ प्रतिज्ञ हैं कि अपना सिर ऊंचा उठा कर जियेंगे। विश्व की कोई भी शक्ति हमें झुका नहीं सकती।

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद

यज्ञेन यज्ञम्

(ले. पं. भद्रसेन जी दर्शनाचार्य साधुआश्रम होश्यार पुर)

वैदिक साहित्य में पुरुष सूक्त का एक विशेष स्थान है, जिस में सृष्टि विद्या सम्बन्धी विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। पुरुष सूक्त कुछ भेद से ऋग्वेद और यजुर्वेद में समान रूप से उपलब्ध होता है।

यज्ञेन यज्ञमय जन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नांक महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥
य. ३१।१६।

यह पुरुष सूक्त का एक प्रसिद्ध मन्त्र है, अथर्व वेद में भी उपलब्ध होता है। सीधे शब्दों में इस का अर्थ इस प्रकार से है—

देवों ने यज्ञ से यज्ञ की पूजा की (या करते हैं), ये कर्म (अर्थात् यज्ञ से यज्ञ की पूजा करना) इन की दिन चर्या से तथा जीवन चर्या में प्रथम (मुख्य) है, इन कर्मों के परिणाम स्वरूप देव जन महिमा युक्त हो कर परम आनन्द स्वरूप मोक्ष का सेवन करते हैं, जिस में उन से पूर्व कालीन साधना शील देव हैं। प्रस्तुत लेख में विस्तार भय से सम्पूर्ण मन्त्र पर तो विचार नहीं करना है, परन्तु मन्त्र के प्रथम चरण का भाव अवगत होने पर शेष मन्त्र का भाव शीघ्र ही हृदयङ्गम हो सकता है। वस्तुतः 'यज्ञेन यज्ञं' देवों ने यज्ञ से यज्ञ की पूजा की यह एक विचित्र पहेली सी हो है, इस का समाधान हुए बिना मन्त्र का रहस्य सरलता से बुद्धि गम नहीं किया जा सकता।

वेद तत्व के परम ज्ञाता यास्काचार्य ने निरुक्त में इस मन्त्र का अर्थ करते हुए लिखा है कि 'अग्निना-अग्निमयजन्त देवाः। अग्निः पशुरासीत्...।' देवों ने अग्नि से अग्नि की पूजा की, इस से भी कुछ गुत्थी सुलझती हुई दिखाई नहीं देती, क्यों कि स्पष्ट रूप से निर्देश नहीं किया गया कि वह कौन सी प्रथम अग्नि (यज्ञ) है जिस के द्वारा द्वितीय अग्नि (यज्ञ) का पूजन किया, केवल इतना ही अन्तर प्रतीत होता है कि यज्ञ के स्थान पर दोनों स्थलों पर अग्नि शब्द का प्रयोग किया गया है। पहेली तो वैसी की वैसी ही बनी रह जाती है। कि (अग्नि से अग्नि की पूजा की) जिस प्रकार ऋग्वेद में अन्यस्थल पर कहा गया है 'अग्निनाअग्निः समिध्यहुते' अतःअवश्यभाविक ही हो जाता है कि अग्नि शब्द के अर्थ पर विचार किया जाये, तभी ज्ञान हो सकता है कि प्रथम और द्वितीय अग्नि (यज्ञ) शब्द का क्या भाव है।

वैदिक साहित्य में प्रकरणानुसार अग्नि शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र 'अग्निमीड़े ..' पर अग्नि शब्द के सम्बन्ध में बहुत ही विस्तार के साथ विचार किया है, जिस से स्पष्ट रूपेण सिद्ध होता है, कि प्रसंगानुसार अग्नि-ईश्वर, जीव, राजा, संन्यासी, नेता, पथ प्रदर्शक, इंजन तथा भौतिक अग्नि आदि भावों का द्योतक है। अग्नि शब्द के अनेक अर्थों की भावना भास्कराचार्य के अग्नि शब्द के निर्वचन से भी सिद्ध होती है। "अग्निः कस्मात्—अग्रणी भवति, अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते, अङ्गोपनो भवति ..इत्यादि निरुक्तियों पर ध्यान देने से अग्नि शब्द अनेक अर्थों का द्योतक सिद्ध होता है। वस्तुतः लोक में भी अग्नि शब्द का अनेक अर्थों में व्यवहार किया जाता है।

मेरी दृष्टि से प्रस्तुत मन्त्र में क्रमशः अग्नि शब्द (अथवा यज्ञ शब्द) ब्रह्म अग्निः, आत्मा अग्निः, अयं वाग्निः प्रजा च प्रजापतिश्च। शत पथ के प्रमाणानुसार जीवात्मा और परमात्मा का वाचक है। वेद के विभिन्न स्थलों पर विचार करने से भी इस धारणा की पुष्टि होती है।

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान्
परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च।
उपस्थाय प्रथम जामृतस्य
आत्मनात्मानमभि संविवेश॥
य० ३२।११॥

"आत्मनात्मनमभि सविवेश"

इन शब्दों में स्पष्ट रूपेण इस रहस्य को प्रकट कर दिया है। महर्षि दयानन्द जी ने 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' में "यज्ञेन यज्ञ" का भाष्य करते हुए लिखा है देव जन यज्ञेन—स्तुति प्रार्थना उपासना की रीति से यज्ञं—पूजनीय परमेश्वर की उपासना करते हैं। परन्तु आगे निरुक्त के कहे हुए अर्थ को स्पष्ट करते हुए स्पष्ट रूपेण लिखा है— अग्निना—जीवेनान्तः करणे न वाग्निं परमेश्वरमयजन्त। जीवात्मा वा अन्तः करण के द्वारा देव जन परमेश्वर की पूजा करते हैं। यहां पर स्पष्ट ही क्रमशः अग्नि शब्द जीव और परमेश्वर वाचक है। यही भावना "यं क्रन्दसि अवसा तस्थमाने अभ्यैक्षतां मनसा" म० ३२।७ के द्वारा—तथा

न यस्य द्यावा पृथिवी न धन्व
नान्तरिक्षं नाद्रयः सोमो अक्षाः॥
ऋ० १०।८९।६

अर्थात् प्रभु का साक्षात्कार केवल शांति आदि गुण युक्त जीव ही कर सकता है इन्द्रियां तथा भौतिक पदार्थ नहीं, तथा इसी रहस्य को केनोपनिषद् के ऋषि ने अलंकार द्वारा और भी स्पष्ट कर दिया है, कि अग्नि और वायु रूप इन्द्रियां तथा भौतिक पदार्थ उसका साक्षात् करने में सर्वथा ही असमर्थ हैं, केवल इन्द्र—जीवात्मा ही धारणावती बुद्धि के द्वारा उसके अनुभव करने में समर्थ हो सकता है।

इसी भावना की पुष्टि उपनिषदों के विविध मन्त्रों से भी होती है।

यदात्म तत्त्वेन तु ब्रह्मतत्त्वं दीपोपमेनेह युक्तः प्रपश्येत्।
अजं ध्रुवं सर्व तत्त्वै विशुद्धं ज्ञात्वा देवा मुच्यते सर्व पाशैः श्वेताश्वेतर२/१५

दीपक की ज्वाला के समान समाधि होकर जब स्व आत्म तत्त्व के द्वार अजन्मा निश्चल और सर्व तत्वों से सर्वातिशय विशुद्ध ब्रह्मतत्व को अनुभव करता है तथा ऐसे ब्रह्म को ज्ञान कर सर्व विध बन्धनों से मुक्त हो जाता है। श्वेताश्वेतरोपनिषद् के ऋषि ने इसी रहस्य को दृष्टान्त द्वारा अन्य स्थल पर स्पष्ट करते हुए सुन्दर शब्दोंमें कहा—

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेधव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्॥

ओंकार के धनुष पर स्व आत्मा को तीर बनाकर ब्रह्म का लक्ष्य बनाना चाहिए। तथा दूसरे स्थल पर इसी भाव को इस प्रकार से निरूपण किया है।

तिलेषु तैलं दधनीव सर्पिरापः स्रोतः स्वरणीषु चाग्निः।
एवमात्मा ऽऽत्मनि गृह्यते ऽसौ सत्येनैनं तपसा यो ऽनुपश्यति॥ १/१५

जिस प्रकार तिलों में तेल, दधि में घृत, स्रोतों में जल, अरणियों में अग्नि प्राप्त होती है, तथैव आत्मा में परमात्मा के दर्शन होते हैं, जो सत्य और तप के द्वारा प्रयत्न शील होता है। यही भाव पुराने एक भजन में इस प्रकार व्यक्त किया गया है।

परमात्मा को जब आत्मा में,
लिया देख ज्ञान की आंखों से।
प्रकाश हुआ मन में उसके,
कोई भेद उस से छुपा न रहा॥

एवं विदुर नीति और महाभारत में भी इसी भाव का समर्थन इन शब्दों में किया गया है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २५ अगस्त १९६३ [अंक ३४

राष्ट्रभाषा हिन्दी में क्यों न ?

समाचार प्रकाशित हुआ है कि पंजाब सरकार ने निश्चय किया है कि पंजाबी रिजन में जो सरकारी तथा इस से सम्बन्धित तारें दी जाया करेंगी। वह पजाबी में होंगी। जब तक पंजाबी लिपि का कोड नहीं बनता, तब तक रोमन लिपि का प्रयोग किया जायगा। पंजाब सरकार की तार सम्बन्धी निर्धारित इस नीति तथा घोषणा का समाचार पढ़ कर मन को बड़ा भारी खेद हुआ। पता नहीं कि तारों के सम्बन्ध में भी राष्ट्रभाषा हिन्दी और उस की लिपि देवनागरी से इतनी नफरत क्यों ? यह बात और भी आश्चर्य की है कि रोमन लिपि में तो तारों का आदान प्रदान किया जा सकता है, इस की अनुमति दी गई है, किन्तु हिन्दी में देवनागरी लिपि में उस की अनुमति नहीं दी गई। हिन्दी भारत के संविधान में राष्ट्र-भाषा स्वीकृत है। उस का प्रयोग देश व्यापी स्तर पर जारी है। केन्द्रीय सरकार उस की उन्नति में कई पग भी उठा रही है। जिन २ प्रान्तों में हिन्दी भाषा का प्रचलन नहीं, वहां के निवासियों को इस की सुविधाएं भी दे रही है हिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी प्रचार की योजनाएं भी चालू हैं। अब तो राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए कहीं पर भी विरोध नहीं है। कुछ समय चाहे लग जाये, पर राष्ट्रभाषा सारे देश का अङ्ग एवं एकता का सुन्दर सूत्र बन कर देश के इस विराट् जीवन के समस्त अङ्गों के मनोरम मनकों को राष्ट्रियता की माला में पिरो देगी। ऐसा समय अब सन्निकट ही आ गया है।

किन्तु भारी खेद है, जब हिन्दी हमारे विधान की भाषा है। सारे देश में स्वीकृत नगरों में हिन्दी देवनागरी में तारें ली दी जाती हैं। कोई किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है। ऐसी अवस्था मे अपने प्रांत पंजाब की सरकार का यह निश्चय किस देशभक्त और विधान प्रेमी को नहीं अखरेगा ?' कितना अचम्भा है कि रोमनलिपि जो एक विदेशी लिपि है, का प्रयोग तो किया जा सकता है तथा पंजाबी जो एक बहुत थोड़े भाग की बोली है, का भी प्रयोग हो सकता है। किन्तु हिन्दी देवनागरी लिपि जो राष्ट्र व्यापी; राष्ट्रभाषा है, उस मे तारें नहीं दी जा सकतीं। जब सारे भारत में इस मे तारें आ जा सकती हैं, तो क्या कारण है कि पंजाब में राष्ट्र-भाषा हिन्दी से यह विचित्र व्यव-हार क्यों किया गया है। क्या यह राष्ट्रभाषा का सम्मान है ? पंजाब सरकार विदेशी नहीं वरन अपनी है, फिर ऐसा निर्णय क्यों ? राष्ट्र-भाषा के प्रत्येक प्रेमी को इससे भारी खेद हुआ है। राष्ट्रभाषा सब की सांझी है। विधान सारे भारतीयों का है उससे इतना रोष और वैर क्यों ? हम पंजाब सरकार से कहना चाहते हैं कि वह इस अपने एक पक्षीय निर्णय पर पुनर्वि-चार करके इसे शीघ्र बदल कर राष्ट्र हिन्दी देवनागरी को उसका उचित सम्मान देवे। साथ ही प्रान्त की अपनी सारी सामाजिक, धार्मिक संस्थाओं से भी कहना है कि वे शिष्टमण्डल बनाकर पंजाब सरकार से मिलकर इसके बारे में उचित निर्णय करावे। —त्रिलोक चन्द्र

सभा के प्रेमी

श्री ओंकारनाथ जी मन्त्री आय समाज माटुंगा बम्बई आरंभ से ही आर्यसमाज तथा आर्य प्रादे-शिक सभा पंजाब के अनन्य भक्त हैं। आपने सभा के वेदप्रचार कोष की अवस्था देखकर इसे सहयोग देने के लिए क्रियात्मिक पग उठाते हुए एक सौ रुपए मासिक देने का निर्णय किया है। आर्यसमाज के भक्त सभा को सहयोग देने मे सदा आगे २ ही आये हैं। स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का यह सभा का विशाल वृक्ष लहलहाता रहेगा। क्या उत्तम हो यदि इस प्रकार के सभा निष्ठ सज्जन अपने २ नगरों से सभा को सहोग देने निकल पड़े तो प्रचार कार्य विस्तृत हो जाए।

मराडी हिमाचल के

भक्त तथा समाज के मस्ताबे श्री भक्त ईश्वर दास जी ने भी सभा के वेद प्रचार कोष मे स्वर्ण-भूषणों के रूप मे पुष्कल राशि प्रदान की है। भक्त ईश्वरदास जी आर्य समाज के बड़े ही प्रेमी हैं। गत दिनों उन की देवी गंगीदेवी जी का स्वर्गवास हो गया था। उन के बाद तो भक्त जी प्रेम मे ही जुटे रहते हैं। समाज सेवा के सिवाय और कोई काम ही नहीं है। वैसे भी मण्डी का सारा समाज ही सभा प्रेमी है। हम भक्त ईश्वर दास जी तथा बहिन नागेश्वरी जी का धन्यवाद करते हैं। अन्य भी सभा सेवा मे इन से प्रेरणा लेवें।

तपोवन देहरादून

मैं गत १५ जुलाई से ले कर सत्संग, यज्ञ, अध्यात्म वाद का भारी प्रवाह चल रहा है। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने १५ दिन मौन साधान व्रत पूरा कर के यज्ञ में उपदेशामृत पान कराया तथा अब भी उपदेश जारी है। इस बार तो बड़ा भारी समारोह है। यह सारा मास जारी रहेगा जहां महात्मा जी पधार जायें वहां आनन्द का स्रोत ही चलता है। तपोवन अध्यात्मवाद का सचमुच तपोवन ही बन गया है।

सभा प्रधानजी गुड़गांव में

आर्य प्रादेशिक सभा के मान्यवर प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. आर्यसमाज माडल-टाऊन गुड़गांव के सादर विशेष निमंत्रण पर वहां वेदसप्ताह की पूर्णाहुति पर १८ अगस्त पर पधारे। नगर की सारी समाजों की ओर से श्री सभा प्रधान जी का बड़ा ही पुष्पमालाओं से स्वागत सम्मान किया गया विशेष जलपान का भी प्रबन्ध था जिस में प्रतिष्ठित सज्जन शामिल थे मान्यवर प्रधान जी का प्रभावशाली भाषण हुआ तथा वेद प्रचारार्थ थैली भेंट की गई—

शोक जनक।

यह दुःखद समाचार अत्यन्त दुःख से सुना जायगा। कि गुरदास पुर के श्री. बलदेव सिंह जी भण्डारी एडवोकेट के भाई श्री. बलदेव राज जी भण्डारी का दिल की गति रुक जाने से देहांत हो गया है सारे परिवार पर भारी आघात है। हम भारी क्षति पर सारे परिवार से हार्दिक संमवेदना प्रकट करते हैं—

प्रभु स्वास्थ्य दें

यह सुन कर भी बड़ा दुःख हुआ कि सभा के वेदप्रचार अधि-ष्ठाता श्री पं० सुधीराम जी शर्मा के भ्राता प० तिलकराज शर्मा के सुपुत्र प्रिय रविचन्द का बाया बाजू वृक्ष से गिरने से टूट गया है। आज कल प्रिय रवि होश्यारपुर हस्पताल मे गत पहली अगस्त से प्रविष्ट हैं। प्रभु शीघ्र स्वास्थ्य प्रदान करे— —स०

आनन्द की ओर नामक पुस्तक की भूमिका

(ले०—पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

तैत्तिरीय उपनिषद् में यह वर्णन आता है कि विज्ञान रूप ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करके शरीर और मन के दोषों को दूर किया जा सकता है। मनुष्य के अन्दर विज्ञान मय कोष चौथा कोष है और इसके पश्चात् आनन्द मय कोष है। विज्ञान मय कोष से पहिले प्राण मय कोष और मनोमय कोष आते हैं और अंतिम कोष आनन्द मय कोष है। सारी दुनिया के प्राणी इसी आनन्द की खोज में लगे हैं। भौतिक वादी भी और अध्यात्मवादी भी सब का लक्ष्य ऐसा सुख प्राप्त करना है जिसका तार कभी न टूटे। सुख का हर काल हर अवस्था और प्रत्येक परिस्थिति में बने रहने का नाम आनन्द है। और ऐसा आनन्द केवल आनन्द स्वरूप भगवान से ही प्राप्त हो सकता है। उस आनन्द स्वरूप परमात्मा की अलौकिक छवी दुनिया के कण-कण में भासित होती है। उसके दीखने वाले परमात्मा को हम देखना चाहते हैं। वह हमारे प्राणों का प्राण और जीवन का जीवन है। हमारी स्थूल आंखों से ओझल होकर भी वह हमारा ही है। यह जितने दीखने वाले हैं यह वास्तव में अपने नहीं है। एक कवि ने ठीक ही कहा है :—

जो आते हैं नजर वह अपने नहीं हैं
जो है अपना वह नजर नहीं आता
घेर साया है उसके ए प्यारे
जिसका साया नजर नहीं आता॥

और उसी का साया या छाया अमृत रूप है। वेद में भी कहा है यस्यच्छायामृतं और उसी की छाया में जीवन गुजारने वाले उस आनन्द मय को पाते हैं। वह कैसे मिलता है उसी बात का वर्णन कविराज रामसिंह जी आरोग्य मन्दिर यमुना नगर ने इस नन्ही-सी लघु पुस्तिका में किया है। शरीर को स्वस्थ रखो मन को बलवान बनाओ परमात्मा के पवित्र नाम ओ३म् का निरन्तर सिमरण करते रहो प्राणायाम के द्वारा मन की चंचलता को मिटाओ। और परमात्मा को अपनी मां समझ कर उसके आदेशानुसार चलते जाओ। अपने आप को तथा अपने कर्मों को प्रभु के अर्पण किये रखो इसी को आत्म-समर्पण अथवा ईश्वर प्रणिधान कहते हैं। आनन्द की खोज का यही एक मात्र मार्ग है।

कविराज रामसिंह जी वैद्य ने बड़ी सरल विधि से उस मार्ग का दिग्दर्शन कराया है। इससे लाभ उठा लीजिये।

★

रहस्य की बात

(ले०—श्री गणेशदत्त जी आर्योपदेशक दिल्ली)

यह एक रहस्य की बात है कि भलाईयों में जितना द्वेष होता है बुराइयों में उतना ही प्रेम विद्वान को देखकर साधु-साधु को देखकर जलता है एक दूसरे को सुख नहीं देखना चाहता।

परन्तु जुआरी जुआरी को देखकर, शराबी शराबी को देखकर, चोर चोर को देखकर सहानुभूति करता है सहायता करता है एक पं. जी यदि ठोकर खाकर अन्धेरे में गिर पड़ें तो दूसरे पं. जी उन्हें उठाने के स्थान में दो ठोकरें और लगावेंगे कि वह फिर उठ न सके।

परन्तु चोर पर आई आपत्ति देखकर दूसरा चोर उसकी आड बन जाता है और ओट देता है यही सोचने की बात है और रहस्य की बात।

हां, हां, इसका कारण भी सुन लीजिएगा।

बुराई से सब घृणा करते हैं इसलिए बुरों का आपस में प्रेम होता है। भलाई की सारा संसार स्तुति करता है प्रशंसा करता है इस लिए भले आदमियों में विरोध होता है, चोर चोर को गिराकर क्या पाएगा ? परंतु विद्वान् को नीचा दिखाकर विद्वान क्या पाएगा ? बस पाठकगण देखिए, आखिर रहस्य का बात में बात का रहस्य निकल ही आया।

गीत

(रचयिता—हरवंश लाल 'हंस' गायक)

आर्य समाज को सच्चाई से प्यार है
सदा से रहा है और सदा ही रहेगा
जो गोल मोल कर्ते पोप पाखण्डी बतलाते हैं
तो अकल के अन्धे गांठ के फौरन फंस जाते हैं
ऐसी जहालत फरेब से हमारा इनकार है॥
सदा से रहा.........

है भक्त राम का यह कृष्ण गुण गौरव से गाता है
बस फरक फकत इतना बुरा यह रास को बतलाता है
सोए जगावे वाला प्रहरि खबरदार है॥
सदा से रहा.........

जब नाश की ज्वालाएं दौड़ती धरती पर आती हैं
हो वेद ज्ञान वर्षा वो अमिट बुझ कर मिट जाती हैं
दुःखों का नाशक नुसखा वेद का प्रचार है॥
सदा से रहा.........

मिल प्रेम से बैठेंगे ऋचायें वेदों की गायेंगे
धर्मार्थादि फल पा 'हंस' सब सुर पुर को जायेंगे
गुमराहि प्राणियों को दुःख बेशुमार है॥
सदा से रहा.........

आर्य स्कूल नाभा में

श्री मा० देसराज जी एम. ए. भाटिया ने डी. ए. वी. स्कूल सेवाराम नगर-कादियां में निरंतर २४ वर्ष शिक्षण सेवा की। आप स्कूल समाज तथा नगर में सर्वप्रिय रहे हैं। जन्म से आर्य परिवार के अङ्ग हैं। अब कालेज कमेटी ने आर्य हाईस्कूल नाभा में मुख्याध्यापक बना कर भेजा है। समाज, नगर-वासियों की ओर से आप के सम्मान में शानदार पार्टी दी मान-पत्र भेंट किया। कादियां में श्री राणा प्रतापसिंह जी एम. ए. मुख्याध्यापक बन कर आये हैं।

महता राम चन्द्र जी शास्त्री को सख्त सदमा

आर्य जगत में यह समाचार दुःख से सुना जाएगा कि आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान वेद वक्ता महता रामचन्द्र जी शास्त्री के बड़े सुपुत्र महता मलदेव चन्द्र दत्त का परलोक गमन हो गया है।

इस दुःख में हम महता जी से हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं। परमात्मा उनको इस दुःख के सहन करने की शक्ति और मृतक की आत्मा को सद्गति प्रदान करें।

राजकुमार मंत्री प्रादेशिक
उपसभा देहली

वेदों में संरक्षण और युद्ध

ले० श्री दामोदर सातवलेकर जी पारखी (सूरत)

(गतांक से आगे)

त्वं मायाभिरप मायिनो ऽधमः स्वधाभिर्ये अधि शुप्तावजुह्वत। त्वं पिप्रोर्नृमणः प्रारुजः पुरः प्र ऋजिश्वानं दस्युहत्येष्वाविथ॥ ऋ ७५१५

त्वं मायाभि. मायिनः अप अधमः—तूने कपट प्रयोगों से कपटी शत्रुओं को विनष्ट किया। जो कपट से छल कर रहे थे, उन दुष्ट शत्रुओं को कपट प्रयोगों से ही दूर करके भगा दिया। जो (स्वधाभि) अपने ही मुखों से (शुप्तौ अधि अजुह्वत) अपने ही मुखों में हवन करते थे अर्थात वे स्वार्थवश होकर स्वयं भोग करते थे।

२ त्वं पिप्रो. नृमणः पुरः प्रारुजः—तूने धनकी इच्छा करने वाले पिप्रु के नगरों को तोड़ा था।

३ ऋजिश्वानं दस्युहत्येषु प्र आविथ—ऋजिश्वा को शत्रुओं का वध करने के युद्धों में बचाया।

कपट प्रयोगों से कपटी शत्रुओं का विनाश किया। स्वयं कपट करना नहीं चाहिये। परन्तु यदि शत्रु कपट करने लगा। तो उस कपटी शत्रु का नाश करने के लिये स्वयं कपट प्रयोग करने योग्य है। यह युद्ध का नीति है। शत्रु कपट प्रयोग करके युद्ध करे और यदि हम उसके साथ सरलता युद्ध करेंगे, तो हमारा पराभव होगा ऐसा होना नहीं चाहिये। इसलिये हमें भी कपटी शत्रु के साथ कुटिल प्रयोग करने ही चाहियें। शत्रु का पूर्ण रीति से पराभव करना यह मुख्य कार्य है।

शत्रु के नगर तोडना

समय आनेपर शत्रु के नगरों को भी तोड़ना चाहिये। यह भी युद्ध की नीति है देखिये—

अभि सिध्मो अजिगादस्य शत्रून वि तिग्मेन वृषभेणा पुरोऽभेत्। सं वज्रेणा सृजद् वृत्रमिन्द्रः प्र स्वां मतिं अतिरच्छाशदानः॥ ऋ. १।३३।१३

(अस्य सिध्मः) इस इन्द्र का वज (शत्रून अभि अजीगात) शत्रुओं के ऊपर जा कर गिरा। इस ने तिग्मेन पुरः विभेत्) अपने तीक्ष्ण शत्रुओं के नगरों का तोड़ दिया। इस इन्द्रने (वृत्र वज्रेण स सृजत) वृत्र पर वज्र फेंक दिया और (शाशदानः) प्रशंसित हुआ वह इन्द्र (स्वां मतिं प्र अतिरत) अपनी बुद्धि के अनुसार कर्म करके विजय को प्राप्त करता रहा।

यहां पाठक देख सकते हैं कि शत्रुओं का पूर्णरीति से विनाश करने के लिये अपने शस्त्र अस्त्र शत्रु के शस्त्रास्त्रों से अधिक उत्तम, अधिक तीक्ष्ण और अधिक मारक चाहियें। शत्रु के नगर तोड़ कर सब शत्रु की प्रजा को असमर्थ करना आवश्यक है। नगर तोड़ने से शत्रु के नागरिकों की अवस्था कैसी संकट पूर्ण होती है विचार करने से पाठक सब जान सकते हैं।

अपने प्रखर अस्त्र वज्र जैसे शत्रु सेना पर भेजने चाहियें। जिस से शत्रु सेना घबराट में पड़ जाय। शत्रु सेना की जितनी घबराट हो सकती हो, उतनी घबराहट करनी चाहिये। विजय प्राप्त करने में इस प्रकार की घबराहट करना अत्यन्त आवश्यक है। युद्ध करने की यही कुशलता है। किस समय क्या करना चाहिये उस समय वह करना ही चाहिये।

अपनी बुद्धि का समय पर उपयोग करना चाहिये। इतना करने से विजय प्राप्त हो सकती है।

युद्ध का वर्णन करने वाले मंत्रों का एक एक शब्द और एक एक वाक्य बड़ा महत्व का होता है। उस के यथार्थ ज्ञान से युद्ध की नीति मालूम होती है। जिस का आचरण करने से निःसंशय विजय की प्राप्ति होता है।

आप्त पुरुष श्री कृष्ण जी का शिक्षाप्रद जीवन

(पृष्ट ६ का शेष)

पाठक :—देखा आप ने महर्षि के हृदय में श्री कृष्ण जी के लिए कितना आदर है और उन पर जो मिथ्यादोष पुराणों ने लगाए हैं उन से वे कितने दुखी है। आर्य समाज अपने पूज्य प्रवर्त्तक की भांति श्री कृष्ण जी को आप्त पुरुष जो 'धर्मात्मा, कपट छलादि दोषों से रहित, सब विद्याओं से युक्त, महायोगी और सब मनुष्यों के सुखी होने के लिये सत्य, का उपदेश करने वाले होते हैं। जिन में लेश मात्र भी पक्षपात और मिथ्याचरण नहीं होता मानता है और इसी रूप को संसार के सामने प्रस्तुत करता है।

आइये हम भी कृष्ण जन्म पर उन के इसी रूप का मनन पूर्वक स्वाध्याय करें और इन उत्तम गुणों को अपने अन्दर धारण करने का सतत प्रयास करें।

आर्य कन्या महा विद्यालय बड़ौदा

आर्य जगत को इस समाचार से प्रसन्नता होगी कि गुजरात सरकार ने आर्यकन्या महाविद्यालय बड़ौदा को शुद्ध आयुर्वेद महा विद्यालय तथा व्यायाम महाविद्यालय निकालने की अनुमति प्रदान की है।

तदनुसार ता १५ जुलाई को दोनों महाविद्यालयों का प्रारंभ हो गया है। इन दोनों महाविद्यालयों में S. S. C. (मैट्रिक) पास अथवा आयुर्वेद महाविद्यालय में संस्कृत के साथ उत्तीर्ण बहिनें हो ली जावेंगी। आयुर्वेद का पाठ्यक्रम पांच वर्ष का है और पांच वर्ष के पश्चात— आयुर्वेद प्रवीण की पदवी मिलेगी। आर्यकन्या व्यायाम महाविद्यालय का पाठयक्रम दस मास का है इस में प्रवेश पानेवाली छात्राओं को आश्रम में रहना आवश्यक है।

सब प्रान्तों की कन्यायें इस महाविद्यालय में प्रवेश पा सकेंगी शिक्षण का माध्यम हिन्दी तथा गुजराती है। निवेदिका

यशोदा कुमारी आचार्या

वैदिक साधन-आश्रम, तपोवन (देहरादून)

तपोवन देहरादून ट्रस्ट कमेटी की एक आवश्यक बैठक श्री जय राम सिंह जी के सभापतित्व में तपोवन आश्रम में ११ अगस्त को सम्पन्न हुई, जिस में सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि तपोवन में वैदिक साहित्य विद्यालय का स्थापना को जाय जिस में वेद से लेकर आधुनिक काल के आवश्यक ग्रन्थ (जिस में परलोक सुधार की बातें हो) पढ़ाये जायें। इस विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने वालों के खान पान का सुप्रबन्ध तपोवन ट्रस्ट की ओर से होगा, पठन पाठन भी निशुल्क होगा, अच्छे स्वास्थ, सात्विक स्वभाव वाले ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, तथा सन्यासी इस में प्रविष्ट हो सकेंगे। श्री पं. अमरसिंह जी आर्य पथिक इस विद्यालय के आचार्य नियत हुए हैं, ब्रह्मचारी बलदेव जी संस्कृत पढ़ाने के अतिरिक्त योगज्ञान और प्राणायाम भी सिखलाया करेंगे। जो महानुभाव वैदिक साहित्य विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करना चाहें वह अपने प्रार्थना पत्र पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी तपोवन देहरादून के नाम शीघ्र भेज दे जिस में वह यह बातें अवश्य लिखें—आयु, पढ़ाई, स्वभाव।

तपोवन में अब कविराज हरनाम दास जी बी.ए. ने अपना जीवन अर्पण कर दिया है, अपं का अधिक समय कविराज जी तपोवन आश्रम में निवास किया करेंगे। तपोवन में साधक लोग दूर दूर से आ रहे हैं। यहां निवास तथा भोजन का सारा प्रबन्ध है।

शीघ्र ही यहां से मासिक पत्र 'तपोवन' प्रकाशित होना आरम्भ हो जायगा भवदीय

डा. आनन्द देव स्वामी

प्रबन्धक तपोवन

आप्त पुरुष श्रीकृष्णजी का शिक्षाप्रद जीवन

(ले०—श्री ओमप्रकाश जी महोपदेशक प्रादेशिक सभा)

(गतांक से आगे)

आज हमारे प्रांत और समूचे राष्ट्र मे जो कुछ हो रहा है वह उस से सर्वांश मे नहीं तो अधिकांश में उलटा हो रहा है। विरोध अपनी स्वार्थ सिद्धि या निजकी शत्रुता को सामने रख कर छिपा जाता है इसी से राष्ट्र में विघटनकारी तत्व उभरते जा रहे हैं। श्री कृष्ण जन्म पर इस उच्चादर्श की ओर हम सब को ध्यान देना उचित है।

'आस्तिकता'

महाराज आस्तिक भी उच्च कोटि के थे। संध्या, अग्निहोत्र, नियमित रूप से किया करते थे प्रणव का जाप भी आप बड़े प्रेम से करते थे। महाभारत में आता है कि जब दुर्योधन आदि को समझाने के लिए श्रीकृष्ण चन्द्र जी हस्तिनापुर की ओर चल पड़े तो मार्ग में सायंकाल हो गया। श्री कृष्ण रथ से उतर आए और संध्या करके रात वहीं विश्राम किया।

'अवतीर्य रथात् तूर्णं कृत्वा शौच यथाविधि .

रथमोचनमादिश्य सध्यामुपविवेशह ॥

उद्योग० ३,२१

प्रातः काल भी इसी प्रकार :—

कृतोदकानुजप्य स हुताग्नि. समलकृत।

ततश्चादित्यमुद्यन्त उपातिष्ठत माधवः॥

उद्योग० ९३।६॥

स्नान के पश्चात् जाप करके उसने अग्नि होत्र किया। फिर समलंकृत होकर आदित्य के उदय। पर सन्ध्या वन्दन किया।

क्या हम कृष्ण के मानने वाले इसी प्रकार सध्या अग्नि होत्र करते हैं? हमने तो शायद ऐसा समझ लिया है कि हमारे लिए सध्या अग्नि-होत्र श्री कृष्ण कर गए है हमें करने-धरने की कोई आवश्यकता नहीं।

यदि श्री कृष्ण सदृश सच्ची प्रभुभक्ति हममें होती, तो हमारा जीवन कितना ऊंचा होता, यह बताने व लिखाने की बात नहीं!

ब्रह्मचर्य

आज तो आश्रम व्यवस्था समाप्त-सी हो चुकी है परन्तु जब इसका प्रचलन था उस समय २४, ३६ और ४८ वर्ष तक के ब्रह्मचर्य को धारण करने की व्यवस्था बांधी गई थी, जो आजीवन इस व्रत को निभा सकते थे उन्हें पूरी स्वतन्त्रता थी परन्तु अन्यों को दूसरे आश्रम गृहस्थ में प्रवेश करना होता था। ब्रह्मचर्य काल मे संयमी रहना मुख्य धर्म था परंतु गृहस्थ मे संयम के साथ-साथ त्याग पूर्वक भोग भोगने की छूट भी रहती थी ब्रह्मचर्य के व्रत को पालना बड़ा कठिन है परन्तु बन जाने के पश्चात् पति-पत्नि एक ही स्थान पर रहकर निरन्तर बारह वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचारी और संयमी रहे यह एक अनोखी बात है जो आज के युग मे रहने वालों के लिए कल्पना के अतिरिक्त कुछ भी नहीं, क्योंकि आज हम इतना नीचे चले गये हैं कि इस प्रकार के ब्रह्मचर्य की कल्पना नहीं कर सकते। जिस चाल से हम चल रहे हैं यदि इसकी दशा और गति में परिवर्तन न किया गया और वह भी ठीक ढंग से तो वह समय दूर नहीं जब हम महर्षि दयानन्द, स्वामी रामनाथ, स्वामी विवेकानन्द आदि महान व्यक्तियों के अस्तित्वको भी काल्पनिक कहने लगेंगे। अस्तु।

महाभारत के सौप्तिक पर्व में श्री कृष्ण जी ने कहा है :—

ब्रह्मचर्यं महद् घोर चीर्त्वा द्वादश वार्षिकम् ।

हिमवत् पार्श्व मास्थाय यो मया तपसार्जित ॥

समानव्रत् चारिण्या रुक्मिण्या योऽन्वजायत ।

सनत्कुमारस्तेजस्वी प्रद्युम्नो नाम मे सुत ॥

हिम मण्डित गिरि गुहाओ मे निरन्तर बारह वर्ष तक मैं और मेरे समान व्रतों का पालन करने वाली मेरी पत्नी रुक्मिणी ने निरन्तर बारह वर्ष ब्रह्मचर्य का पालन करके सनतकुमार के समान तेजस्वी जिस पुत्र को प्राप्त किया उसका नाम प्रद्युम्न है। जो कि मेरा प्यारा है।

श्री कृष्ण जी के संयमी होने का इससे बढ़कर क्या प्रमाण प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐसे सदाचारी महामानव पर यदि कोई पर-स्त्री-गामी-बहु-पत्नी धारी और चोर-जार होने का दोष लगाए तो उसे आर्य सभ्यता और संस्कृति का निन्दक ही मानना चाहिए।

प्रायः पौराणिक विद्वान् जिन के सामने अपने स्वार्थ के अतिरिक्त कोई बात नहीं होती जन साधारण में भ्रांत विभ्रम उत्पन्न करते रहते हैं कि आर्य समाज श्री कृष्ण जी को नहीं मानता अपितु उन की निन्दा करता है। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द जी के बारे में भी यही बात कही जाती है कि वे देवी-देवताओं की और अपने महापुरुषों की निन्दा करते थे अतः हम पाठकों के समक्ष श्री कृष्ण जी के सम्बन्ध मे महर्षि जी के क्या विचार थे इसे उन के शब्दों मे ही प्रस्तुत करते हुये निर्णय का भार पाठकों पर ही छोड़ते हैं—

'देखो! श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत मे अत्युत्तम है। उन का गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिस में कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित दोष लगाए है। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रास मण्डल, क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्री कृष्ण जी में लगाये हैं इस को पढ़ पढ़ा सुन सुना के अन्यमत वाले श्री कृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्यों कर होती॥

सत्यार्थ प्रकाश समु० ११

इसी समुल्लास मे 'नर्सीमहता' की हुंडी वाली बात को मिथ्या बताते हुये कहा 'किसी साहूकार ने रुपये दे दिये होंगे। किसी ने झूठा नाम उड़ा दिया होगा कि श्री कृष्ण ने भेजे। जब सम्वत १९१४ के वर्ष में तोपों से मन्दिर मूर्तियां अङ्गरेजों ने उड़ा दी थी तब मूर्ति कहां गई थी? प्रत्युत बाघेर लोगों ने जितनी वीरता की और लड़े शत्रुओं को मारा परन्तु मूर्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी।

जो श्री कृष्ण के सदृश कोई होता तो इन के धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते'।

(शेष पृष्ठ ५ पर)

आर्य प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

गुड़गांवां मे वेद प्रचार सप्ताह

गुड़गांवा में वेद प्रचार सप्ताह ५ से १२ अगस्त तक समाज मन्दिर माडल टाऊन में बड़े समारोह से मनाया गया। नगर की सब समाजों तथा प्रतिष्ठित नागरिकों की ओर से प्रिंसीपल श्री रलाराम जी प्रधान आय प्रादेशिक सभा का हार्दिक स्वागत किया गया और उनके सम्मान में पार्टी दी गई। इस अवसर पर सभा प्रधान जी का प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। साथ ही पं. वासुदेव जी विद्या लंकार, पं. आर्येन्द्र जी, पं. जयदेव जी उपदेश, और श्री राजपाल मदन मोहन चिश्टा मंडली के मनोहर भजन हुए।

खन्ना मे वेद सप्ताह

आर्य समाज खन्ना की ओर से वेद सप्ताह और जन्माष्टमी उत्साह पूर्वक मनाई गई जिसमें पं० चन्द्रसैन जी की कथा और मा० ताराचन्द्र के भजन होते रहे। प्रात. काल पारिवारिक सत्संग होता था। जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

आर्य समाज चडीगढ सैं० ८ में वेद प्रचार सप्ताह

चंडीगढ़ सैक्टर आठ में वेद प्रचार सप्ताह ५ अगस्त से १२ अगस्त तक डी. ए. वी. कालिज में श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज की प्रधानता मे मनाया गया। श्री प्रिन्सीपल त्रिलोकी नाथ जी ने स्वागत भाषण दिया तथा श्री प. नानक चन्द्रजी का सार गर्भित भाषण हुआ स्थापति पद से भाषण देते हुए स्वामी जी महाराज ने डी. ए. वी कालिजों और स्कूलों से चीन के आक्रमण के समय बलिदान देने की अपील की। १२-८-६३ को श्री कृष्ण जन्मोत्सव प्रि० त्रिलोकीनाथ जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। जिसमें श्री शम्भूलाल जी पुरी तथा प्रो. धवन जी के भाषणों के के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।

आर्यसमाज पुरानी मण्डी जम्मू

५ अगस्त से १२ अगस्त तक वेद प्रचार सप्ताह और कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व समाज मन्दिर में बड़े उत्साह से मनाया गया। प्रात: प्रतिदिन यज्ञ वा कथा से कार्यवाही आरम्भ होती थी। नागरिक जनता बड़ी श्रद्धा से सम्मिलित होती रही। पूर्णाहुति का दृश्य तो अति दर्शनीय था। यज्ञ शेष वितरण हुआ। समाज के प्रधान, मंत्री व अन्य कार्यकर्ताओं का प्रेम व लगन वर्णनातीत है। आर्य समाज के पुरोहित श्री हरिश्चन्द्र जी शास्त्री ने रुचि के साथ इस सप्ताह को पूर्ण किया। ऋषि लंगर की आयोजना की गई थी जिस में नगर के स्त्री पुरुषों ने भोजन पाया। इस का सारा प्रबन्ध श्री ओम प्रकाश जी खन्ना व श्री मुलखराज जी मैनेजर कन्या पाठशाला ने बड़ी उतमता से किया। सभा को वेदप्रचारार्थ विपुल धन राशि प्राप्त हुई।

आर्य समाज लक्ष्मणसर (अमृतसर)

५ अगस्त से १२ अगस्त तक समाज मंदिर में प्रतिदिन प्रात: वेद सप्ताह का कार्यक्रम चलता रहा। श्री पं. ओम प्रकाश जी महोपदेशक सभा की प्रतिदिन वेद कथा होती रही। नागरिक जनता ने पूर्ण उत्साह प्रकट करते हुए श्रद्धा और भक्ति के फूल चढ़ाए। सभा को २००/- वेद प्रचारार्थ प्राप्त हुआ।

आर्य समाज बाढ़ (पटना)

५. ८. ६३ से १२. ८. ६३ तक वेद प्रचार सप्ताह सफलता से समाज मन्दिर में सम्पन्न हुआ। प्रतिदिन प्रात.काल दैनिक सत्संग, यज्ञ, हवन, तथा संध्या समय वेद प्रवचन प्रार्थना, और गायत्री जाप का कार्यक्रम नियमानुसार चलता रहा। श्री देवेन्द्र कुमार जी श्री शिव नंदन प्रसाद जी आदि सज्जनों के पुरुषार्थ से यह सप्ताह सफल रहा।

आर्य व्यायाम शाला शान्ति नगर (सोनीपत)

में आर्य प्रादेशिल सभा के भजनीक श्री ठा. दुर्गासिंह जी के २७ जून से ३ जौलाई तक वेद प्रचार भजनों के रूप में होता रहा। अनेक स्त्री पुरुषों ने वैदिक धर्म से प्रभावित हो कर सदस्यता स्वीकार की।

आर्य समाज दयालपुरा (करनाल)

मे वेद सप्ताह बड़ी धूम धाम से मनाया गया। तथा १२-८-६३ को राम लीला मैदान में कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व मनाया। जिस में श्री ठा० दुर्गासिंह जी तूफान, के भजनोपदेश होते रहे। हजारों की संख्या में स्त्री पुरुष प्रभावित हुए।

आर्य समाज मण्डी (हिमाचल)

मे वेद सप्ताह के सम्बन्ध में श्री पं. त्रिलोक चन्द जी शास्त्री तथा पं. हजारी लाल जी भजनोपदेशक के ता. ३० जुलाई से लेकर १२ अगस्त तक निरन्तर कथा होती रही। मण्डी के सज्जनों और देवियां में धर्म की बड़ी भावना है। समाज का काम बड़ा सुन्दर है। रक्षा बन्धन तथा जन्माष्टमी पर्व समारोह से मनाये गये। इस अवसर पर भक्त ईश्वर दास जी ने स्वर्ण भस्मों के रूप में सभा वेद प्रचार कोष में पुष्कल राशि प्रदान की तथा मण्डी समाज एवं सज्जनों की ओर से मार्ग व्यय के अतिरिक्त २००) सभा को दान मिला—

आर्य समाज लारेंस रोड (अमृतसर)

श्री. पं. खुशी राम जी अधिष्ठाता सभा वेद प्रचार को आर्य समाज लारेंस रोड अमृतसर में अमृत कथा हो रही है। साथ ही ठा. दुर्गासिंह जी तूफान के मधुर भजन भी होते हैं। नगर की जनता दैनिक रूप से बड़ा ही लाभ उठाती है। कथा प्रवाह का बड़ा आनन्द है।

आर्य समाज जोगिन्द्र नगर

में पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री की कथा तथा पं. हजारी लाल जी के भजन होते रहे। नगर की जनता ने बड़ा लाभ उठाया। स्त्री समाज की बहिनों में उत्साह है।

खुशीराम शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता

आवश्यक निवेदन

भारत विभाजन से पूर्व लाहौर से प्रकाशित होने वाले 'प्रकाश' पत्र की फाइल की आवश्यकता है। पत्र में स्वामी आत्मानन्द जी महाराज (पं. मुक्तिराम जी उपाध्य) के लेख प्रकाशित होते रहे हैं निकट भविष्य में छपने वाले स्वामी जी के जीवन-चरित्र के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे। जिन सज्जनों के समीप 'प्रकाश' पत्र सुरक्षित रखे हों, हमें सूचित करने की कृपा करें। —वेदानन्द वेदवागीश गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

चुनाव

आर्यकुमार सभा हांसी

प्रधान—ब्र. चेतन प्रकाश जी आर्य, उपप्रधान—ब्र. कृष्ण कुमार जी आर्य, मन्त्री—ब्र. प्रेम प्रकाश जी आर्य, उपमन्त्री—ब्र. विनोद कुमार जी आर्य, पुस्तकाध्यक्ष—ब्र० सोहनलाल जी, ब्र. सुदेश कुमार जी कोषाध्यक्ष—ब्र० वेदपाल जी आर्य सम्मान्य सदस्य ७४ हैं।

ब्र. प्रेमप्रकाश जी मन्त्री
आर्य कुमार सभा हांसी

आर्यसमाज रामगढ़ (मसीह गढ़) का चुनाव

प्रधान—श्री विद्या सागर जी, उपप्रधान—(१) श्री डा. राजेन्द्र नाथ जी (२) प्रिंसिपल शांति स्वरूप जी चोपड़ा, (३) पं॰ रुचिराम जी शर्मा।

मन्त्री—श्री लक्ष्मणदेव जी मलहोत्रा, उपमन्त्री—(१) श्री ओम् प्रकाश जी कथु, (२) श्री ओमप्रकाश कालड़ा, (३) श्री रिच्छपालसिंहजी।

कोषाध्यक्ष—श्री दयाराम जी।
पुस्तकाध्यक्ष—श्री हुकमसिंह जी
निरीक्षक—श्री गुरदत्त जी।

उपसभा ...

सभा का वार्षिक अधिवेशन रविवार तिथि २८-७-६३ को आर्य समाज मन्दिर मार्ग में हुआ, इसमें १५० प्रतिनिधियों ने भाग लिया अगले वर्ष के लिए निम्न लिखित अधिकारी चुने गए।

प्रधान :—ला. भगवानदास पुरी उप प्रधान :—प्रि. हरिश्चन्द्र, रूप लाल, गणपत राय तलवाड़ मंत्री.— राज कुमार सेठ उप प्रधान :— राम नाथ सहगल दरबारी लाल विश्म्भर नाथ कोषाध्यक्ष :—प्रि. रामदास अडीटर :—मेहरचन्द पुरी

निवेदक :—
राम नाथ सहगल उपमंत्री

पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद् रोहतक

प्रधान—पूज्य स्वामी वेदानन्द जी, उपप्रधान—महाशय आशानंद जी, श्री करतारसिंह एम. ए., धर्मपाल ... बी. टी. मंत्री—प्रो. रघुवीर- ... ट्यूटोरियल कॉलेज रोहतक ... मंत्री—प्रो. रामप्रकाश डी. ए. वी. कॉलेज ... धर्मपाल जी संगठन मंत्री—धर्म वीर जी देहली प्रचार मंत्री—केदारसिंह जी आर्य

साहित्य मन्त्री—जयदेव जी एम.ए. कोषाध्यक्ष—सूर्यभानु जी overseer लेखा निरीक्षक—मानंदपर जी विद्यार्थी। —रामप्रकाश मन्त्री

प्रतिष्ठित सदस्य

पूज्य स्वामी सुरेन्द्रानन्द जी, श्री वीरेन्द्र जी बाबू बृज लाल जी, गुप्ता, जगदीश चन्द्र M.L.C. विद्यार्थी स्वामी भीष्म जी हिसार, श्यामलाल एम. ए. राम कुमार एम.ए.,चन्द्रदेव जी देहली

आर्यसमाज गोरेगांव बम्बई

(१) श्री दीवानचन्द जी साहनी (प्रधान) (२) श्री देसराज साहनी (उपप्रधान) (३) श्री रघुनाथ जी (मन्त्री) (४) श्री प्रभुदयाल जी मलिक (कोषाध्यक्ष) (५) श्रीमती सुशीला साहनी (पुस्तकाध्यक्ष) (६) श्री निरसिंह देवजी मखीजा (हिसाब निरीक्षक)।

ता० २८-७-६३ से वेद सप्ताह मनाया गया—जिस के सम्बन्ध में हर रोज प्रातः यज्ञ और रात्रि को पं० सोमदत्त जी विद्यालंकार के वेद पर प्रवचन होते रहे जिन को जनता ने बहुत पसन्द किया।

श्रावणी महोत्सव भी ता० ५-८-६३ को बड़े उत्साह से मनाया गया।

भवदीय—रघुनाथ (मन्त्री)

आर्य समाज लक्ष्मणसर (अमृतसर)

प्रधान—श्री प. रुद्रदत्त जी शर्मा उप-प्रधान—श्री बाबू बृजलाल जी, श्री गंगा राम जी, श्री जगदीश राज जी।

मन्त्री—मास्टर तेलू राम जी
उपमंत्री—श्री हंसराज जुनेजा जी, श्री ब्रह्म दास जी।

कोषाध्यक्ष—श्री मदन गोपाल अरोड़ा ओडीटर, आय, व्यय निरीक्षक, श्री मास्टर मेहरचन्द्र जी।

पुस्तकाध्यक्ष—श्री रमेश चन्द्र जी

अन्तरंग सभासद—श्री राज कुमार जी, श्री पृथ्वी राज जी, श्री प्रभु दयाल जी, श्री जस्सा राम जी श्री ध्यान दास जी,

मन्त्री तेलू राम

आर्य युवक समाज लेखराम नगर कादियां

संरक्षक—सुभाषचद्र दत्ता प्रधान—अमृतलाल आर्य उपप्रधान—अशोककुमार सेठ, मंत्री—नरेन्द्र-कुमार आर्य, उपमन्त्री—सुरेन्द्र-कुमार भण्डारी, प्रचारमंत्री—रवींद्र-कुमार आर्य पुस्तकाध्यक्ष—करनैल-सिंह विद्यार्थी, उपपुस्तकाध्यक्ष—अरुणकुमार आर्य, कोषाध्यक्ष—नरेश कुमार आर्य, उपकोषाध्यक्ष—वेदप्रकाश आर्य अन्तरग के बाकी सदस्य रमेश जी 'जीवन' दयानंद राजेन्द्र जिज्ञासु सृष्टिपाल आर्य अविनाशचन्द्र दत्ता सुभाषचन्द्र सुधाकर बराम्बर दास आर्य जनक-राज आर्य सत्यपाल आर्य सुरेन्द्र-कुमार आर्य। निवेदक :—मन्त्री

शोक प्रस्ताव

डी.ए.वी. H/S स्कूल गुरदासपुर

१४-८-६३ को स्कूल स्टाफ की एक विशेष बैठक में श्री देव राज भण्डारी मैनेजर डी.ए.वी. गर्ल्ज स्कूल गुरदास पुर के आकस्मिक निधन पर महान शोक प्रकट किया और उन की दुखी संतप्त परिवार से सहानुभूति प्रकट करते हुए सर्व शक्ति मान प्रभु से विगत आत्मा को अपने चरणों में स्थान और परिवार को शान्ति देने की प्रार्थना की गई।

मुख्याध्यापक डी.ए.वी स्कूल
गुरदास पुर

यज्ञेन यज्ञम् (पृष्ठ २ का शेष)

आत्मनात्मनमन्विच्छेन्मनो बुद्धिन्द्रियै र्यतैः। विदु० २/६४
मनीषी मनसा विप्रः पश्यत्यात्मानमात्मनि॥ महा. शांति पर्व अ.२३६/१५

अत: इन प्रमाणों के अनुसार, मन्त्र के प्रस्तुत भाग पर विचार करने से यह स्पष्ट ही सिद्ध हो जाता है कि परमेश्वर के साक्षात्कार के लिए प्रत्येक को भौतिक इन्द्रियों का सहारा छोड़कर (क्योंकि प्रभु भौतिक पदार्थ नहीं है, भौतिक से ही भौतिक वस्तु की प्राप्ति हो सकती है) अन्तःकरण अर्थात् विशेष ज्ञान का अवलम्बन लेकर स्व आत्म स्वरूप के द्वारा परमात्मा के साक्षात् का अपनी हृदय गुहा में प्रयास करना चाहिए। क्योंकि व्यास जी ने वेदान्त दर्शन में स्पष्ट रूपेण निर्देश किया है "गुहां प्रविष्टावात्मानौ हितदर्शनात्" वेदा० १/२/११ हृदय गुहा में दोनों आत्मायें विराजमान हैं अतः उनके दर्शन वहीं पर ही होते हैं। ऐसी ही 'अंगुष्ठमात्र' इत्यादि उपनिषदों के वचनों से भी प्रमाणित होता है।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टेलीफोन नं० २०४५ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३५ | रविवार १६ भाद्रपद २०२०... १ सितम्बर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ | तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

आ यद्य स्तेन आयाति

जो भी आज चोर बनकर आता है या आएगा। चोरी का भाव ले कर जो भी कोई यहा मेरे पास या मेरे राष्ट्र में आने का साहस करेगा। चुराने को आएगा।

स संपिष्टो अपायाति

वह कान खोलकर सुन ले कि ऐसा दुष्ट चोर मेरी शक्ति से पीसा कुचला हुआ बचकर नहीं जा सकता या मार खाकर ही भाग जाएगा। उसे कुचलने की शक्ति मेरे में है।

मा अप वेन:

हे वीर! तू अपने को तुच्छ मत जान। अपने को निर्बल मत समझ। अपनी शान मत बिगाड़। तू तो वीर है, शूरता से भरा हुआ। अपने आप को कायर मत समझ। शूर बनकर शान बनाए रख।

अथर्ववेद

वेदामृत:

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरद: शतं जीवेम शरद: शत शृणुयाम शरद: शतं प्रब्रवाम शरद:, शतमदीना: स्याम शरद: शतं भूयश्च शरद: शतात्॥ यजु: अ० ३६ मन्त्र २४

अर्थ—हे प्रभो! (तत्) वह (चक्षु) नेत्र सर्वदर्शी नेत्र (देवहित) सब का हित करने वाले नेत्र हो। (पुरस्तात्) अनादि समय से (शुक्रम) शुद्ध पवित्र (उच्चरत) सर्व व्यापक हैं। आप विश्व के अनादि नेत्र हैं, सर्वव्यापक तथा हितकारी हैं। (पश्येम) हम देखते रहें (शरद शतम) सौ साल (जीवेम) जीते रहें (शरद: शत) सौ वर्ष (शृणुयाम) सुनते रहें (शरद: शतं) सौ वर्ष तक और (प्रब्रवाम) बोलते रहें (शरद: शतम) सौ वर्ष तक (अदीन: स्याम) किसी के दीन आधीन न हों (शरद: शत) सौ वर्ष तक (भूयश्च) इस के बाद भी (शरद: शतात्) सौ वर्ष से अधिक भी जीवन पायें।

भाव—परमपिता परमेश्वर! आप सारे विश्व के अनादि, सनातन, दिव्य नेत्र हो। सर्व दर्शी हो। कृपा करो कि हम सौ वर्ष तक जीते हुये देखें, सुनें, उत्तम वाणी बोलते रहें। अदीन न हो स्वस्थ रहें। सौ वर्ष से अधिक भी जीवन पाकर इसी प्रकार अपने शरीर तथा इसके सारे अंगों से दूसरों की सेवा, परोपकार के कार्य में ही लगे रहे। सौ वर्ष से पूर्व न जावें—सं.

पाक और चीनी सेनाओं के जमाव के दृष्टिगत शिथिलता आत्मघातक होगी

मुख्यमन्त्री श्री प्रतापसिंह कैरों की चेतावनी

फिरोजपुर ३१ अगस्त—मुख्य मन्त्री श्री प्रतापसिंह कैरों ने कल यहा से ४० मील दूर स्थित गांव कोकरी में आयोजित एक विराट प्रतिरक्षा सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहाकि पाकिस्तानने पश्चमी सीमा पर ५० हजार सेना जमा कर रखी है जबकि चीनने हमारा उत्तरी सीमा पर अढ़ाई लाख से भी अधिक सेना ला खड़ी की है।

उन्होंने कहा कि इन दोनो देशों के भारत के प्रति इरादे किसी से छिपे हुए नहीं। ऐसी स्थिति में भारत की प्रतिरक्षा सम्बन्धी गतिविधियों में किसी प्रकार की ढिलाई न केवल अदूरदर्शितापूर्ण बल्कि आत्मघातक होगी। ऐसे गम्भीर संकटकाल में देशवासियों में विशेषतया पंजाब के लोगों मे गुटबन्दी खेदजनक है।

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शा

अध्यात्मवाद—

ओम् उपासना की विधि

(श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज सरस्वती)

अध्यात्मवाद जीवन में कितनी मस्ती भर देता है? यह वही जान सकते हैं जिन्होंने इस रसीली दुनिया में पग रखा है। यह कितना मीठा, स्वादु परमरस है—यह भी वही जानते हैं, जिन्होंने इस का रसीला प्याला पिया है। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी स्वयं भी यह परम रस का प्याला पीते हैं तथा दूसरों को भी पिलाते रहते हैं। आर्य जगत के पाठक इस परमरस का श्री. महात्मा जी के रसीले शब्दों में ही स्वाद लेवें—सं.

प्रश्नोपनिषद् में सत्यकाम ने महर्षि पिप्पलाद से जब सुना कि ओम् का ध्यान करने से मनुष्य को सब कुछ मिल जाता है, तो उसने कहा—महाराज! आप को बात सुन ली, समझ ली। परन्तु यह तो बताईये कि ओम् का जाप—ओम् का ध्यान करना कैसे होगा? महर्षि पिप्पलाद बोले—सुनो सत्यकाम! यह जो अक्षर ओम् है, इस में तीन मात्राएं हैं। तीन मात्रा से ही इसका जाप और ध्यान होता है। तीन मात्राएं हैं। अ-उ-म्। परन्तु तीन मात्रा के जाप करने का यह अर्थ नहीं कि पहले अ का जाप करते रहो, फिर उ का और तब म् का। नहीं यह अर्थ नहीं। तीन मात्रा से जाप करने का तात्पर्य क्या है? यह भी सुनिए। एक मात्रा से जाप का अर्थ है—ओम् की स्थूल शरीर के द्वारा उपासना। दो मात्रा से जाप का अर्थ है ओम् की मानसिक उपासना, और तीन मात्रा से जाप का अर्थ है ओ३म् की आत्मिक उपासना। अब यह भी सुनिये कि यह एक, दो और तीन मात्रा की उपासना होती किस प्रकार है? एक मात्रा से ओम् की उपासना करने की विधि यह है कि ईश्वर का थोड़ा ध्यान कर के ग्रीवा और कमर को सीधा कर के सुखासन, पद्मासन या सिद्धासन में बैठ जाइये। आंखें पूरी नहीं थोड़ी मून्द लीजिये और तब ऊंचे स्वर में ओम् का जाप कीजिए। देखिए यह शारीरिक जाप है, अतः दिखाना कठिन नहीं। ओम् को आरम्भ कीजिए तो इस प्रकार कि ओं की ध्वनि आप के हृदय से आरम्भ होती है। तब ऊपर ले चलिए, इस ध्वनि को। ऐसा अनुभव कीजिए कि सारे संसार में, मैदानों में, खेतों में, मकानों, पर्वतों, मेघों, चन्द्रमा और सूर्य से ऊपर तारों सितारों एवं महामौर मण्डलों से भी परे तक प्रत्येक वस्तु इस ध्वनि से भर पूर होती जाती है। जहां भी यह ध्वनि पहुंचती है, वहीं ईश्वर है, वहीं उस की शक्ति। तब शनैः २ इस ध्वनि को नीचे लाइये और म् बोलते समय हृदय में समाप्त कर दीजिये। इस प्रकार ओम् का जाप कीजिए। यह एक मात्रा के जाप की एक विधि है। दूसरी विधि यह है कि ओष्ठ और जिह्वा मत हिलाइये नाक से जैसे गुनगुनाया जाता है। इसी प्रकार ओम् का उच्चारण कीजिए। इस प्रकार एक मात्रा के जाप से मनुष्य लोक में जो कुछ भी है, वह सब आप को मिलेगा। धन सम्पत्ति, भवन, शक्ति, शासन, परिवार, बेटियां बेटे, मोटरें घोड़े हाथी आदि। कई कह देंगे—चलो भाई! अब तो आनन्द हो गए। यह जाप तो बहुत सरल है। कर लेंगे यह जाप और फिर धन सम्पत्ति शासन और शक्ति सब कुछ मिलेगा। परन्तु सुनो! इतना सरल नहीं है यह कार्य। ऋषि कहता है कि एक मात्रा के जाप से मनुष्य लोक की प्रत्येक वस्तु मिलेगी। परन्तु इस शर्त के साथ मिलेगी कि पहले अपने अन्दर तप, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा उत्पन्न करो। तप का अर्थ है शारीरिक साधना। ब्रह्मचर्य का अर्थ है आत्मिक साधना। शरीर मन और आत्मा को ईश्वर के अर्पण करके ओम् की एक मात्रा का स्थूल शरीर से जाप करो। तो धन सम्पत्ति शक्ति और शासन प्रत्येक वस्तु मिलेगी। यह है एक मात्रा से जाप विधि। अब दो मात्रा से जाप करने की विधि सुनिए। एक मात्रा से जाप करने का अर्थ है स्थूल शरीर से जाप करना। दो मात्रा से जाप करने का अर्थ है—स्थूल शरीर को भूल कर शरीर के भीतर जाकर, सूक्ष्म शरीर में पहुंच कर वहां बाहर के ओष्ठ अथवा जिह्वा को हिलाये बिना हृदय में ओम् का जाप कीजिए।

इस शरीर में—बिल्कुल इसी रूपका पांच ज्ञानेन्द्रियों, पांच प्राण, पांच तन्मात्राओं, मन और बुद्धि १७ वस्तुओं का एक अंगूठे जितना सूक्ष्मशरीर है। इसे अंगुष्ठ शरीर भी कहते हैं। परन्तु अंगूठे के जितना या अंगुष्ठ शरीर करने का यह अर्थ नहीं है। दिखाई नहीं देता वह। सूक्ष्म शरीर है। हृदय के भीतर रहता है। ध्यान के द्वारा इस में प्रविष्ठ हो कर ओम् का जाप करना ही दो मात्रा का जाप है। इस जाप से, इस प्रकार ओम् की उपासना करने से मन को शान्ति मिलती है। सभी चिन्ताएं, सभी प्रकार के मानसिक कष्ट, क्लेश, दुःख संकट सब दूर हो जाते हैं। ऋषि कहते हैं कि दो मात्रा के जाप से भक्त सोमलोक में पहुंच जाता है। सोमलोक का अर्थ है चन्द्रमा। चन्द्रमा से मन का सम्बन्ध है। चन्द्रलोक में पहुंचने का अर्थ यह है कि मन में शीतलता और शान्ति आ जाती है इस शान्ति के कारण सब प्रकार की चिन्ताओं और कष्टों से मुक्ति पाता हुआ मन इस प्रकार चमक उठता है—जैसा पूर्णिमा का चन्द्रमा चमकता हो।

इस के बाद तीन मात्रा के जाप की विधि यह है कि दो मात्रा का जाप करते समय जिस प्रकार स्थूल शरीर को भुलाया था। उसी प्रकार अब सूक्ष्म शरीर को भी भुला दो स्थूल शरीर नहीं सूक्ष्म शरीर नहीं। सूक्ष्म शरीर के भीतर आत्मा को परमात्मा से मिला दो। तब ओम् का जाप न करो। ध्यान लगा कर अनुभव करो कि हृदय में स्वयमेव यह जाप हो रहा है। आत्मा परमात्मा में में मिल गया है। इस के मिलाप से ओम् की ध्वनि गूंज रही है। ध्यान लगाने पर यह ध्वनि सुनाई देगी। इसी को अजपा जाप कहते हैं। प्रयत्न नहीं करना पड़ता, स्वयमेव ओम् का जाप होता रहता है। इस प्रकार तीन मात्रा से ओम् की उपासना होती है। इस से आत्मिक आनन्द मिलता है।

महात्मा आनन्द स्वामी जी की कथा

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती अमृतसर पधार रहे हैं। आर्य समाज लोहगढ़ के महोत्सव से पूर्व ता. पहली सितम्बर रविवार से समाज मन्दिर में रात्री को अमृत कथा आरम्भ हो रही है। उसी तारीख से प्रातःकाल आर्य समाज लारेंस रोड में भी महात्मा जी उपदेशामृतपान करायेंगे। प्रातः व रात्रि दोनों समाजों में अमृत प्रवाह चलेगा। अमृतसर की जनता के सौभाग्य हैं—पूर्णलाभ उठायें।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, १ सितम्बर १९६३ [अंक ३५

दयानन्द यूनिवर्सिटी

अभी गत दिन अमृतसर में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्रीयुत रामगोपाल जी शाल वाले की विद्यमानता में एक आवश्यक अधिवेशन हुआ, जिस में अमृतसर के गण्यमान्य प्रमुख सज्जन सम्मिलित हुए। वहां दयानन्द विश्वविद्यालय की स्थापना का निर्णय पारित हुआ। यह समाचार किस के लिए आनन्ददायक न होगा। इस से पूर्व भी यह प्रश्न कितनी बार ही आर्यसमाज के विशेषकर शिक्षाविशारदों के सामने आ चुका है। आर्यसमाज को इस बात का बड़ा गौरव है कि उसके पास इस क्षेत्र में कार्य करने वाले बड़े ही अनुभवी, लब्ध प्रतिष्ठ तथा गम्भीर नेता हैं। शिक्षा के कार्य में तो यह समाज सारे देश का पुराने समय से सफल नेतृत्व करता चला आ रहा है। इस के स्कूलों, कालेजों, गुरुकुलों तथा विद्यालयों को तथा उनके शिक्षा कार्यों को देख कर अपने पराये सारे मस्तक झुका देते हैं। योग्य व्यक्तियों की योग्यता तो सारे राष्ट्र ने स्वीकार कर ली है। आज समाज में भारत के सुप्रीमकोर्ट के प्रथम चीफ जस्टिस श्री डाक्टर मेहर चन्द जी महाजन प्रधान दयानन्द कालेज प्रबन्धक कमेटी देहली, भारत के प्रसिद्ध फिलास्फर प्रिंसिपल दीवान चन्द जी एम० ए० कानपुर. पूर्व वायस चांसलर आगरा यूनिवर्सिटी, पुराने महारथी अनुभवी रायबहादुर दीवान बद्रीदास जी जालन्धर, विक्रम यूनिवर्सिटी उज्जैन के उपकुलपति डाक्टर गोवर्धन लाल जी दत्त, विश्वेश्वरानन्द रिसर्च वैदिक संस्थान जैसे विशाल केन्द्र के संचालक महान विद्वान् आचार्य विश्वबन्धु जी एम० ए० अनुभवी शिक्षाशास्त्री प्रि०सूर्यभानु जी वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी श्री आचार्य सत्यव्रत जी उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी, प्रिंसिपल भगवान दास जी, प्रिंसिपल प० रलाराम जी एम० एल० ए० होश्यारपुर, प्रि० देवीचन्द जी, प्रि० रामदास जी एम० ए०, प्रिंसिपल श्री भीमसेन जी बहल जालन्धर, प्रि० श्री बहादुर मल जी, आचार्य भगवद्दत्त जी, प्रिंसिपल ज्ञानचन्द जी भाटिया एवं प्रि० ग्रोवर सरीखे मूर्धन्य नेता विद्यमान हैं। कितनी बड़ी समाज के पास शिक्षण संस्थाएं हैं। सहस्रों छात्र हैं तथा लाखों का बजट है। इतना विशाल समाज का शिक्षा का कार्य हो और फिर अपना दयानन्द विश्वविद्यालय न हो। यह बात आरम्भ से ही मन में खटकती रही है। यही कारण है कि कई वार यह प्रश्न समाज के इन प्रमुख नेताओं के सामने आया है।

दयानन्द कालेज प्रबन्धक कमेटी देहली के प्रधान माननीय डाक्टर महाजन जी ने एक वार बड़े गम्भीर तथा दिल में प्रभाव डालने वाले शब्दों में अधिवेशन में कहा था कि मेरे जीवन में अनेक बड़ी २ इच्छाएं पूर्ण हुई। प्रभुकृपा से मैंने सब कुछ प्राप्त किया। कोई कमी नहीं है। धन, जन प्रतिष्ठा, दूध पूत सब कुछ मिला हुआ है। अब तो मन में एक इच्छा बाकी है। उसी की कमी है। चाहता हूं कि मेरे जीवन में वह पूरी हो जाये। और कुछ नहीं चाहता, केवल एक ही चाह शेष है—टंकारा का केन्द्र भी बन गया, अजमेर का ऋषिमेला भी होता है, गुरु विरजानन्द जी का मथुरा धाम भी बन जाएगा—एक प्रबल इच्छा है कि अब दयानन्द यूनिवर्सिटी भी बन जाये। डाक्टर महाजन जी की इस आंतरिक तड़प से अनुमान लगाया जा सकता है कि उनको इसकी कितनी चिन्ता है ? अमृतसर के इस अधिवेशन से बड़ी प्रसन्नता हुई है जिस मे दयानन्द यूनिवर्सिटी स्थापित करने का निर्णय किया गया है। जब सब की आंतरिक इच्छा हो, ऐसे २ शिक्षा-विशारदों का सहयोग मिला हो, सारा समाज अनुभव भी करता हो, आज इसकी इतनी आवश्यकता भी हो तो कोई कारण नहीं कि ऐसा पवित्र कार्य पूर्ण न हो सके। इसके लिए सारा समाज और सारी जनता बिना भेदभाव के ही हर प्रकार का तन मन धन का पूरा २ सहयोग देने को प्रस्तुत है। अब इस निर्णय को केवल कागज़ पर ही न रहने दिया जाये अपितु क्रियात्मिक रूप देने के लिए सारे प्रमुख नेताओं का एक विशेष अधिवेशन बुला कर इसका आरम्भ कर दिया जाये। प्रभु करें कि हम शीघ्र ही दयानन्द यूनिवर्सिटी का साकार रूप देख सकें—त्रिलोकचन्द्र

आर्यसमाज लोहगढ़

अमृतसर नगर में यह सभा का बड़ा पुराना, प्रसिद्ध आर्य समाज है। गत वर्ष इसके मान्य अधिकारियों ने जिस शान का जल्सा किया, उसने इस समाज की पुरानी परम्परा याद करा दी थी। इस बार इसका महोत्सव और भी धूम-धाम से मनाया जा रहा है। इसके प्रधान श्री ज्ञानी पिण्डीदास जी समाज के पुराने अनुभवी महारथी हैं। नगर में अपनी डी. ए. वी. संस्थाओं का विशाल जाल बिछा है। इस बार पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की उत्सव से पहले पहली सितम्बर को अमृत कथा आरम्भ है। म० राजपाल मदनमोहन चिमटा मंडली के भजन हैं। जल्सा विशेष समारोह से होगा।

अंडाहारी न बनाओ

स्कूली बच्चों को अण्डा दिये जाने की पंजाब सरकार की घोषणा पर पुन. लिख कर सरकार के अधिकारियों से कहना चाहते हैं कि अपने इस बच्चों को प्रतिदिन अंडा खिलाने के निर्णय को बदल कर दूध पिलाने का प्रबन्ध किया जाये। बच्चों को बालपन में सरकार अंडाहारी बना कर क्यों उनकी प्रवृत्तियों को बिगाड़ना चाहती है। सब को दूध दिया जाये ताकि बच्चों का स्वास्थ्य ठीक रहेगा वहां अंडाहार की प्रवृत्ति भी नहीं बनेगी। दूध पर तो सारी जनता सहमत है। —सं०

नमस्ते का अपमान

देहली के नयाबांस बाजार में ला० मूलचन्द मानिकचन्द जैन ने नमस्ते बीड़ी व्यापार चला रखा है, यह व्यापार कब से चल रहा है, इस का कोई पता नहीं चल सका, लाला ने यह समझ कर नमस्ते, एक सर्वप्रिय और सर्वव्यापी शब्द है, इसके साथ बीड़ी व्यापार को जोड़ कर लाभ उठाया जावे, वास्तव में बीड़ी व्यापारी लाला का यह कार्य सर्वथा खेदजनक तथा निन्दनीय है, क्योंकि नमस्ते आर्यों का और अब तो सभा शिष्टजनों का परस्पर शिष्टाचार व अभिवादन का शब्द है वेद तथा समस्त शास्त्रों में नमस्ते का विधान है, आर्यसमाज ने यदि किसी सिद्धान्त का विशेष प्रचार किया है तो वह नमस्ते ही है, जो कि सर्वत्र प्रसिद्ध हो गया है ऐसे नमस्ते शब्द के साथ बीड़ी का व्यापार सर्वथा निन्दनीय तथा भ्रष्टाचार है। आर्यसमाजें विशेषकर देहली की समाजें इस ओर विशेष ध्यान दें। —अमरनाथ वैद्य शास्त्री

स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी के त्याग, तपस्या, आदर्शजीवन, लोकसेवा, धर्मनिष्ठा, समाज साधना एवं सरलता के सामने आज भी सारे मस्तक झुका देते हैं महात्मा जी ने अपने जीवन काल में कितने गम्भीर प्रवचन दिये। उन का आज पुस्तक रूप में संकलन होता तो जनता को कितना लाभ पहुंचता। फिर भी उन के क्रमवार चार प्रवचन के रूप में संकलित बहुत पुरानी लगभग ५० वर्ष पुरानी पुस्तिका मिली है जो आर्यसमाज अनारकली लाहौर के पुस्तकाध्यक्ष जी की ओर से सम्वत १९६६ में प्रकाशित हुई थी जिस का नाम 'वैदिक धर्म प्रचार के साधन' है। यह चार कमवार भाषणों के संग्रह रूप में है। आर्यजगत के प्रेमी पाठकों के लिए उस उदात्त तपस्वी जीवन वाले महात्मा जी के वचनामृत का प्रसाद है —सं:

स्वर्गीय महात्मा हसराज जी के विशेष भाषण

वैदिक धर्म प्रचार के साधन

बुद्धधर्म कैसे फैला

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश में मन्तव्य अमन्तव्य का विषय लिखा है उस को लिख कर आप अपनी इच्छा प्रकट करते हैं कि परमात्मा करे कि यह सत्य धर्म जिसे वैदिक धर्म कहते हैं, ब्रह्माण्ड के कोने २ में फैले और सारे लोग इस को ग्रहण करें, ताकि वह सच्चे आनन्द की उपलब्धि कर सके यह वाक्य सत्यार्थ प्रकाश के अन्त में लिखा हुआ है। आर्य धर्म उन धर्मों में नहीं हो सकता कि जिन के मैम्बर यह समझ लें कि सन्ध्या करने के बाद हमारे कर्त्तव्य समाप्त हो जाते हैं। अथवा हवन करने और ऐसा ही अपना कोई और उन्नति का का काम करने के बाद इन की जिम्मावारी समाप्त हो जाती है। आर्य समाज के प्रवर्तक ने हर एक मैम्बर पर यह कर्तव्य लगा दिया है कि उसे केवल अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए। जहां तक वह वैदिक धर्म को अपने लेख द्वारा या पहुंचा मुख द्वारा सकता है, दूसरों तक पहुंचाये। इसी लिए यह धर्म ऐसा नहीं जिसे हम सीने में दबा कर चले आवें। प्रत्युत् हमें यह आज्ञा दी गई है कि हम इस को प्रकट करें और जो इस को नहीं जानते, उन को बतलाया जावे। हमारा परमकर्तव्य यह बतलाया गया है कि जिस प्रकाश से हम को प्रकाश मिला है, उस से दूसरों को ज्योतिमय बनावें। परन्तु ज्योति फैलाने की कौन सी विधियां हैं? इस के लिए आवश्यक है कि हम जगत् का इतिहास पढ़ें। जगत् का इतिहास जगत् का पुराना अनुभव है। उस में धार्मिक इतिहास है, उस पर हम को दृष्टि डालनी चाहिए। जिन कठिनाईयों और आपदाओं ने दूसरों के रास्ते में बाधा डाली और जो रुकावटें उन के प्रचार में बाधा डालती रहीं उन को हमें देखना है। उन के दूर करने के उपाय और आगे बढ़ने के तरीके मालूम करने हैं।

किस तरह हम इन कष्टों को दूर कर के अपना रास्ता निकाल सकते हैं और कैसे उसी मार्ग पर चलते हुए सफलता के स्थान पर पहुंच सकते हैं। इस को दो और व्याख्यानों में समाप्त करूंगा। आज सब से पहिले—बुद्ध मत का वर्णन करूंगा। यह सब से प्रथम मत है जिस ने वैदिक धर्म के अनन्तर उन्नति प्राप्त की। जो न केवल भारत वर्ष में प्रत्युत इस से बाहर भी और बहुत से देशों में फैला। यह मानी हुई बात है और बहुत से चिन्ह मिलते हैं, जिन से प्रकट होता है कि वैदिक धर्म ने संसार पर अपना अधिकार जमाया हुआ था। मुझे इस के विषय में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि यह प्रसिद्ध है और इस में तो कोई सन्देह ही नहीं कि वैदिक धर्म भारतवर्ष में बड़ा ही प्रबल रहा। परन्तु जैसा कि हर एक धर्म के साथ होता है, एक ऐसा समय आया कि इस के अनुयायियों ने इस के नियमों को भ्रम मूलक कर दिया। समय में बहुधा परिवर्तन हो ही जाता है। वास्तव में वैदिक धर्म में कोई भूल न थी। किन्तु बाद में इस के मानने वालों के आचार व्यवहार में भूलें उत्पन्न हो गईं। फिर यह आवश्यक था कि कोई इन भूलों को शोधने वाला उत्पन्न हो।

यदि आप शास्त्रों को देखें तो एक बात जो सब से प्रबल आप को प्रतीत होगी, वह यह है कि ऋषियों ने इन में यज्ञ की महिमा को बड़े विस्तार से लिखा है। मेरे विचार में उन्हों ने वेद मन्त्रों को ले कर उन के सूक्ष्म अर्थों पर विचार करने के अनन्तर देखा कि इन में कौन सी विद्या है। फिर जो तत्व इन को दृष्टिगोचर हुआ, उस को यज्ञों में रख कर लोगों का जीवन पवित्र बनानने के लिए इन को दे दिया। आजकल सभ्य संसार में एक प्रबल प्रश्न उत्पन्न हो रहा है और वह इस का उत्तर ढूंढने में असमर्थ हैं संसार में जितने बड़े लोग हैं वे विचार कर रहे हैं कि क्यों २ सभ्यता बढ़ती जाती है, लोग दुर्बल होते जाते हैं। इस में कोई सन्देह नहीं कि जितने साधन एक असभ्य या जंगली आदमी को नष्ट करने के लिए एक सभ्य आदमी के हाथ में हैं और किसी के पास नहीं। यदि थोड़े समय के लिए इन हथियारों और साधनों को छोड ता इस का यह फल होगा कि वह इन के बिना कुछ नहीं कर सकता। अब वह एक असभ्य से अधिक दुर्बल हो जाता है। तथा उससे अधिक अनर्थक (निकम्मा) प्रतीत होता है। यह स्मरण रहना चाहिए कि जिन लोगों के घरों में अमीरी आ जाती है, ऐश्वर्य बढ़ जाता है वह स्वयं ही आलसी हो जाते हैं।

गुरुकुल विद्यापीठ हरियाणा भैंसवालकलां (रोहतक) बाढ़ की लपेट में

१२ तारीख से १६ तारीख तक प्रतिदिन पानी बरसने के कारण बाढ़ आ गई है। गुरुकुल तथा उसके अनेक भवन जल मग्न हो चुके हैं। गुरुकुल एक टापू की शकल बन चुका है इस थोड़े से स्थान में ३०० ४०० व्यक्ति बड़ी कठिनता से निर्वाह कर रहे हैं। गुरुकुल के आवागमन के मार्ग सब बन्द हो चुके हैं। गुरुकुल के खेत भी सब पानी में डूब चुके हैं। जिस से चारे की अवस्था अस्तव्यस्त हो चुकी है। चक्कियां बन्द हो जाने से आटे की बड़ी कठिनाई पैदा हो गई है। ऐसी विकट परिस्थिति में सब दानी सज्जनों व गुरुकुल के प्रेमियों से, तथा सरकार से प्रार्थना है कि इस आड़े समय से धन वस्त्र अनाज आदि से गुरुकुल की सहायता करके पुण्य के भागी बनें।

मुख्याधिष्ठाता
गुरुकुल विद्यापीठ भैंसवालकलां

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हितकर कर्त्तव्य है

आचार्य भगवानदास जी का दिव्य सन्देश

(प्रेषक—श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु दयानन्द कालेज शोलापुर)

चार मास के लम्बे रोग के बाद स्वस्थ होकर प्रिंसिपल भगवान् दास जी एम. ए. दयानन्द कालेज शोलापुर ने कालेज में अपने विद्यार्थियों के समक्ष जो प्रथम भाषण दिया उसे हिन्दी में अनुवाद करके जगत् के प्रेमियों के लिए दिया जा रहा है—जिज्ञासु

प्रिंसिपल महोदय ने नये वर्ष के प्रथम दिवस पर कहा कि पुत्रों व पुत्रियों! पहले मैं कहा करता था कि यह अच्छा है कि आप यहां हैं अब मैं कहता हूं कि यह अच्छा है कि मैं यहां हूं। जनवरी मास में रुग्ण हुआ और हस्पताल में रहा। लोग नरक स्वर्ग की बातें करते हैं। मैंने अपने डाक्टर से कहा कि यदि मैं नरक में भी जाऊं तो वहां भी दयानन्द कालेज खोल कर उसे स्वर्ग बना दूंगा। वैदिक संस्कृति व आर्यसमाज के सिद्धांतों के अनुसार मृत्यु के बाद नरक स्वर्ग की कल्पना निःसार है। हम आर्यों का अटल विश्वास है कि नरक स्वर्ग इसी लोक में है। जीवन की निकट समस्याओं से मुस्कराते हुए जूझना चाहिए। ईश्वर पर दृढ़ विश्वास करके विपदाओं का प्रतिरोध करना चाहिए।

हमारा अटल विश्वास है कि मानव का जन्म भी नरक को सद्व्यवहार सदाचार व कर्त्तव्य निष्ठा से स्वर्ग में बदलने के लिये हुआ है। अपनी सुस्ती, लापरवाही व अन्य दुर्गुणों व कुकर्मों से स्वर्ग भी नरक में बदल जाता है।

दयानन्द शिक्षा संस्थाओं का जन्म आज से कई वर्ष पूर्व हुआ था। तब स्वर्ग समान भारत भूमि विदेशी शासकों के कुशासन के कारण नरक में बदली जा रही थी। देव दयानन्द ने विदेशी सत्ता को खुली चुनौती दी व अपने देश वासियों को स्वराज्य का सन्देश देते हुए समानता, भ्रातृत्व व स्नेह का मुधर संगीत सुनाया। छुआछूत अविद्या, निर्धनता व भ्रम विद्या के अभाव से ही पैदा होते हैं अतः दयानन्द के शिष्यों ने जन साधारण को सुशिक्षित करने व ज्ञान देने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। दयानन्द शिक्षण संस्थाओं में दी जाने वाली शिक्षा विदेशी शासन के प्रभाव से सर्वथा अछूती थी अतः आर्यों को इस स्वदेश प्रेम के लिये भारी मूल्य चुकाना पड़ा। गांधी जी के नेतृत्व में चलाये गये स्वराज्य संग्राम में दयानन्द संस्थायें सदा अग्रणी होकर बलिदान देती रहीं। गांधी जी कहा करते थे कि स्वराज्य पाना इतना कठिन नहीं जितना कि उसकी रक्षा करना।

विद्यार्थियों को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि दयानन्द शिक्षण संस्थाओं का महान दायित्व है। दयानन्द संस्थायें किसी राष्ट्रद्रोही या देश दुश्मन को अपने मध्य सहन व क्षमा नहीं कर सकतीं। राष्ट्र की संकट कालीन स्थिति से भी शक्ति व संकल्प बल मिलता है। संकट के अवसर का लाभ उठाकर सेवा त्याग व देश प्रेम का परिचय दीजिये। मुझे गर्व व हर्ष है कि हम इस जातीय संकट में पीछे नहीं रहे। हमारा नारा आज भी वही है 'मातृ भूमि के शत्रु को बाहर निकाल कर फैंको। हमें तब तक यह न भूलना चाहिए जब तक पवित्र भारतभूमि के पार दुश्मन को हम खदेड़ नहीं देते।

माननीय आचार्य जी के लम्बे व्याख्यान का यह सार दे रहा हूं। शेष भाग केवल छात्रों से सम्बन्धित है।

इस से पूर्व २३ जून को कालेज के स्थापना दिवस पर भाषण देते समय आपने गर्व से कहा कि हमारा यह कालिज कोई आकस्मिक घटना नहीं। हम इधर एक अन्यायी रजवाड़े के अन्याय से लोहा लेने आये। यहां कैम्प लगाया। इधर की जनता को व क्षेत्र को अच्छा पाया। यहीं हम ने अन्यायी को पराजित करके जन-सेवा के भाव से, मातृ भूमि के भले के लिए अज्ञानता के अन्धकार से युद्ध आरम्भ किया। हमारा वह पौधा आज वटवृक्ष का रूप धारण कर चुका है। यह ज्योति स्तम्भ हमारी उस महान विजय का प्रतीक है।

दयानन्द-वचनामृत

प्रथम तो पूजनीया मूर्तिमती देवता माता है। सन्तानों को चाहिए कि माता की सेवा-शुश्रूषा तन-मन-धन से करे। उसे सब प्रकार प्रसन्न रखें। उसका अपमान कभी न करें। दूसरा देव पिता है। उसका भी पूजन माता के समान होना चाहिए। तीसरा देव विद्या का दाता आचार्य है। तन, मन और धन से उसकी सेवा करना शिष्यों का कर्तव्य है। चौथा देव वह अतिथि है जो विद्वान्, धार्मिक, सरल और सब का हितकारी हो, जो सर्वत्र भ्रमण करके सत्योपदेश द्वारा सब को सुख देने का प्रयत्न करे। ऐसे सन्तों और सज्जनों की सेवा करना पुण्योपार्जन का साधन है। पांचवां देव पत्नी के लिए पति है और पति के लिए पत्नी भी देवता है। ये पांच मूर्तिमान देवता हैं जिन के कारण मनुष्य का पालन-पोषण होता है, उस से उत्तम आचार-विचार की शिक्षा मिलती है, सदुपदेश और विद्या की प्राप्ति होती है। परमात्मा को प्राप्त करने की यही पांच सीढ़ियां हैं।

दो भूलो, दो याद रखो

१. भूलो—हुआ कभी जो तुम से अन्य किसी का कुछ उपकार।

२. भूलो—हुआ किसी के द्वारा कभी तुम्हारा जो अपकार।

१. याद रखो—जो हुआ किसी से कभी तुम्हारा कुछ उपकार।

२. याद रखो—जो हुआ किसी का तुम से कभी तनिक अपकार।

लेखक महानुभावोंसे निवेदन

१. 'आर्य जगत्' में लेख, कविता आदि भेजने वाले विद्वानों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों में कागज के एक ओर ही, हाशिया छोड़ कर लिखे हुए भेजने चाहिएं।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएं। 'आर्य जगत्' पत्र के एक पृष्ठ के योग्य लेख हों तो अत्युत्तम है।

३. लेखों को न्यूनाधिक और संशोधित करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार है।

उच्च भावनाएं

१. सामर्थ्य का अर्थ उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य होता है।

२. अपनी योग्यता कैसे छिपाई जाती है यह जान लेना सब से बड़ी बुद्धिमत्ता है।

३. कोई वस्तु है जो बहुत महंगी है, बड़ी नाजुक और सुन्दर है और योग्यता से भी अधिक अलभ्य है। वह चीज योग्यता को समझने की योग्यता है।

४. हवा और लहरें सदैव सुयोग्य खेवटों का साथ देती हैं।

५. निर्धन की सम्पत्ति उसकी योग्यता होती है।

६. अच्छा काम भले ही भाग्य से प्राप्त हो जाये पर उस काम को बनाए रखने में भाग्य का कोई प्रश्न नहीं होता।

स्वास्थ्य के लिए

वेशभूषा और भोजन

(ले० डाक्टर धर्मदेव जी धर्मसाला)

जल और सफाई के बाद परिधान का प्रश्न सामने आता है। आप का पहिरावा मौसम तथा स्थान के अनुकूल होना चाहिए। कीमती पहिरावा की आवश्यकता नहीं अपितु हर अवस्था में साफ परिधान चाहिएं। रात के वस्त्र सदा अलग होने चाहिए और दिन भर कार्य करने के लिए अन्य कपड़े हों। आप घर में खद्दर की बुनियान बना कर और धोती का प्रयोग कर के रात आराम से बिता सकते हैं। रंगीन कपड़े सुन्दर प्रतीत होते हैं और दिल को प्रसन्नता देते हैं बच्चों को खुशरंग कपड़े बहुत भले मालूम देते हैं। स्त्रियां तो रंगीन वस्त्रों में बड़ी रुचि रखती हैं। स्वदेशी वस्त्रों के प्रयोग से एक बड़ा लाभ यह है कि अपने देश के मजदूरों का पेट भरता है। उन को जीविका मिलती है, देश का पैसा देश में ही रहता है।

भोजन—वायु, जल, सफाई के बाद आहार का दर्जा आता है। दूध, फल, सब्जी दाल रोटी से बढ़ कर और प्रभु का महान् वरदान व प्रसाद क्या हो सकता है? दूध मनुष्य का एक पूर्ण आहार है। जिन बच्चों को आरम्भ में छः वर्षों तक दूध मिलता है। इस से जहां उन का शरीर कुन्दन बनता है, वहां ऐसे बच्चे तीव्र्या बुद्धि होते हैं। इस के अतिरिक्त उन की वाणी और बातचीत भी बहुत साफ स्पष्ट होती है। इस लिए बच्चों को ६ वर्षों तक अनाज नहीं देना चाहिए। इस के बाद धीरे २ बच्चों को शहद का प्रयोग कराना उन के शरीर को बढ़ाना है शहद अमृत है। यह बच्चों की शारीरिक वृद्धि में बड़ा सहायक सिद्ध होता है। साथ २ अनेक रोगों से भी बचाता है। दूध और शहद के साथ २ बच्चों को ताजा तथा सूखे मेवे फल देने चाहिए। संगतरा, आम सब से अच्छे फल हैं। यह रक्त शोधक हैं। संगतरा का छिल का शरीर के चर्म को सुन्दर बनाता है। इस का मुरब्बा बड़ा लाभकारी है। जिस फल में जिस मात्रा में कुदरती रस अधिक होता है, वह उसी मात्रा में गुण कारी है। इसी प्रकार जो वस्तु हरी ही हरी है, वह सब्जी में गिनी जाती है। हर प्रकार शाक, बन्द गोभी के अतिरिक्त मटर, चने, लोबिया, माश उड़द मूंग, मोठ अतीव पुष्टि कारक हैं। मटर, चने, लोबिया तो निर्धन लोगों के लिए अमीरी पुष्टि कारक वस्तुओं के समान उत्तम पदार्थ है। टमाटर अत्यन्त गुण कर है। अमीर लोग अधिक फलों का उपयोग कर सकते हैं और निर्धन मौसम की सब्जी का अधिक प्रयोग कर के लाभ उठा सकते हैं। इस लिए अनाज के साथ २ जब हम दूध, फल और सब्जी का प्रयोग अधिक मात्रा में करते हैं, तो हम स्वास्थ्य एवं लम्बी आयु को प्राप्त कर सकते हैं। सेब, आम, नाशपाती आदि मौसम का प्रत्येक फल प्रयोग करना आवश्यक है। मूली, गाजर तिल्ली और जिगर के लिए बड़ी लाभकारी है—

सत्य का पुजारी

(बहिन सुदेश कुमारी जी करनाल)

'सत्य का पुजारी महर्षि दयानन्द'

महर्षि दयानन्द के जन्म से पूर्व हमारी क्या दशा थी? वह अवस्था किसी से छिपी हुई नहीं है। सम्पूर्ण संसार अज्ञान के प्रवाह में बहा जा रहा था। धर्म के ठेकेदार पौराणिक पण्डितों ने 'वेदों' पर ताले लगा रखे थे। परन्तु महर्षि दयानन्द ने आकर अपनी ज्ञान रूपी ताली से उन लगाए हुए तालों को खोल डाला। उसने अपनी विद्वता रूपी नौका डालकर हमें अज्ञान के प्रवाह से निकाल लिया और ज्ञान के प्रकाश में लाकर खड़ा कर दिया।

महर्षि के जीवन चरित्र पर दृष्टिपात करने से हमें यह दृष्टिगोचर होता है कि आप अपनी संपूर्ण आयु में सत्य का अन्वेषण सत्य का मण्डन और असत्य का खण्डन करते रहे। एतदर्थ आपने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना की। 'सत्यार्थ प्रकाश' की भूमिका लिखते हुए आपने लिखा है कि 'मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाए। आपने सत्य की परिभाषा इस प्रकार की है कि 'जो वस्तु जैसी है उसको वैसी ही कहना लिखना और मानना, कहलाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महर्षि की सम्पूर्ण आयु का आधार सत्य ही रहा। जब महर्षि जी ने सन् १८७५ में बम्बई में 'आर्य समाज' की स्थापना करके इसके नियमोंका निर्माण किया तो नवीन-राजकृष्ण ने महर्षि जी से यह आग्रह किया कि 'नियमों में जीवन ब्रह्म की एकता के सिद्धान्त का भी समावेश होना चाहिए और कहा इस नियम के बल पर हम बहुत से लोगों को आकर्षित कर सकेंगे।' परन्तु स्वामी जी ने कहा—'मैं 'आर्यसमाज को असत्य पर कदापि स्थापित नहीं करूंगा।'

'आर्यसमाज' रूपी भवन का निर्माण सत्य रूपी नींव पर होने के कारण इसकी सत्ता कभी भी नष्ट नहीं हो सकती। जब तक आकाश में सूर्य और चांद उदय होते रहेंगे तब तक 'आर्यसमाज' का अस्तित्व कायम रहेगा। गीता में भी अंकित है:—

'नासतो विद्यते भावो नाभावो
विद्यते सतः।'

अर्थात् जो असत्य वस्तु है उस का अस्तित्व भी नहीं हो सकता और जो सत् पदार्थ है, उसका कभी नाश नहीं हो सकता। फिर जो भवन सत्य रूपी नींव पर ही आधारित हो, भला उसकी सत्ता का कैसे नाश हो सकता है। चाहे शत्रु लाख प्रयत्न करें इसको मिटाने के लिए, परन्तु इसको मिटाने की बात तो दूर, वह तो इसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देख सकते। एक आर्य वीर ने लिखा है कि:— आर्य शहीदों की समाधियों से आती है यह आवाज। नहीं मिटेगा, ऐ विरोधियो। अजर अमर है 'आर्यसमाज।'

महर्षि जी के त्याग मय जीवन पढ़ने से पता चलता है कि किस प्रकार आप सत्य को अपने जीवन में प्रयोगात्मक रूप में लाए। आपने अपना ही जीवन सत्यमय नहीं बनाया अपितु हमारे जीवन को भी 'सत्यमय बनाया [illegible] का उपदेश दिया। सूर्य [illegible] ही तेजवान नहीं होता [illegible]

(शेष पृष्ठ ७ पर)

प्रादेशिक सभा का वेदप्रचार कार्य

आ. स. लारेंस रोड अमृतसर–में १६ से २५ अगस्त तक वेद सप्ताह सम्पन्न हुआ। खुशीराम शर्मा की कथा और ठा० दुर्गासिंह जी के भजन प्रात. ६॥ से पौने आठ तक कार्यक्रम समाज मंदिर में चलता रहा। रात्रि ८॥ से १० तक बस्तियों में प्रचार। बस्तियों के प्रचार मे ला० बद्रीनाथ जी का उत्साह प्रशंसनीय है। बस्तियों से ३० के लगभग समाज के नये सदस्य बने। सभा को समाज की ओर से सहयोग भी प्राप्त हुआ। सभी अधिकारी एवं कार्यकर्त्ता महानुभाव श्रद्धालु एव दृढ़ आर्य हैं विद्यासागर जी कार्यकर्ता मन्त्री सारा कार्य बड़ी लग्न से चलते हैं। बस्तियों में रात्रि को पधारते रहे। आ. स. लारेंस रोड के सभी सज्जन एवं देवियां सामाजिक कार्यों में बड़े उत्साह से भाग लेते हैं। विशेषत. हंसराज जी खन्ना प्रधान, मोहनलाल जी अरोड़ा उपप्रधान मुनिलाल जी खन्ना, ला० खुशीराम जी आ. स. के स्तम्भ हैं। कुबेर हैं। भगवान् इन्हें सर्वथा मंगल प्रदान करे। बाग के प्रचार का प्रबन्ध ला० गुरचरण दत्त जी करते हैं लग्न शील है।

२८ से ३१ तक लारस रोड–में श्री पं० त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री की कथा और हजारी लाल जी के भजन होंगे।

१ सितम्बर से ६ तक प्रातः लारंस रोड में पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की कथा होगी।

आर्यसमाज लोहगढ अमृतसर–का उत्सव ७/८ सितम्बर को समारोह से सम्पन्न हो रहा है। ३१ अगस्त से ६ सितम्बर तक पूज्य महात्मा जी की रात्रि को कथा होगी और श्री राजपाल जी, मदन मोहन जी के मनोहर भजन होंगे।

८ सितम्बर बाद दोपहर जिला आर्य सम्मेलन मान्यवर पं० रलाराम जी एम० ए० प्रधान सभा की अध्यक्षता में सम्पन्न होगा। जिला भर की समाजों के प्रतिनिधि भाग लेंगे।

उत्सव पर श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी, श्री पं० ओं प्रकाश जी तथा अन्य महानुभाव पधारेंगे।

आर्य समाज लक्कड़ बाज़ार शिमला–का उत्सव २० से २२ सितम्बर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज वज़ीर बाग श्रीनगर–का उत्सव २१ से २३ सितंबर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है। ८ सितम्बर से पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी की कथा होगी।

आर्य समाज कडाघाट–का उत्सव १३ से १५ सितम्बर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज सलोगढ़ा–का उत्सव १६ से १८ सितम्बर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज मंडी का उत्सव–२६, ३० सितम्बर १-२ अक्तूबर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज माडल टाऊन लुधियाना–का उत्सव ११ से १३ अक्तूबर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

आर्य समाज दयालपुरा करनाल–का उत्सव ११ से १३ अक्तूबर को धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है।

—खुशीराम शर्मा वेदप्रचार अधिष्ठाता

सत्य का पुजारी

(पृष्ठ ६ का शेष)

को भी प्रकाश देता है। ऐसा ही आपका सत्यमय जीवन था। चतुर्थ नियम में आपने लिखा है कि 'सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। अतः आर्यो यदि हम वास्तविक आर्यों में अपने आपको आर्य कहलाना चाहते हैं तो हमें सत्य की शरण में जाना होगा। वह 'आर्य' नहीं जो सत्य को त्याग कर असत्य का आश्रय ग्रहण करता है। वह 'आर्य' नहीं जो अपने जीवन को सत्यमय बना कर दूसरों के लिए उदाहरण स्थापित नहीं करता।

मानव जीवन का उद्देश्य भी तो सत्य की ओर अग्रसर होना ही तो है। क्योंकि—'सत्यमेव जयते नानृतम् सत्येन पन्था विततो देवयानः'। इसका अभिप्राय है कि सर्वदा सत्य की ही विजय होती है परन्तु असत्य की पराजय होती है और सत्य से ही विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। जिस मनुष्य का जीवन सत्यमय होता है जो पुरुष सत्यवादी होता है वह भूलकर भी असत्य के आश्रय में नहीं जाता, उसकी बुद्धि व्यवसायात्मिक होती है। वह दृढ निश्चय वाला होता है। जो कहता है, वह करता है।

यह तो सत्य है कि सत्यवादी बनना कठिन है परन्तु जब हम यह निश्चय कर लेते हैं कि हमें सत्य ही बोलना है तो वह निश्चय हमारे स्वभाव में परिणत हो जाता है। गीता में लिखा है—

'यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्'। अर्थात् जो (सत्य कर्म) प्रथम करने में विष के समान होता है वही बाद में परिणाम स्वरूप अमृत के सदृश होता है।

हम सत्यवादी बनने के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि 'हे प्रभो! 'असदो मा सद् गमय'। परन्तु हमारी प्रार्थना भी तभी सफल हो सकती है जबकि हम भी सत्यवादी बनने का प्रयत्न करेंगे। इसी बात को महर्षि जी ने अपने जीवन के सांचे में ढाला और हमें ढालने का उपदेश दिया। सत्य के पुजारी होने के कारण ही अकेले होते हुए भी महर्षि ने इस अन्ध-विश्वासी, लकीर की फकीर दुनिया से टक्कर ली और उसमें पूर्णतया सफल हुए। एक कवि ने आप के विषय में ठीक ही लिखा है :—

तू था धर्म का दीवाना, सच्चाई का परवाना।
तू झुका सत्य के आगे, तेरे आगे झुका जमाना॥

यदि हम भी सत्यवादी बन जाएं तो हमारे आगे भी जमाना झुक सकता है। परन्तु दुनिया झुके वा न झुके, हमें तो केवल महर्षि के आदेश का पालन करना है, हमें तो केवल सत्यवादी बनने से प्रयोजन है ताकि हम अपने जीवन को सफल निर्भय और यज्ञमय बना सकें। 'सत्यवादी बने विना कोई भी पुरुष जाति और देश की उन्नति नहीं कर सकता," यह भी महर्षि जी ने "सत्यार्थ प्रकाश" की भूमिका में लिखा हुआ है।

यही महर्षि जी ने उपदेश दिया। इसी का हमने प्रतिपालन करना है। इसी में हमारा कल्याण निहित है। जब हमारा कल्याण होगा तभी राष्ट्र का भी कल्याण होगा।

—

आर्यसमाज ठाकुरपुरा (अम्बाला)

१५ अगस्त का स्वतन्त्रता दिवस समाज मन्दिर में बड़ी धूम-धाम से मनाया गया इस अवसर पर ग्रामीणों व स्कूल के छात्रों ने बड़ी उत्सुकता से भाग लिया। श्री बाल-कृष्ण जी मंत्री सभा ने ध्वजा रोहण किया बाद में स्कूल के छात्रों ने राष्ट्रीयगान गाया तथा जयघोष के पश्चात छात्रों में मिष्ठान्न बांटा गया। शान्ति पाठ के बाद कार्य समाप्त हुआ।

—गौतमदेव आर्य मन्त्री समाज

आर्य समाज किला, जालन्धर नगर।

का यह अधिवेशन श्री आचार्य विश्वबन्धु जी द्वारा लिखी पुस्तक वेदसार में वेद मंत्रों के परिवर्तन परिवर्धन को अत्यन्त चिन्ता राष की दृष्टि से देखता है। आज तक समाज वेद प्रेमी जनता व वैदिक विद्वानों का ऐसा मत रहा है कि वेद अपौरुषेय हैं और उन मे किसी भी प्रकार का परिवर्तन मानव की शक्ति से बाहर है। इस प्रकार की चेष्टा करना एक अनधिकृत चेष्टा है। श्री विश्वबन्धु जी ने ऐसी ही चेष्टा की है जो वेद प्रेमी-जनता की दृष्टि में बड़ी घृणास्पद है।

अतः यह अधिवेशन पंजाब विश्वविद्यालय के कुलपति उपकुलपति और पंजाब व केन्द्रीय सरकार से साग्रह अनुरोध करता है कि इस अवाञ्छनीय पुस्तक को तुरंत ही पंजाब विश्वविद्यालय एम. ए. के पाठ्यक्रम से निकाल कर वेद मन्त्रों के किसी अन्य शुद्ध संस्करण को स्थान दें तथा श्री विश्वबन्धु जी को इस पुस्तक के मंत्रों को शुद्ध करने के लिए बाधित करें।

प्रस्तावक वेदीराम

अनुमोदक कुन्दन लाल

आर्यसमाज युसफसराय (ग्रीनपार्क)

नई दिल्ली—१६

गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी वेद प्रचार सप्ताह बड़े समारोह पूर्वक श्रावणी उपाकर्म से लेकर जन्माष्टमी तक मनाया गया। इस मे श्री जैमुनि, प्रिंसीपल विशन सहाय जी, प्रिंसीपल शंकरलाल जी 'पाली' श्री शालीग्राम जी, गौतम के मनोहर तथा प्रभावशाली भाषण हुये। श्री जैमुनि जी द्वारा श्रावणी, उपाकर्म के दिन तीन बालकों का उपनयन संस्कार भी हुआ। श्री देव-राज जी कोछड़ ने श्री त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री द्वारा रचित 'वैदिक धर्म का महत्व' की सौ प्रतियां मंगवाकर मुफ्त जनता में बांटी। श्री देवराज जी, श्री नन्दलाल जी, श्री रघुवीर-सिंह जी, श्री प्रियव्रत जी, से क्रमशः ११, १२, २ व ५ रुपये की धन राशि दान के रूप में प्राप्त हुई। जनता पर्याप्त मात्रा में प्रभावित हुई। —शालीग्राम गौतम

मुख्य मन्त्री

अजमेर में ऋषि मेला

तारीख १८-१९-२० नवंबर सोम, मंगल, बुद्धवार को अजमेर स्थित ऋषि उद्यान में बड़ी २ धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है इस अवसर पर श्री महात्मा आनंद स्वामी जी महाराज, आचार्य मेधार्थी स्वामी M.A. आदि उच्चकोटि के विद्वान संन्यासी पधार रहे हैं। तथा बड़ोदा की छात्राओं के व्यायाम प्रदर्शन भी होंगे। इस अवसर पर सभी समाजी भाई बन्धु पहुंच कर मेले की शोभा बढ़ाएं।

श्री करण शारदा

प्रबंध ऋषिमेला

ला० रामगोपाल जी शाल वाले पंजाब काश्मीर से वापिस

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री ला० रामगोपाल जी शाल वाले २२ जौलाई को दौरे पर जाकर २० अगस्त को वापिस देहली आ गए हैं। आपने अमृतसर, बटाला, गुर-दासपुर, पठानकोट, दीनानगर, जम्मू और श्रीनगर के आर्यसमाजी कार्यकर्ताओं से समाज की प्रगति के बारे में विचार विमर्श किया। तथा समाज के भावी कार्यक्रमों को क्रियात्मक रूप देने के लिए उन्हें तैयार किया। अनेक स्थानों पर भाषणों द्वारा धर्म का प्रचार किया। श्रीनगर के हजूरी बाग समाज में नावों पर बैठकर श्रावणी उपाकर्म त्यौहार मनाया। इस प्रकार भिन्न २ स्थानों पर प्रचार कार्य व समाज की प्रगति के विषय में वार्तालाप करते हुए अपने उद्देश्य को सफल करके २० अगस्त को देहली वापिस पहुंच गए हैं।

आर्य प्रादेशिक उपसभा देहली का कार्यालय

आप को सूचित किया जाता है कि उपसभा का कार्यालय आर्य समाज बाजार सीता राम से बदल कर आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग में स्थापित कर लिया है। इस लिये आप से निवेदन है कि आप आगे से पत्रव्यवहार निम्न लिखित पता कर करने की कृपा करें।

मन्त्री—आर्य प्रादेशिक प्रति-निधि उपसभा मारफत आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग (रीडिंग रोड) नई दिल्ली। यदि आप की आर्य समाज की ओर से अभी तक वेदप्रचार फण्ड नहीं भेजा गया तो वह शीघ्र भेजने की कृपा करें।

उपसभा का कार्यालय सायं ५बजे से ६-३० बजे तक खुला होगा यदि आप किसी आवश्यक विषय पर बातचीत करने के लिये मन्त्री अथवा उप-मन्त्री से मिलना चाहें तो कार्यालय में दर्शन देने की कृपा करें। धन्यवाद

भवदीय

दरबारी लाल

कार्यालय मन्त्री

शुभ सूचना

गुरुकुल झज्जर (रोहतक) के अधिकारी, श्री स्वामी आत्मा नन्द जी महाराज का जीवन चरित्र प्रकाशित कर रहे हैं और यह ग्रन्थ नवंबर ६३ तक छप कर पाठकों के पास पहुंच जाएगा। १२ दिसम्बर १९६० श्री स्वामी जी महाराज का स्वर्गारोहण का दिवस है इसे आर्य जनता बड़ी धूमधाम से मनाए।

"आत्मानंद जीवन ज्योति" ग्रन्थ का पेशगी मूल्य ६/- है डाक खर्च पृथक होगा। सौ रुपए से अधिक भेजने वाले सज्जन हाफ टोन का अपना चित्र भी भेजें। धन भेजने का पता—

व्यवस्थापक "आत्मानन्द जीवन ज्योति" गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

ग्राहक महानुभाव पत्र-व्यवहार तथा मनीआर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखने की कृपा करें।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

स धाता, स विधर्ता, सवायु नभः उच्छ्रितम् । स अर्यमा, स वरुणः रुद्रः स महादेवः सोऽग्निः स सूर्यः सउ एक महादेवः ।।

अथर्व १३।४।३.४.५.

वह भगवान सब का पालक पोषक सब को धारण करने वाला सर्वाधार है । वह प्राणों का प्राण सर्व व्यापक महा बलवान सर्व-शक्तिमान है । वह सब को एक सूत्र में बांधने वाला नभ है । वही सब से ऊंचा सर्वश्रेष्ठ सब का इष्टदेव है । वही एक उपास्यदेव है । सर्वनियन्ता न्यायकारी है, वही दुख निवारक परम करुणामय दयालु पिता है, वही महादेव परमदेव देवाधिदेव है । वह जीवनदाता जीवन सर्वस्व ज्योतिर्मय, ज्योति-स्वरूप, प्रकाशमय, प्रकाशस्वरूप, सब का प्रकाशक, ज्ञानमय तेजस्वरूप ज्ञान स्वरूप है । वह परम निया-त्मक सारी जगती की सुव्यवस्था करने वाला सर्वनियामक सर्व प्रेरक है । निश्चय से वही अभिसरणीय उपास्यदेव है । उसी के परम दिव्य प्रकाश से सूर्य में प्रकाश है, जीवन वृद्धि की शक्ति है । उसी के प्रकाश से सूर्य भासित हो रहा है ।

तमिदं निगतं सहः स एष एक एक वृदेक एव ।। अथर्व १३।४।१२

उसको ही यह सारी शक्ति प्राप्त है वह ही एक परम शक्ति सम्पन्न परमशक्तिमान है । वह एक ही है । वही एकमात्र स्वयं समर्थ और ऐश्वर्य और शोभा में और सौन्दर्य मे अद्वितीय है । वह पूर्ण है, पूर्ण समर्थ है, वह एक है निश्चय से एक ही है, वह एक ही है, वह अद्वितीय है ।

भगवान का साथ

भगवान सत्य शिवं सुन्दरम्, सच्चिदानन्द, सत्यस्वरूप परम चेतन्य रूप, आनन्द स्वरूप है । भगवान सत्य है चित है और आनन्द है । आत्मा सत् और चित है भगवान से मिला रह कर ही

स्वाध्याय लेख

वह भगवान एक है

(स्वाध्यायभक्त श्री लालचन्द जी मेरठ)

आत्मा आनन्द अनुभव करता है, अपनी सत्य ज्योति में भगवान को परम ज्योति का प्रकाश अनुभव करता है । भगवान के परम दिव्य प्रकाश में ही सत् ज्ञान जीवन और आनन्द, निहित है जो मानव के मुख मंडल पर ओज के रूप में दीखता है । भगवान का उपासक, वह मानव जिसने भगवान की निकटता अनुभव की है, वह सदा कर्तव्यशील दीखता है, सदा प्रसन्न दीखता है । भगवान का उपासक पवित्र होता है, दिव्यजन होता है, उसका व्यक्तित्व ऐसा आकर्षक हो जाता है कि उसकी संगति में मनुष्य पवित्र होते हैं । वही आर्य है । वह अमृत पुत्र है, उसने अपना अमरत्व पहचाना है ।

भगवान की परम दिव्य ज्योति जब मानव आत्मा में जगमगाती है जब परम ज्योति का प्रकाश आत्म ज्योति में अनुभव होता है तो यही स्थिति ब्राह्मी स्थिति है । यह परम स्थिति है । इसी स्थिति की अनुभूति, जीवन का ध्येय है यही जीवन का चरम लक्ष्य है ।

जब आत्म ज्योति जगती है तो शोक मोह रागद्वेष ईर्ष्या घृणा आदि कलुष जो आत्मोन्नति में बाधक हैं दिव्य प्रकाश में विलीन हो जाते हैं भगवान शुद्ध हृदय में अनुभव होते हैं । हमारा कर्तव्य है आत्म निरीक्षण और स्वसंवेदन, यदि इस साधन में हम तत्पर हैं तो अवश्य ही भगवान की परम ज्योति की आत्मा में अनुभूति होती है यही भगवान का दर्शन है ।

भगवान की अनुभूति के साथ-साथ अन्तरात्मा में अनुपम आनन्द अनुभव होता है जोकि उपासक को सत् संकल्पमय, दक्ष और मुक्त बना देता है और जीवन में सौंदर्य अनुभव होता है ।

भगवान का उपासक भगवान के व्रत में व्रती रहता है । भगवान का व्रत है सतत उपकार करना । भगवान की सारी रचना उपकार-मयी है । भगवान का उपासक भी निस्वार्थ जन-सेवारत रहता है किन्तु अपने अन्दर अभिमान नहीं आने देता । उन्नतिशील व्यक्ति के लिये सब से बड़ी रुकावट अभिमान ही है । अभिमान न आने पावे तो उन्नति में रुकावट नहीं हो सकती ।

भगवान अपने उपासक को दृढ़ संकल्प युक्त कर्तव्यशील, दक्ष और सर्वमंगल इच्छुक बना देते हैं । भगवान का उपासक भगवान से प्रार्थना में सब का भला चाहता है । भगवान के अनुग्रह से ही मनुष्य में सर्वमंगल की कामना होती है । सद्भावना रहे हृदय में, तभी मन में शुभ कामना उदय होती है ।

नित्य के जीवन व्यवहार में भगवान की अनुभूति भगवान की ही देखरेख में जीना और कर्तव्य करने रहना, मनुष्य को कलुष वासना से बचाना है । वासनाए तमोमयी होती हैं । आत्मा के दिव्य प्रकाश में पाप वासनाएं टिक नहीं सकतीं । मनुष्य अमर चैतन्य सत्ता अविनाशी हैं, वह क्यों घबराये जबकि वह स्वय अमरतत्व है और भगवान उसके साथ है उसका परम सखा है परम सुहृद है । भगवान का उपासक मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता, वह धर्मज्ञ भी है, और धर्मात्मा भी भगवान का उपासक धर्ममार्ग का पथिक है ।

शूल-फूल

नहीं चाहती याद रखूं मैं,
वरं चाहती जाऊं भूल ।
पर हटता वह नहीं हृदय से,
सदा चुभाता रहता शूल ।।
कठिन नोकीला शूल किन्तु,
वह बन जाता तुरंत मृदु फूल
मुझे सदा असीम सुख देता,
काट बहाता दुःख का मूल ।।

उच्च भावनाएं

१. किसी नेता की योग्यता में विश्वास रखने से कोई लाभ नहीं होता जब तक उसकी न्याय-परायणता उसके साथ जुड़ी हुई न हो ।

२ मनुष्य जितना कार्य करते हैं उन में उससे अधिक कार्य करने की योग्यता होती है । वे संसार में पूर्व संस्कार सहित भेजे जाते हैं और वे उस से कदाचित् ही पूर्ण लाभ उठाते हैं ।

केन्द्री आर्यसमाज अमृतसर

चुनाव

प्रधान—श्री कैप्टन केशव चन्द्र जी
उपप्रधान-श्री धर्मपाल जी म्यूनि-सीपल कमिश्नर
,, बृजलाल जी घी वाले
,, भूपालसिंह जी शास्त्री
महामंत्री—,, गुरुचरण दत्त जी
मंत्री— ,, प्रो० वेदव्रत जी
उपमंत्री ,, भोलानाथ जी दिलावरी
,, मथुरा दास जी
कोषाध्यक्ष—,, रामकिशन जी खोसला
निरीक्षक—,, हीरानन्द जी

गुरचरणदत्त
मंत्री के० आ०

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, ८ सितम्बर १९६३ [अंक ३६

आर्य समाजों से

भारत के विधान में हिन्दी राष्ट्रभाषा है। एक न एक दिन सारा राष्ट्र इसी के सूत्र में पिरोया जायगा। इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि दक्षिण प्रान्तों के भाई बहिनें हिन्दी पढ़ने सीखने में बड़ी श्रद्धा से जुट गये हैं। कुछ समय के बाद अपनी परम्परा के अनुसार वे लोग इस दिशा में बहुत आगे बढ़ जायेंगे। हिन्दी भाषी प्रान्तों में तो काम हिन्दी में हो ही रहा है। भारत सरकार भी इस उत्तर दायित्व के प्रति सजग है। नई पीढ़ी हिन्दी भाषा पढ़ने में जुटी हुई है। यदि भाषा के इस प्रश्न को राजनीति से न जोड़ा होता, इसे इसी भाषा के दृष्टि कोण से ही देखा होता तो जान बूझ कर खड़ी की जाने वाली समस्याएं पैदा न होतीं। कांटों पर पड़े हुए कपड़े के समान अब तो इस उलझन को सोच विचार कर तथा धीरे २ ही सुलझाना होगा। पंजाब में अभी तक हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में कुछ बाधाएं बनी हुई हैं जिन को दूर करने में सिर जोड़ कर मिल कर कार्य करने की आवश्यकता है।

आर्य समाज पर सामूहिक रूप से भारी दायित्व है। वह अपने आरम्भकाल से इस के प्रचार प्रसार में [illegible] परिश्रम करता आया है। वह समझता है कि आज यदि हिन्दी राष्ट्रभाषा बनी है तो इस का सारा श्रेय आर्य समाज के महान् संस्थापक महर्षि दयानन्द को है और उन के द्वारा स्थापित आर्य समाज को है। यह काम तो हो गया। अब वर्तमान काल में इस के प्रचार के लिए कुछ क्रियात्मिक पग उठाना है। आर्य सार्वदेशिक सभा की ओर से एक परिपत्र जारी किया गया है, जिस में इस के बारे में आर्यसमाजों तथा इस से सम्बन्धित संस्थाओं में कार्य करने वाले सारे सज्जनों का ध्यान इस आवश्यक रचनात्मक कार्य की ओर आकर्षित किया गया है। आज ही आज और अभी से इसे जीवन में आरम्भ कर देने की प्रेरणा दी गई है। जो बात हमारे हाथ में है उसे हम करें भी क्यों न? इस रचनात्मक पग उठाने से बहुत बड़ा लाभ होगा। हम भी अपना राष्ट्रिय, सामाजिक तथा धार्मिक कर्तव्य निभाते हुए दूसरों के सामने आदर्श उपस्थित कर सकेंगे। इस परिपत्र में आवश्यक सुझाव दिये गये हैं। जब हम स्वयं इन पर आचरण करने लगेंगे तभी हमारी देखादेखी दूसरे भी निश्चित रूप से अपना सारा कार्य हिन्दी में आरम्भ कर देंगे। क्रियात्मिक रूप सारे वातावरण को बदल देता है। अब समय आ गया है, जबकि सारे समाज को अब ही धारण करना पड़ेगा—परिपत्र में कहा है—

अपना जितना भी निजी पत्र व्यवहार हो, हिन्दी में करें। सरकारी कार्यालयों को वे सारे पत्र हिन्दी में लिखें और उन से इस बात का अनुरोध करें कि इन पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जावे।

विवाह आदि के अवसरों पर सारे निमन्त्रण पत्र हिन्दी में छपवायें। व्यापारी सज्जन अपने व्यापार सम्बन्धी कागज आदि हिन्दी में कर दें। अपने दैनिक व्यवहार मे भी हिन्दी का ही प्रयोग किया जाये—ये सारी बातें क्रियात्मिक रूप धारण कर लें तो हिन्दी प्रसार में बड़ा कार्य हो सकता है। यदि वाणी के साथ २ मन और कर्म में भी यह भावना पैदा हो जाये तो कितना काम हो सकता है। यदि हमें ही अपनी भाषा के प्रति मोह, प्यार न होगा, तो दूसरों से कैसे कह सकते हैं? आज कितना दुःख होता है कि किसी भी नगर के बाजारों में घूम जायें—दुकानों के नाम वह अभी तक अंग्रेजी में लगे हुए हैं। लोगों को अंग्रेजी से कुछ अधिक ही आसक्ति हो गई है। इसके लिए आर्यसमाजों तथा संस्थाओं का सबका नेतृत्व करना चाहिए। यदि हमें अपने राष्ट्र की भाषा से भी प्यार नहीं तो और अधिक बलिदान हम क्या करेंगे? इस दिशा में हम संकल्प लें कि हमारे जीवन, परिवार, समाज, व्यापार का अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में ही होगा। ऋषि दयानन्द का भाषा प्रेम हमारे लिए आदर्श है, प्रकाश का स्तम्भ है। अपने जीवन में राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने के लिए हिन्दी को कितना ऊंचा स्थान दिया। इसका प्रमाण उनके सारे ग्रन्थ हैं। हम आज से इस कार्य में जुट जायें।

—त्रिलोक चन्द्र

आर्य समाजें हिन्दी प्रचार को प्रगति दें

आर्यसमाज के प्रयत्न से भारत में अभूतपूर्व सामाजिक और राजनैतिक चेतना उत्पन्न हुई है। भारत वासियों में स्वातन्त्र्य प्रेम और अपने धर्म, संस्कृति और भाषा के प्रति अनुराग उत्पन्न करने में आर्य समाज के सदस्य अग्रणी रहे हैं। जिस देश में अपनी संस्कृति अथवा भाषा के प्रति अनुराग न हो वह देश सही अर्थों में स्वतन्त्र कहलाने का अधिकारी नहीं है। हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा घोषित हो चुकी है, फिर भी यदि देश में प्रशासकीय व्यापारिक अथवा निजी पत्र व्यवहार अंग्रेजी में चलता रहे तो यह सारे देश के लिए लज्जा की बात है।

अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को आसीन करने के लिए केवल सरकारी योजनाओं पर आश्रित रहना कदापि शोभनीय नहीं माना जा सकता। नागरिकों के अपने भी कुछ कर्त्तव्य हैं, और यदि उनकी ओर वे यत्नपूर्वक ध्यान दें तो निश्चय ही अल्प समय में सर्वत्र हिन्दी के प्रयोग की मात्रा बहुत अधिक बढ़ सकती है। आर्य समाज की संस्थाओं और सदस्यों का कर्त्तव्य है कि वे इस कार्य में अन्य व्यक्तियों का पथ-प्रदर्शन करें और अपने उदाहरण से दूसरों को हिन्दी अपनाने के लिए प्रेरित करें। उन की ओर से जो काम होगा उसका देश के सभी क्षेत्रों में प्रभाव पड़ेगा, सरकार भी उस से अछूती न रहेगी, सरकारी क्षेत्रों मे भी उसी अनुपात से अंग्रेजी का व्यवहार कम होता जायगा और हिन्दी का काम बढ़ेगा।

आर्यसमाज की संस्थाओं तथा सदस्यों से अनुरोध है कि वे निम्न-लिखित प्रकार से हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने का यत्न करें :—

१—अपना जितना भी निजी पत्र व्यवहार हो उसे हिन्दी में करें।

२—सरकारी कार्यालयों को वे सारे पत्र हिन्दी में, लिखें और उन से इस बात का अनुरोध करें कि इन पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जाए।

३—जिन सरकारी विभागों से उन के पास पत्र आते हों, उन विभागों को लिखें कि ये पत्र हिन्दी में ही लिखे जाएं।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

(गतांक से आगे)

आप जरा दो आदमियों की परीक्षा करें कि एक के पास नौकर नहीं। वह स्वयं नहाता, रोटी पकाता, बर्तन साफ करता और दूसरे भी काम करता है, इसलिए वह बलवान है। परन्तु दूसरे के पास नौकर है, वह रोटी पकवाने, नहाने, कपड़े पहिनने और बूट पहिनने के कामों में भी उसके आधीन है। उसके घर की स्त्रियां नौकरों के बिना पानी नहीं पी सकतीं। ऐसे लोगों का नाम शीघ्र ही संसार से मिट जाता है। इस से प्रतीत होता है कि सभ्य आदमी अधिक निर्बल होता चला जा रहा है। ऐश्वर्य की सीमा से अधिक हो जाना आलस्य के लाने का कारण है तथा आलस्य का आना ऐश्वर्य के नष्ट होने एवं उसके विनाश हो जाने का कारण है—विचारशील अमरीका के प्रधान के दिल में भी यही प्रश्न उठा और एक अधिवेशन में उसने इसे प्रकट किया कि इस सभ्य संसार को इस बात का ख्याल करना चाहिए कि वह दिनों दिन निर्बल होता है। इस भय से बचने के लिए कोई उपाय सोचना चाहिए।

जो प्रश्न एक मनुष्य के लिए उत्पन्न होता है वही एक घराने के विषय में, जाति और देश के विषय में भी पैदा होता है। कसस हिन्द (एक उर्दू पुस्तक) में इस के विषय में अत्युत्तम शब्दों में दो दृष्टान्त आते हैं। जिस समय नादरशाह भारतवर्ष में आया और करनाल पहुंचा, तो दिल्ली का सम्राट् (बादशाह) मुहम्मदशाह भी वहां आया। ग्रीष्म ऋतु का समय था। दोनों एक कमरे में बैठे थे, पंखा हो रहा था। उस समय मुहम्मदशाह ने तो इकतारी मलमल का कुरता पहिना हुआ था और नादरशाह ने मोटी पोस्तीन पहिनी हुई थी। परन्तु इस से नादरशाह को बिल्कुल गर्मी न लगती थी तथा

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण

धर्म प्रचार के साधन

मुहम्मदशाह गर्मी के कारण अचेत हो रहा था, ऐसे समय में मुहम्मदशाह ने पूछा कि यह क्या बात है कि मैंने मलमल का कुरता पहना हुआ है और गर्मी के मारे अचेत हुआ जाता हूं और आप पोस्तीन पहने हुए भी गर्मी का नाम ही नहीं लेते। नादरशाह बोला—निस्सन्देह यही बात है और यही पोस्तीन है जो मुझे तहरान से लाई है और जिस ने मुझे आज करनाल दिखाया है। और तुम्हें, इस मलमल ने देहली से भी आगे न बढ़ने दिया। नादरशाह ने क्या ही ठीक कहा है। इसके अनन्तर मुहम्मदशाह की इकतारी मलमल वाली सन्तान शीघ्र नष्ट हो गई, परन्तु नादरशाह पोस्तीन वाले की सन्तान अधिक प्रबल होती गई।

जिस समय ऐश्वर्य बढ़ जाता है तो थोड़े समय के अनन्तर वह घटने लगता है और जब तक वह साधन न बर्ते जावें जिस से उसका घटना बन्द हो तब तक ऐश्वर्य स्थिर नहीं रह सकता। ऋषियों ने सच्चाइयोंको अनुभव कर लिया था सहस्रों वर्षों पहले उन्होंने बड़ी सुन्दरता से उस समय इस प्रश्न का उत्तर भी ढूंढ लिया था। ऋषियों ने इस प्रश्न को आर्यों के जीवन में डाला और जीवन को ऐसे साधनों से पिरो दिया जिन से ऐश्वर्य कम न हो। उन्होंने द्विजों के लिए यज्ञोपवीत संस्कार आवश्यक समझा। हरएक द्विज के लिए उन्होंने यह नियम बांधा और वेदों से नियम को उद्धृत करके अपने जीवन में घटाया। यज्ञोपवीत देते समय जो उपदेश दिया जाता है, उस में बतलाया गया है कि विद्यार्थी सादा जीवन व्यतीत करे, विद्या प्राप्त करे, आज्ञाकारी होना सीखे, जीवन के तरीके सीखे, । जिस समय यह संस्कार होता है, लड़के को आज्ञा दी जाती है—तुम गाड़ी घोड़े पर मत चढ़ना, जूता न पहनना, बैठने के लिए मृगछाला, धारण करने के लिए मामूली धोती और लंगोटी। हाथ में दण्ड, बिस्तरा कड़ा रखना—इनमें एक-एक वस्तु ही लाभकारी है, और यदि इन सब का मेल हो जाये तो मनुष्य को कुछ का कुछ बना सकती है। विद्यार्थी का काम होता था कि वह गुरु को स्नान कराए, लकड़ियां हवन के लिए एकत्र करे। इन लड़कों में से चाहे कोई लड़का ऐश्वर्य वाले का होता या राजा महाराजा का होता अथवा निर्धन से निर्धन तथा कंगाल का होता सब को उपरोक्त जीवन व्यतीत करना पड़ता था। यह वह कार्य था जो ऐश्वर्य को घटने न देता था जिस आराम तथा सुख में इन्होंने आगे जा कर पड़ना था, उस में इस प्रकार के जीवन वाले मनुष्य गिर नहीं सकते। ऐश्वर्य के दुरुपयोग से जो बुराइयां उत्पन्न होती हैं, उन के लिए ऋषियों ने इन संस्कारों को बान्धा था और हमारे ऋषियों ने इन प्रश्नों का सहस्रों वर्ष पहले ही उत्तर पा लिया था, जिस का उत्तर आज यूरोप खोज रहा है।

यज्ञों में कई यज्ञ इस प्रकार के हैं कि उन के सूक्ष्मतत्व हम समझ नहीं सकते। परन्तु हमारे लिये अत्यन्त लाभकारी हैं। एक पुत्रेष्टि संस्कार है अर्थात जिस को पुत्र की इच्छा हो, वह यह यज्ञ करे इस में बड़ी भारी विज्ञान सम्बन्धी बातें भरी पड़ी हैं। इसी प्रकार वृष्टि यज्ञ है। जब कभी ऋषियों को वृष्टि की आवश्यकता होती थी तो वे इस यज्ञ को करते थे। आज लोग इस को मानने को तैयार नहीं। परन्तु कल यदि युरोप ने कोई ऐसी प्रणाली निकाल दी तो ये झट मान जावेंगे। यह दिल की संकीर्णता ही है।

ऋषियों ने वेदों को पढ़ कर उन से विद्या निकाल कर उसे यज्ञों के रूप में रख दिया। यज्ञ क्या थे—एक प्रकार की विद्या थी। इस प्रकार जब यज्ञ हम में विद्यमान थे तब हमारा जीवन उन से होता था। परन्तु बात चाहे कैसी ही अच्छी क्यों न हो, समय आता है जब कि वे अच्छी बातें भी बुरी प्रतीत होने लगती हैं। इस के साथ एक और बात भी देखने योग्य है। आप आर्यों के दर्शन शास्त्रों और उपनिषदों को देखें, उस में ब्रह्म विद्या का किस उत्तमता से वर्णन किया गया है। यह विद्या एक ऐसी है कि अभी तक दूसरे यहां तक नहीं पहुंचे। इस को पढ़ कर वे चकित होते हैं कि किस प्रकार ऐसे कठिन प्रश्नों का उत्तर ढूंढा गया है। ये धर्म के दोनों अंग हैं। पहिला यज्ञ विद्या और दूसरा ब्रह्म विद्या। परन्तु समय ही तो है, जिस ने उन के साथ बुरा बर्ताव किया। उन में परिवर्तन हो गया। लोगों की समझ पर पत्थर पड़ गये।

वेदोंका पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम हित्कर कर्त्तव्य है

मनुष्य की आवश्यकतायें

(ले०—श्री श्यामलाल जी आर्य विद्यारत्न, हिसार)

हम देखते हैं कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अनेक प्रकार कष्ट सहन करके धनोपार्जन करता है आवश्यकताओं को हम तीन भागों में बांट सकते हैं।

१—आवश्यक आवश्यकतायें।
२—आरामदायक आवश्यकतायें
३—विलासिता पूर्ण आवश्यकतायें।

आवश्यक आवश्यकतायें

यह वह आवश्यकतायें हैं जिन की पूर्ति से हम जीवित रहते हैं निपुणता की रक्षा करते हैं और सामाजिक प्रतिष्ठा कायम रखते हैं जैसे—रोटी, कपड़ा, मकान और निपुणता के लिये घी, दूध, फल इत्यादि दावत देना इत्यादि। अर्थ शास्त्रियों ने आवश्यकताओं को तीन भागों में बांटा है।

जीवन रक्षक

जिनकी पूर्ति से हम जीवित रह सकते हैं उन्हें जीवन रक्षक आवश्यकतायें कहलाती हैं जैसे—रोटी, कपड़ा, मकानादि। इनके बिना मनुष्य का जीवित रहना असम्भव है।

निपुणता-दायक

यह ठीक हम जीवन रक्षक आवश्यकताओं से जीवित तो रह सकते हैं परन्तु निपुणता की वृद्धि के घी, दूध, फलादि सेवन करना भी आवश्यक आवश्यकता है।

प्रतिष्टा रक्षक

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है प्रत्येक मनुष्य की कुछ न कुछ प्रतिष्ठा अवश्य होती है अतः प्रतिष्ठा को स्थिर रखने की थोड़ी बहुत आवश्यकतायें सन्तुष्ट करनी पड़ती है उन्हें प्रतिष्ठा रक्षक आवश्यक आवश्यकतायें कहते हैं जैसे—अतिथि का स्वागत करना, विवाह के समय दावत देना, मृतक संस्कार में भोजन कराना इत्यादि इन को न करने से पड़ोसी उस पर हाथ उठाते हैं जिस से उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचती है।

आरामदायक आवश्यकतायें

जब मनुष्य आवश्यक आवश्यकतायें परिपूर्ण कर लेता है तब वह आराम-दायक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की चेष्टा करता है यद्यपि ये पदार्थ आवश्यक नहीं हैं लेकिन इन से सुविधा मिलती है उदाहरण के लिये एक कुर्त्ता हमें आवश्यक है किन्तु यदि दूसरा कुर्त्ता भी आपके पास हो जाय तो उस से आपको कम सर्दी लगेगी और काफी आराम मिलेगा। एक बात ध्यान की है कि आराम-दायक पदार्थों से निपुणता की कुछ वृद्धि होती है परन्तु जितनी होनी चाहिये उतनी नहीं होती है।

विलासिता सम्बन्धी आवश्यकतायें

जो आवश्यकतायें विलासिता पूर्ण जीवनके वास्ते सन्तुष्ट की जाती हैं वे विलासिता-दायक आवश्यकतायें समझी जाती हैं बड़े २ महल बनवाना, कई कारें रखना, बहुमूल्य आभूषण पहिनना इत्यादि। विलासिता पूर्ण पदार्थों के सेवन करने से हमारी निपुणता में कोई वृद्धि नहीं होती है बल्की सिगरेट बीड़ी शराब पीना तथा दिन-रात बुरे २ नाच गाना देखने से निपुणता का अत्यधिक ह्रास होता है वास्तव में विलासितापूर्ण पदार्थों का उपभोग घृणा की दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि विलासितापूर्ण पदार्थों के सेवन करने से शारीरिक परिश्रम करने में काहिल हो जाता है। स्पष्ट हो जाता है आवश्यकता-दायक पदार्थ हमारी निपुणता की रक्षा करते हैं और आराम-दायक पदार्थ निपुणता की वृद्धि करते हैं और विलासितापूर्ण पदार्थों से निपुणता में किंचित भी वृद्धि नहीं होती है बल्कि ह्रास ही होता है एक बात यहां ध्यान देने की है कि किसी पदार्थ को हम आवश्यक, आराम-दायक, विलासितादायक नहीं कह सकते हैं क्योंकि वही पदार्थ किसी के लिये आवश्यक है किसी के लिये आराम तथा विलासितापूर्ण हो सकता है उदाहरण के लिए एक मोटर-कार डाक्टर के लिए आवश्यक और प्रोफेसर के लिये आरामदायक और किसान के लिये विलासितापूर्ण है। अतः पाठकगण यदि अपनी अपनी आवश्यकताओं पर ध्यान देंगे तो निश्चय ही जीवन स्तर ऊंचा होगा और निपुणता में वृद्धि होगी।

आर्यसमाज और ब्रह्मकुमारि मतादि

(ले०—प० श्री चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी, उपदेशकसभा, सोनीपत)

बन्धुओं महर्षि दयानन्द ने खण्डन-मण्डन केवल हित की दृष्टि से आर्यसमाज की स्थापना और अमर-ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाशादि पुस्तके लिखीं, जब तक आर्य विद्वानों ने राष्ट्र हित खण्डन-मण्डन किया तब तक आर्यसमाज भी खूब चमका, अन्य मतलम्बी भी बड़ी सावधानी से हमारे सामने आते रहें पाखंडी भी दहल गये सच जानिये आर्यसमाज इन दम्भियों वास्ते हौवा था बड़े-बड़े पादरी और मुल्ला भी आर्यसमाज के कारण चौकस रहते—जादू टोना करने वाले तो चूहों की तरह बिल्लों में भागे। अफसोस आज आर्यसमाज तथा इसका विद्वान हर दिल अजीजी में फंसा तो प्यारे ऋषि के तर्क के तीर टूटने लगे, आज विरोधी फिर सर उठाने लगे राम और कृष्ण को जन्म देने वाली मातृ-शक्ति विशेष कर पतन की ओर जाने लगी, जगत को गुरु देने वाली मां आज साधारण पाखण्डियों के सामने अपना सिर झुकाती फिरती हैं हाय आज मातृ-शक्ति गुमराह होती चली जा रही है, मुक्ति की लालच मे ब्रह्मकुमारियों की पलटनमें सम्मिलित हो रही है जहां सिवाए नंगे नाच व्यभिचार आदि के अतिरिक्त कुछ नहीं होता मेरे पास इन की काली करतूतों के प्रमाण हैं जहां दिन में पति पत्नी न हो और रात्री को पति पत्नी बन जाए, गुरुओं का जूठा खाना उनकी थूक चाटना उसी में मुक्ति समझे अक्ल का दिवाला नहीं तो और क्या है भोले हिन्दू राधा स्वामी मत और वनिरकारी आदि मत के जाल में फंस रहे हैं हालांकि वैदिक फिलसफा यह है शुभ कर्म करने में मुक्ति है, ये लोग सारा वर्ष पाप करें केवल वर्ष में एक बार गंगा में स्नान करें या अपने गुरु की थूक चाटने या दादा लेखराज की गोदी में बैठ प्यार कराने में मुक्ति समझते हैं ये कितना महा अन्धेर है हाय हिन्दू कौम तुझे क्या हो गया कर्मयोगी महाराज कृष्ण की गीता को ध्यान से पढ़ आज तेरी खोपड़ी ज्ञान शून्य है क्या—जरा कृपा करके प्यारे योगीराज दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को एक टक लगा कर पढ़ के देख गहरा गोता लगा। सचमुच इस से मोती ही मोती मिलेंगे स्वर्गवासी पं० गुरुदत्त जी एम. ए. वीतराग साधु स्वामी सर्वदानन्द जैसे महापुरुष इस अमर ग्रन्थ के द्वारा अपना जीवन सफल कर गये सो बन्धुओं तथा मातृ-शक्ति मत भटको इधर-उधर उर्दू के कवि ने लिखा है, दिलबर तेरे आगे खड़ा है, मगर नुक्स तेरी नजर में पड़ा है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

कुछ ऐतिहासिक भ्रम

(ले०—प. सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि)
प्राध्यापक—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

वर्तमान युग के महान् सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जहां अन्य अनेक मिथ्या धारणाओं का खण्डन कर वेदानुमोदित विचारों का प्रचार किया, वहां अपने प्राचीन इतिहास के विषय पर भी संक्षिप्तरूपेण विचार प्रस्तुत किये। महादेव गोविन्द रानडे की इच्छा एवं प्रबन्ध से पूना नगर में महर्षि दयानन्द के १५ व्याख्यान हुये, उन में से कई व्याख्यान अपने प्राचीन आर्यों के इतिहास से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखते थे। अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ—प्रकाश के ११ वें समुल्लास के अन्त में भी महर्षि ने अपने समय में भारतीय इतिहास को एक नवीन एवं विशुद्ध रूप में उपस्थित किया। उस समय यवन एवं अंग्रेजों के शासन की गुलामी में ढले दिमागों ने भारतीय इतिहास को बहुत विकृत कर दिया था। पाश्चात्यों के अन्धे अनुयायी कुछ भारतीय जनों ने भी इस कुकृत्य में सहयोग दिया तथा अब भी दे रहे हैं। सब से पूर्व महर्षि दयानन्द ने ही भारत को अपने इतिहास को भारतीय विशुद्ध दृष्टि कोण से पढ़ने लिखने एवं विचारने को प्रेरित किया। उस समय यह भावना प्रचलित थी कि आर्य लोग आर्यावर्त के मूल निवासी नहीं हैं, आर्यों से पूर्व यहां द्राविड़, कोल, भील आदि रहा करते थे, आर्य लोग बाहर से आये और उन को, युद्ध में हरा कर दक्षिण में खदेड़ दिया तथा स्वयं रहने लगे। महर्षि ने इस धारणा का प्रबल प्रमाणों से खण्डन किया तथा आर्यों को यहां का मूल निवासी बताया। इस सम्बन्ध में इतना वक्तव्य है कि यदि आर्यों से पूर्व यहां ये लोग रहते थे तथा आर्य बाद में आये तो जहां मनुष्य रहते हैं, उस देश का कोई नाम अवश्य होता है। यहां अंग्रेज आये, उन्होंने इस देश को इण्डिया नाम दिया। जब यवन शासक थे तो उन्होंने कलंक रूप हिन्दोस्तान नाम दिया। उससे पूर्व भारत प्रचलित था। उससे भी पुरातन नाम आर्यावर्त था। क्योंकि आर्य यहां रहते थे, यदि आर्यों से पूर्व द्राविड़, कोल भील आदि रहते थे तो उस समय इस देश का क्या नाम था? हमारे इतिहास में सबसे पुराना नाम आर्यवर्त ही मिलता है, इससे सिद्ध है कि आर्यों से पूर्व इस देश में कोई नहीं रहते थे, रहते तो इस का कोई नाम होना चाहिए था। यह तो भारतीयों में फूट डालने के उद्देश्य से कूटनीतिनिपुण अंग्रेजों ने हमारे इतिहास में गड़बड़झाला किया है।

इसके साथ-साथ हमारे इतिहास ग्रन्थों में आर्यों के गौरव स्वरूप, महान नीतिज्ञ चाणक्य के शिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य के सम्बन्ध में भी एक भ्रान्त धारणा प्रचलित है। वह यह है कि चन्द्रगुप्त मौर्य मुरा नामिका शूद्रादासी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे अतः वे "मौर्य कहलाए। इस सम्बन्ध में वे यह प्रमाण उपस्थित किया करते हैं। कि "मुद्राराक्षस" नामक संस्कृत के नाटक में चाणक्य चन्द्रगुप्त को "वृषल" शब्द से सम्बोधित करते हैं। न्याय एवं सभ्यता की दृष्टि से यह उनका पक्ष सर्वथा मिथ्या एवं भ्रान्तिपूर्ण है। क्योंकि "मुरा" से उत्पन्न मौर्य नहीं कहला सकता। मुरा शब्द से अपत्य अर्थ ढक प्रत्यय होने पर व्याकरण की दृष्टि से "मौरेय" शब्द बनेगा मौर्य नहीं बन सकता। वस्तु स्थिति यह है कि चन्द्रगुप्त मोरि नामक क्षत्रिय जाति में उत्पन्न होने के कारण मौर्य कहलाता था न कि मुरा दासी से उत्पन्न होनेके कारण। यह मोरि क्षत्रिय जाति पञ्जाब के द्वाबे में रहती थी। "मुद्राराक्षस" नाटक में जो वृषल शब्द है, प्रथम तो उस सम्बन्ध में यह जान लेना चाहिये कि नाटक नाटकीय दृष्टि से लिखे जाते हैं न कि ऐतिहासिक दृष्टि से। नाटक रचयिता दर्शकों वा श्रोताओं के मनोरंजनार्थ नाटक को रुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया करता है, उस अवस्था में ऐतिहासिक कथा वस्तु का स्वरूप कुछ तिरोहित वा विकृत हो जाये तो इस में कोई अतिशयोक्ति नहीं है। क्योंकि एक कथा को लक्ष्यकर संस्कृत में लिखे नाटकों की कथावस्तुओं में बड़ा भेद है यह उसी नाटकीय दृष्टिकोण को मुख्य रूपेण मान कर हुआ है। वृषल शब्द का अर्थ केवल शूद्र हो ऐसा ही नहीं प्रत्युत वृष नाम धर्म का है। उस धर्म को जो लाति=गृह्णाति अर्थात् ग्रहण करे वह भी धर्म का रक्षक क्षत्रिय वृषल कहलायेगा। क्योंकि कोई भी ख्यातनामा कूटनीतिज्ञ अपने शिष्य जिसे कि वह देश का एक मात्र सम्राट बनाना चाहता हो, उस को शूद्र जैसे तुच्छ अभिप्राय को लेकर वृषल शब्द से पुकार कर अनुत्साहित या अपमानित नहीं किया करता, प्रत्युत हौसला बढ़ाने के लिये श्रेष्ठ शब्दों का उच्चारण किया करता है। अतः चाणक्य ने यदि वृषल शब्द से चन्द्रगुप्त को सम्बोधित किया होगा तो निश्चित है कि उसका अर्थ श्रेष्ठ होना चाहिए। अतः चन्द्रगुप्त मौर्य भारत का श्रेष्ठ पुरुष था न कि वह शूद्र था।

इस विषय में तीसरी भूल व भ्रान्ति यह है कि चित्तौड़ के किले में महारानी पद्मनी अपनी १६हज़ार सखियों के साथ जलकर मर गईं। सम्भव है कुछ लोगों को मेरा यह कथन सर्वथा नया तथा असम्भव सा लगे और उनकी बुद्धि एकदम इसको मानने को तैयार न हो पुनरपि मैं अपनी इस धारणा की पुष्टि में निम्न हेतु प्रस्तुत करता हूँ।

(क्रमशः)

विश्व गुरु हो प्रिय भारत देश

—ले० पं० प्रकाश चन्द्र जी कविरत्न अजमेर—

आर्य शुभ कार्य करें अनिवार्य
दूर हो दम्भ-द्वेष-आवेश।
सभी हों शांत-दान्त निर्भ्रान्त
निरामय रहे न कोई क्लेश॥

मृदुल मानवता का हो राज्य
दुरित दानवता रहे न लेश।
वृहद् वर वन्दनीय वरणीय
विश्व-गुरु हो प्रिय भारत देश॥

पूर्ण हो दयानन्द अभिलाष
सुभाषित हो सौभाग्य दिनेश।
गुञ्जारित हो जाए सर्वत्र
दिव्य वैदिक शिक्षा सन्देश॥

आर्य प्रादेशिक सभा द्वारा वेदप्रचार

आ स लोहगढ अमृतसर–का उत्सव ७ से ८ सितम्बर को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। ३१ अगस्त से ६ तक पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की कथा और श्री राज पाल जी श्री मदन मोहन जी मंडली के भजन होते रहे। उत्सव पर श्री. प. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, श्री प. ओं प्रकाश जी पधार रहे हैं तथा अन्य गन्य मान्य महानु भाव भी।

८. ता. बाद दोपहर २ बजे मान्यवर, प. रला राम जी एम. ए. प्रधान सभा की अध्यक्षता में जिला भर की समाजों का सम्मेलन हो रहा है।

आ. स लारेंस रोड अमृतसर में–२६ से २७ प. दौलत राम जी शास्त्री और श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री की कथा होती रही १ सितम्बर से ६ तक प्रात पूज्य महात्मा जी की कथा होती रही। २ से ५ गोपाल नगर अमृसर में श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी और श्री मेला राम जी का प्रचार होता रहा।

श्री. हजारी लाल जी अमृतसर जिला की समाजों में सम्मेलन के उद्देश्य से प्रचार कार्य करते रहे।

श्री पं. ओं प्रकाश जी, श्री मा. तारा चन्द्र जी ने २७ अगस्त से ३ सितम्बर तक आ. स. पठान कोट में प्रचार किया।

श्री पं चन्द्रसेन जी ने महरौली आदि दिल्ली की समाजों में प्रचार किया।

श्रीमान ला. खुशीराम जी महाजन के निमंत्रण पर ५ सितम्बर से २० तक खुशी राम शास्त्री डलहौजी कथा करेंगे और श्री हजारी लाल जी के भजन होंगे।

आ. स. निडाना (रोहतक)–२२ से २५ अगस्त वेद सप्ताह सम्पन्न हुआ। श्री. प्रभुदयाल जी की मंडली तथा चौ. भूराराम जी पधारे।

आ. स. वजीर बाग श्रीनगर–(काश्मीर) का उत्सव २० से २२ सितम्बर को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है।

१३ सितम्बर से पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज कथा कहेंगे। श्री मेला राम जी के भजन होंगे।

आ स. नमक बाजार जिनदा–का उत्सव २० से २२ सितम्बर को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी, पं. ओं प्रकाश जी श्री राज पाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री ठा. दुर्गा सिंह जी पधार रहे हैं।

आ. स. कडाघाट का उत्सव–१३ से १५ सितम्बर को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। श्री पं. ओं. प्रकाश जी, पं. चन्द्र सेन जी, श्री राज पाल जी, श्री मदन मोहन जी, श्री दुर्गा सिंह जी, श्री मा. तारा चन्द जी पधार रहे हैं।

आ. स सलोगढ़ा का उत्सव–१६ से १८ सितम्बर को धूम धाम से सम्पन्न हो रहा हैं। कंडा घाट उत्सव पर पधारने वाले महानुभाव पधार रहे हैं।

माता पिता का ऋण

(ले०—श्री भक्तराम जी शर्मा अफ्रीका वाले)

कहते हैं कि बीरबल के माता पिता निर्धन थे पर उसने अपनी योग्यता से अकबर के दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। एक दिन बीरबल की माता ने कहा—'पुत्र ! मैंने लाख रुपया कभी नहीं देखा।' बीरबल के लिए लाख रुपया कुछ बात न थी। उसने उसी समय मंगवा कर ढेरी कर दिया और कहा—'माता जी ! यह लो लाख रुपया।' माता ने कहा—'अच्छा पुत्र ! मैंने देख लिया है। अब तुम इस को सम्भाल लो।' उसने कहा—'माता जी ! यह सारा रुपया दान कर दो।' माता ने ऐसा ही किया। तब बीरबल ने कहा—'माता जी ! आप ने बचपन में मेरी जो सेवा की थी क्या उसका बदला मैंने अब दे दिया है वा नहीं ?' माता ने उस समय तो कुछ उत्तर न दिया परन्तु रात को उसकी बिछाई पर पानी छिड़क दिया और कहा—'पुत्र ! आज तुम ने इसी बिछौने पर सोना।' शरदऋतु थी। बीरबल जब चारपाई पर लेटा तो उसे बिस्तरा ठण्डा लगा। बहुत दुःखी हुआ पर माता की आज्ञा थी इस लिए उठा नहीं। सारी रात करवट बदल २ कर काटी। बे आरामी से नींद न आयी। प्रात काल माता को प्रणाम करके बोला—'माता जी। मैं आप की आज्ञानुसार लेटा रहा अन्य था बिछौना गीला होने के कारण मैं रात भर न सो सका।' माता बोली—'पुत्र! जब तुम बच्चे थे मैं तुम्हें अपने साथ सुलाती थी। तुम बिछाई पर मूत्र कर देते थे तो इसी प्रकार वह गीली हो जाती थी। मैं उसी समय तुम्हें सूखे स्थान पर सुला कर स्वयं गीले स्थान पर सोती थी। तुम टट्टी (मल त्याग) कर देते थे तो तुम्हारे बार २ मूत्र करने के कारण जब बिछौने का कोई भाग भी सूखा न रहता था, मैं तुम्हें अपने हृदय पर

(शेष पृष्ठ ८ पर)

आ स. मंडी (हिमचल प्रदेश का)–उत्सव २६।३० सितम्बर १-२ अक्तूबर को सम्पन्न हो रहा है।

आ स. धारीवाल (गुरदास पुर)–का उत्सव २१ से ६ अक्तूबर को सम्पन्न हो रहा है। २६ सितम्बर से चार अक्तूबर तक खुशी राम शर्मा, कथा कहेंगे।

आ. स दयालपुरा करनाल–का उत्सव ३ से २३ अक्तूबर को सम्पन्न हो रहा है।

आ. स. माडल टाऊन लुधियाना–का उत्सव ११ से १३ अक्तूबर को सम्पन्न हो रहा है।

आ. स. ऊना का उत्सव–८ से १० नवम्बर को सम्पन्न हो रहा है।

आ. स. ८ सैक्टर चडीगढ का उत्सव–८ से ११ नवम्बर को सम्पन्न हो रहा है।

आ. स. किला जालन्धर नगर–का उत्सव २६।३० नवम्बर १ दिसम्बर को समारोह से सम्पन्न हो रहा है।

खुशी राम शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता

दयानन्द

'इसलिए जो उन्नति करना चाहो तो इस समाज के साथ मिल कर उस के उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिए, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा क्योंकि हम और आप को अतिउचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे होगा उस की उन्नति तन, मन, धन से सब, जने मिल कर प्रीति से करें। इस लिए जैसा 'आर्य समाज' आर्यावर्त्त देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता। यदि इस समाज को यथावत् सहायता देवे तो बहुत अच्छी बात है क्योंकि समाज का सौभाग्य बढ़ाना समुदाय का काम है। एक का नहीं।'

स्वामी दयानन्द जी

आर्यसमाजें हिंदी प्रचार को प्रगति दें

(पृष्ठ ३ का शेष)

४—जो सदस्य व्यापार करते हैं वे अपने फर्मों की स्टेशनरी हिंदी में छपवायें और यथासम्भव हिन्दी में ही पत्र-व्यवहार करने का यत्न करें। अपनी फर्मों, कम्पनियों कारखानों आदि का नाम हिन्दी में रखें। तार के संक्षिप्त पते हिन्दी नामों से पंजीकृत कराएं। नाम पट्ट आदि हिन्दी में लिखायें तथा बैंकों के चैक हिन्दी में काटें और उनसे पत्र व्यवहार हिन्दी में करें। न्यायालयों में कोई कागज पत्र दाखिल कराना हो तो उसे हिन्दी में लिख कर दें।

५—विवाह आदि के अवसरों पर जो निमन्त्रण पत्र छपवाने हों वे हिन्दी में ही छपवायें।

६—जिन सदस्यों के अपने मुद्रणालय हैं वे ग्राहकों को स्टेशनरी निमन्त्रण पत्र आदि हिन्दी में छपवाने की प्रेरणा दें।

७—आर्यसमाज की सभी संस्थाएं अपना कार्य व्यवहार हिन्दी में करें, उनकी समस्त लेखन-सामग्री, परिपत्र आदि हिन्दी में छपें तथा पत्र-व्यवहार हिन्दी में हो। अभी तक कई आर्य-संस्थाएं, विशेषतः शैक्षणिक संस्थाएं शिक्षा विभाग तथा अन्य सरकारी कार्यालयों से अंग्रेजी में पत्र व्यवहार करती हैं। यह शोभनीय नहीं है।

८—आर्यसमाज के जो सदस्य किसी अन्य संस्था के पदाधिकारी अथवा कार्यकारिणी के सदस्य हों वे अपने प्रभाव से उन संस्थाओं का कार्य हिन्दी में कराने का यत्न करें।

९—आर्यसमाज के सभी सदस्य अपने सामूहिक प्रयास से ऐसा वातावरण निर्माण करें कि सर्व-साधारण नागरिक अंग्रेजी का मोह छोड़कर हिन्दी की ओर आकृष्ट हों और हिन्दी को व्यवहार में लाने का गौरव अनुभव करें।

इस दिशा में आपके क्षेत्र में जो काम हो उसकी कृपया समय-समय पर समीक्षा करते रहिये तथा उसकी सूचना सार्वदेशिक सभा को देते रहिए।

प्रकाशवीर शास्त्री संसत्सदस्य
उपप्रधान—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा नई देहली

माता पिता का ऋण

(पृष्ठ ७ का शेष)

डाल देती थी। एक रात नहीं परन्तु तीन वर्ष पर्यन्त ऐसा होता रहा। तुम एक रात में ही तंग आगये। बस पुत्र! इतना ही धैर्य था? मैं तो अधीर न हुई थी अपितु बहुत प्रसन्न रहती थी। मैंने तुम्हें छाती से लगाते हुए कभी बेआरामी अनुभव न की थी। तुम समझते हो कि एक लाख रुपया दान करवाके तुम मातृ ऋण से उऋण हो गये।' वीरबल ने माता के चरण पकड़ लिये और कहने लगा—'माता जी! मैंने बड़ी भारी भूल की जो समझ बैठा कि तुच्छ-सी राशि दान करवाने से मैंने आपकी सेवा का मूल्य चुका दिया। आपने मेरे लिए जो कष्ट सहे उनका बदला एक जन्म में तो क्या जन्म-जन्मान्तरों में भी उतारा नहीं जा सकता।' मनु महाराज लिखते हैं—

यं मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्। न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥
(मनु० २।२२७)

अर्थ—मनुष्यों की उत्पत्ति में (और पालन-पोषण में) जो क्लेश माता पिता सहारते हैं उनका बदला सैंकड़ों वर्ष भी नहीं दिया जा सकता।

[आर्य] समाज ब्रह्मकुमारी मतादि

(पृष्ठ ५ का शेष)

वेदभगवान कहते हैं नान्यः पन्था विद्यते अयनाय इस से बढ़ कर कोई मार्ग नहीं आर्य विद्वानों हर दिल अजीजी छोड़ आर्य समाज को सही पथ पर लाओ, जितने भी पाखण्डी मत हैं इन्हें चेतावनी देनी चाहिये ताकि पाप आदि न फैले इस मुक्ति के नाम पर अनेक प्रकार से अत्याचार होरहे हैं इन्हें रोकें आज तो बुद्धि का युग है सोच समझ कर चलना चाहिये इस रोग को हमारी मोतियों वाली सरकार नहीं रोक सकती है, इसे केवल दयानन्द की आर्यसमाज ही रोक सकती है आओ हम अपने कर्त्तव्य को निभाएं इसलिये मैंने लिखा आर्य समाज ब्रह्मकुमारि मतादि—

आवश्यक निवेदन

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की दो तीन पुस्तकें लिखी थीं। उनके प्रवचनों का संग्रहरूप 'मोतियों की माला' के नाम से एक किताब श्री राजपाल एण्ड सन्ज की ओर से भी छपी थी। मानवधर्म तथा ऋषि दर्शन की पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं। जिन सज्जनों या समाजों के पुस्तकालयों में ये मौजूद हों कृपा करके सूचित करें। उनकी आवश्यकता है।

—त्रिलोक चन्द्र

श्री प्रि० पं० रला राम जी M.A., M.L.A. श्री नगर में

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री पं० रला राम जी M.A. M.L.A. २० सितम्बर को आर्य समाज वजीर बाग श्री नगर के उत्सव पर पधार रहे हैं। उत्सव २०. २१. २२ सितम्बर को बड़ी धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है। काश्मीरी जनता इस शुभ अवसर पर पधार कर पंडित जी के ओजस्वी भाषणो से लाभ उठाएं।

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टलीफोन नं० २०७३ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P 121

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३७) रविवार ३० भाद्रपद २०२०— १५ सितम्बर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

अपाम्मत्मर्वं दुर्भूतम्

हे प्रभो ! हम से सर्व—सारे दुर्भूत-बुरे विचार अप-दूर कर दवें। जिन विचारों से हमारे जीवन में विकार उत्पन्न होता है वे सारे बुरे भाव, बुरे व्यसन, बुरे गुण दूर हो जावें-प्रभो ! उन्हें दूर कर दो।

अप क्षेत्रियमुच्छतु

हे पित ! यह हमारा क्षेत्रिय-शरीर का समस्त रोग, अभंध, कर्मध आप उच्छतु-परे भाग जायें, दूर कर दीजिये। शरीर में पैदा हो कर मुझे निर्बल बना देने वाले सारे रोग ताप परे परे भाग जावें।

त्वा मुञ्चन्तु क्षेत्रियात्

हे मनुष्य ! ये जल अपने रोगनि-वारक तथा कीटाणुमारक गुणों से तुझ को शरीर गत सारी बीमारियों से सदा मुक्त कर देवें तेरे शरीर में कोई भी रोग पैदा न होने पावे-जल से लाभ उठा।

अथर्ववेद

वेदामृत

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥ यजु० अ० ३४ मं० २

अर्थ—(येन) जिस मन से (कर्माणि) कर्मों को (अपसः) कर्मशील पुरुष (मनीषिणः) मनीषी ज्ञानी लोग (यज्ञे) यज्ञ परोपकार में (कृण्वन्ति) करते हैं, नानाविध कर्म करते हैं तथा (विदथेषु) संग्राम आदि कर्मों में (धीराः) धीर वीर लोग लगते हैं और (यत्) जो यह मन (अपूर्वं) अद्भुत है (यक्षम्) पूजा के योग्य है, (अन्तः) हमारे अन्दर (प्रजानां) सारी इन्द्रियों में उत्तम है—(तन्मे मन) वह हमारा मन सदा शुभ संकल्प वाला होवे, सदा पवित्र विचारों से भरा हो।

भाव—हम इस संसार में नाना प्रकार के विविध क्षेत्रों में जितने भी कर्तव्य कर्म करते हैं तथा विद्वान मनीषी सज्जन परोपकारमय यज्ञ आदि लोकहित के कामों में तथा वीर पुरुष युद्ध समर के राष्ट्रिय कार्यों में जुटे रहते हैं—उनका सब से बड़ा प्रमुख साधन मन ही तो है। इसके बिना जीवन यात्रा का कोई भी कार्य नहीं हो सकता। यह बड़ा ही अद्भुत, विचित्र तथा अपूर्व है। यह बुरा नहीं अपितु पूजनीय एवं प्रशंसनीय है। जीवन की बड़ी शक्ति है। सब कुछ इसी की कृपा से है। सारी इन्द्रियों में यह बड़ा है, इनका राजा सा है। इस लिए यह मन सदा शुद्ध विचारों वाला बन जाये। जैसा मन वैसा ही जीवन बनता है उत्तम तो उत्तम व अधम तो अधम—सं०

ऋषि दर्शन

विज्ञानानन्दस्वरूप:

वह परमात्मा विज्ञान और आनन्द स्वरूप है। उसी में सारे ज्ञानों का भण्डार भरा हुआ है तथा आनन्द का धाम केन्द्र है। उसी से आनन्द की प्राप्ति होती है।

ब्रह्म परमेश्वरो वेद:

ब्रह्म परमेश्वर को तथा वेद को कहा जाता है। ईश्वर का नाम ब्रह्म इस लिए है कि वह सब से महान है वेद भी ब्रह्म है। क्यों कि वह ज्ञान भी महान है।

सुखस्वरूपोऽसि

हे जगदीश्वर ! आप सदा सुख स्वरूप हो। सारे सुखों के आप ही तो भण्डार हो। सब को सुखों का प्रसाद दे रहे हो। आनन्द के धाम आप ही हो।

भाष्य भूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अध्यात्मवाद की आवश्यकता

ले. श्री दयानन्द जी आर्य एम.ए. विद्यार्थी साधु-आश्रम होश्यारपुर

युग-युगान्तरों से मानव नाना-विध उपभोगों को भोग कर शान्ति व सुख की प्रवल इच्छा करता आया है। किन्तु भारतीय ऋषि मुनियों ने अपने जीवन को त्याग की भट्टी में कुन्दन बनाते हुए इस तथ्य को सत्य सिद्ध किया कि जब तक ईश्वर एवं धर्म को जानकर उन्हें यथोचित विधि से न पाया जाए तब तक सुख के भव्य भवन का आनन्द लेना महा कठिन व असम्भव है। कह सकते हैं कि गैलिलीयो ब्रूनो ने जब ईसाई-मत के सिद्धान्तों का ध्यान न करके वैज्ञानिक आविष्कारों को जन-जनार्दन के सम्मुख प्रस्तुत किया तो पादरी वर्ग ने उन पर वे अमानुषिक अत्याचार किए जिन्हें पढ़ कर व देखकर लज्जा भी लज्जाती थी। परन्तु वास्तव में यह धर्म का दोष नहीं धर्म के नाम जो अत्या-चार किए गए वह धर्म ने नहीं सिखाए। धर्म की परिभाषा महर्षि कणाद ने यों की कि :—

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धि स धर्म वा जो लौकिक व पारलौकिक उन्नति का द्वार कहो वही धर्म है।

मानव यदि भौतिक उन्नति कर ले किन्तु मन की मनोवृत्तियां दूषित हों तो सारा ताना बाना बिगड़ जाता है। वेद ने तभी मानव को यह उपदेश दिया कि 'मनुर्भव' अर्थात ओमानव तू सही अर्थों में मानव बन। अथवा मानव का लक्षण निरुक्त ने यह किया कि 'मत्वा कर्माणि सीव्यति अथवा जो सोच कर कार्य करता है वह मानव है। मन को सुधारने का ढंग प्रभु-भजन, अभ्यास वैराग्य है। सुख-शान्ति का मार्ग ऋग्वेद के ९-११३-११ में मन्त्र से स्पष्ट है कि 'यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुदः आसते कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परिस्रव' एक विद्वान् ने आंगल भाषा में इस मंत्र का अनुवाद यों किया है कि :—

'O Good! make we immortal in that realm where in happiness and bliss are in abundance, where in felicity and cheerfulness are continued together and all the desires are fulfilled, O lord, be gracious to us for the attainment of that state of prosperity.

भारत के महापुरुष यथा भगवान् कृष्ण, गुरु नानक कवीर, स्वामी दयानन्द गौतम कपिल कणाद आदि सज्जनों ने यही कहा कि संतप्त व पीड़ित मानव को अध्यात्मवाद की प्रवल आवश्यकता है। मनु जी ने भी कहा—

'धर्म एव हतो हन्ति
धर्मो रक्षति रक्षतः।
तस्माद् धर्मो न हन्तव्यो
मानो धर्मः हतो वधीत ॥

अर्थ यह है कि मारा हुआ धर्म मार देता है, रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करता है। अतएव धर्म को न मारो कहीं धर्म हमें न मार दे। धर्म हितकर कर्तव्य है। ईश्वर नियन्ता है। अन्ततः अध्यात्मवाद ही कल्याण पहुंचा सकता है।

आधुनिक युग में अध्यात्मवाद को कितनी जरूरत है इस विषय पर दयानन्द जी ने जो विचारधारा चलाई है उसके अवगाहन से अध्यात्मवाद की विशेष-ताओं पर पूरा प्रकाश डालकर उसकी उपयोगिता को सिद्ध किया है। —व्यवस्थापक

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर में

श्री पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज की वेद कथा ससमारोह सम्पन्न

वेद प्रचारार्थ आर्यसमाजों और आर्य संस्थाओं ने श्रद्धापूर्वक २५००) की थैली भी पूज्य महात्मा जी को भेंट की।

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर के ८६वें वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में पूज्य श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की वेद कथा और सभा की प्रसिद्ध चिमटा मण्डली (श्री राजपाल मदन मोहन) जी के भजन उत्सव से एक सप्ताह पूर्व होते रहे। जनता ने वेदामृत को बड़ी श्रद्धा और भक्ति से पान किया। पूज्य महात्मा जी के अन्दर जनता को मोहित करने की विलक्षण शक्ति है भगवान् ने उनकी वाणी में मिठास भर दी है। जनता उनके प्रवचन और उपदेशों श्रवण करने के लिए सदा ही लालायित रहता है।

अमृतसर में रात्रि की वेद कथा लोहगढ़ समाज में और प्रातःकाल आर्यसमाज लारेंस रोड में वेदो-पदेश होते रहे दोनों समाजों में श्री पं० राजपाल जी, मदनमोहन जी के सुमधुर संगीत भी जनता को आह्लादित करते रहे। उपस्थिति दोनों स्थानों पर पर्याप्त होती रही।

अमूल्य वचन

१. भले मनुष्यों के कानों की शोभा वेद-शास्त्र सुनने से है कुण्डल पहिनने से नहीं, हाथों की शोभा दान करने से है, कंकण से नहीं और देह की शोभा परोपकार करने से है चन्दन के लेप से नहीं।

२. सावधान! कहीं धर्म, सदा-चार, ईश्वर भक्ति और ज्ञान प्रचार के नाम पर अपने व्यक्तित्व का प्रचार मत करने लग पड़ना क्योंकि आरम्भ में शुद्धभावना के कारण प्रचार की ही प्रधानता रहती है परन्तु आगे चल कर ज्यों २ प्रचार का क्षेत्र बढ़ता जाता है त्यों २ प्रचार गौण और व्यक्तित्व मुख्य हो जाता है।

३. जब तक मन में काम, क्रोध लोभ, मोह और अहंकार की कान बनी हुई है तब तक पण्डित और मूर्ख एक जैसे ही हैं।

४. असत्य बोलने से यज्ञ का फल नष्ट हो जाता है, अभिमान करने से तप नाश हो जाता है, ब्राह्मण की निन्दा करने से आयु घटती है और किसी को दिया हुआ दान बतला देने से वह निष्फल हो जाता है।

५. जब शान्त और सतोगुणी होकर चित्त आत्मा में लग जाता है तब धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य की प्राप्ति स्वयं हो जाती है। जब चित्त रजो गुणी विषयों का अनुरागी बन जाता है तब अधर्म अज्ञान प्रिय लगते हैं। तमोगुणी की दशा में विषयासक्ति और नास्तिकता छा जाती है।

संगृहीता—भक्तराम
(अफ्रीका वाले)

सम्पादकीय--

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, १५ सितम्बर १९६३ [अंक ३७

समाज सुधार की ओर

शरीर के समान समाज में भी समय २ पर अनेक रोग उत्पन्न होते रहते हैं, जिनके कारण सामाजिक जीवन में दुर्बलता और विकारों का जन्म होने लगता है । यदि इन कुरीतियों को दूर न किया जाए तो तनिक-सी होती हुई भी आकाश बेल की भांति सारे समाज के हरे-भरे वृक्ष को अपनी लपेट में लेकर उसे रसहीन बनाकर रख देती हैं । रोग ऋण तथा शत्रु छोटा-सा भी हो तो बढ़ कर भीषण परिणाम का बन जाता है। यही कारण है कि इन रोगों से सदा सबको सावधान रहना पड़ता है । बीमारियां पैदा ही न हों और यदि कभी सिर निकालने भी लगें तो सभ्य समाज का यह परम कर्तव्य है कि इस अंकुर को आरम्भ में ही दबा दे या उखाड़ कर फैंक दे। इस मे व्यक्ति तथा समस्त का भला है।

हमारे भारतीय समाज मे कितनी कुरीतियां पैदा होकर हमें दुःख दे रही हैं । सारे राष्ट्रिय, सामाजिक जीवन की कितनी दुरवस्था है । यह सारा बीभत्स चित्र हमारी आंखों के सामने है । इसके बारे में कुछ भी कहने लिखने की आवश्यकता नहीं इस में अनेकों ऐसी बुरी प्रथाएं हैं जिनके कारण सारा समाज निर्बल होता चला जाता है । जीवन में विलासिता, पतन और असंयम पैदा हो रही है। विशेषकर विवाह के अवसर पर जितना आडम्बर व्यय तथा मर्यादा हीनता का नंगा नाच होता है, उसे देखकर कौन सभ्य नर-नारी है जिस की आंखे एवं मन आज रोते नहीं हैं। इन बुराइयों को रोकने, दूर करने का प्रयत्न तो दूर रहा और अधिक सामाजिक रोगों में वृद्धि होती जा रही है। अभी दहेज प्रथा के विषैले परिणामों पर ही थोड़ा बहुत विचार किया जाने लगा था किन्तु इसके साथ २ विवाह में बरातों मे भंगड़ा, आतिशबाजी तथा अश्लील गीतों की नई बीमारी आरम्भ होती जा रही है। यह बड़ी तीव्रता के साथ फैलती जा रही है । ऐसा प्रतीत होता है कि समाज के इन लोगो पर किसी का भी अंकुश नहीं, किसी से भी लाज नहीं न उन्हें अपव्यय का विचार है, न राष्ट्र की वर्तमान विषम परिस्थिति का ध्यान है तथा न उनको किसी प्रकार की मर्यादा, सभ्यता, आचार की ही चिन्ता है। टूटे किनारे वाली नदी की जलधारा के मर्यादाहीन प्रवाह के समान तथा अंकुश हीन मदमस्त हाथी के समान ऐसी सारी मर्यादाओं को लांघ गये है । बरातो के इस भंगड़ा नाच मे न केवल युवक ही शामिल है अपितु युवतियां भी सम्मिलित होकर अपनी मर्यादा से हीनता में आगे निकल गई है । लाज को भी लाज आती है । आतिशबाजी मे कितना अपव्यय ? भला हो जालन्धर नगर के गण्य-मान्य सज्जनो का तथा अमृतसर की केन्द्रीय आर्य सभा के सज्जनों का, जिन्होंने इस भीषण बुराई का प्रति कार करने के लिए कमर कस कर मैदान में आ गए हैं। इस महा-रोग को रोकने, बन्द करने के लिए सारे नगर निवासियों का ध्यान इस आवश्यक बात की ओर दिलाया है। जालन्धर तथा अमृतसर के इन महानुभावों के इस समाज सुधार के पवित्र भाव को देखकर हम इस भयंकर बीमारी को समाप्त करने में निरत एवं ऐसे मर्यादाहीन लोगों पर समाज का कड़ा अंकुश लगाने के लिए ऐसे सुन्दर संगठन के कर्णधारों की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। इन सज्जनों ने इस फैलने वाली कुप्रथा को रोकने का बीड़ा उठाया है। ऐसे कड़े कदम को उठाये बिना अंकुशहीन व मर्यादा तोड़ने वाले नरनारी बाज नहीं आ सकते। वे समझते हैं कि हम स्वतन्त्र हैं। हम जो भी करे हमें कौन रोक सकता है। उनको अपनी भुजाओं या चार पैसो पर मान है। किन्तु जिस काम से समाज मे दूषित वातावरण पैदा होने लगे उसे रोकने का सब को अधिकार है। व्यक्ति की स्वतन्त्रता का सब मान करते हैं, पर जिस स्वतन्त्रता मे मर्यादा ही टूट जाये, सारे समाज के वातावरण में विषैला-पन पैदा होता हो, उसे तत्काल रोकने का सब को अधिकार है। बरातों में भंगड़ा डालने वाले युवक युवतियां जिस असभ्यपन का प्रदर्शन करते हैं, वह सब के सामने हैं। हम चाहते है कि जालन्धर तथा अमृतसर के समाज सुधार के इस आवश्यक संगठन को सारे पंजाब में फैला कर भंगड़ा नाच एवं आतिशबाजी के अपव्यय को कड़ाई से रोका जाये।

—त्रिलोक चन्द्र

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का कथा कार्यक्रम

आर्य जगत् के प्रसिद्ध तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती का कथा का कार्यक्रम निम्नलिखित स्थानों पर है। आर्यसमाज लोहगढ़ तथा आर्यसमाज लारेंसरोड अमृतसर के महोत्सव तथा कथा प्रवचन के पश्चात् एक सप्ताह तक अमृतसर में अपनी अस्वस्थ अवस्था का उपचार कराने के बाद

आर्यसमाज दीवानहाल देहली मे २१ सितम्बर से ४ अक्तूबर तक
आर्य समाज हनुमान रोड देहली ७ अक्तूबर से १३ तक
भक्ति आश्रम रोहतक १४ अक्तूबर से १७ तक
तपोवन नालापानी देहरादून २०अक्तूबर से ४नवम्बर तक
आर्यसमाज रीडिंग रोड नई देहली ५ नवम्बर से १० तक

पाते हैं।

अगले अंक में

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी ने अस्वस्थ होते हुए भी एक सप्ताह निरन्तर आर्यसमाज लोहगढ़ तथा आर्यसमाज लारेंसरोड में जो अमृतमय आध्यात्मिक प्रवचन दिये। उन में से एक अगले अंक मे पढ़िये। इसी प्रकार से प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० प्रधान सभा का प्रवचन तथा श्री ला० देवीचन्द जी एम० ए० का भाषण भी समय पर पढ़िये। —सं०

आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन हुशियारपुर

इस मिशन ने मास जौलाई अगस्त में उड़ीसा और पंजाब प्रान्त मे ५६ अहिन्दुओं को वैदिक धर्म में प्रविष्ट किया।

शादीलाल
मंत्री मिशन

आर्यसमाज अमर है और रहेगा

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर में समारोह

महात्मा आनन्द स्वामी जी को २५००) की थैली

आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर बड़ा पुराना तथा विशाल समाज है। इस नगर के समाज के पुरातन इतिहास में लोहगढ़ आर्यसमाज अन्य आर्यसमाजों की माता के समान है। यह सब से पुराना केन्द्र है, धर्म का मानसरोवर है, जिससे अनेक प्रकार के आर्यसमाजों के शानदार स्रोत निकल कर नगर के सारे भागों में प्रवाहित होकर अपनी प्रचार की रसीली धारा से जन-जीवन की मानसधरा को तृप्त तथा आप्लावित कर रहे हैं। कभी युग था जब कि आर्यसमाज लोहगढ़ के विशाल प्रांगण में स्वर्गीय पूज्य महात्मा हंसराज जी, पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी, वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी आदि समाज के स्तम्भों के ओजस्वी प्रवचन होते हैं। मौलाना सनाउल्ला, श्री अब्दुलहक विद्यार्थी तथा अन्य विधर्मियों के साथ आर्यसमाज के महारथियों के शानदार शास्त्रार्थ हुए, जिनकी धाक आज भी जनता के मन पर अंकित है। मान्य बाबा गुरमुखसिंह जी, सेठ जगन् बन्धुजी ज्ञानी पिण्डीदास जी, प्रिंसिपल बहल जी, श्री धर्मपाल जी सरीखे कर्मठ कार्यकर्ता काम करते थे और अब भी कर रहे हैं। इसका महोत्सव शानदार होता था। सभा के समाजों में इसका विशिष्ट स्थान था।

मध्य युग में इस में थोड़ी बहुत शिथिलता सी आने लगी थी। पर गतवर्ष के समान इस वर्ष तो महोत्सव के समारोह में कमाल ही हो गया। इस बार समाज के वार्षिक ८६ वें महोत्सव का कार्यक्रम निरन्तर दस दिन का था। आरम्भ में आर्य समाज के तपस्वी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की लगातार ३१ अगस्त से ६ सितम्बर तक सप्ताह की अध्यात्मवाद की मधुर कथा ने तो नगर में अमृत का वह प्रवाह बहाया कि जनता की मस्ती का क्या कहना? प्रतिदिन रात्रि को इतनी भीड़ होती थी कि समाज का विशाल प्रांगण ऊपर की सारी गैलरियां, बड़ा हाल, बाहर सड़क सब भर जाते थे। स्थान की तंगी अनुभव होने लगी। ता० ६ को पूज्य महात्मा जी की सेवा में सभा के वेदप्रचार के लिए मान्य श्री प्रिंसिपल... ..अरोड़ा डी. ए वी. कालेज अमृतसर ने २५०० रु० की थैली भेंट की।

महोत्सव में मान्य स्वामी ध्रुवानन्द जी प्रधान सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली, मान्य ला० देवी चन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशनमिशन होशयारपुर, मान्य प्रिंसिपल रला राम जी एम० ए० प्रधान आर्यप्रादेशिक सभा पंजाब श्रो० कुंवर सुखलाल जी आर्यमुसाफिर, पं त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, श्री पं० ओमप्रकाश जी महोपदेशक, वीर यज्ञदत्त जी शर्मा, मान्य स्वामी रामेश्वरानन्द जी M.P. पं० राजपाल मदन महोन जो चिमटा मंडली, जल्सा क्या था, बड़ा भारी मेला लगा हुआ था समाज के प्रेम में नर नारियों की श्रद्धा भी देखने वाली थी। समाज के अधिकारियों श्री ज्ञानी पिण्डी दास जी प्रधान, प्रो० वेदव्रत जी M.Sc. मन्त्री, श्री प्रिंसिपल अरोड़ा जी दयानन्द कालेज अमृतसर, श्री धर्मपाल जी कपूर आदि ने भी इस में दिनरात एक कर के कमाल ही कर दिया। स्त्रीसमाज तथा सारी माताओं ने भी कोई कसर न रखी। देशरक्षा सम्मेलन एवं कविसम्मेलनों का क्या कहना? नगर की सारी समाजों, संस्थाओं का पूर्ण सहयोग था। श्री मान्यवर पं० दौलत राम जी शास्त्री के ब्रह्मत्व में यज्ञ भी हुआ। हम इस शानदार सफलता पर सारे समाज को हार्दिक बधाई देते हैं।

आर्यसमाज लारेंस रोड में अमृत प्रवाह

महात्मा आनन्द स्वामी जी की मधुर कथा

वेद प्रचार में ५००) की थैली भेंट

अमृतसर नगर में लारेंसरोड (मालवीयपथ) एक विशिष्ट इलाका है। यह सुन्दरता, वैभव, कोठियों विशालता तथा शिक्षा में बहुत आगे है। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि यहां अधिक वैभव, सम्पन्नता के भण्डार भरे होते हैं, वहां आस्तिकता आध्यात्मिक प्रेम, धर्म निष्ठा कम ही होती है। किन्तु लारेंसरोड इस का सर्वथा अपवाद ही है। सम्पन्नता तथा आध्यात्मिकता ये दोनों ही धर्म और अर्थ मिलकर यहां निवास करते हैं। इसका परिचय यहां पर बने आर्यसमाज मन्दिर के विशाल भवन को देखकर मिल जाता है। परिवार सम्पन्न भी हैं एव धर्म की रुचि से पूर्ण भी हैं। इस समाज में भी दैनिक रूप से सत्सग लगता है। बड़ी श्रद्धा से यहां के ऊंचे २ परिवारों के सज्जन व देवियां प्रातःकाल ही सूर्योदय से पूर्व ही यज्ञशाला में पहुंच कर यज्ञारम्भ कर देते हैं तथा बाद में कथा में शामिल होते हैं। यहां के सज्जन स्वाध्याय में बहुत ऊंचे गम्भीर विवेचन के प्रेमी हैं। सत्संग का मधुर प्रवाह चलता रहता है देवियां और सज्जन दैनिक स्नान करते हैं। आर्य जगत के तपस्वी सन्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज वर्ष में एक सप्ताह तो अवश्य ही आर्यसमाज लारेंस रोड में कथा के लिए प्रदान किया करते हैं। यहां के स्वाध्यायशील नर-नारियों के धर्मभाव पर महात्मा जी भी प्रसन्न हैं।

इस बार भी पहली सितम्बर से लेकर ६ सितम्बर तक आर्यसमाज मे प्रातःकाल के समय पूज्य महात्मा जी की मधुर रसीली कथा आरम्भ हुई। आप के व्यक्तित्व में, सौम्यभाव, मधुर प्रवचन तथा सरलतम शैली में कितना आकर्षण है। इसका परिचय व दर्शन तो देखने वालों को ही होता है। प्रातः काल की कथा में कितनी भारी उपस्थिति होती थी। ऊंचे २ परिवारों के नर-नारी प्रातःकाल ही किस श्रद्धा, आस्था से मन्दिर में कथा श्रवण को आते थे। कथा का कितना रस था? कितना प्रभाव पड़ा, 'कितने जीवन बने—ये सारी बातें तो सुनने देखने से ही सम्बन्ध रखती थीं। वातावरण में मस्ती थी। आर्यसमाज की ओर से सभा वेद प्रचार के लिए पूज्य महात्मा जी की सेवा में ५००) की थैली भेंट की गई। सारा मालवीय पथ ही उमड़ आया था। हम समाज के सारे अधिकारियों श्री खन्ना जी प्रधान, डा० वेदव्रत जी महाजन मन्त्री, तथा सारे भाई बहिनों को इस श्रद्धा पर बधाई देते हैं। माताओं, बहिनों की श्रद्धा भी अनुपम है।

खेतों को दे लो पानी,
अब बह रही है गङ्गा।
कुछ कर लो नौजवानो,
उठती जवानियां हैं॥

क्या वेद ज्ञान के बिना मानव ज्ञानशून्य ही कहलायेगा

वस्तुतः देखा जाय तो यह प्रश्न आज के वातावरण के प्रतिकूल ही है। क्योंकि आज का मानव विनाशकारी विज्ञान के पीछे हाथ धोकर पड़ा हुआ है। आध्यात्मिक ज्ञान से उसका सम्बन्ध बिल्कुल ही नहीं रहा और वह उसकी चिन्ता भी नहीं करता है। वह यही समझे बैठा है कि इनके पढ़ने से क्या लाभ, वेदों को वह गड़रिये के गीत मानता हुआ अपने पैरों आप ही कुल्हाड़ी मार रहा है।

वह मनु के सिद्धान्त को भूल चुका है जबकि मनु महाराज गृहस्थाश्रम में प्रवेश से पूर्व के कर्त्तव्यों के विषय में उपदेश देते हैं—

वेदानधीत्य वेदौ वा
वेदं वापि यथा क्रमः।
अविप्लुत ब्रह्मचर्यो
गृहस्थाश्रममाविशेन् ॥

इहैव लोके तिष्ठन
ब्रह्म भूयाय कल्पते ॥

वेद वेत्ता मानव यथेच्छ आश्रम में वास करता हुआ भी इसी लोक में ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेता है।

महाभाष्यकार पतञ्जलि ने भी वेदाध्ययन को परम कर्त्तव्य कहा है।

'ब्राह्मणेन निष्कारणो षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।'

मनु महाराज ने मनुस्मृति में प्रथमाध्याय से लेकर द्वादशाध्याय पर्यन्त वेदों को पढ़ने तथा उनके अर्थ को जानने के लिए उत्साहित किया है बल्कि उन्होंने तो यहां तक विज्ञान है! और उसी के द्वारा परमेश्वर से लेकर तृणपर्यन्त पदार्थों का बोध होता है।

वेद के तत्वों में आधुनिक विज्ञान से भी उदात्तर वैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रतिपादन है वेदार्थ की उपेक्षा करने के ही कारण ये तत्व हमारे लिए विस्मृत प्राय हो चुके हैं।

वर्तमान विज्ञान का मूल स्तम्भ विद्युत ही है और वैदिक विज्ञान का मूलाधार प्राणशक्ति है।

यह प्राण शक्ति विद्युत शक्ति की अपेक्षा बहुत व्यापक है वस्तुतः ठण्डे दिमाग से विचारा जाए इत्यादि प्रश्न हमारे सम्मुख आते हैं।

इस के उत्तर में आधुनिक नवयुवक से यही प्रश्न है कि वैदिक साहित्य को छोड़कर अन्य साहित्य में क्या ब्रह्मचर्य अथवा आचार सम्बन्धी कोई सामग्री उपलब्ध है। महर्षि जी ने तो वेद वेदाङ्ग के अतिरिक्त साहित्य को त्याज्य कहा है और मनु जी ने तो नृपति के लिए वेदज्ञ होना अनिवार्य है क्यों कि वेदज्ञ नृप ही राज्य, दण्ड, नेतृत्व आदि साधनों का संचय करके पृथ्वी का शासन कर सकता है।

देखिए :—

मनु जी ने वेदज्ञ होने के लिए कितना जोर दिया है।

स्थाणुरयं भारहारः किला भूत्
अधीत्य वेदं न विजानाति अर्थम्
योऽर्थज्ञ इत् सकलं भद्र मश्नुते
नाकमेति ज्ञान विधूतपाप्मा ॥

लेखक महोदय ने अनेक उज्वल प्रमाणों से सिद्ध किया है कि वेदज्ञान प्राप्त किए बिना मनुष्य इस संसार में अधूरा है। आदर्श मानवता के लिए हमें वेद ज्ञान की प्राप्ति में आस्था रखनी पड़ेगी तभी प्राणी का उद्धार होगा अन्यथा नहीं। —व्यवस्थापक

गृहस्थाश्रम में जाने से पूर्व ही जब मनु इतना जोर दे रहे हैं तो यह निश्चित बात है कि मानव वेद ज्ञान के बिना शून्य ही कहलायेगा।

वेद का वेदत्व इसी में है कि वह प्रत्यक्ष या अनुमान के द्वारा दुर्बोध तथा अज्ञेय उपाय का ज्ञान स्वयं कराता है क्योंकि किसी ने यह ठीक ही कहा है।

प्रत्यक्षेनानु मित्या वा
यस्तूपायो न बुध्यते।
एतं विदन्ति वेदेन
तस्माद् वेदस्य वेदता॥

क्या आज का मानव मनु महाराज के निम्न [अधोलिखित] श्लोक को शीतल दिमाग से विचारने का प्रयत्न करेगा।

वेदशास्त्रार्थ तत्वज्ञो
यत्र कुत्राश्रमे वसन्।

कहा है जो द्विजन्मा वेद का अध्ययन किये बिना ही अन्य शास्त्रों में श्रम करता है वह जीता हुआ सवंश शूद्रत्व को प्राप्त होता है। द्विज का द्विजत्व तो इसी में है कि वह गुरु द्वारा उपनीत होकर वेदों का अध्ययन करे, यदि वह इससे वंचित रहेगा तो वह सदः शूद्रकोटि में प्रविष्ट हो जायेगा।

योऽनधीत्य द्विजो वेद
मन्यत्र कुरुते श्रमम्।
सजीवन्नेव शूद्रत्वमाशु
गच्छति सान्वयः॥

आज मानव समाज में यह बात बहुधा सुनी जाती है कि वेद विज्ञान से रहित है। इस बात को सुनकर बहुत हंसी आती है परन्तु वह यह जानने का प्रयत्न ही नहीं करता अन्यथा उसे ज्ञात हो जाए कि "ऋग्वेद" का मुख्य विषय ही तो विद्युत शक्ति प्राण शक्ति का एक भाग है। किन्तु इस प्रकार के अनन्त भेदों का समावेश प्राणशक्ति में ही हो जाता है। अस्तु

आज के मानव का मुख्यतया यही प्रश्न है कि इस युग में वेद के अर्थ ज्ञान का क्या उपयोग है?

वेद के अनुशीलन से हमारा क्या लाभ हो सकता है?

आजकल विज्ञान तथा साम्यवादीन युग में वेदों का क्या आकर्षण है?

इस प्रकार के प्रश्नों की झड़ी लगाते हुए अन्त में कहते हैं हम एक कमल के खिले फूल की भांति नवीन युग से मुख मोड़कर कष्टकाकीर्ण प्राचीन युग में क्यों जाएं।

क्या वेद में हमारे लिए कालिदास आदि के साहित्य की उपमा तथा हर्ष जैसा [पदलालित्य] प्राप्त होगा?

जो व्यक्ति वेद का अध्ययन तो करता है परन्तु उसके अर्थ को नहीं जानता। वह भारवाही स्थाणु की तरह ही होता है। और जो अर्थ को जानता है वही सम्पूर्ण कल्याण को भोगता है और ज्ञान द्वारा पापों से विमुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करता है।

अतः सभी को वेदज्ञ होना आवश्यक है। और यह भी निश्चित है कि वेदज्ञान के बिना ही मनुष्य ज्ञान शून्य ही कहलायेगा।

श्री धर्मदेव जी 'अरुण' शास्त्री

आर्य हमारा नाम है,
सत्य हमारा कर्म।
ओ३म् हमारा देव है,
वेद हमारा धर्म॥

कुछ ऐतिहासिक भ्रम

ले०—श्री प० सत्यप्रिय जी शास्त्री प्रो० दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार

(गतांक से आगे)

प्रथम तो यह कि अलाउद्दीन खिलजी जब रानी पद्मनी की आकृति को देखने किले में गया लौटते समय पद्मिनी का पति रत्नसिंह उसे किले के बाहर तक छोड़ने आया। कपटी खिलजी ने उसे अपने सैनिकों की सहायता से बांध लिया तथा अपने खेमे में ले आया और किले मे पत्र भिजवा दिया कि पद्मिनी अपने आपको समर्पण करे तो इसे छोड़ दिया जावेगा। पद्मनी अपनी सखियों के साथ गई तथा वहां घमासान युद्ध कर अपने पति को छुड़ा लाई। उसके बाद पुनः युद्ध कर लौटते हुए राजपूतों को भ्रम से मुगल समझ कर जौहर किया। यहां इतना वक्तव्य है कि जो रानी पद्मिनी इतनी बहादुर थी कि स्वय शत्रु के खेमे में जाकर तलवार के बल से अपने पति को छुड़ा लाती है। वही पुनः जलमरे यह समझ नहीं आता। १४ हजार सेना यदि मूत्र विसर्जन भी करती तो खिलजी की सेना बह जाती। राजस्थान की रमणियों ने शत्रु के सामने आने पर कटारी से उसका स्वागत किया न कि आत्महत्या कर कायरता का परिचय दिया। अतः राजस्थान की वीर रमणियों के शौर्यपूर्ण जीवन को कलंकित एवं कायरतापूर्ण सिद्ध करने के हेतु किसी बिगड़े दिमाग ने हमारे इतिहास मे यह सफलतापूर्ण मिलावट की है। कई लोग इस जौहर को गर्व समझते हैं, वस्तुतः यह तो वीर रमणियों की वीरता पर कलंक है। हमारी भारतीय नारियों को बुजदिल बनाने का यह कुप्रयास किया गया है। अतः महर्षि दयानन्द के अनुयायी होने के नाते हमें अपने इतिहास को गम्भीरतापूर्वक मनन करना चाहिये। हमें विशुद्ध भारतीय दृष्टि से अपने इतिहास को पढ़कर मानना चाहिये।

आस्तिक पुत्र–नास्तिक पिता

(ले०–श्री प० भक्तराम जी शर्मा अफ्रीका वाले)

हिरण्य कश्यप और प्रह्लाद की भांति लड़का आस्तिक और पिता नास्तिक था। लड़के को पिता यही उत्तर देता कि तू हम से पैदा हुआ है या हम तुझ से उत्पन्न हुए हैं? तू हमें क्या सिखायेगा? मूर्ख लोगों के पास यही युक्ति होती है। एक दिन लड़के ने साहस किया कि चाहे कुछ हो पिता को आस्तिक बना कर ही छोड़ूंगा। यह दृढ़ निश्चय करके पुत्र ने क्या किया कि जहां पिता बैठा करता था उसके पैड पर "नालायक", "बेवकूफ," "उल्लू का... .." इत्यादि शब्द लिख दिये। अब ज्यों २ पिता जी का मेज पर जाने का समय निकट आता है लड़के के मन की धड़कन बढ़ रही है। पिता जी जब मेज पर आये तो बस देखते ही गुस्से में आ गये और कहने लगे "यह उसी का काम है।" लड़का भी आ गया। थोड़ा सा आगे बढ़ा तो पिता ने कहा—"मूर्ख! यह तूने क्या किया है? तेरे अतिरिक्त कोई नहीं हो सकता।"

लड़के ने कहा। 'पिता जी! आप अप्रसन्न क्यों है?' पिता ने उत्तर दिया—ऐसी बुरी बाते क्यों लिखीं?' बच्चे ने पूछा—किस ने लिखी है? कागज और पेन्सिल द्वारा ही तो लिखी गयी हैं। आप कैसे कहते हैं कि मैंने ही लिखी हैं।' इसी बात पर दोनों का झगड़ा हो गया। पिता ने कहा—'क्या ये स्वयं लिख सकती हैं?' पुत्र बोला—'यदि कलम थोड़ी-सी खड़ी हो जाये और हिल जाये तो बस लिख गयी' पिता ने कहा—'भला ऐसा भी कभी हो सकता है।'

पुत्र बोला—'बस निर्णय हो गया। यदि कागज और पैन्सिल स्वयं नहीं लिख सकते तो फिर ये सूर्य और चन्द्र क्या खुद ही चल रहे हैं अथवा इन्हें कोई चला रहा है?'

पिता प्रसन्न हो गया और पुत्र को शाबाश दी।

वैदिक मिश्नरी ऊना में

प्रसिद्ध आर्य प्रचारक पं नन्द लाल जी वैदिक मिश्नरी यहां पधारे हैं निरंतर ४ दिवस तक आर्य समाज मंदिर में भारतकी वर्तमान समस्याओं पर प० जी के प्रभाव शाली व्याख्यान हुए। और स्कूल के विद्यार्थियों मे प्रति दिन वैदिक सिद्धान्तों पर भाषण होते रहे। गणित विद्या के ऐसे चमत्कार उन्हों ने दिखाए कि जिन्हें देख कर सब चकित रह गए।

वजीरचन्द्र शर्मा
प्रिंसीपल डी. ए. वी. H/S
स्कूल ऊना

दयानन्द वचनामृत

'जैसा सच्चा प्रयोजन ईश्वरोपदेश से सिद्ध होता है, वैसा दूसरे किसी के वचन से नहीं हो सकता। क्योंकि ईश्वरोपदेश भ्रान्ति रहित और सर्वथा सत्य होता है, दूसरे किसी के वचन से ऐसा होना कठिन है। जो आत्मज्ञानी आप्त जनों के ग्रन्थों का ज्ञाता यदि वेदार्थ को ठीक समझ कर कहता है तो उस का कथन भी सत्य ही होता है। और जो केवल अपनी कल्पना से कथन करता है, उस के वचन सत्य नहीं हो सकते। हां, यह निश्चित बात है कि जहां २ सत्य दीखता, सुनने में आता है, वहां २ वह सत्य वेदों से ही गया है—फैला है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

समाजों व संस्थाओं से

विशेष निवेदन है कि आर्य जगत' का दीपमाला पर ऋषि निर्वाणांक विशेष अंक के रूप में प्रकाशित होता है। इसमें आर्यसमाजके उच्चकोटि के मान्य महानुभावों के विशेष लेख प्रकाशित होते हैं। सारी समाजों व संस्थाओं से निवेदन है कि अपनी कर्तव्य परम्परा के अनुसार इसकी अधिक से अधिक प्रतियां मंगवाने के लिए अभी से आर्डर भिजवा दें। देर से आर्डर आने पर आज्ञा पालने में विवशता हो जाती है। सारे स्कूलों कालेजों, समाजों से प्रार्थना है कि शीघ्र आर्डर देकर कृतार्थ करे।

'योगासन और स्वास्थ्य'

लेखक :—कविराज रामसिंह वैद्य आरोग्य मन्दिर यमुना नगर

भूमिका लेखक :—श्री पूज्य गुरुवर महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज

शरीर में शक्ति, बुद्धि में गम्भीरता, मन में प्रसन्नता और हृदय में विशालता, यह चार गुण जिसके पास हैं उसी का जीवन सफल है, और इन सब का आधार शरीर का निरोग होना है। हमारे पूर्वजों ने शरीर को स्वस्थ रखने के ऐसे साधन खोज निकाले, जिन पर धन तो खर्च न हो और लाभ पूरा मिल जाये, उन्हीं साधनों में एक बड़ा साधन योग-आसन है और यह पुस्तक उन आसनो का भलि भांति दिग्दर्शन कराता है।

कविराज श्री रामसिंह जी केवल आयुर्वेद शास्त्र ही के विद्वान नहीं हैं, अपितु ब्रह्मचर्य पालन तथा शरीर स्वस्थ रखने का व्यक्तिगत लम्बा अनुभव है, इसीलिए वैद्यराज रामसिंह जी ने आसनों के सम्बन्ध में बहुत लाभकारी ज्ञान इस पुस्तक में दिया है, इन आसनों द्वारा स्त्री, पुरुष, युवक, युवतियां, रोगी तथा नीरोगी सभी लाभ उठा सकेंगे, ऐसी उपयोगी पुस्तक लिखकर कविराज जी ने मानव समाज की बड़ी सेवा की है।

आर्य बनो !

ले०—श्री प्रभुदीप जी उपमन्त्री आर्यसमाजसमस्तीपुर

बहुत दिनों की बात है। मैंने अपने एक मित्र से आर्य बनने को कहा। पहले तो मेरे वे मित्र बहुत घबड़ाये, लेकिन कुछ ठहरने के बाद वे बोले—'आर्य' बनाओगे या आर्य समाजी। इस बार मैं कुछ झेंप सा गया। इनका आशय मैं नहीं समझ सका। मैं पूछ बैठा—भाई जी ! आप को आर्य और आर्य समाजोमें कुछ अन्तर मालूम पड़ता है क्या ? वे बोले—हां, 'आर्य' तो मैं "आर्य समाज' से बाहर रह कर भी बन सकता हूं। आर्य समाजी बनने में तो आप अपना फार्म भरवायेंगे, जिस में प्रतिज्ञा करनी होगी कि प्रतिमास में अपनी आय का शतांश आप को देता रहूं। तो भाई ! मुझे आप की प्रार्थना स्वीकार है। आर्य बनाओ लेकिन आर्य समाजी न बनाओ। अब मेरे को इन का आशय समझते देर न हुई। मैंने उन्हें कहा—भाई जी. आप गलत-फहमी में हैं। आर्य समाज तो एक फैक्ट्री है, जहां मनुष्य मनुष्य बनाया जाता है। बगैर फैक्टरी के निर्माण कैसे होगा। 'आर्य' बनने के लिए तो 'आर्य समाज' में जाना ही होगा। भले ही उसका नाम आप कुछ भी धर लें। अब रही बात आप से धन लेने की, तो आप को विश्वास दिलाता हूं, आप से मैं फार्म आदि न भरवाऊंगा और न धन की याचना करूंगा। आप को केवल मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करनी होगी। आप आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में अवश्य नियमित रूप से सम्मिलित हुआ करें। वे सज्जन इस पर राजी हो गये। जब कोई अढ़ाई तीन मास व्यतीत हो गये इस प्रकार आते जाते तो मैंने उन में एक आश्चर्य जनक परिवर्तन देखा। उन में दो तीन भारी कुटेवें थीं, जैसे बीड़ी पीना, सिनेमा देखना और मांस खाना आदि। मैंने देखा, आप ने मांस खाना तत्काल छोड़ दिया, बीड़ी भी त्याग दी लेकिन सिनेमा अब भी देखते रहे। मैंने भी थोड़ा धीरज से काम लिया। कुछ मास और बीत गये। एक दिन बड़े तड़के मैंने उन्हें एक पुस्तक 'सिनेमा या सर्वनाश' पढ़ने को दे आया। कुछ प्रभाव तो पहले का था ही, इस पुस्तक ने उन पर जादू का काम किया। आप सिनेमा देखने के प्रबल विरोधी बन गये। इस घटना के कुछ ही दिन बाद 'वेद प्रचार सप्ताह' आ गया। उस में काशी के एक प्रसिद्ध पंडित, वेदों के मर्मज्ञ, शास्त्रार्थ महारथी पधारे थे। मै अपने उस सज्जन मित्र को बराबर उस में ले जाता रहा। पंडित जी रोज वेद का एक मंत्र लेते थे और लगभग डेढ़ घन्टे तक उसकी व्याख्या भिन्न २ रूप से करते थे। व्याख्या पूर्ण वैज्ञानिक और तर्क पूर्ण होती थी। विद्वान वक्ता के मधुर भाषण एवं हृदय और मस्तिष्क को साथ २ छूने वाले तर्क श्रोता को बरबस अपनी ओर खींच लेते थे। हमारे प्रिय मित्र भी अछूते न रहे। पूर्णाहुति के दिन आप यज्ञकुण्ड के समीप ही बैठे थे। मैंने धीरे से आर्य समाज का प्रवेश-पत्र (फार्म) उनके हाथों में बढ़ा दिया। पढ़ते ही एक क्षण तो वे हंसे पर एक झलक मेरी ओर देखकर भरने के लिए उद्यत हो गये। मैंने उनकी कलम रोकते हुए कहा—ज़रा ठहरिये ! कहीं आप गलत न समझ गये हों। मैं आप से आप का धन नहीं मांग रहा, बल्कि आप ने आर्य-समाज के द्वारा कुछ धन बचाया है, उसी में से थोड़ा-सा इस समाज के लिए दान मांग रहा हूं। कहने लगे—अरे ! आर्य-समाज के द्वारा मैंने क्या बचाया है ? मैंने फिर कहा—हां, हां, बचाया है। ज़रा जोड़िए तो सही। बीड़ी, मांस और सिनेमा में प्रतिमास आप का कितना व्यय होता था। आप की आंखें जैसे एकदम से खुल गयीं। मेरे कंधों पर बल देते हुए उन्होंने उत्तर दिया—सच ! सच ! प्रतिमास मैं कम से कम १५) रु० तो जरूर व्यय कर देता था, जो अब नहीं होते। मैंने झट कहा—तो उन्हीं रुपयों में से एक रु० प्रतिमास आप समाज को चन्दा दें और शेष चौदह रु० आप अपने परिवार की उन्नति में लगायें, ताकि यह आर्य समाज आप जैसे ही औरों को मनुष्य बनाने में समर्थ हो सके। इस घटना को बीते आज कई साल हो गये, लेकिन हमारे वे मित्र अब जब भी हम से मिलते हैं तो कहते हैं, भाई जी ! आप के पास कोई जादू है जो जिसके सिर चढ़ा वही आप का हो गया। मैं उनको बार-बार कहता हूं—ना भाई ना, यह सत्सङ्ग का जादू है जो महापातकी अमीचन्द कूड़ा से हीरा बन गया। मोगला डाकू-डाकू न रहा, भला आदमी बन गया। अस्तु, आर्यो ! किसी को आर्य-समाजी बनाना हो तो लाख प्रयत्न करके भी उसे सत्सङ्ग में जरूर लाओ। फिर देखो कैसा जादू होता है।

श्री प्रभुदीप जी ने बडे सुन्दर ढग से सरलभाषा मे आर्यसमाजी बनने की विधि बताई है इस प्रकार हम अपने दैनिक आचारण में बडी आसानी से प्रत्येक को आर्य समाजी बना सकते है। —व्यवस्थापक

शुद्ध वाद बढ़ा करती है

(कुंवर जयराम सिंह जी त्यागी हिसार)

वैदिक-सम्राट मार्तण्ड रश्मि सन्ध्या में,
मानव पगों को चूमने के लिए नमती है।
वैसे हिमालय का अंक भरने के लिए,
हिम प्रावल्यता विशाल रूप धरती है॥
मानस की क्रीड़ा का दृश्य देखने के लिए,
मानव की मंजुल मंजु इच्छा बनी रहती है।
स्वामी दयानन्द धर्म धी की सु शुद्धि हेतु,
सर्व संसृति की शुद्ध बाढ़ बढ़ा करती है॥

आर्यसमाज पठानकोट में वेद कथा

आर्य प्रादेशिक सभा के सुयोग्य उपदेशक श्री पं० ओम्प्रकाश जी, श्री मास्टर ताराचन्द जी सहित २७-८-६३ को आर्यसमाज पठान-कोट में प्रातः—सायं दोनों समय वेदोपदेश करते रहे प्रातः—अध्यात्म-वाद और रात्रि को वैदिक वीर भावना पर सारगर्भित—ओजस्वी भाषण दिए गये इस कथा में नव-युवकों की संख्या पर्याप्त रही हाल खचाखच भर जाता था। कथा का प्रभाव अत्युत्तम रहा। श्री मास्टर ताराचन्द जी के भजन भी अपना विशेष रङ्ग जमाते थे। इस प्रचार को सफल बनाने में आर्यसमाज के सभी अधिकारियों एवम कार्य-कर्त्ताओं ने पूरा-पूरा सहयोग दिया। समाज वालों की श्रद्धा-भक्ति और प्रेम सराहनीय है कथा की समाप्ति पर श्रद्धापूर्वक १०१) वेदप्रचारार्थ भेंट किये गये।

पुस्तक समीक्षा

वेद सार परीक्षण—ले० मदन मोहन जी शर्मा, पृष्ठ स. १६०, मूल्य ५।-

श्री विश्वबन्धु जी M.A. शास्त्री की लिखी हुई वेद सार पुस्तक की जो कि M.A. की पाठयविधि मे नियुक्त है भली प्रकार सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन कर के वेदों के परिवर्तित मंत्रों के स्थलों को मूल पाठों से शुद्ध किया गया है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है उन में परिवर्तन करने का या ठीक करने का स्वामित्व किसी व्यक्ति को नहीं है ऐसा करने से वेदों का अपौरुषेय लुप्त हो जाता है। लेखक महोदय ने स्पष्ट कर दिया है कि अगर कोई विद्वान वेद सार परिक्षण के संबंध में आलोचना आदि करना चाहें तो उन्हें पूरी स्वतंत्रता है उस की प्रतिलिपि लेखक महोदय को जरूर भेजनी चाहिए। यह लघु पुस्तक यूनीवर्सिटी के अधिकारियों तथा विद्वद् मंडली के समक्ष प्रस्तुत है इस पर बारीकी से विचार करके वास्तविकता को विद्वानों के सम्मुख प्रस्तुत करें। ता कि वेदों की प्रतिष्ठा बनी रहे और भविष्य में इस प्रकार की अमर्यादित कार्यवाई करने की किसी को हिम्मत न हो। पुस्तक के आरम्भ में पं. श्रीधर जी शर्मा अथवा शास्त्री, बारे श्री केन्द्र नमस्क; श्री पं. गिरधर जी शर्मा चतुर्वेदी, तथा श्री पं. भगवत् दत्त जी रिसर्च स्कालर के प्राक्कथन मे वेद सार परीक्षण के विषय में जो विचार धारा वर्णित है वह पठनीय है।

पुस्तक का प्राप्ति स्थान—मदन मोहन शर्मा शास्त्री D 60, सैक्टर 11 चंडीगढ़—3 पंजाब।

आर्य समाज [illegible]

16.17.18 सितंबर 1963 सोम. मंगल बुध को बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हो रहा है इस अवसर पर श्री महात्मा देवी चन्द्र जी, श्री धर्म देव जी शास्त्री पं. मेला राम जी रेडियो सिंगर श्री ताराचन्द्र जी, ठा. दुर्गा सिंह जी आर्य 'तुफान, पं. ओम् प्रकाश जी महोपदेशक सभा, प्रो. नारायण दत्त जी (H.P.) पधार रहे हैं। इस धर्म मेले पर पधार कर लाभ उठावें ऐसा सुअवसर कठिनता से प्राप्त होता है।

नगर कीर्तन 16 सितंबर को दिन के २ बजे से आरंभ होगा।

नत्थू राम महाजन
मंत्री समाज

आर्यसमाज योगेन्द्रनगर (हिमाचलप्रदेश) का वार्षिक अधिवेशन

आर्यसमाज योगेन्द्रगनर का वार्षिक अधिवेशन श्रीमान गुरुदयाल जी की अध्यक्षता में हुआ जिस में निम्नलिखित कार्यवाही सम्पन्न हुई।

प्रस्ताव न.—१ गतवर्ष की कार्यवाही की पुष्टी

गत वर्ष के अधिवेशन को पढ़ कर सुनाया गया। जिसकी पुष्टी की गई।

प्रस्ताव न.—२. वार्षिक विवरणपत्र

इस वर्ष का आय-व्यय तथा कार्य विवरण दिनांक १-६-६२ से ३१-८-६३ तक का मन्त्री ने प्रस्तुत किया जो कि सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

प्रस्ताव न.—३. अगामी वर्ष का बजट

अगामी वर्ष के कार्यक्रम प्रचार तथा भवन निर्माण व अन्य समाज सम्बोधित कार्य की रूप रेखा मन्त्री द्वारा रखी गई इसकी पूर्ति हेतु जो अंतरंग सभा द्वारा दिनांक १८-८-६३ को बनाया गया बजट था उसका स्वीकृति दी गई।

प्रस्ताव नं.—४ व ५

अन्तरंग सभा का निर्वाचन

सर्व-सम्मति से श्री गुरुदयालजी को संरक्षक प्रधान चुना गया और उन्हें ही अन्य पदा-अधिकारी चुनने का अधिकार सर्वसम्मति से दिया गया अधिवेशन में उन्होंने निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए।

कार्यकर्ता उपप्रधान — बाबू परमानंदजी
उपप्रधान — श्रीमती वृजरानी जी (संचालकआर्य महिला मण्डल)
मन्त्री — मुरारीलाल जी
उपमन्त्री — श्री केदारनाथ जी
कोषाध्यक्ष — श्री जयलाल जी
पुस्तकाध्यक्ष — श्री शिवराम जी
लेखा निरीक्षक — श्री गङ्गाधर जी

इसके अतिरिक्त श्री रामलालजी मल्होत्रा, श्री अर्जुनदेव जी, श्री वेदमित्र जी व प्रतिष्ठित व्यक्तियों में श्रीमान गिरधारीलाल धवन को अन्तरंग सदस्य चुना गया।

शांति पाठ के पश्चात कार्यवाही निर्विघ्न समाप्त हुई।

निवेदक—मुरारीलाल मन्त्री
आर्यसमाज योगेन्द्रनगर

शुभ सूचना

आप को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि तपोवन, देहरादून मे विद्यालय आरम्भ हो गया है।

देहरादून रेलवे स्टेशन से तीन मील की दूरी पर बड़े सुन्दर रमणीक बन तपोवन में वैदिक साहित्य विद्यालय की स्थापना हो गई है, जिस के आचार्य श्री पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री दर्शनाचार्य नियुक्त हुए हैं और वह तपोवन में पधार चुके हैं। वेद से लेकर सारे शास्त्रों और आधुनिक काल के सारे ग्रन्थों की शिक्षा इस विद्यालय में दी जायेगी। मध्यमा, विशारद या [illegible] सात्विक स्वभाव के विद्यार्थी तथा उपदेशक बनने के इच्छुक वानप्रस्थी संन्यासी इस में प्रवेश पा सकेंगेरहन सहन, खान पठन पाठन का सर्वथा निशुल्क प्रबन्ध है, दर्शनाचार्य पं० जगदीश चन्द्र जी के अतिरिक्त नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री बलदेव जी योग साधना, प्राणायाम, तथा योगासनों की भी शिक्षा दिया करेंगे। प्रार्थना पत्र में अपनी आयु-स्वास्थ, स्वभाव, योग्यता का वर्णन अवश्य कीजिये और अपने साथ गर्म बिस्तर लाइए।

आपकी जानकारी में जो सज्जन उपदेशक बनने के इच्छुक हों, आप उन्हें प्रेरणा करें कि वह शीघ्र तपोवन देहरादून पहुंच जायें। महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती भी ऐसे महानभावों को अपना समय देते रहेंगे। जो सज्जन अपने खर्च पर शिक्षा लेना चाहें या तपोवन में रह कर योग साधना करना चाहें, उनके लिए भी पूरा सुभीता है।

वैदिक साधनाश्रम का गायत्री यज्ञ तथा साधना शिविर २७ अक्तूबर से ३ नवम्बर तक ११ कार्तिक से १८ कार्तिक तक हो रहा है। २५ हजार आहुतियों का गायत्री-यज्ञ श्री महात्मा आनन्दभिक्षु जी महाराज की अध्यक्षता में होगा, महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी वेदानन्द श्री स्वामी शिवानन्द जी ब्रह्म० पं० बलदेव जी, पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री तथा अन्य महानुभावों के प्रवचन आठ दिन होते रहेंगे। महात्मा जगन्नाथ जी योग-साधना करायेंगे। ब्रह्मचारी महेश कीर्तन कराया करेंगे।

तपोवन के आध्यात्मिक प्रवाह बहाने वाले इस समारोह में भाग्यशाली ही भाग लेंगे, अपने आने की सूचना अभी से दीजिए ताकि स्थान का प्रबन्ध हो सके।

प्रबन्धक
हरिचन्द बतरा
तपोवन, देहरादून

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टेलीफोन नं० २८५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३८) रविवार ६ आश्विन २०२० — २२ सितम्बर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

इहेद साथ

राजा अपने राष्ट्र की सारी प्रजा को अपने राज्य के सम्बन्ध में सारे विश्वास पूर्वक कहता है कि हे लोगो ! इह-इस राष्ट्र में, मेरे राज्य में इत् ही बिना भय के असाथ-रहो किसी प्रकार का भी भय न करो।

न परोगमाथ

हे लोगो ! किसी भी आशंका से परः न—परे न गमाथ-जाओ राज्य से बाहिर जाने की आवश्यकता नहीं है। जब कोई भय- अत्याचारी, अनाचारी, चोर आदि नहीं तो बाहर जाने की क्या आवश्यकता है।

गोपा: पुष्टपति र्व आजत्

मेरे राज्य को गोपा.—रक्षा करने वाला विधान, सेनापति, बड़ा अधिकारी पुष्ट करता हुआ आप को आजत्-रक्षा करता चलाता है उसके होते किसी को क्या चिंता ?

अ थ र्व- वे द

वेदामृत

यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

यजु० अ० ३४ मं० ३

अर्थ—(यत्) जो मन (प्रज्ञानम्) ज्ञान वाला है (उत) और (चेत.) स्मरण का कराने वाला है तथा (धृतिः च) धैर्य का स्थान है और (यत्) जो (ज्योति) प्रकाश है (अन्तः हमारे अन्दर (अमृतं) अमृतमय है (प्रजासु) सारे इन्द्रिय गणों में उत्तम है तथा (यस्मात् न) जिस के बिना नहीं होता (कर्म) कोई भी जीवन का काम (क्रियते) किया जाता। वह मेरा मन सदा ही कल्याणकारी विचारों वाला हो जावे ! जिसके बिना किसी प्रकार का भी छोटा बड़ा कार्य नहीं हो सकता वह मन पवित्र संकल्पी होवे।

भाव:—मन की बड़ी शक्ति और बड़ा काम है। यह ज्ञान का सब से बड़ा साधन है, जितनी भी स्मृति हम नई पुरानी होती हैं—इसी मन के द्वारा ही चित्त बन कर होती हैं। यह तमाम शरीर के अन्य अंगों, इन्द्रियों में बड़ा प्रमुख है, इसकी प्रेरणा के बिना कोई भी इन्द्रिय काम नहीं कर सकती। यह सचमुच अमृत ही तो है। विश्व में नाना प्रकार का जीवन से जितना भी तानाबाना बुना जाता है, कर्म किये जा रहे हैं—सब के पीछे इसी की शक्ति ही है। सारे जीवन कार्य मन से ही होते हैं। इस लिए मेरे महान देव ! यह मेरा मन ऐसे विचार का धाम बनता जाये जो मुझे उन्नति के पथ पर चलाते रहें। शुद्ध मन से मानव विश्व में सर्व विजयी बन जाया करता है—सं०

ऋषि दर्शन

सर्व जगत् कर्तृ

वह ब्रह्म सारे जगत् का कर्ता निर्माता है। जितना भी चर अचर, जड़ चेतन विश्व है, उसी परमात्मा के नियम अनुशासन में है। प्रकृति को विकृति में लाने वाला तथा जीवों को कर्मफल देने वाला वही है।

सर्व शक्ति मत्

वह सारी शक्तियों का भण्डार है। ब्रह्म शक्तिमय तथा शक्ति दाता है सारा जगत् उसी की शक्ति की मर्यादा में कार्य परायण है। जो भी चाहें उसी से शक्ति प्रार्थना करें।

सच्चिदानन्दस्वरूपम्

वह ब्रह्म सत् चित् ज्ञानमय तथा आनन्दमय है। अनादि, अनन्त तथा अविनाशी है। ज्ञान भी एवं आनन्द भी उसी से मिलता है इसीलिए वह त्रिरूप है।

भा ष्य भू मि का

प्रकाशक प्रख्याता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मानव अपूर्ण है। इसे पूर्ण बनाने के लिए पूर्ण भावात्मक सम्बन्ध जोड़ना पड़ेगा। इस के लिए सर्वप्रथम अपने शरीर को स्वस्थ रखना चाहिए। यह शरीर अमानत है। यह किराये का मकान है। जब तक हम इसे किराया देते रहते हैं तभी तक इस में रह सकते हैं, जब हम शरीर को खिलाना पिलाना बन्द कर देते हैं, तब यह हमारा शरीर ही हमें जवाब दे देता है। प्रत्येक को इस की रक्षा करनी होगी मनुष्य का शरीर पांच कोशों का केन्द्र है। ये पांच कोश अन्नमय कोश, प्राणमयकोश, मनोमयकोश, विज्ञानमय तथा पांचवां आनन्दमय कोश है। अपने इन पांचों कोशों को जानने, देखने का प्रयत्न करना ही चाहिए। इस प्रक्रिया को, जीवन साधना को आत्मनिरीक्षण कहा जाता है। हम केवल खाने पीने के लिए ही इस विशाल विश्व में नहीं। केवल बल अर्जित करके हाथी के समान बलवान बनना ही हमारे इस जीवन की निष्ठा नहीं है। ऐसी पशु शक्ति तो हाथी के पास भी है। पर देखिये इतने भारी बड़े शरीर वाले हाथी को एक पंद्रह वर्ष का लड़का उस पर बैठ कर चलाता है। बल शक्ति से भी ऊंची बुद्धि है, जिस के द्वारा एक मनुष्य इन बड़े बल वाले पशुओं को भी अपने वश में करके उनसे अभिलषित काम लेता रहता रहता है। बल की महत्ता है, जीवन में इस का भी उत्तम स्थान है। किन्तु इस से भी ऊंची बुद्धि है। बुद्धि का बल पशु बल से श्रेष्ठ भी है और इसी के आधार पर मानव प्रकृति पर विजय करने निकला है। यह धीरे २ बड़े २ पदार्थों को अपने ज्ञान व बुद्धि के बल द्वारा अपने हाथ में करता चला जाता है। बुद्धि के सामने प्रकृति अपना मस्तक झुका देती है। अपने भण्डार

अध्यात्मवाद—

बुद्धियोग की सम्पदा

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी का गम्भीर प्रवचन)

इस के सामने खोल कर अर्पण कर देती है। यही बुद्धि की विशेषता मनुष्य समाज को पशुपन से अलग करती है। यदि मानव बुद्धि हीन हो जाये तो उस में तथा पशु में किसी प्रकार का भी भेद नहीं है। वह भी निरापशु है। मनुष्य के रूप में भी पशु माना जाता है। इसी लिए वेद में यां मेधां देवगणा, के मन्त्रों में बुद्धि की प्रभु से प्रार्थना की गई है। गायत्री मन्त्र में भगवान् से हम इस विशेष दिव्य सम्पत्ति को मांगते हैं—यह ठीक है तो जीवन का सारा काम ठीक प्रकार से

आया है कि लोगो—'आशा सत मेधां श्रिये—अपने तथा सबके कल्याण के लिए बुद्धि मांगो। गीता में भगवान् कृष्ण कहते हैं कि—ददामि बुद्धि योगं तम्—उस को ही बुद्धि का योग, प्रसाद मिलता हैं यहां भी धनयोग, अन्नयोग, जनयोग, नहीं कहा गया, प्रत्युत बुद्धियोग मांगा गया है। इसलिए कि सारे भौतिक योगों में यह योग सबसे उत्तम है। याद रखें कि बुद्धि आहार से बनती है और बिगड़ती है। शुद्ध और सात्विक कमाई एवं पवित्र आहार से बुद्धि

आर्य जगत के प्रसिद्ध तपस्वो संन्यासी पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने स्वास्थ्य ठीक न होने पर भी अमृतसर पधार कर आर्यसमाज लोहगढ़ से पूर्व जो कथा का अमृतमय प्रवाह बहाया तथा प्रात:काल आर्यसमाज लारेंसरोड में जो अध्यात्मवाद का मधुर प्रवचन प्रसाद बांटा और खिलाया उन में से एक प्रवचन जगत के प्रेमी पाठकों के लिए दिया जा रहा है—सं०

चलता है और यदि यह बिगड़ जाए तब दोनों जीवन ही बिगड़ जाते हैं। न यह लोक बनता है और न परलोक बन सकता है। दोनों लोकों के बनाने की यही निर्माण स्थली है दोनों के भण्डार भरे द्वारों को खोलने की यह अनुपम चाबी है। इसके बिना कितनी भी मनुष्य टक्कर मारे, कुछ बनने बनाने का नहीं।

गायत्री मन्त्रको गुरू मन्त्र इसी लिए कहा गया है, क्योंकि इसमें इसी की प्रार्थना की जाती है। वह सबसे कीमती, बड़ा पदार्थ है, जिस की हमें सदा आवश्यकता है। इसके बिना और सब कुछ होते हुए भी जीवन बेकार हो जाता है। वेद में

बनती है। दूषित अन्न या कमाई से यह बुद्धि बिगड़ जाती है। उपनिषत् में ऋषि ने कहा है—आहार शुद्धौ सत्व शुद्धि: सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृति: आहार भोजन अच्छा हो सत्व की शुद्धि होती है और जब सत्व शुद्ध बन जाए तब परिपक्व स्मृति हो जाती है। तब जीवन के विकार, संशय तथा गुथियां समाप्त हो जाती हैं।

आहार को इतना महत्व दिया गया। इसलिए कि जैसा मनुष्य अन्न खाता कमाता है, वैसा ही उसका मन बन जाता है। मन का अच्छा बुरा प्राय: अन्न पर ही निर्भर है। इसके साथ २ भ्रमजाल है कि बुद्धि का बिगाड़ हो जाता है। मनुष्य जितना अधिक भ्रमजाल में पड़ता जाता है, उतनी अधिक उस की बुद्धि विकृत होती जाती है। बुद्धि को बिगाड़ने वाला तीसरा बड़ा शत्रु क्रोध है। यह भीषण शत्रु है। यदि किसी ने अपना कमरा सजाया हुआ है परन्तु उस में पैट्रोल डाल कर आग लगा दी जाये तो सब कुछ भस्म हो जायगा यही अवस्था क्रोध से होती है। युधिष्ठिर ने पढ़ाये हुए गुरु जी के प्रथम पाठ क्रोध न करो को क्रियात्मिक रूप में आचरित करके दिखला दिया था। यह क्रोध सब से बड़ा चण्डाल है। इस से जीवन को बचाओ। जब यह आता है तब सब जला देता है। सारे विवेक, ज्ञान को भस्म कर देता है। बुद्धि का और मानव का यह सब से प्रबल, भयङ्कर शत्रु है। इस से अपने को सतर्क होकर बचाओ। इस से बचने का उपाय यह है कि जब यह चण्डाल आवे तब अपनी जिह्वा को दांतों तले दबा लो। उसके तन्तु दबने से बुद्धि के तन्तु भी दब जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति या आप का नौकर आप की कोई चीज तोड़ दे तो क्रोध में भर कर अपने मन को क्यों तोड़ते हो? अपनी जिह्वा को दबा कर अन्दर ओम् का पाठ करो। एक भी बिगड़ जाये तो सारा परिवार, समाज बिगड़ जाता है। अकेली मन्थरा के बिगड़ने से सारा वातावरण ही बिगड़ गया। आप के बच्चे तो पढ़ें मिशन के कॉन्वेंट स्कूलों में तो फिर उनकी भारतीय भावना कैसे बचेगी। उनको तो उनके ही विचार मिलेंगे। राष्ट्र की भावी सन्तान ऐसी बनेगी। क्या इसकी आप को चिन्ता है। आज का मानव विनाश के पथ पर भागा जा रहा है। इसे रोकने के लिए प्रयत्न करो तभी सुख मिलेगा।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २२ सितम्बर १९६३ [अंक ३८

संसार बिगड़ता जाता है

आज जिस ओर भी देखा जाये जिस क्षेत्र में पग रखें, जिस वातावरण में पहुंचे एवं जिस किसी के साथ भी विचार विनिमय करें सब के भिन्न २ विचारों में एक ही बात सुनाई देती है कि आज का संसार बिगड़ता जाता है। पतन, विनाश, भोगवाद के गहरे पथ पर सरपट भागने में लगा है। कोई किसी की न मानता है और न ही किसी की बात सुनी जाती है। जीवन की मर्यादा टूट रही है, नैतिकस्तर गिरता जा रहा है, लाज का ताज सर्वथा उतरने लगा है। अध्यात्मवाद की जगह विलासवाद ने लेनी आरम्भ की हुई है। पुरुष पूजा को प्रकृति प्रेम ने निष्कासित सा कर दिया है। चारों ओर सारे समाज में एक विचित्र सी अवस्था उत्पन्न हो गई है। विचार विकृत होते जा रहे हैं, आहार की सारी पवित्रता की सारी सीमाएं समाप्त होने को हैं, घर द्वार परिवार का पुराना शिष्टता का आधार हिल गया है। व्यापार के बाजार में कितनी हाहाकार मची है, निष्ठा तथा ऊंचा आचार अब पुस्तकों की वस्तु बनने लगा है। सारी दिशाएं, जनजीवन की समस्त दशाएं, कार्य की तमाम अवस्थाएं अस्त व्यस्त हो चुकी हैं। इस प्रकार आज विकार, बिगाड़ का एक भयंकर तूफान बढ़ता आ रहा है। इस दिखावे का आकर्षण है, सौंदर्य का प्रलोभन है तथा चमकीलापन है। सुन्दर रंगीन बेर के समान यह ऊपर से तो रंगीन है किन्तु अन्दर हलाहल विष है। यह मौत लाता है किन्तु उसे अतिमनोरम पर्दे में प्रस्तुत करता है। यह विकार भोगवाद की सन्तान है, जो आकाश बेल की भान्ति सारे संसार के विशाल, लहलहाते जीवन वृक्ष को अपनी लपेट में लेता जा रहा है।

किन्तु इस का उपचार क्या है? क्या हम इस भौतिकता के भीषण प्रवाह में प्रवाहित होते जायें। क्या इस भयानक राक्षस के सामने शस्त्र फैंक कर अर्जुन की न्याईं मौन हो कर बैठ जायें, क्या प्रतिकार किसी प्रकार का न करें ऐसी स्थिति में आर्य सभ्यता के आधार भूत, जीवन के मूल स्रोत वेद का महान् सन्देश कितनी निष्ठा की विचार धारा भर देता है—मैतं पन्थामनुगा; मानव! इस भोगवाद के लुभावने मार्ग पर मत चल।

भीम एषः—क्यों यह बड़ा ही भयानक है। मृत्यु के मुख में धकेल देता है। इस भयानक परिस्थिति में वेद के भक्तों को, आर्यों को इस प्रखर प्रवाह को बलपूर्वक रोकने का प्रयास करना होगा। यही देवासुरसंग्राम है। यदि आसुरी शक्तियां इस समय प्रबल हैं, उन का प्रवाह बड़ा भीषण है, तो भी चिन्ता की क्या आवश्कता है। आर्य का अर्थ ही प्रभुभक्त तथा गति शील है। आर्यों की दैवी शक्ति भोगवाद की इन सारी शक्तियों से टक्कर ले कर अपना कर्तव्य निभा सकती हैं। हमारे पास वेद हैं, ब्रह्म की भक्ति की भावना है, विशाल संगठन है, जीवन का सुन्दर स्तर है, दीक्षा व्रत धारण किया हुआ है। हम सारे संसार को दैवी लोक बनाने का संकल्प ले कर निकले हैं। आज के बिगड़े संसार, गिरते हुए जीवन के आचार को अपनी शक्ति लगा कर बचाना है, उस का सुधार करना है, आसुरी धारा को रोकने में डट जाना है। सारे आर्य भाई बहिनें अपोह मनसस्पते इस राक्षस को कह दें—भोग वाद के भीषण भूत! यहां से भाग जाओ। दूर हट जाओ। चले जाओ! पास मत आओ। आओ। आज हम शस्त्र संभाल कर तैयार होवें।

—त्रिलोक चन्द्र

विपत्तियों से टकराना सीखो

(प्रिंसिपल रलाराम जी M.A. प्रधानसभा का सन्देश)

★○○○○○○○○○○○○○○★

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान सौम्य मूर्ति प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. ने आर्यसमाज लोहगढ़ में अपने ओजस्वी भाषण में सारे समाज को एक वीरताभरा सन्देश दिया—वह प्रेमी पाठकों के लिए संक्षेप से दिया जा रहा है। यह आज का आवश्यक सन्देश है—सं०

मानव बालक जितना निस्सहाय पैदा होता है, उतना और किसी का नहीं। वह अपने को एक नई परिस्थिति तथा नये वातावरण में पाता है। वह रोता है। किन्तु उसके रोने में ही जीवन है। यदि ऐसा न हो तो सब को चिन्ता लग जाती है। इस निस्सहाय बच्चे की माता संरक्षणात्मक प्रेम से भरी उसकी देखरेख करती है। जिसे यह प्रेम नहीं मिलता वह या तो आवारा हो जाता है या विध्वंसात्मक कार्य में लग जाता है। इस बात पर मनोवैज्ञानिक एकमत हैं कि ६ वर्ष तक जो प्रवृत्तियां बन जाती है। वही जीवन पर्यन्त रहती हैं। बड़ा होने पर उनका विकास ही होता है। प्रवृत्तियां तो वही रहती तथा उनके अनुरूप ही जीवन धारा बहती है। हम संसार में आकर प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने आप को पाते हैं। विषम वातावरण में अनुभव करते हैं। किन्तु इनका सामना करना नितांत आवश्यक है। जिस ने इन कठिनाईयों का सामना नहीं किया या प्रतिकूल वातावरण में घबरा कर बैठ जाता है। मनके शस्त्रों को डाल कर उदास होकर बैठ जाता है, वह मानव तो मानव भी बन नहीं सकता। जीवन में संघर्ष तो बड़ा जरूरी है। गिरना तो चलना सीखने के लिए आवश्यक होता है। अपने मान सम्मान का संरक्षण परम-धर्म है। इस की रक्षा के लिए मनुष्य आत्महत्या कर लेता है। अर्जुन को गीता में भगवान कृष्ण ने उपदेश देते हुए कहा है कि संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते। सम्मान वाले का अपमान तो मौत से भी बुरा कहा गया है।

आत्महत्या कायरता है। कठिनाईयों से घबरा कर भाग जाना नितान्त कायरता होती है। वेद में ऐसे लोगों के लिए घोर अन्धकार से भरे असुर्या नाम लोक है विपत्तियों से भाग कर जायेंगे भी कहां? हम तो पुनर्जन्म मानते हैं। कठिनाईयों से बच कर कहां जा सकते है। भगोड़ा बनना जीवन की शोभा नहीं है। go down fighting —विपत्तियों से लड़ते हुए अपना जीवन छोड़ना वीरता है। कठिनाईयों को देख कर हथियार मत डालो। यदि हम कायर हैं तो हम नास्तिक हैं। प्रभु विश्वासी कायर नहीं होता। नास्तिक और आस्तिक में यही भेद है। आस्तिक कठिनाईयों में, प्रति कूल परिस्थितियों में कभी भी घबराता नहीं है। उस का प्रतिकार करता हैं। उस से टक्कर लेता है हम बलमसि बलं मीय धेहि मन्त्र मे प्रभु को बल का भण्डार मान कर उस से शक्ति मागा करते है वह भगवान् शक्ति का केन्द्र है। हम उस के अमृत पुत्र पुत्रियां है। फिर घबराना कैसा? विपत्तियों मे मुसकराते हुए प्रतिकार करना मानव जीवन है।

वह उस यज्ञ को सम्पूर्ण ही नहीं समझते थे जिसमें सहस्रों पशु काटकर न डाले जावें और तब तक यज्ञ सम्पूर्ण नहीं हो जाते थे, जब तक उन में भान्ति २ की मदिरायें (शराब) न पी जावे। जब लोगों के अन्दर इस दुराचार ने स्थान पा लिया। यज्ञों में मांस शराब और हंसी ठठ्ठा आरम्भ हो गया। जब इस प्रकार की परिपाटी चल पड़ी तो गिरावट होने लगी। कई वर्षों तक यही अवस्था रही। छोटी २ बातों में झगड़ा और वितण्डा होता था और कात्यायन सूत्र में में एक झगड़ा आता है कि हवनकुण्ड के आस-पास जो गोबर का लेप दिया जाता है और उसने जो गोबर शेष बच रहता है, उसका क्या करना चाहिए। उस पर बहुत काल तक वादविवाद होते रहे। वस्तुतः जो यज्ञ विद्या के साधन थे वे रसूमति बन गए, जो उनमें जीवन था वह दूर हो गया, बुराई ने डेरा डाल दिया। उस समय यह आवश्यक था कि कोई उस समय सब से पहिला धर्म जो वैदिक धर्म के मुकाबले में खड़ा हुआ वह बुद्ध-धर्म था। परन्तु वह वास्तविक वैदिक धर्म के व्याघात (मुकाबले) में खड़ा नहीं हुआ, प्रत्युत बिगड़े हुए वैदिक धर्म के व्याघात पर आया। बुद्ध के विषय में आपने सुना होगा कि उसे किस प्रकार वैराग हुआ। शहर के फाटकों की घटनाएं कैसी हृदय विदारक हैं। जब वह एक फाटक से निकला तो आगे से एक बिमार आ रहा था। बुद्ध ने रथवान् से पूछा कि इसे क्या है? रथवान् ने कहा—महाराज! इसे ज्वर है और उस से दुःखित हो रहा है। फिर बुद्ध ने पूछा—क्या बीमारी हर एक को घेरती है। रथवान बोला—हां कभी २।

बुद्ध—क्या इस से मैं भी नहीं बच सकूंगा।

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण

धर्म-प्रचार के साधन

रथवान—कदाचित् नहीं।

दूसरे दिन, दूसरे फाटक से बाहिर जाते हुए एक शव (मुर्दे) को देखा फिर रथवान से पूछा—क्या है?

रथवान ने कहा—महाराज! इस की मृत्यु हो गई।

बुद्ध—क्या हर एक को मृत्यु घेरती है?

रथवान्—निस्सन्देह।

बुद्ध—तो क्या मैं भी इसके जाल में फंसूगा?

रथवान—अवश्य।

बुद्ध ने एक ठण्डी सांस ली और चले आये। फिर एक दिन फाटक पर एक वृद्ध मनुष्य को देखा। उसके अंग २ में दुर्बलता छा गई थी, झुरियां चेहरे पर पड़ी थीं। आंखें बीच में धंसी हुई थीं। टांगें लड़खड़ाती थीं। उसको देखकर बुद्ध ने फिर वही प्रश्न किये। इन घटनाओं को देखकर बुद्ध ने विचार किया कि मृत्यु से कैसे बच सकते हैं? हम विषयों को कैसे छोड़ सकते हैं। (हम विषयों में लम्पट हुए २ क्षणभंगुर सुख भोग रहे होते हैं कि मृत्यु आती है और नष्ट विनष्ट कर देती है। इसलिए यह आवश्यक है कि ऐसे जीवन को ही त्याग दिया जाय) बुद्ध महाराज की स्त्री के लड़का इन्हीं दिनों उत्पन्न हुआ था। वह अभी ग्यारह ही दिन का था कि बुद्ध ने घर बार छोड़ देने का विचार किया। अन्तिम रात को जब वह चलने लगा तो उसके मन में यह इच्छा हुई कि बच्चे को एक बार देख तो चलूं। वह आधी रात के समय प्रसवगृह में आया। वह कंचनियां जो इसके मन बहलाव के लिए रखी गई थीं बेसुध पड़ी थीं। बच्चा उसकी स्त्री की छाती पर सो रहा है। चित्त में आया कि बच्चे को चूम लूं। परन्तु फिर सोचा कि यदि स्त्री जाग उठेगी और मेरे इस समय इस प्रकार से आने का कारण पूछेगी, तो फिर मेरा जाना कठिन हो जायगा। वह बच्चे को बिना चूमे ही निकल गया। नदी पर जा कर सोने के भूषण उतार कर नौकर को दे दिये। बुद्ध वहां से बनारस आये। वहां विद्याग्रहण की। फिर तपस्या की और इतनी की कि जीवन की आस न रही। उस समय इनका आत्मा प्रकाशित हुआ। मन में यह भाव उत्पन्न हुआ कि इस रीति से आत्म-घात करने से और नष्ट हो जाने से कुछ नहीं बनता। केवल मात्र यही आवश्यक था कि इन्द्रियों के भोगों को तज कर ऊपर और ऊंचे चले जावें। इस हवा से ऊपर चढ़ जावें ताकि वे इन सारे दृश्यों को देखें, परन्तु इन में लिप्त न हों।

समुद्र में जहाज चल रहा है। वह एक पहाड़ी से टकराता है। लहरें उनको तोड़ती हैं। सवार का हृदय विच्छिन्न हो जाता है। वह कांपने लगता है। परन्तु समुद्र के किनारे की पहाड़ी पर बैठा हुआ मनुष्य घबराता नहीं। लहरें आकर टकराती हैं परन्तु निराश होकर पीछे लौट जाती हैं। इसी प्रकार जीवन ऐसा उच्च हो कि सांसारिक दुःख क्लेश और अन्य आपदायें हम को न सता सकें। उनका प्रभाव तक न पड़े।

(क्रमशः)

हर्ष जनक समाचार

आर्यजगत् को यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता होगी कि सभा के मान्य मन्त्री श्री. ला. सन्तोषराज जी के प्रेमपूर्वक अनुरोध करने पर श्री पं. भगतराम जी शर्मा अफ्रीका वालों ने सभा पत्र 'आर्यजगत्' को अपना सहयोग देना स्वीकार कर लिया है। श्री. पण्डित जी आर्य-समाज के बड़े पुराने अनथक कार्य-कर्ता हैं। ईस्ट अफ्रीका में आर्य-जगत् का बड़ा सुन्दर कार्य किया। वहां दारेसलाम ईस्ट अफ्रीका में आर्यसमाज के वर्षों मन्त्री रहे हैं। ३० वर्ष तक वहां समाज के कार्य को बहुत ऊंचा कर दिया है। उत्तम लेखक, अनुभवी हैं। श्री शर्मा जी के इस पूर्ण सहयोग से आर्य जगत, खूब उन्नति करेगा। हमारी कई चिंताएं मिट जाएगी—स.

——

अखिल भारतीय शुद्ध आयुर्वेद सम्मेलन

आयुर्वेद चिकित्सा सज्जनों को यह जान कर हर्ष होगा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती की जन्म-भूमि 'टंकारा' में १६ और १७ दिसम्बर, ६३ को उपरोक्त सम्मेलन समारोह सम्पन्न हो रहा है। इस सम्मेलन का उद्देश्य आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को पुनः जीवित करने का है। सम्मेलन की प्राथमिक त्यारियां हो रही हैं। देश विदेश के प्रसिद्ध वैद्यों से पत्र व्यवहार द्वारा सहायता ली जा रही है।

भारतीय जनता का सहयोग प्रार्थनीय है।

—दयाल आर्य कार्यालयाध्यक्ष

दक्षिण में हिन्दी का प्रचार व प्यार न. ३

—ले० श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' दयानन्द कालेज शोलापुर

अंग्रेजी प्रेम के बलिहारी जिस ने सारे राष्ट्र को बुद्धू बना कर रख दिया। राष्ट्र भाषा हिन्दी के साथ अंग्रेजी भी सहभाषा कुछ समय रहेगी यह संसद ने पास कर दिया है। राष्ट्र भाषा का प्रेम देश भक्त आर्यों की रग-रग में है आर्यसमाज इस बात से दु:खी है कि पराधीनता का चिन्ह हमारे देश में कुछ समय के लिए हमारे स्वाभिमान को ललकारता रहेगा। अंग्रेजी प्रेस ने इस प्रश्न पर सारे राष्ट्र को अंधेरे में रखा और बढ़ा चढ़ाकर यही बताया कि दक्षिण में लोग हिन्दी के विरोधी हैं।

राजनैतिक दलों ने इस के बारे में अपनी २ नीति बनाई परन्तु आर्य समाज की इस विषय में कोई स्वतन्त्र नीति न बन सकी। हमारे नेताओं ने भी दक्षिण आकर स्थिति की जानकारी प्राप्त न की।

माननीय प्रि० भगवान् दास जी दक्षिण की स्थिति से पूरी तरह परिचित हैं। रुग्ण होने के कारण वह इस विषय पर आर्य समाज का पथ प्रदर्शन न कर सके।

सब आर्यों ने यही समझ लिया कि दक्षिण में श्री राजगोपाल आचार्य जी का बोलबाला है और सारा दक्षिण हिन्दी का घोर विरोधी है। हमारे सब पत्रों में ऐसे लेख और नेताओं ने ऐसे वक्तव्य दिये दक्षिण के लोग पढ़ें तो आर्य समाज के प्रति वे क्या सोचें? आर्य जन। इसबात को मत भूलें कि दक्षिण में इस समय आर्य समाज के लिये अनुकूल वातावरण बन रहा है। मान्य प्रि० भगवान् दास जी पूर्ण स्वस्थ हो गए हैं जो कुछ उन के मन में है यदि उस को आर्य जाति ने मूर्त रूप दे दिया तो दक्षिण में भी पवित्र ओ३म् पताका सर्वत्र लहराती हुई प्रेम एकता व शांति का सन्देश देगी।

प्रि० महोदय शीघ्र ही इस विषय में अपने विचार आर्य पत्रों को भेजेंगे।

परन्तु इस लेख द्वारा अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार आर्य समाज को सावधान करता हूं और निवेदन करता हूं कि उत्तर भारत वालों का यह भ्रम दूर कीजिये कि दक्षिण के लोग हिन्दी विरोधी हैं।

प्रिय बंधु सुदर्शन अंशु की एक कविता व लेख इस विषय में आर्य जगत में छपे हैं। सुदर्शन जी ने ऐसी कल्पना कर ली है कि दक्षिण वालों को देश धर्म जाति से सर्वथा प्यार नहीं। लेख व गीत की शैली ऐसी है मानो तर्जना कर के प्रश्न पूछ रहे हैं कि तुम ने ऐसा क्यों किया वैसा क्यों नहीं किया।

आर्य जगत सभा का पत्र है। इस गम्भीर विषय पर हमे दायित्व पूर्ण ही लिखना चाहिए। आर्य समाज व सभा की साख का ध्यान रखना चाहिए। हम ने वोट नहीं लेने। देश का हित देखना है और वेद का प्रचार करना है। पाठकों की जान कारी के लिये अब कुछ ठोस तथ्य रखता हूं जो स्वयं बोल कर बतायेंगे कि दक्षिण में हिन्दी का प्रचार भी है और प्यार भी है। शोलापुर आते हुए मार्ग में सब प्रांतों के लोगों से मिलने का अवसर मिला परन्तु कहीं भी अंग्रेजी के बिना कार्य नहीं रुका। सब लोगों से हिन्दी में ही बात की। एक विशेष घटना देता हूं। गाड़ी में दो बङ्गाली सज्जन थे उन में से एक अंग्रेजी बोलने लगा। बम्बई से वे पूना आ रहे थे। दूसरा बङ्गाली भाई आवेश में आकर बोला हिन्दी में बोलो ताकि सब भाई बात समझ सकें इस पर वह सज्जन भी हिन्दी में बोलने लगे।

हमारे कालेज में स्कूल से आकर प्रवेश पाने वाले छात्र पूना विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार प्राय: सभी हिन्दी लेते हैं। जब मार्कीट में फल सब्जी बेचने वाले और जूता बनाने वाले हिन्दी समझते हैं तो हिन्दी का विरोध कहां? मैं यहां एक चीनी डाक्टर महोदय के पास गया। अंग्रेजी की बजाय शुद्ध हिन्दी में वह बोलने लगा। वह महाराष्ट्र का पुराना निवासी है। (क्रमश:)

चन्द्रशेखर आज़ाद कारावास में जल्लादों द्वारा मार खाते हुए भी भारत-माता की जय बोल रहे हैं

(ले०—कुंवर जयरामसिंह 'त्यागी' दयानन्द ब्राह्महाविद्यालय हिसार)

भारत माता की जय इन्हीं शब्दों पर,
अमर सेनानी आज़ाद मार खाता रहा।
बहने लगा रक्त त्वचा ढीली दिखाई पड़ी,
क्रूर जल्लादों का कोड़ा पर चलता रहा॥
जय हो मातु जननी, मां भारती तुम्हारी जय,
भारत का सिंह गर्जनायें यों करता रहा।
हार मान बैठे जल्लाद मार देते हुए,
त्यागी आज़ाद वैरागी सा स्मित रहा।

जेल से निकलने के पश्चात् पार्टी के सामने आज़ाद के बचन—

मिलते छ: पैसे हैं भोजन के लिए किन्तु,
पेट नहीं भरता तो किया ही क्या जायेगा।
अधिक मुद्रायें जब पास में हैं ही नहीं,
कहो प्रिय मित्रो दुग्ध मक्खन कब आयेगा॥
आकुल बन वृक्षों से और प्यासे बन अम्बु से,
रक्त बहा कर जब न काम किया जायेगा।
विश्व के विकार का विकराल रूप हो विनिष्ट,
'त्यागी' समरसता तो ईश दे जायेगा॥

ईसाई जोड़े का हिन्दू धर्म में प्रवेश

आर्यसमाज गोविन्द नगर में एक नव-विवाहित ईसाई दम्पति को श्री देवीदास आर्य मन्त्री कन्नौज आर्य सभा कानपुर ने वैदिक धर्म (हिन्दू धर्म) में प्रवेश करवाया और उनके नाम पीटर नेथोलियन राव से पारसनाथ राय व इन्द्रादेवी राव रखा। श्री आर्य ने उनको स्वाध्याय के लिए सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ की एक कापी दी और उनको वैदिक धर्म की विशेषताओं से परिचित किया। पारस नाथ राय-स्थानीय गन फैक्टरी का कर्मचारी है और उसकी आयु २३ साल की है।

—मन्त्री शिवदयाल

चारों वेदों का स्वाध्याय करो

ऐसा भ्रम न हो

(ले०—श्री विद्यासागर शर्मा 'दक्ष' हिसार)

आज आर्य जगत् के आर्यावर्त में निवास करने वाली आर्य जनता को (सूर्य में परमेश्वर का दिया प्रकाश है) 'ऐसा भ्रम न हो' इस लिए मैं अपने विचार जनता के सम्मुख प्रस्तुत करता हूं।

आज आर्य जनता परमेश्वर को इस प्रकार मानती है कि, सूर्य के अन्दर जो प्रकाश है वह परमेश्वर प्रदत्त है। और लोग प्रायः कहा भी करते हैं कि ये जो सूर्य के अन्दर प्रकाश है वह परमात्मा का है। परन्तु ऐसी बात नहीं। क्योंकि ऐसा माने तो यहां पर यह शङ्का उत्पन्न होती है कि परमेश्वर यदि सूर्य को प्रकाश प्रदान करता है, तो सूर्य स्वय प्रकाश वाला न रहा, और यह सिद्ध होगा कि, सूर्य में जो अग्नि के परमाणु हैं उन की अपनी निजी सत्ता कोई नहीं।

ऐसी बात नहीं अपितु अग्नि के के परमाणुओं का पुंज जो सूर्य है वह स्वयं प्रकाश वाला है। क्यों कि सूर्य को यदि परमेश्वर से प्रकाश ग्रहण करने वाला माना जाय तो बड़ा भारी अनर्थ हो जायगा। और वह ऐसा कि, परमेश्वर यदि सूर्य को प्रकाश प्रदान करता है तो, यहां पर ये आपत्ति उठती है कि, प्रदान वही वस्तु की जाया करती है जो स्वयं को प्राप्त हो सो प्रसनहीं वह नहीं। क्योंकि परमेश्वर का अपना निजी प्रकाश नहीं है। प्रकाश तो अग्नि के परमाणुओं का अपना निजी है। यदि परमेश्वर का मानोगे तो दर्शन शास्त्रों के सिद्धांत की हानि हो जायगी और वह ऐसी कि—'कारणगुण पूर्वक : कार्यगुणो दृष्टः' वै० दर्शन॥ जैसे कारण में गुण होते हैं वैसे ही कार्य में होते हैं। (वैसे तो परमेश्वर निमित्त कारण है परन्तु उसे प्रकाश देने वाला मानने पर वह उपादान कारण हो जायगा। उपादान कारण रूप परमेश्वर में प्रकाश होने से उस के कार्य में भी प्रकाश होना चाहिये। कार्य=ब्रह्माण्ड परमेश्वर का कार्य है और ब्रह्माण्ड के कण २ में परमेश्वर व्यापक है। व्यापक होने से ब्रह्माण्ड का कण २ दीप्तिमान होना चाहिए। इस के दीप्तिमान होने से संसार में सूर्य की कोई आवश्यकता नहीं। इस लिए हमें ऐसा नहीं मानना चाहिये। क्योंकि प्रकाश अग्नि के परमाणुओं का अपना निजी है परमेश्वर का नहीं।

परमेश्वर का मानने में और भी दोष आते हैं। जैसे—मिट्टी का स्वाभाविक (निजीगुण गन्ध है। निजी होने से ही उसका कार्य जो घट है उस में भी गन्ध होती है। यदि निजी गुण न होता तो इस के कार्य में भी गन्ध न होती। इसी प्रकार सूर्य जोकि, अग्नि के परमाणुओं का संघात है उन परमाणुओं का स्वाभाविक (निजी) गुण प्रकाश है, इसी लिए उसका जो पुञ्ज सूर्य है उस में प्रकाश है। अन्यथा न होता।

यदि यह स्वीकार न करोगे तो 'कारणाऽभावात्कार्याऽभावः'॥ वै० दर्शन॥ कारण के न होने से कार्य कभी हो नहीं सकता। यहां तो कारण ही विद्यमान नहीं है तो क्योंकर कार्य मे प्रकाश हो सकता अर्थात नहीं। क्योंकि इसी दर्शन में कहा है कि 'कारण भावात् कार्य भावः' कारण के होने पर ही कार्य हुआ करता है। इसलिए सूर्य में जो प्रकाश है वह परमेश्वर का दिया है, ये बात सम्भव नहीं हो सकती। क्योंकि 'सम्भवति यस्मिनत सम्भव' जो जिस में सम्भव हो सकती हो उसी को सम्भव कहना चाहिए।

यथा—किसी ने कहा—'सत्सु घनेषु वृष्टिः' बादल के होने से वर्षा व कारण के होने से कार्य उत्पन्न होता है। यह बात सम्भव है, क्यों कि हम प्रत्यक्ष देखते हैं।

इसलिए हमें ऐसा जो कि—कठोपनिषद् की पंचमं वल्ली, कारिका १५वी में वर्णित है—

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं,
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभान्ति सर्वम्,
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥

अर्थ—(तत्र) उस [ब्रह्म] में (सूर्यः) सूर्य (न भाति) नहीं प्रकाशित होता (न चन्द्र तारक) न चन्द्रमा और तारे (इमाः) और ये (विद्युतः) बिजली भी (न भान्ति) वहां नहीं चमकती फिर (अयम्) यह (अग्निः) अग्नि वहां (कुतः) कहां से [प्रकाशित हो सकती है] किन्तु (तम) उस (एव) ही के (भान्तम्) प्रकाशित होने से (सर्वम्) ये सब [सूर्यादि] (अनुभाति) पीछे से प्रकाशित होते हैं (तस्य) उसके (भासा) प्रकाश से (इदम्) यह (सर्वम्) सब (विभाति) प्रकाशित होता है। इस कारिका के अर्थों पर विचार न करके साधारण बुद्धि से यह कहना कि परमेश्वर ने सूर्य को प्रकाश दिया यह उचित नहीं होगा। क्योंकि इस कारिका में 'प्रकाश दिया' इस शब्द का उल्लेख मात्र भी नहीं है अपितु उसके प्रकाशित होने के पीछे ये सब (सूर्यादि) प्रकाशित होते हैं ऐसा है। यहां पर विचार किया जाय तो इस के गूढ़तम रहस्य का पता चलता है कि परमेश्वर ने इन चमकीले (सूर्यादि) पदार्थों को प्रकाश न देकर इनको प्रकाशित अर्थात् प्रकाश देने के सामर्थ्य वाला बना दिया। वैसे भी इस कारिका के द्वारा यमाचार्य ने नचिकेता को ब्रह्म की महत्ता का दिग्दर्शन कराया है। इसलिए यहां से यह अर्थ लेना उचित नहीं। क्योंकि इस कारिका में विशद् रूप से प्रकाशित शब्द का प्रयोग है। प्रकाश शब्द का नहीं। प्रकाशित किया इसका अर्थ हम ने जो लिया है वही उचित है, कि परमेश्वर ने इनको क्षमता अर्थात् लेटेन्ट से पेटेन्ट कर दिया। किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि—

राजे हस्ती को मेरे
मुझ पर हवेदा कर दिया।
गुञ्चये दिल को नसीमें
इश्क ने वा कर दिया॥
भेज कर मयखानए
दुनियां में साकी ने मुझे।
खुद रहा परदे में
मेरा राज अफशां कर दिया॥

इस से यही प्रकट होता है कि उस परमेश्वर की विलक्षण शक्ति की विलक्षणता यही है कि, उसने प्रकृति अव्यक्त होते हुए भी जगत् रूप में परिणित करके व्यक्त कर दिया है अर्थात् प्रकृति को उस योग्य बना दिया। ठीक इसी प्रकार सूर्य को, अग्नि के परमाणुओं को एकत्रित कर (गति देकर) पुञ्ज बना दिया न कि प्रकाश प्रदान किया प्रत्युत उसकी योग्यता प्रदान की जिससे कि वह प्रकाश देने की योग्यता वाला हो गया और प्रकाश देने लगा। इन युक्ति व प्रमाणों से आप लोग समझेंगे व मानेंगे भी कि परमेश्वर ने केवल क्षमता प्रदान की है, प्रकाश नहीं। ऐसा मान कर ही हमारे इस भ्रम (सूर्य में प्रकाश परमेश्वर प्रदत्त है) की निवृत्ति हो सकती है। अन्यथा नहीं। आशा है आप लोग इस पर विचारेंगे।

क्या आर्यजगत् चेतेगा ?

भारत के आर्यों को महाभारत संग्राम के पश्चात् भागवत पुराण बनाने वालों ने चार मास पर्यन्त सरस्वती पठन पाठन विषय अपने चारों वेद सब ऋषि प्रणीत व्याकरणादि वेदों के अंगों उपांगों शास्त्रों को एक अलमारी में रखके सरस्वती देवी सोती है अत चार मास तक वेदाध्ययन निषेध किया जाता है। तब इस काल को अनुमान से ४ वा ४॥ हजार वर्ष तक होते हैं । सरस्वती शयन करती थी । सरस्वती, का प्रयोग अर्थात् गीत, वाक् वाणी संज्ञिका वेद वाचा का प्रयोग पठन-पाठन काल में किया जाता रहा है, भारती राज भाषा का नाम है और ईष्ठा संस्कारों के समय उच्चारित होती है। ये तीन वाणी के नाम और भाषा आदि अन्य नाम भी मानव समाज के व्यवहार की वाचक हैं। और जो वैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति और परा इन चार नामों को धारण करने वाली वाणी है। उनका विषय वैखरी का जो पदार्थ साकार आंखों से दीखने हारे पदार्थ हैं। उनके गुण, कर्म स्वभाव रखने हैं जिनसे वेद आयुर्वेद भूगोल इतिहास ग्रन्थ बने हैं । मध्यमा का विषय मननात्मिक व्यवहार जीव करता है वहां मन ज्ञान का कार्य होता है। बुद्धि अधिष्ठान में पश्यन्ती वाणी तिष्ठित है। इस प्रकार वाणी सात ही मुख्य हैं और सात ही बुद्धि हैं। जिन के नाम निम्न हैं। बुद्धि, १ धी, २ मेधा, ३ माया, ४ ऋतम्भरा उमा (हैमवती) और प्रज्ञा ये हैं। और आत्मा के तीन स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर हैं। योगियों के लिये यह एक विवेचनीय विषय है।

पौराणिकों ने केवल वैखरी के विषय को अपना लिया है। इस तत्व विवेक से ज्ञात होता है कि, विद्यमान समय में पञ्चगौड़ और पञ्चद्राविड़ श्री शङ्कराचार्य जी को बनाई ब्राह्मणत्व की व्यवस्था नकली है। वास्तव में इतिहास में जो पाञ्चाल शैवपांचाल ब्राह्मणों का मिलता है उन से ही पञ्च का आकर्षण करके पंचगौड संज्ञा दी है। वास्तव में वे ब्राह्मण नहीं किन्तु भाट क्षत्रियों के इतिहास की रक्षा करने हारे हैं। क्योंकि गुड़ रक्षणे धातु से गौड़ शब्द सिद्ध हुआ।

इस विषय विमर्ष का निष्कर्ष यह है कि आर्यो चेतो यदि तुमने नेक उपदेशक परम दयालु दयानन्द ऋषि के ऋण को ऋण समझा है और समझते भी हो तो उनके जीवित पितरों के निर्घोषित 'सोम्यासः अग्निष्वाचा' आदि ८वां आठ नाम बताये हैं उनके शब्द अर्थ के सम्बन्धों का साक्षात्कार करना है। उनके सम्बन्धी वे ही मनु लोहार मय सुनार खाती बढ़ई। मय एवं यम इति विज्ञेयम्। त्वष्टा-सुनार, शिल्पी गृहनिर्माता राज गवण्डी और दैवज्ञ-ठठेरा। ये पांचाल ब्राह्मण थे। वेद में इन्हीं को (पांचजन्य पुरोहितः) तमीमहे (कथम्) महागयम। इस मंत्र में (महागयम) पांचों में प्रत्येक के लिए कहा गया है। जिस का अर्थ महान धनवान को ईमहे, यात्रा महे। चाहते हैं कि हम को भी धनवान बनावे। शिल्प से विना (गयम्) धनमिति। द्रव्योपार्जन नहीं हो सकता। शास्त्रों में विश्वकर्मा आदि शिल्पियों को ही ब्राह्मण मान के उनको भोजन कराओ तो जीवित श्राद्ध और आर्य जगत् के पांचों यज्ञ सफल सर्वांग पूर्ण होंगे तब सत्य का ग्रहण भी होगा।

परमात्मा सर्वत्र व्यापक है

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के माननीय प्रधान श्रद्धेय स्वामी ध्रुवानन्द श्री महाराज सन् १९५७ में जब डोडोवा (ईस्ट-अफ्रीका) प्रचारार्थ पधारे थे तो मैंने उन्हें भोजनार्थ आमन्त्रित किया। उस समय जहां उन्होंने मेरी पुत्रियों के नामों के अर्थ उनसे पूछे वहां सब से छोटी पुत्री से प्रश्न किया—'परमात्मा कहां है ?' पुत्री ने उत्तर दिया—'सब जगह'। लगते हाथ दूसरा प्रश्न कर दिया—'क्या मल (टट्टो) में भी है ?' इस प्रश्न के सुनते ही वह चुप हो गयो। यही प्रश्न स्वामी जी ने एक आर्य भाई के पुत्र से, जब वह और मैं दोनों उनके घर भोजन करने गये, किया था। वह लड़का भी उत्तर न दे सका।

आदरणीय प. रामचन्द्र जी देहलवी 'तार्किक शिरोमणि' से भी एक व्यक्ति ने पूछा था—'पण्डित जी ! आप ने कहा है कि परमात्मा सब जगह है। क्या आप बता सकते हैं कि कोई स्थान उससे रिक्त (खाली) नहीं ? क्या गिलाजत और टट्टी में भी ईश्वर है ?' उसने साथ ही नाक पर रूमाल भी रख लिया। पंडित जी ने कहा—'अजीब नाजुक मिजाजी है। यदि दीख पड़े तो न जाने क्या हो। क्यों जी ! जब वह बाहिर तशरीफ लाते हैं तभी दुर्गन्धि आती है ना ? अन्दर तो नहीं आती ?' उस पुरुष ने उत्तर दिया—'जी हां'। पंडित जी ने कहा—'पता लगा कि नाक बाहिर काम करता है, अन्दर नहीं। परमात्मा से प्रार्थना करें कि वह आपकी नाक का सम्बन्ध अन्दर कर दे।' कहने लगा—'यह तो बड़ी बदबख्ती होगी।' पण्डित जी बोले—सब चीजें मेरे परमात्मा के अन्दर हैं। जब आपके अन्दर का मैला आपको बदबू नहीं देता तो परमेश्वर को कैसे देगा ?'

दयानन्द-वचनामृत

"कोई कितना ही (यत्न) करे, जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि होता है। (यदि) मत मतांतर के आग्रह से रहित, अपने पराये के पक्षपात से शून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा करने वाला, न्याय और दया से युक्त भी विदेशियों का राज्य हो, तो भी पूर्ण सुखदायक नहीं हो सकता। (क्योंकि) भिन्न २ भाषा का, पृथक २ शिक्षा का और अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इस के छूटे एक दूसरे का पूरा उपकार होना, अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है।"

(स्वामी सत्यानन्द जी)

अमूल्य वचन

१. 'दूसरे लोग सेवा धर्म की शिक्षा नहीं ले रहे और हम इससे भरपूर हो रहे हैं इस लिए हम औरों की अपेक्षा अच्छे हैं।' यह विचार जब हमारे दिलों में उठे तब समझ लेना चाहिए कि उसी क्षण हम सेवा धर्म का त्याग कर रहे हैं।

२. अपमान का आधार हल्का स्वभाव है। उन्नत स्वभाव पर इस का प्रभाव नहीं पड़ सकता। अतः मनुष्य का अपमान तभी होता है जब वह उच्च पद को त्याग कर अपमान पाने योग्य पतन तक नीचे उतर आता है।

३. नेताओं के जो सच्चे अनुयायी होते हैं वे अपने से कम ज्ञान रखने वालों का ठीक नेतृत्व कर सकते हैं। क्योंकि जिस व्यक्ति को आज्ञा पालन का विवेक नहीं वह भले प्रकार आज्ञा देना भी नहीं जान सकता।

(भक्तराम अफ्रीका वाले)

रजिस्टर्ड नं० पी

चुनाव

आर्यसमाज बस्ती हरफूलसिंह देहली

प्रधान—श्री आशासिंह जी, उपप्रधान—बजीरचन्द जी, मुकन्दलाल जी, श्रीमती सुशीला वर्मा, मन्त्री—श्री रामनाथ सहगल, उपमन्त्री—श्री सोमनाथ आर्य, रामस्वरूप जी, श्रीमती प्रेम वर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री कृष्णलाल जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री आनन्द प्रकाश जी, आडीटर—डा० सीताराम जी, अन्तरङ्ग सदस्य—श्री रामनाथ, सोमनाथ जी, श्री आशासिंह जी, डा० सीताराम जी, श्री मुकन्दलाल जी, श्रीमती जानकी देवी जी। रामनाथ मन्त्री समाज।

आर्यसमाज (गुरुकुल विभाग) शकूर बस्ती देहली—६

प्रधान—डा० शादीलाल जी, उपप्रधान—श्री रामदेव जी, मन्त्री—धर्मेन्द्र प्रकाश जी, उपमन्त्री—श्री श्यामलाल जी, प्रचार मन्त्री—श्री बिशनदास जी, कोषाध्यक्ष—श्री हरिकरण जी। धर्मेन्द्र प्रकाश मन्त्री समाज।

आर्यकुमार सभा चित्र गुप्त रोड, नई देहली

प्रधान—श्री प्रिं० हरिश्चन्द्र जी M.A., कार्यकर्ता प्रधान—श्रीदेवव्रत जी, उपप्रधान—श्री जंगीलाल जी मल्होत्रा, मन्त्री—श्री नंदकिशोर जी, कोषाध्यक्ष—श्री पं० लक्ष्मीनारायण जी शास्त्री, नंदकिशोर जी. कोषाध्यक्ष—श्री पं० लक्ष्मी नारायण जी शास्त्री। नंदकिशोर मंत्री सभा।

आर्योपदेशक विद्यालय हापुड़ (उ० प्र०)

हापुड़ उत्तर प्रदेश में आर्योपदेशक विद्यालय का उद्घाटन हो गया है। अध्यापन कार्य भी आरंभ हो गया है। उच्चकोटि के उपदेशक तथा शास्त्रार्थ महारथी बनने के इ... भेजें।

इसी पुस्तकालय की स्थापना कर के अनुसंधान कार्य शुरु हो गया है। श्री पं. राम चन्द्र जी देहलवी द्वारा ईसायत व इस्लाम के साहित्य से प्रमाणों का संग्रह भी किया जा रहा है। इस अनुसंधान विभाग का मुख्य कार्य स्वामी दयानंद जी के सिद्धांतों के पोषक प्रमाणों को खोज कर एकत्रित सामग्री को प्रकाशित करना है। अतः इस पवित्र और आवश्यक कार्य के लिए देश भर के विद्वानों से निवेदन है कि वे हमें पूर्ण सहयोग देकर कृतार्थ करें।

अमरसिंह आर्यपथिक
आचार्य आर्य उपदेशक विद्यालय

साहित्य-समालोचना

आत्मतत्व प्रकाश (सजिल्द)

लेखक—श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती (स्वर्गत)।

भूमिका लेखक—श्री रामरक्षा (ब्र०) गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

सम्पादक—पं० विश्वबन्धु जी शास्त्री एम० ए० एम० ओ० एल०।

प्रकाशक—वि० वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर। पृष्ठ सख्या १११, मूल्य १) रु० ५० न० पै०।

उक्त पुस्तक के आद्योपान्त अध्ययन के पश्चात् मनस्वी लेखक के विस्तृत स्वाध्याय की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जा सकता। यह रचना उनके वर्षों दार्शनिक एवं योग सम्बन्धी मार्मिक अनुसन्धान का फल है। रचयिता ने अपनी इस कृति में आत्मा और वाणी के गोचर तथा अगोचर होने के सम्बन्ध में विद्वत्तापूर्वक विवेचन किया है। अध्यात्मवाद के पथानुगामियों के लिए पुस्तक सरल और रुचिकर है। आकार प्रकार आकर्षक, छपाई उत्तम और भाषा नपी तुली। प्रकाशकों से प्राप्तव्य।

...रे राम जी ...ति पुरस्कार

श्री प० ... राम जी पुरोहित आर्य समाज सैक्टर ८ चण्डी गढ़ सूचना देते हैं :—

इस वर्ष जिन चार शिक्षक वा शिक्षिकाओं को राष्ट्रपति पुरस्कार प्रदान हुआ है उन में डी० ए० वी० हायर सैकण्डरी स्कूल (लाहौर) चंडी गढ़ के योग्य प्रिंसिपल श्री हरि राम जी भी हैं। शिक्षा तथा प्रबन्ध की अनुपम योग्यता के फल स्वरूप ही वह डी० ए० वी० प्रबन्ध कर्तृ सभा के आजीवन सदस्यता के अधिकारी बने आर्य समाज के प्रति लग्न और तत्परता के कारण ही वह वर्षों विविध अधिकारों पर प्रतिष्ठित रहे हैं। प्रिंसिपल महोदय के पुरस्कार प्राप्ति के उपलक्ष में डी० ए० वी० शिक्षक वर्ग की ओर से डी० ए० वी० समिति के प्रधान जस्टिस टेक चन्द जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

समारम्भ में प्रिंसिपल जी के ईश्वर प्रदत्त गुणों की विवेचना करते हुए उन्हें बहुत सराहा। वस्तुतः वह उस प्रशंसा के सर्वथा अधिकारी हैं।

प्रिंसिपल हरि राम जी ने जस्टिस महोदय की वक्तृता का उत्तर देते हुए सारा यश आर्य समाज और अपने स्टाफ को दिया।

वस्तुतः राष्ट्रपति का प्रिंसिपल महोदय को मान प्रदान आर्य समाज और डी० ए० वी० आन्दोलन के लिए गौरव का विषय है।

प्रिंसिपल महोदय को आर्य जगत की ओर से बधाई। परमात्मा प्रिंसिपल महोदय की आयु दीर्घ करें ताकि वह चिरकाल तक वैदिक धर्म की सेवा करने में समर्थ हो सकें।

आत्मानन्द जीवन-ज्योति

आर्यसमाज के आदर्श संन्यासी श्रद्धेय स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती का जीवन चरित्र गुरुकुल मंझर (रोहतक) द्वारा संपादन हो चुका है। अब केवल मुद्रण की समस्या उपस्थित है। प्रकाशित होने से पूर्व बनने वाले ग्राहकों से छः रुपये मूल्य लिया जायेगा वैसे उसकी कीमत १०) है। ग्राहक धड़ाधड़ बन रहे हैं। पुस्तक प्रकाशनार्थ दान भी प्राप्त हो रहा है। जो दानी १०१) वा अधिक धन देंगे उनका हाफ्टोन का चित्र भी देने की योजना है। वे सज्जन सहायता भेजते समय चित्र भी भेजें। छः रुपये अग्रिम की रिआयत १५-१०-६३ तक है। डाक व्यय अतिरिक्त। महापुरुषों के जीवन वृत्तांत ज्योति-स्तम्भ हुआ करते हैं और फिर एक वीतराग महात्मा के जीवन से अधिकाधिक प्रेरणायें मिलेंगी। जीवनी चित्रों से अलंकृत बढ़िया कागज पर छपेगी। धन भेजने का पता :—

व्यवस्थापक
"आत्मानन्द-जीवन-ज्योति"
गुरुकुल मंझर (रोहतक)

शोक समाचार

डी. ए. वी. H/S स्कूल दौलतपुर (होशियारपुर) के सुयोग्य टीचर चौ. मित्रसिंह जी का आकस्मिक देहांत ६-९-६३ को प्रातः ६॥ बजे हो गया। आप स्कूल के योग्य तथा परिश्रमी अध्यापक थे। आपने तीस वर्ष तक लगातार स्कूल की सेवा की। इस सारे समय में आपकी सरविस रिकार्ड अति उत्तम रहा। स्कूल स्टाफ उनकी मृत्यु पर हार्दिक शोक प्रकट करता हुआ उनकी आत्मा की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना करता है।

—जगदीशचन्द्र हैडमास्टर

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन न० २०४५ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे — वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ३९) रविवार १३ आश्विन २०२०— २९ सितम्बर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

मं वो मनांसि

हे राज्य के नर-नारियो ! आप सब के मन एक हों। किसी प्रकार का वैमनस्य न पैदा होने पावे। राष्ट्र में गड़बड़ कब मचती है, जब लोगों के मन में गड़बड़ होती है। मन का भेद देश को भिन्न कर दिया करता है। मन एक देश एक।

मं व्रता समाकृति:

आप सब का व्रत, राज्यभक्ति, निष्ठा भक्ति भी एक हो, समान हो और आकूतिः-देशसेवा के विचार भी एक ही हों। जिस देशवासियों के विचार, मन एक होते हैं वह राष्ट्र उन्नति करता रहता है। जहां विचार बिगड़ते हैं वहां द्रोह होता है।

अमी ये विव्रता:

हे लोगो ! ये अमी-जो लोग विव्रताः-राष्ट्र के व्रतों नियमों के प्रतिकूल काम करने वाले हैं। मन-माने काम करके देश की शान्ति को भंग कर देते हैं। राष्ट्र के शत्रु हैं।

अथर्ववेद

वेदामृत

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

यजु० अ० ३४ मं० ४

अर्थ—(येन) जिस मन के द्वारा (इदं) यह (भूतम) बीता हुआ समय (भुवनम्) यह वर्तमान समय तथा (भविष्यत्) आने वाला समय (परिगृहीतम) धारण किया जाता है (अमृतेन) अमृतमय साधन के द्वारा (सर्वम्) सब कुछ जाना जाता है और (येन) जिस मन के सहयोग से (यज्ञ) यज्ञ एवं परोपकार के सारे कार्य (तायते) फलाया जाता है (सप्त) सात (होता) सात होताओं वाला कल्याणकारी यज्ञ जिस मन द्वारा किया जाता है। वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला होवे। मैं सदा शुभ विचारी बन जाऊं।

भाव—यह हमारा मन भूतकाल की बातें, वर्तमान काल के कामों को करता तथा आगे आने वाली बातों को भी इष्ट अनिष्ट के रूप में भलीभान्ति सोचने की शक्ति रखता है। यह अमृतमय है, इसी ने सारी बातों का चिन्तन करने की शक्ति ले रखी है। इसी के द्वारा ही सारे जीवन के अनेक प्रकार के यज्ञ, महान् शुभ कर्म, परोपकार के कर्तव्य तथा सब के हिताय कार्य सम्पादित होते हैं। शरीर में भी सात होताओं का सुन्दर यज्ञ होता है। पांच प्राण, छटा आत्मा तथा सातवां ब्रह्म ब्रह्मा के रूप में यज्ञपति बन कर यज्ञ में आशीर्वाद दे रहा है। यह मेरा मन सदा पवित्र विचार करे। जीवन मन के ऊपर ही निर्भर है। यह उठा दे या गिरा दे। प्रभो ! मन को शुद्ध बना दो—सं०

ऋषि दर्शन

परमेश्वरो देव :

परमेश्वर देव हैं, परमदेव हैं, सारे दिव्य गुणों का भण्डार हैं। देव का नाम परमेश्वर तथा परमेश्वर का नाम देव है। दिव्य नाम, दिव्य गुण, दिव्य शक्ति तथा दिव्य देव हैं।

देवता: परमेश्वर प्रकाश्या:

जितने भी सूर्य, चन्द्र, अग्नि आदि देवता हैं—ये सारे उसी परमेश्वर से प्रकाशित होते हैं। इन में जो भी तेज, ज्योति, प्रकाश है वे परमात्मा के दिए हुए हैं।

मत्र स्वयं प्रकाशोऽस्ति

वह भगवान स्वय प्रकाश, सदा ज्योतिर्मय है। वह सब को प्रकाश देते हैं किन्तु वह स्वय प्रकाश मय हैं उन को किसी से प्रकाश लेने की आवश्यकता नहीं—

भाष्य भूमिका

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री — सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

सत्संग का महत्व

(ले०—श्री रविदत्त जी विद्यावाचस्पति द० ब्रा० हिसार)

यह एक सर्वसम्मत तथ्य है कि मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन पर जितना प्रभाव संगति का होता है, उतना अन्य किसी विषय का नहीं हो सकता। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह ऐसे श्रेष्ठ एवं ज्ञानी पुरुषों का सत्संग करे, जिस से उसका जीवन उज्वलता से परिपूर्ण हो जाये। क्योंकि जिस मानव का जीवन आचार भ्रष्ट हो जाता है, उसके लिये धर्म ग्रन्थों में आता है कि—'आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः' अर्थात सदाचार विहीन पुरुष अथवा सत्संगहीन पुरुष कभी वेद को पढ़ने में समर्थ नहीं हो सकता। ऋग्वेद से हमें सत्संग का पाठ मिलता है। ऋग्वेद में एक बड़ा ही सुप्रसिद्ध मन्त्र आता है कि—

'ओ३म् स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताऽघ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥'

[ऋग्वेद ५।५१।१५]

(सूर्याचन्द्रमसौ इव) सूर्य और चन्द्रमा के समान हम सब स्वयं (स्वस्ति पन्थाम्) उत्तम कल्याणकारी मार्ग का (अनुचरेम) अनुसरण करें और (पुनः) तत्पश्चात् (ददता) दानी (अघ्नता) अहिंसक अर्थात् प्राणीमात्र का कल्याण करने वाले (जानता) ज्ञानी अर्थात विद्वान पुरुषों की (संगमेमहि) सगति करें, उनके बतलाए हुए मार्ग पर चलें।

सत्संग की महिमा का वर्णन करते हुए किसी कवि ने कहा है कि—

चन्दनं शीतलं लोके
चन्दनादपि चन्द्रमा।
चन्द्र चन्दनयोर्मध्ये
शीतला साधु संगतिः ॥

अतः इस जगति में चन्दन अत्यन्त शीतलता को प्रदान करने वाला वृक्ष है और चन्दन से भी अधिक चन्द्रमा शीतलता देता है, परन्तु चन्द्र और चन्दन के मध्य में सज्जन पुरुषों की संगति अधिक शीतलता प्रदान करने वाली होती है। अतः इससे हमें शिक्षा मिलती है कि सज्जन पुरुषों का संग करने से ही जीवन का उत्थान हो सकता है अतः कुटिल व्यवहारों को सर्वथा छोड़कर हमें सतत सज्जनों का सत्सङ्ग करना चाहिए। क्योंकि लोक में प्रचलित है कि :—

महज्जनस्य संसर्गः
कस्यनोन्नति कारकः।
पद्म पत्रस्थितं वारि
धत्ते मुक्ताफलश्रियम् ॥

महान् पुरुषों की सत्सङ्गति किस को उन्नति कारक नहीं होती अर्थात सभी को होती है, जिस प्रकार से कमल पत्र पर जल का बिन्दु मोती के समान दिखाई देता है ठीक इसी प्रकार दुर्जन पुरुष यदि सज्जनों का सङ्ग करे तो वह भी मोती के समान चमक जायेगा।

अतः हमें सज्जन पुरुषों का सङ्ग करना चाहिए। जिस से हमारे जीवन में उज्ज्वलता परिव्याप्त हो जाये। क्योंकि विद्वान पुरुष कहा करते हैं :—

"सतां हि सगः सकलं प्रसूते"

अर्थात् सज्जन पुरुषों का सङ्ग ही सतत जीवन की वृद्धि के लिए होता है। इसके साथ-साथ कुसंग के दोषों का वर्णन भी अत्यन्तावश्यक हो जाता है जो कि इस प्रकार है :—

अहो दुर्जन संसर्गा-
न्मान हानिः पदे पदे।
पावको लोहसंगेन
मुद्गरैरभिहन्यते ॥

अर्थात् दुर्जन पुरुष की कुसङ्ग करने से हमें पद पद पर हानि हो सकती है।

क्योंकि लोहे का संग जब अग्नि करती है तो वह भी लोहे के संग पीटी जाती है, ठीक इसी प्रकार सज्जन यदि दुर्जन का कुसंग करेगा तो अग्नि के समान पीटा जायेगा।

एक बार विष्णु से राजा बलि कुछ आध्यात्मिक चर्चा कर रहे थे तो महाराज विष्णु ने राजा बलि से पूछा कि आप सज्जन पुरुषों के साथ नरक में जाना अच्छा समझते हो अथवा दुर्जन पुरुषों के साथ स्वर्ग में जाना। तब राजा बलि ने यही उत्तर दिया था कि मैं सज्जनों के साथ नरक में जाना ही अच्छा समझता हूं। जब उनसे प्रश्न किया, क्यों ? तब उत्तर मिला कि सज्जन पुरुष नरक में जा कर, नरक को ही स्वर्ग में परिवर्तित कर देंगे। परन्तु दुर्जन स्वर्ग को भी अशिष्टता के कारण नरक बना देंगे। इसी प्रकार दुर्योधन के कुसंग में आ कर एक बार भीष्म पिता-यह भी राजा विराट् की गऊएं चुराने के लिए उद्यत हो गये थे। क्योंकि चाणक्य ने कहा है कि :—

सर्पश्च दुर्जन श्चैव, वरं सर्पो न दुर्जनः।
सर्पो दशति काले, दुर्जनस्तु पदे पदे ॥

सर्प के तो एक बार काट लेने से मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, परन्तु दुर्जन पुरुष तो मनुष्य की पद पद पर हानि करता रहता है।

भर्तृहरि भी अपनी वैराग्य शतक में सत्संगति से प्राप्त लाभों का वर्णन करते हुए लिखते है कि :—

जाड्य धियो हरति सिंचति वाचि सत्यम्,
मानोन्नतिं दिशति पापमपा करोति।
चेतः प्रसाद यदि दिक्षु तनोति कीर्ति,
सत्संगति कथय किं न करोतिपुंसाम् ॥

अर्थात् सत्संगति मनुष्य की जड़ता का हरण करती है, पापों का नाश करने वाली है, वाणी में सत्य का संचार करती है, मनुष्य की कीर्ति को प्रत्युत वृद्धि की ओर ले जाती है, अरे! मनुष्य का इस संसार में सत्संगति क्या नहीं करती।

अब आप कुछेक उदाहरण ले लीजिए कि रत्नाकर जन्म से डाकू थे। उन्हें जंगल में मुनियों की सत्संगति हुई तो वे आज संसार में महर्षि बाल्मिकि के नाम से प्रसिद्ध हैं।

इसी प्रकार एक दृष्टान्त आता है कि एक बार कोई राजा वन में जा रहे थे ज्यों ही वे मार्ग से गुजरे तो उन्हें साथ वाले वृक्ष से एक ध्वनि सुनाई दी कि 'मार लो! काट लो। मत छोड़ो!' यह सुन कर राजा ने ऊपर की ओर देखा तो राजा को एक शुक वृक्ष पर बैठा दिखाई दिया। उसी क्षण राजा ने उस शुक को पकड़ अपने साथ ले लिया और अपने मार्ग को प्रस्थान करने लगे। अभी थोड़ी ही दूर गए थे कि आगे उसी प्रकार वृक्ष पर से दूसरी ध्वनि सुनाई दी कि—'आइये महाराज! पधारें' यह जल एवं भोजन है!'

राजा ने विस्मित होकर उसी प्रकार ऊपर की ओर देखा तो वैसा शुक था, उसे भी राजा ने अपने साथ ले लिया और राज-दरबार में लौट आए।

दूसरे दिन सभा में दोनों शुकों को उपस्थित किया और राजा ने पूर्व का सम्पूर्ण वृत्तांत सभा एवं मन्त्रियों को कह सुनाया और आदेश दिया कि जिस शुक ने मेरा निरादर किया है उसे फांसी दी जाये। तब दूसरे शुक ने राजा से अनुनय प्रार्थना की कि :—

अहं ऋषीणां वचनं शृणोमि,
शृणोत्ययं दूरियवनस्य वाक्यं।
न तस्य दोषा न मद्गुणो वा,
संसर्गजा दोष गुणाः भवन्ति ॥

अतः हे! राजन् इस में इसका दोष नहीं अपितु इस की जो बुरे मनुष्यों के सङ्ग मित्रता थी उसी का दोष है। इसलिए आप कृपया इसे अभयदान दे द! इससे भी हमें सज्जन पुरुषों का सङ्ग करने की प्रेरणा उपलब्ध होती है।

अतः इन सब दृष्टांतों, उदाहरणों एवं प्रमाणों तथा उक्तियों से यह सर्वथा सिद्ध है कि हर समय सज्जन पुरुषों का सङ्ग कीजिये।

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २९ सितम्बर १९६३ [अंक ३९

राम राज्य में

भौतिक पदार्थों की कोई कमी नहीं थी। रामायण में किये गये अयोध्या नगरी तथा साम्राज्य के सुन्दर वर्णन को पढ़ कर ऐसा लगता है कि उस युग में प्रत्येक कला अपनी पराकाष्ठा पर पहुंची हुई थी। भवन निर्माण के कार्य में देश बड़ा ही उन्नत था। अस्त्र-शस्त्रों के भण्डार भरे हुए थे, ज्ञान विज्ञान में जीवन बहुत प्रगति कर चुका था। राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जनता सम्पन्न थी। जितनी भी भौतिक सामग्री की मानव जीवन के लिए आवश्यकता हुआ करती है, उस से सारा साम्राज्य मालामाल था। किन्तु इस के साथ साथ उस समय नैतिकता का भी पूर्ण समन्वय था। प्रकृति की उन्नति पर नैतिक विचारों का अंकुश विद्यमान था। धनधान्य की विपुलता और समृद्धि तो था ही, पर धर्म का महान आश्रय मिला हुआ था। धर्म के अनुकूल धन था। लोक और परलोक की दोनों भावनाओं का सम्मिश्रण हो गया था। अकेली भौतिकता के ऊपर यदि किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न हो तो उसकी अवस्था उस मदमत्त हाथी की होती है, जिस को वश में करने वाला अंकुश न हो। उस अवस्था में जो उत्पात उसके कारण होता है या हो सकता है, वही गति अवस्था उस धन की होती है जिस को अपने वश में रखने वाला धर्म का प्रतिबन्ध नहीं होता। जीवन या साम्राज्य के लिए धन एवं भौतिकता नितान्त आवश्यक है। किन्तु शर्त यह है कि उसके ऊपर धर्म का, नैतिकपन का अंकुश जरूर चाहिए। अन्यथा वह उत्पाती बन जाता है। रामराज्य तथा रावण राज्य में यही महान अन्तर है। धनधान्य के भण्डार दोनों के राज्य में विद्यमान थे, परन्तु राम राज्य इसी लिए देवत्व से भरपूर आदर्श है, क्योंकि उस में धन धर्मानुकूल था। धर्म का स्थान प्रमुख था और धन का स्थान गौण था। पर इस के विपरीत रावण के राज्य में धन किनारों को तोड़ कर बाढ़ बन कर हानि पुंचाने वाली नदी की धारा की भान्ति था। जहां न आचार का विचार न धर्म का ध्यान, न जीवन की निष्ठा और न उदात्त भावों की प्रतिष्ठा थी। जहां मानव जीवन मे धर्म भाग जाता या भगा दिया जाता है। आस्तिकता, नैतिकता समाप्त हो जाती है। वह राक्षसीपन आ कर अपनी सत्ता स्थापित कर लेता है। यही कारण है कि उस युग में रावण राज्य राक्षस राज्य था, लंकापुरी राक्षसपुरी कहलाती थी। उस देश के मानव राक्षस बन चुके थे। वहां धन ने धर्म को भोग ने भक्ति को, कदाचार ने सदाचार को एवं माया वाद ने ब्रह्मवाद को दबा दिया था।

हम सारे मर्यादा पुरुषोत्तम राम के भक्त हैं, अनुयायी हैं उन के आदर्श राज्य के गुण गाते हैं। किन्तु अपने जीवन के आन्तरिक राज्य को, अपने परिवार तथा अपने राष्ट्र के समूचे वातावरण को भली भान्ति देखें कि आज का यह वायु मंडल क्या राम राज्य को प्राप्त करने की ओर बढ़ रहा है अथवा केवल भौतिक वाद के प्यार के कारण रावण राज्य बनने जा रहा है। चित्र सब के सामने है। स्पष्ट है कि आज कोरा मायावाद पनप रहा है। धन पर से धर्म का प्रतिबन्ध उठ रहा है। मर्यादा के किनारे टूट रहे हैं। इस से तो राक्षसीपन आयेगा, देवत्व नहीं मिलेगा। राम के प्यारो! श्री राम के भक्तो! राम राज्य के उपास को! संभलो, सावधान हो कर इस बाढ़ को रोको।

—त्रिलोक चन्द्र

प्रभु विश्वास जीवन की सफलता

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम ए. प्रधान सभा)

कौन-सा नर-नारी ऐसा है, जिसे जीवन में कभी न कभी विपत्ति का सामना नहीं करना पड़ता। जिसने किसी प्रकार की कठिनाई नहीं देखी, उसे अनुभव भी नहीं होता और उसकी मानसिक अवस्था का पता भी नहीं लगता। जो कभी परीक्षा में ही नहीं बैठा, उसके पढ़ने का ज्ञान भी कैसे किया जा सकता है। परीक्षा हमारे जीवन की कसौटी है। कठिनाई भी तथा विपत्ति भी मनुष्य को सुधारने में बड़ा उपयोगी है। विपत्तियों के आने पर ही तो मनुष्य की हर प्रकार से परीक्षा होती है कि उसके मानसिक संतुलन की अवस्था क्या है? वह चलायमान होता है या उनको धैर्य पूर्वक सहन करता है अथवा शास्त्र डालकर रोने बैठ जाता है। इन विषम परिस्थितियों के आने पर ही तो मनुष्य के प्रभु-विश्वास का परिचय मिलता है, आत्म सत्ता का ज्ञान होता है। हम भगवान की भक्ति करते हैं, वाणी-मात्र से या मन से। इसका पता तो तभी लग सकेगा, जबकि हमें विपत्तियों से गुजरना पड़े। वेद में आता है—न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः—देवता उससे मित्रता नहीं करते, जो थकना नहीं जानता। विपत्तियों से संग्राम करना नहीं चाहता जो कठिनाईयों के आने पर उनको संतुलित मन से सहता है। उनसे टकराता है, उसी से देवगण मित्रता करते हैं। उसी को लोक में प्रतिष्ठा होती है। प्रभु का विश्वास जीवन सफलता की कुंजी है!

हमारे जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनके अन्दर सब से बड़ी विशेषता यही थी कि विपत्तियां आने पर तनिक भी विचलित नहीं होते थे। ईश्वर निष्ठा के द्वारा हर कठिनाई में अविचल रह कर उसको सहना या प्रतिकार करना उनका स्वभाव बन गया था।

महात्मा गांधी जी ने जब भी कोई आंदोलन किया तब सब से पहले भगवान् से शक्ति मांगी।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

सभा प्रधान जी का सम्मान

सभा के प्रधान मान्यवर प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. आर्यसमाज कंडाघाट (शिमला) के उत्सव पर पधारे वहां समाज में ओजस्वी भाषण हुआ। समाज के प्रधान श्री जियालाल जी एडवोकेट ने सभा प्रधान जी का सम्मान करते हुए आर्य समाज की ओर से वेद प्रचारार्थ उनके गले में फूलमाला के साथ-साथ नोटों की माला भी पहिनाई। मान्यवर प्रिंसिपल जी ने दो बड़े ही प्रभावशाली भाषण दिये।

वैदिक सभ्यता के चार गुण

(श्री० महामना देवी चन्द जी एम. ए. का प्रवचन)

आर्य समाज के पुराने महारथी महामना श्री देवी चन्द जी एम. ए. प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन होश्यार पुर का अमृतसर लोहगढ़ समाज के महोत्सव पर दिया गया ओजस्वी भाषण जगत् के प्रेमी पाठकों के लिए भेंट किया जा रहा है—सं.

वेद मनुष्यकृत नहीं है। यह परमात्मा की वाणी है। मानव जीवन की उन्नति के लिए जितना ज्ञान आवश्यक है भगवान् उतना देते हैं। परमात्मा वेदों को प्रकट करते हैं, बनाते नहीं हैं। यदि यह माने कि वेद परमात्मा ने बनाये तो ऐसा समय भी था जब कि इस से पूर्व वेद नहीं थे। सत्य यह है कि जब से परमात्मा तब से वेद हैं। अनादि भगवान का ज्ञान भी अनादि है। जब २ सृष्टि बनती है तब वेदों का ज्ञान मिलता है। प्रकृति में विकार होता है पर वेद ज्ञान में किसी प्रकार का विकार नहीं होता। अविकारी प्रभु का ज्ञान भी सदा अविकारी और एक रस रहता है। आज की सारी अन्य सभ्यताएं अभी वैदिक सभ्यता के सामने बच्चेकी भान्ति है।

वैदिक सभ्यताकी चार विशेषताए प्रमुख हैं—

पहली—यह आलमगीर सार्व भौमिक है। सारे विश्व के लिए है। यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि... इस मन्त्र में कहा गया है कि हे लोगो ! वेद का उपदेश सारे संसार के लोगों को दो। यह सब के लिए है छोटे बड़े, ऊंच नीच का इस में कोई भेद नहीं है। मनुष्यमात्र के वास्ते है। जो लोग अपने जीवन मे नीचे गिर गये हैं, पतित हो चुके हैं, उनको वेद ज्ञान के उपदेश से फिर ऊपर उठाओ। वेद केवल ब्राह्मणों के लिए नहीं है प्रत्युत सब के लिए हैं। ऋषि दयानन्द ने वेद के पढ़ने पढ़ाने और सुनने सुनाने को परमधर्म लिखा है। ऋषि के ग्रन्थों में परम-धर्म के दोनों शब्द इकट्ठे यहीं पर ही आये हैं। वेद में उपदेश है कि अपनी वाणी पर वेद भर कर बादल की भान्ति सर्वत्र वर्षा करते रहो। यह पहला गुण है।

दूसरा—वेद सृष्टि के आरम्भ में ज्ञान रूप में मिले हैं इन की अति पुरातनता इसकी दूसरी विशेषता है। वैदिक सभ्यता आज की नहीं, नवीन नहीं या आजकल के अनेक मतमतान्तरों के समान थोड़े समय से नहीं। यह जब से मानवता ने जन्म लिया है तभी से भगवान द्वारा ज्ञान रूप में मिली है। जितने भी मत, सम्प्रदाय हैं, वे सारे अभी के हैं उनके ग्रन्थ भी थोड़े समय के हैं। सृष्टि को तो दो अर्ब वर्ष होने लगे हैं। इस का अर्थ यह है कि पहले भगवान का ज्ञान नहीं था। तब मनुष्य धर्म अधर्म का पता कैसे करते थे। परन्तु वैदिक धर्म में यह शंका पैदा ही नहीं होती। वेद मानव जाति को सृष्टि के आरम्भ से ही प्राप्त हैं। यह इस का दूसरा गुण है।

तीसरा—वैदिक धर्म की तीसरी विशेषता इसकी पूर्णता है। यह धर्म, इस धर्म के ज्ञान रूप वेद परिपूर्ण हैं। अधूरा ज्ञान नहीं। इन में कभी भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। सदा एक रस हैं। परमात्मा एक रस है तो उसका ज्ञान भी तो परिवर्तन रहित होना चाहिए। मनुष्य के ज्ञान विधान में समय-समय पर देश काल अवस्था के अनुसार परिवर्तन होता है, पर परमात्मा के ज्ञान में परिवर्तन नहीं होता। वेद में सब प्रकार का ज्ञान भरा है। प्रकृति को भी ignore नहीं की। इसके बिना भी काम नहीं चलता। वेद में द्वा सुपर्णा०—के मन्त्र में तीनों का, आत्मा परमात्मा और प्रकृति का कितना सुन्दर विवेचन मिलता है। वेद का ज्ञान और वैदिक धर्म पूर्ण है। अन्य सम्प्रदायों में यह बात नहीं है। उनके सिद्धांतों में समय २ पर परिवर्तन होता रहता है। यह विशेषता वैदिक धर्म को ही है कि इसके सारे सिद्धांत विज्ञान से अनुकूल, युक्तियुक्त हैं तथा इन में कोई भी परिवर्तन नहीं होता।

चौथा—हमारे धर्म की चौथी विशेषता यह है कि वैदिक धर्म मानव जीवन के कर्तव्य पर बल देता है, अधिकार पर नहीं। यहां अधिकारों के लिए लड़ने झगड़ने का उपदेश नहीं वरन् प्रत्येक को अपने २ कर्तव्यपालन का पवित्र सन्देश मिलता है। जब हर एक अपना २ कर्तव्य पालने में ही अपना धर्म समझेगा, तब फिर लड़ाई झगड़ा होगा कैसे ? आज पश्चिमी सभ्यता Rights अधिकारों पर जोर देती है तभी अशान्ति है। राम को राज्य के स्थान पर चौदह वर्ष का वनवास दिया गया। वह प्रसन्नता से बन में चले गये। पिता की आज्ञा पालन के धर्म को कर्तव्य मान कर बनवास में चले गये। अधिकार पर यदि राम भी बल देते तो राम राज्य का महत्व ऐसा न होता। भीष्म ने सारी आयु ब्रह्मचर्य धारण कर के कर्तव्य का पालन किया। हमारे इतिहास में कितने ऐसे महापुरुषों का जीवन मिलता है जिन की प्रसिद्ध तथा आदर्शवाद का सब से बड़ा कारण यही था कि उन्होंने अपने सामने कर्तव्य पालन की भावना को प्रमुखता दी। अधिकारों पर कभी बल न दिया। गीता में आता है कि—कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन—हे अर्जुन। तेरा कर्म करने में, अपना कर्तव्य निभाने में ही अधिकार है, उस की फल प्राप्ति में नहीं। मानव सदा अपने कर्तव्य का ध्यान रखे। इस से आज के विश्व के सारे झगड़े शान्त हो सकते हैं। और भी वैदिक धर्म की विशेषताएं हैं। ये चार प्रमुख गुण हैं जो हमारे धर्म में पाये जाते हैं। हमें अपने वैदिक धर्म पर सदा गर्व है तथा होना भी चाहिए। वेद प्रचार में अधिक से अधिक तन मन धन लगा कर पूरा २ सहयोग देने में तत्पर रहें।

प्रभु विश्वास जीवन की सफलता

(पृष्ठ ३ का शेष)

प्रभु प्रार्थना करते हुए कहा करते थे कि मुझे इस से बल मिलता है। वह शक्तियों का भण्डार है, मैं उस से शक्ति मांगता रहता हूं और मिलती है। स्वामी दयानन्द जी तो सदा यही कहा करते थे कि मैं उसी भगवान् के आश्रय पर हूं। विश्व सुधार के इतने महान और कठिन काम को करने के लिए मुझे उसी का ही आधार है। ईश्वर विश्वास ही मेरे जीवन की सब से दिव्य सम्पत्ति है। उसी के बल पर काम करने निकला हूं, किसी मानव के भरोसे या आश्रय पर काम नहीं करता। यह तो भगवान का दिया सामर्थ्य है जिस के आधार पर हूं। गीता में भगवान् के भक्त के गुणों का वर्णन करते हुए महात्मा कृष्ण जी कहते हैं—निर्ममो निरहंकार :—प्रभु भक्त में ममता और अभिमान नहीं होता। यूनानी साहित्य में इस पर बड़ा जोर दिया गया है कि जिस ने अभिमान किया वह गिरा। वेद में आता है—स नः पितेव सूनवे—वह पिता और हम उसके पुत्र हैं। पुत्र सदा पिता के आदेश पर चले। ईश्वर विश्वास ही जीवन अमृत है।

पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी का स्वास्थ्य

चिंता करने से कुछ होता नहीं, लेकिन सत्य बात यह है कि श्री आनंद स्वामी जी महाराज का स्वास्थ्य ऐसा है जिससे उन्हें प्यार करने वाले आर्य भाई-बहनों को चिन्ता होगी। गत वर्ष जब वह भारत से मारीशस गए तो उनका स्वास्थ्य काफी खराब था। शरीर में दुर्बलता बढ़ गई थी, हाथ कांपते थे। मैंने उन्हें बहुत बार कहा- 'आप मारीशस न जाइए। आपका स्वास्थ्य इस योग्य नहीं। वहां के जलवायु में और इस आयु में लगातार परिश्रम से स्वास्थ्य और खराब होगा।' कई दूसरे सज्जनों ने भी उनसे प्रार्थना की। लेकिन वह माने नहीं। बोले —'मैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान जी से वादा कर चुका हूं, जाऊंगा अवश्य।' वह गए। तीन मास में पूरे एक बरस का काम करके वापिस आ गए। लेकिन स्वास्थ्य पहले से खराब हो गया। उसके बाद भी उन्हें आराम नहीं मिला। पिछले महीने वह देहरादून में थे कि बुखार आने लगा। ६ से १० अगस्त तक बुखार में ही हर रोज़ कथा करते रहे। कथा देहरादून में होती थी, रहते तपोवन में थे। हर सायं तीन मील आते, तीन मील जाते। देहरादून के श्री जयरामसिंह शाह को उनके बुखार का पता लगा तो वह उन्हें अपनी कोठी में ले आये। मेजर हरिसिंह जी से उनका इलाज कराया। कुछ आराम आया तो वह फिर तपोवन आश्रम में चले गए और तीन दिन के बाद फिर बुखार आने लगा। ३१ अगस्त को उन्हें कथा के लिए अमृतसर में पहुंचना था। इसलिए गाड़ी में बैठे। बुखार में ही अमृतसर पहुंच गये। बुखार में ही आर्यसमाज लोहगढ़ और आर्य समाज लारेंस रोड में सात रोज तक कथा करते रहे। उन दिनों श्री विद्यासागर जी वैद्य ने उन्हें देखा तो चिंता के साथ कहा—'यह आप क्या कर रहे हैं ? इतना बुखार है, स्वास्थ्य इतना कमजोर और आप काम किए जाते हैं।' पूज्य स्वामी जी ने कहा—'मैं तो मजदूर हूं। जब तक मजदूरी होती है, तब तक करूंगा ही।' वैद्य जी ने उनका इलाज किया। चेहरे पर जो सूजन आ गई थी, वह कुछ कम हुई, लेकिन बुखार नहीं उतरा। तब रायबहादुर गूजरमल जी को चिंता हुई। उन्होंने विभिन्न टैस्ट करवाए, लगभग आठ एक्स-रे लिए, कई सौ रुपया इस छानबीन पर खर्च कर दिया। लेकिन यह छान-बीन पूर्ण हुई, अमृतसर मैडिकल कालेज के प्रिंसिपल श्री डाक्टर युद्धवीर जी के आने पर उन्होंने सब प्रकार के टैस्ट कर के दवाई दी। बुखार चला गया, लेकिन बार-बार बुखार आने की बीमारी ठीक नहीं हुई। डाक्टर युद्धवीर जी ने पुन. टैस्ट करके बताया कि 'प्रास्टेट ग्लैंड्ज़' बढ़ गए हैं। उनसे हर पन्द्रह मिनट या आध घंटे के बाद बार-बार पेशाब आता है। इन 'ग्लैंड्ज़' का आपरेशन होने से ही यह बीमारी दूर होगी। मुझे इस बात का पता लगा तो चिंता बढ़ी। मैंने उन से प्रार्थना की कि आपरेशन ही कराना हो तो दिल्ली में करवाइए या हैदराबाद में, ताकि ठीक तरह से सेवा-सुश्रूषा हो सके। मेरा यह मतलब नहीं कि अमृतसर में उनकी ठीक प्रकार सेवा-सुश्रुषा नहीं हुई। अमृतसर के आर्य भाइयों ने और श्री डाक्टर युद्धवीर जी ने उनकी जो सेवा की, उसके लिए वह बधाई के पात्र हैं। रायबहादुर गूजरमल जी ने सेवा-धर्म में कमाल कर दिया। इसके लिए मैं उन्हें दिल की गहराई से बधाई देता हूं। इसके बावजूद मैंने पूज्य स्वामी जी से दिल्ली या हैदराबाद में आपरेशन कराने की प्रार्थना की तो इसलिए कि मैं उनका आपरेशन अपनी तसल्ली के अनुसार कराना चाहता हूं। पूज्य स्वामी जी महाराज मेरे लिए केवल पिता और नेता ही नहीं, मेरे गुरू भी हैं। मैंने जो कुछ सीखा, उनके चरणों में बैठ कर सीखा। मुझ में कोई भी अच्छाई है तो वह उन की देन है, सिर्फ त्रुटियां मेरी अपनी हैं। इस लिए मैं चाहता हूं कि उनका आपरेशन संतोष प्रद ढंग से हो। पूज्य स्वामी जी महाराज की कृपा है कि उन्होंने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। आज वह दिल्ली में हैं। आपरेशन कहां होगा, इसका निर्णय एक-दो दिन में होगा। दिल्ली में हो या हैदराबाद में, यह आपरेशन आवश्यक है और जब तक वह पूर्ण रूप से स्वस्थ न हो जाएं, तब तक यह भी आवश्यक है कि वह भाषण देने, कथाएं करने और उपदेश देने का काम न करे बहुत लोग भी उन्हें न मिलें। वह सदैव की तरह अब भी हंसते हैं, प्रसन्न चित्त हैं, लेकिन उनका शरीर काफी रोगी हो गया है। जब तक यह शरीर पूरी तरह स्वस्थ न हो तब तक मेरी प्रार्थना को उन्होंने मान लिया है, और उनकी अनुमति से मैं लिखता हूं कि वह आर्यसमाजों और दूसरी संस्थाओं को दिए हुए अपने किसी भी वचन को निभा नहीं सकेंगे। मुझे विश्वास है कि दिसम्बर या जनवरी तक वह पूर्णतया स्वस्थ हो जाएंगे, फिर से देश और समाज की सेवा कर सकेंगे और और आर्य भाई उनकी अमृतवर्षा से लाभ उठा सकेंगे। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता, तब तक आने वाले तीन-चार महीनों में वह कहीं भाषण देने या कथा करने के लिए नहीं पहुंच सकेंगे।

—हिन्दीमिलाप से

पूज्य महात्मा जी अस्वस्थ

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामीजी महाराज कई दिनों से अस्वस्थ हैं। इसी अस्वस्थ अवस्था में ही अमृतसर रह कर निरन्तर एक सप्ताह तक आर्य समाज लारेंसरोड में कथा करते रहे हैं। अमृतसर में रह कर इलाज करवाते रहे। अब ता. २२ सितं. से अमृतसर से देहली पधार रहे हैं। वहां पर ता. २६ सितं. तक रहेंगे। प्रभु करें कि उन का स्वास्थ्य शीघ्र ठीक हो जावे। महात्मा जी का जीवन, शरीर तथा सब कुछ समाज के लिए है। सारे समाज की विभूति है। अस्वस्थ हालत में भी आप निरन्तर धर्म प्रचार में रात दिन लगे रहते हैं। भ्रमण भी और कथा भी जारी रहते हैं। हमारी हार्दिक प्रार्थना है कि भगवान् आप को शीघ्र स्वस्थ करें—सं.

महान् गुरु को सादर प्रणाम

मेरा सादर प्रणाम हो उस महान् गुरु दयानन्द को जिस की दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास मे सत्य और एकता को देखा। जिस के मन ने भारतीय जीवन के सब अंगों को प्रदीप्त कर दिया। जिस गुरु का उद्देश्य भारत वर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था, उसे मेरा बारम्बार प्रणाम।

(रवीन्द्र नाथ ठाकुर)

हर चीज़ से मौत गोवली है,
पर धर्म ने वह भी जीत ली है।
दीन दुनिया की भलाई,
तुम को गर दरकार है।
इल्म हासिल कर ला,
फिर बेड़ा तुम्हारा पार है।।

आर्यसमाज शिमला का शानदार समारोह
५०१) सभा वेदप्रचार को भेंट
समाज और स्कूल का उत्साह

आर्य प्रादेशिक सभा पन्जाब जालन्धर के साथ सम्बन्धित समाजों में आर्य समाज लक्कड़ बाजार शिमला एक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध समाज है। यहां पर डी. ए. वी. हायर सैकण्डरी स्कूल जैसी हमारी विशाल संस्था है जिस में २२ सौ के लगभग छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं। वैसे तो हमारी शिमला नगर में सात बड़ी एव विख्यात संस्थाएं हैं। इन के द्वारा नगर में विद्या, धर्मप्रचार तथा चिकित्सा द्वारा लोक सेवा का कार्य हो रहा है। जनता के दिल में आर्यसमाज व इन संस्थाओं के लिए बड़ा मान है। आर्यसमाज के प्रधान श्री पं० पृथ्वीनाथ जी भनोत सौम्य एव धार्मिक स्वभाव के ईश्वरनिष्ठ सज्जन हैं। आरम्भ से ही आर्य समाज के अत्यन्त प्रेमी, महात्मा हंसराज जी के अतीव भक्त तथा ईश रंग में रंगे हुए हैं। शिमला समाज को आप जैसे महानुभाव पर बड़ा मान है। डी० ए० वी० स्कूल के प्रिंसिपल मान्य श्री सत्यप्रकाश बी एम० एस० सी० का वहां कितना प्रभाव व प्रतिष्ठा है—यह शिमला आकर पता लगता है। स्कूल को किस उन्नति की पराकाष्ठा तक पहुंचा दिया। क्या पढ़ाई, क्या परीक्षा परिणाम और क्या छात्रों के जीवन में धर्मभावना के विचार हों—हर प्रकार से इन संस्थाओं को बहुत ही ऊंचा कर के आर्यसमाज का गौरव बढ़ाया है। इस बार श्री प्रिंसिपल जी बीमार थे। बुखार था। सब का ध्यान उन की ओर ही लगा था बीमारी की अवस्था में भी समाज के उत्सव के ही विचार में लगे रहते हैं। सभा के बड़े हितैषी हैं। प्रभु उन को शीघ्र स्वास्थ देवें।

समाज के मन्त्री श्री पं. मुनि लाल जी शास्त्री तथा श्री पं. जयकृष्ण जी शास्त्री बड़े ही नेक उत्साही कार्यकर्ता हैं। हमारे स्कूलों में इन जैसे यदि अध्यापक तथा समाज के कार्यकर्ता मिल जावें तब समाज व संस्था का बड़ा लाभ हो सकता है।

उत्सव से पूर्व श्री पं. त्रिलोक चन्द जी शास्त्री सभा की वेद कथा तथा श्री पं. राजपाल जी मदन मोहन जी चिमटामण्डली के सुरीले भजन चार दिन होते रहे। शुक्रवार को नगर कीर्तनका भव्य जलूस तथा ता. २० से २२ तक शानदार उत्सव हुआ। इस में शास्त्रार्थ महारथी श्री. ठा. अमरसिंह जी आर्यमुसाफिर, श्री. पं. ओम प्रकाश जी महोपदेशक, श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, श्री पं. राजपाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली पधारे। ठा. दुर्गासिंह जी तूफान, उत्सव हर प्रकार से बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। स्कूल के विद्यार्थियों ने जो उत्सव एव ऋषिलंगर में सेवा की मान्य अध्यापकों ने समाज के सदस्यों ने जो धर्म प्रेम का परिचय दिया उसे देख मन प्रसन्न हो गया। आर्य समाज संजोली, आर्य समाज लोअर बाजार के सज्जन भी साथ थे। देवियों की श्रद्धा तो प्रशंसनीय थी। सभा को मार्ग व्यय के अतिरिक्त ५०१) रु. वेद प्रचार में मिले। सारे सज्जनों का धन्यवाद—

आगाह अपनी मौत से
कोई बशर नहीं,
सामान सौ बरस का
पल की खबर नहीं।
मरना भला है उस का
जो अपने लिए जिये,
जीता है वह जो मर चुका
इन्सान के लिए।

दयानन्द वचनामृत

काम वासना जीतने का यह विधान है कि एकांत स्थान में रहें और नृत्यादि कभी न देखें। अनुचित रूप का देखना, अनुचित शब्द का सुनना और अनुचित वस्तुओं का स्मरण करना परित्याग कर दे। नियम पूर्वक जीवन व्यतीत करे। मनुष्य जितना वासना की तृप्ति का यत्न करेगा, वह शांत न हो कर उतनी ही अधिक बढ़ती चली जायेगी। इस लिए विषय-वासना का चित्त मे चिन्तन भी न करे। जितेन्द्रिय बनने के अभिलाषी को रात दिन प्रणव का जप करना चाहिए। रात को यदि जप करते हुए आलस्य बहुत बढ़ जाये तो दो घण्टा गाढ़ निद्रा लेकर उठ बैठे और पूर्ववत् प्रणव-पवित्र का जप करना आरम्भ कर दे। (स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्य समाज (का० वि०) अलाहर (करनाल) में नवीन समाज स्थापना

अम्बाला करनाल मंडलाध्यक्ष श्री अमरसिंह जी की मंडली ने चार दिन तक मेले के अवसर पर बड़ी धूमधाम से वैदिक धर्म का प्रचार किया तथा अलाहर ग्राम में नवीन आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज की ओर से ४०/-वेद प्रचारार्थ सभा को मिले। तथा आर्य समाज ने १२१/- खर्च करके समाज के लिए एक दरी खरीद की।

चुनाव—प्रधान—श्री चौ० प्रभु दत्त जी, उप-प्रधान चौ. परस राम जी किशोरी लाल जी पांचाल, मंत्री श्री ला. राज महेन्द्र जी, उपमंत्री चौ. वेद प्रकाश जी, प्रचार मंत्री जगत राम जी, कोषाध्यक्ष चौ. बाबू राम जी पहलवान।

इस सारे प्रचार कार्य व समाज स्थापना का सेहरा श्री ला० जगन्नाथ जी को है जिन्होंने अपने निवास-स्थान पर ही सारा प्रचार का प्रबन्ध किया। तथा समाज मन्दिर के निर्माणार्थ भूमि देने का भी वचन दिया। इस शुभ कार्य के लिए चौधरी जी को सभा की ओर से बहुत २ धन्यवाद। चौ० प्रभुदत्त जी आदि नगर निवासियों का पुरुषार्थ भी सराहनीय है। अलाहर समाज में सभा का आर्य जगत पत्र भी जारी किया गया।

अमरसिंह
मंडलाध्यक्ष

आर्यसमाज कंडाघाट शिमला

का वार्षिकोत्सव धूमधाम से हुआ जिस में सभा के प्रधान जी श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए., पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, प० ओम्-प्रकाश जी महोपदेशक, पं० राज-पाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली, पं० चन्द्रसेन जी आर्य प्रेमी मा० ताराचन्द जी, ठा० दुर्गासिंह जी पधारे। श्री ला. जियालाल जी प्रधान समाज, श्री ला० खुशीराम जी मन्त्री का उत्साह प्रशंसनीय है।

आर्य जगत के पाठकों से निवेदन

अगस्त मास में आर्य जगत के आधी कीमत यानी ३/- की सूचना प्रकाशित होती रही है। वह अवधि समाप्त हो चुकी है और वह दान भी जो कि ग्राहकों को दिया जा रहा था समाप्त हो चुका है अतः अब कोई सज्जन आधी कीमत पर आर्य जगत का ग्राहक बनने की कोशिश न करे। ६/- चन्दा भर कर आर्य जगत का ग्राहक बन सकता है।

—व्यवस्थापक

'अलावलपुर के लिए सेवा भावी आर्य विद्वान महानुभाव की सेवा में नम्र प्रार्थना'

अलावलपुर आर्यसमाज एक अति उत्तम शानदार आर्यसमाज रहा, एक एक मास के वार्षिकोत्सव साधु सत्संग लगा करते थे, भारी यज्ञ हुआ करते थे, श्री प. रामचन्द्र जी देहलवी एक बार एक मास सत्यार्थ प्रकाश की कथा के लिए पधारे। पूज्य स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज, पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज, पूज्य स्वामी गंगागिरि जी महाराज पूज्य स्वामी केवलानन्द जी महाराज और ऐसे बड़े-बड़े विद्वान् आर्य संन्यासी वान-प्रस्थी महात्मा, विद्वान देवियां प्रभावशाली उपदेशक भजनीक महानुभाव पधारते रहे, लगभग पांच वर्ष हुए होंगे पूज्य म० प्रकाशवीर जी शास्त्री जी के ६ व्याख्यान हुए अर्थात् आर्यसमाज का काम बड़े जोर-शोर से होता रहा।

(२) अफसोस है कि अब यह आर्यसमाज बहुत ही शिथिल हो चुकी है ४-५ वर्षों से वार्षिकोत्सव भी नहीं हुआ श्री महयानन्द धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालय २३ वर्षों से जनता की सेवा कर रहा है, शायद यह भी धन के अभाव से बंद करना पड़े, महाशय चन्द्र गुप्त जी के त्याग तप से वैदिक-पुस्तकालय ४०-५० साल से हर रोज रात को खुलता है, अब आर्य सिद्धांतों की पुस्तकें कोई लेता ही नहीं।

(३) आर्यसमाज में कभी ७० के लगभग सभासद रहे हैं, इन में से साप्ताहिक सत्संगों में ला० देवराज जी प्रोपैगन्डा सैक्टरी (जिनकी आंखें खराब हो गई हैं) ला० चिमन लाल जी कोषाध्यक्ष, महाशय चंद्र गुप्त जी पुस्तकाल्यक्ष, वैद्य राम प्रकाश जी औषधात वैद्य इन्चार्ज ही, आते हैं, स्कूल का सम्बन्ध होने से ३ या ४ टीचर साहिबान भी तशरीफ ले आते हैं। हवन यज्ञ की कारवाही या एक दो सम्मलित भजनों के सिवाये और कुछ नहीं होने पाता। महाशय चंद्र गुप्त जी सदैव रोगी होने के कारण यदि दरवाजा ना खोले तो कुछ भी नहीं होता।

(४) नगर की तिजारत कारोबार, बाहर की आमदो रफत खराब हो चुकी है, हमारे लग भग सभी नये पुराने आर्य परिवार नौजवान अलावल पुर छोड़ कर बाहर कारोवार आरंभ किया जा रहे हैं यहां आते ही नहीं। सप्ताहिक सत्संगों में आने वाले जिन महानुभावों का नाम ऊपरहिया है, यह सब मेरे जैसे वृद्ध (बूड़े) हो चुके हैं, सिवाये माननीय वैद्य राम प्रकाश जी के। वृद्धों की आर्य समाज से लगन कुछ बना नहीं सकती, हम में विद्वान बोलने वाला कोई नहीं, मिलने जुलने इधर उधर घूमने की हिम्मत नहीं रही, आगे हमारी जन संख्या बहुत ज्यादा थी आर्य समाज की दशा भी अच्छी थी, जो कि अब खराब हो चुकी है!

(५) सोचा हूं कि क्या किया जावे? समझ में एक बात आई है वह यह कि = यदि कोई ऐसे मननीय प्रभाव शाली त्यागी आर्य विद्वान कुछ समय अलावल पुर के लिये प्रदान कर सकें, जो कि प्रभावशाली कथा, उपदेशादि कर सकें, घरों में हवन यज्ञ सत्संग लगा कर प्रचार द्वारा अपने मीठे प्रभावशाली प्रवचनों वा जीवन से एक सच्चे पुरोहित की भावना परिवारों में बना सकें। तो आशा है कि फिर अलावल पुर आर्य समाज अच्छी हालत में आ सकता है! मैं आर्य विद्वान महानुभावों से हाथ जोड़ कर नम्रता पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि कोई, आर्य महानुभाव अपना अमूल्य समय प्रदान करने की दया करें।

भोजनादि अर्थात खाने पीने का प्रबन्ध करना हमारा फर्ज होगा ही! जहां तक हो सकेगा कष्ट नहीं होने दिया जावेगा, यथा शक्ति सेवा की जावेगी। मैं लगभग ५०-५५ साल से आर्य समाज का सेवक हूं कभी पद अधिकारी नहीं बना, अब की बार मन्त्री बानने पर मजबूर कर दिया गया हूं। कोई सज्जन बनने को तैयार नहीं थी क्या कहूं स्वास्थ्य की खराबी अब कुछ करने नहीं देती, लोकल आर्य समाज की हालत को देख कर दिल तड़पता है पर पेश कोई नहीं जाती।

गुरु प्रसाद आर्य सेवक
मन्त्री आर्य समाज अलावल पुर
जि० जालन्धर

महर्षि दयानन्द और युद्ध-प्रेरणा

(ले०—श्री बलदेवराज एम. ए. (संस्कृत) पठानकोट)

आज प्रायः अशिक्षित समाज में एक धारणा प्रबल है कि कलियुग में ही युद्ध और लड़ाइयां झगड़े होते हैं। उनके कथनानुसार कलि युग का अर्थ ही लड़ाई झगड़े का युग है। किन्तु क्या सतयुग व द्वापर और त्रेता युग में लड़ाई झगड़े नहीं होते रहे थे। सत-युग (यानि सृष्टि के आदि) से ही देवों व असुरों के संग्राम की कथाएं चली आ रही हैं।

महर्षि दयानन्द जी महाराज की कृपा से ज्ञान-चक्षु खुले तो हमें पता चला कि वेदों में केवल कोरा कर्म-कांड, यज्ञ-प्रपंच व ईश्वर महिमा का ही ज्ञान नहीं है अपितु वेदों में भौतिक-वाद भी है। महर्षि जी ने भाष्यों में स्पष्ट बताया है कि वेदों मे विमान-विद्या, शस्त्र-अस्त्र विद्या बनाने का भी स्पष्ट उल्लेख है। यदि प्राचीन समय में युद्ध न होते तो वेदों में शस्त्र-अस्त्र बनाने के मन्त्र क्यों आए।

महर्षि दयानन्द जी ने ही वेदों से प्रेरणा व स्फूर्ति लेकर स्वराज्य के आंदोलन को प्रगति दी। वेदों मे ही स्वराज्य-महिमा, पृथ्वी-सूक्त में मातृ-भूमि की महिमा का उल्लेख है।

महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश मे मनु-महाराज के कितने श्लोक उद्धृत किए हैं। जैसे—

१. मन्येतारिं यदा राजा सर्वथा
बलवत्तरम्।
तदा द्विधा बलं कृत्वा साधयेत्कार्य-
मात्मनः॥

२. यदा परबलानां तु गमनीयतमो
भवेत्।
तदा तु संश्रयेत् क्षिप्रं धार्मिकं
बलिनं नृपम्॥

अर्थात जब कभी भी राजा शत्रु को बहुत बलवान समझे तो राजा का कर्तव्य है कि वह दो प्रकार से सेना बनाकर अपना काम सिद्ध करे (यानि चीन की सेना अत्यन्त अधिक है हमारे रक्षामंत्री का भी कर्तव्य है कि वह भी सेना को दुगना व दो प्रकार का करे) दूसरे श्लोक में कहा गया है कि जब शत्रु का हमला हो जाए तो उस समय किसी और श्रेष्ठ राजा की सहायता लेकर मुकाबिला करना चाहिए (जैसे कि अभी चीन का हमला होने पर हमने श्रेष्ठ देश अमरीका व इंगलैंड) से सहायता ली।

अरे प्यारे भाईयो! महर्षि दयानन्द जी ने इस प्रकार की युद्ध-विद्या का अपने सत्यार्थ-प्रकाश में

(शेष पृष्ठ ८ पर)

श्री देव प्रकाश को शुद्धिकार्य

मध्यप्रदेश के उज्जैन जिला में श्री देवप्रकाश के मंडल द्वारा अगस्त १९६३ में १९४६ ईसाइयों (ईसाई) को शुद्ध करके पुनः वैदिक धर्म की शरण में लाया गया। यह मंडल इस प्रांत मे बड़े उत्साह से चिरकाल से शुद्धि कार्य कर रहा है। आर्य समाज लारेंस रोड जालन्धर की ओर से श्री धर्मवीरसिंह जी को शुद्ध करके उज्जैन शुद्धि कार्य के लिए भेजा गया है।

शुभ नामकरण संस्कार

आर्यजगत को यह पढ़कर अति प्रसन्नता होगी कि आर्य प्रादेशिक सभा के विख्यात भजनोपदेशक श्री राजपाल जी के सुपुत्र का नाम करण संस्कार २४. ६. ६३ को उनके निवास स्थान पर सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर नगर के संभ्रान्त व्यक्ति तथा सभा के उपदेशक व भजनीक पधारे कार्य वाई की समाप्ति पर सबने बच्चे को शुभ आशीर्वादों से अलंकृत किया। संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से किया गया। उपस्थिति पर्याप्त थी। अंत में मिष्ठान्न द्वारा उपस्थित सज्जनों का स्वागत किया गया।

आर्यसमाज सीताराम बाजार देहली का प्रचार

गत मास तीन विवाह संस्कार, चार नामकरण, चूड़ाकर्म एक, जन्म-दिवस दो, उद्घाटन एक, कथा दो, सगाई एक। पारिवारिक सत्संग भी होते रहे। आर्य कुमार सभा का कार्य श्री रूपलाल जी प्रधान तथा पं० राजाराम जी की देखरेख में प्रतिदिन उन्नति कर रहा है।

जिला हुशियारपुर में वेद प्रचार की धूम

जिला वेद प्रचारिणी सभा हुशियारपुर की प्रार्थना पर पं० नन्दलाल जी आर्य वैदिक मिशनरी पं० रामदेव कर रहे हैं। ... जनता का ऊना, ...पुर, ... यां समाजों में प्र... है। अब तलवाड़ा ड०, ... देवी, दौलतपुर, गगरेट आदि समाजों में प्रचार कर रहे हैं।

आर्य समाज मुकेरियां

श्री नंदलाल जी वैदिक मिशनरी तीन दिन से लगातार आर्य समाज मुकेरियां में वैदिक धर्म का प्रचार कर रहे हैं जनता पर्याप्त लाभ उठा रही है।

महर्षि दयानन्द और युद्ध-प्रेरणा

(पृष्ठ ७ का शेष)

केवल वेद-शास्त्र, मनुस्मृति आदि धार्मिक संस्कृत-ग्रन्थों के आधार पर विस्तृत वर्णन किया है। (देखिए षष्ठ समुल्लास)।

आज एक ओर चीन और दूसरे ओर पाकिस्तान युद्ध की धमकियां दे रहा है तो हम भारतीयों का कर्तव्य है कि महर्षि दयानन्द जी से प्रेरणा लेकर शत्रुओं का डटकर मुकाबिला करें। स्वतन्त्रता-संग्राम की चिंगारी १८५७ ई० में भी स्वामी जी के स्वराज्य-नाद की प्रेरणा से ही सुलगी थी।

वेदों में शत्रु को मार भगाने के मन्त्र, उपनिषदों में देवासुर संग्राम और मनुस्मृति में राज्य-सम्बन्धी प्रजा संरक्षण के श्लोकों से सिद्ध है कि युद्ध प्राचीनकाल से ही आ रहे हैं। कलियुग में भी युद्ध अटल है। अतः दयानन्द के वीर सिपाही सत्यार्थ-प्रकाश से प्रेरित होकर शत्रु को मार भगाने के लिए सदैव तैयार रहें।

डी. ए.वी. संस्थाएं भारत सरकार की दृष्टिमें

श्री हरिराम जी को राष्ट्रपति पुरस्कार

डी. ए. वी कालिज मैनेजिंग कमेटी की अधीनस्थ संस्थाएं उत्तरोत्तर उन्नति के शिखर पर जा रही हैं। जहां ये संस्थाएं जनता की प्रेमपात्र बन चुकी हैं वहां भारत सरकार की दृष्टि में भी पीछे नहीं रहीं।

सन् 1961 में श्री चिमन लाल जी M.A. भूतपूर्व प्रि० साहिदास हंसराज संस्कृत H/S स्कूल ने राष्ट्र पति पुरस्कार प्राप्त किया। 1962 में श्री पं. भगत राम जी M.A. प्रिंसीपल डी. ए. वी H/S स्कूल अमृतसर ने राष्ट्र पति पुरस्कार प्राप्त करके संस्था का सिर ऊंचा किया। अब 1963 में श्री हरिराम जी प्रिंसीपल डी. ए. वी H/S स्कूल चंडीगढ़ ने यह पुरस्कार प्राप्त कर के जनता के सम्मुख उन्नति का ज्वलंत उदाहरण उपस्थित किया है।

इस प्रकार डी. ए. वी संस्थाएं जहां जनता की दृष्टि में प्रेम भाजन बन रही हैं वहां भारत सरकार से राष्ट्र पति पुरस्कार प्राप्त करके अपनी ख्याति में चार चांद लगा रही हैं।

हम आर्य जगत की ओर से इस पुरस्कार के लेने पर श्री प्रि० हरिराम जी को बहुत २ बधाई देते हैं।

—सतोष राज मंत्री सभा

चक्षु यज्ञ

श्री इन्द्रदेव खोसला की सद् प्रेरणा से पटियाला के श्री जसवंत राय जी ने अपने चाचा श्री चिरंजीव लाल जी की पुण्य स्मृति में धर्मशाला कांगड़ा में एक धर्मार्थ चक्षु यज्ञ ११ सितम्बर सन् ६३ को लगवाया। मोगा वाले रा. ब. डा० मथुरादास जी ने मोतियाबिंद के एक दिन में १६० सफल अपरेशन किए। सात मनुष्यों की आंखों का मोआयना किया। ४० मनुष्यों को ऐनकों के नम्बर दिए। इस में जिला भर के रोगी आए। ३०००/- रु० इस यज्ञ पर व्यय हुआ। हम इस सफल चक्षु यज्ञ के लिए कार्यकर्ताओं को हार्दिक बधाई देते हैं।

—मंत्री आर्यसमाज कोतवाली बाजार धर्मशाला

आर्यसमाज माडल हाऊस

का चुनाव २२-९-६३ को निम्न प्रकार से हुआ।

प्रधान श्री टेकचन्द्र जी, उपप्रधान श्री खुशीराम जी, श्री अमरनाथ जी, मंत्री श्री हंसराज जी दातार, कोषाध्यक्ष श्री रामलाल जी तुल्ली, आडीटर श्री ब्रह्मस्वरूप जी, पुस्तकाध्यक्ष व स्टोर अधिकारी श्री वेदप्रकाश जी कालिया।

अंतरंग सदस्य

श्री लक्ष्मी नारायणजी, ओंकार-नाथ जी, गिरधारीलाल जी रघुबीर-सिंह जी, ईश्वरदास जी, ज्ञान-चन्द्र जी।

—हंसराज दातार मन्त्री समाज

आर्यसमाज लाजपत नगर सोनीपत

का वार्षिकोत्सव १.२.३नवंबर १९६३ को सम्पन्न हो रहा है। ३१ अक्तूबर को विशाल कवि दरबार होगा जिसमें भिन्न-भिन्न प्रांतों के कवि भाग ले रहे हैं ३ नवम्बर को रात के समय वृहद् राष्ट्र रक्षा सम्मेलन श्री प्रकाशवीर जी एम. पी. की अध्यक्षता में हो रहा है देश के उच्च कोटि के विद्वान, संन्यासी, भजनीक पधार रहे हैं सब धर्म प्रेमी नर-नारी इस शुभ अवसर पर पधार कर धर्म लाभ उठाएं।

नोट—यदि दशहरा २७-२८ अक्तूबर को हुआ तो कथा का कार्य-क्रम नहीं होगा। यदि सितम्बर को हुआ तो कथा श्री पं. खुशीराम जी वेद प्रचार अधिष्ठाता करेंगे और श्री हजारीलाल जी के भजन होंगे।

—प्रबंधक चन्द्रसैन आर्य हितैषी

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

सिद्धांत चर्चा--

वैदिक वर्णव्यवस्था

(श्री पं० जयकृष्ण जी शास्त्री दयानन्द स्कूल शिमला)

वर्ण व्यवस्था का आधार है, मनुष्य का शरीर। इस के चार भाग स्पष्ट दृष्टि गोचर होते हैं। प्रथम सिर से गर्दन तक, दूसरा बाहु से कमर तक, तीसरा कमर से जंघा तक और चौथा जंघा से पांव तक। उपर्युक्त चारों भागों के गुण कर्म तथा स्वभाव के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चारों वर्णों की रचना की गई। इन चारों को विराट् मानव समाज के शरीर के सिर, बाहु, जंघा तथा पाव का रूप दिया गया। इस वेद मन्त्र में इस बात को बड़े ही उत्तम ढंग से व्यक्त किया गया है—यजु० ३१—११

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत॥

अर्थात् इस मनुष्य जाति अथवा मानव समाज का ब्राह्मण मुख है। क्षत्रिय बाहु है और वैश्य ऊरू, जंघा शूद्र पाव हैं। इस मन्त्र में मनुष्य जाति के चारों वर्णों को शरीर के चारों अंगों की उपमा दी गई है। शरीर के प्रत्येक भाग के गुण कर्म भिन्न भिन्न हैं। किन्तु [illegible] सब का सम्बन्ध पुरुष कहलाता है। शरीर की सब इन्द्रियां यद्यपि [illegible] २ कार्य करती हैं, परन्तु वे सब एक दूसरी के अधीन व आश्रित हैं। उन सब का लाभ एक पुरुष को पहुंचता है। इसी प्रकार मानव समाज में प्रत्येक वर्ण के गुण और कर्म नितान्त भिन्न हैं। परन्तु उन सब का समन्वय विराट मानव समाज है और प्रत्येक वर्ण एक दूसरे पर आश्रित है। जिस प्रकार शरीर में एक भी इन्द्रिय के निकम्मी हो जाने पर शरीर की दशा में अन्तर आ जाता है। उसी प्रकार एक भी वर्ण मे निर्बलता, न्यूनता अथवा कर्तव्य विमुखता होने पर सारे समाज का कार्य अस्त-व्यस्त हो जाता है। जिस प्रकार सारी इन्द्रियां अपने २ कार्य के साथ दूसरी इन्द्रियों को सहायता देती हैं।

जैसे आंख का धर्म है देखना। वह देखती है तथा साथ २ पांव को मार्ग दिखाती है। हाथ को पकड़ने वाली वस्तु दिखाती है। इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को अपने २ काम के साथ दूसरों के काम में भी सहायता देनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त वेद मन्त्र में मनुष्यों के काम को तथा सामाजिक काम को समान रूप से भली-भान्ति स्पष्ट किया गया है। अब हमारे शरीर के प्रत्येक भाग के गुण कर्म और स्वभाव के अनुसार प्रत्येक वर्ण के गुण कर्म और स्वभाव की विवेचना की जाती है। सारांश यह है कि मनुष्य के शरीर में जिस काम के लिए मुख का भाग उत्पन्न किया गया है उसी काम के लिए संसार में ब्राह्मण वर्ण बनाया गया है। जिस काम का सम्बन्ध बाहू वाले भाग से है वह काम क्षत्रियों के भाग में आता है। जिस काम के लिए जघा है वह वैश्यों का काम है और जो काम एक मनुष्य के शरीर में पांवों का है वही काम मनुष्य जाति में शूद्र का है।

प्रश्न यह है कि मुख वाले भाग के गुण और कर्म क्या हैं? ध्यान से सोचा जाये तो यह बात भली भांति विदित हो है कि यह भाग नीचे के भागों से भौतिक शक्ति में बहुत ही निर्बल है और सब से छोटा है। उपमा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जिस प्रकार यह भाग दूसरे भागों से तत्व शक्ति से निर्बल है, उसी प्रकार ब्राह्मण धनादिक सांसारिक पदार्थों में दूसरे वर्णों से न्यून रहेगा। यह बात भी भली भान्ति समझ लेनी चाहिए कि जिस प्रकार पांच ज्ञानेन्द्रियों के साथ इस भाग में ज्ञान के बाह्य साधन उपस्थित हैं। उसी प्रकार ब्राह्मण में ज्ञान के बाह्य साधनों का होना भी अत्यावश्यक है। यह बात और भी जान लेने योग्य है कि इस भाग में आंख कान नाक जिह्वा और खाल पांचों ज्ञान के साधन उपस्थित हैं। इन में पहिले चार तो केवल इसी भाग में हैं किन्तु खाल अर्थात् स्पर्शेन्द्रिय समान रूप से सारे शरीर में उपस्थित है। इस से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सामान्य ज्ञान तो प्रत्येक मनुष्य को होता है, परन्तु ब्राह्मण विशेष ज्ञान सम्पन्न पुरुष ही कहलाने के योग्य है। जिस प्रकार यह भाग स्वभाव से शीत गर्मी आदि सहन करने की शक्ति रखता है उसी प्रकार ब्राह्मण का जीवन तपोमय और त्यागमय होना चाहिए। अब यह ज्ञात हो गया कि ब्राह्मण के गुण ज्ञान वैराग्य तप और त्याग हैं। परन्तु कर्म क्या हैं? इस विषय पर विचार करने से विदित होता है कि शरीर के इस भाग में आंख कान नाक आदिक इस प्रकार की इन्द्रियां हैं जिन से ज्ञान प्राप्त किया जाता है। परन्तु वाक् इन्द्रिय इस प्रकार की है जिस से प्राप्त किया ज्ञान दूसरों को बताया जा सकता है। इस से यह प्रकट हो जाता है कि समाज के अन्दर ब्राह्मण का कर्तव्य है ज्ञान प्राप्त कर के दूसरों के लिए उस ज्ञान का उपदेश करना। आंख कान आदि से ज्ञान प्राप्त करना, वाणी से पढ़ना, उपदेश करना, यज्ञ करना और कराना, जिस गुरु से पढ़ा हो, उसे गुरु दक्षिणा अर्थात् दान देना और जिसे पढ़ाया हो उस से दक्षिणा लेना। एवं जिस के घर में यज्ञ कराया हो उस से यज्ञ की दक्षिणा लेना। इस प्रकार पठन पाठन, यजन याजन, दान आदान ये छः प्रकार के ब्राह्मण के कर्तव्य कर्म हैं—(अपूर्ण)

दयानन्द वचनामृत

'इन पशुओं के मारने वालों को सब मनुष्यों की हत्या करने वाला जानियेगा। देखो! जब आर्यों का राज्य था, तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे। तभी आर्यावर्त्त वा अन्य भूगोल में मनुष्यादि प्राणी बड़े आनन्द से वर्तते थे। दूध, घी (आदि वस्तुओं) और बैल आदि पशुओं की अधिकता के कारण अन्न-रस पुष्कल प्राप्त होते थे। जब से गो आदि पशुओं को मारने वाले मांसाहारी, मद्यप इस देश में आकर राज्याधिकारी हुए हैं, तब से क्रमशः, आर्यों के दुःखों की बढ़ती ही होती जाती है।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

एक मात्र साधन

वेद ज्ञान द्वारा यदि विश्व अपने कार्यों का संचालन करे तो सारे कष्टों से एक साथ छुटकारा पा जाये। यह इसलिए नहीं कि ऐसा हम कहते हैं अपितु इसलिए कि वह सारा 'ज्ञान' मानव की स्वाभाविक प्रवृत्तियों की पूर्ति का एक मात्र साधन है।

एक विचारक

आधुनिक युग का बिगड़ा रूप

(कु० अरुण आर्या प्रभाकर, टोहाना)

राष्ट्र, समाज, जाति परिवार व कोई भी संस्था हो उसकी उन्नति तभी सम्भव है जब कि उस में एकता हो। 'एकता में महान् बल है।' यह सभी मानते हैं। लेकिन आधुनिक युग के इस परिवर्तनशील मनुष्य ने एकता को मिटा कर भिन्नता को उत्पन्न कर दिया है। वह सब से अलग रहना अलग ही रह कर नये २ आविष्कार करना चाहता है। कोई भी एकता के सूत्र में बंध कर नहीं रहना चाहता। उसे यह एकता का सूत्र एक बन्धन दृष्टिगोचर होता है।

जब हम प्राचीन काल के इतिहास को पढ़ते हैं तो पता चलता है कि उन लोगों में कितनी एकता थी। तभी तो उन में कितना आत्म बल व शक्ति थी। वैसे तो आज भी संयुक्त परिवारों की प्रथा है लेकिन बहुत कम। पर प्राचीन समय में तो संयुक्त परिवार ही होते थे। एक २ परिवार के लगभग १००-१५० मनुष्य सदस्य होते थे। जिन में एक मुखिया होता था। घर का प्रत्येक कार्य उस मुखिया की आज्ञानुसार होता था। परन्तु आधुनिक युग में एक ऐसा परिवार जिस के केवल चार पांच सदस्य हों या दस, सभी अपने आप को मुखिया मानते हैं। कोई किसी का कहा मानने के लिए तैयार नहीं। छोटे से छोटा बच्चा भी अपनी मनमानी करता है। यही कारण है कि उन्नति चाहते हुए भी नहीं हो पाती।

आज चाहे धार्मिक संस्था है या राजनैतिक। सभी में विरोध की भावनाएं भरी हुई हैं। आज मनुष्य में पद की इच्छा है। पद की लोलुपता उसे नीच से नीच कार्य भी करवाने के लिए तत्पर कर देती है। पदवी को प्राप्त कर अपने कर्त्तव्य को भूल जाता है।

आज परिवार में ही देख लो पति चाहता है कि मेरी चले। मेरी आज्ञानुसार ही प्रत्येक कार्य हो। पत्नी मेरे कहने में हो। लेकिन पत्नी चाहती है कि जो कुछ हो सब मेरी इच्छानुसार हो। पति मेरे कहने में रहे। यही कारण है कि कहीं भी शान्त सुखमय वातावरण नहीं है।

धार्मिक संस्थाओं में जाकर देख लो, वहां भी इस प्रधानता ने बेहाल किया हुआ है। प्रधान अपनी चलाता है, मन्त्री अपनी चलाता है। कोई एक दूसरे के विचार का सन्मान नहीं देता। कोई भी परस्पर सहमत नहीं होता।

ऐसी अवस्था क्यों है? गम्भीरता पूर्वक विचार करने से यही इस का परिणाम निकलता है कि आज प्रत्येक मनुष्य अपने विचारों को, अपने मत को दूसरे के विचारों से अधिक महत्व देता है। वह स्वयं को दूसरों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान, मननशील और विचारवान मानता है। इसी अपने अहं भाव के आंचल से वह सब की बुद्धि पर पर्दा डाल देना चाहता है। लेकिन ऐसी अवस्था ने कितना बिगाड़ उत्पन्न कर दिया है। कहीं पर भी शान्ति व सुखमय वातावरण नहीं। ईर्ष्या और द्वेषाग्नि की प्रचण्ड लपटें दिनोंदिन प्रज्वलित होती जा रही हैं। प्रत्येक स्थान पर भिन्न २ आवाजें सुनाई देती हैं। विचार विकृत होते जा रहे हैं। आहार की पवित्रता समाप्त हो चुकी है। आचार बिगड़ता जाता है। स्वार्थपरता व अभिमान का भयंकर तूफान बढ़ता जा रहा है। बड़ा छोटे का खाने को आता है। रिश्वत खोरी का बाजार गर्म हैं। निर्धनों के खून को चूसा जाता है। शिष्टाचार का तो नाम ही नहीं रह गया। नैतिक स्तर गिर चुका है। चरित्र वान व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं। हां, एक कपटी अत्याचारी, ढोंगी व स्वार्थी पूंजीपति का आदर अवश्य है। ऐसी अवस्था का परिणाम क्या होगा? ये स्पष्ट तथा हमारे सम्मुख है। विनाश! पतन, काल!

हमें इस पतन के गर्त से निकलना होगा। इस विनाश की लपटों से बचना होगा। इस महा काल के मुख से निकल कर सुपथ पर अग्रसर होना होगा। इस ढोंग, आडम्बर दिखावे व सौन्दर्य के प्रलोभन में न आ कर अपने चरित्र के अस्तित्व को कायम रखते हुए वेद के पवित्र सन्देश को समस्त संसार को सुनाना है। इस के बिगड़ते रूप को सवारना है। मान व जीवन के वास्तविक रूप को पहचान कर सिद्धि को प्राप्त करना है। जिस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हम इस संसार में आए हैं जबकि हम वेद पथ के अनुगामी बनें।

'भारत जिन्दा बाद'

वो देखो शत—२ ग्राम, वो देखो भारतीय सभ्य समाज,
सुनो इनकी वाणी से निकला—'भारत जिन्दा बाद।'
वो देखो लह लाहते खेत, उन में फिर देखो हृष-उन्माद,
सुनो उसकी आवाज से निकला—'भारत जिन्दाबाद।'
वो देखो पुष्प शृंखलाओं पर, भृंग जनों के गुन्जान,
उन के उस सुगुन्जन में सुनलो—'भारत जिन्दा बाद।'
वो देखो पर्वत शृंखला, वो देखो नदी की आवाज,
उसकी कलरव में सुनलो—'भारत जिन्दाबाद।'
वो देखो इस्पात के लट्ठ, क्रेनों में क्या हा हा कार,
वो देखो विज्ञान की आवाज—'भारत जिन्दा बाद।'
वो देखो कवियों की कविता, सोचो कविता का सार,
उनकी कल्पना में छांटो साज,—भारत जिन्दा बाद।'
भारतीय संगीतज्ञ की वीणा, सुनो उस वीणा का सार,
देती नहीं क्या वह दाद—'भारत जिन्दा बाद।'
खड़े देखो बड़े—२ मकान, कहते हैं क्या ये विशाल,
इनकी इक—२ ईंट में नहीं क्या—'भारत जिन्दा बाद।'
वो देखो बच्चों की टोली, वो देखो स्त्री समाज,
कहता देखो पुरुषों का दल—'भारत जिन्दा बाद।'
वो देखो भारत के सिर पर, लहराता भारतीय ताज,
कहता नहीं वो खड़ातिरंगा—'भारत जिन्दा बाद।'
सच है,—सच है—यह सब सत्य, सत्य की आवाज,
मानो या न मानो तुम पर—'भारत जिन्दा बाद।'

अरुण सरीन होशयार पुर

आर्यसमाज मोडलटौन लुधियाना

का वार्षिक उत्सव ११-१२-१३ अक्तूबर को बड़ी धूमधाम से संपन्न हो रहा है इस अवसर पर अनेक विद्वान पधार रहे हैं १३-६-६३ को आर्य युवक सम्मेलन का प्रबन्ध किया जा रहा है। मंत्री आर्यसमाज

क्या राम ईश्वर थे ?

(ले० . पंडत चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी, उपदेशक सभा, सोनीपत)

बन्धुओं ! इस भारत वर्ष में सैंकड़ों ऊंचे दर्जे के महापुरुष हुए जिन को आपस में तुलना करना उचित नहीं, इनमें महाराज श्री रामचन्द्र जी एक हैं। इन महापुरुषों के ऊंचे कर्म इन्हें ऊंचा बना देते हैं कई श्रद्धालु लोग इन्हें ईश्वर, भगवान आदि नाम लगा कर पुकारते है। वास्तव मे ईश्वर इन से भिन्न है, जो सर्वशक्तिमान सर्व-व्यापक, निराकार, अजन्मा, सृष्टिकर्त्ता आदि नामों से गुणों के द्वारा बोलते हैं। श्रीराम इन सब विशेषताओं से भिन्न है, यदि राम ईश्वर थे तो इनके पिता को ईश्वर क्यों नहीं कहा जाता तथा इनके भाइयों को ईश्वर क्यों नहीं कहते, सृष्टि रचे दो अरब वर्ष होने को है राम को शरीर त्यागे लगभग दस लाख वर्ष बताते हैं, ये न तो सर्वशक्तिमान हैं जो प्रभु बिना किसी के सहयोग के संसार का निज़ाम चलाता है, ये रावण तक को अकेले न मार सके वीर हनुमान आदि फौज का सहारा लिया। ईश्वर सर्वव्यापक है, ये नहीं, ये तो शरीर-धारी थे, अयोध्या में हैं जंगल में नहीं, जंगल में हैं अयोध्या में नहीं, इन्हें तो इतना ज्ञान नहीं, कि मै हिरण के पीछे भागूंगा तो पीछे मेरी प्यारी सीता उठाई जाएगी, और ये काण्ड करने वाला रावण होगा, और फिर जब सीता उठाई गई पागल से हो गए हर प्राणी से पूछते हैं मेरी सीता कहां है बताओ ये क्यों, पौराणिक भाई कहते हैं ये महाराज ने लीला रचाई थी। बड़ी हैरानी की बात है, लीला नहीं दिखानी थी ये तो महापुरुषों को बदनाम करने वाली बात है हमारी बुद्धि ये गलत लीला बिलकुल नहीं मानती। प्रभु निराकार है, ये अस्सी नब्बे वर्ष तक शरीर धारी रहें सर्व व्यापकता कहां रही उस प्रभु की कोई मूर्ति नहीं, वेद में आया है न तस्य प्रतिमा अस्ति अर्थात ईश्वर की कोई मूर्त नहीं संसार में कई चीजे ऐसी हैं जो दीखती नहीं परन्तु अनुभव अवश्य होती हैं, जैसे हवा, सुगन्धी, दुःख, सुख, भूख, प्यास आदि प्रभु वास्तव में निराकार है साकार नहीं जिस की आख कान हाथ पांव आदि नहीं परन्तु सब कुछ देखता सुनता काम करता है। उपनिषद में आया है—अपाणी पादो जवनो ग्रहिता, पश्यत्यचक्षु: स शृणोत्य कर्ण; स वेति वेद्य' नच तस्यास्ति वेता तमा हुरग्रयं पुरुष' महान्तम् ईश्वर ऐसा है राम ऐसे नहीं, राम को ईश्वर कहना, प्रभु और राम दोनों का निरादर करना है, सर्व देशी मानना महापाप है। प्रभु जन्म मरण से रहित है ये राम नौ दस मास मां के पेट रूपी कैद में रहे खुराक भी मां के द्वारा मिलती रही क्या विशेता है जिस से प्यारे राम को ईश्वर का रूप दिया जाये। ईश्वर अपने किये पर पछताए नहीं राम के जीवन को पढ़ें जब लक्ष्मण मूर्छित हुए थे तब राम की दशा रामायण में पढ़ें विलाप करते है हे ईश्वर मैंने क्या बुरा कर्म किया जिस से मैं अपनी आंखों के सामने अपने प्यारे भैय्या लक्ष्मण को मूर्छित हालत में देखता हूं—ज़रा अपनी बुद्धि से काम लें क्या ये बातें ईश्वर में घटती हैं हरगिज नहीं मनुष्य में घटती हैं। राम स्वयं ईश्वर भक्त थे दोनों समय संध्या हवन आदि करते थे, यदि ये ईश्वर थे तो संध्या किस की और किस लिये करते थे ये एक प्रश्न है जिस का उत्तर हमें नहीं मिलता। इन के काम व मर्यादाएं ऐसी है जिस पर स्वयं आचरण किया—इस लिए इन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहते हैं वास्तव मे ये सही बात है जो विद्वान लोग स्वीकार करते हैं। युग प्रवर्त्तक दयानन्द ने इन्हें आदर्श महापुरुष लिखा है, ये राम महापुरुष है, तपस्वी, योद्धा, चरित्रवान, धर्मात्मा, आर्य महाराजा आदि सब हो सकते हैं। परन्तु सर्वशक्तिमान, सर्व-व्यापक, निराकार, अजन्मा आदि नामों से पुकारा जाने वाला ईश्वर नहीं—दशहरा मनाने वाले इनके नाम पर रामलीलाएं करने वालो राम को समझो, गलत रास्ते पर मत चलो, ईश्वर को ईश्वर समझो, श्री रामचन्द्र जी को महापुरुष, आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम समझो; सृष्टिकर्त्ता ईश्वर नहीं। इसलिए मैंने लिखा क्या राम ईश्वर थे।

रहो होशियार, रहो तैयार !

(बहिन सुशीला जी आर्या एम० ए० नरवाना)

मेरे प्यारे प्यारे भारत पर कोई टेढी नजर न उठे,
रहो होशियार।
अपना सब कुछ लुट जाए भले आजादी न प्यारी लुटे,
रहो तैयार।

वेदों का है ज्ञान यहां यहीं हमारी गीता है,
दयानन्द गौतम गांधी का जीवन इस पर बीता है,
यहां गौरव गिरि हिमाचल है और गंगा की धार बहे,
लुटाती प्यार।

यहां बहिन की इज्जत है माता का है मान यहां,
भाई के हित भाई हंस कर देता आया जान यहां,
राम और भरत की परम्परा मिट्टी में कभी न मिले,
फले परिवार।

यहां धर्म है सीता का सावित्री की मर्यादा,
जीवन का आदर्श यही ऊंचे विचार जीवन सादा,
इस उपवन की हरियाली को कोई पैरों से न कुचले,
रहे गुलजार।

यह तो महल शहीदों के रक्तमांस से बना हुआ,
भगतसिंह से वीरों की हड्डी पसली से चिना हुआ,
इसकी नीवें मजबूत रहें नित धर्म का दीप जले,
न हो अंधकार।

युगद्रष्टा दयानन्द

स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म के विश्वासों और व्यवहारों में प्राण फूंक दिये और वह जीवन भर एक उत्कृष्ट प्रचारक की भान्ति बड़े उत्साह से प्रचार कार्य करते रहे। आधुनिक युग की सम्पूर्ण आवश्यकताओं को भली-भान्ति समझ लिया था, यद्यपि वह स्वयं आधुनिक शिक्षा-दीक्षा तथा वातावरण में नहीं पले थे। वर्तमान युग के सुधारकों और निर्माताओं में स्वामी जी का विशिष्ट स्थान है और भविष्य में भी उनका नाम अग्रिम पंक्तियों में लिया जाता रहेगा।

मौ० अब्दुल कलाम आजाद

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, ६ अक्तूबर १९६३ [अंक ४०

रोग का उपचार

रोग व्यक्ति और समाज के लिए सदा ही हानि कारक है। यह किसी प्रकार का भी हो, इस से बचना ही श्रेयस्कर है। प्रत्येक रोग का उपचार आवश्यक ही नहीं, नितान्त आवश्यक है। थोड़ी सी भी असावधानी जीवन के लिए घातक सिद्ध होती है। बीमारी, ऋण एवं शत्रु के उत्पन्न होने पर ही उस का प्रतिकार करना बुद्धिमत्ता कहा गया है। जब कभी समाज के जीवन में कोई बीमारी पैदा होने लगती है, तो यदि उस से आंखें बन्द कर ली जायें, ऐसी अवस्था मे रोग बढ़ता जाता है फिर या तो जाता नहीं, यदि जाता भी है तो महायत्न से जाता है। आज के हमारे समाज में कुरीतियों, बुरी प्रथाओं तथा ऐसी वैसी व्यर्थ परम्पराओं की बीमारियां जो दिखाई देती हैं—ये आज की नहीं अपितु शताब्दियों के लम्बे काल से चलती आ रही हैं। कपड़े पर पड़े हुए देर से किसी धब्बे को धोने के लिए समय भी काफी लगता है तथा प्रयास भी बड़ा चाहिए। समाज के जीवन में आये ये रोग भी पुराने हैं। इन के उपचार में समय लगेगा। किन्तु उपचार तो करना ही पड़ेगा। तभी कुछ बन सकेगा। सामाजिक जीवन में लगे अन्य भयानक रोगों के साथ २ विवाह कुप्रथा की भयंकर बीमारी ने तो सारे समाज को अत्यन्त निर्बल बना कर रख दिया है। आज की शादी क्या रूप धारण कर चुकी है। परिवार के परिवार रोते हैं। दिल फाड़ने वाले दर्दनाक समाचारों को पढ़ते सुनते हैं। घरों के उजड़ने की चर्चा होती तथा लड़कियों के जलने, विष खाने, मरने मार देने की बुरी घटनाएं होती हैं। पर क्रियात्मिक पग कोई नहीं उठाता। अपने २ वातावरण मे लोग समय बिता रहे हैं। देखते २ विवाहों पर भंगड़ा नाच आतिशबाजी तथा न जाने क्या २ दिखलावा प्रचलित हो गया है। बीमार की बीमारी बढ़ती जा रही है। बधाई है जालन्धर शहर के मान्य नागरिकों को, जिन्हों ने अपने नगर में कम से कम ऐसी नई, व्यर्थ इन कुप्रथाओं के रोग को बल पूर्वक रोकने का बीड़ा उठा कर समिति सगठित कर के सब को ऐसा करने की प्रेरणा की है। आज के विवाह **Booking Agency** बन चुके हैं पेशगी बुकिंग नीलामी का खुले रूप से प्रदर्शन किया जाता है। विवाह एक पवित्र धर्ममर्यादा है, परन्तु आज यह धन व लोभ का नगा नाच बन गया है। सादगी समाप्त हो चुकी है। आर्य समाजी भी इस दिशा में उसी प्रवाह में बहते हैं। किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। ठोसपग उठाने की आवश्यकता है। तभी समाज ठीक होगा।

—त्रिलोक चन्द्र

जवानो! जवानी में कुछ काम कर लो।
समझते हो जिस को जवानी, जवानी हवा है॥
उठे तो उठे कैसे वह कौम जिस के।
जवानों में जोशे जवानी नहीं है॥

मन वशीकरण के तीन साधन

ज्ञान-प्राण-ध्यान

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

जगत् परिवर्तनशील है। इस में निवास करते हुए आज मानव के जीवन में कितनी चंचलता, अस्थिरता है। यह सारी स्थिति तभी बदल सकती है, जबकि हमारा मन पर वशीकरण हो जाये तो चंचल विश्व में भी यह जीवन स्थिर हो सकता है। इस के लिए मन को अपने वश में करने के तीन साधन प्रमुख हैं। जैसे आज के युग में वैज्ञानिकों ने बिजली को बान्ध कर रख दिया है। इस स्थिति में वह कितने बड़े २ काम करती है। इसी प्रकार अपने मन को बांधो। वश में हुआ २ यह मन भी बड़ा शक्तिशाली बन कर महान से महान कार्य कर सकता है। चंचलता के कारण इसकी सारी शक्ति का अपव्यय हो रहा है इसे बान्धने के तीन उपायों में सब से प्रथम साधन ज्ञान है।

मनुष्य जाने कि मैं स्वयं क्या हूं? यह मेरा शरीर क्या है? किन तत्वों से बना है, कितने कोशों का समूह है। यह सदा साथ रहने वाला है या परिवर्तनशील है? इन मे मन का क्या स्थान है और दोनो प्रकार की ज्ञानेन्द्रियां तथा कर्मेन्द्रियां क्या २ हैं। उनके पीछे पंचतन्मात्राओं का रहस्य कैसा है। मन के कितने प्रकार हैं। आत्मा का अपना स्वरूप क्या है? इस शरीर के साथ, मन के साथ उसका क्या २ सम्बन्ध है। यह विशाल भौतिक जगत् क्या है? इसके सारे पदार्थ, रूप रस आदि के सारे विषय बदलने वाले हैं या सदा स्थिर रहने वाले हैं। इस संसार के जितने भी पदार्थ अथवा उनके अनेक विध स्वाद हैं, वे स्थायी हैं या क्षणिक? इसका सारा ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। इसे शरीर ज्ञान, पदार्थ ज्ञान या विषय ज्ञान कहा जाता है। जिस समय मन इन सब पर विचार करता है। इन्द्रियों के विषयों पर मनन होता है। जगत् की परिवर्तनशीलता का चिन्तन करता है तो उसे वस्तु स्थिति का निश्चय होने लगता है। विषयों की क्षणभंगुरता उसकी चचलता को समाप्त करके उसे निश्चल बना देती है। मन का वशीकार होने लगता है। ज्ञान इसके लिए प्रथम कड़ी है।

पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी महाराज अस्वस्थ

कुछ समय से समाचार पत्रों मे आनंद स्वामी जी महाराज के अस्वस्थ होने के समाचार पढ़े जिन से आर्य क्षेत्र मे अति दुःख छा गया। आज कल देहली में पधारे हुए हैं। उनके सुपुत्र श्री रणवीर जी उनकी सुश्रूषा मे दिन रात एक कर रहे हैं। आप के अस्वस्थ होने से, वेद प्रचार का कार्य, जनता का आत्मिक विकास, तथा मधुर भाषण, सभी ठप्प हो हो गए हैं। विशेष कर आर्यसमाजों, आध्यात्मिक उन्नति के इच्छुकों को काफी धक्का पहुंचा है। हम उनके शीघ्र स्वस्थ होने के लिए प्रभु से हार्दिक प्रार्थना करते हैं। जिस से कि आप चिरकाल तक आर्य जगत को अपने मधुर भाषणों से तृप्त करते रहें।

संतोषराज
मन्त्री सभा

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण—

धर्म प्रचार के साधन

इन घटनाओं को देखकर बुद्ध ने विचार किया कि मृत्यु से कैसे बच सकते हैं ? बुद्ध महाराज की स्त्री के लड़का इन्हीं दिनों उत्पन्न हुआ था। वह अभी ग्यारह ही दिन का था कि बुद्ध ने घर बार छोड़ देने का विचार किया। अन्तिम रात को जब वह चलने लगा तो उसके मन में यह इच्छा हुई कि बच्चे को एक बार देख तो लूं। वह आधी रात के समय [illegible] गृह में आया। वे कवनितियां जो इस के मन बहलाव के लिए रखी गई थीं, बेसुध पड़ी थीं। चित्त में आया कि बच्चे को चूम लूं। परन्तु फिर सोचा कि यदि स्त्री जाग उठेगी और मेरे इस समय इस प्रकार से आने का कारण पूछेगी, तो फिर जाना कठिन हो जायेगा। वह बच्चे को बिना चूमे ही निकल गया। नदी पर जाकर सोने के भूषण उतार कर नौकर को दे दिये।

बुद्ध वहां से बनारस आये। वहां विद्या ग्रहण की। फिर तपस्या की, किन्तु इस से चित्त शान्त न [illegible]। फिर एक बार कठिन तपस्या [illegible]और इतनी की कि जीवन की [illegible] न रही। उस समय इन का [illegible] प्रकाशित हुआ और मन में [illegible]ह भाव उत्पन्न हुआ कि इस [illegible]ति से आत्मघात करने से और [illegible]ष्ट हो जाने से कुछ नहीं बनता। [illegible]वल मात्र यही आवश्यक था कि [illegible]न्द्रियों के भोगों को तज कर [illegible]पर और ऊंचे चले जावें। [illegible]स हवा से ऊपर चढ़ जावें ताकि इन सारे दृश्यों को देखें, परन्तु इन में लिप्त न हों।

समुद्र में जहाज चल रहा है। [illegible]ह एक पहाड़ी से टकराता है। लहरें उस को ताड़ती हैं। सवार का [illegible]दय भयभीत हो जाता है, वह [illegible]ंपने लगता है। परन्तु समुद्र के [illegible]रे का पहाड़ी पर बैठा हुआ [illegible]घबराता नहीं। लहर आकर किन्तु वे निराश हो कर पीछे लौट जाती हैं। इसी प्रकार जीवन ऐसा उच्च हो कि सांसारिक दुःख क्लेश और अन्य आपदाएं हम को सता न सकें तथा उन का प्रभाव तक न पड़े। इस प्रश्न को उस ने हल किया और अष्टांग मालूम की। एक जैसे नियम प्रणाली बनाये। सत्यभाषण, शुद्धाचरण और अन्य कई एक। इस प्रकार उन ने निर्वाण का मार्ग बतलाया। बुद्ध-मत के नियम कुछ नवीन नहीं थे। यह सब वैदिक धर्म में विद्यमान था। परन्तु उस समय यह दशा नहीं थी। वैदिक धर्म बिगड़ चुका था। इस लिए उसने इस का विरोध किया। परन्तु उस ने अमान्य यज्ञों की निन्दा करते हुए मान्य यज्ञों को भी न छोड़ा। वह इस स्थान पर आ कर भूल गया।

मलूक पुत्त नामी एक मनुष्य जो बुद्ध का शिष्य था—एक बार बुद्ध से पूछने लगा—महाराज ! मुझे समझ में नहीं आता कि मृत्यु अनन्तर क्या होता है ? मुझे बतलाइये कि मृत्यु के बाद आत्मा रहता है अथवा नहीं ? बुद्ध मलूक पुत्त ! मुझे यह मालूम नहीं।

मलूक पुत्त—महाराज ! यह बड़ा आवश्यक प्रश्न है।

बुद्ध—जब मैंने तुम्हें शिष्य बनाया था तो क्या मैंने यह प्रण किया था कि तुम को यह बतलाऊगा ?

मलूक पुत्त ने कहा—नहीं।

बुद्ध—तो बस फिर क्या ? केवल जीवन को पवित्र बनाओ। इन झगड़ों में न पड़ो। इसी प्रकार वह एक बार कन्नौज गये। वहां एक हवन करने वाले को उपदेश दिया, जिस ने अपने हवन के पात्र नदी में बहा दिये। (बुद्ध ने ऐसी बातों में भूल की, नहीं तो वह ठीक था) जब बुद्ध बनारस में पहुंचे तो एक वाटिका में ठहरे। वहां एक अमीर बड़ा दुराचारी था, उसे अमीरी सता रही थी। वह विषय भोग कर दुःखी हो गया था। उसे सुख दिखाई न देता था। उसे बुद्ध ने कहा—मेरे पास आओ मैं तुम्हें शांति दूंगा। इस के उपदेश से अमीर के विचारों में परिवर्तन हो गया। इसके अनन्तर बुद्ध ने विचारा कि अपने विचारों को फैलाने के लिए यह आवश्यक है कि आदमी तैयार किये जायें। इसी लिए उसने साठ भिक्षु तैयार किये और उन्हें उपदेश दिया कि तुम दो भी एक दिशा में मिल कर कभी न जाओ। एक २ को भिन्न २ दिशा में भेज दिया और उन्हें समझाया कि वे सच्चाई का उपदेश करें। अपनी रोटी मांग कर खाय तथा उपदेश करते रहें। बुद्ध अपने लिए स्वयं मांगता था तथा दूसरों को उपदेश करता था उसके जीवन में सब से अधिक हृदयविदारक घटना उस समय की है जबकि वह कपिलवस्तु राजधानी में भीख मांगता है। उसका पिता उसे बुरे २ शब्दों से सम्बोधन करता और कहता है कि तूने हमारे वंश को कलंकित किया है। परन्तु बुद्ध उत्तर देता है कि आपका वंश कदाचित कलंकित होता हो परन्तु हमारा वंश जो सुधारकों का वंश है—इस प्रकार से कलंकित नहीं होता, प्रत्युत् इस में यह प्रथा चली आई है। इस भिक्षा मांगने ने उस नगर पर बड़ा प्रभाव डाला। सारे लोग उसके चरणों पर पड़ते थे। इस प्रकार सब से पहिला नियम जो उसने प्रचार के लिए नियत किया वह भिक्षुओं को तैयार करना और सरल जीवन बिताना था। बुद्ध का काम यहीं तक समाप्त नहीं हो गया। उसके चित्त में आया कि कि यदि पुरुषों को सचाई दी जाती है तो स्त्रियों को क्यों न दी जाये।

किन्तु वह मानुषी त्रुटियों को जानता था। बहुत घबराया। कई साल इस प्रश्न पर विचार करता रहा। निदान उसने निश्चय किया कि शरीर के आधे अंग को शिथिल कर देना ठीक नहीं और इस काम के लिये उसने अपनी स्त्री यशोधरा को अपना शिष्य बनाया। उसने स्त्रियों में प्रचार आरम्भ किया। इस प्रकार से स्त्रियां भी प्रचारक के काम में बढ़ीं। क्रमशः

५०००) का अनुकरणीयदान

आर्य युवक परिषद् के प्रधान श्री पं. देव व्रत धर्मेन्द्र जी ने सार्वदेशिक आर्य प्र०नि: सभा को प्रकाशन निधि के लिए २०००), आर्य कुमार सभा नई दिल्ली को आर्य कुमार भवन के लिए १०००) तथा वैदिक साहित्य प्रचार के लिए २०००) दान दिए हैं। इस के साथ ही साथ श्री पण्डित जी ने अपने १२५ ग्रन्थ वेद, उपनिषद् दर्शन, रामायण, महाभारतादि आर्य प्रादेशिक उपसभा को पुस्तकालय खोलने के लिए दान में दे दिए हैं।

सुदर्शन सरीन प्रचार मन्त्री

सोना

सोना कहे सुनार से,
उत्तम मेरी जात।
यह काले मुख की लालड़ी,
क्यों तुले हमारे साथ।

रत्ती

लालों की मैं लालड़ी,
लाल हमारा रंग।
काला मुख तब से भया,
जब तुली नीच के संग

ईसाइयों का नया षड्यन्त्र

"बिना दवाई सभी रोगों का इलाज"

(श्री पं० रुद्रदत्त शर्मा प्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर, अमृतसर)

आज कल अमृतसर में बड़े सरकारी हस्पताल के समीप ईसाइयों के एक अड्डा "Full Gospal Hanse" में एक ईसाई कर्मचारी की ओर से समस्त रोगों का इलाज केवल खुदा से दुआ (प्रार्थना) द्वारा करने का प्रचार किया जा रहा है। सहस्रों हिन्दू और सिख स्त्री-पुरुष वहां इकट्ठे हो जाते हैं, यहां तक कि कई बार ट्रैफिक भी रुक जाता है। भाड़ में कुछ व्यक्ति जो ईसाइयों के एजैण्ट प्रतीत होते हैं, यह कहते सुने गये कि यहां कई रोगी चलने में असमर्थ स्ट्रेचरों पर लाये गये और पादरी साहिब की दुआ के पश्चात उछलते भागते घरों को गये। परन्तु जब वहां खड़े लोगों से पूछा गया, तो कोई भी ऐसे किसी रोगी की आंखों देखी गवाही या पता न दे सका।

संसार के दूसरे देश इस समय उन्नति की दौड़ में एक दूसरे से आगे निकल रहे हैं परन्तु हमारा देश आज भी भ्रम जाल और कुरीतियों के गड़े में फसा ठोकरें खा रहा है। देवता स्वरूप श्री भाई परमानन्द जी कहा करते थे कि भारत की जनता इतनी सीधी और भोली है कि इसे लूटने और पथ-भ्रष्ट करने वाले जितने ढंग मैदान में निकल आये, वह कम हैं। भला सहस्रों की संख्या में इकट्ठे होने वाले भाई और बहिने इतना सोचने को भी तैयार नहीं, कि यदि फूकें मारने या दुआ करने से रोग दूर हो सकते हों, तो फिर बड़े २ हस्पतालों मैडिकल कालजों, डाक्टरों और दवाइयों की क्या आवश्यकता है? हम प्रतिदिन इस प्रकार की मोजजा बाजियों के दुष्परिणाम देखते हुये भी समय आने पर अन्धे हो जाते हैं। समाचार पत्रों में नोट, नकदी और सोना दुगना करने वालों के हाथों लुटने के समाचार पढ़ते हुये भी स्वयं ऐसे दम्भ और पाखण्ड का शिकार हो जाते हैं।

प्रथम तो ऐसे स्थानों पर प्राय नकली मरीज लाये जाते हैं, जो अपने आप को बीमार जाहिर करते और 'दुआ' के पश्चात् अच्छे हो गये बता कर जनता को धोका देते हैं। दूसरे बड़े २ डाक्टरों के कथानुसार कई रोगी रोग की अवधि समाप्त होने पर स्वयं स्वस्थ हो जाते हैं—डाक्टर और वैद्य केवल बहाना बन जाते हैं। ऐसा ही कोई रोगी इत्तेफाक से अवधि पूरी होने पर बेहतर हो जाये तो पादरी साहिब के एजैण्ट उसे प्रापगण्डा का साधन बना लेंगे। इसके मुकाबिला में अनेकों ऐसे रोगी मिलेंगे जो पादरी साहिब की दुआ के बावजूद स्वस्थ नहीं होते। वह बीचारे अपनी किस्मत को कोस्ते खामोश होकर घर बैठ जाते हैं। जिन भाइयों ने पिछले दिनों ईसाई पादरियों के हथकण्डों के सम्बन्ध में लोक सभा द्वारा नियत की गयी "न्योगी कमिशन" की रिपोर्ट पढ़ी है, वह सहज से इस मसीहाई शफाखाने की पोल को समझ लेंगे। यह सब सेवा की आड़ में भोली-भाली जनता के दिलों और दिमागों में खुदावन्द यसुमसीह का सिक्का जमा कर उन के धर्म को लूटने की साजिश है।

शोक तो यह है कि हम हर वस्तु सस्ती चाहते हैं इसी लोभ में हम मन्दिर, गुरुद्वारा मसजिद और गिरजा, यहां तक कि मढ़ियों और मिजारों पर भी माथा रगड़ने के लिये तैयार रहते हैं। मुसलमान चले गये, परन्तु उन की पीरों के के मिजारों की बान कई गुणा बढ़ गयी है। अमृसर में हाल दरवाजा के बाहिर और सम्मन शाह आदि की कबरों पर हर वृहस्पतिवार मेले लगते हैं। सहस्रों स्त्री पुरुष फूल चढ़ाते समय पैसे भेंट करते और नाक रगड़ते हैं। मानो, जो मुरादें महाराज राम कृष्ण शिवा जी, हनुमान और गुरु साहिबान पूरी नहीं कर सके वह मसजिदों, गिरजों, मढ़ियों और मिजारों से प्राप्त करने की आशा रखते हैं। यह बेगैरती की पराकाष्ठा नहीं तो और क्या है? सच तो यह है कि एक भगवान से बे मुख होने के कारण हम दर दर ठोकरें खा रहे हैं। हमें यह जान कर खुशी हुई है कि श्री महात्मा व्यास देव जी ने जो इन दिनों अमृतसर पधारे हुये हैं अपनी कथा में अपने सहस्रों भक्तों का ध्यान इस पाखण्ड जाल से बचने की ओर दिलाया है।

अन्त में हम जिमावार सरकारी अफसरों का ध्यान, जनता को गुमराह करने वाले ईसाइयों के षड्यन्त्र की ओर दिलाते और शीघ्र कोई उचित पग उठाने की आशा रखते हैं।

आशा का सन्देश

(श्री उत्तमचन्द्र जी 'शरर' एम. ए)

साथी हम तो आज विजय की बात करेंगे।
आखिर क्यों हम इस प्रभात की वेला में ही,
साय का अन्धियारा आमन्त्रित कर पाएं?
जिस को पा पुलकित हो धरती नाच रही है,
उस मनहारी सूर्य किरण से आंख चुराएं।
और अमावस्या की स्वयं कल्पना करलें,
हाथ पांव मारें पथ खोजें ठोकर खाएं।
सम्मुख हो यदि अन्धकार भी सचमुच हम तो
साहस दीप जला उस में आलोक भरेंगे।
साथी हम...

वह भी क्या जीवन, जीवन भर नीर बहाना,
मुस्काना भी तो सलज्ज छिप कर मुस्काना।
उच्छ्वासों का ताना बाना बुनते रहना,
कोर खींच कर स्वय निराशा में घिर जाना।
हमें नहीं आता प्रकाश की रेखा में भी,
अन्धकार को खोज २ कर रोना घबराना।
हम विप्लव साकार क्रांति के दूत जगत में,
श्याम पटल में भी विद्युत संचार करेंगे।

लेखक महानुभावों से निवेदन

१. 'आर्य जगत्' में लेख, कविता आदि भेजने वाले विद्वानों को अपने लेख सुस्पष्ट अक्षरों में कागज के एक ओर ही, हाशिया छोड़ कर लिखे हुए भेजने चाहिएं।

२. लेख बहुत लम्बे न होने चाहिएं। 'आर्य जगत्' पत्र के एक पृष्ठ के योग्य लेख हों तो अत्युत्तम है।

३. लेखों को न्यूनाधिक और संशोधित करने का सम्पादक को पूर्ण अधिकार है।

हार्दिक बधाई

हमारे अमृतसर के डी. ए. वी. हायर सैकंडरी स्कूल में लगे हुए अध्यापक श्री जीवन प्रकाश जी जीवन को उनकी लिखी पुस्तक 'वीर दर्शन' हिन्दी पर भारत सरकार ने पुरस्कार देकर सम्मानित किया है। पंजाब से केवल उनकी ही पुस्तक चुनी गई थी। श्री जीवन जी दयानन्द नार्मल स्कूल जालन्धर में श्री ला० सन्तोषराज जी प्रिंसिपल नार्मल स्कूल तथा मन्त्री आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के शिष्य रहे हैं। श्री जीवन जी को हार्दिक बधाई

ठा. अमर सिंह जी

आर्य मुसाफिर आर्य समाज के पुराने महार थी, शास्त्रार्थ मैदान के अनुभवी [illegible] वक्ता और लेखक हैं। आर्य प्रादेशिक सभा के महोपदेशक रहे हैं [illegible] स्वर्गीय महात्मा [illegible] नेतृत्व में बीस वर्ष प्रचार कार्य किया है। आज कल आर्य उपदेशक विद्यालय आर्य समाज हापुड़ में आचार्यपद पर कार्य कर रहे हैं। जब कभी पंजाब के किसी समाज के जल्से पर आजाते हैं तो वहा उन के प्रभाव शाली भाषणों से वातावरण में विचित्रता सी पैदा हो जाती है। अभी आर्य समाज लक्कड़ बाजार शिमला के उत्सव पर पधार कर अद्भुत् समय बांध दिया। हमारी प्रार्थना पर आर्य जगत् के लिए सिद्धान्त लेख माला लिखना स्वीकार कर लिया। उन के लेख तर्क व प्रमाणों से पूर्ण होते हैं। श्री ठाकुर जी अनेक पुस्तकों के लेखक हैं। जगत् के प्रेमी पाठक उन के लेखों से शीघ्र लाभ उठा सकेंगे—

आर्यसमाज गन्धौली (करनाल)

की ओर से श्री बाबूराम जी गुप्त लुधियाना निवासी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया तथा उनके आत्मा की सद्गति व परिवार के शान्ति देने के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई।

२—वेद सप्ताह के अवसर पर ५/- प्रादेशिक सभा को और ५/- प्रतिनिधि सभा पंजाब को वेद प्रचारार्थ भेजे।

मंगतराम आर्य प्रधान आ०स०गंधौली

———

आर्यसमाज पुलबंगशदेहली

का वार्षिकोत्सव ८-९-१० नवंबर को होना निश्चित हुआ है। ४ नवम्बर से वेद कथा प्रारम्भ होगी। पं० गणेशदत्त जी पुरोहित का कार्यक्रम ५ से ६ बजे तक प्रातः सत्संग, ६ से ७ बजे तक कुमार सभा में प्रार्थना उपदेश। ८॥ से ६॥ बजे तक रात्री को ऋषि जीवन की कथा।

सुदेश कुमार मंत्री समाज

———

कमाही देवी (जिला होशियारपुर) में धर्मप्रचार

आर्यसमाज के प्रसिद्ध प्रचारक पं० नन्दलाल जी वैदिक मिशनरी तथा पं० रामदेव जी की भजन मण्डली का लगातार तीन दिन प्रातः काल डी. ए. वी. हाईस्कूल के विद्यार्थियों में विद्यार्थी जीवन पर और प्रतिदिन बाजार के चौक में देश की वर्तमान समस्याओं पर पं० जी का प्रभावशाली प्रचार हुआ आप के भाषणों की सारे ग्रामों में चर्चा है।

लक्ष्मणानन्द सरस्वती
प्रधान आर्यसमाज

aj Bhan,

M.A.

(Punjab & London), *M L.C*
Vice Chancellor
[illegible]ętra University,
[illegible]etra,



September 17, 1963.

[illegible] Devi Chand, M A, Former [illegible] D A.V. College, Hoshiarpur, has translated the **Sama Veda** into English His attempt is laudable, for, in order to arrive at a correct understanding of the Vedas, it is essential that their interpretation should come before the scholars from as many points of view as possible. There were two ancient commentaries written on the Vedas, one by Venkatamadhava and a later one by Sayana, but they interpreted the Vedas in the light of sacrificial ritual In modern times a new turn of the interpretation of the Vedas was given by Western scholars, of whom Dr. Roth was the most prominent. According to his view, the interpretation of the Vedas should be done from the Vedas themselves by a comparative study of same words occurring in the various hymns. Quite another and more valuable line of interpreptation was introduced by Swami Dayanand Saraswati, the founder of the Arya Samaj Following his footsteps, there have been several such interpretations in this country. The present attempt is also one of that series. It is hoped that this translation will promote the study of the Vedas among the English reading public and create interest in Vedic studies among the intelligentsia interested in the resuscitation of our ancient cultural values which is one of the prime needs of the country. I have no doubts that the work should evoke admiration and engender among the readers a legitimate pride in their heritage, which is the fountain-head of world civilisation and culture.

Sd/-
(Suraj Bhan)

आर्य कुमार सभा चित्रगुप्त रोड़, नई दिल्ली

डी० ए० वी० हायर सेकेंडरी स्कूल चित्रगुप्त रोड़ नई दिल्ली की आर्य कुमार सभा, स्कूल में एक आर्य कुमार भवन निर्माण कर रही है। जिस पर लगभग १००००) रु० व्यय होंगे। इस भवन में आर्य कुमार अपने सत्संगादि कर सकेंगे साथ ही वे अतिरिक्त समय में धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय विषयों का मनन और चिन्तन कर अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकेंगे।

सभी राष्ट्र के इन भावी उन्नायकों के उत्थान हेतु आर्य कुमार भवन निर्माण के लिए अपनी आर्य समाज की ओर से कमसे कम १०१) रु० का दान भेजकर कृतार्थ करें। साथ ही दानी महानुभावों से भी व्यक्तिगत अन्य रूप में १०१) रुपये की कुछ रकमें दिलाने की प्रेरणा कर यश व पुण्य के भागी बनें।

नोट—१०१) रुपये या इससे ज्यादा रकम देने वाली समाज, संस्था या दानी महानुभावों के शुभ नाम भवन में संगमरमर के सम्मान पट (आनर बोर्ड) पर अङ्कित किये जायेंगे।

निवेदकः—
(प्रिंसिपल) हरिश्चन्द्र एम. ए.
प्रधान

आर्य विद्वान का आगमन

आर्य जगत को यह जानकर बहुत प्रसन्नता होगी कि १७-९-६३ ई० से आर्य जगत के प्रकांड विद्वान श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी महाराज ने कुछ समय के लिये श्री दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार को अपनी सेवायें अर्पित की हैं।

अतः जो सज्जन पत्र व्यवहार करना चाहें वे इसी पते पर पत्र व्यवहार करें।

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय,
हिसार

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



[आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

टेलीफोन न० ३८४७ वार्षिक मूल्य ६ रुपये

एक प्रति का मूल्य १२ नये पैसे

(तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वर्ष २३ अंक ४१) रविवार ९ आश्विन २०२०— १३ अक्तूबर १९६३ दयानन्दाब्द १३९

वेद सूक्तय:

मम वशेषु हृदयानि

राष्ट्रनायक कहता है कि मेरे प्रजा धर्मपालन को देख कर सारी जनता के दिल मेरे अनुकूल ही बने रहेंगे। जहां राजा धर्मात्मा प्रजापालक हो वहां पर राष्ट्र में प्रेम की नदी बहती है। जहां विचार न मिलें वहां विद्रोह हो जाता है।

मम यातमनुवर्त्मान

जो मार्ग मेरा है, वही देश की सारी प्रजा का होवे। राष्ट्र की सारी जनता उसी राजा, नेता, नायक के पीछे चलती है, बलिदान देती है, जो प्रजा सेवा पर व्यक्तिगत स्वार्थ का बलिदान कर देता है।

वो देवा उपसंयन्तु

हे मनुष्यो! आप का जीवन, आचार विचार, व्यवहार इतना शुद्ध पवित्र बन जाये ताकि दिव्य गुणी देवता भी आप के पास आवें। देव लोग भी आप की प्रशंसा करें—

अथर्ववेद

वेदामृत

सुषारथिरश्वानिवयन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठिं यदजिरं जविष्ठं तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ।

यजु० अ० ३४ म० २

अर्थ—जैसे (सुषारथि:) अच्छा सारथी रथ चलाने वाला (अश्वान् इव) घोड़ों को चलाता है वैसे ही यह मन भी (मनुष्यान) मनुष्यों को (नेनीयते) ले चलता है, चलाता है (अभीशुभि:) लगामों से (वाजिनः इव) घोड़ों के समान ही। जैसा उत्तम रथ चालक घोड़ों को लगामों से जहां चाहता है चलाता है उसी प्रकार यह मन भी मनुष्यों को जहां चाहता है इन्द्रियों के द्वारा चलाता रहता है। और जो मन (हृत् प्रतिष्ठम्) हृदय में स्थित है (अजिरम्) बुढ़ापा, जरा से रहित है, सदा जवान है (जविष्ठं) बहुत तेज है—वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला होवे।

भाव—जिस प्रकार उत्तम रथ चालक रथ में लगे हुए घोड़ों को लगामों के द्वारा अपनी इच्छा के अनुसार चलाता है। जहां चाहता ले जाता है। घोड़े लगाम के कारण चुपचाप चलते रहते हैं। उसी प्रकार हमारा शरीर जीवन भी एक रथ है। इस को भी चलाने वाले इन्द्रियां रूपी घोडे लगे हैं। मन अपनी लगाम के द्वारा इन को जहां चाहता है ले जाता है चाहे ऊंची अवस्था की भूमि पर ले जाये या पतन के गर्त्त में गिरा दे। शरीर के घोड़े इसी लगाम के अनुसार ही चलते रहते हैं। यह मन कभी भी विषयों के भोगने में बूढ़ा नहीं होता, शरीर बूढ़ा हो जाता पर यह सदा जवान है—प्रभो! ऐसे मेरे इस मन को पवित्र बना दो ताकि यह जीवनरथ को वासनाओं में न गिरा सके—सं०

ऋषि दर्शन

ईश्वर: सर्वव्यापी

परमात्मा सर्व व्यापक है, सर्वत्र विद्यमान है। एक देशी, एक स्थानी नहीं। समस्त विश्व में व्यापक है, मन्दिर में या किसी विशेष स्थान में उसे बन्द करना, मनुष्य शरीर में जन्म लेने वाला कहना ठीक नहीं।

सर्वत्रेश्वरस्य व्यापक त्वात्

परमेश्वर का सर्वत्र व्यापक होने से न उसकी कोई मूर्ति है, न ही उसका कोई विशेष स्थान है व न उसका कोई शरीर ही हो सकता है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है।

मूर्ति पूजने महत्पापम

मूर्ति पूजन में तो बड़ा पाप है। जब ईश्वर सर्वव्यापक है, उसकी एकस्थानी मूर्ति बना कर उसे ईश्वर मान कर पूजना ईश्वर का कितना अपमान है। यह महा पाप है।

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

धार्मिक चर्चा—

जीवन का सौन्दर्य

(स्वाध्यायशील श्री लालचन्द्र जी मंसूरी)

हम अवश्य ही 'अनृत से सत्य की ओर आगे बढ़ेंगे।' अनृत को जीवन व्यवहार से निकाल देंगे और ऋताचार द्वारा हम सत्य का साक्षात्कार करेंगे, यह महाव्रत है। इस व्रत की पूर्ति के लिए दृढ़व्रती मानव की भगवान अवश्य सहायता करते हैं। मानव इतिहास है ही अनृत को छोड़ सत्य को ग्रहण करने वालों की वीर गाथा हमें तो ऋषिवर दयानन्द के जीवन कथा के पन्ने यही पुकार पुकार कर कह रहे हैं। आर्यजनो आपस के वैमनस्य त्यागो, आलस्य प्रमाद त्यागो, पुरुषार्थ करो, जो प्रार्थना करो उसे प्रतिज्ञा समझ कर उसकी पूर्ति में पूरे मन से, लग्न से दृढ़ता से लगे रहो, अपना सत्व अपना मनसतत्व शुद्ध रखो। किसी से ईर्ष्या मत करो, किसी से द्वेष मत करो। वैदिक जीवन पद्धति को भले प्रकार जानो और उसे ही अपनाओ, आपस में संवाद करो प्यार से बोलो, प्यार से रहो, सत्य प्रेम को अपनाओ और एक दूसरे से दंभ त्याग सरलता का व्यवहार करो तभी आर्य जन आर्यत्व में स्थिर रहते हुए स्वय उन्नत होंगे विकसित होंगे और आर्य जीवन का विकास कर सकेंगे। आर्यों का सज्जनों का श्रेष्ठजनों का संगठन ही आर्यसमाज है इस समाज की पवित्रता आर्यजनों के जीवन व्यवहार पर निर्भर है। आर्यजनों का जीवन व्यवहार ही आर्यत्व का प्रसार करेगा। यह है सुन्दर जीवन का आकर्षक सौन्दर्य जो सब को अपनी ओर आकर्षित करेगा, अवश्य आकर्षित करेगा। आर्यसमाज के काम का प्रसार, आर्यत्व का प्रसार है। आर्यसमाजी रहना पर्याप्त नहीं। दिव्यगुण धारण करके आर्य बनने से ही आर्यत्व फैलेगा, अवश्य फैलेगा। आर्यत्व को फैलाना भगवान का कार्य है, इस कार्य को करने में ही आर्य का गौरव है। यही आर्यसमाज का मुख्य कार्य है। यह कार्य कैसा हो रहा है? इस पर टिप्पणी लिखना इस लेख का उद्देश्य नहीं, [illegible] सब जानते ही हैं।

आर्य बनता है आर्य भगवान के दिव्य गुण अपनाने से, उन्हें अपने जीवन व्यवहार में लाने से, आयसमाजी बन जाता है किसी समाज को चन्दा देने मात्र से, जो मासिक चन्दा भी शतांश देना प्राय. आर्यसमाजी लोग अपनी जिमेदारी बहुत कम समझते हैं और चूंकि बेचारे आर्यसमाज के संगठन के पास सिवाय जनमत के और कोई अन्य सरकारी शक्ति तो है नहीं इस लिये भय रहते हुए निश्चिंत रहते हुए, शतांश से कम बहुत ही कम चन्दा वे लोग अधिकतर देने वालों में हैं जो इन्कम टैक्स के लिए जो ब्यौरा देते हैं वह अलग रह जाता है और आर्यसमाज बेचारे की झोली में शतांश से बहुत कम ही चन्दा देते हैं। प्यारे आर्य बन्धुओ, आप विश्व को आर्य बनाने निकले हो पर अपना आप न देख पाये। परिणाम यह हुआ है कि ये अपने आप तो आर्यत्व के प्रसार का श्रेय न प्राप्त कर सके, और आर्य-समाज का संगठन ढीला पड़ना। आज धनवान आर्यसमाज अपने बालक बालिकाओं को अंग्रेजी पबलिक स्कूलों में जो प्राय: अंग्रेज ईसाई चला रहे हैं उन में आर्य समाजियों की सन्तान धर्म च्युत और धर्मभ्रष्ट हो रहो है और माता पिता अब मम्मी पापा कहलाने में लजाते नहीं हैं, अपित्र अपना गौरव ही समझ रहे हैं। यदि धनवान लोग जनता के सरकारी स्कूलों में अपनी अमीरी के थोथे अभिमान के कारण, कहीं बालकों में कहीं समता और स्नेह के भाव न आ जाएं, इस लिये धन के नशे में अंग्रेजी स्कूलों में बालकों को स्वयं आर्यसमाजी होते हुए भी अपने आर्य समाज की पाठशालाओं में नहीं पढ़ाते और इन्हें ऐसे ही "बढ़िया" और "सुव्यवस्थित" स्कूलों में पढ़ाने में अपनी शान समझे हुए हैं। स्मरण रहे कि ये लोग आर्य समाजी हैं आर्य बनने की इन में रुचि तक नहीं।

मनुष्य आर्य बनता है, आर्य भगवानके निजी गुण अपनाने से ही भगवान के दिव्य गुण दिये गए हैं, सप्तव्याहृतियों में, वे हैं '—भू: भुव: स्व: मह: जन: तप: और सत्यम्' सत्य, चेतनता, आनन्द, महानता रचना की क्षमता, सत् ज्ञान और ऋत। ये गुण अति संक्षेप में सत्य शिवं सुन्दरम् सच्चिदानन्द, सत्यं शिवं शाश्वतम् आनन्द रूप प्रकाशमय ज्योतिस्वरूप भगवान के हैं। इन्हें मनुष्य धारण करे। आत्मविश्वास अमरत्व चैतन्य, आनन्द आत्मतृप्ति, महासन व्यक्तित्व व्यापक प्रेम के व्यवहार से, साहस सहनशीलता उत्साह सत् ज्ञान और आत्मज्योति के रूप में। मनुष्य आत्मरूप में अमर चेतन सत्ता है वह अपना अमरत्व न भूले तो उसे चाव होगा भगवान के अनुकूल जीवनचर्या बनाने की, अपना स्वसंशोधन करने का मनुष्य जानबूझ कर अन्दर की आंखें बन्द किये हुए रह रहा है अपने कलुषों के कारण अपने आपको देखने में झिझकता है। इस प्रकार रुकावट ही निज जीवन में पा रहा है। यदि वह अपने अन्दर देखना आरम्भ करे तो उसे अवश्य स्वसंशोधन में रुचि होगी और दिव्यजनों के सम्पर्क में पावन प्रभु का सहवास अनुभव करता हुआ अपना जीवन सशक्त और सुन्दर बना सकेगा।

वैदिक संस्कृति का एक रूप त्याग

वैशेषिक दर्शनकार कणाद ने एक यज्ञ किया और उन्होंने बहुत से बड़े २ व्यक्तियों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया। यज्ञ के पश्चात जब भोजन का समय हुआ तो पूर्व योजना के अनुसार उन्होंने सभी आदमियों के हाथ कुहनी पर से इस प्रकार बन्धवा दिये जिस से वे मुड़ न सकें और यदि वे खाने के लिए हाथ मुंह में ले जाना चाहें तो वे न ले जा सकें। लोग अपना अपमान देखकर कणाद जी पर बहुत अप्रसन्न हुए। पर वहां पर विद्यमान पहरेदारों के भय से उन्हें उनकी सब आज्ञाओं का पालन करना पड़ा। उन्होंने आसनों पर बैठ कर भोजन करना आरम्भ किया पर जब हाथ मुंह में डालना चाहा तो वह ऊपर चला गया। कणाद जी ने बड़ी नम्रता से भोजन की प्रार्थना की। सब क्रोध में बोले कि 'भोजन करने को कहते हैं। जरा बतलाइये तो सही हाथ बंधे हुए हम कैसे भोजन कर सकते हैं? कणाद जी ने तब हंसते हुए कहा—'भाइयो! आप लोग भोजन करना नहीं जानते। अपने २ खाने की केवल चिन्ता करते हैं इसलिए नहीं खा पाते। भोजन की रीति यह है कि आप अपने खाने की चिन्ता न कीजिए। दूसरों को खिलाने का फिकर कीजिए। आप उन्हें खिलाइये और वे आपको।'

(भक्तराम अफ्रीका वाले)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, १३ अक्तूबर १९६३ [अंक ४१

नाम नहीं काम

अभी २ गत दो अक्तूबर के दिन सारे देश ने महात्मा गांधी जी का जन्म दिन मनाया। समारोह हुए, संस्थाओं में अवकाश हुआ। उनके जीवन पर स्थान-स्थान पर सभाएं की गईं। बड़े २ भाषण किये गये। उनके कार्य को सराहा गया तथा गुणगान किया गया। बड़े लोगों के जन्म दिन से सब को बड़ी प्रेरणा मिलती है। उनके जीवन गुणों से सुन्दर पाठ पढ़ने को मिलता है। ऊंचे लोग एक बड़ी सुन्दर पुस्तक होते हैं, जिन के पढ़ने तथा आचरण करने से दूसरों का जीवन बनता है। गांधी जी का जीवन भी पढ़ने वाली पुस्तक है। किन्तु एक बात कहने में संकोच नहीं है कि उनका आज नाम तो लिया जाता है पर उनके मार्ग पर चलने के लिए थोड़े ही तैयार होते हैं। उनका काम विरले ही करते है। नाम की भक्ति के भक्त बहुत हैं पर काम की भक्ति क विरले प्रेमी हैं। नहीं तो सोलह वर्षों के बाद भी आज हमारे देश का वातावरण एवं कार्यजीवन इतना दूषित, विकृत न होता।

महात्मा गांधी आस्तिक थे। ईश्वर विश्वास उनके जीवन का प्रधान अंग था, ईश्वर भजन प्रार्थना उनके लिए आवश्यक भोजन था। कहा करते थे—**I can live without food but cannot without prayar**—मैं खाने पीने के बिना तो रह सकता हूं, किन्तु प्रार्थना, प्रभु भजन के बिना नहीं जीवित रह सकता। कितनी प्रभु विश्वास की अटलता है? आज कितने गांधी भक्तों, उन के नाम लेने वालों, उन को अपना नेता मानने वालों के जीवन में यह प्रभु का भाव है? क्या वे भी यह कह सकते हैं! आज का युग, जीवन सर्वथा इस के विपरीत हो गया है। पता नहीं कि आज के समय में गान्धी जी को अपना गुरु, नेता मानने वाले बड़े २ लोग ईश्वर नाम से दूर क्यों भागते हैं? बापू जी के जीवन से प्रभु प्रेम का पाठ पढ़ना ही चाहिए।

गान्धी जी की सरलता, सादगी, खानपान की पवित्रता सात्विकता किसे प्रभावित नहीं करती। व्यक्ति की महत्ता कपडों से, भवनो के निवास या साज सज्जा के दिखावे से नहीं होती। महात्मा जी का परिधान कितना सादा, भोजन कितना सात्विक, रहने की कुटीर कितनी सादा थी। ये गुण आज कहां हैं? इन सोलह वर्षों मे भारत में जितनी शराब, मांस, फैशन, शृंगार तथा साज सज्जा की वृद्धि हुई है। उसे देखते किस भारतीय को खेत नहीं होता? आज शराब सस्ती है पर दूध घी माखन मंहगा है। भेड़ें बकरियां, गौएं समाप्त की जा रही हैं, फिर दूध घी ऊन कहां से आये? गान्धी जी की जीवन विशेषताएं न ले कर केवल नामस्तवन से कुछ न बनेगा! यदि देश मे गांधी जी के जीवन की प्रभुभक्ति, खान पान की शुद्धता, परिधान की सादगी, बाहिरी दिखावे के प्रति सर्वथा घृणा आ जाती तो आज भारत और भी अधिक समृद्ध होता, गान्धी जन्म दिवस तो बीत गया। आईये सारा देश उन की जीवन विशेषताओं को अपने जीवन का अंग बना कर उन के स्वप्न के भारत को लाने बनाने की भव्य भावना को पूर्ण करने में लग जाये। तभी गांधी दिन सफल होगा।

—त्रिलोक चन्द्र

मन वशीकार के तीन साधन

ज्ञान-प्राण और ध्यान [२]

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

ज्ञान के बाद मन को वश करने का दूसरा साधन है प्राण। प्राण का तथा मन का बड़ा गहरा सम्बन्ध है। यदि प्राण काबू में आ जाये तो मन वश में हो जाता है। योग में प्राणायाम का इसीलिए महत्व बताया गया है। जब प्राणायाम सिद्ध हो जाता है। प्राण को वश में करने का अभ्यास कर लिया जाता है, तब मन का वशीकार स्वयं होता जाता है। मन के वशीकार के लिए प्राण का वशीकार या मन पर अपना अधिकार करने के लिए पहिले प्राण पर अधिकार नितान्त आवश्यक है। जिन लोगोंका प्राणायाम सिद्ध नहीं है, उनके लिए मन को वश में करना कठिन ही है। इस-लिए यदि हमारा मन अपना बन जाये, इसे अपने आदेश पर चलाना चाहते है तो इसके लिए यह देखना होगा कि प्राण हमारा है, इस पर हमारा अधिकार है या नहीं? योगमार्ग पर चलने के लिए मन की सीढ़ी से पूर्व प्राण की सीढ़ी पर चढ़ना है। मन के वशीकार की घाटी तय करने से पहिले प्राण की घाटी को पार करना जरूरी है। इस बात को जाने बिना कई लोग कह देते हैं कि हम ने मन को वश में करने के लिए बड़ी कोशिश की, बड़ा अभ्यास किया, बड़े उपाय साधन बर्ते, बड़ा समय लगाया। किन्तु इस में सफलता नहीं मिली। यह तरीका ही गलत है। उन लोगो ने इस रहस्य को नहीं समझा कि प्राण का वशीकार पहिले है, मन का बाद में है। वे प्राणों का अभ्यास तो करते नहीं फिर मन को कैसे वश में किया जा सकता है? इस लिए इस आवश्यक तत्व को कभी नहीं भुलाना चाहिए कि प्राणों के वशीकार के बिना मन पर अधिकार कदापि नहीं हो सकता।

प्राणायाम के कई भेद हैं। पूरक, कुम्भक, रेचक आदि योगदर्शन मे प्राणाम के बारे मे सारा ज्ञान, विधि बड़ी उत्तमता से कही गई है। हां-एक बात का स्मरण रखिये। प्राणायाम का अभ्यास करने के लिए किसी अभ्यासी से पहिले सीखना चाहिए। इस की विधि का ज्ञान जरूरी है। बिना सीखे, ठीक विधि को जाने बिना यही प्राणायाम लाभ के स्थान पर हानि भी पहुचा देता है। प्रत्येक पदार्थ की यही बात है। उचित या ढंग के प्रयोग के बिना वही अच्छे से अच्छा पदार्थ भी हानि का कारण बन जाता है। प्राणायास तो एक विशेष विधि की प्रक्रिया है। इस में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। थोड़ी सी भी असावधानी या गलत विधि सारा काम बिगाड़ देती है। शास्त्र मे कहा गया है कि कुम्भक प्राणायाम यदि साढ़े तीन मिन्ट का हो जाये तो मन काबू में आ जाता है। किन्तु यह बात या सिद्धि प्राप्त करने में समय तथा अभ्यास की जरूरत है। धीरे २ निरन्तर अभ्यास के द्वारा यह साधना पूर्ण की जा सकती है। लगातार ३½ मिनट तक कुम्भक विधि द्वारा जब प्राणों को रोक दिया जाता है, तो मन अपने आप रुक जाता है,

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण (क्रमशः)

धर्म प्रचार के साधन

दूसरा नियम-साधन--जो उसने प्रचार के लिए ग्रहण किया, भाषा थी। वह लोगों को उन की भाषा में उपदेश देता था। यद्यपि उन दिनों संस्कृत बोली जाती थी पर बहुत थोड़ी। इस लिए प्राकृत भाषा में प्रचार आरम्भ किया। तीसरा साधन--जिसकी ओर उसकी दृष्टि गई वह यह था कि जिन लोगों को उन दिनों अछूत या पतित समझा जाता था, उनमें धर्म प्रचार का काम था। स्वाभाविक ही वे लोग इस की ओर आये और इसके सहायक बने। उसने माली लोगों को उपदेश दिया। उन लोगों में से एक सुनीतमाली हुआ है जो अन्त में उन लोगों का लीडर (नेता) या पैगम्बर बन गया था उन दिनों भी यही रोग था कि निचली जातियों को धर्म का उपदेश न किया जाये। परन्तु बुद्ध इस नाड़ी को पहिचान गया और बहुत से लोग इस की ओर आगये तथा बुद्ध-धर्म भी इसी लिए फैल गया। एक और बात जो उसने आवश्यक समझी वह बात आत्म समर्पण थी। उसने अपना जीवन अर्पण किया। उसकी स्त्री ने अपना जीवन दे दिया तथा उसके बेटे राहुल ने यही काम किया, और भिक्षुओं ने भी जीवन दान कर दिए। इस प्रकार राजाओं तथा सहधर्मियों के आत्म-समर्पण से यह धर्म फैल गया।

यही विशेष साधन थे जिन्होंने बुद्ध धर्म को सूर्य की न्याईं चमका दिया। बुद्ध ने सबसे पहिले पुरुषों को उपदेशक बनाया। फिर स्त्रियें उपदेशिकाएं बनाईं। इसके अतिरिक्त अपना आत्म समर्पण, उसके अनुयायियों का आत्म समर्पण, पतित जातियों में प्रचार और उनसे मेल मिलाप। इन सब बातों का फल यह हुआ कि करोड़ों ही आदमी इस धर्म के अनुयाई हो गये। इस के साथ ही उन्होंने विद्या के काम को हाथ में लिया। एक विश्वविद्यालय (यूनिवर्सिटी) उनकी रावलपिण्डी के पास तक्षशिला में थी और दूसरी नालन्दा में थी।

ये साधन धर्म प्रचार के लिए हैं, जिन की ओर हमें ध्यान देना चाहिए। (पूर्ण)

(पूज्य महात्मा हंसराज जी के दिये गये क्रमवार-धर्म-प्रचार के साधन-शीर्षक वाले चार ओजस्वी, खोज पूर्ण चार भाषणों में से उपरोक्त पहिला भाषण है जो आज से पचास वर्ष पूर्व आर्य समाज अनारकली लाहौर द्वारा प्रकाशित एक पुस्तिका में से लेकर आर्य जगत के भाग्य प्रेमी भाई बहिनों, युवकों के लिए प्रसाद रूप से प्रस्तुत किया गया है। कितनी प्रेरणा मिलती है। स्वर्गीय तपोमूर्ति उस महात्मा जी के दिये विचारों में आज भी आर्यसमाज में रह कर काम करने वालों के लिए कितना सुन्दर मार्ग प्रदर्शन की इस में ज्योति भरी है। आत्म समर्पण ही बुद्धधर्म का विशेष कार्य था। अपने को, अपनी स्त्री तथा बेटे को बुद्धमत प्रचार में बुद्ध ने समर्पण कर दिया। हम परसमर्पण चाहते हैं आत्मसमर्पण नहीं। दूसरे प्रचार करें, औरों के बेटे धर्म प्रचार में आयें—स्वयं अपने नहीं। कैसे काम बनेगा ? सं.

हर चे बर खुद मपसन्दी
बरदीगरां मपसन्द।

अर्थ—जो तू अपने लिए पसन्द नहीं करता वह दूसरों के लिए भी पसन्द न कर।

आर्यसमाज श्रीनगर का शानदार समारोह

दयानन्द स्कूल व समाज का प्रभाव ७५०)रु० सभा वेद प्रचार में भेंट

आर्यसमाज वजीरबाग श्रीनगर सभा की गिनी मानी हुई समाजों में एक विशेष तथा जागती हुई समाज है। यहां अपना डो. ए. वी. हायर सैकंडरी स्कूल इतना शानदार एवं प्रभावशाली शिक्षा का प्रचार प्रसार कार्य कर रहा है, जिसे देख कर बड़ी ही प्रसन्नता होती है आर्यसमाज भी काश्मीर में अपने स्थान पर बड़ी प्रसिद्ध तथा क्रियात्मिक रूप से काम करने वाली संस्था है। सारे नगर तथा जम्मू काश्मीर में इस समाज की धाक है। समाज के प्रधान श्री अमोलकराम जी सेठी तथा मन्त्री श्री प० राधाकृष्ण जी गंजू प्रिंसिपल डी.ए.वी. हायर सै० स्कूल एवं उपप्रधान श्री चूनीलाल जी खन्ना हैं। श्री पं० गुरुप्रसाद जी भी सुन्दर कार्य करते हैं सारे स्कूल का स्टाफ तथा समाज के अधिकारी सदस्य, माताएं बहिनें बड़ा उत्तम काम करती हैं। ऐसे २ यदि सर्वत्र हमारे स्कूलों के प्रिंसिपल तथा समाज के प्रेमी हों तो संस्थाएं व समाजें प्रगति कर सकती हैं।

इस वर्ष का समाज का वार्षिकोत्सव गत १७ सितंबर से ता. २२ तक होता रहा। इस बार आर्य प्रादेशिक सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता मान्यवर श्री प. खुशी राम जी शर्मा स्वयं ही वहां उत्सव से पूर्व वेद कथा करने पधारे हुए थे। उन के साथ श्री पं. हजारी लाल जी भजनोपदेशक थे। श्री पण्डित जी की मधुर कथा में कितना रस, आनन्द तथा प्रभाव था—यह तो वहां के नर नारियों के द्वारा ही परिचय मिलता है अमृत का प्रवाह ही चलता रहा। नर नारियों का तांता ही बंधा रहता था कथा की समाप्ति पर जो आनन्द वातावरण एवं जनता भी उपस्थितिका दृश्य था-- वह तो सारे वातावरण व नगर की जनता के जीवन में याद रहेगा। उत्सव ठाठ का था। स्कूल का पारितोषिक वितरणोत्सव माननीय श्री सादिक जी की प्रधानता में सम्पन्न हुआ। जल्सा हर प्रकार तथा विचार से कामयाब रहा। खूब समारोह था। रविवार का ऋषि लंगर तो कमाल ही कर गया। श्रद्धा अपार थी। स्कूल के छात्रों, अध्यापकों तथा समाज की माताओं बहिनों तथा सज्जनों ने जो सेवा की, वह प्रशंसनीय थी। इस के लिए स्कूल के प्रिंसिपल श्री. 'गंजू' जी को बार २ बधाई देते हैं। स्कूल तथा समाज के सहयोग समन्वय को देख कर चित बड़ा प्रसन्न होता है। ऐसी संस्थाओं पर सारे समाज को मान है।

आर्य समाज की ओर से सभा के वेद प्रचार के लिए श्री पं. खुशी राम जी शर्मा अधिष्ठाता वेद प्रचार को ७५०) रु भेंट किये गये।

मसव्वर खैंच वहतसवीर,
जिस में यह रसाई हो।
उधर हो हाथ में खंजर,
इधर गर्दन झुकाई हो।
जिन्दगी जिन्दा दिली का नाम है।
मुर्दा दिल खाक जिया करते हैं!
गाफिल तुझे घड़याल,
देता है मनादी।
गरदूं ने घड़ी उमर की,
इक और घटा दी।

सत्यार्थ प्रकाश के अन्त में ऋषि दयानन्द ने जहां स्वमन्तव्यामन्तव्यों की घोषणा की है, उसके आरम्भ में भर्तृहरि का यह प्रसिद्ध श्लोक लिखा है—

निन्दन्तु नाति निपुणाः यदि वा स्तुवन्तु।
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा।
न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥ नीतिशतक

नीति निपुण लोग चाहे मेरी निंदा करें या स्तुति, लक्ष्मी चाहे आये या चली जाय, आज ही मरना हो या युगान्तरों तक जीवित रहूं, परन्तु न्याय के मार्ग से मैं धीर पुरुषों की भांति कभी विचलित नहीं होऊंगा।

यदि हम महर्षि के जीवन की कुछ घटनाओं की आलोचना करें तो हमें प्रतीत होगा कि महाराज भर्तृहरि की ये पंक्तियां उन पर पूर्णतया घटित होती हैं। स्वामी जी अपनी निंदा और स्तुति के लिए सदा उदासीन रहे। उनके जीवन काल में ही उनके निन्दकों ने उनकी भर पेट निंदा की। उन्हें ईसाइयों का एजेन्ट नास्तिक और न जाने क्या २ कहा। पूना में जब उनके सत्कार का आयोजन महामति महादेव गोविन्द रानडे ने किया तो निन्दक वर्ग बिना कारण ही दाएं बाएं होने लगे। गोस्वामी तुलसी दास ने अपने मानस के आरम्भ में ऐसे ही दुष्टों के लिए लिखा है, 'जे बिनु काज दाहिने बाएं' उन्होंने एक गधे को पकड़ा और उसे गर्दभानन्द कहकर चिल्लाते हुए और गर्दभानन्द का जय-जयकार करते हुए पूना के राज मार्गों से निकले। अपमान की इस पराकाष्ठा को देखकर भी स्थितप्रज्ञ दयानन्द विचलित नहीं हुये। निंदा स्तुति के प्रति इतना वीतरागी अन्य कौन हुआ होगा।

महर्षि दयानन्द का प्रिय सिद्धान्त

(प्रो भवानीलाल जी भारतीय M. A., R. E. S)

क्या धन के प्रलोभनों की कोई कमी थी? प्रथम तो उनके पिता ही इतने सम्पन्न थे कि यदि दयानन्द वैराग्य धारण कर गृहत्याग न करते तो जीवन भर प्रभूत ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करते। पुनः उन्हें उत्तराखण्ड के एक महन्त ने अपना शिष्य बनने का प्रलोभन दिया। जिसे स्वामी जी ने यही कह कर तिरस्कृत कर दिया कि यदि मुझे वैभव प्राप्ति की ही अभिलाषा होती तो मेरे पिता जी की सम्पदा में ही क्या कमी थी? काशी के पण्डितों ने उन्हें मूर्ति पूजा विरोध को छोड़ने के लिए कहा और बदले में शंकराचार्य की राजसी पदवी प्रदान करने का आग्रह किया। तनिक विचार पूर्वक देखा जाय तो ज्ञात होगा कि किसी भी संन्यासी के लिये शंकर मठ का स्वामी होकर कोटि २ भक्तों का श्रद्धाभाजन होना और अटूट वैभव सम्पन्न बन जाना कोई सामान्य प्रलोभन नहीं था। परन्तु सर्वसंग परित्यागी परिव्राजकाचार्य, परमहंस प्रवर दयानन्द के लिये शंकराचार्य की गद्दी का क्या लोभ हो सकता था। उसने काशी के विपश्चितों की यह प्रार्थना निर्दयतापूर्वक ठुकरा दी।

प्रलोभन का एक अवसर उदयपुर में भी आया जबकि महाराणा सज्जन सिंह ने उन्हें एक लिंग महादेव के मठाधीश बन जाने की प्रार्थना की और बदले में उन से मूर्तिपूजा के खण्डन से विरत हो जाने की प्रार्थना की। परन्तु सिंह के युक्त गर्जना करते हुये स्वामी जी ने कहा, राजन मैं एक दौड़ में ही आपके राज्य से बाहर जा सकता हूं, परमपिता की आज्ञा का उलंघन कर उ के असीम ब्रह्मांड से कहां जा सकता हूं। यह थी ऋषि दयानन्द की लक्ष्मी के प्रति निर्मम निरासक्ति।

स्वामी जी के प्राण हरण की कितनी चेष्टायें उनके जीवन काल में हुईं। कभी करणसिंह जैसे विरोधी उन पर तलवार का प्रहार करने के लिये सन्नद्ध हुये तो कभी उन्हें प्रच्छन्न रूप से विष दिया गया। कभी उन पर विषैले सांप छोड़ गये और कभी उन्हें गंगा की धारा में जीवित जल समाधि दे देने के यत्न हुये। और अन्त में तो विरोधी अपने षड्यन्त्रों में सफल भी हो गये, जब कि उन्होंने महर्षि को कालकूट विष पिला कर उन्हें अमर बनाने की ठान ली। परन्तु वाह रे दयानन्द। उनके चेहरे पर क्रोध की रेखा भी नहीं दीख पड़ी। वे अपने हत्यारों के प्रति भी आशीर्वाद का भाव रखते थे। ५९ वर्ष की आयु अधिक नहीं होती। यदि महर्षि अधिक काल तक जीवित रहते तो स्वदेश के सुधार, संस्कार और पुनरुत्थान के कार्य में द्रुतगति से कार्य होता, परन्तु विधाता को यह स्वीकार नहीं था।

भर्तृहरि के उपर्युक्त पद्य की भांति महाराज को बिदुरनीति का निम्न श्लोक भी अत्यन्त प्रिय था—

पुरुषाः बहवो राजन,
सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य
वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥

बिदुर महाराज प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र से कहते हैं—हे राजन् इस संसार में प्रियवादी लोग तो बहुत से मिलेंगे, परन्तु ऐसे बहुत कम लोग होंगे जो अप्रिय परन्तु हितकारी बात को कहने या सुनने की सामर्थ्य रखें। महर्षि भी इसी प्रकार के महापुरुष थे, जिनकी बातें कड़वी अवश्य लगती थीं, परन्तु जो मानवता की चरम हितकारिणी थीं।

'एक अनुभूति'

(कु अरुण आर्या प्रभाकर, टोहाना)

तूफानी सागर के मध्य फंस जाने पर जैसे नौका डांवा डोल हो जाती है, वायु के थपेड़े खाकर जैसे वर्षा की बूंदें इधर उधर बिखर जाती हैं, चट्टान से टकरा कर जैसे जल की तेज लहर कण २ होकर बिखर जाती है, वैसे ही विवाह से पूर्व (सगाई के उपरान्त) लड़की की बुद्धि आंतरिक संघर्ष में फंस जाने से बिखर जाती है। चौबीस घंटे उसका मस्तिष्क अनेक प्रकार के विचारों ओत-प्रोत रहता है। किसी न किसी सोच में वह डूबी रहती है लेकिन आश्चर्य जनक बात यह कि वह स्वयं नहीं समझ सकती कि वह क्या और क्यों सोचती है।

उसके मस्तिष्क में यह विचार सदा समाया रहता है कि 'न जाने आगे क्या होगा?' कैसा परिवार होगा, परिवार के सदस्यों का कैसा स्वभाव होगा? उनके विचारों के साथ उसके विचारों का मेल होगा या नहीं। वो लोग उसके साथ अच्छा वर्ताव करेंगे या नहीं? इस के साथ २ वह यह भी सोचती है कि विधाता का क्या २ अद्भुत विधान है? जिस घर में उसका जन्म होता है वही विवाह के पश्चात् पराया हो जाता है। अपने माता-पिता, बहन भाई और सभी सम्बन्धी जिन्हें वह कितना स्नेह करती थी तथा उन्हें अपना समझती थी वह सब पराये हो जाएंगे। एक वह परिवार जिस से कोई जान न पहिचान वह अपना हो जाएगा। आखिर ये सब क्यों? अन्त में यही कहकर अपने को सन्तुष्ट कर लेती है कि प्रारम्भ से संसार का ऐसा ही नियम है।

सदाचारी बनो

(ले० श्री प्रभुदीप जी उपमन्त्री आर्यसमाज समस्ती पुर विहार)

आर्य कुमारो एवं कुमारियो! आज मैं आप को सदाचार के सम्बन्ध में कुछ बतलाऊंगा। एक महान व्यक्ति ने कहा है—'यदि धन चला जाये तो कुछ भी हानि नहीं, स्वास्थ्य चला जाये तो थोड़ी हानि है, पर यदि चरित्र का नाश हो जाता है तो बहुत बड़ी हानि हो जाती है। आप सोचेंगे कि ये एक अजीब बात है संसार मे धन के लिए होड़ सी लगी है। इस धन को प्राप्त करने के लिए मनुष्य जमीन और आसमान एक कर रहा है। और धन के बिना संसार का काम चलता भी नहीं। पर इस कथन में कवि धन की हानि को हानि नहीं बतलाता। कारण क्या है? धन तो आवश्यक है। धन के बिना हमारी भौतिक उन्नति नहीं हो सकती। और बगैर भौतिक उन्नति किये हम आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकते। तो मालूम हुआ कि धन जिसकी इतनी उपयोगिता हैं, उसकी इतनी उपेक्षा क्यों? क्यों ऐसा कह दिया कवि ने कि धन की हानि हानि नहीं। आइए, मैं आप को बतलाऊं कि धन की हानि से मनुष्य का कुछ भी नुकसान नहीं होता यदि उस के पास उस का स्वास्थ्य और सदाचार रूपी धन मौजूद होता है। मान लो आप के पास अपार धन सम्पत्ति है, पर आप का स्वास्थ्य बिगड़ा पड़ा है। तो यह धन किस काम का। आप उसका उपभोग नहीं कर सकते। दान-दक्षिणा परोपकारादि भी आप नहीं कर सकते क्योंकि आप [सदाचारी नहीं हैं। और यदि आप के पास स्वास्थ्य भी मौजूद है, धन भी है पर सदाचार नहीं है तो भी आप सुखी नही बन सकते। क्यों? इसलिए कि सदाचार से बुद्धि अच्छी मिलती है और बुद्धि अच्छी (ठीक) होने से सारा काम भी ठीक से चलता रहता है। बुद्धि [illegible] है तो काम भी वैसा ही बिगड़ा हुआ चला जाता है। सफलता नहीं मिलती। उदाहरण के लिए स्वयं अपने भारत वर्ष का ही शासन देख लो। इस के अन्दर धन की कमी नहीं, शासकों का स्वास्थ्य भी सुन्दर है, पर एक सदाचार की कमी है जिस से जनता सुख की सांस नहीं ले रही। लोग तबाह हो रहे हैं। भ्रष्टाचार का बाजार गर्म हो रहा है। है न ठीक? आप को ऐसे भी अनेकों व्यक्ति मिलेंगे जिनके पास सम्पत्ति भी है, स्वास्थ्य भी है पर सदाचार नहीं है और वे समाज में दो कौड़ी का भी मूल्य नहीं रखते। सदाचारी होते तो अपने धन का सदुपयोग करते और जग में अपनी अमर कीर्ति छोड़कर यश और पुण्य के भागी बनते। संसार श्रद्धा से उनके आगे अपना मस्तक झुकाता। इन दोनों के साथ साथ आप में सदाचार होता तो आप आर्य समाज मन्दिर का निर्माण कराते, स्कूल कालेज अथवा गुरुकुलों की स्थापना करते, जहां लाखों इन्सान-इन्सान बनाये जाते। मगर केवल सदाचार के न होने से आप अपने साथ औरों का भी सत्यानाश कर देते हैं। आप सिनेमा घर का निर्माण करते हैं, जहां लाखों लोग हैवानियत के मार्ग पर चल पड़ते हैं। देश जाति और धर्म सब का नाश हो जाता है। सदाचार केवल ब्रह्मचारी रहकर शुद्ध सात्विक भोजन कर लेना, बीड़ी सिगरेट का सेवन न करना, गन्दे चित्र आदि न देखना ही नहीं है। वरन सदाचार का क्षेत्र तो इतना विशाल है कि उस से संसार की सारी अच्छाइयां आ जाती हैं। किसी निर्बल को सताया जा रहा है और आप चुपचाप देख रहे हैं तो सच मानिये आप अपने सदाचार से गिर रहे हैं। आपके पड़ोस में कोई भूखे नंगे मर रहा है और आपके हृदय मे दया नहीं उमड़ती, अपने धन को तब लुटा देने की एक टीस नहीं पैदा होती तो सच जानिए आपका सदाचार गिर रहा है। आपके मुहल्ले में ब्लेक मार्केटिंग का बाजार गर्म है। चोरी के मुफ्त मालों से घर का घर भरा जा रहा है आप फिर भी चुप हैं तो निश्चित जानिए आप अपने सदाचार से गिर रहे हैं। आप राष्ट्र के साथ पाप कर रहे हैं। देश द्रोही कर्मा सदाचारी नहीं हो सकता। पर आज तो सदाचार का डेफिनिसन ही गलत बन गया है। इसलिए तो रोग पहचान में आने पर भी उसकी सफल चिकित्सा नहीं हो रही। सारा देश रसातल को जा रहा है। परिभाषा ही अशुद्ध कर ली है हमने तो परिणाम बुरा होना ही है। सचमुच चरित्र का धनी आदमी दुनिया मे कभी भी अन्याय के आगे सिर नहीं झुकाता। सदाचार मनुष्य को सदैव ऊंचा उठाता है और अनाचार नीचे गिराता है। थोड़ी देर के लिए अत्याचारी बढ़ता हुआ भले ही नजर आये परन्तु अन्ततः विजय सदाचारी की ही होती है आप यह खूब समझ लें कि ईश्वर को सदाचार प्रिय होता है, कदाचार नहीं। और आप इतना समझें कि सदाचार का सम्बन्ध अध्यात्म से होता है। बिना अध्यात्मवाद का सहारा लिए मनुष्य पूर्ण रूप से सदाचारी नहीं बन सकता। फर्ज करो कि आप नगर की गली से गुजर रहे हो और ठीक उसी समय एक युवती भी वहां से गुजर रही है। आपके दिलों में उस समय कैसी २ भावनाएं पैदा हो रही हैं, कौन जानता है? स्पष्ट है कि आपके सिवा वही एक परमात्मा जो सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है, आपको अन्दर और बाहर दोनों ओर से देख रहा है। उसी नारी को देख कर एक आदमी के भीतर जो अध्यात्म वाद के मार्ग पर चलता है, 'मातृवत् परदारेषु'की भावना जागती है और दूसरे व्यक्तिके अन्दर जो कामी है,लम्पट है, कदाचारी है, जिसे ईश्वर का भय नहीं है, बुरी भावनाएं पैदा होती हैं। यद्यपि यह सच है कि वह शासन की कठोरता अथवा कानून के भय से कोई बाह्य हरकत न करे लेकिन उसका अन्तःकरण जो मलीनहो रहा है जो अन्ततः उसके विनाश का कारण बनेगा कौन रोक सकता है। सिद्ध हुआ कि सदाचारी बनने के साथ आस्तिक बनना भी अत्यन्त आवश्यक है। इस लिए उस व्यक्ति ने ठीक ही कहाहै कि चरित्र सर्वोपरि है। चरित्र का नाश हो जाने से सब कुछ का नाश हो जाता है। अतः आर्यो! आर्य कुमारो एवं कुमारियो! जीवन पर खेल कर भी सदाचार का पल्ला मत छोड़ो।

ले०—प्रभुदीप, उप-मंत्री, आर्य समाज, समस्तीपुर (बिहार)

महात्मा आनंद स्वामी जी का स्वास्थ्य

आर्य जगत को यह सुसमाचार पढ़ कर अति प्रसन्नता होगी कि स्वामी जी महाराज का प्रोस्टेट ग्लैंड्ज़ अपरेशन हैदराबाद में आज ६-६-६३ को सफलतापूर्वक हो गया है। इस समय वे स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। ८-६-६३ को मंगलवार को बड़ा अपरेशन होगा। प्रभु से उनके पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने की प्रार्थना है। जिस से कि वे भविष्य में भी जनता की अध्यात्म पिपासा को बुझाते रहें और वेद-प्रचार के कार्य मे प्रगति होती रहे।

सतोषराज

मंत्री सभा

ऋषि दयानन्द तेरी जय

(ले०—प सत्यप्रिय जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि. प्राध्यापक—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

आर्यावर्त के भाग्य विधाता महर्षि दयानन्द सरस्वती जब उद्धार के महान कार्य क्षेत्र में उतरे तब विश्व का मानव समाज अज्ञान की छत्रछाया में बैठा हुआ था। मत-मतान्तरों की थोथी मान्यताओं एवं अन्धविश्वासों ने मानव के मस्तिष्क में उथल-पुथल मचा रखी थी। सबसे बढ़कर मजहबियों के आकाश पाताल को एक कर देने वाले असम्भव गप्पों ने अन्धेर-गर्दी मचा रखी थी। ऋषिवर दयानन्द ने अपनी अनुपम विद्या, अनोखे मनन तथा अकाट्य तर्कबल से उन सब मिथ्या विचारों की निर्भीक समालोचना की। इस आलोचना से तत्कालीन समाज घबरा उठा अपने सिद्धांतों की रक्षार्थ कटिबद्ध हुआ। परन्तु समय की गति के साथ २ मानव मस्तिष्क में परिवर्तन आया। आज वे ही मजहबी भाई अपने असम्भव सिद्धान्तों को बदलने पर विवश हो गए। इस समय मेरे सामने गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित भाषा टीका सहित बाल्मिकि रामायण है। उसे देख-कर ऋषि दयानन्द के खण्डन से हुए परिवर्तन का अनुमान हो सकेगा। बहुत पहले हमारे पौराणिक भाई राक्षसों के सिरों पर सींग बताया करते थे तथा अपने साहित्य में उनके फोटो भी वैसे हो दिया करते थे, परन्तु इस रामायण में सर्वत्र राक्षसों के चित्र आर्यों के तुल्य हो हैं। यहां तक कि जहां मेघनाद का चित्र है वसे कोई शकल से राक्षस कह नहीं सकता इस रामायण में राक्षसों के लम्बे दांत भी नहीं हैं। केवल एक जगह कुम्भकरण के दिखाए हैं, परन्तु मृत्यु काल में वे टूट गये। इस प्रकार राक्षसों में से केवल कुम्भकर्ण के ही पचास प्रतिशत दांत हैं। अब आइये रावण की ओर। हमारे ये भाई रावण के दस सिर तथा बीस भुजायें मानते थे। इस रामायण में रावण के पांच चित्र हैं। उनमें से दश सिर वाले निम्न हैं। रावण की सभा में जब हनुमान को वाटिका नष्ट करने के अपराध में उपस्थित किया गया वह पृ० ६६३ पर है। पृ० १२१५ पर राम के साथ युद्ध करते हुए का तथा तपस्विनी, वेदवती जब रावण को फटकार रही है वह पृ० १४६८ पर एवं पृ० १५१५ पर सुन्दरी कन्याओं का अपहरण करते हुवे रावण का। ये चार चित्र हैं जिन में रावण के दस शिर दिखाये हैं परन्तु जब रावण सीता का हरण कर रहा है वहां पर रावण के केवल एक शिर तथा दो भुजाएं ही दिखाई गयी हैं वह पृ० ६१६ पर है। इसका मतलब यह है कि हमारे पौराणिक भाई रावण को बीस प्रतिशत एक शिर तथा दो भुजाओं वाला मानने लग गये हैं, यह हमें बड़ी प्रसन्नता है। अन्यथा इस विषय पर हम से बहुत झगड़ते थे। इसके साथ ही निम्न श्लोक पर भाष्य तथा टिप्पणी दर्शनीय है।

"ताभ्यां स परिपूर्णा-
भ्यामुभाभ्यां राक्षसेश्वरः
शुशुभेऽचल संकाश.
शृंगाभ्यामिव मन्दरः।
सुन्दरकांड १०-२२

अर्थ—उन बड़ी २ गोलाकार दो भुजाओं से युक्त पर्वताकार राक्षसराज रावण दो शिखरों से संयुक्त मन्दराचल के समान शोभा पा रहा था" इस पर सम्पादकीय टिप्पणी यह है—"यहां शयनागार में सोये हुये रावण के एक ही मुख और दो ही बाहुओं का वर्णन आया है। इस से जान पड़ता है कि वह साधारण स्थिति में इसी तरह रहता था। युद्ध आदि के विशेष अवसरों पर ही वह स्वेच्छा पूर्वक दस मुख और बीस भुजाओं से संयुक्त होता था।"

देखा पाठक गण? आप से जो बात हमारे उपदेशक कहते थे कि उस रावण के पास लोह वा काठ के बने शिर तथा भुजा होंगे युद्धादि के अवसर पर उन्हें धारण करने पर विजय होना सरल होता होगा। एक तो शत्रु डर जाता होगा। दूसरे असली शिर का पता न होने से मृत्यु का भय कम रहता होगा इत्यादि अब उसके दो शिर होने में वे युक्तियें हमारे पौराणिक भाइयों के गढ से पुस्तकों में आने लगीं परन्तु इतना होने पर भी सम्पादक जो से यह पूछना है कि यदि युद्धादि के अवसर पर ही दस शिर तथा बीस बाहु धारण करता होगा तो श्रीमान जी जहां हनुमान रावण के दरबार में लाया गया वहां दस शिर क्यों फिट कर दिये। जब सीता का हरण कर रहा था, क्या तब साधारण स्थिति थी तथा अन्य सुन्दरी कन्याओं को हरते समय क्यों दसशिर चिपका दिये सीता हरण समय की तरह स्वाभाविक एक शिर तथा दो भुजायें क्यों न रहने दीं। अस्तु टिप्पणी में भी आप ने 'साफ छिपते भी नहीं तथा सामने आते भी नहीं' लोकोक्ति को चरितार्थ कर दिखाया है।

इस के अतिरिक्त रामायण में कई स्थल ऐसे हैं जिन में धर्मात्मा मर्यादा पुरुषोत्तम राम को मांसाहारी तथा शराबी बताया गया हमारे पौराणिक भाई प्रक्षिप्तस्थलों को भी उसी रूप में मानते थे, परन्तु जब ऋषि दयानन्द की तर्क पूर्ण एवं अलंकार युक्त वर्णन शैली उन के सामने आयी तो वे भी प्रभावित हुये बिना न रह सके। हमें महती प्रसन्नता है कि ये आज ऐसे स्थलों के अर्थ उल्टे से सीधे कर महर्षि का अनुकरण करने लग गये। देखिये।

'ऐणेय मांसमाहृत्य शालां यक्ष्यामहे वयं
कर्तव्य वास्तु शमनं सौमित्रे चिर जीविभि'। अयोध्याकां ५६-२२

अर्थ सुमित्रा कुमार? हम गजकन्द का गूदा ले कर उसी से पर्णशाला के अधिष्ठाता देवताओं का पूजन करेंगे। क्योंकि जीवन की इच्छा करने वाले पुरुषों को वास्तुशान्ति अवश्य करनी चाहिये।' इस पर टिप्पणी निम्नलिखित है—

'यहां—ऐणेयं मांस का अर्थ है—गजकन्द नामक कन्दविशेष का गूदा। इस प्रसंग में मांस परक अर्थ नहीं लेना चाहिये। क्योंकि ऐसा अर्थ लेने पर 'हित्वा मुनिवदामिषम'(२।२०।२६),'फलानि च मून्यानि भक्षयन् वने' (२।३४।५६), तथा 'धर्ममेवा चरिष्यामस्तत्र मूलफलाशनाः' (२।५४।१६) इत्यादि रूप से की हुई श्री राम की प्रतिज्ञाओं से विरोध पड़ेगा। इन वचनों में निरामिष रहने और फल मूल खाकर धर्माचरण करने की ही बात की गई है। 'रामो द्विर्नाभिभाषते' (श्री राम दो तरह की बात नहीं करते हैं, एक बार जो कह दिया वह अटल है) इस कथन के अनुसार श्री राम की प्रतिज्ञा टलने वाली नहीं है' और भी देखिये—

मृगंहत्वानय क्षिप्रं लक्ष्मणेह शुभेक्षण
कर्तव्यःशास्त्र दृष्टो हि विधिर्धर्ममनुस्मर। अ. का. ५६-२३

'अर्थ—कल्याण दर्शी लक्ष्मण! तुम गजकन्द नामक कन्द को उखाड़ कर या खोद कर शीघ्र यहां ले आवो, क्योंकि शास्त्रोक्त

(क्रमशः)

दयानन्द महाविद्यालय-सोलापुर

हवन यज्ञ और विज्ञान

लेखक—प्रो. राम प्रकाश जी M.Sc. (Hons) दयानन्द कालेज अम्बाला। पं. सख्या १२४ मूल्य १) रुपया।

प्राप्ति स्थान :—(१) श्री जयदेव जी आर्य M.A. साहित्य मन्त्री पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद ग्राम बेलरखा तहसील नरवाना जिला संगरूर। (२) लेखक से भी पुस्तक मिल सकती है। (३) आर्य युवक समाज सैक्टर २२ चण्डीगढ़, व श्री बीरू राम जी M.A. Govt. School करनाल।

पुस्तक पर कुछ सम्मतिया :—

इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ कर प्रतीत हुआ कि इस पुस्तक का लेखक कितना महन मनन करने वाला अनुसंधान पूर्ण विज्ञान वेत्ता है। आप का यह प्रशस्त सर्वसाधारण और वैज्ञानिकों के लिये अत्यंत लाभप्रद है। इस के लिये आज का वैज्ञानिक बहुत आभारी रहेगा। पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज

'यह पुस्तक हवन यज्ञ का वैज्ञानिक रूप बहुत अद्भुत तथा अमूल्य ढंग से देती है। आप ने यह पुस्तक लिखकर आर्य समाज की ही नहीं अपितु मनुष्य मात्र की सेवा की है मैं यह चाहता हूं कि यह पुस्तक प्रत्येक स्कूल कालेज में प्रत्येक भारतीय का इसे पढ़कर अपना मस्तक ऊंचा करना चाहिये। यदि अंग्रजी में इस का अनुवाद हो जाए तो विदेश में बहुत जा सकती है।' श्रद्धेय आचार्य भगवान दास जी सोलापुर

'हवन यज्ञ और विज्ञान पुस्तक लिखकर मेरे अभिन्न बन्धु प्रियतम सखा प्रो० राम प्रकाश जी आर्य (M.ScHons) ने आर्य समाज साहित्य में अपने विषय की यह बेजोड़ पुस्तक कही जा सकती है।

आर्य सार्वदेशिक सभा को चाहिये ... अंग्रेजी आदि ... भ... करवा कर ... पुस्तक प्रचारित करे। मराठी ... में पुस्तक का अनुवाद मध्य दक्षिण (हैदराबाद) सभा के कर्मठ नेता डा० डी. आर. दास करेंगे। श्री राम प्रकाश जी आर्य जाति की आशा की ऊषा हैं। यह पुस्तक आशा की ऊषा की सुनहली किरण है। यह सारी सामग्री महत्वपूर्ण व उपयोगी है। प्रत्येक आर्य को विशेषतया उपदेशकों को इस का गम्भीर स्वाध्याय करना चाहिये।'

प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु दयानन्द कालेज शोलापुर

नक्कारा धर्म का बजता है
आये जिस का जी चाहे।
सदाकत वेद अकदस
आजमाये जिसका जी चाहे॥

आर्यसमाज किला जालन्धर का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज किला जालन्धर नगर का वार्षिकोत्सव दिनांक ६,७, वा ८ दिसम्बर को समारोह पूर्वक साईंदास ऐंग्लो संस्कृत हायर सैकेण्डरी स्कूल के उद्यान में मनाया जाना निश्चित हुआ है। उत्सव से पूर्व दिनांक १३ नवम्बर से ३० नवम्बर तक पृथक्-पृथक् मुहल्लों में प्रचार होगा।

१ दिसम्बर से ६ दिसम्बर तक कथा का प्रबन्ध विक्रमपुरा में स्थित नए समाज मन्दिर में किया गया है। ६ दिसम्बर को नगर कीर्तन का जलूस बड़ी धूम-धाम से निकलेगा। इसके पश्चात् तीन दिन तक उत्सव होगा। उत्सव में श्री सूर्य भानु जी उपकुल पति कुरु क्षेत्र विश्व विद्यालय, श्री प्रि० दीवान चन्द जी भूतपूर्व उपकुलपति आगरा विश्व विद्यालय, श्री म० देवीचन्द जी प्रधान दयानन्द साल्वेशन मिशन श्री प्रि० रलाराम प्रधान प्रादेशिक सभा श्री स्वामी ध्रुवानन्दजी प्रधान सार्वदेशिक सभा श्रीप्रकाश वीर जी शास्त्री संसद् सदस्य श्री ज्ञानचन्द जीअधिष्ठाता ब्रह्म महाविद्यालय हिसार, श्री रामगोपाल जी शाल वाले मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्री पं० खुशीराम जी वेदप्रचार अधिष्ठाता प्रा० सभा, श्री पं०त्रिलोक चन्द जी शास्त्री श्री पं० ओं प्रकाश जी, वा राजपाल चिमटा भजन मण्डली को निमन्त्रित किया गया है, जिनके पधारने की पूरी-पूरी आशा है। भवदीय

केदी राम शर्मा मन्त्री समाज

आर्यजगत का ऋषि निर्वाण अंक

प्रति वर्ष की भान्ति इस वार १५-१०-६३ को ऋषि निर्माण अंक ५० पृष्ठका पुस्तकाकार मे २०×३०/८ साईज में प्रकाशित हो रहा है मुख पृष्ठ पर महर्षि स्वामी दयानन्द जी का तिरंगा फोटो भी दिया जाएगा।

यह अंक ३.१०.१७ नवम्बर का सम्मिलित अंक होगा।

इस अंक को आद्योपात सुन्दर बनाने के लिए देश के अनेक उच्च कोटि के विद्वानों, संन्यासियों तथा कवियों की रचनाओं का संग्रह किया गया है।

अतः आर्यसंस्थाओं, समाजों स्कूलों और कालिजों के अधिकारियों से बलपूर्वक अनुरोध है कि वे सर्व साधारण सदस्यों और स्त्री, पुरुषों में बाटने के लिए अधिक से अधिक आर्डर २८.१०.६३ तक सभा कार्यलय में देने की कृपा करें। बाद के आर्डरों का ठीक समय पर पालन करना कठिन होगा। विज्ञापन दाताओं व व्यापीरियों के लिए सुनहरा अवसर है।

लेखक महानुभाव और कवि अपनी २ रचनाये २०.१०.६३ तक भेज दें। —व्यवस्थापक

आवश्यकता

आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी के लिए प्रौढ़ वयस्क अधिष्ठाता की आवश्यकता है। चूंकि अनाथालय का काम है इस लिए अगर कोई सज्जन निशुल्क सेवा कार्य करना चाहें तो अति कृपा होगी। वरना कम से कम वेतन वाले सज्जन निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें। मैनेजर आर्य अनाथालय फिरोजपुर छावनी।

शोक प्रस्ताव

आर्यसमाज कालिज विभाग गुरदास पुर ने अपने साप्ताहिक सत्संग में डा० दीवानचन्द जी भंडारी की धर्मपत्नी और श्री बलदेवसिंह जी भंडारी वकील मैनेजर डी. ए. वी. हायर सैकण्डरी स्कूल गुरदासपुर की माता श्रीमती हरदेवी जी के देहांत पर गहरा शोक प्रकट किया और परमात्मा से प्रार्थना की गई कि मृतक की आत्मा को मुक्ति प्राप्त हो और उनके सम्बन्धियों को इस शोक को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

—राम शरणदास मंत्री समाज

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्य जगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टेलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे | वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ४२) रविवार ४ कार्तिक २०२०— २० अक्तूबर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

द्यौः पिता पृथिवी माता

वह द्यौ :—प्रकाश का भण्डार परमात्मा हमारा सब का पिता है, रक्षक है, पालन करने वाला है और यह विशाल पृथिवी धरती हमारी सब की माता निर्माता है। अन्नादि विविध वस्तुओं से पोषण करती है हम सारे भाई हैं—फिर वैर क्यों ?

यथा अभिचक्र देवा:

देवा :—दिव्यगुणों वाले देवगण यथा—जैसे अभिचक्र—जीवन का व्यवहार करते आये हैं। देवलोग भी यही कहते हैं कि प्रभु सब का पिता और धरती सब की मां है। हम सारे परस्पर भाई भाई हैं हम एक ही विशाल परिवार हैं।

तथापि कृणुता पुन:

हे विश्व के लोगो। उसी प्रकार से आप लोग भी करते रहो सारे आपस में भाई बहिन बन कर रहो या वैर विरोध, लड़ाई झगड़ा कर बुरा करते हो। सब एक हो।

अ थ र्व वे द

वेदामृत

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः॥ साम० उ० प्र० १ म० १

अर्थ—(सः) वह परमेश्वर (न.) हमें (पवस्व) प्रदान करे (शं) कल्याण (गवे) हमारे गोधन के लिए तथा (शं) कल्याण करे (जनाय) सारे जनसमाज के लिए एवं (शं) सुखी करो (अर्वते) अश्व मंडल के लिए। सुख और कल्याण करो (राजन्) हे प्रकाशमय प्रभो ! (ओषधीभ्य.) तमाम ओषधियों और वनस्पतियों के लिए। हमारे लिए गौवें, जनसमाज, अश्व पशु तथा सारी ओषधियां हमें सुख देने वाली हों।

भाव :—परमात्मन ! आपने अपनी दया, अनुकम्पा से हमें क्या २ सुन्दर पदार्थ प्रदान नहीं किया। अमृतमय मीठा दूध देने वाली गौएं प्रदान कीं। कितना जनसमाज फैला दिया। यह तेज चलने वाले अश्व भी तो हमारे निमित्त ही तो आपने दिये। नाना प्रकार की विविध तथा विचित्र २ जड़ी बूटियां वनस्पतियां औषधियां भी तो आपकी कृपा का ही प्रसाद हैं। इन से हमारा कितना महान लाभ होता है। सब कुछ हमारे लिए है। किन्तु हे देव ! आप से यह भी प्रार्थना करते हैं कि ये सारे पदार्थ हमारे जीवन के लिए शांतिदायक हों, सुख देने वाले बनें तथा इन के द्वारा सदा हम कल्याण प्राप्त करते हैं। हमें ऐसी ज्ञान बुद्धि प्रदान करें जिस से हम इन का भली प्रकार उपयोग कर सकें। इन से अपना तथा समाज का भला ही करते रहें—सं०

ऋषि दर्शन

ब्रह्मणोऽनन्तत्वात्

ब्रह्म अनन्त है। उस भगवान् का उस की महिमा तथा उस के ऐश्वर्य का पार, अन्त कौन पा सकता है। जिस का अन्त होगा वह सान्त होता है। किन्तु ब्रह्म तो अनन्त है।

स एव दधे

इस सारे विशाल, विविध रूप ब्रह्माण्ड को वही भगवान धारण करता है। सर्वाधार तथा वही सब का धारक भी वही परमेश्वर है। उस के सिवा और कोई नहीं धारण कर सकता—

अस्य सर्वस्याध्यक्ष:

इस सारे विश्व का अध्यक्ष भी वही प्रभु है, वही सब का एक मात्र स्वामी है। प्रजापति है हम सब उस की प्रजा हैं। अमृत सन्तान हैं। वही हमारा अध्यक्ष है।

भा ष्य भू मि का

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री

सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

दर्शन-सिद्धान्त

(लेखक—डा० शंकरदास जी मेहरा लारेंस रोड अमृतसर)

आर्ष ग्रन्थों में दर्शनों (शास्त्रों) का बड़ा महत्व है। उन में समस्त विचारणीय आध्यात्मिक विषयों पर भिन्न २ दृष्टिकोण से विज्ञान और तर्क सहित विचार किया गया है। उन में सांसारिक जीवों की लौकिक उन्नति और सब प्रकार के दु:खों से मुक्त होकर जीवन में ही अभ्युदय और मुक्ति की प्राप्ति के उपाय बताये गये हैं।

मृत्यु के पश्चात् विदेह मुक्ति के ही लिए नहीं अपितु मृत्यु से पूर्व जीवन मुक्त होने के लिए मुमुक्षुओं का पथ-प्रदशन किया है। इस पर भी न तो भौतिकवाद को बहुत महत्व देकर अध्यात्मवाद को गौण बनाया गया है और न ही आध्यात्मिक दृष्टि की चकाचौंद में जीवन की भौतिक आवश्यकताओं को भुलाया गया है। अपने इन अत्यन्तावश्यक गुणों के कारण दर्शन जगत प्रसिद्ध हैं और शास्त्रकारों की दिव्य दृष्टि को सब सराहना करते हैं। लोग उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से प्रेरणा लेकर आत्मोद्धार के लिए प्रयत्नशील होते हैं। दर्शनों का अध्ययन और मनन गहरी दृष्टि से करना आवश्यक है।

'दर्शन' शब्द की व्युत्पत्ति है—'दृश्यते अनेनेति दर्शनम्' अर्थात् दूसरे के द्वारा जो देखा जाये उसे दर्शन कहते हैं। क्या देखा जाये? वस्तु का यथार्थ स्वरूप जैसे-हम कौन हैं? कहां से और कैसे आये? जगत् का वास्तविक स्वरूप क्या है? जगत् का कर्त्ता कौन है? वह चेतन है वा अचेतन? हमारा कर्त्तव्य क्या है और हमारी अन्तिम उन्नति का कौन-सा सुन्दर मार्ग है। देह के बन्धन से मुक्ति कैसे मिलती है और अन्तिम उन्नति क्या है?

इन प्रश्नों की जिज्ञासा निवृत्त होने पर आत्मा के स्वरूप का संशय रहित प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है और पूर्ण आनन्द की प्राप्ति होती है। ऐसे प्रश्नों का समुचित उत्तर देना दर्शनों का प्रधान ध्येय है जिन को जानकर बुद्धिपूर्वक अधारण करने से मनुष्य जन्म सफल करता है। दर्शन को शास्त्र भी कहा जाता है। 'शास्त्र' शब्द की उत्पत्ति दो धातुओं 'शास्' और 'शंस' से हुई है। शास् का अर्थ है आज्ञा करना और 'शस्' के अर्थ हैं प्रकट करना अर्थात् जिस के द्वारा वस्तु का स्वरूप प्रकट हो, वर्णन किया जाये, भली भान्ति जाना जाये। इसी लिए 'शंस्' धातु के अर्थ में शास्त्र का प्रयोग 'दर्शन' शब्द के साथ होता है।

'दर्शन' शब्द का अर्थ हुआ वह आर्ष ग्रन्थ जो ब्रह्माण्ड, जगत्, प्रकृति पुरुष के विशिष्ट स्वरूप का और मुक्ति के साधनों का भलीभांति अध्ययन और निश्चयात्मक साक्षात् कराये। दर्शन कार ऋषियों ने सांसारिक जीवों के उपकार के लिए निश्चयात्म विचार और अनुभव से यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया जो आज सहस्रों वर्षों के व्यतीत होने पर भी अपनी सत्ता का प्रमाण दे रहा है। उस के आधार पर अनेक दार्शनिकों ने अपने सिद्धान्तों को निश्चित और प्रचलित किया है।

पश्चिमी विद्वानों ने भी फिलासोफी शब्द की 'दर्शन' और 'शास्त्र' शब्दों से तुलना की है। कर भी सकते हैं। फिलासोफी ग्रीक के दो शब्दों 'फिलो' और सोफो' से बना है। फिलो का अर्थ है—प्रेम वा अनुराग और सोफी का अर्थ है ज्ञान विद्या अर. फिला सोफो का अर्थ हुआ ज्ञान के साथ प्रेम। ग्रीस में जो विद्वान् जीव, जगत्, ईश्वर और धार्मिक तथा सामाजिक तत्वों की छान बीन करते हैं, उन्हें फिलास्फर—विद्या-नुरागी प्रेमी कहते हैं। 'दर्शन' शब्द के 'लिए फिलासफी' शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। वास्तव में जो सिद्धान्त हमें परमानन्द परमात्मा (के साथ दु:खों से छुड़ाकर) मिलाप करा दे उसी को दर्शन फिलासफी) कहते हैं।

दर्शनों मे सब वैदिक विज्ञान और ब्रह्म प्राप्ति का मार्ग जन्म से ले कर मरण पर्यन्त, देह आत्मवादी नास्तिकों से ले कर उत्तम अधिकारी तक और ब्रह्मस्थिति तक वर्णन किया गया है। मानव की इन दर्शनों के अनुरूप भावनायें, चेष्टा में और चार प्रकार के पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की जनक हैं। इन की विरोधी भावनायें अनर्थ कारी हैं। मानव की अनर्थकारी भावनाओं, क्रियाओं के लिए ही त्रिकाल तत्वविवेकदर्शी महर्षियों ने 'दर्शन सिद्धान्त' रूप अवलम्बन प्रदान किया है क्योंकि पतित मानव के लिए इससे ऊंचा उठाने वाला और कोई मार्ग नहीं है।

बिल्ली झपट त्यार है। कबूतर आंखे बन्दकर लेता है परन्तु बच नहीं सकता। ऐसे ही सभी कुछ दु:ख हैं, संसार मिथ्या है, संसार छोड़ दो इत्यादि भ्रम जाल में फंसे रहने से हमारी हार ही होती जाती है। उठो, जागो और शास्त्रों का बुद्धि पूर्वक अध्ययन करो। मनन करने के बाद तदनुकूल आचरण कर जन्म सफल करो। मनुष्य जन्म सफल करो। मनुष्य जन्म बार २ नहीं मिलेगा। दर्शन छ: हैं जिनके नाम उनके रचिताओं सहित नीचे लिखते हैं:—

(१) न्याय दर्शन गौतममुनि
(२) वैशेषिक ,, कणाद ,,
(३) सांख्य ,, कपिल ,,
(४) योग पतंजलि ऋषि
(५) पूर्व मीमांसा (धर्म) जैमिनी मुनि
(६) उत्तर ,, वेदान्त (ब्रह्म ज्ञान काण्ड) व्यास ऋषि

ने वेदान्त दर्शन को वेदांत इस लिए कहा है कि यह वैदिक-ज्ञान अर्थात् कर्म मीमांसा से आरम्भ होकर न्याय,वैशेषिक सांख्य और योग से गुजरता हुआ अन्ततः ब्रह्म सर्व पिता की प्राप्ति करा देता है। इसीलिए इस का नाम वेदान्त है। अर्थात ब्रह्म दर्शन (वेदान्त दर्शन)। ब्रह्म प्राप्ति रूप फल प्रधान है। सांख्य और योग दर्शन विवेक और अनुभव प्रधान हैं।

न्याय और वैशेषिक बहि: ज्ञान विचार प्रधान हैं। पूर्व मीमांसा अर्थात धर्म मीमांसा बहि: वाक् (करो) और शब्द वाक् (न करो) आज्ञा प्रधान है। वास्तव में ये छः शास्त्रों के तीन जोड़े (युगल) माने जाते हैं अर्थात पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा (वेदान्त दर्शन) सांख्य और योग, न्याय और वैशेषिक। प्रत्येक जोड़े में दोनों दर्शनों के विषय का आधार तो एक होता है परन्तु उनकी विचार और क्रियात्मिक प्रणाली में भिन्नता होती है।

दर्शनों की परम्परा अर्थात कुल वैदिक ज्ञान का विज्ञान पूर्व ममांसा से आरम्भ होकर ब्रह्मसूत्र रूप वेदान्त दर्शन (उत्तर मीमांसा) में समाप्त होता है। वेदांत के कहने से ही हमें आदि मध्य और अन्त की सूचना मिलती है। जिसका आरम्भ और मध्य नहीं है उसका अंत भी निराधार और निरर्थक हो होगा। इस से सिद्ध होता है कि पूर्व मीमांसा (धर्मसूत्र) न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग और वेदांत (ब्रह्मसूत्र) एक ही जीने के क्रमश: पग हैं। इन पर क्रमश: एक से दूसरे पर चढ़ा जा सकता है। क्रमशः

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २० अक्तूबर १९६३ [अंक ४२

राष्ट्रपति जी का सन्देश

हमारे राष्ट्रपति पूज्य श्री डाक्टर राधाकृष्णन जी संस्कृत तथा इंगलिश दोनों के माने हुए विद्वान हैं। पूर्व और पश्चिम के दर्शनों के जगत् प्रसिद्ध ज्ञाता व फिलास्फर हैं। गम्भीर चिन्तन शील, ईश्वर-निष्ठ, भारतीयता के प्रेमी तथा सरल जीवन और उच्चविचार परिशीलन की प्रत्यक्ष मूर्ति हैं। जब बोलते हैं तो सुनने वालों में जीवन चेतना भर देते हैं और जब लिखते हैं तो बहुत गहराई में जा कर पढ़ने वालों के मन एवं मस्तिष्क पर गहरी छाप बिठा देते हैं। भारतीय संस्कृति, परम्परा, दार्शनिकता, जीवन के प्रेमी हैं अनेक ग्रन्थों के लेखक हैं। ईश्वरनिष्ठा, धर्म प्रेम तथा आध्यात्मिकता तो आप के जीवन का दैनिक भोजन है। आज कल का व्यक्ति साधारण-सी ऊंची सत्ता को पाकर भगवान तथा धर्म का नाम लेने से ही इन्कार कर देता है। परमेश्वर की सत्ता मानने मे लज्जा अनुभव करते हैं। धर्म उन को अफीम की गोली प्रतीत होने लगता है। किंतु इतने महान् राष्ट्रपति के सर्वोच्च आसन पर समासीन होने पर भी माननीय राष्ट्रपति जी के जीवन में प्रभु तथा धर्म के साथ कितना अटूट प्रेम है कि आज के भौतिक युग में इस विश्व की सारी अशान्ति को दूर करने तथा आक्रमण कारियों के अन्यायभरे आक्रमणों को रोकने में भी ईश्वर विश्वास एवं धर्म भावना की बड़ी आवश्यकता है।

बम्बई के एक धार्मिक सम्मेलन में आप ने अपना जो गम्भीर, प्रभाव शाली तथा धर्म भावना से भरा जो जनता को उपदेश-सन्देश दिया है। जिस में जीवन में प्रभु विश्वास, धर्माचरण लाने पर जोर देते हुए उपनिषदों के कितने ही सुन्दर प्रमाणों को प्रस्तुत कर के आज के कोरे भौतिकवाद में फंसे हुए जन समाज को सचेत करते हुए जो कुछ भी कहा है—वह सुनहरी अक्षरों में लिखा जाने वाला प्रवचन है। आपने भाषण में कहा कि—

लोगों को धर्म पर दृढ़ रहना चाहिए और परमात्मा पर विश्वास रखना चाहिए। इस विषम समय में जबकि देश को विपत्तियों भय का सामना हो, तो इन बातों की विशेष रूप से आवश्यकता है। यदि हम धर्म पर चलें तो हम हर प्रकार के आक्रमण का मुकाबिला कर सकेंगे। धर्म का अर्थ अपने आप पर संयम, वशीकार करना और दान करना है। यदि राष्ट्र विजय चाहता है तो उसे धर्म के लिए कार्य करना होगा। हमें इस दुनिया में परमात्मा पर अपना विश्वास सदा कायम रखना चाहिए। धार्मिक प्रवृत्ति केवल इसी रूप मे रह सकती है।

इस से बढ़ कर ईश्वरनिष्ठा और धर्म में अटूट श्रद्धा और अधिक क्या हो सकती है। ये विचार किसी साधारण व्यक्ति के नहीं प्रत्युत उस महान व्यक्ति की ओर से कहे गये हैं जो हमारे पैंतालीस करोड़ जनसंख्या रखने वाले भारत जैसे विशाल देश का माननीय राष्ट्रपति हैं। केवलमात्र भारतीय जनता का ही पूज्य नहीं अपितु जिन के उच्च विचारों के प्रति आज का सा पश्चिम और पूर्व का विश्व भी श्रद्धा से मस्तक झुका देता है गत दिनों जब आप यूरोप की यात्रा पर गये तो वहां आपने व्यक्तित्व, गम्भीर प्रवचनों तथा आदर्श जीवन की सब पर स्थायी, गहरी छाप लगा कर आवे। धर्म और प्रभु विश्वास जीवन के प्रमुख अंग हैं। भारतीय सभ्यता, वैदिक मर्यादा में यही दोनों तत्व विश्व शान्ति, व्यक्ति समष्टि के कल्याण के लिए बड़े आवश्यक हैं। उपनिषदों का यही अध्यात्मवाद है। आज के भोगवादी जीवन और मायामय युग में सुख की सारी सामग्री है, पर जीवन की शान्ति नहीं है। मानवता मौन हो गई है, दानवता दनदना रही है। भोगों का भाग्य भरपूर है, आत्मिकभाव भाग गया है। चारों ओर भय, त्रास, स्वार्थ, लिप्सा की सत्ता है। तभी आज की दुनिया नरकधाम बनती जा रही है। इसे बदलने के लिए हमें मान्य राष्ट्रपति जी के उपदेश पर चलते हुए धर्मभाव, ईश्वर निष्ठा को जीवन के प्रत्येक कार्य में लाना होगा। यतो धर्मस्ततो जयः धर्म चर, योऽसौ भूमा तत् सुखम् नाल्पे सुखमस्ति। आओ! ईश्वर प्रेमी तथा धर्मी बनें।

—त्रिलोक चन्द्र

ईश्वर विश्वास से निर्भयता का प्रसाद

तर्क के साथ श्रद्धा भी आवश्यक है

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. सभा प्रधान)

माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा एक विद्वान्, गम्भीर चिन्तनशील, सौम्यता सरलता एवं सादगी की सजीव मूर्ति हैं। सात्विक वृत्ति की तो पराकाष्ठा है। सारी आयु शिक्षा के क्षेत्र में गुजारी है। निरुक्तकार यास्कमुनि के शब्दों में आचार्य हैं। जिन्होंने आचार के शिक्षण में, बुद्धि के संचय तथा विद्या भण्डार के प्रसाद बांटने में जो कार्य किया व कर रहे हैं—उस की सर्वत्र प्रशंसा ही होती है। सारे समाज को ऐसे २ सच्चे, मनसा, वचसा, कर्मणा एक आदर्श जीवन के नेताओं पर बड़ा मान है—आप के उपदेश समय २ पर जगत् के प्रेमी पाठको की सेवा में हम पहुंचाते रहते हैं। बड़ों की हर बात बड़ी होती है—सं.

वेद में मन्त्र आता है। स्वामी दयानन्द जी ने अपने ग्रन्थ ऋग्वेद भाष्य भूमिका में भी इसे दिया है। यतोयतः समीहसे ततोनोऽभयं कुरु—इसका अर्थ यह है कि हे प्रभो! जहां तक तेरी सृष्टि है, वहां से निर्भय हो जाऊं। मुझे जीवन के क्षेत्र में काम करते हुए किसी प्रकार का भी भय न प्रतीत हो। सर्वत्र और सर्वथा ही निर्भीक होकर अपनी बात कहता जाऊं, काम करता रहूं तथा निर्भय होकर जीवन यात्रा में आगे ही आगे बढ़ता रहूं। किसी भी ओर से अथवा किसी भी प्रकार का भय मुझे जीवन पथ से विचलित न करने पाये। मेरे आरम्भ किये हुए कार्य मे बाधा न पहुंचा सके तथा मुझे अपना दास न बना सके। मैं भय की अवस्था में भी अविचल चट्टानकी भांति अपने ध्रुव धारणा पर ध्रुव बनकर निश्चल बना रहूं। यह सुन्दर भाव वेद के इस मन्त्र में हमें जीवन में मिलता है। इसे जीवन में धारण किये

(शेष पृष्ठ ५ पर)

मसीह के उद्देश्य विषयक एक विचार सुना जाता है और जो अंजील मे भी देखा जाता है। वह यह है कि उसने पहिले यहूदियों का सुधार करना चाहा। पहिले उसके चित्त में यह भाव नहीं था कि मैं सारे संसार के लिए प्रचार करूगा। इसके विषय में एक घटना भी है। कहते हैं कि एक दिन एक भिन्न धर्म की स्त्री मसीह के पास गई और उससे कुछ पूछा। तब मसीह ने कहा कि यह कैसे हो सकता है कि मैं सुअरों के आगे मोती फेंकू। पहिले यहूदियों को दे लूं, फिर यदि बचा तो तुम ने ले लेना। मानों पहिले उसके मन में यह कभी आया ही नहीं था कि उसने दुनियां में उपदेश करना है। परन्तु फिर कालान्तर में उसका उद्देश्य बदल गया। उस के विचारों में भी भेद हो गया और उसने इस मत को सारे संसार के लिए प्रकट किया। मसीह ने केवल तीन वर्ष प्रचार किया। उसने अपनी तीस वर्ष की आयु में उपदेश करना आरम्भ किया और ३३ वर्ष की आयु में उसे फांसी पर लटकाया गया।

प्रचार के तरीके—मसीह ने जो तरीके बर्ते, उन में से सब से पहिला तरीका यह था कि मसीह ने १२ शिष्य पैदा किये, जिनको हवारी कहते हैं। जिस प्रकार बुद्ध ने विशेष मनुष्य चुने, उसी प्रकार मसीह ने हवारियों को उपदेश दिया। इनकी पहिले परीक्षा की, वह शनैः शनैः एकान्त स्थान में उपदेश करता रहा। अपने विचारों का बीज इन में बोता रहा और वह यह देखता रहा कि ये मेरे भक्त हैं या नहीं? जब उसे विश्वास हो गया तो फिर मसीह ने इन को कहा कि मुझ पर विश्वास रखो और इस के लिए उस ने ऐसे हालात भी पैदा किये। जो कहानियां अंजील में लिखी हैं जिन को करामातें कहा जाता है। वे हवारियों को

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण (क्रमशः)

धर्म-प्रचार के साधन

अपने पर भक्ति और विश्वास दिलाने के लिए घड़ी गई हैं।

पितरस के साथ दरया पर जाना और पितरस को कहना कि जो मुझ पर रख कर दरया में कूदता है याद रखो कि वह पार उतर जायेगा। इसी प्रकार एक स्थान पर पांच हजार आदमी एकत्रित थे। उन को उपदेश दिया जा रहा था। परन्तु इन सब के भोजन के लिए केवल पांच रोटियां थीं। उन को चिन्ता हुई कि दिन किस भान्ति कटेगा। इस समय मसीह ने कहा कि यही पांच रोटियां पांच हजार आदमियों के लिए काफी होंगी। मसीह ने उन को विश्वास दिलाया कि आत्मा, सत्य और जीवन मैं हूं। उस ने अपने शिष्यों में इस भाव को कूट २ कर भर दिया और शिष्य उस के सच्चे अनुयायी बन गये। परन्तु समय बड़ा परिवर्तन शील है। यद्यपि उस के शिष्य दृढ़ व्रती और विश्वासी थे तो भी इन में से एक शिष्य ने उस समय की सरकार से मसीह के बारे में विरुद्ध कुछ कह दिया। उस ने कहा कि मसीह राज विद्रोह ही विचार फैलाता है। वे निस्सन्देह दृढ़ विश्वासी थे, परन्तु फिर भी इन में त्रुटियां थीं। एक बार पितरस ने कहा कि हे मसीह ! मैं तुझे न छोड़ूंगा। इस पर मसीह ने कहा कि सूर्य चढ़ने से पहले-पहले तू तीन बार अस्वीकार करेगा। जब मसीह पकड़ा गया तो सिपाहियों ने पितरस को भी पकड लिया। इस पर उसने कहा कि मैं तो मसीह को जानता भी नहीं। मुझे क्यों पकड़ा गया है। निदान कुछ देर बाद उसे छोड़ दिया गया। फिर कुछ लोगों ने कहा कि यह तो उस का अनुयायी है, इसे पकड़ लो। जब उसे फिर पकड़ा गया तो फिर उसने अस्वीकार किया। इस तरह उन में भी धार्मिक निर्बलताएं आ जाती थीं।

एक और विचार जो मसीह ने उनके बीच में उत्पन्न किया, वह यह था कि मैं फिर आऊंगा और शीघ्र आऊंगा। मैं बादशाह बनूंगा, मसीहियों को बड़े २ अधिकार मिलेंगे। मेरे अनुयायियों का सम्मान होगा। इस विचार ने इन में यह परिवर्तन कर दिया कि मसीह की मृत्यु के बाद उन्होंने एक कौंसिल बनाई। कौंसिल हवारियों की थी। ये लोग अपना सब कुछ बेच बांट कर मसीह के हो गये थे। इसी भांति वे जिस किसी को मसीही बनाते थे, उसे अपना यह सिद्धांत बतलाते कि सोच न करना चाहिए क्योंकि हमारा हादी (पथ प्रदर्शक) आरहा है और वह बादशाह बनेगा, फिर भला हम क्यों जायदादें बनायें और धन एकत्रित करें। जो मसीही होता था उसे अपनी सारी जायदाद धन-सम्पत्ति बेच डालनी होती थी। वह सब कुछ बेच कर हवारियों के सुपुर्द कर देता था। वे उसे रोटी पहुंचाते थे। वह मसीह के लिए हो जाता था। परन्तु इस पर भी वे ७०-८० की संख्या से आगे न बढ़े।

प्यारा आर्य समाज

रचयिता—राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' दयानन्द कालेज शोलापुर

अपना प्यारा आर्यसमाज मानवता का रक्षक आज !
पावन वेद नित्य को माने।
दुनिया सारी इसको जाने॥
ऋषि मुनियों की राखी लाज......

इस ने भय भ्रम सकल भगाय।
कल्पित कृत्रिम भेद मिटाय॥
तोड़े गन्दे रीति रिवाज......

जगहितकारी विश्व सुधारक।
तिमिर विनाशक ज्ञान प्रसारक॥
परोपकार मुख्य है काज......

जीवन ज्योति इस से पाई इसने जीवन सुधा पिलाई !
हिये में होता यही निनाद।
अपना प्यारा आर्य समाज॥

भरवाई जिला होशियारपुर में विशेष यज्ञ

५ से १२ अगस्त तक विशेष यज्ञ हुआ इसका सारा प्रबंध श्री पं० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री पुरोहित आर्य समाज जम्मू ने बड़ी योग्यता तथा परिश्रम से किया। यज्ञ अवसर पर अनेक विद्वानों की उपस्थिति रही तथा जनता के सहयोग से कार्य सुचारु रूप से समाप्त हुआ। श्री पं० हरिश्चन्द्र जी के सम्बन्धी तथा परिवार ने इस अवसर पर सम्मिलित परिवार का जीता जागता उदाहरण पेश किया। इस यज्ञ का विशेष प्रभाव रहा।

ईश्वर विश्वास से निर्भयता का प्रसाद

(पृष्ठ ३ का शेष)

बिना सारा जीवन अधूरा है, सारे कार्य अपूर्ण हैं तथा हमारी सारी प्रगति न होने के समान हो जाती है। मानव जीवन की कुछ मौलिक आवश्यकताएं हैं, जिन की बड़ी जरूरत होती है और जिन के प्रत्येक मानव प्रयत्न में जुटा रहता है। उन में **Food, clothing and shelter** प्रमुख हैं। खाने की सामग्री, पहिरने के लिए वस्त्र और रहने के लिए किसी मकान की भी जरूरत है। ये तीन आवश्यकताएं तो सब को समान रूप से चाहिएं ही। इन के मिल जाने पर जीवन की यात्रा कुछ सुगम बन जाती है। यही कारण है कि प्रत्येक राज्य सरकार देशवासियों की इन तीनों मौलिक जीवन की जरूरतों का खास ध्यान रखती हैं। इसे रखना ही पड़ता है। इन आवश्यकताओं के पूर्ण होने पर भी प्रत्येक को यह अनुभव बना रहता है कि मैं भय से ऊपर उठ जाऊं। यदि प्रजा को खाने पीने की पूरी सुविधा मिल गई है, कपड़ों की भी न्यूनता नहीं, रहने के लिए छोटा बड़ा स्थान सब के पास है, परन्तु सारे देश के जीवन में, कार्यों में भय का भाव भरा हुआ है, पग-पग पर भय आकर रुकावट पैदा करता रहता है। जिस के परिणाम स्वरूप में वहां का कोई कार्य भी तो पूर्ण नहीं हो पाता—तो उस देश की उन्नति कदापि नहीं होगी। मौलिक आवश्यकताएं पूरी हो जाने पर भी भय की भावना ने सारे समाज के सुन्दर जीवन को अस्त-व्यस्त बना रखा है। इस लिए निर्भयता का होना व्यक्ति और सारे देश के लिए केवल आवश्यक ही नहीं वरन नितांत आवश्यक है। इसके बिना बड़े से बड़ा सम्पन्न राष्ट्र भी अधूरा है। अपने समृद्धि के मार्ग पर चल नहीं सकता। इस लिए भगवान् से प्रार्थना की जाती है कि हे पित! तेरी जहां तक सृष्टि है, वहां तक ही हमें निर्भय बना देवे। निर्भयता का दान तथा अपना उत्तम प्रसाद हमें प्रदान करें ताकि हम मानव जीवन में किसी समय पर किसी भी डर के कारण नीचे पतन की खाई में न गिरने पावें। यदि कोई ऐसा परिवार जिस के पास आलीशान कोठी है, खाने पीने की सामग्री का कोई ठिकाना नहीं और कपड़े आदि का सुखसामान भी भरा हुआ है। किन्तु उस का मन आत्मा दबा रहता है, कदम २ भय का दास बना हुआ है। हर कार्य में भय के कारण वह विचलित हो जाता है मन की बात जिह्वा पर नहीं कहता वाणी के अनुसार उस के जीवन के कार्य नहीं होते। तो इस अवस्था में उस की सारी मौलिक आवश्यकताएं उस के जीवन में वास्तविक रस या स्वाद तो पैदा नहीं कर सकेंगी।

दयानन्द तेरी जय

ले० श्री पं० सत्यप्रिय जी शास्त्री सि० शिरोमणि प्राध्यापक दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

(गतांक से आगे)

विधि का अनुष्ठान हमारे लिये आवश्यक कर्तव्य है। तुम सदा धर्म का ही चिन्तन किया करो ?' सम्पादकीय टिप्पणी—

'मदनपाल निघण्टु के अनुसार मृग का अर्थ गजकन्द है'

तत्तु पक्व समाज्ञाय
निष्टप्तं छिन्नशोणितम्
लक्ष्मणः पुरुषव्याघ्र
मथराघवमब्रवीन्।

अ. का. ५६-७२

'अर्थ रक्तविकार नाश करने वाले उस गजकन्द को भली—भांति पका हुआ जान कर लक्ष्मण ने पुरुषसिंह श्री रघु नाथ जी से कहा' इस पर सम्पादकीय निम्न टिप्पणी है—

'छिन्नशोणितम् की व्युत्पत्ति इस प्रकार है—छिन्नशोणित रक्तविकार रूप रोग जात ये न सतम्। गजकन्द रागविकार का नाशक है यह वैद्यक मे प्रसिद्ध है। मदनपाल निघण्टु के 'षट्दोषारि.कुष्ठ हन्ता' आदि वचन से भी यह चर्मदोष तथा कुष्ठ आदि रक्तविकार का नाशक सिद्ध होता है।' और भी देखिये—

अयंसर्व समस्तांगः शृत.
कृष्णमृगोमया
देवता देव संकाश
यजस्व कुशलो ह्यसि।

अ. का. ५६-२८

'अर्थ—देवोपम तेजस्वी रघु नाथ जी ? यह काले छिलके वाला गजकन्द जो बिगड़े हुये सभी अंगों को ठीक करने वाला है मेरे द्वारा सम्पूर्णतः पका दिया गया है, अब आप वास्तु देवों का यजन कीजिये, क्योंकि आप इस कर्म में कुशल हैं—

इस पर निम्न टिप्पणी है—

'समस्तांग.की व्युत्पत्ति यो समझनी चाहिये— सम्यक् भवन्ति अस्तानि अंगानि येन स।'

इसी प्रकार बालकांड में जहां अश्वमेध यज्ञ का प्रकरण है वहां भी 'वपा' शब्द का अर्थ एक विशेष प्रकार का कन्द किया है। सामान्यतया संस्कृत में वपा का अर्थ चर्बी, ऐणेयं मांसं का अर्थ मृग का मांस, मृग का अर्थ हरिण, कृष्ण मृगः का अर्थ काला हरिण तथा छिन्न-शोणितम् का अर्थ खून तथा मांस का काटना होता है। अब से कुछ समय पूर्व इन शब्दों का यही अर्थ हमारे पौराणिक भाई किया करते थे तथा अब भी ब्राह्मण ग्रन्थों में आये ऐसे अनेकार्थक शब्दों का यही घृणित अप्रासंगिक अर्थ करते हैं परन्तु कोई यह न समझे कि रामायण में इनका ऐसा अर्थ बदलना हमें अभीष्ट नहीं है, परतु हमारा तो प्रश्न है कि इस प्रकार बुद्धि पूर्वक, तर्कपूर्ण, परस्परविरोध रहित अर्थ करना किसने सिखाया। कौन था वह जिस ने इस प्रकार युक्ति संगत अर्थ करके अपने शास्त्रों को दूसरों के प्रहारों से बचाने की सीख दी। ऋषि दयानन्द का ऋषित्व इसी में था कि उसने इस परिवर्तनशील मानववृत्ति की सूचना आज से सौ वर्ष पूर्व अपने साहित्य में दी थी। आज वही बातें सर्वत्र दिखाई दे रही हैं जिनका प्रचार महर्षि ने किया था। उस समय सब कहते थे कि स्वामी दयानन्द शास्त्रों के अर्थ बदल रहा है, मनमाने अर्थ कर रहा है, परंतु आज इन्हें कोई नहीं कहता, वही है न 'जादू वह सर चढ़कर बोले।' आज पुराण, कुरान, बाइबिल को गप्पें अलंकार का रूप धारण कर रहे हैं। सातवें तथा चौथे आसमान एवं छः दिनों में जगत रचना की आलंकारिक व्याख्यायें की जा रही हैं। आक्षेप योग्य स्थलों में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है यह सब महर्षि दयानन्द के तर्कपूर्ण मनन, प्रचार एवं लेखन का ही तो प्रभाव है। आज का संसार आचरण से तो महर्षि की ओर आ रहा है, परन्तु मुख से नहीं कहता है। वर्तमान विभिन्न धार्मिक सिद्धान्तों, प्रचार शैली, लेखनकला एवं सामाजिक पद्धति को देखकर चारों ओर से एक ही अव्यक्त ध्वनि कानों में आ रही है कि ऋषि दयानन्द तेरी जय हो।

★★

आर्यसमाज ने देश प्रेम के गीत गाकर लोगों को जगाया

[लेखक—श्री भक्तराम (अफ्रिका वाले) जालन्धर]

लेख का शीर्षक मेरा नहीं। यह पूज्य पं० राजेन्द्र जी जिज्ञासु एम० ए० बी० टी प्रोफेसर दयानन्द कालेज शोला पुर के आर्य गजट के 'स्वतन्त्रता दिवस' विशेषाङ्क दिनाङ्क १८ अगस्त सन् १९६३ में प्रकाशित एक लेख का है। उस में उन्होंने बड़ी योग्यता के साथ आर्य समाज के भारतीयों में देश भक्ति की भावना जागृत करने के प्रशंसनीय कार्य की झांकी आर्य-कवियों की कविताओं के प्रमाणों द्वारा दिखा कर आर्य समाज की अमूल्य सेवा की है। फिर पुराने आर्य समाजियों को इस विषय पर प्रकाश डालने का प्रस्ताव और यदि उन्हें कोई पुरानी भजन पुस्तकें एकत्रित करके दे तो स्वयं अनुसन्धान कर देश प्रेम सम्बंधी प्रचुर सामग्री हमारे हाथों में देने का संकल्प तो मुझे बहुत पसन्द आया। ईश्वर उन्हें सफलता प्रदान करें।

उस समय के अनेक आर्य भाइयों की भान्ति मैं भी विद्यार्थी जीवन में इस विचार का था कि आर्य समाज के छटे नियम के होते देश प्रेम की बात करना संकुचित मनो वृत्ति है। कुछ काल पश्चात् उस धारणा में यह परिवर्तन हुआ कि भारत वर्ष भी संसार के अंतर्गत है अतः उसकी उन्नति सोचना कोई अपराध नहीं। इधर सत्यार्थ प्रकाश में अपने देश की महिमा और उन्नति अवनति की विवेचना संबंधी महर्षि दयानंद वचनामृत पढ़ते थे तो इस परिणाम पर पहुंचते थे कि हमारे आचार्य को प्रथम अपने देश का सुधार अभिष्ट था पश्चात् बन सके तो दूसरे का। 'आर्याभिविनय' में यजुर्वेद अध्याय ३८ मं० १४ के व्याख्यान के शब्दों 'अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हो तथा हम लोग पराधीन कभी न हों' की विद्यमानता में क्या उन बुजुर्ग आर्यों का कहना युक्ति-युक्त था कि आर्यसमाज का मुख्योद्देश्य संसार मात्र का उपकार करना है न कि अपने देश का चिन्तन?

जिस आर्यसमाज की स्थापना भारत वर्ष में, भारतीय संस्थापक द्वारा और भारत तत्कालीन परिस्थिति को सन्मुख रखते हुए की गई उस के सम्बन्ध में यह सोचना कि उसके प्रवर्तक को एक दम संसार के उद्धार की सूझी और यह कि जिस ऋषि भूमि पर चार ऋषियों— अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा के हृदयों में वेद प्रकट हुए, जहां जगत की उत्पत्ति हुई और जो पृथिवी के सब मानवों का शिक्षा केन्द्र रहा उसकी उसने उपेक्षा की, उसके साथ यह बड़ा भारी अन्याय था। अस्तु ! असहयोग आंदोलन, जिस में विदेशी वस्त्रों का वहिष्कार भी सम्मिलित था, सन १९१९ से आरम्भ हुआ परन्तु आर्यसमाजी नेता उस से पूर्व देशी वस्त्र पहिना करते थे।

आर्यसमाज के जन्मदाता ने आर्यसमाजियों को कुछ ऐसे संस्कार दिये थे कि वे न तो सरकारी अफसरों की खुशामद करते थे और न ही अंग्रेजों को सिर झुका कर सलाम करते थे। उन पर सरकार की क्रूर दृष्टि का यही कारण था। आर्य समाज की प्रसिद्ध संस्थाओं डी० ए० वी० कालेज और गुरुकुल कांगड़ी को सन्देह की दृष्टि से इसी लिए देखा जाता था कि वहां के विद्यार्थी देश प्रेमी (सरकार के विचार में विद्रोही) थे एक बार गुरुकुल कांगड़ी की तलाशी के वारंट पर हस्ताक्षर हो चुके थे परन्तु महात्मा मुंशीराम जी के गौरव युक्त और आकर्षक व्यक्तित्व के कारण रुक गयी थी। गुरुकुल में दर्शक रूप में आने वाले खुफिया पुलिस के ऊंचे अधिकारियों का तांता लगा रहता था।

एक अवसर ऐसा आया कि जो गुरुकुलाधिकारी किसी सरकारी अफसर से आंख तक मिलाना नहीं चाहते थे उन्होंने एक के पश्चात दूसरे अफसर को आमन्त्रित किया। बात यह थी कि महात्मा मुंशीराम जी सरकारी अधिकारियों के भ्रम का निवारण करना चाहते थे और उन्होंने कलेक्टर, कमिश्नर, गवर्नर और वायसराय तक को गुरुकुल में बुलाया। जब देखा कि सन्देह के मंडला रहे बादल उड़ गये तो निमन्त्रणों से अपना हाथ खींचते हुए सरकारी अधिकारियों के आगमनों का तांता समाप्त कर दिया। डी० ए० वी० कालेज लाहौर पर भी लाला लाजपतराय और श्री बलराज जी की पकड़-धकड़ के समय सरकारी कोप की घटाएं छायी थीं और सन १९१९ के मार्शलला के दिनों में भी कालेज को भारी संकट का सामना करना पड़ा था।

यह वह समय था जब सरकार यह समझती थी कि जहां जहां आर्य समाज है वहां २ विद्रोह का अड्डा है। इधर आर्य समाज के वार्षिकोत्सवों के प्रोग्रामों में अन्तिम आइटम पढ़ते थे—'धन्यवाद गवर्नमेण्ट, आरती और शान्तिपाठ'। सरदार यशवन्त सिंह वर्मा टोहानवी रचित 'आर्य भजन दीपिका' के अन्तिम उत्सव की समाप्ति पर वधाई और धन्यवाद सम्बन्धी भजन के निम्न लिखित पद ध्यान देने योग्य हैं:—

हम हैं मशकूर अपने शहनशाह के राज ऐसा न होगा कोई अमन,
है यह बरकत इसी आप के राज की जो कि जलसा समाप्त हुआ निर्विघ्न।

मै ने विद्यार्थी जीवन में 'प्रकाश' के किसी अङ्क में पढ़ा था प्रो० राम देव जी ने प्रबल आंदोलन द्वारा सरकार के शुकरिये की प्रथा बन्द कराई थी।

आर्य समाज के भजनीक से देश हित का जो पहिला भजन सुना था वह आदि कवि महता अमींचंद जी का था जिस के बोल थे—

अगर देश हितैषी हमें न जगाता।
तो देशोन्नति का किसे ध्यान आता॥
स्वदेश और स्वजाति की थी किस को भक्ति।
छटी संख्या का जो नियमन सिखाता॥

आर्यसमाज के देश भक्ति के प्रबल प्रचारक और आर्यसमाजियों के देश भक्त होने का इस से बढ़ कर प्रमाण और क्या मिल सकता है कि स्वतन्त्रता आंदोलन के दिनों में ९० प्रतिशत आर्यसमाजी कार्यकर्त्ता और नेता थे। अब भी कांग्रेस और विरोधी दलों में आर्यसमाजी ही आगे है भले उन में से कुछ एक रजिस्टर्ड समासद न हों। क्रांतिकारियों में अधिक संख्या आर्य समाजी नवयुवकों की थी। आर्य समाज के किस २ कवि की कविता का उल्लेख करूं ? विद्यार्थी जीवन से ले कर सन १९२८ तक देश में, और ईस्ट अफ्रीका सन १९४८ तक प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध कवियों के भजन गाता रहा हूं। अब यहां भी एक समाज के साप्ताहिक सत्सङ्गों में नियम पूर्वक बोलता हूं।

(क्रमशः)

प्रादेशिक सभा का वेद प्रचार कार्य

मोडल टऊन लुधियाना—की उत्सव ११ से १३ अक्तूबर तक सम्पन्न हुआ जिस में श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, राज पाल जी की चिमटा मंडली, तारा चन्द्र जी, अम्बाला करनाल मंडल की भजन मंडली पधारीं। सभा को वेद प्रचारार्थ २५०/- प्राप्त हुए।

दयालपुरा करनाल—११ से १३ अक्तूबर तक बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सभा के महोपदेशक पं. ओम प्रकाश जी, ठाकुर दुर्गासिंह जी 'तूफान' पधारे।

आर्य समाज पट्टो (अमृतसर)—का उत्सव १४ से २० अक्तूबर तक सम्पन्न हो रहा है इस अवसर पर श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री महोपदेशक सभा, मा० तारा चन्द्र जी, पं. हजारी लाल, जी, तथा राज पाल जी की चिमटा मंडली पधार रही हैं।

आर्य समाज खन्ना (लुधियाना)—का वार्षिक उत्सव २१ से २३ अक्तूबर को सम्पन्न हो रहा है। श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, तथा हजारी लाल जी भजनीक पधार रहे हैं।

माडल टऊन यमुनानगर—का उत्सव ३१ से २ नवंबर तक सम्पन्न हो रहा है इस शुभ अवसर पर श्री पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री, मेला राम जी रेडियो सिंगर, राज पाल मदन मोहन चिमटा मंडली, पधार रही हैं। उत्सव से पूर्व श्री पं. खुशी राम जी वेद प्रचार अधिष्ठाता २५ अक्तूबर से कथा करेंगे।

आर्य समाज मोडल टऊन जालन्धर—१६ से २३ अक्तूबर तक वेद कथा का प्रबन्ध किया गया है श्री पं. ओम प्रकाश जी महोपदेशक सभा कथा कहेंगे तथा मा. मेला राम जी के भजन होंगे।

आर्य समाज लाजपत नगर सोनीपत—का वार्षिकोत्सव २७ से ३ नववर तक बड़ी धूम धाम से सम्पन्न हो रहा है श्री पं. ओम प्रकाश जी महोपदेशक सभा तथा मेला राम जी रेडियो सिंगर पधार रहे हैं।

आर्य समाज रीडिंग रोड़ (अनारकली) देहली—का उत्सव ४ से १० नवंबर तक सम्पन्न हो रहा है पं. त्रिलोक चन्द्र जी शास्त्री तथा राज पाल मदन मोहन जी चिमटा मंडली पधार रहे हैं।

आर्य समाज अम्बाला शहर—का वार्षिकोत्सव २२ से २७ अक्तूबर तक सम्पन्न हो रहा है सभा का स्टाफ पहुंचेगा।

खुशी राम शर्मा
वेद प्रचार अधिष्ठाता

भूल सुधार

आर्य जगत के २९. ९. ६३ के अंक पृष्ठ ७ पर पहले दो कालमों में 'भलावल पुर के लिए सेवा भावी विद्वान महानुभाव की सेवा में नम्र निवेदन, लेख प्रकाशित हुआ है इस लेख के प्रथम कालम के नीचे नं० ३ में श्री अमर नाथ जी सग्गी प्रधान का शुभ नाम प्रकाशित होने से रह गया है। पाठक प्रधान जी का नाम सब से पूर्व अंकित कर लें। व्यवस्थापक

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का अप्रेशन सफल रहा

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का प्राष्ट्रेट ग्लेंड्स का दूसरा बड़ा अप्रेशन हैदराबाद हस्पताल में हो गया है। यह सफल रहा है। परन्तु अभी उनको बुखार हो जाता है। डाक्टरों ने कहा है कि चिन्ता की कोई बात नहीं। अप्रेशन के बाद डाक्टरों ने पूज्य महात्मा जी से कहा था कि उन्हें अप्रेशन के कमरे से उनके कमरे तक पहुंचा देंगे। परन्तु महात्मा जी नहीं माने और पैदल चल कर वहां नीचे उतर आये। जिससे बहुत अधिक थकावट हो जाने से वह बेहोश हो गये तथा १½ घण्टे बेहोश रहे। अब पूज्य महात्मा जी हस्पताल से आ गये हैं और यहां श्री हरिराम जी शर्मा के पास ठहरे हैं—

हम भगवान से प्रार्थी हैं कि पूज्य महात्मा जी शीघ्र एवं पूर्ण स्वस्थ हो जावें। सारा समाज उनकी ओर ही ध्यान लगाये हुए है—प्रभु शीघ्र उन को पूर्ण स्वास्थ्य देवे।

सध्या१ स्वाध्याय२ सत्संग,३ सेवा४ च सहकारिता५।
वेदेषु शास्त्रेषु च, सकारा पञ्च मोक्षदा ॥१॥

इनका प्रचार आर्य जगत में बड़े जोर शोर से होना चाहिये।

ले०सीताराम जी शर्मा भू.पू. उपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब

सज्जनों संसार में हम देखते और सुनते हैं कि प्रत्येक सम्प्रदाय के मनुष्य मरने के समय के लिए अपने मतानुसार भगवान से प्रार्थना करते हैं कि हमें मरनेके समय ये वस्तु प्राप्त होनी चाहियें, जैसे पौराणिक लोग करते हैं कि (इतनी कृपा हो शंकर प्राण तन से निकलें) श्री गंगा जी तट हो, विल्व का निकट बिटप हो, शिव २ हमारे घट हो, जब प्राण तन से निकले—इत्यादि हरेक के लिए ये मांगें पूरी होना असम्भव है अत: मैं भी अपने विचारानुसार भगवान के सामने अपने टूटे-फूटे शब्दों में मरने के समय के लिए कुछ याचना करता हूं आशा है आप सज्जन भी सहमत होंगे।

इतनी कृपा हो भगवन् जब प्राण तन से निकलें मुख ओम् की ध्वनि हो, धुन ईश में लगी हो, मोह माया दूर भगी हो, जब प्राण तन से निकले ॥१॥

बैठे हुए सम्बन्धी, हो होम की सुगन्धी, मल मूत्र की न गन्धी, जब प्राण तन से निकलें ॥२॥

मुख यज्ञ शेष होवे, दु:ख का न लेश होवे, न कोई क्लेश होवे, तब प्राण तन से निकलें ॥३॥

अन्तिम विनय ये मेरी, आया शरण में तेरी, शर्मा कहे ये टेरी, जब प्राण तन से निकलें ॥४॥

धर्म का सच्चा स्वरूप

धर्म वही है जिस का कोई विरोधी न हो।

—महर्षि दयानन्द

आर्य समाज किला मुहल्ला का सत्संग

२०. १०.६३ को आर्य समाज किला मुहल्ला में साप्ताहिक सत्संग आठ बजे प्रातः संध्या हवन से प्रारंभ होगा। पश्चात् ऋगवेदादिभाष्य भूमिका की कथा होगी। मनोहर भजनों के बाद श्री मा. प्रकाश देव जी **B.A.,B.T** का सुमधुर भाषण होगा। जनता ठीक समय पर पधार कर सत्संग से लाभ उठाए। नरदेव

—उपमंत्री समाज

आर्यसमाज माडलटाऊन लुधियाना ने सभा प्रधान जी को २५०) रु० वेद प्रचार में भेंट किये

आर्यसमाज माडलटाऊन लुधियाना के वार्षिकोत्सव पर रविवार ता० १३-१०-६३ को सभा के प्रधान माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. के ओजस्वी भाषण के बाद श्री महाशय सन्तराम जी प्रधान आर्यसमाज ने सभा के वेद प्रचार के लिए २५०) रुपये श्री प्रिंसिपल रलाराम जी की सेवा में भेंट किये गये।

...ाज ... (होशियारपुर) का चुनाव

प्रधान—श्री चिरंजीलाल जी आर्य उपप्रधान—श्री हरवंसलालजी मुख्तरिम मंत्री—श्री अयोध्या प्रसाद जी, उपमंत्री—श्री राजेन्द्रनाथ जी, श्री अमीरचन्द जी, कोषाध्यक्ष—श्री देवीदयाल जी। अतरंग सदस्य—श्री दुर्गादास जी, डा०रामस्वरूप जी, श्री ओम प्रकाश जी, श्री दीवानचन्द्र जी, श्री जमनादास जी, श्री जगदीशचन्द्र जी।

—राजेन्द्र नाथ उपमंत्री समाज

आवश्यकता

आर्य समाज पुलबंगश देहली के लिए एक सुशील सेवक की आवश्यकता है पत्र व्यवहार निम्न पते करें। सुदेश कुमार मंत्री आर्य समाज पुल बंगश देहली।

अफ्र आदमी उसको न जानियेगा,
जो हो चाहे कैसा साहिब फ़हमोज़का
जिसे ऐश में यादे खुदा न रही,
जिसे तैश में खौफे खुदा न रहा।

दयानन्द महाविद्यालय शोलापुर

हवन यज्ञ और विज्ञान

लेखक—प्रो. राम प्रकाश जी **M.Sc. (Hons)** दयानन्द कालेज अम्बाला। पृष्ठ संख्या १२४ मूल्य १) रुपया।

प्राप्ति स्थान :—(१) श्री जयदेव जी आर्य **M.A.** साहित्य मन्त्री पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद ग्राम बेलरखा तहसील नरवाना जिला संगरूर। (२) लेखक से भी पुस्तक मिल सकती है। (३) आर्य युवक समाज सैक्टर २२ चण्डीगढ़, व श्री बीरू राम जी **M.A. Govt. School** करनाल।

पुस्तक पर कुछ सम्मतियां

इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ कर प्रतीत हुआ कि इस पुस्तक का लेखक कितना गहन मनन करने वाला अनुसंधान पूर्ण विज्ञान वेत्ता है। आप का यह प्रशस्त सर्वसाधारण और वैज्ञानिकों के लिये अत्यंत लाभप्रद है। इस के लिये आज का वैज्ञानिक बहुत आभारी रहेगा। (पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज)।

'यह पुस्तक हवन यज्ञ का वैज्ञानिक रूप बहुत अछूते तथा अमूल्य ढंग से देती है। आप ने यह पुस्तक लिखकर आर्य समाज की ही नहीं अपितु मनुष्य मात्र की सेवा की है मैं यह चाहता हूं कि यह पुस्तक प्रत्येक स्कूल कालेज में प्रत्येक भारतीय को इसे पढ़कर अपना मस्तक ऊंचा करना चाहिये। यदि अंग्रेजी में इस को अनुवाद हो जाए तो विदेश मे बहुत जा सकती है।' (श्रद्धेय आचार्य भगवान दास जी सोलापुर)।

'हवन यज्ञ और विज्ञान पुस्तक लिखकर मेरे अभिन्न बन्धु प्रियतम सखा प्रो० रामप्रकाश जी आर्य **M.Sc(Hons)** ने आर्य समाज की महान सेवा की है। समाज के साहित्य में अपने विषय की यह बेजोड़ पुस्तक कही जा सकती है।

आर्य सार्वदेशिक सभा को चाहिये कि इस का अंग्रेजी आदि भाषाओं में अनुवाद करवा कर विदेशों में यह पुस्तक प्रसारित करे। मराठी में भी इस का अनुवाद मध्य दक्षिण (हैदराबाद) सभा के कर्मठ नेता डा० डी. आर. दास करेंगे। श्री राम प्रकाश जी आर्य जाति की आशा की ऊषा हैं। यह पुस्तक आशा की ऊषा की सुनहली किरण है। यह सारी सामग्री महत्वपूर्ण व उपयोगी है। प्रत्येक आर्य को विशेषतया उपदेशकों को इस का गम्भीर स्वाध्याय करना चाहिये।'

प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु दयानन्द कालेज, शोलापुर

दयानन्द वचनामृत

'यह आर्यावर्त देश ऐसा (सुन्दर) है कि भूगोल भर में इस के सदृश दूसरा देश दिखाई नहीं देता। इसी कारण, भारत-भूमि का नाम स्वर्ण-भूमि है, क्योंकि यही भूमि स्वर्णादि रत्नों को उत्पन्न ... के आदि में, आर्यजन इसीलिए इस में आकर ... जितने भी देश हैं—उनके जिन भी निवासी ... की प्रशंसा करते हैं, इसी से आशा रखते ... पारस ... बात सुनी जाती है, सो सच्ची नहीं है. परन्तु ... आर्यावर्त देश ही सच्चा पारस-मणि है, जिसके छूते ही सुवर्ण-धनाढ्य-हो जाते हैं।'

—स्वामी सत्यानन्द जी

आर्यजगत का ऋषि निर्वाण अंक

प्रति वर्ष की भान्ति इस बार १५-११-६३ को ऋषि निर्वाण अंक ५२ पृष्ठका पुस्तका कार में २०×३०/८ साईज में प्रकाशित हो रहा है, मुख पृष्ठ पर महर्षि स्वामी दयानन्द जी का तिरंगा फोटो भी दिया जाएगा।

यह अंक ३.१०.१७ नवम्बर का सम्मिलित अंक होगा।

इस अंक को आद्योपांत सुन्दर बनाने के लिए देश के अनेक उच्च कोटि के विद्वानों, संन्यासियों तथा कवियों की रचनाओं का संग्रह किया गया है।

अतः आर्यसंस्थाओं, समाजों स्कूलो और कालिजों के अधिकारियों से बलपूर्वक अनुरोध है कि वे सर्व साधारण सदस्यों और स्त्री, पुरुषों में बांटने के लिए अधिक से अधिक आर्डर २८.१०.६३ तक सभा कार्यलय में देने की कृपा करें। बाद के आर्डरों का ठीक समय पर पालन करना कठिन होगा। विज्ञापन दाताओं व व्यापारियों के लिए सुनहरा अवसर है।

लेखक महानभाव और कवि अपनी २ रचनायें २०.१०.६३ तक भेज दें।

—व्यवस्थापक

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलाफोन नं० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No. P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे | वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ४३) रविवार ११ कार्तिक २०२० — २७ अक्तूबर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

चरथ देवा इव

हे मनुष्यो ! आप सारे देवा इव-देवों के समान चरथ-अपना २ आचरण बनाओ। जैसे दिव्य पुरुष उत्तम आचार विचार वाले बन कर आदर्श जीवन होते हैं, वैसे ही आप भी जीवन में देवतुल्य हो।

बन्धुरा काबवस्य

हे मनुष्य ! जो काबवस्य-हिंसा व दूसरों की हत्या करने वाला है। समाज तथा राष्ट्र में उत्पात मचाता रहता है—उस को बन्धुर :—भली भान्ति बन्धन में डाल दे। अपनी शक्ति से बान्ध रख, ताकि ऐसा हिंसक उपद्रव न कर सके।

त्वा भत्स्यामि

हे दुष्ट हिंसक ! सुन ले, कान खोल कर सुन ले कि मैं राष्ट्र का प्रेमी देशभक्त देश रक्षा क कार्य में लगा हुआ त्वातुझे भत्स्यामि-बांध दूंगा। खुला नहीं छोड़ूगा। तुझे जेल में डाल दूंगा—

अथर्ववेद

वेदामृत

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावा पृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥

अथर्व० का० १९ सू० १५ म० ५

अर्थ—हे प्रभो ! (अभयं) अभय दान करे (नः) हमें (करति) करे (अन्तरिक्षम्) यह अन्तरिक्ष (अभयं) अभय देवे (द्यावापृथिवी) द्यौ. लोक और भूमिलोक (उभे) दोनों ही (इमे) ये-ये दोनों हमें निर्भय बना देवें। और (अभय) निर्भयता होवे (पश्चात्) हमारी पीछे वाली दिशा पश्चिम से (अभयं) अभय मिले (पुरस्तात्) आगे वाली पूर्व दिशा से (उत्तरात्) उत्तर दिशा से (अधरात्) नीचे वाली दक्षिण दिशा से भी (अभयं) अभय (नः अस्तु) हमें हो। ये चारों दिशाएं तथा तीनों लोक हमारे लिए भय से रहित बन जावें।

भाव :—परमेश ! हम आप से सब से बड़ा यही जीवन में वरदान मांगते हैं कि हमें धर्म का कार्य करते हुए तथा जीवनपथ पर चलते हुए भूमि-लोक और इसके पर्वत, नदियां, सागर, वन आदि भय देने वाले न हों। हम किसी से भी भयभीत न होवें। यह अन्तरिक्ष तथा द्यौलोक भी हमें कभी भय न दे सकें। सदा निर्भय बन कर विचरें। ये चारों दिशाएं तथा जीवन की चारों दशाएं हमें निर्भय बना देवें। जो काम करें, जिसका सब का भला हो, जो सच्ची बात कहें तथा जिस सत्य एवं सुपथ पर पग उठावें—सदा निर्भीक होकर ही करते, कहते और चलते रहें। सर्वत्र सर्वदा सर्वथा अभय हों—सं०

ऋषि दर्शन

कर्तैव फलं भुंक्ते

जो भी शुभ अथवा अशुभ कर्म करता है, वही कर्ता स्वयमेव उन कर्मों का अच्छा फल भोगता है। यह निश्चित है कि कर्मकर्ता को कर्म का फल भोगना पड़ता है।

नान्य: कश्चिदिति

और दूसरे को नहीं। जो करेगा वही भरेगा। किसी ने तो कर्म किया है और किसी दूसरे को उस कर्म का फल मिल जाये ऐसा कभी नहीं हो सकता। चोर ही दण्ड पाएगा।

यज्ञो वै विष्णु:

यज्ञ निश्चय कर के विष्णु है तथा विष्णु सर्वव्यापक प्रभु यज्ञ है। जितने भी परोपकार मय शुभ कर्म हैं वे सर्वत्र ही एक समान हैं। सबके लिए आवश्यक हैं।

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री | सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मनवशीकार के तीन साधन (३)

ज्ञान-प्राण और ध्यान

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

अभ्यास करते २ जब कोई अन्तर्जगत् की इस अद्भुत झलक को देख लेता है, अनुभव करता है, तब उसे बाहिर की दिखाई देने वाली ये सारी झलकें सर्वथा रूखी और फीकी मालूम होती हैं। उस का स्वाद ही कुछ निराला है, उसकी मस्ती अनोखी मस्ती ही है। यह विषय वाणी का नहीं प्रत्युत अनुभूति का है। अनुभव से ही इस का परिज्ञान हो सकता है। शब्दों में वर्णन क्या किया जाये ? बाहिर की दुनिया के नानाविध पदार्थों के खान-पान के रस स्वाद लिये व लेते हैं—पर कभी इस अन्तर्विश्व के रस का आस्वादन करो तो फिर कहने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। गूंगे की रसना के सदृश इसे अनुभव ही किया जा सकता है, बोल कर बतलाया नहीं जा सकता यह इस के लिए अभ्यास और आस्था की जरूरत है।

कई लोगों की ओर से जो यह बात कही जाती है कि यह अभ्यास, प्राणायाम आदि की योग प्रक्रिया केवल सन्यासियों के लिए ही है अथवा उन के लिए हैं, जो किसी प्रकार से भी परिवार या गृहस्थ धर्म वाले नहीं हैं। जो सांसारिक पुरुष हैं, गृहस्थी हैं और दुनिया के जीवन निर्वाह के लिए कारोबार में लगे हुए है। उन के लिए न किसी प्रकार का अभ्यास है तथा न ही प्राणायाम सम्भव है। ये योग की, अभ्यास की बातें गृहस्थी पुरुषों के लिए हैं ही नहीं।

ऐसा कहने वाले या मान कर प्रचार करने वाले भ्रम फैलाते हैं। उन की बात ठीक नहीं है। जीवन के लिए आवश्यक तथा काम आने वाले अभ्यास तो सारे कर सकते हैं। गृहस्थी भी बड़ी सुगमता से कर सकते हैं। ये साधन केवल पर्वत की कन्दराओं मे बैठे हुए विरक्त लोगों के लिए नहीं है प्रत्युत परिवार में रह कर यम नियम से जीवन बिताने वाले सद् गृहस्थों के लिए भी हैं। मैं ने प्राणायम की जो आवश्यक विधियां सीखी हैं, जितना अभ्यास सीखा या जो भी अन्तः साधना के लिए इस योगपथ पर चलने का प्रयत्न किया है—सारा गृहस्थ काल में ही किया है परिवार में रहते अभ्यासी बना हूं। क्योंकि अभ्यास करने के लिए, अन्तर्जगत् के साधनापथ पर आगे बढ़ने के लिए आवश्यक क्रियाओं, प्रक्रियाओं और विधियों को करने के लिए खानपान आदि की सुविधाएं, सावधानताएं प्राप्त करना बहुत आवश्यक हैं। ये सुविधाएं जितनी परिवार में रहते प्राप्त हो सकती हैं, बाहिर नहीं मिलतीं। अभ्यास करने की अवस्था में आप अपने मन के अनुकूल भोजन तथा दूसरी सारी सुविधाओं को घर में रह कर और स्थानों की अपेक्षा अच्छी प्रकार से पा सकते हैं।

इस के अतिरिक्त आप, प्रायः जितने भी योगियों की चर्चा करते है वे सारे स्वयं गृहस्थी थे। योग की विभूति शिव जी महाराज गृहस्थी थे। पार्वती उन की देवी थी। महात्मा याज्ञवल्क्य गृहस्थी थे। राजा जनक गृहस्थी थे। रामायण काल में श्री राम चन्द्र जी, महाभारत समय में श्री कृष्ण चन्द्र जी भी तो गृहस्थी थे। और भी योगमार्गी गृहस्थी थे। इन की योगसाधना कितनी ऊंची थी ? यह सभी मानते हैं। इस लिए गृहस्थी प्राणायाम नहीं सीख सकता—यह भ्रम ही है।

ईश्वर विश्वास से निर्भयता का प्रसाद

तर्क के साथ श्रद्धा भी आवश्यक

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. सभा प्रधान)

गीता में भगवान् कृष्ण ने दैवी सम्पत् के गुणों का बड़ा ही सुन्दर उपदेश दिया है। उसे दैवी सम्पत्ति **Devine Wealth** के नाम से पुकारा है। सम्पत्ति वैसे तो कई प्रकार की होती है। भूमि, भवन, स्वर्ण, पशु आदि कई तरह की जीवन में काम आने वाली दौलत है। किन्तु दैवी सम्पत् क्या है ? यह दौलत जिस के पास आ जाती है, वे देवता कहलाते हैं या जो देवता हैं उनके पास ही इन लक्षणों वाली दौलत को दैवी सम्पत्ति का नाम दिया गया है। उस में अभयं सत्वसंशुद्धिः आदि नाना गुणों के लक्षणों वाली सम्पत्ति में अभय की गणना सब से पहिले की गई है। जिस में भय नहीं है, निर्भयता पूर्वक जिस का जीवन चक्र चलता है, वह देवता है। जो नर-नारी भय से रहित हो जाये, वही दैवी संपत् का अधिकारी होता है। भय से भरा हुआ जीवन वाला मानव जीवन क सार को पा ही नहीं सकता। इसी लिए वेद में कहा गया है—अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोयः—हे भगवन ! हमें मित्र से भी निर्भय करो और जो मित्र नहीं है उससे भी निर्भय बना दो। जो ज्ञात या जातिजन हैं उनसे भी तथा जिन को हम जानते नहीं, उनसे भी किसी प्रकार का भय न हो। वेद की यह कितनी सुन्दर प्रार्थना है।

यदि सूक्ष्मदृष्टि से देखा जाये तो पता लगता है कि हम जितने झूठ मित्र के भय से बोलते हैं, उतने शत्रु के डर के कारण नहीं बोलते। यदि मित्र का कहा हुआ कोई काम हम अपने आलस्य प्रमाद से नहीं कर पाये तो उसके सामने हम कितनी झूठ मिली बातें बनाकर उसे सन्तुष्ट करना चाहते हैं। पर यह मन उस समय मित्र के सामने डरकर बोले जाने वाले अनेक झूठी बातों की साक्षी देता रहता है कि उस समय हमारी मन की स्थिति कैसी होती है। एक पाश्चम के विद्वान् ने कहा है कि—**A fear always aries from a feeling of uncertainly.** हम मौत से क्यों डरते हैं। वह मित्र बनकर आती है। यदि मृत्यु न होती तो पता नहीं, संसार की क्या अवस्था होती। मौत से भी इसे लिए भय घबराहट होती है क्योंकि उसका निश्चय नहीं है कि कब आ जाएगी। **It is all due to a feeling of uncertainly.** अनिश्चित अवस्था या समय के कारण मौत से हमें भय लगा रहता है। एक विद्वान् ने लिखा है कि यह जीवन और मौत तो मानव जीवन के खेल के दो भिन्न २ नाम और रूप हैं—**Life and deeth are both different names of the game.** हम मौत के बाद कहां जाएंगे, कौन-सा शरीर मिलेगा और इस जीवन की किस स्थिति में समय बिताना होगा ? इस प्रकार के सन्देह से भरे हुए अनिश्चयात्मक विचार, प्रश्न सामने आते हैं, तभी हमें मौत से भय लगना प्रारम्भ हो जाता है। जहां पर भी अनिश्चित स्थिति का विचार है, वहीं पर भय का भाव पैदा होकर जीवन को डांवाडोल कर देता है हमारे शास्त्रों में आया है—हमें दुःखमनागतम् जो अभी आया नहीं है उससे छुटकारा पाने में प्रयास किया जाये। जो दुःख आकर चला गया,

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २७ अक्तूबर १९६३ [अंक ४३

आचार्य और शिष्य

भारतीय पुरातन पुनीत परम्परा में आचार्य तथा शिष्य का सम्बन्ध पिता-पुत्र का सम्बन्ध माना गया है। गुरु शब्द का अर्थ अन्धकार को दूर करने वाला है। विद्या, ज्ञान के द्वारा वह अपने शिष्य के जीवन को प्रकाशमय बना देता है, इसीलिए उसे गुरु कहा गया है। आचार्य अपने कुल में निवास करने वाले शिष्य को आचार की शिक्षा देता है, नाना प्रकार के पदार्थों, तत्वों तथा विद्याओं का ज्ञान देता है और उसके विचारों का, अन्दर मौजूद गुणों का विकास करता है—इसीलिए उसे आचार्य के सम्मानित नाम से स्मरण किया जाता है। आचार्य का सारे राष्ट्र में सम्मान होता है, यहां तक चक्रवर्ती सम्राट भी उसके आने पर उठकर मस्तक झुका देता है। इस का कारण यह है कि गुरु या आचार्य राष्ट्र का निर्माता है। उसी की शिक्षा से बनाये हुए युवक आगे चल कर सारे देश के हर क्षेत्र का प्रबन्ध संभालते हैं। जीवन का निर्माण, मानवता तथा देवत्व के पुतले प्रस्तुत करके समूचे सामाज को ऊंचे स्तर पर पहुंचाना आचार्य के हाथ में है। गुरु को अपने शिष्यों तथा शिष्यों को अपने आचार्यों पर बड़ा मान होता था। भारत की गुरु शिष्य परम्परा का स्थान बड़ा ही ऊंचा था। गुरु वसिष्ठ को अपने प्रिय राम आदि कुमारों पर, आचार्य संदीपन को प्यारे कृष्ण सुदामा पर, गुरु द्रोण को वीर अर्जुन पर, गुरु समर्थ रामदास को वीर शिवा पर तथा गुरु विरजानन्द को प्यारे दयानन्द पर कितना मान था। इस युग में भी जिन २ को महात्मा हंसराज और स्वामी श्रद्धानन्द सरीखे आचार्य प्राप्त हुए—वे उन का नाम आते ही आत्मविभोर होकर मस्तक झुका देते हैं। यह हमारे देश में आदर्श परम्परा थी—जिस पर सारा समाज चलता था।

किन्तु अत्यन्त खेद है कि आज का वातावरण सर्वथा बदल गया है। पश्चिम की शिक्षा दीक्षा ने गुरु शिष्य के पवित्र भाव एवं पिता-पुत्र सम्बन्ध को समाप्त करके रख दिया है। आज के वातावरण का भयंकर चित्र सामने है। यही कारण है कि आज सारी संस्थाओं का वायुमंडल और ही कुछ बन गया है। कोई परीक्षा में रह गया तो गुरु को गालियां देने लगा। शिक्षा ज्यों २ बढ़ती जाती है, शिष्टता त्यों २ घटती जाती है। कैसे २ समाचार पढ़ने सुनने को मिलते हैं। अनुशासन तो पंख लगा कर भाग गया है। जिस रेल के डिब्बे में दस बीस छात्र बैठ जाते हैं वहां बैठना ही कठिन हो जाता है। ताली दोनों ओर बजती है। शिष्यों का गुरुभाव यदि समाप्त हो रहा है तो गुरुओं का भी पवित्र गुरुपन भागता जाता है। दोनों आपस में एक दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। इस का प्रभाव सारे देश के जीवन पर पड़ता है बड़ी गड़बड़ है। आर्य समाज के मूर्धन्य नेता राष्ट्र की इस गुरु शिष्य भाव की गम्भीर समस्या पर ऊंचे स्तर पर विशेष कोई सम्मेलन कर निर्णय करें तथा सारे देश को इस दिशा में उसी पुराने पवित्र पिता-पुत्र भाव में चलावें तभी भला है—

—त्रिलोकचन्द्र

अब न हम पीछे हटेंगे

(ले०—श्री शरर जी M.A.)

लक्ष्य सिद्धि को बढ़े पग, अब तो मंजिल पर रुकेंगे
तुम ने सोचा था कि अत्याचार की आंधी उठा कर
जी सकोगे इस निशा को और भी काला बना कर
किन्तु अब तो चांद तारे मुस्करा कर ही रहेंगे
सूर्य की किरणों से कोई छीन सकता है उजाला ?
और सागरके उमड़ते ज्वार को किस ने सम्भाला ?
तुम को भ्रम है आग की ज्वाला को तिनके ढांपलेंगे
जिनकी नस-नस में भरी हो वीर वैरागी की ज्वाला
क्या न पहनाएंगे माता को स्वयं मुण्डों की माला ?
महर्षि के शिष्य हैं गङ्गा की धारा मोड़ लेंगे—
अब न हम........

देश की महानता गुणों से

भारत के प्रधान मंत्री श्री पं० नेहरू जी का भाषण

मान्यवर प्रधान मन्त्री श्री पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू ने अभी अलीगढ़ विश्वविद्यालय के हजारों छात्रों के सम्मुख अ ओजस्वी भाषण में कहा—

यदि देश के सम्मुख कुछ कठि समस्याएं आजाएं तो लोगों व हतोत्साहित नहीं होना चाहिए अ इन्हें राष्ट्रिय विकास तथा सजीवत का प्रतीक समझना चाहिए। एव जीवित राष्ट्र की विशेषता इसी में है कि वह समस्याओं का सामना करने की सामर्थ रखता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के सम्मुख बहुत सी कठिनाईयां आई हैं और अब भी समय २ पर इसे बहुत सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा रहा है। इस से यही सिद्ध होता है कि राष्ट्र जीवित है और विकासोन्मुख है।

यद्यपि देश के सम्मुख कई कठिन समस्याएं पेश हो रही हैं, फिर भी कई ऐसी छोटी २ समस्याएं आन खड़ी होती हैं जो कि क्षोभ का कारण बनती हैं। लेकिन हमारे सम्मुख प्रमुख प्रमुख समस्या भारतीय लोगों की निर्धनता की ही है, जो अभी कुछ समय के लिए इसी तरह बनी रहेगी।

यद्यपि मूलभूत रूप से सरकार राष्ट्र को सुदृढ़ बनाती है, परन्तु यह कार्य लोगों द्वारा ही सम्पन्न होता है। सरकार तो केवल लोगों की इच्छाओं को कार्य रूप में परिणत करती है। लोग जाति भेद, सम्प्रदाय और धर्म भेद की संकीर्णता को छोड़ कर सामूहिक रूप से भारत को एक सुदृढ़ देश बनाएं।

टैक्नालोजी और विज्ञान ने मनुष्य के जीवन में क्रान्ति ला दी है और यदि भारत ने इस तथ्य को न समझा तथा विज्ञान का उपयोग न किया तो उस के लिए विश्व के

(शेष पृष्ठ ४ पर)

कामराज योजना और आर्यसमाज

(श्री सुरेशचन्द्रजी वेदालंकार एम.ए.एल.टी,डो.बी.कालेज,गोरखपुर)

कांग्रेस के निरंतर शिथिल ते हुए संगठन को शक्ति शाली र सुदृढ़ बनाने के लिए कांग्रेस र्टी ने 'कामराज' योजना को र्वसम्मति से पास किया तदनुसार मुख्य मंत्रियों और अनेक पुराने न्द्रीय मंत्रियों को त्याग पत्र दे कर ग्रेस के संगठन को दृढ़ करने के ए मैदान में उतरना पड़ा। कांग्रेस र्टी सरकारी दल है। आर्य समाज संगठन तो उस से भी अधिक शिथिल और बेजान हो गया है। आर्य समाज में कभी कभी जीवन और उत्साह आता है और फिर वह शिथिल हो जाता है। निरंतर उत्साह को बनाये रखने के लिए और अपने संगठन को दृढ़ करने के लिए आर्य समाज को सोचना पड़ेगा। और कांग्रेस को 'काम राज योजना' के स्थान पर कोई योजना लागू करनी पड़ेगी। वह योजना क्या हो इस पर विचार करने से पूर्व हमें सोचना चाहिए कि संगठन शिथिल क्यों हो रहा है? और दूसरी बात यह है कि इस संगठन को मजबूत बनाने के लिए हमें क्या सक्रिय कदम उठाना चाहिए।

संगठन शिथिल अवश्य है और हो रहा है। आर्य समाज के सम्पर्क में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस बात को अनुभव कर रहा है। आर्यसमाज गोरखपुर भारत की प्रथम श्रेणी की आर्य में से एक है। आज १२ वर्ष तक इस समाज का सदस्य और यहां की प्रत्येक परिस्थिति से अवगत होने के बाद हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि गोरखपुर आर्य समाज का संगठन अत्यन्त शिथिल हो गया है। इस संगठन की शिथिलता का प्रमाण यह है कि आर्य समाज गोरखपुर द्वारा संचालित 'आर्य कन्या इंटर कालेज' आर्य समाज मे आए धर्म द्वेषी आर्य समाज विरोधी और जातीयता वादियों ने अधिकार कर रखा है। हाईकोर्ट ने आर्यसमाज को उस संस्था का अधिकारी घोषित किया पर अभी तक भी हम उस पर अपना अधिकार न कर सके। इसी प्रकार प्रचार शुद्धि आन्दोलन, सत्संग का जीवन पर प्रभाव नहीं के बराबर है। ऐसी स्थिति में आर्य समाज गोरखपुर के एक वयोवृद्ध विद्वान् कार्यकर्ता श्री पुरुषोत्तम दास की 'पुरुषोत्तम योजना' आर्यसमाज में लागू की जाय और इस पर विचार किया जाय।

श्री पुरुषोत्तम दास वेदों के बहुत अच्छे विद्वान हैं। विद्वता और धन का मेल नहीं बैठता। परन्तु इन में दोनों की परिपूर्णता है। विद्या और धन दोनों की परिपूर्णता मनुष्य को दिखावे की ओर अग्रसर करती है परन्तु आश्चर्य है कि आज ७३ वर्ष की आयु के इस विद्वन ने अपना कोई प्रदर्शन नहीं किया। अध्ययन किया और अध्ययन का गूढ़तत्व आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में उड़ेला। विशेषता यह रही कि वह तत्व प्रदान करते हुए उस को बिल्कुल व्यावहारिक रूप दिया। उन्होंने 'काम राज योजना' तो आज की बात है। परन्तु 'पुरुषोत्तम योजना' का पहला और मुख्य अंग यह है कि कोई व्यक्ति स्वयं पद लेने का इच्छुक न हो। पद हमेशा कम आयु वालों को दिया जाय जिस से नए से नए व्यक्ति आर्य समाज में आएं और पद संघर्ष न रहे। यही कारण है कि उन्होंने आर्य समाज के सत्संगों में बराबर आते हुए पूर्वजों द्वारा संस्थापित आर्य समाज का कोई पद आज तक नहीं लिया और मार्गदर्शन और सहायता सदा दी। आर्य समाज का पद-चुनाव-संघर्ष समाप्त हो और पुराने व्यक्तियों को स्थान दें तो आर्य समाज में नए रक्त का सामवेश हो। कर्तव्य परायणता और क्रियाशीलता बढ़े।

इस से भी अधिक उन का जोर आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों पर रहता है। उन का कहना है कि मुसलानों की बहुत सो प्रथायें और प्रायः सब त्यौहार ऐसे ढंग से बने हुए हैं कि वे उन में एकता की प्रवृत्ति उत्पन्न करते हैं। हिन्दुओं की प्रार्थना, ध्यान और पूजा में सामाजिकता गौण है और व्यक्ति और परिवार की मुख्यतः प्रधानता है। ताजियों के जलूसों को मुसलमान लोग प्रायः मजहबी जोश को भड़काने का साधन बना देते हैं। इसी प्रकार उनका दिन में पांच बार मस्जिद में इकट्ठा होकर नमाज का पढ़ना भी उनकी सामाजिक दृढ़ता में सहायक होता है। अतः ऐसी दशा में स्वामी दयानन्द महाराज ने साप्ताहिक सत्सङ्ग रख कर आर्यसमाज के संगठन को दृढ़ करने की योजना रखी थी। उन्होंने साप्ताहिक सत्सङ्ग के स्थान पर एक 'सह संध्या' की योजना भी रखी है। उनका विचार है कि जिस प्रकार शहर में मुसलमानों की स्थान-स्थान पर मस्जिदें हैं वैसे ही स्थान-स्थान पर आर्यसमाज मंदिर हों। यह सम्भव नहीं कि प्रतिदिन दो बार कोई व्यक्ति अपने स्थान से १॥ मील दूर स्थान पर जाकर संध्या करे। इस लिए सह संध्या के लिए आर्य परिवारों को प्रयत्न करना होगा और अपने घरों में अपने मुहल्ले वालों को इकट्ठा कर यह करना होगा।

(शेष पृष्ठ ५ पर)

देश की महानता गुणों से

(पृष्ठ ३ का शेष)

अन्य उन्नत देशों के साथ मिलना कठिन हो जायगा। भारत एक विशाल राष्ट्र है। लेकिन देश की महानता देश वासियों की संख्या से नहीं अपितु उन के गुणों से जानी जाती है। विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने वालों पर देश के विकास में विशेष भूमिका निभाने का उत्तरदायित्व आता है। उन्हें संकीर्णता को त्याग कर स्वस्थ और व्यापक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का स्वास्थ्य प्रभु की अपार कृपा से सुधार की ओर

श्री आनंद स्वामी जी महाराज का हैदराबाद दक्षिण से २०-१०-६३ का पत्र—

मेरे प्यारे शास्त्री जी आनंदित रहो

चालीस दिन के लंबे ज्वर ने तथा दो आपरेशनों ने शरीर को निर्बल बनाया है परंतु मुझे तो निर्बल नहीं बना सके। प्रभु इच्छा पर रह कर खूब मजे से प्रभु भक्ति के स्तोत्र गाता हूं। गाया नहीं जाता तो गुन गुनाता हूं और कह उठता हूं "वाह वाह मौज फकीरां दी" अब शरीर ठीक है परन्तु नवम्बर के अंत तक विश्राम करना पड़ेगा दिसम्बर से प्रभु कृपा से फिर सेवा कार्य शुरू कर दूंगा। सब से पूर्व जालन्धर ही पहुंच कर कथा करूंगा। सब को नमस्ते।

भवदीय

आनंद स्वामी सरस्वती

सुचारु विरोध

(श्री पृथ्वोचन्द्र, जी एम. ए., होश्यापुरी)

'स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है', महर्षि दयानन्द ने यह नारा आज से लगभग सौ वर्ष पहले लगाया। इसी बदौलत तथा महर्षि की तपस्या के फलस्वरूप आज भारत स्वतन्त्र है। परन्तु महर्षि द्वारा लगाए हुए स्वतंत्रता के इस पौधे की ओर आर्यसमाज के तनिक भी ध्यान न देने के कारण कुछ स्वार्थी टट्टू आज़ादी को आज बरबादी में बदल रहे हैं। उस महान् तपस्वी द्वारा प्रदत्त उस स्वतन्त्रता की वह दुर्दशा कर रहे हैं कि जिसे देखकर एक सच्चे आर्य के हृदय पर चोट लगती है। महर्षि ने तत्कालीन त्रुटियों आदि का सच्चा विरोध किया था, आर्यसमाज की नींव इसी सच्चे विरोध पर आश्रित है, जिसका असली उद्देश्य प्रजा के सब प्रकार के कष्टों को दूर करना है। आज भारत में प्रजा की दुर्दशा हो रही है, इस का विरोध करना आर्यसमाज का परम धर्म है। भारत में प्रजातंत्र (डैमोक्रेसी) है, डैमोक्रेसी को भली प्रकार से चलाने के लिए सुचारू विरोधी दल की आवश्यकता होती है। यदि सुचारू विरोध (Healthy Opposition) न हो तो डैमोक्रेसी में वे दोष आ जाते हैं जो आजकी भाररत की कांग्रेस सरकार में आप को दिखाई देते हैं। सुचारू विरोध करना आर्य समाज को आता ही है। आर्य सज्जनों से अपील की जाती है कि इस समय वे भारत की डैमोक्रैटिक (प्रजातन्त्री) सरकार को अच्छी प्रकार का एक विरोधी दल दे कर प्रजा की दिन प्रति दिन गिरती हुई दशा को सुधारें। भारत के समस्त हिन्दू एक अच्छी प्रकार का संसद के लिये विरोधी दल बना कर भारत की प्रजातन्त्रीय सरकार की सहायता करें। भारत के वर्तमान कष्टों का और कोई इलाज नहीं। आर्य समाज इस दिशा में दु:खी जनता का मार्ग प्रदर्शन करें। हिन्दू फिरका प्रस्त नहीं। संसार के किसी एक देश में क्या इतने मजहब पाये जाते हैं जितने कि अकेले भारत में? क्या यह कभी फिरका प्रस्तों का देश हुआ? फिरका प्रस्त तो वे देश है जहां केवल एक ही धर्म या अधर्म पाया जाता है।

आज भारत में यदि आर्य समाज ऐसी सुचारु विरोधी पार्टी नहीं बना सकेगा तो प्रजा के कष्ट बढ़ते चले जायेंगे, यह बात आर्य समाज के विरुद्ध है। भारत में अकाल पड़ने पर, बाढ़, बीमारी, भूकम्प का आक्रमण होने पर जब जब भारत की प्रजा पर कष्ट पड़ा, आर्यसमाज का ही सदा, सब से पहले दिल सहायता करने के लिये पसीजा। आज भारत में प्रजा पर फिर से कष्ट है। क्या आज भी आर्य समाज का दिल पसीजेगा? इस महा संकट के निवारणार्थ क्या आर्य समाज एक सुचारु विरोधी दल (Healthy Opposition) संसद में भेजेगा? क्या इसके निर्माणार्थ पग उठाने में पहल करेगा? जब से आर्यसमाज ने अपने कार्यक्रम से सुचारु विरोध करने के प्रोग्राम को शिथिल कर दिया, तभी से आर्यसमाज की प्रगति मन्द सी पड़ रही है। यदि आर्यसमाज उक्त प्रयत्न नहीं करेगा तो जैसा कैसा अयोग्य राज दूसरे इस पर करेंगे उसके कष्ट सहता रहेगा, क्या महर्षि ने स्वतन्त्रता की दागबेल इसीलिये डाली, क्या महर्षि ने कष्ट इसीलिये झेले कि स्वतन्त्र भारत में आर्य समाज दुराज्य का शिकार बना रहे? नहीं, कदापि नहहीं।

जो समाज गलत प्रकार का रूढ़ीवादी हो जाता है वह नष्ट हो जाता है। जब आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ने ही स्वराज्य का चक्र चलाया तो फिर आर्यसमाजें राजनीति की ओर से आंखें बन्द करके कष्टों पर कष्ट क्यों भोग रही हैं?सारे संसार का कल्याण करने का उद्देश्य रखने वाली संस्था आर्यसमाज भारत की प्रजातन्त्रीय सरकार को विरोधी दल दे कर क्या भारत सरकार तथा भारत वासियों का कल्याण करेगी?

विशेषत: जब कि अब भारत की प्रजातन्त्रीय सरकार को इस प्रकार सुचारु विरोध की परमावश्यकता है! यदि हिन्दू अब इसी प्रकार का विरोधी दल न पेश कर सके, तो इस में आर्य समाज दोषी ठहरेगा क्योंकि जहां आर्य समाज सारे संसार के कल्याण का दावा करता है, वहां वह हिन्दू समाज का भी अग्रणी है उस के कल्याण का भी उसे ध्यान होना चाहिये।

अब तो कार्य ही बड़ा सहल है, एक सुचारु विरोधी दल-संसद के लिये बनाना है और भारत का कल्याण हुआ कि हुआ। ऐ आर्य, उठ, जाग, संसार का कल्याण कर! इस सुअवसर का सदुपयोग कर! अब तो अफ्रीका के हब्शी भी स्वतन्त्र तथा संगठित हो चले! ऐ 'संवदध्वं', 'संगच्छध्वं' का पाठ पढ़ने वाले हिन्दु, क्या तुम भी संगठित हो सकोगे?

ऐ आर्य हिन्दू! उठ, संगठित हो कर उक्त प्रकार से राम राज्य की नींव डाल! और सारे संसार का कल्याण कर!!

—

दयानन्द वचनामृत

लोग मुझे सम्मति देते हैं कि सत्य का प्रकाशन न कीजिये। इस से कमिश्नर रुष्ट होगा, गवर्नर बिगड़ जाएगा परन्तु मैं तो किसी भी शक्तिशाली मनुष्य के भय से सत्य का प्रकाश-प्रचार त्याग नहीं सकता। इस कर्तव्य-कर्म को करते मैं किसी का भी डर नहीं मानता। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि आत्मा अमर और अविनाशी है। यदि कोई ऐसा माई का लाल यहां हो जो कहे कि मैं आत्मा का छेदन-भेदन कर सकता हूं, उसके टुकड़े बना सकता हूं, तब ही मैं सोंचूंगा कि सत्य का प्रकाश करूं वा न करूं। परन्तु इस क्षणभंगुर देह की रक्षा के लिए, चार दिनों के जीने के लिए मेरा सत्य के प्रचार को बन्द करना सर्वथा असम्भव है।

—स्वामी सत्यानन्द जी

कामराज योजना और.....

(पृष्ठ ४ का शेष)

आज स्थान और विषय का विस्तार न कर 'पुरुषोत्तम योजना' के दो महत्वपूर्ण पहलुओं का दिग्दर्शन मात्र करा रहा हूं और आशा करता हूं कि आज महर्षि के बलिदान के दिन हम आर्यसमाज केलिए ऐसी ही कोई योजना जारी करेंगे। मुझे तो यह 'पुरुषोत्तम योजना' 'कामराज योजना' से अधिक शक्तिशालो प्रतीत होती है।

सामयिक लेख

विजयादशमी पर्व का वास्तविक स्वरूप

(श्री टेकचन्द जी प्रभाकर जालन्धर नगर)

वैदिक काल था प्राचीन समय से आर्य जाति में एवं वर्तमान काल से आर्य समाज में मनाये जाने वाले पर्वों एवं उत्सवों का यदि वर्गीकरण किया जावे तो उन के उद्देश्यों की दृष्टि से चार वर्ग बनते हैं।

१. किसी आवश्यक अवसर पर बड़े यज्ञ के लिये मनाये जाने वाले पर्व जैसे दर्शेष्टि, पौर्णमासेष्टि नवसस्येष्टि, तथा चातुर्मास्येष्टि वैदिक कालीन पर्व हैं।

२. किसी विशेष ऋतु (मौसिम) के परिवर्तन की समारोह पूर्वक सूचना देने के लिये दीपावली होली, संवत्सरेष्टि तथा नवसंवत्सरेष्टि (नये वर्ष का आरम्भ) दिन आदि पर्व इसी श्रेणी में आते हैं।

३. सर्वसाधारण के मनोरंजन और हृदयोल्लास (मानसिक खुशी) प्रकाश। शरद् पूर्णिमा, हरितृतीया (तीजो) वसन्तपंचमी, और होलिका आदि इस वर्ग में आते हैं।

४. किसी युग प्रवर्तक महात्मा, कर्मवीर, शूरवीर, प्रणवीर साहित्य-वीर, दानवीर आदर्श प्रतापी पूर्व पुरुष वा किसी ऐतिहासिक घटना की स्मृति (यादगार) मनाने के लिये। जैसे रामनवमी, श्री कृष्ण-जन्माष्टमी, दयानन्द बोधरात्री, दयानन्द निर्वाण दिवस, आर्य समाज स्थापना दिवस आदि दिवस।

इन चार प्रकार के पर्वों एवं उत्सवों के अतिरिक्त आज कल मनाये जाने वाले राष्ट्रीय पर्वों की गणना पांचवे वर्ग में की जा सकती है। जैसे १५ अगस्त, २६ जनवरी, अधिक अन्न उगाओ, वनमहोत्सव तथा राष्ट्रीय एकता दिवस। जो गत सप्ताह १४ से २० अक्तूबर तक) भारत सरकार की ओर से मनाया गया है।

विजयदशमी पर्व क्यों मनाना चाहिये और इस का वास्तविक रूप क्या है इस का उल्लेख आर्य पर्वपद्धति (सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली द्वारा प्रकाशित)में से उद्धृत किया गया है ताकि सभा समाजें २७ अक्तूबर को इस को मनाने का आयोजन करें।

हुआ प्रकृति का निर्मल जीवन,
स्वच्छ गम्य सब बन गए बन।
विमल व्योम में छिटके तारे,
मुदित हुए हैं जिगमिषु सारे॥
(श्री गिरिधर शर्मा नवरत्न)

विजयार्थी विजयार्थ चले हैं,
व्यापारी भी चल निकले हैं।
विजया दशमी दुन्दुभि बाजी,
नरपतियों ने सेना साजी।
क्षात्र तेज से वीर भरे हैं,
वे उत्साह शक्ति-प्रेरे हैं॥
(श्री सिद्ध गोपाल काव्यतीर्थ कविरत्न)

> श्री मास्टर टेकचन्द्र जी वर्तमान युग के नवयुवक हैं। दाबा हाई स्कूल में अध्यापन कार्य करते हुए भी धर्म की अटूट लगन है। सामयिक लेख में विजय दशमी के पर्व पर बड़ी छानबीन के साथ विचार संग्रह किया है एक बार पठन से सारे पर्व की महत्ता, उपयोगिता प्रकट हो जाती है। आशा है कि भविष्य में भी ऐसे सामयिक लेखों द्वारा आर्य जगत की सेवा करते रहेंगे और हम उनकी विचारधारा को जनता तक पहुंचाते रहेंगे।
>
> —व्यवस्थापक

जगतीतल में भारतवर्ष ही एक ऐसा भूखण्ड है जहां वर्षा की ऋतु अन्य ऋतुओं से पृथक होती है। अन्य देशों में शीत (जाड़ा) और उष्ण (गर्मी) दो ही ऋतुएं होती हैं। उन में ही समय समय पर वर्षा भी होती रहती है किन्तु भारत में जाड़ा गर्मी, और बरसात के तीन मौसम वर्ष के चार-चार मास रहते हैं। वर्षा के चातुर्मास्य (चौमासा) में वर्षा का इतना प्राचुर्य (अधिकता) रहती है कि उस में बंगाल आदि कई प्रदेशों (प्रान्तों) में तो जल थल एक हो जाता है। भारत के अन्य प्रांतों की नदियां भी बाढ़ से उमड़ पड़ती हैं। ताल तलैया जल से परिपूर्ण हो जाते हैं। आने जाने के सारे मार्ग कीचड़ और जल से भरे रहते हैं। चार मास तक शकट आदि (गाड़ी तांगों) वाहनों का यातायात प्रायः रुका रहता है। किसान अपने गाड़ी तांगों को पृथक् २ करके रख देते हैं। प्राचीन भारत में तो जब यहां सड़कों वा राजमार्गों की बहुतायत न थी, वर्षा काल में यात्राएं बिलकुल ही बन्द रहती थीं राजन्यवर्ग (क्षत्रिय लोगों) की विजय यात्रा और वैश्यों की व्यापार यात्रा वर्षा के चातुर्मास्य में रुकी रहती थी। वर्षा की समाप्ति पर जब शरद् ऋतु का प्रवेश होता था, तो इन अवरुद्ध (रुकी हुई) यात्राओं का पुनः प्रारम्भ होता था।

अब नदियों की गाध (उथला) करती हुई और मार्ग के कीचड़ों को सुखाती हुई, शरद् ऋतु का पदार्पण (आगमन) हो गया है जलाशयों (ताल तलैयों) में कुमुदिनियां (कुई) खिल रही हैं। निर्वृष्ट (बरसे हुए हलके मेघ) सूर्य के मार्ग में से हट गए हैं, इस लिये उस का प्रताप (तेज) चारों दिशाओं में फैलने लगा है। शरद् ऋतु की सम्राज्ञी श्वेत कुमुदिनी के छत्र और खिले हुए कांस के चमर से शोभा पा रही है। स्वच्छ चांदनी आंखों को अतीव आनन्द देती है। स्थल पर हंसों की पंक्तियां, आकाश में ताराओं और जलाशयों (तालाबों) में कुमुदिनियों पर श्वेतता (सफेदी) छाई हुई। ईखें बढ़ कर लम्बी और सघन हो गई हैं और उनके खेतों की छाया में मेंड़ों पर बैठे हुए गोपाल बाल मधुर गीत गा रहे हैं। अगस्त्य नामक तारे का उदय होते ही जलाशय स्वच्छ हो गए हैं। गाड़ियों के बैल वर्षा भर छूटे रह कर और यथेष्ट (मन चाहा) घास चर कर खूब तैयार हो गए हैं। उनके ठांट मोटे हो कर बड़े सुन्दर प्रतीत होते हैं। वे आनन्द से उन्मत्त होकर खोद खोद रहे हैं व प्रक्रीड़ा कर रहे हैं। सींगों से नदियों की गांगों को ढा रहे हैं। शारद् (सप्तवर्ण) वृक्ष के पुष्प खिल रहे हैं और उन में से हाथी के मद की सी गन्ध आ रही है। चारों ओर शरत् श्री विराज रही है। ऐसे समय में ही इन दिनों ही दिग्विजय यात्रा और व्यापार यात्रा के पुनः प्रारंभ की तैयारियाँ होती हैं। विजयदशमी उत्सव का समारोह समारम्भ होता है। बरसात में जंग लगे हुए योद्धाओं के खड़गादि (तलवार आदि) शस्त्र और कवच संघर्षण द्वारा (सकल कर के) स्वच्छ और शाणित किये जाते हैं, जिन की चमक आंखों में चकाचौंध उत्पन्न करती है। अश्वों (घोड़ों) और हाथियों की सज्जा सामग्री (साज अर्थात् वल्गा =लगाम, इयाग=पलान आभूषण और हौदे आदि) का संस्कार और सुधार किया जाता है। चतुरंगिणी सेनाएं सुसज्जित की जाती हैं।

वैश्यों (कृषकों और व्यापारियों) के चार मास से उढ़ले पड़े हुए शकटादि वाहन (छकड़े) धोने, पोंछने और तैल मर्दनादि द्वारा बांध जुड़ कर यात्रा योग्य सन्नद्ध (तैयार) किये जाते हैं। तथा व्यापारियों की दुकानों पर मसिपात्र आदि लेखन उपकरण स्वच्छ किये जाते हैं, और नये बहीखाते और बस्ते बदले जाते हैं। (क्रमशः)

दर्शन-सिद्धान्त

(ले०—डा० शंकर दास जी मेहरा H.M.B. लारेंस रोड़ अमृतसर)

(गतांक से आगे)

ऐसी प्राप्ति किसी ने इस जन्म में की हो अथवा पहिले जन्मों में कर आया हो अर्थात् जिस ने कर्म-काण्ड (धर्म सूत्र) समाप्त कर लिया है वे अवश्यमेव ज्ञान और उपासना के अवसर पर प्राप्ति में लग जावेगा। प्रभु कृपा से मरण समय ईश्वरीय नियम के अनुसार मानव आगे की सीढ़ी के सामान को अगले जन्म में प्राप्त करता है। यही प्रभु की दयालुता है। पहिला किया हुआ धर्मानुष्ठान व्यर्थ नहीं जाता। देह पात के बाद वह ऐसे घर, देश और जाति में जन्म लेगा जो उस की योग्यता के अनुसार होगी। प्रत्येक जिज्ञासु किसी न किसी मंजिल पर खड़ा होता है और अपने ध्येय के अनुसार अपना रहन—सहन, खाना पीना, बोलना चालना, अपने स्वभाव से तप स्वाध्याय आदि में प्रवृत होता है।

इन दर्शनों की परम्परा से यह प्रत्यक्ष है कि ये उपदेश दर्शनों के अधिकारियों के अनुसार किये गये हैं। परन्तु भारत वर्ष के पतन का बड़ा भारी कारण यही है कि अधिकार प्राप्त किये बिना वेदान्त के पाठक वेदान्त का उपदेश भोली भाली जनता विशेषतया स्त्रियों में कर रहे हैं। वेदांत के पूर्ववर्ती पांचों दर्शनों का खण्डन कर संसार को पथ भ्रष्ट कर रहे हैं और अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे हैं।

'वेदों का ज्ञान कैसे समझ में आये?'

इस का उत्तर महर्षि कपिल ने सांख्य दर्शन के पांचवें अध्याय के सूत्र में निम्न प्रकार दिया है:—

'लोके व्युत्पन्नस्य वेदार्थ प्रतीतिः'

अर्थात् दर्शनों के ज्ञान से वैदिक बुद्धि उत्पन्न होने पर मनुष्य चतुर हो जाते हैं वही जन वेद के अर्थ को यथार्थ समझ सकते हैं।

आर्यसमाज ने देश प्रेम के गीत गा कर लोगों को जगाया

ले०—श्री भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर

(गताक से आगे)

आर्य कवियों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। एक वे जो केवल कवि थे अथवा हैं और दूसरे कवि और गायक! होश सम्भालने के बाद जिन गायक कवियों और केवल गायकों को मैंने सुना है वे हैं—श्री चूनीलाल खन्ना सरदार, यशवन्त सिंह वर्मा टोहानवी, श्री चन्द्रकवि, ठाकुर प्रवीण सिंह, श्री सन्तराम, कुंवर सुखलाल आर्य मुसाफिर, कुंवर जोरावरसिंह, श्री आशानन्द, पं. नन्दलाल, श्री हरवंसलाल 'हंस', विश्व प्रेमी जी (कवि तथा गायक) भगत गंगाराम, देशबन्धु, म० गिरधारीलाल, म० दुनीचन्द, पं. शिवशरण, म० हरिश्चन्द्र,चिमटा भजन मण्डली—केसरचन्द, व कर्मचन्द, श्री मेलाराम, श्री ताराचंद श्री हजारीलाल, श्री सोहनलाल, श्री भक्तराम, श्री सत्यपाल, चिमटा मण्डली राजपाल व मदन मोहन, म० अमीचन्द (केवल गायक)।

ऊपर लिखित भजनोपदेशकों ने अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार देश के जागरण और उत्थान के कार्य में अग्रभाग लिया। म० चन्द्रकवि और कुंवर सुखलाल को तो अनेक वार कारावास भी हुआ। कुंवर सुखलाल जी की वक्तृत्व शैली अद्भुत और फिर देश तथा जाति के प्रति उनके दिल की तड़प सोने पर सुहागे का काम देती है। उनकी वाणी में जादू का सा प्रभाव है। पाठक उनकी वाणी का चमत्कार उन्हीं के शब्दों में पढ़ें—

'मुसाफिर' क्या तेरे तर्जे ब्यां में
ऐसा जादू है।
तेरे अश्यार पर क्यों सुवाद सब
उस्ताद करते हैं॥
अकेला बैठ मुसाफिर तू
बज्मे शेरा में।
किसी से भी तेरा
तर्जे ब्यां नहीं मिलता॥
शुकरिया उसका अदा
कर तू 'मुसाफिर'
जिस ने तेरी ज़बां में
जादू की सदा रखी है॥
'मुसाफिर' साफ़गोई का
तेरी शोहरा है आलम में।
तबीयत इन दिनों तुम-सी
भला आजाद किसकी हो॥
'मुसाफिर' धर्म जाति की
लग्न में दिल तड़पता है।
न फिर मुकबूल आलम में
तेरा तर्जे ब्यां क्यों हो।

सच्चे देश भक्त महर्षि दयानन्द के सच्चे अनुयायी आर्यसमाजी देश भक्ति के प्रचार में पीछे कैसे रहते। आर्यसमाज के भजनोपदेशकों का देश में क्रान्ति लाने में बड़ा भारी हाथ है। श्री जिज्ञासु जी का शुभ संकल्प परमात्मा पूर्ण करें। परमात्मा का वरद हाथ उन पर है और आर्य भाइयों की शुभ इच्छाएं उनके साथ हैं अवश्य सफलता मिलेगी।

शुभ जन्म

सभा के उपदेशक श्री प्रभु दयाल जी आर्य प्रभाकर के गृह प्रभु कृपा से नवीन आत्मा ने पुत्र रूप में जन्म लिया है। ईश्वर बालक की दीर्घायु करें यही आर्य परिवार की शुभ कामना है।

—व्यवस्थापक

ईश्वर विश्वाससे निर्भयता...

(पृष्ठ २ का शेष)

उस के बारे में तो सोचना बेकार है। जो वर्तमान में बीत रहा है तो वह सामने ही है, उसका उपचार हो ही रहा है, यह भी आज या कल परसों बीता हुआ बन जायगा। जो आज वर्तमान है कल को यही बीता काल बन जाता है। इस की भी उतनी चिन्ता नहीं है। किन्तु जो दुःख अभी आया नहीं उसका विचार तो किया जाता है। अनिश्चित रूप होने से उस से भय होता है। मैंने देखा कि ज्योतिषियों के पास जाने पर कई लोग आने वाले अपने दुख के बारे में मन में धारणा बिठा लेते हैं—परिणाम ऐसा भी भय का देखा कि जिस को एक साधारण सा जुकाम लगा वही मन के भय के कारण नमूनिया बन कर उनके लिये भीषण प्रभाव करने वाला बन गया। यह भय की भावना जीवन में भयानक प्रभाव पैदा कर दिया करती है। निर्भयता ऐसी अनिश्चित स्थिति को सर्वथा समाप्त कर देती है।

आवश्यक सूचना

समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा आर्य समाजों के ज्ञातार्थ निवेदन है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज तथा अन्य प्रतिनिधि सभाओं से इस आशय के पत्र प्राप्त हुए हैं कि ऋषि मेला की वेदी पर श्री स्वामी विद्यानन्द जी विदेह के भाषण न कराये जायें।

ऋषि मेला को किसी विवाद का विषय बनाना वांछनीय नहीं, ऐसा निवेदन श्री स्वामी विदेहजी से कर दिया गया और उनका पत्र भी आ गया है कि वे ऋषि मेला में सम्मिलित नहीं होंगे।

—संयोजक, ऋषि मेला

अदालत

इश्तहार वा अदालत श्री बनः ... ेयर सब जज नारनौल (जेर आर्डर ५ रूल २० ३ नंबर १७० रुजूआ २१-७-६३

रामजी लाल मूलचन्द मनोहरलाल ... पिसरान हर-नारायण नाकड़ा-अग्रवाल चन्द्र पुरा मुद्दैयान

बनाम

गुरदयाल, सत्पाल सिंह, महावीर सिंह, बेअन्त सिंह, धर्म सिंह पिसरान ठाकुर जौहरसिंह राजपूत कानूनी मुद्दैलान। दावा दस्तावेजों अराज़ी जेरे वजरिया हक्क शुफा

नोटिस—बनाम सतपालसिंह, महावीरसिंह, बेअन्तसिंह, बा मुकद्दमा सदर में अदालत हुजा को पूरा यकीन हो चुका है कि मुद्दैलम पर तामील समन असालतन नहीं हो सकती। क्योंकि वो दीदा दानिस्ता तामील से दर गुजर करते हैं इसलिए बजरिया इश्तहार हुजा मुद्दालय मुन्दर्जावाला को मुत्तला किया जाता है कि आप मोरखा ७-११-६३ को असालतन या वकालतन हाजिर अदालत हुजा होकर जवाब देही व पैरवी मुकद्दमा करें। बसूरत दीगर आपके खिलाफ कार्यवाही यक तरफा अमल में लाई जाएगी।

आज मोरखा १०-१०-६३ को यह सबत मोहर अदालत व दसखत हमारे से जारी किया गया। —मोहर अदालत

समीक्षा

'आर्य प्रेमी' का विशेषांक ऋग्वेद शतक

सम्पादक—वैद्य मोहन लाल 'आर्य प्रेमी'

मूल्य—सादा कागज़ ५० नये पैसे, बढ़िया कागज़ ७५ नये पैसे।

प्राप्ति स्थान—'आर्य प्रेमी' कार्यालय नला बाजार पोस्ट बक्स नं० २७, अजमेर।

जुलाई, ६३ का प्रस्तुत विशेषांक ऋग्वेद के १०० भक्ति प्रधान मन्त्रों (व्याख्या सहित) और २८ भजनों का सुन्दर संग्रह है। स्वाध्याय शील प्रभु भक्तों के लिये अमूल्य सम्पत्ति है। आर्य भाई इस प्रकाशन से लाभ उठावें। मुख्य पृष्ठ पर महर्षि दयानन्द का रङ्गदार चित्र है। आकार प्रकार आकर्षक और छपवाई उत्तम है।

सूचना

आर्यसमाज के सभी सज्जन पुरुषों को यह जान कर अति हर्ष होगा कि हम ने एक नई आर्यसमाज संस्था हरिपुर कांगड़ा में स्थापित की है। आर्यसमाज के सभी सज्जन पुरुषों में प्रार्थना है कि वे अपनी अपनी इच्छानुसार इस आर्यसमाज को चलाने के लिये दान के रूप में रुपये और आर्यसमाज की हिन्दी की पुस्तकें शीघ्र ही निम्न पते पर भेज दें। बनखंद गांव के श्री बलदेव जी चौधरी ने पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में ११) रु० समाज को दान दिए हैं। रोशनलाल चौधरी

नई आर्यसमाज हरिपुर (कांगड़ा)

[आर्य]जगत का ऋषि निर्वाण अंक

प्रति वर्ष की भान्ति इस वार १५-११-६३ को ऋषि निर्वाण अंक ५२ पृष्ठका पुस्तका कार में २०×३०/८ साईज में प्रकाशित हो रहा है मुख पृष्ठ पर महर्षि स्वामी दयानन्द जी का तिरंगा फोटो भी दिया जाएगा।

यह अंक ३१-१० नवम्बर को सम्मिलित अंक होगा।

इस अंक को अधिकाधिक सुन्दर बनाने के लिए देश के अनेक उच्च कोटि के विद्वानों, संन्यासियों तथा कवियों की रचनाओं का संग्रह किया गया है।

अतः आर्यसंस्थाओं, समाजों स्कूलों और कालिजों के अधिकारियों से बलपूर्वक अनुरोध है कि वे सर्व साधारण सदस्यों और स्त्री, पुरुषों में बांटने के लिए अधिक से अधिक आर्डर २८.१०.६३ तक सभा कार्यालय में देने की कृपा करें। बाद के आर्डरों को ठीक समय पर पालन करना कठिन होगा। विज्ञापन दाताओं व व्यापारियों के लिए सुनहरा अवसर है।

लेखक महानुभाव और कवि अपनी २ रचनायें २०.१०.६३ तक भेज दें। —व्यवस्थापक

आर्यसमाज यूसफ सराए (ग्रीन पार्क) नई देहली

प्रधान—बिशन सहाय जी भू० पू० प्रि०, उपप्रधान—श्री देवराज जी कोछड़, श्री शंकरलाल जी पालो प्रि० क० हा० सै० स्कूल महरोली, मुख्य मंत्री—श्री शालिग्राम जी गौतम, संयुक्त मंत्री—श्री सत्यपाल जी, श्री रामकृष्ण जी शास्त्री, प्रचार मंत्री—नरेन्द्र कुमार जी पांडे, कोषाध्यक्ष—श्री वेदपाल जी खन्ना, स० श्री मदानन्द जी चान्दना, पुस्तकाध्यक्ष—श्री बलदेवकृष्ण जी, आडीटर—श्री सी० एल० 'भल्ला', महिला संघटनमंत्राणी—श्रीमती नंदलाल जी, अंतरंग सदस्य—श्री भगवानदास जी, वर्मन जी, चौ० रघुवीर सिंह जी, प्रि० सोमनाथ जी।

श्री बिसारिया जी, श्री छोटे लाल जी, श्री शुक्ला जी, श्रीमती परमेश्वरी देवी जी। —शालिग्राम गौतम मुख्य मंत्री समाज

पंजाब आर्य वीर दल (करनाल) का पुनर्गठन

संचालक—श्री प्रो० उत्तम चन्द्र जी शरर M.A. मंत्री—श्री रघुबीरसिंह जी वर्मा, कार्यालय मन्त्री—श्री वीरराम जी एम. ए., बौद्धिक अध्यक्ष—श्री सुन्दरसिंह जी B.A., आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आ० प्रादेशिक सभा (जालंधर) के मन्त्री, कोषाध्यक्ष तथा वेद प्रचार अधिष्ठाता नियमानुसार 'पदेन' नियुक्त हुए।

रघुवीरसिंह वर्मा मन्त्री पंजाब आर्य वीर दल (कार्यालय करनाल)

आल इण्डिया दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर

इस संस्था ने मास सितम्बर में २८१ क्रिश्चियनों को हिन्दु धर्म में प्रविष्ट किया यह कार्य पंजाब, बिहार, और उड़ीसा में किया गया। दो निशुल्क औषधालय पानपोस जिला सुन्दरगढ़ में तथा तरनतारन जिला अमृतसर में खोले गए।

—शादीलाल मन्त्री मिशन

मुद्रक व प्रकाशक श्री सतोषराज जीमन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

ओ३म्

आर्य जगत्

का

ऋषि निर्वाण (दीपावली) विशेषांक

१५ नवम्बर १९६३—दीपावली २०२०

३, १०, १७ नवम्बर के ४३-४४-४५ सम्मिलित अंक वर्ष ६३

ओम् भूर्भुवःस्वःतत्सवितुर्वरेण्यंभर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥

ऋग् मं. ३-६३-१० यजु: अ. ३६ मं. ३

भाव :—हे हमारे प्यारे देव! आप भूः हो। हमारे प्राण हो, प्राणों के समान प्यारे हो। जैसे प्राण हमारे शरीर को चलाता है। यह हमारा भौतिक शरीर प्राणों की शक्ति से दौड़ता, गति करता है। वैसे इस सारे विश्व में आप प्राण बन कर संचारित करते हो। दुःख नाशक तथा सुखदाता है। स्वीकार करने योग्य हो, सर्वदा शुद्धरूप हो सब चराचर देवों के अधिपति महादेव हो। हम आप के उपासक, भक्त, पुत्र पुत्रियां आप का ही ध्यान, गान, सम्मान करते हैं। एक ही भिक्षा मांगते हैं। हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों में प्रेरित करते रहें। आप की कृपा बिना हम पाप मार्ग पर चल निकलते हैं। जब आप हमारे जीवन रथ के सार थी बन कर हमें पिता बन चलाते हो हम सुमार्गी बनते हैं कृपा करें। बुद्धि का दान, प्रसाद मांगते हैं। यही सब से बड़ी सम्पत्ति चाहते हैं। —सम्पादक

सम्पादकीय

देव दयानन्द का दिव्य दान

आज दीपमाला के दिन महात्मा विरजानन्द सरस्वती के विशिष्ट शिष्य, टंकारा के मूलशंकर, प्रान्त के शुद्ध चैतन्य तथा विश्व के दयानन्द महर्षि ने अपनी जीवनलीला समाप्ति पर अजमेर में एक महान् दान दिया था, दिव्य सन्देश दिया था। प्रतिवर्ष सारा आर्यसमाज दीवाली मनाकर उस तन,मन, धन,जीवन का समर्पण करने वाले जगद् गुरु का गुणगान गाता प्रशस्तियां सुनता सुनाता, दिपकजला कर उन के प्रकाश मे बैठा शोक-उल्लास की दोनों धाराओं को प्रवाहित होता देखता है। किन्तु उस देवता के सन्देश को जीवन में कहां तक आचरित किया है। इस प्रश्न का उत्तर प्रत्येक आर्य भाई व बहिन अपने मन से ही पूछे।

देवदयानन्द का अन्तिम सन्देश था—मेरे पीछे खड़े हो जाओ, सब द्वार खोल दो, ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो। इन तीन बातों में अपने सारे जीवन का चित्र प्रस्तुत कर दिया। हमारे लिए ऋषि के ये तीन गम्भीर जीवन, परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व का कल्याण करने वाले सूत्र हैं। इन की जितनी परिभाषा; व्याख्या की जाये, थोड़ी है। देव दयानन्द ने माता पिता के प्यार दुलार को छोड़ दिया। घर परिवार के संसार से भी अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। जीवन को सुखी; रंगीन बनाने वाली शारीरिक सुविधा की सामग्री के भण्डार को भी तिलांजलि दे दी। अपनी टंकारा भूमि का भी मोह मार दिया। यौवन के चमकीले स्वप्न भी सदा के लिए समाप्त कर के सन्यासी बन कर दुर्घट घाटियों में घूमते २ अनेक मौत से मिली दुर्घटनाओं का हंसते २ शिकार होना स्वीकार किया। गुरु विरजानन्द से दीक्षा ले कर वेदविमुख सारे विश्व को जगाने के महान् मिशन पर निकल पड़ा। पापी द्वारा दिये गये विषद्वारा मृत्युशय्या पर पड़े हुए अन्तिम संदेश में तीन बातें कहीं थीं—आर्यो! याद है या नहीं?

मेरे पीछे खड़े हो जाओ—मैं जिस वेदप्रचार के पवित्र मिशन में लगा रहा अब मैं तो चला हूं पर मेरे पीछे वेद प्रचार मन्द या बन्द न करना।

सब द्वार खोल दो—सब को वैदिक धर्म में ले आओ। आर्यसमाज के काम को विश्व में फैलाओ। मन में तंगभावना न भरना। आपस में लड़ने मत लगना।

ईश्वर! तेरी इच्छा पूर्ण हो—आस्तिकता की पताका ऊंची रखना। ईश्वर विश्वास को ढीला न होने देना। इस भौतिकयुग में अध्यात्मवाद को फैलाने में लगे रहना। प्रेम के साथ २ श्रेय का भी समन्वय करना।

आज दीवाली है। हमारे समाज की क्या अवस्था है? जीवन; परिवारों में आर्यत्व कहां तक है; हमारे बच्चे किधर जा रहे हैं? परस्पर संगठन कैसा है? आओ। दीवाली पर उस देवता के तीनों सूत्रों को जीवन में लाने का संकल्प करें।

—त्रिलोक चन्द

ऋषि-निर्वाण पर्व पर अपने कर्त्तव्य को पहिचानो

(पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी महाराज का क्रियात्मिक उद्बोधन)

जिस पवित्र उद्देश्य को पूर्ण करने के लिये जीवन मुक्त भगवान दयानन्द जी सरस्वती ने तिल-तिल मरना स्वीकार किया अपने मोक्ष आनन्द पर लात मारकर अपना बलिदान दे दिया—उस उद्देश्य की पूर्ति के लिये क्या मैं अपने जीवन का कोई क्षण व्यय कर रहा हूं यदि इस का उत्तर हां में है तब तो आप ऋषि निर्वाण पर्व मनाने के अधिकारी हैं—अन्यथा केवल दिखावा है, केवल अपने आप को धोका देना है,—आज यह शुभ पर्व मनाओ परन्तु यह भी विचार करो कि क्या मैं वेद प्रचार के प्रसार के लिए अपनी बुद्धि, अपना धन, अपना मन, अपना योग-बल, अपना प्रभाव, अपना समय कुछ दे रहा हूं, या नहीं ? आत्म निरीक्षण कीजिए—शान्त एकान्तमें बैठ कर उस नैष्ठिक बाल ब्रह्मचारी दयानन्द की रग-रग में फैले विष की वेदना को याद करते हुए ऋषि-ऋण उतारने का संकल्प कीजिए।

★ ★

दीपमालिका से

(रचियता श्री "शरर, जी एम. ए. आर्य कालिज पानीपत)

जिस योगी ने जान्हवी यमुना तट पर अलख जगाया।
सत्य प्रेम की बलि वेदी पर निज सर्वस्व चढ़ाया ॥
जिसके पुण्य प्रताप ताप से रिपु दल डर कर भागे ।
जिसकी सिंह गर्जना सुनकर सब नर-नारी जागे ॥
जो धर्ती तल पर निकला वेदामृत का दाता ।
अबला दीन अनाथ दलित का पिता बन्धु परित्राता ॥
जिसने सत्य सुधा सिंचन से मुनि-जन-मन हर्षाए ।
पाप दुर्ग का भेदन कर सत्यार्थ बाण बरसाए ॥
जो श्री राम-सा वीर भीष्म-सा था अखंड ब्रह्मचारी ।
जिसके तेज पर विकल कान्ति पर सूर्य चन्द बलिहारी ॥
हाय ! उसी सूर्य को तुमने काल समुद्र डुबाया ।
स्वागत कैसा करें तुम्हारा, तुमने हमें रुलाया ॥

अनुपम निर्वाण झांकी

(माननीय प्रिंसिपल सूर्यभानु जी M.A. वायस चांसलर कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी कुरुक्षेत्र)

आदरणीय वायस चांसलर विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र के इतने ऊंचे आसन पर बैठे हैं। उन का प्रभाव, व्यक्तित्व, योग्यता, गम्भीरता अपने अंदर विशेषता रखते हैं। आर्यसमाज के नेता, धर्मनिष्ठ तथा समाज के वर्तमान सूत्रधारों में से एक है। शिक्षा मैदान में तो उनकी सब पर धाक है ही, साथ २ आर्यसमाज को इस विभूति पर गौरव है। दिवाली अंक में पाठक श्री प्रिंसिपल जी का भी स्वादु प्रसाद लेवें—सं.

महायात्रा का दिन आया। महर्षि उस दिन भी नित्य की तरह शांत और गम्भीर थे। वे नित्यकर्म से निपटे। संध्या की, फिर वे सम्मिलित यज्ञ में बैठे। उन्हों ने शांतमन से वेदमंत्रों का उच्चारण किया फिर भक्तसमाज व आर्य कार्यकर्ताओं को संक्षिप्त सा भाषण दिया। अन्त में ओ३म का उच्चारण करके कहा-'प्रभो तुम्हारी इच्छापूर्ण हो।' और फिर शांतमन भूमिपर लेट गये। उन का शरीर निष्प्राण हो गया। यह थी महर्षि की परलोक यात्रा। यही था अनोखा दृश्य,जिससे नास्तिक विद्यार्थी गुरुदत्त आस्तिक बन गये थे उसे महर्षि के जीवन की बस यही अन्तिम झांकी मिली थी। वे महर्षि के सम्पर्क में अधिक नहीं आ पाये थे। बहुत अधिक उपदेश सुनने का भी अवसर न मिला था। यही एकमात्र दृश्य उनके जीवन को सर्वथा पलट गया।

मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य भी यही कहा जाता है। वेद, शास्त्र, उपनिषदें और गीता सभी इस समभाव की शिक्षा देते हैं। साधारण मन तो तनिक से सुख में अभिमान में फूला नहीं समाता। तनिक दुःख आने पर रोने लगता है। यही है घोर बन्धन। इसी भयंकर बन्धन को काटकर महापुरुष समता को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। प्रभु भजन, प्रभु विश्वास, योग, तप, संसार के सुखों का त्याग—ये सभी साधन उसी अमूल्य समता की प्राप्ति के प्रयत्न हैं। महर्षि उस अनोखे गुण को प्राप्त कर चुके थे।

महर्षि का निर्वाण चित्र आज भी आर्य जनता का पथप्रदर्शक है। आज भी संसार को माया की दल-दल में ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ व दुःखों के भय में न फंसने—उन से ऊंचा उठने का संकेत कर रहा है। अकेला यही शुभ गुण मृतप्राय जनता में नव-जीवन का संचार कर सकता है। यह जीत हार की, व्यक्तिगत सुख दुःख की, चिन्ता त्याग, कर्तव्य पथ की ओर बढ़ने की चेतावनी दे रहा है। आज के समाज में इसी गुण की न्यूनता है। सभी सुख-प्राप्ति के यत्न में, धन जुटाने में लगे हैं। व्यक्तिवाद की भावना जोरों पर है।

आओ ! उस महर्षि की इस अनुपम निर्वाण झांकी से हम भी उस समता गुण की शिक्षा लें। समान भाव वाला अपना शुभ जीवन बनायें। नव-जीवन प्राप्त कर कर्तव्य पालन में जूझने के लिए तत्पर हों।

लक्ष्य की सफलता

(प्रसिद्ध फिलास्फर डा० दीवान चन्द्र जी एम. ए. कानपुर)

स्वामी दयानन्द को विष दिया गया। किसने दिया और क्यों दिया ? इन प्रश्नों का बहुत महत्व नहीं। महत्त्व उस प्रतिक्रिया का है जो उन की ओर से व्यक्त हुई। जो कोई उन्हें देखता था, उसे उन का दुःख असह्य प्रतीत होता था। शरीर पर हर कहीं छाले थे, करवट लेना भी संभव न रहा। इस हालत में जो पूछता, उसे कहते—अच्छे हैं। अन्तिम दिन प्रातः कहा एक मास के बाद आज आराम का दिवस है। सायं के समय प्रार्थना की और कहा—ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो, तेरी इच्छा पूर्ण हो। इन शब्दों के साथ प्राणान्त हो गया।

जर्मनी के दार्शनिक ने कहा है कि बहुत से लोग मरना नहीं जानते क्योंकि उन्हें जीना नहीं आता। स्वामी दयानन्द को जीने और मरने दोनों का ज्ञान था। मुझे तो यही पता नहीं लगता कि उन का जीवन अधिक शानदार था या मृत्यु अधिक शानदार थी। हम सब का उद्देश्यजीवन को सफल बनाना है। इस सम्बन्ध में वेद में अनेक मन्त्र मिलते हैं। एक मन्त्र विशेष रूप से सामने है—

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।

व्रत से दीक्षा मिलती है, दीक्षा मिलने पर मनुष्य में योग्यता और निपुणता आती है। इस सफलता के फल स्वरूप उसका विश्वास अपने लक्ष्य के मूल्य में दृढ़ होता है। इस श्रद्धा से सत्य प्राप्त होता है।

स्वामी दयानन्द का सारा जीवन इस वेदमन्त्र की व्याख्या ही है। बालक मूलशंकर के आत्मा में प्रकाश की किरण पड़ी। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि आत्मा प्रकृति से ऊंचे स्तर पर है और इसे प्रकृति के सामने झुकना नहीं चाहिए। उस ने इस विषय में सत्य को जानने का व्रत धारण किया। कुछ समय के बाद घर को छोड़ा और आप को विशाल क्षेत्र में फैंक दिया। वर्षों के भ्रमण के बाद विरजा नन्द जी से भेंट हुई। विरजानन्द जी ने स्वामी दयानन्द को आचार्यमन्त्र का उपदेश दिया। इसी को दीक्षा कहते हैं। इस दीक्षा का फल यह हुआ कि स्वामी दयानन्द की सारी शक्ति केन्द्रित हो गई और उन्होंने अपने लिये जीवन कार्य को निश्चित किया। इस योग्यता या दक्षिणा ने उन्हें एक विशेष व्यक्ति बना दिया। १८ वीं शती में किसी अन्य व्यक्ति ने भारत को इतना प्रभावित नहीं किया, जितना स्वामी दयानन्द ने किया। ज्यों २ समय बीतता गया, अपने लक्ष्य के मूल्य में उन की श्रद्धा का एक उज्ज्वल चित्र है।

जिस सत्य की तलाश में वह घर से निकले थे वह सत्य उन्हें प्राप्त हो गया। उन का जीवन सफल जीवन था। इस से अधिक क्या चाहिए ?

आओ ! हम भी शांतचित्त होकर स्वामी दयानन्द का व्रत, उनकी दीक्षा, उन की दक्षिणा, उनकी श्रद्धा की बाबत चिन्तन करें। यही ऋषि-दर्शन है।

प्रभुविश्वास से निर्भयता का प्रसाद

तर्क के साथ श्रद्धा भी चाहिए

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० सभा प्रधान)

मानव जीवन में दुःख-सुख का चक्र तो चलता ही रहता है। जब तक हमारा जीवन चलता है तब तक निरन्तर रूप से यह चक्र भी अपनी गति करता है। यह कभी बन्द नहीं होता। कभी दुःख आता है और कभी सुखसुविधाके दर्शन होते हैं। दोनों भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में हमारे मन-जीवन की स्थिति भी भिन्न-भिन्न होती रहती है। कष्ट में हम अपने को दुःखी अनुभव करते तथा सुख में सुखी होते हैं। स्थिति के साथ-साथ ही हमारा सारा क्रियाकलाप भी बदलता जाता है। इस चक्र का प्रभाव आवश्यम्भावी है। इस से कभी कोई भी बच नहीं सका और न बच सकेगा ही। क्योंकि जीवन के लिए यह भी बड़ा आवश्यक ही है। दुःख-सुख का यह चक्र चलना भी चाहिए। इस से जीवन की परीक्षा होती रहती है। परीक्षा के बिना तो कोई भी न आगे ही बढ़ सकता है तथा न उस की योग्यता, सहनशीलता, धैर्य का ही परिचय मिलता है। जिस व्यक्ति को जीवन में दुःख नहीं आया अथवा जिस ने कष्टों, आपत्तियों की घाटी में कभी पैर नहीं रखा, ऐसा मनुष्य **Full Size** अपनी पूर्ण आकृति को प्राप्त कर ही नहीं सकता। मानव जीवन के आकार की पूर्ति के लिए एवं प्राप्त की हुई सिद्धियों केलिए यह बड़ा जरूरी है कि उनको टैस्टकी कसौटी पर परखा जाए कि जो हमारे पास गुण हैं,वे विषम परिस्थिति में भी पूरे उतरते हैं या नहीं? हम प्रभु की भक्ति करते हैं। किन्तु जिस समय दुःख की अवस्था आती है, उस समय भी प्रभु के प्रति हमारी आस्था में किसी प्रकार की न्यूनता तो नहीं आ जाती? उस हालत में भी वही अनुराग, प्रेम श्रद्धा का भाव बना रहता है या फीका पड़ जाता है। अथवा दुःख में तो भगवान को स्मरण किया जाता है, परन्तु जब सुख के साधन मिल जाते हैं मनुष्य ऐश्वर्य के भण्डारों में अपने आप को मस्त पाता है। ऐसी दशा में भी परमात्मा याद रहता है या नहीं? इस पर ध्यान देना चाहिए। यह दुःखसुख का चक्र चलता रहे, किन्तु हमारे जीवन में किसी प्रकार की कमजोरी न आने पाये। ये आपत्तियां, दुःख भी जीवन के लिए बड़े ही जरूरी हैं। इसी समय मनुष्य अपने गुण दोषों का मूल्य जान सकता है। इन के बिना भी जीवन अधूरा है। आकार में पूरापन आ नहीं सकता। इन कठिनाईयों के समय २ पर आने पर भी घबराता नहीं, रोने नहीं लगता वरन् इन पर बड़े धैर्य के साथ काबू पाने का यत्न करता है, वही पूर्णता को पा लेता है। **Full Size** की कीमती सम्पत्ति उसे प्राप्त हो जाती है। चलते २ मार्ग में

ऋषि दयानन्द और विद्यार्थी जीवन

(ले. श्री B. S. बहल M. A. प्रिंसीपल डी.ए.वी. कालिज जालन्धर)

महर्षि दयानन्द के जीवन से और पुस्तकों से जहां और अनेक शिक्षाएं मिलती हैं वहां अध्यापक तथा विद्यार्थियों के लिए भी कुछ आदर्श प्राप्त होते हैं। ऋषि दयानन्द स्वयं एक उच्च कोटि के विद्यार्थी थे उनका विद्यार्थी-जीवन यद्यपि २।।-३ वर्ष का ही रहा पर इस में उन्होंने जो कुछ गुरु विरजानन्द से प्राप्त किया उसने उनके विचार और जीवन दोनों को बदल दिया। इस थोड़े से समय में उन्होंने जो कुछ पढ़ा वह इतने ध्यान और एकाग्रता से कि साधारण व्यक्ति वही बात पढ़ने के लिए १०-१२ वर्ष लगाते हैं और फिरभी इतने योग्य नहीं हो पाते। इस ध्यान और एकाग्रता का मूल उनका तपस्वी जीवन, नियन्त्रण में रहने की प्रवृत्ति और गुरु पर गहरी भक्ति था। इन गुणों के साथ गुरु-सेवा की प्रबल इच्छा सोने में सुहगे का काम देती थी।

गुरु के प्रति उनकी श्रद्धा का इससे बड़ा और प्रमाण क्या हो सकता है कि प्रारम्भ से ही गुरु विरजानन्द के कहने से उन्होंने पहले पढ़े सब ग्रंथ यमुना में बहा दिए थे। उस श्रद्धा का दूसरा रूप यह था कि शिक्षा के समय और उसके बाद जीवन पर्यन्त कभी किसी ने उनके मुख से गुरु निंदा या आलोचना की बात नहीं सुनी। सदा उन्होंने

ठोकर लगती रहती है। कई बार यह ठोकर मनुष्य को नीचे भी गिरा देती है। ठोकर खा कर नीचे गिर जाने में कोई बुराई नहीं, न ही चिन्ता करने की बात है किन्तु हां-नीचे गिरने पर फिर साहस कर के ऊपर न उठना बुराई है। चलते २ गिर जाना तो स्वाभाविक है, जो चलता है वह तो कभी २ गिरा करता है। जो कभी चला ही नहीं, एक स्थान पर ही बैठा हुआ है उस ने क्या गिरना है और क्या आगे बढ़ना है। पथ में गिर जाने में किसी प्रकार की लज्जा नहीं पर न उठने में ही लाज या बुराई है। जो बच्चा गिरता नहीं वह चलना कैसे सीखेगा ? चलना और दौड़ना सीखते हुए तो एक बार नहीं कई बार पहिले भूमि मे गिरना होगा। किंतु गिर २ कर फिर उठना होगा तभी चलने की क्रिया पूरी आ सकती है। दो-चार बार पानी में गोते खाये बिना तैरना कैसे सीखा जा सकता है अंगरेजों के बारे में वहां पर एक उक्ति कही जाती है—**he is not a English man who dose not know how to give or receive a knoek.**

वह अंगरेज नहीं जो दूसरे का प्रहार सहन नहीं कर सकता। चोट खाना और चोट मारना मानव जीवन में साथ २ चलने चाहिएं। यदि हम चोट खाकर रोते रहते हैं। उसे सहन नहीं करते तो हम अधूरे हैं, हममें अभी तक निर्भयता का गुण नहीं आया।

गुरु की प्रशंसा ही की और यह भी उस बात के होते हुए कि गुरु विरजानन्द क्रोधी स्वभाव के और कठोर नियन्त्रण चाहने वाले व्यक्ति थे।

जिस ध्यान और एकाग्रता से वह पढ़ते थे वह भी अद्भुत थी। गुरु विरजानन्द का उनसे एक निर्णय या समझौता था। वह यह कि कोई बात दो बारा नहीं पूछी या बताई जाएगी।

उन के विद्यार्थी जीवन से ही पता लगता है कि वे इतने ध्यान से पढ़ते थे कि कभी दोबारा पूछने की आवश्यकता ही न पड़ी। केवल एक बार उन्हें एक बात भूल गई। पूछने पर गुरु ने कहा कि दोबारा नहीं बताई जायगी। विद्यार्थी दयानन्द संयमी योगी थे, यमुना के किनारे ध्यान से बैठ गए और बात स्मरण हो आई।

ऋषि दयानन्द का विद्यार्थी जीवन तपस्या का जीवन था। बहुत सादा भोजन, सर्दी गर्मी की परवाह नहीं, और कठिन परिश्रम यह उन के मूल मन्त्र थे। सर्दी हो गर्मी हो गुरु जी के स्नान के लिए यमुना के बीच से पानी लाना, गुरु जी के घर सफाई आदि नित्य के काम थे। आदर्श तपस्वी जीवन के बिना विद्यार्थी जीवन अधूरा रह जाता है।

गुरु विरजानन्द का नियन्त्रण अनुशासन कठोर था। उन की आज्ञा का ज़रा सा उल्लंघन हुआ तो वे विद्यार्थी को पाठशाला में आने नहीं देते थे। एक दो बार वे ऋषि दयानन्द से नाराज़ हुए पर ऋषि की अत्यन्त नम्रता ने उसकी नाराजगी दूर कर दी।

यदि ऋषि दयानन्द आदर्श विद्यार्थी थे तो गुरु विरजानन्द निर्लोभी आदर्श गुरु थे। उन्होंने ऋषि दयानन्द को केवल व्याकरण और शास्त्र ही नहीं पढ़ाए अपितु अपने आदर्श और प्रेम द्वारा जीवन के आदर्शों की प्रेरणा दी। उन्होंने देश में फैले अज्ञान की, बुराइयों को दूर करने का रास्ता दिखाया। एक तरह से गुरु विरजानन्द के पास रहने के कारण ऋषि दयानंद ऋषि दयानंद बन सके।

गुरु विरजानंद को अपनी विद्या पर विश्वास था, क्योंकि उन्होंने तपस्या और परिश्रम द्वारा वह विद्या प्राप्त की थी। उन्हें अपने शिष्यों पर भी अभिमान था। उनके शिष्य विद्वानों को शास्त्रार्थ में ललकारते थे। अपने शिष्यों पर अभिमान और विश्वास उन्हें इसलिए था कि वे जानते थे कि प्रेम, निर्लोभ और पूरे ध्यान से पढ़ाई हुई विद्या कभी निष्फल नहीं जाती।

हम लोग जो कि आर्यसमाज की शिक्षा संस्थाओं में काम कर रहे हैं उनके लिए गुरु विरजानन्द, एक आदर्श अध्यापक तथा ऋषि दयानन्द एक आदर्श विद्यार्थी के जीवन से बहुत सी बातें मिल सकती हैं।

अध्यापक निर्लोभी हों, सादा और ऊंचा जीवन व्यतीत करने वाले हों। सब से बढ़ कर उनके पास शिष्यों को विद्यार्थियों को देने के लिए ऊंचे विचार, ऊंचे आदर्श तथा परिश्रम और तपस्या द्वारा प्राप्त विद्या हो। साथ ही उन का सारा समय और ध्यान अपने विद्यार्थियों के लिए होना चाहिए। तभी वे गुरु विरजानन्द जैसे अध्यापकका अनुसरण कर सकते हैं।

विद्यार्थियों के जीवन में सादगी, तपस्या, अनुशासन हो, उनके मन प्रबल हों, एकाग्रता हो, उनके लिए ऋषि दयानन्द के विद्यार्थी जीवन से

(शेष पृष्ठ १७ पर)

संघर्ष और आर्यसमाज

(ले०श्री पं०सत्यदेव जी एम०ए० विद्यालंकार डी० ए० वी० कालिज जालन्धर)

आज से कुछ वर्ष पहले आर्य समाजी कहा करते थे कि वे छुरियों और लाठियों के साये में पले हैं। उनका कहना था कि इस्लाम की छुरियां और पुराने विचार वालों की लाठियां अब उन्हें डर नहीं देतीं। इन छुरियों और लाठियों से वास्ता इसलिए पड़ा कि ऋषि दयानन्द की शिक्षा ही ऐसी थी कि जिस का भी ऋषि के ग्रन्थों से सम्पर्क हुआ वह संघर्षमय जीवन पसन्द करने लगा। घर बैठे कायरों की मौत वह नहीं मरना चाहता था। आर्यसमाज के प्रायः सब नेताओं ने संघर्षों में जीवन बिताया, सदा अच्छे कार्यों के लिए खतरे मोल लिए।

अब आर्यसमाज संघर्ष से क्यों घबराता है। सारे देश में और विशेषकर पंजाब में अनेक संघर्ष चल रहे हैं उन में हमारा स्थान कहां है? आइए थोड़ा सूक्ष्मता से विचार करें।

मानव जीवन संघर्षमय है। मनुष्य मनुष्य में, परिवार परिवार में जाति जाति में आगे बढ़ने की होड़ लगी हुई है। प्रत्येक सजीव व्यक्ति और जाति अपने मान के लिए, अपने स्वार्थों के लिए मरने मारने को तत्पर रहते हैं। इस में कोई बुराई नहीं। यही प्रकृति है, यही जीवन है। घबरा कर पीछे रहने वाले जीवित नहीं रह सकते। यही सृष्टि का शाश्वत नियम है।

आज पंजाब की बात देखें तो स्पष्ट रूप से चार प्रकार का संघर्ष चल रहा है। एक राजनीतिक संघर्ष है, दूसरा धार्मिक संघर्ष है, तीसरा सांस्कृतिक संघर्ष है और चौथा भाषा सम्बन्धी संघर्ष है।

भाषा सम्बन्धी संघर्ष में आर्यसमाज ने स्पष्ट रूप से अपनी हार मान ली है। एक के बाद एक नया कदम उठाया जाता है, हिन्दी का स्थान पीछे हटता जा रहा है। प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम हिन्दी नहीं रही, सरकारी काम काज की भाषा हिन्दी नहीं रही। पंजाब के भाषा विभाग में पंजाबी की तुलना में हिन्दी और हिन्दी के विद्वानों के साथ जो कुछ हो रहा है, वह अन्धे की भी आंखें खोल सकता है पर हमारी नहीं। जालन्धर रेडियो में आज से दस वर्ष पहले हिन्दी का क्या स्थान था और अब क्या है, तुलना करके स्पष्ट पता लग सकता है।

इन सब में आर्य समाज की आवाज कहां है, शायद कबर में!

भाषा के आधार पर ही सांस्कृतिक संघर्ष चल रहा है। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से पंजाब में इस समय दो सांस्कृतिक स्तरों की टक्कर है। एक ओर ब्राह्मण-क्षत्रिय वर्ग की परम्पराएं हैं, दूसरी ओर जमींदार, जाट, सुनार, तरखाण वर्ग की परम्पराएं

हैं। बोलियां, भंगड़ा, गिद्दा, रेडियो के प्रेम-गीत जिनका आज कल खूब बोल-बाला है सब दूसरे स्तर से आ रही हैं। पंजाब के जीवन में, साहित्य में, खेल-कूद में और मनोरंजन के साधनों में आर्यसमाजी या उच्च हिन्दू विचारों की शुद्धता पवित्रता, सादगी और परिमार्जन नहीं रह गया। पंजाबी जीवन के नाम पर जो जीवन रेडियो और लोक सम्पर्क विभाग प्रस्तुत कर रहा है वह आर्य-समाज ही नहीं पिछले सम्पूर्ण भारतीय सन्तो और महात्माओं की विचार-धारा और परम्परा के विरुद्ध है।

वहां आर्यसमाज को कौन पूछता है? शायद कोई भी नहीं!

धार्मिक प्रचार की दृष्टि से सिख भाई अपने दीवान लगाते हैं, सनातनी भाई अपने त्यौहार और उत्सव मनाते हैं तथा आर्य समाज के लोग भी सुसंगठित रूप से अपना प्रचार करते हैं।

पंजाब में एक नहीं दो प्रतिनिधि सभाएं हैं। दोनों की अनेकों संस्थाएं हैं। कालिज हैं, स्कूल हैं, उपदेशक हैं, भजनीक हैं। प्रचार के साधन बहुत है। प्रचार हो भी रहा है इस में कोई सन्देह नहीं। अनेक योग्य और विद्वान प्रचारक हैं, बड़ी लगन से काम कर रहे हैं। पर जरा इस चित्र को देखिए—सन् १९४६ के लगभग म० आनन्द स्वामी जी ने केवल आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के उपदेशक और भजनीकों की संख्या १५० से अधिक बतलाई थी। अब १७-१८ वर्ष बाद यह संख्या इसका आधा भी नहीं।

धार्मिक प्रचार के विषय में सब से बड़ी देखने की बात प्रभाव की होती है। जहां तक हम समझते हैं और अपनी आंखों से देखते हैं, हमारे प्रचार के होते हुए भी पाखण्डी मन्दिरों और गुरुद्वारों की रौनकों में और अन्य विश्वासों में कोई कमी नहीं आ रही। ब्रह्म कुमारी मत तथा राधा स्वामी मत जैसे विचित्रताओं से भरे मत यदि तेजी से फैल रहे हों तो आर्यसमाज के प्रचार कार्य का क्या महत्व रह जाता है।

पंजाब में चौथा संघर्ष राजनीतिक चल रहा है। इस संघर्ष में तो आर्य समाज ने या आर्य-समाज के नेताओं ने हथियार डाल दिए हैं ऐसा प्रतीत होता है। यह बात एक सीमा तक ठीक है कि आर्य समाज सीधे रूप में कभी राजनीति में भाग नहीं लेता रहा, पर आर्य नेताओं का राज-नीति-क्षेत्र में सदा प्रभाव रहा है। इस प्रभाव का परिणाम भी आर्य समाज के लिए शुभ रहा है। आर्य समाज जैसी धार्मिक संस्था के लिए जिस का कार्य-क्षेत्र विस्तृत है, केवल पूजा-पाठ और भक्ति ही नहीं, राजनीतिक क्षेत्र में प्रभाव होना अत्यन्त आवश्यक है।

इस समय तो राजनीति या सरकार की यह अवस्था है। वे पंजाब के हिन्दू ही किसी गिनती में नहीं, उनकी कोई आवाज़ नहीं, कोई मान नहीं कोई प्रभाव नहीं। ऐसी स्थिति में आर्य समाज का क्या प्रभाव हो सकता है? भाषा का क्षेत्र हो, शिक्षा का क्षेत्र हो या अन्य सरकारी सुख सुविधाओं का क्षेत्र हो, आर्य समाज को कुछ भी सुलभ नहीं।

यदि ये सुविधाएं किसी को भी न मिलतीं तो कोई खेद न था पर स्पष्ट तौर पर अन्य सम्प्रदायों

आर्यसमाज का भविष्य

(ले० महामना श्री देवीचन्द्र जी एम० ए० होशियारपुर)

श्री वीरेन्द्र जी सम्पादक प्रताप ने १५ लेख इस विषय पर लिखे हैं। प्रत्येक आर्यसमाज का शुभ-चिन्तक इस विषय पर सोचता और विचार करता है तथा आर्यसमज की उन्नति चाहता है।

आर्यसमाज का जन्म वैदिक सभ्यता के संचार संसार के आचार को उच्च करने, सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने के लिए हुआ था।

आर्यसमाज ने धार्मिक, सामाजिक और शिक्षण विषयों में पर्याप्त उन्नति की है। सामाजिक सुधार का काम काफी किया है। अल्प आयु में विवाह, विधवा विवाह, अछूत उद्धार के सम्बन्ध में प्रशंसनीय कार्य किया है। धार्मिक क्षेत्र में लोगों की दृष्टि वेद के अपौरुषेय होने की ओर आकर्षित की है। वेद केवल संहिता मात्र का नाम है,

---

का महत्व बढ़ रहा है और आर्यसमाज का घट रहा है, इसलिए चिन्ता होती है।

आर्यसमाज के नेताओं को सोचना है कि यदि वे अपनी योग्यता से, किसी राजनीतिक दल के सम्बन्ध से धड़ेबाज़ी से यह किसी और हेर फेर से कोई महत्व का स्थान प्राप्त कर लेते हैं तो किसी को दुःख तो नहीं एक तरह से अच्छा ही है पर इससे आर्यसमाज का समूचे रूप से प्रभाव नहीं बढ़ता। समाज के बढ़ने का अभिप्राय है समाज के क्षेत्र में आने वाले व्यक्तियों के और उनकी सन्तान के जीवनों का आनन्द मय होवे। साथ ही ऋषि-दयानन्द के विचारों की प्रबलता और प्रचार। इसलिए आवश्यकता है कि व्यक्तिगत मानापमान की परवाह कम करके म० हंसराज, स्वा. श्रद्धानंद पं. गुरुदत्त, पं. मेहरचन्द, पं. लेखराम आदि अनेक महानुभावों द्वारा दिखाए रास्ते को अपनाया जाए। समाज की उन्नति में व्यक्ति की उन्नति समझी जाय न कि व्यक्ति की उन्नति में समाज की उन्नति।

कोई भाई पूछ सकते हैं कि तुमने आर्यसमाज के प्रभाव और महत्व का ऐसा हीन चित्र खींचा, तुम्हारे पास इसका क्या प्रमाण है? हमारा नम्र उत्तर है सरकार के लोक-सम्पर्क विभाग और रेडियो-विभाग का क्या महत्व है इसके माप-यन्त्र समझ लीजिए। कोई भी निष्पक्ष व्यक्ति जालन्धर रेडियो के कार्यक्रम को देखे तथा लोक-सम्पर्क विभाग की गतिविधि को देखे और फिर यदि ईमान-दारी से कह सके कि उसे इनमें ऋषि दयानन्द के विचारों की, भावनाओं को या आदर्शों की कहीं भी झलक दिखाई देती है तो हमारी बात झूठी समझ ली जाय।

इसका निर्णय हम आर्य जनता-जनार्दन के हाथ देना चाहते हैं।

उपनिषद् तथा ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं है। वेद का धर्म सार्वभौमिक है। वेद की शिक्षा मनुष्यमात्र से प्रेम और सहानुभूति सिखाती है। वैदिक धर्म में ऋषि मुनियों का स्थान केवल उपदेशक के रूप में है। दयानन्द, गौतम, कणाद, जैमिनि, पाणिनि आदि महर्षि वैदिक धर्म के संस्थापक नहीं थे, परन्तु उपदेशक थे। ईसाई 'यसूमसीह' को ईसाई धर्म का प्रवर्तक और मुसलमान मुहम्मद साहिब को इस्लाम का बनाने वाला समझते हैं। परन्तु वैदिक धर्म ईश्वरीय ज्ञान है, मानव उसका अनुयायी और प्रचारक है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने पर्याप्त उन्नति की है। इस समय आर्यसमाज के दर्जनों कालेज, गुरुकुल, सहस्रों स्कूल, पाठशालाएं चल रही हैं जिन में १० हजार के लगभग अध्यापक हैं, ३ लाख विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं तथा ४ करोड़ रुपया इन संस्थाओं या वार्षिक व्यय होता है। सब संस्थाओं की करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति है। इन संस्थाओं का भविष्य अब शोचनीय दिखाई दे रहा है। सरकार की नीति प्राइवेट संस्थाओं की ओर उत्साहजनक नहीं है। सरकार इन संस्थाओं को अपने अधिकार में लेना चाहती है अथवा ग्रांट (आर्थिक सहायता) घटा देने से इन को मृत्यु के मुख में धकेलना चाहती है। प्रबन्ध कर्ताओं में वह त्याग और तपस्या का भाव नहीं रहा जो कि पूर्वकाल में महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द, पंडित मेहर चन्द, पंडित लखपतराय, लाला सांईदास, बख्शी रामरत्न और लाला राम-देव में पाया जाता था। अब स्वार्थ प्रधान हो गया है जिस से इन संस्थाओं का जीवन भययुक्त हो गया है। संस्थाओं ने बड़ा काम किया है, ये लाभदायक हो सकती हैं यदि इनका पूर्ण उपयोग किया जावे। ये संस्थाएं आर्यसमाज रूपी वृक्ष का शरीर हैं। ये आर्यसमाज की राजनैतिक तथा संसारिक शक्ति को बढ़ाती हैं परन्तु ये आर्यसमाज की आत्मा नहीं हैं। आर्यसमाज का आत्मा तो वेद का ज्ञान है जिसके बिना आर्यसमाज जीवित नहीं रह सकता। कई सज्जन यह कहते हैं कि इन संस्थाओं की अब आवश्यकता नहीं मैं उन से सहमत नहीं हूं। इन के अन्दर सुधार की आवश्यकता है परन्तु इन को बन्द करना मैं अनुचित समझता हूं।

कई सज्जन दयानन्द विश्वविद्यालय का स्वप्न ले रहे हैं, यह असम्भव वस्तु नहीं। पार्लियामैंट से चार्टर प्राप्त किया जा सकता है यद्यपि हमारे पास ५ करोड़ रुपया हो और चार्टर ऐसा मिले जिस के द्वारा हम भारतवर्ष की सब आर्य शिक्षण संस्थाओं को दयानन्द विश्वविद्यालय के साथ सम्बन्धित कर सकें। स्कूलों, कालेजों में धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध सन्तोष जनक नहीं है। सनातन धर्मी पंडितों को धार्मिक शिक्षा देने के लिए नियुक्त किया जाता है। उनको स्वयमेव वैदिक सिद्धांतों का ज्ञान नहीं होता तो बच्चों को वे आर्य कैसे बना सकते हैं। योग्य आर्य विद्वानों के हाथ में धार्मिक शिक्षा का काम सौंपना चाहिए।

१६५१ में आर्यों की संख्या भारतवर्ष में १ करोड़ थी, १६६१ की जनगणना में यह २ करोड़ हो गई। जो आर्य लोग ब्रह्मा, समाट्रा जावा,

मारिशियस, ट्रीनिडाड (Trinidad) इंगलिस्तान, अफ्रीका आदि देशों में रहते हैं उनकी संख्या का ज्ञान मुझे नहीं है। वे २ करोड़ से भिन्न हैं। वह संख्या भी कई लाखों के लगभग होगी। ८० वर्ष के समय में इतनी संख्या किसी धार्मिक संस्था की हो जानी, जिस के पास कोई राजनैतिक शक्ति नहीं, प्रशंसनीय है। संसार की समस्त धार्मिक पुस्तकों में जितनी संख्या में ८० वर्ष में सत्यार्थ-प्रकाश छपी है इतनी संख्या में न अंजील, न कुरान, न जिन्दावस्था अपने जन्म काल से ८० वर्ष में छपी थी। सत्यार्थप्रकाश १० लाख के लगभग अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, बङ्गाली, मराठी, गुजराती, कैनेडा, मलयालम, तामिल, तैलगू, उडिया, सिन्धी, नेपाली, फ्रांसीसी, जर्मन भाषाओं में छप चकी है। रूसी भाषा में सुना है इसका अनुवाद हो रहा है। आर्य सार्वदेशिक सभा का यह काम है कि जापानी, ब्रह्मी, फारसी, अरबी, संस्कृत, इटैलियन, यूनानी आदि भाषाओं में भी सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद कराए। अंजील संसार की ४२७ भाषाओं में छप चुकी है।

कई सज्जन यह समझते हैं कि चूंकि आर्य-समाज पोलिटिक्स में भाग नहीं लेता इसलिए उनकी उन्नति रुक गई हैं। आर्यसमाज एक सार्व-भौमिक धार्मिक संस्था है। यह किसी देश की राजनीति से अपने आपको सम्बन्धित नहीं कर सकती। इसका कार्य सारे संसार को आर्य बनाना और उसके आचार को ऊंचा करना है। आर्य समाज में कांग्रेसी, हिन्दूसभाई, जनसंघी, सोश-लिस्ट, कम्युनिस्ट, रिपब्लिकन तथा स्वतन्त्र पार्टी के लोग शामिल हैं। आर्यसमाज अपने अनुयायियों को आज्ञा प्रदान करता है कि जिस राजनैतिक पार्टी के साथ मिलकर वे कार्य करना चाहें करें परन्तु स्वयं आर्यसमाज किसी पोलिटिकल (Polihert) पार्टी के साथ नत्थी नहीं हो सकता। पोलिटिक्स धर्म का एक अंग है, यह सर्वस्व नहीं है। आत्मिक उन्नति, आचार की पवित्रता, पोलिटिक्स से भी उच्चतर वस्तुएं हैं। मैं इसके विरुद्ध नहीं हूं कि आर्यसमाजी पार्लियामैंट और असेम्बलियों में न जायें। जो धार्मिक प्रचार का काम करना चाहें वे इस क्षेत्र में कार्य करें। प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनोवृति के अनुसार ही कार्य कर सकता है, किसी को बाधित नहीं किया जा सकता कि वह उपदेशक या पोलिटीशियन बनें। मुझे सब ओर निराशावाद दिखाई दे रहा है प्रत्येक यही कह रहा था कि आर्यसमाज मत्यु को प्राप्त हो चुका है, इसका भविष्य अन्धकारमय है। मैं इन लोगों के साथ सहमत नहीं हूं। जो ज्ञानी है उसे सदैव आशा-वादी होना चाहिए, निराशावाद मनुष्य की शक्ति को हीन कर देता है, उसे निर्बल, निरुत्साही कर देता है।

आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने अन्दर अध्यात्मिक बल उत्पन्न करें। त्यागी, तपस्वी, उपदेशक तैयार करें। कोई धर्म त्यागी, तपस्वी प्रचारकों और लेखकों के बिना जीवित नहीं रह सकता। महात्मा बुद्ध को अपन जीवन में त्यागी भिक्षु मिले थे जिन्होंने बुद्ध धर्म संसार में फैलाया। यसूमसीह को भी त्यागी प्रचारक मिले थे और बाद में सेंट जेवियर और सेंट पाल जैसे

धर्म में बुद्धिवाद का जन्मदाता : ऋषि दयानन्द

(ले०—प्रो. ओ. पी. नारंग डी. ए. वी. कालेज जालन्धर)

धर्म कोरा अन्ध विश्वास है। इसमें बुद्धि के लिए अवकाश नहीं। यह विचार शताब्दियों तक लोगों के मन और मस्तिष्क पर छाया रहा। इसी तह में कुरान और इंजील की शिक्षा और पुरानों की कपोल कल्पित गाथाएं थीं। मध्यवर्ती काल के अन्य मतमतान्तरों में भी धर्म का लगभग ऐसी ही स्वरूप मिलता है। कुरान और अजील के अनुसार पृथ्वी गोल नहीं अपितु चपटी है। ईश्वर सातवें या चौथे आसमान पर रहता है और फरिश्तों के द्वारा अपना इलहाम अपने पैगम्बरों तक भेजता है जो मोजज़ो और करामातों द्वारा लोगों द्वारा लोगों को प्रभावित करके उन्हें अपने पीछे लगा लेते हैं। और ऐसे २ काम करते हैं जिनको देखने और सुनने से अकल दंग रह जाती है। लगभग इसी प्रकार की बातें दूसरे धर्म ग्रन्थों में भी मिलती हैं। हजारों साल तक संसार के अरबों मनुष्य इसी भूल भुलैयां में पड़े रहे और आंख बन्द करके धर्म की इन कपोल कल्पित बातों को मानते रहे।

तपस्वी प्रचारक मिले। इस्लाम को नारद, हजरत बैंकर और हजरत उमर जैसे तपस्वी उपदेशक मिले जिन्होंने इस्लाम को फैलाया। आर्यसमाज का फैलाव महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द, पंडित लेखराम, पंडित गुरुदत्त, पंडित गणपति शर्मा, स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी नित्यानन्द, स्वामी विश्वेश्वरानन्द, स्वामी स्वतन्त्रानन्द तथा मास्टर आत्माराम जैसे त्यागी, तपस्वी प्रचारकों द्वारा हुआ है। परमात्मा करें हमारे अन्दर सच्ची लगन वाले प्रचारक उत्पन्न हों, जिस से कि हम अपने भाईयों की अध्यात्मिक अवस्था को उन्नत कर सकें। यह बात शोचनीय है कि हमारी प्रांतीय सभाओं की आर्थिक अवस्था शिथिल है जिसके कारण वे उच्चकोटि का साहित्य तैयार नहीं करवा सकते और न ही योग्य उपदेशक विदेश प्रचार के लिए रख सकते हैं। रोने पीटने और निराश होकर बैठ रहने से कुछ नहीं बनेगा। कमरकस कर मैदान में निकलो, ऋषि का मिशन भारतवर्ष और विदेशों में फैलाओ। सुख तथा आनन्द प्रिय लोग धर्म नहीं फैला सकते अचार हीन उपदेशक भी वैदिक धर्म नहीं फैला सकते। ऋषि दयानन्द का मिशन ईश्वरीय ज्ञान को फैलाना है। यदि आर्य-समाज इस काम को न कर सकेगा तो परमात्मा वेद की शिक्षा की वृद्धि के लिए किसी दूसरी संस्था को जन्म देंगे। यह तो नहीं हो सकता कि आर्य-समाज ब्रह्मसमाज तथा देवसमाज की भांति समाप्त हो जावे। आर्य समाज जीवित रहेगा, इसका भविष्य उज्जवल होगा, यह उन्नति करेगा। आवश्यकता आचार के स्तर को ऊंचा करने और त्यागी, तपस्वी, उपदेशक उत्पन्न करने की है।

परन्तु साईंस का प्रकाश धीरे २ फैलता गया। इस के ठोस परिणामों युक्तियुक्त सिद्धान्तों और लाभप्रद आविष्कारों के आगे धर्म का रूढ़िवाद न ठहर सकता था। तो भी चूंकि श्रद्धा और विश्वास मानव जीवन में एक विशेष स्थान रखते हैं इसलिये धर्म की कपोल कल्पित धारणाओं के प्रति लोगों का विश्वास घटा तो सही परन्तु समाप्त नहीं हुआ। धर्म और विज्ञान के द्वंद्व में धर्म बराबर मार खाकर पीछे हटता रहा और विज्ञान पग २ आगे बढ़ा। ऋषि दयानन्द के युग में धर्म का बूढ़ा पहलवान साईंस के नौजवान पट्ठे से लड़ २ कर लहू लुहान हो गया था। मरा तो खैर नहीं था परन्तु सिसक जरूर रहा था। ऐसे समय में ऋषि ने धर्म के अधमुए शरीर में तर्क और न्याय का नवीन रक्त डाला। अर्थात महर्षि ने वेद और शास्त्र के आधार पर यह सिद्ध कर दिखाया कि धर्म थोथा अन्ध विश्वास और कोरी श्रद्धा नहीं बल्कि एक युक्तियुक्त, तर्क सगत और न्यायाश्रित सिद्धान्तवाद है। इस बात ने सारे संसार को अचम्भे में डाल दिया। इस के परिणाम स्वरूप ऋषि को घोर विरोध का सामना करना पड़ा। आपने ईंटे और पत्थर खाए और परायों की गालियां सहीं और जहर के प्याले पिये। परन्तु सत्य के मण्डन और असत्य के खण्डन को नहीं छोड़ा। आपने गण्डे, तावीज, जादू-टूने आदि की कलाई खोल दी। करामातों और चमत्कारों की धज्जियां उड़ा दीं और ज्योतिष के नाम पर चल रही फलित विद्या का भांडा चौराहे में फोड़ दिया और भविष्य वाणी के नाम पर अपनी दुकानदारी चलाने वाले ठगों को असली रूप में संसार के सामने प्रस्तुत किया। मूर्ति पूजा और मनुष्य पूजा को भी आड़े हाथों लिया। आपके चेहरे पर इतना तेज और आपकी युक्तियों में इतना बल था कि बड़े २ प्रकाण्ड पण्डित आपके सामने न ठहर सके। अन्त में ऋषि की घोर तपस्या रंग लाई और संसार के वास्तविक धर्म के स्वरूप को देखा।

धर्म के नाम पर चल रही घटिया दुकानदारी का पर्दा चाक करके ऋषि ने धर्म का स्वच्छ और निर्मल स्वरूप संसार के सामने रखा। महर्षि पतांजलि के शब्दों में आप ने यह बताया कि—"यतोऽभ्युदये निःश्रेयस्य सिद्धि स धर्मः।" अर्थात धर्म जीवन निर्वाह का वह सुन्दर ढग है जिससे इस लोक और परलोक दोनों का सुधार हो। इसकी व्याख्या करते हुए ऋषि ने बताया कि किसी काल्पनिक परलोक की चिन्ता में जीवन की मूलभूत समस्याओं से आंखें मूंद लेना धर्म नहीं है बल्कि सत्य, न्याय, प्रमाणिकता, ईश्वर विश्वास और भलाई जैसे उच्च सिद्धांत जिन पर आचरण करने से मनुष्य मनुष्य बनता है वह ही सच्चा धर्म है। मनु स्मृति में किये गये धर्म के दस लक्षणों की व्याख्या करते हुए ऋषि ने यह सिंह गर्जना की कि धर्म किसी मत विशेष अथवा सम्प्रदाय विशेष का नाम नहीं यह तो उन व्यापक सिद्धांतों का संग्रह है जिन पर आचरण करने से मानवता को चार चांद लगते हैं। यह सिद्धांत सार्वभौमिक है तथा देशकाल और परिस्थिति के बन्धन से मुक्त हैं।

यद्यपि ऋषि कि आयु ने साथ न दिया तथापि आप के प्रचार का गहरा प्रभाव पड़ा। सत्यार्थ-प्रकाश छपा तो धार्मिक जगत में एक खलबली सी मच गई और अन्य मतावलम्बियों ने अपने-अपने धर्म ग्रन्थों के अनुवाद और व्यस्थाएं बदल डालीं। मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कुरान की तफसीर करते हुए एक आयत का अनुवाद इस प्रकार किया (जिन लोगों ने खुदा के साथ कारसाजी की खुदा ने उनके साथ कारसाजी की) इस से पूर्व इस आयत का तर्जमा यूं किया जाता था (जिन्होंने खुदा के साथ मक्कारी की खुदा ने उनके साथ मक्कारी की) गोया ऋषि के खण्डन के भय ने खुदा की मक्कारी को कारसाजी में परिवर्तित कर दिया। यह दूसरी बात है कि कारसाजी और मक्कारी में उन्नीस इक्कीस का ही फर्क है। परन्तु ऋषि का जादू तो सिर चढ़ कर बोला। इसी प्रकार पादरी सी. एफ. ऐन्ड्रयूज़ ने ईसा के चमत्कारों जो नये रूप में पेश किया। ईसा का एक प्रसिद्ध चमत्कार था "**He saw and changed.**" अर्थात् ईसा कोढ़ियों को एक आंख देखता और उनका कोढ़ दूर हो जाता। परन्तु सी. एफ. ऐन्ड्रयूज ने इसका अर्थ यूं किया : लोग अपने मनों में पापों का कुष्ठ लेकर ईसा के सामने आते वह उन पर प्रेम भरी दृष्टि डालता और उनका मानसिक कुटिलता रूपी कुष्ठ दूर हो जाता। अर्थात् शरीर का कोढ़ मन की कुटिलता बन कर रह गया। पुराणों के ३३ करोड़ देवी देवता भी जिन को जीवित सत्य मान कर पूजा जाता था अलंकार होकर रह गये। यह था ऋषि दयानन्द के खंडन का ठोस परिणाम। ठीक दृष्टि से देखा जाए तो ऋषि दयानन्द का खण्डन धर्म पर कुठाराघात नहीं था अपितु यह तो एक ऐसा सफल अपरेशन था जिस के द्वारा ऋषि ने धर्म की सारी कुरीतियों को दूर करके इस में तर्क रूपी रक्त डाल दिया। फ्रांस के विचारक रोमन रोला ने ऋषि को निम्न शब्दों से श्रद्धांजलि अर्पित की—"**He transfused his lion blood into the languishing veins of India,**" अर्थात् दयानन्द ने अपना शेरों जैसा खून भारत की सिसिकती हुई नाड़ियों में भर दिया। आओ हम एक पद आगे बढ़ कर कहें—**Dayanand transfused the blood of reason into the languishing veins of religion.** अर्थात् दयानन्द ने धर्म की सिसकती हुई नाड़ियों में तर्क रूप रक्त का संचार किया।

★ ★

आवश्यक निवेदन

आर्यसमाजों तथा अपनी संस्थाओं से निवेदन है कि समय-समय पर अपने यहां होने वाले पर्व, संस्कार, यज्ञ और उत्सव आदि की सूचना आर्य जगत कार्यालय आर्य प्रादेशिक सभा हंसराज भवन जालन्धर शहर के पते पर भिजवा दिया करें ताकि उचित समय पर प्रकाशित हो सकें।

—सम्पादक

ऋषि निर्वाण के त्योहार पर
कुछ सोचो सोने से काम न चलेगा

(ले० श्री सुखलाल जी आर्य मुसाफिर)

जब दीपावली को सायंकाल के समय अनासागर सरोवर के किनारे अजमेर नगर में अन्तिम श्वास ले रहे थे तब उस दृश्य को देख कर हिन्दी का एक आर्य कवि एकान्त में खड़ा लिख रहा था कि—

सूर्य सोने चल दिया लेकिन सितारों को जगाकर
एक दीपक बुझ गया लाखों चिरागों को जलाकर
कह रहे बलिदान प्रेमी आर्य दीवाली मनाकर
आज कोई मर गया था किन्तु मृतकों को जिलाकर

भारत के आर्य वीरो और आदरणीय आर्य नेतागण क्या ऋषि दयानन्द के निर्वाण दिवस को भूल गये हो। कुछ खबर है कि भारत में अविद्या दम्भ, ढोंग और पाखण्ड फिर अपने पूर्व रूप में उग्र रूप मे उभर रहा है—और आप पदलोलुपता, पार्टीबाजियों और दलबन्दियों मे लगे हुए है। सब अपनी २ राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं की पार्टी मे लगे हुए है आर्य समाज का मिशनरी वर्ग समाप्त हो रहा है पुराने विद्वान और मिशनरी एक २ करके उठते जा रहे हैं—नये लोग इस क्षेत्र में आना नहीं चाहते। तब क्या हो गया? क्या आर्य समाज मर जायगा। ध्यान रखना अगर आर्य समाज कमजोर हो गया या मर गया तो मानवता नष्ट हो जाएगी। आर्य जाति और आर्य संस्कृति दुनिया से मिट जाएगी। ईश्वर के लिये कुछ सोचो और और कुछ विचार करो कि हमारा क्या कर्त्तव्य है आर्यसमाज के कल्पवृक्ष को आग लग रही है आर्यसमाज रूपी कामधेनु की हत्या हो रही है जानते हो क्या होगा—

अगर नाव डूबी तो डूबोगे सारे,
न तुम ही बचोगे न साथी तुम्हारे।

ऋषि दयानन्द और विद्यार्थी जीवन

(पृष्ठ ८ का शेष)

सीखने की यह अमूल्य बातें हैं।

आज के युग में जबकि अध्यापकों में विलासिता, लापरवाही और जीवन के आदर्शों का अभाव अधिक २ बढ़ता जाता है और विद्यार्थियों के जीवन में गुरुओं के प्रति अश्रद्धा, अनुशासन की परवाह न करना और कठोर जीवन से घबराना बढ़ रहा है, डी० ए० वी० कालिजों के सामने एक उत्तरदायित्व आ जाता है। वे ऋषि दयानन्द और गुरु विरजानन्द के आदर्शों को लेकर अपना स्तर ऊंचा करें तथा अन्य सब शिक्षा संस्थाओं के सामने एक आदर्श रखें। इसी में देश और संसार कल्याण है।

महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज

(कु० अरुण जी आर्या प्रभाकर, टोहाना)

भारतवर्ष की भूमि ऋषियों की भूमि देव भूमि कहलाती है। ऐसी भारत भूमि पर देवता भी आने को लालायित रहते हैं। इस की गोद में सदा महान आत्माओं ने ही जन्म लिया है इसी कारण सभी देश विदेशों में इसकी सभ्यता व संस्कृति की धवल पताका सब से उच्च है।

भारत पर मुगलों का शासन समाप्त हुआ तो फिरंगी राज्य फैल गया। मुगलकाल से सोती आई जाति को पाश्चात्य सभ्यता की तड़क भड़क ने चकाचौंध कर दिया। गाढ़ निद्रा से ग्रसित हिन्दू जाति अपने आप को भुला कर उस तड़क भड़क की भयकर लपेट मे फस गई। वह साये क आगे साढ़ी क सौंदर्य को भुला बैठी। उसकी मिथ्या ज्योति मे उसे अपनी आभा फीकी प्रतीत होने लगी। ऐसे प्रपंचकारी समय में ही देव दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। इस सोई हुई जाति की रक्षा हेतु महर्षि प्रहरी के रूप में आए।

उठो, जागो और आर्यसमाज की आत्मा को जीवित और जागृत करो, यही हम सब आर्यों का परमधर्म है—

हे आस्मां वहीं पै सितारे नहीं रहे
तुम तो वही हो। तुम में शरारे नहीं रहे

इतिहास इस का साक्षी है कि ऋषिवर ने अपना सर्वस्व त्याग कर एक सच्चे संन्यासी के रूप में इस भारत की जनता को जो कि गाढ़ निन्द्रा में तल्लीन होकर अपने जीवन के महत्व को भूल चुकी थी, अपने धर्म व कर्त्तव्य से परे हो चुकी थी, उसे झकझोरा। अनेक प्रकार के असह्य कष्टों को झेलकर भी उसे जगाया। विश्राम नहीं लिया पल भर को। जिन कष्टों में उनके जीवन का आदि हुआ उन्हीं में उन्होंने इस नश्वर शरीर का त्याग किया। अज्ञान अंधेरी को भेद कर विश्व को आलोकित करके दीपावली की अमावस्या की रात्रि में ही चिर निद्रा में वह लीन हो गए। यही है उनकी श्रेष्ठता ? यही उनके जीवन का अद्भुत रहस्य ? कैसी बलिदान की कहानी है उस ऋषि के पीछे।

साधक को साध्य की साधना हेतु साधन की आवश्यकता होती है। प्राचीन वैदिक सिद्धांतों की पुर्नस्थापना करने के लिए एवं उन का निरन्तर प्रचार करने के लिए महर्षि को साधन रूप एक समाज की स्थापना करनी पड़ी। ८८ वर्ष पूर्व (१० अप्रैल सन् १८७५) में बम्बई में सर्वप्रथम आर्य समाज की स्थापना हुई तथा इस के साथ २ दस नियम भी बनाए जो कि संगठन प्रजातांत्रिक प्रणाली के पोषक हैं। मानवता की मूर्ति सरलता,

साहस सौजन्यता के प्रतीक शान्ति क्रान्ति के दूत स्वतन्त्रता के मंत्रदाता व पुजारी एवं बाल ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द जिस संस्था (आर्य समाज) को साधन रूप स्वीकार कर के अपने कार्य क्षेत्र में आगे बढ़े वह संस्था जीवन के किसी भी पहलू से कैसे अछूती रह सकती थी ? जीवन की वह कौन सी गुत्थी है जिस पर आर्य समाज ने वैदिक सिद्धान्तों को कसौटी पर न कस कर दिखाया हो। प्रत्येक समस्या का समाधान करना आर्य समाज का ही काम है । स्वतन्त्रता हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।" इस आवाज़ का शंखनाद सर्वप्रथम महर्षि ने ही किया था।

इसी प्रेरणा को लेकर हम ने आज स्वतन्त्रता को कायम रखना है। भारत पर आए हुए संकट को एकता के सूत्र में बंध कर टालना है। हमारी स्वतन्त्रता को छीनने के इच्छुक चीन को यह बतलाना है कि हमें स्वतन्त्रता कितनी प्यारी है ! हम अपना सर्वस्व खोकर भी स्वन्त्रता को नहीं जाने देंगे ।

यथार्थ रूप में हम तभी ऋषि की सन्तान'कहला सकेंगे जब कि उन के इस शंखनाद को व्यर्थ न जाने देंगे।

आइये आज हम ऋषि निर्वाण दिवस पर महर्षि एवं उन के द्वारा चलाई गई संस्था के मन्तव्यों पर पुनः अवलोकन करें तथा आत्म निरीक्षण करें। हम सब एक सत्य सनातन होकर प्रीति में बंध कर वैदिक पथ पर अग्रसर होवें।

आज के इस घोर अंधकार को भेदन के लिए दिनकर की आवश्यकता है। एक ऐसा व्यक्तित्व जिसके पीछे चल कर एक पताका के साये सामाजिक ध्येय को पूरा करें तथा उस महर्षि के दिव्य स्वप्नों को साकार बना देवें। तभी वास्तविक रूप में हम ऋषि निर्वाण दिवस मनाने के सफल अधिकारी होंगे।

आइये ऋषि निर्वाण दिवस मिल सभी मनाएं आज।
होकर मतस्थ हम सब पूर्ण कर दें सभी अधूरे काज॥
हम सब हैं सौभाग्य शाली अजस्त्र भारती।
उठें स्वयं उठाएं सब को स्वतन्त्रता पुकारती॥

दयानन्द—वचनामृत

अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य से, प्रमाद से, परस्पर के विरोध से, अन्य देशों में राज्य करने की कथा तो क्या कही जाये, आर्यों का तो इस समय आर्यावर्त्त में भी अखंड, स्वतन्त्र, स्वाधीन और निर्भय राज्य नहीं है। जो कुछ है भी, तो वह भी विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है। थोड़े से राजा ही स्वतन्त्र हैं। जब दुर्दिन आता है, तब देश-वासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

दिन रात जगाय रहे हमको,
दुःख नाशक रूप पिता जो हमारे।
शोक यही हम को अब है,
जब नींद खुली तब आप सिधारे॥

(स्व० पं० आर्य मुनि जी)

दयानन्द औ' दीवाली

(रचयिता—श्री अरुण जी सरीन हुशियारपुर)

अज्ञानता के अन्धकार में जग-दीप टिमटिमा रहा था,
कहीं रो रही थी भारत-मां कोई भेद-भाव बता रहा था।
पाप का जब भार भू पर यूं बढ़ जाता है सदैव,
ईश तब भेजता दूत, दे देकर दिव्य सन्देश।

विरजा से गुरु की दीक्षा ले एक बालक चल पढ़ा,
कुछ नहीं था मन में, हां, गुरु-दक्षिणा का ऋण चढ़ा।
था चुकाना ऋण उसे ये मुद्रा ज्ञानी संसार की से,
वीरने डंका बजाया तभी चीर कर हिय प्यार से।

ऋषि ने गुरु से सीखा था भेद नहीं कुछ ऊंच नहीं,
वेद धर्म है आर्य के पाषाण पूजा व छूआछूत नहीं,
यह सब व्यर्थ हैं कुल, दी दुहाई उसने यही।
मूर्ति-पूजा थोथा रगड़ा, विधवा-विवाह हो क्यों नहीं ?

इसी सारे उपदेश का नेह दीप में डालता था,
वह उसी ज्ञान ज्योति से जग से कह डालता था।
छोड़ जग पाखण्ड अब स्वतन्त्र हो तूं ऐ देश,
तन पर ओढ़ो सीधा पट जिस में हो प्रिय स्वदेश॥

यूं कहते २ ही उसका दीप सदा को बुझ गया,
जिस में उसने नेह डाला वह फिर भी जलता गया,
आज नहीं वह लेकिन दीवाली ही दयानन्द है,
इस में ज्ञान दीप हैं सब औ' उपदेश छन्द हैं।

हमें नहीं केवल यूं ही दीवाली मनानी है,
ऋषि का अनुसरण कर उसकी याद मनानी है।
यह दिव्यात्मा इसी दिन उस दीप में जा मिली थी,
जो दीप जगन्नाथ है जिसकी ये दया लौ कभी जगी थी।

हम किधर जा रहे हैं

(ले. पं. वज़ीर चन्द्र जी शर्मा M. A. प्रिंसीपल डी.ए.वी. H/S स्कूल ऊना)

पाठकगण, तनिक विचार कीजिये कि हम किधर जा रहे हैं ? जिस ओर भी दृष्टि डालें स्वार्थपरता, आत्मपोषण, पदलोलुपता की दौड़ लग रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि त्याग, तपस्या, परोपकार और सेवाभाव की उच्च भावनाएं सींग दबाए हम से दूर भागी जा रही हैं। मानों कि पाश्चात्य क्या, आवच्य क्या, सब ओर की मायावी चका-चौंध ने हमारी आंखें चुन्ध्या दी हैं, और हम उसी रौ में बहे जा रहे हैं। राष्ट्र की आत्मा का लोप हो रहा है। कभी २ निराशा के बादल इतने छा जाते हैं कि घटाटोप अन्धकार छा जाता है और मन अतिखिन्न हो जाता है।

आप कहेंगे कि एक आर्य को आशावादी होना चाहिये।

यह ठीक है कि वह आर्य आर्य नहीं जो कि आशावादी न हो। परन्तु उसे अपने चहुं ओर की वस्तुस्थिति से आंखें बन्द नहीं रखनी होंगी। मैं ने तो आज की अवस्था का दृश्य दर्द-भरे शब्दों में आप के सन्मुख रखा है।

मैं दूर क्यों जाऊं। अपने घर की दृष्टि ओर डालता हूं। मुझे महर्षि दयानन्द, महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द, पं लेख राम तथा आर्य समाज के अन्य सैंकड़ों परवानों के त्याग, तपस्या, सेवाभाव और आत्मबलिदान की भावनाओं का ह्रास होता हुआ स्पष्ट दिखाई देता है। पुरानी पीढ़ी की महान् विभूतियां जो कि युवकों और युवतियों को आकर्षित कर आर्य समाज रूपी दीपक के परवाने बनाती थीं लुप्तप्राय हो रही हैं। जो थोड़ी सी उच्च हस्तियां कहीं २ शेष हैं उन के लिये श्रद्धा और सम्मान की भावनाएं कम हो रही हैं। आज के वातावरण में पुरानी श्रद्धा, भक्ति तथा लग्न का दीवाला निकल गया है। उस के स्थान पर वैर, विरोध, कलह और वैमनस्यता ने ले रखा है। उस का परिणाम प्रगति का अवरोध हो रहा है।

उपरिलिखित एक अग्रणी धार्मिक संस्था का हाल है। अब देश की सब से बड़ी राजनैतिक पार्टी जिस के हाथ में सोलह वर्ष से लगातार देश की प्रभुसत्ता चली आई है और उस के स्याह वा सफेद, अच्छे बुरे उन्नति तथा अवनति के लिये वह ही उत्तर-दाई है। उस की दशा देखिये, तो वही चिन्ता और निराशा की घटायें उमड़ आती हैं। यह नहीं कि उस ने कुछ किया नहीं अपने तौर पर देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक अवस्था के सुधार का भरसक प्रयत्न किया है और कर रही है। परन्तु यह सब कुछ करने के बावजूद राजसत्ता के नशे में इतनी मदहोश हो गई है कि न ही अपने और न ही प्रजा के नैतिक स्तर को ऊंचा कर पाई

है। प्रत्युत इस पहलू में स्वयं भी और राष्ट्र को भी निम्नमुख ले गई है। महात्मा गांधी और देश पर बलिदान होने वाले अन्य नेताओं के त्याग, तपस्या, सादगी, सेवाभाव और बलिदान की उच्च भावनाओं को भूल चुकी है। यहां भी स्वार्थपरता आत्मपोषण, पदलोलुपता, अधिकारों के लिये संघर्ष का बोल बाला है। यदि ऐसा न होता तो 'कामराज' योजना की आवश्यकता न पड़ती। इस का भी जो हशर हो रहा है, सब के सामने है। उंगलियों पर गिने जाने वाली हस्तियों के अतिरिक्त किस ने इस का स्वागत किया है? 'वही चाल बे ढंगी जो पहले थी, अब भी है।' त्याग और तपस्या दिल की भावनाएं हैं। बाहिर से, डण्डे से अथवा रोबसे नहींकी जा सकतीं। इनके लिये उचित वातावरण पैदा करने की आवश्यकता है। वह हम ने पैदा किया नहीं प्रत्युत उस से विपरीत कार्य होता रहा है। तो सहसा आप कैसे आशा कर सकते हैं कि लोग त्याग और तपस्या का नमूना बन कर दिखा देंगे। प्रभुसत्ता ने तो लोगों की लोलुपता को इतना बढ़ा दिया है कि प्रत्येक कांग्रेसी चाहता है कि मैं एम० एल० ए० या एम० पी० बन जाऊं और प्रत्येक एम० एल० ए० या एम० पी० की इच्छा होती है कि वह मन्त्रीपद पर आरूढ़ हो जाये और प्रत्येक मन्त्री का मुख्य मन्त्री या प्रधानमन्त्री के उच्चपद की ओर ललचाई हुई आंखों से देखना स्वाभाविक है। इसीलिये प्रत्येक राज्य में मन्त्रीमण्डलों में पदों के लिये संघर्ष हो रहा है और कामराज योजना के बावजूद हो रहा है। कामराज योजना जादू की छड़ी साबित नहीं हुई। क्योंकि यह लोलुपता का रोग राष्ट्र के शरीर में गहरा असर कर चुका है। इस का कोई मेजर औप्रेशन हो तो स्यात ठीक हो, वरन मामूली ओषधियां कारगर न होंगी।

फिर इस भयानक परिस्थिति का इलाज क्या? इसका केवल एक ही प्रतिकार मुझे सूझता है कि उच्चकोटि के मान्य नेता त्याग, तपस्या, सादगी, सेवाभाव का नमूना बन कर जनता में तूफानी दौरा करें जैसा कि महात्मा गांधी ने 'नामिलवर्त' न की योजना के समय किया था, मुझे याद है कि हजारों की संख्या में नवयुवकों ने त्याग और बलिदान का प्रण लिया था। कोई न कोई रोशनी का स्तम्भ चाहिये, जो कि साधारण लोगों का पथप्रदर्शन कर सके। किसी (**Bucon Light**) ज्योतिस्तम्भ के बिना राष्ट्र के पोत को चट्टानों से टकरा कर चकनाचूर होने का भय बना रहेगा। परमात्मा करे कि हमें ऐसा पथप्रदर्शक शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त हो, ताकि देश की नैया भंवर से निकल सके।

महापुरुष

गुजरात ने संसार को जो महापुरुष प्रदान किये हैं उन में महर्षि दयानन्द और महात्मा गान्धी दोनों ने ही मानवता की सेवा में अपना सर्वस्व लगा दिया। इस लिए कि वे भारत ही नहीं संसार की विभूति हैं। जनता का कर्त्तव्य है कि उपयुक्त दोनों महापुरुषों की शिक्षाओं पर ध्यान दे और तदनुसार आचरण करे।

(सरदार वल्लभ भाई पटेल)

सत्यता एवं निर्भयता का देवता 'दयानन्द'

(ले० पं० रुद्रदत्त जी शर्मा प्रधान आ. स. लक्ष्मणसर)

महर्षि दयानन्द दूसरे अनेकों महापुरुषों की न्याईं एक रिफार्मर ही न थे अपितु वास्तविक रूप में एक पथ प्रदर्शक और युग-प्रवर्तक थे। उनका जन्म सर्वथा प्रतिकूल परिस्थितियों और घोर विरोधी वातावरण में हुआ। वह अपनों बेगानों, मित्रों और शत्रुओं सब की मुखालफत के बावजूद संसार के उत्थान और कल्याण की भावना को लेकर मैदान में निकले, और अपने लक्ष्य में पूर्णतया सफल और विजयी हुये। आप असत्य और अन्याय के साथ समझौता करना नहीं जानते थे सब के मुंह पर सच्ची और हित की बात कहने को सर्वदा उद्यत रहते थे। महात्मा विदुर ने कहा है—

पुरुषो बहवो राजन् सत्यं च प्रिय वादिनाः।
अप्रियस्तु च सत्यस्तु वक्ता श्रोता च दुर्लभाः॥

अर्थात संसार में मीठा और प्यारा लगने वाला सत्योपदेश करने वाले पुरुष तो बहुत मिलेंगे परन्तु दूसरों की प्रसन्नता और अप्रसन्नता की परवाह न करते हुए अप्रिय (कड़वा) लगने पर भी सत्य ही का उपदेश करने वाले और सुनने वाले दोनों बहुत कम मिलेंगे। लाहौर में एक बार स्वामी जी सनातन धर्मियों के स्थान पर भाषण दे रहे थे। उनके सत्योपदेश से सनातनधर्मी नाराज हो गये और अगले दिन व्याख्यान के लिये जगह देने से इन्कार कर दिया। मुसलमानों ने अधिक हित दर्शाने के लिए स्वामी जी को अपने विशाल स्थान पर भाषण देने का निमन्त्रण दे दिया। स्वामी जी ने स्थान देने वाले मुसलमान भक्तों के प्रत्युपकार और कल्याण के विचार से इस्लाम के झूठे सिद्धान्तों का खण्डन करना आरम्भ कर दिया। मुसलमानों में धैर्य्य और संतोष कहां ? उन्होंने महर्षि की युक्तियों और आपत्तियों पर विचार करने की बजाए स्वामी जी के लिये अपने स्थान पर भाषण देने की आज्ञा वापिस ले ली। इसपर एक ईसाई सज्जन ने स्वामीजी के व्याख्यान के लिए अपनी कोठी का विस्तृत आंगन पेश कर दिया, परन्तु स्वामी जी की हित भरी परन्तु कड़वी सच्चाई को वह ईसाई सज्जन भी सहन न कर सका और अगले ही दिन स्वामी जी को और स्थान देखने के लिये कह दिया। इस प्रकार विदुर जी के कथनानुसार निर्भयता पूर्वक सत्य कहने वाला महापुरुष संसार में बहुत कम मिलता है। यदि कहने वाला मिल जाए तो सुनने वाला मिलना कठिन होगा।

पग-पग पर आपत्तियों का सामना करते हुए भी ऋषि का चिट्टान सा हृदय डगमगाया नहीं। उन्होंने ईंटें और पत्थर खाकर और विष के प्याले पीकर भी संसार के उपकार के लिये जवाहरात की वर्षा की। उन्होंने वेद के जो अटूट और आदर्श

सिद्धान्त हमारे सामने रखे आज, प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष, संसार उनके सन्मुख सर झुका रहा है। उन्हें एक प्रभु और उसकी कल्याणी वाणि वेद पर अगाध श्रद्धा थी और मूर्ति पूजा को भारत वर्ष के पतन का सब से बड़ा कारण मानते थे। अविद्या और अन्धकार को मिटाने के लिये उन्हों ने सत्यार्थ प्रकाश के रूप में एक अद्वितीय ज्योति स्तम्भ (**Light house**) का निर्माण किया, जिस ने न केवल अपनों की अपितु बेगानों की भी आंखे खोल दीं। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका लिख कर मोक्ष मूलर जैसे कट्टर वेद विरोधियों को वेद का प्रशसक और मतवाला बना दिया। शुद्धि और अछूतोद्धार द्वारा जाति पुनर्गठन कर के विरोधियों एवं विधर्मियो के छक्के छुड़ा दिये। मद्य और मांस का ऐसा प्रबल निषेध किया कि उन के भाषणों को सुनकर अनेकों मुसलमानों ने मांस और शराब का प्रयोग छोड़ दिया। सर्व प्रथम स्वराज्य का नाद बजा कर महर्षि ने देश की स्वतन्त्रा की नींव रख दी। उन्होंने उस समय के वाइसराय श्री नार्थ बुक के सामने कितनी निर्भीकता के साथ कहा था कि 'मै अपने देश में एक क्षण भी विदेशी राज्य देखना नहीं चाहता।'

महर्षि दयानन्द अपने पीछे जहां बहु मूल्य सुनैहरी सिद्धान्त और अनेकों अद्वितीय ग्रन्थ छोड़ गये वहां आर्य समाज की स्थापना करके देश और जाति के संरक्षण के लिये सच्चे और निष्काम सेवकों की एक सेना तैयार कर गये। सच्चे हृदय से आर्य समाज की सेवा ही वास्तविक ऋषि भक्ति है॥

अमूल्य वचन

१. समुद्र में जैसे तरंगे उठती हैं। कोई छोटी, कोई बड़ी, कोई ऊंची, कोई नीची, कोई तिरछी, कोई सीधी। उनका अस्तित्व समुद्र से पृथक नहीं माना जा सकता। उनका जीवन उस से जुदा नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार अच्छे बुरे आदमी धनी निर्धन लोग तरंगें हैं जिन में एक ही ब्रह्म समुद्र ठाठे मार रहा है।

२. किसी के भी ऊपर के आचरण को देखकर उसे पापी मत मानो। सम्भव है कि उस पर मिथ्या ही दोषारोपण किया जाता हो और वह उस से अपने को निर्दोष सिद्ध करने की अवस्था में न हो। यह भी हो सकता है कि उसने किसी विवशता मे पड़ कर अज्ञानवश वाकई कुकर्म कर लिया हो पर उसका अन्त.करण हम से अधिक पवित्र हो।

(संगृहीता—भक्तराम अफ्रीका वाले)

गिने जायें मुमकिन है सहरा के जर्रे,
समुद्र के कतरे फ़लक के सितारे।
स्वामी दयानन्द मगर तेरे एहसां,
न गिनती में आये कभी हम से सारे॥

पाखण्डानां विनाशाय वेदानां रक्षणाय च।
धर्म सशोधनार्थाय दयानन्दस्य जीवनम्॥

इस के बाद २४ नवम्बर के अंक की प्रतीक्षा करें

दीपावली तथा दयानंद

(ले. श्री प्रि० रलाराम जी M. A. M. L. A. प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर

सन १८८३ की अनोखी दीवाली की रात्री को लाखों दीप जले । अमावस्या की रात्री को पूर्णमाशी की भान्ति जगमगा दिया गया। परन्तु ज्ञान तथा सामाजिक सुधार का दिवाकर अस्त हो गया। क्या हम अश्रुपात करें, क्या हम शोकातुर हों? जैसे वाल्मीकी रामायण में भगवान राम ने कहा 'अलमश्रुपातेन त्यजशोकमनर्थकम'। 'आंसु बहाना छोड़ो, व्यर्थ शोक ग्रसित होना त्यागो' दयानंद कृतकृत्य हो कर गये । शोक क्यों, रोना धोना क्यों। दयानंद ने स्वयं उस रात्री को एक पैगाम दिया जो कि धार्मिक जीवन का सार है, अध्यात्म का परम तत्व है। 'भगवान तेरी इच्छा पूर्ण हो' यह कह कर दयानंद चल दिये। इन पांच शब्दों में क्या अमिट शान्ति और क्या अनुपम् संतुष्टि है। यह आत्म-समर्पण की परा काष्ठा है। यदि जीवन में भगवान के प्रति आत्म समर्पण नहीं, तो भक्ति कहां है? मुसाफिर तो अभी भटक रहा है। मंजिल के समीप भी नहीं पहुंचा । यह मांझी परेशान है, साहिल को देख ही नहीं पाया। इस की नौका तो मंझधार में जाये गी । भक्त आत्म-समर्पण के द्वारा चिन्ताओं तथा क्लेशों की गठड़ी को परे फैंक देता है। 'आयुर्यज्ञेन कल्पतां'। जैसे वेद ने कहा, अपना सब कुच्छ, आयु, प्राण, अपना आप, अपने निष्काम कर्म, हां सब कुच्छ भगवान के अर्पण करते चलो। दयानंद का शरीर भले ही कष्ट में था परन्तु यह मुक्तात्मा भगवान की गोद में आनन्द के हिलारे ले रहा था । ऋग्वेद ने जैसे कहा, 'प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय' । हम नाचते और हंसते हुये आगे बढें । दीपावलि की रात्री को दयानंद मुक्तिधाम की ओर हंसता हुआ, नाचते हुये दिल के साथ, आनंद में मग्न, आगे बढ़ा तथा अपनी मंजिल पर पहुंच गया। 'प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो, यह अमर संदेश हमें दे कर ऋषिवर दयानंद भगवान की गोद में जा बैठे। 'दयानंद की जय हो'। यह एक तथ्य है कि दीपावली की रात्री को दयानंद की जय, पूर्ण हो, यह अमर संदेश हमें दे कर ऋषिवर दयानद भगवान की गोद में जा बैठे। 'दयानद की जय हो'। यह एक तथ्य है कि दीपावली की रात्री को दयानंद की जय, पूर्ण जय, हुई। मृत्यु को निर्भीक दयानन्द ने जीत लिया।

> श्री प्रि. रला राम जी M.A., M. L. A. पंजाब के प्रतिष्ठत व्यक्तियों में अपना विशेष स्थान रखते हैं उत्कृष्ट वक्ता होने के अतिरिक्त लेखन कला में भी आप आपना सानी नहीं रखते उपरोक्त लेख में हृदय के वास्तविक उद्गारों को प्रकट करते हुए भगवान राम और ऋषिवर दयानंद की जो तुलना की है वह पढ़ते ही बनती है।
>
> सम्पादक

भगवान राम और ऋषिवर दयानंद दोनों महान कर्म योगी थे । दयानन्द योगाभ्यास के

आनंद में मग्न न रह कर संसार कल्याण के कार्य क्षेत्र में उतरे। उन्हों ने युग परिवर्तन कर दिया। भगवान राम ने असुरों तथा आसुरी वृत्तियों का किया। दयानन्द ने धार्मिक दम्भ, अंध विश्वास तथा सामाजिक अन्याय को कमर तोड़ शिकसत दी। दोष उन्मूलन तो समय लेता है, परन्तु दयानन्द ने इन विषैले वृक्षों की सिन्चाई बद कर के उन पर जबरदस्त कुठारा घात किया। जो दयानन्द को सफलता प्राप्त हुई वह अद्भुत है। भगवान राम ने रावण को पराजित किया। एक बड़ी भारी तानाशाही तथा साम्राज्य को परास्त किया। दोनों को अपने मस्तिष्क तथा अपनी शक्ति पर विश्वास था। दयानंद खूब समझते थे कि यह दुनिया एक कार्य क्षेत्र है। 'कर्म क्षेत्र हि मानुष्य' जैसे कि महाभारत में लिखा है। 'कर्मठ होना ही इनसानियत है। परन्तु यह कर्म ज्ञान युक्त, स्वार्थरहित, तथा सब के लिये हितकर होना चाहिये। योगाभ्यास भी तभी सार्थक होता है जब सर्व कल्याण के लिये योगाभ्यासी तत्पर है तथा कटिबद्ध रहता है। मानव रूपी चित्र के दो पहलू हैं। एक वैयक्तिक और दूसरा सामाजिक। सच्चा प्रभु भक्त इन में से किसी एक को भी विसार नहीं सकता। इसी लिये भगवान कृष्ण ने सच्ची भक्ति का लक्षण करते हुये कहा, 'स्व-कर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्ध विंदति मानवः। अर्थात अपने सत्कर्मों द्वारा भगवान की पूजा तथा उपासना कर के ज्ञानी सिद्धि को प्राप्त करता है। स्वामी दयानंद ने योगाभ्यास किया परन्तु साथ ही पतित भारतीय समाज के उद्धार तथा उत्थान के लिये भरसक प्रयत्न किया। अंत में सेवा मग्न रहते हुये अपने प्राण त्याग दिये।

दयानंद ने ठीक तौर से भर्तृ हरि के इस श्लोक को अपने जीवन में चरितार्थ किया :—

निंदन्तु नीतिनिपुणा: यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगांतरे वा।
न्यायात पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

नीतिनिपुण निन्दा करें या स्तुति करें। धन पाये अथवा चला जाये। आज ही मृत्यु हो जावे अथवा युगों के बाद हो। न्यायपथ से धीर व्यक्ति कभी विचलित नहीं होते।

दयावतार दयानन्द की अपार दया

भगवान श्री कृष्णचन्द्र ने भी अपने पांव के तलुवे में तीर मारने वाले को क्षमा दान देकर, पास से खिसका दिया था। परन्तु उसके और जगन्नाथ के कर्म में रात दिन भूतलाकाश का अन्तर है। उसने श्री कृष्ण के पांव के चमकते चक्र को मृग की आंख समझ कर आविद्ध किया था, परन्तु जगन्नाथ तो सोच-विचार पूर्वक, किसी षड्-यन्त्र के चङ्गुल में फंस कर उस महाहत्या का भागी बना। इसलिए धन्य-धारणा स्वामी जी महाराज की है जिन्होंने ऐसे विषम विषले विषधर को भी क्षमा प्रदान कर दी और प्रेरणा करके उसे पाथेय-सहित अपने प्राण परित्राण के उपाय में भी प्रवृत्त कर दिया।

(स्वामी सत्यानन्द जी कृत 'श्रीमद्दयानन्द प्रकाश से)

आर्यसमाज का वह स्वर्णिम युग

[लेखक—पं० भक्तराम जी (अफ्रीका वाले) जालन्धर]

आर्य समाज के प्रारम्भिक दिन भी क्या दिन थे ! उस सुनहरी काल को स्मरण करते ही मन में हर्ष की एक लहर दौड़ जाती है। उस समय प्रश्न उत्पन्न होता है कि कहां हैं वे आर्य समाजी जो आर्य समाजी थे ? तब और अब के आर्य समाजियों में आकाश पाताल का अन्तर है। पहिले आर्य प्रेम पूर्वक नमस्ते के पश्चात परस्पर सुखदुःख की बातें करते और आज आर्य भाई समय नष्ट होने के भय से प्रथम तो आख बचा कर निकल जाने का प्रयत्न करेंगे और यदि ढीठ बन कर किसी ने बुला भी लिया तो चलते २ 'नमस्ते जी' फिर मिलेंगे' कह कर अपना पिण्ड छुड़ा लेंगे। उन दिनों आर्य सेवक-संघों द्वारा दुःख दर्द में, कष्ट कलश में विघ्न बाधाओं में परस्पर सहायता हुआ करती थी और अब उस परम्परा से प्राप्त कर्त्तव्य को, उत्तरदायित्व को निभाया नहीं जाता। मन्त्री महोदय साप्ताहिक सत्सङ्ग में किसी आर्य भाई के रुग्ण होने की सूचना दे भी दें तो बीमार पुरसी के लिए किस को अवकाश है ? भ्रातृ भाव कहीं पङ्ख लगा कर उड़ गया।

पर्वों और वार्षिकोत्सवों की वह धूम स्वप्न हो गयी। लाहौर में वच्छोवाली और अनारकली समाजों ने मेलों का रूप धारण किया हुआ था। पन्जाब के कोने २ से आर्य स्त्री पुरुष वहां पहुंचते थे। देश प्रसिद्ध वक्ता कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफिर' के भजन व व्याख्यानों के समय रात को उपस्थिति का कोई ठिकाना न होता था आगे से आगे बैठने के लिए धक्कमधक्का होता था। लोग बैठे २ खिस का करते थे। खूब शोर मचता और मिट्टी उड़ती परन्तु कुंवर जी ने उठ कर हारमोनियम पर उङ्गलियां रखी नहीं कि सन्नाटा छा जाता। सन १९२३ के भीड़ भड़क्के में मैं ने अपना कम्बल बड़ी कठिनता से सम्भाला और पगड़ी का तो आज तक पता नहीं चला। लाऊडस्पीकर के बिना भी **Bindrop-Silence** में जनता सुनती और लगभग बारह बजे तक कोई उठने का नाम न लेता।

सङ्कीर्त्तनों का फीकापनदेख कर तो नगर कीर्त्तनों का युग ही अच्छा जान पड़ता है। भजनोपदेशकों द्वारा प्रचार भी हो जाता था और उत्सव की विज्ञप्ति भी। नगर कीर्त्तन तथा उत्सव के हर्ष में हमें दिन काटने कठिन हो जाते थे। चाव का वार पार न होता। २६, २७, २८ नवम्बर, सन १९१५ के आर्य समाज (वच्छोवाली) लाहौर के वार्षिकोत्सव के नगर के कीर्त्तन में २६-११ को यूं तो सब भजन मण्डलियां अपना २ कर्त्तव्य भली भान्ति निभा रही थीं परन्तु कुंवर सुखलाल जी 'आर्य मुसाफिर,' ठाकुर प्रवीण सिंह जी, अमीचन्द जी, म० गिरिधारी लाल जी और म० मङ्गल देव जी

की भजन मंडलियों के गिर्द लोगों की विशेष भीड़ थी। लोगों ने पग २ पर फिटन के घोड़ों को रोक लिया। कुंवर सुख लाल जी के भजन सब के अधिक किए गए थे। पंसद सोने के समय न तो कुंवर सुख लाल जी का गला काम कर सकता होगा और न ही घोड़े की टांगे। उसी नगर कीर्त्तन में कुंवर साहिब की गाड़ी को नगर कीर्त्तन की समाप्ति के स्थान पर ११ बजे तक रोके रक्खा। यदि श्री रामदत्त चौधरी हाथ जोड़ कर जनता को उन पर दया करने की प्रार्थना न करते तो न जाने कब तक उन की गाड़ी को रोके रखते ? जनता नगर कीर्त्तन से कितना लाभ उठाती थी। अब संकीर्त्तनों का कुप्रभाव पड़ता है।

आर्य समाज के प्रारम्भिक काल में उसके नाम को उज्जवल करने वाले सदस्य उसे प्राप्त हुए थे जिन्हों ने आर्य समाज को सर्व श्रेष्ठ समाज बनाया था। उस समय किसी आर्य समाजी के निन्दित कर्म करने पर लोग कहा करते थे—'देखो ! यह आर्य समाजी बना फिरता है।' इस का अर्थ यह था कि एक आर्य समाजी धर्मात्मा होता है। 'ओ३म्' और नाम के पीछे 'आर्य' शब्द दुकान के बोर्ड पर पढ़ कर अथवा सुन कर ग्राहक वहां टूट पड़ते थे। एक आर्य समाजी सत्य व्रती हरिश्चन्द्र का अवतार समझा जाता था। न्यायाधीश एक आर्य की गवाही पर ही अभियोग का निर्णय कर दिया करता था। स्वर्गीय डा० चिरञ्जीव भारद्वाज के धर्मपाल के विरुद्ध मान हानि के मुकद्दमें में एक ब्रह्म समाजी नेता ने अपनी गवाही में यहां तक कह दिया था कि 'यदि अदालत आवश्यकता समझे तो मैं अपनी धर्मपत्नी या पुत्री को डाक्टर जी के कमरे में सारी रात उन के पास रख सकता हूं'। ऐसे थे सदाचारी पुराने आर्य समाजी।

आर्य समाज की लाज रखी थी आर्य कवि व भजनोपदेशक पं. वास देव जी ने जिन से एक भूल हो गयी थी इस लिए उन्होंने जब तक जीवित रहे आर्य समाज की वेदी पर पांव न रखा। आर्य समाज का मान बढ़ाया था उन आर्यों ने जिन के साथ अपनी पुत्रियों और पुत्र व वधुओं को भेज कर विधर्मी तक उन का सतीत्व सुरक्षित समझते थे। आर्य समाज के गौरव की रक्षा की थी उस पटवारी ने जिस ने आर्य समाजी होने पर जिस २ से रिश्वत ली थी उस २ को लौटा कर क्षमा मांगी थी। आर्य समाज पर मोहित था वह प्रेमी जिस दीवाने ने एक सुथरे के वेदविरुद्ध प्रचार के मुकाबिले में सुथरा बन कर आर्य सिद्धान्तों का प्रचार किया था। आर्य समाज का नाम चमकाया था उन आर्य वीरों ने जिन्होंने बिरादरी से बहिष्कृत किये जाने पर अनेक कष्ट सहे पर घुटने नहीं टेके। आर्य समाज की धूम मची थी उन मस्तानों द्वारा जो अत्यन्त रोगी होने और परिवार के किसी सदस्य के देहावसान होने की दशा में भी प्रचार का कार्यक्रम भुगताते थे आर्यसमाज की प्रसिद्धि की थी उन कट्टर आर्यों ने जिनके मुखार विन्द से उच्च स्वर में सोते समय और प्रातःकाल ईश्वर भक्ति के भजनों के पश्चात् वेद मन्त्रों का पाठ सुनकर पड़ोसी उन्हें 'बला' समझा करते थे।

आर्य समाज का महत्व जाना था श्री योधराज जी (महात्मा हंसराज के पुत्र) ने जो आर्यसमाज

के साप्ताहिक सत्संगों में सम्मिलित होने के लिए कलकत्ता से हवाई जहाज द्वारा लाहौर पहुंचा करते थे। आर्य समाज की कीर्ति को चांद लगाये थे महात्मा हंसराज जी ने जो उपदेशकों के पांव छूते थे और जिन्होंने भ्रमण समय स्व० पं- विश्वम्भर नाथ जी के परिचय कराने पर पं. सत्यपाल जी गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हैं, झटपट उनके चरण छू दिये थे। आर्य समाजी थे वे जिन्होंने किसी की बिगड़ी को बनाया था, रोतेको हंसाया था, रूठे को मनाया था, गिरे हुए को उठाया था, जुदा हुए को गले लगाया था, पीड़ित का दुःख दर्द मिटाया था, भूखे को खिलाया था, प्यासे को पानी पिलाया था, नंगे को वस्त्र पहनाया था, डूबते को बचाया था, उजड़े को बसाया था, सोए हुए को जगाया था, जागे हुए को दौड़ाया था। सारांश यह कि एक आर्य का कर्तव्य भली-भांति निभाया था।

ईश्वर कृपा से अभी बड़े विद्वान, वैदिक मिशनरी और शास्त्रार्थ महारथी जीवित हैं परन्तु दुःख तो यह है कि हम उनकी योग्यता से लाभ नहीं उठा रहे। वेद प्रचार के हो हल्ला मचाने और व्याख्यानों व पत्रों में 'वेद-वेद,' 'कृण्वन्तो-विश्वमार्यम्' का शंख नाद करते हुए हम पर उस निखट्टू की कथा तो चरितार्थ नहीं हो रही जिससे अपने घर की छत्त का छिद्र तो बन्द न हो सका था पर मांपता फिरता था आकाश, भूमि और समुद्र ? आर्य समाज की पुरानी पीढ़ी के लोग समाप्त ही समझिए। नई पीढ़ी भले वह पुरानी पीढ़ी से अधिक विद्वान् हैं परन्तु उस जैसा उत्साह, लगन, कार्य तत्परता और कष्ट-सहिष्णुता कहां ? त्याग का तो बहुत ही अभाव है। अस्तु ! निराशा में भी आशा रहती है। 'नैराश्य' परमं सुखम्' व्यासोक्ति के अनुसार वर्तमान संकटों को पारकर जाएंगे यदि आर्य शिरोमणि सभा 'सार्वदेशिक सभा' दलबन्दी से ऊपर उठकर आर्य समाज की काया कल्प करने में कृतनिश्चय हो जाएंगे।

परमात्मा करे कि आर्य समाज का वह स्वर्णिम युग पुनः अपनी आंखों से देख सकें।

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का ३रा आपरेशन

प्रभु की अपार कृपा और जनताके अगाध प्रेमाकर्षण से गांधी हस्पताल हैदराबाद में तीसरी बार आपरेशन हुआ जो १॥ घंटे तक होता रहा। डाक्टरों का कहना है कि आपरेशन सब प्रकार से सफल रहा। हम आर्य जगत की ओर से उनके स्वस्थ होकर वैदिक प्रचार में संलग्नता की शुभ कामना करते हैं। ताकि वेद प्रचार का कार्य प्रतिदिन उन्नति करता रहे।

—संतोषराज मंत्री सभा

इसे अवश्य पढ़िए

आर्य जगत के प्रेमी पाठकों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन है कि प्रस्तुत विशेषांक ३, १०, और १७ नवम्बर के संख्या ४४; ४५, ४६, का सम्मिलित अंक है। इससे अगला अंक २४ नवम्बर को प्रकाशित होगा। पाठक नोट करलें।

—व्यवस्थापक

स्वामी दयानन्द के अहसान

ले०—श्री जगदीश प्रसाद जी कौशिक रुड़का कलां (संगरूर)

१. बदला चुका न पावें, तेरे अहसान का,
इक नूर तू फैला गया, वेदों के ज्ञान का।

यह छूतछात, यह भेदभाव, सब ही मिटा दिये।
और प्यार के दिये, हर दिल में जगा दिये॥
झंडा लहरा दिया, इक ओ३म् के निशान का। बदला...

२. घर २ में यज्ञ संध्या, होने लगे हवन थे,
वेदों के पाठ में, तब नर नार सब मग्न थे।
डटकर किया मुकाबला, पाखण्ड के तूफान का। बदला ..

३. कुछ स्वार्थी देश को थे, गुमराह किये हुए,
कुछ वहम जाति को थे, तबाह किये हुए।
लेकर संदेश आया, सब के कल्याण का। बदला...

४. हर ओर बुतप्रस्ती, पकड़े थी जोर जब,
ईश्वर साकार है, बढ़ने लगा था, शोर जब।
निराकार भेद बतला दिया था, भगवान का। बदला...

५. ढूंढें चिराग लेकर, तुम सा न रहनुमा मिले,
किश्ती को पार कर दे, ऐसा न नाखुदा मिले।
था नाक काट डाला, पाखण्ड के तूफान का बदला...

६. इक बार आ कि फिर हम डगमगा रहे हैं,
मार्ग से भटक, ठोकर दर दर की खा रहे हैं।

झंडा उठाले 'कौशिक' राष्ट्र उत्थान का,
बदला चुका न पावें, तेरे अहसान का।

भारत का एक ऋषि

(ले० श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक)

(प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक श्री रोमां रोल्या के विचार)

श्री. रोमां रोल्या फ्रांस के एक महान् प्रसिद्ध लेखक थे। उन की पुस्तक **Builders of Unity** में महर्षि दयानन्द सरस्वती के बारे में ओजस्वी विचार जो दिये हैं—वे इस विशेषांक में कुछ निकाल कर दिये जा रहे हैं। आप देखें कि महर्षि जी के जीवन तथा उच्चविचारों के युरोप के महान् लोगों के जीवन-मन पर कितना प्रभा पड़ा—सं:

श्री रोमां रोल्या लिखते हैं—

This man (Dayanand) with the nature of a lion is one of those whom Europe is too apt to forget when she gudges India, but whom she will probably be forced to remember to her cost, for he was that rare combination, a thinker of action with genius for leadership.

सिंह समान निर्भीक प्रकृति वाला यह महापुरुष उन व्यक्तियों में था, जिन्हें भारत का मूल्यांकन करते समय युरोप भुलाने की चेष्ट करता हुआ भी भुला न सकेगा। क्योंकि ऐसा करना उस के (युरोप) लिये महंगा सौदा सिद्ध होगा। इस महापुरुष दयानन्द में विचार कर्म और नेतृत्व की प्रतिभा का अनुपम सम्मिश्रण था।

Dayanand was a man to come to an understanding with religious philosophers imbued with western ideas—P. 150

दयानन्द पाश्चात्य विचारों से विमोहित दार्शनिकों के साथ समझौता करने वाले महानुभाव न थे।

It was impossible to get the better of him for he possessed an unrivalled knowledge of Sanskrit and the Veda, while the burning vehemence of his words brought his adversaries to naught They likened him to a flood Never since Shankara had such a prophet of Vedism appeared.—P. 150

उस (दयानन्द) पर विजय पाना असम्भव था। क्योंकि वे वैदिक वाङ्मय और संस्कृत के अनुपम भंडार थे। उन के शब्दों की धधकती हुई आग से उन के विरोधियों का विरोध भस्मसात हो जाया करता था। वे लोग जल की प्रबल बाढ़ के साथ दयानन्द की तुलना किया करते थे। शंकराचार्य के पश्चात् दयानन्द जैसा वेदवित् भारत भूमि में उत्पन्न नहीं हुआ।

Dayanand's stern teachings corres ponded to the thought of his countrymen and to the first stirrings of Indian nationalism to which he contributed.—P. 153

दयानन्द की उग्र और प्रौढ़ शिक्षायें उस के देशवासियों की विचारधारा के अनुकूल थीं और उन शिक्षाओं से भारतीय राष्ट्रियता का सर्व प्रथम नव जागरण हुआ।

The enthusiastic reception accorded to the thunderous champion of the Vedas, a Vedist belonging to a great race and penetraded with the sacred writings of ancient India and with heroie spirit, is then easily explained. He alone hurled the defiance of India against her invaders. —P. 157.

महान् वीर योद्धा दयानन्द का उत्साह पूर्वक स्वागत होने का कारण इस पृष्ठ भूमि के प्रकाश में सहज ही में समझ में आ सकता है कि वे स्वयं वेदों के उग्र प्रचारक थे और वेदों के प्रकांड विद्वान् और मर्मज्ञ थे। वे ऋषियों की परम्परा के अंग थे तथा वीरभावना के साथ प्राचीन भारत के पवित्र ग्रन्थों को साथ ले कर कार्य-क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे। उन्होंने ने अकेले भारत पर आक्रमण करने वालों के विरुद्ध मोर्चा लगाया।

He had no pity for any of his fellow countrymen, past or present who had contribute in any way to the thousand year decadence of India, at one time the mistress of the world.

P. 158

दयानन्द ने अपने देश के प्राचीन वा अर्वाचीन किसी भी निवासी को क्षमा नहीं किया, जिस ने किसी न किसी रूप में उस भारत के १००० वर्ष से हुए पतन में योग दिया था, जो किसी समय संसार का शिरमौर था।

It was in truth an epoch making date for India when a Brahmin not only acknowledged that all human beings have the right to know the Vedas whose study had been proviously prohibiled by orthodox Brahmins, but insisted that their study and propaganda was the duty of every Arya—P. 159.

सत्य यह है कि भारत के लिए वह दिन एक युग प्रवर्तक दिन था, जब एक ब्राह्मण ने न केवल यह स्वीकार किया कि उस वेद ज्ञान पर मानव मात्र का अधिकार है, जिन का पठन पाठन उन से पूर्व के कट्टर ब्राह्मणों ने निषिद्ध कर दिया था, अपितु इस बात पर भी बल दिया कि वेदों का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम-धर्म है।

Dayanand transfused with the languid body of India his own formidable energy, his certainty, his lion's blood. His words range with heroie Power. P. 161.

दयानन्द ने भारत के निष्प्राण शरीर में अपना अदम्य उत्साह, अपना दृढ़ निश्चयात्मक संकल्प और सिंह जैसा रक्त भर कर उसे सजीव किया। उसके शब्द वीरोचित शक्ति के साथ गूंज उठे।

Above all he would not to lorale. The abominable ingustiee of the existence of untouchables and no body has been a more ardeut champion of Thair outrage rights. They were admitted to The Aryasamag on a basis of eguality. P. 162-63

सबसे मुख्य बात यह है कि दयानन्द को अस्पृश्योंकी विद्यमानता का घृणित अन्याय सर्वथा असह्य था। उनके अधिकारों का जितनी उग्रता से दयानन्द ने समर्थन किया उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नहीं किया। अस्पृश्यजन पूरी समानता के आधार पर आर्यसमाज में प्रविष्ट होते थे।

युग पुरुष......

महर्षि दयानन्द सरस्वती जिनका अभाव आज हमें खटकता है

(लेखक श्री विश्व विभूति जी विदेह' 'विद्यावचस्पति")

स्वामी दयानन्द का जन्म संवत १८८१ विक्रमी में भारत के पश्चिम में मौरवी राज्य (गुजरात प्रान्त) के अन्तर्गत टंकारा नगर में हुआ था। आप का जन्म नाम मूलशंकर था। आपके पिता कृष्ण जी तिवारी बड़े जमींदार थे और जमादार भी, अर्थात सरकारी लगान का रुपया भी वही उगाया करते थे। इस पद को तहसीलदारी के बराबर जानना चाहिए।

कृष्ण जी शिव जी के श्रद्धालु भक्त थे। इस कारण वह मूल जी के आगे शिव जी का खूब गुण-गान और कीर्ति बखान किया करते। फल यह हुआ कि बालक मूल जी के हृदय में भी शिव जी के प्रति

He was in fact The most vigorons force of The immediale and preseat action in India at The moment of the rebirth and reawakeing of the national conseiousness. P. 165

वस्तुतः भारतीय राष्ट्रिय चेतना के पुनर्जन्म और जागरण में जो इस समय उस देश में अपने पूर्ण यौवन में देखपड़ रही है, सबसे प्रबल प्रेरणा दयानन्द से प्राप्त हुई थी।

अनन्त श्रद्धा उत्पन्न हो गई। जब मूलशंकर चौदह वर्ष के हुए तो पिता ने सोचा कि अब उसे शिव-रात्रि का व्रत रखना चाहिए। ममता की मारी माता ने कहा, यह अबोध बालक है। सारा दिन रात भूखा-प्यासा रहने तथा रात भर जागने के कष्ट इस से उठाए न जाएंगे। परन्तु मूलशंकर ने आप ही व्रत रखने की इच्छा प्रकट की और उल्लास तथा उमंग के साथ पिता के संग शिव मन्दिर में चले गए।

अब मूल जी के सिर पर शिव जी और चूहे की पहेली चढ़ी थी, वे दिन और रात इसी विचार में डूबे रहते थे। जब कृष्ण जी ने यह दशा देखी, तो इन्हें विवाह करके गृहस्थाश्रम की बेड़ियों में जकड़ डालना चाहा। घर मे विवाह की तैयारियां होने लगीं। जब इस बात का पता मूल जी को चला तो उन्होंने घर से भाग निकलने का निश्चय किया, और बिना किसी को कुछ कहे वे घर से निकल भागे।

ज्ञान का मार्ग बड़ा ही दुर्गम, कटकाकीर्ण और आपत्तियों से भरा हुआ है। सत्य शिव जी खोज कोई सरल कार्य नहीं है किन्तु मूलजी का इस बात

की तनिक भी पर्वाह नहीं थी। घूमते फिरते आप की भेंट चाणोद कन्याली में ज्वालानन्द पुरी तथा शिवानन्द गिरि नामक दो साधुओं से हो गई। उन्होंने शुद्ध चैतन्य जी को योग की सारी प्रक्रियाएं सिखा दीं। अध्ययन कार्य तथा योगाभ्यास के लिए आप के पास बहुत थोड़ा समय बचता था। इसी कारण आप ने एक महात्मा से संन्यास की दीक्षा ले ली। अब आप का नाम "शुद्ध चैतन्य" की जगह "स्वामी दयानन्द सरस्वती" हुआ। इसके पश्चात् आप मथुरा पहुंचे। वहां आप को पता चला कि यहां अस्सी वर्ष के बूढ़े, स्वामी विरजानन्द नामक एक प्रज्ञाचक्षु संन्यासी महात्मा रहते हैं, जो व्याकरण के व संस्कृत के उद्‌भट विद्वान् होने के सिवाय वेदों के भी अद्वितीय ज्ञाता हैं।

स्वामी दयानन्द जी उनके पास पहुंचे। ढ़ाई वर्ष वहां रहे। अन्त को विद्याध्ययन का समय समाप्त हो आया था और गुरु-दक्षिणा देने का समय आ पहुंचा। दयानन्द जी कहीं से एक मुट्ठी लौंग लेकर गुरु को तुच्छ भेंट चरणों में अर्पित करने के लिए लाए। सुयोग्य, सुशील और आज्ञाकारी शिष्य से गुरू जी बोले—"पुत्र! परम पिता परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना है कि वह तुम्हारा मंगल करें, तुम्हारी विद्या, बुद्धि तथा बल में उत्तरोत्तर उन्नति प्रदान करें।

अब स्वामी जी कार्य क्षेत्र में उतरे। उस समय आप की आयु ३६ वर्ष की थी। उन्हीं दिनों आप हरिद्वार में कुम्भ के मेले के अवसर पर आ पहुंचे और भूले भटके, अज्ञान लोगों को ज्ञान का उपदेश देकर गहरे गड्ढे में गिरने से बचा लिया। स्वामी जी ने ऋषिकेश को जाने वाली सड़क पकड़ी और एक जगह अपना डेरा लगाया तथा "पाखण्ड-खण्डनी पताका" गाड़ कर यात्रियों को धर्म के उपदेश देने लगे। सहस्रों की संख्या में पुरुष और स्त्रियां उनका उपदेशामृत पान करने को आते, पर उसके अनुसार काम करने को एक भी आगे नहीं बढ़ता। यह देखकर वह हिम से ढके पर्वतों में एक कौपीन धारण किये बैठ गये।

विरोधी दल अनेक प्रकार के अनुचित और निन्दनीय कार्य करने पर उतर आया था। किन्तु आप ने इनकी पर्वाह नहीं की। जिन दिनों स्वामी जी बङ्गाल का दौरा कर रहे थे, ब्रह्मसमाज के प्रधान नेता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर (विश्व कवि श्री रवीन्द्र ठाकुर के स्वर्गीय पिता) तथा बाबू केशवचन्द्र सेन से आप की भेंट हुई। उक्त महर्षि अपने हो यहां स्वामी जी का उपदेश कराते थे। एक दिन बाबू केशवचन्द्र सेन ने स्वामी जी से कहा—"यदि आप अंग्रेजी जानते तो, मैं आप से इंगलैंड चलने के लिए प्रार्थना करता।"

स्वामी जी ने उत्तर दिया—"जो आप संस्कृत जानते तो, अपने देश-बंधुओं का बहुत कुछ कल्याण कर सकते।"

जब आप पंजाब के दौरे पर निकले तब तक सभी प्रान्तों के रहने वाले स्वामी जी का अद्‌भुत प्रतिभा-सम्पन्न योग्यता का लोहा मान चुके थे। अमृतसर में आपका व्याख्यान हो रहा था, उस समय कुछेक दुष्ट जनों ने आप पर ईंट-पत्थर फेंके और बे-रोक गालियां बकने लगे। स्वामी जी ने कहा—'जो लोग आज मुझ पर पत्थर बरसाते हैं,

वही एक दिन मुझ पर पुष्पों की वर्षा करेंगे।

सब से पहला मल्काना जिसे स्वामी जी ने 'शुद्ध' किया था वह रुस्तमसिंह था। मुहम्मद उमर जन्म का मुसलमान था। स्वामी जी ने उसे आर्य समाज की गोद में ले लिया और उसका नाम रखा अलखधारी। स्वामी जी ने कई बार राजस्थान का चक्कर लगाया। पुष्कर में प्रचार किया और राजा प्रजा दोनों को धर्म का उपदेश दिया। उदयपुर, जोधपुर, शाहपुर आदि राज्यों के नरेश आपके शिष्य हो गये।

जोधपुर पहुंचते ही राजा आपका श्रद्धालु भक्त बन गया। एक बार स्वामी जी बिना किसी सूचना के ही दरबार में पहुंच गये। वहां क्या देखते हैं कि राजा की रखैली नन्हीं जान भी वहां उपस्थित है। स्वामी जी ने कहा—'राजन! सिंह और कुतिया का संग करना निन्दनीय और सर्वथा अनुचित कर्म है।' अब क्या था? नन्हीं जान स्वामी जी के खून की प्यासी हो गई। उसने रसोइयों के साथ मिलकर एक दिन विषपान करा दिया। स्वामी जी को सब हाल मालूम हो गया। उन्होंने जगन्नाथ से कहा—'जा, मैंने तेरा अपराध माफ किया तू यहां से इसी क्षण कहीं भी भाग जा नहीं तो पुलिस तुझे पकड़ ले जाएगी।' रुपयों की थैली देकर स्वामी जी ने उसे नैपाल भाग जाने को कहा।

कुछ दिनों तक जोधपुर में चिकित्सा होती रही पर दशा बिगड़ती ही गई और उनके एक भक्त [आबू से] अजमेर लाये, पर स्वामी जी की दशा न सुधरनी थी, न सुधरी। तीव्र वेदना और असह्य [कष्ट भोगने के पश्चात ३० अक्तूबर सन् १८८३ ई०] के दिन अर्थात दिवाली की रात को परम पिता परमात्मा के अमृत पुत्र बन कर उसी सच्चे शिव की गोद में यह कहते हुए चले ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो। ★★

आर्यजगत् के स्नेही पाठकों से

आर्यजगत सभा का साप्ताहिक मुखपत्र है। पत्र धर्म प्रचार में कितना सहायक होता है, यह तो सब को विदित ही है। सभा अपने साप्ताहिक पत्र द्वारा संन्यासी महात्माओं, समाज के पुराने अनुभवी नेताओं, विद्वानों कवि महोदयों तथा युवक भाई बहिनों को जीवन देने वाले आध्यात्मिक, राष्ट्रीय, एवं सामाजिक लेखों वा कविताओं से धर्म प्रचार कर रही है। यत्न होता है कि प्रति सप्ताह दो तीन मननशील सज्जनों के लेख अवश्य पाठकों की सेवा में पहुंचाए जाएं। सभा की प्रचार सम्बन्धी सूचनाएं भी होती हैं। सभा अपने कर्त्तव्य को सदा से निभाती चली आ रही है। सब लेखक सज्जनों की 'जगत पर अनुकम्पा का आभार प्रदर्शन करते हुए जनता से प्रार्थना करते हैं कि आर्य जगत को अधिक से अधिक प्यारा बनाने का यत्न करेंगे। ग्राहक बनाकर सहयोग देंगे। अपने अमूल्य सुझाव भी देते रहेंगे। —सम्पादक

दीपमाला का शुभ पर्व

सभी आर्यसमाजों और आर्य भाइयों, बहिनों को वेद प्रचार के पुनीत कार्य को सुदृढ़ करने लिए प्रयत्न करना चाहिए और परिवार के प्रत्येक सदस्य के हिसाब से कम से कम चार आना संग्रह कर आर्य प्रादेशिक सभा जालन्धर के वेद प्रचार कोष में भिजवा कर पुण्य के भागी बनें।

—खुशीराम शर्मा वेद प्रचार अधिष्ठाता

ओ३म्

(त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति)

आर्य समाज मन्दिर जालन्धर के निर्माणार्थ

—: नम्र निवेदन :—

मान्यवर बन्धु,

सादर नमस्ते ! जगत गुरु महर्षि दयानन्द जी महाराज ने संसार के कल्याणार्थ आर्यसमाज की स्थापना कर प्राणीमात्र को अनुगृहीत किया। उस महान सन्त द्वारा संस्थापित इस अंकुर ने आज विकसित होकर समस्त विश्व में अपनी सेवाओं की असीम मर्यादाएं निर्मित की हैं। देश देशान्तरों में योगीराज दयानन्द जी महाराज द्वारा प्रदत्त मान्यताओं को सभी वर्गों ने स्वीकार किया है। धार्मिक, सामाजिक व राष्ट्रीय सभी रूपों को समक्ष रख पूज्यपाद स्वामी जी महाराज ने विश्व को एक ऐसा सुपथ प्रदान किया है कि जिस पर चल कर प्राणीमात्र सुख व शांति प्राप्त करता हुआ जीवन का मुख्य लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।

भारतवर्ष में पंजाब प्रान्त आर्यसमाज का मुख्य स्थल रहा है। विभाजन से पूर्व लाहौर ही नहीं अपितु जालन्धर का भी दयानन्द जीवन प्रगतियों में कुछ कम स्थान नहीं था। आज से लगभग ८०-६० वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जालन्धर निवासी श्री सरदार विक्रमसिंह जी को अपने अपूर्व ब्रह्मचर्य तेज से चमत्कृत कर अपना अभिन्न भक्त बनाया और उन्हीं की प्रेरणा पर स्वामी जी महाराज जालन्धर पधारे तथा विक्रम महल जालन्धर में वेद प्रवचन करते रहे।

कुछ समय हुआ महर्षि के चरणों से पवित्र तथा उनके मुखारविन्द से निकले पावन वेद वचनों से सुरभित उस पावन स्थान को डी० ए० वी० कालेज कमेटी ने खरीद लिया था। उसी समय से भारत के गण्यमान्य ऋषि भक्त महानुभाव जालन्धर निवासियों से इस पवित्र स्थान पर ऋषि स्मृति में आर्यसमाज मन्दिर निर्माण करने पर बल देते रहे हैं। यह विचार बड़ा ही उपयुक्त और सर्वग्राही था जालन्धर के आर्य बन्धु भी गत ४०-५० वर्षों से इस ओर प्रयत्नशील रहे हैं उनके सद प्रयत्नों द्वारा यह कार्य कुछ प्रगति की ओर बढ़ा भी किन्तु मन्दिर निर्माण का संकल्प अभी अधूरा ही था।

इसी चिर अपेक्षित व चिर अभिलाषित कार्य की पूर्ती के हेतु आर्यसमाज जालन्धर किला के कार्यकर्ताओं ने ऋषि भक्त सरदार विक्रम के महल के साथ सम्बन्ध स्थान पर प्रभु कृपा और दानी महानुभावों के सहयोग की आशा पर आर्य समाज मन्दिर निर्माण करने का निश्चय किया है। इस पावन मन्दिर का शिलान्यास आर्य समाज के वार्षिकोत्सव के शुभावसर दिनांक ८ दिसम्बर १६६३ ई० रविवार करने का निश्चय किया है।

इसी नाते सभी धर्म प्रेमी बन्धुओं और विशेष रूप से जालन्धर के भाइयों की सेवा में हम विनम्र प्रार्थना करते हैं कि वे इस पावन शुभ कार्य में मुक्त हस्त से दान देकर अपने इन आर्य बन्धुओं का उत्साह बढ़ावें।

हमें पूर्णाशा है कि आप हमारी इस विनीत प्रार्थना को स्वीकार कर शीघ्र ही अपने अनुपम सहयोग से कृतार्थ करेंगे।

आपके कृपाकांक्षी

वेदीराम शर्मा एम० ए० शंकरदास त्रेहन

मन्त्री आर्यसमाज जालन्धर (किला) प्रधान

प्रादेशिक आर्य युवक संगठन पंजाब की आवश्यक बैठक

संरक्षक--प्रि० भीमसेन जी बहल, एम० एस० सी०

पंजाब प्रदेश के सभी युवक समाजों के प्रतिनिधियों की एक आवश्यक बैठक रविवार दिनांक २४ नवम्बर १९६३ ई० को मध्याह्न २ बजे से डी० ए० वी० कालेज जालन्धर नगर में रखने का निश्चय किया गया है। इस में संगठन के कार्यकर्ताओं व अधिकारियों का निर्वाचन होगा तथा भावी कार्यक्रम पर विचार किया जावेगा।

सभी सम्बद्ध युवकों से प्रार्थना है कि कृपा कर लौटती डाक द्वारा सूचित करें कि उनके साथ कितने युवक पधार रहे हैं जिससे आवास आदि का समुचित प्रबन्ध किया जा सके। आवास का प्रबन्ध दयानन्द माडल स्कूल के छात्रावास में होगा। बिस्तर साथ लावें तो सुविधा होगी। धन्यवाद।

वेदीराम शर्म्मा एम० ए०

अध्यक्ष

क्रांतिदूत दयानन्द और आर्यों के क्रांतिकारी गीत

(ले०—प्रो० राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' एम. ए. शोलापुर)

मान्यवर सम्पादक आर्य जगत ने तो मुझे किसी और विषय पर लिखने का आदेश दिया था परन्तु आर्य जगत के एक अंक में आर्य समाज के पुराने सेवक पूज्य पं० भक्तराम जी ने आर्य गजट में आर्य समाज के गीतों के विषय में प्रकाशित मेरे एक लेख पर अपना लेख लिख कर मुझे उपरोक्त लेख पर ऋषि अंक में लिखने के लिए उभारा है। पाठकगण इस लेख को ध्यान से पढ़ें नई दिशा में नई प्रेरणा पायेंगे।

ऋषि ने क्रांति का शंख फूंका इस में दो मत नहीं हो सकते। परन्तु आज इतिहास का अवलोकन करते समय एक प्रश्न चौड़ा मुंह कर के उत्तर मांगता है कि ऋषि के महत्व को हम राजनैतिक दिव्य द्रष्टा के रूप में कहां तक समझे हैं? मेरी तुच्छ धारणा यह है कि दार्शनिक दयानन्द को और राजनैतिक दिव्यद्रष्टा दयानन्द को अभी पूरी तरह नहीं समझा गया। लीजिए १५ वर्ष तो सुनते मुझे हो गये परन्तु कुछ दिन पूर्व सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ते पढ़ते यह पढ़ कर दंग रह गया कि ईसाई बड़े पक्षपाती हैं अपने मत वाले का और अपने देश वासो का बड़ा पक्ष करते हैं। यदि कोई गोरा किसी काले भारतीय को मार देवे तो न्यायाधीश और Jury अपराधी को दोष मुक्त कर देते हैं। कितना दुर्बग था वह दयानन्द तनिक इस बात को पढ़ कर विचारिये। यह मत भूलिये कि बीसीं शती के आरम्भ में १९०६ में लाहौर के एक अंग्रेज पत्रकार ने अपने नौकर को गोली मारकर मार दिया तो न्यायालय से उसे केवल ६ मास कारावास का दण्ड मिला कहा यह गया कि हत्या नहीं की गई गोली अकस्मात चल गई है। ऐसे ही रावलपिंडी स्टेशन पर एक भारतीय देवी से एक अंग्रेज स्टेशन मास्टर ने बलात्कार किया पर निरपराध ठहराया गया। क्यों? १८८२ में इलबरट बिल पेश हुआ। अंग्रेज जाति इस के विरुद्ध खड़ी हो गई कि भारतीय न्यायाधीशों को अंगरेजों के विरुद्ध अभियोग सुनने का भी अधिकार नहीं।

ऋषि की महत्ता अब समझे? सत्यार्थप्रकाश इलबरट बिल पेश होने से पूर्व लिखा गया। ऋषि ने यह भी लिखा है कि इसाई दूसरे देश वासियों के माल पर टूटते हैं जैसे प्यासा पानी पर और भूखा अन्न पर। तनिक और विचारें ऋषि के इन शब्दों पर और यह ध्यान रखें कि २०वीं शती के आरम्भ तक गोखले जी, गांधी जी दादा भाई नारो जी और मालवीय जी ने भी अंग्रेजों राज के न्याय और बरकतों के गुणगान में कसर न छोड़ी थी। इन उपरोक्त महापुरुषों को देश से प्यार था इसमें सन्देह नहीं परन्तु आत्मबल इतना नहीं था कि स्पष्ट शब्दों में अंग्रेजी अन्याय का उन दिनों भण्डा फोड़ें यह गर्व तो तिलक, लाज और विपनचन्द्र जैसे नीतिज्ञों से केवल साधु दयानन्द को ही प्राप्त हुआ।

ऋषि की इस क्रान्तिकारी भावना का प्रभाव ही था कि आर्यों के भक्तिरस के गीतों में भी क्रांति के भाव प्रवेश पा गये। आर्य कवि क्रांति का शंख फूंकने में एक दूसरे से होड़ करने लगे। हमारे बाजे ढोलक और चिमटे वाले भजनीक आत्मा परमात्मा की चर्चा करते करते विद्रोही बनकर स्वाधीनता संग्राम के सैनिक बनकर राष्ट्र को जगाने लग गये। अत्यन्त संक्षेप में उदाहरण देता हूं। यदि पाठक पुरानी भजन पुस्तकें मुझे भेजें तो अनुसंधान करूंगा जो इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी होगा।

खद्दर पाइये ते बेड़ा होवे पार नी माये।

मेरे बाल काल में हमारे गांव में समाज में यह भजन गाया जाता था। शेष भूल गया। इस गीत में स्वदेशी आंदोलन का प्रचार कितने स्पष्ट शब्दों में है।

देश विच होवां चाहे मिनूं परदेश होवे,
शाल दोशाले चाहे खद्दर दा वेश होवे।

इन पदों में क्या है? देश हित में देश निकाला पाने और स्वदेशी वस्त्रों का प्रचार खुल कर ईश्वर भक्ति के साथ किया गया है। क्रांति की ज्वाला ऐसे ही भड़की थी। मातृभूमि सुख सम्पद साजे। यह हमारे एक पुराने भजन का पद है—भारत जननी की सेवा का व्रत भारी व्रतनाथ करें हम मातृ का दुःख हरने के हित न्यौछावर निज प्राण करें हम ये दो पद गुरुकुल कांगड़ी में गाये जाने वाले एक ईश्वर स्तुति प्रार्थना के भजन में आते हैं। स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें। सेवा में मातृ भूमि के तन मन निसार हो। कुछ सोचें जब देश वासी मन्दिरों में—कबीरा तेरी झोंपड़ी...राम भरोसे...और दया धर्म का मूल...अजगर करे न चाकरी...जैसे दोहों के रूप में विष की मीठी गोलियां खा रहे थे तब आर्य कवि मुसाफिर ने यह तान छेड़ कर आग लगादी :—

हैं घर वाले भूले मगर गैर घर में।
मजे कर रहे हैं मजा हो रहा है॥

फिर कहा :—कर्म करते कदम को बढ़ाते चलो
तेजे खंजर से सीना अड़ाते चलो

वीर भावना आर्य कवियों ने ऐसे उभारी :—मुसाफिर न कर जीने मरने का खटका अमर है तू फानी नहीं है यह कब गाया? जब जीवन पानी का बुलबुला तिलक धारियों की कथा का विषय होता था। जब तिलकधारी अज्ञानी पुजारियों के के कीर्तनों की धुन ताल से यह स्वर निकलता था :—

जो बिगड़े सो तेरा नाथ मेरा क्या बिगड़े तब आर्य कवि गाया करते थे।

तन मन धन सब सुख बिसरावें जन्म भूमि सुखसज हमारी। सोमसरोवर की वीर तरंगमें पढ़ये आर्य उपासक साधना करते हुए क्या कामना करता था। मुन्शी प्रेम चन्द प्रकाश कवि और पं० नाथु राम शंकर जी की रचनाओं से और लोह लेखनी से क्रांति की ज्वाला कैसे धधकी यह आर्य लेखकों की लेखनी को बताना होगा। चन्द्र कवि की एक कविता भारत की लक्ष्मी को चुरा कर के यार तुम मूंछें मोरड़ बैठे समुद्र के पार तुम १९१९ में गाई गई बस इसी से अंग्रेज रुष्ट हो गया और जेल जाना पड़ा।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

(ले०–ब० सुशीलादेवी जी आर्या एम.ए., (हिन्दी संस्कृत) आर्य कन्या गुरुकुल.नरेला)

प्रकाश से किसे प्यार नहीं? और हो भी क्यों न प्रकाश ही जीवन हैं; अन्धकार मृत्यु। प्रकाश निर्माण है, अंधकार विनाश। अन्धकार में कीड़े कांटे ठोकर, गढ़े अनेक प्रकार के भय हैं। प्रकाश में इन सबकी स्थिति होते हुए भी रक्षा की आशा है। संसार के समस्त दुर्गुणों का इतिहास अंधकार की ही काली स्याही से लिखा गया है। तभी तो हम प्रभु से प्रार्थना करते हुए 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की भिक्षा मांगते है।

यह कौन-सा अंधकार हैं जिससे हम परे होना चाहते हैं? वह कौन-सी ज्योति है जिसकी ओर हम गमन करने को आतुर है? अंधकार में हमे किसी भी पदार्थ के स्वरूप का वास्तविक भान नहीं होता प्रकाश होते ही जो जो हैं सही दीखने लगता है। जब हमें पदार्थों की वास्तविकता विदित नहीं होती उसी अज्ञान की स्थिति से निकल हम ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर चलाने की याचना ज्योतिस्वरूप परमेश्वर से करते हैं। ससार के समग्र ज्ञान का वाचक पद वेद है जिसे वेदों के पुनरुद्धारक महर्षि दयानंद जी ने सब सत्य विद्याओं की पुस्तक कहा है। अतएव ज्योति की ओर गमन करने का अभिप्राय वेद की ओर चलने से है और वेद की ओर चलने का अभिप्राय क्या है? क्या वेद हमसे दूर है?

हां, कुछ समय पूर्व जब महर्षि दयानंद ने इस भारत भू को स्वजन्म से अलंकृत न किया था—यहां माना जाता था कि वेद तो जर्मनी चले गए है। वास्तव में भारत से वैदिक ज्ञान विदा हो चुका था किंतु वेद से हमारी इस स्थानकृत दूरी का देव दयानंद ने दूर किया। भोले, पथ भूल भारतीयों ने आश्चर्य चकित हो देखा कि वेद तो हमारे थे, हमारे लिए। दुर्भाग्य कि हम उनसे इतने काल वंचित रह अंधेरे में भटकते रहे।

सचमुच जिस किसी ने इस खोए अमूल्य ज्ञान की निधि पाई वह निहाल हो उठा, गद्गद् हो गया और ऋषिराज दयानन्द के गुण गाए बिना न रह सका। ऋषि ने हमें वेद लाकर दिए। जर्मनी

मेरा दावा है कि पराधीनता के काल में सिवाय आर्य समाज के किसी धार्मिक संस्था के प्रभु भक्ति के गीतों में क्रांति की भावना न मिलेगी। हां यह ठीक है कि एक समय कुछ दब्बू लोगों के कारण आर्य समाज की स्टेज पर अंग्रेज की महिमा का गान हुआ पर वह ऋषि की भावना के विपरीत था और शीघ्र ही ऐसे लोगों से आर्य समाज मुक्त हो कर अपने विराट रूप में पुनः आ गया।

से या जापान से गगन से या रसातल से। इस के लिए उन्हें श्रम भी न्यून न करना पड़ा। अप्राप्य थे वेद, अमूल्य भी। सो खूब महंगे पड़े उन्हें ये। मानव की दृष्टि में सब से मूल्यवान प्राणों की भेंट चढ़ा कर विष के प्याले पीकर उन्होंने हमारे लिए वेदामृत सुलभ कर ही दिया। न केवल एक के लिए सब के लिए। न न केवल विशिष्ट के लिए सामान्य के लिए भी। न केवल पुरुषों के लिए युग युग से वेद का नाम भी लेने की अनधिकारिणी नारी के लिए भी। इस प्रकार ऋषि के सतत दिव्य प्रयत्नों से वेद की ओर हमारी स्थानकृत एवं कालकृत दूरी मिट गई। वेद-जो अतीत की स्मृति बनकर रह गए थे—वर्तमान की उपलब्धि बन गए। किन्तु क्या वेद अब हमारे पास हैं? शंका उत्पन्न होती है कि पुनः तो कोई हमारे इस अनमोल खजाने को लूट कर नहीं ले गया? आप कहेंगे कैसी विचित्र बात! भला अब भी वेदों का अभाव है और फिर आर्यों के पास? हमारे यहां तो वेद के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। हमारे पुस्तकालयों में से तो प्रायः सभी की आलमारियों की शोभा वे बढ़ा रहे हैं। हमें इस उत्तर में कुछ मिथ्यात्व का आभास हो रहा है। प्रथम तो हमारे पुस्तकालयों वा घरों में ही वेदों की उपस्थिति सन्दिग्ध है। फिर इतने मात्र से ज्योति पथ पर गमन असम्भव है। वेद तो हमारे जीवन में होना चाहिए। जन-मानस पर छा जाना चाहिए। हमारे कुछेक पुस्तकालयों में वेद पड़े हुए धूल खा रहे हैं (क्योंकि न कोई उन्हें पढ़ता है न पढ़ना चाहता है) यह माना, किन्तु हम में से कितने ऐसे हैं जिनके जीवन में वेद का प्रवेश है। हमने वेद की शिक्षा का प्रचार करने के लिए कितनी संस्थाएं संचालित की हैं? वेद के लिए कितने जीवन दान दिए हैं? यदि इने-गिने व्यक्तियों ने वेद पढ़ा या पढ़े भी हैं तो कितने ऐसे हैं जिन्होंने इन्हें गुना है? तदनुसार आचरणकर वेदकी गूढ़ उपयोगिता व जीवननिर्माणकारी तत्त्वों को प्रमाणित किया है? जब तक इन प्रश्नों का उत्तर निराशाजनक मिलता रहेगा तब तक स्मरण रखिये और तो हम भले ही कुछ कर लें। अनेक संस्थाओं की संख्या बढ़ा लें, आर्यसमाज के सदस्य कई गुणे कर लें, बड़ी मात्रा में साहित्य-प्रकाशन का ढिंढोरा पीट लें, परन्तु अन्धकार से प्रकाश की ओर जाने में सफलता सात जन्म में भी प्राप्त नहीं कर सकते। हमारे लिए एकमात्र प्रकाश स्तम्भ वेद है। यही तो वह अमूल्योपहार है जो ऋषिवर ने हमें प्रदान किया। इसी की उपेक्षा करते हुए हमारी ऋषिकार्य को आगे बढ़ाने की आशा दुराशा मात्र रहेगी इसमें कोई सन्देह नहीं।

हम प्रतिवर्ष दिव्य देव दयानन्द का निर्माण दिवस मनाते हैं और उनके चरणों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं किन्तु ऋषि के सब लक्ष्यों से महान एक ही लक्ष्य था दो शब्दोंमें वेद-प्रचार। क्योंकि अन्य सभी लक्ष्य तो हाथी के पांव में सब के पांव की भांति इसी में समाए हुए हैं। ऋषि ने स्वानुभव से यह सीखा था कि जब तक हमारे जीवन का गठबन्धन वेद से रहेगा हम प्रकाशमय ऋजु पथ पर सुकरता से बढ़ सकेंगे। वेद का आंचल छूटा नहीं कि हम न इस लोक के रहेंगे न परलोक के। इसीलिए उन्होंने वेदों का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना आर्योंका परम धर्म निर्धारित किया।

एक ही दीप जला लो

[लेखक—श्री सन्तोषराज जी सभा मन्त्री जालन्धर]

श्री संतोषराज जी बड़े गम्भीर और शांत स्वभाव के लेखक हैं ऐसा होना स्वाभाविक ही है क्योंकि आपके जीवन का बहुत बड़ा भाग आर्य अध्यापन संस्थाओं में शिक्षण का रहा है। यही भावनाएं उनके इस प्रस्तुत लेख में पाई जाती हैं। महर्षि दयानन्द कितने गंभीर शांत निर्भीक व्यक्ति थे यह आपके लेख पढ़ने से पता चलेगा। आर्यसमाज रूपी अन्तिम दीप जो स्वामी जी ने जलाया उसकी इस युग में क्या दशा हो रही है इस का विस्तृत वर्णन आपके लेख में मिल रहा है। व्यवस्थापक

१८८३ की दीपावली के ठीक ५ मास पूर्व की बात है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती अजमेर से मारवाड़ जा रहे थे। ऋषि भक्तों ने हाथ जोड़ कर कहा कि महाराज वहां न जाए। वहां के लोग अज्ञानी और क्रूर हैं। वहां आपको भय बना रहेगा। आपके प्राणों के चले जाने का भय है। भगवान दयानन्द ने हंस कर कर कहा था, भोले भक्तो! आपने मुझे अभी तक नहीं समझा। यदि लोग अंगुलियों की बत्तियां बनाकर भी जलावेंगे तो भी वहां जाकर धर्म का प्रचार अवश्य करूंगा।' ऐसा ही हुआ। उन्हें वहां कांच पीस कर दूध में दे दिया गया। फिर इलाज में भी हेराफेरी हुई और उनकी अंगुलिों की बत्तियां बनाकर जला दी गई। ठीक दीपावली का दिन था। ऋषि हंसते-हंसते इस जीवन लीला को समाप्त कर रहे थे। प्राण छोड़ते समय तो भगवान दयानन्द ने कहा था, 'ईश्वर! तेरी मंगल इच्छा पूर्ण हो, तूने अच्छी लीला की, अहो!' प्राण छोड़ने के उपरान्त भी भगवान दयानन्द तूने अच्छी लीला की। तिमिर आच्छादित रात्री को जगमगा दिया। उन्होंने अपनी अगुलियों की ही नहीं, रोम-रोम की बत्तियां बना कर जला दीं कि इस अन्धकार से भरे देश में ज्ञान के दीपक जलें और इस अभागे देश के भाग्य जागें।

महर्षि दयानन्द का सारा जीवन ही तप और त्याग का था। इस तप और त्याग का बीजारोपण उस शिवरात्री को हुआ जिस में बालक मूलशंकर ने उपवास किया और उन्हें सच्चे शिव की खोज की धुन सवार हुई। बहन और प्रिय चाचा की मृत्यु से

यदि हम इस परम धर्म का पालन न करके अपर धर्मों के पालन में ही शक्ति का व्यय करते रहे तो लक्ष्य हम से दूर होता जाएगा। दीपावली प्रकाश का सन्देश लेकर आती है। आइये, इस पर्व से वेद-प्रचार ही अपना लक्ष्य बनाएं। मनसा, वाचा, कर्मणा इसी लक्ष्य की पूर्ति में जुट जाएं। तभी हम तम से ज्योति की ओर चलने में सफल हो सकेंगे। यही इस पर्व का सन्देश है।

त्याग की भावना जाग उठी और मृत्यु पर विजय पाने की धुन सवार हुई। बस भाव क्या था घर बार छोड़ा, सुख ऐश्वर्य से मुख मोड़ा और वर्षों कभी बनों में कभी हिम पर्वतों में वास किया। कभी शीत कभी घाम और कभी घोर बरसात के कष्ट सहे। कभी भूख से व्याकुल हुए तो कभी प्यास से आतुर, परन्तु खोज जारी रही। अहो! तप की पराकाष्ठा हो गई। आखिर तप फल लाया। प्रज्ञा-चक्षु गुरुवर विरजानन्द ने इन के ज्ञान चक्षु खोल दिए। सच्चे शिव के दर्शन और मृत्यु पर विजय पाने में कोई कसर न रही। परन्तु अब अपूर्व त्याग का व्रत प्रारम्भ हुआ। महर्षि ने अपने गुरु जी की पवित्र आज्ञा शिरोधार्य कर सर्व हित में लग जाने का, पावन वेद के देश को घर-घर पहुंचाने का आदेश ले लिया। अपने मोक्ष पद की लालसा न रही। परवाह है तो इस आरत भारत को फिर से सम्भाल देने की, दूसरों के दुख दूर करने की; विश्व कल्याण की।

भगवान दयानन्द ने हमें प्रभु की पूजा सिखाई। मूर्ति पूजा, अवतारवाद अनेकेश्वर वाद का जोरदार शब्दों में खण्डन किया। वेद भगवान की कल्याणी वाणी स्त्री और पुरुष के लिए, ब्राह्मण और शूद्र के लिए, भारतीय और योरपीय के लिए समान रूप से है, प्राणी मात्र के लिए है, ऐसा सिंहनाद किया और वेद मन्त्रों से ही सिद्ध कर दिया। भारत के प्राचीन गौरव और उसके भूले-बिसरे स्वाभिमान का डंका बजाया। राष्ट्रीय एकता का सूत्रपात किया। अनाथ और विधवा की सुध ली। मिथ्या ऊंच-नीच के भेद भाव को मिटाया और इस प्रकार सर्वोदय समाज की नींव रखी। देश से कुरीति, अज्ञान और हीन भावनाको मिटाया और यह सब कुछ मिटाते-मिटाते अपने आपको मिटा दिया। कवि के शब्दों में

स्वयं को जलाकर किया था उजाला।
जला दी पुनः ज्ञान की दीप माला॥
स्वयं विष पिया पर अमृत था पिलाया।
स्वयं प्राण देकर हमें था जिलाया॥
अहिंसक बना विश्व में वह निराला।
स्व घातक को भी संकटों से निकाला॥
अमृत पुत्र था वह प्रभु का दुलारा।
दयानन्द ऋषि राज प्यारा हमारा।
सदा गीत गाते रहेंगे तुम्हारा॥

भगवान दयानन्द ने मर कर तो अनगिनत दीप जलाएं निस्सन्देह, परन्तु अपने जीवन काल में भी उन्होंने अनेक दीप जलाए। एक दीप जला तो हमें परमेश्वर के वास्तविक रूप का परिचय मिला। दूसरा दीप जला तो वेद भगवान के ज्ञान से हृदय का अन्धकार मिटने लगा। एक और दीप जला तो भारतके गौरव और स्वाभिमान का सच्चा स्वरूप आंखोंके सामने आगयाथा। एक और दीपजलातोदेश और जाति की दीन हीन दशा का चित्र आंखों के सामने चित्रित हो गया और उस में नये रंग भरने तथा नया रूप देने के यत्न होने लगे। एक और दीप जला तो समाज में फूट और मिथ्या भेद भाव के भूत का पता चला और समाज के मुख से इस कालिमा को धो डालने का यत्न होने लगा। फिर एक दीप जला तो राष्ट्रीय एकता का

सूत्रपात हुआ। हमें पता चला कि काश्मीर से कन्याकुमारी और काबल कन्धार से ब्रह्मा तक सभी एक राष्ट्र है। वेदों के पठन-पाठन और भाषा की एकता से ही भावात्मक एकीकरण सम्भव है, ऐसा ज्ञान हुआ।

भगवान दयानन्द ने यह सभी दीप जलाए अपने जीवन काल में और इन दीपों को जलता रखने के लिए, सदा प्रकाश देते रहने के लिए एक और दीप 'आर्य समाज' का जलाया। यह दीप ऐसा दीप है जिस से सभी दूसरे दीप जलते रह सकते हैं। परन्तु क्या यह सच है कि आर्य समाज का दीप स्वयं जग रहा है, प्रज्वलित है? क्या यह दीप भगवान दयानन्द के जलाए हुए सभी दीपों को जलाए रखने की सामर्थ्य रखता है? मुझे तो ऐसा नहीं दीखता। आज आर्य समाज में वह शक्ति नहीं है। उसकी शक्ति विशृङ्खलित हो गई है। हम आर्यसमाजी बन्धुओं को इस महान संस्था पर श्रद्धा घट रही है। कर्म और त्याग की भावना समाप्त हो रही है। हमें अपने गुरुवर से, भगवान दयानन्द जी के पुण्य जीवन से तप और त्याग की शिक्षा लेनी है। उनके जलाए हुए, प्रज्वलित किए गए दीप से स्वयं चमकने और चमकाने और इस दीप की जलती हुई बत्ती से स्वार्थ त्याग और आत्म बलिदान करने की प्रेरणा लेनी है। भगवान दयानन्द ने अपने जीवन काल में अनेक दीप प्रज्वलित किये और मरने पर भी असख्य दीप जलाए। क्या हम उनके भक्त एक भी दीप न जला पाएंगे? भगवान करे कि आज की दीपावली के दिन मेरे मन मन्दिर का दीप प्रज्वलित हो उठे। मेरा यह एक ही दीप जल उठे जिस से मैं स्वयं प्रकाश पाकर अपने इर्दगिर्द भी प्रकाश बिखेर सकूं।

आर्य जगत के लेखकों व कवियों से नम्र निवेदन

जिन महानुभावों ने लेख व कविता भेजकर आर्यजगत से अपना स्नेह प्रकट किया है हम उनके अति आभारी हैं। लेकिन कुछ मैटर असमय पर पहुंचने और स्थानाभाव से अप्रकाशित रहा है। अतः हम उन सज्जनों से क्षमा चाहते हैं। शेष लेख व कविता साधारण अंकों में समय-समय पर प्रकाशित होती रहेंगी, —व्यवस्थापक

"सहज सरसतम सुखकर तान"

(लेखक—श्री वेद प्रकाश जी एम० ए० खन्ना)

कौन गा सके अनुपम ऋषि के, पावन जीवन के गुण गान,
शेष शारदा गन्धर्वों की, रुक जाती है प्रखर जबान ॥
उसकी सांसों में बन्दी थे, ढोंग मिटाने के तूफान ।
उसके लोहू के कण कण से, सदा फूटते शत वरदान ॥

मचल रहे थे हर प्राणी को, आर्य बनाने के अरमान।
इन्द्र धनुष के सतरंगों से, सजा रहे थे वे शमशान ॥
अजर, अमर, आकार रहित है, सर्वशक्तिमय प्रभु भगवान।
मन मन्दिर में पूजो निशिदिन, प्रतिमाएं तो हैं पाषाण ॥

यज्ञ हवन आराधन वन्दन, शुभ कर्मों से ही उत्थान।
विषय वासना स्वार्थ पूर्ति तो, घोर नरक की गहरी खान ॥
आर्यसमाजों से ही सम्भव, भारत गौरव सुख कल्याण।
सदाचार है सच्ची पूंजी, करो देश का हित निर्माण ॥

जीवित रहती वही जाति है, करना जाने जो बलिदान।
नरक तुल्य है राज पराया, अपने से ही सुख सम्मान ॥
गौओं की सेवा अपनाओ, बनना चाहो जो धनवान।
छुआछूत का भूत भगाओ, सभी जातियां एक समान ॥

सेवा मदद भलाई ठानो, तन से यदि तुम हो बलिदान ।
मृतक श्राद्ध पाखण्ड ढोंग है, महामान्य सच्चे गुणवाण ॥
दीन दुखी के बनो सहायक, विधवा संकट पर दो कान।
सत्संगों में जाओ निश्चय, चाहो यदि नवजीवन मान ॥

ये कुछ बातें ऋषि जीवन की, सुनो-सुनो सब देकर ध्यान।
मानस का तम दूर भगाओ, तभी दीवाली की है शान ॥
पढ़ो-पढ़ाओ वेदों को सब, अपनाओ ऋषि का फरमान।
वेद बांसुरी सदा सुनाती, सहज सरसतम सुखकर तान ॥

वेदों का महत्व

(ले०-श्री दयानन्द आर्य एम. ए, विद्यार्थी साधु आश्रम होशियारपुर)

युगप्रवर्तक ऋषि दयानन्द जी आज के दिन कालवश हो गए। वे चारों वेदों का पूर्ण भाष्य तैयार कर रहे थे किन्तु वे इस कार्य को पूरा न कर सके। इतिहास में महर्षि दयानन्द वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानने वालों में प्रमुख थे, उनके हिन्दी अनुवाद ने उन लोगों के होश ठिकाने लगा दिए जो वेदों को बिल्ली की म्याऊं से भी निरर्थक जानते थे। पर पता नहीं, हमारे देश की संस्कृति को नष्ट करने का ठेका ले रखा है।

श्री विंटर निट्स पाश्चात्य विद्वान् थे, वे **Ancient Indian Cultvre** में लिखते हैं कि—

ओल्डनबर्ग कहता है कि वैदिक कविता या वैदिक धर्म का उद्देश्य वर्ग स्वर्ग धनिकाभ्युदय के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं, 'मुर्दे गाड़ने का विधान ऋग्वेद में है। कुछ हो इन्द्र तथा वृत्र का मूल प्राकृतिक रूप वैदिक कवियों के सम्मुख स्पष्ट नहीं है।

दूसरी ओर श्री **A. A. Macdonell** अपनी पुस्तिका **A History of Sanskrit Literature** के **Rigvidic Age** में लिखते हैं। उसका हिन्दी अनुवाद यह है—यद्यपि शुक्ल यजुर्वेद में गोवध के लिए मृत्यु-दण्ड विहित है, ऋग्वेद में नितान्त प्रतिषेध नहीं पाया जाता, कारण विवाह सूक्तों में विशेष महोत्सवों पर गो का आलम्भन विहित है और वृषभों की बलि इन्द्र को अर्पित करने का कई जगह वर्णित है, अन्य स्थान पर महाशय विंटर निट्स अथर्ववेदके बारेमें शुरू यहींसे करते हैं कि

जादूटोने के मन्त्र हैं व प्रक्षेप की प्रवृत्ति ने मूलपाठ को को बिगाड़ने में कोई कसर नहीं रखी।' इस प्रकार की बातें जो भारत की संस्कृति का दिवाला निकलता देखना चाहती हैं आज शिक्षा-क्षेत्र में पढ़ाई जा रही हैं। प्रत्येक संस्था कभी २ विचार किया करती है कि जिस उद्देश्य को लेकर हम चले थे, कहीं भूल तो नहीं गए? आज आवश्यकता है तो इस बात कि वेद की महानता के बारे जो कलुषित बातें चल रही हैं, उनका मुकाबला तभी किया जा सकता है जब हम पूरी तरह ध्यान केन्द्रित करके उनसे शक्ति में बढ़ कर उनके विचारों का शोधन करें। समय आ गया है कि वेद की सार्वभौमिकता को हम पूरे बल के साथ दिग्गज विद्वानों के सम्मुख रखें। प्रभु शक्ति देंगे जब हम वेद की रक्षा के लिए कटिबद्ध होंगे। वेद भगवान तो कहते हैं।

अर्थात् वेद विद्या के विज्ञान के बिना व प्रभु जाने बिना सुख कहां। महर्षि दयानन्द की दीवाली के जलते दीपकोंसे यही सन्देश लें। वेदोंके बारेमें भ्रम दूर हो। मिल कर बलवती योजना बनें व विदेशों में धड़ाधड़ साहित्य जाये जिस से वेदों में मांस खाने का विधान कहने वाले अपने कुमार्ग से सुमार्ग पर आयें।

दीपमालिके !

(ले० श्री राममूर्ति जी कालिया, एम. ए. नई दिल्ली)

(१)

नभ से उतरो दीपमालिके,
भू पर हो स्वागत तेरा।
बिना तेल और बाती के, मानव दीप बुझे बहुतेरे,
एकमैव आलम्बन छूटा, आंधी और तूफान घनेरे।
शुचिता, परहित, चरित, त्याग का, सूख गया दीपक में तेल,
प्रभु नाम का आश्रय छूटा, मानवता से रहा न मेल॥
पुनः जलें ये बुझे दीप सब,
पूरा हो आशय तेरा।
नभ से उतरो दीपमालिके,
भू पर हो स्वागत तेरा॥

(२)

अविश्वास व आडम्बर के कागों ने बाती को खाया,
विनय-विवेक की ओट हट गयी, दीप बुझे अंधड़ है छाया।
स्वार्थता तम की छाया में, मुझ को दीप पड़े सब दिखते,
साधु यही ये सभी जल उठें, जगमग-जगमग धरती चमके॥
हिमचल पर ज्योतित हों दीपक,
मिटे धरा का अन्धेरा।
नभ से उतरो दीपमालिके,
भू पर हो स्वागत तेरा॥

दीपक से प्रकाश फैलाओ

(ले०—श्री सीताराम जी मन्त्री आर्यसमाज शीशवाला जिला हिसार)

दीपावली का नियम है, कि एक थालमें बहुतसे दीपक होते हैं, उनमें से एक सलाई स्वयं जलकर एक चकोन दीपक को प्रज्वलित कर शेष दीपकों का भार उस दीपक को सौंप जाती है। इसी भांति ऋषिदयानन्द ने भी स्वय प्रभावित हो आर्यसमाज रूपी दीपक को प्रकाशित कर समग्रजगत का भार उसे सौंपा था अर्थात् आर्यसमाज का छठा नियम, अर्थात् शारीरिक,आत्मिक,सामाजिक उन्नति करना, किन्तु इस दीपक ने शारीरिक उन्नति तो विशेष रूप से की यथा गुरुकुल वा दयानन्द कालिज तो बहुत खोले परन्तु दयानन्द उत्पन्न होने कठिन हो रहे हैं। अतः शारीरिक उन्नति के एकाकी रहने से राजसी हो जाती है, आत्मिक उन्नति को दैनिक उन्नति कहते हैं। क्या आयसमाज ने शारीरिक उन्नति के समान आत्मिक उन्नति की है, यदि नहीं की तो दयानन्द के उस सन्देश को सुनाने आज फिर से दीपावली आई है। आज आर्यसज्जनों को दृढ़ सङ्कल्प करने चाहिएं जैसे एक दीपक से अनेक दीपक जाज्वल्यमान होते हैं वैसे ही हम भी अनेक आत्मायें ज्योतिस्वरूप बन कल्याणमय मार्ग को प्रशस्त कर भूमण्डल को ब्रह्ममार्ग पर लाने का उत्कृट प्रयास कर ऋषि संकल्प से उऋण हों, स्वामी जी के इस वचन को न भुलावें।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्यसमाज धर्मसाला कांगड़ा का चुनाव

प्रधान—श्री जेशीराम जी एडवोकेट, उपप्रधान—श्री अमृतलाल जी पुरी, डा० जगन्नाथ जी बहल, मन्त्री—श्री इन्द्रदेव जी खोसला, सहायक मन्त्री—डा० एस० एन० राय, उपमन्त्री—श्री व्यासदेव जी शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री सुखमनदास जी, पुस्तकालयाध्यक्ष -श्री रामस्वरूप जी शास्त्री।

—इन्द्रदेव खोसला मन्त्री समाज

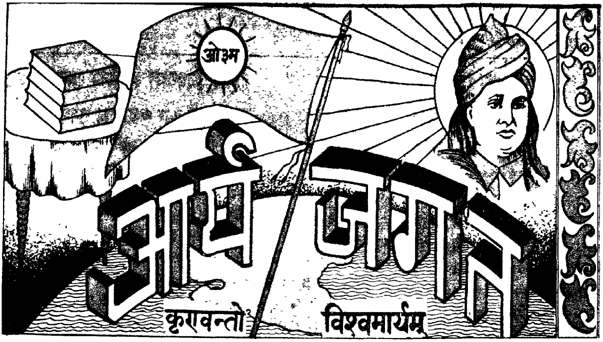
—आर्यसमाज कालिज विभाग गुरदासपुर तथा ऊना के वार्षिक उत्सव १५-१६-१७ नवम्बरको सम्पन्न हो रहे हैं।

—आर्यसमाज हिसार, हुशियारपुर तथा कृष्णा नगर भवानी जिला हिसार के उत्सव २२-२३-२४ नवम्बर को सम्पन्न हो रहे हैं।

—सांबा (जम्मू) में २०-२५ वर्ष के पश्चात् श्री लाला रूपचन्द जी अरोड़ा के पुरुषार्थ से नवीन आर्यसमाज की स्थापना हो गई है यह समाचार आर्यजगतको देते हुए हर्ष हो रहा है। मगर समाज को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है। अतः दानी सज्जनों से प्रार्थना है कि वे इस समाज को सुदृढ़ बनाने के लिए अपने पवित्र धनकी आहुति दें तथा आर्ष पुस्तकों द्वारा इसकी सहायता करें।

वेद प्रकाश मंत्री सभा

मुद्रक व प्रकाश श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीरमिलाप प्रैस, मिलाप रोड जालन्धर से मुद्रित तथा आर्यजगत् कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर



टैलीफोन न० ३०५७ [आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का साप्ताहिक मुखपत्र] Regd. No P. 121

एक प्रति का मूल्य १३ नये पैसे • वार्षिक मूल्य ६ रुपये

वर्ष २३ अंक ४७) रविवार ९ मार्गशीर्ष २०२०— २८ नवम्बर १९६३ दयानन्दाब्द १३९ (तार 'प्रादेशिक' जालन्धर

वेद सूक्तय:

सत्यं वक्ष्यामि नानृतम्

मैं सत्य बोलूंगा, असत्य नहीं। मानव संकल्प कर ले कि मैं अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में, कार्य मे सत्य का प्रेमी बनकर सत्य ही बोलूंगा, झूठ नहीं तो कितना हित हो।

त्रयो दासा आंञ्जनस्य

ज्ञानी मनुष्य को तीन अपना दास बनाते हैं। उसका नाश कर देते हैं। ये तीन शत्रु हैं जिन से एक ज्ञानी पुरुष का जीवन नष्ट हो जाता है। इन से सर्वत्र बचना ही चाहिए। कौन २ से ?

तक्मा बलास आर्दहि:

इन से पहला तक्मा है अर्थात निराशावाद, दूसरा बलास-बुरे विचार तथा तीसरा आर्दहि:-विषय ये तीनों मनुष्य समाज तथा समूचे देश के जीवन को मार देते हैं। इन से सदा बचे।

वृषा पवस्व धारया

हे प्रभो! आप वृषा आनन्द सुख की वर्षा करने वाले हो। कृपा करके धारया-अपनी भक्ति की साम वर्षा की धारा से मुझे मेरे सारे जीवन को पवित्र कर दो। मस्ती से भर दो, तृप्त कर देवे।

सा म वे द

वेदामृत

शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तुनः॥ यजुः ३६-१२

अर्थ—हे परमेश्वर! (श नः) हमारे लिए कल्याणकारी हों (देवीः) दिव्य गुणों के भण्डार सब को प्रकाश देने वाले हैं तथा आप (आप) सर्वत्र व्यापक हैं। हमे (अभिष्टये) मनोवांछित आनन्द के लिए तथा (पीतये) मोक्ष रूप पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिए (भवन्तु) सदा सुखकारी हो। हे भगवन! (शं य) सुख की (अभिस्रवन्तु) चारों ओर से वर्षा होवे (न) हम पर सब ओर से सर्वत्र सुख आनन्द ही बरसता रहे।

भाव—हे हमारे व्यापक देव! आप दिव्यगुणों के भंडार है। दिव्य देवता हैं। सारे चराचर विश्व मे व्यापक हो रहे हैं। सर्वव्यापक होने से आप आप. कहलाते हैं तथा सब को तेज प्रकाश देने के कारण आप देवो भी हैं। हम आप के ही तो पुत्र हैं। जीवन मे दो प्रसाद चाहते है। एक तो इस लोक का सुख व कल्याण चाहते हैं। यह लोक भी, हमारा वर्तमान जीवन भी मीठा हो, कल्याणकारी हो। तथा जिस मोक्ष सुख उस परम आनन्द को पाने के निमित्त हम जीवन पथ पर चले जा रहे हैं, वह भी हमारे लिए सुगम बन जाये। लोक और परलोक, शरीर तथा आत्म ज्ञान दोनों प्रकार का प्रसाद हमें प्राप्त होवे। जहां भी जाये, किसी दिशा या दशा मे भी होवें। आप की कृपा से हमारे चारों ओर सुख आनन्द की वर्षा होती है। हम दु:खलोक का दर्शन भी न करें। सर्वदा आनन्द मे रहें—सं०

अमूल्य वचन

जिस प्रकार कसौटी पर घिसाना, काटना, रेती लगाना, आग में तपाना और हथोड़ों से पीटना इन चार प्रकार से सोने की परख होती है वैसे ही शास्त्राभ्यास से, स्वभाव से, कुल से और कामों से मनुष्य की भी परीक्षा होती है।

ऋषि दर्शन

पूजा नाम सत्कार:

पूजा का अर्थ सत्कार है। जो वस्तु जैसी है उस से उसी प्रकार से लाभ उठाना पूजा है। प्रत्येक वस्तु का उसी के अनुरूप ध्यान करना पूजा है।

अविद्यादिदोषरहितत्वात्

वह प्रभु अविद्या आदि दोषों से रहित है। भगवान में किसी प्रकार का भी दोष नहीं है। जन्म मरण के बन्धन से रहित है। सर्वथा निर्दोष है।

विज्ञान स्वरूपात्

तथा वह परमात्मा विज्ञान स्वरूप है। सब सत्य विद्याएं तथा उन से जो पदार्थ जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है। सदा विज्ञानरूप है।

न अन्यद् इति

और कोई भी ब्रह्म का स्थान नहीं ले सकता। इस लिए पूजा के भी योग्य नहीं बन सकता। प्रकृति की उपासना छोड़ कर सदा उसी ब्रह्म की पूजा करते रहो।

अधिष्ठाता—संतोषराज सभा मंत्री सम्पादक—त्रिलोक चन्द्र शास्त्री

मन वश मे करने के तीन साधन

ज्ञान-प्राण और ध्यान

(पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज)

यह गृहस्थाश्रम तो मनु महाराज के शब्दों में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ माना जाता है। जो मर्यादा में रहता है, संयमपूर्वक अपना परिवार चलाता है, वह ऊंचे जीवन का है। मैं जब कैलाश पर्वत की यात्रा पर गया तब मार्ग में १८ हजार फुट की ऊंचाई पर गौरी कुंड देखा। इसे पार्वती कुंड भी कहते हैं। माता पार्वती योगिराज शिवजी की पत्नी थीं। कैलाश पर्वत की ऊंचाई २२ हजार फुट की है। उस से नीचे अठारह हजार फुट ऊंचा निर्मल जल से भरा गौरी कुंड है। बड़ा सुन्दर व शांत स्थान है यह। स्थानों का भी अपना-अपना विशेष महत्व होता है। जिन-जिन स्थानों पर हमारे पूर्व समय के महान् ऋषियों, महात्माओं और योगियों ने तप, साधना, प्रभुभक्ति की है। उनका वातावरण आज भी मन को शांत करने के लिए बड़ा ही उपभोगी है। ऐसे स्थानों पर जाने के बाद ही इस मानसिक शांति एवं शुद्ध वातावरण के प्रभाव का पता लग सकता है। गौरी कुंड पर बैठ कर कहा जाता है कि योगी शिवजी पार्वती जी को योग का तथा भक्ति का उपदेश किया करते थे। गायत्री आराधना की बड़ी महिमा बतलाया करते थे। इस कुंड का जल बड़ा ही शीतल है। निरी बर्फ के समान शरीर को शून्य बना देता है। जो यात्री कैलाश की यात्रा करने जाते हैं, वे मार्ग में गौरी कुंड पर पहुँच कर स्नान करते हैं। मेरे साथ नौ बंगाली साथी थे। मैं ने जब स्नान किया तो कुछ न पूछो—मेरे शरीर की अवस्था क्या हो गई। वे साथी तो मुझे छू कर कहने लगे। आप ने स्नान कर लिया। हम ने आप का स्पर्श कर लिया, इस लिए हम भी अब स्नान वाले बन गये। उस १८ हजार फुट ऊंचे गौरी कुंड की विशाल शिला पर बैठे हुए मनुष्य को भय भी कितना लगता है कि क्या पता कि अभी-अभी ऊपर से हिमपात होने लगे और नीचे बैठे हुए सारे हिम से दब जाएं। नामो-निशान का भी पता न लग सके कि यहां कोई था भी या नहीं। और भी विविध भय सामने होते हैं। पर उस समय मुझे एक कवि का सुन्दर वचन स्मरण हो आया—

बहार आई तो गुंचे भी मुस्कराते हैं। वह मर्द क्या जो मुसीबत मे मुस्करा न सके। सुखों में तो सारा संसार हंसना जानता है पर पता तो विपत्ति मे लगता है कि कौन मर्द है और कौन कायर है। तनिक आपत्ति या कष्ट आया और रोने लग पड़े—तो यह क्या मानवपन है, यह तो कायरता है। वीर नर तो वह है जो कि दुखों मे भी मुस्कराता है, निश्चल रहता है। श्री राम जी की भांति और ऋषि दयानन्द की भांति मुसीबतों में स्थिर रह कर हसना कोई-कोई जानता है। मेरा नाम बचपन में मेरे माता-पिता ने खुशहाल रखा था। हर समय खुश रहना है। अब आनन्द है। हर अवस्था में मस्त रहना है। जहा और जिस अवस्था में रहो, प्रसन्न रहना सीखो। मन को सदा प्रसन्न रखो। रोने से कष्ट तो जाएगा नहीं। जो दुख आया है वह तो समय पर जाएगा, फिर रोने धोने से क्या लाभ है। हर समह मौज में, आनन्द प्रसन्नता में रहो। मन कीचंचलता दूर करने के लिए मन प्रसाद भी बड़ा आवश्यक है। जिस का मन रोता है, वह योगमार्गी नहीं होता—

ईश्वर विश्वास से निर्भयता प्रसाद

तर्क और श्रद्धा का समन्वय

(श्री प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० प्रधान सभा)

ये कष्ट, आपदाएं जीवन मे किस के नहीं आई ? हमारा इतिहास इस बात का साक्षी है कि बड़े२ महापुरुषो का जीवन नाना प्रकार की विपत्तियों से भरा हुआ है। भगवान राम हों, भगवान कृष्ण हों, स्वामी शंकर हों, स्वामी दयानन्द हों किसी भी महापुरुष का जीवन पढ़ें आपको प्रत्यक्ष ज्ञात होगा कि इन सारे महापुरुषों के सामने जीवनपथ पर बड़े २ दुख के पर्वत आये—पर उनका ईश्वर प्रेम, प्रभु पर अटूट श्रद्धा इन आपत्तियों को हटाता गया। विचलित नहीं हुए। हंसते २ इनका सामना किया। प्रभु विश्वासी कभी घबरता नहीं है। जीवन की हर मौसम मे एकरस रह कर अपने निश्चित मार्ग पर बढ़ता जाता है। इसलिए यदि चिन्ताओं से मुक्त होना चाहते हैं तो प्रभु पर अटल विश्वास रखे। आने वाली नाना प्रकार की कठिनाईयों का सामना करने के लिए भगवान पर अटूट विश्वास रखना बड़ा आवश्यक है। यह जीवन का मूल तथा मौलिक सिद्धान्त है।

तर्क और श्रद्धा— तर्क का जीवन में एक विशेष स्थान है। तर्क न हो तो अन्धविश्वास का सर्वत्र प्रसार हो जाये, तर्क एक कसौटी है, जिस पर कि विचार, सिद्धान्त के तत्व को परखा जाता है, कि इस में जीवन का उपयोगी तत्व कितना है, इस मे वास्तविकता व सच्चाई की मात्रा कितनी है। हमारे शास्त्रों में इसी महत्व के नाते तर्क को ऋषि कहा गया है धर्म का परीक्षण करने के लिए तर्क का होना आवश्यक है। मनुष्य इसी तर्कशक्ति के आधार पर ही तो अन्धविश्वास के अन्धकार को दूर करता है। जहां पर तर्क का प्रकाश चमकता है, वहां अज्ञान अन्ध-विश्वास का अन्धेरा आ नहीं सकता। जैसे प्रकाश होने पर अन्धकार समाप्त हो जाता है, उसी प्रकारसे तर्क की ज्योति के सामने अन्ध-विश्वास भी जाता रहता है। हमारी बुद्धि तर्क का स्थान है। हर बात पर हम विचार करते हैं, मनन-चिन्तन करते हैं। मनुष्य के जीवन में यही विशिष्ट तत्व है। वेद के गायत्री मन्त्र मे भगवान् से इसी की प्रार्थना की जाती है। हमारे दर्शन शास्त्रों में तर्क की बड़ी चर्चा-महिमा मिलती है। गम्भीर तथा गूढ़ तत्त्वों पर विचार करनेका सबसे आवश्यक साधन भी तर्क ही है जीवन का प्रधान अंग माना जाता है। किन्तु यदि केवल तर्क का ही आश्रय लिया जाये तब भी पूर्णतया काम नहीं चल सकता। यह महत्वपूर्ण अंग तो माना गया है, किन्तु है एकांगी। इसके साथ श्रद्धा का होना परमावश्यक है। श्रद्धा के बिना तर्क सर्वथा अधूरा है। जहां तर्क पहुंच कर रुक जाता है, उसकी सीमा समाप्त हो जाती है वहां श्रद्धा का कार्य आरम्भ होता है। वहां के आगे श्रद्धा की सीमा शुरू हो जाती है। मानव को इसी श्रद्धा के द्वारा जीवन पथ पर आगे बढ़ना होता है। वेद में श्रद्धा माता कह कर श्रद्धा को जीवन की माता कह कर पुकारा है। माता के समान यह पुत्र पुत्री को आगे ले चलती है। इस का स्थान मानव हृदय है। तर्क महत्वपूर्ण होते हुए भी शुष्क है।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादकीय—

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २४ नवम्बर १९६३ [अंक ४७

यह हमारा समाज

भारत में हुई गत जनगणना के आंकड़ों को देखने, पढ़ने से कौन ऐसा आर्यसभ्यता, वेद, धर्म तथा श्रीराम, श्रीकृष्ण जी का प्यारा भाई बहिन ऐसा न होगा, जिसे चिन्ता व खेद न होगा। अपने ही देश में अपने विशाल समाजके परिवार की संख्या घट रही है। और दूसरे लोग संख्या में दस वर्षों में कितने बढ़े, यह पढ़कर आश्चर्य होता है, किन्तु अपना भारतीय हिन्दु समाज जिसे आज के समय पुकारा जाता है, यह कम होता जा रहा है। बौद्धों की संख्या तो गत दस वर्षों में बहुत ही बढ़ी है। महात्मा बुद्ध भारत के ही एक महाधन थे। अपने विषम युग में, पशु-हिंसा के यज्ञकालमें उनका कार्य बड़ा सराहनीय था। बुद्ध को मानने वाले बौद्ध भी भारत के परिवार के अंग ही हैं। किन्तु जब से अपने को विशाल भारतीय परिवार से जुदा होकर राजनीति के नाते अपने अलग अधिकारों को पानेकी प्रवृत्ति या लालसा पैदा हुई है, तब से उनकी भारतीय भावना में अन्तर आने लगा है। वे अपने आपको एक अलग सम्प्रदाय, अलग अल्पमत मान कर अलग ही अपने अधिकार मांगने लगे हैं। यह बात सारे भारतीय समाज के लिए बड़ी हानिकारक है। जितनी जल्दी इस मनोवृत्ति को रोका जाये, उतना ही इसमें सारे देश का भला है।

किन्तु सब से भयानक जो चित्र इस जनगणनाके आंकड़ों को पढ़ने से सामने आया है, वह ईसाईयत के प्रबल प्रवाह के सम्बन्ध में है। जिस प्रकार से चन्द्रमा को धीरे २ ग्रहण लगना आरम्भ हो कर ऐसी स्थिति भी आ जाती है जब चन्द्रमा आकाश में होता हुआ भी दिखलाई नहीं देता। अथवा आकाश वेल का एक टुकड़ा फैलते २ सारे विशाल, हरे भरे महान वृक्ष को अपनी लपेट में ले लेता है। यही अवस्था आज ईसायत की बन गई है। दैनिक रूप से सैकड़ों हजारों रामकृष्ण के मानने वाले भारत माता के प्यारे ईसायत की लपेट मे या उनके ग्रहण मे जा रहे है कुछ निर्धनता से, कुछ विवशता, कुछ अज्ञानता से, कुछ राजनीति के चमकीले द्रव्यों या प्रलोभनोंसे और कुछ जीवन की भूलों से उनके घेरे में जा रहे हैं। पानी की तेज धारा जैसे धीरे २ परन्तु निरन्तर किनारे की भूमि को काट २ कर अपने अंदर मिलाती जाती है। बाद में भारी क्षति का परिचय मिलता है। इसी प्रकार दस वर्षों में ईसायत की इस धारा ने हिंदु समाज का कितना जनजीवन का भाग अपने मे मिला लिया है, यह पढ़ कर चिन्ता बढ़ जाती है। आर्यसमाज के सिवाय बाकी सारा हिन्दु समाज अपने व्यक्तिगत जीवन पर तो विचार करता है समष्टि का जीवन उस के सामने नहीं है। सावधान हो कर इस प्रवाह को रोकने के लिए आर्य समाज को सहयोग देने का सकल्प करो।

—त्रिलोक चन्द्र

★

ये भी चले गये

यह वर्ष आर्यसमाज के विशाल परिवार के लिए अत्यन्त दुःखदायक तथा चिन्ताजनक सिद्ध हो रहा है। हमारे देखते २ आर्यसमाज की विभूतियां हम से जुदा होकर चली गई। अभी आर्यसमाज के महान स्तम्भ बख्शी टेकचन्द जी, महाशय कृष्ण जी, मास्टर नन्दलाल जी के आंखें बन्द कर जाने के महान दुःख के आंसू बहा कर अभी अपने कष्टों को कम भी नहीं कर सका था कि दो और समाज के स्तम्भों के गिर जाने का दुःखद समाचार सुनने का मौका मिला। इन में आर्य समाज के दिग्गज विद्वान, शास्त्रार्थ महारथी, चलते फिरते अनेक ग्रन्थों के स्मृति भण्डार श्री पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी तथा आर्य समाज, ऋषि दयानन्द, महात्मा हंसराज के अनन्य भक्त, अनथक कार्यकर्ता, आर्यसमाज बेयरडरोड अनारकली रीडिंगरोड नई देहली के प्रधान श्री ला० भगवानदास पुरी है अभी तक भी दिल ऐसा कहता है कि क्या ये चले गये हैं। इन दोनो का निधन ऐसी अवस्था में अचानक हुआ कि पहले तो विश्वास ही नहीं होता था कि सचमुच ही चले गये है। जिस अवस्था मे श्री पण्डित मीरपुरी जी की मृत्यु हुई उसे सुन कर तो आदमी का सारा शरीर ही कांप जाता है। उसे याद करके तो ऐसा लगता है कि मनुष्य किस बात पर विश्वास या अभिमान कर सकता है? पंडित मीरपुरी जी के बारे में कौन नहीं जानता कि वे कितने भारी विद्वान, संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। आप प्रादेशिक सभा के बहुत देर तक महोपदेश रहे। जितने ग्रन्थ उनको याद थे, हमारा दावा है आज भारत में किसी भी विद्वान् को उतने याद नहीं हैं। शास्त्रार्थों मे उनकी धूम थी। भक्तिरस, रामायण महाभारत की कथा में अद्वितीय थे। उनके जाने से आर्यसमाज की कमी न पूरी होने वाली बात हुई है। समाज के पुराने महारथी जा रहे हैं, नया कोई बनता नहीं पता नहीं क्या बनेगा?

माननीय श्री ला० भगवानदास पुरी सचमुच ही आस्तिकता, सौम्यता नम्रता, धर्मभावना, समाज सेवा की जीवित प्रतिमा थे। बैंक के जनरल मैनेजर जैसे ऊंचे आसन पर आसीन होने पर भी नम्रता तथा समाज प्रेम उन में कूट २ कर भरा हुआ था वह चलता फिरता आर्य समाज था। समाज सेवा के सिवा और कोई बात वे जानते ही न थे। आर्यसमाज रीडिंग रोड नई देहली के प्रधान, डी० ए० वी० कालेज कमेटी के एकाउंटैंट, आर्य प्रादेशिक सभा की दिल्ली सभा के प्रधान थे। अपने उत्सव से एक दिन पूर्व ही आंखे बन्द कर ली।

आर्यसमाज रीडिंग रोड नई देहली के महोत्सव पर रविवार को सभा प्रधान माननीय प्रिंसिपल रलाराम जी एम० एल० ए० की अध्यक्षता मे जो शोक सम्मेलन किया गया। कौन-सी आंख थी जो रोती न थी उनकी सर्वप्रियता की कितनी बड़ी निशानी है। समाज को ऐसा निष्काम अनथक स्तम्भ कहां मिलेगा। दोनों के परिवारों से हार्दिक समवेदना है।—त्रिलोकचन्द्र

आर्यसमाज(का.वि.)नाभा

मे ऋषि निर्वाण दिवस स्कूल के विशाल भवन में बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। स्कूल के छात्रों ने आकर्षक कार्यक्रम प्रस्तुत किया अन्त मे श्री देवराज जी मुख्याध्यापक ने उपस्थित जनता को संबोधन करते हुए कहा कि इस अवसर पर हमे स्वाध्याय करने की प्रतिज्ञा कर जाना चाहिए। मिष्टान्न बाटने के बाद शान्ति पाठ के साथ कार्यवाही समाप्त हुई।—मा. परमानन्द मन्त्री

आर्यसमाज की प्रगति के निमित्त कुछ विचार तथा सुझाव

(ले०—कै.बूटारामजी, मन्त्री जि. वेदप्रचारिणी सभा, होशियारपुर)

महर्षि दयानन्द का एक तुच्छ अनुयायी होते हुए मैं चिरकाल से ऐसा महसूस करता आया हूं कि महर्षि के अगण्य उपकारों को ध्यान में रखते हुए हम आर्य समाजस्थ नर-नारियों पर एक बड़ा भारी ऋण और उत्तरदायित्व है जिसे पूरा करने के लिए समस्त आर्यजगत नानाविध प्रयत्न तो करता चला आया है और अब भी कर रहा है परन्तु यथेष्ठ परिणाम की प्राप्ति अभी तक दुर्गम और दूर की वस्तु ही नजर आती है।

हमारे सभी प्रयत्नों का मुख्य और केन्द्रीय लक्ष्य एक ही है (और यही रहना भी चाहिये) और वह है "वेदों और वेदानुकूल शास्त्रों का प्रचार और प्रसार।" सभी साधन इसी एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए हैं। यदि यह ध्येय सिद्ध नहीं होता तो अपनाए गए साधनों की उपयोगिता पर समय २ पर विचार करते रहना चाहिये और यथा आवश्यकता उनको बदलते रहना चाहिये। जो समुदाय ऐसा नहीं करता वह प्रगतिशील नहीं रहता बल्कि रूढ़ीवादी हो जाता है और संसार की अन्य वस्तुओं की भांति उन साधनों के मोह में पड़ जाता है, और प्रायः उनके कुचक्र में ऐसा फंस जाता है कि उन से निकलना दुष्कर हो जाता है। क्या आर्य समाज अपनी संस्थाओं के चक्कर में ऐसा ही तो नहीं फंस गया। हम जितना इन संस्थाओं से उपराम होकर औरdetached दृष्टिकोण लेकर सोचते हैं हमे यही नजर आता है कि यह इस मोह के जाल में बुरी तरह फंस गया है। कभी २ इस जाल से निकलने के लिए फड़फड़ाता भी है परन्तु निकल नहीं सका और शायद निकल भी नहीं सकेगा। फिर फिर, ऐसी दुस्तर और शोचनीय दशासे बच निकलने और "असली" उद्देश्य की ओर अग्रसर होने का कोई उपाय है भी ? हां, है और वही आज वैदिक धर्म के प्रेमियों की सेवा में निवेदन करता है।

आर्यसमाज ने आज तक जो निर्माण कार्य किया है वह बड़े महत्त्व का है इसमें कोई संदेह नहीं और उसे कम करने का किसी का लेश-मात्र भी अभिप्राय नहीं हो सकता, बल्कि इसे और बढ़ाना हम सब का कर्त्तव्य है। वर्तमान संस्थाएं भी कायम रहें और हमारे उपरोक्त उद्देश्य की भी पूर्ती हो ऐसी कोई योजना बनानी चाहिए। मैं नहीं जानता कि आर्यसमाज के कर्णधार (विशेषतः पंजाब के) इस योजनाको किस दृष्टिसे देखेंगे, फिर भी आर्य-समाज के विशाल हित को दृष्टि में रखते हुए मैं यह निवेदन करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि पंजाब की दोनों सभाएं आपसी मिलवर्तनकी भावना (Co-operative sprrit) से काम लेते हुए "कार्य-क्षेत्र" की बांट कर लें। यह दोनों सभाएं अब सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित हैं और वह इन दोनों में ऐसा वातावरण उत्पन्न करने में इनको अपनी सहायता, सहयोग और पथ-प्रदर्शन प्रदान कर सकती है। बांट इस प्रकार हो कि दोनों सभाओं की सम्मिलित दो या तीन उप सभाएं हों। एक उप-सभा-विद्या सभा हो और दूसरी धर्मसभा और तीसरी राज सभा।

विद्या सभा समस्त गुरुकुलों, कालिजों स्कूलों और पाठशालाओं का प्रबन्ध चलाये और धर्म सभा प्रचार-कार्य को जिसमें मौखिक प्रचार और साहित्य प्रचार दोनों को बराबर की महानता हो। जहां प्रचारक मण्डल की शक्ति को ज्यादा से ज्यादा बढ़ाया जाये वहां एक बड़ा शक्तिशाली "प्रैस" कायम किया जाए जो "गीता प्रैस गोरख पुर के समान विशाल, सस्ता तथा लोकप्रिय हो। राज उप-सभा—

चूंकि वर्तमान युग राजनीति-प्रधान युग है इस लिए दोनों सभाएं एक राज्य-आर्य-सभा भी स्थापित करे जो इस क्षेत्र में उतरने वाले आर्य-महानुभावों को अपना परामर्श, सहयोग और पथ-प्रदर्शन दे सके। इससे न केवल आर्यसमाज के हितों की रक्षा हो सकेगी अपितु वह देश की राजनीति पर भी वैदिक धर्म के दृष्टि बिन्दु से एक प्रभाव उत्पादक असर डाल सकेगी। इस क्षेत्र में उतरने वाले सभी आर्य सज्जनों को इस राज्य-उपसभा के नियन्त्रण को न केवल स्वीकार ही करना चाहिए बल्कि उसके अनुशासन में रह कर कार्य करना चाहिए।

तीनों उप सभाएं (विद्या सभा, धर्म सभा, राज्य-सभा) अपना-अपना विधान और संगठन (Contitution व Organisation) स्वयं व्यवस्थित करें।

आर्यसमाज बटाला, ओहरी ओक में

श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर तथा श्री पं० राजपाल जी मदनमोहन जी की भजन मंडली का तीन दिन ७,८,९ अक्तूबर भजन प्रचार होता रहा हजारों लोगोंने वेद प्रचार से लाभ उठाया।

बलदेवसिंह प्रधान आर्यसमाज

आर्यसमाज, हिसार

हिसार आर्यसमाज का ५७वां वार्षिक महोत्सव २२, २३, २४ नवम्बर को बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है जिस में बड़े-बड़े संन्यासी स्वामी रामेश्वरानन्द जी, स्वामी दर्शनानन्द जी स्वामी मुनीश्वरानन्द जी व अन्य विद्वान पधार रहे हैं।

सुरेन्द्रनाथ गुप्त
मन्त्री

आर्यसमाज दयालपुरा करनाल (का. वि.)

का ३५वां वार्षिकोत्सव ११-१२-१३ अक्तूबर को बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। जिस में ११ ता० को लगभग २ मील लंबा जलूस निकला तथा ३ दिन तक आर्यजगत के सुप्रसिद्ध विद्वानोंके अत्यन्त ओजस्वी एवं प्रभावपूर्ण व्याख्यान हुए। सभा को वेदप्रचारार्थ १७५) दान स्वरूप दिया।

शोक प्रस्ताव

आर्य प्रादेशिक उपसभा देहली की ओर से देहली की सब आर्य-समाजों का १०-११-६३ को सम्मिलित अधिवेशन आर्यसमाज मंदिर मार्ग नई देहली में हुआ जिस में निम्न प्रस्ताव पारित हुआ।

आर्यसमाज मंदिर मार्ग के तथा प्रादेशिक उपसभा के प्रधान श्री ला० भगवानदास जी पुरी के दुःखद निधन पर अत्यन्त हार्दिक शोक प्रकट करता है।

एवं श्री पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी जी आकस्मिक मृत्यु पर शोक प्रकट करता है तथा दोनों व्यक्तियों की आत्मा को शुभ गति तथा उनके परिवार को कष्ट सहन करने की शक्ति प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना करता है।

—राजकुमार मंत्री उपसभा

सिद्धान्त चर्चा--

वर्ण व्यवस्था की वैदिक मर्यादा

(ले०--पंडित जयकृष्ण जी शास्त्री दयानन्द स्कूल शिमला)

शरीर के दूसरे भाग को जो गर्दन से कमर तक है, जिसे बाहू का नाम दिया गया है। शरीर में इस का विशेष कार्य है, सारे शरीर की रक्षा करना। यह स्वाभाविक है कि शरीर के किसी भाग में कोई कष्ट हो तो हाथ यथासम्भव उस कष्ट को निवारण करने का यत्न करता है। सिर पर अथवा पांव पर कहीं भी चोट लगने का भय उपस्थित हो जाये तो हाथ तुरन्त रक्षा के लिए आगे आ जाता है। इसी प्रकार समाज के अन्दर जो वर्ग समाज के हर प्रकार के कष्ट के निवारण के लिए अथवा किसी प्रकार के भी संकट से उसकी रक्षा के लिए तैयार रहे, उसे क्षत्रिय कहा जाता है। क्षत्रिय शब्द का अर्थ है—क्षतान् त्रायत इति—अर्थात् हानि से अथवा संकट से बचाने वाला। यह भाग प्राकृतिक शक्ति में शेष तीनों भागों से विशेषता रखता है। इसीलिए राजा लोग सभी वर्णों में धन व शक्ति में सम्पन्न होकर विशेष प्रभावशाली होते हैं।

ब्राह्मण को क्षत्रिय की अपेक्षा उत्तम स्थान दिया गया है। इस का कारण यह है कि विद्या और बल में विद्या का स्थान प्रथम है। क्योंकि बाहू आंख की सहायता के बिना अपना काम नहीं कर सकती। परन्तु आंख को अपना कार्य करने के लिए बाहू की सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती। आंख की रक्षा के लिए तो बाहू का होना आवश्यक है, परन्तु उसके काम को सहायता बाहू से कुछ भी नहीं हो सकती। इस का अर्थ यह है कि विद्या की रक्षा के लिए बल की आवश्यकता है और बल को काम में लाने के लिए विद्या की आवश्यकता है। बल विद्या के बिना ठीक प्रकार काम नहीं कर सकता और बल के बिना विद्या की रक्षा नहीं हो सकती। यह बात ध्यान देने योग्य है कि बल अपने काम के लिए विद्या पर आश्रित है। इसलिए पहिला स्थान विद्या को दिया गया है। त्यागी एवं तपस्वी ब्राह्मणों ने राज्य तथा धनादिक सांसारिक पदार्थों की सर्वदा अवहेलना की है। उन्होंने ब्रह्मज्ञान रूपी अमृत के लिए अथवा ज्ञानरूपी दूध के लिए राज्य का त्याग कर दिया था, जिसके कारण आज भी यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि ब्राह्मणों ने क्षीर के लिए राज्य छोड़ दिया था। इसके अतिरिक्त विद्या ऐसा धन है जो आयु पर्यन्त ही नहीं जन्म जन्मान्तर साथ रहता है तथा उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। जबकि बल क्रमशः क्षीण होकर अंत में सर्वथा नष्ट हो जाता है। अतएव बल की अपेक्षा जिस प्रकार विद्या उत्कृष्ट है, इसी प्रकार क्षत्रिय की अपेक्षा ब्राह्मण उत्कृष्ट है।

शरीर का तीसरा भाग जो कि उरु या जंघा कहलाता है। उससे वैश्य की उपमा दी गई है। जिसका कार्य व्यापार एवं कृषि है और इसकी उत्तमता धनधान्य से है। इसे तीसरे स्थान पर रखने से स्पष्ट है कि धन विद्या और बल से तीसरे स्थान पर है। क्योंकि मूर्खों से विद्वान् सहज में ही धन ले सकता है और निर्बल से बली वैसे ही धन छीन सकता है। परन्तु विद्वान् से विद्या और बली से बल नहीं छीना जा सकता। इस के अतिरिक्त विद्या नाश नहीं होती। धन जितनी देर में नाश होता है बल उससे कहीं अधिक देर में नष्ट होता है। अतः वर्णों में वैश्य का तीसरा स्थान है।

शरीर का चौथा भाग घुटनों से पांवों तक है, जिसे पाद कहा गया है। कोई नहीं कह सकता कि ऊपर के तीनों भागों को उठा कर चलने के अतिरिक्त इस भाग का और भी कोई कार्य है। वर्णों में शूद्र की शरीर के इस भाग से उपमा दी गई है। इस से यह स्पष्ट है कि शूद्र का काम है केवल तीनों वर्णों की सेवा करना। यह भली-भांति स्पष्ट है कि वेदमन्त्र चारों वर्णों के गुण और कर्म भिन्न बतला रहा है और साथ विद्या, बल, धन और सेवा के कर्तव्य कर्म को भी प्रकट कर रहा है। इसके अतिरिक्त इस बात को भी द्योतित कर रहा है कि जिस प्रकार इन में एक हिस्से के बिगड़ जाने से सारे शरीर की दशा बिगड़ जाती है, जैसे मनुष्य एक आंख न होने के कारण काणा और दोनों के न होने से अन्धा, कानों से निकम्मा होने से बहरा, वाणी से निकम्मा होने से गूंगा होता है। इसी प्रकार जिस राष्ट्र में विद्वान् ब्राह्मण न हों या वह कर्तव्य का पालन न करें तो वह राष्ट्र व्यवहार से अन्धा, बहरा व गूंगा गिना जायगा। बाहुओं के निकम्मा होने से लुंजे मनुष्य के समान ही जिस राष्ट्र में क्षत्रिय, शक्ति सम्पन्न सैनिक न हों तो वह अपनी रक्षा नहीं कर सकता। यही बात सब में घटाई जा सकती है। वर्तमान काल में प्रत्येक वर्ण के अपने २ वर्ण के कर्तव्य पालन से विमुख होने के कारण भारतवर्ष को जो हानि उठानी पड़ी है, वह स्पष्ट दृष्टिगोचर है।

—

चारों वेदों का स्वाध्याय करो

आर्ययुवक समाज कादियां का छटा वार्षिकोत्सव

लेखराम नगर—गत वर्षों की तरह इस वर्ष भी आर्य युवक समाज लेखराम नगर कादियां का वार्षिकोत्सव १५, १६ और १७ नवम्बर को बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आर्यजगत के महान नेता श्री रामगोपाल जी शालवाले, स्वा० सर्वानन्द जी महाराज, प्रो० वेदीराम जी, पं० रुद्रदत्त जी, पं० निरंजनदेव जी, बलराज जी हून जी, इत्यादि महानुभाव पधारे।

आर्ययुवक सम्मेलन

जिला गुरुदासपुर के प्रमुख आर्य युवक समाजों और आर्यकुमार सभाओं का सम्मेलन हुआ जिस में युवकों में आर्यसमाज के विषयों के प्रसार की योजना पर विचार विमर्श किया गया। इसकी प्रधानता, श्री प्रो० वेदीराम जी शर्मा एम० ए० ने की। इसके अतिरिक्त १६ नवम्बर को एक बहुत बड़ा आर्य स्त्री सम्मेलन हुआ।

प्रधान—आ यु. स. कादियां

आर्योपदेशक विद्यालय हापुड़ (उ.प्र.)

का उद्घाटन उत्सव समारोह पूर्वक ३-११-६३ को सम्पन्न हुआ। यज्ञ के पश्चात् भजन हुए। श्री पं० शिवदयालु जी मेरठ के सभापतित्व में विद्यालय के आचार्य श्री पं० अमरसिंह जी आर्य पथिक तथा श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी के भाषण हुए।

निन्दन्तु नीति निपुणा,
यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु,
गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरण-
मस्तु युगान्तरेवा,
न्याय्यात् पथः प्रवि-
चलन्ति पदं न धीराः॥
भर्तृहरिः॥

स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का भाषण (क्रमशः)

धर्म प्रचार के साधन

पूज्य महात्मा हंसराज जी ने धर्म प्रचार के साधन नामक अपने खोजपूर्ण चार भाषणों में बुद्धमत कैसे फैला। इसके बाद अपना दूसरा जो भाषण दिया, वह यह था कि संसार में ईसाईमत किस तरह फैला—यह सारा भी 'जगत्' के प्रेमी पाठकों के लिए प्रस्तुत है। पचास वर्ष पूर्व दिये हुए आर्य समाज के उस महान तपस्वी त्यागी, सर्वमेधी महात्मा जी के इस भाषण में वही प्रेरणा, प्रभाव, गम्भीरता तथा हमारी आंखे खोलने वाली चेतना मौजूद है। साधारण पुरुषों की बातें तो क्षणिक, अस्थायी और समाचार पत्र के समान एक दो दिन के लिए होती हैं। पर महापुरुषों के वचन, उपदेश स्थायी तथा सूर्य की भान्ति सदा ही अपने प्रकाश द्वारा पथ दिखलाती हैं— सं०

ईसाई मत कैसे फैला—

पहिला विचार जो मैं आपके आगे रखना चाहता हूं, वह यह है कि हजरत मसीह का जन्म उस जाति में हुआ जो कई दशाओं में और कई विचारों में हिन्दु जाति के साथ मिलती जलती है। यह यहूदी जाति है। इतिहास से प्रतीत होता है कि यह एक बहुत प्राचीन जाति है। जिस प्रकार हिन्दु जाति प्राचीन है इसी भान्ति यहूदी भी एक पुरानी कौम है। इस जाति में पैगम्बरी का ख्याल बड़ा प्रबल है। इनकी दशा भी कुछ ऐसी थी कि इन को ईश्वर की ओर से पैगम्बर आने का ख्याल प्रत्येक समय बना रहता था। इन में कई पैगम्बर पैदा हुए हैं। मूसा इन को मिसर के दासत्व से निकाल कर किनान में ले आया। इन को स्वाधीनता दिलवाई। इसी प्रकार इब्राहीम पैगम्बर हुआ तथा कई और भी हुए कहे जाते हैं। जिन्होंने इन में प्रचार किया और जिन के उपदेश अंजील में लिखे हुए हैं।

इस जाति में एक विशेष रीति खतने की प्रचलित थी। यह रीति यहूदियों से निकली है। जैसा कि अब हमारा विचार है कि जिस मनुष्य के यज्ञोपवीत नहीं, वह शूद्र होता है। इसी प्रकार उस समय यहूदी ऐसे मनुष्य से (जिस का खतना न हुआ हो) खान पान बुरा समझते थे। यहूदी अपने आपको ईश्वर का स्नेही ख्याल करते थे और समझते थे कि परमात्मा हम को प्यार करता है तथा हम भी उस के प्यारे हैं। शेष लोगों पर उसकी कृपादृष्टि नहीं होती। जिस प्रकार हिन्दु लोग दूसरी जाति के लोगों के साथ खान पान अच्छा नहीं समझते। इसी प्रकार यहूदी करते थे। वे अपने आपको सब से श्रेष्ठ एवं उच्च समझते थे। ईसा-मसीह के आने से पहिले ये लोग बाह्य आडम्बरों में बहुत ही बढ़ गये थे।

इन का विचार था कि रविवार को परमात्मा ने आराम किया तथा अजील में भी ऐसा ही लिखा है। यहूदी लोग शनिवार को आराम का दिन समझते थे। उस दिन की पवित्रता के विचार ने इतना बल पाया कि इन में एक फ्रेसीस नामी जाति उत्पन्न हो गई जो उस दिन बिलकुल ही काम न करती थी। ये लोग जब सुबह के समय जागते तो जिस करवट सोये हुए उठते, उसी कवट दिन भर सोये रहते और तनिक भी न हिलते थे। वे सोचते थे कि आराम के दिन काम नहीं करना चाहिए। काम करने से क्योंकि आदमी हिलता जुलता है, इसलिए हिलना जुलना भी काम मे गिनना चाहिए। यदि हम जरा भी हिलें तो काम हो जाएगा और हम ईश्वर की आज्ञा को तोड़ देंगे, जिससे हम पापी ठहराये जायेंगे। ऐसा विचार इनमें प्रवेश कर चुका था। आराम के दिन के विषय में एक ऐतिहासिक घटना भी है। वह इस प्रकार से है कि एक बादशाह ने आराम के दिन यूरोसलम पर आक्रमण किया उसने सोचा कि इस दिन बहुत से यहूदी लेटे ही रहेंगे, इसलिए मुझे सहज में ही विजय प्राप्त हो जायगी। इससे प्रकट होता है कि ये लोग बाहरी आडम्बरों क कितने दास थे। इसी विचार से एक यहूदी ने मसीह से प्रश्न किया कि तुम कैसे आदमी हो जो आराम के दिन भी इधर-उधर फिरते रहते हो! मसीह ने उत्तर दिया। यदि एक आदमी कुएं में गिर पड़े तो क्या तुम उसको निकालने के लिए हिलोगे या नहीं? यहूदी बोला कि ऐसे बहुत हैं कि आदमी डूब जाये परन्तु वे हिल कर पाप के भागी नहीं बनेंगे।

हम लोगों में भी यह भाग वर्तमान है और वह किसी और तरह से है। अभी थोड़े दिन की बात है कि एक बच्चा कुएं मे गिर पड़ा और पुरुष वहां पर कोई न था। एक भंगी ने कहा कि मुझे कुएं में कूदने दो। मैं बच्चे को निकाल लाऊंगा। परन्तु हिन्दु स्त्रियों ने यह कह कर कि—कुआं अशुद्ध हो जाएगा, उसे रोक दिया। वह बच्चा कुएं में ही मर गया। इसी प्रकार के भाव यहूदिओं में उत्पन्न हो गया। दूसरा विचार जो उन में पैदा हुआ था वह मसीह का था क्योंकि वे इक दिनों बड़े निर्दयी और धनहीन तंग हाल थे। इसलिए उनको विश्वास दिलाया गया था कि कोई ऐसा आवेगा जो उन्हें कष्टों से छुड़ा लेगा। निदान मसीह आया और उसने इन बुराइयों को देख प्रचार आरम्भ किया

करनाल में एक और समाज की स्थापना

चार चमन अशोक कालोनी करनाल में श्री पं० विश्वम्भर दत्त जी के उपदेशों व पुरुषार्थ से एक नवम्बर को आर्यसमाज की स्थापना हो गई है। जिसका सम्बन्ध सर्व-सम्मति से आर्य प्रादेशिक सभा से जोड़ने का निश्चय किया गया।

जिसके अधिकारी इस प्रकार से हैं—

प्रधान—श्री चौ० वेद प्रकाश जी बी० ए० एल० बी० एडवोकेट करनाल, उपप्रधान—श्री चौ० देशराज जी एडवोकेट करनाल, मन्त्री—श्री ठाकुर रणधीर सिंह जी एडवोकेट करनाल, उपमन्त्री—श्री ठाकुर रामपाल सिंह जी एडवोकेट ए० एल० ए० करनाल, खजांची—श्री चौ० सुलतान सिंह जी करनाल, पुस्तकाध्यक्ष—श्री राजेन्द्रकुमार जी।

निवेदक—रणधीर सिंह एडवोकेट
मन्त्री आर्यसमाज करनाल

मूल्य वचन

हम धनियों के लिए यह बड़ा आसान है कि हम अपने बच्चोंको वेश्यागामी होने से बचा लें या उन्हें भिखारी न बनने दें, अपने धन के प्रभाव से हम अपने बच्चों को साफ रख सकते हैं, अच्छे कपड़े पहना सकते हैं, उत्तम भोजन दे सकते हैं, बड़े-बड़े विद्वान पढ़ा सकते हैं, परन्तु हम धनियों के लिए—जो स्वयं अपनी रोटी आप नहीं कमाते—वह केवल कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव है कि हम अपने बच्चों को स्वयं परिश्रम कर के कमाना सिखा सकें। हमारे उदाहरण से और अपने आराम के भड़कीले भौतिक साधनों से वे स्वयं काम न करना सीख जाते हैं।

(टालस्टाय)

विभूति के साथ धर्मप्रेम का सुन्दर समन्वय

आर्यसमाज माडल टाऊन यमुनानगर का महोत्सव

सभा प्रधान जी को वेद प्रचारार्थ चार सौ रु० भेंट

यमुनानगर का माडल टाऊन वैभव सम्पन्न परिवारों का उपनगर है। प्रभु कृपा से कोठियों में, जीवन की सुख सुविधा में यहां के परिवार प्रायः निश्चिंत हैं। वैभव प्रायः मानव को भगवान्, धर्मप्रेम या समाज सेवा से दूर कर देता है। किन्तु यहां पर वैभव ऐसा नहीं कर सका। धनिक परिवारों में समाजसेवा, धर्मनिष्ठा, परोपकार यज्ञ भावना के प्रति इतनी जीवन रुचि देख कर मन बड़ा ही प्रसन्न होता है। यहां के आर्य परिवारों ने माडल टाऊन मे बड़ा ही सुन्दर आर्यसमाज मन्दिर बनाया है। भवन दर्शनीय है। शिक्षा प्रसार के लिए बड़ा भारी डी० ए० वी० हायर सैंकडरी स्कूल है जो डी० ए० वी० कालेज कमेटी नई देहली से सम्बन्धित है तथा श्री पं० रामलाल जी प्रिंसिपल के नेतृत्व में बड़ी उत्तमता से चल रहा है। लड़कियों का अलग डी० ए० वी० कालेज भी शान से चल रहा है इनके साथ २ शिशु निकेतन भी अपने ढङ्ग का अपना ही विद्या-केन्द्र है। ये संस्थाएं हर बात में सारे इलाके में अपना गौरवपूर्ण स्थान रखती हैं। आर्य समाज के लिए गौरव की बात है।

आर्यसमाज का मन्दिर, यज्ञशाला तो भव्य है ही किन्तु समाज का कार्य भी अत्यन्त प्रशंसनीय है समाज के प्रधान श्री चमनलाल जी सेठ अपने सौम्य स्वभाव, आचार तथा निष्काम सेवा के लिए सब में बड़ी प्रतिष्ठा रखते हैं। श्री महाजन जी मन्त्री, श्री साहनी जी जितने भी समाज के सज्जन और बहिनें हैं—श्रद्धा में तो दूर तक गये हुए हैं।

जैसा यह समाज है, वैसा ही इसका उत्सव भी विशेषता रखता है। इस बार का महोत्सव बड़े समारोह से मनाया गया। सभा के वेद प्रचार के अधिष्ठाता श्री पं० खुशीराम जी शर्मा उत्सव से पूर्व एक सप्ताह तक कथा करते रहे। कथा में कैसा अमृतप्रवाह बहता था। जनता ने क्या रसपान किया? यह तो सदा याद रहने वाली बात बन गई। उत्सव में सभा प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम. ए. एम. एल. ए. पं० खुशीराम जी शर्मा वेद प्रचाराधिष्ठाता, प० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, आचार्य प्रियव्रत जी गुरुकुल कांगड़ी, कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, स्वामी सत्यमुनि जी, स्वामी भीष्म जी, पं० राजपाल जी मदनमोहन जी मंडली, पं० मेलाराम जी रेडियो सिंगर आदि पधारे। वेदपारायण का यज्ञ भी हुआ। सभा प्रधान जी की सेवा मे वेदप्रचारार्थ चार सौ रुपये भेट किये गये। देवियों ने भी श्रद्धा मे कमाल कर दिया। ऋषि लंगर की चहल-पहल भी प्रशंसनीय थी। स्त्री-समाज का उत्सव भी उत्तम समारोह से सम्पन्न हुआ। इस समाज से प्रेम, उत्सव समारोह को देख कर सारे समाज को बधाई देते हैं।

आर्यसमाज जालधर छावनी

का यह ३-११-६३ का अधिवेशन पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी—मास्टर अमरनाथ जी कथावाचक तथा अपने सदस्य ला० अनन्तराम जी के देहांत पर शोक प्रगट करता है और ईश्वर से उनकी आत्माओं की सद्गति के लिए प्रार्थना करता है।

भवदीय
इन्द्रसेन मलिक
उपमन्त्री

दौलतपुर चौक, जिला होशियारपुर में वेदप्रचार सम्मेलन

डी० ए० वी० हायर सैकण्डरी स्कूल, दौलतपुर की स्वर्ण जयन्ति के अवसर पर ६-११-१९६३ को जिला वेद प्रचारिणी सभा, होशियारपुर के तत्वावधान में वेद प्रचार कान्फ्रेन्स हुई, जिस की अध्यक्षता इस सभा के प्रधान म० देवीचन्द जी ने की।

पं० नन्दलाल जी और रामदेव जी ने अपने भाषणों व भजनों द्वारा विद्यार्थियों को अति उत्तम शिक्षा दी और उपस्थित नर-नारियों को वैदिक धर्म का महत्व जतलाया।

सभा के मन्त्री श्री बूटाराम जी ने अपने विचार प्रकट करते हुये इस बात पर बल दिया कि आर्यसमाज को साम्प्रदायिकता के संकीर्ण भावों को दूर करने का भरसक यत्न करना चाहिए।

अन्त में सभापति पद से भाषण करते हुए म० देवीचन्द जी ने दौलतपुर स्कूल की ५० वर्षीय प्रगति का उल्लेख करते हुए उन सभी महानुभावों का धन्यवाद किया जिन के सहयोग से इस स्कूल ने प्रशंसनीय उन्नति की है।

अन्त में प्रिंसिपल जगन्नाथ जी शारदा ने सब का धन्यवाद किया।

—बूटाराम मन्त्री होशियारपुर

ईश्वर विश्वास से निर्भयता प्रसाद

(पृष्ठ २ का शेष)

श्रद्धा उस में रस, माधुर्य पैदा कर देती है। श्रद्धा जीवन के रूखे सूखेपन को रसीलेपन में बदल कर रख देती है। प्रत्येक कार्य मे श्रद्धा का होना आवश्यक है। कहा गया है **Life begins with faith** यह जीवन श्रद्धा से ही शुरु हो जाता है। हम कोई भी काम कर नहीं सकते, यदि उसके लिए मनमें श्रद्धा न हो। जिस कार्यको सम्पादित करने में जितनी अधिक मात्रा में श्रद्धा होगी, उतनी उत्तमता से वह कार्य सम्पन्न होगा। तर्क के साथ जहां श्रद्धा भी मिली रहती है। वहां कुछ और ही अवस्था आ जाती है। तर्कमय जीवन तथा श्रद्धामय जीवन में महान् अन्तर है। दोनोंके समन्वय से जीवन उत्तम बन जाता है।

आर्य समाज लाजपत नगर सोनीपत

का महोत्सव १.२.३ नवंबर को बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। २३ अक्तूबर से ३१ तक पं. ओम प्रकाश जी महोपदेशक सभा की कथा और चिमटा मंडली के मनोहर भजन होते रहे। उत्सव के अवसर पर अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानों के भाषण होते रहे। २५०/- सभा को वेद प्रचारार्थ प्राप्त हुआ। उत्सव के बाद निम्न प्रकार से चुनाव सम्पन्न हुआ।

प्रधान डा० देव राज जी सपड़ा राजा हस्पताल, कार्यकर्ता प्रधान मा. खुशीराम जी हसिजा, उपप्रधान म० किशनचन्द ठेकेदार, मन्त्री म० दयाल चन्द आर्य, उपमन्त्री म० कवल नैन जी भक्त वासदेव जी खजानची, म० धर्मदेव जी तनेजा अपनी दुकान वाले-अन्तरंग सदस्य पं० चन्द्र सेन आर्य हितैषी, दीवान ठाकुर दास जी मा० मेघ राज जी म० भरत देव जी, बाबू विशम्बरनाथ जी वोहरा आदि हैं।

—विनीत चन्द्र सेन

आर्यसमाज नकोदर का वार्षिकोत्सव

२९, ३० नवम्बर तथा १ दिसंबर को आर्यसमाज मन्दिर में मनाया जाएगा। जिस में कि अनेक साधु महात्मा व आर्य नेता तथा विद्वान महानुभाव पधारेंगे। आर्य जनता से प्रार्थना है कि उत्सव में पधार कर धर्म लाभ उठावें।

—खुशीराम मंत्री समाज

पं० खुशीराम जी :

समवेदना

सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता श्री पं० खुशीराम जी शर्मा की सुपुत्री बेटी कमला का अचानक ही देहांत का दुःखद समाचार पढ़कर अतीव हार्दिक दुःख हुआ । विधना के विधान के सामने मस्तक झुका देने के सिवाय क्या चारा है ?

हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए धैर्य प्रदान करने की तथा दिवंगत आत्मा को शांति देने की प्रभु से प्रार्थना करते हैं

—सम्पादक

दयानन्द महाविद्यालय शोलापुर

हवन यज्ञ और विज्ञान

लेखक - प्रो. राम प्रकाश जी M.Sc. (Hons) दयानन्द कालेज अम्बाला । पृष्ठ संख्या १२४ मूल्य १) रुपया ।

प्राप्ति स्थान :—(१) श्री जयदेव जी आर्य M.A. साहित्य मन्त्री पंजाब प्रान्तीय आर्य कुमार परिषद ग्राम बेलरखा तहसील नरवाना जिला संगरूर । (२) लेखक से भी पुस्तक मिल सकती है । (३) आर्य युवक समाज सैक्टर २२ चण्डीगढ़, व श्री बीरू राम जी M.A. Govt. School करनाल ।

पुस्तक पर कुछ सम्मतियां

इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ कर [illegible] हुआ कि [illegible] पुस्तक का लेखक कितना गहन मनन करने वाला [illegible] पूर्ण विज्ञान वेत्ता है । आपका यह प्रशस्त कार्य सर्व [illegible] और वैज्ञानिकों के लिये अत्यंत लाभप्रद है । इस के लिये [illegible] का वैज्ञानिक बहुत आभारी रहेगा । (पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज)।

'यह पुस्तक हवन यज्ञ का वैज्ञानिक रूप बहुत अछूते तथा अमूल्य ढंग से देती है । आप ने यह पुस्तक लिखकर आर्य समाज की ही नहीं अपितु मनुष्य मात्र की सेवा की है मैं यह चाहता हूं कि यह पुस्तक प्रत्येक स्कूल कालेज में प्रत्येक भारतीय को इसे पढ़कर अपना मस्तक ऊंचा करना चाहिये। यदि अंग्रेजी में इस का अनुवाद हो जाए तो विदेश में बहुत जा सकती है ।' (श्रद्धेय आचार्य भगवान दास जी सोलापुर) ।

'हवन यज्ञ और विज्ञान पुस्तक लिखकर मेरे अभिन्न बन्धु प्रियतम सखा प्रो० रामप्रकाश जी आर्य M.Sc(Hons) ने आर्य समाज की महान सेवा की है। समाज के साहित्य में अपने विषय की यह बेजोड़ पुस्तक कही जा सकती है ।

आर्य सार्वदेशिक सभा को चाहिये कि इस का अंग्रेजी आदि भाषाओं में अनुवाद करवा कर विदेशों में यह पुस्तक प्रसारित करे। मराठी में भी इस का अनुवाद मध्य दक्षिण (हैदराबाद) सभा के कर्मठ नेता डा० डी. आर. दास करेंगे। श्री राम प्रकाश जी आर्य जाति की आशा की ऊषा हैं। यह पुस्तक आशा की ऊषा की सुनहली किरण है। यह सारी सामग्री महत्वपूर्ण व उपयोगी है। प्रत्येक आर्य को विशेषतया उपदेशकों को इस का गम्भीर स्वाध्याय करना चाहिये ।'

प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु दयानन्द कालेज, शोलापुर

दयानन्द वचनामृत



मुझ को...सर्वोत्तम चक्रवर्ती राज्यादि [illegible] स्थिर है, परम सुख को प्राप्त कराइये । हम आपके पुत्र, आपकी कृपा से उत्तम सुख को लाभ करें । जब तक जियें तब तक सदा चक्रवर्ती राज्यादि सुख से सुखी रहें । हे महाराजाधिराज परब्रह्म ! अपनी कृपा से हमें अखण्ड चक्रवर्ती राज्य के लिए शौर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बल आदि उत्तम गुणों से पुष्ट कीजिये । हमारे देश में अन्य देशवासी राजा कभी न हों तथा हम लोग कभी पराधीन न हों ।'

(स्वामी सत्यानन्द जी)

आर्य-जगत के पाठकों के लिए शुभ-सूचना

श्री आनन्द स्वामी जी का स्वाथ्य सुधर रहा है

महात्मा जी के 'प्रास्ट्रेट ग्लैंड' का अपरेशन तीसरी बार गांधी हस्पताल में डा० सुबाराव जी ने १ नवंबर को किया । स्वामी जी महाराज को अचेत करके पूरा एक घंटा चीर-फाड़ होती रही ग्लैंड निकाल दिए गए। मालूम हुआ कि साधारण अवस्था से वह चार गुणा बढ़ गए हैं। लेकिन इतना बड़ा आपरेशन हो तो असल कष्ट आपरेशन के बाद होता है । १२ नवम्बर तक पूज्य स्वामी जी को इस कष्ट के विभिन्न स्तरों से गुजारना पड़ा । १३ नवम्बर से उनकी अवस्था सुधरने लगी है अब भय का कोई स्थान नहीं ।

पूज्य स्वामी जी महाराज २१ नवम्बर तक हस्पताल में रहेंगे । लेकिन सही रूप में काम न कर सकेंगे ऐसी अवस्था आने में लगभग तीन मास लगेंगे । इसके पश्चात भी लगभग तीन मास और उन्हें आराम करना पड़ेगा । उनके शरीर से रोग का [illegible] दूर हो गया है । इसलिए मुझे विश्वास है कि धीरे-धीरे पूर्णरूपेण स्वस्थ हो कर छः महीने के बाद वह पहले की तरह देश, धर्म तथा मानवता की सेवा कर सकेंगे । फिर से उनकी अमृतवाणी प्रभुभक्ति तथा अध्यात्म ज्ञान का वह संदेश देगी जिसकी आजके मानव समाजको जरूरत है ।

—संतोषराज मंत्री सभा

अगले अंक में

आर्यसमाज रीडिंग रोड नई देहली का भव्य आर्यसमाज मंदिर देखने के योग्य है, यहां भारत की राजधानी के इस महान् समाजका महान् उत्सव भी एक भारी मेले का स्थान रखता है । इस बार उत्सव का जो दृश्य देखा । बड़े-बड़े नेताओं के भाषण हुए । जो धर्म प्रेम का परिचय मिला । भारी ऋषिलंगरमें हजारों नरनारियों ने बैठ कर एक परिवार के नाते खाया-जो-जो गम्भीर भाषण हुए—कवि दरबार हुआ—इसका सारा विवरण अगले अंक में पढ़िये चेतना, स्फूर्ति भर देगा—

आर्यसमाज चंडीगढ़

आर्यसमाज सैक्टर ८ चंडीगढ़ का पांचवां वार्षिक उत्सव ३ से ११ नवम्बर तक डी० ए० वी० स्कूल के मैदान में समारोह पूर्वक मनाया गया वेद प्रचार की अपील पर पांच हजार से अधिक धन एकत्रित हुआ ।

१५-११-६३ को आर्यसमाज सैक्टर २२ और ८ की ओर से श्री चिरंजीवलाल जी अग्रवाल की प्रधानता में महर्षि निर्वाण उत्सव मनाया गया । जिसमें अनेक विद्वान और विदुषियों के सार गर्भित व्याख्यान हुए तथा स्वामी दयानन्द जी के प्रति श्रद्धांजलियां भेंट की अन्त में आर्य प्रादेशिक सभा के प्रधान प्रिं० रलाराम जी की सेवा में ५००) रु० वेद प्रचारार्थ भेंट किए गए ।

आशुराम आर्य पुरोहित

मुद्रक व प्रकाशक श्री संतोषराज जी मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर द्वारा वीर मिलाप प्रेस, मिलाप रोड जालन्धर में मुद्रित तथा आर्यजगत कार्यालय महात्मा हंसराज भवन निकट कचहरी जालन्धर शहर से प्रकाशित मालिक—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

सम्पादकीय–

आर्य जगत्

वर्ष २३] रविवार २०२०, २९ दिसम्बर १९६३ [अंक ५२

वर्ष बीत गया

आर्यजगत् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का अपना साप्ताहिक मुखपत्र है। इस के सामने एक ही लक्ष्य है कि वैदिक धर्म के प्रचार का अधिक से अधिक विस्तार किया जाये। आर्य समाज के व्यापक आन्दोलन तथा मिशन को परिवार २ तक पहुंचा दिया जाये। विचारों की शक्ति बड़ी होती है। यदि किसी के विचार बदल जायें तो उसका जीवन स्वय बदल जाता है। मानव जीवन में विचारों द्वारा भारी क्रांति होती आई है। राष्ट्र के राष्ट्र इस के बल से परिवर्तित हो जाते हैं। भारत के इतिहास में इस बात का पूरा परिचय मिलता है, कि जिस समाज को बदलने में राज्य की विपुल शक्ति अपना प्रभाव न डाल सकी, उसे अल्प समय में विचारकों के विचार बल ने बदल कर रख दिया देश के जीवन का उत्थान पतन विचारों में ही निहित है। भारत की दयनीय दशा को इस युग के देवता दयानन्द ने अपनी विचार शक्ति से बदल कर रख दिया था। आज जितने भी राष्ट्र में सुधार दिखाई देते हैं। चाहे उनका सम्बन्ध राजनीति, धर्म, शिक्षा एवं दूसरे क्षेत्रों के साथ है—इन सब के लिए महर्षि दयानन्द की प्रबल विचार शक्ति ने बड़ा कार्य किया है। इसी के द्वारा आज सारे देश में आर्य समाज के कार्य की सर्वत्र प्रशंसा होती है।

विचारों के प्रचार का सब से बड़ा साधन साहित्य तथा पत्र हैं। प्रचारक भी अपने विचारों की जनता पर छाप लगा देता है। साथ साथ पत्र तो विचारों का एक स्थायी प्रभाव डाल देते हैं। आर्य प्रादेशिक सभा भी प्रचार के अपने दोनों प्रकार के साधनों को अपना कर जनता में अपना भावपूर्ण कार्य कर रही है। अपने प्रचारकों के साथ २ यह आर्यजगत् मुख पत्र द्वारा भी अपने वेद प्रचार के पवित्र मिशन में दिन रात एक करके काय में संलग्न है। आर्यजगत् पत्र द्वारा जनता तक आर्यसमाज के महान् नेताओं नायकों, बड़ी २ अपनी संस्थाओं के आचार्यों तथा स्वाध्यायशील अध्यापकों, आर्यसमाज के अनुभवी संन्यासी महात्माओं, परिपक्व विद्वानों तथा प्रभावपूर्ण लिखने वाली बहिनों के गम्भीर विचारों, गवेषणा भरे लेखों, उल्लास भरी कविताओं एवं वैदिक धर्म के गम्भीर सिद्धांतों को प्रति सप्ताह पहुचाने मे सभा अपने कर्तव्य का पालन कर रही है। बड़े २ महोत्सवों के अवसर पर दिये गये समाज के महान नेताओं के प्रवचन भी प्रकाशित करके प्रसाद के रूप में सारे समाजों, संस्थाओं तक पहुंचाया जाता है। इस का सारा श्रेय सारे समाज और समाज के विद्वानों को ही है। हम तो केवल सिपाही हैं। अपना कर्तव्य पालन करना ही जानते है। कुछ वर्षों से आर्यसमाज किला जालन्धर के महोत्सव में दिये गये, समाज के बड़े २ महारथियों के सर्वांगीण भाषणों को लेकर खास अंक द्वारा जनता की सेवा में भेजा जाता है। यह ठीक है कि इसके लिए बड़ा ही परिश्रम करना पड़ता है। जलसों में रहते हुए यह कर्तव्य निभाना होता है। किन्तु कर्तव्य पालन में प्रसन्नता है। आर्य जगत् का वर्ष बीत रहा है। यह इस वर्ष का अन्तिम सप्ताह है। प्रभु कृपा और आप का सहयोग मिलता रहे, ऐसी प्रार्थना है—त्रिलोक चन्द्र.

प्रात. स्मरणीय–

महात्मा हंसराज जी की जन्म शताब्दी

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालधर ने पूज्यपाद महात्मा हंसराज जी की जन्म शताब्दी जो कि १९६४ में होगी, को समारोह से मनाने का निश्चय किया है। एतदर्थ एक उपसमिति बनाई गई है जिस में महात्मा जी के भक्त, आर्यसमाजों के प्रधान, आर्य कालिजों स्कूलों वा आर्य संस्थाओं के संचालक सदस्य रखे गए हैं। उन सभी महानुभावों को पत्र द्वारा सूचित कर दिया गया है तथा उन से स्वोकृति की प्रार्थना की गई है। उनसे यह भी प्रार्थना की गई है कि वे अपने मित्रों और महात्मा जी के भक्तों के नाम भेजे ताकि यह उपसमिति और भी सुदृढ़ हो और उनके परामर्श तथा बहुमूल्य सहायता से यह पावन कार्य सफल हो सके।

आर्य जगत से सानुरोध प्रार्थना है कि वह अपना शुभ परामर्श और बहुमूल्य सहयोग दे जिस से इस कार्य की सफलता से सभा के हाथ मजबूत हों।

पूज्य महात्मा हंसराज जी ने अपने तप, त्याग, और बलिदान से जो उपकार देश वासियों का साधारणतः, विशेषतः सभी पंजाब निवासियों का किया है वह किस से छुपा है। हम पर उनका एक विशेष ऋण है। आओ हम सब मिलकर उनकी जन्मशताब्दी को धूमधाम से मनाएं और उनके ऋण से कुछ तो उऋण होने का यत्न करें।

संतोष राज
मंत्रीसभा

तय्यारी आरम्भ कर दें

आर्य प्रादेशिक सभा के महामन्त्री माननीय श्री सन्तोष राज जी ने पूज्य स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी की जन्म शताब्दी मनाने के लिए अपनी शुभ सूचना ऊपर प्रकाशित की है। इस अत्यन्त हर्षप्रद समाचार को पढ़ कर सारा आर्य जगत प्रसन्नता से झूम उठेगा सभा ने १९६४ में अनुमानतः अक्टूबर मास में उस तपोनिधि आदर्शजीवन, परमत्यागी महात्मा जी की जयन्ती बड़े भारी स्तर पर तथा भव्यसमारोह से मनाने का निर्णय कर के एक उप समिति भी बना दी है। यह जयन्ती की शानदार समरोह अपने ढंग का अनुपम समारोह होगा। आर्य समाजों, संस्थाओं तथा सारे परिवारों को इस जयन्ती को शान सम्मान से मनाने के लिए अभी से ही तय्यार हो जाना चाहिए। पूज्य महात्मा हंसराज जी महान् तथा सब के थे। उन की शताब्दी भी उन के पवित्र नाम के अनुरूप ही मनानी होगी। सभा इस के लिए सारी योजना निर्धारित कर के जनता के सामने शीघ्र ही प्रस्तुत करेगी। सभा ने इस महापुरुष की जयन्ती मानने की योजना बना

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्यसमाज तथा राजनीति

(श्री भगवानदास जी प्रिंसिपल, दयानन्द कालेज, शोलापुर)

आर्य समाज देश के निर्माण तथा स्वतन्त्रता युद्ध में सदैव अग्रगामी रहा है। स्वदेश प्रेम स्वदेशी प्रचार, स्वदेशी भाषा, स्वदेशी सभ्यता चरित्र निर्माण तथा वैदिक संस्कृति प्रचार में धीरे चलता हुआ भी क्रियात्मक रूप में सर्व प्रथम रहा है तथा रहता रहेगा। पर इतना कहते हुये भी मैं आर्यसमाज के सामूहिक रूप में राजनीति के क्षेत्र में कूदने के पक्ष में नहीं। इस विचार के निम्न लिखित कारण हैं।

(क) आज भारत में चरित्र हीनता बहुत गिरावट को पहुंच चुकी है तथा राष्ट्रीय नेतिक दृष्टि से हम दिन प्रतिदिन नीचे जा रहे हैं। भ्रष्टाचार का प्रश्न देश के सामने बड़ी भारी समस्या है। सरकार की ओर से न तो कोई ठोस कार्य उसको बन्द करने का हो रहा है तथा न ही हमारी सरकार में ऐसा सामर्थ्य दीख पड़ता है कि इसे रोक सके क्योंकि प्रश्न वोटों का है। आर्य समाजी भले ही कुछ हों पर अभी तक भ्रष्टाचार की दृष्टि से बहुदा पवित्र कहे जा सकते हैं अगर इस गंदे वातावरण में आर्य समाज राजनीति में जावेगा तो अपने आप को गन्दा हो कर डालेगा। बाहिर रह कर ही देश में ऐसा वातावरण निर्माण करना चाहिये कि वोट वोट का ढोल पीटना बन्द हो जावे तथा सच्चरित्रता की ओर भावनाएं उठें। वोट के लिये जो चरित्रहीनता का दिग्दर्शन हो रहा है वह बाहर रह कर ही ठीक किया जा सकता है। समाज सेवा तथा देश सेवा के पवित्र कार्यों का आधार भी वोट और नोट बन गया है। यह स्थिति राज नीति में जानेके अनुकूल नहीं।

(ख) स्वतन्त्र देश में राजनीति ध्येयवाद से पृथक होती है। जैसे कोई पढ़ाने का कार्य करे, कोई खेती का, कोई व्यापार का तो कोई चुनाव लड़ने तथा राजनीति के क्षेत्र में भाग लेने का। इसलिये इस में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता होनी आवश्यक है। और वैदिक संस्कृति के प्रचारार्थ बनी आर्य समाज को व्यक्तिगत स्वतन्त्रताको नष्ट नहीं करना चाहिये। आर्य समाज का पूर्ण विश्वास डेमोक्रसी में है। इसलिये यह उस का कार्य नहीं कि राजनीति में भाग ले। इस का कार्य देश की राज नीति को शुद्ध तथा निर्मल करना है इसलिये आर्यसमाज प्रत्येक राजनैतिक दलको समान दृष्टिसे देखते हुये चुनाव में मनुषत्व का पक्ष ले सकता है। अगर स्वयं राज नीति में गया तो केवल जीतने के लिये गन्दगी में पड़ना ही पड़ेगा। और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता मारी जायगी, इस लिये आर्य समाज को राज नीति से दूर रहना चाहिये।

(ग) हमारे देश में यह विचार जो दिया जाता है कि जो पार्टी सरकार बनाती है उसी को देश का हित है तथा वही देश भक्त है इस से देश में बहुत अनर्थ हो रहा है। स्वतन्त्र देश में तो देश के सब वासी देशभक्त होते हैंजब तक किसी व्यक्तिके आचरण से उनकी देशद्रोहिता सिद्ध न हो जावे। आर्य समाज अगर राज नीति में जावे तो फैले हुये वातावरण में जब तक वह सरकार न बनायेगा देश द्रोही कहलावेगा। यह स्पष्ट है कि आज की सत्तारूढ़ पार्टी सब विरोधी दलों को देश द्रोही अथवा साम्प्रदायिक कहती है तथा उनसे देश हित की सब बातें छिपा कर रखती है। यह दुख दायक बात है। आर्य समाज सब से बड़ा देशभक्त है तथा इस को सब देश वासियों के लिये चाहे वह किसी विचार की राज नीति स्वदेश नीति मानते हों प्रेम करना है जब तक वह नीति देश प्रेम की नीति है। नहीं तो यह स्वय मर जायेगा। आर्य समाज का राज नीति में एक ध्येय है पर वह यह नहीं भूल सकता कि उसका बड़ा भारी धार्मिक क्षेत्र भी है जिस में वह लोग भी आ सकते हैं जो देश के किसी भी राज नैतिक दल में नहीं हैं। अगर आर्य समाज सीधे ही राज नीति में भाग लेगा तो धार्मिक क्षेत्र सार्वजनिक नहीं रहेगा संकुचित हो जावेगा। यही नहीं जो लोग आर्य समाज से राज नैतिक क्षेत्र में मत भेद रखेंगे वह धार्मिक क्षेत्र में भी तंग करेंगे।

(घ) राज नीति एक देशीय होती है। इस में पड़कर कई बार मनुष्य मात्र से घृणा हो जाती है। आर्य समाज को देश-भक्ति में सार्वभौमिकता भी है। सार्वभौमिकता को त्यागने से आर्य समाज का कार्यही समाप्त हो जावेगा। राजनीति से एक स्वतन्त्र देश को अन्तर-राष्ट्रष्टी से धार्मिक क्षेत्र में कई बार चुप रहना पड़ता है चाहे कितनी भी अधार्मिकता क्यों न हो। यह बात वीत नाम के किये गये अत्याचारों तथा अन्य देशों की नीति से पता चलती है। आर्य सामज सत्य पर ही नहीं सत्य के प्रचार पर भी सुदृढ़ है। तथा राज नीति में जाने पर वह धार्मिक अत्याचारों के विरोध में स्पष्ट-पथ न ले सकेगा। जिस लिये आर्य समाज को सामूहिक रूप में राज नीति में नहीं जाना चाहिये।

ऊपर के कथनों से दो बातों में भ्रम पैदा हो जाता है। एक तो यह कि आज अपने देश में राज नीति में भाग लेने वालों की ही तूती बोलती है शेष सब जिस समय दबे बैठे हैं यही नहीं यह भी सत्य है कि बहुत से राज नीति के खिलाड़ी इस सक्रिय धार्मिक स्वतन्त्रता में भी हस्तक्षेप कर रहे हैं। इन बातों को देख कर कई आर्य समाजी भाई यह कहते हैं कि अगर आर्य समाज राज नीति में नहीं आवगा तो आर्य समाज पिस जावेगा। यह प्रश्न गम्भीर है। पर डराने वाला नहीं। भले ही कुछ राजनीति के खिलाड़ी धार्मिक क्षेत्रो के चौधरी भी बनने के स्वप्न ले रहे हों पर आर्य समाज के जन-समूह के साथ टक्कर लेकर वह बच नहीं सकेंगे। भले ही आर्य समाज के कुछ नेता स्वार्थ वश सरकार के हाथों बिक रहे हों पर आर्यसमाजी जनता के सामने वह मुंह नहीं कर सकते। हमने ऐसे नेताओं को चुनाव में लुड़कते भी देखा। राजनीति क्षेत्रों के वह आर्यसमाजी ही आगे बढ़ पाए हैं जो अपना आर्यसमाजी पना भूले नहीं तथा भ्रष्टाचार के चल रहे प्रवाह में अपने कपड़ों पर कीचड़ नहीं लगने दिया।

दूसरा संदेह जो उठता है वह यह है कि ऊपर आर्यसमाज राजनीति में न जाएगा तो देश का नैतिक पतन सामूहिक रूप में राजनीति में जाने से न रुकेगा क्योंकि वोट से आर्यसमाज मद्दी हो जायेगी। जिसके रोकने का ढंग यह है कि आर्यसमाजी (क) सच्चरित्र सच्चे तथा सुचे लोगों को ही वोट दें किसी पार्टी आदि को न दिया करें (ख) भ्रष्टाचारी राज अधिकारी कार्यकर्ता तथा सरकारी कमचारी का डटकर सामना करें। इस के लिये प्रत्येक आर्यसमाज भ्रष्टाचार विरोधी कमेटियां बनाए तथा उन कमेटियों के प्रतिनिधि तहसील तथा जिला और प्रांत स्तरकी आर्यसमाजें बसावें जिस पर संघठन बलशाली करेंगे तो भ्रष्टाचारो अपने दाव पेच न डाल सकेंगे। इस समय आर्यसमाज के सामने यह प्रश्न नहीं है कि राजनीति में आना है कि नहीं प्रश्न तो यह है कि देश को गिरने

(शेष पृष्ट ६ पर)

विधवा माताओं पर कुठाराघात क्यों ?

(ले०—श्री ब्रह्मानन्द जी जिज्ञासु 'विद्यावाचस्पति' दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार)

महर्षि दयानन्द सरस्वती के आगमन के पूर्व ब्राह्म समाजियों ने तथा पोपों ने सती प्रथा की स्थापना की थी। उस में पोप लोग अपने स्वार्थवश बाल्यकाल में ही लड़कियों का विवाह करवाते थे और जब उसका पति मर जाता था तो उस लड़की को जीते हुए चिता बनाकर जला देते थे वह विधवा चिता के लपेटों से दु:खी होकर वहां से भागती तो पोप ब्राह्मण उसे पकड़ कर बांसों, लाठियों से जबरदस्ती चिता में झोंकते थे। राजा राममोहन राय ने जब ऐसा ही एक दृश्य देखा तो उनके नयनों से आंसू की धारा बह चली। ऐसा क्यों होता था इस का मुख्य कारण विधवा विवाह की आज्ञा न देते थे। जब महर्षि का आगमन हुआ। महर्षि ने चिता की लहराती हुई लपेटों से उस विधवा को निकाला। विधवा विवाह का प्रमाण देते हुए उनके हृदय में एक नया प्राण फूंका। महर्षि ने अथर्ववेद काण्ड १८ अनुवाक ३ सूक्त १ मं० १ का प्रमाण दिया कि देखो संसार के लोगो यह वेद मन्त्र क्या कहता है—

इयं नारी पतिलोकं वृणानां निपद्यत उपत्वा मर्त्य प्रेतम्। धर्मं पुराणमनु पालयन्ती तस्यै प्रजा द्रविणं चेह धेहि ॥

हे विधवा नारि! (पुराण) सनातन वैदिक धर्म का (अनुपालयन्ती) पालन करती हुई (इयं नारी) यह नारी (प्रेतं) मृत पति को छोड़ कर (पतिलोकं) पति के सुख को (वृणानां) स्वीकार करने की इच्छा वाली (मर्त्य) हे मनुष्य (त्वा) तुझ को (उपनिपद्यते) प्राप्त होती है (तस्यै) उस विधवा स्त्री के लिए (प्रजा) सन्तान (द्रविणं) द्रव्य रूपी वीर्य को (इह) इस शरीर रूपी संसार में (धेहि) धारण कर।

महर्षि ने विधवा विवाह का निषेध नहीं किया बल्कि वेद मन्त्रों द्वारा उसकी पुष्टि की। महर्षि ने ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १८ मं० ८ का प्रमाण भी दिया कि—

उदीर्ष्वनार्य्यभि जीवलोकं गता सुमेतमुप शेष एहि। हस्तग्राभस्य दिधिषोस्त वेदं पत्युर्जनित्वमभि संबभूव ॥

हे विधवा नारि (गतासुं) मरे हुए (एतं) इस पति को छोड़ कर (अभि जीव लोकं) जीते हुए दूसरे पति को (एहि) प्राप्त हो (उपशेषे) सन्तानोत्पत्ति के लिए व्यवहार कर महर्षि ने यह भी बतलाया कि विधवा विवाह से जो सन्तान उत्पन्न हो तो वह किस वंश वृद्धि के लिए हो तो (हस्तग्राभस्य) विवाह में हाथ ग्रहण करने वाले (पत्यु.) पति की (जनित्वं) सन्तान हो। यदि सन्तान की इच्छा दूसरे पति से हो तो (दिधिषो) नियुक्त पति अर्थात् दूसरे पति की (जनित्वं) सन्तान कहलावे।

सायण ने भी इस मन्त्र का यही अर्थ किया, "हे विधवा नारी! तू मरे हुए पति के साथ क्यों लिपटी है उठ दूसरे पति का वरण कर।

इतना ही नहीं महर्षि ने तो विधवा स्त्री के पतियों का नाम भी बतलाया कि जिस पति से विवाह करे उसकी क्या संज्ञा हो?

ऋग्वेद अष्टक ८ आ० व० २८-२७ मं० ५ का प्रमाण देते हुए लिखा कि—

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः। तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्य जाः ॥

(सोमः प्रथमो विविदे) पहले पति की सोम संज्ञा हो क्योंकि प्रथम पति भोगादि विषयों का पूर्ण ज्ञाता नहीं होता। वह मृत्यु सोमयुक्त होता है। (गन्धर्वो विविद उत्तर.) दूसरे पति की गन्धर्व संज्ञा हो क्योंकि वह पहले से भोगादि विषयों को जानता है (तृतीयो अग्निष्टे) यदि विधवा स्त्री तृतीय पति से विवाह किरती है तो वह पति अग्नि संज्ञक होता है। (तुरीयस्ते मनुष्यजाः) शेष पति की मनुष्य संज्ञा है। इस प्रकार महर्षि ने तड़फती हुए विधवा नारी को नदी में डूबते हुए को तिनके का सहारा देकर समाज में ऊंचा स्थान दिया। महर्षि से पूर्व विधवा नारी को लोग चिता में झोंकते थे। पौराणिक लोग तो उसे अपने मन्दिरों में शिव विष्णु सेवा तथा मन्दिर की देवदासी के रूप में रखकर उनसे व्यभिचार करते थे और अब भी अधिकतर मन्दिरों में देखा जाता है जिस से संसार में पापाचार अनाचार दुराचार का साम्राज्य फैलता ही जा रहा है।

विधवा माताओं पर कुठाराघात करने वाले अथवा विरोध करने वाले यह प्रश्न करते हैं कि 'कोई विधवा नहीं कहती कि मेरा विवाह कर दो इसलिए विधवा विवाह की आवश्यकता नहीं है?' मैं उन से पूछना चाहता हूं कि क्या आपकी लड़की आप से कहती है कि पिता जी आप मेरी शादी कर दीजिए? यदि नहीं कहती तो फिर आप विवाह क्यों करते हैं। कोई भी कुंवारी लड़की नहीं कहती कि मेरा विवाह करो फिर आप लोग उस लड़की का विवाह क्यों करते हैं? दूसरी बात यह है कि विवाह करने के पश्चात कोई लड़की यह नहीं कहती कि 'मैं ससुराल जाऊंगी जल्दी से मेरा गौना (रोकसदी) कर दीजिए' फिर आप उसको ससुराल क्यों भेजते हैं? एक और प्रश्न करते हैं कि 'विधवा विवाह करने से वर्णसंकरता फैलेगी।'

मैं उन से कहूंगा विधवा विवाह चालू नहीं होने के कारण वर्णसंकरता फैल सकती है क्योंकि हम देखते हैं कि कितने पुरुष विधुर हो जाने पर बुढ़ापे में धन के जोर से अपनी बेटी तथा पोतियों के समान लड़कियों के साथ विवाह करते हैं उस बुड्ढे में इतनी शक्ति होती नहीं कि उस नवयुवती की कामवासना को तृप्त कर सके परिणाम

(क्रमशः)

दयानन्द-वचनामृत

मनुष्य से भिन्न जातियों के जितने प्राणी हैं, उनमें दो प्रकार का स्वभाव है। एक तो बलवानों से डरना, और दूसरे निर्बलों को डराना-उनको पीड़ा देना, यहां तक कि यदि उनके प्राण निकाल कर भी अपना स्वार्थ निकल सके तो निकाल लेना। जिस किसी मनुष्य में भी ऐसा ही स्वभाव हो तो उसे भी उन्हीं जातियों के प्राणियों में गिनना चाहिए। परन्तु जो मनुष्य निर्बलों पर दया उपकार करता है, उनको पीड़ासे बचानेके लिए तन-मन-धन तक अर्पण करने को त्यार रहता है, और निर्बलों को सताने वाले अधर्मी बलवानों से किञ्चिन्मात्र भी भय नहीं खाता, पाप करने से कांपता है, तथा सत्य कर्म करते निर्भय और नि:शंक बना रहता है। यही मनुष्य जाति का निज गुण है।'

—स्वामी सत्यानन्द जी

तैयारी आरंभ करदो

(पृष्ठ ३ का शेष)

कर अत्यन्त शानदार पग उठाया है। इस के लिए इतना प्रयास किया जाये कि जनता को इस बात का पता लग सके कि आर्य समाज के इस महान पुरुष ने अपने जीवन में कितना भारी कार्य किया तथा बलिदान दिया है। आज कौन है जिस का मस्तक स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी का शुभ नाम आते ही श्रद्धा से झुक नहीं जाता। आज सारा देश तथा पंजाब विशेषतः उनके शिक्षा आदर्श का ऋणी है। उन का जीवन का कार्य एक प्रकाश स्तम्भ है जिस की किरणों से हजारों का जीवन बना है। आर्य समाज के क्षेत्र में उन का बलिदान अमर रहेगा। डी.ए.वी. कालेज लाहौर का नाम तथा उन के द्वारा विशाल काम आज कौन नहीं जानता। उसी देवता की शताब्दी धूम धाम से मनाने की योजना बनी है। प्रत्येक का कर्तव्य है कि इस देवता को जयन्ती को मनाने के लिए सभी २ हर प्रकार तन मन धन का सहयोग देवे। ताकि शानदार रूप से मनाई जा सके।

त्रिलोक चन्द्र

आर्यसमाज तथा राजनीति

(पृष्ठ ४ का शेष)

सेबचानाहै किनहीं प्रत्येक आर्यसमाज जिसको आर्यसमाज मां से कुछ भी प्रेमहै आज भ्रष्टाचारके विरोधमे डट कर खड़ा हो जावे। अगर देश इससे बच निकला तो यही बड़ी भारी राजनैतिक विजय होगी। राजनैतिक क्षेत्रों में तो अपनी अपनी पार्टी बनाने की दौड़े लग रहीं हैं देश की सोचने की चिंता किसको है। आर्यसमाज देश को बचाना चाहती है तो राजनीति में सामूहिक रूप में न जाए

म. देवी चन्द्र जी के अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश पर

स. प्रतापसिंह कैरो चीफ मिनिस्टर पंजाब की शुभ सम्मति

No. 22398-Cmp-63

Chief Minister Punjab

Date 16-12-63

My dear Shri Devi Chand Ji,

I have gone through the pages of an English translation of the "Sama Veda" with great interest. Considering the fact that a large number of our young men and women have not had proper classical education and, therefore, are deprived of the precious treasures of Sanskrit literature, both scriptural and non-scriptural this contribution would be of great value Present situation demands the modern outlook the new culture and civilization can, however, draw legitimate inspiration from our rich, spiritual and cultural heritage I wish you further success in your adventure

With regards,

Yours sincerely,

Sd -

(Partap Singh)

स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना

आर्य जगत् के तपस्वी महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती के तीन आपरेशन हैदराबाद के हस्पताल मे हुए हैं। आज कल महात्मा जी हैदराबाद में ही हैं। समय २ पर उन के स्वास्थ्य के बारे में पत्रों मे समाचार निकलते रहते हैं। बड़ा ही कष्ट पाया है। सारे आर्य समाज की दृष्टि उन के स्वास्थ्य की ओर लगी हुई है। हम प्रभु से प्रार्थी हैं कि भगवान आर्य समाज की इस विभूति को शीघ्र पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करें। सारा आर्य जगत् प्रभु से स्वास्थ्य की प्रार्थना करे।

आर्य समाज टोहाना

२५०) दान मिला

यहां का समाज मन्दिर बड़ा ही सुन्दर बना हुआ है। मन्दिर की सुन्दरता के साथ २ वहां पर दैनिक प्रातःकाल के सत्संग की सुन्दरता भी प्रशंसा के योग्य है। समाज का अपना लाउडस्पीकर है। यह बड़े गौरव की बात है कि आर्य-समाज को श्री बृजलाल जी गुप्ता जैसा धर्म निष्ठ, समाज प्रेमी तथा स्वाध्यायशील प्रधान मिला है। जिनके पूज्य पिता ला. देवीदयाल जी गुप्त ने अपने सारे जीवन में टोहाना समाज को शानदार समाज बनाये रखा तथा यही समाज सेवा का भाव अपने सुपुत्र श्री बृजलाल जी गुप्ता के जीवन में भर दिया। श्री गुप्ता जी आयसमाज के बड़े ही भक्त हैं। आर्यप्रादेशिक सभा के वर्षों से अन्तरंग के माननीय सदस्य हैं। १२५)रु० प्रति वर्ष सभा को निजी रूप से दान देते हैं। पंजाब के युवक संगठन के बड़े सहयोगी हैं। सम्पन्न होकर भी धर्म प्रेम कूट-कूट कर भरा है।

टोहाना का उत्सव भी धूमधाम से होता है इस वार उत्सव में श्री पं. ओमप्रकाशजी आर्य, पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री, श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज, श्री पं. जयदेव जी आर्य एम. ए. श्री प्रो रामविचार जी हिसार एम ए. पं राजपाल जी मदन मोहन भजनली, श्री मेलाराम जी आदि पधारे। श्री रामलाल जी चावला, श्री बड़े गुप्ता जी जैसे वृद्ध सज्जनों का धर्म प्रेम देखकर प्रसन्नता होती थी। देवियों की श्रद्धा, युवकों कुमारों का उत्साह तथा नगर वालों का सहयोग सराहनीय था जल्सा हर प्रकार से सफल रहा। इस उत्सव पर समाज के प्रधान श्री गुप्ता जी ने सभा के वेदप्रचार में २५०) रुपये समाज की ओर से भेंट किए। आर्यसमाज के सारे अधिकारियों श्री गुप्ता जी प्रधान श्री जयदयाल जी मंत्री तथा सब को बधाई।

आर्यसमाज अम्बाला छावनी का महोत्सव

सभा प्रधान जी को ५००) भेंट

आर्यसमाज अम्बाला छावनी का वार्षिक महोत्सव गत २०-२१-२२ दिसम्बर को बड़े ही समारोह से मनाया गया। वहां स्कूल और कालेज तथा कन्या विद्यालय के रूप में आर्य समाज की बड़ी २ छावनी हैं। इन में हजारों छात्र शिक्षा प्राप्त करते हैं अन्य समाजों के समान इस समाज का भी आर्य-प्रादेशिक सभा जालन्धर के साथ बड़ा ही हित है। यहां पर आर्य-समाज का कार्य करने वाले सभा के परमहितैषी वयोवृद्ध डा० मिलखीराम जी, श्री मेहरचन्द जी जौली, श्री रमेशचन्द जी कपिल, श्री दीवानचन्द जी आर्य तथा दूसरे कार्यकर्ताओं के उत्साह से समाज का कार्य बड़े सुन्दर ढङ्ग से चलता है।

इस उत्सव पर सभा के प्रधान माननीय प्रिंसिपल पं० रलाराम जी एम० ए० स्वयं भी पधारे। इनके साथ २ पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री, श्री पं० ओम् प्रकाश जी आर्य, श्री पं० चन्द्रसेन जी आर्य हितैषी श्री पं० राजपाल जी मदनमोहन जो मंडली, ठा० दुर्गासिंह जी आर्य तूफान, पं० जगतराम जी, श्री बस्तीराम जी पधारे। शुक्रवार को नगरकीर्तन का विशाल जलूस निकला। अपनी संस्थाओं के छात्रों का उत्साह, उल्लास, अनुशासन दर्शनीय था। सभा प्रधान प्रिंसिपल रलाराम जी एम० ए० के दो भाषण बड़े ही ओजस्वी, प्रभावपूर्ण हुए। आर्य समाज के महान् प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी ने सारे राष्ट्र को क्या विशेष देन दी। इस विषय पर उच्चकोटि का प्रवचन हुआ। अपने को पहिचानो—इस विषय पर दूसरा आध्यात्मिक गम्भीर प्रवचन हुआ। सभ्य तथा सुशिक्षित जनता बहुत ही प्रभावित हुई। उत्सव में समाज के प्रधान डा० मिलखीराम जी ने वेद प्रचार के बारे में अपने उद्गार प्रकट करते हुए समाज की ओर से सभा के प्रधान श्री पं० रलाराम जी एम. ए. की सेवा में ५००) रु० की थैली भेंट की। उत्सव से पूर्व श्री पं० ओम् प्रकाश जी आर्य की मनोहर कथा होती रही। जलसा हर प्रकार से शानदार था। सब को बधाई।

"cover" were carried to remarkable refinements as we became more experienced and wily. I was worried by the delays and beat against them. As to the leakage, none could tell. At any rate, on August 27 the Cabinet gave their final general approval for going ahead. Our target date was then September 19.

* * * * *

At 6.24 p.m. on September 9 the British Consul-General at Tangier cabled to Admiral North, commanding the North Atlantic Station, a shore appointment at Gibraltar, and repeated to the Foreign Office:

> Following received from "Jacques": French squadron may try to pass the Straits, proceeding westward for unknown destination. This attempt may be timed to take place within the next seventy-two hours.

The Admiral was *not* in the Dakar circle, and took no special action. The telegram was repeated from Tangier simultaneously to the Foreign Office and received at 7.50 a.m. on the 10th. At this time we were under almost continuous bombardment in London. Owing to the recurrent stoppages of work through the air raids, arrears had accumulated in the cipher branch. The message was not marked "Important", and was deciphered only in its turn. It was not ready for distribution until September 14, when at last it reached the Admiralty.

But we had a second string. At 6 p.m. on September 10 the British Naval Attaché in Madrid was officially informed by the French Admiralty that three French cruisers, type *Georges Leygues*, and three destroyers, had left Toulon and intended to pass the Straits of Gibraltar on the morning of the 11th. This was the normal procedure accepted at this time by the Vichy Government, and was a measure of prudence taken by them only at the latest moment. The British Naval Attaché reported at once to the Admiralty, and also to Admiral North at Gibraltar. The signal was received in the Admiralty at 11.50 p.m. on September 10. It was deciphered and sent to the Duty Captain, who passed it on to the Director of Operations Division (Foreign). It should have been obvious to this officer, who was himself fully informed of the Dakar expedition, that the message was of decisive importance. He took no instant action on it, but let it go forward in

the ordinary way with the First Sea Lord's telegrams. For this mistake he received in due course the expression of their lordships' displeasure.

However, the destroyer *Hotspur*, on patrol in the Mediterranean, sighted the French ships at 5.15 a.m. on September 11, fifty miles to the east of Gibraltar, and reported to Admiral North. Admiral Somerville, who commanded Force H, which was based on Gibraltar, had also received a copy of the Naval Attaché's signal at eight minutes past midnight that same morning. He brought the *Renown* to one hour's notice for steam at 7 a.m. and awaited instructions from the Admiralty. In consequence of the error in the Director of Operations Division, and of the delay at the Foreign Office upon the other message from the Consul-General, the First Sea Lord knew nothing about the passage of the French warships till *Hotspur's* signal was brought to him during the Chiefs of Staff meeting before the Cabinet. He at once telephoned the Admiralty to order *Renown* and her destroyers to raise steam. This had already been done. He then came to the War Cabinet. But through the coincidence of this failure of two separate communications—one from the Consul-General in Tangier and the other from the Naval Attaché in Madrid—and through lack of appreciation in various quarters, all was too late. If the Consul-General had marked the first message "Important", or if either of the Admirals at Gibraltar, even though not in the secret, had so considered it themselves, or if the Foreign Office had been working normally, or if the Director of Operations had given the second message the priority which would have ensured the First Sea Lord's being woken up to read it immediately, the *Renown* could have stopped and parleyed with the French squadron pending decisive orders, which would certainly have been given by the War Cabinet, or, till they could be summoned, by me.

In the event all our network of arrangements broke down, and three French cruisers and three destroyers passed the Straits at full speed (25 knots) at 8.35 a.m. on the 11th and turned southwards down the African coast. The War Cabinet, on being apprised, instantly instructed the First Lord to order the *Renown* to get in touch with the French ships, ask for their destination, and make it clear that they would not be allowed to proceed to any German-occupied ports. If they replied that they were going

south they were to be told they could proceed to Casablanca, and in this case they were to be shadowed. If they tried to go beyond Casablanca to Dakar they were to be stopped. But the cruisers were never caught A haze lay over Casablanca on the 12th and 13th One of the reconnoitring British aircraft was shot down, reports about the presence of additional warships in Casablanca harbour were conflicting, and the *Renown* and her destroyers waited all day and night south of Casablanca to intercept the French squadron At 4 20 on the afternoon of the 13th the *Renown* received an air report that there were no cruisers in Casablanca In fact they were already far to the southward, steaming for Dakar at full speed

There seemed however to be still another chance. Our expedition and its powerful escort was by now itself south of Dakar, approaching Freetown. At 12.16 a.m. on September 14 the Admiralty signalled to Admiral John Cunningham telling him that the French cruisers had left Casablanca at a time unknown and ordering him to prevent them entering Dakar. He was to use every ship available, including the *Cumberland*; and the *Ark Royal* should operate her aircraft without a destroyer screen if this were unavoidable The cruisers *Devonshire*, *Australia*, and *Cumberland*, and the *Ark Royal* thereupon turned back at maximum speed to establish a patrol line to the north of Dakar. They did not reach their stations until evening on September 14. The French squadron was already anchored in the port with awnings spread.

This chapter of accidents sealed the fate of the Franco-British expedition to Dakar. I had no doubt whatever that the enterprise should be abandoned. The whole scheme of a bloodless landing and occupation by General de Gaulle seemed to me ruined by the arrival of the French squadron, probably carrying reinforcements, good gunners, and bitter-minded Vichy officers, to decide the Governor, to pervert the garrison, and man the batteries. It was possible however to cancel the plan without any loss of prestige, so important to us at this time, and indeed without anyone knowing anything about it The expedition could be diverted to Duala and cover General de Gaulle's operations against the French Cameroons, and thereafter the ships and transports could be dispersed or return home.

Accordingly, at the meeting of the War Cabinet at noon on

September 16, after outlining the history of the Dakar operation from its inception, the serious results of the postponement of the date, originally fixed for September 13, the leakage of information from various sources, and the misfortune of the French warships having slipped through the Straits, I declared that the whole situation was altered and that the operation was now out of the question. The Cabinet adopted my advice, and the following orders were dispatched to the Dakar force at 2 p.m. that day:

> His Majesty's Government have decided that presence of French cruisers at Dakar renders the execution of Dakar operation impracticable Alternative plans have been examined here Landing at Konakri does not appear to offer any chance of success in view of difficulty of communications to Bomako, the lack of transport with the force, and the probability that forces from Dakar would forestall. Moreover, close blockade of Dakar from seaward is not possible with the naval forces available, and therefore presence of de Gaulle's force at Bomako would not appreciably influence situation at Dakar Best plan appears to be for General de Gaulle's force to land at Duala with the object of consolidating the Cameroons, Equatorial Africa, and Chad, and extending influence of de Gaulle to Libreville The British portion of the force would remain for the present at Freetown
>
> Unless General de Gaulle has any strong objections to the latter course it should be put into operation forthwith

* * * * *

The expedition arrived at Freetown on September 17. All the leaders reacted vehemently against the idea of abandoning the enterprise The Admiral and the General argued that until it was known to what extent the arrival of the Vichy cruisers had raised local morale their presence did not materially alter the previous naval situation At present, they said, the cruisers had awnings spread, and two were so berthed as to be virtually impotent, while presenting excellent bombing targets

Here was another twist in the situation It was very rare at this stage in the war for commanders on the spot to press for audacious courses Usually the pressure to run risks came from home In this case the General, General Irwin, had carefully put all his misgivings on paper before he started. I was therefore agreeably surprised at the evident zeal to put this complicated and semi-political operation to the test If the men on the spot thought it was a time to do and dare, we should certainly give them a free

hand. I therefore sent at 11.52 p m on September 16 the following:

You are fully at liberty to consider the whole situation yourselves and consult de Gaulle, and we shall carefully consider then any advice you may give

There soon arrived a vehement protest from General de Gaulle, who wished to carry out the plan. "At the very least," he said, "should the British Government uphold its new and negative decision concerning direct action upon Dakar by sea, I request immediate co-operation of British naval and air forces here present to support and cover an operation which I personally shall conduct with my own troops against Dakar from the interior."*

Our commanders now reported:†

At meeting to-day de Gaulle insisted upon necessity for early action at Dakar He is advised that substantial support for him is likely to be found in Dakar if agents are sent to foster it, action is not unduly deferred, and a too-British complexion of the operation avoided His agents are ready at Bathurst and have their instructions De Gaulle now proposes original plan to enter harbour unopposed should go forward, but that if this fails Free French troops should attempt landing at Rufisque, supported by naval and air action if necessary, and thence advance on Dakar British troops only to be landed in support if called upon after bridgehead has been established .

After careful consideration of all factors, we are of the opinion that the presence of these three cruisers has not sufficiently increased the risks, which were always accepted, to justify the abandonment of the enterprise We accordingly recommend acceptance of de Gaulle's new proposal, and that, should he fail, landing of British troops should be undertaken to install him as previously contemplated. Increased strength in [our] naval forces is however considered essential.

The operation should be carried out four days after decision of His Majesty's Government is received

And, finally, from Major-General Irwin to the C I G.S.:

As you know, I have already accepted risks in this operation not fully justified on purely military grounds New information possibly increases those risks, but I consider them worth accepting in view of obvious results of success. De Gaulle has also committed himself to

* September 17, 1940, received at 11 55 a m

† Received by the Admiralty at 7 56 a m on September 18, 1940.

complete co-operation with British troops in case of need, and he has not shirked responsibility for fighting between Frenchmen

The War Cabinet met for the second time on the 17th at 9 p.m. Everyone was agreed to let the commanders go ahead as they wished Final decision was postponed till noon the next day, it being plain that no time was being lost, as there was still nearly a week before the blow could be struck At the request of the Cabinet I drafted the following message to the commanders of the Dakar force

> We cannot judge relative advantages of alternative schemes from here We give you full authority to go ahead and do what you think is best in order to give effect to the original purpose of the expedition. Keep us informed.

This was dispatched at 1.20 p m September 18.

* * * * *

There was nothing to do now but await results On the 19th the First Sea Lord reported that the French squadron, or parts of it, were leaving Dakar for the south This made it pretty clear that it had carried Vichy-minded troops, technicians, and authorities to Dakar. The probabilities of a vigorous resistance were increased out of all proportion to the new forces involved There would certainly be sharp fighting My colleagues, who were tough, and also nimble to change with circumstances, as is right in war, shared my instinct to let things rip, and the various reports were heard in silence.

On the 20th Admiral Pound told us that the French cruiser *Primauguet*, intercepted by the *Cornwall* and *Delhi*, had agreed to go to Casablanca and was now being escorted thither. The three French warships sighted by the *Australia* turned out to be the cruisers *Georges Leygues*, *Montcalm*, and *Gloire*. At noon on the 19th the *Australia* had been joined by the *Cumberland*, and they continued to shadow the Vichy ships till evening These now turned to the northward, and increased their speed from 15 to 31 knots. A chase ensued We were not able to overtake them At 9.0 p.m however the *Gloire* had an engine breakdown and could steam no more than 15 knots Her captain agreed to return to Casablanca, escorted by the *Australia* This pair were due to pass Dakar about midnight, and the captain of the *Australia* told the *Gloire* that if he were attacked by submarines he would at

once sink her She no doubt spoke to Dakar, and all passed off pleasantly. The *Cumberland*, shadowing the other two Vichy warships, lost touch in a heavy rainstorm, and both, though sighted, got back into Dakar without fire being made upon them. The *Poitiers* when challenged at sea on the 17th had already scuttled herself

*   *   *   *   *

I kept General Smuts fully informed.

Prime Minister to General Smuts 22 IX 40

You will have seen my message about Dakar. I have been thinking a great deal about what you said in your various messages about not neglecting the African sphere. The de Gaulle movement to rescue the French colonies has prospered in Equatoria and the Cameroons We could not allow these solid gains to be destroyed by French warships and personnel from Vichy, sent probably at German dictation If Dakar fell under German control and became a U-boat base the consequences to the Cape route would be deadly We have therefore set out upon the business of putting de Gaulle into Dakar, peaceably if we can, forcibly if we must, and the expedition now about to strike seems to have the necessary force

Naturally the risk of a bloody collision with the French sailors and part of the garrison is not a light one On the whole I think the odds are heavily against any serious resistance, having regard to the low morale and unhappy plight of this French colony, and the ruin and starvation which faces them through our sea control Still, no one can be sure till we try. The argument that such a risk ought not to be run at a time when French opinion, encouraged by British resistance, is veering towards us even at Vichy, and that anything like a second Oran would be a great set-back, has weighed heavily with us Nevertheless we came to the united conclusion that this objection might not turn out to be valid, and must in any case be surpassed by the dangers of doing nothing and of allowing Vichy to prevail against de Gaulle. If Vichy did not declare war after Oran, or under the pressure of our blockade, there is no reason why they should do so if there is a fight at Dakar Besides the strategical importance of Dakar and political effects of its capture by de Gaulle, there are sixty or seventy millions of Belgian and Polish gold wrongfully held in the interior, and the great battleship *Richelieu*, by no means permanently disabled, would indirectly come into our hands Anyhow, the die is cast.

We do not intend to disturb Morocco at present on account of the German pressure on Spain and Spanish interests there We are very hopeful about Syria, whither General Catroux will go next week.

An important battle is now impending at Mersa Matruh, and I hope our armoured reinforcements will arrive in time

I am not particularly impressed with the dangers in Kenya, especially if we lie back and fight from the railway, leaving the enemy the difficult communications. I am trying to send a few suitable tanks to this theatre, which otherwise I feel is overstocked with troops needed in the Soudan and in the Delta

It gives me so much pleasure and confidence to be trekking with you along the path we have followed together for so many years.

To Roosevelt I telegraphed:

Former Naval Person to President 23 IX 40

I was encouraged by your reception of information conveyed by Lord Lothian about Dakar It would be against our joint interests if strong German submarine and aircraft bases were established there It looks as if there might be a stiff fight Perhaps not, but anyhow orders have been given to ram it through We should be delighted if you would send some American warships to Monrovia and Freetown, and I hope by that time to have Dakar ready for your call But what really matters now is that you should put it across the French Government that a war declaration would be very bad indeed for them in all that concerns United States If Vichy declares war, that is the same thing as Germany, and Vichy possessions in the Western Hemisphere must be considered potentially German possessions

Many thanks also for your hint about invasion We are all ready for them. I am very glad to hear about the rifles.

* * * * *

It is not necessary here to narrate in detail all that happened during the three days in which Dakar was attacked These deserve their place in military chronicles, and are a further good example of bad luck The meteorologists at the Air Ministry had of course carefully studied climatic conditions on the West African coast. A long survey of records reveals uniform, regular bright sunlight and clear weather at this season of the year On September 23, when the Anglo-French armada approached the fortress, with de Gaulle and his French ships well in the van, fog reigned supreme. We had hoped, since the great majority of the population, French and native, was on our side, that the appearance of all these ships with the British lying far back on the horizon would have decided the action of the Governor. It soon proved however that the Vichy partisans were masters, and there

can be no doubt that the arrival of the Vichy cruisers had blotted out any hope of Dakar joining the Free French movement. De Gaulle's two aeroplanes landed on the local airfield, and their pilots were immediately arrested. One of them had on his person a list of the leading Free French adherents. De Gaulle's emissaries, sent under the Tricolour and the white flag, were rebuffed, and others who entered later in launches were fired upon and two of them wounded. All hearts were hardened, and the British Fleet approached through the mist to within five thousand yards. At 10 a.m a harbour battery opened fire on one of our wing destroyers. The fire was returned, and the engagement soon became general. The destroyers *Inglefield* and *Foresight* were slightly damaged, and the *Cumberland* was struck in the engine-room and had to quit. One French submarine was bombed by an aircraft at periscope depth, and one French destroyer set on fire

There is an age-long argument about ships *versus* forts. Nelson said that a six-gun battery could fight a 100-gun ship-of-the-line. Mr. Balfour, in the Dardanelles inquiry, said in 1916. "If the ship has guns which can hit the fort at ranges where the fort cannot reply, the duel is not necessarily so unequal." On this occasion the British Fleet, with proper spotting, could in theory engage and after a certain number of rounds destroy the Dakar batteries of 9 4-inch guns at twenty-seven thousand yards. But the Vichy forces had at this time also the battleship *Richelieu*, which proved capable of firing two-gun salvos from 15-inch artillery. This had to be taken into account by the British Admiral. Above all there was the fog. The firing therefore died away at about 11.30 a m., and all British and Free French ships retired.

In the afternoon General de Gaulle tried to land his troops at Rufisque, but the fog and the confusion had now become so dense that the attempt was abandoned. By 4 30 p.m. the commanders decided to withdraw the troopships and resume the operation next day. The signal with this information reached London at 7 19 p m , and I thereupon sent the following personal message to the commander timed at fourteen minutes past ten o'clock on September 23:

Having begun we must go on to the end. Stop at nothing.

An ultimatum was sent that night to the Governor of Dakar, to which reply was made that he would defend the fortress to the last. The commanders answered that they intended continuing the operation. Visibility on the 24th was better than on the previous day, but still poor. The shore batteries opened on our ships as they closed, and *Barham* and *Resolution* engaged *Richelieu* at thirteen thousand six hundred yards. Shortly afterwards *Devonshire* and *Australia* engaged a cruiser and a destroyer, damaging the latter. The bombardment ended at about ten o'clock, by which time *Richelieu* had been hit by a 15-inch shell, as also had Fort Manuel, and a light cruiser was on fire. Moreover, one enemy submarine which had tried to interfere with our approach had been forced to the surface by a depth charge, the crew surrendering. None of our ships was hit. In the afternoon the bombardment was renewed for a short time. On this occasion *Barham* was hit four times without serious damage. The bombardment was inconclusive except to indicate that the defences were strong and the garrison determined to resist.

On September 25 the action was resumed The weather was clear, and our fleet bombarded at twenty-one thousand yards' range, when they were replied to, not only by the very accurate coastal batteries, but by double salvos from the 15-inch guns of the *Richelieu* A smoke-screen used by the Dakar commander baffled our aim Soon after 9 a m the battleship *Resolution* was hit by a torpedo from a Vichy submarine. After this the Admiral decided to withdraw to seaward, "in view of the condition of the *Resolution*, the continued danger from submarines, and the great accuracy and determination of the shore defences".

Meanwhile the Defence Committee, which met at 10 a.m without me, had formed the opinion that no pressure should be brought to bear on the commanders to take any action against their better judgment. The Cabinet met at 11.30 a.m., and news of the results of the morning's operations reached us during the meeting On these tidings it seemed clear that the matter had been pressed as far as prudence and our resources would allow Several good ships had been severely damaged It was obvious that Dakar would be defended to the death. No one could be sure that the fierce passions of protracted fighting would not provoke a French declaration of war from Vichy We therefore, after a painful discussion, were all agreed to push no more

Accordingly I sent the following telegram (1.27 p.m., September 25) to the commanders:

On all the information now before us, including damage to *Resolution*, we have decided that the enterprise against Dakar should be abandoned, the obvious evil consequences being faced Unless something has happened which we do not know, which makes you wish to attempt landing in force, you should forthwith break off You should inform us "Most Immediate" whether you concur, but unless the position has entirely changed in our favour you should not actually begin landing till you receive our reply

Assuming enterprise abandoned, we shall endeavour to cover Duala by naval force, but we cannot safeguard de Gaulle's forces [if they remain] at Bathurst Question of reinforcing Freetown with troops is being considered Instructions regarding disposal of remainder of forces will be given on receipt of your reply.

The commanders made the following reply:

Concur in breaking off.

* * * * *

Former Naval Person to President Roosevelt 25.IX.40

I much regret we had to abandon Dakar enterprise. Vichy got in before us and animated defence with partisans and gunnery experts All friendly elements were gripped and held down Several of our ships were hit, and to persist with landing in force would have tied us to an undue commitment, when you think of what we have on our hands already

* * * * *

In the three days' bombardment no British ships were sunk, but the battleship *Resolution* was disabled for several months, and two destroyers sustained damage which required considerable repairs in home dockyards. Two Vichy submarines were sunk, the crew of one being saved, two destroyers were burnt out and beached, and the battleship *Richelieu* was hit by a 15-inch shell and damaged by two near misses of 250-lb bombs. There was of course no means at Dakar of repairing this formidable vessel, which had already been rendered temporarily immobile in July, and it could now be definitely dismissed as a hostile factor from our calculations

It is interesting to note the changes of *rôle* of the War Cabinet and of its commanders in the enterprise. The commanders were

at first by no means enthusiastic, and General Irwin protected himself by a lengthy reasoned memorandum to the V.C.I G.S., in which all the difficulties were stressed. After the expedition had got south of the Canary Islands, the French cruiser squadron, with its reinforcements of Vichy partisans, carrying with it in physical as well as moral form the authority of the French Republic, slipped through the Straits of Gibraltar. I had no doubt from that moment that the situation had been transformed; and the War Cabinet, on my advice, supported by the Chiefs of Staff, agreed that we should stop the enterprise while time remained and no loss had been incurred and no failure would be exposed.

Then the commanders on the spot came forward with their strong desire to take action, and the War Cabinet, quite rightly in my view, felt that the commanders should be the judges and be given a free hand Accordingly the attempt was made, and it was immediately apparent, by the efficient and vehement resistance of Dakar, that the War Cabinet had been right and rightly advised.

Although the fighting at Dakar had been far more serious than had been expected, we were not wrong in our judgment that the Vichy Government would not declare war upon Great Britain. They contented themselves with air retaliation upon Gibraltar from North Africa On September 24 and 25 successive raids were made upon the harbour and dockyard, in the first 150 bombs were dropped, and in the second, in which about one hundred aircraft took part, twice as many The French aviators did not seem to have their hearts in the business, and most of the bombs fell in the sea. Some damage was done, but there were very few casualties Our A.A. batteries shot down three aircraft. Fighting at Dakar having ended in a Vichy success, the incident was tacitly treated as "quits"

No blame attached to the British naval and military commanders, and both were constantly employed until the end of the war, the Admiral attaining the highest distinction. It was one of my rules that *errors towards the enemy* must be lightly judged. They were quite right to try, if with their knowledge on the spot they thought they could carry the matter through, and the fact that they under-estimated the effect produced on the Vichy garrison by the arrival of the cruisers and their reinforcements was in no way counted against them. Of General de Gaulle I said in the

House of Commons that his conduct and bearing on this occasion had made my confidence in him greater than ever.

The story of the Dakar episode deserves close study, because it illustrates in a high degree not only the unforeseeable accidents of war, but the interplay of military and political forces, and the difficulties of combined operations, especially where allies are involved. To the world at large it seemed a glaring example of miscalculation, confusion, timidity, and muddle. In the United States, where special interest was taken on account of the proximity of Dakar to the American continent, there was a storm of unfavourable criticism. The Australian Government was distressed. At home there were many complaints of faulty war direction. I decided however that no explanations should be offered, and Parliament respected my wish.*

* * * * *

In retrospect a brighter view may perhaps be taken of these events. Students of naval history may be struck by the resemblance of this affair to one which occurred nearly three centuries ago. In 1655 Cromwell dispatched a joint naval and military expedition to seize San Domingo, in the West Indies. The attack did not succeed, but the commanders, instead of returning empty-handed, turned failure into success by going on to capture Jamaica.

Although we failed at Dakar, we succeeded in arresting the onward progress of the French cruisers and frustrating their determined efforts to suborn the garrisons in French Equatorial Africa. Within a fortnight General de Gaulle was enabled to establish himself at Duala, in the Cameroons, which became a rallying-point for the Free French cause. Free French activities in these regions played their part not only in halting the penetration of the Vichy virus, but in making possible, through their control of Central Africa, the later development of our trans-continental air transport route from Takoradi to the Middle East.

* See Appendix D for my correspondence with Mr Menzies.

CHAPTER XXV

MR EDEN'S MISSION

October 1940

Retirement of Mr. Chamberlain – Cabinet Changes – The Leadership of the Conservative Party – Reasons for My Decision to Accept the Vacant Post – We Reopen the Burma Road – My Telegram to the President – Growth of Our Strength on the Desert Front – My Complaints about the Middle East Administration – Malta Anxieties – Mr Eden Flies to the Middle East – My Appreciation of October 13, 1940 – Mr Eden's Conferences with the Generals at Cairo – His Report and Requests – Our Growing Strength at Mersa Matruh – Proposed Meeting of Mr. Eden and General Smuts at Khartoum – My Desire for a Forestalling Offensive against the Italians – Need for Better Use of Our Resources in the Middle East.

AT the end of September Mr. Chamberlain's health got far worse. The exploratory operation to which he had subjected himself in July and from which he had returned so courageously to duty had revealed to the doctors that he was suffering from cancer and that there was no surgical remedy. He now became aware of the truth and that he would never be able to return to his work He therefore placed his resignation in my hands. In view of the pressure of events I felt it necessary to make the changes in the Government which have been mentioned in an earlier chapter Sir John Anderson became Lord President of the Council and presided over the Home Affairs Committee of the Cabinet Mr Herbert Morrison succeeded him as Home Secretary and Minister of Home Security, and Sir Andrew Duncan became Minister of Supply These changes were effective on October 3.

Mr. Chamberlain also thought it right to resign the Leadership

of the Conservative Party, and I was invited to take his place. I had to ask myself the question—about which there may still be various opinions—whether the Leadership of one great party was compatible with the position I held from King and Parliament as Prime Minister of an Administration composed of, and officially supported by, all parties. I had no doubt about the answer. The Conservative Party possessed a very large majority in the House of Commons over all other parties combined. Owing to the war conditions no election appeal to the nation was available in case of disagreement or deadlock. I should have found it impossible to conduct the war if I had had to procure the agreement in the compulsive days of crisis and during long years of adverse and baffling struggle not only of the Leaders of the two minority parties but of the Leader of the Conservative majority. Whoever had been chosen and whatever his self-denying virtues, he would have had the real political power. For me there would have been only the executive responsibility.

These arguments do not apply in the same degree in time of peace, but I do not feel I could have borne such a trial successfully in war. Moreover, in dealing with the Labour and Liberal Parties in the Coalition it was always an important basic fact that as Prime Minister and at this time Leader of the largest party I did not depend upon their votes and I could in the ultimate issue carry on in Parliament without them. I therefore accepted the position of Leader of the Conservative Party which was pressed upon me, and I am sure that without it, and all the steady loyalties which attached to it, I should not have been able to discharge my task until victory was won. Lord Halifax, who might have been an alternative choice of the party if I had declined, himself proposed the motion, which was unanimously adopted.

* * * * *

The summer had crashed its way along with massive, rending shocks, but with growing assurance of survival Autumn and winter plunged us into a maze of complications, less mortal but more puzzling The invasion challenge had definitely weakened The Battle of Britain in the air was won We had bent the German beam Our Home Army and Home Guard had grown vastly more powerful The equinoctial gales of October stretched rough capricious hands across the Channel and the

Narrow Seas. All the arguments from which I had formerly drawn comfort were justified and strengthened In the Far East the danger of a Japanese declaration of war seemed to have receded. They had waited to see what would happen about the invasion, and nothing had happened The Japanese war lords had looked for a certainty. But certainties are rare in war. If they had not thought it worth while to strike in July, why should they do so now when the light of the British Empire burned brighter and fiercer and world conditions were less favourable to them? We felt ourselves strong enough to reopen the Burma Road when its three months' closure had elapsed The Japanese were experienced in sea war, and probably thought about it along the same lines as the British Admiralty. None the less, it was not without anxiety that the decision to open the Burma Road and allow supplies to flow along it into China was taken. In this broad measurement of the unknowable our judgment was not proved wrong.

I was glad to telegraph to the President news which I was sure would be agreeable to him and to the United States

Former Naval Person to President 4.X 40

After prolonged consideration of all the issues involved we to-day decided to let the Burma Road be reopened when the three months period expires on October 17 The Foreign Secretary and I will announce this to Parliament on Tuesday, 8th I shall say that our hopes of a just settlement being reached between Japan and China have not borne fruit, and that the Three-Power Pact revives the Anti-Comintern Pact of 1939 and has a clear pointer against the United States I know how difficult it is for you to say anything which would commit the United States to any hypothetical course of action in the Pacific But I venture to ask whether at this time a simple action might not speak louder than words Would it not be possible for you to send an American squadron, the bigger the better, to pay a friendly visit to Singapore? There they would be welcomed in a perfectly normal and rightful way If desired, occasion might be taken of such a visit for a technical discussion of naval and military problems in those and Philippine waters, and the Dutch might be invited to join Anything in this direction would have a marked deterrent effect upon a Japanese declaration of war upon us over the Burma Road opening I should be very grateful if you would consider action along these lines, as it might play an important part in preventing the spreading of the war.

In spite of the Dakar fiasco the Vichy Government is endeavouring

to enter into relations with us, which shows how the tides are flowing in France now that they feel the German weight and see we are able to hold our own

Although our position in the air is growing steadily stronger both actually and relatively, our need for aircraft is urgent Several important factories have been seriously injured, and the rate of production is hampered by air alarms. On the other hand, our losses in pilots have been less than we expected, because in fighting over our own soil a very large proportion get down safely or only wounded When your officers were over here we were talking in terms of pilots. We are now beginning to think that aeroplanes will be the limiting factor so far as the immediate future is concerned.

I cannot feel that the invasion danger is past The gent has taken off his clothes and put on his bathing-suit, but the water is getting colder and there is an autumn nip in the air We are maintaining the utmost vigilance.

* * * * *

These welcome events at opposite ends of the world cleared the way for stronger action in the Middle East Every nerve had to be strained to make headway against Italy, whose movements were slower than I had expected Strong reinforcements had reached General Wavell The two tank regiments had arrived in the desert. General Maitland Wilson, who commanded the "Army of the Nile", as it was now called, formed a high opinion of the possibilities of the "Matildas"—as the Infantry or "I" tanks were nicknamed by the troops. Our defence position at Mersa Matruh was now far more solid, and—though this I did not yet know—new thoughts began to stir in staff and planning circles at the Middle East Headquarters Obviously our next main task was to strengthen our forces in the Middle East, and especially in the Western Desert, both from Britain and from India

I was still in argument with the Admiralty about military convoys attempting the passage of the Mediterranean, I saying: "You can now see that we ought to have tried it," and they "There was not so much hurry after all." I still remained extremely dissatisfied with the distribution of our forces already in the Middle East, and with the disparity, as I judged it, between ration and fighting strength I feared greatly for Malta. I pressed General Wavell and the Secretary of State, both directly and through the Chiefs of Staff, on all these points To Mr. Eden I wrote:

Prime Minister to Secretary of State for War 24.IX.40

There is no difference between us in principle; but the application of the principle raises issues of detail, and this is especially true of the denudation of this Island in the face of the imminent threat of invasion. Meanwhile the General Staff continue to press for diversions from the Middle East, such as the 7th Australian Division to be used for garrisoning the Malay peninsula. Now the two Indian brigades are to be employed in these jungles against a possible war with Japan, and a still more unlikely Japanese siege of Singapore. The paper on Indian reinforcements was considered last night by me and the Chiefs of Staff. You will see in it that a division is to be provided for Malaya, another for Basra, and a corps for Iraq, thus absorbing all the Indian reinforcements available in 1941 This geographical distribution or dispersion of our forces shows the ideas prevailing, which are altogether erroneous in a strategic sense. However, it was explained to me that, although these forces were earmarked for particular theatres, they could all go to the Middle East if required I therefore agreed to words being inserted making this clear. None the less, the paragraph dispersing these divisions without regard to war needs made an unfavourable impression upon me.

We have next to consider the increasing waste of troops in Kenya, and the continued waste in Palestine. Some improvement has been made in Palestine, but Kenya, on the contrary, is at this moment to have a mountain battery sent there instead of to the Soudan I fear that when General Smuts goes there he will naturally be influenced by the local situation However, I hope to keep in touch with him by cable.

Lastly, there is the shocking waste of British Regular troops on mere police duty in the Canal Zone, in Cairo, and at Alexandria, and the general slackness of the Middle East Command in concentrating the maximum for battle and in narrowing the gap between ration strength and fighting strength I have not had any answer to my request for figures on this point

My idea, like yours, is to gather the strongest army in the Middle East possible in the next few months, and I have indicated on other papers the number of divisions I hope can be assembled there But I think the first thing would be for the War Office and the Egyptian Command to make the best use possible of the very large number of troops they have already, and for which we are paying heavily

Further, I am much disquieted about the position at Malta It is now agreed that two battalions shall be sent as reinforcements, but after how much haggling and boggling, and excuses that they could not be accommodated in the island! Have you read General Dobbie's

appreciation and his statement that he has his battalions all spread on fifteen-mile fronts each, with no reserves not already allocated to the defence of aerodromes? Do you realise there is no command of the sea at Malta, and that it might be attacked at any time by an expeditionary force of twenty or thirty thousand men from Italy, supported by the Italian Fleet? Yet it was proposed that these two battalions should go to Freetown to complete the brigade there, although no enemy can possibly attack Freetown while we have the command of the Atlantic Ocean You will, I am sure, excuse my putting some of these points to you, because they illustrate tendencies which appear ill-related to the very scheme of war which you have in mind.

Prime Minister to General Ismay 6 X 40

Whenever the Fleet is moving from Alexandria to the Central Mediterranean reinforcements should be carried in to Malta, which I consider to be in grievous danger at the present time These reinforcements should be found by taking battalions from the Canal Zone and replacing them by dismounted Yeomanry or Australian details now in Palestine, or by South African units presently to be moved from Kenya Pray let me have proposals on these lines, and make sure that at least one battalion goes to Malta on the next occasion We cannot waste Regular battalions on internal security duties in Egypt If they were needed for the field army they would of course be irremovable, but that is not what they are being used for.

* * * * *

I was in such close agreement with the Secretary of State for War, and felt so much the need of having our views put forward on the spot, instead of through endless telegrams, that I now asked him whether he would not make a personal inspection of the Middle East. He was delighted, and started immediately. He made a thorough tour of the whole theatre. In his absence I took over the War Office.

I also at this time laid the whole military situation as I saw it before the Chiefs of Staff.

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 13 X.40

1 First in urgency is the reinforcement of Malta·

(*a*) by further Hurricane aircraft, flown there as can best be managed,

(*b*) by the convoy now being prepared, which should carry the largest anti-aircraft outfit possible, as well as the battalions and the battery—I understand another M.T ship can be made available,

(*c*) by one or, better still, two more battalions released from police duty on the Canal or in Palestine, and carried to Malta when next the Fleet moves thither from Alexandria. General Dobbie's latest appreciation bears out the grievous need of strengthening the garrison Every effort should be made to meet his needs, observing that once Malta becomes a thorn in the Italian side the enemy's force may be turned upon it. The movement of these reinforcements should therefore precede any marked activity from Malta.

(*d*) Even three Infantry tanks at Malta would be important, not only in actual defence, but as a deterrent if it were known that they were there Some mock-up tanks also might be exhibited where they would be detected from the air.

2 The movement of the Fleet to Malta must await this strengthening of the air defences It is however a most needful and profoundly advantageous step I welcome the possibility of basing even light forces upon Malta, as they immediately increase its security I understand it is intended they shall sally forth by day and only lie in harbour as a rule at night It must be observed that a strong ship like the *Valiant* can far better withstand a hit from a bomb than light craft, and in addition she carries a battery of twenty very high-class A A guns Apart from the stake being higher, it is not seen why, if light forces can be exposed in Malta harbour, well-armoured and well-armed ships cannot use it too The multiple aerial mine U.P. weapon gives considerable security against dive-bombing

I should be glad to be more fully informed by the Admiralty about this.

Occasional visits by the whole Battle Fleet would be an immense deterrent on hostile attack, and also a threat to the [enemy] Libyan communications while they last.

Let me have the number of A A. guns now in position, and the whole maximum content [of them in] the new convoy, together with estimated dates for their being mounted.

3 Relations with Vichy We cannot accept the position that we must yield to the wishes of Vichy out of fear lest they make air raids upon Gibraltar, for there would be no end to that. We must reassert our blockade of the Straits, dealing with vessels whether escorted or unescorted, though without violating Spanish territorial waters We should assemble a sufficient force at Gibraltar for this purpose at the earliest date possible Meanwhile we must maintain as good a blockade of Dakar as possible, and protect Duala, etc., from a counter-stroke by the French cruisers in Dakar. The conversations with Vichy, if they take place, may reach a *modus vivendi* falling some-

what short of these desiderata. Of course, if we could be assured that Vichy, or part of Vichy, was genuinely moving in our direction we could ease up on them to a very large extent It seems probable that they will be increasingly inclined to move as we desire, and I personally do not believe that hard pressure from us will prevent this favourable movement It is becoming more difficult every day for Vichy to lead France into war with us We must not be too much afraid of checking this process, because the tide in our favour will master and overwhelm the disturbing eddies of the blockade and possible sea incidents I do not believe that any trouble will arise with the French which will prevent the impending movement of our convoy to Malta The chance is there, but it is remote and must be faced

4. The greatest prize open to Bomber Command is the disabling of *Bismarck* and *Tirpitz*. If *Bismarck* could be set back for three or four months the *King George V* could go to the Eastern Mediterranean to work up, and could therefore play a decisive part in the occupation of Malta by the Fleet. This would speedily transform the strategic situation in the Mediterranean

5 Should October pass without invasion we should begin the reinforcement of the Middle East by the Cape route to the utmost extent our shipping permits, sending, as arranged, the armoured units, the Australians, and New Zealanders in November, another British division before Christmas, and at least four more during January, February, and March All this would be in addition to the necessary drafts Let me know how far your present programme of sailings conforms to this

6 The time has also come for a further strong reinforcement of the Middle East by bombers and by fighters I should be glad to know how far the Chiefs of Staff would be prepared to go, observing that though the risk is very great so also is the need

7 Let me see the programme for reinforcing the Mediterranean Fleet during the next six months It should be possible by the end of the year to send three flotillas of destroyers to the Eastern Mediterranean, and one additional to Gibraltar If *King George V* must be kept to watch *Bismarck*, *Nelson* or *Rodney* should go to Alexandria, and either *Barham* or *Queen Elizabeth*. What cruiser reinforcements are contemplated? Will it be possible to send *Formidable* [an aircraft-carrier] thither also, and when?

8 Agreeably to the dispatch of divisions to the Middle East, the Home Army and the Home Guard will be developed to fill the gap A minimum of twelve mobile divisions must lie in reserve [at home], apart from the troops on the beaches, at any time.

9 It should be possible also to provide by the end of July a striking

force for amphibious warfare of six divisions, of which two should be armoured The various alternative plans for the employment of such a force are being studied

* * * * *

Meanwhile Mr Eden was on his journey. He "was deeply impressed with the rapid progress in recent work on the defences of Gibraltar", which he said had "been driven forward with energy, determination, and ingenuity". The morale of the troops was high and the garrison confident. He was more anxious about the position at Malta, and pressed for at least another battalion and a battery of 25-pounders, together of course with continued air reinforcements. The Governor, General Dobbie, thought it important that an offensive policy which would provoke retaliation should be avoided at Malta until April 1941, by which time the various programmes of reinforcement in aircraft and A.A. guns would be fulfilled.

On the 15th Mr Eden reached Cairo. He held searching discussions with Generals Wavell and Maitland Wilson, who commanded the Desert Army There was good confidence about repelling an Italian offensive General Wilson estimated that the maximum strength the Italians could deploy against Matruh was three divisions, the limiting factors being maintenance, particularly water, and communications. Against this he had the 7th Armoured Division, with its newly arrived tank regiments, the 4th Indian Division, the Matruh garrison of five rifle battalions, a machine-gun battalion, and eight or nine batteries The 16th British Brigade Group and the New Zealand Brigade Group had arrived from Palestine An Australian Brigade Group lay west of Alexandria, a second Australian brigade was moving thither There was also a Polish brigade The concentration of these forces, wrote Eden, was considered by General Wilson to be sufficient to meet the threat of the enemy and to enable him to defeat it, provided he was assured of adequate air support Eden added that inundations for which I had asked had been carried out and anti-tank obstacles created. He sent a lengthy list of requirements, particularly aircraft This last was easier asked for than given at the time when the bombing of London was rising to its peak He urged that a company of Infantry tanks should be included in the November convoy,

destination Port Soudan, in order to take the offensive against the Italian threat from Kassala

Eden also raised at Cairo a pertinent question: What action would be taken by our forces, supposing the Italian attack did not take place? Upon this the Generals first spoke of their own offensive hopes. "It has emerged from our discussion this morning", Eden cabled, "that Infantry tanks [Matildas] can play a much more important *rôle* in the fighting in this theatre than we had thought. General Wavell would much like a second battalion of I tanks, and a Brigade Recovery Section, especially important to maintain full serviceability."

Although no reference had been made in the Secretary of State for War's telegram to our taking the offensive, I was very glad to learn all the good news, and urged him to continue his inspection.

Prime Minister to Secretary of State for War 16.x 40

I have read all your telegrams with deepest interest and realisation of the value of your visit We are considering how to meet your needs Meanwhile, continue to master the local situation. Do not hurry your return

Eden further arranged for a Turkish Mission to join our Army, and proposed to General Smuts a meeting at Khartoum to discuss the whole situation, and particularly our Soudan offensive project, and my complaints about the overcrowding in Kenya This meeting was fixed for October 28, a date which later acquired significance. I need scarcely add that requests for all kinds of equipment, including ten thousand rifles to aid the rebellion in Abyssinia, and above all for anti-tank guns, anti-tank rifles, A.A. batteries, and air reinforcements, flowed to us in a broadening stream. We did our utmost to meet these needs at the expense of home defence at this time There was not half enough for everybody, and whatever was given to one man had to be denied or taken from another also in danger.

Mr Eden proposed to fly back by Lagos immediately after his conference at Khartoum, preferring to make a full verbal report of all he had seen and done. I was so much encouraged by the picture as to become hungry for a turn to the offensive in the Western Desert. I therefore telegraphed to him:

26.x 40

Before leaving you should consider searchingly with your Generals

possibilities of a forestalling offensive. I cannot form any opinion about it from here, but if any other course was open it would not be sound strategy to await the concentration and deployment of overwhelming forces. I thought the existing plans for repelling an attack by a defensive battle and counter-stroke very good, but what happens if the enemy do not venture until the Germans arrive in strength? Do not send any answer to this, but examine it thoroughly and discuss it on return

Please examine in detail the field state of the Middle Eastern Army in order to secure the largest proportion of fighting men and units for the great numbers on our ration strength Study improvisation from White details for the Canal Zone and internal security All British battalions should be mobile and capable of taking part in battle I fear that the proportion of fighting compared with ration strength is worse in the Middle East than anywhere else Please do not be content with the stock answers. Even Army Ordnance and Service Corps depots and other technical details can all help in keeping order where they are, and should be organised for use in an emergency Not only the best, but the second and third best, must be made to play their part

Thus on the main issue our minds at home and on the spot were moving forward in harmony.

CHAPTER XXVI

RELATIONS WITH VICHY AND SPAIN

Unity with France – American and Canadian Contacts with Vichy – Difficulties of General de Gaulle – My Broadcast to the French People, October 21 – Its Lasting Effect – Need to Insist upon Essentials – The Toulon Fleet – President Roosevelt's Intervention – Admiralty Anxieties – Correspondence with the President, November – A Firm Policy about the French Battleships – Telegram to General de Gaulle – Pétain's Assurances to the President – Britain and Spain – Sir Samuel Hoare Appointed Ambassador – General Franco's Policy – Dangers of Spanish Hostility – Algeciras Bay and the Neutral Ground – Artful Diplomacy of the Spanish Government towards Hitler – Franco's Dilatory Tactics – Suñer's Mission – Ribbentrop's Visit to Rome, September 19 – Increasing Spanish Claims – Hitler and Mussolini at the Brenner Pass, October 4 – Hitler and Franco at Hendaye, October 23 – Hitler and Pétain at Montoire, October 24 – Collaboration against Britain – My Personal Views, November 14 – Pétain Breaks with Laval – Hitler's Disappointment with Spain – Franco's Duplicity and Ingratitude both to Hitler and Mussolini – My Telegram to the President.

IN spite of the Armistice and Oran and the ending of our diplomatic relations with Vichy, I never ceased to feel a unity with France. People who have not been subjected to the personal stresses which fell upon prominent Frenchmen in the awful ruin of their country should be careful in their judgments of individuals It is beyond the scope of this story to enter the maze of French politics. But I felt sure that the French nation would do its best for the common cause according to the facts presented to it. When they were told that their only salvation lay in following the advice of the illustrious Marshal Pétain, and that England, which had given them so little help, would soon

be conquered or give in, very little choice was offered to the masses But I was sure they wanted us to win, and that nothing would give them more joy than to see us continue the struggle with vigour It was our first duty to give loyal support to General de Gaulle in his valiant constancy On August 7 I signed a military agreement with him which dealt with practical needs. His stirring addresses were made known to France and the world by the British broadcast The sentence of death which the Pétain Government passed upon him glorified his name. We did everything in our power to aid him and magnify his movement

At the same time it was necessary to keep in touch not only with France, but even with Vichy I therefore always tried to make the best of them I was very glad when at the end of the year the United States sent an Ambassador to Vichy of so much influence and character as Admiral Leahy, who was himself so close to the President I repeatedly encouraged Mr Mackenzie King to keep his representative, the skilful and accomplished M Dupuy, at Vichy Here at least was a window upon a courtyard to which we had no other access. On July 25 I sent a minute to the Foreign Secretary in which I said "I want to promote a kind of collusive conspiracy in the Vichy Government whereby certain members of that Government, perhaps with the consent of those who remain, will levant to North Africa in order to make a better bargain for France from the North African shore and from a position of independence For this purpose I would use both food and other inducements, as well as the obvious arguments" It was in this spirit that I was to receive in October a certain M Rougier, who represented himself as acting on the personal instructions of Marshal Pétain This was not because I or my colleagues had any respect for Marshal Pétain, but only because no road that led to France should be incontinently barred Our consistent policy was to make the Vichy Government and its members feel that, so far as we were concerned, it was never too late to mend Whatever had happened in the past, France was our comrade in tribulation, and nothing but actual war between us should prevent her being our partner in victory

This mood was hard upon de Gaulle, who had risked all and kept the flag flying, but whose handful of followers outside France could never claim to be an effective alternative French Government. Nevertheless we did our utmost to increase his influence,

authority, and power He for his part naturally resented any kind of truck on our part with Vichy, and thought we ought to be exclusively loyal to him. He also felt it to be essential to his position before the French people that he should maintain a proud and haughty demeanour towards "perfidious Albion", although an exile, dependent upon our protection and dwelling in our midst He had to be rude to the British to prove to French eyes that he was not a British puppet He certainly carried out this policy with perseverance He even one day explained this technique to me, and I fully comprehended the extraordinary difficulties of his problem I always admired his massive strength.

* * * * *

On October 21 I made an appeal by radio to the French people. I took great pains to prepare this short address, as it had to be given in French I was not satisfied with the literal translation at first provided, which did not give the spirit of what I could say in English and could feel in French, but M. Duchesne, one of the Free French staff in London, made a far better rendering, which I rehearsed several times and delivered from the basement of the Annexe, amid the crashes of an air raid.

Frenchmen!

For more than thirty years in peace and war I have marched with you, and I am marching still along the same road To-night I speak to you at your firesides wherever you may be, or whatever your fortunes are I repeat the prayer around the *louis d'or* "*Dieu protège la France*" Here at home in England, under the fire of the Boche, we do not forget the ties and links that unite us to France, and we are persevering steadfastly and in good heart in the cause of European freedom and fair dealing for the common people of all countries, for which, with you, we drew the sword When good people get into trouble because they are attacked and heavily smitten by the vile and wicked, they must be very careful not to get at loggerheads with one another The common enemy is always trying to bring this about, and, of course, in bad luck a lot of things happen which play into the enemy's hands We must just make the best of things as they come along

Here in London, which Herr Hitler says he will reduce to ashes, and which his aeroplanes are now bombarding our people are bearing up unflinchingly Our Air Force has more than held its own We are waiting for the long-promised invasion So are the fishes But, of

course, this for us is only the beginning Now in 1940, in spite of occasional losses, we have, as ever, command of the seas In 1941 we shall have the command of the air. Remember what that means Herr Hitler with his tanks and other mechanical weapons, and also by Fifth Column intrigue with traitors, has managed to subjugate for the time being most of the finest races in Europe, and his little Italian accomplice is trotting along hopefully and hungrily, but rather wearily and very timidly, at his side. They both wish to carve up France and her Empire as if it were a fowl: to one a leg, to another a wing or perhaps part of the breast. Not only the French Empire will be devoured by these two ugly customers, but Alsace-Lorraine will go once again under the German yoke, and Nice, Savoy, and Corsica—Napoleon's Corsica—will be torn from the fair realm of France. But Herr Hitler is not thinking only of stealing other people's territories, or flinging gobbets of them to his little confederate. I tell you truly what you must believe when I say that this evil man, this monstrous abortion of hatred and defeat, is resolved on nothing less than the complete wiping out of the French nation, and the disintegration of its whole life and future By all kinds of sly and savage means he is plotting and working to quench for ever the fountain of characteristic French culture and of French inspiration to the world All Europe, if he has his way, will be reduced to one uniform Boche-land, to be exploited, pillaged, and bullied by his Nazi gangsters You will excuse my speaking frankly, because this is not a time to mince words. It is not defeat that France will now be made to suffer at German hands, but the doom of complete obliteration Army, Navy, Air Force, religion, law, language, culture, institutions, literature, history, tradition, all are to be effaced by the brute strength of a triumphant army and the scientific low-cunning of a ruthless Police Force.

Frenchmen—rearm your spirits before it is too late. Remember how Napoleon said before one of his battles: "These same Prussians who are so boastful to-day were three to one at Jena, and six to one at Montmirail." Never will I believe that the soul of France is dead. Never will I believe that her place amongst the greatest nations of the world has been lost for ever! All these schemes and crimes of Herr Hitler's are bringing upon him and upon all who belong to his system a retribution which many of us will live to see The story is not yet finished, but it will not be so long We are on his track, and so are our friends across the Atlantic Ocean, and your friends across the Atlantic Ocean. If he cannot destroy us, we will surely destroy him and all his gang, and all their works. Therefore have hope and faith, for all will come right.

Now what is it we British ask of you in this present hard and bitter

time? What we ask at this moment in our struggle to win the victory which we will share with you, is that if you cannot help us, at least you will not hinder us. Presently you will be able to weight the arm that strikes for you, and you ought to do so. But even now we believe that Frenchmen, wherever they may be, feel their hearts warm and a proud blood tingle in their veins when we have some success in the air or on the sea, or presently—for that will come—upon the land.

Remember we shall never stop, never weary, and never give in, and that our whole people and Empire have vowed themselves to the task of cleansing Europe from the Nazi pestilence and saving the world from the new Dark Ages. Do not imagine, as the German-controlled wireless tells you, that we English seek to take your ships and colonies. We seek to beat the life and soul out of Hitler and Hitlerism. That alone, that all the time, that to the end. We do not covet anything from any nation except their respect. Those Frenchmen who are in the French Empire, and those who are in so-called Unoccupied France, may see their way from time to time to useful action. I will not go into details. Hostile ears are listening. As for those, to whom English hearts go out in full, because they see them under the sharp discipline, oppression, and spying of the Hun—as to those Frenchmen in the occupied regions, to them I say, when they think of the future let them remember the words which Gambetta, that great Frenchman, uttered after 1870 about the future of France and what was to come: "Think of it always: speak of it never."

Good night then: sleep to gather strength for the morning. For the morning will come. Brightly will it shine on the brave and true, kindly upon all who suffer for the cause, glorious upon the tombs of heroes. Thus will shine the dawn. *Vive la France!* Long live also the forward march of the common people in all the lands towards their just and true inheritance, and towards the broader and fuller age.

There is no doubt that this appeal went home to the hearts of millions of Frenchmen, and to this day I am reminded of it by men and women of all classes in France, who always treat me with the utmost kindness in spite of the hard things I had to do—sometimes to them—for our common salvation.

* * * * *

At this time it was necessary to insist upon essentials. We could not relax the Blockade of Europe, and particularly of France, while they remained under Hitler's domination. Although from time to time to meet American wishes we allowed a few specified ships with medical stores to pass into Unoccupied France, we did

not hesitate to stop and search all other ships seeking or coming out of French ports. Whatever Vichy might do for good or ill, we would not abandon de Gaulle or discourage accessions to his growing colonial domain. Above all we would not allow any portion of the French Fleet, now immobilised in French colonial harbours, to return to France. There were times when the Admiralty were deeply concerned lest France should declare war upon us and thus add to our many cares I always believed that once we had proved our resolve and ability to fight on indefinitely the spirit of the French people would never allow the Vichy Government to take so unnatural a step Indeed, there was by now a strong enthusiasm and comradeship for Britain, and French hopes grew as the months passed This was recognised even by M Laval when he presently became Foreign Minister to Marshal Pétain.

As the autumn drew into winter I was concerned with the danger of the two great French battleships attempting to make their way back to Toulon, where they could be completed President Roosevelt's envoy, Admiral Leahy, had established intimate relations with Marshal Pétain It was to Roosevelt therefore that I turned, and not in vain.

Former Naval Person to President Roosevelt 20 X 40

We hear rumours from various sources that the Vichy Government are preparing their ships and colonial troops to aid the Germans against us I do not myself believe these reports, but if the French fleet at Toulon were turned over to Germany it would be a very heavy blow It would certainly be a wise precaution, Mr President, if you would speak in the strongest terms to the French Ambassador, emphasising the disapprobation with which the United States would view such a betrayal of the cause of democracy and freedom. They will pay great heed in Vichy to such a warning.

You will have seen what very heavy losses we have suffered in the North-Western Approaches to our last two convoys * This is due to our shortage of destroyers in the gap period I mentioned to you Thank God your fifty are now coming along, and some will soon be in action We ought to be much better off by the end of the year, as we have a lot of our own anti-U-boat vessels completing, but naturally we are passing through an anxious and critical period, with so many small

* From October 17 to 19 (inclusive) thirty-three ships, twenty-two of them British, were sunk by U-boats in the North-Western Approaches These figures include twenty ships out of one convoy

craft having to guard against invasion in the Narrow Waters, and with the very great naval effort we are making in the Mediterranean, and the immense amount of convoy work.

The President in consequence sent a very severe personal message to the Pétain Government about the Toulon fleet. "The fact," he said, "that a Government is a prisoner of war of another Power does not justify such a prisoner in serving its conqueror in operations against its former ally." He reminded the Marshal of the solemn assurances he had received that the French Fleet would not be surrendered. If the French Government attempted to permit the Germans to use the French Fleet in hostile operations against the British Fleet, such action would constitute a flagrant and deliberate breach of faith with the United States Government. Any agreement of that character would most definitely wreck the traditional friendship between the French and American peoples. It would create a wave of bitter indignation against France in American public opinion and would permanently end all American aid to the French people. If France pursued such a policy the United States could make no effort when the proper time came to secure for France the retention of her oversea possessions

Former Naval Person to President Roosevelt **26.x.40**

Your cable with terms of splendid warning you gave the French crossed mine to you about a suggested message to Pétain. Most grateful for what you have already done, but everything still in balance Foreign Office tell me they have cabled you our latest information of German terms, which Pétain is said to be resisting. In this connection the surrender of bases on the African shores for air or U-boats would be just as bad as surrender of ships. In particular Atlantic bases in bad hands would be a menace to you and a grievous embarrassment to us I hope therefore you will make it clear to the French that your argument about ships applies also to the betrayal of bases.

In spite of the invasion threats and air attacks of the last five months, we have maintained a continuous flow of reinforcements round the Cape to the Middle East, as well as sending modern aircraft and major units of the Fleet I do not think the invasion danger is yet at an end, but we are now augmenting our eastern transferences The strain is very great in both theatres, and all contributions will be thankfully received

At this time the Admiralty were so deeply concerned about the dangers of a rupture with Vichy that they were inclined to under-

rate the disadvantages of letting the two French battleships return to Toulon. On this I gave directions.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord
(From the train) 2 XI 40

After the defection of France it was considered vital not to allow the *Jean Bart* and the *Richelieu* to fall into enemy hands, or to reach harbours where they could be completed For this purpose you attacked the *Richelieu*, and claimed to have disabled her to a very large extent The *Jean Bart* is in an unfinished state, and neither ship can be fitted for action in the African harbours on the Atlantic, where they now lie It is our decided policy not to allow these ships to pass into bad hands I was therefore surprised to hear the First Sea Lord demur to the idea that the *Jean Bart* should be prevented from returning to Toulon, and argue in the sense that she might safely be allowed to do so Toulon has always been judged by us to be an enemy-controlled harbour It was for this reason that the most extreme efforts were made, unhappily without success, to prevent the *Strasbourg* reaching Toulon. I cannot reconcile this action with the apparent readiness to allow the *Jean Bart* to proceed there.

The Admiralty is held responsible for preventing the return of either of these two ships to French ports on the Atlantic, or to the Mediterranean, where they could be repaired and completed at Toulon, and then at any time betrayed to the Germans or captured by them.

Prime Minister to Foreign Secretary (From the train) 2 XI 40

I do not know how imminent the movement of the *Jean Bart* may be I have informed the Admiralty that they are responsible for stopping her from entering the Mediterranean It would seem therefore very important that you should give a clear warning to Vichy that the ship in question will be stopped, and if necessary sunk, if she attempts to go either to a German-controlled port in the Atlantic, or to a Mediterranean port which may at any time fall into German hands My Private Office in London is sending you a copy of the minute I have sent to the First Lord and the First Sea Lord

Former Naval Person to President Roosevelt 10 XI 40

1 We have been much disturbed by reports of intention of French Government to bring *Jean Bart* and *Richelieu* to Mediterranean for completion It is difficult to exaggerate [the] potential danger if this were to happen, and so open the way for these ships to fall under German control We should feel bound to do our best to prevent it

2 We conveyed a warning to French Government through Ambassador at Madrid a few days ago, on the following lines.

Such a step would greatly increase the temptation to the Germans and Italians to seize the French Fleet We doubt, not the good faith of the French Government, but their physical ability to implement their assurances that they will not let the Fleet fall into enemy hands We particularly wish to avoid any clash between British and French naval forces, and therefore hope that if they had thought of moving the ships they will now refrain from doing so.

3 As we said to French Government, we should not question good faith of assurances, but even if we accept assurances we can feel no security that they will in fact be able to maintain them once the ships are in French ports in the power or reach of the enemy, and I must confess that the desire of French Government to bring these ships back, if this turns out to be well founded, seems to me to give cause for some suspicion

4. It would be most helpful if you felt able to give a further warning at Vichy on this matter, for if things went wrong it might well prove of extreme danger for us both

* * * * *

I kept in close touch with General de Gaulle.

Prime Minister to General de Gaulle (Libreville) 10 XI.40

I feel most anxious for consultation with you Situation between France and Britain has changed remarkably since you left A very strong feeling has grown throughout France in our favour, as it is seen that we cannot be conquered and that war will go on We know Vichy Government is deeply alarmed by the very stern pressure administered to them by United States. On the other hand, Laval and revengeful Darlan are trying to force French declaration of war against us and rejoice in provoking minor naval incidents. We have hopes of Weygand in Africa, and no one must underrate advantage that would follow if he were rallied We are trying to arrive at some *modus vivendi* with Vichy which will minimise the risk of incidents and will enable favourable forces in France to develop We have told them plainly that if they bomb Gibraltar or take other aggressive action we shall bomb Vichy, and pursue the Vichy Government wherever it chooses to go So far we have had no response You will see how important it is that you should be here I therefore hope you will be able to tidy up at Libreville and come home as soon as possible. Let me know your plans.

On November 13 the President replied to my message of the 10th about the possible transfer of the *Jean Bart* and *Richelieu* to the Mediterranean for completion He had immediately instructed

the American Chargé d'Affaires at Vichy to obtain a confirmation or denial of this report and to point out that it was of vital interest to the Government of the United States that these vessels should remain in stations where they would not be exposed to control or seizure by a Power which might employ them to ends in conflict with the interests of the United States in the future of the French Fleet Any such step on the part of France would inevitably seriously prejudice Franco-American relations He also offered to buy the ships from the French Government if they would sell them

The President also informed me that Pétain had stated to the American Chargé d'Affaires that the most solemn assurances had been given by him that the French Fleet, including the two battleships, would never fall into the hands of Germany The Marshal said he had given those assurances to the United States Government, to the British Government, and even to me personally "Again I reiterate them," he said. "These ships will be used to defend the possessions and territories of France. Unless we are attacked by the British, they will never be used against England. Even if I wanted to, I cannot sell those ships. It is impossible under the terms of the armistice, and even if it were possible it would never be permitted by the Germans. France is under Germany's heel and impotent I would gladly sell them, if I were free, on condition that they be returned to us after the war, and save them for France in this way I must repeat I have neither the right nor the possibility of selling them under present circumstances." Marshal Pétain had made this statement with great seriousness, but with no sign of either surprise or resentment at the suggestion President Roosevelt had further instructed the Chargé d'Affaires to inform Marshal Pétain that the American offer remained open both about these vessels as well as about any others in the French Navy.

On November 23 the President sent me further reassurances Marshal Pétain had stated categorically that he would keep the vessels now at Dakar and Casablanca where they were, and that if there was any change in this plan he would give the President previous notice

* * * * *

The attitude of Spain was of even more consequence to us than that of Vichy, with which it was so closely linked Spain

had much to give and even more to take away. We had been neutral in the sanguinary Spanish Civil War. General Franco owed little or nothing to us, but much—perhaps life itself—to the Axis Powers. Hitler and Mussolini had come to his aid. He disliked and feared Hitler. He liked and did not fear Mussolini. At the beginning of the World War Spain had declared, and since then strictly observed, neutrality A fertile and needful trade flowed between our two countries, and the iron ore from Biscayan ports was important for our munitions. But now in May the "Twilight War" was over. The might of Nazi Germany was proved The French front was broken. The Allied armies of the North were in peril. It was at this moment that I had gladly offered to a former colleague, displaced by the Ministerial changes, a new sphere of responsibility, for which his gifts and temperament were suited. On May 17 Sir Samuel Hoare had been appointed Ambassador to Spain, and certainly I believe that no one could have carried out better this wearing, delicate, and cardinal five years' mission Thus we were very well represented at Madrid, not only by the Ambassador and by the Counsellor of the Embassy, Mr. Arthur Yencken,* but also by the Naval Attaché, Captain Hillgarth, who had retired from the Navy and lived in Majorca, but now returned to duty equipped with profound knowledge of Spanish affairs.

General Franco's policy throughout the war was entirely selfish and cold-blooded He thought only of Spain and Spanish interests Gratitude to Hitler and Mussolini for their help never entered his head Nor, on the other hand, did he bear any grudge against England for the hostility of our Left Wing parties This narrow-minded tyrant only thought about keeping his blood-drained people out of another war They had had enough of war A million men had been slaughtered by their brothers hands Poverty, high prices, and hard times froze the stony peninsula No more war for Spain and no more war for Franco! Such were the commonplace sentiments with which he viewed and met the awful convulsion which now shook the world

His Majesty's Government was quite content with this unheroic outlook All we wanted was the neutrality of Spain We wanted to trade with Spain We wanted her ports to be denied to German and Italian submarines We wanted not only an un-

* Mr Yencken was killed in an air accident in 1944

molested Gibraltar, but the use of the anchorage of Algeciras for our ships and the use of the ground which joins the Rock to the mainland for our ever-expanding air base On these facilities depended in large measure our access to the Mediterranean Nothing was easier than for the Spaniards to mount or allow to be mounted a dozen heavy guns in the hills behind Algeciras They had a right to do so at any time, and, once mounted, they could at any moment be fired, and our naval and air bases would become unusable The Rock might once again stand a long siege, but it would be only a rock. Spain held the key to all British enterprises in the Mediterranean, and never in the darkest hours did she turn the lock against us. So great was the danger that for nearly two years we kept constantly at a few days' notice an expedition of over five thousand men and their ships, ready to seize the Canary Islands, by which we could maintain air and sea control over the U-boats, and contact with Australasia round the Cape, if ever the harbour of Gibraltar were denied to us by the Spaniards.

There was another very simple manner in which the Franco Government could have struck us this destructive blow. They could have allowed Hitler's troops to traverse the Peninsula, besiege and take Gibraltar for them, and meanwhile themselves occupy Morocco and French North Africa. This became a deep anxiety after the French Armistice, when on June 27, 1940, the Germans reached the Spanish frontier in force, and proposed fraternal ceremonial parades in San Sebastian and in towns beyond the Pyrenees. Some German troops actually entered Spain. However, as the Duke of Wellington wrote in April 1820. "There is no country in Europe in the affairs of which foreigners can interfere with so little advantage as in those of Spain. There is no country in which foreigners are so much disliked, and even despised, and whose manners and habits are so little congenial with those of other countries in Europe." Now, a hundred and twenty years later, the Spaniards, reeling and quivering under the self-inflicted mutilations of the Civil War, were even less sociable They did not wish to have foreign armies marching about their country Even if they were Nazi and Fascist in their ideology, these morose people would rather have the foreigners' room than their company Franco shared these feelings to the full, and in a most crafty manner he managed to give effect

to them. We could admire his astuteness, especially as it was helpful to us.

* * * * *

Like everyone else, the Spanish Government was staggered by the sudden downfall of France and the expected collapse or destruction of Britain. Lots of people all over the world had reconciled themselves to the idea of the "New Order in Europe", the "Herrenvolk", and all that. Franco therefore indicated in June that he was prepared to join the victors and share in the distribution of the spoils. Partly from appetite, and partly also from prudence, he made it clear that Spain had large claims. But at this moment Hitler did not feel the need of allies. He, like Franco, expected that in a few weeks or even days general hostilities would cease and England would be suing for terms. He therefore showed little interest in the gestures of active solidarity from Madrid.

By August the scene had changed. It was certain that Britain would fight on and probable that the war would be lengthy. With the contemptuous British rejection of his "Peace Offer" of July 19 Hitler sought allies, and to whom should he turn but to the dictator he had helped and who had so lately offered to join him? But Franco also had a different outlook, arising from the same causes. On August 8 the German Ambassador in Madrid informed Berlin that the Caudillo still held the same view, but that he had certain requests to make. First, the assurance that Gibraltar, French Morocco, and part of Algeria, including Oran, should be given to Spain, together with various expansions of territory in the Spanish African colonies. Adequate military and economic assistance would also be necessary, because Spain had only enough grain for eight months. Finally, Franco felt that the intervention of Spain should not take place until after the German landing in England, "in order to avoid too premature an entry into the war, and thus a duration which would be unbearable to Spain and in certain conditions a fountain of danger for the *régime*". At the same time Franco wrote to Mussolini recapitulating Spanish claims and asking for his support. Mussolini replied on August 25 by urging the Caudillo "not to cut himself off from the history of Europe". Hitler was embarrassed by the size of the Spanish claims, some of which would embroil

him anew with Vichy. The taking of Oran from France would almost certainly lead to the setting up of a hostile French Government in North Africa. He balanced the issue

Meanwhile the days were passing. During September Great Britain seemed to be holding her own against the German air offensive The transfer of the fifty American destroyers made a profound impression throughout Europe, and to Spain it seemed that the United States was moving nearer to the war. Franco and his Spaniards therefore pursued the policy of raising and defining their claims and making it clear that these must be agreed in advance Supplies also must be provided, particularly a number of 15-inch howitzers for the Spanish batteries facing Gibraltar Meanwhile they paid the Germans in small coin. All the Spanish newspapers were Anglophobe German agents were allowed to flaunt themselves all over Madrid As the Spanish Foreign Minister, Beigbeder, was suspected of lack of enthusiasm for Germany, a special envoy, Serrano Suñer, head of the Falange, was sent on a formal visit to Berlin to smooth things over and preserve a sense of comradeship Hitler harangued him at length, dwelling on the Spanish prejudices against the United States The war, he suggested, might well turn into a war of continents —America against Europe. The islands off West Africa must be made secure. Later in the day Ribbentrop asked for a military base for Germany in the Canaries Suñer, the pro-German and Falangist, refused even to discuss this, but dwelt incessantly upon Spanish needs for modern weapons and food and petrol, and for the satisfaction of her territorial demands at the expense of France. All this was necessary before Spain could realise her hopes of entering the war.

Ribbentrop went to Rome on September 19 to report and confer. He said that the Fuehrer thought the British attitude was "dictated by desperation, and also a complete failure to understand realities, as well as the hope of intervention by the Russians and the Americans". Mussolini observed that "the United States are for all practical purposes at the side of England" The sale of the fifty destroyers proved this He advised an alliance with Japan to paralyse American action "Although the American Navy can be considered large in the quantitative sense, it must be regarded as a dilettante organisation, like the British Army " The Duce continued "There remains the problem of Yugoslavia

and Greece. Italy has half a million men on the Yugoslav frontier, and two hundred thousand on the Greek frontier. The Greeks represent for Italy what the Norwegians represented for Germany before the action of April It is necessary for us to proceed with the liquidation of Greece, all the more so as when our land forces will have advanced into Egypt the English Fleet will not be able to remain at Alexandria, and will seek refuge in Greek ports."

At this point they both agreed that the principal object was to defeat England The only question was, how? "Either the war," said Mussolini, "will finish before the spring or be protracted into next year." The second alternative now seemed to him the more probable, and the Spanish card must be played in the most effective way. Ribbentrop affirmed that a declaration of war by Spain following upon the alliance with Japan would be a new and formidable blow for England. But Suñer had not fixed any date.

* * * * *

While the Spaniards became less ardent and more acquisitive Hitler felt an increased desire for their help As early as August 15 General Jodl had pointed out that there were other means besides direct invasion by which England could be defeated, namely, prolonged air warfare, the stepping up of U-boat warfare, the capture of Egypt and the capture of Gibraltar Hitler was strongly in favour of the assault on Gibraltar. But the Spanish terms were too high, and also by the end of September other ideas stirred his mind On September 27 the Tripartite Pact between Germany, Italy, and Japan was signed in Berlin. This opened wider fields

* * * * *

The Fuehrer now decided to throw his personal influence into the scale. On October 4 he met Mussolini at the Brenner Pass. He spoke of the high demands and dilatory procedure of the Spanish Government He feared that to give Spain what she asked would have two immediate consequences: an English occupation of the Spanish bases in the Canaries and the adhesion of the French Empire in North Africa to de Gaulle's movement This, he said, would force the Axis seriously to extend their own sphere of operations On the other hand, he did not exclude the possibility of having the French armed forces on his side in a

European campaign against Great Britain Mussolini dilated on his plans for the conquest of Egypt Hitler offered him special units for this attack. Mussolini did not think he needed them, at least before the final phase. On the Russian question Hitler remarked: "It is necessary to realise that my distrust of Stalin is equalled by his distrust of me." In any case, Molotov was coming in a short time to Berlin, and it would be the Fuehrer's task to direct Russian dynamism towards India

On October 23 Hitler went all the way to the Franco-Spanish frontier at Hendaye to meet the Spanish dictator. Here the Spaniards, instead of being flattered by his condescension, demanded, according to Hitler's account to Mussolini, "objectives absolutely out of proportion to their strength" Spain demanded rectifications of the Pyrenees frontier, the cession of French Catalonia (French territory, once historically linked with Spain, but actually *north* of the Pyrenees), of Algeria from Oran to Cape Blanco, and virtually the whole of Morocco The conversations, conducted through interpreters, lasted nine hours. They produced only a vague protocol and an arrangement for military conversations. "Rather than go through it again," Hitler told Mussolini later at Florence, "I would prefer to have three or four of my teeth out."*

On the way back from Hendaye the Fuehrer summoned Marshal Pétain to meet him at Montoire, near Tours This interview had been prepared by Laval, who two days earlier had met Ribbentrop, and to his surprise Hitler, at this very place. Hitler and Laval both hoped to rally France to the defeat of Britain. The Marshal and most of his circle were at first shocked at this. But Laval portrayed the proposed meeting in glowing terms. When asked whether Hitler had initiated the idea, or whether it had been suggested to him, Laval replied "What do you take him for? Do you think that Hitler needs a nurse? He has his own ideas, that man He wants to see the Marshal. Besides, he has a great respect for him. This interview between the heads of the two States will be an historic event In any case, something very different from a luncheon at Chequers "† Pétain was converted to the plan He thought that his personal prestige might weigh with Hitler, and that it was worth while giving him the

* Ciano, *Diplomatic Papers*, p 402

† Du Moulin de Labarthète, *Le Temps des Illusions*, pp 43-4.

impression that France would not be unwilling to "collaborate". At ease in the West, Hitler might turn his thoughts and armies eastwards

The meeting took place in Hitler's armoured train, near a tunnel, on the afternoon of October 24. "I am happy," said the Fuehrer, "to shake hands with a Frenchman who is not responsible for this war."

Little more than shameful civilities resulted. The Marshal regretted that close relations had not been developed between France and Germany before the war. Perhaps it was not yet too late Hitler pointed out that France had provoked the war and was defeated But his aim now was to crush England. Before the United States could help her effectively, Britain would be occupied or else reduced to a heap of ruins. His object was to end the war as quickly as possible, for there was no business less profitable than war All Europe would have to pay the cost, and so all Europe had the same interest To what extent would France help? Pétain conceded the principle of collaboration, but pleaded that he could not define its limits. A *procès-verbal* was drawn up by which, "in accord with the Duce, the Fuehrer manifested his determination to see France occupy in the New Europe the place to which she is entitled". The Axis Powers and France had an identical interest in seeing the defeat of England accomplished as soon as possible. Consequently the French Government would support, within the limits of its ability, the measures which the Axis Powers might take for defence. Questions of detail would be settled by the armistice commission in concert with the French delegation The Axis Powers would undertake that at the conclusion of peace with England France would retain in Africa a colonial domain "essentially equivalent to what she possessed at the moment".

According to the German record, Hitler was disappointed. Even Laval had begged him not to press France to make war against Britain before French opinion was duly prepared. Hitler afterwards spoke of Laval as "a dirty little democratic politico", but he carried away a more favourable impression of Marshal Pétain The Marshal however is reported to have said, when he got back to Vichy "It will take six months to discuss this programme, and another six months to forget it" But the infamous transaction is not forgotten yet in France.

In October I had telegraphed to our Ambassador in Madrid:

Prime Minister to Sir Samuel Hoare 19 X 40

We admire the way in which you are dealing with your baffling task. I hope you will manage to convey to Vichy, through the French Ambassador, two root ideas. First, that we will let bygones go and work with anyone who convinces us of his resolution to defeat the common foes Secondly, that as we are fighting for our lives as well as for a victory which will relieve simultaneously all the captive States, we shall stop at nothing Try to make Vichy feel what we here all take for certain, namely, that we have got Hitler beat, and though he may ravage the Continent and the war may last a long time his doom is certain. It passes my comprehension why no French leaders secede to Africa, where they would have an empire, the command of the seas, and all the frozen French gold in the United States. If this had been done at the beginning we might well have knocked out Italy by now. But surely the opportunity is the most splendid ever offered to daring men Naturally one would not expect precise responses to such suggestions, but try to put it into their heads if you see any opening.

The various reports which we received of Montoire did not alter my general view of what our attitude towards Vichy should be. Now in November I expressed my views to my colleagues in a memorandum.

14.XI.40

Although revenge has no part in politics, and we should always be looking forward rather than looking back, it would be a mistake to suppose that a solution of our difficulties with Vichy will be reached by a policy of mere conciliation and forgiveness. The Vichy Government is under heavy pressure from Germany, and there is nothing that they would like better than to feel a nice, soft, cosy, forgiving England on their other side. This would enable them to win minor favours from Germany at our expense, and hang on as long as possible to see how the war goes. We, on the contrary, should not hesitate, when our interests require it, to confront them with difficult and rough situations, and make them feel that *we* have teeth as well as Hitler

It must be remembered that these men have committed acts of baseness on a scale which has earned them the lasting contempt of the world, *and that they have done this without the slightest authority from the French people.* Laval is certainly filled by the bitterest hatred of England, and is reported to have said that he would like to see us "*écrabouillés*", which means squashed so as to leave only a grease-spot. Undoubtedly, if he had had the power, he would have marketed the

unexpected British resistance with his German masters to secure a better price for French help in finishing us off. Darlan is mortally envenomed by the injury we have done to his fleet. Pétain has always been an anti-British defeatist, and is now a dotard. The idea that we can build on such men is vain. They may however be forced by rising opinion in France and by German severities to change their line in our favour. Certainly we should have contacts with them. But in order to promote such favourable tendencies we must make sure the Vichy folk are kept well ground between the upper and nether millstones of Germany and Britain. In this way they are most likely to be brought into a more serviceable mood during the short run which remains to them.

* * * * *

Marshal Pétain became increasingly resentful of Laval's prodding him along the road which would lead to war with Britain and German occupation of the North African colonies. On December 13 Laval arrived at Vichy with the proposal that Pétain should come to Paris to be present at the ceremonial transfer of the ashes of Napoleon's son, the Duke of Reichstadt ("*l'Aiglon*"), to the Invalides. This was Hitler's flowery idea of a solemn consecration of the *entente* reached at Montoire.

Pétain was not however attracted by a parade where the victor of Verdun would be exhibited on French soil with German guards of honour before the tomb of the Emperor Napoleon. He was moreover both wearied and fearful of Laval's methods and aims. Members of Pétain's staff therefore arranged the arrest of Laval. Energetic German intervention procured his release, but Pétain refused to accept him back as Minister. Laval retired in wrath to German-occupied Paris. I was glad that M. Flandin took his place as Foreign Minister. These events marked a change at Vichy. It seemed that the limits of collaboration had at last been reached. There were at this moment hopes of better French relations with Britain and of more sympathetic understanding for Vichy from the United States.

* * * * *

It is convenient to carry the Spanish story forward at this point. Franco, now convinced of a long war and of the Spanish abhorrence of any more war, and by no means sure of a German victory, used every device of exasperating delay and exorbitant demands. He was by this time so sure of Suñer that on October 18

he made him Foreign Minister, representing the removal of Beigbeder as a proof of his devotion to the Axis In November Suñer was summoned to Berchtesgaden, and Hitler expressed his impatience with Spain's delay in coming into the war. By now the Battle of Britain had been lost by the German Air Force. Italy was already involved in Greece and in North Africa. Serrano Suñer did not respond as was wished. He dwelt lengthily instead upon the economic difficulties of the Peninsula Three weeks later Admiral Canaris, Chief of the German Secret Service, was sent to Madrid to arrange the details of Spain's entry into the war He suggested that the German troops should pass the Spanish frontier on January 10, in preparation for an attack on Gibraltar on January 30. The Admiral was surprised when Franco told him that it was impossible for Spain to enter the war on the date mentioned It seemed that the Caudillo feared the loss of Atlantic islands and Spanish colonies to the British Navy. He also emphasised the lack of food and the inability of Spain to stand a protracted war. As the German landing in England seemed indefinitely postponed Franco introduced a new condition He would not move at any rate *until Suez was in Axis hands*, since not till then would he feel sure that Spain would not be involved in long-drawn-out hostilities

On February 6, 1941, Hitler wrote a letter to Franco, appealing in strong and urgent terms that he should play the man without further delay. Franco replied, expressing his undying loyalty He urged that preparations for the attack on Gibraltar should be continued with renewed vigour As another new point he declared that only Spanish troops with German equipment must be used for this enterprise Even if all this was arranged, Spain could not enter the war for economic reasons. Ribbentrop thereupon reported to the Fuehrer that Franco had no intention of making war Hitler was scandalised, but, being now set upon the invasion of Russia, he did not perhaps like the idea of trying Napoleon's other unsuccessful enterprise, the invasion of Spain, at the same time. Considerable Spanish forces were now gathered along the Pyrenees, and he felt it was wiser to stick to his method with nations, "One by One". Thus by subtlety and trickery and blandishments of all kinds Franco succeeded in tiding things over and keeping Spain out of the war, to the inestimable advantage of Britain when she was all alone.

We could not count upon this at the time, and I urged the President to do all in his power to help forward the policy of conciliation

Former Naval Person to President Roosevelt 23 XI 40

Our accounts show that situation in Spain is deteriorating and that the Peninsula is not far from starvation point An offer by you of food month by month so long as they keep out of the war might be decisive Small things do not count now, and this is a time for very plain talk to them. The occupation by Germany of both sides of the Straits would be a grievous addition to our naval strain, already severe. The Germans would soon have batteries working by Radar [*i.e* , they could aim in the darkness], which would close the Straits both by night and day With a major campaign developing in the Eastern Mediterranean and the need to reinforce and supply our armies there all round the Cape, we could not contemplate any military action on the mainland at or near the Straits The Rock of Gibraltar will stand a long siege, but what is the good of that if we cannot use the harbour or pass the Straits? Once in Morocco the Germans will work southwards, and U-boats and aircraft will soon be operating freely from Casablanca and Dakar I need not, Mr President, enlarge upon the trouble this will cause to us, or the approach of trouble to the Western Hemisphere We must gain as much time as possible

This great danger had in fact passed away, and, though we did not know it, it passed for ever. It is fashionable at the present time to dwell on the vices of General Franco, and I am therefore glad to place on record this testimony to the duplicity and ingratitude of his dealings with Hitler and Mussolini I shall presently record even greater services which these evil qualities in General Franco rendered to the Allied cause

CHAPTER XXVII

MUSSOLINI ATTACKS GREECE

October–November 1940

Mussolini's Decision to Attack Greece – His Letter to Hitler of October 19 – The Florence Conference – The Italian Invasion of Greece, October 28, 1940 – Reinforcement of Admiral Cunningham's Fleet – The Arrival of the "Illustrious" – Our Obligations – Importance of Crete – Air Support for Greece – Minute to Chief of the Air Staff, November 2, 1940 – Wavell-Wilson Plans for an Offensive in Libya – Secrecy Causes Misunderstanding – Further Telegrams to Mr Eden – Greek Need for the Cretan Division – Mr. Eden's Latest Telegrams – His Return – He Unfolds Operation "Compass" – General Agreement – War Cabinet Approves – The Fleet Air Arm Attack the Italian Fleet – Gallant Exploit at Taranto – Half the Italian Fleet Disabled for Six Months – Naval Dispositions – My Desire for an Amphibious Feature in "Compass" – My Telegram to Wavell of November 26 – Policy towards Turkey – An Improved Situation – Shortcomings at Suda Bay – The Abortive Italian Invasion of Greece from Albania – Death of Mr. Chamberlain – A Tribute to His Memory.

A *FRESH* though not entirely unexpected outrage by Mussolini, with baffling problems and far-reaching consequences to all our harassed affairs, now broke upon the Mediterranean scene.

The Duce took the final decision to attack Greece on October 15, 1940. That morning a meeting of the Italian war leaders was held in the Palazzo Venezia. He opened the proceedings in the following words

> The object of this meeting is to define the course of action—in general terms—which I have decided to initiate against Greece. In the first instance, this action will have aims of both a maritime and territorial character The territorial aims will be based on the possession

of the whole coast of Southern Albania . . . and the Ionian islands—Zante, Cephalonia, and Corfu—and the occupation of Salonika When we have attained these objectives we shall have improved our position *vis-à-vis* England in the Mediterranean. In the second instance . . . the complete occupation of Greece, in order to put her out of action and to assure that in all circumstances she will remain in our politic-economic sphere

Having thus defined the question, I have laid down the date—which in my opinion must not be postponed even for an hour—and that is for the 26th of this month This is an action which I have matured at length for months, before our entry into the war and before the beginning of the conflict . . I would add that I foresee no complications in the north. Yugoslavia has every interest to keep quiet. . I also exclude complications from the side of Turkey, particularly since Germany has established herself in Roumania and since Bulgaria has increased her strength The latter can play a part in our game, and I shall take the necessary steps so as not to miss the present unique opportunity for achieving her aspirations in Macedonia and for an outlet to the sea. . .*

On October 19 Mussolini wrote to Hitler telling him of the decision to which he had come. Hitler was then on his journey to Hendaye and Montoire. The letter (the text of which has not come to light) seems to have followed him round. When it finally reached him he at once proposed to Mussolini a meeting to discuss the general political situation in Europe This meeting took place in Florence on October 28. That morning the Italian attack on Greece had begun.

It seems however that Hitler did not choose to make an issue of the Greek adventure. He said politely that Germany was in accord with the Italian action in Greece, and then proceeded to tell the tale of his meetings with Franco and Pétain. There can be no doubt that he did not like what had been done by his associate A few weeks later, after the Italian attack was checked, he wrote to Mussolini in his letter of November 20 "When I asked you to receive me at Florence I began the journey with the hope of being able to expound my views *before* the threatened action against Greece had been taken, about which I had heard only in general terms." In the main however he accepted the decision of his ally.

* * * * *

* *Hitler and Mussolini Letters and Documents*, p 61

Before dawn on October 28 the Italian Minister in Athens presented an ultimatum to General Metaxas, the Premier of Greece Mussolini demanded that the whole of Greece should be opened to Italian troops. At the same time the Italian army in Albania invaded Greece at various points. The Greek Government, whose forces were by no means unready on the frontier, rejected the ultimatum. They also invoked the guarantee given by Mr. Chamberlain on April 13, 1939 This we were bound to honour By the advice of the War Cabinet, and from his own heart, His Majesty replied to the King of the Hellenes: "Your cause is our cause, we shall be fighting against a common foe." I responded to the appeal of General Metaxas "We will give you all the help in our power We will fight a common foe and we will share a united victory." This undertaking was during a long story made good.

* * * * *

Although we were still heavily outnumbered on paper by the Italian Fleet, marked improvements had been made in our Mediterranean strength. During September the *Valiant*, the armoured-deck aircraft-carrier *Illustrious*, and two A.A. cruisers had come safely through the Mediterranean to join Admiral Cunningham at Alexandria. Hitherto his ships had always been observed and usually bombed by the greatly superior Italian Air Force. The *Illustrious*, with her modern fighters and latest Radar equipment, by striking down patrols and assailants gave a new secrecy to the movements of our Fleet. This advantage was timely Apart from a few air squadrons, a British mission, and perhaps some token troops, we had nothing to give, and even these trifles were a painful subtraction from ardent projects already lighting in the Libyan theatre. One salient strategic fact leaped out upon us—CRETE! The Italians must not have it. We must get it first—and at once. It was fortunate that at this moment Mr Eden was in the Middle East, and that I thus had a ministerial colleague on the spot with whom to deal. He was about to return home after his conference with General Smuts at Khartoum I telegraphed to him:

29 X 40

I recognise importance of your conference with Smuts, but hope first Wavell, and thereafter you, will return at earliest to Cairo

We here are all convinced an effort should be made to establish

ourselves in Crete, and that risks should be run for this valuable prize. You will have seen the Service telegrams on this subject.

Prime Minister to Mr Eden (at Khartoum) 29 X 40

It seems of prime importance to hold the best airfield possible and a naval fuelling base at Suda Bay. Successful defence of Crete is invaluable aid to defence of Egypt Loss of Crete to the Italians would be a grievous aggravation of all Mediterranean difficulties So great a prize is worth the risk, and almost equal to a successful offensive in Libya. Pray after an examination of whole problem with Wavell and Smuts, do not hesitate to make proposals for action on large scale at expense of other sectors, and ask for any further aid you require from here, including aircraft and anti-aircraft batteries We are studying how to meet your need Consider your return to Cairo indispensable.

At the invitation of the Greek Government, Suda Bay, the best harbour in Crete, was occupied by our forces two days later.

Prime Minister to C I G S. 30.X.40

What steps are we taking to get news from the Greek front? Have we observers there? What is our attaché there doing?

Why do you not send one of your generals from Egypt at the head of a military mission to be at the headquarters of the Greek Field Army? Let them go and see the fighting and give us some close-up information about the relative merits of the two armies I expect to have a good wire every day or so, telling us exactly what is happening, as far as the Greeks will allow it.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S Committee 30.X 40

There is no objection to two battalions going to Freetown, pending their relief by the West African Brigade, after which they can go on to Egypt They are not to leave England until it is agreed that the West African Brigade is to go to West Africa.

Both Crete and Malta come before Freetown in A A. guns, and I cannot approve of this diversion at the present time Neither can I agree to the diversion of a fighter squadron [for Freetown] at this stage The Navy is responsible for preventing any sea-borne expedition attacking our West African colonies As to the air attack, if the French bomb Freetown or Bathurst we will bomb Vichy. I do not think this will happen

*Prime Minister to Air Vice-Marshal Longmore** 1.XI.40

[In dispatching a Blenheim squadron to Greece] you have taken a very bold and wise decision I hope to reinforce you as soon as possible.

* Commander-in-Chief Air Forces, Middle East

Prime Minister to General Ismay, for C.A S. and for C O S. Committee 1.XI.40

I should propose to make immediate arrangements to send four additional heavy bomber squadrons (including the one already sent to Malta) to the Middle East at once, and also four Hurricane fighter squadrons. Let me see plans for this movement. I should like to have a report on this to-day.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 1 XI.40

Mr. Eden has asked for ten thousand rifles for the Middle East. Can we not supply these out of the American packet, or is there any small parcel of rifles anywhere in the world to be picked up?

Prime Minister to C.A.S 2 XI 40

1. I had in mind that the four bomber squadrons would fly to Crete or Greece via Malta. The personnel and ground stores would have to be carried through by cruiser. It is essential to have these squadrons operating at the earliest from bases in Greek territory upon the Italian fleet at Taranto, and generally against Southern Italy. For so vital an operation of war the Navy would have to make special exertions, and you should not assume that a ship will not be forthcoming, at any rate for such ground personnel, stores, etc., as are necessary to come into action at this very critical time. I see more difficulty in the vehicles, but perhaps some could come from Egypt, and the rest be improvised

2. The fighters are, of course, more difficult, but I should hope that they could fly from a carrier to Malta, as was done last time. If necessary, the *Furious* would have to help the *Ark Royal*. Could they fly from Malta to an aerodrome in Greece? If not, could they fly on to a carrier to refuel, and thence to Greece? In the case of the fighters the same arrangements would have to be made about stores, ground personnel, etc., as with the bombers

Prime Minister to Mr Eden (at G H.Q , Middle East) 2.XI.40

Greek situation must be held to dominate others now We are well aware of our slender resources. Aid to Greece must be attentively studied lest whole Turkish position is lost through proof that England never tries to keep her guarantees. I invite you to stay in Cairo for at least another week while these questions are being studied and we make sure we have done our best from both ends Meanwhile another thirty thousand men are reaching you by November 15, which must affect local situation in Egypt.

During Mr. Eden's earlier conferences and talks with General Wavell and also with General Wilson he posed the question, what action was intended if the Italian offensive did not develop. He

was told in extreme secrecy that a plan was being made to attack the Italians in the Western Desert instead of waiting for them to open their offensive against Mersa Matruh. Neither he nor Wavell imparted these ideas to me or to the Chiefs of Staff. General Wavell begged the Secretary of State for War not to send any telegram on this subject, but to tell us verbally about it when he got home. Thus for some weeks we remained without knowledge of the way their minds were moving. It is clear from my message of October 26 that any forestalling operation on a large scale in the Western Desert would command my keen support. We were all however until Mr Eden's return left under the impression that Wavell and Wilson were still wedded to the defensive battle at Mersa Matruh, and would wait there until they were attacked. The only action they seemed to contemplate in this extremely serious crisis was to send a battalion or so to Crete, a few air squadrons to Greece, and make some minor diversions against the Dodecanese and a small though desirable offensive in the Soudan. This seemed by no means good enough employment for the very large forces with which at great risk, exertion, and cost we had furnished them.

Our correspondence during this period was thus on both sides based upon misunderstanding. Wavell and the Secretary of State thought that for the sake of giving ineffectual aid to Greece we were pressing them to dissipate the forces they were gathering for an offensive in the Western Desert. We, on the other hand, not crediting them with offensive intentions, objected to their standing idle or trifling at such a crucial moment. In fact, as will presently be seen, we were all agreed. On November 1, indeed, Mr. Eden telegraphed cryptically:

We cannot from Middle East forces send sufficient air or land reinforcements to have any decisive influence upon course of fighting in Greece. To send such forces from here, or to divert reinforcements now on their way or approved, would imperil our whole position in the Middle East *and jeopardise plans for an offensive operation now being laid in more than one theatre*.* After much painful effort and at the cost of grave risks we have, so far as our land forces are concerned, now built up a reasonably adequate *defensive** force here. We should presently be in a position to undertake certain offensive operations which if successful may have far-reaching effects on the course of the war as a

* Author's italics

whole. It would surely be bad strategy to allow ourselves to be diverted from this task, and unwise to employ our forces in fragments in a theatre of war where they cannot be decisive. . . . The best way in which we can help Greece is by striking at Italy, and we can do that most effectively from areas where our strength has been developed and where our plans are laid I am anxious to put before you in detail at the earliest date the dispositions and plans which have been worked out here, and propose . . to return home by the shortest route, leaving on the 3rd .

This telegram crossed one from me to him at Khartoum which afterwards had to be repeated back to Cairo, whither he had repaired.

Prime Minister to Mr Eden (at G H Q , Middle East) 3.XI 40

Gravity and consequence of Greek situation compels your presence in Cairo. However unjust it may be, collapse of Greece without any effort by us will have deadly effect on Turkey and on future of war. . . . The Germans are not yet on the spot Establishment of fuelling base and airfield in Crete to be steadily developed into permanent war fortresses [is] indispensable. This is being done. But surely effort must be made to aid Greece directly even if only with token forces Quite understand how everyone with you is fixed on idea of set-piece battle at Mersa Matruh For that very reason it is unlikely to occur Enemy will await completion pipe-line and development of larger forces than are now concentrated Your difficulties in attacking across the desert obvious, but if you have no major offensive of your own in Libya possible during next two months then you should run risks to stimulate Greek resistance Over seventy thousand men sent to Middle East Command since June and thirty thousand reaching you before November 15, fifty-three thousand by end of the year Armoured regiments have started in big convoy yesterday Cannot therefore believe that various minor offensives of which you speak, plus major defence at Mersa Matruh, will outvalue need of effective action in Greece

No one will thank us for sitting tight in Egypt with ever-growing forces while Greek situation and all that hangs on it is cast away Loss of Athens far greater injury than Kenya and Khartoum, but no necessity for such a price to be paid Read carefully Palairet's [our Minister in Athens] telegrams New emergencies must be met in war as they come, and local views must not subjugate main issue No one expected Italy so late in the year would attack Greece Greece, resisting vigorously, with reasonable aid from Egypt and England, might check invaders I am trying to send substantial bomber and fighter reinforcements to

Crete and Greece, flying from England, with stores by cruiser. If this proves feasible details will be cabled to-morrow or Monday. Trust you will grasp situation firmly, abandoning negative and passive policies and seizing opportunity which has come into our hands. "Safety first" is the road to ruin in war, even if you had the safety, which you have not Send me your proposals earliest, or say you have none to make

And again:

4.XI 40

We are sending you air reinforcements, arriving as fully explained in accompanying message from Chiefs of Staff Send at once to Greece one Gladiator squadron and two more Blenheim squadrons, three in all If necessary send a second battalion to Crete Agreeably with arrival of our air reinforcements aforesaid and at earliest send one more Gladiator squadron. A A guns for airfields in Greece should precede arrival of squadrons.

It was proposed at this time to ask the Greeks to keep their Cretan division in the island. I therefore minuted:

Prime Minister to C I G S. 6 XI 40

It will be difficult to deny the Greeks the use of this Cretan division If that be so, we shall certainly have to put more troops on the island It is important that there should be a certain number of troops, and that it should be thought by the enemy that we are landing considerable numbers. The area to be watched is very extensive, and the consequences of a counter-attack would be most disastrous.

Pray let me know your views.

Prime Minister to C I G.S. 7.XI 40

We shall render poor service to Greece if in consequence of our using Crete for our own purposes we deny them the use of two-thirds of their 5th Division The defence of Crete depends on the Navy, but nevertheless there must be a certain deterrent force of troops on shore I doubt if the two battalions of British and the three remaining Greek battalions will be sufficient I am much obliged to you for telegraphing as I asked to General Wavell He must provide in meal or in malt:

(*a*) Three or four thousand additional British troops and a dozen guns. These need not be fully equipped or mobile

(*b*) He must do this from forces which he will not be using in the possibly impending battle.

(*c*) We must tell the Greeks we release [for service with their main army] the six battalions and the artillery of the 5th Greek Division

Every effort should be made to rush arms or equipment to enable a

reserve division of Greeks to be formed in Crete Rifles and machine-guns are quite sufficient in this case To keep a Greek division out of the battle on the Epirus front would be very bad, and to lose Crete because we had not sufficient bulk of forces there would be a crime.

It was time Mr. Eden should come home to report to us as he earnestly desired The following telegrams are self-explanatory.

Mr Eden to Prime Minister 3 XI 40

All strongly of the opinion I should return home as rapidly as possible in order to put whole position as seen from here before you Earnestly hope you will agree to this Propose to leave to-morrow morning Perfectly prepared to fly back here if required after I have seen you, but am convinced that this meeting between us is most urgent It is impossible to explain position and plans fully by telegram

Please reply urgently

Assent was given, and the Secretary of State began his journey The following points were made in his simultaneous telegrams to me:

Conference in Cairo discussed situation in Crete. Admiral Cunningham emphasised the value of possession of Crete to us as a means of securing Eastern Mediterranean and of interfering with Italian transit traffic to North Africa It would not however be possible to base fleet on Suda Bay for more than a few hours at a time at present owing to lack of anti-submarine protection

He does not consider Italian attempt to take Crete is to be anticipated in the near future, nor unless and until Greece is overrun. He and Wavell have concerted arrangements for sending at once to Crete a part of the reinforcements referred to in my telegram of November 1 Admiral Cunningham does not consider it is necessary to keep any large British military garrison in Crete, and is convinced that once the Cretans are organised, one battalion, together with A A. defences, would suffice We then discussed the general question of help to Greece As we said on September 22, "any assistance we may be able to give to Greece cannot be given until German-Italian threat to Egypt is finally liquidated, the security of Egypt being vital to our strategy and incidentally to the future of Greece . ."

Chief cry for help is for air reinforcements No. 30 Blenheim Squadron left to-day for Athens Longmore again emphasised his extreme reluctance to add any more squadrons to the Greek commitment in present conditions He feels that to do so would lead to a large wastage of his aircraft from Italian attack whilst the aircraft are on

Greek or Cretan aerodromes unprepared with protecting pens, adequate ground A A. defence, and other precautions of such nature, which are difficult to improvise at short notice . . In general all Commanders-in-Chief were strongly of the opinion that the defence of Egypt is of paramount importance to our whole position in the Middle East. They consider that from the strategical point of view the security of Egypt is the most urgent commitment, and must take precedence of attempts to prevent Greece being overrun It is also essential if we are to retain the support of Turkey . .

Mr. Eden added in my private cipher the following:

5.XI.40

Although reinforcements ordered in Chiefs of Staff's telegrams involve additional risks in Western Desert and probably increased casualties, these risks must be faced in view of political commitments to aid Greece. Withdrawal, though it will hamper arrangements made in Western Desert, will not entirely dislocate them But any increase in commitment or attempt to hasten rate of dispatch to Greece beyond that now laid down will mean serious risk to our position in Egypt Uncertain factor still remains date by which air reinforcements, particularly fighters, arrive in Egypt to replace those sent to Greece Experience hitherto shows that previous forecasts have not been fulfilled and time-table is sadly behind Now feel that there is nothing further I can do here, and propose leave to-morrow morning by air.

* * * * *

The Secretary of State for War got back home on November 8, and came that evening after the usual raid had begun to see me in my temporary underground abode in Piccadilly He brought with him the carefully-guarded secret which I wished I had known earlier. Nevertheless no harm had been done. Mr. Eden unfolded in considerable detail to a select circle, including the C I G.S. and General Ismay, the offensive plan which General Wavell and General Wilson had conceived and prepared No longer were we to await in our fortified lines at Mersa Matruh an Italian assault, for which defensive battle such long and artful preparations had been made. On the contrary, within a month or so we were ourselves to attack The operation was to be called "Compass".

As will be seen from the map,* Marshal Graziani's Italian army, now above eighty thousand strong, which had crossed the Egyptian frontier, was spread over a fifty-mile front in a series of fortified

* On page 545

camps, which were separated by wide distances and not mutually supporting, and with no depth in the system. Between the enemy's right flank at Sofafi and his next camp at Nibeiwa there was a gap of over twenty miles. The plan was to make an offensive spring through this gap, and, turning towards the sea, attack Nibeiwa camp and the Tummar group of camps in succession from the west—that is to say, from the rear. Meanwhile both the Sofafi camps and the camp at Meiktila, on the coast, were to be contained by light forces. For this purpose there were to be employed the 7th Armoured Division, the 4th Indian Division, now complete, and the 16th British Infantry Brigade, together with a composite force from the garrison of Mersa Matruh. This plan involved a serious risk, but also offered a glittering prize. The risk lay in the launching of all our best troops into the heart of the enemy's position by a move of seventy miles on two successive nights over the open desert, and with the peril of being observed and attacked from the air during the intervening day Besides this, the food and petrol had to be nicely calculated, and if the time-scale went wrong the consequences must be grave.

The prize was worthy of the hazard. The arrival of our vanguard on the sea at Buq Buq or thereabouts would cut the communications of three-quarters of Marshal Graziani's army. Attacked by surprise from the rear, they might well be forced as a result of vigorous fighting into mass surrenders In this case the Italian front would be irretrievably broken. With all their best troops captured or destroyed, no force would be left capable of withstanding a further onslaught, nor could any organised retreat be made to Tripoli along the hundreds of miles of coastal road.

Here, then, was the deadly secret which the Generals had talked over with their Secretary of State. This was what they had not wished to telegraph We were all delighted. I purred like six cats. Here was something worth doing. It was decided there and then, subject to the agreement of the Chiefs of Staff and the War Cabinet, to give immediate sanction and all possible support to this splendid enterprise, and that it should take first place in all our thoughts and have, amid so many other competing needs, first claim upon our strained resources

In due course these proposals were brought before the War

Cabinet I was ready to state the case or have it stated. But when my colleagues learned that the Generals on the spot and the Chiefs of Staff were in full agreement with me and Mr Eden, they declared that they did not wish to know the details of the plan, that the fewer who knew them the better, and that they whole-heartedly approved the general policy of the offensive. This was the attitude which the War Cabinet adopted on several important occasions, and I record it here that it may be a model, should similar dangers and difficulties arise in future times.

* * * * *

The Italian Fleet had not reacted in any way against our occupation of Crete, but Admiral Cunningham had for some time been anxious to strike a blow at them with his now augmented naval air forces as they lay in their main base at Taranto. The attack was delivered on November 11 as the climax of a well-concerted series of operations, during which Malta received troops, and further naval reinforcements, including the battleship *Barham*, two cruisers, and three destroyers, reached Alexandria. Taranto lies in the heel of Italy three hundred and twenty miles from Malta. Its magnificent harbour was heavily defended against all modern forms of attack. The arrival at Malta of some fast reconnaissance machines enabled us to discern our prey. The British plan was to fly two waves of aircraft from the *Illustrious*, the first of twelve and the second of nine, of which eleven were to carry torpedoes, and the rest either bombs or flares The *Illustrious* released her aircraft shortly after dark from a point about a hundred and seventy miles from Taranto. For an hour the battle raged amid fire and destruction among the Italian ships Despite the heavy flak only two of our aircraft were shot down The rest flew safely back to the *Illustrious*

By this single stroke the balance of naval power in the Mediterranean was decisively altered. The air photographs showed that three battleships, one of them the new *Littorio*, had been torpedoed, and in addition one cruiser was reported hit and much damage inflicted on the dockyard. Half the Italian battle fleet was disabled for at least six months, and the Fleet Air Arm could rejoice at having seized by their gallant exploit one of the rare opportunities presented to them

An ironic touch is imparted to this event by the fact that on

this very day the Italian Air Force at the express wish of Mussolini had taken part in the air attack on Great Britain. An Italian bomber force, escorted by about sixty fighters, attempted to bomb Allied convoys in the Medway. They were intercepted by our fighters, eight bombers and five fighters being shot down. This was their first and last intervention in our domestic affairs. They might have found better employment defending their fleet at Taranto.

I kept the President well informed.

Former Naval Person to President 16.XI.40

I am sure you will have been pleased about Taranto. The three uninjured Italian battleships have quitted Taranto to-day, which perhaps means they are withdrawing to Trieste.

And again:

Former Naval Person to President 21.XI.40

You may be interested to receive the following naval notes on the action at Taranto which I have asked the Admiralty to prepare:

1. This attack had been in Commander-in-Chief Mediterranean's mind for some time, he had intended to carry it out on October 21 (Trafalgar Day), when the moon was suitable, but a slight mishap to *Illustrious* led to a postponement. During his cruise in the Central Mediterranean on October 31 and November 1 it was again considered, but the moon did not serve and it was thought an attack with parachute flares would be less effective. Success in such an attack was believed to depend on state of moon, weather, an undetected approach by the Fleet, and good reconnaissance. The latter was provided by flying boats and a Glen Martin squadron working from Malta. On the night of November 11–12 all the above conditions were met. Unfavourable weather in the Gulf of Taranto prevented a repetition on 12th–13th.

2. Duplex pistols were used, and probably contributed to the success of the torpedo attack.

3. The Greek Ambassador at Angora reported on November 11 that Italian Fleet was concentrating at Taranto in preparation for an attack on Corfu. Reconnaissance on November 13 shows that undamaged battleships and 8-inch-gun cruisers have left Taranto—presumably owing to the attack on 11th–12th.

* * * * *

I now addressed General Wavell.

Prime Minister to General Wavell 14.XI 40

Chiefs of Staff, Service Ministers, and I have examined general situation in the light of recent events Italian check on Greek front; British naval success against battle fleet at Taranto, poor showing Italian airmen have made over here, encouraging reports received of low morale in Italy, Gallabat, your own experiences by contacts in Western Desert, above all, the general political situation, make it very desirable to undertake operation of which you spoke to Secretary of State for War.

It is unlikely that Germany will leave her flagging ally unsupported indefinitely Consequently it seems that now is the time to take risks and strike the Italians by land, sea, and air You should act accordingly in concert with other Commanders-in-Chief

Prime Minister to General Wavell 26 XI.40

News from every quarter must have impressed on you the importance of "Compass" in relation to whole Middle East position, including Balkans and Turkey, to French attitude in North Africa, to Spanish attitude, now trembling on the brink, to Italy, in grievous straits, and generally to the whole war Without being over-sanguine, I cannot repress strong feeling of confidence and hope, and feel convinced risks inseparable from great deeds are fully justified

Have asked Admiralty to inquire about part assigned to Fleet If success is achieved, presume you have plans for exploiting it to the full. I am having a Staff study made of possibilities open to us, if all goes well, for moving fighting troops and also reserve forward by sea in long hops along the coast, and setting up new supply bases to which pursuing armoured vehicles and units might resort Without wishing to be informed on details, I should like to be assured that all this has been weighed, explored, and as far as possible prepared

It seems difficult to believe that Hitler will not be forced to come to the rescue of his partner, and obviously German plans may be far advanced for a drive through Bulgaria at Salonika From several quarters we have reports in that Germans do not approve of Mussolini's adventure, and are inclined to let him pay the price himself This makes me all the more suspicious that something bad is banking up ready to be let off soon Every day's delay is in our favour It might be that "Compass" would in itself determine action of Yugoslavia and Turkey, and anyhow, in event of success, we should be able to give Turkey far greater assurances of early support than it has been in our power to do so far One may indeed see possibility of centre of gravity in Middle East shifting suddenly from Egypt to the Balkans, and from Cairo to Constantinople You are no doubt preparing your mind for this, and a Staff study is being made here.

As we told you the other day, we shall stand by you and Wilson in any well-conceived action irrespective of result, because no one can guarantee success in war, but only deserve it

Tell Longmore that I much admire his calling in of the southern squadrons and accepting the risk of punishment there If all is well *Furious* and her outfit should reach Takoradi to-morrow This should make amends for all the feathers we have had to pull out of him for Greece, where the part played by R A F. in Greek victories has been of immense military and political consequence All good wishes to you both, and to the Admiral, who is doing so splendidly. I rejoice to hear that he finds Suda Bay "an inestimable benefit"

Prime Minister to Foreign Secretary 26 XI 40

I suggest the following to our Ambassador in Turkey:

(*Begins*) We have placed before you the various arguments for and against Turkish intervention which have occurred to the Staff officers who have reported upon the matter, but we do not wish to leave you in any doubt of what our own opinion and your instructions are We want Turkey to come into the war as soon as possible. We are not pressing her to take any special steps to help the Greeks, except to make it clear to Bulgaria that any move by Germany through Bulgaria to attack Greece, or any hostile movement by Bulgaria against Greece, will be followed by immediate Turkish declaration of war. We should like Turkey and Yugoslavia now to consult together so as, if possible, to have a joint warning ready to offer Bulgaria and Germany at the first sign of a German movement towards Bulgaria In the event of German troops traversing Bulgaria with or without Bulgarian assistance, it is vital that Turkey should fight there and then If she does not, she will find herself left absolutely alone, the Balkans will have been eaten up one by one, and it will be beyond our power to help her You may mention that by the summer of 1941 we hope to have at least fifteen divisions operating in the Middle East, and by the end of the year nearly twenty-five We do not doubt our ability to defeat Italy in Africa.

6 p.m.—The Chiefs of Staff are in general agreement with the above.

Prime Minister to First Lord, First Sea Lord, and General Ismay, for C O S Committee

(C.A S to see) 30 XI 40

Furious should return home at once, and carry another load of aircraft and pilots as reinforcement for the Middle East Every effort should be made to put off her refit till after she has carried this force. C.A.S should say what composition of force is best

Prime Minister to General Ismay 1 XII.40

Exactly what have we got and done at Suda Bay [Crete]—*i.e.*, troops, A.A. guns, coast defence guns, lights, wireless, R.D.F., nets, mines, preparation of aerodromes, etc.?

I hope to be assured that many hundreds of Cretans are working at strengthening the defences and lengthening and improving the aerodromes.

General Ismay, for C.O.S. Committee 1.XII.40

The continued retreat of the Italians in Albania, and the reports which we have received to-day of difficulties of feeding and watering their forces in the Libyan Desert, together with other reports of aircraft being moved back to Tripoli to be safer from our attacks, combined with safe arrival at Takoradi of thirty-three Hurricanes with first-class pilots, all constitute new facts entitling us to take a more confident view of the situation, which should be communicated to General Wavell.

The enormous advantage of being able, once an enemy is on the run, to pull supplies and fighting troops forward eighty miles in a night by sea, and bring fresh troops up to the advance-guard, is very rarely offered in war. General Wavell's reply to my telegram does not seem to take any account of this, and, considering how much we have ourselves at stake, I do not think we should be doing our duty if we did not furnish him with the results of our Staff study. It is a crime to have amphibious power and leave it unused. Therefore I wish the study, if favourable, to be telegraphed. It must however be ready by the 3rd at latest.

I add the following general observation: The fact that we now have established ourselves at Suda Bay entitles us to feel much easier about Malta. While the Fleet is or may be at Suda it will be most unlikely that any large landing will be attempted at Malta, which we have already reinforced by tanks and guns from Middle East . . . . The possession of Suda Bay has made an enormous change in the Eastern Mediterranean.

The story of Suda Bay is sad. The tragedy was not reached until 1941. I believe I had as much direct control over the conduct of the war as any public man had in any country at this time. The knowledge I possessed, the fidelity and active aid of the War Cabinet, the loyalty of all my colleagues, the ever-growing efficiency of our war machine, all enabled an intense focusing of constitutional authority to be achieved. Yet how far short was the action taken by the Middle East Command of what was ordered and what we all desired! In order to appreciate the

limitations of human action, it must be remembered how much was going on in every direction at the same time. Nevertheless it remains astonishing to me that we should have failed to make Suda Bay the amphibious citadel of which all Crete was the fortress. Everything was understood and agreed, and much was done; but all was half-scale effort. We were presently to pay heavily for our shortcomings.

* * * * *

The Italian invasion of Greece from Albania was another heavy rebuff to Mussolini. The first assault was repulsed with heavy loss, and the Greeks immediately counter-attacked. In the northern (Macedonian) sector the Greeks advanced into Albania, capturing Koritza on November 22. In the central sector of the northern Pindus an Italian Alpini division was annihilated. In the coastal zone, where the Italians had at first succeeded in making deep penetrations, they hastily retreated from the Kalamas river. The Greek army, under General Papagos, showed superior skill in mountain warfare, out-manœuvring and outflanking their enemy. By the end of the year their prowess had forced the Italians thirty miles behind the Albanian frontier along the whole front. For several months twenty-seven Italian divisions were pinned in Albania by sixteen Greek divisions. The remarkable Greek resistance did much to hearten the other Balkan countries and Mussolini's prestige sank low.

* * * * *

On November 9 Mr. Neville Chamberlain died at his country home in Hampshire. I had obtained the King's permission to have him supplied with the Cabinet papers, and until a few days before the end he followed our affairs with keenness, interest, and tenacity. He met the approach of death with a steady eye. I think he died with the comfort of knowing that his country had at least turned the corner.

As soon as the House met on November 12 I paid a tribute to his character and career.

> At the lychgate we may all pass our own conduct and our own judgments under a searching review. It is not given to human beings, happily for them, for otherwise life would be intolerable, to foresee or to predict to any large extent the unfolding course of events. In one phase men seem to have been right, in another they seem to have been

wrong. Then again, a few years later, when the perspective of time has lengthened, all stands in a different setting There is a new proportion There is another scale of values History with its flickering lamp stumbles along the trail of the past, trying to reconstruct its scenes, to revive its echoes, and kindle with pale gleams the passion of former days. What is the worth of all this? The only guide to a man is his conscience, the only shield to his memory is the rectitude and sincerity of his actions It is very imprudent to walk through life without this shield, because we are so often mocked by the failure of our hopes and the upsetting of our calculations, but with this shield, however the fates may play, we march always in the ranks of honour.

Whatever else history may or may not say about these terrible, tremendous years, we can be sure that Neville Chamberlain acted with perfect sincerity according to his lights and strove to the utmost of his capacity and authority, which were powerful, to save the world from the awful, devastating struggle in which we are now engaged . . . Herr Hitler protests with frantic words and gestures that he has only desired peace What do these ravings and outpourings count for before the silence of Neville Chamberlain's tomb? Long, hard, and hazardous years lie before us, but at least we enter upon them united and with clean hearts . . .

He was, like his father and his brother Austen before him, a famous Member of the House of Commons, and we here assembled this morning, members of all parties, without a single exception, feel that we do ourselves and our country honour in saluting the memory of one whom Disraeli would have called "an English worthy".

CHAPTER XXVIII

LEND-LEASE

Roosevelt Re-elected President – British Munitions Contracts in the United States – Lord Lothian Visits Me at Ditchley – "Cash and Carry", November 1939 – British Losses of Dollars in the Twilight War – A New Era, May 1940 – I Draft My Letter of December 8, 1940, to the President – The Common Interests of Britain and the United States – Need of Forward Planning – British Recovery since June – Impending Peril on the Atlantic in 1941 – Our Shipping Losses – British and German Battleship Strength – The Menace of Japan – The Atlantic Lifeline – American Influence on Eire – My Request for Two Thousand Additional Aircraft a Month – Army Equipment – How to Pay the Bill? – Appeal to the United States – The President's Discovery. "Lend-Lease" – His Press Conference of December 17 – "Eliminate the Dollar Mark" – Lend-Lease Bill Presented to Congress – Sudden Death of Philip Lothian – I Choose Lord Halifax as his Successor – My Tribute to Lord Halifax – Mr. Eden Returns Home to the Foreign Office – Captain Margesson Secretary of State for War – Waiting for Lend-Lease – New Year Greetings to the President

ABOVE the roar and clash of arms there now loomed upon us a world-fateful event of a different order. The Presidential Election took place on November 5. In spite of the tenacity and vigour with which these four-yearly contests are conducted, and the bitter differences on domestic issues which at this time divided the two main parties, the Supreme Cause was respected by the responsible leaders, Republicans and Democrats alike. At Cleveland on November 2 Mr. Roosevelt said: "Our policy is to give all possible material aid to the nations which still resist aggression across the Atlantic and Pacific Oceans." His opponent, Mr. Wendell Willkie, declared the same day at Madison Square Garden: "All of us—Republicans, Demo-

crats, and Independents—believe in giving aid to the heroic British people. We must make available to them the products of our industry."

This larger patriotism guarded both the safety of the American Union and our life. Still, it was with profound anxiety that I awaited the result. No new-comer into power could possess or soon acquire the knowledge and experience of Franklin Roosevelt. None could equal his commanding gifts. My own relations with him had been most carefully fostered by me, and seemed already to have reached a degree of confidence and friendship which was a vital factor in all my thought. To close the slowly-built-up comradeship, to break the continuity of all our discussions, to begin again with a new mind and personality, seemed to me a repellent prospect. Since Dunkirk I had not been conscious of the same sense of strain. It was with indescribable relief that I received the news that President Roosevelt had been re-elected

Former Naval Person to President Roosevelt 6 XI 40

I did not think it right for me as a foreigner to express any opinion upon American politics while the election was on, but now I feel you will not mind my saying that I prayed for your success and that I am truly thankful for it This does not mean that I seek or wish for anything more than the full, fair, and free play of your mind upon the world issues now at stake in which our two nations have to discharge their respective duties We are entering upon a sombre phase of what must evidently be a protracted and broadening war, and I look forward to being able to interchange my thoughts with you in all that confidence and goodwill which has grown up between us since I went to the Admiralty at the outbreak Things are afoot which will be remembered as long as the English language is spoken in any quarter of the globe, and in expressing the comfort I feel that the people of the United States have once again cast these great burdens upon you I must avow my sure faith that the lights by which we steer will bring us all safely to anchor

Curiously enough, I never received any answer to this telegram. It may well have been engulfed in the vast mass of congratulatory messages which were swept aside by urgent work.

Up till this time we had placed our orders for munitions in the United States separately from, though in consultation with, the American Army, Navy, and Air Services. The ever-increas-

ing volume of our several needs had led to overlapping at numerous points, with possibilities of friction arising at lower levels in spite of general goodwill. "Only a single, unified Government procurement policy for all defence purposes", writes Mr. Stettinius,* "could do the tremendous job that was now ahead." This meant that the United States Government should place all the orders for weapons in America. Three days after his re-election the President publicly announced a "rule of thumb" for the division of American arms output. As weapons came off the production line they were to be divided roughly fifty-fifty between the United States forces and the British and Canadian forces. That same day the Priorities Board approved a British request to order twelve thousand more aeroplanes in the United States in addition to the eleven thousand we had already booked. But how was all this to be paid for?

* * * * *

In mid-November Lord Lothian, who had recently flown home from Washington, spent two days with me at Ditchley. I had been advised not to make a habit of staying at Chequers every week-end, especially when the moon was full, in case the enemy should pay me special attention. Mr. Ronald Tree and his wife made me and my staff very welcome many times at their large and charming house near Oxford. Ditchley is only four or five miles away from Blenheim. In these agreeable surroundings I received the Ambassador. Lothian seemed to me a changed man. In all the years I had known him he had given me the impression of high intellectual and aristocratic detachment from vulgar affairs. Airy, viewy, aloof, dignified, censorious, yet in a light and gay manner, he had always been good company. Now, under the same hammer that smote upon us all, I found an earnest, deeply-stirred man. He was primed with every aspect and detail of the American attitude. He had won nothing but goodwill and confidence in Washington by his handling of the Destroyer-cum-Bases negotiations. He was fresh from intimate contact with the President, with whom he had established a warm personal friendship. His mind was now set upon the Dollar Problem; this was grim indeed.

Before the war the United States was governed by the Neu-

*Stettinius, *Lend-Lease*, p. 62.

trality Act, which obliged the President on September 3, 1939, to place an embargo on all shipments of arms to any of the belligerent nations. Ten days later he had called Congress to a special session to consider the removal of this ban, which, under the appearance of impartiality, virtually deprived Great Britain and France of all the advantages of the command of the seas in the transport of munitions and supplies. It was not until the end of November 1939, after many weeks of discussion and agitation, that the Neutrality Act was repealed and the new principle of "Cash and Carry" substituted. This still preserved the appearance of strict neutrality on the part of the United States, for Americans were as free to sell weapons to Germany as to the Allies. In fact, however, our sea-power prevented any German traffic, while Britain and France could "Carry" freely as long as they had "Cash". Three days after the passage of the new law our Purchasing Commission, headed by Mr Arthur Purvis, a man of outstanding ability, began its work

* * * * *

Britain entered the war with about 4,500 millions in dollars, or in gold and in United States investments that could be turned into dollars. The only way in which these resources could be increased was by new gold-production in the British Empire, mainly of course in South Africa, and by vigorous efforts to export goods, principally luxury goods, such as whisky, fine woollens, and pottery, to the United States. By these means an additional 2,000 million dollars were procured during the first sixteen months of the war. During the period of the "Twilight War" we were torn between a vehement desire to order munitions in America and gnawing fear as our dollar resources dwindled. Always in Mr Chamberlain's day the Chancellor of the Exchequer, Sir John Simon, would tell us of the lamentable state of our dollar resources and emphasise the need for conserving them It was more or less accepted that we should have to reckon with a rigorous limitation of purchases from the United States. We acted, as Mr. Purvis once said to Stettinius, "as if we were on a desert island on short rations which we must stretch as far as we could".*

This had meant elaborate arrangements for eking out our

* Stettinius, *Lend-Lease*, p. 60

money. In peace we imported freely and made payments as we liked. When war came we had to create a machine which mobilised gold and dollars and other private assets, which stopped the ill-disposed from remitting their funds to countries where they felt things were safer, and which cut out wasteful imports and other expenditures. On top of making sure that we did not waste our money, we had to see that others went on taking it. The countries of the sterling area were with us: they adopted the same kind of exchange control policy as we did and were willing takers and holders of sterling. With others we made special arrangements by which we paid them in sterling, which could be used anywhere in the sterling area, and they undertook to hold any sterling for which they had no immediate use and to keep dealings at the official rates of exchange. Such arrangements were originally made with the Argentine and Sweden, but were extended to a number of other countries on the Continent and in South America. These arrangements were completed after the spring of 1940, and it was a matter of satisfaction—and a tribute to sterling—that we were able to achieve and maintain them in circumstances of such difficulty. In this way we were able to go on dealing with most parts of the world in sterling, and to conserve most of our precious gold and dollars for our vital purchases in the United States.

When the war exploded into hideous reality in May 1940, we were conscious that a new era had dawned in Anglo-American relations. From the time I formed the new Government, and Sir Kingsley Wood became Chancellor of the Exchequer, we followed a simpler plan, namely, to order everything we possibly could and leave future financial problems on the lap of the Eternal Gods. Fighting for life and presently alone, under ceaseless bombardment, with invasion glaring upon us, it would have been false economy and misdirected prudence to worry too much about what would happen when our dollars ran out. We were conscious of the tremendous changes taking place in American opinion, and of the growing belief, not only in Washington but throughout the Union, that their fate was bound up with ours. Moreover, at this time an intense wave of sympathy and admiration for Britain surged across the American nation. Very friendly signals were made to us from Washington direct, and also through Canada, encouraging our boldness and indicating that somehow

or other a way would be found. In Mr. Morgenthau, Secretary of the Treasury, the cause of the Allies had a tireless champion. The taking over of the French contracts in June had almost doubled our rate of spending across the Exchange. Besides this, we placed new orders for aeroplanes, tanks, and merchant ships in every direction, and promoted the building of great new factories both in the United States and Canada.

* * * * *

Up till November 1940 we had paid for everything we had received. We had already sold 335 million dollars' worth of American shares requisitioned for sterling from private owners in Britain. We had paid out over 4,500 million dollars in cash. We had only 2,000 millions left, the greater part in investments, many of which were not readily marketable It was plain that we could not go on any longer in this way. Even if we divested ourselves of all our gold and foreign assets, we could not pay for half we had ordered, and the extension of the war made it necessary for us to have ten times as much We must keep something in hand to carry on our daily affairs

Lothian was confident that the President and his advisers were earnestly seeking the best way to help us Now that the election was over the moment to act had come. Ceaseless discussions on behalf of the Treasury were proceeding in Washington between their representative, Sir Frederick Phillips, and Mr Morgenthau. The Ambassador urged me to write a full statement of our position to the President. Accordingly that Sunday at Ditchley I drew up, in consultation with him, a personal letter. On November 16 I telegraphed to Roosevelt· "I am writing you a very long letter on the outlook for 1941 which Lord Lothian will give you in a few days" As the document had to be checked and rechecked by the Chiefs of Staff and the Treasury, and approved by the War Cabinet, it was not completed before Lothian's return to Washington. On November 26 I sent him a message, "I am still struggling with my letter to the President, but hope to cable it to you in a few days" In its final form the letter was dated December 8, and was immediately sent to the President. As it gives a view of the whole situation agreed to by all concerned in London, and as it played a recognisable part in our fortunes, it deserves study.

10 DOWNING STREET, WHITEHALL
December 8, 1940

My dear Mr President,

1 As we reach the end of this year I feel you will expect me to lay before you the prospects for 1941. I do so with candour and confidence, because it seems to me that the vast majority of American citizens have recorded their conviction that the safety of the United States as well as the future of our two Democracies and the kind of civilisation for which they stand are bound up with the survival and independence of the British Commonwealth of Nations Only thus can those bastions of sea-power upon which the control of the Atlantic and Indian Oceans depend be preserved in faithful and friendly hands. The control of the Pacific by the United States Navy and of the Atlantic by the British Navy is indispensable to the security and trade routes of both our countries, and the surest means of preventing war from reaching the shores of the United States

2. There is another aspect It takes between three and four years to convert the industries of a modern state to war purposes Saturation-point is reached when the maximum industrial effort that can be spared from civil needs has been applied to war production Germany certainly reached this point by the end of 1939. We in the British Empire are now only about half-way through the second year. The United States, I should suppose, is by no means so far advanced as we. Moreover, I understand that immense programmes of naval, military, and air defence are now on foot in the United States, to complete which certainly two years are needed It is our British duty in the common interest, as also for our own survival, to hold the front and grapple with the Nazi power until the preparations of the United States are complete Victory may come before two years are out, but we have no right to count upon it to the extent of relaxing any effort that is humanly possible Therefore I submit with very great respect for your good and friendly consideration that there is a solid identity of interest between the British Empire and the United States while these conditions last It is upon this footing that I venture to address you

3 The form which this war has taken, and seems likely to hold, does not enable us to match the immense armies of Germany in any theatre where their main power can be brought to bear We can however, by the use of sea-power and air-power, meet the German armies in regions where only comparatively small forces can be brought into action We must do our best to prevent the German domination of Europe spreading into Africa and into Southern Asia We have also to maintain in constant readiness in this Island armies strong enough to make

the problem of an oversea invasion insoluble. For these purposes we are forming as fast as possible, as you are already aware, between fifty and sixty divisions. Even if the United States were our ally, instead of our friend and indispensable partner, we should not ask for a large American expeditionary army. Shipping, not men, is the limiting factor, and the power to transport munitions and supplies claims priority over the movement by sea of large numbers of soldiers.

4. The first half of 1940 was a period of disaster for the Allies and for Europe. The last five months have witnessed a strong and perhaps unexpected recovery by Great Britain fighting alone, but with the invaluable aid in munitions and in destroyers placed at our disposal by the great Republic of which you are for the third time the chosen Chief.

5. The danger of Great Britain being destroyed by a swift, overwhelming blow has for the time being very greatly receded. In its place there is a long, gradually-maturing danger, less sudden and less spectacular, but equally deadly. This mortal danger is the steady and increasing diminution of sea tonnage. We can endure the shattering of our dwellings and the slaughter of our civil population by indiscriminate air attacks, and we hope to parry these increasingly as our science develops, and to repay them upon military objectives in Germany as our Air Force more nearly approaches the strength of the enemy. The decision for 1941 lies upon the seas. Unless we can establish our ability to feed this Island, to import the munitions of all kinds which we need, unless we can move our armies to the various theatres where Hitler and his confederate Mussolini must be met, and maintain them there, and do all this with the assurance of being able to carry it on till the spirit of the Continental Dictators is broken, we may fall by the way, and the time needed by the United States to complete her defensive preparations may not be forthcoming. It is therefore in shipping and in the power to transport across the oceans, particularly the Atlantic Ocean, that in 1941 the crunch of the whole war will be found. If on the other hand we are able to move the necessary tonnage to and fro across salt water indefinitely, it may well be that the application of superior air-power to the German homeland and the rising anger of the German and other Nazi-gripped populations will bring the agony of civilisation to a merciful and glorious end.

But do not let us underrate the task.

6. Our shipping losses, the figures for which in recent months are appended, have been on a scale almost comparable to those of the worst year of the last war. In the five weeks ending November 3 losses reached a total of 420,300 tons. Our estimate of annual tonnage which ought to be imported in order to maintain our effort at full strength is 43 million tons; the tonnage entering in September was only at the

rate of 3.7 million tons, and in October of 3.8 million tons. Were this diminution to continue at this rate it would be fatal, unless indeed immensely greater replenishment than anything at present in sight could be achieved in time. Although we are doing all we can to meet this situation by new methods, the difficulty of limiting losses is obviously much greater than in the last war. We lack the assistance of the French Navy, the Italian Navy, and the Japanese Navy, and above all of the United States Navy, which was of such vital help to us during the culminating years. The enemy commands the ports all around the northern and western coasts of France. He is increasingly basing his submarines, flying-boats, and combat planes on these ports and on the islands off the French coast. We are denied the use of the ports or territory of Eire in which to organise our coastal patrols by air and sea. In fact, we have now only one effective route of entry to the British Isles, namely, the Northern Approaches, against which the enemy is increasingly concentrating, reaching ever farther out by U-boat action and long-distance aircraft bombing. In addition, there have for some months been merchant-ship raiders both in the Atlantic and Indian Oceans. And now we have the powerful warship raider to contend with as well. We need ships both to hunt down and to escort. Large as are our resources and preparations, we do not possess enough.

7. The next six or seven months [will] bring relative battleship strength in home waters to a smaller margin than is satisfactory. *Bismarck* and *Tirpitz* will certainly be in service in January. We have already *King George V*, and hope to have *Prince of Wales* in the line at the same time. These modern ships are of course far better armoured, especially against air attack, than vessels like *Rodney* and *Nelson*, designed twenty years ago. We have recently had to use *Rodney* on transatlantic escort, and at any time when numbers are so small a mine or a torpedo may alter decisively the strength of the line of battle. We get relief in June, when *Duke of York* will be ready, and shall be still better off at the end of 1941, when *Anson* also will have joined. But these two first-class modern 35,000-ton* 15-inch-gun German battleships force us to maintain a concentration never previously necessary in this war.

8. We hope that the two Italian *Littorios* will be out of action for a while, and anyway they are not so dangerous as if they were manned by Germans. Perhaps they might be! We are indebted to you for your help about the *Richelieu* and *Jean Bart*, and I daresay that will be all right. But, Mr. President, as no one will see more clearly than you, we have during these months to consider for the first time in this war a fleet action in which the enemy will have two ships at least as good as

* Actually they were nearer 45,000 tons.

our two best and only two modern ones. It will be impossible to reduce our strength in the Mediterranean, because the attitude of Turkey, and indeed the whole position in the Eastern Basin, depends upon our having a strong fleet there. The older, unmodernised battleships will have to go for convoy. Thus even in the battleship class we are at full extension.

9. There is a second field of danger. The Vichy Government may, either by joining Hitler's New Order in Europe or through some manœuvre, such as forcing us to attack an expedition dispatched by sea against the Free French colonies, find an excuse for ranging with the Axis Powers the very considerable undamaged naval forces still under its control. If the French Navy were to join the Axis the control of West Africa would pass immediately into their hands, with the gravest consequences to our communications between the Northern and Southern Atlantic, and also affecting Dakar and of course thereafter South America.

10. A third sphere of danger is in the Far East. Here it seems clear that Japan is thrusting southward through Indo-China to Saigon and other naval and air bases, thus bringing them within a comparatively short distance of Singapore and the Dutch East Indies. It is reported that the Japanese are preparing five good divisions for possible use as an overseas expeditionary force. We have to-day no forces in the Far East capable of dealing with this situation should it develop.

11. In the face of these dangers we must try to use the year 1941 to build up such a supply of weapons, particularly of aircraft, both by increased output at home in spite of bombardment and through ocean-borne supplies, as will lay the foundations of victory. In view of the difficulty and magnitude of this task, as outlined by all the facts I have set forth, to which many others could be added, I feel entitled, nay bound, to lay before you the various ways in which the United States could give supreme and decisive help to what is, in certain aspects, the common cause.

12. The prime need is to check or limit the loss of tonnage on the Atlantic approaches to our island. This may be achieved both by increasing the naval forces which cope with the attacks, and by adding to the number of merchant ships on which we depend. For the first purpose there would seem to be the following alternatives:

(1) The reassertion by the United States of the doctrine of the freedom of the seas from illegal and barbarous methods of warfare, in accordance with the decisions reached after the late Great War, and as freely accepted and defined by Germany in 1935. From this, United States ships should be free to trade with countries against which there is not an effective legal blockade.

(2) It would, I suggest, follow that protection should be given to this lawful trading by United States forces, *i.e.*, escorting battleships, cruisers, destroyers, and air flotillas The protection would be immensely more effective if you were able to obtain bases in Eire for the duration of the war. I think it is improbable that such protection would provoke a declaration of war by Germany upon the United States, though probably sea incidents of a dangerous character would from time to time occur Herr Hitler has shown himself inclined to avoid the Kaiser's mistake. He does not wish to be drawn into war with the United States until he has gravely undermined the power of Great Britain. His maxim is "One at a time"

The policy I have ventured to outline, or something like it, would constitute a decisive act of constructive non-belligerency by the United States, and, more than any other measure, would make it certain that British resistance could be effectively prolonged for the desired period and victory gained

(3) Failing the above, the gift, loan, or supply of a large number of American vessels of war, above all destroyers, already in the Atlantic is indispensable to the maintenance of the Atlantic route Further, could not the United States Naval Forces extend their sea control of the American side of the Atlantic so as to prevent the molestation by enemy vessels of the approaches to the new line of naval and air bases which the United States is establishing in British islands in the Western Hemisphere? The strength of the United States Naval Forces is such that the assistance in the Atlantic that they could afford us, as described above, would not jeopardise the control of the Pacific

(4) We should also then need the good offices of the United States and the whole influence of its Government, continually exerted, to procure for Great Britain the necessary facilities upon the southern and western shores of Eire for our flotillas, and, still more important, for our aircraft, working to the westward into the Atlantic If it were proclaimed an American interest that the resistance of Great Britain should be prolonged and the Atlantic route kept open for the important armaments now being prepared for Great Britain in North America, the Irish in the United States might be willing to point out to the Government of Eire the dangers which its present policy is creating for the United States itself

His Majesty's Government would of course take the most effective measures beforehand to protect Ireland if Irish action exposed it to German attack It is not possible for us to compel the people of Northern Ireland against their will to leave the United Kingdom and join Southern Ireland But I do not doubt that if the Govern-

ment of Eire would show its solidarity with the democracies of the English-speaking world at this crisis a Council for Defence of all Ireland could be set up out of which the unity of the island would probably in some form or other emerge after the war.

13. The object of the foregoing measures is to reduce to manageable proportions the present destructive losses at sea. In addition, it is indispensable that the merchant tonnage available for supplying Great Britain, and for the waging of the war by Great Britain with all vigour, should be substantially increased beyond the one and a quarter million tons per annum which is the utmost we can now build. The convoy system, the *détours*, the zigzags, the great distances from which we now have to bring our imports, and the congestion of our western harbours, have reduced by about one-third the fruitfulness of our existing tonnage. To ensure final victory not less than three million tons of additional merchant shipbuilding capacity will be required. Only the United States can supply this need. Looking to the future, it would seem that production on a scale comparable to that of the Hog Island scheme of the last war ought to be faced for 1942. In the meanwhile we ask that in 1941 the United States should make available to us every ton of merchant shipping, surplus to its own requirements, which it possesses or controls, and to find some means of putting into our service a large proportion of merchant shipping now under construction for the National Maritime Board.

14. Moreover, we look to the industrial energy of the Republic for a reinforcement of our domestic capacity to manufacture combat aircraft. Without that reinforcement reaching us in substantial measure we shall not achieve the massive preponderance in the air on which we must rely to loosen and disintegrate the German grip on Europe. We are at present engaged on a programme designed to increase our strength to seven thousand first-line aircraft by the spring of 1942. But it is abundantly clear that this programme will not suffice to give us the weight of superiority which will force open the doors of victory. In order to achieve such superiority it is plain that we shall need the greatest production of aircraft which the United States of America is capable of sending us. It is our anxious hope that in the teeth of continuous bombardment we shall realise the greater part of the production which we have planned in this country. But not even with the addition to our squadrons of all the aircraft which, under present arrangements, we may derive from planned output in the United States can we hope to achieve the necessary ascendancy. May I invite you then, Mr President, to give earnest consideration to an immediate order on joint account for a further two thousand combat aircraft a month? Of these aircraft, I would submit, the highest possible proportion should

be heavy bombers, the weapon on which, above all others, we depend to shatter the foundations of German military power. I am aware of the formidable task that this would impose upon the industrial organisation of the United States. Yet, in our heavy need, we call with confidence to the most resourceful and ingenious technicians in the world. We ask for an unexampled effort, believing that it can be made.

15. You have also received information about the needs of our armies. In the munitions sphere, in spite of enemy bombing, we are making steady progress here. Without your continued assistance in the supply of machine tools and in further releases from stock of certain articles, we could not hope to equip as many as fifty divisions in 1941. I am grateful for the arrangements, already practically completed, for your aid in the equipment of the Army which we have already planned, and for the provision of the American type of weapons for an additional ten divisions in time for the campaign of 1942. But when the tide of Dictatorship begins to recede many countries trying to regain their freedom may be asking for arms, and there is no source to which they can look except the factories of the United States. I must therefore also urge the importance of expanding to the utmost American productive capacity for small arms, artillery, and tanks.

16. I am arranging to present you with a complete programme of the munitions of all kinds which we seek to obtain from you, the greater part of which is of course already agreed. An important economy of time and effort will be produced if the types selected for the United States Services should, whenever possible, conform to those which have proved their merit under the actual conditions of war. In this way reserves of guns and ammunition and of aeroplanes become interchangeable, and are by that very fact augmented. This is however a sphere so highly technical that I do not enlarge upon it.

17. Last of all, I come to the question of Finance. The more rapid and abundant the flow of munitions and ships which you are able to send us, the sooner will our dollar credits be exhausted. They are already, as you know, very heavily drawn upon by the payments we have made to date. Indeed, as you know, the orders already placed or under negotiation, including the expenditure settled or pending for creating munitions factories in the United States, many times exceed the total exchange resources remaining at the disposal of Great Britain. The moment approaches when we shall no longer be able to pay cash for shipping and other supplies. While we will do our utmost, and shrink from no proper sacrifice to make payments across the Exchange, I believe you will agree that it would be wrong in principle and mutually disadvantageous in effect if at the height of this struggle Great

Britain were to be divested of all saleable assets, so that after the victory was won with our blood, civilisation saved, and the time gained for the United States to be fully armed against all eventualities, we should stand stripped to the bone. Such a course would not be in the moral or economic interests of either of our countries. We here should be unable, after the war, to purchase the large balance of imports from the United States over and above the volume of our exports which is agreeable to your tariffs and industrial economy. Not only should we in Great Britain suffer cruel privations, but widespread unemployment in the United States would follow the curtailment of American exporting power.

18. Moreover, I do not believe that the Government and people of the United States would find it in accordance with the principles which guide them to confine the help which they have so generously promised only to such munitions of war and commodities as could be immediately paid for. You may be certain that we shall prove ourselves ready to suffer and sacrifice to the utmost for the Cause, and that we glory in being its champions. The rest we leave with confidence to you and to your people, being sure that ways and means will be found which future generations on both sides of the Atlantic will approve and admire.

19. If, as I believe, you are convinced, Mr. President, that the defeat of the Nazi and Fascist tyranny is a matter of high consequence to the people of the United States and to the Western Hemisphere, you will regard this letter not as an appeal for aid, but as a statement of the minimum action necessary to achieve our common purpose.

A table was added showing the losses by enemy action of British, Allied, and neutral merchant tonnage for the periods given.*

The letter, which was one of the most important I ever wrote, reached our great friend when he was cruising, on board an American warship, the *Tuscaloosa*, in the sunlight of the Caribbean Sea. He had only his own intimates around him. Harry Hopkins, then unknown to me, told me later that Mr. Roosevelt read and re-read this letter as he sat alone in his deck-chair, and that for two days he did not seem to have reached any clear conclusion. He was plunged in intense thought, and brooded silently.

From all this there sprang a wonderful decision. It was never a question of the President not knowing what he wanted to do.

* See Appendix B.

His problem was how to carry his country with him and to persuade Congress to follow his guidance According to Stettinius, the President, as early as the late summer, had suggested at a meeting of the Defence Advisory Commission on Shipping Resources that "It should not be necessary for the British to take their own funds and have ships built in the United States, or for us to loan them money for this purpose There is no reason why we should not take a finished vessel and lease it to them for the duration of the emergency". It seems that this idea had originated in the Treasury Department, whose lawyers, especially Oscar S. Cox, of Maine, had been stirred by Secretary Morgenthau. It appeared that by a Statute of 1892 the Secretary for War, "when in his discretion it will be for the public good", could lease Army property if not required for public use for a period of not longer than five years Precedents for the use of this Statute, by the *lease* of various Army items, from time to time were on record

Thus the word "lease" and the idea of applying the lease principle to meeting British needs had been in President Roosevelt's mind for some time as an alternative to a policy of indefinite loans which would soon far outstrip all possibilities of repayment Now suddenly all this sprang into decisive action, and the glorious conception of Lend-Lease was proclaimed

The President returned from the Caribbean on December 16, and broached his plan at his Press Conference next day He used a simple illustration "Suppose my neighbour's house catches fire and I have a length of garden hose four or five hundred feet away If he can take my garden hose and connect it up with his hydrant, I may help him to put out the fire Now what do I do? I don't say to him before that operation, 'Neighbour, my garden hose cost me fifteen dollars; you have to pay me fifteen dollars for it.' No! What is the transaction that goes on? I don't want fifteen dollars—I want my garden hose back after the fire is over" And again. "There is absolutely no doubt in the mind of a very overwhelming number of Americans that the best immediate defence of the United States is the success of Great Britain defending itself, and that therefore, quite aside from our historic and current interest in the survival of Democracy in the world as a whole, it is equally important from a selfish point of view and of American defence that we should do everything possible to help the British Empire to defend itself" Finally:

"I am trying to eliminate the dollar mark"

On this foundation the ever-famous Lend-Lease Bill was at once prepared for submission to Congress. I described this to Parliament later as "the most unsordid act in the history of any nation". Once it was accepted by Congress it transformed immediately the whole position It made us free to shape by agreement long-term plans of vast extent for all our needs There was no provision for repayment There was not even to be a formal account kept in dollars or sterling What we had was lent or leased to us because our continued resistance to the Hitler tyranny was deemed to be of vital interest to the great Republic According to President Roosevelt, the defence of the United States and not dollars was henceforth to determine where American weapons were to go

* * * * *

It was at this moment, the most important in his public career, that Philip Lothian was taken from us Shortly after his return to Washington he fell suddenly and gravely ill He worked unremittingly to the end On December 12, in the full tide of success, he died. This was a loss to the nation and to the Cause He was mourned by wide circles of friends on both sides of the ocean To me, who had been in such intimate contact with him a fortnight before, it was a personal shock I paid my tribute to him in a House of Commons united in deep respect for his work and memory.

* * * * *

I had now to turn immediately to the choice of his successor It seemed that our relations with the United States at this time required as Ambassador an outstanding national figure and a statesman versed in every aspect of world politics. Having ascertained from the President that my suggestion would be acceptable, I invited Mr Lloyd George to take the post. He had not felt able to join the War Cabinet in July, and was not happily circumstanced in British politics. His outlook on the war and the events leading up to it was from a different angle from mine. There could be no doubt however that he was our foremost citizen, and that his incomparable gifts and experience would be devoted to the success of his mission I had a long talk with him in the Cabinet Room, and also at luncheon on a second day. He

showed genuine pleasure at having been invited. "I tell my friends," he said, "I have had honourable offers made to me by the Prime Minister." He was sure that at the age of seventy-seven he ought not to undertake so exacting a task As a result of my long conversations with him I was conscious that he had aged even in the months which had passed since I had asked him to join the War Cabinet, and with regret but also with conviction I abandoned my plan.

I next turned to Lord Halifax, whose prestige in the Conservative Party stood high, and was enhanced by his being at the Foreign Office. For a Foreign Secretary to become an Ambassador marks in a unique manner the importance of the mission. His high character was everywhere respected, yet at the same time his record in the years before the war and the way in which events had moved left him exposed to much disapprobation and even hostility from the Labour side of our National Coalition. I knew that he was conscious of this himself.

When I made him this proposal, which was certainly not a personal advancement, he contented himself with saying in a simple and dignified manner that he would serve wherever he was thought to be most useful In order to emphasise still further the importance of his duties, I arranged that he should resume his function as a member of the War Cabinet whenever he came home on leave. This arrangement worked without the slightest inconvenience, owing to the qualities and experience of the personalities involved, and for six years thereafter, both under the National Coalition and the Labour-Socialist Government, Halifax discharged the work of Ambassador to the United States with conspicuous and ever-growing influence and success

President Roosevelt, Mr Hull, and other high personalities in Washington were extremely pleased with the selection of Lord Halifax. Indeed it was at once apparent to me that the President greatly preferred it to my first proposal The appointment of the new Ambassador was received with marked approval both in America and at home, and was judged in every way adequate and appropriate to the scale of events.

* * * * *

I had no doubt who should fill the vacancy at the Foreign Office. On all the great issues of the past four years I had, as these

pages have shown, dwelt in close agreement with Anthony Eden I have described my anxieties and emotions when he parted company with Mr Chamberlain in the spring of 1938 Together we had abstained from the vote on Munich. Together we had resisted the party pressures brought to bear upon us in our constituencies during the winter of that melancholy year. We had been united in thought and sentiment at the outbreak of the war and as colleagues during its progress The greater part of Eden's public life had been devoted to the study of foreign affairs. He had held the splendid office of Foreign Secretary with distinction, and had resigned it when only forty-two years of age for reasons which are in retrospect, and at this time, viewed with the approval of all parties in the State. He had played a fine part as Secretary of State for War during this terrific year, and his conduct of Army affairs had brought us very close together. We thought alike, even without consultation, on a very great number of practical issues as they arose from day to day I looked forward to an agreeable and harmonious comradeship between the Prime Minister and the Foreign Secretary, and this hope was certainly fulfilled during the four and a half years of war and policy which lay before us Eden was sorry to leave the War Office, in all the stresses and excitements of which he was absorbed; but he returned to the Foreign Office like a man going home.

* * * * *

I filled Mr. Eden's place as Secretary of State for War by submitting to the King the name of Captain Margesson, at that time the Chief Whip to the National Government. This choice excited some adverse comment David Margesson had been for nearly ten years at the head of the Government Whip's Office in the House of Commons, and it had fallen to him to marshal and to stimulate the patient and solid Conservative majorities which had so long sustained the Baldwin and Chamberlain Administrations I had, as a leading figure among the Conservative dissentients from the India Bill, had many sharp passages with him. In the course of those eleven years of my exclusion from office my contacts with him had been not infrequent and generally hostile I had formed the opinion that he was a man of high ability, serving his chief, whoever he was, with unfaltering loyalty, and treating his opponents with strict good faith. This opinion was

also held by the Whips of the Labour and Liberal Parties, and such a reputation is of course essential to the discharge of this particular office. When I became Prime Minister it was generally expected that I should find someone else for the task, but I was quite sure that I should receive from Margesson the same skilful and faithful service that he had given to my predecessors, and in this I had been in no way disappointed. He had served in the first World War, and through much of the worst of it as a regimental officer, gaining the Military Cross. He thus had a strong soldierly background as well as a complete knowledge of the House of Commons.

In Margesson's place I appointed Captain James Stuart, with whom also I had had many differences, but for whose character I had high respect

* * * * *

The interval between November 1940 and the passage of Lend-Lease in March 1941 was marked by an acute stringency in dollars. Every kind of expedient was devised by our friends. The American Government bought from us some of the war plants which they had built to our order in the United States They assigned them to the American defence programme, but bade us go on using them to the full. The War Department placed orders for munitions that it did not need immediately, so that when finished they could be released to us. On the other hand, certain things were done which seemed harsh and painful to us. The President sent a warship to Capetown to carry away all the gold we had gathered there. The great British business of Courtaulds in America was sold by us at the request of the United States Government at a figure much below its intrinsic worth. I had a feeling that these steps were taken to emphasise the hardship of our position and raise feeling against the opponents of Lend-Lease. Anyhow, in one way or another we came through

On December 30 the President gave a "fireside chat" on the radio, urging his policy upon his countrymen. "There is danger ahead—danger against which we must prepare But we well know that we cannot escape danger by crawling into bed and pulling the covers over our heads. . . . If Britain should go down, all of us in all the Americas would be living at the point

of a gun, a gun loaded with explosive bullets, economic as well as military. We must produce arms and ships with every energy and resource we can command. . . . *We must be the great arsenal of Democracy.*"

Former Naval Person to President Roosevelt 31.XII 40

We are deeply grateful for all you said yesterday We welcome especially the outline of your plans for giving us the aid without which Hitlerism cannot be extirpated from Europe and Asia We can readily guess why you have not been able to give a precise account of how your proposals will be worked out Meanwhile some things make me anxious

First, sending the warship to Capetown to take up the gold lying there may produce embarrassing effects It is almost certain to become known This will disturb public opinion here and throughout the Dominions and encourage the enemy, who will proclaim that you are sending for our last reserves If you feel this is the only way, directions will be given for the available Capetown gold to be loaded on the ship But we should avoid it if we can Could we, for instance, by a technical operation, exchange gold in South Africa for gold held for others at Ottawa and make the latter available for movement to New York? We must know soon, because the ship is on its way

My second anxiety is because we do not know how long Congress will debate your proposals and how we should be enabled to place orders for armaments and pay our way if this time became protracted Remember, Mr President, we do not know what you have in mind, or exactly what the United States is going to do, and we are fighting for our lives. What would be the effect upon the world situation if we had to default in payments to your contractors, who have their workmen to pay? Would not this be exploited by the enemy as a complete breakdown in Anglo-American co-operation? Yet a few weeks' delay might well bring this upon us

Thirdly, apart from the interim period, there arises a group of problems about the scope of your plan after being approved by Congress What is to be done about the immense heavy payments still due to be made under existing orders before delivery is completed? Substantial advance payments on these same orders have already denuded our resources. We have continued need for various American commodities not definitely weapons—for instance, raw materials and oil. Canada and other Dominions, Greece and refugee allies, have clamant dollar needs to keep their war effort alive I do not seek to know immediately how you will solve these latter questions We shall be entirely ready, for our part, to lay bare to you all our resources and

our liabilities around the world, and we shall seek no more help than the common cause demands. We naturally wish to feel sure that the powers with which you propose to arm yourself will be sufficiently wide to deal with these larger matters, subject to all proper examination.

Sir Frederick Phillips is discussing these matters with Mr. Secretary Morgenthau, and he will explain the war commitments we have in many parts of the world for which we could not ask your direct help, but for which gold and dollars are necessary. This applies also to the Dutch and Belgian gold, which we may become under obligation to return in specie in due course.

They burned a large part of the City of London last night, and the scenes of widespread destruction here and in our provincial centres are shocking; but when I visited the still-burning ruins to-day the spirit of the Londoners was as high as in the first days of the indiscriminate bombing in September, four months ago.

I thank you for testifying before all the world that the future safety and greatness of the American Union are intimately concerned with the upholding and the effective arming of that indomitable spirit.

All my heartiest good wishes to you in the New Year of storm that is opening upon us.

CHAPTER XXIX

GERMANY AND RUSSIA

Hitler Turns Eastward – Stalin's Attempts to Placate Germany – Communist Machinations in the British Factories – Soviet Miscalculations – Molotov's Visit to Berlin – His Meeting with Ribbentrop – And with the Fuehrer – Soviet-Nazi Negotiations – Projects of Dividing the British Empire – Further Argument with the Fuehrer – A British Air Raid Intervenes – Talks in a Dug-out – Stalin's Account Given to Me in August 1942 – Hitler's Final Resolve to Invade Russia – Military Preparations – The Draft Agreement – The Soviets Ask for More – Ambassador Schulenburg's Efforts to Reach an Agreement – Operation "Barbarossa", December 1940.

HITLER had failed to quell or conquer Britain. It was plain that the Island would persevere to the end. Without the command of the sea or the air it had been deemed impossible to move German armies across the Channel. Winter with its storms had closed upon the scene. The German attempt to cow the British nation or shatter their war-making capacity and will-power by bombing had been foiled, and the Blitz was costly. There must be many months' delay before "Sea Lion" could be revived, and with every week that passed the growth, ripening, and equipment of the British home armies required a larger "Sea Lion", with aggravated difficulties of transportation. Even three-quarters of a million men with all their furnishings would not be enough in April or May 1941. What chance was there of finding by then the shipping, the barges, the special landing-craft necessary for so vast an oversea stroke? How could they be assembled under ever-increasing British air-power? Meanwhile this air-power, fed by busy factories in Britain and the United States, and by immense training schemes for pilots in the

Dominions centred in Canada, would perhaps in a year or so make the British Air Force superior in numbers, as it was already in quality, to that of Germany. Can we wonder then that Hitler, once convinced that Goering's hopes and boasts had been broken, should turn his eyes to the East? Like Napoleon in 1804, he recoiled from the assault of the Island until at least the Eastern danger was no more. He must, he now felt, at all costs settle with Russia before staking everything on the invasion of Britain. Obeying the same forces and following the same thoughts as Napoleon when he marched the Grand Army from Boulogne to Ulm, Austerlitz, and Friedland, Hitler abandoned for the moment his desire and need to destroy Great Britain. That must now become the final act of the drama.

There is no doubt that he had made up his own mind by the end of September 1940. From that time forth the air attacks on Britain, though often on a larger scale through the general multiplication of aircraft, took second place in the Fuehrer's thoughts and German plans. They might be maintained as effective cover for other designs, but Hitler no longer counted on them for decisive victory. Eastward ho! Personally, on purely military grounds, I should not have been averse from a German attempt at the invasion of Britain in the spring or summer of 1941. I believed that the enemy would suffer the most terrific defeat and slaughter that any country had ever sustained in a specific military enterprise. But for that very reason I was not so simple as to expect it to happen. In war what you don't dislike is not usually what the enemy does. Still, in the conduct of a long struggle, when time seemed for a year or two on our side, and mighty allies might be gained, I thanked God that the supreme ordeal was to be spared our people. As will be seen from my papers written at the time, I never seriously contemplated a German descent upon England in 1941. By the end of 1941 the boot was on the other leg, we were no longer alone; three-quarters of the world were with us. But tremendous events, measureless before they happened, were to mark that memorable year.

While to uninformed continentals and the outer world our fate seemed forlorn, or at best in the balance, the relations between Nazi Germany and Soviet Russia assumed the first position in world affairs. The fundamental antagonisms between the two

despotic Powers resumed their sway once it was certain that Britain could not be stunned and overpowered like France and the Low Countries To do him justice, Stalin tried his very best to work loyally and faithfully with Hitler, while at the same time gathering all the strength he could in the enormous mass of Soviet Russia. He and Molotov sent their dutiful congratulations on every German victory They poured a heavy flow of food and essential raw materials into the Reich Their Fifth Column Communists did what they could to disturb our factories. Their radio diffused its abuse and slanders against us They were at any time ready to reach a permanent settlement with Nazi Germany upon the numerous important questions open between them, and to accept with complacency the final destruction of the British power. But all the while they recognised that this policy might fail They were resolved to gain time by every means, and had no intention, as far as they could measure the problem, of basing Russian interests or ambitions solely upon a German victory. The two great totalitarian empires, equally devoid of moral restraints, confronted each other, polite but inexorable

There had of course been disagreements about Finland and Roumania The Soviet leaders had been shocked at the fall of France, and the end of the Second Front for which they were so soon to clamour. They had not expected so sudden a collapse, and had counted confidently on a phase of mutual exhaustion on the Western Front. Now there was no Western Front! Still, it would be foolish to make any serious change in their collaboration with Germany till it could be seen whether Britain would give in or be crushed in 1940 As it gradually became apparent to the Kremlin that Britain was capable of maintaining a prolonged and indefinite war, during which anything might happen about the United States and also in Japan, Stalin became more conscious of his danger and more earnest to gain time. Nevertheless it is remarkable, as we shall see, what advantages he sacrificed and what risks he ran to keep on friendly terms with Nazi Germany. Even more surprising were the miscalculations and the ignorance which he displayed about what was coming to him He was indeed from September 1940 to the moment of Hitler's assault in June 1941 at once a callous, a crafty, and an ill-informed giant.

* * * * *

With these preliminaries we may come to the episode of Molotov's visit to Berlin on November 12, 1940 Every compliment was paid and all ceremony shown to the Bolshevik envoy when he reached the heart of Nazi Germany. During the next two days long and tense discussions took place between Molotov and Ribbentrop, and also with Hitler All the essential facts of these formidable interchanges and confrontations have been laid bare in the selection of captured documents published early in 1948 by the State Department in Washington under the title *Nazi-Soviet Relations*, 1939-1941. On this it is necessary to draw if the story is to be told or understood.

Molotov's first meeting was with Ribbentrop.*

November 12, 1940

The Reich Foreign Minister said that in the letter to Stalin he had already expressed the firm conviction of Germany that no power on earth could alter the fact that the beginning of the end had now arrived for the British Empire England was beaten, and it was only a question of time when she would finally admit her defeat It was possible that this would happen soon, because in England the situation was deteriorating daily Germany would of course welcome an early conclusion of the conflict, since she did not wish under any circumstances to sacrifice human lives unnecessarily If however the British did not make up their minds in the immediate future to admit their defeat, they would definitely ask for peace during the coming year Germany was continuing her bombing attacks on England day and night. Her submarines would gradually be employed to the full extent and would inflict terrible losses on England Germany was of the opinion that England could perhaps be forced by these attacks to give up the struggle A certain uneasiness was already apparent in Great Britain, which seemed to indicate such a solution If however England were not forced to her knees by the present mode of attack, Germany would, as soon as weather conditions permitted, resolutely proceed to a large-scale attack and thereby definitely crush England. This large-scale attack had thus far been prevented only by abnormal weather conditions

Any attempt at a landing or at military operations on the European continent by England or by England backed by America was doomed to complete failure at the start This was no military problem at all This the English had not yet understood, because apparently there was some degree of confusion in Great Britain and because the country was

* See *Nazi-Soviet Relations*, pp. 218 ff

led by a political and military dilettante by the name of Churchill, who throughout his previous career had completely failed at all decisive moments and who would fail again this time

Furthermore, the Axis completely dominated its part of Europe militarily and politically. Even France, which had lost the war and had to pay for it (of which the French, incidentally, were quite aware), had accepted the principle that France in the future would never again support England and de Gaulle, the quixotic conqueror of Africa. Because of the extraordinary strength of their position, the Axis Powers were not therefore considering how they might win the war, but rather how rapidly they could end the war which was already won

* * * * *

After luncheon the Soviet Envoy was received by the Fuehrer, who dilated further upon the total defeat of Britain. The war, he said, had led to complications which were not intended by Germany, but which had compelled her from time to time to react militarily to certain events

The Fuehrer then outlined to Molotov the course of military operations up to the present, which had led to the fact that England no longer had an ally on the Continent The English retaliatory measures were ridiculous, and the Russian gentlemen could convince themselves at first hand of the fiction of alleged destruction in Berlin As soon as atmospheric conditions improved Germany would be poised for the great and final blow against England At the moment, then, it was her aim to try not only to make military preparations for this final struggle, but also to clarify the political issues which would be of importance during and after this showdown He had therefore re-examined the relations with Russia, and not in a negative spirit, but with the intention of organising them positively—if possible, for a long period of time In so doing he had reached several conclusions·

1 Germany was not seeking to obtain military aid from Russia

2 Because of the tremendous extension of the war, Germany had been forced, in order to oppose England, to penetrate into territories remote from her and in which she was not basically interested politically or economically

3 There were nevertheless certain requirements, the full importance of which had become apparent only during the war, but which were absolutely vital to Germany Among them were certain sources of raw materials, which were considered by Germany as most vital and absolutely indispensable

* * * * *

To all this Molotov gave a non-committal assent.

Molotov asked about the Tripartite Pact.* What was the meaning of the New Order in Europe and in Asia, and what *rôle* would the U S S R. be given in it? These issues must be discussed during the Berlin conversations and during the contemplated visit of the Reich Foreign Minister to Moscow, on which the Russians were definitely counting. Moreover, there were issues to be clarified regarding Russia's Balkan and Black Sea interests, about Bulgaria, Roumania, and Turkey. It would be easier for the Russian Government to give specific replies to the questions raised by the Fuehrer if it could obtain the explanations just requested The Soviet would be interested in the New Order in Europe, and particularly in the tempo and the form of this New Order It would also like to have an idea of the boundaries of the so-called Greater East Asian Sphere

The Fuehrer replied that the Tripartite Pact was intended to regulate conditions in Europe as to the natural interests of the European countries, and consequently Germany was now approaching the Soviet Union in order that she might express herself regarding the areas of interest to her In no case was a settlement to be made without Soviet-Russian co-operation This applied not only to Europe, but also to Asia, where Russia herself was to co-operate in the definition of the Greater East Asian Sphere and where she was to designate her claims there Germany's task in this case was that of a mediator Russia by no means was to be confronted with a *fait accompli*

When the Fuehrer undertook to try to establish the above-mentioned coalition of Powers it was not the German-Russian relationship which appeared to him to be the most difficult point, but the question of whether a collaboration between Germany, France, and Italy was possible Only now . . . had he thought it possible to contact Soviet Russia for the purpose of settling the questions of the Black Sea, the Balkans, and Turkey

In conclusion, the Fuehrer summed up by stating that the discussion, to a certain extent, represented the first concrete step towards a comprehensive collaboration, with due consideration for the problems of Western Europe, which were to be settled between Germany, Italy, and France, as well as for the issues of the East, which were essentially the concern of Russia and Japan, but in which Germany offered her good offices as mediator It was a matter of opposing any attempt on the part of America to "make money on Europe" The United States had no business in Europe, in Africa, or in Asia

Molotov expressed his agreement with the statements of the Fuehrer

* Signed between Germany, Italy, and Japan on September 27, 1940

upon the *rôle* of America and England. The participation of Russia in the Tripartite Pact appeared to him entirely acceptable in principle, provided that Russia was to co-operate as a partner and not be merely an object. In that case he saw no difficulties in the matter of participation of the Soviet Union in the common effort But the aim and the significance of the Pact must first be more closely defined, particularly with regard to the delimitation of the Greater East Asian Sphere.

* * * * *

When the conferences were resumed on November 13:

Molotov mentioned the question of the strip of Lithuanian territory and emphasised that the Soviet Government had not received any clear answer yet from Germany on this question However, it awaited a decision. Regarding the Bukovina, he admitted that this involved an additional territory, one not mentioned in the Secret Protocol. Russia had at first confined her demands to Northern Bukovina. Under the present circumstances however Germany must understand the Russian interest in Southern Bukovina. But Russia had not received an answer to her question regarding this subject either Instead, Germany had guaranteed the entire territory of Roumania and completely disregarded Russia's wishes with regard to Southern Bukovina

The Fuehrer replied that it would mean a considerable concession on the part of Germany if even part of Bukovina were to be occupied by Russia. . . .

Molotov however persisted in the opinion previously stated: that the revisions desired by Russia were insignificant

The Fuehrer replied that if German-Russian collaboration was to show positive results in the future the Soviet Government would have to understand that Germany was engaged in a life-and-death struggle, which at all events she wanted to conclude successfully. . . Both sides agreed in principle that Finland belonged to the Russian sphere of influence. Instead therefore of continuing a purely theoretical discussion, they should rather turn to more important problems

After the conquest of England the British Empire would be apportioned as a gigantic world-wide estate in bankruptcy of forty million square kilometres In this bankrupt estate there would be for Russia access to the ice-free and really open ocean Thus far a minority of forty-five million Englishmen had ruled six hundred million inhabitants of the British Empire He was about to crush this minority Even the United States was actually doing nothing but picking out of this bankrupt estate a few items particularly suitable to the United States. Germany of course would like to avoid any conflict which would divert her from her struggle against the heart of the Empire, the British

Isles For that reason, he (the Fuehrer) did not like Italy's war against Greece, as it diverted forces to the periphery instead of concentrating them against England at one point. The same would occur during a Baltic war. The conflict with England would be fought to the last ditch, and he had no doubt that the defeat of the British Isles would lead to the dissolution of the Empire It was a chimera to believe that the Empire could possibly be ruled and held together from Canada. Under those circumstances there arose world-wide perspectives. During the next few weeks they would have to be settled in joint diplomatic negotiations with Russia, and Russia's participation in the solution of these problems would have to be arranged All the countries which could possibly be interested in the bankrupt estate would have to stop all controversies among themselves and concern themselves exclusively with the partition of the British Empire This applied to Germany, France, Italy, Russia, and Japan

Molotov replied that he had followed the arguments of the Fuehrer with interest, and that he was in agreement with everything that he had understood.

* * * * *

Hitler then retired for the night. After supper at the Soviet Embassy there was a British air raid on Berlin We had heard of the conference beforehand, and though not invited to join in the discussion did not wish to be entirely left out of the proceedings. On the "Alert" all moved to the shelter, and the conversation was continued till midnight by the two Foreign Secretaries in safer surroundings. The German official account says:

Because of the air raid the two Ministers went into the Reich Foreign Minister's air raid shelter at 9.40 p.m. in order to conduct the final conversation. . . .

The time was not yet ripe, said Ribbentrop, for discussing the new order of things in Poland The Balkan issue had already been discussed extensively. In the Balkans Germany had solely an economic interest, and she did not want England to disturb her there. The granting of the German guarantee to Roumania had apparently been misconstrued by Moscow. . . In all its decisions the German Government was guided solely by the endeavour to preserve peace in the Balkans and to prevent England from gaining a foothold there and from interfering with supplies to Germany Thus German action in the Balkans was motivated exclusively by the circumstances of the war against England As soon as England conceded her defeat and asked for peace German interests in the Balkans would be confined exclusively to the

economic field, and German troops would be withdrawn from Roumania. Germany had, as the Fuehrer had repeatedly declared, no territorial interests in the Balkans. He could only repeat again and again that the decisive question was whether the Soviet Union was prepared and in a position to co-operate with Germany in the great liquidation of the British Empire. On all other questions Germany and the Soviet Union would easily reach an understanding if they could succeed in extending their relations and in defining the spheres of influence. Where the spheres of influence lay had been stated repeatedly. It was therefore—as the Fuehrer had so clearly put it—a matter of the interests of the Soviet Union and Germany requiring that the partners stand not breast to breast but back to back, in order to support each other in the achievement of their aspirations. . .

In his reply Molotov stated that the Germans were assuming that the war against England had already actually been won. If therefore, as had been said in another connection, Germany was waging a life-and-death struggle against England, he could only construe this as meaning that Germany was fighting "for life" and England "for death". As to the question of collaboration, he quite approved of it, but he added that they had to come to a thorough understanding. This idea had also been expressed in Stalin's letter. A delimitation of the spheres of influence must also be sought. On this point however he (Molotov) could not take a definitive stand at this time, since he did not know the opinion of Stalin and of his other friends in Moscow in the matter. However, he had to state that all these great issues of to-morrow could not be separated from the issues of to-day and the fulfilment of existing agreements. .

Thereupon Herr Molotov cordially bade farewell to the Reich Foreign Minister, stressing that he did not regret the air raid alarm, because he owed to it such an exhaustive conversation with the Reich Foreign Minister.

* * * * *

When in August 1942 I first visited Moscow I received from Stalin's lips a shorter account of this conversation which in no essential differs from the German record, but may be thought more pithy.

"A little while ago," said Stalin, "the great complaint against Molotov was that he was too pro-German. Now everyone says he is too pro-British. But neither of us ever trusted the Germans. For us it was always life and death." I interjected that we had been through this ourselves, and so knew how they felt. "When Molotov," said the Marshal, "went to see Ribbentrop in Berlin

in November of 1940 you got wind of it and sent an air raid." I nodded "When the alarm sounded Ribbentrop led the way down many flights of stairs to a deep shelter sumptuously furnished. When he got inside the raid had begun. He shut the door and said to Molotov 'Now here we are alone together. Why should we not divide?' Molotov said· 'What will England say?' 'England,' said Ribbentrop, 'is finished. She is no more use as a Power' 'If that is so,' said Molotov, 'why are we in this shelter, and whose are these bombs which fall?' "

* * * * *

The Berlin conversations made no difference to Hitler's deep resolve During October Keitel, Jodl, and the German General Staff had under his orders been forming and shaping the plans for the eastward movement of the German armies and for the invasion of Russia in the early summer of 1941 It was not necessary at this stage to decide on the exact date, which might also be affected by the weather Having regard to the distances to be traversed after the frontiers were crossed, and the need of taking Moscow before the winter began, it was obvious that the beginning of May offered the best prospects. Moreover, the assembly and deployment of the German Army along the two-thousand-mile front from the Baltic to the Black Sea, and the provision of all the magazines, camps, and railway sidings, was in itself one of the largest military tasks ever undertaken, and no delay either in planning or in action could be tolerated Over all hung the vital need for concealment and deception

For this purpose two separate forms of cover were used by Hitler, each of which had advantages of its own. The first was an elaborate negotiation about a common policy based on the partition and distribution of the British Empire in the East The second was the domination of Roumania, Bulgaria, and Greece, with Hungary on the way, by a steady influx of troops This offered important military gains, and at the same time masked or presented an explanation for the building up of the German armies on the southern flank of the front to be developed against Russia

The negotiations took the form of draft proposals by Germany for the accession of Soviet Russia to the Three-Power Pact at the expense of British interests in the Orient. If Stalin had accepted

this scheme events might for a time have taken a different course. It was possible at any moment for Hitler to suspend his plans for invading Russia We cannot attempt to describe what might have happened as the result of an armed alliance between the two great empires of the Continent, with their millions of soldiers, to share the spoil in the Balkans, Turkey, Persia, and the Middle East, with India always in the background and with Japan as an eager partner in the "Greater East Asian Scheme". But Hitler's heart was set on destroying the Bolsheviks, for whom his hatred was mortal He believed that he had the force to gain his main life-aim. Thereafter all the rest would be added unto him. He must have known from the conversations at Berlin and other contacts that the proposals which he made Ribbentrop send to Moscow fell far short of Russian ambitions.

A draft, bearing no date, of a Four-Power Pact was found in the captured correspondence of the German Foreign Office with the German Embassy in Moscow. This apparently formed the basis for Schulenburg's conversation with Molotov reported on November 26, 1940. By this Germany, Italy, and Japan were to agree to respect each other's natural spheres of influence. In so far as these spheres of interest came into contact with each other, they would constantly consult each other in an amicable way with regard to the problems arising therefrom.

Germany, Italy, and Japan declared on their part that they recognised the present extent of the possessions of the Soviet Union and would respect them.

The Four Powers undertook to join no combination of Powers and to support no combination of Powers which was directed against one of the Four Powers. They would assist each other in economic matters in every way and would supplement and extend the agreements existing among themselves. The agreement would continue for a period of ten years.

To this there was to be a Secret Protocol by which Germany declared that, apart from the territorial revisions in Europe to be carried out at the conclusion of peace, her territorial aspirations centred in the territories of Central Africa; Italy declared that, apart from territorial revisions in Europe, her territorial aspirations centred in the territories of Northern and North-Eastern Africa; Japan declared that her territorial aspirations centred in the area of Eastern Asia to the south of the Island Empire of Japan,

and the Soviet Union declared that its territorial aspirations centred south of the national territory of the Soviet Union in the direction of the Indian Ocean.

The Four Powers declared that, reserving the settlement of specific questions, they would mutually respect these territorial aspirations and would not oppose their achievement.*

* * * * *

As was expected, the Soviet Government did not accept the German project. They were alone with Germany in Europe, and at the other side of the world Japan lay heavy upon them. Nevertheless they had confidence in their growing strength and in their vast expanse of territory, amounting to one-sixth of the land-surface of the globe. They therefore bargained toughly. On November 26, 1940, Schulenburg sent to Berlin the draft of the Russian counter-proposals. These stipulated that the German troops should be immediately withdrawn from Finland, which, under the compact of 1939, belonged to the Soviet Union's sphere of influence; that within the next few months the security of the Soviet Union in the Straits should be assured by the conclusion of a mutual assistance pact between the Soviet Union and Bulgaria, which geographically is situated inside the security zone of the Black Sea boundaries of the Soviet Union, and by the establishment of a base for land and naval forces of the U.S.S.R. within range of the Bosphorus and the Dardanelles by means of a long-term lease, that the area south of Batum and Baku in the general direction of the Persian Gulf should be recognised as the centre of the aspirations of the Soviet Union, that Japan should renounce her rights to concessions for coal and oil in northern Sakhalin.

No effective answer was returned to this document. No attempt was made by Hitler to split the difference. Issues so grave as these might well justify a prolonged and careful study in a friendly spirit by both sides. The Soviets certainly expected and

* *It is worth noting that though in Berlin the main emphasis of Hitler and Ribbentrop was on sharing British territory, in the draft agreement the British Empire is not mentioned by name, while the colonial possessions of France, Holland, and Belgium are obviously included in the areas to be shared under the Secret Protocol. Both at Berlin and in the negotiations in Moscow the British Empire, though offering the most conspicuous and valuable booty, was not the only intended victim of Hitler. He was seeking an even wider redistribution of the colonial possessions in Africa and Asia of all the countries with which he was or had been at war.*

awaited an answer. Meanwhile on both sides of the frontier the forces, already heavy, began to grow, and Hitler's right hand reached out towards the Balkans.

* * * * *

The plans prepared on his instructions by Keitel and Jodl had by now reached sufficient maturity to enable the Fuehrer to issue from his headquarters on December 18, 1940, his historic Directive No. 21.

OPERATION BARBAROSSA

The German Armed Forces must be prepared *to crush Soviet Russia in a quick campaign* even before the conclusion of the war against England

For this purpose the *Army* will have to employ all available units, with the reservation that the occupied territories must be secured against surprise attacks

For the *Air Force* it will be a matter of releasing such strong forces for the Eastern campaign in support of the Army that a quick completion of the ground operations may be expected and that damage to Eastern German territory by enemy air attacks will be as slight as possible This concentration of the main effort in the East is limited by the requirement that the entire combat and armament area dominated by us must remain adequately protected against enemy air attacks, and that the offensive operations against England, particularly her supply lines, must not be permitted to break down

The main effort of the *Navy* will remain unequivocally directed against *England* even during an Eastern campaign

I shall order the *concentration* against Soviet Russia possibly eight weeks before the intended beginning of operations

Preparations requiring more time to begin are to be started now—if this has not yet been done—and are to be completed by *May* 15, 1941

It is to be considered of decisive importance however that the intention to attack is not discovered

The preparations of the High Commands are to be made on the following basis·

I. *General Purpose*

The mass of the Russian *Army* in Western Russia is to be destroyed in daring operations, by driving forward deep armoured wedges, and the retreat of units capable of combat into the vastness of Russian territory is to be prevented

In quick pursuit a line is then to be reached from which the Russian Air Force will no longer be able to attack German Reich territory The ultimate objective of the operation is to establish a defence line against Asiatic Russia from a line running approximately from the Volga river to Archangel Then, in case of necessity, the last industrial area left to Russia in the Urals can be eliminated by the Luftwaffe.

In the course of these operations the Russian *Baltic Sea Fleet* will quickly lose its bases and thus will no longer be able to fight.

Effective intervention by the Russian *Air Force* is to be prevented by powerful blows at the very beginning of the operation.

II. *Probable Allies and their Tasks*

1. On the flanks of our operation we can count on the active participation of *Roumania* and *Finland* in the war against Soviet Russia

The High Command will in due time concert and determine in what form the armed forces of the two countries will be placed under German command at the time of their intervention

2. It will be the task of *Roumania*, together with the force concentrating there, to pin down the enemy facing her, and in addition to render auxiliary services in the rear area.

3 *Finland* will cover the concentration of the redeployed German *North Group* (parts of the XXI Group) coming from Norway, and will operate jointly with it. Besides, Finland will be assigned the task of eliminating Hango

4 It may be expected that *Swedish* railroads and highways will be available for the concentration of the German North Group, from the start of operations at the latest

III *Direction of Operations*

A *Army* (hereby approving the plans presented to me)·

In the zone of operations divided by the Pripet Marshes into a southern and northern sector the main effort will be made *north* of this area Two Army Groups will be provided here

The southern group of these two Army Groups—the centre of the entire front—will be given the task of annihilating the forces of the enemy in White Russia by advancing from the region around and north of Warsaw with especially strong armoured and motorised units Only a surprisingly fast collapse of Russian resistance could justify aiming at both objectives simultaneously

The Army Group employed south of the Pripet Marshes is to make its main effort in the area from Lublin in the general direction of Kiev, in order to penetrate quickly with strong armoured units into the deep

flank and rear of the Russian forces and then to roll them up along the Dnieper river

The German-Roumanian groups on the right flank are assigned the task of·

(*a*) protecting Roumanian territory and thereby the southern flank of the entire operation,

(*b*) pinning down the opposing enemy forces while Army Group South is attacking on its northern flank and, according to the progressive development of the situation and in conjunction with the Air Force, preventing their orderly retreat across the Dniester during the pursuit,

[and] *in the north*, of reaching Moscow quickly

The capture of this city means a decisive success politically and economically, and, beyond that, the elimination of the most important railway centre

B *Air Force*

Its task will be to paralyse and to eliminate as far as possible the intervention of the Russian Air Force, as well as to support the Army at its main points of effect, particularly those of Army Group Centre and, on the flank, those of Army Group South The Russian railroads, in the order of their importance for the operations, will be cut or the most important near-by objectives (river crossings) seized by the bold employment of parachute and airborne troops

In order to concentrate all forces against the enemy Air Force and to give immediate support to the Army the armament industry will not be attacked during the main operations Only after the completion of the mobile operations may such attacks be considered—primarily against the Ural region.

IV. All orders to be issued by the Commanders-in-Chief on the basis of this directive must clearly indicate that they are *precautionary measures* for the possibility that Russia should change her present attitude towards us The number of officers to be assigned to the preparatory work at an early date is to be kept as small as possible, additional personnel should be briefed as late as possible, and only to the extent required for the activity of each individual Otherwise, through the discovery of our preparations—the date of their execution has not even been fixed—there is danger that most serious political and military disadvantages may arise.

V I expect reports from the Commanders-in-Chief concerning their further plans based on this directive

The contemplated preparations of all branches of the Armed Forces,

including their progress, are to be reported to me through the High Command.

ADOLF HITLER*

* * * * *

From this moment the moulds had been shaped for the supreme events of 1941. We of course had no knowledge of the bargainings between Germany and Russia for dividing the spoils of our Empire and for our destruction; nor could we measure the as yet unformed intentions of Japan. The main troop movements of the German armies eastwards had not yet become apparent to our active Intelligence Service. Only the infiltration and gradual massing in Bulgaria and Roumania could be discerned. Had we known what is set forth in this chapter we should have been greatly relieved. The combination against us of Germany, Russia, and Japan was the worst of our fears. But who could tell? Meanwhile "Fight on!"

* *Nazi-Soviet Relations*, pp. 260 ff.

CHAPTER XXX

OCEAN PERIL

Disguised Surface Raiders – Excursion of the "Scheer" – The "Jervis Bay" Saves the Convoy – Further Depredations of the "Scheer" – A Surprise for the "Hipper" – Disproportionate Strains – The U-Boat Peril Dominates – Increasing Stranglehold upon the North-Western Approaches – The Diver's Anxieties – Grievous Losses – Need to Shift the Control of the North-Western Approaches from Plymouth to Liverpool – Sharp Contraction of Imports – Losses off the Bloody Foreland – Withdrawal of the Irish Subsidies – My Telegram to the President of December 13 – A Sombre Admiralty Proposal – The Dynamite Carpet – Reinforcement and Stimulation of the Air Force Coastal Command – Eventual Success of their Counter-offensive.

THE destruction of the *Graf Spee* in the action off the Plate in December 1939 had brought to an abrupt end the first German campaign against our shipping in the wide oceans The fighting in Norway had, as we have seen, paralysed for the time being the German Navy in home waters What was left of it was necessarily reserved for the invasion project Admiral Raeder, whose ideas on the conduct of the German war at sea were technically sound, had some difficulty in carrying his views in the Fuehrer's councils He had even at one time to resist a proposal made by the Army to disarm all his heavy ships and use their guns for long-range batteries on shore. During the summer however he had fitted out a number of merchant ships as disguised raiders They were more powerfully armed, were generally faster than our armed merchant-cruisers, and were provided with reconnaissance aircraft Five ships of this type evaded our patrols and entered the Atlantic between April and June 1940, whilst a sixth undertook the hazardous north-east passage to the

Pacific along the north coasts of Russia and Siberia Assisted by a Russian ice-breaker, she succeeded in making the passage in two months, and emerged into the Pacific through the Bering Sea in September The object which Admiral Raeder laid down for the conduct of these ships was threefold first, to destroy or capture enemy ships; secondly, to dislocate shipping movements, and, thirdly, to force the dispersion of British warships for escort and patrol to counter the menace These well-conceived tactics caused us both injury and embarrassment By the first weeks of September these five disguised raiders were loose upon our trade routes. Two of them were working in the Atlantic, two others in the Indian Ocean, and the fifth, after laying mines off Auckland, New Zealand, was in the Pacific. Only two contacts were made with them during the whole year. On July 29 "Raider E" was engaged in the South Atlantic by the armed merchant-cruiser *Alcantara*, but escaped after an inconclusive action. In December another armed merchant-cruiser, the *Carnarvon Castle*, attacked her again off the Plate River, but she escaped after some damage Up till the end of September 1940 these five raiders sank or captured thirty-six ships, amounting to 235,000 tons.

At the end of October 1940 the pocket-battleship *Scheer* was at last ready for service. When the invasion of England had been shelved she left Germany on October 27, and broke out into the Atlantic through the Denmark Strait north of Iceland. She was followed a month later by the 8-inch-gun cruiser, *Hipper* The *Scheer* had orders to attack the North Atlantic convoys, from which the battleship escorts had been withdrawn to reinforce the Mediterranean. Captain Krancke believed that a homeward-bound convoy had left Halifax on October 27, and he hoped to intercept it about November 3. On the 5th his aircraft reported eight ships in the south-east, and he set off in pursuit. At 2 27 p.m. he sighted a single ship, the *Mopan*, which he sank by gunfire, after taking on board the crew of sixty-eight By threats he had been able to prevent any wireless reports being made by the *Mopan* At 4 50 p m , whilst thus occupied, the masts of the convoy H.X. 84, consisting of thirty-seven ships, appeared over the horizon In the centre of the convoy was the ocean escort, the armed merchant-cruiser *Jervis Bay*. Her commanding officer, Captain Fegen, R.N , realised at once that he was faced with hopeless odds. His one thought, after reporting the presence of

the enemy by wireless, was to engage the pocket-battleship for as long as possible, and thus gain time for the convoy to disperse. Darkness approached, and there would then be a chance of many escaping. While the convoy scattered the *Jervis Bay* closed his overwhelming antagonist at full speed. The *Scheer* opened fire at eighteen thousand yards The shots of the old 6-inch guns of the *Jervis Bay* fell short. The one-sided fight lasted till 6 p.m., when the *Jervis Bay*, heavily on fire and completely out of control, was abandoned She finally sank about eight o'clock with the loss of over two hundred officers and men. With them perished Captain Fegen, who went down with the ship. He was awarded the Victoria Cross posthumously for his heroic conduct, which takes an honoured place in the records of the Royal Navy.

Not until the end of the fight did the *Scheer* pursue the convoy, but the wintry night had now closed in The ships had scattered and she was able to overtake and sink only five before darkness fell She could not afford, now that her position was known, to remain in the area, on which she expected that powerful British forces would soon converge The great majority of this valuable convoy was therefore saved by the devotion of the *Jervis Bay*. The spirit of the merchant seamen was not unequal to that of their escort One ship, the tanker *San Demetrio*, carrying seven thousand tons of petrol, was set on fire and abandoned. But the next morning part of the crew reboarded the ship, put out the fire, and then, after gallant efforts, without compasses or navigational aids, brought the ship into a British port with her precious cargo. In all however 47,000 tons of shipping and 206 merchant seamen were lost

The *Scheer*, determined to place as many miles as possible between herself and her pursuers, steamed south, where ten days later she met a German supply ship and replenished her fuel and stores. On November 24 she appeared in the West Indies, where she sank the *Port Hobart*, outward bound to Curaçao, and then doubled back to the Cape Verde Islands Her later activities were spread over the South Atlantic and Indian Oceans, and not till April 1941 did she return to Kiel, after again successfully traversing the Denmark Strait Her five months' cruise had yielded a harvest of sixteen ships, amounting to 99,000 tons, sunk or captured.

* * * * *

From June onwards the troop convoys (called by the code name "W S."*) sailed monthly under heavy escort round the Cape to the Middle East and India. At the same time the numerous troop convoys between ports in the Indian Ocean and the continuous stream of Canadian troops reaching this country from across the Atlantic threw the utmost strain on our naval resources. Thus we could not reinstitute the hunting groups which had scoured the seas for the *Graf Spee* in 1939. Our cruisers were disposed in the focal areas near the main shipping routes, and ships sailing independently had to rely on evasive routing and the vastness of the ocean.

On Christmas Day 1940 convoy W S 5A, consisting of twenty troopships and supply ships for the Middle East, was approaching the Azores when it was attacked by the cruiser *Hipper*, which had followed the *Scheer* out a month later Visibility was poor, and the *Hipper* was unpleasantly surprised to find that the escort comprised the cruisers *Berwick*, *Bonaventure*, and *Dunedin* There was a brief, sharp action between the *Hipper* and the *Berwick*, in which both ships were damaged. The *Hipper* made off, and in the mist succeeded in escaping to Brest, in spite of strenuous efforts by the Home Fleet and by Force H from Gibraltar to catch her; but only one ship of the convoy, which carried over thirty thousand men, the *Empire Trooper*, had to put into Gibraltar for repairs

We could not regard the state of the outer oceans without uneasiness. We knew that disguised merchant ships in unknown numbers were preying in all the southern waters The pocket battleship *Scheer* was loose and hidden The *Hipper* might break out at any moment from Brest, and the two German battle-cruisers *Scharnhorst* and *Gneisenau* must also soon be expected to play their part

The enormous disproportion between the numbers of the raiders and the forces the Admiralty had to employ to counter them and guard the immense traffic has been explained in Volume I The Admiralty had to be ready at many points and give protection to thousands of merchant vessels, and could give no guarantee except for troop convoys against occasional lamentable disasters

* * * * *

* I have only heard since the war that these initials which I used so often were an Admiralty term signifying "Winston's Specials".

ɜr dangeı was added to these problems. The only ˀer really frightened me during the war was the Invasion, I thought, even before the aır battle, \fter the air victoıy ıt was a good battle for us We and kıll thıs horrıble foe ın cırcumstances favourable he evıdently realısed, bad for hım. It was the kınd ch, ın the cruel condıtıons of war, one ought to be ght But now our lıfe-lıne, even across the broad especıally ın the entrances to the Island, was en- was even moıe anxıous about thıs battle than I bout the glorıous aıı fight called the Battle of

ralty, wıth whom I lıved ın the closest amıty and ɜd these fears, all the moıe because ıt was theır prıme ˀ to guard our shores from ınvasıon and to keep the n to the outer world Thıs had always been accepted ˀ as theır ultımate, sacred, ınescapable duty So we ondered together on thıs problem. It dıd not take flarıng battles and glıtterıng achıevements. It manı- hrough statıstıcs, dıagrams, and curves unknown to ncomprehensıble to the publıc
h would the U-boat warfare reduce our ımports and /ould ıt ever reach the poınt where our lıfe would be Here was no field for gestures or sensatıons; only the lrawıng of lınes on charts, whıch showed potentıal ı. Compared wıth thıs there was no value ın brave ˀ to leap upon the ınvader, or ın a good plan for re. The hıgh and faıthful spırıt of the people counted n thıs bleak domaın. Eıther the food, supplıes, and he New World and from the Brıtısh Empıre arrıved eans, or they faıled With the whole French seaboard rk to Bordeaux ın theır hands, the Germans lost no ıng bases for theır U-boats and co-operatıng aırcraft ed terrıtory. From July onwards we were compelled ır shıppıng from the appıoaches south of Ireland, urse we were not allowed to statıon fighter-aırcraft. ome ın around Northern Ireland Here, by the grace ter stood a faıthful sentınel. The Mersey, the Clyde, ıgs through whıch we breathed On the East Coast Englısh Channel small vessels contınued to ply under

an ever-increasing attack by air, by E-boat,* and by mines. As it was impossible to vary the East Coast route, the passage of each convoy between the Forth and London became almost every day an action in itself. Few large ships were risked on the East Coast and none at all in the Channel

The losses inflicted on our merchant shipping became most grave during the twelve months from July 1940 to July 1941, when we could claim that the British Battle of the Atlantic was won Far heavier losses occurred when the United States entered the war before any convoy system was set up along their eastern coast. But then we were no longer alone. The last six months of 1940 showed extremely heavy losses, modified only by the winter gales, and no great slaughter of U-boats. We gained some advantage by larger patterning of depth-charges and by evasive routing, but the invasion threat required strong concentrations in the Narrow Seas and our great volume of anti-U-boat new construction only arrived gradually. This shadow hung over the Admiralty and those who shared their knowledge. The week ending September 22 showed the highest rate of loss since the beginning of the war, and was in fact greater than any we had suffered in a similar period in 1917. Twenty-seven ships, of nearly 160,000 tons, were sunk, many of them in a Halifax convoy. In October, while the *Scheer* was also active, another Atlantic convoy was massacred by U-boats, twenty ships being sunk out of thirty-four

As November and December drew on, the entrances and estuaries of the Mersey and the Clyde far surpassed in mortal significance all other factors in the war We could of course at this time have descended upon de Valera's Ireland and regained the southern ports by force of modern arms. I had always declared that nothing but self-preservation would lead me to this. But perhaps the case of self-preservation might come Then so be it. Even this hard measure would only have given a mitigation. The only sure remedy was to secure free exit and entrance in the Mersey and the Clyde

Every day when they met, those few who knew looked at one another. One understands the diver deep below the surface of the sea, dependent from minute to minute upon his air-pipe What would he feel if he could see a growing shoal of sharks

* E-boat the German equivalent of British "light coastal craft"

biting at it? All the more when there was no possibility of his being hauled to the surface! For us there was no surface The diver was forty-six millions of people in an overcrowded island, carrying on a vast business of war all over the world, anchored by nature and gravity to the bottom of the sea What could the sharks do to his air-pipe? How could he ward them off or destroy them?

As early as the beginning of August I had been convinced that it would be impossible to control the Western Approaches through the Mersey and Clyde from the Command at Plymouth

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 4.VIII.40

The repeated severe losses in the North-Western Approaches are most grievous, and I wish to feel assured that they are being grappled with with the same intense energy that marked the Admiralty treatment of the magnetic mine. There seems to have been a great falling off in the control of these Approaches. No doubt this is largely due to the shortage of destroyers through invasion precautions. Let me know at once the whole outfit of destroyers, corvettes, and Asdic trawlers, together with aircraft, available and employed in this area Who is in charge of their operations? Are they being controlled from Plymouth and Admiral Nasmith's staff? Now that you have shifted the entry from the south to the north, the question arises, is Plymouth the right place for the Command? Ought not a new Command of the first order to be created in the Clyde, or should Admiral Nasmith [C.-in-C at Plymouth] move thither? Anyhow, we cannot go on like this. How is the southern minefield barrage getting on? Would it not be possible after a while to ring the changes upon it for a short time and bring some convoys in through the gap which has been left? This is only a passing suggestion

There were always increased dangers to be apprehended from using only one set of Approaches These dangers cannot be surmounted unless the protective concentration is carried out with vigour superior to that which must be expected from the enemy He will soon learn to put everything there It is rather like the early days in the Moray Firth after the East Coast minefield was laid I am confident the Admiralty will rise to the occasion, but evidently a great new impulse is needed Pray let me hear from you

I encountered resistances The Admiralty accepted my view in September of moving from Plymouth to the North, rightly substituting the Mersey for the Clyde But several months elapsed before the necessary headquarters organisation, with its

operations rooms and elaborate network of communications, could be brought into being, and in the meantime much improvisation was necessary The new Command was entrusted to Admiral Sir Percy Noble, who, with a large and ever-growing staff, was installed at Liverpool in February 1941. Henceforward this became almost our most important station. The need and advantage of the change was by then recognised by all.

Towards the end of 1940 I became increasingly concerned about the ominous fall in imports This was another aspect of the U-boat attack Not only did we lose ships, but the precautions we took to avoid losing them impaired the whole flow of merchant traffic. The few harbours on which we could now rely became congested The turn-round of all vessels as well as their voyages was lengthened Imports were the final test In the week ending June 8, during the height of the battle in France, we had brought into the country 1,201,535 tons of cargo, exclusive of oil. From this peak figure imports had declined at the end of July to less than 750,000 tons a week. Although substantial improvement was made in August, the weekly average again fell, and for the last three months of the year was little more than 800,000 tons.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 3 XII 40

The new disaster which has overtaken the Halifax convoy requires precise examination We heard about a week ago that as many as thirteen U-boats were lying in wait on these approaches Would it not have been well to divert the convoy to the Minches? Would this not have been even more desirable when owing to bad weather the outward-bound convoys were delayed, and consequently the escort for the inward-bound could not reach the dangerous area in time?

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 5 XII 40

Pray convene a meeting to discuss the measures to be taken to reduce the burden on our shipping and finances in consequence of the heavy sinkings off the Irish coast and our inability to use the Irish ports The following Ministers should be summoned Trade, Shipping, Agriculture, Food, Dominions Assuming there is agreement on principle, a general plan should be made for acting as soon as possible, together with a time-table and programme of procedure It is not necessary to consider either the Foreign Affairs or the Defence aspect at this stage These will have to be dealt with later The first step essential is to have a good workable scheme, with as much in it as possible that does not hit us worse than it does the others

Prime Minister to Minister of Transport 13 XII 40

I am obliged to you for your note of December 3 on steel, and I hope that you are pushing forward with the necessary measures to give effect to your proposals

In present circumstances it seems to me intolerable that firms should hold wagons up by delaying to unload them, and action should certainly be taken to prevent this

A sample shows that the average time taken by non-tanker cargo ships to turn round at Liverpool rose from $12\frac{1}{2}$ days in February to 15 days in July and $19\frac{1}{2}$ days in October At Bristol the increase was from $9\frac{1}{2}$ days to $14\frac{1}{2}$ days, but at Glasgow the time remained steady at 12 days To improve this seems one of the most important aspects of the whole situation

Prime Minister to Minister of Transport 13 XII 40

I see that oil imports during September and October were only half what they were in May and June, and covered only two-thirds of our consumption I understand that there is no shortage of tankers, that the fall is the result of the partial closing of the South and East Coasts to tankers, and that a large number had to be temporarily laid up in the Clyde and others held at Halifax, Nova Scotia. More recently some tankers have been sent to the South and East Coasts, and oil imports increased during November

From the reply your predecessor* made to my minute of August 26 I gathered that he was satisfied with the preparations in hand for the importation of oil through the West Coast ports His expectations do not appear to have been fulfilled

There are two policies which can be followed to meet this situation We can either expose oil tankers to additional risk by bringing them to South and East Coast ports, and thus increase our current imports, or we can continue to draw upon our stocks, relying upon being able to replenish them from the West Coast ports when arrangements have been completed for the handling of the cargoes, and accepting the resulting inconvenience I should be glad if you would consider, in consultation with the First Lord, to what extent each of these two policies should be followed

I am sending a copy of this letter to the First Lord

Prime Minister to First Lord 14 XII.40

Let me have a full account of the condition of the American destroyers, showing their many defects and the little use we have been

* Sir John Reith. He became Lord Reith and Minister of Works and Buildings on October 3, 1940

able to make of them so far I should like to have the paper by me for consideration in the near future

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 27 XII.40

What have you done about catapulting expendable aircraft from ships in outgoing convoys? I have heard of a plan to catapult them from tankers, of which there are nearly always some in each convoy They then attack the Focke-Wulf and land in the sea, where the pilot is picked up, and machines salved or not as convenient

How is this plan viewed?

As we shall see in the next volume, this project was fruitful. Ships equipped for catapulting fighter aircraft to attack the Focke-Wulf were developed early in 1941

Prime Minister to Minister of Transport 27 XII 40

It is said that two-fifths of the decline in the fertility of our shipping is due to the loss of time in turning round ships in British ports Now that we are confined so largely to the Mersey and the Clyde, and must expect increasingly severe attacks upon them, it would seem that this problem constitutes the most dangerous part of the whole of our front

Would you kindly give me a note on.

(*a*) The facts
(*b*) What you are doing, and what you propose to do.
(*c*) How you can be helped.

Prime Minister to First Lord 29 XII.40

These [U-boat decoy ships*] have been a great disappointment so far this war The question of their alternative uses ought to be considered by the Admiralty I expect they have a large number of skilled ratings on board Could I have a list of these ships, their tonnage, speeds, etc. Could they not carry troops or stores while plying on their routes?

* * * * *

My indignation at the denial of the Southern Irish ports mounted under these pressures

Prime Minister to the Chancellor of the Exchequer 1 XII 40

The straits to which we are being reduced by Irish action compel a reconsideration of the subsidies [to Ireland] It can hardly be argued

* The modern equivalent of "Q" ships, which had been effectively used in the 1914–18 war to lure the U-boats to their destruction They were not successful in the changed conditions of this war

that we can go on paying them till our last gasp Surely we ought to use this money to build more ships or buy more from the United States in view of the heavy sinkings off the Bloody Foreland.

Pray let me know how these subsidies could be terminated, and what retaliatory measures could be taken in the financial sphere by the Irish, observing that we are not afraid of their cutting off our food, as it would save us the enormous mass of fertilisers and feeding-stuffs we have to carry into Ireland through the de Valera-aided German blockade Do not assemble all the pros and cons for the moment, but show what we could do financially and what would happen I should be glad to know about this to-morrow

Prime Minister to General Ismay, for C O.S Committee 3 XII.40

I gave you and each of the C O S a copy of the Irish paper The Chancellor of the Exchequer's comments are also favourable, and there is no doubt that subsidies can be withdrawn at very short notice.

We must now consider the military reaction Suppose they invited the Germans into their ports, they would divide their people, and we should endeavour to stop the Germans They would seek to be neutral and would bring the war upon themselves If they withdrew the various cable and watching facilities they have, what would this amount to, observing that we could suspend all connections between England and Southern Ireland? Suppose they let German U-boats come in to refresh in west coast ports of Ireland, would this be serious, observing that U-boats have a radius of nearly thirty days, and that the limiting factor is desire of crews to get home and need of refit, rather than need of refuelling and provisioning? Pray let me have your observations on these and other points which may occur to you

I thought it well to try to bring the President along in this policy

Former Naval Person to President Roosevelt 13 XII 40

North Atlantic transport remains the prime anxiety Undoubtedly Hitler will augment his U-boat and air attack on shipping and operate ever farther into the ocean Now that we are denied the use of Irish ports and airfields our difficulties strain our flotillas to the utmost limit We have so far only been able to bring a very few of your fifty destroyers into action, on account of the many defects which they naturally develop when exposed to Atlantic weather after having been laid up so long I am arranging to have a very full technical account prepared of renovations and improvements that have to be made in the older classes of destroyers to fit them for the present task, and this may be of use to you in regard to your own older flotillas

In the meanwhile we are so hard pressed at sea that we cannot undertake to carry any longer the 400,000 tons of feeding-stuffs and fertilisers which we have hitherto convoyed to Eire through all the attacks of the enemy We need this tonnage for our own supply, and we do not need the food which Eire has been sending us We must now concentrate on essentials, and the Cabinet proposes to let de Valera know that we cannot go on supplying him under present conditions He will of course have plenty of food for his people, but they will not have the prosperous trading they are making now. I am sorry about this, but we must think of our own self-preservation, and use for vital purposes our own tonnage brought in through so many perils Perhaps this may loosen things up and make him more ready to consider common interests. I should like to know quite privately what your reactions would be if and when we are forced to concentrate our own tonnage upon the supply of Great Britain We also do not feel able in present circumstances to continue the heavy subsidies we have hitherto been paying to the Irish agricultural producers You will realise also that our merchant seamen, as well as public opinion generally, take it much amiss that we should have to carry Irish supplies through air and U-boat attacks and subsidise them handsomely when de Valera is quite content to sit happy and see us strangled.

* * * * *

One evening in December I held a meeting in the downstairs War Room with only the Admiralty and the sailors present. All the perils and difficulties, about which the company was well informed, had taken a sharper turn My mind reverted to February and March 1917, when the curve of U-boat sinkings had mounted so steadily against us that one wondered how many months' more fighting the Allies had in them, in spite of all the Royal Navy could do. One cannot give a more convincing proof of the danger than the project which the Admirals put forward. We must at all costs and with overriding priorities break out to the ocean For this purpose it was proposed to lay an underwater carpet of dynamite from the seaward end of the North Channel, which gives access to the Mersey and the Clyde, to the 100-fathom line north-west of Ireland A submerged minefield must be laid three miles broad and sixty miles long from these coastal waters to the open ocean Even if all the available explosives were monopolised for this task, without much regard to field operations or the proper rearmament of our troops, it seemed vital to make this carpet—assuming there was no other way.

Let me explain the process. Many thousands of contact-mines would have to be anchored to the bottom of the sea, reaching up to within thirty-five feet of its surface. Over this pathway all the ships which fed Britain, or carried on our warfare abroad, could pass and repass without their keels striking the mines A U-boat, however, venturing into this minefield, would soon be blown up; and after a while they would find it *not good enough* to come. Here was the defensive *in excelsis* Anyhow, it was better than nothing. It was the last resort Provisional approval and directions for detailed proposals to be presented were given on this night. Such a policy meant that the diver would in future be thinking about nothing but his air-pipe But he had other work to do

At the same time however we gave orders to the R.A F. Coastal Command to dominate the outlets from the Mersey and Clyde and around Northern Ireland Nothing must be spared from this task. It had supreme priority The bombing of Germany took second place. All suitable machines, pilots, and material must be concentrated upon our counter-offensive, by fighters against the enemy bombers, and surface craft assisted by bombers against the U-boats in these narrow vital waters Many other important projects were brushed aside, delayed, or mauled At all costs one must breathe.

We shall see the extent to which this counter-offensive by the Navy and by Coastal Command succeeded during the next few months; how we became the masters of the outlets, how the Heinkel 111's were shot down by our fighters, and the U-boats choked in the very seas in which they sought to choke us. Suffice it here to say that the success of Coastal Command overtook the preparations for the dynamite carpet. Before this ever made any appreciable inroad upon our war economy the morbid defensive thoughts and projects faded away, and once again with shining weapons we swept the approaches to the Isle.

CHAPTER XXXI

DESERT VICTORY

Suspense and Preparation – The Forward Leap, December 6–8 – Complete Success – My Messages to the President, Mr. Menzies, and General Wavell – "Frappez la Masse" – The Gospel of St. Matthew – And the Epistle of St James – Bardia, January 3 – Tobruk, January 21 – A Hundred and Thirteen Thousand Prisoners and Over Seven Hundred Guns Taken – Ciano's Diaries – Mussolini's Reactions – My Warnings to the House about the Future – The U-Boat Menace – My Broadcast to the Italian People – "One Man, and One Man Alone, Guilty" – The Revolt in Abyssinia – Return of the Emperor – Attempts to Redeem Vichy – My Message to Marshal Pétain – And to General Weygand – Plans for Liberating Jibouti: Operation "Marie" – Airfields in Greece and Turkey – A Wealth of Alternatives – The End of the Year – I Receive a Letter from the King – My Reply, January 5 – Glory of the British Nation and Empire – The Flag of Freedom Flies – But Mortal Peril Impends.

BEFORE a great enterprise is launched the days pass slowly. The remedy is other urgent business, of which there was at this time certainly no lack. I was myself so pleased that our Generals would take the offensive that I did not worry unduly about the result. I grudged the troops wasted in Kenya and Palestine and on internal security in Egypt, but I trusted in the quality and ascendancy of the famous regiments and long-trained professional officers and soldiers to whom this important matter was confided. Eden also was confident, especially in General Wilson, who was to command the battle, but then they were both "Greenjackets",* and had fought as such in the previous war. Meanwhile, outside the small group who knew what was going to be attempted, there was plenty to talk about and do.

* Rifle Brigade and King's Royal Rifles

For a month or more all the troops to be used in the offensive practised the special parts they had to play in the extremely complicated attack. The details of the plan were worked out by Lieutenant-General Wilson and Major-General O'Connor, and General Wavell paid frequent visits of inspection. Only a small circle of officers knew the full scope of the plan, and practically nothing was put on paper. To secure surprise, attempts were made to give the enemy the impression that our forces had been seriously weakened by the sending of reinforcements to Greece and that further withdrawals were contemplated. On December 6 our lean, bronzed, desert-hardened, and completely mechanised army of about twenty-five thousand men leaped forward more than forty miles, and all next day lay motionless on the desert sand unseen by the Italian Air Force. They swept forward again on December 8, and that evening, for the first time, the troops were told that this was no desert exercise, but the "real thing". At dawn on the 9th the battle of Sidi Barrani began.

It is not my purpose to describe the complicated and dispersed fighting which occupied the next four days over a region as large as Yorkshire. Everything went smoothly. Nibeiwa was attacked by one brigade at 7 a.m., and in little more than an hour was completely in our hands. At 1.30 p.m. the attack on the Tummar camps opened, and by nightfall practically the whole area and most of its defenders were captured. Meanwhile the 7th Armoured Division had isolated Sidi Barrani by cutting the coast road to the west. Simultaneously the garrison of Mersa Matruh, which included the Coldstream Guards, had also prepared their blow. At first light on the 10th they assaulted the Italian positions on their front, supported by heavy fire from the sea. Fighting continued all day, and by ten o'clock the Coldstream battalion headquarters signalled that it was impossible to count the prisoners on account of their numbers, but that "there were about five acres of officers and two hundred acres of other ranks".

At home in Downing Street they brought me hour-to-hour signals from the battlefield. It was difficult to understand exactly what was happening, but the general impression was favourable, and I remember being struck by a message from a young officer in a tank of the 7th Armoured Division. "Have arrived at the second B in Buq Buq." I was able to inform the House of Commons on the 10th that active fighting was in progress in the desert,

that 500 prisoners had been taken and an Italian general killed, and also that our troops had reached the coast "It is too soon to attempt to forecast either the scope or the result of the considerable operations which are in progress But we can at any rate say that the preliminary phase has been successful" That afternoon Sidi Barrani was captured.

From December 11 onwards the action consisted of a pursuit of the Italian fugitives by the 7th Armoured Division, followed by the 16th British Infantry Brigade (Motorised) and the 6th Australian Division, which had relieved the 4th Indian Division. On December 12 I could tell the House of Commons that the whole coastal region around Buq Buq and Sidi Barrani was in the hands of British and Imperial troops and that 7,000 prisoners had already reached Mersa Matruh. "We do not yet know how many Italians were caught in the encirclement, but it would not be surprising if at least the best part of three Italian divisions, including numerous Blackshirt formations, have been either destroyed or captured The pursuit to the westward continues with the greatest vigour. The Air Force are now bombing, the Navy are shelling, the principal road open to the retreating enemy, and considerable additional captures have already been reported

"While it is still too soon to measure the scale of these operations, it is clear that they constitute a victory which, in this African theatre of war, is of the first order, and reflects the highest credit upon Sir Archibald Wavell, Sir Henry Maitland Wilson, the Staff officers who planned this exceedingly complicated operation, and the troops who performed the remarkable feats of endurance and daring which accomplished it. The whole episode must be judged upon the background of the fact that it is only three or four months ago that our anxieties for the defence of Egypt were acute. Those anxieties are now removed, and the British guarantee and pledge that Egypt would be effectually defended against all comers has been in every way made good"

The moment the victory of Sidi Barrani was assured—indeed, on December 12—General Wavell took on his own direct initiative a wise and daring decision Instead of holding back in general reserve on the battlefield the 4th British Indian Division, which had just been relieved, he moved it at once to Eritrea to join the 5th British Indian Division for the Abyssinian campaign under General Platt The division went partly by sea to Port

Soudan, and partly by rail and boat up the Nile Some of them moved practically straight from the front at Sidi Barrani to their ships, and were in action again in a theatre seven hundred miles away very soon after their arrival The earliest units arrived at Port Soudan at the end of December, and the movement was completed by January 21. The division joined in the pursuit of the Italians from Kassala, which they had evacuated on January 19, to Keren, where the main Italian resistance was encountered. General Platt had, as we shall see, a hard task at Keren, even with his two British Indian Divisions, the 4th and 5th Without this farseeing decision of General Wavell's the victory at Keren could not have been achieved and the liberation of Abyssinia would have been subject to indefinite delays. The immediate course of events both on the North African shore and in Abyssinia proved how very justly the Commander-in-Chief had measured the values and circumstances of the situations.

* * * * *

I hastened to offer my congratulations to all concerned, and to urge pursuit to the utmost limit of strength

Former Naval Person to President Roosevelt 13 XII 40

I am sure you will be pleased about our victory in Libya This, coupled with the Albanian reverses, may go hard with Mussolini if we make good use of our success The full results of the battle are not yet to hand, but if Italy can be broken our affairs will be more hopeful than they were four or five months ago

Mr Churchill to Mr Menzies, Prime Minister of Australia 13 XII 40

I am sure you will be heartened by the fine victory the Imperial Armies have gained in Libya This, coupled with his Albanian disasters, may go hard with Mussolini Remember that I could not guarantee a few months ago even a successful defence of the Delta and Canal. We ran sharp risks here at home in sending troops, tanks, and cannon all round the Cape while under the threat of imminent invasion, and now there is a reward We are planning to gather a very large army representing the whole Empire and ample sea-power in the Middle East, which will face a German lurch that way, and at the same time give us a move eastward in your direction, if need be Success always demands a greater effort All good wishes

Prime Minister to General Wavell 13.XII 40

I send you my heartfelt congratulations on your splendid victory,

which fulfils our highest hopes. The House of Commons was stirred when I explained the skilful Staff work required, and daring execution by the Army of its arduous task. The King will send you a message as soon as full results are apparent. Meanwhile pray convey my thanks and compliments to Wilson and accept the same yourself.

The poet Walt Whitman says that from every fruition of success, however full, comes forth something to make a greater struggle necessary. Naturally, pursuit will hold the first place in your thoughts. It is at the moment when the victor is most exhausted that the greatest forfeit can be exacted from the vanquished. Nothing would shake Mussolini more than a disaster in Libya itself. No doubt you have considered taking some harbour in Italian territory to which the Fleet can bring all your stuff and which will give you a new jumping-off point to hunt them along the coast until you come up against real resistance. It looks as if these people were corn ripe for the sickle. I shall be glad to hear from you your thoughts and plans at earliest.

As soon as you come to a full-stop along the African coast we can take a new view of our prospects, and several attractive choices will be open.

By December 15 all enemy troops had been driven from Egypt. The greater part of the Italian forces remaining in Cyrenaica had withdrawn within the defences of Bardia, which was now isolated. This ended the first phase of the battle of Sidi Barrani, which resulted in the destruction of the greater part of five enemy divisions. Over 38,000 prisoners were taken. Our own casualties were 133 killed, 387 wounded, and 8 missing.

Prime Minister to General Wavell 16 XII 40

The Army of the Nile has rendered glorious service to the Empire and to our cause, and we are already reaping rewards in every quarter. We are deeply indebted to you, Wilson, and other commanders, whose fine professional skill and audacious leading have gained us the memorable victory of the Libyan desert. Your first objective now must be to maul the Italian Army and rip them off the African shore to the utmost possible extent. We were very glad to learn your intentions against Bardia and Tobruk, and now to hear of the latest captures of Sollum and Capuzzo. I feel convinced that it is only after you have made sure that you can get no farther that you will relinquish the main hope in favour of secondary action in the Soudan or Dodecanese. The Soudan is of prime importance, and eminently desirable, and it may be that the two Indian brigades [*i.e.*, the 4th British Indian Division] can be spared without prejudice to the Libyan pursuit battle. The Dodecanese will not get harder for a little waiting. But neither of them ought to detract

from the supreme task of inflicting further defeats upon the main Italian army. I cannot of course pretend to judge special conditions from here, but Napoleon's maxim, "*Frappez la masse et tout le reste vient par surcroît*", seems to ring in one's ears I must recur to the suggestion made in my previous telegram about amphibious operations and landings behind the enemy's front to cut off hostile detachments and to carry forward supplies and troops by sea

Pray convey my compliments and congratulations to Longmore on his magnificent handling of the R.A F and fine co-operation with the Army I hope most of the new Hurricanes have reached him safely Tell him we are filling up *Furious* again with another even larger packet of flyables from Takoradi He will also get those that are being carried through in [Operation] "Excess" Both these should arrive early in January

Prime Minister to General Wavell 18 XII.40

St Matthew, chapter VII, verse 7.

"**Ask, and it shall be given you; seek, and ye shall find; knock, and it shall be opened unto you.**"

General Wavell to Prime Minister 19.XII.40

St. James, chapter I, verse 17

"**Every good gift and every perfect gift is from above, and cometh down from the Father of lights, with whom is no variableness, neither shadow of turning.**"

* * * * *

Bardia was our next objective. Within its perimeter, seventeen miles in extent, was the greater part of four more Italian divisions. The defences comprised a continuous anti-tank ditch and wire obstacles with concrete block-houses at intervals, and behind this was a second line of fortifications The storming of this considerable stronghold required preparation The 7th Armoured Division prevented all enemy escape to the north and north-west. For the assault there were available the 6th Australian Division, the 16th British Infantry Brigade, the 7th Battalion Royal Tank Regiment (twenty-six tanks), one machine-gun battalion, one Field and one Medium regiment of Corps Artillery.

To complete this episode of desert victory I shall intrude upon the New Year The attack opened early on January 3 One Australian battalion, covered by a strong artillery concentration, seized and held a lodgment in the western perimeter. Behind them engineers filled in the anti-tank ditch Two Australian

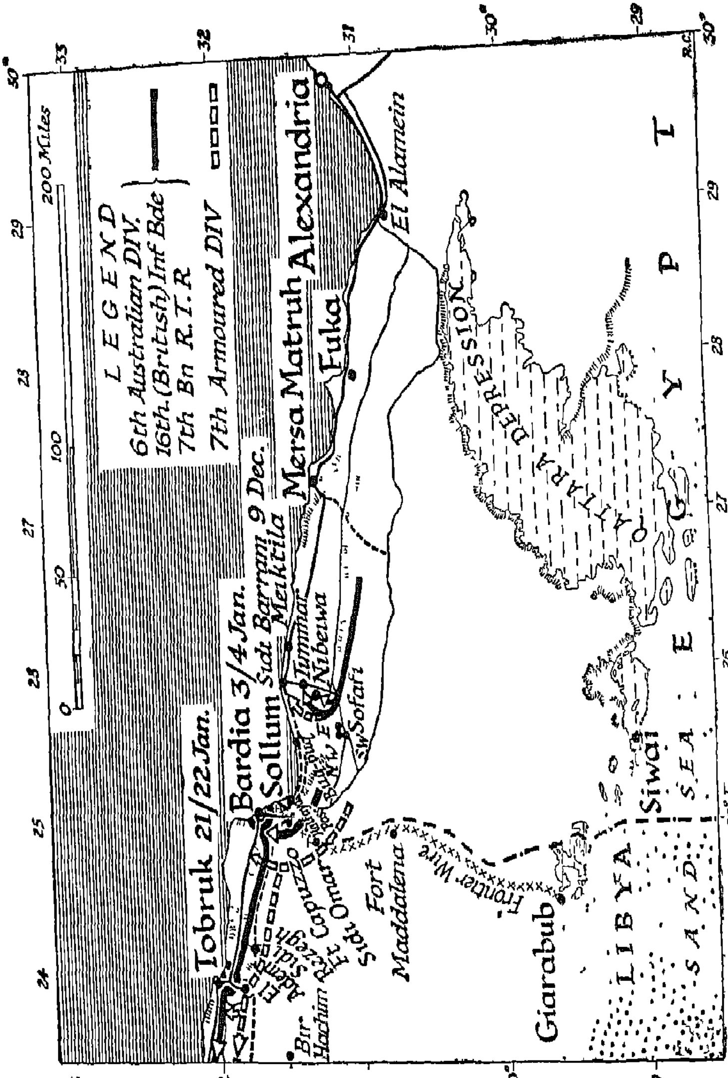
brigades carried on the attack and swept east and south-eastwards. They sang at that time a song from an American film, which soon became popular also in Britain:

"We're off to see the Wizard,
 The wonderful Wizard of Oz.
We hear he is a Whiz of a Wiz,
 If ever a Wiz there was."

This tune always reminds me of these buoyant days. By the afternoon of the 4th, British tanks—"Matildas", as they were named—supported by infantry, entered Bardia, and by the 5th all the defenders had surrendered. 45,000 prisoners and 462 guns were taken.

By next day, January 6, Tobruk in its turn had been isolated by the 7th Armoured Division, and on the 7th the leading Australian brigade stood before its eastern defences. Here the perimeter was twenty-seven miles long and similar to that of Bardia, except that the anti-tank ditch at many points was not deep enough to be effective. The garrison consisted of one complete infantry division, a corps headquarters, and a mass of remnants from the forward areas. It was not possible to launch the assault till January 21, when, under a strong barrage, another Australian brigade pierced the perimeter on its southern face. The two other brigades of the division entered the bridgehead thus formed, swinging off to left and right. By nightfall one-third of the defended area was in our hands, and early next morning all resistance ceased. The prisoners amounted to nearly 30,000, with 236 guns. The Desert Army had in six weeks advanced over two hundred miles of waterless and foodless space, had taken by assault two strongly fortified seaports with permanent air and marine defences, and captured 113,000 prisoners and over 700 guns. The great Italian army which had invaded and hoped to conquer Egypt scarcely existed as a military force, and only the imperious difficulties of distance and supplies delayed an indefinite British advance to the west.

Throughout these operations vigorous support was provided by the Fleet. Bardia and Tobruk were in turn heavily bombarded from the sea, and the Fleet Air Arm played its part in the battle on land. Above all, the Navy sustained the Army in its advance by handling about 3,000 tons of supplies a day for the



DESERT VICTORY Dec. 1940 – Jan. 1941

forward troops, besides maintaining an invaluable ferry service for personnel through the captured ports. Our victorious army was also greatly indebted for their success to the mastery which the Royal Air Force gained over the Regia Aeronautica. Although in inferior numbers, the aggressiveness of our pilots soon established a complete moral ascendancy that gave them the freedom of the air. Our attacks on enemy airfields reaped a rich reward, and hundreds of their aircraft were later found wrecked and abandoned

* * * * *

It is always interesting to see the reactions of the other side. The reader is already acquainted with Count Ciano, and should not be too hard on weak people who follow easily into wrong courses the temptations of affluence and office. Those who have successfully resisted all such temptations should form the tribunal. When Ciano faced the firing squad he paid his debts to the full. Villains are made of a different texture. We must not however imagine that it is better to be a rare villain than a Ciano or one of the multitudinous potential Cianos

We have the Ciano diaries, jotted down each day* The diary:—December 8: Nothing new. December 9: Intrigues against Badoglio. December 10 "News of the attack on Sidi Barrani comes like a thunderbolt At first it doesn't seem serious, but subsequent telegrams from Graziani confirm that we have had a licking." Ciano saw his father-in-law twice on this day and found him very calm. "He comments on the event with impersonal objectivity . being more preoccupied with Graziani's prestige" On the 11th it was known in the inner circle at Rome that four Italian divisions must be considered destroyed, and, even worse, Graziani dwelt upon the daring and design of the enemy rather than upon any counter-measures of his own. Mussolini maintained his composure "He maintains that the many painful days through which we are living must be inevitable in the changing fortunes of every war." If the British stopped at the frontier nothing serious would have happened If, on the contrary, they reach Tobruk, "he thinks the situation would verge on the tragic". In the evening the Duce learned that five divisions had been "pulverised" in two days. Evidently there was something wrong with this army!

* *Ciano's Diaries*, 1939-43, edited by Malcolm Muggeridge, pp 315 17

On December 12 a "catastrophic telegram" came from Graziani. He contemplated retiring as far as Tripoli, "in order to keep the flag flying on that fortress at least". He was indignant that he should have been forced into so hazardous an advance upon Egypt by Rommel's undue influence on Mussolini. He complained that he had been forced into a struggle between "a flea and an elephant". Apparently the flea had devoured a large portion of the elephant. On the 15th Ciano was himself by no means sure that the English would be content to stop at the frontier, and records his opinion in that sense. Graziani, in default of military deeds, served up to his master bitter recriminations. Mussolini remarked, perhaps with some justice. "Here is another man with whom I cannot get angry, because I despise him." He still hoped that the British advance would be stopped at least at Derna.

* * * * *

I had kept the House daily informed of our progress in the desert, and on December 19 I made a long statement on the general war position I described the improvement of our home defence and urged increasing vigilance We must expect a continuance of the air attacks, and the organisation of shelters, the improvement of sanitation, and the endeavour to mitigate the extremely bad conditions under which people had to get their night's rest was the first task of the Government at home. "The Air Raid Precautions, the Home Office, and the Ministry of Health are just as much in the front line as are the armoured columns which are chasing the Italians about the Libyan desert." I also thought it necessary to utter a warning about the sinkings in the Atlantic "They still continue at a very disquieting level, not so bad as in the critical period of 1917, but still we must recognise the recrudescence of the danger, which a year ago we seemed to have mastered We shall steadily increase, from now on, our resources in flotillas and other methods of defence, but we must regard *the keeping open of this channel to the world against submarines and the long-distance aircraft which are now attacking as the first of all of our military tasks.*"

* * * * *

I thought it the moment to address the Italian people by the broadcast, and on the night of December 23 I reminded them of

the long friendship between Britain and Italy. Now we were at war. ". . Our armies are tearing and will tear your African Empire to shreds and tatters. . . . How has all this come about, and what is it all for?"

> Italians, I will tell you the truth It is all because of one man. One man and one man alone has ranged the Italian people in deadly struggle against the British Empire, and has deprived Italy of the sympathy and intimacy of the United States of America That he is a great man I do not deny, but that after eighteen years of unbridled power he has led your country to the horrid verge of ruin can be denied by none. It is one man who, against the Crown and Royal Family of Italy, against the Pope and all the authority of the Vatican and of the Roman Catholic Church, against the wishes of the Italian people, who had no lust for this war, has arrayed the trustees and inheritors of ancient Rome upon the side of the ferocious pagan barbarians

I read out the message I had sent to Mussolini on becoming Prime Minister and his reply of May 18, 1940, and I continued:

> Where is it that the Duce has led his trusting people after eighteen years of dictatorial power? What hard choice is open to them now? It is to stand up to the battery of the whole British Empire on sea, in the air, and in Africa, and the vigorous counter-attack of the Greek nation; or, on the other hand, to call in Attila over the Brenner Pass with his hordes of ravenous soldiery and his gangs of Gestapo policemen to occupy, hold down, and protect the Italian people, for whom he and his Nazi followers cherish the most bitter and outspoken contempt that is on record between races
>
> There is where one man and one man only has led you; and there I leave this unfolding story until the day comes—as come it will—when the Italian nation will once more take a hand in shaping its own fortunes.

It is curious that on this same day Mussolini, speaking of the morale of the Italian Army, remarked to Ciano,* "I must nevertheless recognise that the Italians of 1914 were better than these. It is not flattering for the *régime*, but that's how it is." And the next day, looking out of the window: "This snow and cold are very good. In this way our good-for-nothing Italians, this mediocre race, will be improved." Such were the bitter and ungrateful reflections which the failure of the Italian Army in Libya and Albania had wrung from the heart of this dark figure

* *Ciano's Diaries*, p 321.

after six months of aggressive war on what he had thought was the decadent British Empire.

* * * * *

This was a time when events were so fluid that every possible stroke had to be studied beforehand, and thus the widest choice of action lay open to us. Our victory in Libya had already stimulated the revolt against Italy in Abyssinia. I was most anxious that the Emperor, Haile Selassie, should re-enter his country as he desired to do. The Foreign Office thought this step premature. I deferred to the judgment of the new Secretary of State, but the delay was short, and the Emperor, eager to run all risks, was soon back on his native soil.

(*Action this Day*)
Prime Minister to Foreign Secretary and General Ismay, for C O S Committee 30 XII 40

It would seem that every effort should be made to meet the Emperor of Ethiopia's wishes We have already, I understand, stopped our officers from entering the Galla country It seems a pity to employ battalions of Ethiopian deserters, who might inflame the revolt, on mere road-making We have sixty-four thousand troops in Kenya, where complete passivity reigns, so they surely could spare these road-makers On the first point, I am strongly in favour of Haile Selassie entering Abyssinia Whatever differences there may be between the various Abyssinian tribes, there can be no doubt that the return of the Emperor will be taken as a proof that the revolt has greatly increased, and will be linked up with the rumours of our victory in Libya

I should be glad if a favourable answer could be drafted for me to send to the Emperor

Prime Minister to Foreign Secretary 31 XII 40

One would think the Emperor would be the best judge of when to risk his life for his throne In your minute you speak of our being "stampeded into premature and possibly catastrophic action". I do not wish at all to be "stampeded", but I should like to know some of the reasons why nothing is to be done for some months yet by the Emperor I should have hoped the telegram to him could have been more forthcoming, and the one to Sir Miles Lampson rather more positive These are however only matters of emphasis, and if with your knowledge you are apprehensive of giving more clear guidance I do not press for alteration of the telegrams

The question of what pledges we give to Haile Selassie about his restoration, and what are our ideas about the Italian position in East

Africa, assuming that our operations prosper, as they may, is one which I was glad to hear from you this morning is receiving Foreign Office attention.

* * * * *

Finally, I was most anxious to give Vichy its chance to profit by the favourable turn of events. There is no room in war for pique, spite, or rancour. The main objective must dominate all secondary causes of vexation. For some weeks past the Chiefs of Staff Committee and the General Staff of the War Office had been preparing an Expeditionary Force of six divisions, and making plans, if the French attitude should become favourable, to land in Morocco. We had the advantage of M. Dupuy, the Canadian representative at Vichy, as a channel of communication with Marshal Pétain. It was necessary to keep the United States informed; for I already sensed the President's interest in Tangier, Casablanca, and indeed in the whole Atlantic seaboard of Africa, the German occupation of which by U-boat bases was held by the American military authorities to endanger the security of the United States. Accordingly, with the full approval of the Chiefs of Staff and the War Cabinet, the following message was sent by the hand of M. Dupuy to Vichy and notified by the Foreign Office to our Chargé d'Affaires in Washington.

Prime Minister to Marshal Pétain 31.XII.40

If at any time in the near future the French Government decide to cross to North Africa or resume the war there against Italy and Germany, we should be willing to send a strong and well-equipped Expeditionary Force of up to six divisions to aid the defence of Morocco, Algiers, and Tunis. These divisions could sail as fast as shipping and landing facilities were available. We now have a large, well-equipped army in England, and have considerable spare forces already well trained and rapidly improving, apart from what are needed to repel invasion. The situation in the Middle East is also becoming good.

2. The British Air Force has now begun its expansion, and would also be able to give important assistance.

3. The command of the Mediterranean would be assured by the reunion of the British and French Fleets and by our joint use of Moroccan and North African bases.

4. We are willing to enter into Staff talks of the most secret character with any military representatives nominated by you.

5. On the other hand, delay is dangerous. At any time the Germans

may, by force or favour, come down through Spain, render unusable the anchorage at Gibraltar, take effective charge of the batteries on both sides of the Straits, and also establish their air forces in the aerodromes It is their habit to strike swiftly, and if they establish themselves on the Moroccan coast the door would be shut on all projects The situation may deteriorate any day and prospects be ruined unless we are prepared to plan together and act boldly It is most important that the French Government should realise that we are able and willing to give powerful and growing aid But this may presently pass beyond our power

A similar message was sent by another hand to General Weygand, now Commander-in-Chief at Algiers. No answer of any kind was returned from either quarter.

* * * * *

At this stage we may review the numerous tasks and projects for which plans and in most cases preparations had been made, and approval in principle obtained. The first was of course the defence of the Island against invasion. We had now armed and equipped, though not in all cases at the highest standard of modern equipment, nearly thirty high-class mobile divisions, a large proportion of whom were Regulars, and all of whose men had been under intense training for fifteen months Of these we considered that, apart from the coastal troops, fifteen would be sufficient to deal with oversea invasion The Home Guard, now more than a million men, had rifles and some cartridges in their hands, apart from our reserve. We therefore had twelve or fifteen divisions available for offensive action overseas as need and opportunity arose The reinforcement of the Middle East, and especially of the Army of the Nile, from Australia and New Zealand and from India had already been provided for by shipping and by other arrangements As the Mediterranean was still closed, very long voyages and many weeks were required for all these convoys and their escorts

Secondly, in case Vichy or the French in North Africa should rally to the common cause, we had prepared an Expeditionary Force of six divisions, with an air component, for an unopposed and assisted landing in Moroccan Atlantic ports, principally Casablanca Whether we could move this good army to French Morocco or to Ceuta, opposite Gibraltar, more rapidly than the Germans could come in equal numbers and equipment through

Spain depended upon the degree of Spanish resistance. We could however, if invited, and if we liked it, land at Cadiz to support the Spaniards.

Thirdly, in case the Spanish Government yielded to German pressure and became Hitler's ally or co-belligerent, thus making the harbour at Gibraltar unusable, we held ready a strong brigade with four suitable fast transports to seize or occupy some of the Atlantic islands. Alternatively, if the Portuguese Government agreed that we might for this purpose invoke the Anglo-Portuguese Alliance of 1373, "Friends to friends, and foes to foes", we might set up with all speed a base in the Cape Verde Islands. This operation, called "Shrapnel", would secure us the necessary air and refuelling bases to maintain naval control of the critical stretch of the route round the Cape.

Fourthly, a French de Gaullist brigade from England, with West African reinforcements, was to be sent round the Cape to Egypt in order to effect the capture of Jibouti in case conditions there became favourable (Operation "Marie").*

Preparations were also being made to reinforce Malta, particularly in air-power (Operation "Winch"), with the object of regaining control of the passage between Sicily and Tunis. As an important element in this policy plans had been made for the capture by a brigade of commandos, of which Sir Roger Keyes wished to take personal command, of the rocky islet of Pantelleria (Operation "Workshop"). Every effort was ordered to be made to develop a strong naval and air base in Crete at Suda Bay, pending the movement thither of any reinforcements for its garrison which a change in the Greek situation might require.

* *Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee* 1.XII.40

General de Gaulle told me that he had in mind an attempt to recover Jibouti—hereinafter to be called "Marie" in all papers and telegrams connected with the operation. He would send three French battalions from Equatorial Africa to Egypt, where General Le Gentilhomme would meet them. These battalions would be for the defence of Egypt, or possibly ostensibly as a symbolic contribution to the defence of Greece. There would be no secret about this. On the contrary, prominence would be given to their arrival. However, when the moment was opportune these battalions would go to Jibouti, being carried and escorted thither by the British Navy. No further assistance would be asked from the British. General de Gaulle believes, and certainly the attached paper favours the idea, that Le Gentilhomme could make himself master of the place, bring over the garrison and rally it, and immediately engage the Italians. This would be a very agreeable development, and is much the best thing de Gaulle could do at the present time. It should be studied attentively, and in conjunction with him. The importance of secrecy, and of never mentioning the name of the place, should be inculcated on all, remembering Dakar. I suppose it would take at least two months for the French battalions to arrive in Egypt.

Kindly let me have a full report.

We were developing airfields in Greece both to aid the Greek Army and to strike at Italy, or if necessary at the Roumanian oilfields. Similarly, the active development of airfields in Turkey and technical assistance to the Turks was in progress.

Finally the revolt in Abyssinia was being fanned by every means, and respectable forces were based on Khartoum to strike in the neighbourhood of Kassala against the menace of the large Italian army in Abyssinia. A movement was planned for a joint military and naval advance from Kenya up the East African coast towards the Red Sea to capture the Italian fortified seaports of Assab and Massawa, with a view to the conquest of the Italian colony of Eritrea.

Thus I was able to lay before the War Cabinet a wide choice of carefully-considered and detailed enterprises which could at very short notice be launched against the enemy, and certainly from among them we could find the means for an active and unceasing overseas offensive warfare, albeit on a secondary scale, with which to relieve and adorn our conduct of the war during the early part of 1941, throughout which the building up of our main war-strength in men and munitions, in aircraft, tanks, and artillery, would be continuously and immensely expanded.

* * * * *

As the end of the year approached both its lights and its shadows stood out harshly on the picture. We were alive. We had beaten the German Air Force. There had been no invasion of the Island. The Army at home was now very powerful. London had stood triumphant through all her ordeals. Everything connected with our air mastery over our own Island was improving fast. The smear of Communists who obeyed their Moscow orders gibbered about a Capitalist-Imperialist War. But the factories hummed and the whole British nation toiled night and day, uplifted by a surge of relief and pride. Victory sparkled in the Libyan desert, and across the Atlantic the Great Republic drew ever nearer to her duty and our aid.

At this time I received a very kind letter from the King.

SANDRINGHAM
January 2, 1941

My dear Prime Minister,

I must send you my best wishes for a happier New Year, and may

we see the end of this conflict in sight during the coming year. I am already feeling better for my sojourn here, it is doing me good, and the change of scene and outdoor exercise is acting as a good tonic. But I feel that it is wrong for me to be away from my place of duty, when everybody else is carrying on. However, I must look upon it as medicine and hope to come back refreshed in mind and body, for renewed efforts against the enemy.

I do hope and trust you were able to have a little relaxation at Christmas with all your arduous work. I have so much admired all you have done during the last seven months as my Prime Minister, and I have so enjoyed our talks together during our weekly luncheons. I hope they will continue on my return, as I do look forward to them so much.

I hope to pay a visit to Sheffield* next Monday. I can do it from here in the day.

With renewed good wishes,

I remain,

Yours very sincerely,

GEORGE R.I.

I expressed my gratitude, which was heartfelt.

January 5, 1941

Sir,

I am honoured by Your Majesty's most gracious letter. The kindness with which Your Majesty and the Queen have treated me since I became First Lord and still more since I became Prime Minister has been a continuous source of strength and encouragement during the vicissitudes of this fierce struggle for life. I have already served Your Majesty's father and grandfather for a good many years as a Minister of the Crown, and my father and grandfather served Queen Victoria, but Your Majesty's treatment of me has been intimate and generous to a degree that I had never deemed possible.

Indeed, Sir, we have passed through days and weeks as trying and as momentous as any in the history of the English Monarchy, and even now there stretches before us a long, forbidding road. I have been greatly cheered by our weekly luncheons in poor old bomb-battered Buckingham Palace, and to feel that in Your Majesty and the Queen there flames the spirit that will never be daunted by peril, nor wearied by unrelenting toil. This war has drawn the Throne and the people more closely together than was ever before recorded, and Your Majesties are more beloved by all classes and conditions than any of the princes of the past. I am indeed proud that it should have fallen to my

* Sheffield had been very heavily bombed

lot and duty to stand at Your Majesty's side as First Minister in such a climax of the British story, and it is not without good and sure hope and confidence in the future that I sign myself, "on Bardia day", when the gallant Australians are gathering another twenty thousand Italian prisoners,

Your Majesty's faithful and devoted
servant and subject,
WINSTON S. CHURCHILL

* * * * *

We may, I am sure, rate this tremendous year as the most splendid, as it was the most deadly, year in our long English and British story. It was a great, quaintly-organised England that had destroyed the Spanish Armada. A strong flame of conviction and resolve carried us through the twenty-five years' conflict which William III and Marlborough waged against Louis XIV. There was a famous period with Chatham. There was the long struggle against Napoleon, in which our survival was secured through the domination of the seas by the British Navy under the classic leadership of Nelson and his associates. A million Britons died in the first World War. But nothing surpasses 1940. By the end of that year this small and ancient Island, with its devoted Commonwealth, Dominions, and attachments under every sky, had proved itself capable of bearing the whole impact and weight of world destiny. We had not flinched or wavered. We had not failed. The soul of the British people and race had proved invincible. The citadel of the Commonwealth and Empire could not be stormed Alone, but upborne by every generous heart-beat of mankind, we had defied the tyrant in the height of his triumph.

All our latent strength was now alive. The air terror had been measured The Island was intangible, inviolate. Henceforward we too would have weapons with which to fight. Henceforward we too would be a highly organised war machine. We had shown the world that we could hold our own. There were two sides to the question of Hitler's world domination. Britain, whom so many had counted out, was still in the ring, far stronger than she had ever been, and gathering strength with every day. Time had once again come over to our side. And not only to our national side. The United States was arming fast and drawing ever nearer to the conflict. Soviet Russia, who with callous mis-

calculation had adjudged us worthless at the outbreak of the war, and had bought from Germany fleeting immunity and a share of the booty, had also become much stronger and had secured advanced positions for her own defence. Japan seemed for the moment to be overawed by the evident prospect of a prolonged world war, and, anxiously watching Russia and the United States, meditated profoundly what it would be wise and profitable to do.

And now this Britain, and its far-spread association of states and dependencies, which had seemed on the verge of ruin, whose very heart was about to be pierced, had been for fifteen months concentrated upon the war problem, training its men and devoting all its infinitely-varied vitalities to the struggle. With a gasp of astonishment and relief the smaller neutrals and the subjugated states saw that the stars still shone in the sky. Hope, and within it passion, burned anew in the hearts of hundreds of millions of men. The good cause would triumph. Right would not be trampled down. The flag of Freedom, which in this fateful hour was the Union Jack, would still fly in all the winds that blew.

But I and my faithful colleagues who brooded with accurate information at the summit of the scene had no lack of cares. The shadow of the U-boat blockade already cast its chill upon us. All our plans depended upon the defeat of this menace. The Battle of France was lost. The Battle of Britain was won. The Battle of the Atlantic had now to be fought.

APPENDICES

APPENDIX A

PRIME MINISTER'S PERSONAL MINUTES AND TELEGRAMS

MAY—DECEMBER 1940

MAY

Prime Minister to General Ismay, for those concerned 18 V.40

The proximity fuze and the necessary rocket projectors have hitherto been treated as important protection for ships, but even larger numbers will be needed, even some perhaps more urgently, for the protection of aircraft factories and other exceptionally important points. What is being done about this? Let proposals be made to-morrow for setting up the necessary manufacture. Are any modifications in the design of the projectors necessary? The Director of Naval Ordnance can go on with the ship side of the business, but be careful no hold-up takes place in the supply for the vulnerable points ashore. Report to-morrow night what organisation or measures are required to procure this production.

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies 23 V 40

I am in full agreement with the answer you propose to Wedgwood's* Questions, and I do not want Jewish forces raised to serve outside Palestine. The main and almost the sole aim in Palestine at the present time is to liberate the eleven battalions of excellent Regular troops who are now tethered there. For this purpose the Jews should be armed in their own defence, and properly organised as speedily as possible. We can always prevent them from attacking the Arabs by our sea-power, which cuts them off from the outer world, and by other friendly influences. On the other hand, we cannot leave them unarmed when our troops leave, as leave they must at a very early date.

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 24 V.40

I should be much obliged if you would have a talk with Lindemann, so as to get at some agreed figures upon aircraft outputs, both recent and prospective. I have for a long time been convinced that the Air Ministry do not make enough of the deliveries with which they are

* Hon Josiah Wedgwood, M P

supplied, and Lindemann is obtaining for me returns of all aircraft in their hands, so that one can see what use is made of them.

It is of the highest importance that all aircraft in storage and reserve should not only be made available for service, but that these should be organised in squadrons with their pilots. Now that the war is coming so close, the object must be to prepare the largest number of aircraft, even, as you said, training and civil aircraft, to carry bombs to enemy aerodromes on the Dutch, Belgian, and French coasts I must get a full view of the figures, both of delivery and employment, and this can be kept up to date weekly.

Prime Minister to Professor Lindemann 24.v.40

Let me have on one sheet of paper a statement about the tanks. How many have we got with the Army? How many of each kind are being made each month? How many are there with the manufacturers? What are the forecasts? What are the plans for heavier tanks?

NOTE.—The present form of warfare, and the proof that tanks can overrun fortifications, will affect the plans for the "Cultivator", and it seems very likely that only a reduced number will be required

Prime Minister to Sir Edward Bridges 24.v.40

I am sure there are far too many Committees of one kind and another which Ministers have to attend, and which do not yield a sufficient result. These should be reduced by suppression or amalgamation Secondly, an effort should be made to reduce the returns with which the Cabinet is oppressed to a smaller compass and smaller number. Pray let proposals be made by the Cabinet Office staff for effecting these simplifications

Prime Minister to Secretary of State for Air 27.v.40

In your communiqué to-day you distinguish in several cases between enemy aircraft "put out of action" or "destroyed" Is there any real difference between the two, or is it simply to avoid tautology? If so, this is not in accordance with the best authorities on English Sense should not be sacrificed to sound.

Will you also report to-day whether you would like the weather to be clear or cloudy for the operations on the Belgian coast

Prime Minister to General Ismay and C I G S. 29.v.40

The change which has come over the war affects decisively the usefulness of "Cultivator No 6". It may play its part in various operations, defensive and offensive, but it can no longer be considered the only method of breaking a fortified line I suggest that the Minister of Supply should to-day be instructed to reduce the scheme by one-

half. Probably in a few days it will be to one-quarter. The spare available capacity could be turned over to tanks If the Germans can make tanks in nine months, surely we can do so. Let me have your general proposals for the priority construction of an additional thousand tanks capable of engaging the improved enemy pattern likely to be working in 1941.

There should also be formed, if it does not already exist, an Anti-tank Committee to study and devise all methods of attacking the latest German tanks Pray let me have suggested list of names.

JUNE

Prime Minister to Sir Edward Bridges 3.VI 40

Has anything been done about shipping twenty thousand internees to Newfoundland or St Helena? Is this one of the matters that the Lord President has in hand? If so would you please ask him about it. I should like to get them on the high seas as soon as possible, but I suppose considerable arrangements have to be made at the other end Is it all going forward?

Prime Minister to Secretary of State for Air 3 VI 40

The Cabinet were distressed to hear from you that you were now running short of pilots for fighters, and that they had now become the limiting factor

This is the first time that this particular admission of failure has been made by the Air Ministry. We know that immense masses of aircraft are devoted to the making of pilots, far beyond the proportion adopted by the Germans. We heard some months ago of many thousands of pilots for whom the Air Ministry declared they had no machines, and who consequently had to be "re-mustered" as many as seven thousand were mentioned, all of whom had done many more hours of flying than those done by German pilots now frequently captured. How then therefore is this new shortage to be explained?

Lord Beaverbrook has made a surprising improvement in the supply and repair of aeroplanes, and in clearing up the muddle and scandal of the aircraft production branch I greatly hope that you will be able to do as much on the personnel side, for it will indeed be lamentable if we have machines standing idle for want of pilots to fly them

Prime Minister to Professor Lindemann 3 VI.40

You are not presenting me as I should like every few days, or every week, with a short, clear statement of the falling off or improvement in munitions production I am not able to form a clear view unless you do this

Prime Minister to Professor Lindemann 3 VI 40

See attached paper [Production Programmes: Memorandum by Chiefs of Staff], which seems to contain a lot of loose thinking Evidently we must "pull forward" everything that can be made effective in the next five months, and accept the consequent retardation of later production, but there is no reason whatever to alter, so far as I can see, the existing approved schemes for a three years' war. Indeed, they will be more necessary than ever if France drops out.

Pray let me have your views.

Prime Minister to Professor Lindemann 7.VI.40

(Secret)

I am much grieved to hear of the further delay in the proximity fuze

Considering the enormous importance of this, and the directions I have given that all possible pressure should be put behind it, it would surely have been right to have two or three firms simultaneously making the experimental pattern, so that if one failed the other could go on

Please report to me what has been done

You have not given me yet either a full statement of the production which is already ordered in rockets for the proximity fuze and in rockets for the ordinary fuze before we get the P F

It is of the utmost importance that you should go forward with the stabilising bomb-sight, as we must knock out their aircraft factories at the same rate that they affect ours. If you will gather together (*a*) all the people interested in the P F. and (*b*) all those interested in the stabilised bomb-sight I will next week receive their reports and urge them on

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 11 VI.40

It was decided on December 22 at a conference on bomb-sight design that urgent action should be taken to convert 2,600 A.B s, Mark II, into stabilised high-altitude bomb-sights, over 90 per cent. of the drawings then being completed. Please let me know exactly what followed How is it that only one bomb-sight was converted? I should be very glad if you would look at the files and ascertain who was responsible for stifling action

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A S. 11.VI 40

This report* is most interesting, and I shall be glad if you will arrange to use the squadron you mentioned yesterday for the purpose of infecting the reaches mentioned, where the traffic is reported to be

* On the "Royal Marine" Operation See Vol I

so heavy. We do not need to ask the French permission for this, but only for the continuous streaming of the naval fluvials This I am doing. Meanwhile you should act as soon as you can on the lower reaches. Kindly report what you will do

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies 16 VI 40

Have you considered the advisability of raising a West Indies Regiment? It might have three battalions, strongly officered by British officers, and be representative of most of the islands, to be available for Imperial service, to give an outlet for the loyalty of the natives, and bring money into these poor islands

At present we are short of weapons, but these will come along

Prime Minister to First Lord of the Admiralty 17 VI 40

I am content with your proposed disposition of the heavy ships in the West, namely, *Repulse* and *Renown* to maintain the blockade at Scapa, *Rodney*, *Nelson*, and *Valiant* at Rosyth to cover the Island, *Hood* and *Ark Royal* to join *Resolution* at Gibraltar, to watch over the fate of the French Fleet

It is of the utmost importance that the fleet at Alexandria should remain to cover Egypt from an Italian invasion, which would otherwise destroy prematurely all our position in the East This fleet is well placed to sustain our interests in Turkey, to guard Egypt and the Canal, and can, if the situation changes, either fight its way westward or go through the Canal to guard the Empire or come round the Cape on to our trade routes

The position of the Eastern fleet must be constantly watched, and can be reviewed when we know what happens to the French Fleet and whether Spain declares war or not

Even if Spain declares war it does not follow that we should quit the Eastern Mediterranean If we have to quit Gibraltar we must immediately take the Canaries, which will serve as a very good base to control the western entrance to the Mediterranean.

Prime Minister to Minister of Home Security 20.VI.40

I understand that it was settled last Saturday that your department was to take on the executive control of smoke as a means of hiding factories and similar industrial targets I should be glad to know whom you have put in charge of this work, which I regard as of the highest importance, and what progress he has made.

Prime Minister to Admiralty 23.VI.40

I do not think it would be a good thing to keep *Hood* and *Ark Royal* lolling about in Gibraltar harbour, where they might be bombed at any time from the shore.

Surely when they have fuelled they should go to sea, and come back only unexpectedly and for short visits.

What is being done?

Prime Minister to General Ismay 24.VI.40

Has any news been received of the German prisoner pilots in France, whose return to this country was solemnly promised by Monsieur Reynaud?

Prime Minister to Secretary of State for Foreign Affairs 24.VI.40

It does not seem to be necessary to address the President again upon the subject of destroyers to-day or to-morrow. Evidently he will be influenced by what happens to the French Fleet, about which I am hopeful. I am doubtful about opening Staff talks at the present time. I think they would turn almost entirely from the American side upon the transfer of the British Fleet to transatlantic bases. Any discussion of this is bound to weaken confidence here at the moment when all must brace themselves for the supreme struggle. I will send the President another personal telegram about destroyers and flying-boats a little later on.

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies 25.VI.40

The cruel penalties imposed by your predecessor upon the Jews in Palestine for arming have made it necessary to tie up needless forces for their protection. Pray let me know exactly what weapons and organisation the Jews have for self-defence.

Prime Minister to Minister of Supply 25.VI.40

Thank you for your letter of June 22 about increasing the import of steel from the United States. I understand that owing to the transfer of the French contracts to us our volume of purchases for the coming month has more than doubled and that we are now buying at the rate of about six hundred thousand tons a month. This is satisfactory, and we should certainly get as much from the United States as we can while we can.

Prime Minister to Secretary of State for Foreign Affairs 26.VI.40

I am sure we shall gain nothing by offering to "discuss" Gibraltar at the end of the war. Spaniards will know that, if we win, discussions would not be fruitful, and if we lose they would not be necessary. I do not believe mere verbiage of this kind will affect the Spanish decision.

Prime Minister to General Ismay 28.VI.40

Although our policy about the French Navy is clear, I should like to have an appreciation by the Admiralty of the consequences which

are likely to follow—namely, a hostile attitude by France, and the seizure by Germany and Italy of any part of the French Navy which we cannot secure I should like to have this on Sunday next

Prime Minister to General Ismay 28 VI 40

This is a very unsatisfactory figure [of civilian labour*] When I mentioned fifty-seven thousand the other day in the Cabinet I was assured that they represented a very small part of what were actually employed and that a hundred thousand was nearer the mark, and that many more were coming in before the end of the week Now, instead, we have a figure of only forty thousand. Pray let me have a full explanation of this

It is very wrong that fighting troops should be kept from their training because of the neglect to employ civilian labour.

The question must be brought up at the Cabinet on Monday

Prime Minister to Home Secretary 28 VI 40

Let me see a list of prominent persons you have arrested.

Prime Minister to Professor Lindemann 29 VI 40

If we could have large supplies of multiple projectors and rockets directed by Radar irrespective of cloud or darkness, and also could have the proximity fuze working effectively by day and to a lesser extent in moonlight or starlight, the defence against air attack would become decisive This combination is therefore the supreme immediate aim We are not far from it in every respect, yet it seems to baffle us Assemble your ideas and facts so that I may give extreme priority and impulse to this business.

Prime Minister to Professor Lindemann 29 VI.40

It seems to me that the blockade is largely ruined, in which case the sole decisive weapon in our hands would be overwhelming air attack upon Germany.

We should gain great relief in the immediate future from not having to maintain an army in France or sending supplies of beef, coal, etc , to France Let me know about this

How has the question of beef supplies been affected? We are freed from the obligation to supply the French Army with beef There is really no reason why our Army at home should have rations far exceeding the heavy munitions workers' The complications about frozen meat and fresh meat ought also to be affected by what has happened, although I am not sure which way

* Labour for defence works My former minute, dated 25 VI 40, is recorded in Book I, Chapter VIII, page 151.

JULY

Prime Minister to General Ismay 2.VII.40

If it be true that a few hundred German troops have been landed on Jersey or Guernsey by troop-carriers, plans should be studied to land secretly by night on the islands and kill or capture the invaders. This is exactly one of the exploits for which the Commandos would be suited. There ought to be no difficulty in getting all the necessary information from the inhabitants and from those evacuated. The only possible reinforcements which could reach the enemy during the fighting would be by aircraft-carriers, and here would be a good opportunity for the Air Force fighting machines. Pray let me have a plan.

Prime Minister to Secretary of State for Foreign Affairs 3.VII.40

I could not reconcile myself to leaving a large number of influential Frenchmen who are the adherents of the Pétain Government free to run an active and effective propaganda in our Service circles and in French circles in this country, against the whole policy of aiding General de Gaulle, to which we are publicly and earnestly committed. The attempt to set up a French Government in Morocco and to obtain control of the *Jean Bart* and other vessels, and to open up a campaign in Morocco, with a base on the Atlantic, is, in my opinion, vital. It was most cordially adopted by the Cabinet in principle, and, apart from technical details, I should find very great difficulty in becoming a party to its abandonment, and to our consequent relegation to the negative defensive, which has so long proved ruinous to our interests.

(Action this Day)
Prime Minister to V.C.N.S. and A.C.N.S. 5.VII.40

Could you let me know on one sheet of paper what arrangements you are making about the Channel convoys now that the Germans are all along the French coast? The attacks on the convoy yesterday, both from the air and by E-boats, were very serious, and I should like to be assured this morning that the situation is in hand and that the Air is contributing effectively.

Prime Minister to First Lord of the Admiralty, Secretary of State for War, and Secretary of State for Air 5.VII.40

(Sir E. Bridges to implement)

It has been represented to me that our colleagues not in the War Cabinet but above the "line" are depressed at not knowing more of what is going forward in the military sphere. It would be advantageous

if each of the Service Ministers could in rotation have a talk with them, answer questions, and explain the general position. If a weekly meeting were instituted, this would mean that each Service Minister would meet them every three weeks. I trust this would not be too heavy a burden upon you. Nothing must ever be said to anybody about future operations; these must always be kept in the most narrow circles, but explanations of the past and expositions of the present offer a wide field. On the assumption that the above is agreeable to you, I am giving directions through Sir Edward Bridges.

Prime Minister to Colonel Jacob 6 VII 40

Obtain a most careful report to-day from the Joint Intelligence Staff of any further indication of enemy preparations for raid or invasion. Let me have this to-night.

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 8 VII.40

In the fierce light of the present emergency the fighter is the need, and the output of fighters must be the prime consideration till we have broken the enemy's attack. But when I look round to see how we can win the war I see that there is only one sure path. We have no Continental army which can defeat the German military power. The blockade is broken and Hitler has Asia and probably Africa to draw from. Should he be repulsed here or not try invasion, he will recoil eastward, and we have nothing to stop him. But there is one thing that will bring him back and bring him down, and that is an absolutely devastating, exterminating attack by very heavy bombers from this country upon the Nazi homeland. We must be able to overwhelm them by this means, without which I do not see a way through. We cannot accept any lower aim than air mastery. When can it be obtained?

Prime Minister to Secretary of State for Air 11 VII 40

Generally speaking, the losses in the bomber force seem unduly heavy, and the Bremen raid, from which only one out of six returned, is most grievous. At the present time a very heavy price may be paid (*a*) for information by reconnaissance of the conditions in the German ports and German-controlled ports and river-mouths, (*b*) for the bombing of barges or assemblies of ships thus detected. Apart from this, the long-range bombing of Germany should be conducted with a desire to save the machines and personnel as much as possible while keeping up a steady attack. It is most important to build up the numbers of the bomber force, which are very low at the present time.

Prime Minister to Home Secretary 11 VII 40

You should, I think, prepare a Bill vacating the seat of any Member of Parliament who continues during the present war outside the

jurisdiction for more than six months without the leave of the Secretary of State

Prime Minister to General Ismay 12 VII 40

What is being done to reproduce and install the small circular pill-boxes which can be sunk in the centre of aerodromes, and rise by means of a compressed-air bottle to two or three feet elevation, like a small turret commanding the aerodrome? I saw these for the first time when I visited Langley Aerodrome last week. This appears to afford an admirable means of anti-parachute defence, and it should surely be widely adopted. Let me have a plan

Prime Minister to Secretary of State for War 12.VII 40

Now is the time to popularise your administration with the troops by giving to all regiments and units the little badges and distinctions they like so much I saw the London Irish with their green and peacock-blue hackles We can easily afford the expense of bronze badges, the weight of which is insignificant in metal All regimental distinctions should be encouraged The French Army made a great speciality of additional unofficial regimental badges, which they presented to people. I liked this idea, and I am sure it would amuse the troops, who will have to face a long vigil I am delighted at the action you have taken about bands, but when are we going to hear them playing about the streets? Even quite small parade marches are highly beneficial, especially in towns like Liverpool and Glasgow; in fact, wherever there are troops and leisure for it there should be an attempt at military display

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 12 VII 40

1. The contacts we have had with the Italians encourage the development of a more aggressive campaign against the Italian homeland by bombardment both from air and sea It also seems most desirable that the Fleet should be able to use Malta more freely A plan should be prepared to reinforce the air defences of Malta in the strongest manner with A A guns of various types and with aeroplanes Malta was also the place where it was thought the aerial mine barrage from the "Egg-layer" would be useful Finally, there are the P E fuzes,* which will be coming along at the end of August, which should give very good daylight results If we could get a stronger air force there we might obtain considerable immunity from annoyance by retaliation

2 Let a plan for the speediest anti-aircraft reinforcement of Malta be prepared forthwith, and let me have it in three days, with estimates

* This was the photo-electric fuze, and, although not very successful, was the forerunner of the later proximity fuze

in time. It should be possible to inform Malta to prepare emplacements for the guns before they are sent out.

Prime Minister to General Ismay 12 VII.40

Will you bring the following to the notice of the Chiefs of Staff

It is the settled policy of His Majesty's Government to make good strong French contingents for land, sea, and air service, to encourage these men to volunteer to fight on with us, to look after them well, to indulge their sentiments about the French flag, etc, and to have them as representatives of a France which is continuing the war It is the duty of the Chiefs of Staff to carry this policy out effectively

The same principle also applies to Poles, Dutch, Czech, and Belgian contingents in this country, as well as to the Foreign Legion of anti-Nazi Germany. Mere questions of administrative inconvenience must not be allowed to stand in the way of this policy of the State. It is most necessary to give to the war which Great Britain is waging single-handed the broad, international character which will add greatly to our strength and prestige.

I hope I may receive assurances that this policy is being whole-heartedly pursued I found the conditions at Olympia very bad, and there is no doubt that the French soldiers were discouraged by some officers from volunteering An opportunity of assisting the French would be to make a great success of their function of July 14, when they are going to lay a wreath on the Foch statue

Prime Minister to General Ismay 13 VII 40

Draw Admiralty attention to the importance of all these ships, especially *Western Prince* What is her speed? It would be a disaster if we lost these fifty thousand rifles Draw attention also to the immense consequence of the convoy which is leaving New York between July 8 and 12. When will these various convoys be in the danger zone? When will they arrive? Let me have a report on the measures to be taken.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 13.VII 40

I am receiving from various sources suggestions that there should be another day of prayer and humiliation

Will you find out privately what is thought about this by the Archbishop

Prime Minister to General Ismay 14 VII.40

It seems to me very important that everybody should be made to look to their gas-masks now I expect a great many of them require overhauling, and it may well be Hitler has some gas designs upon us.

Will you consider how the necessary overhauls can be set on foot. Action should be taken at once.

Prime Minister to General Ismay, for V.C.A.S. 15.VII.40

I am in full agreement with your proposal for bombing during the present moon-phase. I do not understand however why we have not been able to obtain results in the Kiel Canal. Nothing could be more important than this, as it prevents any movement of prepared shipping and barges from the Baltic for invasion purposes. I heard that you had dropped a number of bombs into this area, but that they did no good. Let me know what you have done about it in the past. How many raids, how many bombs, what kind of bombs, and what is the explanation that the canal still works? Can you make any plans for bettering results in the future? This is surely a matter of the very highest importance, and now is the time when it counts most.

Prime Minister to General Ismay 15.VII.40

Make sure that overhead cover against bombing attack is provided for the 14-inch gun. A structure of steel girders should be put up to carry sandbag cover similar to that over the 6-inch guns which are mounted along the coast. All should be camouflaged. You will be told that it will be necessary to change the guns after a hundred and twenty rounds. In that case the structure will have to be taken to pieces and put up again after the gun is changed. There should be no difficulty in this.

Prime Minister to General Ismay 17.VII.40

Press the War Office continually to develop the Foreign Legion, either by Pioneer Battalions or otherwise. Let me have weekly reports.

Prime Minister to Home Secretary 18.VII.40

I certainly do not propose to send a message by the senior child to Mr. Mackenzie King, or by the junior child either. If I sent any message by anyone, it would be that I entirely deprecate any stampede from this country at the present time.*

(*Action this Day.*)

Prime Minister to Home Secretary 19.VII.40

I have noticed lately very many sentences imposed for indiscretion by magistrates' and other courts throughout the country in their execution of recent legislation and regulation. All these cases should be reviewed by the Home Office, and His Majesty moved to remit the

* This refers to the Government-sponsored scheme for the evacuation of children to Canada and the U.S.A. The scheme was abandoned after the sinking of the *City of Benares* by a U-boat on September 17, 1940.

sentence where there was no malice or serious injury to the State. By selecting some of those cases which have recently figured in the public eye, and announcing remission publicly, you would give the necessary guidance without which it is difficult for local courts to assess the lead and purpose of Parliament

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 20.VII 40

I have drawn attention to this danger before. I do not think *Hood* should be left lying in Gibraltar harbour at the mercy of a surprise bombardment by heavy howitzers Both she and *Ark Royal* should go to sea for a cruise, with or without *Valiant* and *Resolution*, as may be thought fit They could return to fuel or to carry out any operations, provided the Spanish situation has not further deteriorated. Pray let me have your proposals.

Prime Minister to Foreign Secretary 20 VII 40

Don't you think we might go very slow on all this general and equitable, fair and honourable peace business between China and Japan? Chiang does not want it, none of the pro-Chinese want it, and so far from helping us round the Burma Road difficulty, it will only make it worse I am sure that it is not in our interest that the Japanese should be relieved of their preoccupation Would it not be a good thing to give it a miss for a month or so, and see what happens?

Prime Minister to Secretary of State for War 20 VII.40

You may care to see this letter from Colonel Wedgwood on "London Defence". The only scale of attack which it seems to me need be contemplated for the centre of Government is, say, five hundred parachutists or Fifth Columnists What is the present plan, and what is the scale against which it is being provided?

You might do something for Jos. He is a grand-hearted man.

Prime Minister to Minister without Portfolio 20 VII.40

I am rather doubtful, from information which has reached me, whether our home timber resources are being adequately developed.

This, of course, is primarily a matter for the Minister of Supply, who I know has made certain departmental adjustments recently with this particular end in view.

Prime Minister to General Ismay 21.VII.40

Let me have a statement showing the scheme of defence for the Central Government, Whitehall, etc. What was the scale of attack prescribed, and who was responsible for taking the measures? What was the reason for attempting to put an anti-tank obstacle across St James's Park? Who ordered this? When was it counter-ordered?

Prime Minister to General Ismay 23.VII.40

I am told that the refuelling of fighter aeroplanes could be much more rapidly achieved if there were more tankers on the aerodromes, and considering that an attack by air would make every minute gained in returning the fighters to the air most precious, I should be glad if measures were taken at once to double or greatly increase the fuelling facilities.

Prime Minister to Secretary of State for War 23.VII.40

I do not seem to have had any answer from you to my query about whether the 2nd Canadian Division and all it stands for is being frittered away in Iceland.

Prime Minister to Secretary of State for War 23.VII.40

1. It is of course urgent and indispensable that every effort should be made to obtain secretly the best possible information about the German forces in the various countries overrun, and to establish intimate contacts with local people, and to plant agents. This, I hope, is being done on the largest scale, as opportunity serves, by the new organisation under M.E.W. [Ministry of Economic Warfare]. None of this partakes of the nature of military operations.

2. It would be most unwise to disturb the coasts of any of these countries by the kind of silly fiascos which were perpetrated at Boulogne and Guernsey. The idea of working all these coasts up against us by pin-prick raids and fulsome communiqués is one to be strictly avoided.

3. Sir Roger Keyes is now studying the whole subject of medium raids—*i.e.*, by not less than five nor more than ten thousand men. Two or three of these might be brought off on the French coast during the winter. As soon as the invasion danger recedes or is resolved, and Sir R. K.'s paper-work is done, we will consult together and set the Staffs to work upon detailed preparations. After these medium raids have had their chance there will be no objection to stirring up the French coast by minor forays.

4. During the spring and summer of 1941 large armoured irruptions must be contemplated. The material for these is however so far ahead of us that only very general study of their possibilities is now necessary, and no directions need be given to the Staff upon them until the end of August.

Prime Minister to General Ismay, for Chiefs of Staff 24.VII.40

Apart from the Anti-Nazi Germans, who can begin by being pioneers, rifles and ammunition should be issued to all foreign corps. Whether this should be from British Service rifles now in the posses-

sion of the Home Guard, but in process of being replaced by American rifles, or whether the foreign corps* should be armed with American rifles direct, has no doubt been considered. On the whole I am inclined to the former solution. It is most urgent to rearm the Poles and the French, as we may need them for foreign service in the near future. The armament of these foreign corps ranks *after* the armament of British troops so far as rifles are concerned, but they have priority over the Home Guard. They ought to have a small proportion of Bren guns, etc., even at the expense of our own men. What is being done to furnish them with artillery? Surely some of the 75's can be made to serve the purpose. The Polish unit should be ripened as much as possible. Pray let me have a weekly report of numbers and weapons.

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Lord, First Sea Lord, and V.C.N.S. 25.VII.40

I cannot help feeling that there is more in the plan of laying mines behind an invader's landing than the Naval Staff felt when I mentioned the matter three weeks ago. In the interval I sent a reminder asking that it should be further considered.

If an invader lands during the night or morning, the flotillas will attack him in rear during the day, and these flotillas will be heavily bombarded from the air, as part of the air battles which will be going on. If however when night falls a curtain or fender of mines can be laid close inshore, so as to cut off the landing-place from reinforcements of any kind, these mines, once laid, will not have to be guarded from air attack, and consequently will relieve the flotilla from the need of coming back on the second day, thus avoiding losses from the air and air protection. At any rate, I think it improvident not to provide for the option whether to seal off the hostile landing by attack of flotillas or mines. There may be several landings, and you may want to leave one sealed off with mines in order to attack another. Of course all the above would apply still more if the landing had got hold of a port instead of merely a beach.

Pray let this matter have further attention, and also say what craft

* French	2,000
Poles	14,000
Dutch	1,000
Czechs	4,000
Norwegians	1,000
Belgians	500
Anti-Nazi Germans	3,000
	25,500

are available for the purpose, or how soon they can be provided or adapted.

Prime Minister to V.C.N.S. 25.VII.40

Let me have a report on how far the German, Dutch, and Belgian harbours have been sealed up by mines or obstructions.

Prime Minister to Foreign Secretary 26.VII.40

I saw Mr. Quo yesterday, at his request, and explained to him frankly the position about the Burma Road. I told him verbally of the message I sent through the Foreign Office to Chiang Kai-shek. He was naturally anxious to extort some promise from me about what would happen when the three months had expired. I said it all depended upon what the situation was then, and that I could make no forecast. I assured him we should put no pressure on General Chiang to consent to terms or negotiations against his will and policy. Mr. Quo seemed fairly satisfied, though rueful.

Prime Minister to Chancellor of the Exchequer 28.VII.40

Now that the Roumanian Government are helping themselves to the property of British subjects, ought we not to show the Roumanians that we shall use their frozen fund to compensate our people? I understand that about six weeks ago you blocked Roumanian assets in London. We have been treated odiously by these people.

AUGUST

(*Action this Day*)

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 1.VIII.40

In view of the threatening attitude of Japan, it is vitally important to know about *Bismarck* and *Tirpitz*. Pray let me have your latest information. It seems to me that a great effort will have to be made by the Air Force to disable these ships, as their apparition in the next few months would be most dangerous.

Assuming Japan goes to war with us, or forces us into war, I suppose you would send *Hood*, three 8-inch-gun cruisers, two *Ramillies*, and twelve long-radius destroyers to Singapore.

Let me have the legends [*i.e.*, construction details] of the completed Japanese battle-cruisers.

(*Action this Day*)

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 2.VIII.40

I pray that we may never have to make this widespread distribution, but I am in full accord with the principles on which the Admiralty

would propose to meet the strain. I should have thought that *Hood* would be a greater deterrent than *Renown*. Please let me have a report of the possibility of air attack on *Bismarck* and *Tirpitz*. This seems to me to be one of the most vital steps to take. Apart from this, there is no need to make any new dispositions at the present time on account of Japanese war-risk.

I was much concerned to hear of the sinking of the three tankers off Tory Island. I should like to see you move some destroyers from the East Coast thither. We had better wait, however, until the August moon-phase is over. During this time also the American guns and rifles will be distributed to the troops.

(*Action this Day*)

Prime Minister to General Ismay 2.VIII.40

1. Next week one of my principal tasks must be going through this scheme of the Air Ministry for increasing the pilots and for the training of pilots. Lord Beaverbrook should be asked for his views beforehand.

2. Let me have a report on the plans for lectures on tactical subjects for the troops in the autumn.

3. What has been done about the collection of scrap of all kinds? Let me have a short report on one page covering the progress made this year.

4. When at the Admiralty I took a special interest in the work of the Salvage Department, and held a meeting there four months ago. A naval officer, Captain Dewar, was then in charge. Let me have a report on what has happened to salvage since that day.

5. I am also expecting this week to reach a settlement about the functions of the A.R.P. and police in the case of invasion. The Lord Privy Seal was dealing with this in the first instance. At the same time we must consider allowing transfers from A.R.P. to the Home Guard, and their being made available for fighting purposes. To what extent has the payment of the A.R.P. personnel been discontinued or restricted? It ought to be continually restricted.

6. Let me have a report on the progress and future construction of the tank divisions. There should be five armoured divisions by March 31 [1941], and two more by the end of May. Let me know how far the present prospects of men and material allow of this. Let me know also what are the latest ideas for the structure and organisation of an armoured division. This should be prepared on one sheet of paper, showing all the principal elements and accessories.

Prime Minister to General Ismay 2.VIII.40

It is very important to get on with the uniforms for the Home Guard. Let me have a forecast of deliveries.

(Action this Day)
Prime Minister to First Lord 2.VIII.40

My objection was to anything in the nature of sinking at sight or sinking without due provision for the safety of the crews. Provided this is excluded, there can be no reason against sinking a captured ship if, owing to air attack or other military reasons, it is impossible to bring her into port as a prize. The disadvantages of sinking a ship and losing valuable tonnage are obvious, and I do not see why in nineteen cases out of twenty the Admiralty cannot put a prize crew on board and send the ship in, in the ordinary way. I see no objection to the action taken in the *Hermione* case,* which falls entirely within the general principles set forth above.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 2.VIII.40

The whole question of holidays and reduced hours should be considered by the Cabinet at an early date. It is far too soon to assume that the danger has passed. It is a great mistake to tell the workpeople that they are tired. On the other hand, certain easements are indispensable. Please communicate with Mr. Bevin, Lord Beaverbrook, and the Minister of Supply, so that their views may be in readiness for Cabinet conversation. I should also like to know what is being done about holidays for the Civil Service and for Ministers, and persons in high Service positions. Something will have to be done about this, but we must be very careful not to be caught while in an August mood.

Prime Minister to Lord Privy Seal and Home Secretary 3.VIII.40

The attached memorandum by Lord Mottistone on duties of police in the event of invasion raises a very difficult question, and one that must be speedily settled. We cannot surely make ourselves responsible for a system where the police will prevent the people from resisting the enemy and will lay down their arms and become the enemy's servant in any invaded area. I confess I do not see my way quite clearly to the amendments required in the regulations. In principle however it would seem that the police should withdraw from any invaded area with the last of His Majesty's troops. This would also apply to the A.R.P. and the fire brigades, etc. Their services will be used in other districts. Perhaps on invasion being declared the police, A.R.P., fire brigades, etc., should automatically become a part of the military forces.

* The *Hermione* was a small Greek steamer which was intercepted by our cruisers in the Ægean on July 28, 1940, while carrying a military cargo for Italy. Our ships were attacked by aircraft when making the interception. The *Hermione* was therefore sunk, and her crew left in boats near the land.

Prime Minister to General Ismay 3.VIII 40

All secret service reports about affairs in France or other captive countries are to be shown to Major Morton, who is responsible for keeping me informed. Make sure this instruction is obeyed

Prime Minister to Secretary of State for War 3.VIII 40

It seems quite possible that a portion of General de Gaulle's forces will be used in the near future It therefore becomes of the utmost consequence and urgency to complete the equipment of his three battalions, company of tanks, headquarters, etc Evidently action is being taken already, but I shall be much obliged if you will accelerate this action by every means in your power, and also if you will let me know in what way the situation has improved since Major Morton's minute of yesterday.

Prime Minister to Sir Edward Bridges, and others concerned 3 VIII.40

1. I think the circular about work in the factories and holidays for whole establishments should, whatever the agreement of the Production Council, be brought before the Cabinet on Tuesday by the Minister of Labour We must give holidays without creating a holiday atmosphere It would therefore seem desirable to announce only that "such local arrangements as are possible are being made for staggered holidays", or something like that

2. I approve Sir Horace Wilson's letter to departments It arose out of my instructions to him

3. I shall be very glad if you will adjust the holidays of Ministers, and make sure that the Services arrange for similar relief in case of high military officers at the centre of government

Prime Minister to Sir Edward Bridges 4 VIII 40

I circulate to my colleagues the enclosed report on the first use of the U P weapon with the wire curtain at Dover This appears to be of high importance, and may well inaugurate a decisive change in the relations of ground and air, particularly in respect of ships and ports exposed to dive-bombing attack

Prime Minister to Professor Lindemann 4.VIII 40

What are you doing to focus the discussions on food, shipping, and agricultural policy for the second twelve months of the war? I thought it looked like 18,000,000 tons of shipping [for food], plough up 1,500,000 more acres, and instruct the Food Department to submit a plan both for increasing rations and building up further food reserves This should be possible on the above basis

Prime Minister to Secretary of State for Air and C.A.S. 4.VIII.40

The danger of Japanese hostility makes it all the more important that the German capital ships should be put out of action. I understand that the Air Force intends to make heavy attacks on these ships as soon as there is sufficient moon. *Scharnhorst* and the *Gneisenau*, both in floating docks at Kiel, the *Bismarck* at Hamburg, and the *Tirpitz* at Wilhelmshaven, are all targets of supreme consequence. Even a few months' delay in *Bismarck* will affect the whole balance of sea-power to a serious degree. I shall be glad to hear from you.

Prime Minister to General Ismay 5.VIII.40

I am not satisfied with the volume or quality of information received from the unoccupied area of France. We seem to be as much cut off from these territories as from Germany. I do not wish such reports as are received to be sifted and digested by the various Intelligence authorities. For the present Major Morton will inspect them for me and submit what he considers of major interest. He is to see everything and submit *authentic documents for me in their original form*.

Further, I await proposals for improving and extending our information about France and for keeping a continued flow of agents moving to and fro. For this purpose naval facilities can, if necessary, be invoked. So far as the Vichy Government is concerned, it is not creditable that we have so little information. To what extent are American, Swiss, and Spanish agents being used?

Prime Minister to General Ismay 5.VIII.40

What orders are extant for the future production of U.P. Multiple Projectors in groups of twenties, tens, fives, and also single projectors?

What amount of ammunition—

(*a*) of the ordinary rocket,
(*b*) of the aerial mine,
(*c*) of the P.E. fuze,
(*d*) of the radio fuze,

is on order? What are the forecasts of deliveries in the next six months in all cases?

Presently the P.E. fuze will probably supersede the aerial mine for use in multiple projectors mounted on H.M. ships. This will entail an alteration of the projector tubes. The Admiralty should be asked to study this betimes, so that the new tubes can be fitted on the existing mountings of H.M. ships with the least possible delay from the moment that this change appears desirable.

The Admiralty should also be asked to report whether any progress has been made on firing short aerial mines from ships' guns.

I wish to refresh my memory with what happened about this before I left the Admiralty

Prime Minister to Minister of Mines 6.VIII.40

I saw it stated that you were piling up large reserves of coal during the summer for use during the winter I should be glad to know how far this very wise precaution has advanced We were very short and anxious in January last, and I hope you are taking precautions

Prime Minister to Secretary of State for War 7.VIII 40

Please let me know what is being done to train men in the use of the sticky bomb, which is now beginning to come through in quantity.

Prime Minister to General Ismay 9 VIII 40

Ask for a statement of the Ministry of Supply importation programme under various heads. Professor Lindemann should be consulted about these heads Let me see them

The programme for the second year of the war has not yet been presented to me in a coherent form.

Prime Minister to Secretary of State for War and C I.G S. 9.VIII 40

I was much concerned to find that the 1st Division, which has an exceptionally high proportion of equipment, and includes a Brigade of Guards, should be dispersed along the beaches, instead of being held in reserve for counter-attack What is the number of divisions which are now free and out of the line, and what is the argument for keeping divisions with a high equipment of guns, etc , on the beaches?

Prime Minister to Lord Beaverbrook 9.VIII 40

If it came to a choice between hampering air production or tank production, I would sacrifice the tank, but I do not think this is the case, as the points of overlap are not numerous and ought to be adjustable. I gathered from you that you thought you could arrange with the Minister of Supply

Prime Minister to Minister of Information 9 VIII 40

It is important to keep General de Gaulle active in French on the broadcast, and to relay by every possible means our French propaganda to Africa. I am told the Belgians will help from the Congo

Have we any means of repeating to the West African stations the agreement made between us and de Gaulle?

Prime Minister to General Ismay 10.VIII.40

Let me have a weekly return of the deliveries to troops of the

American 75's and the .300 rifles to Home Guard, with consequent liberation by them of Lee-Metfords. Begin at once.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 10.VIII.40

The Prime Minister would be glad to have a report from the C.O S Committee, after conference with the C-in-C Home Forces, upon the small arms ammunition position on the beaches and with the Reserves

Prime Minister to Minister of Mines 11.VIII.40

I felt sure you would take advantage of the breakdown of the export market to increase our stocks all over the country. I hope you will press on with this, especially as regards our essential gas, water, and electricity works I note that the gas and electricity supplies are about 20 per cent up We cannot go wrong in piling up such well-distributed stocks, which are sure to be used sooner or later

I am sending a note to the Minister of Transport to call his attention to the position of the railways.

The tremendous upset in your plans due to the collapse of France and the loss of three-quarters of our export markets must have put a great strain on your department It must be very difficult after all your efforts to increase production to explain the sudden slump, but I have no doubt the men will understand. Indeed, what you tell me about the fortitude of the Kent miners is an encouraging sign of the spirit which I believe informs all the working men in the country.

Prime Minister to Minister of Information 11 VIII 40

In view of certain activities we are planning for General de Gaulle, it is of the highest importance that the broadcasting of French news in North and West Africa should be carried to the highest point Please make sure that the B.B C. conform to this requirement, and let me have a report on Monday to the effect that all is satisfactorily arranged

I cannot emphasise too strongly that you have full authority to make the B B.C obey.

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Transport 11 VIII 40

I should be grateful for a full report on the steps taken by your department to deal with the difficulties which may arise from the bombing and closing of ports.

One-quarter of our imports, it seems, normally comes in through the Port of London, and one-fifth through the Mersey, with a tenth each through Southampton, the Bristol Channel, and the Humber

We must envisage these entrances being wholly or partially closed, either one at a time or even several at a time, but I have no doubt you have worked out plans to take account of the various contingencies.

In view of our large accretions of shipping it may well be that port facilities and roadway facilities may be a more stringent bottleneck than shortage of tonnage, so that the preparations you make to meet the various possible eventualities may be of the greatest importance.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 12.VIII.40

How does the position now stand about a Timber Controller under the Ministry of Supply?

Ask for a short summary from the Ministry of Supply of the present timber position and policy.

Prime Minister to Lord Privy Seal and Captain Margesson 12.VIII.40

It would probably be convenient for me to make a general statement on the war, covering the first year and also the first quarter of the new Government, before the House rises. This would be expected, and I suppose Tuesday, the 20th, would be the best day. This should, of course, be in public session. Perhaps you will let me know what you wish. An announcement could be made in good time this week.

It would save me a lot of trouble if a record could be taken at the time, so that the speech could be repeated over the wireless in the evening, or such parts of it as are of general interest. Can this be arranged without a Resolution? If not, could a Resolution be passed this week? I do not think the House would object.

Prime Minister to Home Secretary 12.VIII.40

The drafts [about instructions to police in case of invasion] submitted do not correspond with my view of the recent Cabinet decision. We do not contemplate or encourage fighting by persons not in the armed forces, but we do not forbid it. The police, and as soon as possible the A.R.P. services, are to be divided into combatant and non-combatant, armed and unarmed. The armed will co-operate actively in fighting with the Home Guard and Regulars in their neighbourhood, and will withdraw with them if necessary, the unarmed will actively assist in the "stay put" policy for civilians. Should they fall into an area effectively occupied by the enemy, they may surrender and submit with the rest of the inhabitants, but must not in those circumstances give any aid to the enemy in maintaining order, or in any other way. They may assist the civil population as far as possible.

Prime Minister to Minister of Transport 13.VIII.40

I should be glad to know what stocks of coal are now held by the railways, and how they compare with those normally held. With the stoppage of our export trade to Europe there should be a great surplus just now, and no doubt you are taking advantage of this to fill up every available dump so that we shall have a well-distributed stock for the railways in case of any interruptions, or even in case of another very hard winter. Negotiations about price should not be allowed to hold up the process of re-stocking. If necessary, some form of arbitration will have to be employed to make sure that the prices paid are fair.

Prime Minister to Secretary of State for War 13.VIII.40

If, owing to lack of equipment and other facilities, it is necessary to limit the numbers of the active Home Guard, would it not be possible to recruit a Home Guard Reserve, members of which would for the time being be provided with no weapons and no uniform other than arm-bands? Their only duties would be to attend such courses of instruction as could be organised locally in the use of simple weapons like the "Molotov cocktail", and to report for orders in the event of invasion.

Unless some such step is taken, those who are refused enlistment will be bewildered and disappointed, and one of the primary objects of the Home Guard, which was to provide for the people as a whole an opportunity of helping to defend their homes, will be lost. I am anxious to avoid the disappointment and frustration which the stoppage of recruiting for the Home Guard is likely to cause to many people.

Please let me know what you think of this proposal.

Prime Minister to General Ismay 19.VIII.40

Is it true that Admiral [John] Cunningham says that the only suitable day for "Menace" [Dakar] is September 12, and that if this day is missed owing to storm no other days will be open till the 27th or 28th, when tide and moon will again be satisfactory? All this raises most grave questions. The Admiral cannot take up a position that only in ideal conditions of tide and moon can the operation be begun. It has got to be begun as soon as possible, as long as conditions are practicable, even though they be not the best. People have to fight in war on all sorts of days, and under all sorts of conditions. It will be a great misfortune if there is any delay beyond the 8th. Pray report to me on this to-day.

Prime Minister to General Ismay 21.VIII.40

I am not convinced by these arguments about flame-throwers. The question is one to be settled relatively to other forms of war effort

The prospects of invasion are rapidly receding. The likelihood in an invasion of a column of troops marching up the very defile in which these installations have been laid on appears remote. The idea of setting up a Petroleum Warfare Executive is a needless multiplication of our apparatus. I have no doubt whatever that the method would be very effective if ever the occasion arose, but will it arise, and in this case would it be at the point expected? Troops do not march along roads without having first cleared their way by small parties and guarded their flanks on each side of defiles.

Prime Minister to First Lord 22.VIII.40

I await your proposals about the resumption of the capital ship programme, which was approved by the late Cabinet on my initiative. This cannot be settled apart from the general demand upon steel and labour, but in principle I favour its resumption.

I hope opportunity will now be taken to repair the disastrous neglect to convert the *Royal Sovereign* class into properly armoured and bulged bombarding vessels with heavy deck armour. These will be needed next year for the attack on Italy. It is lamentable that we have not got them now. They should certainly take precedence over the resumption of battleship construction.

Prime Minister to General Ismay 24.VIII.40

Report to me on the position of Major Jefferis. By whom is he employed? Whom is he under? I regard this officer as a singularly capable and forceful man, who should be brought forward to a higher position. He ought certainly to be promoted Lieutenant-Colonel, as it will give him more authority.

Prime Minister to C.A.S. and V.C.A.S. 24.VIII.40

It is of high importance to increase both the number of squadrons and the number of aircraft and crews immediately available. After a year of war we have only operationally fit about 1,750, of which again only three-quarters are immediately available. You cannot rest satisfied with this, which is less than the number we were supposed to have available before the war.

Prime Minister to Minister of Transport 25.VIII.40

I have read with interest your memorandum on Port Clearance.

I note that the Minister of Shipping doubts whether the country could be supplied through the West Coast ports on the scale you envisage. I should be glad to have your views on this.

Does not the widespread dislocation caused by the cold spell last winter raise some doubts as to the ready adaptability of the railway system in case of sudden emergency?

No doubt arrangements have been made for the importation of oil, which is not included in the food or supply programme. It appears that over two-fifths of our oil imports come through London and Southampton in peace-time. Our stocks are high, but if road transport had to be used more fully to relieve the railways our consumption would of course increase.

I presume that you have discussed their import programmes with the Ministers of Food and of Supply, so that alternative schemes will be ready in case of great diversions.

Prime Minister to Secretary of State for War 25.VIII.40

I have been following with much interest the growth and development of the new guerilla formations of the Home Guard known as "Auxiliary Units".

From what I hear these units are being organised with thoroughness and imagination, and should, in the event of invasion, prove a useful addition to the regular forces.

Perhaps you will keep me informed of progress.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 25.VIII.40

The enclosed returns show losses of over forty thousand tons reported in a single day. I regard this matter as so serious as to require special consideration by the War Cabinet. Will you therefore have prepared a statement showing the recent losses, their cause, the measures which have been taken by the Admiralty to cope with the danger, any further measures which you feel it necessary to propose, and whether there is any way in which the War Cabinet can assist the Admiralty.

I should be glad if you would make this report to the War Cabinet on Thursday next.

(*Action this Day*)
Prime Minister to General Ismay 25.VIII.40

Address the War Office forthwith upon the situation disclosed at Slough. Point out the danger of this large concentration of vehicles, the desirability of dispersing and concealing the vehicles. Ask that a plan should be examined for de-centralising this depot as far as possible. We should also make sure that no sediment or surplus accumulates in the depot. It would be a great pity if a thousand valuable vehicles were ruined by an air attack.

Prime Minister to Secretary of State for Air 25.VIII.40

I visited Kenley [Air Station] on Thursday, saw the gunner in question, and had a rocket fired off. Moreover, it was the Admiralty Committee over which I presided early in the year which produced the

idea of using these distress rockets. I am therefore well acquainted with the subject. The Air Ministry, not for the first time, spread itself into very large demands, and, using its priority, barged in heavily into other forms of not less important production I agree that P.A C * rockets may be a good interim defence against low-flying attack, but they have to take their place in the general scheme. I thought myself about five thousand a month would be sufficient, but I am willing to agree to one thousand five hundred a week, or six thousand a month This figure could be somewhat extended if the wire-recovery projects you mention were further developed and proved an effective economy

(*Action this Day*)
Prime Minister to Secretary of State for War 25.VIII 40

War Office have accepted from the War Cabinet the responsibility for dealing with delayed-action bombs. This may become a feature of the enemy attack. A number were thrown last night into the City, causing obstruction They may even try them on Whitehall! It seems to me that energetic effort should be made to provide sufficient squads to deal with this form of attack in the large centres. The squads must be highly mobile, so as not to waste men and material. They must move in motor-lorries quickly from one point to another I presume a careful system of reporting all unexploded bombs and the time at which they fell is in operation, and that this information will be sent immediately to the delayed-action section of Home Defence, which has no doubt already been established, and also the various local branches The service, which is highly dangerous, must be considered particularly honourable, and rewards should follow its successful discharge.

I should be very glad to see your plans for the new section, together with numbers, and it will also be interesting to have a short account of the work done up to date and the methods employed I presume you are in touch with all the scientific authorities you need

On the other hand, I am asking the Air Ministry for information as to their reciprocating this process on the enemy.

(General Ismay to see)

Prime Minister to Secretary of State for Air 25 VIII 40

I cannot feel you are justified in maintaining the present scale of communication squadrons when we are fighting so heavily The sole end should surely be to increase the reserve and operational strength of our fighting squadrons and to meet the problem of trainer aircraft Surely your dominant idea should be "Strength for battle". Every-

* The letters stand for "Parachute and Cable" The P A C rocket was one form of the U P. weapon. A description of the latter is given in a minute dated January 13, 1940 See Volume I, p 594, first edition, New Edition, p 674

thing should be keyed on to this, and administrative convenience or local vested interests must be made to give way In your place I should comb and re-comb. I have been shocked to see the enormous numbers at Hendon, and I would far rather give up flying on inspections altogether for members of the Government than that this should be made a reason for keeping these forces out of the fight

I should have thought that Hendon could provide at least two good squadrons of fighter or bomber aircraft of the reserve category, and that they should have the machines issued to them and practise on them as occasion serves. Then they could be thrown in when an emergency came

Ought you not every day to call in question in your own mind every non-military aspect of the Air Force? The tendency of every Station Commander is naturally to keep as much in his hands as possible The Admirals do exactly the same Even when you have had a thorough search, if you look around a few weeks later you will see more fat has been gathered

I hope you will feel able to give some consideration to these views of your old friend

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 27.VIII.40

Will you kindly send the following to Admiral Cunningham, Commander-in-Chief Mediterranean·

Following from Prime Minister, Minister of Defence

Main object of directive was to safeguard Alexandria. Only a limited number of troops can be maintained Mersa Matruh, as G O.C. Middle East will inform you Every effort is to be made to defend this position If however it and intermediate positions are forced or turned, it will be necessary to hold the line from Alexandria southwards along the cultivated area [of the Delta] Air attack on the Fleet at Alexandria is not necessarily less effective from a hundred and twenty miles distance than from twenty miles, since aeroplanes often fly at three hundred miles per hour and have ample endurance In practice it is usually thought better to hold aerodromes a little back of the actual fighting line They do not move forward concurrently with the fronts of armies Everyone here understands the grievous consequence of the fall of Alexandria, and that it would probably entail the Fleet leaving the Mediterranean If however you have any helpful suggestion to make for the more effective defence of Mersa Matruh or of any positions in advance of it I should be obliged if you would tell me

Prime Minister to General Ismay, for Joint Planning Staff 28 VIII 40

Now that the long nights are approaching the question of the black-out must be reviewed I am in favour of a policy not of *black-out* but

of *blackable-out* For this purpose a considerable system of auxiliary electric street-lighting must be worked out. The whole of the centre of London, now lighted by incandescent gas, must be given priority The best methods in the centres of other great cities must also be studied and local schemes must be examined Thus the lights can be switched down and up and finally out on an air-raid warning being given The lights themselves should not be of a too brilliant character The subdued lighting of shop windows must also be studied with a view to extending the facilities given last Christmas on a permanent basis. Where factories are allowed to continue working at night in spite of the black-out there can be no objection to extending blackable-out lighting to the surrounding districts, thus tending to make the target less defined Consideration should also be given to decoy lighting and baffle lighting in open spaces at suitable distances from vulnerable points

Prime Minister to Secretary of State for Air, C.A.S ,
and General Ismay 29 VIII.40

I was much concerned on visiting Manston Aerodrome yesterday to find that although more than four clear days have passed since it was last raided the greater part of the craters on the landing ground remained unfilled and the aerodrome was barely serviceable When you remember what the Germans did at the Stavanger aerodrome and the enormous rapidity with which craters were filled I must protest emphatically against this feeble method of repairing damage Altogether there were one hundred and fifty people available to work, including those that could be provided from the Air Force personnel These were doing their best No effective appliances were available, and the whole process appeared disproportionate to the value of maintaining this fighting vantage ground

All craters should be filled in within twenty-four hours at most, and every case where a crater is unfilled for a longer period should be reported to higher authorities In order to secure this better service it will be necessary to form some crater-filling companies You might begin with, say, two of two hundred and fifty each for the South of England, which is under this intensive attack These companies should be equipped with all helpful appliances and be highly mobile, so that in a few hours they can be at work on any site which has been cratered. Meanwhile, at every aerodrome in the attack area, and later elsewhere, there must be accumulated by local contractors stocks of gravel, rubble, and other appropriate materials sufficient to fill without replenishment at least one hundred craters Thus the mobile air-field repair companies would arrive to find all the material all ready on the spot

I saw some time ago that the Germans filled in the shell holes by some process of having the gravel in wooden frameworks The

V.C.N.S. drew my attention to it during the Norwegian operation, and he could perhaps put you on to the telegram referred to.

In what department of the Air Ministry does this process now fall?

After the craters had been refilled camouflage effort might be made to pretend they had not been, but this is a refinement.

Prime Minister to General Ismay
(For all departments concerned, including Service Dept., Home Security, M.A.P., and Supply) 30.VIII.40

We must expect that many windows will be broken in the bombing raids, and during the winter glass may become scarce, with serious resultant damage to buildings if not replaced.

The utmost economy is to be practised in the use of glass. Where windows are broken they should, if possible, be boarded up, except for one or two panes. We cannot afford the full-sized windows in glass. All glass not needed for hot-houses should be stored if the hot-houses are empty. I saw at Manston a large hot-house with a great quantity of glass; enough was broken to make it useless, and I directed that the rest should be carefully stored.

What is the condition of glass supply? It would seem necessary to press the manufacturers.

Government buildings should all be fitted with emergency windows, containing only one or two glass panes, which, when the existing framework is blown in, can be substituted. Let me have a full report on the position.

Prime Minister to General Ismay 31.VIII.40

If French India wish for trade they should be made to signify association with General de Gaulle. Otherwise no trade! This is not a matter upon which to be easy-going. Secretary of State for India to be informed.

The accession of any French possessions now is of importance.

Prime Minister to General Ismay 31.VIII.40

I have not approved of any further cruiser tanks being dispatched to the Middle East beyond those which have already gone. Although in principle it is desirable to complete the dispatch of a full armoured division, further movements from this country can only be decided in relation to situation of home forces. No decision of this importance must be taken without reference to me, and in this case I should have to consult the Cabinet.

Prime Minister to Minister of Supply 31.VIII.40

I am very glad to know that the chemical warfare stocks are piling

up in this country. Let me know what the total now amounts to. The necessary containers should be brought level with supply. Do these stocks keep? Press on

SEPTEMBER

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee 1 IX 40

Of course if the Glider scheme is better than parachutes we should pursue it, but is it being seriously taken up? Are we not in danger of being fobbed off with one doubtful and experimental policy and losing the other which has already been proved? Let me have a full report of what has been done about the Gliders.

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 1.IX.40

I am deeply concerned at your news that you cannot attack these batteries of German long-range guns until the 16th You are allowing an artillery concentration to be developed day after day which presently will forbid the entry of all British ships into the Straits of Dover, and will prepare the way for an attack on Dover itself. Pray let me know what you propose to do about this

Surely while the big guns are actually being hoisted into position and cannot fire back is the time for action. The general weakness of the defences of Dover itself in heavy guns is also a matter of great seriousness We must not simply look at dangers piling up without any attempt to forestall them *Erebus* will have to face double the fire on the 16th that she or any other ship would have to face in the next week

I remember well that it was customary to bombard the Knocke and other German batteries on the Belgian coast very frequently during the late war It was possible to fire most accurately by night after a buoy had been fixed and sound-ranging used I ask for proposals for action this week Look at the photographs attached.

Prime Minister to General Ismay, for C.O S Committee 1 IX.40

I presume you will be thinking about what is to happen should "Menace" succeed, with little or no bloodshed It would seem that as soon as de Gaulle has established himself there and in the place a little to the north he should try to get a footing in Morocco, and our ships and troops could be used to repeat the process of "Menace", if it has been found to work, immediately and in a more important theatre This operation may be called "Threat"

Prime Minister to Secretary of State for War 1.IX 40

I should be glad to have a full report of the arrangements being made to provide educational and recreational facilities for the troops

during the coming winter. Who will be responsible for this important branch of work?

Prime Minister to Secretary of State for India 1.IX.40

1 I am sorry to say that I cannot see my way to diverting aeroplanes or A A. guns from the battle now raging here for the defence of India, which is in no way pressing, neither is it possible to divert American supplies for the building of an aircraft industry in India. We are already running risks which many might question in the reinforcement and re-equipment of the Middle East, and when the battle at home dies down this theatre will absorb all our surplus for a long time to come.

2 It is very important that India should be a help and not on the balance a burden at the present time. The debit balance is heavy when you consider the number of British troops and batteries locked up there, and the very exiguous Indian forces which, after a year of war, have reached the field I am glad you are making increased efforts to form Indian divisions for the very large important operations which seem likely to develop in the Middle East in 1941

Prime Minister to First Lord, First Sea Lord, and Controller 5 IX.40

I continue to be extremely anxious for *King George V* to get away to the north. It would be disastrous if *Bismarck* were finished and something happened to *King George V* Surely the electricians, etc, can go north in her and finish up at Scapa It would be most painful if you lost this ship now, after all these long, vexatious delays, just at the moment when she is finished and most needed. The Tyne is very ill-defended compared with Scapa.

(Action this Day)
Prime Minister to Foreign Secretary 5 IX 40

Would it not be well to send a telegram to Lord Lothian expressing War Cabinet approval of the manner in which he handled the whole destroyer question, and paying him a compliment?

At the same time, what is being done about getting our twenty motor torpedo-boats, the five P B Y [flying-boats], the one hundred and fifty to two hundred aircraft, and the two hundred and fifty thousand rifles, also anything else that is going? I consider we were promised all the above, and more too Not an hour should be lost in raising these questions "Beg while the iron is hot"

(Action this Day)
Prime Minister to Secretary of State for War and C.I G S. 8 IX 40

I am very pleased with this telegram [about the Cavalry Division in Palestine] It has been heartbreaking to me to watch these splendid

units fooled away for a whole year. The sooner they form machine-gun battalions, which can subsequently be converted into motor battalions, and finally into armoured units, the better. Please let nothing stand in the way. It is an insult to the Scots Greys and Household Cavalry to tether them to horses at the present time. There might be something to be said for a few battalions of infantry or cavalrymen mounted on ponies for the rocky hills of Palestine, but these historic Regular regiments have a right to play a man's part in the war. I hope I may see your telegram approving this course before it goes.

Prime Minister to First Lord 9 IX 40

I have read your papers on the new programme. I understand you are going to redraft your memorandum after reading the one I presented to the Cabinet in March. I am not content at all with the refusal to reconstruct the *Royal Sovereign* class.* I think these should have precedence over all battleships, except those which can finish by the end of 1942. This would mean that you could get on with the *Howe*, the position of the other five capital ships being considered next year when the time for presenting the Navy Estimates comes. I see no reason why work should not proceed on the aircraft-carrier *Indefatigable*, and on the eight suspended cruisers. I am quite ready to approve the refilling of all slips vacated by anti-submarine craft, provided that a maximum limit of fifteen months is assigned to the completion of all new craft. All very large-size destroyers taking over this period to build must be excluded from the emergency war-time programme.

After your final proposals are ready we can have a conference.

Prime Minister to General Ismay 10 IX 40

1. The prime defence of Singapore is the Fleet. The protective effect of the Fleet is exercised to a large extent whether it is on the spot or not. For instance, the present Middle Eastern Fleet, which we have just powerfully reinforced, could in a very short time, if ordered, reach Singapore. It could, if necessary, fight an action before reaching Singapore, because it would find in that fortress fuel, ammunition, and repair facilities. The fact that the Japanese had made landings in Malaya and had even begun the siege of the fortress would not deprive a superior relieving fleet of its power. On the contrary, the plight of the besiegers, cut off from home while installing themselves in the swamps and jungle, would be all the more forlorn.

2. The defence of Singapore must therefore be based upon a strong

* See note under my minute of 7 IX 40, Book II, Chapter XXII, and also my minutes of 15 IX 40 and 26 XII 40, below.

local garrison and the general potentialities of sea-power. The idea of trying to defend the Malay peninsula and of holding the whole of Malaya, a large country four hundred by two hundred miles at its widest part, cannot be entertained A single division, however well supplied with signals, etc., could make no impression upon such a task What could a single division do for the defence of a country nearly as large as England?

3 The danger of a rupture with Japan is no worse than it was The probabilities of the Japanese undertaking an attack upon Singapore, which would involve so large a proportion of their fleet far outside the Yellow Sea, are remote; in fact, nothing could be more foolish from their point of view Far more attractive to them are the Dutch East Indies The presence of the United States Fleet in the Pacific must always be a main preoccupation to Japan They are not at all likely to gamble They are usually most cautious, and now have real need to be, since they are involved in China so deeply

4 I should have preferred the Australian Brigade to go to India rather than Malaya, but only because their training in India will fit them more readily for the Middle East I am delighted to know they can be trained in the Middle East

5. I do not therefore consider that the political situation is such as to require the withholding of the 7th Australian Division from its best station strategically and administratively A telegram should be drafted to the Commonwealth Government in this sense.

Prime Minister to the Mayor of Tel Aviv, Palestine 15 IX.40

Please accept my deep sympathy in losses sustained by Tel Aviv in recent air attack. This act of senseless brutality will only strengthen our united resolve.

Prime Minister to First Lord 15.IX.40

1 Your new programme I am very doubtful whether the Japanese figures are correct. The Naval Intelligence Branch are very much inclined to exaggerate Japanese strength and efficiency I am not however opposed to the resumption of the battleship programme, provided it can be fitted in with more immediate war-time needs. Much of the battleship plant and labour would not be useful for other purposes. Pray let me have a paper showing the demands these ships would make in each year they are under construction, in money, steel, and labour Every effort must be concentrated upon *Howe*

2. I should be content if two R. [*Royal Sovereign*] class vessels were taken in hand as soon as the invasion situation has cleared and we get *King George V* in commission Meanwhile material can be collected

and preparations made. This should enable them to be ready in eighteen months from now—*i e*, the summer of 1942

3. You should press on with *Indefatigable*, but we need not consider an additional aircraft-carrier until early next year. The drawings can however be completed.

4. I suppose you realise that the Belfast type take over three years to build. Considering a large programme of cruisers is already under construction, I hope you will not press for these four to be added to the programme of this year.

5. I am all for building destroyers, and I do not mind how large they are, or how great their endurance, *provided* that they can be constructed in fifteen months. This should be taken as the absolute limit, to which everything else must be made to conform We were making destroyers which took three years to build, everyone thinking himself very clever in adding one improvement after another. I should like to discuss the destroyer designs with the Controller and the Director of Naval Construction They must be built only for this war, and have good protection from aircraft Extreme speed is not so important. What you say about the U-boats working continually farther west is no doubt true, but the corvettes, formerly called whalers, have very fine endurance and range.

6 The submarine programme is already very large, and makes inroads on other forms of war requirements. I think you would be wise to re-examine the demand for the fourteen additional to the twenty-four to which the Treasury have agreed

7. Great efforts should be made to produce the landing-craft as soon as possible Are the Joint Planning Committee satisfied that these numbers are sufficient?

8. I am surprised you ask for only fifty anti-E-boats. Unless this is the utmost limit of your capacity, one hundred would be more appropriate.

9 Speaking generally, the speed of construction and early dates of completion must at this time be considered the greatest virtues in new building It is no use crowding up the order books of firms and filling the yards with shipping orders which everyone knows cannot be completed You have, I presume, consulted Sir James Lithgow about this programme, and have heard his views upon the consequences it will have upon merchant shipping building and our already reduced steel output. It is very wrong to trench too deeply upon the needs of other services in time of war.

10 What has happened to the armoured torpedo ram which I asked the D N C. to design?

Prime Minister to Colonel Jacob 15.IX.40

1. More than a year ago it was considered possible that we should soon be able to develop Radar inland Since then however we have relied entirely on the Observer Corps. These have done splendid work; but in cloudy weather like yesterday and to-day they have the greatest difficulty in functioning accurately. If we could have even half a dozen stations which could work inland I am assured that very great advantages would be reaped in interception. This is especially important over the Sheerness–Isle of Wight promontory, which is likely to be the main line of air attack on London. I am told that there are duplicate installations already at some of the stations on this sector of the coast as an insurance against bombing. These might be turned round and put in action In other cases new stations could be made. I regard this matter as of the highest urgency.

2 To-morrow, Monday, Air Marshal Joubert de la Ferté will assemble all necessary scientific authorities and make a report that day to me on—

(*a*) the desirability of the above,
(*b*) its practicability and the time it will take to get even a few stations into action

He should make proposals for putting into service at the earliest moment six or twelve stations, and for rebuilding their reserves

3 Should a feasible scheme emerge, I will myself bring it before the Minister of Aircraft Production.

Prime Minister to General Sikorski 17.IX.40

I deeply appreciated your telegram of September 14 conveying the relief felt by the Polish Government, the Polish armed forces, and the Polish people at the fortunate escape of the King and Queen from the recent German bombing of Buckingham Palace. As their Majesties stated, these dastardly attacks have only strengthened the resolution of all of us to fight through to final victory.

Prime Minister to Home Secretary 18 IX 40

The enemy will try by magnetic mines and other devices to smash as much glass as possible, and the winter is coming on We must immediately revert to more primitive conditions in regard to daylight in dwellings All glass in the country should be held, and every effort made to increase the supply. Everyone should be encouraged or pressed to reduce window-glass to at least one-quarter of its present compass, keeping the rest as spare Windows should be filled as may be most convenient with plywood or other fabric, and the spare panes kept to replace breakages The quicker this can be done in the target centres the better Will you convene a meeting of the departments

concerned and reach decisions for action of a violent character and on the broadest lines, inviting me to assist you in suppressing obstruction.

Prime Minister to Home Secretary 19 IX.40

I sent you a minute on this subject last night, and you were going to look into it for me

How many square feet of glass have been destroyed up to date? Can any estimate be formed? If of course our monthly production is ahead of the damage there is no need to worry.

Let me have the best estimate possible

Prime Minister to Postmaster-General 19 IX 40

There are considerable complaints about the Post Office service during air raids Perhaps you will give me a report on what you are doing.

Prime Minister to C.I G.S 21 IX 40

I understood that all brigades from India consisted of one British and three Indian battalions, which would be the normal and desirable formation But this telegram seems to suggest that Indian brigades have only Indian troops If so the change made by C.-in-C Middle East is most desirable

Prime Minister to First Sea Lord and Controller 21.IX 40

How is the expenditure of naval ammunition proceeding in the Middle East, as well as in the North Sea and Channel? Let me know of any weak points in the supplies which are emerging Have you got over the difficulty of the 4.7 ammunition? Let me have a short note

Prime Minister to Secretary of State for Air 21.IX 40

Pray have a look at the Air Ministry communiqué issued in this morning's papers It includes the following

> "The enemy formations were engaged by our fighters, but cloud conditions made interception difficult Reports so far received show that four enemy aircraft were shot down Seven of our fighters have been lost, the pilots of three being safe"

It is very unwise to let the Germans know that their new tactics have been successful and that they resulted in our losing seven fighters as against four

We do not of course want to conceal our losses, at the present time, when we are prospering, but surely there is no need to relate them to any particular action.

Prime Minister to General Ismay 22.IX.40

Make sure through every channel that all arrangements are made to bring these rifles [from U.S.A.] over at full speed. They must be distributed in at least four fast ships. Could not some of them come by passenger liner? Let me know what Admiralty can do. Make sure there is no delay at Purco's [Purchasing Commission] end through repacking as described by General Strong, U.S.A.

Former Naval Person to President Roosevelt 22.IX.40

I asked Lord Lothian to speak to you about our remaining desiderata. The 250,000 rifles are most urgently needed, as I have 250,000 trained and uniformed men into whose hands they can be put. I should be most grateful if you could arrange the necessary release. Every arrangement will be made to transport them with the utmost speed. They will enable us to take 250,000 .303 rifles from the Home Guard and transfer them to the Regular Army, leaving the Home Guard armed with about 800,000 American rifles. Even if no ammunition is available these rifles will be none the less useful, as they can draw upon the stock which has already reached us.

Prime Minister to General de Gaulle 22.IX.40

From every quarter the presence of General Catroux was demanded in Syria. I therefore took the responsibility in your name of inviting the General to go there. It is of course perfectly understood that he holds his position only from you, and I shall make this clear to him again. Sometimes one has to take decisions on the spot because of their urgency and the difficulty of explaining to others at a distance. There is time to stop him still if you desire it, but I should consider this was a very unreasonable act.

All good fortune in your enterprise to-morrow morning.

Prime Minister to Minister of Supply 23.IX.40

I regard the production of G.L. sets* as of prime importance, and every step should be taken to accelerate output. I understand that the chief difficulty at the moment is that of obtaining the skilled labour required, and I wish everything possible to be done to meet this requirement. Speed is vital.

(Action this Day)

Prime Minister to Secretary of State for War and C.I.G.S. 23.IX.40

There is not much in the report referred to, and what there is applies equally to the Soudan. We are piling up troops and artillery in Kenya which are urgently needed in the Soudan.

With regard to what you say about the vast strategical front of the

* A Radar set for anti-aircraft gun control.

Kenya operation if we lie back on the railway from Mombasa to the lake we have a lateral line of communication incomparably superior to any line by which we can be approached, and it should be possible to move our forces so as to have sudden superior strength at the point where the enemy advance develops. Although no one can say for certain where the enemy's blow will fall, I am convinced that the true disposition would economise [troops] to the utmost in Kenya in order to reinforce the Soudan. The one concession which is needed for Kenya is about ten cruiser tanks. If these were put on suitable vehicles on the railway they could strike with deadly effect, and with *surprise*, at any Italian movement. But the mere piling up of guns and brigades is a most painful process to watch.

In order to raise these points, I must ask that the move of the Mountain Battery from Aden to Kenya shall be held up, and that instead the question of moving it or another battery to the Soudan shall be considered. Please let me have a statement showing ration, rifle, machine-gun, and artillery strength of all troops in Kenya.

Prime Minister to Captain, H.M. destroyer "Churchill" 25.IX.40

Am delighted that your ship should be named after the great Duke of Marlborough, and I am sending you one of his handwritten letters for your Ward Room for luck. Thank you so much for your kind message.

Prime Minister to Foreign Secretary 25.IX.40

Lord Lothian's proposal to return for a flying visit appeals to me. Pray authorise it, and arrange it as you think most serviceable and convenient.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 26.IX.40

If these facts [about the use of the blind beam for bombing] are accurate they constitute a deadly danger, and one of the first magnitude. I expect the Chiefs of Staff to use all the resources at their disposal and to give me a report by to-morrow night—

(*a*) upon the reality of the danger,

(*b*) upon the measures to counter it.

In making any recommendation for action the Chiefs of Staff may be sure that the highest priorities and all other resources will be at their disposal.

Prime Minister to Home Secretary 26.IX.40

The composition hat for air raids which Mr. Bevin is promoting seems to me of the utmost importance, and if it gives a measure of protection against falling splinters, etc., it should certainly be mass-produced on a great scale, and eventually made a full issue.

Pray let me have a report to-day on the experimental aspect, and in conjunction with the Minister of Supply let me have estimates for production.

Prime Minister to Minister of Labour 26.IX.40

I was delighted with your hat, and something on these lines should certainly be mass-produced as soon as possible for issue pending steel hats. I think it is a mistake to call it a "rag hat", as I see is done in some of the papers to-day. I hope you will think of some better name.

I am calling for a full report to-day from the Home Secretary.

Prime Minister to Secretary of State for Air and C.A.S. 26.IX.40

Considering that everything depends upon Lord Beaverbrook's success in obtaining the supply of aircraft, and the heavy blows he is receiving at Bristol, Southampton, and elsewhere, I earnestly trust you will see that his wishes are met fully and immediately in the matter of these spares.

Prime Minister to Minister of Agriculture 26.IX.40

I am far from satisfied at the proposal to reduce pigs to one-third of their present number by the middle of the autumn. This is certainly not what was understood by the Cabinet. Why do you not ask for a greater proportion of feeding-stuffs in the imports? We could then see what, if anything, had to give way to it. Meanwhile, what arrangements are you making for curing the surplus bacon that will come upon the market through the massacre of pigs? What increases have you been able to establish in the pig population by encouraging people to feed individual pigs from household refuse?

Prime Minister to Minister of Supply 28.IX.40

Recent air raids have shown that the production of certain vital munitions, and particularly De Wilde ammunition, has been concentrated in one factory, with the result that output has been seriously curtailed by one successful raid. Pray let me have a report on the distribution of the production of every important key munition. It will then be possible to assess the danger of serious reductions in output and to consider what can be done to distribute the risk more widely.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 28.IX.40

1. These two papers [about the supply of material for chemical warfare] cause me great anxiety. I had understood that Randle [factory] had been working at full capacity as a result of the orders given by the War Cabinet on October 13, 1939—*i.e.*, almost exactly

a year ago. What is the explanation of the neglect to fulfil these orders, and who is responsible for it?

2. Secondly, it appears that practically no steps have been taken to make projectiles or containers either for air or artillery to discharge these various forms of gas. The programme now set out would clearly take many months before any results are realised Let me have an immediate report on this The highest priority must be given. I regard the danger as very great

3. Thirdly, the possibility of our having to retaliate on the German civil population must be studied, and on the largest scale possible We should never begin, but we must be able to reply Speed is vital here.

4. Fourthly, instant measures should be taken to raise Randle to full production, and above all to disperse the existing stock.

5 What are the actual amounts in stock?

Prime Minister to General Ismay 29.IX 40

These figures [about A A fire, first year of war] are encouraging You should ask General Pile however to send in the account for September

I should like to see a return of the ammunition fired every twenty-four hours during September as soon as possible.

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Supply and President of the Board of Trade 30 IX 40

I am sure we ought to increase our steel purchases from the United States so as to save tonnage on ore I should like to buy another couple of million tons, in various stages of manufacture Then we should be able to resume the plan of the Anderson shelters, and various other steel requirements which press upon us. I would if necessary telegraph to the President.

OCTOBER

Prime Minister to Foreign Secretary 4 X 40

This shows the very serious misconception which has grown up in this Ambassador's mind about the consequences of the United States entering the war. He should surely be told forthwith that the entry of the United States into war, either with Germany and Italy or with Japan, is fully conformable with British interests; that nothing in the munitions sphere can compare with the importance of the British Empire and the United States being co-belligerents, that if Japan

attacked the United States without declaring war on us we should at once range ourselves at the side of the United States and declare war upon Japan.

It is astonishing how this misleading Kennedy* stuff that we should do better with a neutral United States than with her warring at our side should have travelled so far. A clear directive is required to all our Ambassadors in countries concerned.

Prime Minister to Secretary of State for War 9.x.40

. . . Anyone can see that aircraft are needed in the Middle East. What is not so easy is whether they can be spared here. Remember that we are still vastly inferior in numbers, both of fighters and bombers, to the German Air Forces, and that heavy losses have been sustained by our air production. The Chief of the Air Staff and Secretary of State must be asked for a precise recommendation.

Prime Minister to General de Gaulle 10.x.40

I have received your telegram with great pleasure, and I send my best wishes to you and to all other Frenchmen who are resolved to fight on with us. We shall stand resolutely together until all obstacles have been overcome and we share in the triumph of our cause.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 12.x.40

This development of Radar with German long-range coastal batteries is serious. We have for a long time been on the track of this device, and I drew attention to it some weeks ago. I was then told that it had to have a low priority because of other even more urgent needs. Perhaps it may now be possible to bring it forward. Evidently it will turn night into day so far as defence against sea bombardment is concerned.

Pray see if some proposals can be made without injury to other radio projects.

Prime Minister to C.I.G.S. 13.x.40

There are great disadvantages in stationing many British troops on the West African coast. In view of the altered situation, pray consider bringing one of the West African brigades back from Kenya by one of the convoys returning empty. This should not add in any way to shipping burdens.

Prime Minister to Sir James Grigg 13.x.40

A hot discussion is raging in the A.T.S. about whether members who marry should, if they wish, be allowed to quit. Nearly everyone is in favour of this. It seems futile to forbid them, and if they desert

* United States Ambassador to Britain

there is no means of punishing them Only the most honourable are therefore impeded. Pray let me have, on one sheet of paper, a note on this showing the pros and cons.

Prime Minister to General Ismay 14.x.40

Let a report be prepared on two sheets only showing what are the possibilities of Germany developing the munitions industries, especially aircraft, of the countries she has overrun, and when these evil effects are likely to become manifest.

Prime Minister to First Lord 15 x 40

1. If you wish to circulate the Naval Staff paper* of October 13, which I have now read, I do not demur It is of course a most pessimistic and nervous paper, which it is very depressing to receive from the Admiralty. Instances of the overdrawn character of the paper are found in para 3, which claims that we must maintain "general control in every sea", whereas effective power of passage is all we require in many cases And in para. 5, "German strength, in which from *now onwards* [October 15] must be counted the *Tirpitz* and the *Bismarck*" This is not true, as even the *Bismarck* has, I suppose, to work up, like the *King George V*, which should be ready as soon, or earlier The *Tirpitz* is three months behind the *Bismarck*, according to every statement I have received, and it is hoped by that time we shall have the *Prince of Wales* and *Queen Elizabeth* If such statements are made to the Cabinet I should be forced to challenge them

2. The whole argument is meant to lead up to the idea that we must submit to the wishes of Vichy because they have the power to drive us out of Gibraltar by bombing I fully share the desire of the Naval Staff not to be molested in Gibraltar, but I do not think that the enforcement of the blockade will lead the French to do this, still less to declare war upon us. I do not believe the Vichy Government has the power to wage war against us, as the whole French nation is coming more and more on to our side I have dealt with this in a minute on general policy which is being circulated, and of which I enclose you the relevant extract

3. The redeeming point in this paper is the suggestion that we should tell the Vichy Government that if they bomb Gibraltar we shall retaliate, not against, say, Casablanca, but Vichy, to which I would add, or any other place occupied by the Vichy Government. This is the proper note to strike, and it is also important to bear in mind that while humbleness to Vichy will not necessarily prevent them being ordered to make war upon us by their German masters, a firm attitude will not necessarily deter them from coming over to our side

* On the naval aspect of our policy towards the Vichy Government

These questions are not urgent because of the failure to intercept *Primoguet*.*

Prime Minister to C.A.S. 18.x.40

What arrangements have we got for blind landings for aircraft? How many aircraft are so fitted? It ought to be possible to guide them down quite safely, as commercial craft were done before the war in spite of fog. Let me have full particulars. The accidents last night are very serious.

Prime Minister to C.I.G.S. 19.x.40

I was very much pleased last week when you told me you proposed to give an armoured division to Major-General Hobart.† I think very highly of this officer, and I am not at all impressed by the prejudices against him in certain quarters. Such prejudices attach frequently to persons of strong personality and original view. In this case General Hobart's original views have been only too tragically borne out. The neglect by the General Staff even to devise proper patterns of tanks before the war has robbed us of all the fruits of this invention. These fruits have been reaped by the enemy, with terrible consequences. We should therefore remember that this was an officer who had the root of the matter in him, and also vision.

In my minute last week to you I said I hoped you would propose to me the appointment that day, *i.e.*, Tuesday, but at the latest this week. Will you very kindly make sure that the appointment is made at the earliest moment.

Since making this minute I have carefully read your note to me and the summary of the case for and against General Hobart. We are now at war, fighting for our lives, and we cannot afford to confine Army appointments to persons who have excited no hostile comment in their career. The catalogue of General Hobart's qualities and defects might almost exactly have been attributed to most of the great commanders of British history. Marlborough was very much the conventional soldier, carrying with him the goodwill of the Service. Cromwell, Wolfe, Clive, Gordon, and in a different sphere Lawrence, all had very close resemblance to the characteristics set down as defects. They had other qualities as well, and so I am led to believe has General Hobart. This is a time to try men of force and vision and not to be exclusively confined to those who are judged thoroughly safe by conventional standards.

* A French merchant ship.

† General Hobart, at this time a corporal in the Home Guard, was accordingly appointed to command an armoured division, and in that capacity rendered distinguished service to the very end of the war. I had a pleasant talk with him on the day we first crossed the Rhine in 1945. His work was then highly esteemed by General Montgomery.

I hope therefore you will not recoil from your proposal to me of a week ago, for I think your instinct in this matter was sound and true.

Prime Minister to C.I.G.S. 19.x.40

Are there no younger men available for this strenuous administrative appointment [Director-General Home Guard]? The bringing back of retired officers for posts like these causes much criticism, both in and out of Service circles. Why not try to find a man still in the forties, and give him temporary rank?

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 19.x.40

In view of the forecasts of small arms ammunition, and the very great improvement in our position which will be effected from the factories coming into bearing in October, and the expanding output expected before March 31, 1941, and having regard to the fact that unless there is an invasion no operations are possible except in the Middle East, and then only on a comparatively moderate scale, I am of opinion that a very much larger issue may be made now to the Commander-in-Chief Home Forces for practice. I understand he has only two million rounds a week for this purpose, and that training is grievously hampered in consequence. Although it seems a risk to deplete our small War Office reserve, I think it should be considered whether from November 1 onwards the amount issued for practice should not be doubled—*i.e.*, four million a week. I shall be glad if you will consult the Chiefs of Staff immediately.*

Prime Minister to General Ismay 20.x.40

1. When was the last meeting of the Commanders-in-Chief, Naval, Air, and Military? Was it not found very useful? Who attended it? I should be willing to preside over such a meeting in the course of the next week or so.

2. Let me have a plan for the imparting of more information about our war policy to these very high officers.

Prime Minister to Secretary of State for Air and C.A.S. 20.x.40

I am deeply concerned with the non-expansion, and indeed contraction, of our bomber force which must be expected between now and April or May next, according to present policy. Surely an effort should be made to increase our bomb-dropping capacity during this period. In moonlight periods the present arrangements for bombing are the best possible, and the only difficulty is our small numbers compared to the many attractive military targets. On no account should the limited bomber force be diverted from accurate bombing of military objectives reaching far into Germany. But is it not possible

* It was decided to provide the increased amount.

to organise a Second Line Bomber Force, which, especially in the dark of the moon, would discharge bombs from a considerable and safe height upon the nearest large built-up areas of Germany, which contain military targets in abundance? The Ruhr, of course, is obviously indicated. The object would be to find easy targets, short runs, and safe conditions.

How is such a Second Line or Auxiliary Bomber Force to be improvised during the winter months? Could not crews from the training schools do occasional runs? Are none of the Lysander and Reconnaissance pilots capable of doing some of this simpler bombing, observing that the Army is not likely to be in action unless invasion occurs? I ask that a wholehearted effort shall be made to cart a large number of bombs into Germany by a second line organisation such as I have suggested, and under conditions in which admittedly no special accuracy would be obtained. Pray let me have the best suggestions possible, and we can then see whether they are practical or not.

How is it that so few of our bombers are fitted with blind landing appliances? M.A P. tells me that a number of Lorenz equipments are available The grievous losses which occurred one day last week ought not to be repeated. Not only do the bombers need the blind landing facilities (which have been used in commercial aviation for years), but also if fighter aircraft are to operate by night, as they must increasingly, such aircraft must also be furnished with the means of making safe landings. Pray let me have your observations.

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A.S. 20.X.40

In connection with the plans now being developed for night fighting, not only by individual Aircraft Interception fitted machines, but by 8-gun-fighter squadrons, it is worth considering whether in any area where our fighters are operating and the guns have to remain out of action these guns should not fire blank charges This would (*a*) confuse the enemy by the flashing on the ground, and tend to make him less aware of the impending fighter attacks—it would thus have a strictly military reason, (*b*) it would make a noise to drown the approach of our attacking fighters, and also to avoid discouraging silence for the population It would not be legitimate to fire blank merely for the second purpose, but if there is a military reason the objection disappears

Prime Minister to C.I G.S. 20 X 40

I am concerned by the very low state of equipment of the Polish troops, whose military qualities have been proved so high. I hope to inspect them on Wednesday this week

Pray let me have during Monday the best proposals possible for

equipping them. I am most anxious they should not become disheartened.

(*Action this Day*)

Prime Minister to Secretary, War Office 20 X 40

It is impossible to take away steel helmets from "the Home Guard in Government offices" Four were killed outside Downing Street on Thursday night Whitehall is as heavily bombed as any part of the country. It will be difficult to take helmets away from anyone to whom they have been issued. I am astonished to see that the Army is aiming at three million helmets. I was not aware that we had three million men. Let me have a full return of all steel helmets in possession of the Regular Army, showing the different branches, *i e*, whether field army or training or holding battalions, etc , or in store . . .

Prime Minister to C.I G S and Sir James Grigg 21 X 40

This very lengthy report by General Irwin* on how he was carried out to Freetown and back emphasises all the difficulties of the operation in which he was concerned. He foresaw all the difficulties beforehand, and the many shortcomings in the preparations He certainly felt throughout that he was plunged into the midst of a grave and hazardous undertaking on political rather than military grounds All this makes it the more surprising that he should have wished to persist in this operation, with all its defects and dangers, of which he was so acutely conscious, after these had been so formidably aggravated by the arrival through a naval failure of the French cruisers and reinforcements in Dakar, and in the teeth of the considered opinion of the War Cabinet and the Chiefs of Staff that conditions had now so changed as to make the original plan impossible However, any error towards the enemy and any evidence of a sincere desire to engage must always be generously judged This officer was commanding a division very ably before he was selected for the expedition, and I see no reason why he should not resume these duties now that he has returned He would make a mistake, however, if he assumed either (*a*) that no enterprise should be launched in war for which lengthy preparation has not been made, observing that even in this connection twenty-five Frenchmen took Duala, and with it the Cameroons, or (*b*) that ships can in no circumstances engage forts with success. This might well be true in the fog conditions which so unexpectedly and unnaturally descended upon Dakar; but it would not necessarily be true of the case where the ships' guns could engage the forts at ranges to which the forts could not reply, or where the gunners in the forts were frightened, inefficient, or friendly to the attacking force.

* See Book II, Chapter XXIV

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies
[Lord Lloyd] **21.X.40**

I am afraid I have been some time in studying your notes on the African continent, and its strategic and political dangers in the present war. I should deprecate setting up a special committee. We are overrun by them, like the Australians were by the rabbits. I see no reason to assume that we shall be at war with Vichy France or Spain, or that the South African position will develop dangerously. I should have thought that you would be able, with your own military experience and political knowledge, to gather such officials of the Colonial Office as you may need around you, and prepare yourself any reports you may think it right to present to the Defence Committee or the War Cabinet. If however you feel the need of being associated with a committee, I suggest that the Middle East Ministerial Committee takes on the agenda you have outlined as an addition to their present sphere.

P.S.—I am trying to move one of the West African brigades back from Kenya to the West Coast.

(Action this Day)
Prime Minister to Minister of Information and
Sir Alexander Cadogan 24.X.40

Sir Walter Citrine leaves this country shortly for the United States on a mission from the Trades Union Congress to American labour. He is a man of exceptional qualities and consequence, and is a Privy Councillor. He should certainly have a diplomatic status conferred upon him which will facilitate his movements. The T.U.C. are paying all his expenses in connection with the purely Labour side of the business, but I think that any expenses he may incur in work useful in the national interest should be defrayed by the Ministry of Information. Perhaps the Minister would look into this and see what can be done. In any case, Sir Walter should be treated with the greatest consideration, as I am sure we can count on his entire loyalty and discretion.

NOVEMBER

Prime Minister to C.A.S. 1.XI.40

How is it that when we have 520 crews available for bombing operations and only 507 aircraft similarly available we do not draw on the aircraft storage units, where a large number are awaiting use?

Prime Minister to Secretary of State for Air 1.XI.40

Let me have, on not more than two sheets of paper, an analysis of the German aviators taken prisoners of war since July 1, showing

numbers, ages, amount of training, etc, distinguishing between bomber and fighter prisoners. Any other information about them would be welcome.

Prime Minister to First Sea Lord 6 XI.40

Although I feel sceptical about the pocket-battleship going to Lorient, the Air Force should be thinking of attacking him there at the earliest moment, and should be warned *now* If he goes to Lorient he runs a chance of being caught by you on the way in, bombed while he is there, and caught again on the way out There is only one way in and out of Lorient. Very different is his position at Kiel, where he can come out via the Heligoland Bight or through the Skagerrak or sneak up the Norwegian Corridor to Trondheim I would much rather see him go to Lorient than break south or stay out on the Atlantic route or go back one side or the other of Iceland

If he continues preying on the trade you ought to be able to bring him to action.

On further reflection I agree it is better our two heavy ships should stay in the north.

These notes are only for your consideration.

Prime Minister to C I G S. 6 XI 40

You impressed upon me how important it was to have a first-rate man in charge of the Home Guard, and what a compliment to them it would be if the former Chief of Staff in France was chosen; so General Pownall was appointed. But a few weeks later I was astonished to learn he was to go to America on the mission now discharged by General Pakenham-Walsh. With some difficulty I stopped this change However, a little later Pownall was sent to Ireland Whereas I suppose he would have done very well for the Home Guard, just as he got to know his job and men were beginning to look to him he was whisked off to something else, and General Eastwood took his place. This is, I think, only a month ago However, I dutifully set myself to work to make General Eastwood's acquaintance, and I suppose so did the principal officers of the Home Guard I formed a favourable opinion of him, particularly on account of his age, which is under fifty I suppose he has been working very hard for the month, trying to learn his immense new task, and he certainly had begun to speak about it with knowledge Now you propose to me to send him away, and to appoint a third new figure, all in four months

All these rapid changes are contrary to the interests of the Service, and open to the most severe criticism I am not prepared to agree to dismiss General Eastwood from the Home Guard command. If you wish to set up this Directorate-General, he must have it, so far as I

am concerned. However, the Secretary of State will be back in two days, if all goes well, and I am sending a copy of this minute to him I shall still expect to be consulted.

Prime Minister to C A.S. 6 XI.40

Last night at least seven of our planes crashed on landing or were lost. The slow expansion of the bomber force is, as you know, a great anxiety to me. If bombing in this bad weather is imposing altogether undue risks and losses on the pilots, the numbers might be slacked down in order to accumulate our strength while at the same time keeping various objectives alive.

Prime Minister to Sir Edward Bridges 8.XI.40

Many of the executive departments naturally have set up and developed their own statistical branches, but there appears to be a separate statistical branch attached to the Ministerial Committee on Production, and naturally the Ministry of Supply's statistical branch covers a very wide field I have my own statistical branch under Professor Lindemann

It is essential to consolidate and make sure that agreed figures only are used The utmost confusion is caused when people argue on different statistical data I wish all statistics to be concentrated in my own branch as Prime Minister and Minister of Defence, from which alone the final authoritative working statistics will issue The various departmental statistical branches will, of course, continue as at present, but agreement must be reached between them and the Central Statistical Office.

Pray look into this, and advise me how my wish can be most speedily and effectively achieved

Prime Minister to Minister of Transport 8 XI 40

Let me know what progress has been made in breaking up the queues, and in bringing vehicles into service. With the earlier blackout it must be very hard on many

Prime Minister to First Sea Lord 9 XI 40

Please let me have a report on the improvements in the Asdic and hydrophone technique which have been made in the last year.

Prime Minister to Minister of Transport 9 XI 40

Preliminary inspection seems to indicate that the time of turn-round in ports has increased in recent months rather than the reverse. This is probably due to the concentration of traffic on a few West Coast ports. Are the delays caused by inadequate port facilities or by difficulties in clearing the goods from the docks? Have you a scheme to

exploit to the full our large resources of road transport if the railways prove inadequate to deal with these special problems?

Prime Minister to C.A.S. 10 XI 40

Altogether, broadly speaking, 1,000 aircraft and 17,000 air personnel in the Middle East provide 30½ squadrons, with a total initial equipment of 395 operational types, of which it is presumed 300 are ready for action on any date. Unhappily, out of 65 Hurricanes only 2 squadrons (apart from Malta) are available. These are the only modern aircraft, unless you count the Blenheim IVs. All the rest of this enormous force is armed with obsolete or feeble machines. The process of replacement should therefore be pressed to the utmost, and surely it should be possible to utilise all this skilled personnel of pilots and ground staff to handle the new machines Therefore "remounting" the Eastern Air Force ought not in principle to require more personnel, except where new types are more complicated. However, as part of the reinforcements now being sent—*i.e.*, four Wellington and four Hurricane squadrons—we are sending over 3,000 additional personnel

In the disparity between the great mass of men and numbers of aircraft on charge, and the fighting product constantly available, which is painfully marked both here and at home, lies the waste of R A F resources What is the use of the 600 machines which are not even included in the initial equipment of the 30 squadrons? No doubt some can be explained as training, communication, and transport. But how is it that out of 732 operational types only 395 play any part in the fighting?

I hope that a most earnest effort will be made to get full value for men, material, and money out of this very large force, first, by remounting, second, by making more squadrons out of the large surplus of machines not formed in squadrons, third, by developing local O.T.U s [Operational Training Units] or other training establishments

Prime Minister to Minister of Health 10 XI 40

I see your total of homeless is down by 1,500 this week to about 10,000. Please let me know how many new you had in, and how many former went out With such a small number as 10,000, you ought to be able to clean this up if you have another light week

What is the average time that a homeless person remains at a rest centre?

*Prime Minister to Secretary of State for Air** 10 XI.40

There is a shelter at Chequers which gives good protection from

* The Air Ministry began making proposals for the greater protection of Chequers by sending Bofors guns

lateral damage There is the household to consider. Perhaps you will have the accommodation inspected.

The carriage drive is being turfed

I cannot bear to divert Bofors from the fighting positions What about trying a few rockets, which are at present only in an experimental stage?

I am trying to vary my movements a little during the moonlight intervals It is very good of you and your Ministry to concern yourselves with my safety.

Prime Minister to Secretary of State for War 10 XI.40

I hope you will look into this yourself We had the greatest difficulty in carrying these sticky bombs through, and there was every evidence they would not have received fair play had I not gone down myself to see the experiment Now is the chance to let the Greeks try this method out, and it would seem that it might be very helpful to them

What is this tale that they are dangerous to pack and handle? They are of course dispatched without their detonators, and therefore cannot explode

Prime Minister to Air C.-in-C., Middle East 12.XI.40

I am trying every day to speed up the arrivals in your command of Hurricanes, etc. This is especially important in the next three weeks. Pray report daily what you actually receive, and how many you are able to put into action

I was astonished to find that you have nearly 1,000 aircraft and 1,000 pilots and 16,000 air personnel in the Middle East, excluding Kenya I am most anxious to re-equip you with modern machines at the earliest moment; but surely out of all this establishment you ought to be able, if the machines are forthcoming, to produce a substantially larger number of modern aircraft operationally fit? Pray report through the Air Ministry any steps you may be able to take to obtain more fighting value from the immense mass of material and men under your command.

I am grieved that the imperative demands of the Greek situation and its vital importance to the Middle East should have disturbed your arrangements at this exceptionally critical time. All good wishes.

Prime Minister to Sir Edward Bridges and General Ismay 12 XI 40

The Prime Minister has noticed that the habit of private secretaries and others of addressing each other by their Christian names about matters of an official character is increasing, and ought to be stopped The use of Christian names in inter-departmental correspondence

should be confined only to brief explanatory covering notes or to purely personal and private explanations.

It is hard enough to follow people by their surnames.

Prime Minister to Home Secretary 12.XI 40

How are you getting on with the comfort of the shelters in the winter—flooring, drainage, and the like? What is being done to bring them inside the houses? I attach the greatest importance to gramophones and wireless in the shelters. How is that going forward? Would not this perhaps be a very good subject for the Lord Mayor's Fund? I should not be surprised if the improved lighting comes up again before many weeks are out, and I hope that the preparations for it will go forward.

Prime Minister to Foreign Secretary 12 XI.40

We shall most certainly have to obtain control of Syria by one means or another in the next few months. The best way would be by a Weygand or a de Gaullist movement, but this cannot be counted on, and until we have dealt with the Italians in Libya we have no troops to spare for a northern venture On no account must Italian or Caitiff-Vichy influences become or remain paramount in Syria.

Prime Minister to Lord Beaverbrook 15 XI 40

I do not think this could be said without the approval of the Air Ministry, and indeed of the C.O S Committee. My own feeling would be against giving these actual figures * They tell the enemy too much. It is like getting one of the tail bones of the ichthyosaurus from which a naturalist can reconstruct the entire animal The more I think about it the more I am against it.

Prime Minister to Secretary of State for Air and C A S 15 XI 40

This amounts to a loss of eleven of our bombers in one night I said the other day by minute that the operations were not to be pressed unduly during these very adverse weather conditions We cannot afford to have losses of this kind in view of your very slow replacements If you go on like this you will break the bomber force down to below a minimum for grave emergencies. No results have been achieved which would in any way justify or compensate for these losses I consider the loss of eleven aircraft out of one hundred and thirty-nine—*i e*, about 8 per cent.—a very grievous disaster at this stage of our bomber development

Let me have the losses during the first half of November.

* Figures of aircraft strength proposed to be used by Lord Beaverbrook in a broadcast.

Prime Minister to C.A S 17 XI 40

1. I watch these figures every day with much concern. My diagrams show that we are now not even keeping level, and there is a marked downward turn this week, especially in the Bomber Command. Painful as it is not to be able to strike heavy blows after an event like Coventry, yet I feel we should for the present *nurse* Bomber Command a little more This can be done (1) by not sending so many to each of the necessary objectives, (2) by not coming down too low in the face of heavy prepared batteries and being content with somewhat less accuracy, and (3) by picking out soft spots where there is not too much organised protection, so as to keep up our deliveries of bomb content. There must be unexpecting towns in Germany where very little has been done in Air Raid Precautions and yet where there are military objectives of a minor order. Some of these could be struck at in the meanwhile

2 I should feel differently about this if our bomber force were above five hundred, and if it were expanding But, having regard to the uncertainties of war, we must be very careful not to let routine bombing and our own high standards proceed without constant attention to our resources. These remarks do not apply, of course, to Italy, against which the full-scale risk should be run The wounded *Littorio* is a fine target.

(*Action this Day*)
Prime Minister to First Lord and First Sea Lord 18.XI.40

I was assured that 64 destroyers would be available for the North-Western Approaches by November 15 This return of Asdic-fitted ships, which goes to November 16, shows 60 But what is disconcerting is that out of 151 destroyers only 84 are available for service, and out of 60 for the North-Western Approaches only 33 are available for service. When we held our conference more than a month ago the Admiral was found with only 24 destroyers available, and all that has happened in the month that has passed is that another 9 have been added to his available strength But meanwhile you have had the American destroyers streaming into service, and I was assured that there was a steady output from our own yards I cannot understand why there has been this serious frustration of decisions so unitedly arrived at, nor why such an immense proportion of destroyers are laid up from one cause or another. Are the repairs falling behind? What has happened to the American destroyers? Are we failing in repairs and new construction?

I should be glad to have a special conference at 10 a m on Tuesday at the Admiralty War Room.

Prime Minister to General Ismay, for Chiefs of Staff 18 XI.40

I am informed that on the night of November 6-7 one of the German K.G 100 Squadron* came down in the sea near Bridport. This squadron is the one known to be fitted with the special apparatus with which the Germans hope to do accurate night-bombing, using their very fine beams Vital time was lost during which this aircraft or its equipment might have been salvaged because the Army claimed that it came under their jurisdiction, made no attempt to secure it, and refused to permit the naval authorities to do so

Pray make proposals to ensure that in future immediate steps are taken to secure all possible information and equipment from German aircraft which come down in this country or near our coasts, and that these rare opportunities are not squandered through departmental differences

Prime Minister to Prime Minister of New Zealand 18 XI 40

Your telegram is being dealt with departmentally. We dwell under a drizzle of carping criticism from a few Members and from writers in certain organs of the Press This has an irritating effect, and would not be tolerated in any other country exposed to our present stresses On the other hand, it is a good thing that any Government should be kept keen and made aware of any shortcomings in time to remedy them You must not suppose everything is perfect, but we are all trying our best, and the war effort is enormous and morale admirable All good wishes.

Prime Minister to Prime Minister of Canada 20 XI 40

1. I am most grateful to you for your message and for your very generous offer to afford facilities for a further expansion of the Joint Air Training Plan I am confident that we shall be able to make excellent use of it.

2 A review of the air training requirements in the light of the latest developments is at present in progress, and it is of the utmost value to the War Cabinet in this connection to know that in such further measures as prove to be necessary they can rely on the continuance of the wholehearted assistance of the Canadian Government, which has already made such a notable contribution to our common effort

3 As soon as our review is completed I will let you know, for your consideration, what we think would be the best direction for our further joint efforts

4. As you mention in your message, any measures for the extension of the Joint Training Plan must form the subject of discussion and

* See p 339

agreement between all the Governments concerned. Would you agree to my repeating to the Prime Ministers of the Governments of Australia and New Zealand the text of your message and of this reply, or would you prefer to take this action yourself?

5 Subject to your agreement, we should like to offer a cordial invitation to Air Vice-Marshal Breadner to pay a short visit to this country. Such a visit would be most valuable for the purpose of consultation on many training questions, and would give Air Vice-Marshal Breadner the fullest and most up-to-date information on our plans for the future development of the Air Force.

Prime Minister to Secretary of State for the Dominions 22.XI.40

I think it would be better to let de Valera stew in his own juice for a while Nothing could be more harmless or more just than the remarks in the *Economist* The claim now put forward on behalf of de Valera is that we are not only to be strangled by them, but to suffer our fate without making any complaint

Sir John Maffey should be made aware of the rising anger in England and Scotland, and especially among the merchant seamen, and he should not be encouraged to think that his only task is to mollify de Valera and make everything, including our ruin, pass off pleasantly Apart from this, the less we say to de Valera at this juncture the better, and certainly nothing must be said to reassure him.

Let me see the Parliamentary questions as they come in.

Prime Minister to Secretary of State for the Colonies 22.XI 40

As the action has been announced, it must proceed, but the conditions in Mauritius must not involve these people being caged up for the duration of the war The Cabinet will require to be satisfied about this Pray make me your proposals

[Ref · Proposal to ship to Mauritius Jewish refugees who had illegally emigrated to Palestine]

Prime Minister to First Lord and First Sea Lord
(General Ismay to see) 22.XI.40

1. In my view Admiral Stark is right, and Plan D* is strategically sound and also most highly adapted to our interests. We should therefore, so far as opportunity serves, in every way contribute to

* Plan D Provision of all possible naval and military aid in the European field to the exclusion of any other interest This would involve the adoption of a strictly defensive plan in the Pacific and abandonment of any attempt seriously to reinforce the Far East, with accepted consequences. On the other hand, by full-scale concentration in the European area the defeat of Germany was ensured with certainty, and if subsequently it was in the American interest to deal with Japan requisite steps would be possible.

strengthen the policy of Admiral Stark, and should not use arguments inconsistent with it

2 Should Japan enter the war on one side and the United States on ours, ample naval forces will be available to contain Japan by long-range controls in the Pacific The Japanese Navy is not likely to venture far from its home bases so long as a superior battle-fleet is maintained at Singapore or at Honolulu The Japanese would never attempt a siege of Singapore with a hostile, superior American fleet in the Pacific The balance of the American fleet, after providing the necessary force for the Pacific, would be sufficient, with our Navy, to exercise in a very high degree the command of all the seas and oceans except those within the immediate Japanese regions A strict defensive in the Far East and the acceptance of its consequences is also our policy Once the Germans are beaten the Japanese would be at the mercy of the combined fleets

3. I am much encouraged by the American naval view.

Prime Minister to Home Secretary 23.XI.40

There seems to be great disparity in these sentences [on A F S men for looting], and I wonder whether any attempt is being made to standardise the punishments inflicted for this very odious crime Five years' penal servitude for stealing whisky for immediate consumption seems out of proportion when compared with sentences of three or six months for stealing valuables. Exemplary discipline is no doubt necessary, as people must be made to feel that looting is stealing Still, I should be glad to know that such cases are being reviewed and levelled out

Prime Minister to C I G.S 24 XI 40

I sent you to-day two Foreign Office telegrams from Bucharest and Sofia respectively, which concur in an estimate of thirty thousand Germans, or one full division, as the maximum in Roumania at the present time In view of this your Intelligence Branch should carefully review the advice they gave to the effect that there were five divisions in Roumania and that these could be assembled on the Bulgarian-Greek frontier in three or four days I thought myself that this estimate was altogether too pessimistic, and credited the enemy with a rapidity of movement and a degree of preparedness which were perhaps more serious than the facts Will you have the whole problem examined most carefully again? I had thought myself that it would be a fortnight before anything serious could happen on the Greek frontier, and that perhaps it might be a month The great thing is to get the true picture, whatever it is

Prime Minister to General Ismay, and others concerned 24.XI.40

This paper shows that we have completely failed to make cruiser tanks, and that there is no prospect of the present deficiency being made up in the next year. We must therefore equip our armoured divisions in the best possible way open to us in these melancholy circumstances. At this stage in tank production numbers count above everything else. It is better to have any serviceable tank than none at all. The formation and training of the divisions can proceed, and the quality and character of the vehicles be improved later on. The I tank should not be disdained because of its slow speed, and in default of cruisers must be looked upon as our staple for fighting. *We must adapt our tactics for the time being to this weapon as we have no other.* Meanwhile the production of cruiser tanks and of A 22 [a new model] must be driven forward to the utmost limit.

Prime Minister to General Ismay 24.XI.40

The full order for the thirty-five thousand vehicles should be placed in the United States without further delay. Meanwhile the inquiry into the scale required by the War Office is to proceed.

Prime Minister to Foreign Secretary 27.XI.40

The Greek complication seems to me serious. It will be of enormous advantage to us if Germany delays or shrinks from an attack on Greece through Bulgaria. I should not like those people in Greece to feel that, for the sake of what is after all only a parade, we had pressed them into action which could be cited by Germany as a justification for marching. The only thing to do is to put the meeting off until we can see a little more clearly on this very confused chessboard of Eastern Europe.

I think the Dominions should be told that we are waiting for the Greek situation to define itself more clearly, and that this ought not to take more than a fortnight. I do not think it is necessary to give any reasons to the Allied Governments, except to assure them that the delay will be short.

Prime Minister to General Ismay 28.XI.40

It is of no use giving me these reports five days late. The Admiralty know every day exactly the state of the flotillas. I do not know why this matter should go through the War Cabinet or Defence Ministry. Pray tell the Admiralty to send direct to me, every week, the state of their flotillas.

I am much concerned that the patrols on the Western Approaches should only have gone up to thirty effective. Let me see the chart showing previous weeks to-morrow.

Prime Minister to Minister of Labour 28 XI 40

I shall be obliged if you will let me know the present unemployment figures, divided into as many categories as is convenient, and compared with

(a) how they stood at the outbreak of war, and
(b) when the new Government was formed.

Prime Minister to First Sea Lord 30 XI 40

It is to me incomprehensible that with the 50 American destroyers coming into service we should not have been able to raise the total serviceable to above 77 by November 23, when they stood at 106 on October 16 What happened between October 16 and October 26 to beat down serviceable destroyers by 28 vessels, and why did they go down from 84 to 77 between November 16 and November 23—just at the very time when another dozen Americans were coming into service?

Prime Minister to C.-in-C. Home Forces 30 XI 40

I have authorised the ringing of church bells on Christmas Day, as the imminence of invasion has greatly receded Perhaps, however, you will let me know what alternative methods of giving the alarm you would propose to use on that day, and, secondly, what steps would be taken to ensure that the ringing of the bells for church services and without any invasion does not in fact lead to an alarm There must certainly be no relaxation of vigilance.

DECEMBER

Prime Minister to Secretary of State for the Dominions
(General Ismay to see for C O S Committee) 1.XII 40

All this talk about Atlantic Operations and Atlantic Islands is most dangerous, and is contrary to the decision to describe such operations as "Shrapnel". I see no need for these long and pointless telegrams, and it is becoming quite impossible to conduct military operations when everything has to be spread about the departments and around the world like this.

Kindly give me the assurance that there will be no further discussion of these matters by telegram without my seeing the messages before they are multiplied

Let me also know exactly the lists of officials and departments to whom these telegrams have been distributed.

(Action this Day)
Prime Minister to C.-in-C. Mediterranean 3.XII.40

(Personal and most secret.)

1. Your 270. We considered whole matter this morning with the Director of Combined Operations, Sir Roger Keyes, who will execute it with full control of all forces employed, and final plans are now being prepared by him. His appointment will not be naval, but limited to these combined operations. If necessary he will waive his naval rank. Cannot feel that air counter-attack will be serious having regard to size island, broken character, many houses and detached forts, in which comparatively small attacking force will be intermingled with defenders. Enemy aircraft will not know who holds what till all is over, and even then Italian flags may be displayed on soft spots.

2. Capture of "Workshop"* no doubt a hazard, but Zeebrugge would never have got past scrutiny bestowed on this. Commandos very highly trained, carefully picked volunteers for this kind of work. Weather and fixed date of convoy may of course prevent attempt, in which case whole outfit will go to Malta or Suda for other enterprises. If conditions favourable nothing will be stinted.

3. Apprehensions you have that A.A. guns, etc., will be diverted from Eastern Mediterranean and new commitment created may be mitigated by capture of enemy A.A., which are numerous. Enemy unlikely attempt recapture, even though garrison left will be small. Commandos will come away after handing over to Regular troops, and be available for further operations.

4. Comparing "Workshop" with other operation you mention, in future called "Mandibles"† (*repeat* "Mandibles"), kindly weigh following considerations:

"Mandibles" requires ten or twelve thousand men and is far larger affair if the two big ones are to be taken. Little ones you mention would stir up all this area without any important reward unless process continued. Secondly, captures in "Mandibles" area would excite keen rivalry of Greeks and Turks, which above all we don't want now. Thirdly, our reports show "Mandibles" slowly starving, and perhaps we shall get them cheaper later. Apart from the above, trying "Workshop" does not rule out "Mandibles" afterwards, unless ships and landing-craft are lost, which they may be. Also perhaps operations on enemy's land communications along North African shore may present opportunities.

5. On strategic grounds "Workshop" gives good air command of most used line of enemy communications with Libyan army, and also

* Capture of Pantelleria.
† Operations against the Dodecanese.

increased measure air protection for our convoys and transports passing so-called Narrows Joint Staffs here consider very high value attaches to removal of this obstruction to our East and West communications Besides all this, we need to show ourselves capable of vehement offensive amphibious action I call upon you therefore to use your utmost endeavours to procure success should conditions be favourable at zero hour.

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 3.XII.40

The King asked me to-day whether there was any shortage of instruments for aircraft

Prime Minister to General Ismay 4.XII 40

1. Two searchlights [at Suda Bay] seem very insufficient What is going to be done to increase them?

2. In view of the torpedoing of the *Glasgow* by a seaplane while at anchor, ought not ships at anchor to be protected by nets at short range? I gather this was the Italian method at Taranto, but at the moment of the attack they had taken them off Pray let me have a note on this

Prime Minister to Secretary of State for War 9.XII 40

ARMY ORGANISATION

1. I understand that you are asking for another big call-up shortly. The papers talk about a million men. This forces me to examine the distribution of the men you have According to your paper, 27 British divisions are credited to Expeditionary Force and Middle East These divisions are accounted for at 35,000 men each, to cover corps, army, and line of communications troops, etc , plus 70,000 security troops in M.E [Middle East]

2. The approved establishment of a British division at the present time is 15,500 men. It comprises only 9 battalions with an establishment of 850, *i e* , about 7,500 The establishment of all battalions comprises a considerable proportion of servicing elements, and I doubt whether the rifle and machine-gun strength—*i e* , fighting strength—amounts to more than 750 Thus the total number of men who actually fight in the infantry of a British division is 6,750 This makes the fighting infantry of 27 divisions, in what used to be called bayonet or rifle strength, 182,250 It used to be said that the infantry was "the staple of the Army", to which all other branches were ancillary. This has certainly undergone some modification under new conditions, but none the less it remains broadly true The structure of a division is built round its infantry of 9 battalions, with a battery to each battalion, the necessary proportion of signallers and sappers, the battalion,

brigade, and divisional transport, and some additional elements, the whole being constituted as an integral and self-contained unit of 15,500 men.

3. When we look at the division as a unit, we find that 27 divisions at 15,500 official establishment require no less than 1,015,000 men This gives an actual burden of 35,000 men for every divisional unit of 15,500 men, the units themselves being already fully self-contained. Nearly 20,000 men have therefore to be accounted for for each division of the E F [Expeditionary Force] or M.E over and above the full approved establishment of 15,500.

This great mass, amounting to 540,000, has now to be explained We are assured that the corps, army, L. of C. [line of communications] troops, etc., plus the 70,000 security troops in the M E, justify this enormous demand upon the manhood of the nation.

4. One would have thought, if this were conceded, that the process was at an end. On the contrary, it is only just beginning. There still remain nearly two million men to be accounted for, as are set out on the attached table and graph No one can complain of 7 divisions for the Home Field Force, though it is surprising that they should require 24,000 men for divisional establishments of 15,500. This accounts for 170,000 men.

5 A.D G B. [Air Defence of Great Britain] 500,000 must be submitted to for the present, pending improved methods of dealing with the night-bomber and increased British ascendancy in the air

6 200,000 men for the permanent staffs and "unavailable" at training and holding units is a distressing figure, having regard to the great margins already provided. Staffs, static and miscellaneous units, "Y" list, etc., require 150,000 after all the 27 divisions and the 7 home divisions have been fully supplied with corps and army troops Apart from everything necessary to handle an army of 27 divisions and 7 home divisions, there is this mass of 350,000 staffs and statics, living well off the nation as heroes in khaki

7. Compared with the above, overseas garrisons, other than M.E, of 75,000 seems moderate. India and Burma at 35,000 is slender.

8. 150,000 men for the corps, army, and L of C troops for divisions other than British requires to be explained in detail I understand the Australian and New Zealand Forces had supplied a great many of their rearward services At any rate, I should like to see the exact distribution of this 150,000 in every category behind the divisions which they are expected to serve.

9. The net wastage, 330,000, is of course a purely speculative figure But it might well be supplied from the 350,000 permanent staffs, static and other non-availables already referred to.

10. Deducting for the moment the 330,000 men for wastage, which deals with the future up till March 1942, and 110,000 required for overseas garrisons other than M E , India, and Burma, we face a total of 2,505,000 required for the aforesaid 27 divisions plus 7 home divisions, equal to about 74,000 per division If the 500,000 for A D.G B is omitted we still have over 2,000,000 men—*i.e.*, nearly 60,000 men mobilised for each of 34 divisions

Before I can ask the Cabinet to assent to any further call-up from the public, it is necessary that this whole subject shall be thrashed out, and that at least a million are combed out of the fluff and flummery behind the fighting troops, and made to serve effective military purposes We are not doing our duty in letting these great numbers be taken from our civil life and kept at the public expense to make such inconceivably small results in the fighting line.

Prime Minister to General Ismay 9 XII 40

Let me have a report on the development of the Salvage Section of the Admiralty, showing the work that has been done and what expansions, if any, are contemplated to meet the ever-growing need of repairs rapidly

Prime Minister to General Ismay 11 XII 40

Let models be made of Rhodes and Leros Report when they will be ready.

(*Action this Day*)
Prime Minister to Secretary of State for Air 14 XII 40

There is one thing about the warfare between the Air Ministry and M.A.P which is helpful to the public interest, namely, that I get a fine view of what is going on and hear both sides of the case argued with spirit Will you very kindly address yourself to the various statements made in this letter attached [from Lord Beaverbrook], and especially to the one that on September 1 you had over 1,000 unserviceable trainer aircraft? I have long suspected that the inefficiency which formerly ruled in the A S U s and left us with only 45 aeroplanes when the new Government was formed, as against about 1,200 now, was reproduced in all the trainer establishments and communication flights and that a great mass of aeroplanes were kept in an unserviceable state, and I remember particularly the statement of one of your high officers that the Training Command worked on a basis of 50 per cent. unserviceable Who is responsible for repair and training establishments? If I were you, I should throw the whole business of repair

on to M A P., and then you would be able to criticise them for any shortcomings.

See also the figures of how repaired aircraft and engines have increased since the change was made.

I recur to the point I made to you yesterday when you sent me your letter to M A P The Air Ministry's view is that the Germans have nearly 6,000 aeroplanes in front-line action, and we have about 2,000 Air Ministry also believe that the German output is 1,800 a month, out of which they provide only 400 for training establishments, while we, out of 1,400 output, provide also 400 How do you, then, explain that the Germans are able to keep three times our establishment in front-line action with only an equal monthly subscription of trainer aircraft? Apparently, on your figures, which I may say I do not accept (except for controversial purposes), the Germans can keep three times as large a force in action as you can for the same number of trainer planes I know that you will rightly say you are preparing for the expansion of the future, but they have to keep going on a threefold scale, and expand as well.

I await with keen interest further developments of your controversy.

Prime Minister to Lord Beaverbrook 15 XII 40

It is a magnificent achievement* in the teeth of the bombing. Quite apart from new production, the repaired aircraft has been your own creation We now have 1,200 in the A S.U s, which is a great comfort Dispersion has greatly hampered you, but was absolutely necessary as an insurance to spread the risk

In addition, you have not confined yourself to mere numbers, but, on the contrary, have pushed hard into quality.

The reason why there is this crabbing, as at A,† is of course the warfare which proceeds between A.M and M A.P They regard you as a merciless critic, and even enemy They resent having had the M A.P functions carved out of their show, and I have no doubt they pour out their detraction by every channel open I am definitely of opinion that it is more in the public interest that there should be sharp criticism and counter-criticism between the two departments than that they should be handing each other out ceremonious bouquets One must therefore accept the stimulating but disagreeable conditions of war

* Table from Lord Beaverbrook giving comparison of actual output of aircraft with programme

† Paragraph in Lord Beaverbrook's minute of 14 XII 40 to the effect that it is sometimes said that the output of the Ministry of Aircraft Production would have been equalled by the Air Ministry if there had not been any change in May 1940

Prime Minister to Secretary of State for the Dominions 15 XII 40

You will see from my telegram to Mr Menzies that I do not view the situation in the Far East as immediately dangerous The victory in Libya has reinforced, nay redoubled, the argument there set forth I do not wish to commit myself to any serious dispersion of our forces in the Malay peninsula and at Singapore On the contrary, I wish to build up as large as possible a Fleet, Army, and Air Force in the Middle East, and keep this in a fluid condition either to prosecute war in Greece and presently Thrace, or reinforce Singapore should the Japanese attitude change. I could not commit myself to the dispatch of many of the aircraft mentioned, certainly not the P B Y.s [flying-boats] at this juncture, when we have a major peril to face on the North-Western Approaches I could not therefore agree to your telegram, and I should have thought my own (as amended in red) was quite sufficient at the present time

Prime Minister to C.A.S. 15 XII 40

How are you getting on with the development on a large scale of aerodromes in Greece to take modern bombers and fighters, and with the movement of skeleton personnel, spare parts, etc , there?

It is quite clear to me this is going to be most important in the near future, and we must try not to be taken by surprise by events

I should be glad to have a fortnightly report

Prime Minister to C I G S. 20.XII 40

Please let me know the earliest date when the 2nd Armoured Division—

(*a*) will land at Suez, and

(*b*) can be available for action in the Western Desert.

Prime Minister to C.A.S. 20.XII 40

I hope you will try to take a few days' rest, and seize every opportunity of going to bed early. The fight is going to be a long one, and so much depends upon you Do not hesitate to send your deputy to any meetings I may call

Pray forgive my giving you these hints, but several people have mentioned to me that you are working too hard.

[The possible use and counter-use of poison gas, should invasion come in the New Year, rested heavily upon me Our progress in this sphere was however considerable]

Prime Minister to Minister of Supply 21 XII 40

You will remember that the War Cabinet ordered an inquiry into the fact that bulk storage for 2,000 tons of mustard gas which had

been ordered by the Cabinet in October 1938 was still not ready in October 1940.

The latest information which I have received from your Ministry shows that the bulk stock of mustard gas on December 9 was 1,485 tons I was also informed through your Ministry that 650 tons of additional new storage was to have become available last week, and that production was being increased accordingly Was this promise fulfilled?

Meanwhile I note that the filling of the new 25-pdr base-ejection shell has at last begun in earnest, and that 7,812 of this type of shell had been filled by December 9 I should be glad to know how this figure compares with the total reserve of this type of shell required by the Army, and when this reserve is likely to be attained

None of the new 6-inch base-ejection shells has yet been filled What reserve does the Army require of this type of shell, and when is this reserve expected to be ready?

I am sending a copy of this minute to the Secretary of State for War.

Prime Minister to Minister of Supply 22.XII 40

I learn that the Central Priority Department has been conducting a special investigation into the requirements of materials likely to be short.

I am told that much the most serious case is that of drop-forgings, on which the production of aeroplanes, tanks, guns, and transport all depend Requirements for 1941 are estimated at 441,000 tons. Home production is now at the rate of 208,000 I am informed that there are orders in the United States for 7,000 tons, and that these are likely to rise to an annual rate of 25,000 by the end of 1941 Even if the requirements are considerably overstated, the deficiency is very serious.

Some moderate rate of expansion at home is expected, but we need to double the output There are 14,000 workers in the industry, but it is reported that only 300 recruits have been received since August, that the industry alleges that it cannot absorb more than 1,000 new workers in each quarter, and that it is difficult to get recruits All this needs looking into.

Meanwhile the only possible immediate action seems to be to increase purchases of drop-forgings in America, if necessary sending a special expert there for this purpose

Prime Minister to Minister of Works and Buildings 22.XII 40

I understand that there is a serious shortage of accommodation for welfare services of all kinds to meet the needs of the homeless as well

as of the evacuation schemes, and that you, in conjunction with the Minister of Health, have undertaken to seek for premises.

I hope that you will use your utmost endeavours to press on with this work.

I should be glad if you would let me have a return of commandeered premises which have not yet been used for war purposes, and which might be suitable for use in this way.

Prime Minister to Lord Chatfield 22 XII 40

I am grieved to find how very few George Medals have been issued I had hoped there would be ten times as many The idea was that you would go about and get into touch with local authorities where there had been heavy bombing, and make sure that recommendations were sent forward which could be sifted, and that you would stir the departments on the subject Can you not do something more in this direction? You ought by now to have a number of typical cases which could be circulated to the authorities and departments concerned, who would thereafter be asked to match them from their experience

Let me know if I can be of any assistance

Prime Minister to First Sea Lord 22 XII.40

Very soon the Baltic will be frozen Let me know its state and future prospects

What has been happening to the Swedish ore during this summer? The Naval Staff should make the necessary inquiries

What traffic has been moving down the Leads?

How has the position of German ore supplies been affected by the events of the last eight months? Is there any reason why we should not sow magnetic mines in the Leads, even if we do not lay a regular minefield? We seem to have forgotten all about this story

I should be glad to have a note upon this, and to know whether anything can be done

Prime Minister to General Ismay 22 XII 40

The work of the Joint Planners divides itself naturally into two parts

(*a*) all the current work they do for the C O S Committee, and
(*b*) the long-term future projects which are indicated to them, and on which they are already at work

It is to these latter that I now turn I think it would be well to appoint a Director of Future Schemes, or some other suitable title, who would guide and concert the preparation of the special schemes, preside over any meetings of the Joint Planners engaged upon them, and have direct access to me as Minister of Defence I think Major Oliver Stanley [the

former Secretary of State for War], with his experience of foreign politics and Cabinet government, would be able to impart to all this work a liveliness which I cannot supply except at rare intervals. He would have to be given a temporary Army rank to make him senior.

Pray make me proposals for giving effect to this idea.

Prime Minister to Minister of Aircraft Production 22.XII.40

I am disturbed to see from reports sent to me by the Minister of Supply that deliveries to the Royal Air Force of bombs and containers charged with gas have dropped very noticeably during the past month, the total during the four weeks from November 11 to December 9 being:

30-lb bombs	Nil
250-lb bombs	18
250-lb. containers	Nil
500-lb containers	25
1,000-lb containers	9

I understand that the reason for this decline is that factories have been bombed, and that difficulties have been encountered in the supply of certain component parts

Nevertheless it is of vital importance that we should have the largest possible supply of aircraft gas-containers for immediate retaliation if need be, and I should be glad to know what steps are being taken to improve the delivery of these containers and what is the forecast of these deliveries over the next three months.

[I was concerned at the grave affronts to the rights and liberties of the individual which the safety of the State had required Having been brought up on the Bill of Rights, *habeas corpus*, and trial by jury conceptions, I grieved to become responsible, even with the constant assent of Parliament, for their breach In June, July, August, and September our plight had seemed so grievous that no limits could be put upon the action of the State. Now that we had for the time being got our heads again above water a further refinement in the treatment of internees seemed obligatory We had already set up an elaborate sifting process, and many persons who had been arrested in the crisis were released by the Home Secretary, who presided over this field]

Prime Minister to Home Secretary 22.XII.40

It must be remembered that these political *détenus* are not persons against whom any offence is alleged, or who are awaiting trial or are on remand. They are persons who cannot be proved to have committed any offence known to the law, but who because of the public danger and the conditions of war have to be held in custody. Naturally I feel

distressed at having to be responsible for action so utterly at variance with all the fundamental principles of British liberty, *habeas corpus*, and the like. The public danger justifies the action taken, but that danger is now receding

In the case of Mosley and his wife there is much prejudice from the Left, and in the case of the Pandit Nehru from the Right I particularly asked that the rigorous character of the latter's imprisonment should be removed. In foreign countries such people are confined in fortresses—at least, they used to be when the world was still civilised

These reflections led me to look into the details of Mosley's present confinement, as well as others of that category Does a bath every week mean a hot bath, and would it be very wrong to allow a bath every day? What facilities are there for regular outdoor exercise and games and recreation under Rule 8? If the correspondence is censored, as it must be, I do not see any reason why it should be limited to two letters a week. What literature is allowed? Is it limited to the prison libraries? Are newspapers allowed? What are the regulations about paper and ink for writing books or studying particular questions? Are they allowed to have a wireless set? What arrangements are permitted to husbands and wives to see each other, and what arrangements have been made for Mosley's wife to see her baby, from whom she was taken before it was weaned?

I should be grateful if you would let me know your own view upon these matters

Prime Minister to Prime Minister of Australia 23 XII 40

1 I am most grateful for your promised help at Singapore in respect both of troops and of equipment and ammunition, and hope that you will make these available as proposed If so we will arrange to relieve your troops in May by the equivalent of a division from India

2 The danger of Japan going to war with the British Empire is in my opinion definitely less than it was in June after the collapse of France Since then we have beaten off the attacks of the German Air Force, deterred the invader by our ever-growing land strength, and gained a decisive victory in Libya Since then the Italians have shown their weakness by sea, land, and air, and we no longer doubt our ability to defend the Delta and the Canal until or unless Germany makes her way through Turkey, Syria, and Palestine This would be a long-term affair. Our position in the Eastern Mediterranean is enormously improved by the possession of Crete, where we are making at Suda Bay a second Scapa, and also by our victories and those of the Greeks, and the facilities we now have for building up strong air bases in Greece from which Italy can be attacked.

3 The naval and military successes in the Mediterranean and our

growing advantage there by land, sea, and air will not be lost upon Japan. It is quite impossible for our Fleet to leave the Mediterranean at the present juncture without throwing away irretrievably all that has been gained there and all the prospects of the future. On the other hand, with every weakening of the Italian naval power the mobility of our Mediterranean Fleet becomes potentially greater, and should the Italian Fleet be knocked out as a factor, and Italy herself broken as a combatant, as she may be, we could send strong naval forces to Singapore without suffering any serious disadvantage We must try to bear our Eastern anxieties patiently and doggedly until this result is achieved, it always being understood that if Australia is seriously threatened by invasion we should not hesitate to compromise or sacrifice the Mediterranean position for the sake of our kith and kin

4. Apart from the Mediterranean, the naval strain has considerably increased When *Bismarck* and *Tirpitz* join the German Fleet, which they may have done already, the Germans will once again be able to form a line of battle The *King George V* is ready, but we do not get *Prince of Wales* for several months, nor *Duke of York* till midsummer, nor *Anson* till the end of the year 1941 For the next six months we must keep more concentrated at Scapa Flow than has been necessary so far The appearance of a raiding pocket-battleship in the Atlantic has forced us to provide battleship escort again for our convoys, and we are forming hunting-groups for the raiders in the South Atlantic, and if necessary in the Indian Ocean We have always to consider the possibility of the undamaged portion of the French Fleet being betrayed by Darlan to Germany

5. For all these reasons we are at the fullest naval strain I have seen either in this or the former war The only way in which a naval squadron could be found for Singapore would be by ruining the Mediterranean situation This I am sure you would not wish us to do unless or until the Japanese danger becomes far more menacing than at present I am also persuaded that if Japan should enter the war the United States will come in on our side, which will put the naval boot very much on the other leg, and be a deliverance from many perils

6 As regards air reinforcements for Malaya, the Conference at Singapore recommended the urgent dispatch of considerable numbers of aircraft With the ever-changing situation it is difficult to commit ourselves to the precise number of aircraft which we can make available for Singapore, and we certainly could not spare the flying-boats to lie about idle there on the remote chance of a Japanese attack when they ought to be playing their part in the deadly struggle on the North-Western Approaches. Broadly speaking, our policy is to build up as large as possible a Fleet, Army, and Air Force in the Middle East, and

keep this in a fluid condition, either to prosecute war in Libya, Greece, and presently Thrace, or reinforce Singapore should the Japanese attitude change for the worse. In this way dispersion of forces will be avoided and victory will give its own far-reaching protections in many directions.

7. I must tell you finally that we are sending enormous convoys of troops and munitions to the Middle East, and we shall have nearly three hundred thousand men there by February This again entails heavy escort duties. But great objects are at stake, and risks must be run in every quarter of the globe, if we are to emerge from all our dangers, as I am sure we shall

8. I am arranging for details as regards shipping and equipment, etc, to be taken up direct between the War Office and Army Headquarters, Melbourne.

With all good wishes.

Prime Minister to General Ismay 23 XII 40

Please see that I have a good supply of photographs of war places, for instance, Sollum, Bardia, etc

One of your staff might be told off to give some attention to this

Prime Minister to General Ismay, for C O S Committee
Note for M Dupuy (travelling to North Africa) 23 XII 40

Should you see Generals Weygand or Noguès you should explain that we now have a large, well-equipped army in England, and have considerable spare forces already well trained and rapidly improving, apart from what are needed to repel invasion

The situation in the Middle East is also becoming good If at any time in the near future the French Government decide to resume the war in Africa against Italy and Germany we would send a strong and well-equipped Expeditionary Force to aid the defence of Morocco, Algiers, and Tunis These divisions could sail as fast as shipping and landing facilities were available. The British Air Force has now begun its expansion, and would also be able to give important assistance. The command of the Mediterranean would be assured by the reunion of the British and French Fleets, and by our joint use of Moroccan and North African bases We are willing to enter into Staff talks of the most secret character with General Weygand, or any officers nominated by him.

On the other hand, delay is dangerous. At any time the Germans may, by force or favour, come down through Spain, render unusable the anchorage at Gibraltar, take effective charge of the batteries on both sides of the Straits, and also establish their Air Forces in the aerodromes It is their habit to strike swiftly, and if they establish

themselves at Casablanca the door would be shut on all projects We are quite ready to wait for a certain time, provided that there is a good hope of bold action, and that plans are being made But the situation may deteriorate any day and prospects be ruined. It is most important that the Government of Marshal Pétain should realise that we are able and willing to give powerful and growing aid. But this may presently pass beyond our power.

Prime Minister to Minister of Shipping 24.XII.40

I see you made a speech about the Americans taking foreign ships. Could you let me have the text of it, together with any reactions you may have noticed in the American Press? I have the impression that the Americans were not quite pleased with the request addressed to them, as they do not consider that sufficient use is being made of British tonnage at the present time In this connection you will remember my repeated inquiries as to the amount of British tonnage now plying exclusively between ports not in the United Kingdom

According to the latest monthly report of the Ministry of Shipping, two and one-third million tons of British non-tanker shipping of over 1,600 tons is trading between overseas countries Pray let me have a full explanation of this. About two million tons of Norwegian, Belgian, Polish shipping, excluding tankers, is also trading abroad

Prime Minister to Sir Edward Bridges and General Ismay 25.XII.40

With the new year a fresh effort must be made to restrict the circulation of secret matters in Service and other departments All the markings of papers in the Service departments, Foreign Office, Colonial and Dominions Offices, etc., should be reviewed with a view to striking off as many recipients as possible.

The officials concerned in roneo-ing the various circulations should be consulted, and a return made for me showing how many copies are made of different secret documents.

Pray report to me how this object can be achieved.

Prime Minister to Secretary of State for the Dominions 25.XII 40

No departure in principle is contemplated from the practice of keeping the Dominions informed fully of the progress of the war Specially full information must necessarily be given in respect of theatres where Dominion troops are serving, but it is not necessary to circulate this to the other Dominions not affected Anyhow, on the whole an effort should be made not to scatter so much deadly and secret information over this very large circle . There is a danger that the Dominions Office staff get into the habit of running a kind of newspaper full of deadly secrets, which are circularised to the four

principal Governments with whom they deal The idea is that the more they circulate the better they are serving the State Many other departments fall into the same groove, loving to collect as much secret information as possible and feeling proud to circulate it conscientiously through all official circles I am trying steadily to restrict and counteract these tendencies, which, if unchecked, would make the conduct of war impossible

While therefore there is no change in principle, there should be considerable soft-pedalling in practice

I wish to be consulted before anything of a very secret nature, especially anything referring to operations or current movements, is sent out

Prime Minister to Minister of Health and Minister of Home Security 25 XII 40

I enclose minutes of our meeting yesterday, on which action is being taken

I am convinced there should be only one authority inside the shelters, who should be responsible for everything pertaining to the health and comfort of the inmates. This authority should be charged with sanitation and storing of the bedding, etc. I cannot feel that the Home Security and Home Office, with all its burdens and duties under the enemy attack, ought to be concerned with questions affecting vermin and sanitation These ought to be in the province of the Ministry of Health, who should be made responsible for the whole interior life of the shelters, big or small

Prime Minister to Sir Edward Bridges and Professor Lindemann 26 XII.40

I must examine the Import Programme for 1941 next week. 5 p.m in the Lower War Room, Monday, Tuesday, and Wednesday. Agenda to be drawn up by you and Professor Lindemann Let me see by Saturday night here the immediate lay-out of the shipping programme in relation to food and supply and the demand for the Services in the face of present losses Professor Lindemann will present me by Saturday night with the salient facts and graphs To be summoned to the meeting the following

Lord President,
Lord Privy Seal,
Minister without Portfolio,
Minister of Aircraft Production,
Minister of Supply,
Ministers of Food, Transport, and Shipping.

(Ministers only)

Prime Minister to Ministry of Supply 26.XII.40

The discrepancy between weapons and ammunition is terrible in the case of the anti-tank rifles, 2-inch and 3-inch mortars, the climax being reached with the 3-inch mortars. We have enough A.T. rifles to equip 23½ divisions, but only enough ammunition at 32,000 rounds per month to equip 5½. We have enough 2-inch mortars at 108 per division to equip 33 divisions, but ammunition at 32,400 rounds per month suffices only for 4½ divisions. The worst of all is the 3-inch mortar, where, oddly enough, we have at 18 per division enough to equip nearly 40 divisions, but at 14,000 rounds per month only enough ammunition for 1½ divisions.

Prime Minister to First Lord 26.XII.40

Provided that it can be arranged that four of the 15-inch can be cocked up within six months from now, and all other repairs be completed, I agree to abandon my long-cherished hope, in which I have been so continuously frustrated, of making *Resolution* into an effective fighting ship for inshore action.

The story of these four ships since the war began ranks with the story of the two-gun turret of the *K.G.V.* class in the most melancholy pages of the Admiralty annals.

I hope I may have your positive assurance that the six months condition will be fulfilled, barring enemy action of course.*

Prime Minister to First Sea Lord 26.XII.40

I consider a greater effort should be made to interrupt the ore traffic through the Leads during January and onwards. This should certainly come before the Iceland-Faroes channel, which is a vast operation undertaken chiefly to use mines made for quite a different purpose, in conditions which have passed away. Now that we have not to give notice, and can lay secretly anywhere, conditions are much more favourable for mining the Norwegian coast than they were last year, but the need to act seems to be almost as great.

Pray let me have a further report.

Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee and others concerned 26.XII.40

Tactical requirements must be paramount during invasion. I am deeply anxious that gas warfare should not be adopted at the present time. For this very reason I fear the enemy may have it in mind, and perhaps it may be imminent. Every precaution must be kept in order, and every effort made to increase retaliatory power.

Sometimes I have wondered whether it would be any deterrent on

* See also my minute of 15.IX.40.

the enemy if I were to say that we should never use gas ourselves unless it had first been used against us, but that we had actually in store many thousands of tons of various types of deadly gas with their necessary containers, and that we should immediately retaliate upon Germany. On the whole, I think it is perhaps better to say nothing unless or until we have evidence that the attack is imminent. After all, they can make the calculations to which Professor Lindemann refers for themselves. They would certainly say we had threatened them with gas warfare, and would soon invent a pretext. Thirdly, there would be too much bluff in any such statement. If anyone is of a different opinion I shall be glad to know. The subject causes me much anxiety.

Prime Minister to Home Secretary 26 XII 40

I read in the papers of many people being sentenced for various offences against war regulations and for doing things which would not arise in peace-time. I am curious to know how the prison population compares with pre-war, both for imprisonment and penal servitude cases.

I should be much obliged if you could give me a few very simple figures. Are there a great many more now in gaol?*

Prime Minister to Minister of Shipping 27 XII.40

Let me have on one sheet of paper the main heads of your programme as at present settled of imports

(*a*) in the next four months,
(*b*) for the year 1941.

I should be glad to have this during to-morrow (Saturday).

(Action this Day)
Prime Minister to General Ismay, for C.O.S. Committee 27 XII 40

1. I do not recognise at all the account of my views given about "Marie".† I was under the impression that I had given a written minute. Pray let this be sought for. It is very unusual for me to give any directions other than in writing. To avoid further misunderstanding, the following is set forth.

2. The operation "Marie" has been regarded by the Chiefs of Staff, and is considered by me, to be valuable and important. For this purpose not only the Foreign Legion battalion but two other French battalions should be sailed in the January 4 convoy, and deposited at Port Soudan, where they can either intervene in "Marie" or in Egypt. There is no use sending only the Foreign Legion without any other troops of the French forces. Therefore I have asked for proposals to sail transports capable of taking the other two battalions empty from

* The figures were reassuring.
† Occupation of Jibouti.

here to Freetown, so that the whole French force can go round together

Pray let me have to-day the proposals for giving effect to this.

There will be plenty of time to consider the political aspects when these troops have arrived at Port Soudan.

Prime Minister to Lord Privy Seal 27.XII.40

You very kindly sent me a report about cold storage of meat, dated November 14, and I wonder whether you would care to bring it up to date in the light of later happenings. I am very much concerned about the meat position.

Prime Minister to Secretary of State for War and C.I G S 27 XII.40

1 Hitherto the production of anti-tank rifles has been a bright spot, and we have nearly thirty thousand already made On the other hand, the ammunition for this weapon is deplorably in arrear, being in fact less than one-fifth of the proper proportion The failure to "marry" the ammunition and the A T. rifle is one of the worst blots on our present munitions programme It is little less than a fraud on the troops to issue these large quantities of A T rifles, which would quickly become useless and worth no more than old iron through ammunition shortage. In many cases it has not been possible to allow any rounds for practice at all, these having to be saved for actual use against the enemy.

2. In these circumstances one would expect that the War Office would have concentrated their desires on ammunition, instead of increasing the already gigantic disproportion of A T. rifles to ammunition On the contrary however, for reasons which I have never heard mentioned, the Army requirement of A.T. rifles is suddenly raised from thirty-one thousand to seventy-one thousand for the same number of divisions When was this decision taken? by whom? and what were the arguments? Was any attempt made at the time to make sure that the ammunition, already lagging so far behind, could catch up this enormous increase in rifles? Let me have a full report on this transaction.

3. However, the Germans have now twice bombed the Small Heath factory and checked the output of A T rifles in a most decisive manner There can be no possibility of fulfilling the increased War Office demand of seventy-one thousand at the date desired On the other hand, it is to be hoped that the ammunition supply will now have a chance of overtaking the weapons. It would therefore appear that a valuable and necessary readjustment of our programme has resulted from enemy action

4 Arising out of the above, I wish to be informed when any large

changes are made in the existing programmes for the Army, particularly when these necessitate setting up new plants which can only be set up at the expense of other urgent work. All important modifications of the equipment tables set out in my diagrams are to be reported to me before action is taken.

Prime Minister to C.A.S and Air Ministry 29 XII 40

It seems odd that only one machine should have been dispatched from Takoradi during the week ending December 27, when no fewer than forty-four are piled up there waiting. Is there a breakdown in the handling work at Takoradi? Could we have a special report on conditions there? Quite soon they will have the second instalment from the *Furious* upon them.

(Action this Day)
Prime Minister to Secretary of State for Air, C A.S., and Minister of Aircraft Production 30 XII 40

(Secret)

1 I am deeply concerned at the stagnant condition of our bomber force The fighters are going ahead well, but the bomber force, particularly crews, is not making the progress hoped for I consider the rapid expansion of the bomber force one of the greatest military objectives now before us We are of course drawing upon the bomber force for the Coastal Command and for the Middle East If the bottleneck is, as I am told, crews, we must either have the pilots and personnel we are sending out to the Middle East returned to us after they have delivered their machines, or, what would be less injurious to formed squadrons, have other pilots and personnel sent back from the Middle East in their place The policy is to remount the Middle East, and this must be achieved before reinforcements of a permanent character can be indulged in Even before the recent reinforcements there were one thousand pilots in the Middle East Air Marshal Longmore must be told to send back an equal number of good men of the various classes, and not add to his already grossly distended personnel

2 In order to increase the number of crews available the training must be speeded up and a certain measure of dilution accepted

3 The figures placed before me each day are deplorable Moreover, I have been told on high authority that a substantial increase in numbers available for operations against Germany must not be expected for many months I cannot agree to this without far greater assurance than I have now that everything in human wit and power has been done to avert such a complete failure in our air expansion programme

4 So far as aircraft are concerned, the question arises, from constant study of the returns, whether sufficient emphasis is put upon bomber

production. The fighters are streaking ahead, and it is a great comfort that we have so good a position in them We must however increase our bomb deliveries on Germany, and it appears that some of the types and patterns most adapted to this are not coming forward as we had hoped. I am well aware of the damage done by enemy action, but I ask whether it cannot be remedied, and what further steps are possible

5 I wish to receive a programme of expansion week by week, and also a plan set forth showing what measures can be taken to improve the position, which at present is most distressing and black.

APPENDIX B

The first table contains the figures which were given to the President in my letter of December 8, 1940 *

The second table gives the final assessment in the light of post-war knowledge

* See Book II, Chapter XXVIII, p 494.

TABLE I

WEEKLY LOSSES AT SEA

Week ended	British		Allied		Neutral		Total: British, Allied, and Neutral	
	No.	Gross tons	No	Gross tons	No	Gross tons	No	Gross tons
1940								
June 2	28	79,415	5	25,137	2	4,375	35	108,927
June 9 .	13	49,762	8	22,253	4	14,750	25	86,765
June 16 .	15	60,006	10	40,216	6	23,170	31	123,392
June 23 ..	16	91,373	12	81,742	12	39,159	40	212,274
June 30 ..	6	30,377	4	13,626	5	19,332	15	63,335
	78	310,933	39	182,974	29	100,786	146	594,694
July 7 ..	14	75,868	4	18,924	5	21,968	23	116,780
July 14 ..	10	40,469	5	13,159	7	24,945	22	78,573
July 21 ..	12	42,463	2	3,679	7	13,723	21	59,865
July 28 .	18	65,601	2	7,090			20	72,691
	54	224,421	13	42,852	19	60,636	86	327,909
August 4	14	67,827	2	7,412	5	13,768	21	89,007
August 11	9	32,257	2	7,674	2	6,708	13	46,639
August 18	10	41,175	1	7,590	2	4,134	13	52,899
August 25 .	20	108,404	1	1,718	2	8,692	23	118,814
September 1	12	62,921	5	15,038	5	18,460	22	96,419
	65	312,584	11	39,432	16	51,762	92	403,778
September 8	13	44,075	4	18,400	3	13,715	20	77,180
September 15	13	55,153	4	12,575	3	7,379	20	75,107
September 22	22	148,704	3	13,006	5	14,425	30	176,135
September 29	11	56,096	4	12,119	2	7,351	17	75,566
	59	304,928	15	56,100	13	42,870	87	403,997
October 6	8	30,886	3	5,712	1	3,657	12	40,315
October 13	10	52,668	3	17,537	4	14,544	17	84,749
October 20	34	154,279	7	24,686	6	26,816	47	205,781
October 27	6	9,986	2	6,874	1	1,583	9	18,443
November 3	13	65,609	4	5,403			17	71,012
	71	313,428	19	60,242	12	46,630	102	420,300
November 10	11	69,110	2	10,236	2	8,617	15	87,963
November 17	15	57,977	3	15,383	1	1,316	19	74,676
November 24	20	80,426	3	12,415			23	92,841
December 1	9	41,360	3	5,734	1	5,135	13	52,229
	55	248,873	11	43,768	4	15,068	70	307,709
Grand Total, May 27 to Dec 1, 1940	382	1,715,167	108	425,467	93	317,752	583	2,458,386

NOTES—Week ended December 1 is the last full week for which details are available, and from the nature of the circumstances must be considered provisional

For the whole period the following commissioned ships of 500 gross tons and over (formerly merchant vessels) have been lost by enemy action 20 vessels, of 183,000 gross tons approximately

TABLE II

MONTHLY TOTALS OF SHIPPING LOSSES, BRITISH, ALLIED, AND NEUTRAL

May 1940 to December 1940

MONTHS	BRITISH		ALLIED		NEUTRAL		TOTAL British, Allied, and Neutral	
	No	*Gross Tons*	*No*	*Gross Tons*	*No*	*Gross Tons*	*No*	*Gross Tons*
May 1940	31	82,429	26	134,078	20	56,712	77	273,219
June 1940	61	282,560	37	187,128	27	101,808	125	571,496
July 1940	64	271,056	14	48,239	20	62,672	98	381,967
August 1940	56	278,323	13	55,817	19	59,870	88	394,010
September 1940	62	324,030	19	79,181	9	39,423	90	442,634
October 1940	63	301,892	17	73,885	17	66,675	97	442,452
November 1940	73	303,682	13	47,685	5	24,731	91	376,098
December 1940	61	265,314	11	70,916	7	21,084	79	357,314
Totals	471	2,109,286	150	696,929	124	432,975	745	3,239,190

APPENDIX C

AIRCRAFT STRENGTH DURING THE BATTLE OF BRITAIN 1940*

1—AIRCRAFT PRODUCTION IN 1940

	Gross Production	*Fighter Production*
January	802	157
February	719	143
March	860	177
April	1,081	256
May	1,279	325
June	1,591	446
July	1,665	496
August	1,601	476

* See Book II, Chapter XVI

2—OPERATIONAL STRENGTHS OF BOMBER COMMAND WEEK BY WEEK DURING BATTLE OF BRITAIN

SUMMARISED ORDER OF BATTLE (BOMBER COMMAND) AND BOMBER AIRCRAFT IN AIRCRAFT STORAGE UNITS

BOMBER COMMAND

Date	*Total No of Squadrons*	*No of Squadrons Operationally Fit*	*Total I E Operational Squadrons* *	*Total Aircraft Available for Operations*
July 11, 1940 ..	40	35	560	467
July 18, 1940 ..	40	35	560	510
July 25, 1940 ..	40	35	554	517
August 1, 1940 .	40	35	560	501
August 8, 1940 ..	41	36	576	471
August 15, 1940 ..	37	31	496	436
August 22, 1940 ..	37	31	496	491
August 29, 1940 ..	38	32	512	482
September 5, 1940	39	36	576	505
September 12, 1940	41	38	608	547
September 19, 1940	42	38	608	573
September 26, 1940	42	38	608	569

* "I E" abbreviation for "Initial Equipment"

APPENDIX C

AIR SUPPLY UNITS

NUMBER OF AIRCRAFT EQUIPPED TO CURRENT OPERATIONAL STANDARDS, READY FOR DISPATCH

Date	*Within 48 Hours*	*Additionally within 4 Days*
July 11, 1940 ..	285	128
July 18, 1940 ..	272	111
July 25, 1940 ..	251	111
August 1, 1940 ..	249	111
August 8, 1940 ..	191	111
August 15, 1940 ..	210	111
August 22, 1940 ..	152	116
August 29, 1940 ..	145	124
September 5, 1940	103	124
September 12, 1940	113	123
September 19, 1940	107	121
September 26, 1940	165	109

3—OPERATIONAL STRENGTHS OF FIGHTER COMMAND WEEK BY WEEK

Date	*Total Number of Squadrons in Fighter Command*	*Number of Squadrons Available for Operations*	*Number of Aircraft Serviceable and Available for Operation*
July 10 ..	57	54	656
July 17 ..	57	52	659
July 24 ..	60	50	603
July 31 ..	61	54	675
Aug. 7 ..	61	56	714
Aug 14 ..	61	54	645
Aug 21 ..	61	57	722
Aug 28 ..	61	58	716
Sept. 4 ..	63	58	706
Sept 11 ..	63	60	683
Sept 18 ..	64	61	647
Sept 25 ..	64	61	665

4.—COMPARISON OF BRITISH AND GERMAN FIGHTER STRENGTH DURING THE BATTLE OF BRITAIN

The preceding table gives the overall strength of Fighter Command, including Blenheims and Defiants But these cannot be reckoned, for the purposes of comparison, as part of the day fighting force, which consisted of Hurricanes and Spitfires.

After taking representative dates in the period July 10–October 31, the approximate daily average of squadrons *available for operations* of these two latter types combined is:

Squadrons	49
Aircraft and crews ready	608

On the German side figures of serviceability are not at present available, comparison can therefore be made only in terms of Initial Equipment The German I E was·

Single engine	approximately	850
Twin engine (Me. 110)	"	350
	TOTAL	1,200

The comparable Initial Equipment figures for British squadrons available for operations, averaged over the 12 weeks, was 980.

APPENDIX D

Correspondence relating to Dakar between Mr Churchill and Mr Menzies*

29 IX 40

Mr Menzies to the Prime Minister

We are very disturbed in regard to Dakar incident, which has had unfortunate effect in Australia. First, as to matter of substance: It is difficult to understand why attempt was made unless overwhelming chances of success. To make what appears at this distance to be a half-hearted attack is to incur a damaging loss of prestige.

Second, as to matter of procedure. It is absolutely wrong that Australian Government should know practically nothing of details of engagement and nothing at all of decision to abandon it until after newspaper publication. I have refrained from any public criticism, but privately can tell you that absence of real official information from Great Britain has frequently proved humiliating. Finally, I must say frankly that Australian Government profoundly hopes difficulties have not been under-estimated in the Middle East, where clear-cut victory is essential.

2.X 40

Prime Minister to Mr. Menzies

I am very sorry to receive your message of September 29, because I feel that the great exertions we have made deserve a broad and generous measure of indulgence should any particular minor operation miscarry. The situation at Dakar was revolutionised by arrival of French ships from Toulon with Vichy personnel and the manning of the batteries by the hostile French Navy. Although every effort was made, the British Navy was not able to stop these ships on their way. After strongly testing the defences, and sustaining the losses I have already reported to you, the naval and military Commanders did not consider they had the strength to effect and support a landing, and I think they were quite right not to get us committed to a shore operation, which could not, like the naval attack, be broken off at any moment, and might have become a serious entanglement.

With regard to your criticisms, if it is to be laid down that no attempt is to be made which has not "overwhelming chances of success", you will find that a complete defensive would be imposed upon us. In dealing with unknown factors like the degree of French resistance it is impossible to avoid uncertainty and hazard. For in-

* See Book II, Chapter XXIV

stance, Duala, and with it the Cameroons, were taken by twenty-five Frenchmen after their Senegalese troops had refused to march. Ought we to have moved in this case without having overwhelming force at hand? Secondly, I cannot accept the reproach of making "a half-hearted attack". I hoped that you had not sustained the impression from these last five months of struggle which has excited the admiration of the whole world that we were "a half-hearted Government" or that I am half-hearted in the endeavours it is my duty to make. I thought indeed that from the way my name was used in the election quite a good opinion was entertained in Australia of these efforts

Every care will always be taken to keep you informed before news is published, but we could not prevent the German and Vichy wireless from proclaiming the course of events as they occurred at Dakar before we had received any information from our Commanders.

With regard to what you say about the Middle East, I do not think the difficulties have been under-estimated, but of course our forces are much smaller than those which the Italians have in Libya and Abyssinia, and the Germans may always help them The defection of France has thrown the whole Middle East into jeopardy and severed our communications through the Mediterranean. We have had to face the threat of invasion here and the full strength of Germany's air bombing attack on our cities, factories, and harbours Nevertheless we have steadfastly reinforced the Middle East, and in spite of all our perils at home and scanty resources have sent over thirty thousand men, nearly half our best tanks, many anti-aircraft guns needed to protect our vital aircraft factories, two of the finest units in the Fleet, the *Illustrious* and *Valiant*, and a considerable number of Hurricane fighters and Wellington bombers. We have done this in the face of an accumulation across the Channel and the North Sea of barges and shipping sufficient to carry half a million men to these shores at a single voyage and in a single night. Therefore, if the Middle East difficulties and dangers have not been fully met, it is not because the Mother Country has shirked her share of perils and sacrifice At present the situation in Egypt and the Soudan looks better than we feared some time ago Still, my dear Prime Minister and friend, as you have allowed me to deem you, I cannot guarantee "clear-cut victory" in the Middle East, or that Cairo, Khartoum, the Suez Canal, and Palestine may not fall into Italian or German hands We do not think they will, and we are trying our utmost to resist the attacks which are massing against us But I can make no promises at all of victory, nor can I make any promises that regrettable and lamentable incidents will not occur, or that there will not be disappointments and blunders On the contrary, I think the

only certainty is that we have very bad times indeed to go through before we emerge from the mortal perils by which we are surrounded

I felt it due to your great position and the extremely severe tone of your message to reply with equal frankness

Mr Menzies to Mr Churchill 4.x 40

I have received your message of October 2 and am very disturbed by some of its contents

We were, and are, concerned about the failure at Dakar My telegram concerning it was somewhat crudely expressed, as I can see on perusing it again. But I still do not understand how it can be construed as containing even the faintest suggestion that you or the British Government are half-hearted in policy, spirit, or achievement

As the recent election here has left my own position extremely precarious and I may therefore soon go out of office, I would like to take the opportunity of saying to you that I have been very proud on behalf of Australia to be associated, even though at a distance, with the efforts of Winston Churchill and the British people Such machinery as I possess in my own country has at all times been exercised so as to encourage the Australian people to realise that Great Britain is fighting our battles and that her heroism and superhuman cheerfulness and philosophy must be for us not only a shield but an inspiration.

As for yourself, praise from me would be an impertinence, but what I cabled you on September 3, the anniversary of the war, represented my whole heart and mind. I am indeed grieved to think that you should have felt my recent telegram to be either carping or discouraging

I say no more about Dakar because it, no doubt, has lessons which it is not necessary for me to underline. Real point I make is that we, at this distance, will learn the lessons of events the more rapidly if information about those events can come to us as promptly and as fully as possible

As to the Middle East, I have not sought or intended to seek guarantees. All that we ask—and I am sure it is granted before the asking—is that the Middle East should be as fully reinforced and equipped as is humanly possible Your telegram has given me great satisfaction on this point

You point out that if the Middle East difficulties and dangers have not been fully met it is not because the Mother Country has shirked her share of the perils or sacrifice this is, of course, splendidly true But I hope that you do not entertain any idea that Australia is shirking her share We have many thousands of men in the Middle East, as many as shipping has been able to take We have in camp in Australia

further Expeditionary Force approximating eighty-five thousand men, many of whom will shortly be moving to the Middle East.

In spite of much public doubt caused by a real fear of what Japan may do, my Government has raised naval, air, and military forces and pledged our resources to munitions production on a scale previously unknown and regarded only a year ago as impossible.

We have done this notwithstanding the parochial interests and issues which in the recent elections succeeded in defeating us in the all-important State of New South Wales. We have set no limit to our contribution, because we know that there is no limit to the total British risk.

I mention these matters because I desire to make it clear that our anxiety about our main overseas theatre of actual participation in the war is not only intelligible but acute.

Please, my dear Prime Minister, do not interpret anxieties arising from these facts as either fearful, selfish, or unduly wrongheaded. And, above all, please understand that whatever interrogative or even critical telegrams I may send to you in secret Australia knows courage when it sees it and will follow you to a finish, as to the best of my abilities I certainly shall.

Prime Minister to Mr Menzies 6.x.40

I am deeply grateful for your generous message. Forgive me if I responded too controversially to what I thought was somewhat severe criticism. I am having an account prepared of the Dakar incident, in all its stages, which I will send for the confidential information of yourself and your colleagues. I do not propose to defend myself at any length in Parliament, as such a spectacle would only gratify the enemy. I am deeply grateful for all that Australia has done under your leadership for the Common Cause. It has been a great comfort having some of the Australians here during these anxious months. I greatly admired their bearing and spirit when I inspected them. They had just received twenty-four good field guns. They are soon going to join the rest of the Australian Army in the Middle East, where they will probably be in the forefront of the fighting next year. We shall do everything in our power to equip them as they deserve. For the moment it seems that the situation in the Middle East is steady. Should the armies engage near Mersa Matruh the forces available during the next month or six weeks would not appear to be ill-matched in numbers. This should give a good chance to General Wilson, who is reputed a fine tactician, and the excellent troops he has. The Londoners are standing up magnificently to the bombing, but you can imagine the numerous problems which a ruthless attack like this upon a community of eight

million people creates for the administration. We are getting the better of our difficulties, and I feel confident that the act of mass terror which Hitler has attempted will fail, like his magnetic mines and other deadly schemes. All good wishes personally for yourself.

APPENDIX E

LIST OF OPERATIONAL CODE NAMES

CATAPULT. Seizure, control, or effective disablement or destruction of all the accessible French Fleet.

COMPASS Offensive operations in the Western Desert

CROMWELL. Alarm word to be used if invasion of Britain imminent.

DYNAMO: Naval evacuation of the B.E.F, May 1940

EXCESS: Aircraft reinforcements to the Middle East, January 1941.

HATS: Passing of Fleet reinforcements through Mediterranean and running of supply convoy to Malta

MANDIBLES. Operations against the Dodecanese.

MARIE: Occupation of Jibouti.

MENACE: Occupation of Dakar.

MULBERRY: Artificial harbours.

OVERLORD. Liberation of France.

SEA LION. German plan for the invasion of Britain.

SHRAPNEL: Occupation of Cape Verde Islands

TORCH: Anglo-American invasion of North Africa.

WINCH: Fighter reinforcement to Malta.

WORKSHOP: Capture of Pantelleria.

APPENDIX F

LIST OF ABBREVIATIONS

A.A guns	Anti-aircraft guns, or ack-ack guns.
A.D.G B.	Air Defence of Great Britain
A F S.	Auxiliary Fire Service
A F V.s	Armoured fighting vehicles
A G R M.	Adjutant-General Royal Marines.
A.R.P.	Air Raid Precautions.
A S U.	Air Supply Units.
A T rifles	Anti-tank rifles.
A T S	(Women's) Auxiliary Territorial Service.
B E F	British Expeditionary Force.
C A S.	Chief of the Air Staff
C I G S	Chief of the Imperial General Staff
C -in-C	Commander-in-Chief
CONTROLLER	Third Sea Lord and Chief of Material.
C N S	Chief of the Naval Staff (First Sea Lord).
C O S	Chiefs of Staff
D N C.	Director of Naval Construction.
F O	Foreign Office.
G H Q.	General Headquarters
G O C.	General Officer Commanding
G Q G.	Grand-Quartier-Général.
H F	Home Forces
H M G	His Majesty's Government.
L D V	Local Defence Volunteers (renamed Home Guard).
M A P.	Ministry of Aircraft Production.
M E W.	Ministry of Economic Warfare.
M O I	Ministry of Information.
M OF L.	Ministry of Labour
M OF S.	Ministry of Supply.

O.K.H.	Oberkommando des Heeres. Supreme Command of the German Army.
O.T.U.	Operational Training Unit
P.M.	Prime Minister
U.P.	Unrotated projectiles—*i.e.*, code name for rockets
V.C.A.S.	Vice-Chief of the Air Staff
V.C.I.G.S.	Vice-Chief of the Imperial General Staff.
V.C.N.S.	Vice-Chief of the Naval Staff.
W.A.A.F.	Women's Auxiliary Air Force.
W.R.N.S.	Women's Royal Naval Service ("Wrens").

INDEX

INDEX

22*